

ऋग्वेद भाष्य

(स्वामी दयानंद सरस्वतीजीना भाष्य अनुसार मूण
मंत्र, पदार्थ अने भावार्थ सहित)

भाग-१



प्रकाशक

वानप्रस्थ साधक आश्रम
आर्य वन, रोहड, गुजरात

॥ ओम् ॥



સ્વર્ણિમ ગુજરાતના ઉપલક્ષમાં

ઋગ્વેદ ભાષ્ય

ભાગ-૧

(સ્વામી દયાનંદ સરસ્વતીજીના ભાષ્ય અનુસાર
મૂળ મંત્ર, પદાર્થ અને ભાવાર્થ સહિત)



: અનુવાદક :
વેદ દયાલમુનિ આર્ય

પ્રકાશક

વાનપ્રસ્થ સાધક આશ્રમ, આર્યવન, રોજડ

પો. સાગપુર, જિ. સાબરકાંઠા, ગુજરાત-૩૮૩૩૦૭.

ફોન : (૦૨૭૭૪) ૨૭૭૨૧૭, (૦૨૭૭૦) ૨૫૭૨૨૪, ૨૮૭૪૧૭, ૨૯૧૪૯૬

E-mail : darshanyog@gmail.com Website : www.darshanyog.org

ऋग्वेद भाष्य भाग-१

मूलमंत्र, पदार्थ अने भावार्थ सहित
(गुजराती अनुवाद)

प्रकाशन तिथि : श्रावण, २०६७ विक्रमी संवत्, ऑगस्ट, सन् २०१०,
सृष्टि संवत् १,८६,०८,५३,१११

संस्करण (गुजराती): प्रथम (प्रत ५०००)

• मुख्य वितरक •

श्री रघुसिंह आर्य द्वारा डॉ. सद्गुला आर्या

'सम्यक्', कर्मचारी सोसायटी पास, पो. गांधीग्राम, जूनागढ - ३६२००१.

प्राप्तिस्थान:

आर्यसमाज, महर्षि दयानंद मार्ग, रायपुर दरवाजा बहार, अमदावाह-२२.

आर्यसमाज, महर्षि दयानंद मार्ग, छाथीभाना, राजकोट-३६०००१.

आर्यसमाज, स्टेशन रोड, आणंद-३८८००१.

वैदिक संस्थान, प, पडेलो माण, आदर्श कोम्प्लेक्स, ओढव, अमदावाह-१५.

आर्यसमाज, नवाडेरा, ભરૂચ-૩૯૨૦૦૧.

आर्यसमाज, महर्षि दयानंद मार्ग, पोर्बंदर-३६०५७५.

आर्यसमाज, ४४-४५, सरदारनगर, ભરતનગર રોડ, ભાવનગર.

आर्यसमाज, महर्षि दयानंद मार्ग, भंभाणिया नाका, जामनगर-५.

आर्यसमाज, दातार रोड, जूनागढ-३६२००१.

आर्यसमाज, महर्षि दयानंद मार्ग, ब्रांग्रा, जि. सुरेन्द्रनगर-३६३३१०.

आर्यसमाज, महर्षि दयानंद मार्ग, सैजपुर बोधा, अमदावाह-४५.

आर्यसमाज, विश्रामभाग कोलोनी, मकरपुरा रोड, प्रतापनगर, वडोदरा-४.

आर्यसमाज, सेक्टर-२४, गांधीनगर-३८२०२४.

आर्यसमाज, न्यू माझेकलाल अस्टेट, घाटकोपर (प.) मुंबई-४०००८६.

श्री चंद्रेश आहुजा, ३१०, ११-बी साधु वासवाणी सोसा., गोपालपुरी, गांधीधाम.

सर्वोदय साहित्य मंदिर, प्लेट फीर्म नं.-१, रेलवे स्टेशन, अमदावाह.

श्री सुरेश यावडा, 'प्रेममोहन', ८, नूतननगर, काळावड रोड, राजकोट.

मूल्य : ५००-०० रु.

लेसर टाईप सेटिंग : राज ग्रॉफिक्स, अमदावाह. फोन : २६५७५०२८

रंग संज्ञा : विनायक ग्रॉफिक्स, अमदावाह. फोन : ८८७८०८४३२५

आवरण : राजकल्प मुद्रणालय, अमदावाह. फोन : (०२७१७) २४४०१६.

पुस्तक बंधन : रॉयल डिजिटल कंपनी, अमदावाह. फोन : २५५०७०३३.

मुद्रक : प्रिन्ट कों, अमदावाह. फोन : ३२८८३११८.



તા. ૨૬-૦૮-૨૦૧૦

સંદેશ

ભારતીય સંસ્કૃતિમાં ઈશ્વરીય જ્ઞાનનું અથ અને ઈતિ એટલે વેદ. પુરાણ અને ઉપનિષદો. શાસ્ત્રોના જ્ઞાનનું સંવર્ધન અને સંગ્રોધન એટલે જ્ઞાન-વિજ્ઞાનથી ભરપૂર એવી આપણી આર્થ સંસ્કૃતિનો વિશ્વ સમાજને લાભ પહોંચાડવાનું ઋષિ કર્મ. આજના ભીતિકવાદની ભૂલોને કારણે વિશ્વપર્યાવરણ અને સંસ્કૃતિની અવદશા અંગેના ઉપાય આપણા વેદોમાં ઉપલબ્ધ છે એનું જ્ઞાન ઉજાગર કરવાનું કાર્ય ધર્મપ્રેમી જનતા અને વેદપ્રેમી વિદ્વાનો દ્વારા જાય તે ઉત્સાહપૂર્ણ ખ્યાલ છે.

વાનપ્રસ્થ સાધક આશ્રમ, આર્યવન રોજડ દ્વારા સ્વક્રિમ ગુજરાત વર્ષમાં ઋગ્વેદ ભાષ્ય-૧ ગુજરાતી અનુવાદનું પ્રકાશન થનાર છે. જે જુભ સમાચાર જણી આનંદ અને ગર્વની લાગણી અનુભવું છું. વિશ્વભરના બુદ્ધિજીવીઓ સુધી ગરવી ગુજરાતી ભાષામાં પહોંચનારા આ ગૌરવ ગ્રંથ માટે સુભેચ્છા પાઠવું છું.

સૌનો,

(નરેન્દ્ર મોદી)

પ્રતિ,
શ્રી સાધાર્ય જ્ઞાનેશ્વરજી,
મેનેજીંગ ટ્રસ્ટી,
વાનપ્રસ્થ સાધક આશ્રમ,
આર્યવન રોજડ,
સાગરપુર, જિ. સાબરકાંઠા.

નરેન્દ્ર મોદી

પૂર્વ મંત્રી, ગુજરાત સરકાર



वेदोद्धारक, आदित्य ढ़लखारी, महान समाज सुधारक, शास्त्रार्थ महारथी,
प्रभण वाग्मी, स्वतंत्रताना प्रथम उद्घोषक, नारी उद्धारक, गौ-रक्षक, प्रजर राष्ट्रवादी

स्वामी दयानंद सरस्वती

जन्म: ई.स. १८२४ • निर्वाडा : ई.स. १८८३



प्रकाशकीय

मनुष्य जीवन का अन्तिम लक्ष्य क्या है, इसको प्राप्त करने का सीधा, सरल मार्ग कौन-सा है, इस पर चलने के लिए किन-किन साधनों की आवश्यकता पड़ती है, उन साधनों का कैसे प्रयोग किया जाता है उनकी विधि क्या है ? मार्ग पर चलते हुए क्या-क्या कठिनाईयाँ, बाधायेँ उपस्थित हो सकती हैं ? उनका निवारण कैसे किया जा सकता है ? इन सब आवश्यक बातों का संक्षिप्त रूप में इन चार वेदों में वर्णन किया गया है जो आज भी उपलब्ध है ।

विश्व के मानवों को भौतिक उन्नति के साथ-साथ आध्यात्मिक ज्ञान-विज्ञान के बिना सर्वांगीण सुख मिलना संभव नहीं है और वह आध्यात्मिक ज्ञान भी निःसन्देह, सर्व मान्य, विज्ञान की कसौटी पर खरा उतरने वाला होना चाहिए । ऐसा निर्भ्रान्त सत्य ज्ञान वेदों में ही उपलब्ध है । ईश्वर ने इन वेदों में सम्पूर्ण जीवन को सरलता से सुखपूर्वक चलाने की सारी व्यवस्था, विधि-विधान बता रखे हैं ।

यह सर्वमान्य प्रामाणिक सत्य है कि वेद सर्वाधिक प्राचीनतम धर्मग्रंथ है । संसार के निर्माण और मनुष्यों की उत्पत्ति से लेकर (जिसका काल वैदिक गणना के अनुसार १,९६,०८,५३,१११ वर्ष होता है) महाभारत काल तक इस धरती पर रहने वाले सभी मनुष्य वेदों को ही अपना धर्म ग्रन्थ मानते आये हैं । इतना ही नहीं उनकी बोल-चाल, व्यवहार की भाषा भी केवल एक ही थी - 'संस्कृत' । ४५०० वर्ष पूर्व तक सम्पूर्ण पृथ्वी पर सभी लोग प्रातः-सायं एकान्त स्थान में आसन लगाकर, प्राणायाम आदि साधनों द्वारा मन को रोक कर, एक निराकार, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वान्तर्यामी, न्यायकारी, कर्मफल दाता, ओ३म् नामक ईश्वर का ही ध्यान करते थे । उस समय आज के समान अनेक देवी-देवताओं की पूजा नहीं होती थी । लोग नित्यप्रति पंच महायज्ञों को श्रद्धापूर्वक करते थे और जीवन को उन्नत बनाने के लिए १६ संस्कारों का अनुष्ठान होता था, जीवन को चार भागों में बांटा जाता था । जिसे 'आश्रम' नाम से कहा जाता है और गुण-कर्म-स्वभाव के अनुसार समाज में व्यक्तियों को चार प्रकार के कर्तव्य अधिकार प्रदान किये जाते थे, जिनका नाम 'वर्ण' है ।

५ वर्ष के बाद बच्चों को घरों से गुरुकुलों में आचार्य के पास शिक्षा प्राप्ति के लिए अनिवार्य रूप से भेजने का नियम था । सभी लोग प्रातःकाल शीघ्र उठकर ईश्वर का ध्यान, अग्निहोत्र, वेद मन्त्रों का स्वाध्याय आदि किया करते थे । निरामिष शुद्ध सात्त्विक भोजन, अतिथि सत्कार, व्यवहार में सत्य का पालन होता था । झूठ, छल, कपट, अन्याय, आलस्य, स्वार्थ, पाखण्ड, हिंसा आदि दुष्ट व्यवहारों को करने वालों को सभ्य समाज से पृथक् कर दिया जाता था अथवा उन्हें कठोरतम दण्ड दिया जाता था । मांसाहार, मद्यपान, व्यभिचार, भ्रष्टाचार, जुआ, अश्लीलता, देह प्रदर्शन, जातिवाद, गुरुडम, मत, पंथ, सम्प्रदाय, बहुदेव पूजा, तन्त्र-मन्त्र, जन्म पत्री, कुण्डली आदि का प्रचलन नहीं था । सभी लोग सत्य धर्म का पालन करते हुए मोक्ष की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करते थे ।



ऋग्वेदभाष्य

जब तक ये आदर्श परम्पराएँ समाज में प्रचलित रही जब तक पृथ्वी पर सभी मनुष्य शान्त, सुखी, निर्भीक, सन्तुष्ट, स्वतंत्र थे। जबसे इन वैदिक परम्पराओं का लोप हुआ है तब से सभी मनुष्य दुःखी हैं और दूसरों को दुःखी बनाये हुए हैं।

मध्यकाल में लगभग २५०० वर्ष पूर्व स्वार्थी पण्डितों, विद्वानों ने राजा, समाज से अनुचित लाभ, अधिकार प्राप्त करने के लिए वेदों का अशुद्ध भाष्य करके, उनके मनमाने व विकृत अर्थ किये। सारी बुराइयों को वेदों से प्रमाणित कराने का दुष्पाप किया। जिसे अज्ञानी लोगों ने स्वीकार कर लिया और धर्म के नाम पर आज ऐसी दुर्गति हुई है कि इसे देख कर लज्जा आती है।

स्वामी दयानन्द जी सरस्वती ने इन सब को देखकर वेदों का शुद्ध ऋषि परम्परा के अनुरूप भाष्य किया। जिसमें कोई भी असत्य, तर्क युक्ति से असंगत, असंभव, अप्रामाणिक, अवैज्ञानिक बातें नहीं हैं। यदि उनके किये वेदों के भाष्य को राजा और विद्वान लोग सर्व मान्य करा दें तो पृथ्वी पर पुनः स्वर्ग स्थापित हो सकता है।

ईश्वर की महती कृपा तथा धार्मिक सज्जनों से प्राप्त सहयोग से यजुर्वेद, सामवेद के गुजराती भाष्य के बाद ऋग्वेद के गुजराती भाष्य प्रथम खण्ड को प्रकाशित कराकर स्वाध्यायशील व्यक्तियों के समक्ष उपस्थित करते हुए हमें अत्यन्त हर्ष हो रहा है। ऋग्वेद में १०,००० से भी अधिक मन्त्र हैं। इस पुस्तक में मात्र प्रथम मण्डल के ही मन्त्रों का समावेश है। दूसरे भाग में २-३-४ मण्डलों को साथ में प्रकाशित किया जायेगा। जिसका अनुवाद हो चुका है और शब्द संयोजन का कार्य चल रहा है। ऋग्वेद ५ भागों में प्रकाशित होगा तत्पश्चात् अथर्ववेद को दो भागों में प्रकाशित करायेगे।

मैं प्राध्यापक दयालमुनि जी का अतीव धन्यवाद करता हूँ जो अनेक रोगों से ग्रस्त होते हुए भी अहर्निश वेदों का गुर्जर भाषान्तर किये ही जा रहे हैं। ईश्वर ही यह कार्य करा रहा है। पश्चात् मान्य श्री हीरालाल जी के प्रति भी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ जो निशानेबाज की तरह बूँट बूँटकर शब्द संयोजन की त्रुटियाँ निकालते रहे हैं। साथ ही प्रिन्टकोन के आर्य शशीकान्त जी, बन्धन करने वाले श्री सुरेश जी कद्रेकर, शब्द संयोजक श्री मृगेश जी, कलाविद् श्री धर्मेंश जी जिन्होंने बहुत ही श्रद्धा निष्ठा से पुस्तक को सुन्दरतम बनाने का प्रयास किया है। ब्र० दिनेशकुमार जी तथा ब्र० प्रियेश जी ने शेष समस्त दायित्वों का पर्यवेक्षण किया। हम इन सभी महानुभावों से अनुगृहीत हैं। जिन दानदाताओं ने इसके प्रकाशन हेतु धन प्रदान किया या अग्रिम ग्राहक बने हैं वे भी धन्यवाद के पात्र हैं।

ऋग्वेद के दूसरे भाग का कार्य भी प्रारम्भ हो चुका है। आशा है कि ईश्वर की कृपा व आप सभी महानुभावों का सहयोग मिलता रहेगा और हम इसे भी शीघ्र ही प्रकाशित करने में समर्थ हो जायेंगे इसी विश्वास के साथ.....

तिथि : आषाढ़ कृ० १२/२०६७

दिनांक : १०/०८/२०१०

वानप्रस्थ साधक आश्रम,

आर्यवन, रोजड़

शुभेच्छुक

ज्ञानेश्वरार्यः

અનુવાદકીય

વેદ ઈશ્વરીય જ્ઞાન છે, એ બ્રહ્મની દિવ્યવાણી છે, જે દેશ-કાલ-ઈતિહાસની સીમાના બંધનથી રહિત સમાનરૂપથી સદા સર્વનાં કલ્યાણનું નિર્દેશન કરે છે.

‘વેદ’નો અર્થ છે ‘જ્ઞાન’ અને જ્ઞાનનું લક્ષ્ય છે નિર્માણ, કલ્યાણ, ઉત્થાન. તે માટે સત્ય, ન્યાય, નૈતિકતાના માર્ગ પર જીવનની યાત્રા કરીએ. વિજ્ઞાન દ્વારા ભૌતિક પદાર્થોનો સ્વહિત માટે પ્રયોગ કરીએ. જ્ઞાન આપણું પથ-પ્રદર્શક બને અને વિજ્ઞાન સુખ-સુવિધાઓ પ્રદાન કરે, જેથી જીવનનાં પ્રત્યેક ડગલે આનંદ-સુધાનું પાન કરતા રહીએ.



પરમપિતાએ વેદરૂપમાં ધર્મની પાવન-ગંગાનો પ્રવાહ ધરતી પર ઋષિઓનાં હૃદય દ્વારા પ્રવાહિત કર્યો. જેથી આદિ સૃષ્ટિથી મહાભારતકાળ સુધી માનવજાતિ ‘વેદમાર્ગ’ પર ચાલીને ઉન્નતિનાં શિખર પર વિરાજમાન રહી.

પરંતુ દુર્ભાગ્યવશ સ્વાર્થ અને અજ્ઞાનને વશ બની પ્રભુનાં જ્ઞાનને વિસ્મૃત કરી બેઠી. વેદદિવાકરનો અસ્ત થતાં મનુષ્ય કૃત નાના દીવડાઓ રૂપી મત-મતાન્તરો ઉદય પામ્યાં, માનવ-માનવ વચ્ચે દીવાલો ઊભી થઈ અને અવનિ અવિદ્યા-અંધકારમાં આળોટવા માંડી.

વેદોદ્ધારક ઋષિ દયાનંદ : જ્યારે ભારતવર્ષ પરાધીનતા, અવિદ્યા-અજ્ઞાન-અંધકારમાં અથડાતો હતો, પ્રભુ કૃપાથી એક વેદોદ્ધારક-દિવ્યવિભૂતિ મહર્ષિ દયાનંદે પુનઃ વેદ પ્રચાર-પ્રસારને જીવનનું લક્ષ્ય બનાવ્યું - પ્રત્ન પ્રહણ કર્યું - અને કહ્યું કે ‘વેદ સર્વ સત્યવિદ્યાઓનું પુસ્તક છે.’ અને મનુષ્ય પ્રભુ-પ્રદર્શક વેદ-માર્ગ પર ચાલીને જ કલ્યાણ કરી શકે છે.

માનવ માત્રનાં કલ્યાણ માટે અવિદ્યા-અંધકારને ઉલ્લેચીને જ્ઞાન-પ્રકાશ પ્રસારિત કરવાના પાવન લક્ષ્યથી એ આનંદ અને ઉન્નતિનું પાવન સંગીત, વીણાની મધુર-કલ્યાણી વાણી અને જ્ઞાનની અમૃત ગંગાનો પુણ્ય પ્રવાહ ઋષિપ્રવર દયાનંદે ધરતીનાં આંગણમાં ‘વેદભાષ્ય’ રૂપથી પ્રવાહિત કર્યો છે.

વેદ ભાષ્યનું દિગ્દર્શન : બ્રહ્મર્ષિ દયાનંદ વેદાદિ સત્યશાસ્ત્ર અને બ્રહ્માથી લઈને જૈમિનિ સુધીના ઋષિઓના સિદ્ધાન્તોની જ માન્યતા ધરાવતા હતા. તેથી પોતાનાં વેદ ભાષ્યને સમજવા ‘ઋગ્વેદાદિ ભાષ્ય ભૂમિકા’માં દિગ્દર્શન કરાવે છે :

“પૂર્વ દેવ-વિદ્વાન બ્રહ્માથી લઈને યાજ્ઞવલ્ક્ય, ઐતરેય, જૈમિનિ સુધીના ઋષિઓએ જે ઐતરેય, શતપથ વગેરે ભાષ્યો રચેલાં હતાં, પાણિનિ, પતંજલિ અને યાસ્ક આદિ મહર્ષિઓએ જે વેદ વ્યાખ્યા અને વેદાંગની રચના કરી હતી, જૈમિનિ આદિ (ઋષિઓ) એ જે વેદોનાં ઉપાંગ પદ્ધશાસ્ત્ર બનાવેલ હતાં અને એજ રીતે જે ઉપવેદો તથા વેદોની શાખાઓ રચી હતી, તેઓની સહાયતા લઈને હું મારા વેદભાષ્યમાં સત્ય અર્થનો પ્રકાશ કરી રહ્યો છું. કોઈ પણ અપ્રામાણિક અને કપોલકલ્પિત વાત લખી રહ્યો નથી.” ઋષિવર દયાનંદ વેદભાષ્યનું ફળ બતાવતા કહે છે :



ઋગ્વેદભાષ્ય

“આ ભાષ્ય પ્રાચીન આચાર્યોનાં ભાષ્યને અનુકૂળ રચવામાં આવે છે, પરંતુ જે રાવણ, ઉલ્બટ, સાયણ, મહીધર વગેરેએ જે વેદ-વિરુદ્ધ ભાષ્યો કર્યાં છે અને તેઓનું અનુસરણ કરીને ઈંગ્લેંડ અને જર્મન દેશમાં ઉત્પન્ન યુરોપખંડ નિવાસીઓએ પોતાના દેશની ભાષામાં સ્વસ્થ-વ્યાખ્યાન કરેલ છે. તથા તેઓને અનુસરીને આર્યાવર્ત દેશસ્થ કોઈ લોકોએ આર્યભાષામાં જે વ્યાખ્યાન કરેલ છે અને કરી રહ્યાં છે, તે સર્વ અનર્થથી ભરેલાં છે, એવા સજ્જનોનાં હૃદયોમાં થયાવત્ પ્રકાશ થઈ જશે અને તે ટીકાઓમાં દોષો અધિક છે, તેથી તેનો ત્યાગ કરી શકારો.” (ઋ.ભા.ભૂમિકા. ભાષ્યકરણ શંકા-સમાધાનાદિ વિષય)

મહર્ષિ દયાનંદના ભાષ્ય તથા વેદ વિષયક વિચારોનો નિમ્ન પરિચય પ્રાપ્ત થાય છે. યથા :

- (૧) વેદ ઈશ્વરીય જ્ઞાન-વિજ્ઞાન છે. પરમેશ્વરે સૃષ્ટિની આદિમાં ચારેય વેદોનો અગ્નિ, વાયુ, આદિત્ય અને અંગિરા નામક ઋષિઓનાં હૃદયમાં ક્રમશઃ ઋક્, યજુઃ, સામ અને અથર્વવેદનો પ્રકાશ કરેલ છે. વેદ નિત્ય છે, સૃષ્ટિના પ્રલય પછી પણ ઈશ્વરનાં જ્ઞાનમાં રહે છે.
- (૨) વેદોની ઋગ્વેદ (શાકલ), યજુર્વેદ (વા.મં. શુક્લ યજુર્વેદ સંહિતા), સામવેદ (રાણાપનીય) અથર્વવેદ (શૌનકીય) આ ચાર સંહિતાઓ છે. અન્ય ૧૧૨૭ શાખાઓ તેનાં વ્યાખ્યાનરૂપ છે. બ્રાહ્મણગ્રંથ આરણ્યક, ઉપનિષદો એ વેદ નથી. પરંતુ વેદનાં વ્યાખ્યાન ગ્રંથો છે.
- (૩) વેદોમાં અનેક દેવતાવાદ નથી અને તેની પૂજાનું વર્ણન નથી. પરંતુ અગ્નિ, ઈન્દ્ર, વરુણ આદિ ઈશ્વરનાં ગુણવાચક નામો છે. વળી અલંકાર રૂપે વિભિન્ન ક્ષેત્રોમાં અગ્નિ, સૂર્ય, વિષ્ણુ, પ્રાણ, રાજા, વેદ અને વિદ્યાન વગેરે અર્થોનું પણ ગ્રહણ થાય છે.
- (૪) દેવ-દેવતા શબ્દ વિદ્યાન વાચક છે, તેમજ માતા, પિતા, અતિથિ, આચાર્ય આદિ વિદ્યાનજન દેવ છે.
- (૫) વેદ મંત્રો માત્ર યજ્ઞની પ્રક્રિયા માટે નથી અને તેનાથી અગ્નિ, ઈન્દ્ર આદિ દેવતા યજ્ઞનાં ઠવિ દ્વારા પ્રસન્ન થઈને યજ્ઞમાનને પુત્ર, ધન આદિ પ્રદાન કરતા નથી.
- (૬) વેદોમાં કોઈ સ્વર્ગ અને નરકનાં સ્થાન વિશેષની કલ્પના નથી તેમજ કોઈ દેવતાઓનું ઉપર સ્વર્ગમાં સ્થાન, અસુરોથી યુદ્ધ, આર્યો અને દસ્યુનું યુદ્ધ, આર્ય અને દ્રવિડ જાતિના ઐતિહાસિક સંગ્રામનું વર્ણન નથી.
- (૭) વેદોમાં કોઈ ઋષિ, રાજા, નગર, નદી આદિનો ઇતિહાસ નથી પરંતુ તે નામોના ધૌગિક અર્થ થાય છે તેથી તેનો એક જ અર્થ નહિ, પરંતુ અનેક અર્થો થાય છે.
- (૮) વેદોમાં પિતૃયજ્ઞથી મૃત નહિ, પરંતુ છલવિત પિતરોની પૂજા-સેવા-સત્કારનું વિધાન છે.
- (૯) વેદ ભણવાનો સ્ત્રી-શુદ્ધ મનુષ્ય માત્રને અધિકાર છે.
- (૧૦) વેદોમાં મૂલ-સૂત્ર રૂપમાં-સંક્ષેપમાં સર્વ વિદ્યાઓ છે. યથા: બ્રહ્મ, સૃષ્ટિ, ભૂગોળ, ખગોળ, ગણિત, યોગ, મુક્તિ, નૌવિમાનાદિ, તાર, આયુર્વેદ, પુનર્જન્મ, રાજા, પ્રજા, વર્ણાશ્રમ, યજ્ઞ, વાણિજ્ય, કૃષિ અને ધનુર્વિદ્યા વગેરે છે.





(૧૧) સ્વામી દયાનંદનાં ભાષ્યમાં વેદમંત્રોનાં પારમાર્થિક અર્થ દ્વારા ઈશ્વર, જીવાત્મા અને પ્રાણ આદિ પરક અર્થની વિશેષતા છે અને વ્યાવહારિક પ્રક્રિયામાં શિલ્પ-શાસ્ત્ર, ભૌતિક વિજ્ઞાન, ખગોળ, ભૂગોળ, વર્ણાશ્રમ ધર્મ, રાજા અને પ્રજાના ધર્મનાં વર્ણનથી અપૂર્વ વિશેષતા છે.

અનુવાદ : સ્વામી દયાનંદનું મૂળ વેદ ભાષ્ય સંસ્કૃતમાં છે તથા હિન્દી અનુવાદ પણ છે. તેનું પ્રથમ પ્રકાશન પરોપકારિણી સભા-અજમેર દ્વારા થયેલ છે. મેં આ અનુવાદમાં તેનો આધાર રાખેલ છે.

પ્રસ્તુત અનુવાદમાં મૂળ મંત્ર, મંત્રના સંસ્કૃત પદ = શબ્દ, પદાર્થ = શબ્દનો અર્થ અને અન્તમાં ભાવાર્થનો ક્રમ રાખેલ છે.

ભાવાર્થ : મેં સ્વામીજીનાં મૂળ સંસ્કૃત ભાવાર્થનો પ્રાયઃ અનુવાદ કરવા પ્રયાસ કરેલ છે. તેમાં પં. સત્યાનંદ વેદવાગીશ સંપાદિત 'ભાવાર્થ પ્રકાશ' માર્ગદર્શક બની રહેલ હોઈ તેઓનો આભાર માનું છું.

અમારી કામના : અમારી પ્રબળ કામના છે, પ્રત્યેક માનવ, મનુષ્યકૃત ગ્રંથોની માયાજાળથી મુક્ત બને, પ્રભુના દિવ્ય સ્વરોનું સંગીત સાંભળી પોતાના જીવનને સફળ બનાવે, વેદની જ્યોતિથી જ્યોતિર્મય બને, મનુષ્ય પ્રભુ પુત્ર બનીને ધરતીને સાક્ષાત્ સ્વર્ગ બનાવવામાં સમર્થ બને, શ્રદ્ધાથી, આદરથી, ભાવનાથી, પક્ષપાત રહિત બનીને, વેદપાઠ કરીને, મનન કરીને, દિવ્ય દર્શનનાં ગંભીર ભાવો પર ચિંતન કરીને પોતાનાં જીવનમાં આચરણ કરે, ત્યારે જીવન મંગલમય બની જાય, શાન્તિ ગૃહ-આંગણમાં જ્યોતિ-સુધા રસધાર બનીને વર્ષા કરે, જીવનની યાત્રા પ્રસન્ન-સુખ-આનંદમય બની રહે, તે માટે પ્રભુની અમર વાણીને અમે ગુર્જર ભાષામાં આપને શુભ કામના સાથે અર્પણ કરીએ છીએ.

અન્તતઃ આ પૂર્વ યજુર્વેદ તથા સામવેદ પછી આ ઋગ્વેદનાં પ્રથમ મંડલનું ગુર્જર ભાષાન્તર આપની સેવામાં પ્રસ્તુત છે. તે માટે આચાર્ય શ્રી જ્ઞાનેશ્વરજી આર્ય (દર્શનાચાર્ય, એમ.કોમ.)ની પ્રેરણા, પ્રોત્સાહન, માર્ગદર્શન અને પ્રકાશન માટે તેઓશ્રીનો અન્તઃકરણપૂર્વક આભારી છું.



'પ્રણવ', ટંકારા
સં. ૨૦૧૫ દીપાવલી
તા. ૧૮-૧૦-૨૦૦૯

વિદુષાં વશંવદઃ
દયાલમુનિ આર્ય



વૈદિક સંસ્થાન, ઓઢવ, અમદાવાદના ટ્રસ્ટી, (નિવૃત્ત બાળલગ્ન પ્રતિબંધક અધિકારી, ગુજરાત રાજ્ય) શ્રી હીરાલાલજી પાટીલ વેદભાષ્ય પ્રકાશનના આરંભથી જ ખૂબ જ મનોયોગથી નિષ્ઠાપૂર્વક પ્રૂફવાંચનની કપરી કામગીરીનું નિર્વહન કરી રહેલ છે. તેમના આ નિઃસ્વાર્થ કાર્ય બદલ પ્રકાશક સંસ્થા તેમની આભારી છે. તેમજ તેમને સ્વસ્થ અને દીર્ઘ આયુ પ્રાપ્ત થાય તેમ પરમાત્માને પ્રાર્થના છે.



ऋग्वेदः

अथर्वेदभाष्यारम्भः ॥

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव । यद्भद्रं तन्न आसुव ॥

— ऋग्वेद ५/८२/५ ॥

विद्यानन्दं समवति चतुर्वेदसंस्तावना या,

सम्पूर्येशं निगमनिलयं सम्प्रणम्याय कुर्वे ।

वेदत्रयङ्के विधुयुतसरे मार्गशुक्लेऽङ्गभौमे,

ऋग्वेदस्याखिलगुणगुणिज्ञानदातुर्हि भाष्यम् ॥ १ ॥

ऋग्भिः स्तुवन्तीत्युक्तत्वाद्भिद्वांस उक्तपूर्वं वेदार्थज्ञानसाहित्यपठनपुरः सरमृग्वेदमधीत्य तत्रस्थैर्मन्त्रैरीश्वरमारभ्य भूमिपर्यन्तानां पदार्थानां गुणान् यथावद्विदित्वैते कार्येषूपकृतये मतिं जनयन्ति । ऋचन्ति स्तुवन्ति पदार्थानां गुणकर्मस्वभावाननया सा ऋक्, ऋक् चासी वेदश्चर्ग्वेदः ।

एतस्मिन्नग्निमीड इत्यारभ्य यथा वः सुसहासतिपर्यन्तेऽष्टावष्टकाः सन्ति । तत्रैकैकस्मिन्नष्टा-वष्टावध्यायाः सन्ति, तेषामेकैकस्य प्रत्यध्यायं वर्गाः संख्यायन्ते ।

प्रथमा- ष्टके		द्वितीया- ष्टके		तृतीया- ष्टके		चतुर्था- ष्टके		पञ्चमा- ष्टके		षष्ठा- ष्टके		सप्तमा- ष्टके		अष्टमा- ष्टके	
अ०	ख०	अ०	ख०	अ०	ख०	अ०	ख०	अ०	ख०	अ०	ख०	अ०	ख०	अ०	ख०
१	३७	१	२६	१	३४	१	३३	१	२७	१	४०	१	४१	१	३०
२	३८	२	२७	२	२६	२	२८	२	३०	२	४०	२	३३	२	२४
३	३५	३	२६	३	३१	३	३१	३	३०	३	४९	३	२६	३	२८
४	२९	४	२९	४	२५	४	३६	४	३०	४	५४	४	२८	४	३१
५	३१	५	२९	५	२६	५	३०	५	२७	५	३८	५	३३	५	२७
६	३२	६	३२	६	३०	६	२५	६	२५	६	३८	६	२८	६	२७
७	३७	७	२५	७	२७	७	३५	७	३३	७	३९	९	३०	७	३०
८	२६	८	२७	८	२६	८	३२	८	३६	८	३३	८	२९	८	४९
इ	२६५	यं	२२१	सं	२२५	ख्या	२५०	प्रत्य	२३८	ष्टकं	३३१	वेदि	२४८	त	२४६ व्या,

स्वेष्वष्टकेषु सर्वे वर्गाः संयुक्ताः २०२४ चतुर्विंशत्यधिके द्वे सहस्रे सन्ति ।



तथास्मिन्ग्वेदे दश मण्डलानि सन्ति, तत्र प्रथमे मण्डले चतुर्विंशतिरनुवाका एकवतिशतं सूक्तानि । तत्रैकैकस्मिन् सूक्ते मन्त्राश्च संख्यायन्ते -

सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०
१	९	२५	२१	४९	४	७३	१०	९७	८	१२१	१५	१४५	५	१६९	८
२	९	२६	१०	५०	१३	७४	९	९८	३	१२२	१५	१४६	५	१७०	५
३	१२	२७	१३	५१	१५	७५	५	९९	१	१२३	१३	१४७	५	१७१	६
४	१०	२८	९	५२	१५	७६	५	१००	१९	१२४	१३	१४८	५	१७२	३
५	१०	२९	७	५३	११	७७	५	१०१	११	१२५	७	१४९	५	१७३	१३
६	१०	३०	२२	५४	११	७८	५	१०२	११	१२६	७	१५०	३	१७४	१०
७	१०	३१	१८	५५	८	७९	१२	१०३	८	१२७	११	१५१	९	१७५	६
८	१०	३२	१५	५६	६	८०	१६	१०४	९	१२८	८	१५२	७	१७६	६
९	१०	३३	१५	५७	६	८१	९	१०५	१९	१२९	११	१५३	४	१७७	५
१०	१२	३४	१२	५८	९	८२	६	१०६	७	१३०	१०	१५४	६	१७८	५
११	८	३५	११	५९	७	८३	६	१०७	३	१३१	७	१५५	६	१७९	६
१२	१२	३६	२०	६०	५	८४	२०	१०८	१३	१३२	६	१५६	५	१८०	१०
१३	१२	३७	१५	६१	१६	८५	१२	१०९	८	१३३	७	१५७	६	१८१	९
१४	१२	३८	१५	६२	१३	८६	१०	११०	९	१३४	६	१५८	६	१८२	८
१५	१२	३९	१०	६३	९	८७	६	१११	५	१३५	९	१५९	५	१८३	६
१६	९	४०	८	६४	१५	८८	६	११२	२५	१३६	७	१६०	५	१८४	६
१७	९	४१	९	६५	५	८९	१०	११३	२०	१३७	३	१६१	१४	१८५	११
१८	९	४२	१०	६६	५	९०	९	११४	११	१३८	४	१६२	२२	१८६	११
१९	९	४३	९	६७	५	९१	२३	११५	६	१३९	११	१६३	१३	१८७	११
२०	८	४४	१४	६८	५	९२	१८	११६	२५	१४०	१३	१६४	५२	१८८	११
२१	६	४५	१०	६९	५	९३	१२	११७	२५	१४१	१३	१६५	१५	१८९	८
२२	२१	४६	१५	७०	६	९४	१६	११८	११	१४२	१३	१६६	१५	१९०	८
२३	२४	४७	१०	७१	१०	९५	११	११९	१०	१४३	८	१६७	११	१९१	१६
२४	१५	४८	१६	७२	१०	९६	९	१२०	१२	१४४	७	१६८	१०	—	—

अस्मिन्मण्डले सर्वे मन्त्रा मिलित्वा १९७६ षट्सप्तत्यधिकान्येकोनविंशतिः शतानि सन्तीति वेद्यम् । अथ द्वितीयमण्डले चत्वारोऽनुवाकास्त्रयश्चत्वारिंशत् सूक्तानि सन्ति । तत्र प्रतिसूक्तमियं मन्त्रसंख्या

ज्ञातव्या -

सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०
१	१६	७	६	१३	१३	१९	९	२५	५	३१	७	३७	६	४३	३
२	१३	८	६	१४	१२	२०	९	२६	४	३२	८	३८	११	—	—
३	११	९	६	१५	१०	२१	६	२७	१७	३३	१५	३९	८	—	—
४	९	१०	६	१६	९	२२	४	२८	११	३४	१५	४०	६	—	—
५	८	११	२१	१७	९	२३	१९	२९	७	३५	१५	४१	२१	—	—
६	८	१२	१५	१८	९	२४	१६	३०	११	३६	६	४२	३	—	—

अस्मिन्मण्डले सर्वे मन्त्रा मिलित्वा ४२९ एकोनत्रिंशदधिकानि चत्वारिंशतानि सन्ति ।



अथ तृतीयमण्डले पञ्चानुवाका, द्विषष्टिश्च सूक्तानि सन्ति । तत्र प्रतिसूक्तमियं मन्त्रसंख्या वेद्या -

सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०
१	२३	९	९	१७	५	२५	५	३३	१३	४१	९	४९	५	५७	६
२	१५	१०	९	१८	५	२६	९	३४	११	४२	९	५०	५	५८	९
३	११	११	९	१९	५	२७	१५	३५	११	४३	८	५१	१२	५९	९
४	११	१२	९	२०	५	२८	६	३६	११	४४	५	५२	८	६०	७
५	११	१३	७	२१	५	२९	१६	३७	११	४५	५	५३	२४	६१	७
६	११	१४	७	२२	५	३०	२२	३८	१०	४६	५	५४	२२	६२	१८
७	११	१५	७	२३	५	३१	२२	३९	९	४७	५	५५	२२	—	—
८	११	१६	६	२४	५	३२	१७	४०	९	४८	५	५६	८	—	—

अस्मिन् मण्डले सर्वे मन्त्रा मिलित्वा ६१७ सप्तदशोत्तरषटशतानि सन्ति ।

अथ चतुर्थे मण्डले पञ्चानुवाका अष्टपञ्चाशच्च सूक्तानि सन्ति । तत्र प्रतिसूक्तमियं मन्त्रसंख्या वेद्या-

सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०
१	२०	९	८	१७	२१	२५	८	३३	११	४१	११	४९	६	५७	८
२	२०	१०	८	१८	१३	२६	७	३४	११	४२	१०	५०	११	५८	११
३	१६	११	६	१९	११	२७	५	३५	९	४३	७	५१	११	—	—
४	१५	१२	६	२०	११	२८	५	३६	९	४४	७	५२	७	—	—
५	१५	१३	५	२१	११	२९	५	३७	८	४५	७	५३	७	—	—
६	११	१४	५	२२	११	३०	२४	३८	१०	४६	७	५४	६	—	—
७	११	१५	१०	२३	११	३१	१५	३९	६	४७	४	५५	१०	—	—
८	८	१६	२१	२४	११	३२	२४	४०	५	४८	५	५६	७	—	—

अस्मिन् मण्डले सर्वे मन्त्रा मिलित्वा ५८९ एकोननवति पञ्चशतानि सन्ति ।

अथ पञ्चमण्डले षडनुवाकाः, सप्ताशीतिः सूक्तानि च सन्ति । तत्र प्रतिसूक्तमियं मन्त्रसंख्यास्तीति वेद्यम् -

सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०
१	१२	१२	६	२३	४	३४	९	४५	११	५६	९	६७	५	७८	९
२	१२	१३	६	२४	४	३५	८	४६	८	५७	८	६८	५	७९	१०
३	१२	१४	६	२५	९	३६	६	४७	७	५८	८	६९	४	८०	६
४	११	१५	५	२६	९	३७	५	४८	५	५९	८	७०	४	८१	५
५	११	१६	५	२७	६	३८	५	४९	५	६०	८	७१	३	८२	९
६	१०	१७	५	२८	६	३९	५	५०	५	६१	१९	७२	३	८३	१०
७	१०	१८	५	२९	१५	४०	९	५१	१५	६२	९	७३	१०	८४	३
८	७	१९	५	३०	१५	४१	२०	५२	१७	६३	७	७४	१०	८५	८
९	७	२०	४	३१	१३	४२	१८	५३	१६	६४	७	७५	९	८६	६
१०	७	२१	४	३२	१२	४३	१७	५४	१५	६५	६	७६	५	८७	९
११	६	२२	४	३३	१०	४४	१५	५५	१०	६६	६	७७	५	—	—

अस्मिन् मण्डले सर्वे मन्त्रा मिलित्वा ७२७ सप्तविंशति सप्तशतानि सन्ति ।



अथ षष्ठे मण्डले षडनुवाकाः पञ्चसप्ततिश्च सूक्तानि सन्ति । तत्र प्रतिसूक्तमियं मन्त्रसंख्या बोध्या -

सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०
१	१३	११	६	२१	१२	३१	५	४१	५	५१	१६	६१	१४	७१	६
२	११	१२	६	२२	११	३२	५	४२	४	५२	१७	६२	११	७२	५
३	८	१३	६	२३	१०	३३	५	४३	४	५३	१०	६३	११	७३	३
४	८	१४	६	२४	१०	३४	५	४४	२४	५४	१०	६४	६	७४	४
५	७	१५	११	२५	९	३५	५	४५	३३	५५	६	६५	६	७५	११
६	७	१६	४८	२६	८	३६	५	४६	१८	५६	६	६६	११	—	—
७	७	१७	१५	२७	८	३७	५	४७	३१	५७	६	६७	११		
८	७	१८	१५	२८	८	३८	५	४८	२२	५८	४	६८	११		
९	७	१९	१३	२९	६	३९	५	४९	१५	५९	१०	६९	८		
१०	७	२०	१३	३०	५	४०	५	५०	१५	६०	१५	७०	६		

अस्मिन् मण्डले सर्वे मन्त्रा मिलित्वा ७६५ पञ्चषष्टि सप्तशतानि सन्ति ।

अथ सप्तमे मण्डले षडनुवाकाः चतुःशतं च सूक्तानि सन्ति । तत्र प्रतिसूक्तमियं मन्त्रसंख्यास्तीति वेदितव्यम् -

सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०
१	२५	१४	३	२७	५	४०	७	५३	३	६६	११	७९	५	९२	५
२	११	१५	१५	२८	५	४१	७	५४	३	६७	१०	८०	३	९३	८
३	१०	१६	१२	२९	५	४२	६	५५	८	६८	९	८१	६	९४	१२
४	१०	१७	७	३०	५	४३	५	५६	२५	६९	८	८२	१०	९५	६
५	९	१८	२५	३१	२२	४४	५	५७	७	७०	७	८३	१०	९६	६
६	७	१९	११	३२	२७	४५	४	५८	६	७१	६	८४	५	९७	१०
७	७	२०	१०	३३	१४	४६	४	५९	१२	७२	५	८५	५	९८	७
८	७	२१	१०	३४	२५	४७	४	६०	१२	७३	५	८६	८	९९	७
९	६	२२	९	३५	१५	४८	४	६१	७	७४	६	८७	७	१००	७
१०	५	२३	६	३६	९	४९	४	६२	६	७५	८	८८	७	१०१	६
११	५	२४	६	३७	८	५०	४	६३	६	७६	७	९८	५	१०२	३
१२	३	२५	६	३८	८	५१	३	६४	५	७७	६	९०	७	१०३	१०
१३	३	२६	५	३९	७	५२	३	६५	५	७८	५	९१	७	१०४	२५

अस्मिन् मण्डले सर्वे मन्त्र मिलित्वा ८४१ एकचत्वारिंशदष्टौ शतानि सन्ति ।

अथाष्टमे मण्डले दशानुवाकास्त्रिंशत् च सूक्तानि सन्ति । तत्र प्रतिसूक्तमित्यं मन्त्रसंख्या ज्ञेया-

सु०	मं०	सु०	मं०	सु०	मं०	सु०	मं०	सु०	मं०	सु०	मं०	सु०	मं०	सु०	मं०
१	३४	१४	१५	२७	२२	४०	१२	५३	८	६६	१५	७९	९	९२	३३
२	४२	१५	१३	२८	५	४१	१०	५४	८	६७	२१	८०	१०	९३	३४
३	२४	१६	१२	२९	१०	४२	६	५५	५	६८	१९	८१	९	९४	१२
४	२१	१७	१५	३०	४	४३	३३	५६	५	६९	१८	८२	९	९५	९
५	३९	१८	२२	३१	१८	४४	३०	५७	४	७०	१५	८३	९	९६	२१
६	४८	१९	३७	३२	३०	४५	४२	५८	३	७१	१५	८४	९	९७	१५
७	३६	२०	३६	३३	१९	४६	३३	५९	७	७२	१८	८५	९	९८	१२
८	२३	२१	१८	३४	१८	४७	१८	६०	२०	७३	१८	८६	५	९९	८
९	२१	२२	१८	३५	२४	४८	१५	६१	१८	७४	१५	८७	६	१००	१२
१०	६	२३	३०	३६	७	४९	१०	६२	१२	७५	१६	८८	६	१०१	१६
११	१०	२४	३०	३७	७	५०	१०	६३	१२	७६	१२	८९	७	१०२	२२
१२	३३	२५	२४	३८	१०	५१	१०	६४	१२	७७	११	९०	६	१०३	१४
१३	३३	२६	२५	३९	१०	५२	१०	६५	१२	७८	१०	९१	७	—	—

अस्मिन् मण्डले सर्वे मन्त्रा मिलित्वा १७२६ षड्विंशति सप्तदशशतानि सन्ति ।

अथ नवमे मण्डले सप्तानुवाकाश्चतुर्दशोत्तरं शतं च सूक्तानि सन्ति । तत्र प्रतिसूक्तमित्यं मन्त्रसंख्या वेद्या -

सु०	मं०	सु०	मं०	सु०	मं०	सु०	मं०	सु०	मं०	सु०	मं०	सु०	मं०	सु०	मं०
१	१०	१५	८	२९	६	४३	६	५७	४	७१	९	८५	१२	९९	८
२	१०	१६	८	३०	६	४४	६	५८	४	७२	९	८६	४८	१००	९
३	१०	१७	८	३१	६	४५	६	५९	४	७३	९	८७	९	१०१	१६
४	१०	१८	७	३२	६	४६	६	६०	४	७४	९	८८	८	१०२	८
५	११	१९	७	३३	६	४७	५	६१	३०	७५	५	८९	७	१०३	६
६	९	२०	७	३४	६	४८	५	६२	३०	७६	५	९०	६	१०४	६
७	९	२१	७	३५	६	४९	५	६३	३०	७७	५	९१	६	१०५	६
८	९	२२	७	३६	६	५०	५	६४	३०	७८	५	९२	६	१०६	१४
९	९	२३	७	३७	६	५१	५	६५	३०	७९	५	९३	५	१०७	२६
१०	९	२४	७	३८	६	५२	५	६६	३०	८०	५	९४	५	१०८	१६
११	९	२५	६	३९	६	५३	४	६७	३२	८१	५	९५	५	१०९	२२
१२	९	२६	६	४०	६	५४	४	६८	१०	८२	५	९६	२४	११०	१२
१३	९	२७	६	४१	६	५५	४	६९	१०	८३	५	९७	५८	१११	३
१४	८	२८	६	४२	६	५६	४	७०	१०	८४	५	९८	१२	११२	४
														११३	११
														११४	४

अस्मिन् मण्डले सर्वे मन्त्रा मिलित्वा १०९७ सप्तनवत्येकसहस्रं सन्ति ।

अथ दशमे मण्डले द्वादशानुवाकाएकनवतिशतं च सूक्तानि सन्ति । तत्र प्रतिसूक्तमियं मन्त्रसंख्या ज्ञेया -

सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०
१	७	२५	११	४९	११	७३	११	९७	२३	१२१	१०	१४५	६	१६९	४
२	७	२६	९	५०	७	७४	६	९८	१२	१२२	८	१४६	६	१७०	४
३	७	२७	२४	५१	९	७५	९	९९	१२	१२३	८	१४७	५	१७१	४
४	७	२८	१२	५२	६	७६	८	१००	१२	१२४	९	१४८	५	१७२	४
५	७	२९	८	५३	११	७७	८	१०१	१२	१२५	८	१४९	५	१७३	६
६	७	३०	१५	५४	६	७८	८	१०२	१२	१२६	८	१५०	५	१७४	५
७	७	३१	११	५५	८	७९	७	१०३	१३	१२७	८	१५१	५	१७५	४
८	९	३२	९	५६	७	८०	७	१०४	११	१२८	९	१५२	५	१७६	४
९	९	३३	९	५७	६	८१	७	१०५	११	१२९	७	१५३	५	१७७	३
१०	१४	३४	१४	५८	१२	८२	७	१०६	११	१३०	७	१५४	५	१७८	३
११	९	३५	१४	५९	१०	८३	७	१०७	११	१३१	७	१५५	५	१७९	३
१२	९	३६	१४	६०	१२	८४	७	१०८	११	१३२	७	१५६	५	१८०	३
१३	५	३७	१२	६१	२७	८५	४७	१०९	७	१३३	७	१५७	५	१८१	३
१४	१६	३८	५	६२	११	८६	२३	११०	११	१३४	७	१५८	५	१८२	३
१५	१४	३९	१४	६३	१७	८७	२५	१११	१०	१३५	७	१५९	६	१८३	३
१६	१४	४०	१४	६४	१७	८८	१९	११२	१०	१३६	७	१६०	५	१८४	३
१७	१४	४१	३	६५	१५	८९	१८	११३	१०	१३७	७	१६१	५	१८५	३
१८	१४	४२	११	६६	१५	९०	१६	११४	१०	१३८	६	१६२	६	१८६	३
१९	८	४३	११	६७	१२	९१	१५	११५	९	१३९	६	१६३	६	१८७	५
२०	१०	४४	११	६८	१२	९२	१५	११६	९	१४०	६	१६४	५	१८८	३
२१	८	४५	१२	६९	१२	९३	१५	११७	९	१४१	६	१६५	५	१८९	३
२२	१५	४६	१०	७०	११	९४	१४	११८	९	१४२	८	१६६	५	१९०	५
२३	७	४७	८	७१	११	९५	१८	११९	१३	१४३	६	१६७	४	१९१	४
२४	६	४८	११	७२	९	९६	१३	१२०	९	१४४	६	१६८	४	-	-

अस्मिन्मण्डले सर्वे मन्त्रा मिलित्वा १७५४ चतुःपञ्चाशत् सप्तदशशतानि सन्ति ।

अस्य ऋग्वेदस्य दशसु मण्डलेषु ८५ पञ्चाशीतिरनुवाकाः, १०२८ अष्टाविंशतिसहस्रं सूक्तानि १०५८९ दशसहस्राणि पञ्चशतानि एकोननवतिश्च मन्त्राः सन्तीति वेद्यम् । स एतैः पूर्वोक्ताष्टकाध्यायवर्गमण्डलानुवाकसूक्तमन्त्रैर्मूषितोऽयमृग्वेदोऽस्तीति वेदितव्यम् ॥

अथ दशमे मण्डले द्वादशानुवाकाएकनवतिशतं च सूक्तानि सन्ति । तत्र प्रतिसूक्तमित्यं मन्त्रसंख्या ज्ञेया -

सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०	सू०	मं०
१	७	२५	११	४१	११	७३	११	१७	२३	१२१	१०	१४५	६	१६९	४
२	७	२६	९	५०	७	७४	६	१८	१२	१२२	८	१४६	६	१७०	४
३	७	२७	२४	५१	९	७५	९	१९	१२	१२३	८	१४७	५	१७१	४
४	७	२८	१२	५२	६	७६	८	१००	१२	१२४	९	१४८	५	१७२	४
५	७	२९	८	५३	११	७७	८	१०१	१२	१२५	८	१४९	५	१७३	६
६	७	३०	१५	५४	६	७८	८	१०२	१२	१२६	८	१५०	५	१७४	५
७	७	३१	११	५५	८	७९	७	१०३	१३	१२७	८	१५१	५	१७५	४
८	९	३२	९	५६	७	८०	७	१०४	११	१२८	९	१५२	५	१७६	४
९	९	३३	९	५७	६	८१	७	१०५	११	१२९	७	१५३	५	१७७	३
१०	१४	३४	१४	५८	१२	८२	७	१०६	११	१३०	७	१५४	५	१७८	३
११	९	३५	१४	५९	१०	८३	७	१०७	११	१३१	७	१५५	५	१७९	३
१२	९	३६	१४	६०	१२	८४	७	१०८	११	१३२	७	१५६	५	१८०	३
१३	५	३७	१२	६१	२७	८५	४७	१०९	७	१३३	७	१५७	५	१८१	३
१४	१४	३८	५	६२	११	८६	२३	११०	११	१३४	७	१५८	५	१८२	३
१५	१४	३९	१४	६३	१७	८७	२५	१११	१०	१३५	७	१५९	६	१८३	३
१६	१४	४०	१४	६४	१७	८८	१९	११२	१०	१३६	७	१६०	५	१८४	३
१७	१४	४१	३	६५	१५	८९	१८	११३	१०	१३७	७	१६१	५	१८५	३
१८	१४	४२	११	६६	१५	९०	१६	११४	१०	१३८	६	१६२	६	१८६	३
१९	८	४३	११	६७	१२	९१	१५	११५	९	१३९	६	१६३	६	१८७	५
२०	१०	४४	११	६८	१२	९२	१५	११६	९	१४०	६	१६४	५	१८८	३
२१	८	४५	१२	६९	१२	९३	१५	११७	९	१४१	६	१६५	५	१८९	३
२२	१५	४६	१०	७०	११	९४	१४	११८	९	१४२	८	१६६	५	१९०	५
२३	७	४७	८	७१	११	९५	१८	११९	१३	१४३	६	१६७	४	१९१	४
२४	६	४८	११	७२	९	९६	१३	१२०	९	१४४	६	१६८	४	-	-

अस्मिन्मण्डले सर्वे मन्त्रा मिलित्वा १७५४ चतुःपञ्चाशत् सप्तदशशतानि सन्ति ।

अस्य ऋग्वेदस्य दशसु मण्डलेषु ८५ पञ्चाशीतिरनुवाकाः, १०२८ अष्टाविंशतिसहस्रं सूक्तानि १०५८९ दशसहस्राणि पञ्चशतानि एकेननवतिञ्च मन्त्राः सन्तीति वेद्यम् । स एतैः पूर्वोक्ताष्टकाध्या-
यवर्गमण्डलानुवाकसूक्तान्यैर्मूषितोऽयमृग्वेदोऽस्तीति वेदितव्यम् ॥

ऋग्वेद भाष्य

भाग-१

ओ३म् ओ३म् ओ३म्
ओ३म् ओ३म् ओ३म्
ओ३म् ओ३म् ओ३म्

हे॒ये हे॒ये हे॒ये

ओ३म् ओ३म् ओ३म्
ओ३म् ओ३म् ओ३म्

हे॒ये हे॒ये हे॒ये

ओ३म् ओ३म् ओ३म्
ओ३म् ओ३म् ओ३म्

हे॒ये हे॒ये हे॒ये

ओ३म् ओ३म् ओ३म्
ओ३म् ओ३म् ओ३म्

हे॒ये हे॒ये हे॒ये

अथ प्रथम मण्डलम्

॥ ओ३म् ॥

ऋग्वेद भाष्य

अथ प्रथम मण्डलम्

सूक्त-१

अग्नि शब्दधी ईश्वर अने भौतिक अग्नि.

अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम् ॥ १ ॥

[ईश्वर]

पदार्थ : यज्ञस्य-अमे विद्वानोना सत्कार, संगति, मडिमा अने कर्मना होतारम्-दाता-आपनार तथा ग्रहण करनार-लेनार पुरोहितम्-सृष्टिनी उत्पत्तिना समय पूर्वे परमाणु आदिने धारण करनार तथा ऋत्विजम्-प्रत्येक उत्पत्ति काणमां स्थूण सृष्टिना सर्जक तथा ऋतु-ऋतु (प्रत्येक उत्पत्ति काणमां) उपासना करवा योग्य रत्नधातमम्-सुंदर पृथ्वी अने सुवर्ण आदि रत्नोने निश्चय धारण करनार देवम्-दाता अने सर्व पदार्थोना प्रकाशक (अग्निम्) परमेश्वरनी ईळे-स्तुति करीअे छीअे, प्रार्थना करीअे छीअे.

[भौतिक अग्नि]

यज्ञस्य-अमे विद्यादि दान तथा शिल्पविद्याथी उत्पन्न थनार योग्य पदार्थोना होतारम्-दाता (अने ग्रहीता) तथा पुरोहितम्-ते पदार्थोनी उत्पत्ति पूर्वे पण छेदन, धारण, आकर्षण आदि गुणोने धारण करनार ऋत्विजम्-शिल्पविद्याना साधनो माटे रत्नधातमम्-श्रेष्ठ सुवर्ण आदि रत्नोने धारण करावनार तथा देवम्-युद्ध आदिमां कणायुक्त शास्त्रोमां विजय करावनार (अग्निम्) ईळे भौतिक अग्निनी वारंवार ईच्छा-कामना करीअे छीअे.

प्रमाणना अर्थ : (परमेश्वर परक प्रमाणोना अर्थ) :

अग्निम्-अग्नि शब्दना ईश्वर अने भौतिक अग्नि अेम बे अर्थोनुं थाय छे, तेमां परमेश्वर परक अर्थमां निम्न प्रमाणो छे.

ऋग्वेदना इन्द्रं मित्रः (१/१६४/४६) आ प्रमाणथी परब्रह्मना ईन्द्र आदि अनेक नामो छे, अेम जाणवुं जोईअे. यजुर्वेदना तदेवाग्निं (३२/१) मंत्रना प्रमाणथी जे सख्यदानंद आदि लक्षण युक्त ब्रह्म छे, तेने अत्रे अग्नि आदि नामोथी कडेवामां आवेल छे, तेम जाणवुं जोईअे. शतपथ ब्राह्मणना 'ब्रह्म ह्यग्निं' (१/४/२/११) तथा 'आत्मा वा अग्निः' (१/२/३/४) आ

પ્રમાણથી અગ્નિ શબ્દથી બ્રહ્મ અને આત્માનું ગ્રહણ થાય છે. શતપથ બ્રાહ્મણના **અયં વા અગ્નિં** (૧/૧/૨/૪૨) પ્રમાણથી અગ્નિ શબ્દથી પ્રજા અર્થાત્ ભૌતિક અગ્નિ અને પ્રજાપતિ અર્થાત્ ઈશ્વરનું ગ્રહણ થાય છે. શતપથ બ્રાહ્મણના **અગ્નિર્વેં દેવાનાં વ્રતપતિં** (૧/૧/૧/૨, ૫) પ્રમાણથી સત્યાચરણરૂપ નિયમનું પાલન કરવું તે વ્રત કહેવાય છે અને તેના પતિ (વ્રતપતિ) ઈશ્વર છે. અત્રે અગ્નિને વ્રતપતિ કહેવામાં આવેલ છે.

ઋગ્વેદના **ત્રિભિઃ પવિત્રેઃ** (૩/૨૬/૮) આ મંત્રમાં અગ્નિ શબ્દની અનુવૃત્તિ છે. અત્રે અગ્નિને જ્ઞાનવાન હોવાથી **‘પ્રજાનન્’** કહેલ છે. અને સર્વજ્ઞ હોવાથી **‘પર્યપશ્યત્’** ક્રિયાનો પ્રયોગ કરેલ છે. તેથી અહીં અગ્નિ શબ્દથી ઈશ્વરનું ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે.

યારક મુનિએ પણ સ્થૌલાષ્ઠીવિ ઋષિના મતે ઈશ્વર અને ભૌતિક અર્થ કરવા માટે **‘અગ્નિ’** શબ્દપૂર્વક આ મંત્રની વ્યાખ્યા **અગ્નિઃ કસ્માદગ્રણીર્ભવતિ** (નિરુક્ત ૭/૧૪-૧૫) કરતા અગ્નિ = અગ્રણી કહેલ છે. જેનો અર્થ સર્વોત્તમ ઈશ્વર છે, કારણ કે યજ્ઞોમાં પ્રથમ ઈશ્વરનું જ પ્રતિપાદન થાય છે, તેથી અગ્નિ શબ્દથી ઈશ્વરનું ગ્રહણ કરવામાં આવે છે. **‘દગ્ધાત્’** વિશેષણ હોવાથી ભૌતિક અગ્નિનું પણ ગ્રહણ થાય છે.

મનુસ્મૃતિના **‘પ્રજ્ઞાસિતારં સર્વેષામં’** તથા **‘એતમેકે વદન્ત્યગ્નિં’** (૧૨/૧૨૨, ૧૨૩) આ પ્રમાણોથી પણ પરમેશ્વરના નામ છે. ઋગ્વેદના **ઈંલ્લે** (૩/૨૭/૨) આ પ્રમાણથી **‘વિપશ્ચિત્’** અગ્નિનું વિશેષણ હોવાથી **‘અગ્નિ’** શબ્દથી ઈશ્વરનું ગ્રહણ થાય છે. કારણ કે ઈશ્વર **‘વિપશ્ચિત્’** અર્થાત્ અનંત વિદ્યાવાન અને ચેતન સ્વરૂપ છે.

(ભૌતિક અગ્નિપરક પ્રમાણોના અર્થ :) હવે અગ્નિ શબ્દથી માત્ર ભૌતિક અર્થ ગ્રહણના પ્રમાણ કહેવામાં આવે છે. શતપથ બ્રાહ્મણના **‘યદસ્વં તં’** (૨/૧/૪/૧૬) તથા **‘વૃષો અગ્નિઃ । અશ્વો હ વાં’** (૧/૩/૩/૨૧-૩૦) આ પ્રમાણોમાં અગ્નિને ‘વૃષ’ કહેવામાં આવેલ છે. કારણ કે અગ્નિ વૃષ = બળદની સમાન યાનો-વાહનોને વોઢા-દેશદેશાન્તરમાં પહોંચાડનાર છે. તેમજ અગ્નિ આશુગામી-અત્યંત ઝડપી હોવાથી ‘અશ્વ’ બનીને કળાયંત્રોને પ્રેરિત કરીને શીઘ્ર ચલાવનાર હોવાથી દેવ અર્થાત્ શિલ્પવિદ્યા જ્ઞાતા વિદ્વાનોના વિમાન આદિ યાનો-વાહનોને વેગથી દૂર-દૂર દેશોમાં પહોંચાડે છે.

શતપથ બ્રાહ્મણના **તૂર્ણિર્હવ્યવાટ્** (૧/૩/૪/૧૨) આ પ્રમાણથી હવ્ય અર્થાત્ યાનોના પ્રાપક હોવાથી અગ્નિને ‘હવ્યવાટ્’ કહે છે અને યાનોને શીઘ્રતાથી ચલાવનાર હોવાથી ‘તૂર્ણિ’ કહે છે. તથા **‘અગ્નિર્વેં યોનિયજ્ઞસ્ય’** (૧/૪/૩/૧૧) વગેરે અન્ય અનેક પ્રમાણો દ્વારા ‘અશ્વ’ નામથી અત્રે ભૌતિક અગ્નિનું ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. શીઘ્રગમનના કારણે અગ્નિને ‘અશ્વ’ કહેવામાં આવે છે.

ઋગ્વેદના **‘વૃષો અગ્નિં’** (૩/૨૭/૧૪) આ પ્રમાણથી અગ્નિ શબ્દથી ભૌતિક અગ્નિનું ગ્રહણ થાય છે. જ્યારે શિલ્પવિદ્યાના વિદ્વાનો એ અગ્નિને યંત્રકળાઓ દ્વારા યાનો-વાહનોમાં પ્રદીપ્ત કરે છે; ત્યારે તે **દેવવાહન** કહેવાય છે અર્થાત્ યાનમાં બેઠેલા વિદ્વાનોને અશ્વ અને બળદની સમાન શીઘ્ર દેશાન્તરમાં પહોંચાડે છે.

હે મનુષ્યો ! તમે **હવિષ્યમન્તમ્**-વેગાદિ ગુણયુક્ત અશ્વરૂપ અગ્નિના ગુણોની **ઈંલ્લે** શોધ કરો.

સૂક્ત-૯૦

અર્થાત્ અગ્નિની કાર્યસિદ્ધિની કામના કરો.

[આ મંત્રમાં અગ્નિ શબ્દના ઈશ્વર અને ભૌતિક અગ્નિ બે અર્થ પરક જે સંસ્કૃત પ્રમાણોના પ્રથમ પદ-શબ્દ આ અનુવાદમાં આપેલ છે. તેમજ અન્ય પુરોહિતમ્-વગેરે પદોના પ્રમાણોનો વિસ્તાર સ્વામી દયાનંદના સંસ્કૃત ભાષ્યમાં દ્રષ્ટવ્ય છે. - અનુવાદક] (૧)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં અગ્નિ શબ્દથી ઈશ્વર અને ભૌતિક અગ્નિ એ બન્નેનું ગ્રહણ થાય છે, એમ સમજવું જોઈએ. આથી આગળ પણ જ્યાં-જ્યાં મંત્ર ભૂમિકામાં 'અપદિશ્યતે' એ ક્રિયાપદનો પ્રયોગ કરેલ છે, ત્યાં સર્વ સ્થળે તેના કર્તા ઈશ્વર જ જાણવા જોઈએ, કારણ કે-વેદોનો તેણે જ ઉપદેશ કરેલ છે.

પિતા સમાન કૃપાકારક ઈશ્વરે સમસ્ત વિદ્યાઓની પ્રાપ્તિ માટે સર્વ જીવોના હિત માટે વેદોનો (પ્રત્યેક કલ્પની આદિમાં) ઉપદેશ આપેલ છે. જેમ પિતા અથવા અધ્યાપક પોતાના પુત્ર અથવા શિષ્યને ઉપદેશ આપે છે કે-તું આમ વચન બોલ, આમ કર, સત્ય બોલ, પિતા અને આચાર્યની સેવા કર, મિથ્યા આચરણ ન કર, તેમ અત્રે પણ સમજવું જોઈએ.

વેદ સર્વ જીવોના કલ્યાણ માટે-ઉત્તમ સુખ માટે પ્રકટ કરેલ છે. કારણ કે અત્રે ઉત્તમ પુરુષ 'ઙ્ઙ'નો પ્રયોગ છે. વેદનો ઉપદેશ પરોપકાર માટે (કરવામાં આવેલ) છે.

અત્રે અગ્નિ શબ્દથી પરમાર્થવિદ્યા અને વ્યવહારવિદ્યાની સિદ્ધિ માટે પરમેશ્વર અને ભૌતિક 'અગ્નિ' બે અર્થ કરવામાં આવેલ છે. પૂર્વકાળમાં આર્યોએ જે 'અશ્વવિદ્યા' નામની શીઘ્ર ગમન માટે શિલ્પવિદ્યા સિદ્ધ કરેલ હતી, તેમ સાંભળવામાં આવે છે, તે અગ્નિવિદ્યા જ (ઉન્નત) હતી.

કારણ કે પરમેશ્વર સ્વયં પ્રકાશ સ્વરૂપ અને સર્વપ્રકાશક હોવાથી અનંત જ્ઞાનવાન છે.

ભૌતિક અગ્નિ રૂપ, દાહ, પ્રકાશ, વેગ તથા છેદન વગેરે ગુણયુક્ત હોવાથી શિલ્પ વિદ્યાનું મુખ્ય કારણ છે; તેથી તેનું અત્રે પ્રથમ મંત્રમાં ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૧)

અગ્નિઃ પૂર્વેભિર્ઋષિભિરીડ્યો નૂતનૈરુતઃ । સ દેવાં એહ વક્ષતિ ॥ ૨ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : જે એ અગ્નિઃ-પરમેશ્વર પૂર્વેભિઃ-વિદ્યાનું અધ્યયન કરેલ વર્તમાન અથવા પ્રાચીન વિદ્વાનો દ્વારા ઉત-અને નૂતનૈઃ-વેદાર્થનું અધ્યયન કરનારા બ્રહ્મચારીઓ તથા તર્કો દ્વારા ઈન્દ્રિયઃ-નિત્ય સ્તુતિ કરવા યોગ્ય તથા અન્વેષણ-શોધને યોગ્ય છે. સઃ-તે પૂર્વોક્ત ઈશ્વર એહ-આ વર્તમાન સંસારમાં સર્વત્ર અથવા આ જન્મમાં દેવાન્-દિવ્ય ઈન્દ્રિયો, વિદ્યાદિ દિવ્ય ગુણોને આ + વક્ષતિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવે.

[ભૌતિક અગ્નિ]

જે એ અગ્નિઃ-ભૌતિક અગ્નિ પૂર્વેભિઃ-વિદ્યાનું અધ્યયન કરેલ વર્તમાન અથવા પ્રાચીન વિદ્વાનો

જે મંત્રોના અર્થોને **વિદિતવન્તો**-જાણી ચૂક્યા છે, જે ધર્મ અને વિદ્યાનો પ્રચાર કરનાર, સત્યોપદેશથી સર્વ પર કૃપા કરનાર, છલ-રહિત, પુરુષાર્થી, મોક્ષ અને ધર્મની સિદ્ધિને માટે ઈશ્વરના જ ઉપાસક, કામ અને અર્થની સિદ્ધિ માટે ભૌતિક અગ્નિના ગુણોના જ્ઞાન દ્વારા કાર્ય સિદ્ધ કરનારા મનુષ્યો છે, તેઓનું ઋષિ શબ્દથી ગ્રહણ કરવામાં આવે છે.

પૂર્વકાલીન અને નવીન વિદ્વાનોનો જે યુક્તિ પ્રમાણથી સિદ્ધ તત્ત્વ-જ્ઞાન માટે તર્ક છે અને જે કારણ-જગત અને કાર્યજગતમાં સ્થિત પ્રાણ છે, તેની સાથે યોગાભ્યાસ દ્વારા ઈશ્વરની વંદના કરવી અને ભૌતિક અગ્નિના ગુણોનું અન્વેષણ-શોધ કરવી જોઈએ.

સર્વજ્ઞ ઈશ્વરના દ્વારા પોતાના જ્ઞાનથી મનુષ્ય-જ્ઞાનની અપેક્ષાથી ભૂતકાલીન અને વર્તમાનકાલીન ઋષિઓને જાણીને આ મંત્રમાં (તત્સંબંધી) ઉપદેશ કરવાથી કોઈ દોષ લાગી શકતો નથી, કારણ કે વેદ સર્વજ્ઞ પરમેશ્વરનું વચન છે. તે આ રીતે ઉપાસના કરવામાં આવેલ એ (પરમેશ્વર) અને વ્યવહાર કાર્યો પ્રયુક્ત (ભૌતિક અગ્નિ) સર્વોત્તમ ગુણો અને ભોગોને પ્રાપ્ત કરાવે છે. આ મંત્રમાં પ્રાચીનની અપેક્ષાથી નવીન અને નવીનની અપેક્ષાથી પ્રાચીનતા જાણવામાં આવે છે.

આ મંત્રનો અર્થ નિરુક્તકાર યાર્સ્કમુનિએ કર્યો છે કે-જે પ્રાકૃત અથવા અજ્ઞાની લોકો દ્વારા પાક કાર્ય-રસોઈ વગેરે કામમાં જે પ્રસિદ્ધ અગ્નિનો પ્રયોગ કરવામાં આવે છે. તેનું અહીં આ મંત્રથી ગ્રહણ થતું નથી. પરંતુ સર્વના પ્રકાશક પરમેશ્વર અને સર્વ વિદ્યાઓનું કારણ, જેનું નામ 'વિદ્યુત્' છે. તેનું અગ્નિ શબ્દથી ગ્રહણ કરવામાં આવે છે. (૨)

અગ્નિનાં રયિમશ્નવત્ પોષમેવ દિવેદિવે । યશસં વીરવત્તમમ્ ॥ ૩ ॥

[પરમેશ્વર]

પદાર્થ : જે મનુષ્ય અગ્નિના-પરમેશ્વરની ઉપાસના દ્વારા **એવ-જ દિવે દિવે-પ્રતિદિન પોષમ્-આત્મા** અને શરીરની પુષ્ટિથી 'સુખદાયક' **યશસમ્-સર્વોત્તમ કીર્તિ વર્ધક, વીરવત્તમમ્-સર્વથા વીર** (વીર = વિદ્વાંસઃ શૂરાશ્ચ) = વિદ્વાન અને શૂરવીર જનોથી યુક્ત **રયિમ્-વિદ્યા** અને સુવર્ણ આદિ ઉત્તમ ધનને **અશ્નવત્-પ્રાપ્ત** કરે છે.

[ભૌતિક અગ્નિ]

મનુષ્ય અગ્નિના-ભૌતિક અગ્નિની સારી રીતે યોજના કરવાથી **એવ-જ દિવે દિવે-પ્રતિદિન પોષમ્-આત્મા** અને શરીરની પુષ્ટિથી સુખદાયક **યશસમ્-સર્વોત્તમ કીર્તિવર્ધક વીરવત્તમમ્-સર્વથા વીર** = વિદ્વાન અને શૂરવીરજનોથી યુક્ત **રયિમ્-વિદ્યા** અને સુવર્ણ આદિ ઉત્તમ ધનને **અશ્નવત્-પ્રાપ્ત** કરે છે. (૩)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં અગ્નિથી ઈશ્વર અને ભૌતિક અગ્નિનું ગ્રહણ થાય છે, ઈશ્વરની આજ્ઞામાં રહેનાર અર્થાત્ ચાલનાર તથા શિલ્પવિદ્યા આદિ કાર્યોની સિદ્ધિ માટે અગ્નિને સિદ્ધ કરેલ મનુષ્યને અક્ષય-નાશરહિત ધનની પ્રાપ્તિ થાય છે. જેથી સદા કીર્તિ, વૃદ્ધિ અને વીરપુરુષ બને છે. (સર્વે એ આ પ્રકારનું ધન પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ.) (૩)

अग्ने यं यज्ञमध्वरं विश्वतः परिभूरसि। स इहेवेषु गच्छति ॥ ४ ॥

[परमेश्वर]

पदार्थ : હે અગ્ને-પરમેશ્વર ! આપ યમ-જે અધ્વરમ્-હિંસા, અધર્મ આદિ દોષોથી રહિત યજ્ઞમ્-પ્રથમ મંત્રોક્ત-વિદ્યા આદિ પદાર્થોના દાનરૂપ યજ્ઞના પરિભૂ:-વ્યાપ્ત થઈને પાલન કરનાર અસિ-છો, એ જ રીતે તે અગ્નિ પણ કાર્યોને સિદ્ધ કરનાર છે, સ-તે યજ્ઞ ઇત્-જ દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં ગચ્છતિ-પ્રાપ્ત થાય છે.

[ભૌતિક અગ્નિ]

અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ યમ્-જે અધ્વરમ્-હિંસા, અધર્મ આદિ દોષોથી રહિત યજ્ઞમ્-પ્રથમ મંત્રોક્ત યજ્ઞના વિશ્વતઃ-સર્વ જળમય અને પૃથિવીમય પદાર્થોના વિવિધ આશ્રયથી પરિભૂ:-સર્વત્ર પદાર્થોમાં વ્યાપ્ત કરનાર અસિ-બને છે, તેમ એ પરમેશ્વર પણ સુખને સિદ્ધ કરનાર છે સ-તે યજ્ઞ ઇત્-જ દેવેષુ-દિવ્ય પદાર્થોમાં ગચ્છતિ-પ્રાપ્ત થાય છે. (૪)

ભાવાર્થ : કારણ કે એ વ્યાપક પરમેશ્વર પોતાની સત્તાથી પૂર્વોક્ત યજ્ઞની સર્વત્રથી નિરંતર રક્ષા કરે છે, તેથી એ યજ્ઞ દિવ્ય ગુણોની પ્રાપ્તિનું કારણ બને છે. એ જ રીતે પરમેશ્વર દ્વારા જે દિવ્ય ગુણયુક્ત અગ્નિની રચના કરેલ છે, તેથી એ દિવ્ય શિલ્પવિદ્યાના કર્તા છે. જે ધાર્મિક ઉદ્યોગી વિદ્વાન મનુષ્ય છે, તે જ એ ગુણોને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૪)

अग्निर्होता कविक्रतुः सत्यश्चित्रश्रवस्तमः। देवो देवेभिरा गमत् ॥ ५ ॥

[परमेश्वर]

પદાર્થ : જે સત્ય:-શ્રેષ્ઠ જનોના હિતકારી અથવા તેમાં ઉત્તમ, ચિત્રશ્રવસ્તમ:-અત્યંત અદ્ભૂત શ્રવણયુક્ત, કવિક્રતુ:-કવિ = સર્વજ્ઞ, કાન્તદર્શી અને સર્વના કર્તા, સમસ્ત વિદ્યાઓથી યુક્ત વેદશાસ્ત્રનો ઉપદેશ કરનાર, હોતા-દાતા અને ગ્રહીતા-ગ્રહણ કરનાર, દેવ:-સ્વ પ્રકાશ સ્વરૂપ અગ્નિ:-પરમેશ્વર છે, તે દેવેભિ:-વિદ્વાનોની સહાયથી આગમત્-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય.

[ભૌતિક અગ્નિ]

જે સત્ય:-સત્-પદાર્થો માટે હિતકારી અને તેમાં ઉત્તમ ચિત્રશ્રવસ્તમ:-અત્યંત અદ્ભૂત ગુણ-શ્રવણયુક્ત કવિક્રતુ:-સર્વ પદાર્થોના દર્શક, સમસ્ત પદાર્થોની રચનાના સાધનભૂત હોતા-પ્રકાશક દેવ:-પ્રકાશ કરનાર અગ્નિ:-ભૌતિક અગ્નિ છે; તે દેવેભિ:-દિવ્ય ગુણો સહિત આગમત્-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે. (૫)

ભાવાર્થ : ‘અગ્નિ’ શબ્દથી અત્રે પરમેશ્વરનું ગ્રહણ કરવામાં આવે છે, કારણ કે તે સર્વાધાર સર્વજ્ઞ, સર્વના રચયિતા, વિનાશ રહિત, આનંદમય અને અનંત શક્તિમાન આદિ ગુણોના કારણે

સર્વ પ્રકાશક છે; અને ભૌતિક અગ્નિના આકર્ષણ આદિ ગુણો તથા તેના મૂર્ત દ્રવ્યોનો ધારક હોવાથી તેનું પણ ગ્રહણ થાય છે. (૫)

यद्भङ्गं दाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि । तवेत्तत् सत्यमङ्गिरः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે અગ્નિ:—બ્રહ્માંડના અંગ રૂપ પૃથિવી આદિ પદાર્થોના પ્રાણરૂપ તથા શરીરના અંગોના અન્તર્યામી રૂપથી રસ-રૂપ બનીને રક્ષા કરનાર હોવાથી અત્રે અંગિર શબ્દથી ઈશ્વરનું ગ્રહણ કરવામાં આવે છે. અગ્નિ:—સર્વના મિત્ર અગ્ને-પરમેશ્વર ત્વમ્-મંગલમય તું ! યત્ જેથી દાશુષે-નિર્લોભતાથી શ્રેષ્ઠ દાન દાતા મનુષ્ય (સર્વસ્વનું દાન કરનાર) ભદ્રમ્-સર્વ શિષ્ટ વિદ્વાનોથી સેવનીય કલ્યાણ કરિષ્યસિ-કરે છે, તત્-એટલા માટે તવ-આપનું ઇત્-જ એ સત્યમ્-સત્ય અર્થાત્ સત્-પદાર્થોમાં સુખનો વિસ્તાર કરનાર, સત્થી ઉત્પન્ન સદ્-ગુણોથી યુક્ત વ્રત છે. (૬)

ભાવાર્થ : જે ન્યાયકારી, સર્વના મિત્ર બનતાં દયાળુ, કલ્યાણકારી, સર્વના સુખને ઈચ્છનાર-આપનાર, પરમેશ્વર છે, તેની ઉપાસનાથી જ જીવાત્મા સાંસારિક અને પરમાર્થિક સુખ પ્રાપ્ત કરે છે, અન્યની ઉપાસનાથી નહીં. કારણકે ઉક્ત સુખ આપવાનો સ્વભાવ અને સામર્થ્ય પરમેશ્વરમાં જ છે. (અન્યમાં નથી.)

જે જેવી રીતે શરીરધારી પોતાના શરીરને ધારણ કરે છે, તેવી રીતે જ તે (પરમેશ્વર) સમસ્ત સંસારમાં વ્યાપક બનીને સર્વ સંસારને ધારણ કરી રહેલ છે; તથા જેણે આ સંસારનું પાલન કરેલ છે અને યથાવત્ અવસ્થાપિત કરેલ છે તેથી તે અંગિરા કહેવાય છે. (૬)

उप त्वाग्ने दिवेदिवे दोषावस्तर्धिया वयम् । नमो भरन्तु एमसि ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સર્વને ઉપાસના કરવા યોગ્ય પરમેશ્વર ! વયમ્-અમે ઉપાસક-લોકો ધિયા-અમારી પ્રજ્ઞા-બુદ્ધિ અને કર્મથી દિવે દિવે-વિજ્ઞાનના અત્યંત પ્રકાશને માટે દોષાવસ્ત:-રાત અને દિવસમાં નિરંતર ત્વા-આપને ભરન્ત:-ધારણ કરીને નમ:-નમ્રતાપૂર્વક નમસ્કાર કરતા ઉપ + આ + ઇમસિ-(આપના શરણને) પ્રાપ્ત કરીએ છીએ.

ભાવાર્થ : હે સર્વ દ્રષ્ટા-સર્વને જોનાર ! સર્વ વ્યાપક ! અને ઉપાસના યોગ્ય (પરમેશ્વર) ! અમે અમારા સર્વ કાર્યો કરતા આપને એક ક્ષણ પણ ભૂલતા નથી, તેથી અમારામાં અધર્મ કરવાની કદી પણ ઈચ્છા થતી નથી. કારણ કે અમને એ વાત જ્ઞાત (નિશ્ચય) છે કે સર્વજ્ઞ અને સર્વના સાક્ષી એવા આપ અમારા સર્વ કાર્યોને જોઈ રહ્યાં છો. (૭)

राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिविम् । वर्धमानं स्वे दमे ॥ ८ ॥

પદાર્થ : અમે સ્વે-પોતાના દમે-જેમાં સર્વ મહાન દુ:ખોથી ધૂટીને પરમ આનંદ પદની-મોક્ષ સુખની પ્રાપ્તિ માટે વર્ધમાનમ્-હ્રાસરહિત-સર્વથી મહાન રાજન્તમ્-પ્રકાશમાન અધ્વરાણામ્-પૂર્વોક્ત યજ્ઞાદિ શ્રેષ્ઠ

કર્મ અને ધાર્મિક મનુષ્યોના ગોપામ્-પૃથિવી આદિ પદાર્થોના રક્ષક, ઋણસ્ય-સત્ય અર્થાત્ સમસ્ત વિદ્યાઓથી યુક્ત ચાર વેદ અથવા સનાતન જગતનું કારણ પ્રકૃતિ (કાર્ય જગત્ ના અનાદિ કારણ)ના દીદિવિમ્-પ્રકાશક પરમેશ્વરને અમે લોકો ઉપાસના યોગથી નિત્ય **ઉપૈમસિ-પ્રાપ્ત** કરીએ છીએ. (૮)

ભાવાર્થ : જેવી રીતે પરમાત્મા પોતાની સત્તા અને આનંદ સ્વરૂપમાં-ક્ષય અને અજ્ઞાનથી રહિત, અન્તર્યામી રૂપથી સર્વ જીવોને સત્યનો ઉપદેશ, આપ્ત પુરુષો-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનો અને સંસારની સદા રક્ષા કરે છે; તેવી રીતે અમે તેના ઉપાસકો પણ આનંદિત, વૃદ્ધિ યુક્ત અને વિજ્ઞાનવાન બનીને અભ્યુદય = સાંસારિક ઉન્નતિ અને નિઃશ્રેયસ = મોક્ષને સદા પ્રાપ્ત કરતા રહીએ. (૮)

સ નઃ પિતેવ્ સૂનવેઽગ્ને સૂપાયનો ભવ । સર્ચસ્વા નઃ સ્વસ્તયૈ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે **સઃ**-ઉક્ત ગુણયુક્ત **અગ્ને-જ્ઞાનસ્વરૂપ** જગદીશ્વર ! **પિતેવ-**જેમ પિતા **સૂનવે-**પોતાના પુત્રને આપનાર હોય છે, તેમ આપ **નઃ-અમારા** માટે **સૂપાયનઃ-**ઉત્તમ જ્ઞાન, સુખના સાધનો અને શ્રેષ્ઠ સાધનો પ્રાપ્ત કરાવનાર છો. તેના દાતા બનીને **નઃ-અમને સ્વસ્તયે-સર્વ સુખ** અને કલ્યાણને માટે **સર્ચસ્વ-સંયુક્ત** કરો. (૯)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ એવો પ્રયત્ન કરવો જોઈએ અને ઈશ્વરથી પ્રાર્થના કરવી જોઈએ કે- હે ભગવન્ ! આપ અમારી રક્ષા કરીને અમને સદા શુભ ગુણ-કર્મોમાં નિયુક્ત કરો. જેમ પિતા પોતાના સંતાનોનું સારી રીતે પાલન કરીને તથા ઉત્તમ શિક્ષા આપીને તેમને શુભ ગુણ-કર્મોમાં યુક્ત કરીને શ્રેષ્ઠ કર્મ કરનાર બનાવે છે, તેમ આપ પણ આપની કૃપાથી અમને બનાવો. (૯)

સૂક્ત-૨

વાયુવાયાહિ દર્શતિમે સોમા અરંકૃતાઃ । તેષાં પાહિ શ્રુધી હર્વમ્ ॥ ૧ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : **દર્શત-**હે જ્ઞાન દૃષ્ટિથી દર્શન યોગ્ય **વાયો-**અનંત બળયુક્ત, સર્વના પ્રાણરૂપ અન્તર્યામી જગદીશ્વર ! આપ અમારા હૃદયમાં **આયાહિ-આવો** (પ્રકાશિત થાઓ) આપના દ્વારા **ઙમે-આ** પ્રત્યક્ષ **સોમાઃ-**સર્વ સંસારી-ઉત્પન્ન પદાર્થોને **અરંકૃતાઃ-**અલંકૃત અર્થાત્ સુશોભિત થયેલ છે. **તેષામ્-આપ** જ એ પદાર્થોના રક્ષક છો અને તેની **પાહિ-રક્ષા** કરો તથા **હર્વમ્-અમારી** સ્તુતિને **શ્રુધિ-સાંભળો**.

[ભૌતિક વાયુ]

દર્શત-સ્પર્શ આદિ ગુણોથી દર્શન યોગ્ય **વાયો-**સર્વ મૂર્તિમાન પદાર્થોના આધાર અને પ્રાણીઓના જીવનનું કારણ ભૌતિક વાયુ **આયાહિ-સર્વને** પોતાની ગતિથી પ્રાપ્ત થાય છે અને જે ભૌતિક વાયુએ **ઙમે-પ્રત્યક્ષ સોમાઃ-**સંસારના પદાર્થોને **અરંકૃતાઃ-**સુશોભિત કરેલ છે, તે જ **તેષામ્-તે** પદાર્થોની **પાહિ-રક્ષાનું** કારણ છે અને **હર્વમ્-જેથી** સર્વ પ્રાણીઓ શબ્દ ઉચ્ચારણ અને શ્રવણ રૂપ વ્યવહારને **શ્રુધિ-**

સાંભળે-સંભળાવે છે. (૧)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં ઈશ્વર અને ભૌતિક (વાયુ) અર્થોને ગ્રહણ કરેલ છે. જેવી રીતે ઈશ્વરે પોતાના સામર્થ્યથી સર્વ પદાર્થોની રચના કરીને સુશોભિત કરેલ છે, તેવી રીતે તેના દ્વારા ઉત્પન્ન કરેલ વાયુ પણ છે. તેના ધારણ કર્યા વિના કોઈની પણ રક્ષા સંભવ નથી. જીવ દ્વારા પ્રેમપૂર્વક પ્રયુક્ત કરેલી સ્તુતિ અને વાણીને સર્વવ્યાપક ઈશ્વર પ્રતિ ક્ષણ સાંભળે છે અને જીવ વાયુના કારણે જ શબ્દોનું ઉચ્ચારણ અને શ્રવણ કરી શકે છે. (આ મંત્રમાં ઈશ્વર અને ભૌતિક વાયુના ગ્રહણમાં આપવામાં આવેલા પ્રમાણો સ્વામી દયાનંદ કૃત સંસ્કૃત ભાષ્યમાં દ્રષ્ટવ્ય છે. - અનુવાદક) (૧)

વાયં ઉક્થેભિર્જરન્તે ત્વામચ્છાં જરિતારં । સુતસોમા અહર્વિદઃ ॥ ૨ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ :-વાયો-હે અનંત બળવાન ઈશ્વર ! જે જે અહર્વિદઃ-વિજ્ઞાન રૂપ પ્રકાશને પ્રાપ્ત કરનાર સુતસોમા:-સોમ અર્થાત્ ઔષધિ આદિ પદાર્થોના રસોને વિદ્યા માટે ઉત્પન્ન કરનાર જરિતાર:-સ્તુતિ અને સત્કાર યોગ્ય વિદ્વાનો ઉક્થેભિ:-વદોક્ત સ્તોત્રોના દ્વારા ત્વામ્-આપનો અચ્છ-સાક્ષાત્ કરવા માટે જરન્તે-સ્તુતિ કરે છે.

[ભૌતિક વાયુ]

જે વાયો-ગમનશીલ, વિમાનાદિ શિલ્પવિદ્યાનો કારણ વાયુ છે, તેને અહર્વિદઃ-વિજ્ઞાન-પ્રકાશને પ્રાપ્ત કરનાર, સુતસોમા:-સોમ અર્થાત્ ઔષધિ રસોને વિદ્યા માટે ઉત્પન્ન કરનાર જરિતાર:-વાયુ ગુણોની સ્તુતિ કરનાર વિદ્વાન હોય છે, તેની વિદ્યા પ્રકાશિત ગુણ, ફળવાળી બનીને સર્વની ઉપકારક બને તે વિદ્વાન ઉક્થેભિ:-સ્તોત્રોના દ્વારા ત્વામ્-તે વાયુની અચ્છ-સાક્ષાત્ જરન્તે-સ્તુતિ કરે છે. (૨)

ભાવાર્થ : આ મંત્ર દ્વારા વેદાદિ શાસ્ત્રોમાં કહેલ, સ્તુતિના સાધન સ્તોત્રોથી પરમાર્થ અને વ્યવહારની વિદ્યાની સિદ્ધિ માટે, વાયુ શબ્દથી ઈશ્વર અને ભૌતિક વાયુના ગુણોનો પ્રકાશ કરેલ છે, તેથી બન્ને વિદ્યાઓનો સાક્ષાત્ કરવો જોઈએ. (૨)

વાયો તવ પ્રપૃજ્વતી ધેનાં જિગાતિ દાશુષે । ઉરૂચી સોમપીતયે ॥ ૩ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : વાયો-હે વેદવિદ્યાનો પ્રકાશ કરનાર પરમેશ્વર ! આપની કૃપાથી જે તવ-આપની પ્રપૃજ્વતી-અર્થ-સંબંધથી સમસ્ત વિદ્યાઓથી સંપર્ક કરાવનારી, ઉરૂચી-અનેક પદાર્થ-વિદ્યાના પ્રયોજનને પ્રાપ્ત કરાવનારી ધેના-ચાર વેદો રૂપ વાણી છે, તે-સોમપીતયે-સોમ અર્થાત્ ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થોનું પાન કરનારા, દાશુષે-નિષ્કપટતાથી પ્રીતિપૂર્વક વિદ્યા-દાન કરનારા વિદ્વાન મનુષ્યોને જિગાતી-પ્રાપ્ત થાય છે.

[ભૌતિક વાયુ]

વાયો તવ-એ ભૌતિક વાયુના યોગથી જ જે પ્રપૃજ્વતી-શબ્દોચ્ચાર અને શ્રવણ કરાવનારી, ઉરૂચી-અનેક પદાર્થોની જ્ઞાપક-જણાવનારી ધેના-વાણી છે, તે-સોમપીતયે-સોમ-અર્થાત્ ઉત્પન્ન થયેલ સંસારી

પદાર્થોના યોગ્ય રસનું પાન કરનારા, **દાશુષે**-શબ્દોચ્ચારણ, શ્રવણ કરનારા પુરુષાર્થી વિદ્વાનોને-જીવને, **જિગાતિ**-પ્રાપ્ત થાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : દ્વિતીય મંત્રમાં જે વેદવાણી દ્વારા પરમેશ્વર અને ભૌતિક વાયુના ગુણ પ્રકાશિત કરેલ છે, તેનું ફળ અને પ્રાપ્તિ આ મંત્રમાં કહેલ છે. અર્થાત્ આ મંત્રના પ્રથમ અર્થમાં ઈશ્વર, વેદવિદ્યા અને બીજા અર્થમાં વાયુને વક્તા-જીવોની વાણીનું કારણ બતાવેલ છે. (૩)

इन्द्रवायू इमे सुता उप प्रयोभिरागतम्। इन्द्रवो वामुशान्ति हि ॥ ४ ॥

પદાર્થ : **इमे सुता:**-જેમાં એ પ્રત્યક્ષ પદાર્થ, **इन्द्रवः**-જળ, ક્રિયામય યજ્ઞ તથા પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ભોગ અને **हि**-જેથી **वाम्**-તે સહચારી અર્થાત્ સૂર્ય અને વાયુના સંયોગથી **इन्द्रवायू**-સૂર્ય અને વાયુ પ્રકાશિત છે; અને તે બન્ને **उपागतम्**-સર્વ પદાર્થોને પ્રાપ્ત થાય છે. તેથી **प्रयोभिः**-તૃપ્તિકારક અન્નાદિ પદાર્થોથી સર્વ પ્રાણીઓ સુખોની **उशान्ति**-કામના કરે છે, પોતાના સુખને પ્રકાશિત કરે છે. (૪)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં પ્રાપ્ત = પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પ્રાપ્ત = પ્રાપ્ત કરાવનાર એ બે પદાર્થોનો પ્રકાશ કરેલ છે.

(આ મંત્રમાં ઈન્દ્રનો અર્થ સૂર્ય અને વાયુનો અર્થ પવન કરેલ છે. **इन्द्र**-પદનો અર્થ સોમ નહિ પરંતુ જળ, યજ્ઞ અને પ્રાપ્તવ્ય ભોગ છે, આની પુષ્ટિમાં સ્વામીજીએ નિઘંટુના પ્રમાણો પ્રસ્તુત કરેલ છે. તેનો વિસ્તાર સંસ્કૃત ભાષ્યમાં દ્રષ્ટવ્ય છે. સંક્ષેપ્ત : મંત્રનો અર્થ-જ્યારે સૂર્ય અને પવન, જળ, યજ્ઞાદિ પદાર્થો પ્રાપ્ત કરે છે, ત્યારે સર્વ પ્રાણીઓ સુખની કામના કરે છે.-અનુ.) (૪)

वायुविन्द्रश्च चेतथः सुतानां वाजिनीवसू। तावा यातमुप द्रवत् ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે **वायो**-જ્ઞાન સ્વરૂપ ઈશ્વર ! જેથી આપે રચેલ-ધારણ કરેલ **वाजिनीवसू**-ઉષા સમાન પ્રકાશમાન અને વેગમાં રહેનાર પદાર્થ, **इन्द्रश्च**-પૂર્વોક્ત ઈન્દ્ર = સૂર્ય અને વાયુ **सुतानाम्**-આપે રચેલા-ઉત્પન્ન કરેલા પદાર્થોને **चेतथः**-ધારણ અને પ્રકાશિત કરીને તે જીવોને દ્રષ્ટિગોચર કરે છે. તે કારણે તે બન્ને **द्रवत्**-શીઘ્રતાથી **आयातमुप**-તે પદાર્થોને પ્રાપ્ત થાય છે-સમીપ રહે છે. (૫)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં પરમેશ્વરની સત્તાના આધારે સૂર્ય અને વાયુ પોતાનું કાર્ય કરવામાં સમર્થ બને છે. કારણ કે જો ઈશ્વર એ સૂર્ય અને વાયુની રચના ન કરે, તો તે બન્ને પોતાનાં કાર્યમાં કેવી રીતે સમર્થ બની શકે ? (૫)

वायुविन्द्रश्च सुन्वत आ यातमुप निष्कृतम्। मक्षि॑त्था धिया॑ नरा ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે **वायो**-સર્વાન્તર્યામી ઈશ્વર ! **नरा**-સંસારના સર્વ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનાર **इन्द्रश्च**-જેમ અન્તરિક્ષમાં સ્થિત સૂર્યનો પ્રકાશ અને પવન છે, તેમ એ-**इन्द्रिय**. આ વ્યાકરણ સૂત્રાનુસાર ઈન્દ્ર શબ્દથી જીવનું અને **प्राणो**-એ પ્રમાણ વાયુ શબ્દથી પ્રાણનું ગ્રહણ થાય છે. સંક્ષેપ્ત-અન્તરિક્ષમાં સ્થિત સૂર્યપ્રકાશ અને વાયુ **मक्षु**-શીઘ્ર ગતિથી **इत्था**-ધારણ, પાલન, વૃદ્ધિ અને ક્ષય હેતુથી સોમ વગેરે સર્વ ઔષધિઓના રસને જેમ **सुन्वतः**-ઉત્પન્ન કરે છે; તેમ એ **नरा**-શરીરમાં રહેલ જીવ અને પ્રાણવાયુ તે શરીરમાં સર્વ ધાતુઓના રસને ઉત્પન્ન કરીને **इत्था**-ધારણ, પાલન, વૃદ્ધિ અને ક્ષય, હેતુથી **मक्षु**-

સર્વ અંગોમાં શીઘ્ર પ્રાપ્ત થઈને ધિયા-ધારણ કરનારી બુદ્ધિ અથવા કર્મોથી નિષ્કૃતમ્-કર્મો ઇળોને આયાતમુપ-પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ આ બ્રહ્માંડમાં સ્થિત સૂર્ય અને વાયુ સર્વના પ્રકાશક અને પોષક છે, તેમ જ શરીરમાં જીવ અને પ્રાણ પણ છે, પરન્તુ ઈશ્વરના આધારની અપેક્ષાથી જ સર્વ સ્થાનોમાં રહે છે. (૬)

મિત્રં હુવે પૂતદક્ષ્ણં વરુણં ચ રિશાદસમ્ । ધિયં ઘૃતાચીં સાધન્તા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : શિલ્પવિદ્યાને સિદ્ધ કરનાર હું-જે ઘૃતાચીમ્-જળ પ્રાપ્ત કરાવનારી ક્રિયાને, ધિયમ્-કર્મ અથવા ધારણાવતી બુદ્ધિને (સાધન્તા) સિદ્ધ કરનારા સૂર્ય અને વાયુ છે, તેને તથા પૂતદક્ષમ્-પવિત્ર બળવાળા, મિત્રમ્-સર્વ વ્યવહાર સુખોના હેતુ બ્રહ્માંડમાં રહેલ સૂર્ય રોગ અથવા શરીરમાં રહેનાર પ્રાણ, રિશાદસમ્-રોગ અથવા શત્રુનાશક, વસ્ણમ્-વ-બાહ્યપ્રાણ અથવા શરીરસ્થ અપાનવાયુ ચ-અને તેના નિમિત્ત બાહ્ય અને આભ્યંતર પદાર્થ વિદ્યાને હુવે-ગ્રહણ કરું છું. અર્થાત્ બાહ્ય અને આભ્યંતર પદાર્થ જે વિદ્યા માટે રચવામાં આવેલ છે, તે સર્વનો તેના માટે ઉપયોગ કરું છું. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અને વાયુના કારણે સમુદ્ર આદિથી જળ ઉપર જઈને (ફરી) તેની વર્ષા દ્વારા સર્વની વૃદ્ધિ અને રક્ષા થાય છે, તેમ પ્રાણ અને અપાન દ્વારા શરીરની વૃદ્ધિ અને રક્ષા થાય છે. તેથી સર્વ મનુષ્યોએ એ બન્નેને નિમિત્ત બનાવીને વ્યવહાર અને વિદ્યાની સિદ્ધિથી સર્વનો સદા ઉપકાર કરવો જોઈએ. (૭)

ઋતેન મિત્રાવરુણાવૃતાવૃધાવૃતસ્પૃશા । ક્રતું બૃહન્તમાશાથે ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : ઋતેન-સત્યસ્વરૂપ બ્રહ્મના દ્વારા ઉત્પન્ન થયેલ (તેના નિયમાધીન) ઋત્તાવૃધૌ-બ્રહ્મજ્ઞાનના સામર્થ્યથી વધનાર, બ્રહ્મના જ્ઞાપક અથવા જળાકર્ષણ-ખેંચનાર અને વર્ષા કરાવનાર, ઋત્તાસ્પૃશા-બ્રહ્મ અર્થાત્ વેદની પ્રાપ્તિમાં નિમિત્ત અથવા યોગ્ય સમયે જળની વૃષ્ટિ કરનાર મિત્રાવરુણૌ-પૂર્વોક્ત મિત્ર = સૂર્ય અને વરુણ = વાયુ બૃહન્તમ્-મહાન ક્રતુમ્-જગત રૂપ યજ્ઞને આશાયે-વ્યાપ્ત કરી રહેલ છે. (૮)

ભાવાર્થ : બ્રહ્મના આશ્રયથી એ બન્ને (સૂર્ય અને વાયુ) બ્રહ્મ જ્ઞાનના નિમિત્ત = કારણ તથા જળ અને વર્ષાના હેતુ બનીને, સર્વ અગ્નિ વગેરે મૂર્ત અને અમૂર્ત જગતને વ્યાપ્ત કરીને, વૃદ્ધિ અને ક્ષયકર્તા તથા વ્યવહાર અને વિદ્યાના સાધક બને છે. (૮)

કવી નો મિત્રાવરુણા તુવિજાતા ઉરુક્ષયા । દક્ષં દધાતે અપસમ્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : તુવિજાતો-જે અનેક કારણોથી ઉત્પન્ન અથવા અનેકોમાં પ્રસિદ્ધ ઉક્ષયા-જગતના અનેક પદાર્થોમાં નિવાસ કરનાર કવી-સર્વ વ્યવહાર દર્શનમાં કારણ મિત્રાવરુણા-પૂર્વોક્ત મિત્ર = સૂર્ય અને વરુણ = વાયુ ન:-અમારા દક્ષમ્-બળ તથા અપસમ્-સુખ અથવા દુઃખયુક્ત કર્મોને દધાતે-ધારણ કરે છે. (૯)

ભાવાર્થ : બ્રહ્માંડમાં રહેલ, બળ અને કર્મના નિમિત્ત ભૂત એ (સૂર્ય અને વાયુ) બન્ને દ્વારા સર્વ પદાર્થોની સમસ્ત ચેષ્ટાઓ અને વિદ્યાઓની પુષ્ટિ અને ધારણ થાય છે. (૯)

સંગતિ : પ્રથમ સૂક્તમાં પ્રતિપાદિત, શિલ્પવિદ્યાદિનું મુખ્ય કારણ અગ્નિ પદાર્થની સાથે તેના સહચારી વાયુ, ઈન્દ્ર, મિત્ર, વરુણ એ દ્વિતીય સૂક્તમાં પ્રતિપાદિત પદાર્થોની સંગતિ છે. તેમ સમજવું જોઈએ. (૨)

સૂક્ત-૩

અશ્વિના યજ્વરીરિષો દ્રવત્વાણી શુભસ્પતી । પુરુભુજા ચનસ્યતમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો વિદ્યા પ્રેમી મનુષ્યો ! તમે દ્રવત્વાણી-જેનો પદાર્થ વિદ્યાનો વ્યવહાર શીઘ્ર વેગનો નિમિત્તયુક્ત છે, શુભસ્પતી-જે શિલ્પના કાર્ય પ્રકાશના પાલક છે, પુરુભુજા-જે અનેક ભોક્તવ્ય પદાર્થોનું કારણ છે, અશ્વિના-તેઓ અશ્વિનો = જળ તથા અગ્નિ યજ્વરી:-શિલ્પ વિદ્યાનો સંબંધ કરાવનારી-સિદ્ધ કરનારી તથા ઇષ:-વિદ્યા = હુન્નર વિદ્યાની ક્રિયાઓનું ચનસ્યતમ્-અન્નાદિની સમાન અત્યંત પ્રીતિ પૂર્વક સેવન કર્યા કરો. (૧)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં ઈશ્વર શિલ્પવિદ્યાનાં સાધનોનો ઉપદેશ કરે છે. જેથી મનુષ્ય-કલાયંત્રોની રચના દ્વારા વિમાન આદિ વાહનોને સારી રીતે નિર્માણ કરીને જગતમાં પોતાનો ઉપકાર અને પરોપકાર સિદ્ધ કરીને સમસ્ત સુખોની પ્રાપ્તિ કરે.

(આ મંત્રના 'અશ્વિનો' પદનો સ્વામી દયાનંદે જળ અને અગ્નિ અર્થ કરીને તેના પ્રમાણો આપેલા છે તેનો વિસ્તાર તેઓના સંસ્કૃત ભાષ્યમાં દ્રષ્ટવ્ય છે.-અનુ.) (૧)

અશ્વિના પુરુદંસસા નરા શવીરયા ધિયા । ધિષ્ણયા વનતં ગિરઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે પુરુદંસસા-જેથી શિલ્પવિદ્યાને માટે અનેક કર્મ સિદ્ધ થાય છે, ધિષ્ણયા-જે યાનો-વાહનોમાં વેગાદિની તીવ્રતા ઉત્પન્ન કરવામાં મે-દૃઢ છે, નરા-શિલ્પવિદ્યાના ફળોને પ્રાપ્ત કરાવનાર છે, તે અશ્વિનો-અગ્નિ અને જળ શવીરયા-વેગવાન ધિયા-ક્રિયા અથવા પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિથી ગિરઃ-શિલ્પવિદ્યાની ગુણદર્શક વાણીઓનું વનતમ્-સેવન કરનાર છે. તેનું સેવન કરો અર્થાત્ તેના દ્વારા સારી રીતે ઉપકાર લેતા રહો. (૨)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં પણ અગ્નિ અને જળના ગુણોને પ્રત્યક્ષ કરવા માટે મધ્યમ પુરુષનો પ્રયોગ કરેલ છે. તેથી સર્વ શિલ્પીજનો-કારીગરોએ તીવ્ર વેગયુક્ત મેધા = બુદ્ધિથી અને પુરુષાર્થથી શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ માટે (કાર્યોમાં) એ બન્નેનું સારી રીતે સેવન કરવું જોઈએ. જેઓ શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ કરવા ઈચ્છે છે, તેઓએ તેની વિદ્યા અને હસ્તક્રિયા-હાથની કારીગરી સારી રીતે પ્રકટ કરવાની સાથે તે

બન્ને (અગ્નિ તથા જળ રૂપ) અશ્વિઓનો ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૨)

દસ્ત્રા યુવાકવઃ સુતા નાસત્યા વૃક્તર્બર્હિષઃ । આ યાતં રુદ્રવર્ત્તની ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે સુતા:-મુખ્ય રૂપથી પદાર્થ વિદ્યાના સારને સિદ્ધ કરીને પ્રકટ કરનારા, યુવાકવ:-પરસ્પર મળેલી અથવા પૃથક ક્રિયાઓને સિદ્ધ કરનારા-સંપાદન કરનારા, વૃક્તર્બર્હિષઃ-શિલ્પવિદ્યાના જ્ઞાતા તથા શિલ્પના ફળના સાધક = બતાવનાર વિદ્વાન ઋત્વિક જનો ! આપ સ્દ્રવર્ત્તની-પ્રાણના માર્ગવાળાઓ, દસ્ત્રા-દુઃખોનો ક્ષય કે નાશ કરનારાઓ, નાસત્યા-પૂર્વોક્ત અશ્વિનો અર્થાત્ જળ અને અગ્નિ છે, જેમાં એક પણ ગુણ અને કર્મ મિથ્યા-અસત્ય નથી; તે આ + યાતમ્-સર્વત્રથી યાનોને ગતિ આપે છે-તે બન્નેને તમે જ્યારે સિદ્ધ કરી લેશો-ઉપકારમાં લેશો, ત્યારે તમે શ્રેષ્ઠ સુખોને પ્રાપ્ત કરશો. (૩)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વર મનુષ્યોને ઉપદેશ આપે છે કે-હે મનુષ્યો ! તમે સમસ્ત સુખોનું કારણ શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિથી, દુઃખોના વિનાશ માટે અગ્નિ અને જળનો યથાવત્ ઉપયોગ કરો. (૩)

ઇન્દ્રા યાહિ ચિત્રભાનો સુતા ઇમે ત્વાયવઃ । અઘ્વીભિસ્તના પૂતાસઃ ॥ ૪ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : ચિત્રભાનો-હે અદ્ભુત પ્રકાશયુક્ત ઇન્દ્ર-પરમેશ્વર ! આપ અમને કૃપા કરીને આયાહિ-પ્રાપ્ત થાઓ. આપે ઇમે-એ અઘ્વીભિઃ-કારણોના અંશોથી તના-સર્વ સંસારમાં વિસ્તૃત (પુષ્કળ દ્રવ્ય અને ધન પ્રદાન કરનાર) પૂતાસઃ-પવિત્ર અને શોધિત ત્વાયવઃ-આપના ઉત્પન્ન કરેલા વ્યવહારોથી યુક્ત સુતા:-મૂર્તિમાન પદાર્થ ઉત્પન્ન કરેલ-રચેલ છે. અમે જેનાથી ઉપકાર લેનાર છીએ, તેથી અમે આપને શરણાગત છીએ. (અર્થાત્ અમને તેનો ઉપકાર ગ્રહણ કરનારા બનાવો.)

[સૂર્ય]

જે સૂર્ય પોતાના ગુણોથી સર્વ પદાર્થોને આયાહિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થઈ રહેલ છે તેન-તેનાથી કે પોતાના ઇમે-એ અઘ્વીભિઃ-પ્રકાશ અવયવરૂપ કિરણોથી તના-વિસ્તૃત પ્રાપ્તિને હેતુ અને વિસ્તૃત ધન પ્રદાન કરનાર ત્વાયવ-સૂર્યના નિમિત્તથી આયુ પ્રાપ્ત કરનાર અને તેને પ્રાપ્ત થયેલ પૂતાસઃ-પવિત્ર અને શોધિત સુતાઃ-સંસારના મૂર્તિમાન ઉત્પન્ન પદાર્થ પ્રકાશયુક્ત થાય છે, અમને તે પદાર્થોથી ઉપકાર ગ્રહણ કરનારા બનાવો. (૪)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં ઇન્દ્ર = ઇશ્વરના અથવા સૂર્યના જે કર્મો પ્રકાશિત કરવામાં આવેલ છે, તેનો પરમાર્થ અને વ્યવહારની સિદ્ધિ માટે મનુષ્યોએ સમ્યક્ ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૪)

ઇન્દ્રા યાહિ ધિયેષિતો વિપ્રજૂતઃ સુતાવતઃ । ઉપ્ બ્રહ્માણિ વાઘતઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : ઇન્દ્ર-હે પરમેશ્વર ! ધિયા-નિરંતર જ્ઞાનયુક્ત બુદ્ધિ અથવા ઉત્તમ કર્મથી ઇષિતઃ-પ્રાપ્ત

કરવા યોગ્ય, **વિપ્રજૂત:-**બુદ્ધિમાન-મેધાવી વિદ્વાનોથી જાણવા યોગ્ય આપ-**બ્રહ્માણિ-બ્રાહ્મણ** અર્થાત્ વેદોના અર્થના જ્ઞાતા, **સુતાવત:-**પદાર્થ વિદ્યાના જ્ઞાતા તથા **વાઘત:-**જે યજ્ઞ વિદ્યાના અનુષ્ઠાનથી સુખ ઉત્પન્ન કરનાર ઋત્વિક વિદ્વાનો છે. તે સર્વને કૃપાથી **ઉપાયાહિ-પ્રાપ્ત** થાઓ. (૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ જગતના મૂલ = નિમિત્ત કારણ ઈશ્વરની સંસ્કારયુક્ત બુદ્ધિ અને વિજ્ઞાનથી સાક્ષાત્ પ્રાપ્તિ કરવી જોઈએ. તે સિવાય કોઈ મનુષ્ય દ્વારા એ પ્રાપ્ત કરી શકાતો નથી. (૫)

इन्द्रा याहि तूतुजान् उप ब्रह्माणि हरिवः । सुते दधिष्व नश्चनः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : **હરિવ:-**જે વેગવાન, વેગાદિ ગુણયુક્ત ઘોડાવાળો, હરણના નિમિત્ત પ્રશસ્ત કિરણવાળો, **તૂતુજાન:-**શીઘ્ર ચાલનાર **ઇન્દ્ર-ભૌતિક** વાયુ છે, તે **સુતે-પ્રત્યક્ષ** અર્થાત્ મુખ્ય રૂપથી ઉત્પન્ન વાણીના વ્યવહારમાં **ન:-**અમારા માટે **બ્રહ્માણિ-વેદોના** સ્તોત્રોને **આયાહિ-સર્વત્રથી-સારી** રીતે પ્રાપ્ત કરાવે છે, **સ એવ-તે જ ન:-**અમારા માટે **ચન:-**અન્ન અને ભોજન આદિ વ્યવહારને **દધિષ્વ-ધારણ** કરે છે. (૬)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ એ જાણવું જોઈએ કે એ વાયુ અર્થાત્ શરીરમાં જે પ્રાણ સર્વ ચેષ્ટાઓનું કારણ બનીને ખાવું, પીવું, પાચન કરવું, ગ્રહણ કરવું, ત્યાગવું વગેરે ક્રિયાઓથી કર્મ કરાવવા અને શરીરમાં રક્ત વગેરે ધાતુઓના વિભાગોને વિભિન્ન સ્થાને પહોંચાડે છે. તેથી શરીર વગેરેની પુષ્ટિ અને ક્ષયનો હેતુ = કારણ છે. (૬)

ओमांसश्चर्षणीधृतो विश्वे देवास आ गत । दाश्वांसो दाशुषः सुतम् ॥ ७ ॥

પદાર્થ : **ઓમાસ:-**જે પોતાના ગુણોથી સંસારના જીવોની રક્ષા કરનાર, જ્ઞાનથી પરિપૂર્ણ, વિદ્યાની કામના કરનાર, ઉપદેશમાં પ્રીતિ રાખનાર, વિજ્ઞાનથી તૃપ્ત સત્યજ્ઞાનવાન, શુભગુણોમાં પ્રવેશ કરનાર, સમસ્ત વિદ્યાઓનું શ્રવણ કરાવનાર, પરમેશ્વરની પ્રાપ્તિ અને વ્યવહારમાં પુરુષાર્થી, શ્રેષ્ઠ વિદ્યાદિ ગુણોની ઈચ્છા રાખનાર-ચાચના કરનાર, ક્રિયાવાન, સર્વના ઉપકારના ઈચ્છુક, વિજ્ઞાનમાં પ્રશસ્ત, આપ્ત, સર્વ શુભ લક્ષણો યુક્ત, દુષ્ટ ગુણોના નાશક, શુભગુણોનાં દાતા, સૌભાગ્યવાન, જ્ઞાન વૃદ્ધ **ચર્ષણીધૃત:-** સત્ય ઉપદેશથી મનુષ્યોને સુખ ધારણ કરાવનાર **દાશ્વાંસ:-**સર્વને નિર્ભય કરનાર, **વિશ્વેદેવાસ:-**લર્વ વિદ્વાનો ! તમે **દાશુષ:-**દાતા ઈશ્વરના **સુતમ્-સોમ** આદિ પદાર્થોને ગ્રહણ કરવા અને વિજ્ઞાનનો પ્રકાશ કરવા માટે વિદ્યારૂપ અભીષ્ટ વસ્તુને **આ ગત-સર્વત્રથી** પ્રાપ્ત કરાવો. (૭)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર વિદ્વાનોને આજ્ઞા કરે છે કે-તમે એક સ્થાનમાં વિદ્યાલયમાં અથવા આજુ-બાજુના દેશાન્તરોમાં ભ્રમણ કરીને, અજ્ઞાની મનુષ્યોને વિદ્યાન બનાવો. જેથી સમસ્ત મનુષ્યો વિદ્યા, ઉત્તમ શિક્ષા અને શ્રેષ્ઠ કર્મ-આચરણથી યુક્ત બનીને સદા સુખી રહે. (૭)

विश्वे देवासो अप्तुरः सुतमार्गन्त तूर्णयः । उस्त्रा इव स्वसराणि ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે **અપ્તુર:-**મનુષ્યોને શરીર અને વિદ્યા આદિ બળ પ્રાપ્ત કરાવનાર, **તૂર્ણય:-**સર્વત્ર વિદ્યાને

પ્રકાશિત કરવા માટે શીઘ્રતા કરનાર, **વિશ્વે દેવાસઃ**-સર્વ વિદ્વાનો ! તમે જેમ **સ્વસરાણિ**-દિવસે પ્રકાશ કરવા માટે **ઉસ્મા ઇવ**-સૂર્યના કિરણો આવા-ગમન કરે છે, તેમ તમે પણ મનુષ્યોની સમીપ **સુતમ્**-કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાન રૂપ વ્યવહારને પ્રકાશિત કરવા માટે અને વિજ્ઞાનને અન્તઃકરણ ગત કરવા માટે **આગન્ત**-નિત્ય આવો, સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાઓ. (૮)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે આ મંત્ર દ્વારા એ આજ્ઞા આપી છે કે-હે સર્વ વિદ્વાનો ! તમે કદીપણ વિદ્યાદિ શુભ ગુણોનો પ્રકાશ કરવામાં વિલંબ અને આળસ કરો નહિ. જેમ દિવસમાં (સૂર્ય) સર્વ સ્થૂલ-મૂર્તિમાન પદાર્થોને પ્રકાશિત કરે છે તેમ તમે પણ સર્વ વિદ્યા-વિષયોને સદા પ્રકાશિત કરો. (૮)

વિશ્વેદેવાસો અસ્ત્રિધ્વર્હિમાયાસો અદ્રુહઃ । મેધં જુષન્ત વહ્નયઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે **અહિમાયાસઃ**-સર્વત્ર ક્રિયા-ચેષ્ટાઓમાં પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિ રાખનાર, **અસ્ત્રિધઃ**-દૃઢ જ્ઞાનથી પરિપૂર્ણ-અક્ષય વિજ્ઞાનયુક્ત, **અદ્રુહઃ**-દ્રોહરહિત, **વહ્નયઃ**-સંસારને સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર, **વિશ્વે**-સર્વ **દેવાસઃ** વેદ પારંગત વિદ્વાનો ! તમે **મેધમ્**-જ્ઞાન અને ક્રિયાથી સિદ્ધ કરવા યોગ્ય યજ્ઞને **જુવન્ત**-પ્રીતિપૂર્વક યથાવત્ સેવન કરો. (૯)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે-હે વિદ્વાનો તમે અન્યના વિનાશ અને દ્રોહથી રહિત તથા વિજ્ઞાન વિદ્યાથી ક્રિયાવાન બનીને સર્વ મનુષ્યોને સદા વિદ્યાથી સુખ આપતા રહો. (૯)

પાવ્કા નઃ સરસ્વતી વાજૈભિર્વાજિનીવતી । યજ્ઞં વષ્ટુ ધિયાવસુઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : **વાજેભિઃ**-જે સર્વ વિદ્યાઓની પ્રાપ્તિને નિમિત્ત અન્નાદિની સાથે **વાજિનીવતી**-સર્વ વિદ્યાઓને સિદ્ધ કરનારી ક્રિયાઓથી યુક્ત, અને ક્રિયા પ્રાપ્તિના હેતુભૂત વ્યવહારો યુક્ત **ધિયાવસુઃ**-શુદ્ધ કર્મની સાથે વાસ પ્રાપ્ત કરાવનારી **પાવ્કા**-પવિત્ર-વિદ્યાકારક વ્યવહારોને બતાવનારી **સરસ્વતી**-પ્રશંસિત જ્ઞાન આદિ ગુણોથી યુક્ત સમસ્ત વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરાવનારી વાણી છે, -તે, **નઃ**-અમારા **યજ્ઞમ્**-શિલ્પવિદ્યાની મહિમા અને કર્મ રૂપ યજ્ઞને **વષ્ટુ**-પ્રકાશ કરનારી બને, ઈચ્છા-સિદ્ધિની પ્રકાશિકા બને. (૧૦)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ આપે છે કે-સર્વ મનુષ્યોએ પોતાની વાણીને સત્યવિદ્યા અને સત્યભાષણથી યુક્ત, ક્રિયા કુશળ અને સર્વનો ઉપકાર કરનારી બનાવવી જોઈએ. (૧૦)

ચોદયિત્રી સૂનૃતાનાં ચેતન્તી સુમતીનામ્ । યજ્ઞં દંધે સરસ્વતી ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : **સૂનૃતાનામ્**-જે અનૃત-અસત્ય વચનનો નાશ કરનાર અને સત્ય કર્મનું સદા સેવન કરનાર, **સુમતીનામ્**-અત્યંત શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ અને વિદ્યાવાન વિદ્વાનોની **ચેતન્તી**-સમજનારી અર્થાત્ કાર્યોને સિદ્ધ કરનારી **ચોદયિત્રી**-શુભ ગુણોને ગ્રહણ કરવાની પ્રેરણા કરનારી **સરસ્વતી**-વાણી છે, તે જ સર્વ મનુષ્યોના શુભ ગુણોનો પ્રકાશ કરનાર યજ્ઞ આદિ કર્મ ધારણ કરનારી હોય છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે નિશ્ચિત રૂપથી આપ્ત = વિદ્વાન છે તેની સત્યરૂપી લક્ષણ યુક્ત, પૂર્ણ વિદ્યાથી યુક્ત, ઇળકપટ વગેરે દોષોથી રહિત અને યથાર્થ વાણી છે, તે મનુષ્યોને સત્ય જ્ઞાન માટે યોગ્ય છે. અવિદ્વાનો-

અયોગ્ય છે. (૧૧)

મહો અર્ણઃ સરસ્વતી પ્રચેતયતિ કેતુનાં । ધિયો વિશ્વા વિ રાજતિ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : જે સરસ્વતી-વાણી કેતુના-ઉત્તમ કર્મો અથવા શ્રેષ્ઠ પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિથી મહઃ-મહાન કે અગાધ અર્ણઃ શબ્દ રૂપી સમુદ્રને પ્રચેતયતિ-શ્રેષ્ઠ રીતે પ્રકાશિત કરનારી છે, તે જ વાણીઓ-મનુષ્યોની વિશ્વાઃ ધિયઃ-સર્વ ધારણાવતી બુદ્ધિઓને વિરાજતિ-વિવિધ રૂપથી પ્રકાશિત કરનારી છે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ દ્વારા તરંગયુક્ત અને સૂર્ય દ્વારા પ્રકાશિત સમુદ્ર પોતાના જળતરંગો અને રત્નો રહિત અને રત્નોથી યુક્ત હોવાના કારણે શ્રેષ્ઠ વ્યવહાર અને રત્નાદિની પ્રાપ્તિના કારણે મહાન માનવામાં આવે છે, તેમ જ આકાશમાં રહેલ અને વેદોમાં રહેલ એ મહાન શબ્દ સમુદ્રના પ્રકાશના હેતુ જે વેદવાણી અને વિદ્વાનોનો ઉપદેશ છે. તે મનુષ્યોને યથાર્થરૂપમાં મેધા = બુદ્ધિ અને વિજ્ઞાન પ્રદાન કરનાર છે. (૧૨)

સંગતિ : પ્રથમ બે સૂક્તોની વિદ્યાનો પ્રકાશ કરીને આ તૃતીય સૂક્તમાં ક્રિયાહેતુ 'અશ્વિ' શબ્દનો અર્થ અને તેને સિદ્ધિ કરનારા વિદ્વાનોનું લક્ષણ, વિદ્વાન બનવાના હેતુભૂત સરસ્વતી શબ્દથી સર્વ વિદ્યા પ્રાપ્તિની નિમિત્તવાણીનો પ્રકાશ કરવાથી સમજવું જોઈએ કે દ્વિતીય સૂક્તના અર્થની સાથે તૃતીય સૂક્તના અર્થની સંગતિ છે. (૩)

સૂક્ત-૪

સુરુપકૃત્લુમૂતયે સુદુઘામિવ ગોદુહે । જુહૂમસિ દ્યવિદ્યવિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : ઇવ-જેમ દૂધનો ઈચ્છુક કોઈ મનુષ્ય ગોદુહે-દૂધ દોહવા માટે સુદુઘામ-દોહવામાં સુલભ ગાયોને દોહીને પોતાની કામના-ઈચ્છા પૂર્ણ કરે છે, તેમ અમે દ્યવિદ્યવિ-પ્રતિદિન વિદ્યાથી યુક્ત અમારી નજીક મનુષ્યોની કૃતયે-વિદ્યાની પ્રાપ્તિ માટે સુસ્વપ્ન-ઈન્દ્ર = પરમેશ્વર અને ઈન્દ્ર = સૂર્ય પોતાના પ્રકાશથી સર્વ પદાર્થોને સુરૂપ બનાવે છે. તેની જુહૂમસિ-સ્તુતિ કરીએ છીએ. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્ય ગાયનું દૂધ પ્રાપ્ત કરીને પોતાનું પ્રયોજન સિદ્ધ કરે છે, તેમ ધાર્મિક વિદ્વાનજન ઈશ્વરની ઉપાસનાથી શ્રેષ્ઠ વિદ્યા આદિ ગુણોને પ્રાપ્ત કરીને પોતાનાં કાર્યોને પૂર્ણ કરે છે. (૧)

ઉપ નઃ સવનાર્ગહિ સોમસ્ય સોમપાઃ પિબ । ગોદા ઇદ્રેવતો મદઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : સોમપાઃ-જેથી તે સર્વ પદાર્થોનો રક્ષક સૂર્ય પિબ-રસનું પાન કરાવે છે, ગોદાઃ-નેત્ર ઈન્દ્રિયને વ્યવહાર પ્રદાન કરનાર ઇન્દ્રઃ-સૂર્ય સોમસ્ય-ઉત્પન્ન થયેલ આ કાર્ય રૂપ જગતમાં પોતાનાં કિરણો દ્વારા સવના-ઐશ્વર્યયુક્ત પદાર્થોને પ્રકાશિત કરવા માટે ઉપાગહિ-સન્મુખ આવે છે-પ્રકટ થાય છે, એટલા માટે ઇત-જ નઃ-અમારા માટે તથા રેવતઃ-પુરુષાર્થથી શ્રેષ્ઠ પદાર્થ પ્રાપ્ત કરનારા જીવ-મનુષ્યો માટે મદઃ-આનંદદાયક બને છે. (૨)

ભાવાર્થ : જેવી રીતે સૂર્યના પ્રકાશમાં સર્વ જીવ પોત-પોતાનું કાર્ય કરવામાં વિશેષરૂપથી પ્રવૃત્ત થાય છે, તેવી રીતે સુખપૂર્વક કાર્ય કરી શકતા નથી. (૨)

અર્થા તે અન્તમાનાં વિદ્યામ્ સુમતીનામ્ । મા નો અતિચ્ચ આર્ગહિ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત ઈન્દ્ર = પરમેશ્વર ! અમે તે-આપની અન્તમાનામ્-સમીપ અર્થાત્ આપને જાણીને, આપની પાસે અને આપની આજ્ઞામાં સ્થિત રહેનારા, સુમતીનામ્-વેદાદિશાસ્ત્ર, પરોપકાર અને ધર્માચરણમાં શ્રેષ્ઠ મતિ-બુદ્ધિમાન આપ્ત વિદ્વાનોના સમાગમથી વિદ્યામ-જાણીએ. આપ ન:-અમને આર્ગહિ-પ્રાપ્ત થાઓ અર્થાત્ અમારા આત્મામાં પ્રકાશિત થાઓ.

અથ-તદનન્તર કૃપા કરીને અન્તર્યામી રૂપમાં અમારા આત્માઓમાં સ્થિત થઈને સત્ય ઉપદેશને માતિચ્ચ:-કદી રોકો નહિ, પરંતુ સદા તેની પ્રેરણા કરતા રહો. (૩)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્યો ધાર્મિક શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનોના (સમાગમથી) શિક્ષા અને વિદ્યા પ્રાપ્ત કરે છે, ત્યારે પૃથિવીથી લઈને પરમેશ્વર સુધીના સર્વ પદાર્થોને જાણીને તથા સુખ પ્રાપ્ત કરીને ફરી તેઓ કદી પણ અન્તર્યામી ઈશ્વરના ઉપદેશને છોડીને જ્યા-ત્યાં ભટકતા નથી. (૩)

પરેહિ વિગ્રમસ્તૃતમિન્દ્રં પૃચ્છા વિપશ્ચિતમ્ । યસ્તે સચ્ચિભ્ય આ વરમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યા પ્રાપ્ત કરવાની ઈચ્છા રાખનાર મનુષ્ય ! તું ય:-જે વિદ્વાન તે-તારા માટે તથા સચ્ચિભ્ય:-મિત્ર સ્વભાવવાળા લોકો માટે અર્થાત્ મિત્રો માટે આ-સર્વત્રથી વરમ્-પરમ શ્રેષ્ઠ વિજ્ઞાન ધન પ્રદાન કરે છે, તે વિગ્રમ્-મેધાવી = શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિમાન અસ્તૃતમ્-હિંસાદિ અધર્મથી રહિત ઇન્દ્રમ્-વિદ્યાના કારણે પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત વિપશ્ચિતમ્-આપ્ત-યથાર્થ સત્ય કહેનાર વિદ્વાનની પાસે જઈને પૃચ્છ-પોતાની શંકા પૂછ. અને તેના યથાર્થ ઉત્તરોને ગ્રહણ કરીને અન્યોને પણ તું તેનો ઉપદેશ કર, સંદેહોને જોઈને ઉત્તરોને ગ્રહણ કર. પરંતુ જે અવિદ્વાન-મૂર્ખ, ઈર્ષાળુ, કપટી અને સ્વાર્થી હોય, તેનાથી સર્વદા પરા + ઇહિ-પૃથક રહે અર્થાત્ દૂર રહે. (૪)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોને એ યોગ્ય છે કે-પ્રથમ પરોપકારી, પંડિત, ઈશ્વર વિશ્વાસી, વેદોના જ્ઞાતા પુરુષને જાણીને, ત્યારપછી તેની સાથે પ્રશ્નોત્તર દ્વારા સર્વ શંકાઓનું નિવારણ કરવું જોઈએ. પરંતુ જે વિદ્યાહીન છે, તેની સાથે સંગ, પ્રશ્નોત્તર અને વિશ્વાસ કદીપણ કરવો જોઈએ નહિ. (૪)

ઉત બ્રુવન્તુ નો નિદો નિરન્યત્તશ્ચિદારત । દર્ધાના ઇન્દ્ર ઇદુવઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : જે ઇન્દ્રૈ-પરમેશ્વર્યયુક્ત પરમેશ્વરની દુવઃ-પરિચર્યા = ઉપાસનામાં મનને ધારણ કરનારા મનુષ્યો સર્વ વિદ્યાઓ, ધર્મ અને પુરુષાર્થમાં રત રહે છે, તેઓ ઉત-જ ન:-અમને સર્વ વિદ્યાઓનો બ્રુવન્તુ-ઉપદેશ કરે.

તથા જે ચિત્-અન્ય નાસ્તિક, નિદ:-નિંદક, અવિદ્વાન અને ધૂર્ત મનુષ્યો છે, તેઓ સર્વ ઇત-આ દેશથી નિર + આરત-દૂર ચાલ્યા જાય, ઉત-અને નિશ્ચય રૂપથી બીજા દેશોથી પણ દૂર ચાલ્યા જાય, અર્થાત્ અધાર્મિક લોકો કોઈ દેશમાં ન રહે. (૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ આપ્ત વિદ્વાનોના સંગથી અને મૂર્ખોના સંગના ત્યાગથી એવી રીતે પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ કે, જેથી સર્વત્ર વિદ્યાની વૃદ્ધિ, અવિદ્યાની હાનિ, માનનીયોનો સત્કાર, દુષ્ટોનું તાડન, ઈશ્વરની ઉપાસના, પાપીઓનું નિવારણ અને ધાર્મિકોની નિત્ય વૃદ્ધિ થાય. (૫)

उत नः सुभगाँ अरिवोचेयुर्दस्म कृष्टयः । स्यामेदिन्द्रस्य शर्मणि ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે દસ્મ-વિનાશરહિત અને દુષ્ટોને દંડ આપનાર જગદીશ્વર ! અમે આપ ઇન્દ્રસ્ય-પરમેશ્વરના પ્રદાન કરેલા શર્મણિ-નિત્ય સુખ અને આજ્ઞા પાલન રૂપ વ્યવહારમાં ઇત્-જ નિત્ય પ્રવૃત્ત સ્યામ-રહીએ.

જે કૃષ્ટયઃ-સર્વ મનુષ્યો-સર્વ જનોના પ્રત્યે પ્રીતિ પૂર્વક સર્વ વિદ્યાઓનો વોચેયુઃ-ઉપદેશ કરે, જેથી સત્ય ઉપદેશને પ્રાપ્ત કરેલ નઃ-અમને અરિઃ-શત્રુ ઉત-પણ સુભગાન્-શ્રેષ્ઠ વિદ્યા-ઐશ્વર્યયુક્ત માને અને કહે. (૬)

ભાવાર્થ : જ્યારે સર્વ મનુષ્યો વિરોધ છોડીને સર્વનો ઉપકાર કરવામાં પ્રયત્ન કરે છે, ત્યારે શત્રુ પણ મિત્ર-અવિરોધી બની જાય છે; માટે સર્વ મનુષ્યોને ઈશ્વરની કૃપા અને નિત્ય આનંદ પ્રાપ્ત થાય છે. (૬)

एमाशुमाशवे भर यज्ञश्रियं नृमादनम् । पतयन्मन्दयत्सखम् ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમેશ્વર ! આપની કૃપાથી અમે-આશવે-વાહનોમાં સર્વ સુખ અને શીઘ્ર વેગ આદિ ગુણોની પ્રાપ્તિ માટે આશુમ્-વેગ આદિ ગુણવાળા અગ્નિ, વાયુ આદિ પદાર્થ યજ્ઞશ્રિયમ્-ચક્રવર્તી રાજ્ય વગેરેની મહિમાની શોભા નૃમાદનમ્-મનુષ્યોને અત્યંત આનંદ આપનાર પતયત્-પતિ = સ્વામી બનાવનાર, મન્દયત્સખમ્-વિદ્યાનો ઉપદેશ કરનારા મિત્ર લોકો જેથી પ્રસન્ન થાય છે, તે વિજ્ઞાન આદિ ધનને તથા (ઈમ્) જળ અને પૃથિવીને આભર-સર્વત્રથી પ્રદાન કરો. (૭)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર પુરુષાર્થી મનુષ્ય પર કૃપા કરે છે. આળસુ પર નહિ, કારણ કે જ્યાં સુધી મનુષ્ય સ્વયં પૂર્ણ પુરુષાર્થ કરતો નથી, ત્યાં સુધી ઈશ્વરની કૃપાથી પ્રાપ્ત પદાર્થોની રક્ષા કરવામાં પણ સમર્થ બની શકતો નથી. તેથી મનુષ્યે પુરુષાર્થી બનીને ઈશ્વર-કૃપાની કામના કરવી જોઈએ. (૭)

अस्य पीत्वा शतक्रतो घ्नो वृत्राणामभवः । प्रावो वाजेषु वाजिनम् ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે શતક્રતો-અસંખ્ય કર્મોયુક્ત શૂરવીર પુરુષોત્તમ ! જેમ ધનઃ-મૂર્તિમાન દેહ આ સૂર્યલોક અસ્ય-આ પ્રત્યક્ષ-અપ્રત્યક્ષ સમસ્ત જગતના અથવા જળના રસનું પીત્વા-પાન કરીને વૃત્રાણામ્-મેઘ-વાદળાઓનાં અંગ રૂપ જળબિન્દુઓને વરસાવીને સર્વ ઔષધિ આદિ પદાર્થોને પુષ્ટ કરીને પ્રાવઃ-રક્ષા કરે છે, તેમ જ પોતાના પ્રકાશથી સર્વને પ્રકાશિત કરે છે, તેમજ તું પણ સર્વ રોગો, દુષ્ટ અને શત્રુજનોનો નાશ કરનાર બનીને અસ્ય-આ જગતની રક્ષા કરનાર અભવઃ-બન.

એજ રીતે જે વાજેષુ-દુષ્ટોની સાથે યુદ્ધોમાં પ્રવર્તમાન ધાર્મિક વાજિનમ્-શૂરવીર પુરુષની અથવા

સૂર્યલોકની પ્રાવ:-સારી રીતે રક્ષા કર. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ જે મનુષ્ય દુષ્ટોની સાથે ધર્મપૂર્વક યુદ્ધ કરે છે, તેનો જ વિજય થાય છે અન્યનો નહિ, તેમ પરમેશ્વર પણ ધાર્મિક યોદ્ધા મનુષ્યોનો સહાયક બને છે; અન્યનો નહિ. (૮)

તં ત્વા વાજૈષુ વાજિનં વાજયામઃ શતક્રતો । ધનાનામિન્દ્ર સાતયૈ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે શતક્રતો-અસંખ્ય વસ્તુઓમાં પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિ રાખનાર ઇન્દ્ર-પરમેશ્વર્યવાન જગદીશ્વર ! અમે ધનાનામ્-પૂર્ણ વિદ્યા અને રાજ્ય સિદ્ધ કરનારા પદાર્થોના સાતયે-સુખ ભોગ અથવા સારી રીતે સેવન કરવા માટે વાજેષુ-યુદ્ધાદિ વ્યવહારોમાં વાજિનમ્-વિજય પ્રાપ્ત કરાવનાર તમ્-પૂર્વોક્ત ગુણયુક્ત ત્વા-આપ ઇન્દ્ર = પરમેશ્વરને જ વાજયામઃ-નિત્ય પ્રતિ જાણવા અને જણાવવાનો પ્રયત્ન કરીએ છીએ. (૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય દુષ્ટોને યુદ્ધ દ્વારા નિર્બળ કરીને, જિતેન્દ્રીય વિદ્વાન બનીને, જગદીશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન કરે છે; તે જ મનુષ્ય ધન અને વિજયને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

યો રાયોઙ્ગવનિર્મહાન્ત્સુપારઃ સુન્વતઃ સખા । તસ્મા ઇન્દ્રાય ગાયત ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! ય:-જે પરમેશ્વર કરુણામય, મહાન-સર્વથી મહાન, સુપારઃ-સારી રીતે સર્વ કામનાઓને પરિપૂર્ણ કરનાર, સુન્વતઃ-ધર્મ અને વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરેલ મનુષ્યને સખા-મિત્ર ભાવે સુખ પ્રદાન કરનાર, રાયઃ-વિદ્યા, સુવર્ણ આદિ ધનના અવનિઃ-રક્ષક, પ્રાપક = સંસારમાં ઉક્ત પદાર્થોને જીવોને પહોંચાડનાર અને દાતા છે. તમે લોકો તસ્મૈ-તે ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યવાન ઇન્દ્રની જ ગાયત-સ્તુતિ કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : કોઈ મનુષ્યે માત્ર પરમેશ્વરની સ્તુતિ કરવાથી સંતુષ્ટ ન રહેવું જોઈએ, પરંતુ તેની આજ્ઞામાં રહેવાથી (પાલન કરવાથી સંતુષ્ટ રહેવું જોઈએ.) તે અમને સર્વત્ર જોઈ રહેલ છે (તેમ માનીને) અધર્મથી દૂર રહીને તે ઇશ્વરની સહાયના ઈચ્છુક મનુષ્યે સદા પુરુષાર્થમાં પ્રવૃત્ત રહેવું જોઈએ. (૧૦)

સંગતિ : તૃતીય સૂક્તમાં કહેલ વિદ્યા દ્વારા પરમેશ્વર, જ્ઞાન, આત્મા, શરીર અને દેહતાની પ્રાપ્તિથી દુષ્ટોથી વિજય કરવાથી અને પુરુષાર્થથી ચક્રવર્તી રાજ્ય ધાર્મિક વિદ્વાનોએ પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ વગેરે અર્થ કરીને આ ચોથા સૂક્તના અર્થની સંગતિ સમજવી જોઈએ. (૪)

સૂક્ત-૫

આ ત્વેતા નિષીદ્તેન્દ્રમ્ભિ પ્રગાયત । સખાયઃ સ્તોમવાહસઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સ્તોમવાહસઃ-પ્રશંસનીય ગુણયુક્ત અથવા પ્રશંસા કરવા યોગ્ય સખાયઃ-પરસ્પર મિત્ર બનીને રહેનારા વિદ્વાનો ! તમે સર્વ મળીને પરસ્પર પ્રીતિપૂર્વક મુક્તિ અને શિલ્પવિદ્યાને સિદ્ધ કરવામાં

આનિષીદત-સર્વત્રથી સ્થિર થાઓ. અર્થાત્ તેની નિરંતર સારી રીતે યત્નપૂર્વક સાધના કરવા માટે **ઇન્દ્રમ્**-પરમેશ્વર અને વાયુના (ઇન્દ્ર શબ્દથી પરમેશ્વર અને શિલ્પવિદ્યા તથા પ્રાણીઓના જીવનના હેતુથી સ્પર્શગુણ વાળા વાયુનું ઋગ્વેદ ૦ ૧/૧૪/૧૦ પ્રમાણથી ગ્રહણ થાય છે.) **અભિપ્રગાયત**-મુખ્ય રૂપ અને ઉત્તમ રીતે વિદ્યાની સિદ્ધિ માટે ગુણોનો ઉપદેશ કરો અને તેને સાંભળો, જેથી તે શ્રેષ્ઠ રીતે સિદ્ધ કરેલ વિદ્યા સર્વથી પ્રકાશિત થાય. **તુ**-અને તેથી તમે સર્વજનો સર્વ સુખોને **એત**-પ્રાપ્ત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જ્યાં સુધી મનુષ્યો હઠ, છળ-કપટ અને અભિમાનનો ત્યાગ કરીને સત્ય, પ્રીતિપૂર્વક પરસ્પર ઉપકાર માટે (તન, મન અને ધનથી) મિત્ર સમાન પ્રયત્ન કરતા નથી, ત્યાં સુધી તેઓના સુખ અને વિદ્યાદિ શ્રેષ્ઠ ગુણોની કદી પણ ઉન્નતિ થઈ શકતી નથી. (૧)

પુસ્તમં પુસ્તુનામીશાનં વાર્યાણામ્ । ઇન્દ્રં સોમે સર્ચા સુતે ॥ ૨ ॥

[પરમેશ્વર]

પદાર્થ : હે **સખાય**:-પરસ્પર મિત્ર ભાવથી રહેનારા વિદ્વાનો ! તમે **વાર્યાણામ્**-વરણ કરવા યોગ્ય અર્થાત્ અત્યંત ઉત્તમ પદાર્થોમાં સ્વીકાર કરવા યોગ્ય, **પુસ્તમમ્**-બહુ દુષ્ટ સ્વભાવવાળા જીવોને પાપ કર્મોના ફળ આપીને ગ્લાનિ પ્રાપ્ત કરાવનાર, **ઈશાનમ્**-સૃષ્ટિ-રચનામાં સમર્થ, **પુસ્તુનામ્**-આકાશથી પૃથિવી સુધીના અસંખ્ય પદાર્થોના **ઇન્દ્રમ્**-સમસ્ત ઐશ્વર્યનું પ્રદાન કરનાર પરમેશ્વરના **અભિપ્રગાયત**-ગુણોના ઉપદેશ કરો અને સાંભળો (**તુ**) અને જે **સુતે**-અભિષવ-વિદ્યાથી પ્રાપ્ત **સોમે**-સેવન કરવા યોગ્ય સર્વ પદાર્થોમાં **સર્ચા**-સચ્ચેલ પદાર્થ છે, તે સર્વના ઉપકાર માટે યથાયોગ્ય તેનો **અભિપ્રગાયત**-શ્રેષ્ઠ રીતે વિદ્યાની વૃદ્ધિ માટે ગુણગાન કરો અને તેના ગુણોને સાંભળો.

[ભૌતિક વાયુ]

હે **સખાય**:-પરસ્પર મિત્રભાવથી રહેનારા વિદ્વાનો તમે **વાર્યાણામ્**-વરણ કરવા યોગ્ય અર્થાત્ અત્યંત ઉત્તમ પદાર્થોમાં સ્વીકાર કરવા યોગ્ય **પુસ્તમમ્**-પાપકર્મના ફળ-ભોગના હેતુ, **ઈશાનમ્**-પરમેશ્વરની મધ્યમાં સ્થિત વિદ્યાના સાધક, **પુસ્તુનામ્**-આકાશથી પૃથિવી સુધીના અનેક પદાર્થોમાં **ઇન્દ્રમ્**-આત્માના સર્વ ભોગ હેતુભૂત વાયુના **અભિ + પ્રયાગત**-મુખ્ય રૂપથી તથા શ્રેષ્ઠ રીતે વિદ્યાની સિદ્ધિને માટે ગુણોનો ઉપદેશ કરો અને સાંભળો. **તુ**-અને જે **સુતે**-અભિષવ-વિદ્યાથી યુક્ત **સોમે**-તે વિદ્યાથી પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય **સર્ચા**-જે સમવેત પદાર્થ છે; તેને સર્વના ઉપકારને માટે યથાયોગ્ય **અભિ + પ્ર + ગાયત**-મુખરૂપથી અને ઉત્તમ રીતે વિદ્યા-સિદ્ધિ માટે તેના ગુણોનો ઉપદેશ કરો અને સાંભળો. (૨)

ભાવાર્થ : પૂર્વ મંત્રમાંથી આ મંત્રમાં '**સખાય**:' તુ **અભિપ્રગાયત** એ ત્રણ શબ્દોને અર્થ માટે લેવા જોઈએ. યથાયોગ્ય વ્યવસ્થાયી જીવોને તે-તે કર્મોના ફલદાતા હોવાથી ઈશ્વરનું તથા એ કર્મનો ભોગ કરાવનારને કારણે અને વિદ્યા તથા સર્વ ચેષ્ટા-ક્રિયાઓનો સાધક હોવાથી ભૌતિક અર્થાત્ સંસારી વાયુનું એમ બે અર્થનું ગ્રહણ થાય છે. (૨)

સ ઘા નો યોગ આર્ભુવત્સ રાયે સ પુરન્ધ્યામ્ । ગમ્દ્વાર્જેભિરા સ નઃ ॥ ૩ ॥

[પરમેશ્વર]

પદાર્થ : સ:-તે ઈન્દ્ર = પરમેશ્વર-ઘા-જ ન:-અમારા યોગે-સર્વ સુખ-સાધનોની પ્રાપ્તિના સાધક યોગમાં સહાયક આ + ભુવત્-સર્વત્રથી થાય, તથા સ:-તે પરમેશ્વર જ રાયે-પરમ ઉત્તમ ધનની પ્રાપ્તિ માટે, સ:-અને તે પરમેશ્વર પુરુષ્યામ્-અનેક શાસ્ત્ર વિદ્યાથી યુક્ત બુદ્ધિમાં પ્રકાશ કરનાર થાય.

આ રીતે સ:-તે પરમેશ્વર જ વાજેભિ:-ઉત્તમ અન્નોની સાથે ન:-અમને આ + ગમત્ આજ્ઞા પ્રદાન કરે.

[ભૌતિક-વાયુ]

સ:-તે ઈન્દ્ર = વાયુ ઘા-જ ન:-અમારા યોગે-સહાયક અને વ્યવહાર-વિદ્યાના ઉપયોગ માટે આ + ભુવત્-સર્વત્રથી વર્તમાન; તથા સ:-તે વાયુ જ રાયે-પરમ ઉત્તમ ધનની પ્રાપ્તિ માટે અને સ:-તે વાયુ પુરુષ્યામ્-અનેક શાસ્ત્ર-વિદ્યાથી યુક્ત બુદ્ધિમાં પ્રકાશ કરનાર હોય છે.

એજ રીતે સ:-તે વાયુ જ વાજેભિ:-વિમાન આદિ યાનોથી અમને આગમત્-સર્વત્ર લઈ જાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર પુરુષાર્થી મનુષ્યને સહાય કરનાર હોય છે; આળસુને નહિ. વાયુ પણ પુરુષાર્થથી કાર્ય સિદ્ધિમાં ઉપયોગી બને છે, કોઈને પણ પુરુષાર્થ વિના ધન અને બુદ્ધિનો લાભ પ્રાપ્ત થતો નથી; અને તે બન્ને વિના કદી પણ ઉત્તમ સુખ પ્રાપ્ત થતું નથી. એટલા માટે સર્વ મનુષ્યોએ પુરુષાર્થી અને આશાવાન બનવું જોઈએ. (૩)

यस्य संस्थे न वृण्वते हरीं समत्सु शत्रवः । तस्मा इन्द्राय गायत ॥ ४ ॥

[પરમેશ્વર]

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે યસ્ય-જે પરમેશ્વરના હરી-હરણશીલ બળ અને પરાક્રમ સંસ્થે-આ જગતમાં છે, યસ્ય-જે પરમાત્માની સહાયથી શત્રવ:-શત્રુ સમત્સુ-યુદ્ધોમાં ન વૃણવતે-સારી રીતે બળ કરી શકતા નથી. તસ્મૈ-તે ગુણોથી યુક્ત તે ઇન્દ્રાય-પરમેશ્વરને નિત્ય ગાયત-ગુણોની સ્તુતિ અને શ્રવણથી જાણો.

[સૂર્યલોક]

હે મનુષ્યો ! તમે યસ્ય-જે સૂર્યલોકના હરી-હરણશીલ પ્રકાશ અને આકર્ષણ નામક ગુણ સંસ્થે-આ જગતમાં છે; યસ્ય-જે સૂર્યલોકની સહાયથી શત્રવ:-શત્રુ સમત્સુ-યુદ્ધોમાં ન વૃણવતે સારી રીતે બળ કરી શકતા નથી; તસ્મૈ-ઉક્ત ગુણોથી યુક્ત તે ઇન્દ્રાય-સૂર્યની નિત્ય ગાયત-ગુણોથી સ્તુતિ અને શ્રવણ કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જ્યાં સુધી મનુષ્યો પરમેશ્વરને પોતાના ઈષ્ટદેવ માનનાર અને તેને પ્રિય તથા બળવાન બનતા નથી, ત્યાં સુધી તેમાં દુષ્ટ શત્રુઓને નિર્બળ કરવાની શક્તિ આવતી નથી. (૪)

सुतपाव्ने सुता इमे शुचयो यन्ति वीतये। सोमासो दध्याशिरः ॥ ५ ॥

पदार्थ : ईन्द्र अर्थात् परमेश्वर, वायु अने सूर्यथी सुतपाव्ने-मुष्य ३पथी उत्पन्न करेल पदार्थोना रक्षक जवने माटे, वीतये-ज्ञान अने भोग माटे, इमे-अे सर्व दध्याशिरः-पुष्टि करनार अने सर्वत्रथी नष्ट थनार शुचयः-पवित्र, सोमासः-उत्तम व्यवहारोना उत्पत्ति-स्थान सर्व पदार्थोने सुता-उत्पन्न करेल छे, पवित्र करेल छे, तेथी तेने सर्व जव यन्ति-प्राप्त करे छे. (५)

भावार्थ : ईश्वर द्वारा सर्व जवो पर कृपा करीने कर्मानुसार इण आपवा माटे समस्त कार्य जगतनी रचना करवामां आवेल छे अने तेने पवित्र करवामां आवेल छे, अेज रीते पवित्र करनार सूर्य अने वायु छे. तेना कारणे जे सर्व जड पदार्थ अने जव पवित्र छे, परन्तु जे मनुष्य पवित्र गुण-कर्माने ग्रहण करवामां पुरुषार्थी बनीने तेनो यथावत् उपयोग स्वयं ग्रहण करीने अन्योने ग्रहण करावे छे; तेओज 'पवित्र' बनीने सुभी थाय छे. (५)

त्वं सुतस्य पीतये सद्यो वृद्धो अजायथाः। इन्द्र ज्यैष्ठ्याय सुक्रतो ॥ ६ ॥

पदार्थ : हे इन्द्र-विद्यादि परम ऐश्वर्यथी युक्त, सुक्रतो-श्रेष्ठ कर्म अने बुद्धिथी युक्त विद्वान् मनुष्य ! त्वम्-तुं सद्यः-शीघ्र सुतस्य-उत्पन्न थयेल आ जगतना पदार्थ समूहना रसनं पीतये-पान अथवा ग्रहण करवा माटे ज्यैष्ठ्याय-अति श्रेष्ठ कर्मानुं अनुष्ठान करवा माटे वृद्धः-विद्यादि शुभ गुणोना ज्ञानने ग्रहण करवा अने सर्वनो उपकार करवामां श्रेष्ठ अजायथाः-बन. (६)

भावार्थ : ईश्वर जवने उपदेश आपे छे के-हे मनुष्य ! तुं ज्यां सुधी विद्यामां वृद्ध बनीने सारी रीते पुरुषार्थ अने परोपकार नछि करे, त्यां सुधी तुं मानवता-मनुष्यपणुं अने सर्वोत्तम सुधने प्राप्त करी शकीश नछि, तेथी तुं धार्मिक बनीने पुरुषार्थी बन. (६)

आ त्वा विशन्त्वाशवः सोमास इन्द्र गिर्वणः। शन्ते सन्तु प्रचेतसे ॥ ७ ॥

पदार्थ : हे धार्मिक ! गिर्वणः-प्रशंसा योग्य कर्म करनार अर्थात् वाणी द्वारा स्तुतिने योग्य, इन्द्र-विद्वान् मनुष्य ! आशवः-वेगादि गुणोथी युक्त, सर्व क्रियाओमां व्याप्त सोमासः-सर्व पदार्थ त्वा-तने आ + विशन्तु-प्राप्त थाय तथा अे प्रकारना गुणोथी प्रचेतसे-शुद्ध ज्ञानवाणा ते-आपने माटे मारा अनुग्रहथी अे सर्व पदार्थ शम्-सुभकारक सन्तु-थाय. (७)

भावार्थ : ईश्वर अेवा जवने आशीर्वाद आपे छे के-ज्यारे जे मनुष्य विद्वान् परोपकारी बनीने नित्य पुरुषार्थ करे छे, त्यारे सर्व पदार्थोथी उपकार ग्रहण करीने सर्व प्राणीओने सुभी करे छे, ते सर्व सुधोने प्राप्त करे छे, अन्य नछि. (७)

त्वां स्तोमा अवीवृधन् त्वामुक्था शतक्रतो। त्वां वर्धन्तु नो गिरः ॥ ८ ॥

पदार्थ : हे शतक्रतो-असंख्य कर्मा अनंत प्रज्ञायुक्त ईश्वर ! जेम स्तोमाः-वेदनो स्तुति समूह-स्तोत्र उक्था-प्रशंसनीय स्तोत्र आपने अवीवृधन्-अत्यंत प्रसिद्ध करे छे, तेम नः-अमारी गिरः-विद्या अने सत्यभाषण युक्तवाणी पण त्वाम्-आपने वर्धन्तु-सर्वथा प्रकाशित करे. (८)

ભાવાર્થ : જેમ-જે સંસારમાં પૃથિવી અને સૂર્ય આદિ રચેલ પદાર્થ છે, તે સર્વ, સર્વના રચયિતા પરમેશ્વરનું જ્ઞાન કરાવીને, તેને પ્રકાશિત કરે છે; તેમ તે ઉપકારોને તથા પરમાત્માના ગુણોને સમ્યક્ રીતે જાણીને વિદ્વાનજનો પણ એવા જ કર્મમાં પ્રવૃત્ત થાય. (૮)

અક્ષિતોતિઃ સનેદ્દિમં વાજ્મિન્દ્રઃ સહસ્ત્રિણમ્ । યસ્મિન્ વિશ્વાનિ પૌંસ્યા ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : અક્ષિતોતિઃ-ક્ષય રહિત જ્ઞાનવાન ઇન્દ્રઃ સર્વ ઐશ્વર્યયુક્ત પરમેશ્વર છે, તે કૃપા કરીને અમારા માટે યસ્મિન્-જેના વ્યવહારમાં વિશ્વાનિ-સર્વ પૌંસ્યા-પુરુષ બળ છે, ઇમમ્-એ સહસ્ત્રિણમ્-સહસ્ર = અસંખ્ય સુખોના દાતા વાજમ્-પદાર્થોના વિજ્ઞાનને સનેત્-સમ્યક્ સેવન કરાવે, જેથી અમે શ્રેષ્ઠતમ સુખોને પ્રાપ્ત કરીએ. (૯)

ભાવાર્થ : અમે-જેની સત્તાથી સંસારમાં પદાર્થ બળવાન બનીને એ પોતાના વ્યવહારમાં રહે છે, તે બળ આદિ ગુણો માટે, સર્વના સુખ માટે, પુરુષાર્થ કરીએ, તે પરમેશ્વર તે વ્યવહારમાં અમારી સહાયતા કરે એવી પ્રાર્થના કરીએ છીએ. (૯)

મા નો મર્ત્તી અભિદ્રુહન્ તનૂનામિન્દ્ર ગિર્વણઃ । ઈશાનો યવયા વૃધમ્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે ગિર્વણઃ-વેદ અને શિક્ષાથી સંસ્કૃત વાણીઓ દ્વારા સેવન કરવા યોગ્ય સર્વશક્તિમાન્ ! ઇન્દ્ર-સર્વ રક્ષક પરમેશ્વર ! ઈશાનઃ-સમર્થ આપ નઃ-અમારા તનૂનામ્-શરીરો અથવા વિસ્તૃત પદાર્થોનું વધમ્-હનન મા, યવય-કદી ન કરો તથા આપના ઉપદેશથી મર્ત્તાઃ-મરણધર્મા = મનુષ્ય અને સર્વ પ્રાણીઓ નઃ-અમારાથી માભિદ્રુહન્-કદી દ્રોહ ન કરે. (૧૦)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય અન્યાયથી કોઈ પ્રાણીની હિંસા કરવાની ઈચ્છા ન કરે, પરંતુ સર્વની સાથે મિત્રભાવથી વર્તન કરે. જેમ ઈશ્વર કોઈથી પણ દ્રોહ કરતો નથી, તેમ જ સર્વ મનુષ્યોએ આચરણ કરવું જોઈએ. (૧૦)

સંગતિ : આ પંચમ સૂક્તમાં મનુષ્યોએ વિદ્યા દ્વારા કેવી રીતે પુરુષાર્થ અને સર્વનો ઉપકાર કરવો જોઈએ, એ વિષયનો ઉપદેશ કરવામાં આવેલ હોવાથી ચોથા સૂક્ત સાથે તેની સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૫)

સૂક્ત-૬

યુજ્જન્તિ બ્રહ્મનમરુષં ચરન્તં પરિ તસ્થુષઃ । રોચન્તે રોચના દિવિ ॥ ૧ ॥

[પરમેશ્વર]

પદાર્થ : જે મનુષ્યો અસ્ત્રમ્-સર્વ મર્મસ્થાનોમાં વિદ્યમાન, હિંસારહિત પરમેશ્વર અને પ્રાણવાયુને તથા બ્રહ્મનમ્-મહાન પરમેશ્વરને પરિ-સર્વત્ર તસ્થુષઃ-વિદ્યમાન સર્વ સ્થાવર પદાર્થો અથવા મનુષ્યોને તથા ચરન્તમ્-સર્વ જગતના જાણવા અને સર્વત્ર વ્યાપ્ત પરમાત્માને પોતાના આત્મામાં યુજ્જન્તિ-ઉપાસના યોગ દ્વારા યુક્ત કરે છે, તેઓ રોચનાઃ-સ્વયં પ્રકાશિત અને સર્વના પ્રકાશક બનીને દિવિ-પ્રકાશ સ્વરૂપ

બ્રહ્મમાં રોચન્તે-પ્રકાશિત થાય છે, તેમાં રુચિ કરાવનાર બને છે.

[સૂર્ય-વાયુ]

જે મનુષ્ય અસ્મ્મ બાહ્ય પ્રદેશમાં રૂપના પ્રકાશક અને લાલ ગુણયુક્ત સૂર્યને બ્રહ્મ-શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ માટે સૂર્ય, અગ્નિ અથવા પ્રાણને પરિતઃ-સર્વત્રથી તસ્થુષઃ-સ્થાવર પદાર્થો અથવા મનુષ્યોને ચરન્તમ્-સર્વત્ર વ્યાપ્ત કરનાર બાહ્ય પ્રદેશમાં વિદ્યમાન સૂર્ય અથવા વાયુને યુજ્જન્તિ-યુક્ત કરે છે, તેઓ સ્વયં પ્રકાશિત અને પ્રકાશક બનીને દિવિ-સૂર્ય વગેરેના પ્રકાશમાં પ્રકાશિત થાય છે, તેમાં રુચિ કરાવનાર બને છે. (૧)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે કે-જે મનુષ્ય નિશ્ચય વિદ્યા ભણાવવામાં તત્પર રહે છે-પુરુષાર્થી હોય છે, તેને જ સર્વ સુખો પ્રાપ્ત થાય છે. તેથી વિદ્વાન લોકો પૃથિવી આદિ પદાર્થોથી સ્વયં ઉપયોગ ગ્રહણ કરીને તથા અન્યોને ગ્રહણ કરાવીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે. (૧)

યુજ્જન્ત્યસ્ય કામ્યા હરી વિપક્ષસા રથે । શોળા ધૃષ્ણૂ નૃવાહસા ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! આપ અસ્ય-એ સૂર્ય રૂપ અગ્નિની કામ્યા-કામના કરવા યોગ્ય શોળા-વર્ણનો પ્રકાશક અને ગતિનો હેતુ ધૃષ્ણૂ-દંઢ, વિપક્ષસા-વિવિધ કલા અને જળના ચક્રમાં ભ્રમણથી પાંખો રૂપ યંત્રોથી યુક્ત નૃવાહસા-નરો-મનુષ્યોને દેશાન્તરમાં લઈ જનાર હરી-આકર્ષણ તથા વેગ અથવા શુક્લ પક્ષ અને કૃષ્ણપક્ષ રૂપી બે ઘોડા જેનાથી સર્વનું હરણ કરવામાં આવે છે, એ શ્રેષ્ઠ ગુણોને પૃથિવી, જળ અને આકાશમાં ગતિ કરનાર રથે-રથ-યાનોમાં યુજ્જન્તિ-યુક્ત કરો-જોડો. (૨)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે કે-જ્યાં સુધી મનુષ્ય પૃથિવી, જળ અને અગ્નિ આદિ પદાર્થોના ગુણ-જ્ઞાન તથા ઉપકાર ગ્રહણથી પૃથિવી, જળ અને આકાશમાં ગમન કરવા માટે યાન = વાહન બનાવતા નથી, ત્યાં સુધી તેને દંઢ રાજ્ય અને ધન આદિ ઉત્તમ સુખદાયક થતા નથી. (૨)

કેતું કૃણવન્નકેતવે પેશો મર્યા અપેશસે । સમુષદ્ધિરજાયથાઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : મર્યાઃ-હે મરણધર્મા મનુષ્યો ! જે જગદીશ્વર અકેતવે-અજ્ઞાનરૂપી અંધકારના વિનાશને માટે કેતુમ્-ઉત્તમ જ્ઞાનને, અપેશસે-નિર્ધનતા, દારિદ્ર્ય તથા કુરૂપતા આદિ દોષોના વિનાશને માટે પેશઃ-સુવર્ણ આદિ ધન અને શ્રેષ્ઠ રૂપને કૃણવન્-ઉત્પન્ન કરે છે, તે પરમેશ્વરને તથા સમસ્ત વિદ્યાઓને સમુષદ્ધિઃ-સમ્યક્ રીતે ઈશ્વર આદિ પદાર્થ વિદ્યાઓની કામના કરનારા વિદ્વાનોથી સમાગમ કરીને તમે યથાવત્ જાણો. (૩)

અજાયથાઃ-હે જિજ્ઞાસુ મનુષ્યો ! તમે પણ તે પરમેશ્વરના સમાગમથી અજાયથાઃ-વિદ્યાને અવશ્ય પ્રાપ્ત કરો. (૩)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ રાતના ચોથા પ્રહરમાં આળસનો ત્યાગ કરીને, ઊઠીને, અજ્ઞાન અને દરિદ્રતાના વિનાશ માટે પ્રયત્નશીલ બનીને, પરમેશ્વરનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ અને સર્વ પદાર્થોથી

ઉપકાર શ્રદ્ધ કરવો જોઈએ. (૩)

આદર્હ સ્વધામનુ પુનર્ગર્ભત્વમેરિરે । દધાના નામ યજ્ઞિયમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જેમ મસ્ત:-વાયુ નામ-જળ તથા યજ્ઞિયમ્-યજ્ઞકર્મ યોગ્ય પ્રદેશને દધાના:-ધારણ કરનાર બનીને પુન:-ફરી-ફરી સ્વધામ, અનુ-પ્રત્યેક જળમાં જળને ગર્ભત્વમ્-તેના સમૂહરૂપી ગર્ભને દરિ-સર્વ પ્રકારથી પ્રાપ્ત થઈને કંપાવે છે, તેમ આત્-ફરી વર્ષા કરીને જળને વરસાવે છે; એ જ રીતે વારંવાર જળોને ચડાવીને વરસાવે છે.

ભાવાર્થ : જે જળ સૂર્ય અને અગ્નિ દ્વારા લઘુત્વ-હલકુ કે સૂક્ષ્મને પ્રાપ્ત થઈને કણ રૂપ બની જાય છે, તેનું ધારણ કરીને અર્થાત્ ધન બનાવીને કે વાદળાઓનો આકાર પ્રદાન કરીને વાયુ જ વરસાવે છે, તેથી સર્વનું પાલન અને સુખ ઉત્પન્ન થાય છે. (૪)

વીઠુ ચિદારુજત્લુભિર્ગુહા ચિદિન્દ્ર વહ્નિભિઃ । અવિન્દ ડસ્ત્રિયા અનુ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : ચિત્-જેમ મનુષ્ય પોતાની નજીકના પદાર્થને ઊઠાવીને ધારણ કરે છે, તેમ ચિત્-જ ઇન્દ્ર: સૂર્ય પણ વીઠુ-બળ પૂર્વક ડસ્ત્રિયા:-પોતાનાં કિરણો દ્વારા સંસારી પદાર્થોને અવિન્દ:-પ્રાપ્ત થાય છે, અને અનુ-તત્પશ્ચાત્ સૂર્ય તેનું ભેદન કરીને આરુજત્લુભિઃ-સર્વત્રથી ભંજન કરનાર વહ્નિભિઃ-વાહક પવનોની સહાયથી તેને તથા પદાર્થ-સમૂહને ગુહા-અન્તરિક્ષ અર્થાત્ પોલમાં સ્થાપિત કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ બળવાન પવન પોતાના દંઢ વેગથી દંઢ વૃક્ષ વગેરેને પણ તોડી નાખે છે, તેમ સૂર્ય તેને પોતાના કિરણોથી દિવસ અને રાત કાપે છે અને પવન તેને ઉપર-નીચે લઈ જાય છે. એ રીતે ઈશ્વરની વ્યવસ્થાથી-નિયમથી સર્વ પદાર્થો ઉત્પત્તિ અને વિનાશને પ્રાપ્ત થાય છે. (૫)

દેવ્યન્તો યથા મતિમચ્છા વિદદ્વસુ ગિરઃ । મહામનૂષત શ્રુતમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જેમ દેવ્યન્ત:-સર્વ વિજ્ઞાનયુક્ત ગિરઃ-વિદ્વાન મનુષ્યો વિદદ્વસુમ્-સુખકારક પદાર્થ વિદ્યાથી યુક્ત મહામ્-મહાન મતિમ્-બુદ્ધિને શ્રુતમ્-સર્વ શાસ્ત્રોના શ્રવણ અને કથનને અનૂષત-પ્રશસ્ત કરે છે, તેમ જ પવન પોતાના વેગ આદિ ગુણોથી યુક્ત બનીને વાણી અને શ્રોત સંબંધી ચેષ્ટાઓ અને શિલ્પવિદ્યાને અચ્છ-ઉત્તમ રીતે સિદ્ધ કરે છે. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વાયુના ઉત્તમ ગુણોનું જ્ઞાન, સર્વનો ઉપકાર, વિદ્યાની વૃદ્ધિ અને બુદ્ધિની પ્રાપ્તિ માટે સદા પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. જેથી સર્વ વ્યવહાર સિદ્ધ થાય છે. (સ્વામીજીએ મંત્રની મેક્ષમૂલરની વ્યાખ્યાની સમીક્ષા કરી છે.) (૬)

ઇન્દ્રેણ સં હિ દૃક્ષસે સંજગ્માનો અભિભ્યુષા । મન્દૂ સમાનવર્ચસા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : એ વાયુ અભિભ્યુષા-ભય દૂર કરનાર કિરણ સમૂહ અથવા વાયુગણ તથા ઇન્દ્રેણ-પરમેશ્વર અથવા સૂર્યની સાથે જ સંજગ્માન:-સારી રીતે સંગ થયેલ તથા વાયુની સાથે સૂર્ય સંદક્ષસે-સંગત થયેલ

દ્રષ્ટિગોચર થાય છે, હિ-જેથી તે બન્ને સમાનવર્ચસા-પદાર્થોમાં પ્રસિદ્ધ બળવાન છે, તેથી સર્વને મન્દુ-આનંદ પ્રદાન કરનાર છે. (૭)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે સર્વત્ર વ્યાપક થઈને પોતાની સત્તાથી સૂર્ય, વાયુ આદિ સમસ્ત પદાર્થો ઉત્પન્ન કરીને ધારણ કરેલ છે. તેના મધ્યમાં સૂર્ય અને વાયુનું ધારણ, આકર્ષણ અને પ્રકાશના યોગથી સર્વ પદાર્થો સુશોભિત થાય છે. મનુષ્યોએ તેની વિદ્યા અને ઉપકાર ગ્રહણ કરવામાં પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૭)

અનવઘૈર્ભિદ્યુભિર્મઃ સહસ્વદર્ચ્વતિ । ગૃણૈરિન્દ્રસ્ય કામ્યૈઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : જે એ મઃ-સુખ અને પાલન કરવાનો હેતુ યજ્ઞ છે, તે ઇન્દ્રસ્ય-સૂર્યની અનવઘૈઃ-નિર્દોષ અભિદ્યુભિઃ-સર્વત્રથી પ્રકાશમાન અને કામ્યૈઃ-પ્રાપ્તિની ઈચ્છા કરવા યોગ્ય ગૃણૈઃ-કિરણો અથવા પવનોની સાથે મળીને સર્વ પદાર્થોને સહસ્વત્-જેમ દેહ થાય છે, તેમ અર્ચ્વતિ-શ્રેષ્ઠ ગુણ કરનાર બને છે. (૮)

ભાવાર્થ : જે એ સુખ અને રક્ષા પ્રદાન કરનાર શુદ્ધ દ્રવ્યોનો અગ્નિમાં હોમ કરવાથી સિદ્ધ થનાર યજ્ઞ છે, તે વાયુ અને સૂર્ય-કિરણોની શુદ્ધિ દ્વારા રોગોનો નાશ કરીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખ આપીને તેને બળવાન બનાવે છે. (૮)

અતઃ પરિજ્મન્નાર્ગહિ દિવો વા રોચનાદધિ । સમસ્મિન્નૃઞ્જતે ગિરઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : જે વાણીનો સર્વ વ્યવહાર સિદ્ધ થાય છે; તે પરિજ્મન્-સર્વત્ર ગમનશીલ તથા સર્વ પદાર્થોને ઉપર-નીચે પહોંચાડનાર વાયુ છે, અતઃ-જે પૃથિવીથી જળકણોને ગ્રહણ કરીને અધ્યાગહિ-ઉપર લઈ જઈને દિવઃ-સૂર્યના પ્રકાશથી વા-અથવા રોચનાત્-રચિવર્ધક મેઘમંડલથી જળને નીચે લાવે છે; અસ્મિન્-એ બહાર અને અંદર રહેનાર પવનમાં સર્વ પદાર્થો સ્થિતિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

ભાવાર્થ : એ બળવાન વાયુ ગમન-આગમન સ્વભાવવાળો હોવાથી સર્વ પદાર્થોનું ગમન-આગમન, ધારણ, શબ્દોચ્ચારણ અને શ્રવણનો હેતુ છે. (૯)

ઇતો વા સાતિમીમહે દિવો વા પાર્થિવાદધિ । ઇન્દ્રં મહો વા રજસઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : વયમ્-અમે ઇતઃ-આ પાર્થિવાત્-પૃથિવીનો સંયોગ વા-અને દિવઃ-એ પ્રત્યક્ષ અગ્નિનો પ્રકાશ વા-લોક લોકાન્તરો અર્થાત્ ચંદ્ર અને નક્ષત્રાદિ લોકોથી પણ સાતિમ્-સારી રીતે પદાર્થોના વિભાગ કરતા વા-અથવા રજસઃ-પૃથિવી આદિ લોકોથી મહઃ-અતિ વિસ્તૃત ઇન્દ્રમ્-સૂર્યને ઈમહે-જાણીએ છીએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : સૂર્યના કિરણો પૃથિવી પર રહેલ જળ આદિ પદાર્થોને છિન્ન-ભિન્ન કરીને સૂક્ષ્મ-હલકાં કરી દે છે. તેથી તે (જળાદિ પદાર્થ) વાયુની સાથે ઉપર જાય છે. પરંતુ તે સૂર્યલોક સર્વ લોકોથી સર્વથી મોટો છે. (૧૦)

સંગતિ : સૂર્ય અને પવન-વાયુથી જેમ પુરુષાર્થની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. તે બન્ને જગતમાં કેવી રીતે વર્તે છે અને તેનાથી કેવી રીતે ઉપકારની સિદ્ધિ થાય છે, એ પાંચમા સૂક્તના અર્થની સાથે આ છઠ્ઠા સૂક્તની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૬)

સૂક્ત-૭

इन्द्रमिद् गाथिनो बृहदिन्द्रमर्केभिरर्किणः । इन्द्रं वाणीरनूषत ॥ १ ॥

પદાર્થ : જે ગાથિન:-ગાન કરનાર, અર્કિણ:-સત્ય ભાષણ આદિ કરનાર વિદ્વાનો છે, તેઓ અર્કેમિ:-સત્કાર કરવાના પદાર્થ, સત્યભાષણાદિ શિલ્પિવિદ્યાના સિદ્ધ કરેલા કર્મો અને મંત્રો = વિચારોથી વાણી:-ચારેય વેદોની વાણીઓને પ્રાપ્ત થવા માટે બૃહત્-મહાન ઇન્દ્રમ્-પરમેશ્વર, ઇન્દ્રમ્-સૂર્ય એ ઇન્દ્રમ્-મહાબળવાન વાયુના ગુણોના જ્ઞાનથી હી-જ અનૂષત-યથાવત્ સ્તુતિ કરે. (૧)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે કે-મનુષ્યોએ વેદ મંત્રોનાં ચિંતનથી ઈશ્વર, સૂર્ય અને વાયુ આદિ પદાર્થોના ગુણોને સારી રીતે જાણીને (તેના દ્વારા) સર્વેના સુખ માટે નિત્ય પ્રયત્નપૂર્વક ઉપકાર શ્રદ્ધા કરવો જોઈએ. (૧)

इन्द्र इद्ध्योः सचा सम्मिश्र आ वचोयुजा । इन्द्रो वज्री हिरण्ययः ॥ २ ॥

પદાર્થ : જેમ એ સમ્મિશ્રલ:-પદાર્થોમાં સમ્યક્ રીતે મળેલ ઇન્દ્ર:-ઐશ્વર્યના હેતુ સ્પર્શક ગુણયુક્ત વાયુ સચા-સંયુક્ત, વચોયુજા-વાણીઓથી યુક્ત કરનાર, હ્ય્યો:-આદાન-પ્રદાન ગુણોને જે ગમન-આગમનોને આ-સર્વત્રથી યુક્ત કરે છે; તેમ ઇત્-જ વજ્રી-વજ્ર અર્થાત્ સંવત્સર અથવા તાપગુણ યુક્ત હિરણ્યય:-પ્રકાશ સ્વરૂપ ઇન્દ્ર:-સૂર્ય પણ પોતાના આદાન-પ્રદાન ગુણોથી સર્વ પદાર્થોમાં યુક્ત કરે છે. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુના યોગથી જ ઉચ્ચારણ અને શ્રવણરૂપ વ્યવહાર તથા સમસ્ત પદાર્થોનું ગમન આગમન, ધારણ કરવું અને સ્પર્શ રૂપ (વ્યવહાર) સંભવ બને છે, તેમ જ સૂર્યના યોગથી પદાર્થોનો પ્રકાશ અને છેદન રૂપ (વ્યવહાર) સંભવ બને છે. (૨)

इन्द्रो दीर्घाय चक्षस आ सूर्य रोहयद् दिवि । वि गोभिरद्रिमैरयत् ॥ ३ ॥

પદાર્થ : ઇન્દ્ર:-જે સમસ્ત જગતના રચયિતા જગદીશ્વરે દીર્ઘાય-મહાન તથા નિરંતર ચક્ષસે દર્શન માટે દિવિ-સર્વ પદાર્થોના પ્રકાશના નિમિત્ત સૂર્યમ્-પ્રસિદ્ધ સૂર્યલોક આ + રોહયત્-ઉપર સ્થાપિત કરેલ છે, તે ગોભિ:-પોતાના કિરણો દ્વારા અદ્રિમ્-ભેદ-વાદળોને વ્યૈસ્યત્-વિવિધ પ્રકારથી ઉપર-નીચે ગતિમાન કરીને વારંવાર વરસાવે છે. (૩)

ભાવાર્થ : સૃષ્ટિ રચવાની ઈચ્છા કરનાર ઈશ્વરે લોકોની મધ્યમાં દર્શન, ધારણ, આકર્ષણ અને પ્રકાશરૂપી પ્રયોજન માટે પ્રકાશમય સૂર્યલોક સ્થાપિત કરેલ છે, એજ રીતે પ્રત્યેક બ્રહ્માંડ (=સૌર પરિવાર) નો નિયમ છે. તે પ્રતિક્ષણ જળને ઉપર ખેંચીને તથા વાયુ દ્વારા ઉપર રાખીને વારંવાર નીચે

પહોંચાડે છે, એ જ વરસાદનું કારણ છે. (૩)

इन्द्र वाजेषु नोऽव सहस्रप्रधनेषु च । उग्र उग्राभिरूतिभिः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : **इन्द्रः**-હે પરમ ઐશ્વર્ય પ્રદાન કરનાર જગદીશ્વર ! **उग्रः**-સર્વ રીતે અનન્ત પરાક્રમવાન આપ-**सहस्रप्रधनेषु**-સહસ્ર =અસંખ્ય ઉત્તમ ધન આપનાર અને **वाजेषु**-મહાયુદ્ધોમાં **उग्राभिः**-અત્યંત ઉત્કૃષ્ટ **ऊतिभिः**-રક્ષા, પ્રાપ્તિ, વિજ્ઞાન, સુખ, પ્રવેશરૂપ સાધનોથી અર્થાત્ શ્રેષ્ઠતમ પદાર્થોની પ્રાપ્તિથી **नः**-આનંદમાં પ્રવેશ કરાવવાથી **अव**-રક્ષા કરો અને નિરંતર વિજયને પ્રાપ્ત કરાવો. (૪)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વર ધાર્મિક યોદ્ધાઓ પર કૃપા કરે છે; અન્યો પર નહિ. જે મનુષ્ય જિતેન્દ્રિય, વિદ્યાન, પક્ષપાત રહિત, શારીરિક અને આત્મિક બળના કારણે શ્રેષ્ઠ અને આળસરહિત બનીને ધર્મપૂર્વક મહાયુદ્ધોને જીતીને રાજ્યની નિત્ય રક્ષા કરે છે. તેઓ જ મહાભાગ્યશાળી બનીને સુખી થાય છે. (૪)

इन्द्रं वयं महाधन इन्द्रमर्भे हवामहे । युजं वृत्रेषु वज्रिणम् ॥ ५ ॥

પદાર્થ : **वयम्**-અમે **महाधने**-મહાધન માટે સંગ્રામમાં **इन्द्रम्**-સર્વજ્ઞ, સર્વશક્તિમાન પરમેશ્વરનું આહ્વાન અને સ્મરણ કરીએ છીએ. **अर्भे**-નાના યુદ્ધમાં એજ આહ્વાનથી **वज्रिणम्**-કિરણ અથવા જળ યુક્ત **वृत्रेषु**-મેઘમંડલ-વાદળોમાં **युजम्**-યુક્ત રહેનાર **इन्द्रम्**-સૂર્ય અથવા વાયુનું **हवामहे** આહ્વાન કરીએ છીએ. અર્થાત્ પ્રકાશ અને સર્વમાં ગમનાગમનાદિ ગુણોની સમાન ન્યાય, વિદ્યા પ્રકાશ અને દૂતો દ્વારા સર્વ રાજ્યમાં વિદ્યમાન વિદિત કરવા વગેરે ગુણોને સદા ધારણ કરતા રહીએ. (૫)

ભાવાર્થ : જ્યાં-જ્યાં નાનું અથવા મોટું યુદ્ધ થાય છે, ત્યાં-ત્યાં સર્વત્ર વિદ્યમાન પરમેશ્વરને રક્ષક માનીને દુષ્ટોની સાથે ધર્મપૂર્વક ઉત્સાહથી યુદ્ધ કરવાથી સૂર્ય તથા વાયુના કારણે પણ તેની સિદ્ધિ થાય છે. જેમ ઈશ્વર તે બન્નેને નિમિત્ત બનાવીને વરસાદથી સંસારનું મહાન સુખ સિદ્ધ કરી શકાય છે, તેમ મનુષ્યોએ (સૂર્ય અને વાયુ)નાં નિમિત્તથી કાર્ય સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૫)

स नो वृषन्नमुं चरुं सत्रादावन्नपावृधि । अस्मभ्यमप्रतिष्कृतः ॥ ६ ॥

[ઈશ્વર પ્રાર્થના]

પદાર્થ : હે **वृषन्**-સુખોની વર્ષા કરનાર, **सत्रादावन्**-સત્ય જ્ઞાન આપનાર પરમેશ્વર ! **सः**-આપ **अस्मभ्यम्**-આપની આજ્ઞા અને પુરુષાર્થમાં રહેનાર અમે લોકોને માટે **अप्रतिष्कृतः**-સ્થિર થઈને **नः**-અમારા આગામી આનંદ અર્થાત્ અમને આનંદ આપનાર પ્રત્યક્ષ મોક્ષનું દ્વાર અને **चरुम्**-જ્ઞાન લાભ ખોલી નાખો-ઉદ્ઘાટન કરો.

[સૂર્યનું પ્રયોજન]

આપ દ્વારા રચિત **सत्रादावा**-સત્ર અર્થાત્ વૃષ્ટિ નામક યજ્ઞને સર્વત્રથી આપનાર, **वृषा**-જળ વરસાવનાર **अप्रतिष्कृत**-સ્મરણ કરેલ સૂર્ય, અર્થાત્ પોતાની કક્ષામાં સ્થિર રહેતા સૂર્ય, **अस्मभ्यम्**-

પુરુષાર્થમાં રહેલા અમે લોકોને માટે, અમુ-અન્તરિક્ષમાં રહેલ ચસ્મ-મેઘને અપાવૃધિ-ભૂમિ પર પાડે છે. આ મંત્રનો બીજો અર્થ છે. (૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય દંઢતાથી સત્યવિદ્યા અને ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન કરે છે, અન્તર્યામી ઈશ્વર તેના અવિદ્યા-અંધકારનો અત્યંત નાશ કરી દે છે. જેથી તે મનુષ્ય પુરુષાર્થ અને ધર્મથી કદી પણ વિચલિત થતો નથી. (૬)

તુજ્જેતુજ્જે ય ઉત્તરે સ્તોમા ઇન્દ્રસ્ય વૃજિણઃ । ન વિન્ધે અસ્ય સુષ્ટુતિમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : યે-જે વૃજિણઃ-અનંત પરાક્રમવાન ઇન્દ્રસ્ય-સર્વ દુઃખ વિનાશક, અસ્ય-એ પરમેશ્વર તુજ્જેતુજ્જે-પ્રત્યેક પદાર્થ આપવામાં ઉત્તરે-સિદ્ધાન્તથી નિશ્ચિત કરેલ સ્તોમાઃ-સ્તુતિઓના સમૂહથી અસ્ય-એ પરમેશ્વરની સુષ્ટુતિમ્-સુશોભિત સ્તુતિનો પાર હું (જીવ) ન, વિન્ધે-પામી શકતો નથી. (૭)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે આ સંસારમાં જીવોના સુખને માટે એ પદાર્થોમાં પોતાની શક્તિના જેટલા દંષ્ટાન્તો, જેવી રચના અને જેવા ગુણ ઉપકારને માટે રાખેલ છે, તે સર્વને જાણવામાં હું =જીવ સમર્થ બની શકતો નથી. 'સમ્પૂર્ણાન્ વેતુન્ નાહં સમર્થોઽસ્મિ-'

કોઈ પણ ઈશ્વરના ગુણોની સમાપ્તિ = અન્ત સીમાને જાણી શકતા નથી. કારણ કે-તેના એ (ગુણો) અનંત છે. પરન્તુ મનુષ્યોએ એ પદાર્થોથી જેટલો ઉપકાર ગ્રહણ કરી શકાય, તેટલો પ્રયત્નપૂર્વક ગ્રહણ કરવો જોઈએ. (૭)

વૃષા યૂથેવ વંસંગઃ કૃષ્ટીરિયત્યોજસા । ઈશાનો અપ્રતિષ્કુતઃ ॥ ૮ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : વંસંગઃ-ધર્મનું સેવન કરનાર પુરુષને પ્રાપ્ત થનાર વૃષા-શુભ ગુણોની વર્ષા કરનાર યૂથેવ-ગાયના સમૂહ-ધણમાં વૃષભ-સાંઠ સમાન, અપ્રતિષ્કુતઃ-સત્યભાવ અને નિશ્ચયથી પ્રાર્થના કરેલ, ઈશાનઃ-ઐશ્વર્યવાન, સૃષ્ટિના કર્તા વૃષા-ઈશ્વર-ઓજસા-બળ દ્વારા કૃષ્ટીઃ-ધર્માત્મા મનુષ્યોને પ્રાપ્ત થાય છે.

[સૂર્ય]

વંસંગઃ-અલગ-અલગ પદાર્થોને પ્રાપ્ત થનાર, વૃષા-શુભ ગુણોની વર્ષા કરનાર યૂથેવ-ગાયના સમૂહમાં વૃષભ સમાન અપ્રતિષ્કુતઃ-ગ્રહણ કરેલ પોતાની કક્ષામાં રહેનાર ઈશાનઃ-ઐશ્વર્યનો હેતુ, પ્રકાશક વૃષા-સૂર્ય ઓજસા-બળથી કૃષ્ટીઃ-આકર્ષણ આદિ વ્યવહારોને ઇર્ચત્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે. (૮)

ભાવાર્થ : જ્ઞાન વિષયક ઉન્નતિ કરવાનો તેનો સ્વભાવ હોવાથી મનુષ્ય જ ઈશ્વરને પ્રાપ્ત કરવામાં સમર્થ છે કારણ કે ધાર્મિક મનુષ્યોને જ પ્રાપ્ત થવાનો ઈશ્વરનો સ્વભાવ હોવાથી (ધાર્મિક મનુષ્ય જ તેને પ્રાપ્ત કરી શકે છે.) જેમ એ મનુષ્યો જ પ્રાપ્ત કરી લે છે, તેમ ઈશ્વર દ્વારા નિયુક્ત હોવાથી સૂર્ય પણ પોતાની સમીપ રહેલા લોકોનું આકર્ષણ કરવામાં સમર્થ છે. (૮)

ય એકશ્વર્ષણીનાં વસૂનામિર્જ્યતિ । ઇન્દ્રઃ પઞ્ચ ક્ષિતીનામ્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : ય-જે ઇન્દ્રઃ-દુષ્ટ શત્રુઓના વિનાશક પરમેશ્વર ચર્ષણીનામ્-મનુષ્યોને, વસૂનામ્-અગ્નિ

અગ્નિવેદભાષ્ય

૪૭

આદિ આઠ વસુ અર્થાત્ નિવાસના લોકો, તથા પञ्च-નીચે, મધ્યમ, ઉત્તમ ઉત્તમતર, ઉત્તમતમ એ પાંચ પ્રકારના ક્ષિતીનામ્-પૃથિવીલોક છે, તેના મધ્યમાં ઇરજ્યતિ-ઐશ્વર્યદાતા અને સર્વને સેવન કરવા યોગ્ય છે, તે પરમેશ્વર એક:-અદ્વિતીય અને સર્વના સહાયક છે. (૯)

ભાવાર્થ : જે સર્વના અધિષ્ઠાતા, સર્વાન્તર્યામી, વ્યાપક, સર્વ ઐશ્વર્ય પ્રદાતા, અસહાય-અન્યની સહાયની ઈચ્છારહિત જગદીશ્વર જગતની રચના, ધારણ અને આકર્ષણ કરનાર છે, તે જ સર્વ મનુષ્યોને ઈષ્ટદેવ રૂપમાં સેવા કરવા યોગ્ય છે. જે કોઈ તેને છોડીને અન્યને ઈષ્ટદેવ માને છે, તે ભાગ્યહીન સદા (મહાન-ઘોર) દુઃખોને સદા પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

इन्द्रं वो विश्वतस्परि हवामहे जनेभ्यः । अस्माकमस्तु केवलः ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અમે વિશ્વતઃ-સર્વ પદાર્થો અથવા જનેભ્યઃ-સર્વ પ્રાણીઓ-જનોને માટે, સર્વ ગુણોથી ઉત્કૃષ્ટ ઇન્દ્રમ્-પૃથિવી પર રાજ્ય પ્રદાન કરનાર પરમેશ્વરની પરિ + હવામહે-વારંવાર-સર્વત્રથી સ્તુતિ કરીએ છીએ, તે જ વઃ-તમારા અને અમારા સર્વ મનુષ્યોના કેવલઃ-એક, ચેતનસ્વરૂપ, પૂજ્ય ઈષ્ટદેવ (અસ્તુ) છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આ મંત્રમાં સર્વ મનુષ્યોનાં કલ્યાણ માટે ઉપદેશ આપે છે કે-હે મનુષ્યો ! તમે કદી પણ મને છોડીને અન્યને ઉપાસ્ય દેવ ન માનો. કારણકે મારાથી જુદો બીજો કોઈ નથી. એમ હોવા છતાં (વેદમાં ઉપદેશ હોવા છતાં) જે કોઈ અનેક ઈશ્વર (અથવા તેના અવતાર) માને છે. તેને સર્વથી મોટો મૂઠ મહામૂર્ખ) માનવો જોઈએ. (૧૦)

સંગતિ : આ સાતમા સૂક્તમાં જે ઈશ્વરે વાયુ અને સૂર્યને રચીને અન્તરિક્ષમાં તેને કાર્ય અને ઉપકાર માટે સ્થાપિત કરેલ છે, તે જ એક સર્વશક્તિમાન, સર્વદોષરહિત, સર્વ મનુષ્યોના પૂજ્ય છે. તેથી આ સૂક્તના અર્થની સાથે છટ્ટા સૂક્તના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૭)

સૂક્ત-૯

ऐन्द्रं सानसिं रयिं सजित्वानं सदासहम् । वर्षिष्ठमृतये भर ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમ ધન પ્રદાન કરનાર ઈશ્વર ! આપ કૃપા કરીને અમારી ક્રતયે-રક્ષા, પુષ્ટિ અને સર્વ સુખોની પ્રાપ્તિ માટે વર્ષિષ્ઠમ્-અત્યંત વૃદ્ધિ કરનાર, સાનસિમ્-નિરંતર સેવન કરવા યોગ્ય, સદાસહમ્-સર્વદા દુષ્ટ શત્રુઓની હાનિ કરનાર અને દુઃખોને સહન કરવાના મુખ્ય હેતુ સજિત્વાનમ્-સમાન શત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરાવનાર રયિમ્-ધનને આ + भर-સર્વત્રથી ધારણ કરાવો. (૧)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ સર્વશક્તિમાન, અન્તર્યામી ઈશ્વરનો આશ્રય લઈને તથા પરમ પુરુષાર્થથી સર્વના ઉપકાર માટે ચક્રવર્તી રાજ્યને ઉત્પન્ન કરાવનાર વિદ્યા રૂપી બળને તથા સર્વ શ્રેષ્ઠ સુવર્ણ અને સેના આદિના બળને સર્વ પ્રકારથી સારી રીતે પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ, જેથી પોતાને અને સર્વ પ્રાણીઓને સુખ મળે. (૧)

नि येन मुष्टिहृत्यया नि वृत्रा रुणधामहै। त्वोतासो न्यर्वता ॥ २ ॥

पदार्थ : હે જગદીશ્વર ! આપ ત્વોતાસ:-આપના દ્વારા રક્ષાને પ્રાપ્ત અમે લોકો યેન-જે પૂર્વોક્ત ધનથી મુષ્ટિહૃત્યયા-મુટ્ટીહત્યા-બાહુયુદ્ધ અને અર્વતા-અશ્વ આદિ સેનાની સામગ્રીથી નિવૃત્ત્રા-મેઘ સમાન સુખોનું આવરણ કરનાર નિશ્ચિત શત્રુઓને નિસ્માધામહૈ-સર્વદા રોકી શકીએ અર્થાત્ તેને નિર્બળ કરીએ, એવું શ્રેષ્ઠ ધન કૃપા કરીને પ્રદાન કરો. (૨)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરને ઈષ્ટ દેવ માનનાર અને તેનો પ્રિય-ઉપાસક મનુષ્યોએ શારીરિક અને આત્મિક બળ દ્વારા અને સંપૂર્ણ સામર્થ્યથી શ્રેષ્ઠોનું પાલન અને દુષ્ટોનો સદા નિગ્રહ કરવો જોઈએ, જેથી તે મુષ્ટિ (મુક્કા)ના પ્રહારોને સહન ન કરી શકવાથી પલાયન કરી જાય. (૨)

इन्द्र त्वोतासु आ वयं वज्रं घना ददीमहि। जयेम सं युधि स्पृधः ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-અનન્ત બળવાન ઈશ્વર ! ત્વોતાસ:-આપના સાનિધ્યથી રક્ષા આદિ તથા બળને પ્રાપ્ત કરીને વયમ્-અમે ધાર્મિક અને શૂરવીર બનીને અમારા વિજય માટે વજ્રમ્-શત્રુઓના બળનો નાશ કરવા માટે આગ્નેયાદિ શસ્ત્ર-અસ્ત્ર સમૂહ ઘના-તોપ, બંદૂક, તલવાર, ધનુષ્ય, બાણ વગેરે દૃઢ યુદ્ધ સાધનોને આ + દદીમહિ-સર્વત્રથી ગ્રહણ કરીએ છીએ જેથી અમે આપના બળનો આશ્રય અને સેનાની સંપૂર્ણ સામગ્રી પ્રાપ્ત કરીને સ્પૃધ:-ઈર્ષા કરનાર શત્રુઓને યુધિ-સંગ્રામમાં જયેમ-જીતીએ. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ધર્મ અને ઈશ્વરનો આશ્રય લઈને શરીરની પુષ્ટિ, વિદ્યાથી આત્મબળ, પૂર્ણ યુદ્ધ-સામગ્રી, પરસ્પર અવરોધ અને ઉત્સાહ આદિ ઉત્તમ ગુણોને ગ્રહણ કરીને, સદા દુષ્ટ શત્રુઓનો પરાજય કરવાથી સુખી થવું જોઈએ. (૩)

वयं शूरेभिरस्तृभिर्इन्द्र त्वया युजा वयम्। सासह्याम पृतन्यतः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-યુદ્ધમાં ઉત્સાહ પ્રદાન કરનાર પરમેશ્વર ! ત્વયા-આપને અન્તર્યામી ઈષ્ટદેવ માનીને આપની કૃપાથી ધર્મયુક્ત વ્યવહારોમાં પોતાના સામર્થ્યના યુજા-સંયોજનથી વયમ્-સભાપતિ અને શ્રેષ્ઠ સેનાપતિજનો અસ્તૃભિ:-સર્વ શસ્ત્ર-અસ્ત્ર ચલાવવામાં ચતુર શૂરેભિ:-સર્વોત્તમ યોદ્ધાઓની સહાયતાથી પૃતન્યત:-સેના આદિ બળથી યુક્ત બનીને લડનારા શત્રુઓને સાસહ્યામ-વારંવાર મર્ષણ કરીએ, નષ્ટ કરીએ. આ રીતે શત્રુઓને જીતીને ન્યાયપૂર્વક ચક્રવર્તી રાજા બનીને (વયમ્) અમે નિત્ય પ્રજાઓનું પાલન કરીએ. (૪)

ભાવાર્થ : શૂરવીરતા બે પ્રકારની હોય છે. એક પુષ્ટિ ઉત્પન્ન થનારી શારીરિક અને બીજી વિદ્યા અને ધર્મથી ઉત્પન્ન થનારી આત્મિક, આ બન્નેથી સંપન્ન મનુષ્યોએ પરમેશ્વરની સૃષ્ટિ રચનાના ક્રમને જાણીને તથા ન્યાય, ધર્મ, સૌજન્ય અને પુરુષાર્થ આદિ સદ્ગુણોને ધારણ કરીને સભાના પ્રબંધથી રાજ્યનું પાલન અને દુષ્ટ શત્રુઓને સદા નિરોધ કરવો જોઈએ. (૪)

महाँ इन्द्रः परश्च नु महित्वमस्तु वज्रिणो। द्यौर्न प्रथिना शर्वः ॥ ५ ॥

अग्नेदभाष्य

પદાર્થ : ન-જેમ મૂર્તિમાન સંસારને પ્રકાશયુક્ત કરવા માટે દ્યૌઃ-સૂર્ય પ્રકાશ પ્રથિના-વિસ્તારને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ મહાન્-સર્વ પ્રકારના અનંતગુણ, અત્યુત્તમ સ્વભાવ, અતુલ સામર્થ્યયુક્ત અને વિર-અત્યંત શ્રેષ્ઠ ઇન્દ્રઃ-સર્વ જગતના રાજા અર્થાત્ રક્ષક પરમેશ્વર છે; તે વજ્રિણો-ન્યાય રૂપ દંડ આપનાર ઇન્દ્રાય-ઈન્દ્રાય નુ-પોતાની સહાયતાથી અમને વિજય આપે છે, તેની જ આ મહિત્વમ્-મહિમા ચ-અને શવઃ-બળ છે. (૫)

ભાવાર્થ : ધાર્મિક, યુદ્ધપ્રિય અને શૂરવીર યોદ્ધા મનુષ્યોએ, દુષ્ટ શત્રુઓ પર સ્વયં પ્રાપ્ત કરેલ વિજયનો ધન્યવાદ અનન્ત શક્તિમાન પરમેશ્વરને જ આપવો જોઈએ. જેથી મનુષ્યોની નિરાભિમાનતાના કારણે રાજ્યની ઉન્નતિ સદા થતી રહે. (૫)

સમોહે વા ય આશત નરસ્તોકસ્ય સનિતૌ । વિપ્રાસો વા ધિયાયવઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : ય-જે યોદ્ધા વિપ્રાસઃ-મેધાવી-બુદ્ધિમાન નરઃ-મનુષ્ય છે તે સમોહે-સંગ્રામમાં શત્રુઓને જીતવા માટે તથા આશત-યુદ્ધને વ્યાપ્ત કરે, વા-અને ય-જેઓ ધિયાયવઃ-વિજ્ઞાનની કામના કરનાર વિદ્વાનો છે, તેઓ તોકસ્ય-સંતાનોને સનિતૌ-વિદ્યાની શિક્ષામાં આશત-પુરુષાર્થ કરે અર્થાત્ તત્પર રહે. (૬)

ભાવાર્થ : ઇન્દ્ર સ્વરૂપ પરમેશ્વર સર્વ મનુષ્યોને આજ્ઞા આપે છે કે-આ સંસારમાં સર્વ મનુષ્યોએ બે કાર્યો કરવા જોઈએ. જે વિદ્વાનો છે, તેઓએ વિદ્યા અને શારીરિક બળ પ્રાપ્ત કરીને એ બન્ને દ્વારા શત્રુઓના બળને દબાવીને તેનો સદા તિરસ્કાર કરવો જોઈએ. જ્યારે-જ્યારે શત્રુઓની સાથે લડવાની ઈચ્છા થાય, ત્યારે-ત્યારે સાવધાની પૂર્વક શત્રુઓના બળથી ન્યૂનાતિન્યૂન દ્વિગુણ-બે ગણું બળ તૈયાર કરીને તેના પરાજય દ્વારા પ્રજાઓની નિરંતર રક્ષા કરવી જોઈએ અને જે વિદ્યાદાન કરવા ઈચ્છતા હોય, તેઓએ કન્યાઓ અને પુત્રોની વિદ્યા અને શિક્ષાના કાર્યમાં પ્રયત્નશીલ રહેવું જોઈએ. જેથી શત્રુઓની હાર થતાં ઉત્તમ રાજ્ય-સુરાજ્ય અને વિદ્યાની વૃદ્ધિ સદા રહે. (૬)

યઃ કુક્ષિઃ સૌમપાતમઃ સમુદ્રૈવ પિન્વતે । ઉર્વીરાપો ન કાકુદઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે કુક્ષિઃ-સર્વ પદાર્થોથી રસને કર્ષણ = ખેંચનાર સૌમપાતમઃ-સૌમ =સંસારના પદાર્થોના અત્યંત રક્ષક સૂર્યલોક છે, તે સમુદ્ર ઇવ-સમુદ્રની સમાન જળને તથા આપઃ કાકુદઃ ન-શબ્દોચ્ચારણ આદિ વ્યવહારોને પ્રાપ્ત કરાવનાર પ્રાણવાયુ, વાણીના શબ્દ સમૂહની ઊર્વીઃ-સમસ્ત પૃથિવીનું પિન્વતે-સેચન અથવા સેવન કરે છે. (૭)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે જેમ જળની સ્થિતિ અને વર્ષાનો હેતુ અને વાણીના વ્યવહારનો હેતુ પ્રાણ બનાવેલ છે, તેમ પૃથિવીમાં પ્રકાશ, આકર્ષણાદિ, રસવિભાગનો હેતુ સૂર્યલોક રચેલ છે. તે બન્ને દ્વારા સર્વ પ્રાણીઓના અનેક વ્યવહાર સિદ્ધ થાય છે. (૭)

एवा ह्यस्य सूनुतां विरष्णी गोमती मही । पक्वा शाखा न दाशुषे ॥ ८ ॥

[ईश्वर]

पदार्थ : જેમ આંબા વગેરે વૃક્ષ પક્વ ફળથી યુક્ત ડાળીઓ પ્રાણીઓને સુખદાયક હોય છે, અસ્ય હિ-તેમ જ એ પરમેશ્વરની ગોમતી-જેનું અનેક વિદ્વાનો સેવન કરનારા છે. અર્થાત્ અનેક સ્તોતાઓ યુક્ત, સૂનુતા-પ્રિય સત્યવચનનો પ્રકાશ કરનારી, યથાર્થ જ્ઞાનયુક્ત વિરષ્ણી-મહાવિદ્યાયુક્ત, મહી-સર્વ પૂજ્યા-અર્થાત્ સર્વને સત્કાર કરવા યોગ્ય, ચારેય વેદોની વાણી છે, તે દાશુષે-અધ્યયનમાં ધ્યાન આપનાર મનુષ્યને સર્વ વિદ્યાઓનો પ્રકાશ-પ્રદાન કરનારી છે.

[સૂર્ય]

પક્વા શાખા ન-જેમ આ સૂર્યલોકની ગોમતી-શ્રેષ્ઠ મનુષ્યોને સેવન કરવા યોગ્ય, સૂનુતા-પ્રીતિના ઉત્પાદક પદાર્થોનો પ્રકાશ કરનારી, વિરષ્ણી-મહાન, મહી-પૃથિવી-મહાન ગુણ યુક્તથી દીપ્ત છે; તેમ વેદવાણી દાશુષે-રાજ્યની પ્રાપ્તિ માટે, રાજ્ય કર્મોમાં ધ્યાન આપનારાઓને સુખ પ્રદાન કરે છે. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ વિવિધ ફૂલ અને ફળવાળા આંબા વગેરે વૃક્ષો અનેક પ્રકારના ફળો આપનાર છે, તેમ ઈશ્વરે વિવિધ વિદ્યાઓના આનંદ આપનારા વેદો પ્રકાશિત કરેલ છે અને અનેક સુખભોગ આપનાર પૃથિવી આદિ પ્રકટ કરેલ છે, તેનો (= વેદોનો) પ્રચાર-પ્રસાર અને (પૃથિવી પર) રાજ્ય વિદ્વાનો દ્વારા જ કરી શકાય છે. (૮)

एवा हि ते विभूतय ऊतय इन्द्र मावते । सद्यश्चित् सन्ति दाशुषे ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સર્વત્રથી રક્ષક જગદીશ્વર ! આપની કૃપાથી જેમ તે-આપની વિભૂતય:-વિવિધ ઉત્તમ ઐશ્વર્ય યુક્ત ઊતય:-રક્ષા વિજ્ઞાન, સુખ પ્રાપ્તિ આદિના પદાર્થ મને પ્રાપ્ત સન્તિ-છે, તેમ માવતે-મારા સમાન દાશુષે-ઉપકાર રૂપ ધર્મમાં આત્મદાન કરનાર ચિત્-પૂજ્ય જનોને એવ-નિશ્ચય હિ-જ સદ્ય-એવ-શીઘ્ર પ્રાપ્ત થાય. (૯)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરની આજ્ઞા છે કે-જે લોકો પુરુષાર્થી બનીને ધાર્મિક અને પરોપકારી હોય છે, તેઓ જ ઐશ્વર્યની પૂર્ણ રક્ષા કરીને સર્વત્ર સન્માનને પાત્ર બને છે. (૯)

एवा ह्यस्य काम्या स्तोम उक्थं च शंस्या । इन्द्राय सोमपीतये ॥ १० ॥

પદાર્થ : અસ્ય-જે એ ચાર વેદોની કામ્યા-કામના કરવા યોગ્ય શંસ્યે-પ્રશંસનીય કર્મ સ્તોમ:-સ્તોત્રો = સામગાન વિશેષ સ્તુતિ સમૂહ, ઉક્થમ્-ઈશ્વરના ગુણોનું કીર્તન કરનાર ઋક્ સમૂહ, ચ-અને યજુર્વેદ તથા અથર્વવેદ છે, તે સોમપીતયે-સોમ = સર્વ પદાર્થોની રક્ષા કરનાર ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્યવાન પરમાત્માની (એવ) હિ-જ સ્તુતિ કરે છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ સંસારમાં કોઈના બનાવેલા પદાર્થો જોઈને તેના બનાવનારની પ્રશંસા થાય છે, તેમ સર્વ પ્રત્યક્ષ અને અપ્રત્યક્ષ સંસારમાં રહેલા સૂર્ય આદિ સર્વ ઉત્તમ પદાર્થોથી તથા તેની રચનાથી (રચનાના વર્ણનથી) વેદોમાં ઈશ્વરને જ ધન્યવાદ છે. તે ઈશ્વરની સમાન અથવા તેથી કોઈ અધિક

(અન્ય)ની સ્તુતિ કરવામાં આવતી નથી. (૧૦)

સંગતિ : એ રીતે ઈશ્વરના ઉપાસકો, ક્રિયાવાન અને તેને આશ્રિત બનીને વિદ્યાના આત્મ-સુખને ક્રિયાથી શરીર સુખને પ્રાપ્ત કરીને, તે ઈશ્વરની સદા પ્રશંસા કરે, એ વિષયના પ્રતિપાદનથી આઠમા સૂક્તના ઉક્ત અર્થની સપ્તમા સૂક્તના પૂર્વોક્ત અર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૮)

સૂક્ત-૯

इन्द्रेहि मत्स्यन्धसो विश्वेभिः सोमपर्वभिः । म्हाँ अभिष्टिरोजसा ॥ १ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-સર્વવ્યાપક ઈશ્વર ! આપ **महान्**-સર્વોત્કૃષ્ટ તથા પરિણામમાં મહત્તમ છો **अभिष्टिः**-સર્વજ્ઞ અને સમસ્ત જ્ઞાન પ્રદાન કરનાર છો **विश्वेभिः**-સર્વ **सोमपर्वभिः**-પદાર્થોના અવયવો સહિત વિદ્યમાન થઈને **ओजसा**-બળથી **अन्धसः**-અન્ન અર્થાત્ પૃથિવી આદિને **आ** + **इहि**-પ્રાપ્ત કરાવો છો અને **मत्सि**-પ્રાણીઓને આનંદિત કરો છો.

[સૂર્ય]

જેમ એ **इन्द्र**:-સૂર્યલોક **ओजसा**-બળ અને **महान्**-પરિમાણથી મહત્તમ છે-પૃથિવી આદિથી મહાન છે. **अभिष्टिः**:-સર્વત્રથી મૂર્ત દ્રવ્યોનો પ્રકાશક-પ્રકાશમાન છે. **विश्वेभिः**:-સર્વ **सोमपर्वभिः**:-પદાર્થોના અવયવોની સાથે **अन्धसः**:-અન્ન અર્થાત્ પૃથિવી આદિના પ્રકાશથી **इहि**-પ્રાપ્ત થાય છે અને **मत्सि**-પ્રાણીઓને આનંદિત કરે છે. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વર સર્વ જગતના પ્રત્યેક પરમાણુમાં વ્યાપક થઈને નિરંતર સર્વ લોકોને નિયમમાં રાખીને રક્ષા કરે છે, તેમ સૂર્ય પણ સર્વ લોકથી મહાન હોવાથી પોતાના સન્મુખ પદાર્થોનું આકર્ષણ અને પ્રકાશ કરીને વ્યવસ્થિત કરે છે. નિયમમાં રાખે છે. (૧)

एमेनं सृजता सुते मन्दिमिन्द्राय मन्दिने । चक्रिं विश्वानि चक्रये ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમે **सुते**-ઉત્પન્ન થયેલ આ પદાર્થ-સમૂહ રૂપ જગતમાં **विश्वानि**-સર્વ સુખોને ઉત્પન્ન કરવા માટે **मन्दिने**-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્તિની ઈચ્છા કરવા માટે **मन्दिम्**-આનંદની વૃદ્ધિ કરનાર, **चक्रये**-પુરુષાર્થ કરવાના સ્વભાવવાળા **इन्द्राय**-પરમ ઐશ્વર્યવાળા મનુષ્યને માટે **चक्रिम्**-શિલ્પવિદ્યાથી સિદ્ધ કરેલા સાધનોમાં **एनम्**-એ **ईम्**-જળ અને અગ્નિને **आसृजत**-અત્યંત પ્રકાશિત કરો. (૨)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોને ઉચિત છે કે-આ સંસારમાં પૃથિવીથી લઈને ઈશ્વર સુધીના પદાર્થોનું વિશેષ જ્ઞાનના અર્થાત્ વિજ્ઞાનના પ્રચારથી સર્વ મનુષ્યોને વિદ્યાથી શ્રેષ્ઠ ક્રિયા શીખવીને સર્વ સુખોને સદા સિદ્ધ કરે. (૨)

मत्स्वा सुशिप्र मन्दिभिः स्तोमेभिर्विश्वचर्षणे । सचैषु सर्वनेष्वा ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે વિશ્વચર્ષણે-સર્વ સંસારના દ્રષ્ટા, સુશિખ્ર-શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનયુક્ત ઇન્દ્ર-પરમેશ્વર ! આપ મન્દિભિઃ- જે વિજ્ઞાન અને આનંદકારક ગુણોથી, સ્તોમેભિઃ-વેદોક્ત સ્તુતિરૂપ અને આપના ગુણ-પ્રકાશ કરનાર સ્તોત્રથી સ્તુતિ કરેલ એષુ-એ પ્રત્યક્ષ સવનેષુ-ઐશ્વર્યદાયક પદાર્થોમાં અમને-(વિદ્વાનોને) સચા-યુક્ત કરીને મત્સ્વ-સર્વત્રથી આનંદિત કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જેણે સંસારના પ્રકાશક સૂર્યને ઉત્પન્ન કરેલ છે, તે (ઈશ્વર)ની સ્તુતિમાં જે ધાર્મિક મનુષ્ય નિષ્ઠાપૂર્વક રત રહે છે, તેઓ પુરુષાર્થી બનીને સર્વ રીતે સર્વના દ્રષ્ટા પરમેશ્વરને જાણીને, સર્વ ઐશ્વર્યના ઉત્પાદન અને રક્ષણમાં મળીને-તત્પર રહીને સુખકારી બને છે. (૩)

અસૃગ્મિન્દ્ર તે ગિર્ઃ પ્રતિ ત્વામુદ્દહાસત । અજોષા વૃષભં પતિમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સર્વથા સ્તુતિ કરવા યોગ્ય પરમેશ્વર ! તે તે-આપની ગિર્ઃ-વેદરૂપ વાણી છે, તે વૃષભમ્-સર્વ શ્રેષ્ઠ સર્વની ઈચ્છા પૂર્ણ કરનાર પતિમ્-રક્ષક-પાલક ત્વામ્-વેદોના વક્તા આપ પરમેશ્વરને ઉદ + અહાસત-ઉત્તમ રીતે બતાવે છે. આપ જે વેદવાણી-વિદ્યાઓનું અજોષાઃ-સેવન કરો છો, તેના દ્વારા હું પણ પ્રતિ-ઉક્ત ગુણયુક્ત આપને અસૃગ્મ્-વિવિધ પ્રકારથી વર્ણન કરું છું. (૪)

ભાવાર્થ : જે ઈશ્વરે પોતાના દ્વારા પ્રકાશિત વેદથી જેમ પોતાના સ્વભાવ, ગુણ અને કર્મને પ્રકાશિત કરેલ છે, તે અમારા માટે એ જ રૂપમાં જાણવા યોગ્ય છે કારણ કે-ઈશ્વરના સત્ય સ્વભાવની સાથે અનંત ગુણ અને કર્મ છે; તેને અમે અલ્પજ્ઞ મનુષ્ય પોતાના સામર્થ્યથી જાણવાને અસમર્થ છીએ. જેમ મનુષ્ય સ્વયં પોતાના સ્વભાવ, ગુણ, કર્મોને (અલ્પ) જાણે છે, તેમ અન્ય તેને યથાવત્ જાણી શકતા નથી. તેથી સર્વ વિદ્વાનોએ વેદવાણી દ્વારા જ ઈશ્વર આદિ પદાર્થોને પ્રેમપૂર્વક પુરુષાર્થથી જાણવા યોગ્ય છે અને તેના દ્વારા ઉપકાર ગ્રહણ કરે તથા તે ઈશ્વરને જ ઈષ્ટદેવ અને પાલનકર્તા માનવા જોઈએ. (૪)

સં ચોદય ચિત્રમર્વાગ્રાધં ઇન્દ્ર વરેણ્યમ્ । અસદિત્તૈ વિભુ પ્ર્ભુ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-કરુણામય સર્વ સુખોના સાધનો પ્રદાન કરનાર પરમેશ્વર ! તે-આપની સૃષ્ટિમાં જે-જે વરેણ્યમ્-અતિ શ્રેષ્ઠ અર્થાત્ વરણ કરવા યોગ્ય વિભુ-શ્રેષ્ઠ પદાર્થોથી પૂર્ણ, પ્ર્ભુ-મહાન પ્રભાવ-કારક, ચિત્રમ્-ચક્રવર્તી રાજ્યથી સિદ્ધ થનાર-શ્રી થી વિદ્યા મણિ-સુવર્ણ, હાથી, ઘોડા વગેરેના યોગથી અદ્ભુત રાધઃ-સુખસાધક ધન અસત્-છે, તે-તે આનંદ ઉત્પન્ન કરનાર તે ધનને અમારી તરફ સં + ચોદય-પ્રેરિત કરીને, અમને પ્રાપ્ત કરાવો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરના અનુગ્રહ અને પોતાના પુરુષાર્થથી સર્વને આત્મા અને શરીરના સુખ માટે વિદ્યા તથા ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ, રક્ષા, ઉન્નતિ, સન્માર્ગ અને દાન આદિનું સદા ઉત્તમ રીતે સેવન કરવું જોઈએ, જેથી દરિદ્રતા અને આળસથી ઉત્પન્ન થનારા દુઃખોનો નાશ થઈને દિવ્યભોગ કરવા યોગ્ય પદાર્થોની વૃદ્ધિ થતી રહે. (૫)

અસ્માન્સુ તત્ર ચોદ્યેન્દ્ર રાયે રભસ્વતઃ । તુવિદ્યુમ્ન ચર્શસ્વતઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે તુવિદ્યુમ્ન-અત્યંત વિદ્યા ધન યુક્ત ઇન્દ્ર-અન્તર્યામી ઈશ્વર ! રમ્ભસ્વત:-જે આળસ છોડીને કાર્ય આરંભ કરનાર યશસ્વત:-સત્કીર્તિ સહિત અસ્માન્-અમે પુરુષાર્થી વિદ્યા, ધર્મ અને પરોપકારથી નિત્ય પ્રયત્ન કરનાર મનુષ્યોને તત્ર-શ્રેષ્ઠ પુરુષાર્થમાં રાયે-શ્રેષ્ઠ ધનની પ્રાપ્તિ માટે સુ + ચોદય-ઉત્તમ રીતે યુક્ત-પ્રેરિત કરો. (૬)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વરની આજ્ઞામાં રહીને પુરુષાર્થી અને યશસ્વી બનીને વિદ્યા, રાજ્ય, ધનની પ્રાપ્તિ માટે સદા પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. એવા લોકો વિના એ લક્ષ્મી પ્રાપ્ત કરી શકાતી નથી. કારણ કે ઈશ્વરે પુરુષાર્થી મનુષ્યો માટે સમસ્ત પદાર્થની પ્રાપ્તિ માટે નિર્માણ કરેલ છે. (૬)

સં ગોમદિન્દ્ર વાજવદસ્મે પૃથુ શ્રવૌ બૃહત્ । વિશ્વાયુર્ધેહ્યાક્ષિતમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-અન્ત વિદ્યા યુક્ત સર્વના ધારક જગદીશ્વર ! આપ અસ્મે-અમારા માટે-ગોમત-જે પ્રશસ્ત વાણી અને સ્તોતાઓ વાળા, વાજવત્-અનેક ભોક્તવ્ય અન્નવાળા, પૃથુ-અનેક વિદ્યામાં વિસ્તૃત બૃહત્-અનેક શુભગુણ અને ભોગોથી મહાન વિશ્વાયુ:-સો વર્ષ અથવા અધિક આયુના માટે અક્ષિતમ્-પ્રતિદિન વૃદ્ધિ કારક-ક્ષીણ ન થનાર, શ્રવ:-જેમાં અનેક પ્રકારની વિદ્યાઓ અને સુવર્ણ આદિ સાંભળવામાં આવે છે, તે ધનને સં + ધેહિ-ઉત્તમ રીતે-નિત્ય માટે આપો. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ બ્રહ્મચર્ય ધારણ કરીને, વિષયોની લંપટતા ત્યાગીને, ભોજન-આચ્છાદન આદિ ઉત્તમ નિયમોથી વિદ્યા અને ચક્રવર્તી રાજ્યની લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરવા માટે, સમગ્ર આયુ સુધી ભોગવવા માટે, ઉપરોક્ત ધન માટે પરસ્પર મેળ કરે, જેથી ઐહિક-આ સંસાર અને પરમાર્થિક-પરલોકનું દંઢ અને વિસ્તૃત શ્રેષ્ઠ સુખ સદા વૃદ્ધિ પામતું રહે. પરંતુ આ સુખ માત્ર ઈશ્વરની પ્રાર્થના કરવાથી જ મળી શકતું નથી પરંતુ તેની પ્રાપ્તિ માટે વિવિધ પુરુષાર્થની અપેક્ષા રહે છે. (૭)

અસ્મે ધેહિ શ્રવૌ બૃહદ્ દ્યુમ્નં સંહસ્ત્રસાતમમ્ । ઇન્દ્ર તા ર્થિનીરિષઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-મહાન બળથી યુક્ત ઈશ્વર ! આપ અસ્મે-અમારા માટે સંહસ્ત્રસાતમમ્-અસંખ્ય સુખોનું મૂળ બૃહત્-નિત્ય વૃદ્ધિકારક દ્યુમ્નમ્-પ્રકાશમય જ્ઞાન શ્રવ:-પૂર્વોક્ત ધન અને (તાઃ) તે ર્થિનીરિષઃ-અનેક રથ આદિ સાધનો સહિત સેનાઓ ધેહિ-સમ્યક્ રૂપમાં પ્રદાન કરો. (૮)

ભાવાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપની કૃપા અને અત્યંત પુરુષાર્થથી જે ધન દ્વારા અનેક સુખોને સિદ્ધ કરનારી સેનાઓ પ્રાપ્ત કરી શકાય છે, તેને આપ અમારામાં નિત્ય સ્થાપિત કરો. (૮)

વસોરિન્દ્રં વસુપતિં ગીર્ભિર્ગૃણન્ત ઋગ્મિયમ્ । હોમ ગન્તારમૂતયૈ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : ગીર્ભિ-વેદવાણીથી ગૃણન્ત:-સ્તુતિ કરતા અમે લોકો વસુપતિમ્-અગ્નિ, પૃથિવી, અન્તરિક્ષ, આદિત્યલોક ઘો-પ્રકાશમાન લોક, ચંદ્રલોક, નક્ષત્ર અર્થાત્ તારાઓ વગેરે નિવાસ સ્થાનના પાલક =સ્વામી અને રક્ષક, ઋગ્મિયમ્-વેદમંત્રોના પ્રકાશક, ગન્તારમ્-સર્વના અન્તર્યામી અર્થાત્ પોતાની વ્યાપ્તિથી સર્વત્ર પ્રાપ્ત થનાર, ઇન્દ્રમ્-સર્વને ધારણ કરનાર પરમેશ્વરને વસો:-સંસારમાં સુખવાસ માટે વિદ્યાદિ ધનની

ક્રત્યે-પ્રાપ્તિ અને રક્ષા (અથવા ક્રિયા-ઉપયોગ) માટે હોમ-પ્રાર્થના કરીએ છીએ. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને ઉચિત છે કે-તેઓ જગતના સ્વામી, વેદના પ્રકાશક, સર્વત્ર વ્યાપક ઈન્દ્ર = પરમેશ્વરની જ ઈશ્વર ભાવથી સ્તુતિ કરવી જોઈએ, તથા ઈશ્વરના ન્યાયકારિત્વ આદિ ગુણોની સ્પર્ધા અને પુરુષાર્થથી સર્વ શ્રેષ્ઠ વિદ્યા, રાજ્ય તથા લક્ષ્મી આદિ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરીને તેની સદા રક્ષા અને ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૯)

સુતેસુતે ન્યૌકસે બૃહદ્ બૃહત્ એદરિઃ । ઇન્દ્રાય શૂષમર્ચતિ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : જે અરિઃ-સર્વ શ્રેષ્ઠ ગુણો અને ઉત્તમ સુખોને પ્રાપ્ત કરનાર વિદ્વાન મનુષ્ય સુતેસુતે-પ્રત્યેક ઉત્પન્ન પદાર્થોમાં બૃહતે-સંપૂર્ણ શ્રેષ્ઠ ગુણોમાં મહાન, સર્વમાં વ્યાપક ન્યૌકસે-સ્થાનોને નિશ્ચિત કરનાર તે ઇન્દ્રાય-પરમેશ્વરને માટે પોતાના બૃહત્-સર્વથી અધિક (મહાન) શૂષમ્-બળ અને સુખને આ-અર્ચતિ-સર્વત્ર સમર્પણ ભાવથી અર્પણ કરી દે છે, તે ભાગ્યશાળી હોય છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે પ્રત્યેક વસ્તુમાં વ્યાપક, મંગલમય અને અનુપમ પરમેશ્વરના પ્રત્યે, કોઈ કોઈનો શત્રુ મનુષ્ય પોતાના અભિમાનનો ત્યાગ કરીને નમ્ર બની જાય છે, તો જે તે ઈશ્વરની આજ્ઞા રૂપ ધર્મ અને તેની ઉપાસના કરે છે, તે મહાન ગુણોથી મહાન બનીને સર્વના દ્વારા 'પૂજનીય' અને નમ્ર કેમ ન હોય ?

જે ઈશ્વરના ઉપાસક, પુરુષાર્થી અને સર્વનો ઉપકાર કરનાર વિદ્વાન મનુષ્યો હોય છે, તે જ વિદ્યાનું સુખ અને ચક્રવર્તી રાજ્યના આનંદને પ્રાપ્ત કરે છે, તેથી વિપરીત લોકો નહિ. (૧૦)

(સંગતિ :) આ સૂક્તમાં ઈન્દ્ર શબ્દના અર્થનું વર્ણન, ઉત્તમ ધન આદિની પ્રાપ્તિને માટે ઈશ્વર-પ્રાર્થના અને પુરુષાર્થ કરવા રૂપ આજ્ઞાનું પ્રતિપાદન કરેલ છે. તેથી આ નવમા સૂક્તની સંગતિ આઠમા સૂક્તના ઉક્ત અર્થની સાથે છે તેમ સમજવું જોઈએ. (૯)

સૂક્ત-૧૦

ગાયન્તિ ત્વા ગાયત્રિણોઽર્ચન્ત્યર્કમર્કિણઃ ।

બ્રહ્માણસ્ત્વા શતક્રત્ ઉદ્વંશમિવ ચેમિરે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે શતક્રતો-અસંખ્ય કર્મ અથવા શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનયુક્ત પરમેશ્વર ! બ્રહ્માણઃ-જેમ વેદોને જાણીને ઉત્તમ આચરણ કરનાર વિદ્વાન શ્રેષ્ઠ ઉપદેશ, ગુણ અને ઉત્તમ શિક્ષાઓથી વંશમ્-પોતાના વંશને ઉદ્વેમિરે-પ્રશસ્ત ગુણયુક્ત પુરુષાર્થી બનાવે છે, તેમ ગાયત્રિણઃ-ગાયત્ર અર્થાત્ પ્રશંસિત ઇંદ્ર, રાગ આદિનું અધ્યયન કરેલ ધાર્મિક અને ઈશ્વરની ઉપાસના કરનાર લોકો ત્વા-આપની ગાયન્તિ-સમાવેદ આદિના ગાનથી પ્રશંસા કરે છે. અર્કિણઃ-અર્ક અર્થાત્ વેદના મંત્રોના નિત્ય અભ્યાસી છે. તેઓ અર્કમ્-સર્વ લોકોમાં પૂજ્ય ત્વા-જગતના સ્રષ્ટા આપની અર્ચન્તિ-નિત્ય પૂજા કરે છે. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ મનુષ્યોએ પરમેશ્વરની પૂજા કરવી જોઈએ અર્થાત્ સદા તેની આજ્ઞામાં રહેવું જોઈએ તથા (જેમ તેના દ્વારા) વેદવિદ્યાને ભણીને, સમ્યક્ જાણીને, ઉપદેશ દ્વારા સમસ્ત મનુષ્ય-જાતિને શ્રેષ્ઠ ગુણોથી યુક્ત અને ઉદ્યમશીલ બનાવી શકાય છે, તેમ સ્વયંને પણ બનવું જોઈએ. આનું ફળ પરમેશ્વર સિવાય અન્ય કોઈની પૂજા કરવાથી પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી. કારણ કે ઈશ્વરની આજ્ઞાના ભાવની દૃષ્ટિએ તેના સમાન અન્ય વસ્તુ વિદ્યમાન નથી. એટલા માટે તે (ઈશ્વર)નું જ ગાન અને પૂજન કરવું જોઈએ. (૧)

યત્સાનોઃ સાનુમારુહદ્ભૂર્યસ્પષ્ટ કર્ત્વમ્ ।

તદિન્દ્રો અર્થમ્ ચેતતિ યૂથેન વૃષ્ણિરૈજતિ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જેમ-યૂથેન-સુખ આપનાર સાધન અથવા વાયુ ગણની સાથે વૃષ્ણિઃ-સુખોની વર્ષા કરનાર સૂર્ય-કિરણ સમૂહ પોતાનો પ્રકાશ કરીને સાનોઃ-પર્વતના એક શિખર પરથી સાનુમ્-બીજા શીખર પર ભૂરિ-બહુ જ આસ્હત્-ચઢે છે-પ્રાપ્ત થાય છે, અસ્પષ્ટ-સ્પર્શ કરે છે-ચાલે છે. એજતિ-કમથી પોતાની કક્ષામાં ગતિ કરતો ફરે છે; તેમ જે મનુષ્ય ક્રમશઃ એક કર્મને કરીને બીજું કર્ત્વમ્-કરવા ભૂરિ-બહુ જ આસ્હત્-આરંભ તથા અસ્પષ્ટ-સ્પર્શ કરતા એજતિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તે પુરુષ માટે ઇન્દ્રઃ-સર્વજ્ઞ ઈશ્વર તે કર્મો કરવા સાનોઃ-ક્રમશઃ અર્થમ્-પ્રયોજનના વિભાગની સાથે ભૂરિ-સારી રીતે ચેતતિ-પ્રકાશિત કરે છે અથવા બતાવે છે. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય પોતાની સામેના રહેલા પદાર્થો (લોકો)ને વાયુની સાથે વારંવાર ક્રમશઃ અત્યંત આકાન્ત કરીને, આકૃષ્ટ કરીને, પ્રકાશિત કરીને ભ્રમણ કરાવે છે, તેમ જે મનુષ્ય વિદ્યાથી કરવા યોગ્ય અનેક-બહુ કર્મોને નિરંતર કરવા માટે પ્રવૃત્ત થાય છે, તે જ સાધન-સમૂહથી સર્વ કાર્ય સિદ્ધ કરી શકે છે. ઈશ્વરની આ સૃષ્ટિમાં તે જ મનુષ્ય સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. ઈશ્વર પણ તેના પર જ અનુગ્રહ-કૃપા દૃષ્ટિ કરે છે. (૨)

યુક્ત્વા હિ કેશિના હરી વૃષ્ણા કક્ષ્યપ્રા ।

અર્થા ન ઇન્દ્ર સોમપા ગિરામુપ્શ્રુતિં ચર ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે સોમપાઃ-સોમ = ઉત્તમ પદાર્થોના રક્ષક ઇન્દ્ર-સર્વમાં વ્યાપક ઈશ્વર ! જેમ આપના રચેલા સૂર્યલોકના કેશિના-પ્રકાશયુક્ત આકર્ષણ અને બળરૂપ સામર્થ્ય વૃષ્ણા-વૃષ્ટિના હેતુ કક્ષ્યપ્રા-જે પોતાની કક્ષામાં ઉત્પન્ન પદાર્થોનું પૂરણ કરનાર હરી-વ્યાપ્તિશીલ અને હરણશીલ ઘોડાઓની સમાન અને આકર્ષણ ગુણ છે. તેને પોતાના કાર્યમાં જોડે છે, તેમ જ આપ નઃ-અમને પણ સમસ્ત વિદ્યાના પ્રકાશ માટે તે વિદ્યાઓમાં યુક્ત્વા-યુક્ત કરો. અર્થ-અને આપની સ્તુતિમાં પ્રવૃત્ત જે નઃ-અમારી ગિરામ્-વાણી છે, તેનું ઉપશ્રુતિમ્-શ્રવણનો ચર-સ્વીકાર અથવા પ્રાપ્ત કરો. (૩)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ સમસ્ત વિદ્યાના અધ્યયન પછી ક્રિયાઓની કુશળતામાં પ્રવૃત્ત થવું જોઈએ. જેમ આ સંસારમાં સૂર્યનો વિશાળ પ્રકાશ છે, તેમ ઈશ્વરના ગુણોનો અને વિદ્યાના પ્રકાશનો સર્વત્ર

ઉપયોગ કરવો જોઈએ.-સર્વત્ર ફેલાવવો જોઈએ. (૩)

एहि स्तोमौ अभि स्वराभि गृणीहारुव ।

ब्रह्म च नो वसो सचेन्द्र यज्ञं च वर्धय ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય જગદીશ્વર ! જેમ કોઈ સમસ્ત વિદ્યાઓમા પરિપૂર્ણ જ્ઞાતા વિદ્વાન **स्तोमान्**-આપની સ્તુતિઓના અર્થોને **अभिस्वर**-યથાવત્ પ્રાપ્ત કરતા-કરાવતા અથવા ગાન કરે છે તેમ **नः**-અમને પ્રાપ્ત કરાવો.

હે **वसो**-સર્વ ભૂત-પ્રાણીઓ જેમાં વાસ કરે છે અથવા તેમાં વસનાર છે તે જગદીશ્વર ! કૃપા કરીને એ રીતે પ્રાપ્ત થઈને **नः**-અમને **स्तोमान्**-વેદની સ્તુતિ-સમૂહોના અર્થોને **सच्चा**-વિજ્ઞાન અને સત્કર્મોમાં સંયુક્ત કરીને **अभिस्वर**-સમ્યક્ રીતે ઉપદેશ આપો. **ब्रह्म च**-અને વેદાર્થ તથા વેદ વિદ્યાને **अभिगृणीहि**-પ્રકાશિત કરો-ઉપદેશ કરો. **यज्ञं च**-અમારા માટે હોમ જ્ઞાન અને શિલ્પવિદ્યારૂપ ક્રિયાઓની **वर्धय**-નિત્ય વૃદ્ધિ કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જે (મનુષ્ય) વેદવિદ્યાના સત્ય યોગથી પરમેશ્વરની સ્તુતિ, પ્રાર્થના અને ઉપાસના કરે છે, તેને ઈશ્વર અન્તર્યામી રૂપથી મંત્રોના અર્થ બતાવીને નિરંતર સુખ પ્રાપ્ત કરાવે છે. તેથી તે લોકોમાં વિદ્યા અને પુરુષાર્થનો કદી ડ્રાસ થતો નથી. (૪)

उक्थमिन्द्राय शंस्यं वर्धनं पुरुनिष्विधे ।

शक्रो यथा सुतेषु णो रारणत् सख्येषु च ॥ ५ ॥

પદાર્થ : **यथा**-જેમ કોઈ મનુષ્ય પોતાના **सुतेषु**-સંતાનો અને **सख्येषु**-મિત્રોના કર્મ, ભાવ અથવા પુત્ર, સ્ત્રી, નોકર વર્ગ આદિ પર **ठपकार**-ઉપકારી હોય છે, તેમ **शक्रः**-સર્વ શક્તિમાન જગદીશ્વર (**नः**) અમારા પર કૃપા કરતા **पुसनिष्विधे**-અનેક શાસ્ત્રો ભણવા-ભણાવવા તથા ધર્મયુક્ત કાર્યોમાં આચરણ કરનાર **इन्द्राय**-સર્વના મિત્ર અને ઐશ્વર્યની ઈચ્છા કરનાર ધાર્મિક-જીવનને માટે **वर्धनम्**-વિદ્યાદિ ગુણોના વર્ધક, **शंस्यम्**-પ્રશંસાના **च**-અને **उक्थम्**-ઉપદેશ કરવા યોગ્ય વેદોક્ત સ્તોત્રોના અર્થોનો **रारणत्**-યથાવત્ ઉપદેશ-પ્રકાશ કરીને સુખી બની રહે. (૫)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જે કંઈ શોભા, પ્રશંસા અને ધન્યવાદ છે, તે સર્વ ઈશ્વરને જ પ્રકાશિત કરે છે. કારણ કે જે કંઈ બનેલ પદાર્થોમાં પ્રશંસિત રચનાઓ અને ગુણ હોય છે, તે તે સર્વ નિર્માતાની પ્રશંસા કરે છે. તેમ જ ઈશ્વરની અનંત પ્રશંસા અને પ્રાર્થના (તેનાથી) પદાર્થોની પ્રાપ્તિ માટે જ કરવામાં આવે છે. પરંતુ જે કંઈ ઈશ્વરથી પ્રાર્થના-માંગવામાં આવે છે, તે સર્વ મનુષ્ય પોતાના અત્યંત પુરુષાર્થથી જ પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૫)

तमित् सखित्व ईमहे तं राये तं सुवीर्ये ।

स शक्र उत नः शक्रदिन्द्रो वसु दयमानः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : જે ન:-અમારા માટે દયમાન:-સુખપૂર્વક રમણ કરવા યોગ્ય વિદ્યા, આરોગ્ય અને સુવર્ણાદિ ધનના દાતા, વિદ્યાદિ ગુણોના પ્રકાશક, નિરંતર રક્ષક, દુઃખ દોષ અને શત્રુઓનો વિનાશ પોતાના ધાર્મિક ભક્તજનોનો સ્વીકાર-ગ્રહણ કરનાર શક્ર:-અનંત સામર્થ્યયુક્ત ઇન્દ્ર:-દુઃખ વિનાશક જગદીશ્વર છે, તે વસુ-વિદ્યા અને ચક્રવર્તી રાજ્યાદિ પરમ ધન આપવામાં શકત્-સમર્થ છે, તમિત્-તેને અમે ઉત્ત-વેદાદિ શાસ્ત્ર સર્વ વિદ્યાનો પ્રત્યાક્ષાદિ સારા કર્મો હોવાના કારણે તમ્-તેને રાયે-પૂર્વોક્તિ વિદ્યાદિ ધનના માટે અને તમ્-તેને સુવીર્યે-શ્રેષ્ઠ ગુણોથી યુક્ત, ઉત્તમ પરાક્રમની પ્રાપ્તિ માટે ઈમહે-પ્રાર્થના કરીએ છીએ. (૬)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ, સમસ્ત શુભગુણોની પ્રાપ્તિ માટે પરમેશ્વરથી પ્રાર્થના કરવી જોઈએ, અન્યથી નહીં. કારણ કે તે અદ્વિતીય, સર્વના મિત્ર, પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત અને અનંત શક્તિમાન ઈશ્વરમાં સર્વ કાંઈ આપવાનું સામર્થ્ય છે. (૬)

सुविवृतं सुनिरजमिन्द्र त्वादातमिद् यशः ।

गवामप ब्रजं वृधि कृणुष्व राधो अद्रिवः ॥ ७ ॥

[સૂર્યલોક]

પદાર્થ : જેમ એ અદ્રિવ:-ઉત્તમ પ્રકાશ આદિ ધનયુક્ત ઇન્દ્ર:-સૂર્યલોક સુનિરજમ્-સુખથી પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય ત્વાદાતમ્-તેનાથી સિદ્ધ થનાર યશ:-જળને સુવિવૃતમ્-સુવિસ્તૃત ગવाम્-કિરણો બ્રજં-સમૂહનો સંસારમાં પ્રકાશ કરવા માટે અપવૃધિ-ફેલાવે છે તથા રાધ:-ધનને પ્રકાશિત કૃણુષ્વ-કરે છે.

[ઈશ્વર]

અદ્રિવ:-પ્રશંસા કરવા યોગ્ય ઇન્દ્ર-મહા યશસ્વી સર્વ પદાર્થોને યથા યોગ્ય ભાગ કરનાર પરમેશ્વર ! આપ મન આદિ ઈન્દ્રિયોના જ્ઞાન અને શ્રેષ્ઠ સુખદાયક પશુઓના વ્રજમ્-સમૂહને અપવૃધિ-પ્રાપ્ત કરીને તેના દ્વારા ખોલો, તથા સુવિવૃતમ્-દેશ-દેશાન્તરમાં પ્રસિદ્ધ સુખ આપનાર અને વ્યવહારમાં યથા યોગ્ય પ્રતીત થવા યોગ્ય યશ:-કીર્તિને વધારનાર અત્યુત્તમ ત્વાદાતમ્-આપના જ્ઞાનથી શુદ્ધ થયેલ રાધ:-જેનાથી અનેક સુખ સિદ્ધ થાય, એવી વિદ્યા અને સુવર્ણાદિ ધન અમારા માટે કૃણુષ્વ-કૃપા કરીને પ્રાપ્ત કરાવો. (૭)

ભાવાર્થ : હે પરમેશ્વર ! જેમ આપે સૂર્યાદિ જગત ઉત્પન્ન કરીને પોતાની કીર્તિ અને સર્વ પ્રાણીઓને માટે સુખ પ્રસિદ્ધ કરેલ છે, તેમ આપની કૃપાથી અમે પણ મન આદિ ઈન્દ્રિયોને સુખપૂર્વક શુદ્ધ અને વિદ્યા તથા ધર્મપ્રકાશ યુક્ત અમારી કીર્તિ, વિદ્યારૂપી ધન અને ચક્રવર્તી રાજ્ય નિરંતર પ્રકાશિત કરીને સર્વ મનુષ્યોને સુખી અને કીર્તિમાન બનાવીએ. (૭)

नहि त्वा रोदसी उभे ऋघायमाणमिन्वतः ।

जेषः स्वर्वतीरुपः सं गा अस्मभ्यं धूनुहि ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર ! જે ઉભે-રોદસી-સૂર્ય અને પૃથિવી જે ઋઘાયમાણમ્-પૂજા કરવા યોગ્ય આપ સર્વત્ર વ્યાપક જગદીશ્વરને નહિ-નહિ ઇન્વતઃ-વ્યાપક કરી શકતા, તે આપ અમારા માટે સ્વર્વતીઃ-સુખકારક અપઃ-કર્મોને જેષઃ-વિજય પૂર્વક પ્રાપ્ત કરવા માટે અમારી ગાઃ-ઈન્દ્રિઓને સંધૂનુહિ-ઉત્તમ કર્મોમાં પ્રેરિત કરો. (૮)

ભાવાર્થ : જો કોઈ પૂછે કે, ઈશ્વર કેટલો મહાન છે, તો ઉત્તર એ છે કે જેને આકાશાદિ સર્વને વ્યાપ્ત કરેલ છે, તે અનંત ઈશ્વરને કોઈ પણ પદાર્થ વ્યાપ્ત કરી શકતો નથી. તેથી એ સર્વ મનુષ્યો દ્વારા સેવન-ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. ઉત્તમ કર્મ અને ઉત્તમ પદાર્થ પ્રાપ્ત કરવા માટે તેને જ પ્રાર્થના કરવી જોઈએ. જેના ગુણ અને કર્મ પરિમાણ રહિત છે, તેનો અન્ત = પાર પામવાને કોણ સમર્થ બની શકે તેમ છે ? (૮)

आश्रुत्कर्णं श्रुधी हवं नू चिद्वधिष्व मे गिरः ।

इन्द्र स्तोममिमं मम कृष्वा युजश्चिदन्तरम् ॥ ९ ॥

પદાર્થ : આશ્રુત્કર્ણ-હે નિરંતર શ્રવણશક્તિ રૂપ કર્ણયુક્ત ઇન્દ્ર-સર્વ અન્તર્યામી જગદીશ્વર ! ચિત્-જેમ કોઈ પ્રિય મિત્ર યુજઃ-સત્ય વિદ્યા અને શ્રેષ્ઠ ગુણોથી યુક્ત પોતાના મિત્રની ગિરઃ-વાણીઓને પ્રીતિપૂર્વક સાંભળે છે, તેમ આપ નુ-શીઘ્ર મે-મારી ગિરઃ-સ્તોતાની વાણીઓ તથા હવમ્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય સત્ય વચનોને શ્રુધિ-સાંભળો, મમ-મારી સ્તોમમ્-સ્તુતિઓનો સમૂહ જે અન્તરમ્-અન્તઃકરણને શુદ્ધ કરનાર છે, તેને આપના જ્ઞાનની અંદર દધિષ્વ-ધારણ કરો, યુજઃ-પૂર્વોક્ત કાર્યોમાં ઉક્ત પ્રકારથી યુક્ત અમારી અન્તરમ્-અંદરની શુદ્ધિ કૃષ્વા-કરો. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને ઉચિત છે કે-ઈશ્વર સર્વજ્ઞ, જીવ દ્વારા પ્રયુક્ત વાણી વ્યવહારના યથાવત્ શ્રોતા, સર્વના આધાર, અન્તર્યામી, જીવ અને અન્તઃકરણની યથાવત્ શોધક-શુદ્ધિ કરનાર તથા સર્વના મિત્ર હોવાથી એ જ એક (પરમેશ્વર) સદા જાણવા અને પ્રાર્થના કરવા યોગ્ય છે. (૯)

विद्या हि त्वा वृषन्तमं वाजेषु हवनश्रुतम् ।

वृषन्तमस्य हूमह ऊतिं सहस्रसातमाम् ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્રઃ-ઈશ્વર ! અમે વાજેષુ-સંગ્રામોમાં હવનશ્રુતમ્-પ્રાર્થનાને સાંભળનાર, વૃષન્તમમ્-ઈચ્છિત કામોની અત્યંત વર્ષા કરનાર અને જાણનાર ત્વા-આપને વિદમ-જાણીએ છીએ, હિ-જેથી વૃષન્તમસ્ય-ઉત્તમ કામોમાં અત્યંત મેઘની સમાન વર્ષા કરનાર તવ-આપની સહસ્રસાતમમ્-સારી રીતે

અનેક સુખોને આપનારી જે **ઋતિમ્-રક્ષા**, પ્રાપ્તિ અને બુદ્ધિની **હૂમહે-કામના** કરીએ છીએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યો સમસ્ત કામનાઓની સિદ્ધિ પ્રદાન કરનાર અને શત્રુઓની (સાથે) યુદ્ધોમાં વિજયનું કારણ પરમેશ્વરને જ જાણે. જેના દ્વારા આ સંસારમાં સર્વ પ્રાણીઓનાં સુખને માટે અગણિત પદાર્થો ઉત્પન્ન કરીને રાખેલા છે, તે પરમેશ્વરનો અને તેની આજ્ઞાનો આશ્રય કરીને સર્વ પ્રકારનાં પ્રયત્નપૂર્વક પોતાનું અને સર્વ મનુષ્યોનું સુખ સિદ્ધ કરવું જોઈએ. (૧૦)

આ તૂ નં ઇન્દ્ર કૌશિક મન્દસાનઃ સુતં પિબ ।

નવ્યમાયુઃ પ્ર સૂ તિર કૃધી સંહસ્ત્રસામૃષિમ્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે **કૌશિક-સર્વ** વિદ્યાઓના ઉપદેશક અને પ્રકાશિત કરનાર અથવા અર્થોનો સમ્યક્ ઉપદેશ કરનાર **ઇન્દ્ર-સર્વાનંદ** સ્વરૂપ ઈશ્વર ! **મન્દસાનઃ**-શ્રેષ્ઠ સ્તુતિઓને પ્રાપ્ત અને સર્વને યથાયોગ્ય જાણનાર **નઃ**-અમારા **સુતમ્-પ્રયત્નથી** ઉત્પન્ન સોમ આદિ રસ અથવા પ્રિય શબ્દોની સ્તુતિઓને **આ + પિવ-સર્વત્રથી** શ્રવણ શક્તિથી ગ્રહણ કરો-**તુ-અને** કૃપા કરીને **નઃ**-અમારા **નવ્યમ્-નવીન આયુઃ**-નિરંતર જીવને **પ્ર + સુ + તિર**-ઉત્તમ રીતે પાર કરાવો, તથા **નઃ**-અમારા મધ્યમાં **સંહસ્ત્રસામ્-અનેક** વિદ્યા આપનાર **ઋષિમ્-વેદના મંત્રોના અર્થના દ્રષ્ટા**, જિતેન્દ્રિય હોવાથી શુભ ગુણોના સદા ઉપદ્રષ્ટા, સમસ્ત વિદ્યાના પ્રત્યક્ષકર્તા ઋષિને **કૃધિ-ઉત્પન્ન** કરો.

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પ્રેમપૂર્વક વિદ્યાના ઉપદેશકર્તા, જીવોને માટે સત્યવિદ્યાના પ્રકાશક, સર્વજ્ઞ અને શુદ્ધ ઈશ્વરની સ્તુતિ કરીને (તે અન્યોને) શ્રવણ કરાવે છે, તેઓ સુખથી પરિપૂર્ણ અને વિદ્યાથી યુક્ત આયુને પ્રાપ્ત કરીને, ઋષિ બનીને, પછી સર્વ વિદ્યાયુક્ત મનુષ્યોને (પૂર્ણ) પ્રેમપૂર્વક વિદ્યા બનાવે છે. (૧૧)

પરિં ત્વા ગિર્વણો ગિરં ઇમા ભવન્તુ વિશ્વતઃ ।

વૃદ્ધાયુમનુ વૃદ્ધયો જુષ્ટા ભવન્તુ જુષ્ટયઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે **ગિર્વણઃ-વેદો** અને વિદ્વાનોને વાણીથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય **ઇન્દ્ર-ભગવન્ ! વિશ્વતઃ**-આ સંસારમાં **ઇમાઃ**-જે વેદોક્ત અને વિદ્વાનો દ્વારા પ્રયુક્ત પ્રત્યક્ષ **ગિરઃ-સ્તુતિઓ** છે, તે **પરિ-સર્વત્રથી ત્વા-સર્વ** સ્તુતિઓથી સેવન કરવા યોગ્ય આપ ઈન્દ્ર = ઈશ્વરની **ભવન્તુ-પ્રકાશ** કરનારી થાઓ, અને એ જ રીતે જે **વૃદ્ધયઃ-વૃદ્ધિને** પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય, **જુષ્ટાઃ-પ્રીતિ** પ્રદાન કરનારી સ્તુતિઓ, **જુષ્ટયઃ-સેવનીય** છે, તે **વૃદ્ધાયુમ્-જે** નિરંતર સર્વ કાર્યોમાં અમારી ઉન્નતિને આપ વધારનારમાં આપનો **અનુભવન્તુ-અનુભવ** કરીએ. (૧૨)

ભાવાર્થ : “હે ભગવન્ ! જે કોઈ શ્રેષ્ઠ પ્રશંસા છે, તે સર્વ આપની જ છે અને જે કોઈ સુખ અને આનંદની વૃદ્ધિ છે, તે સર્વ આપની પ્રત્યે પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરે છે.” આ રીતે જે ઈશ્વરના ગુણોનો તથા તેની સૃષ્ટિના ગુણોનો અનુભવ કરે છે, તે જ પ્રસન્ન અને વિદ્યાવૃદ્ધ બનીને સર્વમાં ‘પુજ્ય’ બની

જાય છે. (૧૨)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં-જે ક્રમથી વિદ્યાદિ શુભ ગુણોને ગ્રહણ કરીને, ઈશ્વરને પ્રાર્થના કરીને, સારી રીતે પુરુષાર્થનો આશ્રય કરીને ધન્યવાદ પૂર્વક પરમેશ્વરની પ્રશંસા કરે છે, તેઓ જ અવિદ્યા આદિ દુષ્ટ ગુણોનું નિવારણ કરીને, શત્રુઓને જીતીને, દીર્ઘાયુ વિદ્વાન બનીને, સર્વના માટે સુખ ઉત્પન્ન કરીને સદા આનંદિત રહે છે, આથી દશમા સૂક્તના અર્થની નવમા સૂક્તના અર્થની સાથેની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૦)

સૂક્ત-૧૧

इन्द्रं विश्वा अवीवृधन्त्समुद्रव्यचसं गिरः ।

रथीतमं रथीनां वाजानां सत्पतिं पतिम् ॥ ૧ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : અમારી જે વિશ્વા:-સર્વ ગિર:-સ્તુતિઓ જે સમુદ્રવ્યચસમ્-આકાશમાં વ્યાપ્ત = સર્વવ્યાપક રથીનામ્-નિત્ય યુક્ત રથવાળા યોદ્ધાઓની સમાન રથીતમમ્-પૃથિવી, સૂર્યલોક આદિ રૂપ રથોવાળા, વાજાનામ્-જય-પરાજયના પ્રાપ્તિ સ્થાનના તથા સત્પતિમ્-સત્ = નાશ રહિત પ્રકૃતિ આદિ કારણ દ્રવ્યોના સ્વામી, પતિમ્-ચરાચર જગતના રક્ષક, ઇન્દ્રમ્-વિજય પ્રદાતા પરમાત્માને અવીવૃધન્-નિત્ય વૃદ્ધિ કરે છે-પ્રકાશિત કરે છે. તેમ મનુષ્ય પણ પ્રકાશિત કરે.

[વિજેતા પુરુષ]

અમારી જે વિશ્વા:-સર્વ ગિર: સ્તુતિઓ સમુદ્રવ્યચસમ્-સમુદ્રમાં નૌકા આદિ વિજય કરાવનાર સાધનો વ્યાપક રથીનામ્-નિત્ય યુક્ત રથવાળા યોદ્ધાઓનાં રથીતમમ્-રમણ, વિજયના માટે વિમાનાદિ રથોવાળા, વાજાનામ્-જય-પરાજયના પ્રાપ્તિ સ્થાન યુદ્ધોના તથા સત્પતિમ્-સદ્વ્યવહારો અથવા સત્પુરુષોના પાલક ન્યાયાધીશ રાજા પતિમ્-સજ્જનોના રક્ષક ઇન્દ્રમ્-શત્રુઓના વિજેતા શૂરવીર પુરુષોની અવીવૃધન્-નિત્ય વૃદ્ધિ કરે છે. તેની અમે મનુષ્યો વૃદ્ધિ કરીએ. (૧)

ભાવાર્થ : સર્વ વેદવાણીઓ પરમ ઐશ્વર્યવાન, સર્વ વ્યાપક, સર્વત્ર રમણ કરનાર, ધાર્મિકોને વિજય પ્રદાન કરનાર પરમેશ્વરને પ્રકાશિત કરે છે અથવા ધર્મયુક્ત બળથી દુષ્ટ મનુષ્યોના વિજેતા, ધાર્મિકોના રક્ષક પુરુષોને પ્રકાશિત કરે છે, એવા ઈશ્વરને વેદવાણી સર્વને બતાવે છે. (૧)

सुख्ये त इन्द्र वाजिनो मा भैम शवसस्पते ।

त्वामभि प्र णोनुमो जेतारमपराजितम् ॥ ૨ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હે શવસ:-અનંત બળના પતે-સ્વામી જગદીશ્વર ! અભિ-મુખ્ય રૂપથી જેતારમ્-શત્રુઓ પર વિજય કરનાર, અપરાજિતમ્-કોઈથી પરાજિત ન થનાર ત્વામ્-આપ જગદીશ્વરને વાજિન:-પરમ ઉત્કૃષ્ટ વિદ્યા અને બળથી યુક્ત આત્માના પ્રશસ્ત બળસમૂહ વાળા વિજ્ઞાનવાન અમે પ્રણોનુમ:-વારંવાર પ્રણામ કરીએ છીએ, અત્યંત સ્તુતિ કરીએ છીએ. તથા હે ઇન્દ્ર-સર્વના સ્વામી ઈશ્વર ! તે-આપની સચ્ચે-મિત્રતા કરવાથી શત્રુઓથી કદી પણ મા + ભેમ-ડરીએ નહિ.

[સેન્ધાયક્ષ]

હે શવસ:-પ્રમિત બળના પતે-સ્વામી સેનાધ્યક્ષ તથા સભાધ્યક્ષ રાજન્ ! અભિ-મુખ્યરૂપથી જેતારમ્-શત્રુઓને જીતનાર, અપરાજિતમ્-કોઈથી પરાજિત ન થનાર ત્વા-આપ સભાધ્યક્ષને વાજિન:-પરમ ઉત્કૃષ્ટ વિદ્યા અને બળથી યુક્ત આત્માના પ્રશસ્ત બળસમૂહ યુક્ત વિજ્ઞાનવાન અમે પ્ર + ણોનુમ:-વારંવાર પ્રણામ કરીએ છીએ, અત્યંત સ્તુતિ કરીએ છીએ તથા-હે ઇન્દ્ર-સભાધ્યક્ષ રાજન્ ! તે-આપ ન્યાયશીલ સભાધ્યક્ષની સચ્ચે-મિત્રતાથી શત્રુઓથી કદી પણ મા + ભેમ-ડરીએ નહિ. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પરમેશ્વર, તેની આજ્ઞાનું પાલન-આચરણ તથા શૂરવીર આદિની મિત્રતા કરે છે, તેઓ બળવાન બનીને શત્રુઓથી ભય અને પરાજયને પ્રાપ્ત થતા નથી. (૨)

पूर्वीरिन्द्रस्य रातयो न वि दस्यन्त्यूतयः ।

यदि वाजस्य गोमतः स्तोतृभ्यो मंहते मधम् ॥ ૩ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : यदि-જે ઈન્દ્ર = ઈશ્વર સ્તોતૃભ્યઃ જગદીશ્વર અને સૃષ્ટિ-ગુણોની સ્તુતિ કરનાર ધાર્મિક વિદ્વાનોને વાજસ્ય-સુખ આપનાર વ્યવહાર અને ગોમતઃ-પ્રશસ્ત પૃથિવી, ગાય આદિ પશુઓ તથા વાણી આદિ ઈન્દ્રિયોયુક્ત મધમ્-ઉત્તમ વિદ્યા, સુવર્ણાદિ ધન મંહતે-આપે છે, તો અસ્ય-એ ઇન્દ્રસ્ય-નાશ ક્રતયઃ-રક્ષા આદિ ન + વિ + દસ્યન્તિ-નાશ પામતા નથી.

[સભાધ્યક્ષ રાજા]

यदि-જે ઈન્દ્ર =સભાધ્યક્ષ રાજા સ્તોતૃભ્યઃ-જગદીશ્વર અને સૃષ્ટિ-ગુણોની સ્તુતિ કરનાર ધાર્મિક વિદ્વાનોને વાજસ્ય-સુખ આપનાર વ્યવહાર અને ગોમતઃ-પ્રશસ્ત પૃથિવી, ગાય આદિ પશુઓ તથા વાણી આદિ ઈન્દ્રિયોયુક્ત મધમ્-ઉત્તમ વિદ્યા, સુવર્ણાદિ ધન મંહતે-આપે છે. તો અસ્ય-એ (ઇન્દ્રસ્ય) રાજાના જે પૂર્વીઃ-સનાતન રાતયઃ-દાન અને ક્રતયઃ-રક્ષાદિ ન + વિ + દસ્યન્તિ-નાશ પામતા નથી. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વરના આ સંસારમાં દાન, રક્ષાદિ નિત્ય ન્યાયયુક્ત કર્મો છે, તેમ મનુષ્યોએ પણ પ્રજામાં વિદ્યા તથા નિર્ભયતાના દાન રૂપી કર્મો નિત્ય કરવા જોઈએ. જે ઈશ્વર ન હોય, તો સંસાર કેમ ઉત્પન્ન થઈ શકે ? જે ઈશ્વર ઉત્પન્ન કરીને ન આપે, તો મનુષ્ય કેવી રીતે જીવિત રહે

? તેથી સંપૂર્ણ કાર્ય (જગત)ના ઉત્પાદક, સર્વ સુખોના દાતા ઈશ્વર છે, અન્ય નહિ, એમ માનવું જોઈએ. (૩)

પુરાં ભિન્દુર્યુવાં કવિરમિતૌજા અજાયત ।

ઇન્દ્રો વિશ્વસ્ય કર્મણો ધર્તા વજ્રી પુરુષ્ટુતઃ ॥ ૪ ॥

[સેનાપતિ]

પદાર્થ : જે અમિતૌજા:-અનંત બળવાન વજ્રી-જેને પ્રાપ્તિ અને છેદન કરનાર અનેક શસ્ત્ર-સમૂહ યુક્ત, પુરામ્-સંઘાત તથા શત્રુ નગરોના ભિન્દુ:-ભેદનાર, યુવા-સંયોગ-વિભાગ કરનાર, કવિ:-ન્યાય-વિદ્યાનો ચાલક, પુરુષ્ટુત:-અનેક વિદ્યાનોથી સ્તુતિને યોગ્ય, ઇન્દ્ર:-સેનાપતિ વિદ્વાન, વિશ્વસ્ય-સર્વ જગત કર્મણ:-કાર્યોને ધર્તા-પરાક્રમ દ્વારા ધાર કરનાર અજાયત-બને છે.

[સૂર્ય]

જો અમિતૌજા:-પરિમાણ રહિત જળયુક્ત, વજ્રી-કિરણયુક્ત, પુરામ્-દ્રવ્યોનો ભિન્દુ:-ભેદક, યુવા-સંયોગ-વિભાગ કરનાર, કવિ:-દર્શન શક્તિનો પ્રસારક, પુરુષ્ટુત:-અનેક ગુણોથી સ્તુતિને યોગ્ય, ઇન્દ્ર:-સૂર્યલોક વિશ્વસ્ય-સર્વ જગતની કર્મણ:-ચેષ્ટા-ગતિનો ધર્તા-આકર્ષણથી ધારણ કરનાર અજાયત-હોય છે. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વર દ્વારા રચીને ધારણ કરેલ એ સૂર્ય પોતાના વજ્ર સમાન છેદક કિરણોથી સર્વ મૂર્ત પદાર્થોનું ભેદન કરનાર અને આકર્ષણ દ્વારા પૃથિવી આદિ લોકોને ધારણ કરનાર છે, તેમ સેનાપતિએ પોતાના બળથી શત્રુના બળને છિન્ન-ભિન્ન કરીને સામ-દામ આદિ દ્વારા દુષ્ટ મનુષ્યોને ફોડીને તથા પોતાના શુભ ગુણોના કારણે આકર્ષણ બનીને, પૃથિવી પર પોતાના રાજ્યનું નિરંતર પાલન કરવું જોઈએ, (એવું સર્વએ) જાણવું જોઈએ. (૪)

ત્વં વલસ્ય ગોમ્તોઽપાવરદ્રિવો બિલમ્ ।

ત્વાં દેવા અભિષ્યુષસ્તુજ્યમાનાસ આવિષુઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : અદ્રિવ:-જેમાં-મેઘ = વાદળાઓ રહેલાં છે એવો જે સૂર્યલોક છે, તે ગોમત:-જેમાં કિરણો રહેલાં છે, અભિષ્યુષ:-ભય રહિત બલસ્ય-મેઘના બિલમ્-જળસમૂહને અપાવ:-અલગ કરે છે, ખોલે છે, ત્વામ્-તે સૂર્યને તુજ્યમાનાસ:-પોતપોતાની કક્ષાઓમાં ભ્રમણ કરતા દેવા:-પૃથિવી આદિ લોક આવિષુ:-વિશેષ રૂપથી પ્રાપ્ત થાય છે. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય પોતાનાં કિરણો દ્વારા ઘટાટોપ વાદળાઓને છિન્ન-ભિન્ન કરીને તેને ભૂમિ પર પાડે-વરસાવે છે, કારણ કે વાદળાઓ તેના કિરણોમાં સ્થિર રહેલાં છે, જેના સર્વત્ર આકર્ષણથી પૃથિવી આદિ લોક પોત-પોતાની કક્ષામાં નિયમપૂર્વક ભ્રમણ કરે છે, તેથી અયન (ઉત્તરાયણ-દક્ષિણાયણ),

ऋतु, દિવસ-રાત વગેરે બને છે, તેમ સેનાપતિ આદિએ પણ બનવું જોઈએ. (૫)

તવાહં શૂર રાતિભિઃ પ્રત્યાયં સિન્ધુમાવદન્ ।

उपातिष्ठन्त गिर्वणो विदुष्टे तस्य कारवः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે શૂર-ધાર્મિક, દુષ્ટોના નિવારક વિદ્યા, બળ, પરાક્રમયુક્ત સભાધ્યક્ષ ! તવ-બળ, પરાક્રમયુક્ત આપના રાતિભિઃ-નિર્ભયતા આદિ દાનોથી આપને સિન્ધુમ્-સમુદ્ર સમાન ગંભીર અને સુખદાતા આપને આવદન્-નિરંતર કહેતા હું પ્રતિ + આયમ્-પ્રતીતિપૂર્વક પ્રાપ્ત થવું છું.

હે ગિર્વણઃ-મનુષ્યોની સ્તુતિઓનું સેવન કરવા યોગ્ય ! તે-આપના તસ્ય-રાજ્ય, યુદ્ધ અથવા શિલ્પવિદ્યાના સહાયક કારવઃ-કાર્યકર્તા = કારીગરો છે, તેઓ આપને શૂરવીર વિદુઃ-જાણે છે, ઉપાતિષ્ઠન્ત-સમીપ બેસીને ઉત્તમ કામ કરે છે, તે-તેઓ સદા સુખી રહે છે. (૬)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર સર્વ મનુષ્યોને આજ્ઞા કરે છે કે-મનુષ્યોએ શૂરવીર પ્રશંસિત, સભાધ્યક્ષ અથવા સેનાધ્યક્ષ મનુષ્યોનો અભયદાનપૂર્વક સમુદ્રના જંતુઓની સમાન આશ્રય કરીને, રાજ્ય કાર્યોને સારી રીતે જાણીને ઉત્તમ રીતે સિદ્ધ કરે અને દુઃખ નિવારણપૂર્વક સુખની પ્રાપ્તિ માટે પરસ્પર ઉપસ્થિત = વિચારાદિ પણ કરે. (૬)

मायाभिरिन्द्र मायिनं त्वं शृष्णमवातिरः ।

विदुष्टे तस्य मेधिरास्तेषां श्रवांस्युत्तिर ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવનાર, શત્રુ નિવારક સભા અને સેનાના પરમ અધ્યક્ષ શૂરવીર ! ત્વમ્-પ્રજ્ઞા = શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ, સેના તથા શરીર બળથી યુક્ત બનીને આપ-માયાભિઃ-પ્રજ્ઞાના વિશેષ વ્યવહારોથી શૃષ્ણમ્-ધાર્મિક જનોનું શોષણ કરનાર-તેના ચિત્તને વ્યાકુળ કરનાર માયિનમ્-નિન્દિત પ્રજ્ઞા-દુર્બુદ્ધિ દુઃખ આપનાર દુષ્ટ શત્રુનો અવાતિર-શાસનથી નિવારણ કરો-પરાજય કરો, તસ્ય-તેના હનન-મારવામાં જે મેધિરાઃ-જે શસ્ત્રોને જાણનાર તથા દુષ્ટોનો મારવામાં અતિ મેધાવી લોકો છે, તેઓ તે-આપના સંગમથી સુખી થઈને શ્રવાંસિ-અન્નાદિ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરે. તેષામ્-તે ધાર્મિક પુરુષોની સહાયતાથી શત્રુઓની સેના-બળને ઉત્તિર-સારી રીતે નિવારણ કરે. (૭)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા કરે છે કે-સામ, દામ, દંડ ભેદની યુક્તિથી દુષ્ટોનું નિવારણ કરીને વિદ્યાયુક્ત ચક્રવર્તી રાજ્યનો વિસ્તાર કરવો જોઈએ અને જે રીતે આ સંસારમાં કપટી (છલી, દુષ્ટ) મનુષ્ય વધે નહિ તેવો નિત્ય પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૭)

इन्द्रमीशान्मोजसाभि स्तोमा अनूषत ।

सहस्रं यस्य रातय उत वा सन्ति भूर्यसीः ॥ ८ ॥

પદાર્થ : **યસ્ય**-જે જગદીશ્વરે આ સર્વ **સ્તોમા**:-સ્તુતિઓનો સમૂહ **સહસ્રમ્**-અસંખ્ય છે, **ઉત્ત**, **વા**-અથવા **ભૂયસી**:-અધિક **રાતય**:-દાન **સન્તિ**-છે, તે **ઓજસા**-અનંત બળયુક્ત **ઈશાનમ્**-સમસ્ત જગતનું કારણ (પ્રકૃતિથી) રચના કરનાર **ઇન્દ્રમ્**-સકળ ઐશ્વર્યયુક્ત જે જગદીશ્વરની **અભિ** + **અનૂષત**-સર્વત્રથી સ્તુતિ કરે છે તેની સર્વ મનુષ્યોએ સ્તુતિ-ગુણકીર્તન કરવા જોઈએ. (૮)

ભાવાર્થ : જે દયાળુ ઈશ્વરે પ્રાણીઓના સુખ માટે અનેક પદાર્થો પોતાના અનંત બળથી (જીવોને માટે) આપેલ છે, જે બ્રહ્મનો સર્વ ધન્યવાદ છે, તેથી સર્વ મનુષ્યોએ તેનો આશ્રય ગ્રહણ કરવો જોઈએ. (૮)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈન્દ્ર શબ્દથી ઈશ્વરની સ્તુતિ, નિર્ભયતા-સંપાદન, સૂર્ય લોકનું કાર્ય, શૂરવીરના ગુણોનું વર્ણન, દુષ્ટ શત્રુઓનું નિવારણ, પ્રજાની રક્ષા ઈશ્વરના અનંત સામર્થ્યથી જગતની ઉત્પત્તિ આદિ વિધાન કરે છે, તેથી આ અગિયારમાં સૂક્તની દશમા સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૧)

સૂક્ત-૧૨

અગ્નિં દૂતં વૃણીમહે હોતારં વિશ્વવેદસમ્ । અસ્ય યજ્ઞસ્ય સુક્રતુમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : ક્રિયા કરવાની ઈચ્છાવાળા અમે મનુષ્યો **અસ્ય**-પ્રત્યક્ષ સિદ્ધ કરવા યોગ્ય **યજ્ઞસ્ય**-શિલ્પ-વિદ્યામય યજ્ઞની **સુક્રતુમ્**-ઉત્તમ પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિ અથવા ક્રિયાને માટે **વિશ્વવેદસમ્**-શિલ્પીજનો-કારીગરોને સર્વ શિલ્પ આદિ સાધનોનો લાભ થાય છે, **હોતારમ્**-યાનોમાં વેગ આદિ ગુણોને આપવા **દૂતમ્**-સર્વ પદાર્થોને એકથી બીજા દેશમાં પ્રાપ્ત કરાવવા **અગ્નિમ્**-સર્વ પદાર્થોને પોતાના તેજથી ઇન્નભિન્ન કરનાર ભૌતિક અગ્નિનો **વૃણીમહે**-સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૧)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે-મનુષ્યોએ, આ પ્રત્યક્ષ અને અપ્રત્યક્ષ રૂપથી પ્રસિદ્ધ અથવા અપ્રસિદ્ધ ગુણોથી યુક્ત દ્રવ્યોને ઉપર-નીચે લઈ જનાર હોવાના કારણે દૂત સ્વભાવવાળા, શિલ્પવિદ્યાથી વાહનોમાં વેગ આદિ ક્રિયાઓના કારણભૂત અગ્નિનો, સમ્યક્ વિદ્યા દ્વારા સર્વના ઉપકાર માટે સંગ્રહ કરવો જોઈએ. જેથી સર્વ ઉત્તમ સુખ સંભવી શકે છે. (૧)

અગ્નિમગ્નિં હવીમભિઃ સદા હવન્ત વિશ્વપતિમ્ । હવ્યવાહં પુરુપ્રિયમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જેમ અમે **હવીમભિઃ**-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય ઉપાસનાદિને (ઈશ્વર) તથા શિલ્પવિદ્યાના સાધનોથી (વિદ્યુત્) **પુરુપ્રિયમ્**-અત્યંત સુખદાયક **વિશ્વપતિમ્**-પ્રજ્ઞાઓના પાલન માટે **હવ્યવાહમ્**-આદાન-પ્રદાન યોગ્ય પદાર્થોના દાતા (ઈશ્વર) તથા સ્થાનાન્તર પહોંચાડનાર (વિદ્યુત્) **અગ્નિમ્**-પરમેશ્વરને તથા પ્રસિદ્ધ અગ્નિ અને વિદ્યુત્ને **વૃણીમહે**-ગ્રહણ કરીએ છીએ, તેમ તમે લોકો પણ સદા **હવન્ત**-ગ્રહણ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર સર્વને ઉપદેશ આપે છે કે-હું મનુષ્યો ! તમોએ વિદ્યુત્ નામક અગ્નિ તથા પ્રસિદ્ધ (સ્થૂળ) અગ્નિથી કળાકોશલ આદિની સિદ્ધિ કરીને ઈચ્છિત સુખોને સદા ભોગવો તથા અન્યને ભોગ કરાવો. (૨)

अग्नें देवाँ इहावह जज्ञानो वृक्तबर्हिषे । असि होता न इड्यः ॥ ३ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હે અગ્ને-વંદનીય અને સ્તુતિને યોગ્ય ઈશ્વર ! આપ ઇહ-આ સંસારમાં જજ્ઞાન:-જગતને પ્રકટ કરનાર હોતા-હોમ કરેલ પદાર્થોને ગ્રહણ કરનાર ઇડ્ય:-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય અસિ-છો, તે ન:-અમારા માટે તથા વૃક્તબર્હિષે-અન્તરિક્ષમાં હોમના પદાર્થોને છોડનાર ઋત્વિકને માટે દેવાન્-દિવ્યગુણયુક્ત પદાર્થોને આવહ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરવો. આ મંત્રનો પ્રથમ અર્થ છે.

[ભૌતિક અગ્નિ]

જે હોતા૦ હવન કરેલ પદાર્થોને ગ્રહણ કરનાર જજ્ઞાન:-તેની ઉત્પત્તિ કરનાર અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ વૃક્તબર્હિષે-જેના દ્વારા હવન કરવા યોગ્ય પદાર્થો અન્તરિક્ષમાં પહોંચાડવામાં આવે છે, તે ઋત્વિકને માટે ન:-તથા અમારા માટે દેવાન્-દિવ્યગુણ પદાર્થોને ઇહ-આ સ્થાનમાં આવહ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેથી તે અમારા માટે ઇડ્ય:-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય અસિ-છે, આ મંત્રનો બીજા અર્થ છે. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જે પ્રાદુર્ભૂત-પ્રગટ અગ્નિમાં સુગંધિત ગુણોથી યુક્ત દ્રવ્યોનો હોમ કરે છે, તે અગ્નિ દ્રવ્યો સહિત અન્તરિક્ષમાં વાયુ અને મેઘમંડળ-વાદળાઓના સમૂહને શુદ્ધ કરીને આ સંસારમાં દિવ્ય સુખોને ઉત્પન્ન કરે છે, તેથી આપણે એ અગ્નિના ગુણોનું નિત્ય અન્વેષણ-શોધ કરવું જોઈએ, તેને ઈશ્વરની આજ્ઞા અવશ્ય માનવી જોઈએ. (૩)

ताँ उंशतो वि बौधय यदग्ने यासि दूत्यम् । देवैरा सत्सि बर्हिषि ॥ ४ ॥

પદાર્થ : જે અગ્ને-અગ્નિ યત્-જે કારણે બર્હિષિ-અન્તરિક્ષમાં દેવૈ:-દિવ્ય પદાર્થોના સંયોગથી-સાથે દૂત્યમ્-દૂત કર્મને આ + યાસિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે, તાન્-તે દિવ્યગુણોથી વિબોધય-વિદિત-બોધ કરાવનાર અને તે પદાર્થોના સત્સિ-દોષોનો વિનાશ કરે છે, તેથી સર્વ મનુષ્યો વિદ્યાની સિદ્ધિ માટે એ અગ્નિની સમ્યક્ પરીક્ષા કરીને તેનો પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૪)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે-(હે મનુષ્યો !) એ અગ્નિ તમારો દૂત છે. કારણ કે તે હોમ કરેલા દિવ્ય પરમાણુ રૂપ પદાર્થોને અન્તરિક્ષમાં પહોંચાડે છે અને ઉત્તમ ભોગોને પ્રાપ્ત કરાવનાર છે, તેથી સર્વ મનુષ્યોએ પ્રસિદ્ધ અને અપ્રસિદ્ધ અગ્નિના ગુણોને કાર્ય માટે પ્રકાશિત કરવા જોઈએ. (૪)

घृताहवन दीदिवः प्रति ष्म रिषतो दह । अग्ने त्वं रक्षस्विनः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : ઘૃતાહવન-ઘૃતાદિ તથા જળનો જેમાં હોમ અને સેચન કરવામાં આવે છે અને દીદિવ:-પોતાના શુભ ગુણોથી દ્રવ્યોને પ્રકાશિત કરનાર છે, ત્વમ્-તે અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ રક્ષસ્વિન:-જે સમૂહોમાં રાક્ષસ અર્થાત્ દુષ્ટ સ્વભાવવાળા તથા નિંદક મનુષ્યો રહેલા છે, જે રિષત:-હિંસા નિમિત્ત દોષો અને

શત્રુઓ છે, તેનો પ્રતિ-દહસ્મ:-અનેક રીતે-વારંવાર વિનાશ કરે છે, તેનો અમે પોતાના કાર્યોમાં નિત્ય સંપ્રયોગ કરીએ. (૫)

ભાવાર્થ : મંત્રોક્ત પ્રકારથી સુગંધિત આદિ ગુણોથી યુક્ત દ્રવ્યથી સંયુક્ત એ અગ્નિ સર્વ દુર્ગંધ આદિ દોષોનું નિવારણ કરી-દૂર કરી સર્વને સુખકારી બને છે, એમ ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે. (૫)

અગ્નિનાગ્નિ: સમિધ્યતે કવિર્ગૃહપતિર્યુવા । હવ્યવાઙ્ જુહ્વાસ્ય: ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : મનુષ્ય-જે જુહ્વાસ્ય:-જવાળા રૂપ મુખ યુક્ત યુવા-પદાર્થોની સાથે મિશ્રિત અથવા અમિશ્રિત કરનાર હવ્યવાઙ્-હોમ કરેલ દ્રવ્યને દેશ-દેશાન્તરમાં પહોંચાડનાર કવિ:-કાન્તદર્શન અર્થાત્ જેમાં દૃષ્ટિ સ્થિર પડી શકતી નથી. ગૃહપતિ:-સ્થાન = ઘર અથવા ઘરમાં રહેલાઓનું પાલન કરનાર છે, અગ્નિ:- પ્રત્યક્ષ રૂપવાન પદાર્થોનો દહનશીલ, પૃથિવી અને સૂર્યલોકમાં રહેલ અગ્નિ અગ્નિના-વ્યાપક વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિથી સમિધ્યતે-સમ્યક્ રીતે પ્રદીપ્ત કરવામાં આવે છે, તેનો અનેક કાર્યોને સિદ્ધ કરવામાં સદા ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૬)

ભાવાર્થ : જે એ સર્વ પદાર્થોમાં મિશ્રિત વિદ્યુત્ નામક અગ્નિ છે, તેના દ્વારા પ્રસિદ્ધ થાય છે, પુનઃ અદ્રષ્ટ બનીને રૂપ સમાન બની જાય છે, મનુષ્યો દ્વારા જો એ બન્નેના ગુણોને તથા વિદ્યાને સમ્યક્ ગ્રહણ કરીને ઉપકાર લેવામાં આવે, તો અનેક વ્યવહાર સિદ્ધ થઈ શકે છે તથા વ્યવહારોથી અગણિત આનંદોની સર્વને પ્રાપ્તિ થાય છે, એમ જગદીશ્વર કહે છે. (અર્થાત્ ઈશ્વરનું વચન છે.) (૬)

કવિમ્ગ્નિમુપસ્તુહિ સત્યધર્માણમધ્વરે । દેવમમીવ્ચાતનમ્ ॥ ૭ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! તું અધ્વરે-ઉપાસના રૂપ યજ્ઞમાં સત્યધર્માણમ્-સત્યધર્મ નિત્ય અને સનાતન છે, અમીરચાતનમ્-આજ્ઞાનાદિ તથા જ્વરાદિ રોગોના નાશક, દેવમ્-સર્વ સુખોના દાતા અગ્નિમ્-સર્વજ્ઞ પરમેશ્વરને ઉપ + સ્તુહિ મનુષ્યોની સમીપ પ્રકાશિત કર.

[ભૌતિક અગ્નિ]

હે મનુષ્ય ! તું અધ્વરે-શિલ્પવિદ્યારૂપ યજ્ઞમાં સત્યધર્માણમ્-સત્ય ધર્મયુક્ત (અવિનાશી ગુણ) અમીવચાતનમ્-જ્વરાદિ રોગ નાશક કવિમ્-સર્વ સ્થૂળ પદાર્થોના દર્શક દેવમ્-સર્વ સુખદાતા અગ્નિમ્-ભૌતિક અર્થાત્ દાહક અગ્નિને ઉપ + સ્તુહિ-સર્વની સામે સદા પ્રકાશિત કર. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, સત્યવિદ્યાથી ધર્મની પ્રાપ્તિ માટે અને સત્ય શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ માટે અગ્નિ = ઈશ્વર અથવા ભૌતિક અગ્નિને તેના ગુણોના દ્વારા પ્રકાશિત કરવા જોઈએ. જેથી રોગ નિવૃત્તિ દ્વારા પ્રાણીઓને સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકે. (૭)

यस्त्वामग्ने हविष्पतिर्दूतं देव सपर्यति। तस्य स्म प्राविता भव ॥ ८ ॥

[ईश्वर]

पदार्थ : હે દેવ-સર્વ વ્યાપક (અથવા સર્વ પ્રકાશક) અગ્ને-વિજ્ઞાન સ્વરૂપ જગદીશ્વર ! ય:- જે મનુષ્ય હવિષ્પતિ:-આદાન-પ્રદાન યોગ્ય પદાર્થ અથવા ગુણોના પાલક, કર્મ કરનાર મનુષ્ય-દૂતમ્-સુખ અને જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરાવનાર ત્વામ્-આપની સપર્યતિ-સેવા કરે છે, તસ્ય-એ સેવકને આપ પ્રાવિતા-સમ્યક્ રીતે જાણનાર ભવ, સ્મ-છો.

[ભૌતિક અગ્નિ]

ય:-જે હવિષ્પતિ:-હવિ અર્થાત્ આઈન + પ્રદાન યોગ્ય દ્રવ્યો અથવા ગુણોના પાલક, કર્મ કરનાર મનુષ્ય-ત્વામ્-તે દેવમ્-પ્રકાશ અને દાહગુણવાળા અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિનું સપર્યતિ-સેવન કરે છે, તસ્ય-તે સેવક-મનુષ્યનું તે અગ્નિ પ્રાવિતા-અનેક પ્રકારનાં સુખોથી રક્ષા કરનાર ભવ-થાય છે.

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં દૂત શબ્દના બે અર્થમાં એક ઈશ્વર પક્ષમાં જ્ઞાન આપનાર અને ભૌતિક અગ્નિ પાપમાં દેશાન્તરમાં દ્રવ્યો તથા યાનોને પહોંચાડવાનો અર્થ ગ્રહણ થાય છે. જે મનુષ્યો આસ્તિક બનીને હૃદય પ્રદેશમાં સર્વ સાક્ષી પરમેશ્વરનું ધ્યાન કરે છે, તેઓજ ઈશ્વરની રક્ષા પ્રાપ્ત કરીને, પાપોનો ત્યાગ કરીને, ધર્માત્મા બનીને સુખને પ્રાપ્ત કરે છે.

જે યુક્તિપૂર્વક યાન-વાહન અને યન્ત્રાદિમાં અગ્નિનો પ્રયોગ કરે છે, તેઓ પણ યુદ્ધાદિ કાર્યોમાં (સ્વયં) રક્ષિત તથા (અન્યોના) રક્ષક બને છે. (૮)

यो अग्निं देववीतये हविष्मां आविवासति। तस्मै पावक मृड्य ॥ ९ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હે પાવક-પવિત્ર કરનાર ઈશ્વર ! ય:-જે હવિષ્માન્-હવિ અર્થાત્ ઉત્તમ પદાર્થ અથવા કર્મો કરનાર મનુષ્યો દેવવીતયે-દિવ્ય ગુણો તથા ભોગોની પરિપૂર્ણતા માટે અગ્નિમ્-સર્વ સુખોના આપનાર આપ-ઈશ્વરનું અવિવાસતિ-સારી રીતે સેવન કરે છે, તસ્મૈ-તેને-સેવકને આપ મૃડ્ય-સુખ પ્રદાન કરો.

[ભૌતિક અગ્નિ]

ય:-જે હવિષ્માન્-ઉત્તમ કર્મોવાળો મનુષ્ય દેવવીતયે-દિવ્યગુણો તથા ભોગોની પ્રાપ્તિ માટે અગ્નિમ્-સુખનું કારણ ભૌતિક અગ્નિ પાવક-પવિત્ર કરનાર બનીને મૃડ્ય-સુખી કરે છે. (૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સત્ય ભાવ, કર્મ અને વિજ્ઞાનથી પરમેશ્વરનું સેવન કરે છે, તેઓ દિવ્ય ગુણ અને પવિત્ર કર્મ કરીને સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. જે કારણે એ દિવ્ય ગુણોનો પ્રકાશક

અગ્નિ બનાવેલ છે, તેથી મનુષ્યોએ (તેનાથી) દિવ્ય ઉપકાર ગ્રહણ કરવો જોઈએ. એમ ઈશ્વરનો ઉપદેશ છે. (૯)

સ નઃ પાવક દીદિવોઽગ્ને દેવાં ડ્રહાવહ। ઉપ યજ્ઞં હૃવિશ્ચં નઃ ॥ ૧૦ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હેદીદિવઃ-આપના સામર્થ્યથી પ્રકાશવાન પાવક-પવિત્ર કરનાર અગ્ને-સર્વ પદાર્થોનો પ્રાપ્ત કરાવનાર સઃ-જગદીશ્વર ! આપ નઃ-અમારા સુખને માટે ડ્રહ-આ સંસારમાં દેવાન્-વિદ્વાનોને આ + વહ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવો, નઃ-અમારા યજ્ઞમ્-પૂર્વોક્ત ત્રણ પ્રકારના યજ્ઞ અને હૃવિઃ-આદાન-પ્રદાન યોગ્ય પદાર્થોને ઉપાવહ-પ્રાપ્ત કરાવો.

[ભૌતિક અગ્નિ]

યઃ-જે દીદિવઃ-પ્રકાશમાન પાવક-શુદ્ધિનો હેતુ અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ સારી રીતે કલા યંત્રોમાં પ્રયુક્ત કરેલ નઃ-અમારા સુખને માટે ડ્રહ-અમારી સમીપ દેવાન્-દિવ્યગુણોને આ + વહ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવે છે. સઃ-તે નઃ-અમારા યજ્ઞમ્-પૂર્વોક્ત ત્રણ પ્રકારના યજ્ઞોને તથા હૃવિઃ-આદાન-પ્રદાન યોગ્ય પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરીને સુખોને ઉપાવહ-અમારી સમીપ પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે પ્રાણીને જે કોઈ પદાર્થ પ્રાપ્ત કરવાની ઈચ્છા હોય, તેની સિદ્ધિ માટે પરમેશ્વરથી પ્રાર્થના તથા પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ. જેમ આ વેદમાં જગદીશ્વરના તથા અન્ય પદાર્થોના ગુણ અને સ્વભાવ પ્રતિપાદિત જોવામાં આવે છે; તેમ મનુષ્યોએ તેને અનુસાર કામ કરીને અગ્નિ આદિ પદાર્થોના ગુણોને જાણીને અનેક વિદ્યાઓ તથા વ્યવહારોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૧૦)

સ નુઃ સ્તવાન્ આ ભર ગાયત્રેણ નવીયસા। ર્ચિં વીરવતીમિષમ્ ॥ ૧૧ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હે ભગવન્ ! સઃ-જગદીશ્વર ! આપ નવીયસા-અત્યંત નવીન મંત્રપાઠ અને ગાનથી યુક્ત સ્તુતિથી અને ગાયત્રેણ-ગાયત્રી છંદવાળા પ્રગાથોથી સ્તવાન્-સ્તુતિ કરેલ નઃ-અમારા માટે રચિમ્-વિદ્યા અને ચક્રવર્તી રાજ્યથી ઉત્પન્ન થનાર ધન તથા જેમાં વીરવતીમ્-પ્રશસ્ત વીરો તથા વિદ્વાનોયુક્ત ઇષમ્-સજ્જનોને ઈચ્છા કરવા યોગ્ય ઉત્તમ ક્રિયાને આભર-સર્વત્રથી ધારણ કરો.

[ભૌતિક અગ્નિ]

સઃ-પૂર્વોક્ત ભૌતિક અગ્નિ નવીયસા-અત્યંત નવીન મંત્રપાઠ અને ગાનથી યુક્ત સ્તુતિથી અને ગાયત્રેણ-ગાયત્રી છંદવાળા પ્રગાથોથી સ્તવાન્-ગુણોની સાથે ગ્રહણ કરેલ નઃ-અમારા માટે રચિમ્-વિદ્યા અને ચક્રવર્તી રાજ્યની ઉત્પન્ન ધન તથા વીરવતીમ્-ઇષમ્-ઉક્ત ગુણવાળી ઉત્તમ ક્રિયાને આભર-સારી રીતે ધારણ કરે છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે ધર્માત્મા મનુષ્ય દ્વારા યથાવત્ શબ્દાર્થ-સંબંધ પૂર્વક વેદાધ્યયન દ્વારા અને વેદોક્ત કર્મ દ્વારા જગદીશ્વરને પ્રસન્ન કરવામાં આવેલ (હોય તેને તે) વિદ્યાદિ શ્રેષ્ઠ ધન શૂરવીરતાદિ ગુણ તથા ઉત્તમ ઈચ્છા પ્રદાન કરે છે. (૧૧)

अग्नें शुक्रेणं शोचिषा विश्वाभिर्देवहूतिभिः । इमं स्तोमं जुषस्व नः ॥ १२ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હે અગ્ને-પ્રકાશમય જગદીશ્વર ! આપ કૃપા કરીને શુક્રેણ-અનંત બળ અને શોચિષા-શુદ્ધિકારક પ્રકાશથી તથા વિશ્વામિઃ-સર્વ દેવહૂતિમિઃ-વિદ્વાનોના આહ્વાનોથી નઃ-અમારા ઇમમ્-એ પ્રત્યક્ષ સ્તોમમ્-સ્તુતિસમૂહનું જુષસ્વ-પ્રીતિપૂર્વક સેવન કરો.

[ભૌતિક અગ્નિ]

જે અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ વિશ્વામિઃ-સર્વ દેવહૂતિમિઃ-વેદવાણી રૂપ આહ્વાનોથી સમ્યક્ સિદ્ધ કરેલ શુક્રેણ-પોતાની કાન્તિ-ચમકીલા શોચિષા-પવિત્ર કરનાર પ્રકાશથી નઃ-અમારા ઇમમ્-એ સ્તોમમ્-પ્રશંસનીય કલા-કૌશલનું જુષસ્વ-સેવન કરે છે. (૧૨)

ભાવાર્થ : દિવ્ય વિદ્યાઓનો પ્રકાશક હોવાથી 'દેવ' શબ્દથી વેદનું ગ્રહણ થાય છે. જ્યારે મનુષ્યો સત્ય પ્રેમથી વેદવાણી દ્વારા જગદીશ્વરની સ્તુતિ કરે છે, ત્યારે તે-પરમેશ્વર પ્રસન્ન થઈને તે મનુષ્યોને વિદ્યા-દાનથી તૃપ્ત કરે છે.

એ ભૌતિક અગ્નિનો પણ વિદ્યા અને કલા-કૌશલથી સમ્યક્ પ્રયોગ કરવાથી ઈન્ધન = બળતણ આદિ પદાર્થોમાં રહીને સમસ્ત ક્રિયા-કાંડને વ્યાપ્ત કરે છે. (૧૨)

સંગતિ : આ બારમાં સૂક્તનાં અર્થની અગ્નિ શબ્દની યોજનાથી અગિયારમાં સૂક્તનાં અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૨)

સૂક્ત-૧૩

सुसमिद्धो न आ वह देवाँ अग्ने हविष्मते । होतः पावक यक्षि च ॥ १ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હે હોતઃ-પદાર્થોના દાતા, પાવક-પવિત્ર કરનાર અગ્ને-વિશ્વના ઈશ્વર ! જેથી સુસમિદ્ધઃ-સારી રીતે પ્રકાશિત આપ કૃપા કરીને નઃ-અમારા માટે ચ-અને હવિષ્મતે-પુષ્કળ હવિ અર્થાત્ પદાર્થોવાળા વિદ્વાનો માટે દેવાન્-દિવ્ય પદાર્થોને આવહ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવો છો, તેથી હું આપનો નિત્ય યક્ષિ-સંગ કરું છું.-સત્કાર કરું છું.

[ભૌતિક અગ્નિ]

જેથી એ પાવક-પવિત્રતાનો હેતુ હોતા-પદાર્થોને ગ્રહણ કરનાર સુસમિદ્ધઃ-સારી રીતે પ્રદીપ્ત અગ્ને-

ભૌતિક અગ્નિ ન:-અમારા ચ-તથા હવિષ્મતે-પુષ્કળ હવિ-પદાર્થોવાળા વિદ્વાનો માટે દેવાન્-દિવ્ય પદાર્થોને આવહ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેથી હું તે અગ્નિને નિત્ય યક્ષિ-કાર્ય સિદ્ધિ માટે તેનો સંગ-સમીપવર્તી કરુ છું. (૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પુષ્કળ પ્રકારની સામગ્રીનો સંગ કરીને વાહન આદિનું વહન કરનાર અગ્નિનો પ્રયોગ કરે છે, તેના માટે તે અગ્નિ અનેક વિધ સુખોને સિદ્ધ કરનાર બને છે. (૧)

મધુમન્તં તનૂનપાદ્ યજ્ઞં દેવેષુ નઃ કવે । અદ્યા કૃણુહિ વીતયે ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જે તનૂનપાદ્-શરીર અને ઔષધિ આદિ પદાર્થોના નાના-નાના ઉપાંગોની રક્ષા કરનાર કવે-માર્ગદર્શક અર્થાત્ સર્વ પદાર્થોનો દર્શક અગ્નિ છે, તે દેવેષુ-વિદ્વાનો અથવા દિવ્ય પદાર્થોથી સુખની વીતયે-પ્રાપ્તિ માટે અદ્યા-આજ ન:-અમારા મધુમન્તમ્-શ્રેષ્ઠ રસયુક્ત યજ્ઞમ્-યજ્ઞને કૃણુહિ-સિદ્ધ કરે છે. (૨)

ભાવાર્થ : જ્યારે અગ્નિમા હવિ આપવામાં આવે છે, ત્યારે તે વાયુ આદિને શુદ્ધ કરીને, શરીર તથા ઔષધિ આદિની રક્ષા કરીને, અનેક પ્રકારના રસોને ઉત્પન્ન કરે છે. તે શુદ્ધ પદાર્થોના ઉપભોગથી પ્રાણીઓની વિદ્યા, જ્ઞાન અને બળની વૃદ્ધિ પણ થાય છે. (૨)

નરાશંસમિહ પ્રિયમસ્મિન્ યજ્ઞ ઉપ હ્યે । મધુજિહ્વં હવિષ્કૃતમ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હું અસ્મિન્-એ યજ્ઞે-અનુષ્ઠાન કરવા યોગ્ય યજ્ઞમાં ઙ્હ-અમારા ભોગનું સ્થાન સંસારમાં-હવિષ્કૃતમ્-હવિ = હોમ પદાર્થોથી ઉત્પન્ન મધુજિહ્વમ્-જેની કાલી, કરાલી, મનોજવા, સુલોહિતા સુધૂમ્નવર્ણા, સ્ફુલિંગીની અને વિશ્વરૂપી એ સાત અતિ પ્રકાશમાન ચંચળ જ્વાળારૂપી જિહ્વા છે. પ્રિયમ્-સર્વ પ્રાણીઓને તૃપ્ત કરનાર નરાશંસમ્-જેના સુખની મનુષ્ય પ્રશંસા કરે છે, તેનો પ્રકાશ કરનાર અગ્નિને ઉપહ્યે-ઉપગત ભોગોને પ્રકાશિત કરવા માટે પ્રદીપ્ત કરું છું. (૩)

ભાવાર્થ : જે એ ભૌતિક અગ્નિ આ સંસારમાં યુક્તિપૂર્વક સેવન કરવાથી, પ્રાણીઓને પ્રિય = સુખકારી બને છે, તે અગ્નિની સાત જિહ્વા છે. (૧) 'કાલી' શ્વેતાદિ રંગોને પ્રકાશિત કરનારી, (૨) 'કરાલી'-દુઃખોને નષ્ટ કરનારી, (૩) 'મનોજવા'-મન સમાન વેગવાળી, (૪) 'સુલોહિતા'-સુંદર રક્તવર્ણવાળી, (૫) 'સુધૂમ્નવર્ણા'-સુંદર ધૂમાડાના રંગવાળી, (૬) 'સ્ફુલિંગીની'-પુષ્કળ ચિનગારીઓના કણોવાળી અત્રે પુષ્કળ અર્થમાં ઈતિ પ્રત્યય છે. (૭) 'વિશ્વરૂપી' સંપૂર્ણ રૂપવાળી. આ રીતે તે સાત પ્રકારની છે. પુનઃ એ જિહ્વા કેવી છે-તે દેવી = પ્રકાશમયી, લેલાયમાના = સર્વત્ર પ્રકાશ કરનારી છે. આ જિહ્વા = જોડુવા અર્થાત્ વારંવાર-ફરી-ફરી સર્વ પદાર્થોને ગ્રહણ કરનારી છે. (૩)

અગ્ને સુખતમે રથે દેવાં ઈંદિત આ વહ । અસિ હોતા મનુર્હિતઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ મનુ:-વિદ્વાનો દ્વારા ક્રિયા સિદ્ધિ માટે સ્વીકાર્ય હોતા-સુખોના

શિલ્પ વિદ્યામય યજ્ઞને **યજ્ઞતામ્** પ્રાપ્ત કરે છે. તા-તેઓ **સુજિહ્વો**-પૂર્વોક્ત સુંદર સાત જિહ્વાવાળા **હોતારા**-પદાર્થોને ગ્રહણ કરનારા **કવી**-કાન્ત દર્શનવાળા **દૈવ્યા**-દિવ્ય પદાર્થોમાં રહેનાર પ્રસિદ્ધ અને અપ્રસિદ્ધ અગ્નિની **ઉપહ્વયે**-સમીપ જવાની કામના કરું છું. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ કેવલ એકલી વિદ્યુત્ વેગ આદિ અનેક ગુણોથી યુક્ત છે, તેમ પ્રસિદ્ધ (= સ્થૂળ) અગ્નિ પણ છે. સમસ્ત પદાર્થોના દર્શનની કારણભૂત એ બન્ને અગ્નિનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરવાથી, શિલ્પ આદિ અનેક કાર્યોની સિદ્ધિમાં હેતુ બને છે. તેથી એ બન્ને દ્વારા મનુષ્યોએ સર્વ ઉપકારોને ગ્રહણ કરવા જોઈએ. (૮)

इडा सरस्वती मही तिस्रो देवीर्मयोभुवः । बर्हिः सीदन्त्वस्त्रिधः ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! આપ **इडा**-સ્તુતિ રૂપ વાણી, **सरस्वती**-અનેક પ્રકારના વિજ્ઞાન યુક્ત વાણી, **मही**-મહાન પૂજ્ય નીતિ અથવા ભૂમિ છે, તે **अस्त्रिधः**-હિંસારહિત અને **मयोभुवः**-સુખને ઉત્પન્ન કરનારી, **देवी**-પ્રકાશમાન તથા દિવ્ય ગુણોને પ્રાપ્ત કરવામાં હેતુ છે, જે **तिस्रः**-ત્રણ પ્રકારની વાણી છે, તેને **बर्हिः**-પ્રત્યેક ઘરમાં **सीदन्तु**-સ્થાપિત કરો. (૯)

ભાવાર્થ : વ્યક્તિઓને 'ઈડા' જે કે પઠન-પાઠનની પ્રેરણા આપનારી, સરસ્વતી જે ઉપદેશરૂપ જ્ઞાનનું પ્રકાશ કરવા અને 'મહી' જે સર્વ પ્રકારે પ્રશંસા કરવા યોગ્ય છે, આ ત્રણેય વાણી કુતર્કથી ખંડન કરવા યોગ્ય નથી તેમજ સર્વ સુખને માટે ત્રણેય પ્રકારની વાણી સદેવ સ્વીકાર કરવી જોઈએ, જેથી નિશ્ચળતાથી અવિદ્યાનો નાશ થાય. (૯)

इह त्वष्टारमग्रियं विश्वरूपमुपह्वये । अस्माकमस्तु केवलः ॥ १० ॥

[परमात्मा]

પદાર્થ : હું જે **विश्वस्वम्**-સર્વ વ્યાપક અથવા વિશ્વનું રૂપ **अग्रियम्**-સર્વ સાધનોમાં પ્રથમથી વિદ્યમાન, **त्वष्टारम्**-સર્વ દુઃખોનો નાશ કરનાર પરમાત્માને **इह**-આ ઘરમાં **उपह्वये**-સારી રીતે આહ્વાન કરુ છું-બોલાવું છું, તે જ **अस्माकम्**-અમારા ઉપાસકોના **केवलः**-કેવળ એક જ ઈષ્ટદેવ-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય **अस्तु**-છે.

[भौतिक अग्नि]

હું જે **विश्वस्वम्**-સર્વ રૂપ-ગુણવાળા **अग्रियम्**-સર્વ સાધનોમાં અગ્રણી, **त्वष्टारम्**-સર્વ પદાર્થોનું પોતાના તેજથી વિભાજન કરનાર ભૌતિક અગ્નિની **इह**-એ શિલ્પ વિદ્યામાં **उपह्वये**-જેમાં યુક્ત કરું છું, તે **अस्माकम्**-અમારા હવન તથા શિલ્પવિદ્યાના સાધનોમાં **केवलः**-આત્યુત્તમ સાધન **अस्तु**-છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યને અનંત આનંદ પ્રદાન કરનાર ઈશ્વરની ઉપાસના કરવી જોઈએ, અને જે અગ્નિ સર્વ પદાર્થોનો છેદક, રૂપ ગુણ યુક્ત, સર્વ દ્રવ્યોનો પ્રકાશક, અત્યુત્તમ તથા શિલ્પવિદ્યાનું અનુપમ સાધન છે, તે અમારા માટે યથાવત્ ઉપયોગ કરવા યોગ્ય છે. તેમ સમજવું. (૧૦)

अव सृजा वनस्पते देव देवेभ्यो हविः । प्रदातुरस्तु चेतनम् ॥ ११ ॥

ऋग्वेदभाष्य

૭૩

પદાર્થ : જે **દેવ**-ફળ આદિનો દાતા, **વનસ્પતિ**:-વન અર્થાત્ વૃક્ષ, ઔષધિ આદિના સમૂહોને વર્ષાના કારણે પાલન કરનાર છે, તે પુણ્ય રહિત ફળયુક્ત વનસ્પતિ **દેવેભ્યઃ**:-દિવ્યગુણોની પ્રાપ્તિ માટે તે **હવિ**:-હવન યોગ્ય પદાર્થોને **અવસૃજ**-ઉત્પન્ન કરે છે, તે **પ્રદાતુઃ**:-સર્વ પદાર્થોની શુદ્ધિ કરનાર વિદ્વાનને **ચેતનમ્**-ચેતનાના સાધન વિજ્ઞાનને ઉત્પન્ન કરનાર **અસ્તુ**-હોય છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પૃથિવી અને જળમય સર્વ પદાર્થોને યુક્તિપૂર્વક સંપ્રયોગ કરેલા, અગ્નિ પ્રદીપ્ત બની, રોગોને નિર્મૂલ કરીને, બુદ્ધિ અને બળ પ્રદાન કરનાર હોવાથી વિજ્ઞાન વૃદ્ધિના હેતુ બનીને દિવ્ય ગુણોને પ્રકાશિત કરે છે. (૧૧)

સ્વાહાં યજ્ઞં કૃણોતનેન્દ્રાય યજ્વનો ગૃહે। તત્ર દેવાં ઉપ હ્યયે ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે શિલ્પ વિદ્યાના સિદ્ધ યજ્ઞના ઋત્વિક જનો ! તમે જ્યાં **યજ્ઞનઃ**-યજમાનના **ગૃહે**-નિવાસ સ્થાન, યજ્ઞશાલા પરમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે **દેવાઃ**:-પરમ વિદ્વાનોને બોલાવીને **સ્વાહા**-શુભ કર્મ સમૂહ રૂપ **યજ્ઞમ્**-ત્રણેય પ્રકારના યજ્ઞો **કૃણોતન**-કરો છો તેમ **તત્ર**-તે શુભ કર્મોમાં હું તેઓને (વિદ્વાનોને) **ઉપહ્યયે**-પ્રાર્થના સાથે મારી સમીપ બોલાવું છું. (૧૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય વિદ્યાવાન અને ક્રિયાવાન બનીને, ઉત્તમ વિચારપૂર્વક, ક્રિયાસમૂહથી યુક્ત કર્મ ઉત્પન્ન થનાર કર્મ કાન્ડને પ્રત્યેક ઘરમાં નિત્ય કરે, તેમાં વિદ્વાનોને નિમંત્રિત કરીને અથવા સ્વયં તેઓની પાસે જઈને તેની વિદ્યા અને કલા-કૌશલને ગ્રહણ કરે, તેમ વિદ્યા અને કલા-કૌશલની કદી ઉપેક્ષા ન કરો, એમ પરમેશ્વર ઉપદેશ આપે છે. (૧૨)

સંગતિ : આ તેરમા સૂક્તના અર્થની અગ્નિ આદિ દિવ્ય પદાર્થોથી ઉપકાર ગ્રહણ કરવાની ઉક્ત પ્રકારથી બારમાં સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૩)

સૂક્ત-૧૪

એભિરગ્ને દુવો ગિરો વિશ્વેભિઃ સોમપીતયે। દેવેભિર્યાહિ યક્ષિં ચ ॥ ૧ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હે **અગ્ને**-સર્વત્ર વ્યાપ્ત જગદીશ્વર ! **ત્વમ્**-આપ **એભિઃ**:-એ **વિશ્વેભિઃ**:-સર્વ **દેવેભિઃ**:-દિવ્યગુણો અને વિદ્વાનોની સાથે **સોમપીતયે**-સુખકારક પદાર્થોના પાન માટે **દુવઃ**:-સત્કાર આદિ વ્યવહાર તથા **ગિરઃ**:-વેદવાણીઓને **યાહિ**-પ્રાપ્ત કરો.

[ભૌતિક અગ્નિ]

જે એ **અગ્ને**-ભૌતિક અગ્નિ **એભિઃ**:-ઓ **વિશ્વેભિઃ**:-સર્વ **દેવેભિઃ**:-દિવ્ય ગુણો અને પદાર્થોની સાથે **સોમપીતયે**-જેમાં સુખકારક પદાર્થોનું પાન છે, તે યજ્ઞને માટે **દુવઃ**:-સત્કારાદિ વ્યવહાર તથા **ગિરઃ**:-વેદવાણીઓને **યાહિ**-પ્રાપ્ત કરે છે, તેને **એભિઃ**:-એ **વિશ્વેભિઃ**:-સર્વ **દેવેભિઃ**:-વિદ્વાનોની સાથે **સોમપીતયે**-ઉત્તમ સોમના પાન માટે **યક્ષિં**-સ્વીકાર કરું છું, તથા ઈશ્વરના **દુવઃ**:-સત્કારાદિ વ્યવહાર અને વેદવાણીઓને **યક્ષિં**-સંગત અર્થાત્ મન અને કામોમાં સમ્યક્ રીતે સદા યથાશક્તિ ધારણ કરું છું. (૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યોને જે-જે વ્યવહારિક અને આધ્યાત્મિક સુખોની અભિલાષા હોય (તેઓ

અને) જે મનુષ્યો દ્વારા વાયુ, જળ અને પૃથિવીમય યન્ત્રયુક્ત યાનોથી અગ્નિને સંગત કરીને ક્રિયા કરવામાં આવે છે અને ઈશ્વરની આજ્ઞાનું સેવન, વેદોનું અધ્યયન-અધ્યાપન અને તેમાં બતાવવામાં આવેલું અનુષ્ઠાન કરે છે, તેઓ જ સર્વત્રથી આનંદને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧)

આ ત્વા કળ્વા અહૂષત ગૂણન્તિ વિપ્ર તે ધિયઃ । દેવેભિર્ગ્ન આ ગંહિ ॥ ૨ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિજ્ઞાન સ્વરૂપ ઈશ્વર ! જેમ કળ્વા:-મેધાવી વિદ્વાન-ત્વા-આપની ગૂણન્તિ-પૂજા કરે છે, અહૂષત-પ્રાર્થના કરે છે-બોલાવે છે, તેમ અમે પણ આપની પૂજા અને આહ્વાન કરીએ છીએ.

હે વિપ્ર-વિવિધ જ્ઞાનથી પદાર્થોનું પૂરણ કરનાર મેધાવી વિદ્વાન્ ! જેમ તે-આપની ધિયઃ-બુદ્ધિ જે ઈશ્વરના ગૂણન્તિ-ગુણોની સ્તુતિ અને પ્રાર્થના કરે છે, તેમ અમે સર્વ મળીને તેની જ નિત્ય ઉપાસના કરતા રહીએ. (૨)

હે મંગલમય પરમાત્મન્ ! આપ કૃપા કરીને દેવિભિઃ-દિવ્ય ગુણોવાળા પદાર્થો અથવા વિદ્વાનોની સાથે અમને આગહિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાઓ.

[ભૈતિક અગ્નિ]

હે વિપ્ર-વિવિધ જ્ઞાનથી પદાર્થોનું પૂરણ કરનાર વિદ્વાન્ ! જેમ કળ્વા:-જેમ અન્ય મેધાવી વિદ્વાન અગ્ને-અગ્નિની ગૂણન્તિ-સ્તુતિ કરે છે. અહૂષત-શિલ્પવિદ્યા માટે સ્પર્ધા કરે છે, તેમ તું પણ સ્તુતિ અને સ્પર્ધા કર.

જેમ અગ્ને-એ અગ્નિ દેવેભિઃ-વિદ્વાનોની સહાયતાથી આગહિ-પોતાના ગુણોને સારી રીતે જણાવે છે અને જે અગ્નિનું તે-તારી ધિયઃ-બુદ્ધિ ગૂણન્તિ-સ્તુતિ કરે છે, આહ્વાન કરે છે, એટલા માટે અહૂષત-તું તેના દ્વારા પુષ્કળ કાર્યોને સિદ્ધ કર. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ આ સૃષ્ટિમાં ઈશ્વર રચિત પદાર્થોને જોઈને એમ કહેવું જોઈએ કે, એ સર્વ ધન્યવાદ અને સ્તુતિઓ ઈશ્વરને માટે જ સંગત થાય છે. (૨)

इन्द्रवायू बृहस्पतिं मित्राग्निं पूषणं भगम् । अदित्यान् मारुतं गुणम् ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે કળ્વા:-મેધાવી વિદ્વાનો ! આપ ક્રિયા તથા આનંદની સિદ્ધિને માટે ઇન્દ્રવાયૂ-ઈન્દ્ર = વિદ્યુત, વાયુ = પવન, બૃહસ્પતિમ્-મહાનતમ પદાર્થોના પાલનનો હેતુ સૂર્ય પ્રકાશ, મિત્રા-પ્રાણ, અગ્નિમ્-ભૌતિક અગ્નિ, પૂષણમ્-ઔષધિ આદિના સમૂહની પુષ્ટિ કરનાર, ચંદ્રલોક, ભગમ્-સુખોની પ્રાપ્તિ કરાવનાર ચક્રવર્તી આદિ રાજ્ય ધન, અદિત્યાન્-બાર મહિના, માસ્તમ્-વાયુ સંબંધી ગણમ્-સમૂહનું અહૂષત-ગ્રહણ તથા ગૂણાન્તિ-સારી રીતે જાણીને સંયુક્ત કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઈશ્વર રચિત એ ઈન્દ્ર આદિ પદાર્થોના ગુણોને જાણીને ક્રિયાઓમાં સમ્યક્ પ્રયોગ કરે છે, તેઓ સુખી બનીને સર્વ-પ્રાણીઓને સુખી કરે છે. (૩)

प्र वीं ध्रियन्तु इन्द्रवो मत्सरा मादयिष्णवः । द्रप्सा मध्वश्चमूषदः ॥ ४ ॥
अग्नेवेदभाष्य

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ મેં ધારણ કરેલ, પૂર્વમંત્રોક્ત **ઇન્દ્ર** = વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થો કહેલ છે. તેથી **મધ્વઃ**-મધુર ગુણવાળા **મત્સરાઃ**-ઉત્તમ આનંદના સાધન **માદયિષ્ણવઃ**-આનંદના નિમિત્ત **દ્રપ્સાઃ**-બળ અથવા સેનાને આનંદ કરાવનાર **ચમૂષદઃ**-વિકટ શત્રુઓની સેવામાં રહેનાર, **ઇન્દવઃ**-રસવાન સોમ વગેરે ઔષધિઓના સમૂહના સમૂહોને **વઃ**-તમારા માટે **પ્ર શ્રિયન્તે**-મારા માટે એ પદાર્થોને ધારણ કરો. (૪)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર સર્વ મનુષ્યોને કહે છે કે-પૂર્વ મંત્રમાં પ્રતિપાદિત અને મારા દ્વારા રચવામા આવેલ વિદ્યુત્ આદિના દ્વારા જે પદાર્થો પુષ્ટ કરવામાં આવે છે, તેને જે મનુષ્યો વૈદ્યક અને શિલ્પશાસ્ત્રની રીતે ઉત્તમ રસ ઉત્પન્ન કરવા અને શિલ્પકર્મની સિદ્ધિ દ્વારા ઉત્તમ સેનાના નિર્માણથી, રોગોનો નાશ અને વિજય પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ અનેક રીતે આનંદ ભોગવે છે. (૪)

ઈઠ્ઠતે ત્વામવસ્યવઃ કળ્વાસો વૃક્તર્બર્હિષઃ । હ્વિષ્મન્તો અરુકૃતઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! અમે **હ્વિષ્મન્તઃ**-હવિ અર્થાત્ લેવા અને ભોજન કરવાના પદાર્થો વિદ્યમાન છે, **અરુકૃતઃ**-જે સર્વ પદાર્થોને અલંકૃત કરનાર છે, **અવસ્યવઃ**-જેનો પોતાની રક્ષાની ઈચ્છાનો સ્વભાવ છે, તેઓ **કળ્વાસઃ**-બુદ્ધિમાન અને **વૃક્તર્બર્હિષઃ**-યથાકાળ યજ્ઞ કરનાર વિદ્વાન જે **ત્વામ્**-સર્વ જગતના ઉત્પત્તિકર્તા, ધારક જગદીશ્વરની **ઇડતે**-સ્તુતિ કરે છે, તેની સ્તુતિ કરે. (૫)

ભાવાર્થ : હે સકળ સૃષ્ટિના ઉત્પાદક જગદીશ્વર ! જે કારણે આપે સર્વ પ્રાણીઓના સુખને માટે સર્વ પદાર્થો રચીને ધારણ કરેલા છે, તેથી આપની જ સ્તુતિ કરતાં અને સર્વની રક્ષાની ઈચ્છા કરતાં તથા શિક્ષા અને વિદ્યા દ્વારા સર્વ મનુષ્યોને સુભૂષિત કરતાં અમે નિત્ય પ્રયત્ન કરીએ છીએ. (૫)

ઘૃતપૃષ્ઠા મનોયુજો યે ત્વા વર્હન્તિ વર્હયઃ । આ દેવાન્ત્સોમપીતયે ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે યુક્તિથી સંયુક્ત કરેલ ચતુર્થ મંત્રોક્ત **ઘૃતપૃષ્ઠાઃ**-જેનો પૃષ્ઠ અર્થાત્ આધાર જળ છે. **મનોયુજઃ**-વિજ્ઞાનથી યુક્ત અર્થાત્ શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનથી રથોમાં યુક્ત કરેલ, **વર્હયઃ**-વાર્તા, પદાર્થ અને યાનોને દેશાન્તરમાં પહોંચાડનાર વિદ્યુત્ આદિ છે, જે **સોમપીતયે** સોમ અર્થાત્ પદાર્થોના રક્ષા-સ્થાન યજ્ઞને માટે **ત્વાત્**-તે અલંકૃત કરવા યોગ્ય યજ્ઞને તથા **દેવાન્**-દિવ્યગુણ યુક્ત ભોગો અથવા વસંત આદિ ઋતુઓને **આવર્હન્તિ**-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેને સર્વ મનુષ્યોએ યથાવત્ જાણીને કાર્ય સિદ્ધિ માટે પ્રયુક્ત કરવા જોઈએ. (૬)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થો છે, તેઓજ જળને ઉપર-નીચે અર્થાત્ ઉપર-અન્તરિક્ષમાં પહોંચાડીને ત્યાંથી નીચે વરસાવે છે, તાર નામક યંત્રથી સંચાલિત વિદ્યુત્ મન સમાન વેગથી વાર્તાઓ-સંદેશોને દેશાન્તરમાં પહોંચાડે છે. એ જ રીતે સર્વ પદાર્થો અને સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર એ વિદ્યુત્ આદિ છે. એવો ઈશ્વરનો ઉપદેશ છે. (૬)

તાન્ યજંત્રાં ઋતાવૃધોઽગ્ને પત્નીવતસ્કૃધિ । મધ્વઃ સુજિહ્વ પાયય ॥ ૭ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હે અગ્ને-જગદીશ્વર ! આપ યજત્રાન્-જે કળા આદિ પદાર્થોમાં સંયુક્ત કરવા યોગ્ય ત્રહાવૃધઃ-સત્યતા અને ઉત્તમ કર્મોની વૃદ્ધિ કરનાર છે, તાન્-તે વિદ્યુત્ આદિ શ્રેષ્ઠ પદાર્થોને ઉત્પન્ન કરો છો, તેનાથી નઃ-અમને પત્નીવતઃ-પ્રશસ્ત પત્નીવાળા કૃધિ-બનાવો.

હે સુજિહ્-ઉત્તમ ધારણ શક્તિવાળા ઈશ્વર ! આપ મધ્વઃ-ઉત્પન્ન કરેલ મધુરાદિ ગુણોથી યુક્ત પદાર્થ-સમૂહના રસનું કૃપા કરીને પાયવઃ-પાન કરાવો.

(ભૌતિક અગ્નિ)

સુજિહ્-જેની જ્વાળામાં ઉત્તમ રીતે પદાર્થોનો હોમ કરવામાં આવે છે, તે અગ્નિ-ભૌતિક અગ્નિ ત્રહાવૃધઃ-ઋત અર્થાત્ જળ, સત્ય અને યજ્ઞના વર્ધક, યજત્રાન્-કળાઓમાં સંયુક્ત કરવા યોગ્ય તાન્-વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોને કૃધિ-બનાવે છે, મધ્વઃ-મધુર પદાર્થોના રસનું પાયવ-પાન કરાવે છે. અર્થાત્ તેના પાનમાં હેતુ છે. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરની ઉપાસનાની સાથે સારી રીતે અગ્નિના પ્રયોગ દ્વારા રસો અને સારા પદાર્થોને તૈયાર કરીને તથા ઉપકાર-કાર્ય કરીને ગૃહાશ્રમમાં સર્વ કાર્યોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૭)

ये यजत्रा य ईड्यास्ते ते पिबन्तु जिह्वया । मधोऽग्ने वर्षत्कृति ॥ ८ ॥

પદાર્થ : યે-જે મનુષ્યો વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થો યજત્રાઃ-કળાદિમાં સંયુક્ત કરે છે, તે-તેઓ અને યે-જે ગુણવાળા ઈડ્યાઃ-સર્વત્ર પ્રકારથી શોધવા યોગ્ય છે તે-તેઓ જિહ્વા-જ્વાળારૂપી શક્તિથી અગ્ને-અગ્નિમાં વર્ષત્કૃતિ-વજ્રમાં વિશેષ કામ કરવાથી મધોઃ-મધુર ગુણોના અંશોને પિબન્તુ-યથાવત્ પાન કરે છે. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ આ સંસારમાં સર્વ સંયુક્ત પદાર્થો (ના વિષય)માં બે પ્રકારનું કાર્ય કરવું જોઈએ. એક (તેના) ગુણોનું જ્ઞાન કરવું અને બીજું તેનાથી કાર્ય સિદ્ધિ કરવી જોઈએ.

જે વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થો સર્વ મૂર્ત પદાર્થોની રસને સંગ્રહિત કરીને પુનઃ તેને છોડી દે છે, તેની શુદ્ધિ માટે સુગંધિત પદાર્થોનો (અગ્નિમાં) પ્રક્ષેપ (= હોમ) નિત્ય કરવો જોઈએ. જેથી સુખસાધક બને છે. (૮)

आकीं सूर्यस्य रोचनाद् विश्वान् देवाँ उषर्बुधः । विप्रो होतेह वक्षति ॥ ९ ॥

પદાર્થ : જે હોતા-હોમમાં નાખવા યોગ્ય પદાર્થોના દાતા વિપ્રઃ-મેધાવી વિદ્વાન-સૂર્યસ્ય-ચરાચરના આત્મા પરમેશ્વર અથવા સૂર્યલોકના રોચનાત્-પ્રકાશથી ઇહ-આ જન્મ અથવા લોકમાં ઉષર્બુધઃ-પ્રાતઃ-કાળને પ્રાપ્ત કરીને સુખોનો બોધ કરાવનાર વિશ્વાન્-સમસ્ત દેવાન્-શ્રેષ્ઠ ભોગોને વક્ષતિ-પ્રાપ્ત થાય છે અથવા કરાવે છે, તે જ સર્વ વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરીને આનંદયુક્ત બને છે. (૯)

ભાવાર્થ : જો ઈશ્વર એ પદાર્થોને ઉત્પન્ન ન કરે, તો કોઈ પણ મનુષ્ય તેનાથી ઉપકાર ગ્રહણ કરી શકતો નથી.

ન કરી શકે. જ્યારે મનુષ્યો નિદ્રાધીન બને છે, ત્યારે કોઈ પણ ભોગ્ય પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી, પરંતુ જાગૃત થતાં ભોગ કરવામાં સમર્થ બને છે, તેથી (આ મંત્રમાં) 'ઉષર્બુધ' કહેલ છે. એ પદાર્થોથી બુદ્ધિમાન પુરુષ જ ક્રિયા સિદ્ધિ કરી શકે છે, અન્ય નહિ. (૯)

વિશ્વૈભિઃ સોમ્યં મધ્વગ્નૃન્દ્રેણ વાયુનાં। પિબાં મિત્રસ્ય ધામ્ભિઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : અગ્ને-જે અગ્નિ **ઇન્દ્રેણ**-પરમ ઐશ્વર્ય કરાવનાર **વાયુના**-સ્પર્શ અને ગમન કરાવનાર પવનની સહાયતાથી **મિત્રસ્ય**-સર્વમાં રહેલ તથા સર્વમાં પ્રાણભૂત વાયુના **વિશ્વૈભિઃ**-સર્વ **ધામ્ભિઃ** સ્થાનોથી **સોમ્યમ્**-સોમનું નિર્માણ કરવા યોગ્ય **મધુ**-મધુરાદિ ગુણોથી યુક્ત પદાર્થોનું **પિબ**-પાન કરે છે, તેને ગ્રહણ કરે છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : એ વિદ્યુત્ નામક અગ્નિ બ્રહ્માંડમાં રહેલ વાયુ તથા શરીરમાં રહેલ પ્રાણોની સાથે રહીને સર્વ પદાર્થોથી રસને ગ્રહણ કરીને (ફરી પાછો) કાઢે છે. તેથી એ અગ્નિ શિલ્પનું મુખ્ય સાધન છે. (૧૦)

ત્વં હોતા મનુર્હિતોઽગ્નેં યજ્ઞેષુ સીદસિ। સેમં નોં અધ્વરં યજ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે **અગ્ને**-જે આપ અત્યંત પૂજનીય જગદીશ્વર ! **મનુર્હિતઃ**-મનુષ્ય આદિને ધારણ કરનાર, **હોતા**-સર્વ પદાર્થોના દાતા, **ત્વમ્**-જે **યજ્ઞેષુ**-ક્રિયાકાંડથી લઈને વિજ્ઞાન સુધી ગ્રહણ કરવા યોગ્ય યજ્ઞોમાં **સીદસિ**-વિદ્યમાન રહો છો, **સઃ**-તે આપ **નઃ**-અમારા **ઇમમ્**-એ **અધ્વરમ્**-હિંસા રહિત સુખના હેતુ યજ્ઞને **યજ**-સંગત કરો અર્થાત્ તેને સિદ્ધ કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે ઈશ્વરે મનુષ્ય-વ્યક્તિ આદિને ઉત્પન્ન કરીને ધારણ કરેલ છે, જેથી એ કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનના સર્વ પ્રકરણોમાં પૂજ્યતમ છે, તેથી તે જ આ સંસારરૂપી યજ્ઞને સંગતિયુક્ત કરીને અમને સુખી કરે છે. (૧૧)

યુક્ષ્વા હ્યર્ષુષી રથેં હરિતોં દેવ રોહિતઃ। તામિર્દેવાં ઙ્હાવહ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે **દેવ**-વિદ્વાન્ ! આપ **રથે**-પૃથિવી, સમુદ્ર અને અન્તરિક્ષમાં આવાગમન માટે વિમાનાદિ રથમાં **રોહિતઃ**-ઊંચા-નીચા સ્થાનમાં ઉતારવા-ચઢાવવા **હરિતઃ**-પદાર્થોને હરનારી **અસ્મીઃ**-લાલ વર્ણયુક્ત તથા ગતિ કરાવનારી જ્વાળાઓને **યુક્ષ્વ**-યુક્ત કરો, **તામિઃ**-તેનાથી **ઇહ**-આ સંસારમાં **દેવાન્**-ક્રિયાથી સિદ્ધ થનાર દિવ્ય વ્યવહારોને **આવહ**-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવો. (૧૨)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ, અગ્નિ આદિ પદાર્થોનો કલાયંત્રો અને યાનોમાં સંયોગ કરીને, તેના દ્વારા આ સંસારમાં મનુષ્યોનાં સુખ માટે દિવ્ય પદાર્થો પ્રકાશિત કરવા જોઈએ. (૧૨)

સંગતિ : આ ચૌદમા સૂક્તની સર્વ દોષોના ગુણોનો પ્રકાશ કરવાથી તથા ક્રિયા માટે સમુચ્ચયથી તેરમા સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૪)

સૂક્ત-૧૫

૭૮

અઽગ્વેદભાષ્ય

इन्द्र सोमं पिबं ऋतुना त्वां विशन्त्विन्दवः । मत्सरासस्तदोकसः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે **ઇન્દ્ર**-સમયના વિભાગને કરનાર સૂર્યલોક **ઋતુના**-વસંત આદિ ઋતુઓની સાથે **સોમમ્**-ઔષધિ આદિ પદાર્થોના રસને **પિબ**-પાન કરે છે, **તદોકસઃ**-જેના અન્તરિક્ષ, વાયુ, આદિ નિવાસ સ્થાન છે, **મત્સરાસઃ**-આનંદને ઉત્પન્ન કરનાર છે, તે **ઇન્દવઃ**-ઋતુઓની સાથે **ત્વા**-પ્રાણી અથવા અપ્રાણી રૂપ પદાર્થ અથવા સૂર્યના કિરણ-સમૂહમાં પ્રતિક્ષણ **આવિશન્તુ**-સર્વત્રથી પ્રવેશ કરે છે. (૧)

ભાવાર્થ : આ સૂર્યવર્ષ, ઉત્તરાયન, દક્ષિણાયન, વસંતાદિ ઋતુઓ, (મહિનાઓ), શુકલ અને કૃષ્ણપક્ષ, દિવસ અને રાત, કલા, કાષ્ઠા અને નિમેષ આદિ કાળ વિભાગોનું નિર્માણ કરે છે.

આ વિષયમાં મહારાજ મનુ કહે છે કે - અઢાર નિમેષની એક કાષ્ઠા, ત્રીસ કાષ્ઠાઓની એક કલા, ત્રીસ કલાઓનું એક મુહૂર્ત (= ૪૮ મિનિટ) ત્રીસ મુહૂર્તોના એક દિવસ અને રાત (= ૧૪૪૦ મિનિટ અર્થાત્ ૨૪ કલાક) (તે સૂર્ય) એ (કાળ વિભાગો)ની સાથે સર્વ ઔષધિઓના રસોને સર્વ સ્થાનોમાંથી જળનું આકર્ષણ કરે છે-ખેંચે છે. તે (જળ) કિરણોની સાથે આકાશમાં રહે છે અને વાયુની સાથે આવાગમન કરે છે. (૧)

મરુતઃ પિબંત ઋતુનાં પોત્રાદ્ યજ્ઞં પુનીતન । યૂયં હિ ષ્ઠા સુદાનવઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જે **મસ્તઃ**-પવન **ઋતુના**-ઋતુઓની સાથે સર્વ રસોનું **પિબંત**-પાન કરે છે, તે જ **પોત્રાત્**-પોતાના પવિત્રતાના ગુણથી **યજ્ઞમ્**-ઉક્ત ત્રણ પ્રકારના યજ્ઞો **પુનીતન**-પવિત્ર કરે છે, **હિ**-જે કારણે **યૂયમ્**-તે **સુદાનવઃ**-પદાર્થોનું ઉત્તમ દાન આપનાર **સ્થ**-છે, તેથી યુક્તિપૂર્વક યોજવામાં આવેલ કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે. (૨)

ભાવાર્થ : ઋતુઓના અનુક્રમથી વાયુમાં પણ ગુણ ઉત્પન્ન થાય છે, તે (ગુણો)થી સંપન્ન (એ વાયુ) સર્વ ત્રસરેણુ આદિની તથા ક્રિયા-ચેષ્ટાઓનો હેતુ બને છે; અગ્નિમાં સુર્ગધિત આદિ (પદાર્થોના) હોમના દ્વારા પવિત્ર બનીને સર્વને સુખયુક્ત કરીને તે (વાયુ) આદાન-પ્રદાન કરવામાં નિમિત્ત છે .(૨)

અભિ યજ્ઞં ગૃણીહિ નો ગ્નાવો નેષ્ટઃ પિબં ઋતુનાં । ત્વં હિ રત્નધા અસિ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! **નેષ્ટઃ**-શુદ્ધિ અને પુષ્ટિના હેતુથી સર્વ પદાર્થોને પ્રકાશિત કરનારી વિદ્યુત્ **ઋતુના**-ઋતુઓની સાથે રસોનું **પિબ**-પાન કરે છે, **હિ**-જેથી **રત્નધાઃ**-રત્ન અર્થાત્ રમણના માટે પૃથિવી આદિ પદાર્થોને ધારણ કરનારી **અસિ**-છે, **ત્વમ્**-તે **ગ્નાવઃ**-સર્વ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ કરાવનારી **નઃ**-અમારા એ **યજ્ઞમ્**-યજ્ઞને **અભિગૃણીહિ**-સર્વ રીતે ગ્રહણ કરે છે, તેથી તું તેનાથી સર્વ કાર્યો સિદ્ધ કર. (૩)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યુત્ અગ્નિ સૂક્ષ્મ અવસ્થા છે, તે સર્વ સ્થૂળ પદાર્થોના અવયવોમાં વ્યાપ્ત થઈને તેનું ધારણ અથવા ઇંદન કરે છે, તેથી જ પ્રત્યક્ષ અગ્નિ પ્રકટ થાય છે અને તેમાં વિલય પામે છે. (૩)

अग्नें देवाँ इहावह सादया योनिषु त्रिषु। परिं भूष पिब ऋतुना ॥ ४ ॥

पदार्थ : જે અગ્ને-ભૌતિક વિદ્યુત્ અથવા પ્રસિદ્ધ અગ્નિ ઇવ-આ સંસારમાં ઋતુના-ઋતુઓની સાથે ત્રિષુ-નામ, જન્મ અને સ્થાન એ ત્રણ પ્રકારના લોકમાં તથા યોનિષુ-કાર્યો અને કારણોમાં દેવાન્-સર્વ દિવ્યગુણ યુક્ત પદાર્થોને આ + વહ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવે છે, સાદય-સ્થાપિત કરે છે અથવા નષ્ટ કરે છે, પરિ + ભૂષ-સર્વત્રથી અલંકૃત કરે છે. સર્વ પદાર્થોથી રસનું પિવ-પાન કરે છે. (૪)

ભાવાર્થ : દાહગુણ યુક્ત એ અગ્નિ, રૂપના પ્રકાશન દ્વારા ઉપર, નીચે અને મધ્યમાં રહેલાં સર્વ પદાર્થોને સુશોભિત કરે છે-તથા હવનમાં અને શિલ્પ વિદ્યામાં પ્રયુક્ત કરેલ દિવ્ય સુખોને પ્રકાશિત કરે છે. (૪)

ब्राह्मणादिन्द्र राधसः पिबा सोममृतूरनु। तवेद्धि सख्यमस्तृतम् ॥ ५ ॥

પદાર્થ : જે ઇન્દ્ર-ઐશ્વર્ય અને જીવનનો હેતુ વાયુ, બ્રાહ્મણાત્-મહાન બ્રહ્માંડના અવયવ રાધસઃ-પૃથિવી આદિ લોકોના ધનથી અનુઋત્-પોતાના પ્રભાવથી પદાર્થોના રસોને હરનાર વસંત આદિ ઋતુઓના અનુક્રમથી સોમમ્-સર્વ પદાર્થોના રસોનું પિવ-પાન કરે છે, ગ્રહણ કરે છે, તેથી હિ-નિશ્ચયથી તવ-તે વાયુની પદાર્થોની સાથે અસ્તૃતમ્-અવિનાશી સખ્યમ્-મિત્રતા છે. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, સંસારના રચયિતા ઈશ્વરે જે-જે વાયુ આદિ પદાર્થોમાં જે-જે નિયમ સ્થાપિત કરેલ છે, તેને જાણીને કાર્યો સિદ્ધ કરવા જોઈએ અને તેની સિદ્ધિથી સર્વ ઋતુઓમાં સર્વ પ્રાણીઓના અનુકૂળ હિતનું સંપાદન કરવું જોઈએ. યુક્તિપૂર્વક સેવન કરેલ એ મિત્ર સમાન અને અયુક્તિપૂર્વક સેવન કરવાથી શત્રુ સમાન બને છે. એમ સમજવું જોઈએ. (૫)

युवं दक्षं धृत्व्रत मित्रावरुण दूळभम्। ऋतुना यज्ञमाशाथे ॥ ६ ॥

પદાર્થ : યુવમ્-જે ધૃતવ્રતૌ-બળને ધારણ કરનાર મિત્રાવરુણૌ-પ્રાણ અને ઉદાન ઋતુના-ઋતુઓની સાથે દૂલ્ભમ્-શત્રુઓ દ્વારા દુઃખથી ઘર્ષણ કે દબાવવા યોગ્ય દક્ષમ્-બળને યજ્ઞમ્-પૂર્વોક્ત ત્રણ પ્રકારના યજ્ઞને આશાથે-પ્રાપ્ત કરે છે. (૬)

ભાવાર્થ : સર્વના મિત્ર, બાહ્ય ગતિવાળો પ્રાણ અને આભ્યન્તર ગતિવાળો વરુણ અર્થાત્ ઉદાન કહેવાય છે, એ બન્નેને પ્રાણીઓ દ્વારા સમસ્ત જગત નામક યજ્ઞ અને બળ ઋતુઓના યોગથી ધારણ કરીને વ્યાપ્ત કરવામાં આવે છે, જેથી સમસ્ત વ્યવહારો સિદ્ધ થાય છે. (૬)

द्रविणोदा द्रविणसो ग्रावहस्तासो अध्वरे। यज्ञेषु देवमीळते ॥ ७ ॥

પદાર્થ : દ્રવિણોદાઃ-જે વિદ્યા, બળ, રાજ્ય અને ધનના દાતા તથા દિવ્યગુણયુક્ત પરમેશ્વર છે વળી ઉત્તમ ધન આદિ પદાર્થ આપનાર દિવ્યગુણયુક્ત ભૌતિક અગ્નિ છે, જે દેવમ્-દેવને ગ્રાવહસ્તાસઃ-ગ્રાવા અર્થાત્ સ્તુતિ, સમૂહ, ગ્રહણ અથવા હનન જે (પરમેશ્વર)ના હાથમાં છે. વળી, ગ્રાવા યજ્ઞ અને શિલ્પ વિદ્યાની સિદ્ધિ માટે પત્થર આદિ જે (અગ્નિ)ના હાથમાં છે. તે દ્રવિણસઃ-યજ્ઞ કરનાર ઋત્વિક અથવા દ્રવ્ય સંપાદક વિદ્વાન છે, તે અધ્વરે-અનુષ્ઠાન કરવા યોગ્ય, ક્રિયા સાધ્ય હિંસાને અયોગ્ય

યજ્ઞેષુ-અગ્નિહોત્ર આદિથી અશ્વમેઘ સુધી યજ્ઞ, અથવા શિલ્પવિદ્યામય યજ્ઞોમાં ઈંઝલે-પૂજા અથવા તે (અગ્નિ)ના ગુણોનું અન્વેષણ કરીને સંયુક્ત કરે છે, તે મનુષ્ય સદા આનંદિત રહે છે. (૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ સર્વ કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનકાંડો દ્વારા સાધ્ય યજ્ઞોમાં પરમેશ્વરની પૂજા (ઉપાસના) કરવી જોઈએ.

એ જ રીતે અગ્નિહોત્ર તથા શિલ્પ યજ્ઞોમાં ભૌતિક અગ્નિને ઉત્તમ રીતે સંયુક્ત કરવો જોઈએ. (૭)

દ્રવિણોદા દદાતુ નો વસૂનિ યાનિ શ્રૃણ્વિરે । દેવેષુ તા વનામહે ॥ ૮ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : અમે દેવેષુ-દિવ્ય કર્મ, રાજ્ય અને વિદ્વાનોમાં જે વસૂનિ-વિદ્યા અને ચક્રવર્તી રાજ્યથી પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ઉત્તમ ધનોને શ્રૃણ્વિરે-સાંભળીએ છીએ, તા-તેનું અમે વનામહે સેવન કરીએ, તા-તેને દ્રવિણોદા:-ઉત્તમ રીતે ઉપાસના કરેલ જગદીશ્વર ન:-અમને દદાતુ-પ્રદાન કરે.

[ભૌતિક અગ્નિ]

અમે દેવેષુ-શિલ્પવિદ્યાથી સિદ્ધ કરેલ વિમાનાદિના હોવાથી અને દિવ્ય સૂર્યાદિ પદાર્થોમાં જે વસૂનિ-વિદ્યા અને ચક્રવર્તી રાજ્યથી પ્રાપ્ત થનાર ઉત્તમ ધનોને શ્રૃણ્વિરે-સાંભળીએ છીએ, તા-તેનું અમે વનામહે-સેવન કરીએ, તેને દ્રવિણોદા:-સમ્યક્ રીતે સંયુક્ત કરેલ ભૌતિક અગ્નિ ન:-અમને દદાતુ-આપે છે.

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરે આ જગતમાં પ્રાણીઓને માટે જે પદાર્થ ઉત્પન્ન કરેલ છે, ઉપકારમાં યુક્ત કરેલ તે પદાર્થોથી પ્રત્યક્ષ-અપ્રત્યક્ષ જેટલી પણ વસ્તુઓ ઉત્પન્ન થાય છે, તે વિદ્વાનોના સંગથી સુખદાયક બને છે. (૮)

દ્રવિણોદા: પિપીષતિ જુહોત્ પ્ર ચ તિષ્ઠત । નેષ્ટ્રાદૃતુભિરિષ્યત ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ દ્રવિણોદા:-યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરનાર વિદ્વાન મનુષ્ય યજ્ઞોમાં સોમાદિ ઔષધિઓના રસને પિપીષતિ-પીવાની ઈચ્છા કરે છે, તેમ તમે પણ તે યજ્ઞોને નેષ્ટ્રાત્-વિજ્ઞાનથી જુહોત્-આદાન-પ્રદાનનો વ્યવહાર કરો, તે યજ્ઞોને વિધિ સાથે કરીને ઋતુભિ:-વસંતાદિ ઋતુઓના સંયોગથી સુખોના સેવનથી પ્રતિષ્ઠિત-પ્રતિષ્ઠાને પ્રાપ્ત કરીને, તે યજ્ઞની વિદ્યાને સદા ઇષ્યત-જાણો. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ શ્રેષ્ઠ કર્મોનું અનુકરણ કરવું જોઈએ, દુષ્ટકર્મોનું નહિ, સર્વ ઋતુઓમાં યથાયોગ્ય કર્મ કરવા જોઈએ, જે ઋતુમાં જે દેશ નિવાસ કરવા યોગ્ય હોય, ત્યાં નિવાસ કરવો અને જવું જોઈએ. તે દેશ અનુસાર ભોજન આચ્છાન અને વિહાર કરવા જોઈએ. એ વ્યવહારોથી નિરંતર સુખોનું સેવન કરવું જોઈએ. (૯)

યત્વા તુરીયમૃતુભિર્દ્રવિણોદો યજામહે । અર્ધ સ્મા નો દ્વિર્ભવ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે દ્રવિણોદ:-દ્રવિણ અર્થાત્ આત્માની શુદ્ધિ કરનાર વિદ્યાદિ ધનના દાતા જગદીશ્વર ! અમે યત્-જે તુરીયમ્-સ્થૂળ, સૂક્ષ્મ, કારણ અને પરમ કારણમાં ચોથા આપ ત્વા-આપને ઋતુભિ:-પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનારી ઋતુઓના યોગમાં યજામહે, સ્મ-સુખપૂર્વક પૂજા કરીએ છીએ. તે આપ

ન:-અમારા માટે ધનાદિ પદાર્થોના દદિ:-દાતા અધ-નિશ્ચયથી ભવ-બનો. (૧)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વર ત્રણ પ્રકારના અર્થાત્ સ્થૂળ, સૂક્ષ્મ અને કારણ નામક ત્રણ પદાર્થોના જગતથી પૃથક્ વસ્તુ હોવાથી ચોથા છે. જે સર્વત્ર અભિવ્યાપક, સર્વાન્તર્યામી, સર્વાધાર. પરમેશ્વર સમસ્ત મનુષ્યો દ્વારા નિત્ય પૂજા (= ઉપાસના) કરવા યોગ્ય છે. તેના સિવાય કોઈ મનુષ્યોએ અન્ય પદાર્થોની 'ઈશ્વરબુદ્ધિ' થી ઉપાસના ન કરવી જોઈએ, તેનાથી ભિન્ન અન્ય કોઈ, કર્મોને અનુસાર જીવોને ફળ પ્રદાન કરનાર નથી. (૧૦)

અશ્વિના પિબતં મધુ દીઘાંની શુચિવ્રતા । ઋતુનાં યજ્ઞવાહસા ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમે-જે શુચિવ્રતા-પદાર્થોની શુદ્ધિ કરનાર યજ્ઞવાહસા-હોમ માટે દ્રવ્યોને પ્રાપ્ત કરનાર, દીઘાંની-જેની દીપ્તિનો હેતુ અગ્નિ છે, તે અશ્વિના-સૂર્ય અને ચંદ્રમા મધુ-મધુર રસનું પિષ્તમ્-પાન કરે છે, જે ઋતુના-ઋતુઓની સાથે રસોને પ્રાપ્ત કરાવે છે-તેને યથાવત્ જાણો. (૧૧)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ આપે છે કે મેં ઈશ્વરે જે સૂર્ય અને ચંદ્રમા આદિ સંયુક્ત બે-બે (જોડી) પદાર્થ કાર્ય સિદ્ધિ માટે સંયુક્ત રૂપે રચેલ છે,

હે મનુષ્યો ! એ બન્ને સર્વ ઋતુઓમાં પ્રાપ્ત થનાર સુખ અને વ્યવહારની સિદ્ધિ સમ્યક્ રૂપથી પ્રાપ્ત કરાવે છે. એમ તમારે જાણવું જોઈએ. (૧૧)

ગાર્હપત્યેન સન્ત્ય ઋતુનાં યજ્ઞનીરંસિ । દેવાન્ દેવયતે યજ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : જે સન્ત્ય-ક્રિયાઓના સંવિભાગમાં સારી રીતે રહેનાર-પ્રકાશિત થનાર ભૌતિક અગ્નિ ગાર્હપત્યેન-ગૃહપતિના સંયુક્ત વ્યવહારથી તથા ઋતુના-ઋતુઓની સાથે યજ્ઞની:-ત્રણ પ્રકારના યજ્ઞોને પ્રાપ્ત કરાવનાર અસિ-છે, તે-દેવયતે-યજ્ઞ કરનાર વિદ્વાનને માટે શિલ્પ વિદ્યામાં યજ્ઞ-સંગમ-પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો દ્વારા સર્વ વ્યવહાર-કાર્યોમાં પ્રત્યેક ઋતુમાં વિદ્યાપૂર્વક સમ્યક્ પ્રયોગ કરેલ જે અગ્નિ છે, તે મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓને દિવ્ય સુખ પહોંચાડે છે-પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૧૨)

સંગતિ : યૌદ્ધમાં સૂક્તના અર્થની સાથે આ પંદરમાં સૂક્તના અર્થની વિશ્વદેવોના અનુયોગ્ય વસંત આદિ ઋતુઓનું યથા ક્રમ પ્રતિપાદન કરવાથી સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૫)

સૂક્ત-૧૬

આ ત્વા વહન્તુ હરયો વૃષણં સોમપીતયે । ઇન્દ્ર ત્વા સૂરચક્ષસઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-વિદ્વાન્ ! જે વૃષણમ્-જળની વર્ષા કરનાર સૂર્યલોકને સોમપીતયે-સોમ અર્થાત્ ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થોના રસપાન રૂપ વ્યવહાર માટે સૂરચક્ષસઃ-સૂર્યમાં જેનું દર્શન થાય છે, તે હરયઃ-કિરણો આ + વહન્તુ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે, ત્વા-તે સૂર્યલોકને તું પણ પ્રાપ્ત કર, જેને સર્વ શિલ્પી-

કારીગરો પ્રાપ્ત કરે છે, તેને સર્વ મનુષ્ય પ્રાપ્ત કરે. હે મનુષ્યો ! અમે જાણીએ છીએ, ત્વા-તે પૂર્વોક્ત સૂર્યને તમે પણ જાણો. (૧)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યનાં કિરણો છે, તે સર્વ પદાર્થોના રસનું આહરણ-ખેંચનાર છે, તે સર્વના પ્રકાશક તથા વર્ષા કરનાર છે, તે યથાયોગ્ય અનુકૂળતાથી મનુષ્યો દ્વારા સેવન કરવાથી ઉત્તમ સુખોને ઉત્પન્ન કરે છે-સુખ આપે છે. (૧)

इमा धाना घृतस्नुवो हरी इहोर्षवक्षतः । इन्द्रं सुखतमे रथे ॥ २ ॥

પદાર્થ : હરી-જે પદાર્થોને હરનાર સૂર્યના શુકલપક્ષ અને કૃષ્ણપક્ષ છે, તે ઇહ-આ લોકમાં = સંસારમાં ઇમા:-એ ઘૃતસ્નુવ:-જળનું વહન કરનાર ધાના:-કિરણો અર્થાત્ દીપ્તિઓ તથા ઇન્દ્રમ્-સૂર્યલોકને સુખતમે-અત્યંત સુખનો હેતુ રથે-રમણ કરવા યોગ્ય વિમાનાદિ રથોમાં ડપ-સમીપ વક્ષત:-પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૨)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જે રાત-દિવસ, શુકલપક્ષ અને કૃષ્ણપક્ષ, દક્ષિણાયન અને ઉત્તરાયન છે, તે હરી-કહેવાય છે, તેના દ્વારા સૂર્ય સર્વ આનંદ-વ્યવહારોને પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૨)

इन्द्रं प्रातर्हवामह इन्द्रं प्रयत्यध्वरे । इन्द्रं सोमस्य पीतये ॥ ३ ॥

પદાર્થ : અમે પ્રાત:-પ્રતિદિન ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યના દાતા ઈશ્વરને પ્રયતિ-પ્રકૃષ્ટ દાન આપનાર અધ્વરે-ઉપાસના યજ્ઞમાં હવામહે-આહ્વાન કરીએ છીએ.

અમે-પ્રયતિ-પ્રકૃષ્ટ-શ્રેષ્ઠતમ જ્ઞાન આપનાર અધ્વરે-ક્રિયાથી સાધ્ય યજ્ઞમાં પ્રાત:-પ્રતિદિન ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યની સાધક વિદ્યુત્ નામક અગ્નિનું હવામહે-ગ્રહણ કરીએ છીએ.-ક્રિયાઓમાં સંયુક્ત કરીએ.

અમે પ્રયતિ-પ્રકૃષ્ટ જ્ઞાન આપનાર અધ્વરે-ક્રિયાના સાધક યજ્ઞમાં સોમસ્ય-સર્વ પદાર્થોથી ઉત્પન્ન રસનું પીતયે-પાન કરવા માટે પ્રાત:-પ્રતિદિન ઇન્દ્રમ્-બાહ્ય અને આત્મ્યન્તર વાયુ =પ્રાણને હવામહે-ગ્રહણ કરીએ છીએ.-તેને-સિદ્ધ કરીએ. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, પ્રતિદિન પરમૈશ્વરની ઉપાસના કરવી જોઈએ અને તેની આજ્ઞાનું પાલન કરવું જોઈએ. પ્રત્યેક યજ્ઞમાં વિદ્યુત્ નામક અગ્નિને કામમાં લેવો જોઈએ અને પ્રાણ વિદ્યા દ્વારા પદાર્થોનો ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૩)

उर्ष नः सुतमा गृहि हरिभिरिन्द्र केशिभिः । सुते हि त्वा हवामहे ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હિ-જે કારણે એ ઇન્દ્ર-વાયુ કૈશિભિ:-અગ્નિ, વિદ્યુત્ અને સૂર્યના હરિભિ:-હરણ-આહરણ સ્વભાવવાળા વેગવાન કિરણોની સાથે ન:-અમારા સુતમ્-ઉત્પન્ન કરેલા પદાર્થોને ઉપાગહિ-સર્વત્રથી નિકટ પ્રાપ્ત થાય છે, એટલા માટે ત્વા-તે વાયુ એ સુતે-ઉત્પન્ન કરેલ હોમ, શિલ્પ આદિ વ્યવહારોનો અમે હવામહે-ગ્રહણ કરીએ છીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જે પદાર્થ અમારા દ્વારા શિલ્પ-વ્યવહારોમાં ઉપકાર ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે, તે અગ્નિ, વિદ્યુત્, સૂર્ય અને વાયુના કારણે જ પ્રજ્વલિત થાય છે તથા આવાગમન કરે છે. (૪)

सेमं नः स्तोममा गृह्युपेदं सर्वनं सुतम्। गौरो न तृषितः पिब ॥ ५ ॥

पदार्थ : જે સૂર્ય ન:-અમારા અનુષ્ઠાન કરેલ સ્તોતમ્-સ્તુતિ યોગ્ય યજ્ઞ તથા સવનમ્-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરાવનાર ક્રિયાકાંડને તૃષિત:-તરસ્યા = તૃષા લાગેલ ગૌર:-ગોરા રંગના હરણીને ન-સમાન કે જેમ તે ઉપાગ્રહિ-જળાશય સમીપ જઈને જળનું પાન કરે છે, તેમ સ:-તે સૂર્ય ઇદમ્-એ સુતમ્-ઉત્પન્ન કરેલ ઔષધિ આદિનું પિબ-પાન કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ અત્યંત તૃષાતુર હરણ આદિ પશુ, પક્ષી તીવ્ર વેગથી દોડીને જળાશય પર પહોંચીને જળનું પાન કરે છે, તેવી રીતે સૂર્ય પોતાના વેગવાન કિરણોથી ઔષધિ આદિ સુધી પહોંચીને તેના રસનું પાન કરે છે. એ સૂર્યનો મનુષ્યોએ વિદ્યાની વૃદ્ધિ માટે સમ્યક્ ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૫)

इमे सोमासु इन्द्रवः सुतासो अधि बर्हिषि। तां इन्द्र सहसे पिब ॥ ६ ॥

પદાર્થ : જે અધિ-બર્હિષિ-જેમાં સર્વ પદાર્થો વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થાય છે, તે અન્તરિક્ષમાં ઇમે-એ સોમાસ:-જેનાથી સુખ ઉત્પન્ન થાય છે, ઇન્દ્રવ:-અને જે સર્વ પદાર્થોને સ્નિગ્ધ કરનાર રસ છે, તે સહસે-બળ આદિ ગુણો માટે ઈશ્વરે સુતાસ:-ઉત્પન્ન કરેલ છે, તા-તેનું ઇન્દ્ર-વાયુ પ્રતિક્ષણ પિવ-પાન કરે છે. (૬)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે આ સંસારમાં પ્રાણીઓનાં બળ આદિની વૃદ્ધિ માટે જેટલા મૂર્તિમાન પદાર્થો ઉત્પન્ન કરેલ છે, સૂર્યથી છિન્ન-ભિન્ન કરેલ તે પદાર્થોને વાયુ પોતાની સમીપ લાવીને ધારણ કરે છે. તેના સંયોગથી પ્રાણી અને અપ્રાણી = જડ જગત બળ પ્રાપ્ત કરે છે. (૬)

अयं ते स्तोमो अग्रियो हृदिस्पृगस्तु शंतमः। अथा सोमं सुतं पिब ॥ ७ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ જેમ એ વાયુ પ્રથમ સુતમ્-ઉત્પન્ન કરેલ સોમમ્-સર્વ પદાર્થોના રસોનું પિવ-પાન કરે છે, અથ-તદનન્તર તે-જે તે વાયુના અગ્રિય:-અત્યુત્તમ હૃદિસ્પૃક્-અન્તઃ કરણમાં સુખનો સ્પર્શ કરાવનાર સ્તોમ:-તેના ગુણોથી પ્રકાશિત થઈને ક્રિયાઓનો સમૂહ જાણી શકાય, અસ્તુ-તેવા કામો કરવા જોઈએ. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા શુદ્ધ કરવામાં આવેલ ઉત્કૃષ્ટ ગુણવાળો વાયુ અત્યંત સુખદાયી બને છે. તેમ જાણવું જોઈએ. (૭)

विश्वमित्सर्वनं सुतमिन्द्रो मदाय गच्छति। वृत्रहा सोमपीतये ॥ ८ ॥

પદાર્થ : જે વૃત્રહા-મેઘ = વાદળાઓનો નાશ કરનાર ઇન્દ્ર:-વાયુ સોમપીતયે-ઉત્તમ પદાર્થોના રસોનું પાન જેમાં થાય છે તે મદાય-આનંદ માટે ઇત્-નિશ્ચય કરીને સવનમ્-સર્વ સુખોના સાધન રૂપ સુતમ્-ઉત્પન્ન થયેલ વિશ્વમ્-જગતને ગચ્છતિ-પ્રાપ્ત થાય છે. (૮)

ભાવાર્થ : વાયુ પોતાના આવાગમન દ્વારા સમસ્ત જગતમાં પહોંચીને વેગવાન અને મેઘો-વાદળાઓને વરસાવીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે. તેના વિના કોઈ પણ મનુષ્ય કોઈ જાતના વ્યવહારને સિદ્ધ

કરવામાં સમર્થ બની શકતો નથી. (૮)

સેમં નુઃ કામમા પૂણ ગોભિરશ્વૈઃ શતક્રતો । સ્તવામ ત્વા સ્વાધ્યઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે શતક્રતો-શત્ =અસંખ્ય કર્મ અથવા અનંત પ્રજ્ઞાવાન અને સર્વ કામનાઓને પ્રદાન કરનાર જગદીશ્વર ! સ્વાધ્યઃ-સ્વાધ્યાય કરનાર અમે ત્વા-આપની સ્તવામ-સ્તુતિ કરીએ છીએ, સઃ- તે આપ ગોભિઃ-ઈન્દ્રિય, પૃથિવી, વિદ્યાનો પ્રકાશ અને પશુ તથા અશ્વૈઃ-શીઘ્ર ગમનના હેતુ અગ્નિ આદિ અથવા ઘોડા, હાથી આદિના દ્વારા નઃ-અમારી ઇમમ્-વેદમંત્રોના દ્વારા પ્રેમપૂર્વક સત્યભાવથી કરવામાં આવેલી કામમ્-કામનાઓને આ + પૂણ-સર્વત્રથી પૂર્ણ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરનું એ સામર્થ્ય છે, કે તે સર્વ પુરુષાર્થી, ધાર્મિક મનુષ્યોની કામનાઓની તેના કર્માનુસાર પૂર્તિ કરે છે, જે સૃષ્ટિના અતિ શ્રેષ્ઠ ઉત્પાદન અને ધારણ દ્વારા સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, એટલા માટે સર્વ મનુષ્યોએ તે (પરમેશ્વર)ની નિત્ય ઉપાસના કરવી જોઈએ, અન્યની નહિ. (૮)

સંગતિ : આ સોળમાં સૂક્તના અર્થની-ઋતુઓના સંપાદક સૂર્ય અને વાયુ આદિ પદાર્થના યથાયોગ્ય પ્રતિપાદનથી-પંદરમાં સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૬)

સૂક્ત-૧૭

ઇન્દ્રાવરુણયોરહં સમ્રાજોરવ આ વૃણે । તા નો મૃલાત ઈદૃશે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હું જે સમ્રાજોઃ-શ્રેષ્ઠ પ્રકાશમાન ઇન્દ્રાવસ્ત્રાજોઃ-સૂર્ય અને ચંદ્રમાના ગુણોથી અવઃ-રક્ષાને આવૃણે-સર્વત્રથી સ્વીકાર કરું છું, અને તા-તેઓ ઈદૃશે-ચક્રવર્તી રાજ્યના સુખ સ્વરૂપ વ્યવહારમાં નઃ-અમને મૃલાતઃ-સુખયુક્ત કરે છે.

ભાવાર્થ : જેમ પ્રકાશમય, સંસારના ઉપકારક, સુખ વ્યવહારના હેતુ અને ચક્રવર્તી રાજ્યની સમાન રક્ષક સૂર્ય અને ચંદ્રમા છે, તેમ અમારે પણ બનવું જોઈએ. (૧)

ગન્તારા હિ સ્થોઽવસે હવં વિપ્રસ્ય માવતઃ । ધત્તારા ચર્ષણીનામ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જે સૂર્ય અને ચંદ્રમા-જે હિ-નિશ્ચયથી જે એ અગ્નિ અને જળ સંપ્રયોગ કરેલ માવતઃ-મારા સમાન પંડિત તથા વિપ્રસ્ય-મેધાવી વિદ્વાનના હવમ્-હોમ અને શિલ્પાદિ વ્યવહારના પદાર્થોના આદાન-પ્રદાન ગન્તારા-કરનાર છે-પ્રાપ્ત કરનાર છે, ચર્ષણીનામ્-પદાર્થોને ઉઠાવનાર મનુષ્ય આદિ જીવોને ધત્તારા-ધારણ કરનાર સ્થઃ-છે. તેમાં હું તેનો પોતાના સર્વ કામોની અવસે-ક્રિયા સિદ્ધિને માટે આવૃણે-સ્વીકાર કરું છું. (૨)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો દ્વારા જ્યારે કલાયંત્રોમાં યુક્તિથી સંયુક્ત કરેલ અગ્નિ અને જળ પ્રેરિત કરવામાં આવે છે, ત્યારે એ બન્ને યાનો = વાહનો શીઘ્ર ગતિ કરનાર અને તેમાં રહેલા મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓ

તથા પદાર્થોના ભારના ધારણકર્તા અને સુખદાયી બને છે. (૨)

અનુકામં તર્પયેથામિન્દ્રાવરુણ રાય આ । તા વાં નેદિષ્ટમીમહે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : **ઇન્દ્રાવસ્તુ**-અગ્નિ અને જળ **અનુકામમ્**-પ્રત્યેક કાર્યમાં **રાય**:-ધન પ્રદાન કરીને **તર્પયેથામ્**-તૃપ્ત કરે છે, **તા**-તે **વામ્**-બન્નેને અમે **નેદિષ્ટમ્**-અત્યંત સમીપ **ઈમહે**-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરીએ છીએ. (૩)

(ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે કે-એ રીતે અગ્નિ અને જળના ગુણોને જાણીને, જે એ બન્ને (અગ્નિ અને જળ) ક્રિયામાં સંયુક્ત કરેલા પુષ્કળ સુખો પ્રાપ્ત કરાવે છે. એ બન્નેનો યુક્તિપૂર્વક કાર્યોમાં સમ્યક્ પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૩)

યુવાકુ હિ શર્ચીનાં યુવાકુ સુમતીનામ્ । ભૂયામ વાજદાત્રામ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : અમે **હિ**-જે કારણે **શર્ચીનામ્**-ઉત્તમ વાણી અથવા શુભ કર્મોના **યુવાકુ**-મિશ્રણ સેવન, તથા **વાજદાત્રામ્**-વાજ = વિજ્ઞાન તથા અન્નના દાતા અથવા ઉપદેશક તથા **સુમતીનામ્**-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિમાન વિદ્વાનોને **યુવાકુ**-વિશ્લેષણ-પૃથક્ભાવ કરવામાં **ભૂયામ**-સમર્થ બનીએ, એ કારણે એ અગ્નિ અને જળને સિદ્ધ કરીએ. (૪)

(ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે કે-તેઓ સદા આળસનો ત્યાગ કરીને, શુભ કર્મોનું સેવન કરીને, વિદ્વાનોનો નિત્ય સંગ કરે, જેથી વિદ્યા અને દરિદ્રતા સમૂળ નાશ પામે. (૪)

ઇન્દ્રઃ સહસ્ત્રદાન્વાં વરુણઃ શંસ્યાનામ્ । ક્રતુર્ભવત્યુક્થ્યઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : સર્વ મનુષ્યોને યોગ્ય છે કે તેઓ-**ઇન્દ્રઃ**-અગ્નિ, વિદ્યુત્ અને સૂર્ય **હિ**-જે કારણે **સહસ્ત્રદાવ્યનામ્**-અસંખ્ય ધનના દાતાઓની મધ્યમાં **ક્રતુઃ**-શ્રેષ્ઠતાથી કાર્ય સિદ્ધ કરનાર **ભવતિ** થાય છે, તથા જે **વસ્તુઃ**-જળ, વાયુ અને ચંદ્રમા પણ **શંસ્યાનામ્**-પ્રશંસનીય પદાર્થોમાં શ્રેષ્ઠતાથી કાર્યોમાં સાધક છે, તેને જાણવા જોઈએ કે ઉક્ત વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થો **ઉક્થ્યઃ**-વિદ્યા સિદ્ધિ માટે ઉપદેશ કરવા અથવા કરાવવામાં ઉત્તમ છે. (૫)

(ભાવાર્થ : અત્રે પૂર્વ મંત્રથી **હિ**-પદની અનુવૃત્તિ છે. જેથી જેટલા પૃથિવી આદિ અન્ન આદિના દાનના સાધનોના નિમિત્ત છે, તેમાં અગ્નિ, વિદ્યુત્ અને સૂર્ય મુખ્ય છે અને તેમાં પણ જે જળ, વાયુ અને ચંદ્રમા છે, તે પોત-પોતાના ગુણોને કારણે પ્રશંસનીય અને જાણવા યોગ્ય છે, તેમ જાણીને કર્મોમાં સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરવાથી એ ક્રિયા સિદ્ધિના હેતુ બને છે. (૫)

તયોરિદવસા વયં સનેમ્ નિ ચ્ ધીમહિ । સ્યાદુત પ્રેર્ચનમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : **વયમ્**-અમે વિદ્વાનો-અગ્નિ અને જળના ગુણોના **અવસા**-વિજ્ઞાન તથા તેના દ્વારા ઉપકાર ગ્રહણ કરવાથી **ઇત્**-જ જે સુખો ને ઉત્તમ ધનોનું **સનેમ** સેવન કરીએ છીએ, **તયોઃ**-તે (ઇન્દ્ર અને વરુણ)ના નિમિત્તથી **ચ**-અને તેનાથી પ્રાપ્ત અસંખ્ય ધનને **નિ + ધીમહિ**-સર્વથા ધારણ કરીએ, તેનાથી

કોશો આદિ ઉત્તમ સ્થાનમાં પૂરણ કરીએ, જે ધનોથી અમારા પ્રેચનમ્-પુષ્કળ વ્યય માટે **અ-હિતકર સ્યાત્-બને.** (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે કે-તેઓ અગ્નિ આદિ પદાર્થોના ઉપયોગથી પૂર્ણ ધનોને સંપાદન કરીને, તેની રક્ષા અને વૃદ્ધિ કરીને, તેની યથાયોગ્ય વ્યય કરીને રાજ્યની વૃદ્ધિથી સર્વના હિતની ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૬)

इन्द्रावरुण वामहं हृवे चित्राय राधसे। अस्मान्तसु जिग्युषस्कृतम् ॥ ७ ॥

પદાર્થ : જે સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરેલ અસ્માન્-અને સુજિગ્યુષઃ-ઉત્તમ વિજયથી યુક્ત કૃતમ્-કરે છે, વામ્-તે ઈન્દ્ર = અગ્નિ અને વરુણ = જળને ચિત્રાય-જે અદ્ભૂત અર્થાત્ રાજ્ય, સેના, નોકર, પુત્ર, મિત્ર, સુવર્ણ, રત્ન, હાથી, ઘોડા આદિ પદાર્થોથી યુક્ત રાધસે-સુખ સાધનોના હેતુ ધનની પ્રાપ્તિ માટે અહમ્-હું મનુષ્ય તેને આહુવે-ગ્રહણ કરું છું. (૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઉત્તમ રીતે સિદ્ધ કરેલ અગ્નિ અને જળને કાર્યમાં યુક્ત કરે છે, તેઓ વિવિધ ધનો અને વિજયને પ્રાપ્ત કરીને સુખી થાય છે અને સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે. (૭)

इन्द्रावरुण नू नु वां सिषासन्तीषु धीष्वा। अस्मभ्यं शर्म यच्छतम् ॥ ८ ॥

પદાર્થ : જે સિષાસન્તીષુ-ઉત્તમ કર્મ કરવાની ઈચ્છા અને ધીષુ-શુભ-શાસ્ત્રોને ધારણ કરનારી બુદ્ધિઓમાં નુ-શીઘ્ર નુ-જે કારણે અસ્મભ્યમ્-અમે પુરુષાર્થી વિદ્વાનો માટે શર્મ-સર્વ દુઃખ રહિત અને દુઃખ વિનાશક ઉત્તમ સુખનો આયચ્છતમ્-સર્વત્રથી વિસ્તૃત કરીએ છીએ, તેથી વામ્-તે ઇન્દ્રાવરુણા-વાયુ અને જળના કાર્યોની સિદ્ધિ માટે હું નિરંતર હુવે-ગ્રહણ-સ્વીકાર કરું છું. (૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો શાસ્ત્રના સંસ્કાર અને પુરુષાર્થયુક્ત બુદ્ધિઓથી શિલ્પ આદિ સર્વ ઉત્તમ વ્યવહારોમાં ઈન્દ્ર અને વરુણ (વાયુ અને જળ)નો સમ્યક્ પ્રયોગ કરે છે; તેઓજ આ સંસારમાં સુખોનો વિસ્તાર કરે છે. (૮)

प्र वामश्नोतु सुष्टुतिरिन्द्रावरुण यां हुवे। यामृधार्थे सधस्तुतिम् ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હું જેમ આ સંસારમાં સુષ્ટુતિઃ-ઈન્દ્ર અને વરુણની ઉત્તમ સ્તુતિ પ્રાશ્નનોતુ-સારીરીતે વ્યપ્ત થાય, તેમ યામ્-જે સ્તુતિને હુવે-સ્વીકાર-ગ્રહણ કરું છું, તથા વામ્-તે ઈન્દ્ર અને વરુણ-પૂર્વોક્ત વાયુ અને જળ યામ્-જે સધસ્તુતિમ્-સ્તુતિ-કીર્તિ સાથે શિલ્પક્રિયાની ઋદ્ધિ-વૃદ્ધિ કરે છે. તે શિલ્પ વિદ્યાને હું હુવે-ગ્રહણ કરું છું. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે પદાર્થોના જેવા ગુણ છે, તેને એવા સુવિચારપૂર્વક જાણીને તેનાથી સદા ઉપકાર ગ્રહણ કરવો જોઈએ, એમ ઈશ્વરનો ઉપદેશ છે. (૯)

સંગતિ : પૂર્વોક્ત સોળમાં સૂક્તના અનુયોગી ઈન્દ્ર અને વરુણના અર્થનું આ સૂક્તમાં પ્રતિપાદન કરવાથી આ સ્તરમાં સૂક્તના અર્થની તેની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૭)

સૂક્ત-૧૮

સોમાનું સ્વરણં કૃણુહિ બ્રહ્મણસ્પતે । કક્ષીવન્તં ચ ઔશિજઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મણસ્પતે-વેદના સ્વામી ઈશ્વર ! ય:-જે હું ઔશિજ:-વિદ્યાના પ્રકાશમાં સંસારને વિદિત થનાર અને વિદ્વાનોના પુત્ર સમાન છું, તે મને સોમાનમ્-ઐશ્વર્ય ઉત્પન્ન કરનાર યજ્ઞના કર્તા સ્વરણમ્-શબ્દ, અર્થ અને સંબંધના ઉપદેશક, કક્ષીવન્તમ્-કક્ષા અર્થાત્ હાથની આંગળીઓથી થનારી પ્રશંસનીય શિલ્પવિદ્યાનું કૃપાથી સંપાદન કરનાર કૃણુહિ-બનાવે. (૧)

ભાવાર્થ : અહીં જે કોઈ વિદ્યાના પ્રકાશમાં ઉત્પન્ન મનુષ્ય છે, તે જ અધ્યાપક શિલ્પવિદ્યાના સંપાદક બની શકે છે. ઈશ્વર પણ એવા મનુષ્ય પર અનુગ્રહ કરે છે. (૧)

યો રેવાન્ યો અમીવહા વસુવિત્ પુષ્ટિવર્ધનઃ । સ નઃ સિષક્તુ યસ્તુરઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : ય:-જે જગદીશ્વર ! રેવાન્-વિદ્યાદિ અનંત ધનવાન, ય:-જે પુષ્ટિવર્ધન:-શરીર અને આત્માની પુષ્ટિવર્ધક, વસુવિત્-સર્વ વસ્તુને જાણનાર, અમીવહા-અવિદ્યા આદિ રોગોના નાશક, ય:-જે શીઘ્ર સુખકારક તુરઃ-શીઘ્રકારી બ્રહ્મણસ્પતિ = વેદના સ્વામી જગદીશ્વર છે, સ:-તે ન:-અમને વિદ્યા આદિ ધનોથી સિષક્તુ-અત્યંત સંયુક્ત કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સત્ય ભાષણ આદિ લક્ષણોવાળી ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન કરે છે, તેઓ અવિદ્યા આદિ રોગોથી રહિત અને શરીર અને આત્માની પુષ્ટિથી યુક્ત બનીને ચક્રવર્તી રાજ્ય આદિ ધનોને તથા સર્વ રોગોનું હરણ કરનારી ઔષધિઓને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨)

મા નઃ શંસો અરંરુષો ધૂર્તિઃ પ્રણઙ્ મર્ત્યસ્ય । રક્ષાં ણો બ્રહ્મણસ્પતે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મણસ્પતે-વેદ અથવા બ્રહ્માંડના સ્વામી જગદીશ્વર ! આપ અરસ્મઃ-દાનરહિત મર્ત્યસ્ય-મનુષ્યથી ન:-અમારી રક્ષા-રક્ષા કરો, જેથી ન:-અમારી વચ્ચે કોઈ ધૂર્તિઃ-હિંસક મનુષ્ય ન હોય, આપની કૃપાથી જે અમારી શંસઃ-પ્રશંસનીય યજ્ઞ અર્થાત્ વ્યવહાર મા, પ્રણઙ્-કદી નાશ પામે નહિ. (૩)

ભાવાર્થ : કોઈ મનુષ્યે કદી પણ ધૂર્ત મનુષ્યનો સંગ કરવો નહિ, તથા અન્યાયપૂર્વક કોઈની હિંસા કરવી નહિ, પરંતુ સર્વ મનુષ્યોએ સર્વની ન્યાયથી રક્ષા કરવી જોઈએ. (૩)

સ ઘાં વીરો ન રિષ્યતિ યમિન્દ્રો બ્રહ્મણસ્પતિઃ । સોમો હિનોતિ મર્ત્યમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : ઇન્દ્ર-વાયુ બ્રહ્મણસ્પતિઃ-બ્રહ્માંડના પાલક પરમેશ્વર સોમઃ-સોમલતા આદિ ઔષધિઓના સમૂહના રસ યમ્-જે મર્ત્યમ્-મનુષ્ય આદિ પ્રાણીને હિનોતિ-ઉન્નત કરે છે સ:-તે વીરઃ-શત્રુનો વિજેતા વીરપુરુષ ન, ઘ, રિષ્યતિ-નિશ્ચયથી તે વિનાશને કદી પ્રાપ્ત થતો નથી. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વાયુ, વિદ્યુત્ સૂર્ય અને સોમ આદિ ઔષધિઓના ગુણોને ગ્રહણ કરીને પોતાના કાર્યો સિદ્ધ કરે છે, તેઓ કદી દુઃખી થતા નથી. (૪)

ત્વં તં બ્રહ્મણસ્પતે સોમ્ ઇન્દ્રંચ મર્ત્યમ્ । દક્ષિણા પાત્વંહસઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મણસ્પતે-બ્રહ્માંડના પાલક પરમેશ્વર ! ત્વમ્-આપ-અંહસઃ-પાપોથી જેની રક્ષા કરો છો, ત્મ-તે ધર્માત્મા યજ્ઞ કરનાર મર્ત્યમ્-વિદ્વાન મનુષ્યની સોમ-સોમલતા આદિ ઔષધિઓનો રસ, ઇન્દ્રઃ-વાયુ અને દક્ષિણાઃ-જેથી વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થાય છે એ સર્વ ચાતુ-રક્ષા કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અધર્મથી દૂર રહીને પોતાના લોકોના સુખની વૃદ્ધિ ઇચ્છે છે, તેઓ પરમેશ્વરની ઉપાસના કરીને સોમ, ઇન્દ્ર અને દક્ષિણાનું યુક્તિથી સેવન કરે. (૫)

સદસસ્પતિમદ્ભુતં પ્રિયમિન્દ્રસ્ય કામ્યમ્ । સનિં મેધામયાસિષમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હું ઇન્દ્રસ્ય-જીવ કામ્યમ્-કામના કરવા યોગ્ય, સનિમ્-પાપ અને પુણ્યોના વિભાગથી ફળ પ્રદાન કરનાર પ્રિયમ્-સર્વ પ્રાણીઓને પ્રસન્ન કરનાર, અદ્ભુતમ્-આશ્ચર્યયુક્ત ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવ રૂપ સ્વસ્પતિમ્-જેમાં વિદ્વાન ધાર્મિક ન્યાયાધીશ સ્થિત હોય, તે સભાના સ્વામી જગદીશ્વરની ઉપાસના અને સર્વ ઉત્તમ ગુણ, સ્વભાવ પરોપકારી સભાપતિને પ્રાપ્ત કરીને મેધામ્-ઉત્તમ જ્ઞાનને ધારણ કરનારી બુદ્ધિને અયાસિષમ્-પ્રાપ્ત કરું. (૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સર્વશક્તિમાન, સર્વના અધિષ્ઠાતા અને સર્વના આનંદ પ્રદાતા પરમેશ્વરની અને સ્વભાવોથી યુક્ત અને પરોપકારી સભાપતિને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ જ સમસ્ત શાસ્ત્રોનું જ્ઞાન અને ક્રિયાથી યુક્ત બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને પુરુષાર્થી તથા વિદ્વાન બનીને સુખી થાય છે. (૬)

યસ્માદૃતે ન સિધ્યતિ યજ્ઞો વિપશ્ચિતશ્ચન । સ ધીનાં યોગમિન્વતિ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો યસ્માત્-જે વિપશ્ચિતઃ-અનંત વિદ્યાવાન અને સર્વ શક્તિમાન જગદીશ્વરના ત્રહ્ને-વિના યજ્ઞઃ-દૈષ્ટિગોચર સંસાર ચના-કદી ન સિધ્યતિ-સિદ્ધ = બની શકતો નથી, સઃ-તે જગદીશ્વર સર્વ પ્રાણીઓ અને મનુષ્યોની ધીનામ્-બુદ્ધિ અને કર્મોના યોગમ્-સંયોગને ઇન્વતિ-પ્રાપ્ત કરે છે અથવા જાણે છે. (૭)

ભાવાર્થ : વ્યાપક = સર્વમાં રહેનાર ઈશ્વર અને વ્યાપ્ય સંપૂર્ણ જગત એ બન્નેનો નિત્ય સંબંધ છે. તે જ સર્વ જગતને રચીને તથા ધારણ કરીને, સર્વની બુદ્ધિઓની ચેષ્ટાના જ્ઞાતા બનીને સર્વ પ્રાણીઓને તેના કર્માનુસાર સુખ-દુઃખ રૂપ ફળ પ્રદાન કરનાર છે.

ઈશ્વર વિના, પોતાના સ્વભાવથી સિદ્ધ અને જેનો કોઈ અધિષ્ઠાતા ન હોય એવું જગત કદી બની શકતું નથી, કારણકે જડ પદાર્થોમાં જ્ઞાનનો અભાવ હોવાથી યથોચિત્ નિયમથી તેની ઉત્પત્તિ થઈ શકતી નથી. (૭)

આદૃનોતિ હૃવિષ્કૃતિં પ્રાઙ્ચં કૃણોત્યધ્વરમ્ । હોત્રાં દેવેષુ ગચ્છતિ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : જે સર્વજ્ઞ, સભાપતિ, દેવ પરમેશ્વર-પ્રાજ્ઞમ્-સર્વમાં વ્યાપ્ત અને જેને પ્રાણીઓ સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે, હવિષ્કૃતિમ્-હવિ અર્થાત્ આદાન-પ્રદાન યોગ્ય પદાર્થોની રચનાવાળા અધ્વરમ્-ક્રિયા જગત અર્થાત્ ક્રિયાથી ઉત્પન્ન થનાર જગત રૂપ યજ્ઞમાં હોત્રાણિ-હોમને સિદ્ધ કરાવનારી ક્રિયાઓને કૃણોતિ-ઉત્પન્ન કરે છે. તથા આત્-સર્વત્રથી ઋજ્ઞોતિ-સમ્યક્ વૃદ્ધિ કરે છે; ફરી તે યજ્ઞ દેવેષુ-દિવ્યગુણવાળા પદાર્થોમાં ગચ્છતિ-પ્રાપ્ત થાય છે. (૮)

ભાવાર્થ : જેનાથી પરમેશ્વર સમસ્ત જગતની રચના કરે છે, એટલા માટે સર્વ પદાર્થો પરસ્પર સંયોગથી વૃદ્ધિ પામે છે, એ ક્રિયાત્મક યજ્ઞ અને શિલ્પવિદ્યામાં સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરવાથી મહાન સુખોને ઉત્પન્ન કરે છે. (૮)

નરાશંસં સુઘૃષ્ટમમપ્શ્યં સપ્રથસ્તમમ્ । દિવો ન સર્વામખસમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હું ન-જેમ પ્રકાશમાન સૂર્યાદિના પ્રકાશથી સદ્ મમખસમ્-જેમાં પ્રાણી સ્થિર રહે છે અને જેમાં જગત પ્રાપ્ત થાય છે, સપ્રસ્તમમ્-વિસ્તૃત આકાશ આદિ પદાર્થોની સાથે અત્યંત વ્યાપ્ત સુઘૃષ્ટમમ્-શ્રેષ્ઠ રીતે સમસ્ત જગતને ધારણ કરનાર નરાશંસમ્-સર્વ મનુષ્યોને અવશ્ય સ્તુતિ કરવા યોગ્ય સદરસ્પતિમ્-પૂર્વોક્ત સભાપતિ પરમેશ્વરનાં અપ્શ્યમ્-જ્ઞાનદૃષ્ટિથી દર્શન કરું છું, તેમ તમે પણ સભાપતિને પ્રાપ્ત થઈને ન્યાયથી સર્વ પ્રજાનું પાલન કરીને નિત્ય દર્શન કરો. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્ય સર્વત્ર વિસ્તૃત સૂર્યાદિના પ્રકાશને નિહાળે છે, તેમ સર્વત્ર વ્યાપ્ત, જ્ઞાનના પ્રકાશને કરનાર-જ્ઞાન પ્રકાશરૂપ પરમેશ્વરને જાણીને વિસ્તાર સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

સંગતિ : પૂર્વ સત્તરમાં સૂક્તના અર્થની સાથે ઇન્દ્ર = મિત્ર અને વરુણની સાથે અનુયોગી બૃહસ્પતિ આદિ અર્થોના પ્રતિપાદનથી આ અઢારમાં સૂક્તના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૮)

સૂક્ત-૧૯

પ્રતિ ત્વં ચારુમધ્વરં ગોપીથાય પ્ર હૂયસે । મરુદ્ધિરગ્ન આ ગહિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ મર્સંધિઃ-વિશેષ વાયુની સાથે આગહિ-સર્વત્ર જાય છે, તે વિદ્વાનોની ક્રિયાઓ દ્વારા ત્વમ્-તે ચાસ્મ્-શ્રેષ્ઠ અધ્વરમ્-યજ્ઞના પ્રતિ-માટે તથા ગોપીથાય-પૃથ્વી અને ઈન્દ્રિયો આદિની રક્ષા માટે પ્ર + હૂયસે-શ્રેષ્ઠ રીતે ક્રિયામાં પ્રયુક્ત કરવામાં આવે છે. (અર્થાત્ ઉપદિષ્ટ કરવામાં આવે છે.) (૧)

ભાવાર્થ : જે ભૌતિક અગ્નિ પ્રસિદ્ધ અને વિદ્યુત્ આદિ રૂપમાં વાયુથી પ્રદીપ્ત કરવામાં આવે છે, તે અગ્નિને, વિદ્વાનોએ પ્રશસ્ત બુદ્ધિ દ્વારા, પ્રત્યેક કાર્ય સિદ્ધમાં સર્વની રક્ષા માટે તેના ગુણોના જ્ઞાનની સાથે ઉપદેશ અને શ્રવણ કરવો જોઈએ. (૧)

નહિ દેવો ન મર્ત્યો મહસ્તવ ક્રતું પરઃ । મરુદ્ધિરગ્ન આ ગહિ ॥ ૨ ॥

[ઈશ્વર]

હે અગ્ને-વિજ્ઞાન સ્વરૂપ ઈશ્વર ! આપ કૃપા કરીને મસ્ત્કિ-પ્રાણોની સાથે આ + ગહિ-વિજ્ઞાત થાઓ અને સર્વત્રથી આવો. તે ત્વ-પરમાત્માના પર-ઉત્તમ ગુણ અને મહઃ-મહિમા છે, ક્રતુમ્-આપના સંપૂર્ણ કર્મના અન્તને નહિ-નહિ કોઈ દેવઃ-વિદ્વાન અને મર્ત્વઃ-કોઈ અવિદ્વાન જાણી શકતો ન-નથી.

[ભૌતિક અગ્નિ]

જે ભૌતિક અગ્નિના પર-અતિ શ્રેષ્ઠ ગુણ અને મહઃ-મહિમા ક્રતુમ્-કર્મ અથવા બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરાવે છે, જેને નહિ-નહિ, દેવઃ-વિદ્વાન અને મર્ત્વઃ-અવિદ્વાન મનુષ્ય જાણી શકતો ન-નથી. અગ્ને-તે ભૌતિક અગ્નિ મસ્ત્કિ-વાયુઓની સાથે આ + ગહિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે, જાય છે.

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરની સર્વોત્તમ મહિમા અને કર્મ અનંત હોવાથી કોઈ તેનો અન્ત-પાર પામી શકતા નથી, પરંતુ જેની જેટલી બુદ્ધિ અને વિદ્યા હોય છે, તે અનુસાર તે સમાધિયોગથી યુક્ત પ્રાણાયામથી અન્તર્યામી રૂપમાં રહેલ (ઈશ્વરને જાણી શકે છે.) વેદોમાં તથા સૃષ્ટિમાં ભૌતિક અગ્નિના તથા મરુત અર્થાત્ વાયુનાં જેટલા સ્વરૂપ અને ગુણો વર્ણિત કરેલ છે, તેટલા જ જાણી શકાય છે, તેનાથી અધિક જાણી શકાતા નથી. (૨)

યે મહો રજસો વિદુર્વિશ્વે દેવાસો અદ્રુહઃ । મરુદ્ધિરગ્ન આ ગહિ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : એ-જે મનુષ્ય અદ્રુહઃ-દ્રોહથી રહિત વિશ્વે-સર્વ દેવાસઃ-વિદ્વાન છે. તે મસ્ત્કિ-પવન અને અગ્નિની સાથે સંયુક્ત મહઃ-મહાન રજસઃ-લોકોને વિદુઃ-જાણે છે, તેઓજ સુખી થાય છે.

હે અગ્ને-સ્વયં પ્રકાશસ્વરૂપ તથા સર્વને પ્રકાશિત કરનાર ઈશ્વર ! આપ-મસ્ત્કિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાઓ છો, તેથી આપે જે (અગ્ને) પ્રકાશક અગ્નિ બનાવેલ છે, તે વાયુઓની સાથે જ કાર્યને માટે આગહિ-આવે છે, પ્રાપ્ત થાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો-અગ્નિથી આકૃષ્ટ, પ્રકાશિત અને વાયુના દ્વારા ચેષ્ટા કરીને ધારણ કરેલ લોક છે, તે સર્વને જાણીને તેનો કાર્યોમાં ઉપયોગ કરવો જાણે છે, તેઓ સુખી થાય છે. (૩)

ય ડગ્રા અર્કમાનૃચુરનાધૃષ્ટાસુ ઓજસા । મરુદ્ધિરગ્ન આ ગહિ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : એ-જે ડગ્રાઃ-તીવ્ર વેગાદિ ગુણયુક્ત તથા અનાધૃષ્ટાસઃ-કોઈથી રોકી ન શકાય, એવો પવન ઓજસા-પોતાના બળ આદિ ગુણોની સાથે વિદ્યમાન થઈને અર્કમ્-સૂર્યાદિ લોકોના આનૃચુઃ-ગુણોને પ્રકાશિત કરે છે એતૈઃ-એ મસ્ત્કિ-પવનોની સાથે અગ્ને-વિદ્યુત્ અથવા પ્રસિદ્ધ અગ્નિ આગહિ-સમસ્ત કાર્યોમાં સહકારી-સહાય કરનારા હોય છે, સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે. (૪)

ભાવાર્થ : જેટલું પણ બળ છે, તે વાયુ અને વિદ્યુત્ દ્વારા ઉત્પન્ન થાય છે. એ વાયુ સમસ્ત લોકોને ધારણ કરનાર છે, તેના યોગથી વિદ્યુત્ અને સૂર્ય આદિ પ્રકાશિત થઈને ધારણ કરવામાં આવે છે, તેથી વાયુના ગુણોના જ્ઞાન અને તેના ઉપકાર ગ્રહણ કરવાથી અનેક કાર્યો સિદ્ધ થાય છે. (૪)

ये शुभ्रा घोरवर्षसः सुक्षत्रासौ रिशादसः । मरुद्धिरग्न आ गहि ॥ ५ ॥

पदार्थ : ये-जे घोरवर्षसः-घोर-उत्तमशील स्वभाववाणा रिसादसः-रोगोनुं ભક્ષણ-નાશ કરનાર સુક્ષત્રાસઃ-અન્તરિક્ષમાં નિર્ભય રાજ્ય કરનાર શુભ્રાઃ-પોતાના ગુણોથી સુશોભિત-વાયુ છે, તે મસ્દ્ભિઃ-સુખ પ્રાપ્તિના હેતુ પવનોની સાથે અગ્ને-એ ભૌતિક અગ્નિ આગહિ-પ્રકટ થાય છે અર્થાત્ કાર્યોને પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૫)

ભાવાર્થ : જે યજ્ઞ દ્વારા શુદ્ધ કરેલ પવન ઉત્તમ રાજ્ય કરનાર બનીને રોગોનો નાશ કરે છે તથા જે અશુદ્ધ-દુર્ગંધિત છે તે સુખોનો નાશ કરે છે, તેથી મનુષ્ય અગ્નિ (માં હોમ) દ્વારા વાયુની શુદ્ધિ સુખોને સિદ્ધ કરે. (૫)

ये नाकस्याधि रोचने दिवि देवासु आसते । मरुद्धिरग्न आ गहि ॥ ६ ॥

પદાર્થ : ये-જે દેવાસઃ-દિવ્યગુણયુક્ત પૃથિવી અને ચન્દ્રાદિ લોક પ્રકાશિત થાય છે, તેઓ નાકસ્ય-સુખની સિદ્ધિ કરનાર સૂર્યલોકના રોચને-રુચિકારક દિવિ-પ્રકાશમાં અધિ + આસતે-ઉપર વિદ્યમાન છે. મસ્દ્ભિઃ-તેના ધારક અને પ્રકાશક દિવ્યગુણ વાયુ દેવોની સાથે અગ્ને-એ પ્રસિદ્ધ અગ્નિ આ + ગહિ-સર્વત્રથી સુખને પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૬)

ભાવાર્થ : સર્વ લોક ઈશ્વરના પ્રકાશથી જ પ્રકાશિત છે, પરંતુ તેના રચેલા સૂર્યલોકના પ્રકાશથી પૃથિવી અને ચંદ્રલોક પ્રકાશિત થાય છે. તે દિવ્ય-ગુણોની સાથે વર્તમાન એ અગ્નિનો સર્વ કાર્યોમાં પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૬)

य ईङ्खयन्ति पर्वतान् तिरः समुद्रमर्णवम् । मरुद्धिरग्न आ गहि ॥ ७ ॥

પદાર્થ : ये-જે વાયુ પર્વતાન્-મેઘો-વાદળોને ઈંઙ્ખયતિ-છિન્ન-ભિન્ન કરીને વરસાવે છે, અર્ણવમ્-પૃથિવીના સમુદ્રનો તિરઃ-તિરસ્કાર કરે છે, સમુદ્રમ્-અન્તરિક્ષને જળથી પૂર્ણ કરે છે, તે મસ્દ્ભિઃ-ઉપર-નીચે ગતિ કરનાર પવનોની સાથે અગ્ને-એ વિદ્યુત્ નામક અગ્નિ આ + ગહિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે. (૭)

ભાવાર્થ : વાયુના યોગથી જ વર્ષા થાય છે, જળ અને રેણુ અર્થાત્ પદાર્થોના સૂક્ષ્મ ટુકડા કે રજકણ ઉપર જઈને (નીચે) આવે છે. તે પવનોની સાથે અથવા તેના નિમિત્તથી વિદ્યુત્ ઉત્પન્ન થતા ગ્રહણ કરી શકાય છે. (૭)

आ ये तन्वन्ति रश्मिभिस्तिरः समुद्रमोजसा । मरुद्धिरग्न आ गहि ॥ ८ ॥

પદાર્થ : ये-જે વાયુ પોતાના ઓજસા-બળ અથવા વેગથી સમુદ્રમ્-અન્તરિક્ષના જળમય સમુદ્રને પ્રાપ્ત થાય છે, જળમય સમુદ્રને તિરઃ-તિરસ્કૃત કરે છે, તથા જે રશ્મિભિઃ-સૂર્યના કિરણોની સાથે આ + તન્વન્તિ-અનુગત થઈને પ્રકાશનો વિસ્તાર કરે છે, તે મસ્દ્ભિઃ-ધનંજય આદિ સૂક્ષ્મ પ્રાણરૂપ

પવનોની સાથે અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ આ + ગહિ-સર્વથી પ્રાપ્ત થાય છે, કાર્યની સિદ્ધિ કરે છે. (૮)

ભાવાર્થ : એ પવનોની પ્રાપ્તિથી જ સર્વ પદાર્થો વૃદ્ધિ પામીને બળનું કારણ બને છે. તેથી મનુષ્યોએ વાયુ અને અગ્નિના યોગથી અનેક પ્રકારના કાર્યોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૮)

અભિ ત્વાં પૂર્વપીતયે સૃજામિ સોમ્યં મધુઃ। મરુદ્ધિરગ્ન આ ગહિ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે મરુદ્ધિઃ-પવનોથી અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ આગહિ-કાર્ય સાધક બને છે, તેમાં પૂર્વપીતયે-પ્રથમ જેમાં પ્રીતિ અર્થાત્ સુખનો ભોગ થાય છે તે ઉત્તમ આનંદની પ્રાપ્તિ માટે સોમ્યમ્-ઉત્પન્ન થનાર, સુખોના સમૂહ, રસગ્રહણને યોગ્ય મધુ-મધુર આનંદ આપનાર પદાર્થ વિશેષને હું અભિ + સૃજામિ-સર્વ રીતે ઉત્પન્ન કરું છું. (૯)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનજનો જે વાયુ, અગ્નિ આદિ પદાર્થો દ્વારા સંપૂર્ણ શિલ્પક્રિયા રૂપી યજ્ઞનું નિર્માણ કરે છે, તેઓના દ્વારા સર્વ મનુષ્યોએ સમસ્ત કાર્યો સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૯)

સંગતિ : અઢારમાં સૂક્તમાં પ્રતિપાદિત બૃહસ્પતિ આદિ પદાર્થોની સાથે-આ સૂક્તમાં પ્રતિપાદિત અગ્નિ અને મરુતો (પવન) શેષ વિદ્યાના સાધન હોવાથી આ ઓગણીસમાં સૂક્તની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૯)

સૂક્ત-૨૦

અયં દેવાય જન્મને સ્તોમો વિપ્રેંભિરાસ્યા। અકારિ રત્નધાતમઃ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : વિપ્રેંભિઃ-ઋભુ અર્થાત્, મેધાવી વિદ્વાનો આસ્યા-પોતાના મુખથી, દેવાય-દિવ્યગુણ અને ભોગોથી યુક્ત જન્મને-વર્તમાન દેહના ઉપયોગ માટે અથવા પુનઃ શરીર ધારણથી પ્રકટ થવા જન્મના માટે રત્નધાતમઃ-રમણીય સુખોને અત્યંત ધારણ કરનારી અયમ્-એ વિદ્યાના વિચારથી પ્રત્યક્ષ કરેલી પરમેશ્વરની સ્તોમઃ-સ્તુતિ-સમૂહને કરે છે, તે તેમ જન્મ અને ભોગને આપનારી છે. (૧)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં પુનર્જન્મનું વિધાન કરવામાં આવેલ છે. મનુષ્ય જેવા કર્મો કરે છે, તેવા તેને જન્મ અને ભોગ પ્રાપ્ત થાય છે. (૧)

ય ઇન્દ્રાય વચોયુજા તતક્ષુર્મનસા હરીઃ। શમીંભિર્યજ્ઞમાશત ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : યે-જે ઋભુ = મેધાવી વિદ્વાનો મનસા-પોતાના વિજ્ઞાનથી વચોયુજા-વાણીઓથી સિદ્ધ કરેલ હરી-ગમન અને ધારણ ગુણોને તતક્ષુઃ-અત્યંત સૂક્ષ્મ બનાવે છે શમીંભિઃ-વિવિધ સાધનો અર્થાત્ દંડાથી કલાયંત્રમાં ધૂમાવીને ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે યજ્ઞમ્-પુરુષાર્થથી સાધ્ય કરવા યોગ્ય શિલ્પયજ્ઞને આશત-પરિપૂર્ણ કરે છે અર્થાત્ પ્રાપ્ત કરે છે તેઓ સુખોની વૃદ્ધિ કરે છે. (૨)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો પદાર્થોના સંયોગ-વિભાગ દ્વારા ધારણ, આકર્ષણ અને વેગ આદિ ગુણોને જાણીને, યંત્ર-દંડ વગેરે ચલાવીને ક્રિયાઓથી શિલ્પાદિ વ્યવહાર રૂપ યજ્ઞને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ જ પરમ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨)

तक्षन्नासत्याभ्यां परिज्मानं सुखं रथम् । तक्षन्धेनुं सबर्दुघाम् ॥ ३ ॥

पदार्थ : જે મેઘાવી વિદ્વાનો નાસત્યાભ્યામ્-નિત્ય અગ્નિ અને જળથી યુક્ત પરિજ્માનમ્-સર્વત્ર માર્ગ પસાર કરવાના સાધન સુખમ્-બેસવા માટે સુશોભિત વિસ્તૃત અવકાશ યુક્ત રથમ્-રથ = રમણ કરવાના સાધન-વિમાન આદિ વાહનોની તક્ષન્-છેદન આદિ ક્રિયાથી રચના કરે છે, તેઓ સબર્દુઘામ્-સર્વ જ્ઞાનને પૂર્ણ કરનારી ધેનુમ્-ઉપદેશ-શ્રવણરૂપ વાણીને તક્ષન્-સૂક્ષ્મ કરીને ધૈર્યપૂર્વક પ્રકાશિત કરે છે. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો-ઉપવેદો સહિત વેદોનું અધ્યયન કરીને, તેના દ્વારા પ્રાપ્ત વિજ્ઞાનથી અગ્નિ આદિ પદાર્થોના ગુણોને જાણીને, કલાયંત્ર = મશીનથી યુક્ત વાહનોમાં તેને સંયુક્ત કરીને વિમાનાદિ વાહનોને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ કદી પણ દુઃખો અને દરિદ્રતાના દર્શન કરતા નથી. (૩)

युवाना पितरा पुनः सत्यमन्त्रा ऋजूयवः । ऋभवो विष्ट्यक्रत ॥ ४ ॥

પદાર્થ : જે ઋજૂયવઃ-કર્મો દ્વારા પોતાની સરળતાને ઈચ્છનારા સત્યમન્ત્રાઃ-સત્ય વિચારવાળા, ઋભવઃ-મેઘાવી વિદ્વાનો છે, તેઓ નિશ્ચયથી વિષ્ટી-વ્યાપ્તિશીલ યુવાના-મિશ્રણ-અમિશ્રણ સ્વભાવવાળા પિતરાઃ-શરીર અને આત્માના પાલન હેતુ અશ્વિનૌ-જળ અને અગ્નિની ક્રિયા સિદ્ધિ માટે પુનઃ-વારંવાર અક્રત-ઉત્તમ રીતે પ્રયુક્ત કરે છે. (૪)

ભાવાર્થ : જે આળસનો ત્યાગ કરીને, સરળ, સત્યપ્રેમી મનુષ્ય છે, તે જ જળ અને અગ્નિ આદિ પદાર્થોથી ઉપકાર ગ્રહણ કરી શકે છે. (૪)

सं वो मदासो अग्मतेन्द्रेण च मरुत्वता । आदित्येभिश्च राजभिः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે મેઘાવી વિદ્વાનો ! તમે પવન જેનો સંબંધી છે, તે ઇન્દ્રેણ-વિદ્યુત્થી અને રાજભિઃ-પ્રકાશમાન આદિત્યેભિઃ-સૂર્યના કિરણોની સાથે યુક્ત કરો છો, તેથી મદાસઃ-વિદ્યા સંબંધી આનંદ વઃ-તમે મેઘાવી જનોને (સમ) અગ્મત-ઉત્તમ રીતે પ્રાપ્ત થાય છે, તેથી તમે તેનાથી ઐશ્વર્યવાન બનો. (૫)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો જ્યારે વાયુવિદ્યા અને વિદ્યુત્ વિદ્યાનો આશ્રય લઈને સૂર્યકિરણોથી આગ્નેયાસ્ત્ર આદિ શસ્ત્રો તથા વાહનોને સિદ્ધ કરે છે, ત્યારે તે શત્રુઓને જીતીને, રાજા બનીને સુખી થાય છે. (૫)

उत त्यं चमसं नवं त्वष्टुर्देवस्य निष्कृतम् । अकर्त्त चतुरः पुनः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : જ્યારે વિદ્વાન લોકો જે ત્વષ્ટુઃ-શિલ્પ = કારીગર દેવસ્ય-વિદ્વાનોના નિષ્કૃતમ્-સિદ્ધ કરેલ સુખ આપનાર છે, ત્વમ્-તે નવમ્-નવીન દૃષ્ટિગોચર કર્મ જોઈને ઉત-નિશ્ચયથી પુનઃ-તે અનુસાર ફરી ચતુરઃ-પૃથિવી, જળ, અગ્નિ અને વાયુથી સિદ્ધ થયેલ ચાર પ્રકારના શિલ્પકર્મોને અકર્ત્ત-સમ્યક્ સિદ્ધ કરે છે, ત્યારે તેઓ આનંદિત થાય છે. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો કોઈ ક્રિયાનિપુણ શિલ્પીની સમીપ બેસીને (= રહીને) તેની ક્રિયાને પ્રત્યક્ષ જોઈને (કરીને), સુખથી શિલ્પ દ્વારા સિદ્ધ કરવા યોગ્ય કાર્યોને કરી શકે છે. (૬)

ते नो रत्नानि धत्तन् त्रिरा साप्तानि सुन्वते। एकमेकं सुशस्तिभिः ॥ ७ ॥

पदार्थ : જે વિદ્વાન સુશસ્તિભિઃ-ઉત્તમ પ્રશંસાયુક્ત ક્રિયાઓથી સાપ્તાનિ-જે સાત વર્ગથી ઉત્પન્ન કર્મ યથા : (૧) બ્રહ્મચારી, (૨) ગૃહસ્થી, (૩) વાનપ્રસ્થી, (૪) સંન્યાસી જનોના કર્મ તથા પૂર્વોક્ત યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન અર્થાત્ વિદ્વાનનો સત્કાર, (૬) વિદ્વાનોનો સંગ કરવો, (૭) દાન અર્થાત્ સર્વને ઉપકારને માટે વિદ્યાનું દાન એ પ્રકારે સાત કર્મો છે, તેમાંથી એકમેકમ્-પ્રત્યેક કર્મ કરીને ત્રિઃ-ત્રણ અર્થાત્ તેને મન, વચન અને કર્મથી સુન્વતે-સિદ્ધ કરે છે, તે-મેધાવી વિદ્વાન નઃ-અમારા માટે રત્નાનિ-વિદ્યા અને સુવર્ણ આદિ રત્નોને ધત્તન-સર્વત્રથી ધારણ કરે છે. (૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ ચાર આશ્રમોના જે ચાર પ્રકારના કર્મો છે તથા જે યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન આદિ ત્રણ-(દેવપૂજા, સંગતિકરણ અને દાન) છે, તેનું મન, વચન અને કર્મ (શરીર)થી આચરણ કરવું જોઈએ. આ રીતે તે મળીને સાત થાય છે.

જે મનુષ્યો તે (સાત કર્મો) કરે છે, તેઓને વિદ્વાનોનો સંગ, ઉપદેશની પ્રાપ્તિ, વિદ્યા અને રત્નોના લાભથી સુખ પ્રાપ્ત થાય છે. પરંતુ એક-એક કર્મને સમ્યક્ સિદ્ધ કરીને, તથા તેને સમાપ્ત કરીને બીજાનો આરંભ કરે, આ રીતે કર્મથી શાન્તિ અને પુરુષાર્થથી તેનું (મંત્રોક્ત) કર્મોનું સેવન કરવું જોઈએ. (૭)

અધારયન્ત વહ્નયોઽભજન્ત સુકૃત્યયા। ભાગં દેવેષુ યજ્ઞિયમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : જે વહ્નયઃ-સંસારમાં શુભ કર્મ અને ઉત્તમ ગુણોને પ્રાપ્ત કરાવનાર મેધાવી વિદ્વાન-સુકૃત્યયા-શ્રેષ્ઠ કર્મથી તથા દેવેષુ-વિદ્વાનો સાથે રહીને યજ્ઞિયમ્-યજ્ઞથી નિષ્પન્ન વ્યવહાર-સુખ અને મોક્ષને અધારયન્ત-ધારણ કરે છે, તેઓ ભાગમ્-નિરંતર આનંદનું અભજન્ત-સેવન કરે છે.-પ્રાપ્ત કરે છે. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે કે-તેઓ શુભ કર્મ અને વિદ્વાનોના સંગથી પૂર્વોક્ત યજ્ઞના અનુષ્ઠાનથી વ્યવહાર-સુખથી લઈને મોક્ષ સુધીના સુખની પ્રાપ્તિ કરવી જોઈએ. (૮)

સંગતિ : ઓગણીસમાં સૂક્તમાં પ્રતિપાદિત પદાર્થોથી મેધાવી લોકો જ ઉપકાર ગ્રહણ કરી શકે છે, તેથી આ વીસમાં સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્ત સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૨૦)

સૂક્ત-૨૧

इहेन्द्राग्नी उप ह्वये तयोरित्स्तोममृशमसि। ता सोमं सोमपातमा ॥ १ ॥

પદાર્થ : ઇહ-આ સંસારમાં હવન શિલ્પવિદ્યાદિ કર્મમાં સોમપાતમા-પદાર્થોના અત્યંત પાલનના નિમિત્ત અને સોમમ્-સંસારી પદાર્થોની નિરંતર રક્ષા કરનારા ઇન્દ્રાગ્ની-ઈન્દ્ર = વાયુ અને અગ્નિ છે, તા-તેને હું ઉપહ્વયે-કામની સિદ્ધિ માટે મારી સમીપ ગ્રહણ કરું છું, તયોઃ-તે (વાયુ અને અગ્નિ)ની ઇત્-અને સ્તોમમ્-ગુણોનો પ્રકાશ કરવા અમે ડશમસિ-કામના કરીએ છીએ. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ આ સંસારમાં વાયુ અને અગ્નિના ગુણોની ઈચ્છા-કામના કરવી જોઈએ.

એ બન્નેના ગુણોના ઉપદેશ અને શ્રવણ વિના તેના દ્વારા ઉપકાર ગ્રહણ કરી શકાતો નથી. (૧)

તા યજ્ઞેષુ પ્ર શંસતેન્દ્રાગ્ની શુભ્ભતા નરઃ । તા ગાયત્રેષુ ગાયત ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે નર:-યજ્ઞ કરનારા મનુષ્યો ! તમે જે પૂર્વોક્ત **ઇન્દ્રાગ્ની-વાયુ** અને અગ્નિના **પ્રશંસત-ગુણો**ને પ્રકાશિત કરો તથા **શુભ્ભત-સર્વત્ર** યાનાદિ કાર્યોમાં તેને પ્રદીપ્ત કરો. **તા-તે** બન્નેના **ગાયત્રેષુ-ગાયત્રી** છંદવાળા એ વેદોક્ત સ્તોત્રોમાં **ગાયત-ષડ્જ** આદિ સ્વરોથી ગાન કરો. (૨)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય અભ્યાસ વિના વાયુ અને અગ્નિના ગુણોનું (માત્ર) જ્ઞાન કરીને તેનાથી ઉપકાર ગ્રહણ કરી શકતા નથી.-સમર્થ બની શકતા નથી. (૨)

તા મિત્રસ્ય પ્રશંસ્તય ઇન્દ્રાગ્ની તા હવામહે । સોમપા સોમપીતયે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જેમ વિદ્વાનો વાયુ અને અગ્નિને જાણીને ઉપકાર ગ્રહણ કરે છે, તેમ અમે પણ **તા-તે** પૂર્વોક્ત (વાયુ અને અગ્નિ) **મિત્રસ્ય-સર્વનો** ઉપકાર કરનાર અને સર્વના મિત્રના **પ્રશંસ્તયે-પ્રશંસનીય** સુખને માટે આહ્વાન કરીએ છીએ અને **સોમપીતયે-સોમ** અર્થાત્ જે વ્યવહારમાં સંસારી પદાર્થોની સમ્યક્ રક્ષા થાય છે, તેને માટે **તા-તે** બન્ને **સોમયા-સર્વ** પદાર્થોના રક્ષક **ઇન્દ્રાગ્ની-વાયુ** અને અગ્નિનો **હવામહે-સ્વીકાર** કરીએ છીએ. (૩)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્યો મિત્રભાવનો આશ્રય કરીને પરસ્પરના ઉપકાર માટે વિદ્યાથી વાયુ અને અગ્નિનો કાર્યોમાં પ્રયોગ અને રક્ષણ કરીને પદાર્થોના વ્યવહારની શુદ્ધિ કરે છે, ત્યારે તેઓ સુખી થાય છે. (૩)

ઊગ્રા સન્તા હવામહ ઉપેદં સર્વનં સુતમ્ । ઇન્દ્રાગ્ની એહ ગંચ્છતામ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : અમે શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ માટે જે **ઊગ્રા-તીવ્ર** સ્વભાવવાળા **સન્તા-પ્રત્યક્ષ** વર્તમાન **ઇન્દ્રાગ્ની-વાયુ** અને અગ્નિના **હવામહે-ઉપદેશ** અને શ્રવણ કરીએ છીએ, તેઓ **ઇદમ્-એ** પ્રત્યક્ષ **સવનમ્-જેથી** પદાર્થો ઉત્પન્ન થાય છે અને **સુતમ્-ઉત્તમ** શિલ્પક્રિયાથી સિદ્ધ કરેલ વ્યવહારને **ઉપાગચ્છતામ્-સમીપ** કરીએ છીએ. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે કે-જેથી એ (વાયુ અને અગ્નિ) પ્રત્યક્ષ રૂપથી, તીવ્ર વેગાદિગુણો વાળા તથા શિલ્પક્રિયા-સંબંધી વ્યવહારમાં સમસ્ત કાર્યોમાં ઉપયોગી છે, એટલા માટે એ બન્નેનો વિદ્યાની સિદ્ધિ માટે સદા ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૪)

તા મહાન્તા સદસ્પતી ઇન્દ્રાગ્ની રક્ષ ઉબ્જતમ્ । અપ્રજાઃ સન્ત્વત્રિણઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થો : મનુષ્યો દ્વારા જે ક્રિયા કુશલતામાં ઉત્તમ રીતે પ્રયુક્ત કરેલ, **મહાન્તા-મહાન** ગુણવાળા **તા-પૂર્વોક્ત સદસ્પતી-જેમાં** ગુણ વિદ્યમાન રહે છે તે દ્રવ્યોના પાલક **ઇન્દ્રાગ્ની-વાયુ** અને અગ્નિ છે, જે **રક્ષઃ-દુષ્ટ** અથવા કુટિલ વ્યવહારોને **ઉબ્જતમ્-નાશ** કરે છે, અને જેનાથી **અત્રિણઃ-શત્રુઓ** **અપ્રજાઃ-પ્રજારહિત સન્તુ-થાય** છે,-તે બન્નેનો સદુપયોગ સર્વ લોકો કેમ ન કરે. (૫)

ભાવાર્થ : સર્વ પદાર્થોમાં સ્વરૂપથી ગુણોથી શ્રેષ્ઠ વાયુ અને અગ્નિ, સમ્યક્ જાણીને વિદ્વાનોના દ્વારા ઉત્તમ રીતે પ્રયોગ કરેલ, દુઃખોના નિવારણ દ્વારા ઉત્તમ રીતે પ્રયોગ કરેલ દુઃખોના નિવારણ દ્વારા રક્ષાના નિમિત્ત બને છે. (૫)

તેન સત્યેન જાગૃતમધિ પ્રચેતુને પ્દે। ઇન્દ્રાગ્ની શર્મ યચ્છતમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જે ઇન્દ્રાગ્ની-પ્રાણ અને વિદ્યુત્ તેન-ઉક્ત ગુણ સમૂહના ધારણ તથા સત્યેન-અવિનાશી સ્વભાવના કારણે પ્રચેતુને-જેમાં આનંદથી ચિત્ત પ્રકુલ્લિત થાય છે, પ્દે-તે સુખ પ્રાપ્તના વ્યવહારમાં અધિ + જાગૃતમ્-સર્વોપરિ પ્રસિદ્ધ ગુણવાળા છે, તે બન્ને (પ્રાણ અને વિદ્યુત્) શર્મ-ઉત્તમ સુખ યચ્છતમ્-પ્રદાન કરે છે. (૬)

ભાવાર્થ : જે પદાર્થ નિત્ય છે, તેના ગુણ પણ નિત્ય હોય છે, જે શરીરમાં તથા શરીરની બહાર રહેલ પ્રાણ અને વિદ્યુત્ છે; તેનું ઉત્તમ રીતે સેવન કરવાથી ચેતનાના નિમિત્ત બનીને સુખદાયી બને છે. તેનો પ્રયોગ શા માટે ન કરવો ? (૬)

સંગતિ : પૂર્વ સૂક્તમાં પ્રતિપાદિત મેઘાવી લોકો-પદાર્થ વિદ્યાની સિદ્ધિના વાયુ અને અગ્નિ મુખ્ય હેતુ છે, એ અભિપ્રાયને જાણવાથી પૂર્વોક્ત વીસમાં સૂક્તના અર્થની સાથે આ એકવીસમાં સૂક્તના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૨૧)

સૂક્ત-૨૨

પ્રાતર્યુજા વિ બૌધયાશ્વિનાવેહ ગચ્છતામ્। અસ્ય સોમસ્ય પીતયે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે પ્રાતર્યુજા-પ્રાતઃ અર્થાત્ પ્રથમ શિલ્પ વિદ્યા સિદ્ધ કલાયંત્રોમાં બળ આપનાર અશ્વિનૌ-અગ્નિ અને પૃથિવી ઇહ-એ શિલ્પ વ્યવહારમાં ગચ્છતામ્-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે, તેથી તે બન્ને અસ્ય-એ સોમસ્ય-ઉત્પન્ન કરવા યોગ્ય સુખ સમૂહની પીતયે-પ્રાપ્તિ માટે તમે અમને વિબોધય-સમજાવો. (૧)

ભાવાર્થ : શિલ્પકાર્યો કરવાની ઈચ્છાવાળા મનુષ્યોએ ભૂમિ અને અગ્નિનું પ્રથમ ગ્રહણ કરવું જોઈએ. કારણ કે તે બન્ને વિના વાહન-વિમાનાદિનું નિર્માણ અને યાત્રા સંભવ નથી, એમ ઈશ્વરનો ઉપદેશ છે. (૧)

યા સુરથા ર્થીતમોભા દેવા દિવિસ્પૃશા। અશ્વિના તા હ્વામહે ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : અમે યા-જે દિવિસ્પૃશા-આકાશમાર્ગથી યાનો = વિમાનાદિને એકથી બીજા સ્થાનમાં શીઘ્ર પહોંચાડવા ર્થીતમા-નિરંતર પ્રશંસનીય રથોને સિદ્ધ કરનાર સુરથા-જેના યોગથી સુંદર રથો સિદ્ધ થાય છે દેવા-પ્રકાશાદિ ગુણવાળા અશ્વિનૌ-વ્યાપ્તિ ગુણવાળા પૂર્વોક્ત અગ્નિ અને જળ છે, તા-તે ઊમા-એક-બીજા સંયોગ કરવા યોગ્ય-(બન્ને અગ્નિ અને જળ)ને હ્વામહે-ગ્રહણ-સ્વીકાર કરીએ છીએ.

(૨)

ભાવાર્થ : જે શિલ્પ કાર્યોના સાક્ષાત્ સાધક અગ્નિ અને જળ (રૂપી પદાર્થ) છે, તે મનુષ્યો દ્વારા સમ્યક્ પ્રયોગ કરવાથી કાર્ય સિદ્ધિના કારણ બને છે. (૨)

યા વાં કશા મધુમત્યશ્વિના સૂનૃતાવતી । તયા યજ્ઞ મિમિક્ષતમ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે ઉપદેશ કરનારા અધ્યાપકો અને ઉપદેશ સાંભળવા યોગ્ય શિષ્યો ! વામ્-તમારા અશ્વિના-ગુણ પ્રકાશિત કરનારા બન્ને અધ્વર્યુ-જનોની યા-જે સૂનૃતાવતી-પ્રશંસનીય બુદ્ધિથી યુક્ત મધુમતી-મધુર ગુણયુક્ત કશા-વાણી છે, તયા-તેથી તમે બન્ને યજ્ઞમ્-શ્રેષ્ઠ શિક્ષારૂપ અને ઉપદેશ રૂપ યજ્ઞને મિમિક્ષતમ્-સિંચવાની-પ્રકાશ કરવાની નિત્ય ઈચ્છા કરો. (૩)

ભાવાર્થ : ઉપદેશ વિના કોઈ મનુષ્યના વિજ્ઞાનની કદી વૃદ્ધિ થતી નથી, તેથી સર્વ જિજ્ઞાસુ વિદ્વાને નિત્ય ઉપદેશ અને શ્રવણ કરવા જોઈએ. (૩)

નહિ વામસ્તિ દૂરકે યત્રા રથેન ગચ્છથઃ । અશ્વિના સોમિનો ગૃહમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે રથોને રચનાર અને ચલાવનાર સજ્જન મનુષ્યો ! તમે યત્ર-જ્યાં ઉક્ત અશ્વિના-અગ્નિ અને જળથી યુક્ત રથેન-વિમાન આદિ વાહનોથી સોમિનઃ-સોમ અર્થાત્ પ્રશસ્ત પદાર્થોવાળા પુરુષના ગૃહમ્-ઘરે ગચ્છથઃ-જાવ છો-ત્યાં, તે દૂર સ્થાન પણ વામ્-તમારા માટે દૂરકે-દૂર નહિ-નથી. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેથી અશ્વિનો અર્થાત્ અગ્નિ અને જળના વેગથી યુક્ત વાહન અતિ દૂર સ્થાનમાં પણ ત્વરિત પહોંચી જાય છે, તેથી આ મંત્રોક્ત (અગ્નિ-જળની શક્તિથી) એ (વાહન નિર્માણ) કાર્યોને નિત્ય કરવા જોઈએ. (૪)

હિરણ્યપાણિમૂતયે સવિતાર્મુપ હ્વયે । સ ચેત્તા દેવતા પ્દમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હું ક્રત્યે-પ્રીતિ માટે જે પદમ્-સર્વ ચરાચર જગતને પ્રાપ્ત, હિરણ્યપાણિમ્-વ્યવહારમાં સુવર્ણ આદિ રત્નો પ્રાપ્ત કરાવનાર સવિતાર્મ્-સર્વ જગતના અન્તર્યામી ઈશ્વરનો ઉપહ્વયે-સારી રીતે સ્વીકાર કરું છું-ઉપાસના કરું છું, સઃ-તે પરમેશ્વર ચેત્તા-જ્ઞાન સ્વરૂપ અને દેવતા-પૂજ્યતમ દેવ છે. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે કે-જે ચિન્મય = વિજ્ઞાન સ્વરૂપ, સર્વત્ર વ્યાપક, પૂજ્યતમ, પ્રીતિ કરવા યોગ્ય અને સર્વ ઐશ્વર્ય પ્રદાન કરનાર પરમેશ્વર છે, તેની નિત્ય ઉપાસના કરવી જોઈએ. એ વિષયમાં એ પરમેશ્વર વિના અન્ય કોઈ પદાર્થ ઉપાસના કરવા યોગ્ય નથી, એમ માનો. (૫)

અપાં નપાતમવસે સવિતાર્મુપ સ્તુહિ । તસ્ય વ્રતાન્યુશ્મસિ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે ધાર્મિક વિદ્વાન્ ! જેમ હું અવસે-રક્ષા આદિને માટે જે અપામ્-સર્વ પદાર્થોને વ્યાપ્ત કરનાર અન્તરિક્ષ આદિના નિર્માતા, નપાતમ્-વિનાશ રહિત સવિતાર્મ્-સમસ્ત ઐશ્વર્યના પ્રદાતા પરમેશ્વરની સ્તુતિ કરું છું, તેમ આપ પણ ઉપ + સ્તુહિ-સ્તુતિ કરો.

હે મનુષ્યો ! જેમ અમે જેના વ્રતાનિ-નિરંતર ધર્મયુક્ત કર્મોને ઉશ્મસિ-પ્રાપ્ત થવાની કામના

કરીએ છીએ, તેમ તસ્ય-તમે પણ તેના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવને પ્રાપ્ત કરવાની કામના કરો. (૬)
ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન મનુષ્ય પરમેશ્વરની સ્તુતિ કરીને તેની આજ્ઞાનું પાલન કરે છે, તેમ જ તમે પણ અનુષ્ઠાન-આચરણ કરીને તેની રચેલી આ સૃષ્ટિમાંથી ઉપકારને ગ્રહણ કરો, (૬)

વિભક્તારં હવામહે વસોશ્ચિત્રસ્ય રાધસઃ । સવિતારં નૃચક્ષસમ્ ॥ ૭ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે નૃચક્ષસમ્-નરો = મનુષ્યોમાં અન્તર્યામી રૂપથી વિજ્ઞાનનો પ્રકાશ કરનાર વસો:-પદાર્થોથી તથા ચિત્રસ્ય-અદ્ભુત રાધસ:-વિદ્યા, સુવર્ણ, ચક્રવર્તી રાજ્ય આદિ ધનને યથા યોગ્ય વિભક્તારમ્-જીવોને તેના કર્માનુસાર વિભાગથી ફળ આપનાર અને સવિતારમ્-જગતના ઉત્પાદક પરમેશ્વરને ગ્રહણ કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ ગ્રહણ કરો.

[સૂર્ય]

હે મનુષ્યો ! જેમ અમે-નૃચક્ષસમ-મૂર્તિમાન દ્રવ્યોમાં પ્રકાશ કરનાર, વસો-ચિત્રસ્ય-રાધસ:-ઉક્ત ધન સંબંધી પદાર્થોને વિભક્તારમ્-વિવિધ પદાર્થોને વિભક્ત કરનાર સવિતારમ્-ઐશ્વર્યના હેતુ સૂર્યને હવામહે-સ્વીકાર-ગ્રહણ કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ ગ્રહણ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે કે જે પરમેશ્વર સર્વશક્તિમાન અને સર્વજ્ઞ હોવાથી સમસ્ત સંસારની રચના કરીને સર્વ (જીવો)ને કર્મ (અનુસાર સુખ-દુઃખ રૂપ) નું ફળ પ્રદાન કરે છે.

જેમ સૂર્ય અગ્નિમય અને છેદનશક્તિથી મૂર્ત પદાર્થોનો વિભાગ અને પ્રકાશ કરે છે, તેમ તમે પણ તે બન્ને (ઈશ્વર અને સૂર્ય)નું યુક્તિપૂર્વક સેવન કરો. (૭)

સર્વાય આ નિ ષીદત સવિતા સ્તોમ્યો નુ નઃ । દાતા રાધાંસિ શુમ્ભતિ ॥ ૮ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે-સદા સર્વાય:-મિત્ર અર્થાત્ પરસ્પર ઉપકારી બનીને આ + નિ + ષીદત-સર્વત્ર નિશ્ચયપૂર્વક વર્તાવ કરો. સ્તોમ્યઃ-પ્રશંસાને યોગ્ય ઈશ્વર નઃ-અમારા માટે રાધાંસિ-અનેક પ્રકારના ઉત્તમ ધનોને દાતા-પ્રદાન કરનાર સવિતા-સમસ્ત ઐશ્વર્યયુક્ત જગદીશ્વર શુમ્ભતિ-સુશોભિત છે, તેની નુ-શીઘ્રતાપૂર્વક નિત્ય પ્રશંસા કરો.

[સૂર્ય]

હે મનુષ્યો ! તમે-સદા મિત્ર અર્થાત્ પરસ્પર પરોપકારી બનીને આ + નિ + ષીદત-સર્વત્ર નિશ્ચયપૂર્વક વર્તાવ કરો અને જે સ્તોમ્યઃ-પ્રશંસનીય સૂર્ય નઃ-અમારા માટે રાધાંસિ-અનેક પ્રકારના ધનોને દાતા-દાનનો હેતુ સવિતા-ઐશ્વર્ય આપવાને નિમિત્ત સૂર્ય-શુમ્ભતિ-સુશોભિત થઈ રહેલ છે, તેની નુ નિત્ય પ્રશંસા કરો. (૮)

ભાવાર્થ : મિત્રતા વિના મનુષ્યોને પરસ્પરનું સુખ સંભવ નથી, તેથી સર્વ મનુષ્યોએ પરસ્પર મળીને પરમેશ્વરના અને અગ્નિમય સૂર્ય આદિના ગુણોનો ઉપદેશ કરીને અને શ્રવણ કરીને તેનાથી સુખને માટે સદા ઉપકાર ગ્રહણ કરવો જોઈએ. (૮)

અગ્ને પત્નીરિહા વહ દેવાનામુશ્તીરુપં । ત્વષ્ટારં સોમપીતયે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે એ અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ સોમપીતયે-સોમ અર્થાત્ પદાર્થોનું જેથી ગ્રહણ થાય છે તે વ્યવહારને માટે દેવાનામ્-એકત્રીસ જે પૃથ્વી આદિ દેવ = લોક છે, તેની ઝણતી:-પોત-પોતાના આધારના ગુણોને પ્રકાશિત કરનારી પત્ની:-પત્ની, વિદ્વાનોનું પાલન કરનાર અગ્નિ આદિ પદાર્થોની સ્થિતિને માટે એ પૃથિવી છે, તેથી તે 'દેવપત્ની' કહેવાય છે, જે-જે પદાર્થોમાં જે-જે શક્તિઓ છે, તે-તે દ્રવ્યોની પત્ની સમાન કહેવાય છે-તે પત્નીઓનું ત્વષ્ટારમ્-છેદન કરનાર સૂર્ય અથવા શિલ્પી = કારીગરને (ફહ) એ શિલ્પયજ્ઞમાં ઉપાવહ-સમીપ પહોંચાડે છે, તે અગ્નિનો યથાવત્ પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૯)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોને યોગ્ય છે કે-જે ભૌતિક અગ્નિ, વિદ્યુત્, પૃથ્વીસ્થ પ્રસિદ્ધ અગ્નિ અને સૂર્ય રૂપમાં ત્રણ પ્રકારનો છે, જે શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ માટે પૃથિવી આદિના સામર્થ્યના પ્રકાશક રૂપમાં મુખ્ય હેતુ છે, તેનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ-જાણવો જોઈએ એ શિલ્પવિદ્યા રૂપ યજ્ઞમાં પૃથિવી આદિના સંયોજન માટે હોવાથી તેના તે-તે સામર્થ્યની 'પત્ની' સંજ્ઞા કરવામાં આવી છે. (૯)

આ ગ્ના અંગ્ન ડ્હાવસે હોત્રાં યવિષ્ટ ભારતીમ્ । વસ્ત્રીં ધિષ્ણાં વહ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે યવિષ્ટ-પદાર્થોને મિશ્ર અથવા જુદા કરનાર અગ્ને-પદાર્થ વિદ્યાના જ્ઞાતા વિદ્વાન ! આપ ફહ-એ શિલ્પકાર્યોમાં અવસે-પ્રવેશ કરવા માટે ગ્ના:-પૃથિવી, હોત્રામ્-હોમ કરેલ દ્રવ્યની ગતિ, ભારતીમ્-પૃથિવી આદિના પ્રાણીઓને શુભ ગુણોથી ભરપૂર કરનારી સૂર્યની દીપ્તિ = પ્રભા, વસ્ત્રીમ્-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય દિવસ અને રાત ધિષ્ણામ્-કાર્યોમાં ઘર્ષણ કરનારી, અગ્નિની જ્વાળાથી પ્રેરિત વાણીને આ + વહ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ આ સંસારમાં મનુષ્ય જન્મ પ્રાપ્ત કરીને વેદ આદિ દ્વારા સર્વ વિદ્યાઓ પ્રત્યક્ષ પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. કોઈ દ્રવ્યના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવનું પ્રત્યક્ષ કર્યા વિના વિદ્યા સફળ થતી નથી, એમ જાણવું જોઈએ. (૧૦)

અભિ નો દેવીરવસા મહઃ શર્મણા નૃપત્નીઃ । અચ્છિન્નપત્રાઃ સચન્તામ્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : જે અચ્છિન્નપત્રાઃ-અનષ્ટ પત્ર = અવિનિષ્ટ કર્મ સાધનવાળી દેવી:-વિદ્વાનોની સ્ત્રીઓ નૃપત્નીઃ-જે ક્રિયા કુશલ વિદ્વાન પુરુષોની સ્વસમાન પત્નીઓ છે, તે મહઃ-મહાન શર્મણા-ગૃહ સંબંધી સુખ તથા અવસા-રક્ષા, વિદ્યા, પ્રવેશ આદિ કર્મની સાથે ન:-અમારાથી અભિ + સચન્તામ્-સર્વત્રથી

સંયુક્ત રહે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે પ્રકારની વિદ્યા, ગુણ, સ્વભાવવાળા પુરુષ હોય, તેની સ્ત્રીઓ પણ એ પ્રકારની હોવી જોઈએ કારણકે સમાન વિદ્યા, ગુણ, સ્વભાવવાળાઓના વિવાહ-સંબંધમાં સુખ સંભવ છે, અન્યોના વિવાહ-સંબંધ નહિ. તેથી પોતાના સમાન ગુણોવાળા પુરુષોથઈ સ્ત્રીઓ અને પોતાના સમાન ગુણોવાળી સ્ત્રીઓની સાથે પુરુષે સ્વયંવર વિધિથી વિવાહ કરીને તથા સર્વ ગૃહસ્થ કાર્યોને સંપન્ન કરીને આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૧૧)

इहेन्द्राणीमुप ह्वये वरुणानीं स्वस्तये। अग्नयीं सोमपीतये ॥ १२ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું **इह-**આ વ્યવહારમાં **स्वस्तये-**અવિનાશી, પ્રશંસનીય સુખને માટે તથા **सोमपीतये-**સોમ = ઐશ્વર્યનો જેમાં **पीति =** ભોગ હોય છે એ ગૃહકર્મ માટે **इन्द्राणीम्-**સૂર્ય અને વાયુની શક્તિની સમાન વર્તમાન **वरुणानीम्-**વરુણ = જળની સમાન, શાન્તિ, માધુર્ય આદિ ગુણોથી યુક્ત શક્તિવાળા, **अग्नयीम्-**અગ્નિની જવાળા સમાન વિદ્યા પ્રકાશવાળી સ્ત્રીને **उपह्वये-**ઉપયોગ માટે સ્વીકાર કરું છું, તેમ આપ સર્વ પણ અનુષ્ઠાન કરો. (અર્થાત્ ગ્રહણ કરો.) (૧૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વર રચિત પદાર્થો દ્વારા અવિનાશી સુખની પ્રાપ્તિ માટે, અતિ શ્રેષ્ઠ સ્ત્રીઓ પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. નિત્ય પુરુષાર્થથી પરસ્પર પ્રેમપૂર્વક વિવાહ કરવો જોઈએ. પોતાની સમાન સ્ત્રી અને પુરુષાર્થ વિના કોઈને જરા પણ યથાવત સુખની પ્રાપ્તિ સંભવ નથી. (૧૨)

मही द्यौः पृथिवी च न इमं यज्ञं मिमिक्षताम्। पिपृतां नो भरीमभिः ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે ઉપદેશ કરનાર અને શ્રવણ કરનાર મનુષ્યો ! તમે બન્ને-જે **मही-**મહાન ગુણોથી યુક્ત **द्यौः-**પ્રકાશમય પ્રસિદ્ધ અગ્નિ, વિદ્યુત્ અને સૂર્યાદિ લોક સમૂહ છે અને જે **पृथिवी-**અપ્રકાશ ગુણવાળા પૃથિવી આદિ લોક સમૂહ છે, તે **भरीमभिः-**ધારણ અને પોષણ કરનાર ગુણોથી **नः-**અમારા **इमम्-**એ **यज्ञम्-**શિલ્પ વિદ્યામય યજ્ઞને **च-**તથા **नः-**અમને **पिपृताम्-**યજ્ઞના અંગો અને સુખથી પરિપૂર્ણ કરો, તે દુલોક અને પૃથિવીલોક બન્ને થી એ યજ્ઞને **मिमिक्षताम्-**સીંચવાની-સિદ્ધ કરવાની ઈચ્છા કરો અને એને **पिपृताम्-**સારી રીતે સુખોથી પરિપૂર્ણ કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : અત્રે દુલોક = પ્રકાશમાન લોકોનું અને પૃથિવી = અપ્રકાશમાન લોકોનું ઉપલક્ષણ છે અર્થાત્ જે નામ ઉચ્ચારણ કરેલ છે તેઓનું તથા તેની સમાન સર્વ પદાર્થોનું ગ્રહણ થાય છે.

મનુષ્યોને યોગ્ય છે કે દુલોક અને પૃથિવીલોક એ બન્ને દ્વારા પ્રયત્નપૂર્વક સર્વ ઉપકારોને ગ્રહણ કરીને પૂર્ણ-ઉત્તમ સુખોની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૩)

तयोरिद् घृतवत्पयो विप्रां रिहन्ति धीतिभिः। गन्धर्वस्य ध्रुवे पदे ॥ १४ ॥

પદાર્થ : જે **विप्राः-**મેઘાવી વિદ્વાન-જે બન્નેથી પ્રશંસા પ્રાપ્ત કરે છે, **तयोः-**તે અગ્નિ = પ્રકાશમય

અને પૃથ્વી = અપ્રકાશમય લોકોના (ઇત્) જ ધીતિભિઃ-ધારણ અને આકર્ષણ આદિ ગુણોથી ગન્ધર્વસ્ય-પૃથિવીને ધારણ કરનાર વાયુના ધ્રુવે-નિશ્ચલ પદે-સર્વત્ર પ્રાપ્ત અન્તરિક્ષ નામક સ્થાનમાં વિમાનાદિ વાહનોનું સિહિન્તિ-ગમનાગમન કરે છે, તેઓ પ્રશંસિત બને છે, ઉક્ત લોકોના આશ્રયથી ધૃતવત્-પ્રશસ્ત જળવાળા પયઃ-રસ આદિ પદાર્થોને પણ ગ્રહણ કરે છે. (૧૪)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોને યોગ્ય છે કે-પૃથિવી આદિ પદાર્થોની (વિમાનાદિ) યાનો-વાહનોની રચના કરીને તથા તેની કળાઓમાં જળ અને અગ્નિનો પ્રયોગ કરવાથી ભૂમિ, સમુદ્ર અને આકાશમાં આવાગમન કરવું જોઈએ. (૧૪)

સ્યોના પૃથિવિ ભવાનૃક્ષરા નિવેશની । ચચ્છાં નઃ શર્મ સપ્રથઃ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : જે આ પૃથિવી-અતિ વિસ્તારયુક્ત સ્યોના-સુખ આપનારી તથા અનૃક્ષરા-જેમાં દુઃખદાયક કાંટા વગેરે રહિત હોય નિવેશની-સુખથી પ્રવેશ કરવા યોગ્ય (ભવ) હોય; તે નઃ-અમારા માટે સપ્રથઃ-વિસ્તૃત સુખકારક પદાર્થો સહિત શર્મ-ઉત્તમ સુખ ચચ્છ-ફળાદિથી આપે છે. (૧૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એ જાણવું જોઈએ કે-ભૂગર્ભવિદ્યા દ્વારા ગુણોથી જાણેલ એ ભૂમિ જ સર્વ મૂર્તિમાન પદાર્થોનું નિવાસ સ્થાન અને અનેક સુખોની હેતુ બનીને પુષ્કળ રત્નો પ્રદાન કરનારી હોય છે. (૧૫)

અતૌ દેવા અવન્તુ નો યતૌ વિષ્ણુર્વિચક્રમે । પૃથિવ્યાઃ સપ્ત ધામ્ભિઃ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : યતઃ-જે અનાદિ કારણથી એ વિષ્ણુઃ-ચરાચર સંસારમાં વ્યાપક જગદીશ્વરે પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીથી લઈને પ્રકૃતિ પર્યન્ત સપ્ત-સાત અર્થાત્ પૃથિવી, જળ, અગ્નિ, વાયુ, વિરાટ, પરમાણુ અને પ્રકૃતિ પર્યન્ત લોકોને ધામ્ભિઃ-જે સર્વ પદાર્થોને ધારણ કરે છે તેની સાથે વિચક્રમે-વિવિધ પ્રકારથી રચેલ છે, અતઃ-તે કારણે દેવાઃ-વિદ્વાન લોકો અથવા અગ્નિ આદિ દેવ નઃ-અમને અવન્તુ-એ વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરાવે અથવા પ્રાપ્ત કરાવે છે. અમારી રક્ષા કરે છે. (૧૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોના ઉપદેશ વિના કોઈ પણ મનુષ્યને યથાવત્ સૃષ્ટિ વિદ્યાનું જ્ઞાન કદી સંભવ થઈ શકતું નથી. ઈશ્વરનાં ઉત્પાદન કર્યા વિના કોઈ પણ દ્રવ્ય સ્વયં મહત્ પરિમાણથી મૂર્તરૂપ-સાકાર બની શકતું નથી. વિદ્વાન અને ઈશ્વર એ બન્ને વિના મનુષ્ય (માત્ર) પદાર્થોથી ઉપકાર ગ્રહણ કરી શકતા નથી. તેમ જાણો. (૧૬)

ઙ્ઙદં વિષ્ણુર્વિ ચક્રમે ત્રેધા નિ દધે પદમ્ । સમૂહમસ્ય પાંસુરે ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : જે વિષ્ણુઃ-વ્યાપક ઈશ્વરે ત્રેધા-ત્રણ પ્રકારના ઙ્ઙદમ્-આ પ્રત્યક્ષ અને અપ્રત્યક્ષ પદમ્-પ્રાપ્ત થનાર જગતને વિ + ચક્રમે-સર્વથા યથાયોગ્ય પ્રકૃતિના પરમાણુ આદિના પાદ = અંશોને ગ્રહણ કરીને-ફેલાવીને સાવયવ = મૂર્તિમાન બનાવેલ છે અસ્ય-એ ત્રણ પ્રકારના જગતમાંથી સમ્ + ઙ્ઙમ્-ઉત્તમ તર્કથી જાણવા યોગ્ય મધ્યસ્થ જગતને પાંસુરે-પ્રશસ્ત પાંસુ = રેણુ અર્થાત્ સૂક્ષ્મકણ જેમાં રહે છે તે અન્તરિક્ષમાં વિ + દધે-બનાવેલ છે; (નિદધે) વિવિધ પ્રકારથી ધારણ કરેલ છે, તે (વિષ્ણુ = સર્વ વ્યાપક ઈશ્વર) જ સર્વ મનુષ્યોના ઉપાસ્યનીય છે, તેમ જાણો. (૧૭)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરે આ સંસારમાં ત્રણ પ્રકારના જગતની રચના કરી છે, એક પૃથિવીવાળું, બીજું અન્તરિક્ષમાં સ્થિત ત્રસરેણુ આદિવાળું અને ત્રીજું પ્રકાશમય છે. એ ત્રણેય જગતના એ ત્રણ જ આધાર છે. અને જે અન્તરિક્ષમાં સ્થિત છે, તે જ પૃથિવી અને સૂર્ય આદિની વૃદ્ધિ કરનાર છે. આ સંસારને ઈશ્વર સિવાય કોઈ જીવાત્મા બનાવી શકતો નથી. કારણકે તેમાં એવા સામર્થ્યનો અભાવ છે. (૧૭)

ત્રીણિં પદા વિચક્રમે વિષ્ણુર્ગોપા અદાભ્યઃ । અતો ધર્મીણિ ધારયન્ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : જે કારણથી એ અદાભ્યઃ-અવિનાશી હોવાથી કોઈની હિંસિત થઈ શકતા નથી. તે ગોપાઃ સમસ્ત સંસારનું રક્ષણ કરનાર, સર્વ જગતને ધારયન્-ધારણ કરનાર વિષ્ણુઃ-સંસારના અન્તર્યામી પરમેશ્વરે ત્રીણિ-ત્રણ પ્રકારના પદાનિ-જાણવા અથવા પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પૃથિવી આદિ પદાર્થોને વિ + ચક્રમે-વિવિધ પ્રકારથી રચેલ છે, અતઃ-એ કારણથી ઉત્પન્ન થઈને સર્વ પદાર્થ ધર્મીણિ-પોત-પોતાના ધર્મોને ધારણ કરે છે. (૧૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ કે-ઈશ્વરે ધારણ કર્યા વિના કોઈ પદાર્થની સ્થિતિ સંભવ નથી. એ ઈશ્વરની રક્ષા વિના કોઈનો વ્યવહાર સિદ્ધ થઈ શકતો નથી. (૧૮)

વિષ્ણોઃ કર્મીણિ પશ્યત્ યતો વ્રતાનિ પસ્પશે । ઇન્દ્રસ્ય યુજ્યઃ સર્ખા ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે ઈશ્વર ઇન્દ્રસ્ય-જીવ માત્રના યુજ્યઃ-પોતાની વ્યાપ્તિથી સર્વ પદાર્થોમાં સંયોગ કરનાર દિશા, કાળ અને આકાશ આદિમાં વિદ્યમાન-વ્યાપક બનીને, સર્ખા-સર્વ સુખોનું સંપાદન કરનાર હોવાથી સર્વના મિત્ર છે, યતઃ-જેથી જીવ વ્રતાનિ-સત્યભાષણ અને ન્યાય કરવા વગેરે શુભ કર્મોને પસ્પશે-કરી શકે છે, વિષ્ણોઃ-અનંત સામર્થ્યયુક્ત પરમેશ્વરના કર્મીણિ-જગતની રચના, પાલન, ન્યાય અને પ્રલય કરવો આદિ કર્મો છે, તેને તમે પશ્યત-સમ્યક્ રીતે જુઓ અને ઉત્તમ રીતે જાણો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે કારણે સર્વના મિત્ર જગદીશ્વરે પૃથિવી આદિ લોક તથા જીવોના સાધન સહિત શરીર રચેલ છે, તેથી જ સર્વ પ્રાણીઓ પોત-પોતાના કાર્યો કરી શકે છે-સમર્થ બની શકે છે. (૧૯)

તદ્વિષ્ણોઃ પરમં પદં સદા પશ્યન્તિ સૂર્યઃ । દિવીવ ચક્ષુરાત્તમ્ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : સૂર્યઃ-ધાર્મિક, મેધાવી, પુરુષાર્થી વિદ્વાનો-દિવિ-સૂર્ય આદિ પ્રકાશમાં અથવા વિમળ જ્ઞાનથી પોતાના આત્મામાં, આ + તતમ્-સર્વત્ર વિસ્તૃત ચક્ષુઃ-જોવાના સાધન નેત્ર ઇવ-સમાન, જે વિષ્ણોઃ-વ્યાપક, આનંદસ્વરૂપ પરમેશ્વરના આ + તતમ્-સર્વત્ર વિસ્તૃત પરમમ્-સર્વોત્કૃષ્ટ પદમ્-ઈચ્છવા, જાણવા અને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય મોક્ષપદ છે, તત્-તેને પોતાના આત્મામાં સદા-સર્વ કાળમાં પશ્યન્તિ-દેખે છે-દર્શન કરે છે. (૨૦)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રાણી સૂર્યના પ્રકાશમાં શુદ્ધ નેત્રથી મૂર્ત પદાર્થોને નિહાળે-દેખે છે, તેમ વિદ્વાનજનો નિર્મળ-શુદ્ધ જ્ઞાનથી, વિદ્યા અને સુવિચારથી યુક્ત પોતાના શુદ્ધ આત્મામાં પરમેશ્વરના સંપૂર્ણ આનંદથી યુક્ત, પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય મોક્ષ નામક પાદ = અવસ્થાનો સાક્ષાત્ કરીને પ્રાપ્ત કરે છે. એ પદની પ્રાપ્તિ વિના કોઈ પણ સંપૂર્ણ સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તેથી એ પદની પ્રાપ્તિ માટે સર્વ મનુષ્યોએ

સદા-નિરંતર પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૨૦)

તદ્વિપ્રાસો વિપન્યવો જાગૃવાંસઃ સમિન્ધતે । વિષ્ણોર્યત્પરમં પદમ્ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : વિષ્ણોઃ-વ્યાપક જગદીશ્વરના ચત્-જે ઉક્ત પરમમ્-સર્વ ઉત્તમ ગુણોથી પ્રકાશિત પદમ્ પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદ છે, તત્-તેને વિપન્યવઃ-જગદીશ્વરના અનેક પ્રકારના ગુણ-સમૂહની સ્તુતિ-પ્રશંસા કરનાર જાગૃવાંસઃ-શુભકર્મ-સત્કર્મમાં જાગૃત વિપ્રાસઃ-મેધાવી = બુદ્ધિમાન વિદ્વાન મનુષ્ય છે, તે જ સમિન્ધતે-પ્રાપ્ત કરે છે.

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અવિદ્યા અને અધર્માચરણ રૂપી નિદ્રાનો ત્યાગ કરીને વિદ્યા અને ધર્માચરણમાં જાગૃત થાય છે, તેઓ જ સચ્ચિદાનંદ સ્વરૂપ, સર્વોત્તમ, સર્વ મનુષ્યોને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય અને નિરંતર સર્વવ્યાપક વિષ્ણુ = જગદીશ્વરને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૧)

સંગતિ : પૂર્વ સૂક્તમાં પ્રતિપાદિત ઈન્દ્ર અને અગ્નિ બે પદાર્થોના સહચારી અશ્વિનો, સવિતા, અગ્નિ, દેવી, ઈન્દ્રાણી, વરુણાની, અગ્નાયી, ઘાવા પૃથિવી, ભૂમિ અને વિષ્ણુ એ પદાર્થોનું અર્થોને આ સૂક્તમાં પ્રકાશિત કરવાથી પૂર્વ સૂક્તની આ સૂક્ત સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૨૨)

સૂક્ત-૨૩

તીત્રાઃ સોમાસુ આ ગહ્યાશીર્વન્તઃ સુતા ડુમે । વાયો તાન્પ્રસ્થિતાન્પિબ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે ડુમે-એ પ્રત્યક્ષ તથા અપ્રત્યક્ષ તીત્રાઃ-તીક્ષ્ણ વેગયુક્ત આશીર્વન્તઃ-પ્રશંસિત કામનાવાળા સુતાઃ-ઉત્પન્ન થયેલ સોમાસઃ-પદાર્થ છે, તાન્-તે સર્વને વાયો-વાયુ આ + ગહિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરે છે, અને એ જ પ્રસ્થિતાન-તે, સર્વ પદાર્થોનું પિબ-પાન કરે છે-પોતાની અંદર કરી લે છે. (૧)

ભાવાર્થ : પ્રાણી જે પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરવા ઈચ્છે છે અને જેને પ્રાપ્ત કરીને પૂર્ણ-ઉત્તમ કામના વાળા બને છે, તે સર્વ પદાર્થોને વાયુ જ પ્રાપ્ત કરાવીને તેને પોતાનામાં સ્થિર = સ્વસ્થ કરે છે.

જે પદાર્થોમાં તીક્ષ્ણ અને મૃદુ-કોમળ ગુણ છે, તેને સર્વે મનુષ્યોએ સમ્યક્ જાણીને તેના દ્વારા ઉપયોગ ગ્રહણ કરવો જોઈએ. (૧)

ઉભા દેવા દિવિસ્પૃશૈન્દ્રવાયૂ હવામહે । અસ્ય સોમસ્ય પીતર્યૈ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : અમે અસ્ય-એ પ્રત્યક્ષ તથા અપ્રત્યક્ષ, સોમસ્ય-જેમાં પદાર્થ ઉત્પન્ન થાય છે, તે સંસારના સુખને પીતર્યૈ-ભોગવવા માટે દિવિસ્પૃશા-જે પ્રકાશયુક્ત આકાશમાં વિમાનાદિ વાહનોને પહોંચાડવા અને દેવા-દિવ્યગુણયુક્ત ઉભા-બન્ને ઇન્દ્રવાયૂ-અગ્નિ અને પવન હવામહે-સાધવાની જિજ્ઞાસા કરીએ છીએ. (૨)

ભાવાર્થ : જે અગ્નિ વાયુ દ્વારા પ્રદીપ્ત કરવામાં આવે છે અને વાયુ અગ્નિ દ્વારા (પ્રબળ કરવામાં આવે છે.) આ રીતે પરસ્પર એ બન્ને આકાંક્ષા યુક્ત અને સહયોગી છે. મનુષ્યો યુક્તિપૂર્વક સદા તે (બન્ને)ને પ્રયુક્ત કરીને તથા સિદ્ધ કરીને પુષ્કળ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે, તે બન્ને જાણવાની ઈચ્છા શા માટે ન કરવી ? (૨)

इन्द्रवायू मनोजुवा विप्रां हवन्त ऊतये । सहस्राक्षा धियस्पती ॥ ३ ॥

पदार्थ : विप्राः-विद्वान लोको-ऊतये-शिल्पक्रिया सिद्धिनी ईच्छाने माटे જે सहस्राक्षा-સહસ્ર = અસંખ્ય અક્ષિ = સાધનોના હેતુ ધિયઃ-શિલ્પકર્મના પતી-પાલક મનોજુવા-મનની સમાન ગતિ કરનાર ઇન્દ્રવાયૂ-વિદ્યુત્ અને પવનને હવન્તે-ગ્રહણ કરે છે, તે બન્નેને જાણવાની ઈચ્છા અન્ય મનુષ્યો કેમ ન કરે ? (૩)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોને યોગ્ય છે કે તેઓએ શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ માટે અગણિત વ્યવહારોના હેતુભૂત અને વેગ આદિ ગુણોથી યુક્ત વિદ્યુત્ અને વાયુને સમ્યક્ સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૩)

મિત્રં વયં હવામહે વરુણં સોમપીતયે । જ્ઞાના પૂતદક્ષસા ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : વયમ્-અમે પુરુષાર્થી મનુષ્યો-સોમપીતયે સોમ = પોતાને અનુકૂળ સુખો આપનાર રસયુક્ત પદાર્થોનું જેમાં પાન થાય છે તે વ્યવહારને માટે જે પૂતદક્ષસા-પવિત્ર બળ કરનાર જ્ઞાના-વિજ્ઞાનના હેતુ મિત્રમ્-જીવનના હેતુ બહાર અને અંદર રહેલ પ્રાણ અને વસ્તુમ્-જે શ્વાસ રૂપ ઊર્ધ્વ ઉપર ગમન કરે છે, તે બળના હેતુ ઉદાન વાયુને હવામહે-ગ્રહણ કરીએ છીએ, તે બન્ને (પ્રાણ અને ઉદાન)ને તમે પણ કેમ ન જાણો ? (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને પ્રાણ અને ઉદાન વિના કદી સુખભોગ અને બળ સંભવ નથી, તેથી તે બન્નેના સેવનની વિધિ યથાવત્ જાણવી જોઈએ. (૪)

ઋતેન યાવૃતાવૃધાવૃતસ્ય જ્યોતિષ્સ્પતી । તા મિત્રાવરુણા હુવે ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હું યૌ-જે ઋત્નેન-જગદીશ્વરે ઉત્પન્ન કરીને ધારણ કરેલ અને સત્ય સ્વરૂપ બ્રહ્મના બનાવેલ ઋતાવૃધૌ-સત્ય, કારણ અથવા જળની વૃદ્ધિ કરનાર, ઋત્સ્ય-યથાર્થ સ્વરૂપવાળા જ્યોતિષઃ-પ્રકાશના પતી-પાલક મિત્રાવરુણૌ-મિત્ર = સૂર્ય અને વરુણ = વાયુ છે, તા-તે (બન્ને)ને હુવે-ગ્રહણ કરું છું. (૫)

ભાવાર્થ : સૂર્ય અને વાયુ વિના જળ અને પ્રકાશની ઉત્પત્તિ સંભવ નથી અને ઈશ્વરના દ્વારા ઉત્પન્ન કર્યા વિના સૂર્ય અને વાયુની ઉત્પત્તિ થઈ શકતી નથી અને તે બન્ને વિના મનુષ્યના વ્યવહારોની કોઈ સિદ્ધિ પણ થઈ શકતી નથી. (૫)

વરુણઃ પ્રાવિતા ભુવન્મિત્રો વિશ્વાભિરૂતિભિઃ । કરતાં નઃ સુરાધસઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જેમ એ ઉત્પન્ન યુક્તિથી સેવન કરેલ વરુણઃ-બહાર અને અંદર રહેનાર વાયુ વિશ્વાભિઃ સર્વ રૂતિભિઃ-રક્ષા આદિ કર્મોથી તથા સર્વ પદાર્થોથી પ્રાવિતા-સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર ભુવત્-હોય છે અને મિત્રશ્ચ-સૂર્ય પણ. જે બન્ને નઃ-અમને સુરાધસઃ-સુંદર વિદ્યા અને ચક્રવર્તી રાજ્ય સંબંધી ધનોથી યુક્ત કરતામ્-કરે છે, તેથી તે બન્નેનું અમે પણ સેવન કેમ ન કરીએ ? (૬)

ભાવાર્થ : જેથી એ બન્ને (વાયુ અને સૂર્ય)થી સર્વ પદાર્થોની રક્ષા આદિ વ્યવહાર સંભવ થાય છે, તેથી વિદ્વાનો એ બન્નેથી અનેક કાર્યો સિદ્ધ કરીને શ્રેષ્ઠ ધનોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૬)

મરુત્વન્તં હવામહ ઇન્દ્રમા સોમપીતયે । સર્જૂર્ણને તૃમ્પતુ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ આ સંસારમાં અમે લોકો સોમપીતયે-પ્રશસ્ત પદાર્થોના ભોગને માટે મસ્ત્વન્તમ્-વાયુના સંબંધથી પ્રસિદ્ધ થનારી ઇન્દ્રમ્-વિદ્યુત્ને હવામહે-ગ્રહણ કરીએ છીએ, જે સજૂ:-સહચારી-સર્વ પદાર્થોમાં સમાન વર્તનારી ગણેન-વાયુના સમૂહની સાથે ન:-અમને આ + તૃમ્પતુ-સર્વત્રથી તૃપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ તેનું સેવન કરો. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ કે-સહયોગી વાયુ વિના કદી પણ અગ્નિ પ્રદીપ્ત કરી શકાતો નથી અને ઉક્ત વિદ્યુત્ વિના કોઈ પદાર્થની વૃદ્ધિ સંભવ નથી. (૭)

ઇન્દ્રજ્યેષ્ઠા મરુદ્ગણા દેવાસઃ પૂષરાતયઃ । વિશ્વે મમ શ્રુતા હવમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : જે પૂષરાતયઃ-પૂષા = સૂર્યથી દાન લેનાર ઇન્દ્રજ્યેષ્ઠા:-સૂર્યની પ્રશંસા કરનાર દેવાસઃ-દિવ્યગુણોથી યુક્ત વિશ્વે-સર્વ મરુદ્ગણા:-વાયુ સમૂહ મમ-મારા હવમ્-કરવા યોગ્ય શબ્દ વ્યવહારને શ્રુત-સંભળાવે છે. તે આપના પણ શબ્દ વ્યવહારનું શ્રવણ કરાવે છે. (૮)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય વાયુ સમૂહ વિના ઉચ્ચારણ, શ્રવણ અને પુષ્ટિને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. જે એ મહાન સૂર્યલોક છે, તે વાયુ સમૂહને પ્રદીપ્ત કરનાર છે. જે સૂર્યલોક અગ્નિરૂપ જ છે. એ વાયુ સમૂહ અને વિદ્યુત્ વિના કોઈ પણ (પ્રાણી) વાણી (જિહ્વા)ને ચલાવી શકતા નથી. (૮)

હત વૃત્રં સુદાનવ ઇન્દ્રેણ સહસા યુજા । મા નો દુઃશંસં ઈશત ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો આપ જે સુદાનવઃ-ઉત્તમ દાનના હેતુ, સહસા-બળ અને યુજા-પોતાના અનુસંગી અર્થાત્ મુહૂર્ત આદિ કાળના અવયવોની સાથે સંયુક્ત થઈને ઇન્દ્રેણ-સૂર્ય અથવા વિદ્યુત્ની સાથે સંયુક્ત થઈને વૃત્રમ્-મેઘ = વાદળાંઓનું હત-હનન અર્થાત્ છિન્ન-ભિન્ન કરે છે, તે વાયુ સમૂહ ન:-અમને દુઃશંસઃ-દુઃખ કરાવનાર મા, ઈશત-કદી ન બનો.

ભાવાર્થ : અમે સર્વ યથા યોગ્ય પુરુષાર્થ કરીને તથા ઈશ્વરની ઉપાસના કરીને આચાર્યોથી પ્રાર્થના કરીએ છીએ. જે વાયુ સમૂહ સૂર્યનાં કિરણો અથવા વિદ્યુત્ની સાથે મેઘમંડળમાં-વાદળાંઓમાં રહેલ જળને છિન્ન-ભિન્ન કરીને, તેને વરસાવીને, ત્યારપછી તેને પૃથિવીથી ઊઠાવીને ઉપર લઈ જાય છે, તે વિદ્યાને મનુષ્યો પ્રયત્ન પૂર્વક જાણે, એમ આપ પ્રયત્ન કરો. (૯)

વિશ્વાન્દેવાન્હવામહે મરુતઃ સોમપીતયે । ડગ્રા હિ પૃશ્નિમાતરઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હિ-જેથી વિદ્યાના ઈચ્છુક અમે-જે ડગ્રા:-તીવ્ર સંવેદ આદિ ગુણોથી યુક્ત પ્રશ્નિમાતરઃ-પૃશ્નિ = આકાશ જેની માતા = ઉત્પત્તિનું કારણ છે, તેથી એ વિશ્વાન્-સર્વ દેવાન્-દિવ્યગુણો સહિત ઉત્તમ ગુણોના પ્રકાશક મસ્તઃ-જ્ઞાન અને ક્રિયાના કારણે શિલ્પવ્યવહારને પ્રાપ્ત કરાવનાર વાયુ સમૂહની (સોમપીતયે) પદાર્થોના યથાવત્ ભોગ માટે હવામહે-તથા શિલ્પ-વિદ્યાની સિદ્ધિ માટે સ્પર્ધા કરીએ છીએ, તેનો સ્વીકાર કરીએ (જાણવા ઈચ્છીએ) છીએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેથી એ આકાશથી ઉત્પન્ન થયેલ વાયુ સમૂહ અહીં-તહીં-ગમ-આગમન કરનાર અને

તીક્ષ્ણ સ્વભાવવાળો છે, તેથી વિદ્વાનો કાર્ય માટે તેનો સ્વીકાર કરે છે. (૧૦)

जयतामिव तन्यतुर्मरुतामेति धृष्णुया । यच्छुभं याथनां नरः ॥ ११ ॥

પદાર્થ : હે નર:-ધર્મયુક્ત કર્મ અને શિલ્પવિદ્યાના વ્યવહારને પ્રાપ્ત કરનાર મનુષ્યો ! તમે જયતામિવ-જેમ વિજય કરનારા યોદ્ધાઓની સહાયથી રાજા શત્રુઓ પર વિજય એતિ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ મસ્તામ્-વાયુ સમૂહના સંગથી ધૃષ્ણુયા-દૃઢતા આદિ ગુણોથી યુક્ત તન્યતુ:-વિસ્તૃત વેગ સ્વભાવવાળી વિદ્યુત્ વેગને પ્રાપ્ત કરીને મેઘને તપાવે-જીતે છે. તેના સમ્યક્ પ્રયોગથી યત્-જેટલું શુભમ્-કલ્યાણયુક્ત સુખ છે, તેટલું સર્વ યાથના-પ્રાપ્ત કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાન લોકો શૂરવીરોની સેના દ્વારા શત્રુ પર વિજય (કરીને), તથા જેમ વાયુયુક્ત ધર્ષણવિદ્યા દ્વારા વિદ્યુત્ યંત્ર (યુક્ત વાહન) ચલાવીને દૂરના દેશોમાં લઈ જઈને તથા આગ્નેય અસ્ત્ર આદિની સિદ્ધિ કરીને સુખની પ્રાપ્તિ કરે છે, તેમ તમારે પણ વિજ્ઞાન અને પુરુષાર્થ દ્વારા એ (સાધનો)થી સાંસારિક અને પારલૌકિક સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૧)

हस्काराद्विद्युत्स्पर्यतो जाता अवन्तु नः । मरुतो मृळयन्तु नः ॥ १२ ॥

પદાર્થ : અમે જે કારણે હસ્કારાત્-હસવાથી અથવા અતિ ચમકવા જાતા:-પ્રકટ થયેલ વિદ્યુત:-વીજળીઓ ન:-અમને સુખોને અવન્તુ-પ્રાપ્ત કરાવે છે. અત:-એટલા માટે પરિ-સર્વત્રથી ઉત્તમ રીતે સિદ્ધ કરીએ.

વળી જેથી મસ્ત:-વાયુ સમૂહ ન:-અમને મૃલ્યન્તુ-સુખી કરે છે, એટલા માટે તેને પણ શિલ્પ આદિ કાર્યોમાં સારી રીતે પ્રયુક્ત કરીએ. (૧૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જ્યારે પ્રથમ વાયુ વિદ્યા, પછી વિદ્યુત્ વિદ્યા, ત્યારબાદ જળ, પૃથિવી અને ઔષધિઓની વિદ્યા-એ (સર્વ વિદ્યાઓ) જાણે છે, ત્યારે જ ઉત્તમ રીતે સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૨)

आ पूषञ्चित्रबर्हिषमाघृणे धरुणं दिवः । आजानृष्टं यथा पशुम् ॥ १३ ॥

પદાર્થ : યથા-જેમ કોઈ પશુપાલન = ગોવાળ નષ્ટમ્-ખોવાયેલ પશુમ્-ગાય આદિ પશુઓને શોધીને-પ્રાપ્ત કરીને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ એ આઘૃણે-સર્વત્ર ધૃણિ = કિરણોવાળા પૂષન્-પદાર્થોનું પોષણ કરનાર સૂર્યલોક દિવ:-પોતાના પ્રકાશથી ચિત્રબર્હિષમ્-વિચિત્ર-આશ્ચર્યકારક બનેલ અન્તરિક્ષને તથા ધરુણમ્-ધારણ કરનારી પૃથ્વીને પ્રાપ્ત કરીને આ + અજ-સર્વત્ર પ્રકાશ કરે છે, પ્રકાશને ફેંકીને તેને ચમકાવે છે. (૧૩).

ભાવાર્થ : જેમ પશુપાલક-ગોવાળ અનેક કાર્યોથી પશુઓનું પાલન-પોષણ કરીને દૂધ આદિથી મનુષ્યોને સુખી કરે છે, તેમ જ એ સૂર્યલોક ચિત્ર-વિચિત્ર લોકોથી યુક્ત આકાશને તથા આકાશમાં રહેલાં પદાર્થોને, પોતાનાં કિરણો અને આકર્ષણ શક્તિથી પુષ્ટ કરીને, સર્વ પ્રાણીઓને સુખ પ્રદાન કરે છે. (૧૩)

पूषा राजानमाघृणिरपगूढं गुहां हितम् । अविन्दच्चित्रबर्हिषम् ॥ १४ ॥

पदार्थ : જેથી એ આઘૃણિ-પૂર્ણ પ્રકાશમાન પૂષા-પોતાની વ્યાપ્તિથી સમસ્ત પદાર્થોનું પોષણ કરનાર તે જગદીશ્વર-ગુહા-ગુહા = અન્તરિક્ષ અથવા બુદ્ધિમાં હિતમ્-યથા યોગ્ય સ્થાપિત કે સ્થિત ચિત્રબર્હિષમ્-ચિત્ર = અનેક પ્રકારના બર્હિ = ઉત્તમ કર્મો કરનાર અપગૂઢમ્-અત્યંત ગુપ્ત રાજાનમ્-પ્રકાશમાન, પ્રાણ અથવા જીવને અવિન્દત્-જાણે છે, તેથી તે સર્વ શક્તિમાન છે. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેથી પૂષા = જગતના રચનાર ઈશ્વર પ્રકાશમાન તથા સર્વની પુષ્ટિ કરનાર હૃદયસ્થ પ્રાણને તથા જીવને જાણે છે, માટે તે સર્વજ્ઞ છે. (૧૪)

उतो स मह्यमिन्दुभिः षड्युक्तां अनुसेषिधत् । गोभिर्यवं न चर्कृषत् ॥ १५ ॥

પદાર્થ : (ન) જેમ ખેડૂત ચર્કૃષત્-ધાન્ય આદિની પ્રાપ્તિ માટે વારંવાર ભૂમિમાં હળ હાંકે છે, તેમ જ સઃ-તે ઈશ્વર મહ્યમ્-જે હું ધર્માત્મા પુરુષાર્થી છું તેને માટે ઇન્દુભિઃ-સ્નિગ્ધ મનોહર પદાર્થો સહિત ષટ્-વસંત આદિ ત્રહુન-છ ઋતુઓને યુક્તાન્-સુખથી યુક્ત ઉતો-અને ગોભિઃ-ગાય, હાથી, ઘોડા આદિ સહિત યવમ્-જવ આદિ અન્નને અનુસેષિધત્-વારંવાર અનુકૂળતાપૂર્વક પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેથી હું તેને જ મારા ઈષ્ટ દેવ માનું છું. (૧૫)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય કિરણોથી ભૂમિને આકર્ષીને અથવા ખેડૂત હળ આદિથી વારંવાર ભૂમિને ખેડીને, તેમાં બીજ વાવીને, ધાન્ય આદિને પ્રાપ્ત કરીને વસંત આદિ છ ઋતુઓને સુખથી સંયુક્ત કરે છે, તેમ ઈશ્વર પણ યથા સમય સર્વ જીવોને કર્માનુસાર રસોના ઉત્પન્ન અને વિભાગથી ઋતુઓને સુખદાયક બનાવે છે. (૧૫)

अम्बयो यन्त्यध्वभिर्जामयो अध्वरीयताम् । पृञ्चतीर्मधुना पयः ॥ १६ ॥

પદાર્થ : જેમ જામયઃ-ભાઈઓ પોતાના અનુકૂળ આચરણથી પોતાના ભાઈઓના સુખનું સંપાદન કરે છે, તેમ જ એ અમ્બયઃ-રક્ષા કરનાર જળ અધ્વરીયતામ્-પોતાના માર્ગોથી મધુના-મધુર ગુણથી યુક્ત પયઃ સુખકારક રસનો પૃજ્જતીઃ-સ્પર્શ કરાવતા-પહોંચાડતા યન્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેમ બંધુજન-ભાઈઓ પોતાના ભાઈઓનું સમ્યક્ પોષણ કરીને તેને સીખી કરે છે, તેમ જ જળ ઉપર-નીચે જઈને મિત્રની સમાન પ્રાણીઓનાં સુખને ઉત્પન્ન કરે છે.

તે (જળના) વિના કોઈપણ પ્રાણીઓ અથવા અપ્રાણીઓની ઉન્નતિ સંભવ નથી. તેથી તેનો સમ્યક્ ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૧૬)

अमूर्या उप सूर्ये याभिर्वा सूर्यः सह । ता नो हिन्वन्त्वध्वरम् ॥ १७ ॥

પદાર્થ : યાઃ-જે અમૂઃ-જળ દૃષ્ટિગોચર થતું નથી અર્થાત્ પરોક્ષજળ સૂર્યે-સૂર્યમાં અથવા તેના પ્રકાશમાં વિદ્યમાન છે, વા-અથવા યાભિઃ-જેના સહ-સંગમાં સૂર્યઃ-સૂર્યલોક અથવા પ્રકાશ વિદ્યમાન છે

તા:- તેઓ ન:-અમારી અધ્વર્મ-અહિંસાને યોગ્ય સુખરૂપ શિલ્પયજ્ઞની ઉપ + હિન્વન્તુ-વૃદ્ધિ કરે છે. (૧૭)

ભાવાર્થ : જે જળ પૃથિવી આદિ સ્થૂળ પદાર્થથી, સૂર્યના કિરણો દ્વારા છિન્ન-ભિન્ન થઈને અર્થાત્ કણ-કણ રૂપ બનીને, લઘુતા-હલકાપણું પ્રાપ્ત કરીને, સૂર્યની તરફ જાય છે, તે જ વર્ષા દ્વારા (નીચે) આવેલ જળ વાહન આદિ વ્યવહારમાં અથવા વાહનોમાં ઉત્તમ રીતે યુક્ત કરવાથી સુખની વૃદ્ધિ કરે છે. (૧૭)

અપો દેવીરૂપં હવ્યે યત્ર ગાવઃ પિબન્તિ નઃ । સિન્ધુભ્યઃ કર્ત્વિં હ્રિવિઃ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : યત્ર-જે વ્યવહારમાં ગાવઃ-સૂર્યના કિરણો સિન્ધુભ્યઃ-સમુદ્રો અને નદીઓથી દેવીઃ-દિવ્યગુણોવાળા હોવાથી દિવ્યગુણોને પ્રાપ્ત કરાવનાર અપઃ-સર્વ પદાર્થોને વ્યાપ્ત કરનાર જળોનો પિબન્તિ-સ્પર્શ કરે છે-પાન કરે છે. તે જળોને નઃ-અમારા હ્રિવિઃ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય શિલ્પાદિ વ્યવહારોને કર્ત્વિમ્-ઉત્પન્ન કરવા માટે હું ઉપ + હવ્યે-વિદ્વાનો પાસે જઈને ગ્રહણ કરું છું. (૧૮)

ભાવાર્થ : સૂર્યના કિરણો જેટલા જળને સૂક્ષ્મ કરીને વાયુ દ્વારા સર્વત્રથી ખેંચે છે, તેટલું જ જળ ત્યાં (સૂર્ય આકર્ષણ સ્થાન)થી નિવૃત્ત-પાછું ફરીને ભૂમિ તથા ઔષધિઓને પ્રાપ્ત થાય છે-પહોંચે છે. વિદ્વાનોએ તે જળના પાન, સ્નાન અને શિલ્પકાર્ય આદિમાં પ્રયોગ કરીને અનેક પ્રકારના સુખોને સંપાદન-સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૧૮)

અપ્સ્વૈન્તરમૃતમપ્સુ ભૈષજમપામુત પ્રશસ્તયે । દેવા ભવત વાજિનઃ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે દેવાઃ-વિદ્વાનો ! તમે પ્રશસ્તયે-તમારી ઉત્કર્ષ = ઉન્નતિને માટે અપ્સુ-જળોની અન્તઃ-અંદર રહેલ અમૃતમ્-મૃત્યુકારક રોગોનું નિવારણ કરનાર અમૃતરૂપ રસને ઉત-તથા અપ્સુ-જળોમાં રહેલ ભૈષજમ્-ઔષધિઓને જાણીને અપામ્-એ જળોની ક્રિયા કુશળતા-પ્રયોગથી વાજિનઃ-ઉત્તમ જ્ઞાનવાન ભવત-બનો. (૧૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે અમૃતમય રસવાળા, ઔષધિઓના ગર્ભભૂત જળોથી શિલ્પવિદ્યા અને વૈદ્યકવિદ્યા દ્વારા (તેના) ગુણોને જાણીને શિલ્પકાર્યની સિદ્ધિ અને રોગોનું નિત્ય નિવારણ કરો. (૧૯)

અપ્સુ મે સોમો અબ્રવીદન્તર્વિશ્વાનિ ભૈષજા ।

અગ્નિં ચ વિશ્વશંભુવમાર્ષચ વિશ્વભૈષજીઃ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : જેમ એ સોમઃ-ઔષધિઓનો રાજા ચંદ્રમા અથવા સોમલતાનો રસ મે-મને અપ્સુ-જળોની અન્તઃ-અંદર વિશ્વાનિ-સર્વ ભૈષજા-ઔષધિ ચ-અને વિશ્વશમ્ભુવમ્-સર્વ જગતનું સુખ કરનારી અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ને અબ્રવીત્-પ્રસિદ્ધ કરે છે-બતાવે છે; તેમ વિશ્વભૈષજીઃ-જેના કારણે સર્વ ઔષધિઓ હોય છે, તે આપઃ-જળ પોતાનામાં સોમ આદિ વિશ્વાનિ-સર્વ ભૈષજા-ઔષધિઓ અને વિશ્વશમ્ભુવમ્-સર્વ જગતના

સુખને ઉત્પન્ન કરનારી અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ને અબુવત્ = બતાવે છે. (૨૦)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ પદાર્થો પોતાના ગુણોથી પોતાને સ્વયં પ્રકાશિત કરે છે, તેમ ઔષધિ-સમૂહની પુષ્ટિ કરનાર ચંદ્રમા અને ઔષધિ સમૂહમાં સોમલતા છે, એ બન્ને જળના કારણે અને ગ્રહણ કરવા યોગ્ય સર્વ ઔષધિઓનો પ્રકાશ કરે છે, તેમ સર્વ ઔષધિઓનો હેતુ જળ, પોતાની અંદર વિદ્યમાન, સમસ્ત કલ્યાણનું કારણ વિદ્યુત્ને પ્રકાશિત કરે છે. અર્થાત્ ઔષધોનું નિમિત્ત અગ્નિમાં છે; એમ સમજવું જોઈએ. (૨૦)

આપઃ પૃણીત ભેષજં વસ્થં તન્વેઙ્ મમ્ । જ્યોક્ ચ સૂર્યઃ દૃશે ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે કે-તેઓ જે આપઃ-સર્વ પદાર્થોને વ્યાપ્ત કરનાર પ્રાણ સૂર્યમ્-સૂર્યલોકને દૃશે-નિહાળવા અને જ્યોક્-દીર્ઘકાળ સુધી જીવવા માટે મમ-મારા તન્વે-શરીરને માટે વસ્થમ્-શ્રેષ્ઠ ભેષજમ્-રોગનાશક વ્યવહારને પૃણીત-પરિપૂર્ણતાથી પ્રકટ કરે છે, તેનું સેવન યુક્તિપૂર્વક કરવું જોઈએ. (૨૧)

ભાવાર્થ : પ્રાણો વિના કોઈ પ્રાણી અથવા વૃક્ષ આદિ પદાર્થો શરીર ધારણ કરી શકતા નથી, તેથી ક્ષુધા, તૃષ્ણા આદિના તથા રોગોના નિવારણ માટે યુક્તિપૂર્વક પ્રાણ સેવન કરવું એ જ પરમ ઔષધ છે. (૨૧)

ઙ્દમાપઃ પ્ર વ્હત્ યત્કિં ચ દુરિતં મયિં ।

યદ્વાહર્મભિદુદ્રોહ યદ્વા શોપ ડતાનૃતમ્ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : અહમ્-હું યત્-જે કિમ્-કંઈ મયિ-મારામાં દુરિતમ્-દુષ્ટ સ્વભાવના અનુષ્ઠાનથી ઉત્પન્ન થાય છે, અથવા પુણ્ય છે, અને અહમ્-મેં = કર્મકર્તા જીવે યત્-જે ઈર્ષાથી ભરપૂર અભિદ્રોહ-દ્રોહ કરેલ છે, અથવા મિત્રાતાનું આચરણ કરેલ છે, વા-અથવા યત્-જે અત્યંત ક્રોધથી શોપે-કોઈ સજ્જનને શાપ = ગેર શબ્દ કહેલ છે, અથવા અનુગ્રહ કરેલ છે, અથવા જે અનૃતમ્-અસત્ય આચરણ અથવા મિથ્યા ભાષણ કરેલ છે ડત-અથવા સત્ય આચરણ કરેલ છે, તે સર્વ ઙ્દમ્-એ આચરણને આપઃ-મારા પ્રાણ મારી સાથે રહીને પ્રવહત્-સમ્યક્ વહન કરે છે અર્થાત્ પ્રાપ્ત થાય છે. (૨૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય દ્વારા જેવા પાપ અને પુણ્ય કરવામાં આવે છે, તેવા જ ઈશ્વરની (ન્યાય) વ્યવસ્થાથી તેને (ફળ) પ્રાપ્ત થાય છે, તે નિશ્ચિત છે. (૨૨)

આપો અઘ્વાન્વચારિષ્ઠં રસેન સમગસ્મહિ ।

પયસ્વાનગ્ન આ ગહિ તં મા સં સૃજ વર્ચસા ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : અમે જે રસેન-સ્વાભિવ રસગુણથી યુક્ત આપઃ-જળ છે, તેને સમગસ્મહિ-સમ્યક્ રીતે પ્રાપ્ત કરીએ છીએ, જેનાથી હું પયસ્વાન-રસયુક્ત શરીરવાળો બનીને જે કોઈ અન્વચારિષ્ઠમ્-વિદ્વાનોથી

અનુચરણ અર્થાત્ અનુકૂળ ઉત્તમ કામ કરું છું, તેને જ પ્રાપ્ત કરું છું.

જે **અગ્ને**-ભૌતિક અગ્નિ જન્માન્તરમાં **આગ્નિ**-પ્રાપ્ત થાય છે, તે પૂર્વ જન્મમાં **તમ્**-કર્મનું અનુષ્ઠાન કરનાર તે **મા**-મને **અદ્ય**-આજ-વર્તમાનમાં **વર્ચસા**-દીપ્તિ = પ્રકાશથી **સંસૃજ**-સંયુક્ત કરે છે, તેથી જળ અને તે અગ્નિનો યુક્તિથી સમ્યક્ ઉપયોગ કરવો યોગ્ય છે. (૨૩)

ભાવાર્થ : સર્વ પ્રાણીઓએ પ્રથમ કરેલ (કર્મ)નું ફળ વાયુ, જળ અને અગ્નિના દ્વારા આ વર્તમાન જન્મમાં અથવા પુનર્જન્મમાં પ્રાપ્ત થાય જ છે. (૨૩)

સં માગ્ને વર્ચસા સૃજ સં પ્રજયા સમાયુષા ।

વિદ્યુર્મ અસ્ય દેવા ઇન્દ્રો વિદ્યાત્સહ ઋષિભિઃ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : **ઋષિભિઃ**-વિચારશીલ મંત્રાર્થના દ્રષ્ટા ઋષિઓના **સહ**-સંગમાં **દેવાઃ**-વિદ્વાનો તથા **ઇન્દ્રઃ**-પરમાત્મા અને જે **અગ્ને**-વિદ્યુત્ નામક અગ્નિ છે, તે **વર્ચસા**-દીપ્તિ, **પ્રજયા**-સંતાન આદિ પ્રજા તથા **આયુષા**-જીવનથી **મા**-મને (**સં** + **સૃજ**)-સંયુક્ત કરે છે, આને જે **મે**-મારા પાપ-પુણ્યાત્મક કર્મ છે તથા મારા **અસ્ય**-આ મનુષ્ય, પશુ અને વૃક્ષ આદિથી સંબંધને જન્મના કારણને **વિદ્યુઃ**-(વિદ્વાનો) જાણે છે, અથવા (ઈશ્વર) **વિદ્યાત્**-જાણે છે, તેથી મારે વિદ્વાનોનો સંગ અને પરમાત્માની નિત્ય ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૨૪)

ભાવાર્થ : જ્યારે જીવ પૂર્વ શરીરનો ત્યાગ કરીને અન્ય શરીરને પ્રાપ્ત કરે છે, ત્યારે તેની સાથે જે સ્વાભાવિક માનસ અગ્નિ જાય છે, તે જ પુનઃ શરીર આદિને પ્રકાશિત કરે છે, તેનો ઋષિઓ સહિત વિદ્વાન લોકો જાણે છે, અન્ય નહિ. પરમાત્મા તો નિશ્ચયથી જ યથાર્થ રૂપનાં સર્વ જાણીને જીવોને (તેના) પોત-પોતાના કર્માનુસાર શરીરથી સંયુક્ત કરીને ફળનો (સુખ-દુઃખનો) ભોગ કરાવે છે. (૨૪)

સંગતિ : પૂર્વ સૂક્તમાં પ્રતિપાદિત 'અશ્વિનો' આદિના અનુષંગી વાયુ આદિ આ સૂક્તમાં પ્રતિપાદિત કરવાથી બાવીસમાં સૂક્તના અર્થની સાથે આ તેવીસમાં સૂક્તના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૨૩)

સૂક્ત-૨૪

કસ્ય નૂનં કંતમસ્યામૃતાનાં મનામહે ચારુ દેવસ્ય નામ ।

કો નો મહ્યા અદિતયે પુનર્દાપ્તિતરં ચ દૃશેયં માતરં ચ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : અમે **કસ્ય**-કેવા ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત **કંતમસ્ય**-કોઈ અનેક **અમૃતાનામ્**-ઉત્પત્તિ અને વિનાશ રહિત અનાદિ મોક્ષ પ્રાપ્ત જીવો તથા જે જગતના કારણ નિત્યના મધ્યમાં વ્યાપક અમૃત સ્વરૂપ અનાદિ તથા એક પદાર્થ **દેવસ્ય**-પ્રકાશમાન સર્વોત્તમ સુખોના દાતા દેવના નિશ્ચયપૂર્વક **ચારુ**-સુંદર **નામ**-પ્રસિદ્ધ નામને **મનામહે**-જાણીએ ? **નૂનમ્**-નિશ્ચય કરીને **કઃ**-કોણ સુખસ્વરૂપ દેવ **નઃ**-મોક્ષને

પ્રાપ્ત થયેલ અમને મહ્યા-મહાન અદિત્યે-કારણરૂપથી નાશ રહિત પૃથિવી પર પુનઃ-પુનર્જન્મ દાત્-આપે છે ? જેથી હું પિતરમ્-જ પિતા ચ-અને મતારમ્-જનક માતા ચ-અને સ્ત્રી, પુત્ર, બંધુ આદિને દૃશ્યં- જોવાની ઈચ્છા કરું. (૧)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં પ્રશ્ન છે-કોણ એવો પદાર્થ છે, કે જે સનાતન અર્થાત્ અનાદિ પદાર્થોમાં પણ સનાતન અર્થાત્ અવિનાશી છે, કે જેના અત્યંત ઉત્તમ નામનું સ્મરણ કરીએ, તેને જાણીએ ?

કોણ દેવ આ સંસારમાં અમારા માટે કયા કારણથી મોક્ષનું સુખ ભોગવ્યા પછી જન્માન્તરને સંપાદન = તૈયાર કરે છે ?

કોણ અમને અમૃત-આનંદ પ્રદાન કરનારી મુક્તિને પ્રાપ્ત કરાવીને પુનઃ માતા-પિતા દ્વારા પુનર્જન્મમાં શરીરને ધારણ કરાવે છે ? (૧)

અગ્નેર્વયં પ્રથમસ્યામૃતાનાં મનામહે ચારુ દેવસ્ય નામં ।

સ નો મહ્યા અદિત્યે પુનર્દાત્પિતરં ચ દૃશ્યં માતરં ચ ॥ ૨ ॥

વયમ્-અમે વિદ્વાન સનાતન જીવ જે અગ્નેઃ-જ્ઞાનસ્વરૂપ અમૃતાનામ્-વિનાશ ધર્મરહિત જગતનું કારણ અથવા મોક્ષને પ્રાપ્ત જીવોમાં પ્રથમસ્ય-અનાદિ, વિસ્તૃત, અદ્વિતીય સ્વરૂપ, દેવસ્ય-સર્વ જગતના પ્રકાશક, સંસારમાં સમસ્ત પદાર્થોના દાતા પરમેશ્વરના ચારુ-પવિત્ર નામ-નામનું-ગુણોનું ગાન કરવાનું મનામહે-જાણે છે ?

સઃ-તે જગદીશ્વર જ નઃ-અમને મહ્યા-મહાન ગુણથી યુક્ત અદિત્યે-પૃથિવી પર પુનઃ-પુનર્જન્મ દાત્-આપે છે અને જેમાં હું પુનઃ-ફરી પિતરમ્-પિતા માતરમ્-ગર્ભ ધારણ કરનારી માતા ચ-અને સ્ત્રી, પુત્ર, બંધુ આદિને પણ દૃશ્યમ્-દેખું છું. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! અમે વિદ્વાનો-જે અનાદિ, અમૃતસ્વરૂપ અને અમારા સર્વના પાપ અને પુણ્યોના અનુસાર ફળોના વ્યવસ્થાપક જગદીશ્વર દેવનો નિશ્ચય કરે =માનીએ છીએ. જેની ન્યાય વ્યવસ્થાની અમે પુનર્જન્મ પ્રાપ્ત કરીએ છીએ; તમે પણ તે જ પરમેશ્વર દેવને પુનર્જન્મના પ્રદાનકર્તા જાણો. એનાથી ભિન્ન અન્ય કોઈ પદાર્થ એ કર્મ કરી શકતો નથી. એ જ મુક્ત જીવોને પણ મહાકલ્પ (મુક્તિ અવધિ) ના અન્તમાં ફરીથી પાપપુણ્યોની સમાનતા થવાના કારણે પિતામાં અને માતામાં મનુષ્ય જન્મ (ધારણ) કરાવે છે. (૨)

અભિ ત્વા દેવ સવિતરીશાનં વાર્યાણામ્ । સદાવન્ભાગમીમહે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે સવિતઃ-પૃથિવી આદિ વા ઉત્પાદક, અવન્-રક્ષા કરનાર, દેવ-સર્વ આનંદના પ્રદાતા જગદીશ્વર ! અમે વાર્યાણામ્-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય પૃથિવી આદિ પદાર્થો તથા ઈશાનમ્-વિવિધ જગતનું ઈક્ષણ કરનાર અર્થાત્ યથા યોગ્ય વ્યવસ્થા કરનાર ભાગમ્-સર્વત્ર ઉપાસના કરવા યોગ્ય ત્વા-આપની સદા-સદા-સર્વકાળમાં અભિ + ઈમહે-પ્રત્યક્ષ યાચના કરીએ છીએ અર્થાત્ પ્રાર્થના કરીએ છીએ-આપના દ્વારા જ સર્વ પદાર્થો પ્રાપ્ત કરીએ છીએ. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે કે-તેઓ જે સર્વના પ્રકાશક, સમસ્ત જગતના ઉત્પાદક અને સર્વના રક્ષક જગદીશ્વર દેવ છે, તેની જ સદા ઉપાસના કરવી જોઈએ. તેનાથી ભિન્ન-બીજા કોઈની ઉપાસના કરીને મનુષ્ય ઈશ્વરોપાસનાનું ફળ પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. તેથી એ ઈશ્વરની ઉપાસનાના વિષયમાં તેના સ્થાનમાં કોઈ મનુષ્યે કોઈ અન્ય પદાર્થને સ્થાપિત અર્થાત્ વ્યવસ્થા ન કરવી જોઈએ. (૩)

યશ્ચિદ્ધિ તે ઙ્ઙુથા ભગઃ શશમાનઃ પુરા નિદઃ । અદ્વેષો હસ્તયોર્દધે ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે જીવ ! જેમ અદ્વેષઃ-સર્વની સાથે મિત્રતાપૂર્વક વર્તનાર દ્વેષાદિથી રહિત હું ઈશ્વર ! ઙ્ઙુથા-એ પ્રકાર સુખને માટે યઃ-જે શશમાનઃ-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય, ભગઃ-સેવન કરવા યોગ્ય ધન સમૂહ છે, તેને ચિત્-સત્કારપૂર્વક ઉત્તમ કર્મ કરનાર તે-તારા જીવને-ધર્માત્માને માટે હિ-નિશ્ચયથી હસ્તયોઃ-હસ્તામલક અર્થાત્ હાથમાં આમળાંના ફૂલની સમાન કર્મફળને દધે-ધારણ કરાવું છું, અને જે (પુરાઃ) પ્રથમ નિદઃ-સર્વની નિંદા કરનાર છે, તેના હસ્તયોઃ-હાથોથી એ સુખને-ધનસમૂહનો વિનાશ કરું છું, તેમ તું પણ કર. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ હું ઈશ્વર સર્વના નિંદક મનુષ્યને દુઃખ આપું છું અને જે આ સૃષ્ટિમાં ધર્માનુસાર વર્તન-આચરણ કરે છે, તેને સુખ અને વિજ્ઞાન પ્રદાન કરું છું, તેમ તમે સર્વ મનુષ્યો પણ કરો. (૪)

ભગ્ભક્તસ્ય તે વ્યમુદ્દશેમ્ તવાવસા । મૂર્દ્ધાનિ રાય આરભે ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે પરમાત્મન ! ભગભક્તસ્ય-સર્વને સેવન કરવા યોગ્ય પદાર્થોને યથાયોગ્ય વિભક્ત કરનાર તે-આપ જગદીશ્વરની કીર્તિને વ્યમ્-ઐશ્વર્યના ઈચ્છુક અમે ઉદ્દશેમ્-ઉત્તમ રીતે પ્રાપ્ત કરીએ, તવ-તે માટે અવસા-રક્ષણ આદિ કૃપાદષ્ટિથી રાયઃ-પુષ્કળ ધનના મૂર્દ્ધાનમ્-શ્રેષ્ઠતમ ભાગને પ્રાપ્ત કરીને આરભે-આરંભ કરવા યોગ્ય વ્યવહારોમાં નિત્ય પ્રવૃત્ત થઈએ છીએ. અર્થાત્ તેની પ્રાપ્તિ માટે નિત્ય પ્રયત્ન કરીએ. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો ઈશ્વરની આજ્ઞાને પ્રાપ્ત કરે છે (પાલન કરે છે), તે જ ઈશ્વર દ્વારા સર્વત્રથી રક્ષણ પામીને, સમસ્ત મનુષ્યોમાં ઉત્તમ ઐશ્વર્યવાન બનીને, પ્રશંસા પ્રાપ્ત કરે છે. કારણ ? એટલા માટે કે તે ઈશ્વર જીવોને તેઓના કર્માનુસાર (ન્યાય વ્યવસ્થાથી) વિભાજન કરીને ફળ આપે છે. (૫)

નહિ તે ક્ષત્રં ન સહો ન મન્યું વયશ્ચનામી પતયન્ત આપુઃ ।

નેમા આપો અનિમિષં ચરન્તીર્ન યે વાર્તસ્ય પ્રમિનન્ત્યભ્વમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! તે-આપ સર્વશ્વરનાં ક્ષત્રમ્-અખંડ રાજ્યને પતયન્તઃ-અહીં-તહીં ચલન્ત ઉડતા અમી-આ દેશ્ય-અદેશ્ય લોક-લોકાન્તર નહિ-નહિ આપુઃ-વ્યાપ્ત થાય છે ચ-અને ન-નહિ વયઃ-પક્ષીગણ, ન-નહિ સહઃ-ન બળને, ન, મન્યુમ્-ન દુષ્ટ પ્રાણીઓના પ્રત્યે ક્રોધને વ્યાપ્ત કરે છે અને ન, ઙ્ઙમાઃ-ન એ પ્રત્યક્ષ-અપ્રત્યક્ષ રૂપ અનિમિષમ્-નિરંતર ચરન્તી-ગતિ કરનાર-વહેનાર આપુઃ-જળ

અથવા પ્રાણ આપના સામર્થ્યને પ્રમિનન્તિ-પરિમાણ-માપી શકે છે, અને જે વાતસ્ય-વાયુનો વેગ છે, તે પણ આપની સત્તાને ન-નહિ પ્રમિનન્તિ-એ પ્રત્યક્ષ-અપ્રત્યક્ષ પદાર્થ સર્વ આપની અશ્વમ્-આપની સત્તાનો નિષેધ કરી શકતા નથી. (૬)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર અનંત સામર્થ્યવાન હોવાથી તેને કોઈ માપી-પરિમાણ કરી શકતા નથી અને કોઈ તેની હિંસા કરી શકતા નથી. આ સમસ્ત લોક ગતિ કરે છે, (પરંતુ) તે ગતિ કરવા છતાં જગદીશ્વર ગતિ-કરતો નથી-ચલાયમાન થતો નથી) કારણ કે તે સર્વત્ર પૂર્ણ છે.

એ ઈશ્વરથી ભિન્ન અન્ય કોઈ પદાર્થની ઉપાસના કરવાથી કોઈ જીવને પૂર્ણ = અખંડિત રાજ્ય (સુખ) પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી. તેથી સર્વ મનુષ્યોએ તે અપ્રમેય = અચિંત્ય અને અવિનાશી ઈશ્વરની સદા ઉપાસના કરવી યોગ્ય છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૬)

અબુધ્ને રાજા વરુણો વનસ્યોર્ધ્વં સ્તૂપં દદતે પૂતદક્ષઃ ।

નીચીનાઃ સ્થૂરુપરિં બુધ્ન ઇષામસ્મે અન્તર્નિહિતાઃ કેતવઃ સ્યુઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે પૂતદક્ષઃ-પવિત્ર બળવાળા રાજા-પ્રકાશમાન વસ્ત્રઃ-શ્રેષ્ઠ જળસમૂહ અથવા સૂર્યલોક છે, તે અબુધ્ને-અન્તરિક્ષથી અસમાન અર્થાત્ સ્થૂળ પદાર્થમાં વનસ્ય-સેવન કરવા યોગ્ય સંસારની ઊર્ધ્વમ્-ઉપર સ્તૂપમ્-પોતાના કિરણ સમૂહને દદતે-દે છે = છોડે છે, જેની નીચીનાઃ-નીચે આવનાર કેતવઃ-કિરણો ઇષામ્-આ સંસારના પદાર્થો ઉપર-ઉપર સ્થુઃ-રોકાય છે = પડે છે, અન્તઃ-જેના મધ્યમાં નિહિતાઃ-વિદ્યમાન જળ સ્યુઃ-છે, અને જેની અંદર સ્થિત બુધ્નઃ-મેઘ છે, તે કેતવઃ-કિરણો વા પ્રજ્ઞાન અસ્મે-અમારી અંદર સ્થિત થાય છે. તેને યથાવત્ જાણો. (૭)

ભાવાર્થ : એ સૂર્ય-રૂપરહિત હોવાથી અન્તરિક્ષને પ્રકાશિત કરી શકતો નથી. એટલા માટે એ અન્તરિક્ષની ઉપર-નીચે રહેલા જ્યોતિ = કિરણો છે, તે પણ મેઘને શરણે છે. જે કિરણોમાં જળના પરમાણુઓ રહેલા છે, જેમ તે અતીન્દ્રિય હોવાના કારણે દૃષ્ટિગોચર થતાં નથી, તેમ વાયુ, અગ્નિ અને પૃથિવી આદિના સૂક્ષ્મ અવયવો અન્તરિક્ષમાં રહેલા હોવા છતાં દૃષ્ટિગોચર થતાં નથી-દેખાતાં નથી. (૭)

उरुं हि राजा वरुणश्चकार सूर्याय पन्थामन्वेत्वा उ ।

अपदे पादा प्रतिधातवेऽकरुतापवक्ता हृदयाविधिश्चित् ॥ ८ ॥

પદાર્થ : ચિત્-જેમ અપવક્તા-મિથ્યાવાદી, છળ કરનાર, દુષ્ટ સ્વભાવયુક્ત, પારકાં પદાર્થો હરનાર, હૃદયાવિધઃ અન્યાય પૂર્વક પરપીડા કરનાર શત્રુને જેમ દૃઢ બંધનોથી વશમાં રાખવામાં આવે છે, તેમ વસ્ત્રઃ-અત્યંત શ્રેષ્ઠ પરમેશ્વર અથવા શ્રેષ્ઠતાનું કારણ વાયુ, રાજા-જગતને ધારણ કરનાર જગદીશ્વર

અને પ્રકાશમાન પરમેશ્વર અથવા પ્રકાશનો હેતુ વાયુ છે, તેણે સૂર્યાય-સૂર્યની અન્વેતવૈ-અનુકૂળ ગતિ કરવા માટે ઋસ્મ્-વિસ્તારયુક્ત પન્થામ્-માર્ગ ચકાર-બનાવેલ છે, ઉત-અને અપદે-જેના કોઈ ચાક્ષુષ ચિન્હ નથી અર્થાત્ પદ-ચિન્હ હોતા નથી તે અન્તરિક્ષમાં પાદા-ગમના ગમનને પ્રતિઘાતવૈ-ધારણ કરવા માટે સૂર્યને અકઃ-બનાવેલ છે. ડ-અને એ જ્ઞાતવ્ય છે કે સર્વના ધર્તા એ બ્રહ્મ છે, હિ-અને એ ઈશ્વર સર્વના ઉપાસનીય છે, વાયુ સર્વના ઉપયોગને યોગ્ય છે, એમ નિશ્ચય કરવો જોઈએ. (૮)

ભાવાર્થ : જે પરમેશ્વરે નિશ્ચયથી જે વિશાળ સૂર્યલોકના ભ્રમણ માટે વિશાળ કક્ષાને બનાવી છે, જે વાયુ રૂપ ઈધન = બળતણથી પ્રદીપ્ત થાય છે; જે એ સર્વ લોક અન્તરિક્ષમાં પોત-પોતાની પરિધિથી યુક્ત છે, કોઈ લોકનો લોકાન્તર = અન્ય કોઈ લોક સાથે સંગ નથી, પરંતુ સર્વ અન્તરિક્ષમાં રહીને પોત-પોતાની પરિધિમાં ભ્રમણ કરે છે.

એ સર્વ જે ઈશ્વરનાં તથા વાયુનાં આકર્ષણ તથા ધારણનાં કારણે પોત-પોતાની પરિધિનો ત્યાગ કરી જ્યાં-ત્યાં વિચલિત-ચાલી શકતા નથી. તેથી અન્ય કોઈ પદાર્થ તેને ધારણ કરતા નથી.

જેમ પરમેશ્વર અધાર્મિક વક્તા-બોલનાર મનુષ્યનાં હૃદયના વિદારક છે, તેમ રોગયુક્ત પ્રાણ પણ હૃદયને વિદીર્ણ કરનાર છે. તે પરમેશ્વરની સર્વ મનુષ્યોએ ઉપાસના કેમ ન કરવી ? અને પ્રાણનો ઉપયોગ શા માટે ન કરવો ? (અર્થાત્ પરમેશ્વરની ઉપાસના અને પ્રાણનો ઉપયોગ અવશ્ય કરવો જોઈએ.) એમ સર્વેએ જાણવું જોઈએ. (૮)

શતં તેં રાજન્ભિષજઃ સહસ્રમુર્વી ગમ્भीરા સુમતિષ્ટૈ અસ્તુ ।

બાધસ્વ દૂરે નિર્ઋતિં પરાચૈઃ કૃતં ચિદેનઃ પ્ર મુમુગ્ધ્યસ્મત્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : રાજન્-હે પ્રકાશમાન રાજન અથવા પ્રજાજન ! જે ભિષજઃ-સમસ્ત રોગોનું નિવારણ કરનાર વૈદ્ય તે-આપ રાજા અને પ્રજાજનની શતમ્-અસંખ્ય ઔષધ સહસ્રમ્-અસંખ્ય ગમ્भीરા-અગાધ ઊર્વી-વિસ્તૃત ભૂમિ છે, તું સુમતિઃ-ઉત્તમ મતિ = વિજ્ઞાનયુક્ત બનીને (ચિત્) જ-નિશ્ચયથી નિર્ઋતિમ્-તે ભૂમિની રક્ષા કર, દુષ્ટ સ્વભાવવાળા પ્રાણીને દુષ્ટકર્મથી પ્રમુમુગ્ધ-મુક્ત કર-છોડાવ, જે પરાચૈઃ-ધર્મથી પરાંગમુખ-અલમ થયેલથી કૃતમ્-કરેલા એનઃ-પાપ છે, તેને અસ્મત્-અમારાથી દૂરે-દૂર રાખ, એ દુષ્ટજનોને તેના કર્માનુસાર ફળ આપીને બાધસ્વ-એનો દોષોનું નિવારણ કર, અમને શત્રુ, ચોર અને દસ્યુ લોકોના ભય રૂપ પાપથી પ્રમુમુગ્ધ-સમ્યક્ રીતે મુક્ત કર. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે કે-જે રાજા અને પ્રજાજન પાપ અને સર્વ રોગ નિવારક, પૃથિવીના ધારક, ઉત્તમ બુદ્ધિના પ્રદાતા, ધાર્મિક જનોને બળ પ્રદાન કરીને દુષ્ટજનોનું નિવારણ કરનાર છે, તેનો નિત્ય, સંગ કરવો જોઈએ.

કોઈનું (ભૂતકાળમાં કરેલ) પાપ ભોગવ્યા વિના નિવૃત્ત થતું નથી-છૂટતું નથી. તેના નિવારણ માટે પરમેશ્વરને પ્રાર્થના (માંગણી) અથવા પ્રયત્ન કરવો યોગ્ય નથી. (કારણ કે તે પાપ મારું થતું નથી ભોગવવું જ પડે છે.) પરંતુ વર્તમાન કાળમાં જે પાપ કરી રહ્યો છે અથવા ભવિષ્યમાં જે કરશે (તે

પાપ ન કરવામાં આવે) તેના નિવારણ માટે પ્રાર્થના, ઉપદેશ પુરુષાર્થ (આવશ્યક) હોય છે. તેમ જાણવું જોઈએ. (૯)

અમી ય ઋક્ષા નિહિતાસ ઉચ્ચા નક્તં દદૃશ્રે કુહં ચિદ્દિવૈયુઃ ।

અદબ્ધાનિ વરુણસ્ય વ્રતાનિ વિચાકશચ્ચન્દ્રમા નક્તમેતિ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : અમે પૂછીએ છીએ-અમી-પ્રત્યક્ષ અને અપ્રત્યક્ષ એ-જે ઉચ્ચા:-ઉપર કેન-કોના દ્વારા નિહિતાસ:-સ્થાપિત કરેલ-યથા યોગ્ય પોતાની કક્ષામાં રાખેલ ઋક્ષા:-સૂર્ય, ચંદ્ર, નક્ષત્રાદિ લોક નક્તમ્-રાત્રે દદૃશ્રે-જોવામાં આવે છે, તેઓ દિવા-દિવસના કુહ, ચિત્-ક્યાં ઈયુ:-ચાલ્યા જાય છે ?

ઉત્તર : જે વસ્તુસ્ય:-જગદીશ્વર અથવા સૂર્યના અદબ્ધાનિ-હિંસા રહિત = નાશ ન પામનાર વ્રતાનિ-કર્મ અથવા નિયમથી ઉપર સ્થિત-સ્થાપિત છે. નક્તમ્-રાત્રે વિચાકશત્-સારી રીતે પ્રકાશમાન-યમકતા (ક્યાંય જતા નથી પરંતુ આકાશમાં રહે છે.) ચન્દ્રમા:-ચંદ્ર આદિ નક્ષત્ર સમૂહ એતિ-પ્રકાશને પ્રાપ્ત કરે છે, તે ઈશ્વર તેનો રચનાર છે અને તે સૂર્ય તેનો પ્રકાશક છે, એ ઉક્ત પ્રશ્નોના ઉત્તર છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં પૂર્વાર્ધ દ્વારા પ્રશ્ન અને ઉત્તરાર્ધમાં સમાધાન કરવામાં આવેલ છે. જ્યારે એમ પૂછે, કે એ નક્ષત્રલોક કોણે રચેલ છે અને કોણે ધારણ કરેલ છે ? એ રાત્રે દેખાય છે, દિવસે દેખાતા નથી અને ક્યાં ચાલ્યા જાય છે ? તો તેનો ઉત્તર નિમ્ન આપવો.-એ સર્વલોક વરુણ = ઈશ્વરે રચેલ અને ધારણ કરેલ છે, તેમાં પોતાનો પ્રકાશ નથી, પરંતુ સૂર્યના પ્રકાશથી જ પ્રકાશિત થાય છે.

એ ક્યાંય ચાલ્યા જતા નથી પરંતુ દિવસે સૂર્યના પ્રકાશથી આચ્છાદિત-ઢંકાયેલા હોવાથી જોવામાં આવતા નથી, રાત્રે સૂર્યના કિરણોથી પ્રકાશમાન થઈને જોવામાં આવે છે. એ સર્વ ધન્યવાદ આપવા યોગ્ય કર્મ પરમેશ્વરનું જ છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૧૦)

તત્ત્વાં યામિ બ્રહ્મણા વન્દમાનસ્તદાશાસ્તે યજમાનો હૃવિર્ભિઃ ।

અહેઠ્ઠમાનો વરુણેહ બોધ્યુરુશંસ મા ન આયુઃ પ્ર મૌષીઃ ॥ ૧૧ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હે ઉશ્શંસ-સર્વથા પ્રશંસનીય વસ્તુ-જગદીશ્વર ! જે ત્વા-આપનો આશ્રય લઈને યજમાન:-ત્રણ પ્રકારના યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરનાર વિદ્વાન હૃવિર્ભિઃ:-હવન આદિ સાધનોથી તત્-તત્-તે-તે અત્યંત સુખની આશાસ્તે-સર્વત્રથી આશા-ઈચ્છા કરે છે, તે-તે અત્યંત સુખની આશાસ્તે-સર્વત્રથી આશા-ઈચ્છા કરે છે, તે આપ વરુણને પ્રાપ્ત કરવા માટે બ્રહ્મણા-વેદ દ્વારા વન્દમાન સ્તુતિ-સ્મરણ કરતા તથા અહેઠ્ઠમાન:-આપનો અનાદર કે અપમાન ન કરતા હું આપને યામિ-પ્રાપ્ત થાઉં છું, કૃપા કરીને મને ઇહ-આ સંસારમાં બોધિ-વિદિત થાઓ અને ન:-અમારી આયુઃ-આયુને મા, પ્રમૌષીઃ:-નષ્ટ ન કરો અર્થાત્ શીઘ્ર મારા આત્મામાં પ્રકાશિત થાઓ. આ મંત્રનો એક અર્થ છે.

[સૂર્ય]

તત્-સુખની ઈચ્છા કરતા યજમાન:-ત્રણ પ્રકારના યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરનાર વિદ્વાન જે ઉક્ષાંસ-અત્યંત પ્રશંસનીય વસ્ત્ર-પરમેશ્વરને હવિર્ધિ:-હવન આદિ સાધનોથી આશાસ્તે-સર્વત્રથી ચાહે છે; જેની બ્રહ્મણા-વેદ દ્વારા વન્દમાન:-સ્તુતિ કરતા તથા અહેઢમાન:-અનાદર ન કરતા ઇહ-આ સંસારમાં તત્-સુખની ઈચ્છા કરતા હું જેને યામિ-પ્રાપ્ત કરુ છું; જેથી એ ઉક્ષાંસ-અત્યંત પ્રશંસનીય (વસ્ત્ર) સૂર્ય અમને બોધિ-વિદિત ગુણવાળો થઈને ન:-અમારી આયુ-આયુ મા; પ્રમોષી:-નષ્ટ ન કરે અર્થાત્ વૃદ્ધિ કરે. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વેદોક્ત રીતિથી તે પરમેશ્વર અને સૂર્યને વિશેષ રૂપથી જાણીને સુખ પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. કોઈએ પણ પરમેશ્વરનો અને સૂર્યવિદ્યાનો અનાદર ન કરવો જોઈએ. સદા તેણે-(ઈશ્વરે) રચેલ સૂર્ય આદિ પદાર્થોના ગુણોને જાણીને તથા તેનાથી ઉપકાર ગ્રહણ કરીને નિત્ય આયુની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૧)

તદિન્નક્તં તદ્દિવા મહામાહુસ્તદ્યં કેતૌ હૃદ આવિચ્છે ।

શુનઃશેપોયમહૃદ્ગૃભીતઃ સો અસ્માન્ રાજા વરુણો મુમોક્તુ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : વિદ્વાનો નક્તમ્-રાત દિવા-દિવસ જે જ્ઞાનનો આહુ:-ઉપદેશ કરે છે, તત્-તે અને જે મહ્યમ્-વિદ્યા ધનની ઈચ્છા કરનાર મારા માટે હૃદ:-મન સહિત આત્મામાં કેત:-પ્રજ્ઞા વિશેષ યુક્ત-ઉત્તમ બોધ આવિચ્છે-સર્વ પ્રકારે વિવિધ રૂપે સત્ય પ્રકાશિત થાય છે, તદિત્-તે વેદ બોધ અર્થાત્ વિજ્ઞાનને જ હું માનું છું, કહું છું અને કરુ છું યમ્-જેનો શુનઃ-શેષ:-અત્યંત જ્ઞાનવાળા વિદ્યા વ્યવહારને માટે પ્રાપ્ત પરમેશ્વર અથવા સૂર્યનો અક્ત્-ઉપદેશ કરે છે, જેથી વસ્ત્ર:-શ્રેષ્ઠ રાજા-પ્રકાશમાન પરમેશ્વર અમારી ઉપાસનાને પ્રાપ્ત કરીને અસ્માન્-અમે પુરુષાર્થી અને ધર્માત્માઓને પાપ અને દુઃખોથી મુમોક્તુ-મુક્ત કરે છે. સારી રીતે વિદિત ઈશ્વર અને ઉપયુક્ત સૂર્ય પણ ત્યારે દરિદ્રતાને નષ્ટ કરે છે. સ:-તે પૂર્વોક્ત વેદ વિદ્યાથી ઉત્પન્ન બોધ અમે ગૃભીત:-ગ્રહણ કરેલ છે, જેથી અમે યોગ્ય રીતે તે ઈશ્વરની ઉપાસના અને સૂર્યનો યથાવત્ ઉપયોગ કરીએ. (૧૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ એ પ્રકારનો ઉપદેશ કરવો જોઈએ અને માનવું જોઈએ કે વિદ્વાનો વેદ અને ઈશ્વર મને જે જ્ઞાનનો ઉપદેશ કરે છે અને જેનો હું શુદ્ધ બુદ્ધિથી નિશ્ચય કરું છું, તેનો જ મારે સર્વ મનુષ્યોએ સ્વીકાર કરીને પાપ આચરણથી દૂર રહેવું જોઈએ. (૧૨)

શુનઃશેપો હ્યહૃદ્ ગૃભીતસ્ત્રિષ્વાદિત્યં દ્રુપદેષુ બદ્ધઃ ।

અવૈનં રાજા વરુણઃ સસૃજ્યાદ્વિદ્વાં અદબ્ધો વિ મુમોક્તુ પાશાન્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : જેમ શુનઃશેષ:-ઉક્ત ગુણયુક્ત વિદ્વાન ત્રિષુ-કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનમાં આદિત્યમ-૧૧૭

અવિનાશી પરમેશ્વરનું અહ્ત-આહ્વાન કરે છે. તે અને ગૃભીતઃ-સ્વીકાર કરેલ ઉક્ત ત્રણે કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનને પ્રકાશિત કરાવે છે અને જે દુપદેષુ-ક્રિયાકુશળતાની સિદ્ધિ માટે વિમાન આદિ સ્તંભમાં બદ્ધઃ-નિયમથી યુક્ત કરેલ વાયુ ગ્રહણ કરેલ છે, તેમ તે લોકોએ પણ ગ્રહણ કરવા જોઈએ. જેમ-જેમ ગુણવાળા પદાર્થોને અદબ્ધઃ-અતિ પ્રશંસનીય વસ્તુઃ-અત્યંત શ્રેષ્ઠ અને રાજા-પ્રકાશમાન પરમેશ્વર અવસસૃજ્યાત્-પૃથક્-પૃથક્ બનાવીને સિદ્ધ કરે છે, તે અમને પણ તેવા ગુણયુક્ત કામોમાં સંયુક્ત કરે.

હે ભગવન્ ! આપ અમારા પાશાન્-બંધનોને વિમુમોક્તુ-વારંવાર છોડાવો. એ જ રીતે અમારી ક્રિયાકુશળતામાં સંયુક્ત કરેલ પ્રાણ આદિ પદાર્થો પાશાન્-સમસ્ત દરિદ્રતા રૂપી બંધનોને વારંવાર છોડાવી દો અથવા મુક્ત કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જેમ ઈશ્વરે જે પદાર્થને જે પ્રકારના ગુણયુક્ત બનાવેલ છે, તેમજ તેના ગુણોને જાણીને કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનને તેમાં નિયુક્ત કરવા જોઈએ. જેમ પરમેશ્વર ન્યાયયુક્ત કર્મ કરે છે, તેમ જ અમારે પણ આચરણ કરવું જોઈએ. જે પાપમય બંધન કરનારા કર્મો છે, તેનો દૂરથી ત્યાગ કરીને, સદા પુણ્યમય કર્મો કરવા જોઈએ. (૧૩)

અવ તે હેઠો વરુણ નમોંભિરવ યજ્ઞેભિરીમહે હવિર્ભિઃ ।

ક્ષયન્નસ્મભ્યમસુર પ્રચેતા રાજન્નેનાંસિ શિશ્રથઃ કૃતાનિ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્-પ્રકાશમાન પ્રચેતઃ-અતિ ઉત્તમ વિજ્ઞાનયુક્ત અસુર-પ્રાણોમાં રમણ કરનાર, વસ્તુ-અત્યંત પ્રશંસનીય-વરણ કરવા યોગ્ય, અસ્મભ્યમ્-અમને વિજ્ઞાન પ્રદાન કરનાર ભગવન્ જગદીશ્વર જેથી અમે કૃતાનિ-કરેલ એનાંસિ-પાપનો ક્ષયન્-વિનાશ કરતા અવશિશ્રયઃ-પૃથક્ વિજ્ઞાન આદિ દાનથી શિથિલ કરો છો, તેથી અમે નમોંભિઃ-નમસ્કાર, અન્ન અથવા જળ યજ્ઞેભિઃ-કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનના નિષ્પાદક કર્મ તથા હવિર્ભિઃ-હવન કરવા યોગ્ય શ્રેષ્ઠ પદાર્થોથી તે-આપનો હેડઃ-નિરાદર અવ-ન કદી રૂંમહે-કરવા જાણીએ અને મુખ્ય પ્રાણની વિદ્યાને ઈચ્છીએ છીએ. (૧૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે રીતે ઈશ્વરરચિત સૃષ્ટિમાં વેદાદિ દ્વારા બતાવેલ જ્ઞાનથી, કરેલ પાપકર્મ ફળના ભોગથી શિથિલ બની જાય છે, તેવું (આચરણ) કરવું જોઈએ.

જેમ અજ્ઞાની મનુષ્યને કર્મફળ પીડા આપે છે, તેમ જ્ઞાની મનુષ્યને પીડા દુઃખ આપવામાં સમર્થ બનતું નથી, એમ જાણવું જોઈએ. (૧૪)

ઉદુત્તમં વરુણ પાશામસ્મદવાધમં વિ મધ્યમં શ્રથાય ।

અથા વચમાદિત્ય વ્રતે તવાનાંગસો અદિતયે સ્યામ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે વસ્તુ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય ઈશ્વર ! આપ અસ્મત્-અમારાથી અધમમ્-નિકૃષ્ટ મધ્યમમ્-ઉત્તમ અને મધ્યમની વચ્ચેનું ઉત્-અને ઉત્તમમ્-અતિ દૃઢ, અત્યંત દુઃખ દેનાર પાશમ્-બંધનનો વ્યવશ્રથાય-દૂરથી વિનાશ કરો, વિશેષરૂપથી શિથિલ કરો, અથ-તદનન્તર-હે આદિત્ય-વિનાશ રહિત ઈશ્વર ! તવ-સત્ય ઉપદેશ કરનાર તથા સર્વના ગુરુ આપના વ્રતે-સત્યાચરણરૂપી વ્રત કરીને અનાગસઃ-અપરાધ રહિત બનીને વચમ્-અમે મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓ અદિતયે-અખંડ અર્થાત્ વિનાશરહિત સુખને માટે સ્યામ્-પ્રયત્નશીલ બનીએ. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ઈશ્વરની આજ્ઞાનું યથાવત્ પાલન કરે છે, તે પવિત્ર બનીને સમસ્ત દુઃખરૂપી બંધનથી પૃથક્ થઈને નિત્ય-સુખ પ્રાપ્ત કરે છે, અન્ય નહિ. (૧૫)

સંગતિ : તેવીસમાં સૂક્તમાં કહેલ વાયુ આદિ પદાર્થોના સંબંધી પ્રજાપતિ = ઈશ્વર આદિ પદાર્થોના અહીં કથનથી આ ચોવીસમાં સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૨૪)

સૂક્ત-૨૫

यच्चिद्धि ते विशो यथा प्र देव वरुण व्रतम्। मिनीमसि द्यविद्यवि ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-સુખ પ્રદાતા વસ્તુ-સર્વોત્તમ જગદીશ્વર ! આપ યથા-જેમ અજ્ઞાનથી કોઈ રાજા અથવા મનુષ્યની વિશઃ-પ્રજા અથવા સંતાનો આદિ દ્યવિદ્યવિ-પ્રતિદિન અપરાધ કરે છે, ક્યારેક કાર્યોનો નાશ કરી દે છે; જેમ તેને ન્યાયુક્ત દંડ અથવા તેના પર કરુણા કરે છે, તેમ અમે તે-આપના યત્-જે વૃત્તમ્-સત્ય આચરણ આદિ નિયમો છે, હિ-તેને ક્યારેક પ્રમિણીમસિ-અજ્ઞાનતાથી ત્યાગ કરીએ છીએ. તેના અમને યથાયોગ્ય ન્યાય અથવા કરુણા ચિત્-પણ કરો છો. (૧)

ભાવાર્થ : હે ભગવન્ ! જેમ પિતા આદિ, વિદ્વાન અને રાજા લોકો તુચ્છ બુદ્ધિવાળા તથા ઉન્મત્-પાગલ લોકો પર અથવા બાળકો પર કરુણા કરે છે અને તેને ન્યાયયુક્ત શિક્ષા કરે છે, તેમ આપ પણ પ્રતિદિન અમારા ન્યાયાધીશ અને કરુણા કરનાર, શિક્ષક બનો. (૧)

मा नो वधाय हत्वै जिहीळानस्य रीरधः। मा हृणानस्य मन्यवै ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે વસ્તુ-જગદીશ્વર ! આપ-જિહીઠાનસ્ય-અજ્ઞાનથી અમારો અનાદર કરનાર મનુષ્યથી હત્વે-હિંસા-મારવા માટે તથા વધાય-વધ કરવા માટે નઃ-અમને કદી મા-, રીરધઃ-પ્રેરિત ન કરો. એજ રીતે હ્રુણાનસ્ય-અપરાધ કરીને અમારી સામે લજ્જિત થનાર ઉપર મન્યવે-કોધ કરવા માટે મા, રીરધઃ-કદી પ્રવૃત્ત ન કરો. (૨)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ આપે છે કે-હે મનુષ્યો ! જે અલ્પબુદ્ધિ લોકોના અજ્ઞાનથી અપરાધ કરવાથી તેને મારવા-દંડ આપવા પ્રવૃત્તિ ન કરો. જો કોઈ અપરાધ કરીને લજ્જા-શરમ અનુભવે, તો તેના પર કોધ ન કરો. (૨)

वि मृळीकाय ते मनो रथीरश्वं न सन्दितम्। गीर्भिर्वीरुण सीमहि ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે વસ્તુ-જગદીશ્વર ! અમે રથીઃ-રથના સ્વામી સન્દિતમ્-રથમાં જોડેલ અશ્વમ્-ઘોડાની

ન-સમાન મૂઠીકાય-ઉત્તમ સુખ માટે તે-આપના મન:-જ્ઞાનને ગીર્ધિ:-પવિત્ર વેદ વાણીઓથી વિષીમહિ-
પોતાના હૃદયમાં પ્રેમપૂર્વક કારાગારમાં ચોર આદિની સમાન બાંધીએ છે. (૩)

ભાવાર્થ : હે ભગવન્ ! જેમ રથના સ્વામીના નોકર ઘોડાઓને સર્વત્ર બાંધે છે, તેમજ અમે
આપને વેદ વિજ્ઞાનને હૃદયમાં સ્થિર કરીએ છીએ. (૩)

પરાહિમે વિમન્યવઃ પતન્તિ વસ્યઙ્ઘષ્ટયે । વયો ન વસતીરુપ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ન:-જેમ આપની કૃપાથી વય:-પક્ષીઓ વસતી:-પોતાના માળાઓ છોડીને
દૂર સ્થાનોમાં ઉડી જાય છે, તેમ મે-મારા નિવાસથી વસ્યઙ્ઘષ્ટયે-અત્યંત ધનની કામના માટે વિમન્યવ:-
વિવિધ અનેક પ્રકારના મન્યુ = ક્રોધ કરનાર દુષ્ટ જનો હિ-નિશ્ચયથી પરાપતન્તિ-દૂર ચાલ્યા જાય. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ ઉડાડવામાં આવેલા પાપીઓ દૂર જઈને વાસ કરે છે, તેમજ ક્રોધ કરનાર પ્રાણી
મારાથી દૂર વસે-રહે, હું પણ તેનાથી દૂર રહું. જેથી અમારા સ્વભાવમાં વિપરીતતા અને ધનની કદી
પણ હાનિ થાય નહિ. (૪)

કદા ક્ષત્રશ્રિયં નરમા વરુણં કરામહે । મૂઠીકાયોરુચક્ષસમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : અમે કદા-ક્યારે મૂઠીકાય-અત્યંત સુખ માટે ઉચ્ચક્ષસમ્-જેનું વેદો અનેક પ્રકારથી
વર્ણન કરે છે, તે નરમ્-સર્વને સન્માર્ગ પર લઈ જનાર-ચલાવનાર વરુણમ્-પરમેશ્વરનું સેલન-આજ્ઞાપાલન
કરીને ક્ષત્રશ્રિયમ્-ચક્રવર્તી રાજ્ય લક્ષ્મીને કરામહે-સર્વત્ર સિદ્ધ કરીએ. (૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમેશ્વરની આજ્ઞાનું યથાવત્ પાલન કરીને સર્વ માટે સુખદાયક ચક્રવર્તી
રાજ્યનું ન્યાયથી સેવન કરવું જોઈએ. (૫)

તદિત્સમાનમાશાતે વેનન્તા ન પ્રયુચ્છતઃ । ધૃતવ્રતાય દાશુષે ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : ન-જેમ એ બન્ને વેનન્તા-વાદિત્ર = વાજા વગાડનારા પ્રયુચ્છતઃ-અત્યંત આનંદિત થાય
છે, તેમ મિત્રાવસ્થા-વાયુ અને સૂર્ય ધૃતવ્રતાય-જેણે સત્યભાષણાદિ અને ક્રિયામય વ્રત ધારણ કરેલ
છે, તે દાશુષે-દાતા પુરુષને માટે તત્-હવનમાં હોમેલ પદાર્થ = હવિ અથવા વિમાન આદિ રચનાની
વિધિને ઇત્-નિશ્ચય જ સમાનમ્-સમાન રૂપથી આશાતે-વ્યાપ્ત કરે છે. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ હર્ષયુક્ત વાદિત્ર = વાજા વગાડવામાં કુશળ બે વ્યક્તિ-વાજાને ગ્રહણ કરીને તેને
ચલાવીને-વગાડીને શબ્દ કરે છે-ઝંકૂત કરે છે, તેમ સિદ્ધ કરેલ હવિ = હવનના પદાર્થો વિદ્યાવાન
મનુષ્ય દ્વારા તે હોમેલ હવિને તથા વિમાન આદિ વાહનોમાં યથાવત્ પ્રયોગ કરેલ વાયુ અને સૂર્ય
ધારણ કરીને તથા ચલાવીને તેને શબ્દાયમાન કરે છે. (૬)

વેદા યો વીનાં પદમન્તરિક્ષેણ પતતામ્ । વેદ નાવઃ સમુદ્રિયઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : ય:-જે સમુદ્રિય:-અન્તરિક્ષ અથવા જળમય પ્રસિદ્ધ સમુદ્રમાં રહેનાર અર્થાત્ પુરુષાર્થથી યુક્ત વિદ્વાન મનુષ્ય અન્તરિક્ષેણ-આકાશ માર્ગથી પતતામ્-જનાર વીનામ્-વિમાન સર્વલોક, અથવા પક્ષીઓના પદમ્-ગન્તવ્ય માર્ગને વેદ-જાણે છે, અને સમુદ્રમાં ચાલનારી નાવ:-નૌકાના પદમ્-ગન્તવ્ય માર્ગને વેદ-જાણે છે, તે શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ કરવામાં સમર્થ બની શકે છે, અન્ય નહિ. (૭)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે વેદોમાં અન્તરિક્ષ, ભૂમિ અને સમુદ્રમાં ગમન કરવા-જવા માટે જે યાન-વાહનોની વિદ્યાનો ઉપદેશ કરેલ છે, તેને સિદ્ધ કરવા માટે, જે પૂર્ણવિદ્યા, શિક્ષા તથા હસ્તક્રિયા કૌશલથી અતિ નિપુણ મનુષ્ય સિદ્ધ કરવા ઈચ્છે છે, તે જ એ કાર્ય સિદ્ધ કરવામાં સમર્થ બને છે. (૭)

વેદ માસો ધૃતવ્રતો દ્વાદશ પ્રજાવતઃ । વેદા ય ઉપજાયતે ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : ય:-જે ધૃતવ્રત:-વ્રત = સત્ય, નિયમ, વિદ્યા અને બળને ધારણ કરનાર વિદ્વાન છે, તે પ્રજાવત:-જેમાં અનેક પ્રજા અથવા સંસારી પદાર્થો ઉત્પન્ન થાય છે. તે દ્વાદશ:-બાર માસ:-ચૈત્ર આદિ મહિનાઓને તથા ઉપજાયતે-તેમાં તેરમો અધિક માસ ઉત્પન્ન થાય છે અને જે કંઈ અન્ય ઉત્પન્ન થાય છે તે સર્વને વેદ-જાણે છે, તે કાળના સર્વ અવયવોને જાણીને ઉપકાર કરનાર હોય છે. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વર સર્વજ્ઞ હોવાથી સર્વના આધાર રૂપ કાળચક્રને જાણે છે, તેમ (મનુષ્યોએ) સર્વ લોકો અને કાળની મહિમાને જાણીને, કદી એના એક કણ સમાન ક્ષણને પણ વ્યર્થ જવા દેવી નહિ. (૮)

વેદ વાતસ્ય વર્ત્તનિમુરોઃૃષ્વસ્ય બૃહતઃ । વેદા યે અધ્યાસતે ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય ઋષ્વસ્ય-સર્વત્ર ગતિશીલ સ્ત્રો:-અત્યંત ગુણવાન બૃહતઃ-મહાન બળવાન વાતસ્ય-વાયુના વર્ત્તનિમ્-માર્ગને વેદ-જાણે છે અને યે-જે પદાર્થ એમાં અધ્યાસતે-એ વાયુના આધારથી સ્થિત છે, તે પણ વર્ત્તનિમ્-માર્ગને વેદ-જાણે છે, તે નિશ્ચય રૂપથી ભૂગોળ અને ખગોળના ગુણોના જ્ઞાતા-જાણનાર બની જાય છે. (૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય અગ્નિ આદિ પદાર્થોના પરિમાણ = માપ તથા ગુણોથી મહાન અને સર્વનો આધાર (જે) વાયુ છે, તેના કારણને, ઉત્પત્તિને અને ગમન-આગમનના માર્ગને તથા જે તેમાં સ્થૂળ-સૂક્ષ્મ પદાર્થ છે, તેને પણ યથાર્થ રૂપમાં જાણીને, તેના દ્વારા ઉપકાર ગ્રહણ કરીને અને કરાવીને કૃતકૃત્ય થાય છે, તે આ સંસારમાં ગણનાપાત્ર વિદ્વાન બને છે. તેમ જાણવું જોઈએ. (૯)

નિષસાદ ધૃતવ્રતો વરુણઃ પસ્ત્યાસુસ્વા । સામ્રાજ્યાય સુક્રતુઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : જેમ જે ધૃતવ્રત:-સત્યાચરણયુક્ત સુક્રતુઃ-ઉત્તમ ક્રતુ = કર્મ અથવા પ્રજ્ઞાવાન-બુદ્ધિયુક્ત. વસ્મા:-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન-સભા અને સોમનો સ્વામી પસ્ત્યાસુ-શ્રેષ્ઠતમ ઘર આદિ પદાર્થોથી યુક્ત પ્રજાઓમાં

સામ્રાજ્યાય-ચક્રવર્તી રાજ્યને કરવાની યોગ્યતાથી યુક્ત મનુષ્ય આનિષસાદ-સારી રીતે સ્થિત બને છે, તેમ અમે પણ બનીએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર સર્વ પ્રજાઓના સમ્રાટ છે, તેમ ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન કરનાર અને ધાર્મિક વિદ્વાન શરીરબળ અને બુદ્ધિબળથી સંયુક્ત હોય છે, તેજ સામ્રાજ્ય કરી શકે છે. (૧૦)

અતો વિશ્વાન્યદ્ભૂતા ચિકિત્સવાં અભિ પશ્યતિ । કૃતાનિ ચા ચ કર્ત્વી ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : જે કારણે જે ચિકિત્સાનું-સર્વને ચેતાવનાર, ધાર્મિક, સમસ્ત વિદ્યાઓના જ્ઞાતા, ન્યાય કરનાર વિદ્વાન મનુષ્ય, યા-જે વિશ્વાનિ-સર્વ કૃતાનિ-પોતે કરેલા ચ-અને કર્ત્વા-અને કરવા યોગ્ય કર્મો-કર્તવ્ય છે, અને અદ્ભુતાનિ-આશ્ચર્યરૂપ વસ્તુઓને અભિપશ્યતિ-સર્વત્રથી દેખે છે, અતઃ-એ કારણે તે ન્યાયાધીશ બનવાને યોગ્ય હોય છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વર સર્વ શક્તિમાન અને સર્વવ્યાપક હોવાથી સૃષ્ટિ રચના આદિ આશ્ચર્યરૂપ (કર્મ) કરીને, વસ્તુઓની રચના કરીને અને જીવોના ત્રણે કાળોનાં કર્મોને જાણીને, તેને તે-તે કર્મોનુસાર ફળ આપી શકે છે; એ જ રીતે જે વિદ્વાન મનુષ્ય પૂર્વકાળ-ભૂતકાળના વિદ્વાનોના કર્મોને જાણીને, કરવા યોગ્ય કર્મો કરવામાંજ તત્પર થાય છે, તે સર્વના યથાર્થ દ્રષ્ટા બનીને, સર્વના ઉપકારક અત્યુત્તમ કર્મ કરીને સર્વને ન્યાય કરી શકે છે. (૧૧)

સ નો વિશ્વાહા સુક્રતુરાદિત્યઃ સુપથા કરત્ । પ્ર ણ આયૂંષિ તારિષત્ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : જેમ આદિત્યઃ-અવિનાશી પરમેશ્વર, પ્રાણ અથવા સૂર્ય વિશ્વાહા-પ્રતિદિન-સર્વદિવસ નઃ-અમને સુપથા-ઉત્તમ માર્ગમાં ચલાવે છે, નઃ-અમારી આયૂંષિ-જીવનોને પ્રતારિષત્-સુખની સાથે પરિપૂર્ણ કરત્-કરે છે, તેમ જ સુક્રતુઃ-ઉત્તમ જ્ઞાન અને શ્રેષ્ઠ કર્મવાળા આદિત્યઃ-વિદ્યા, ધર્મ પ્રકાશિત ન્યાયકારી મનુષ્ય વિશ્વાહા-સર્વ દિવસોમાં નઃ-અમને સુપથા-ઉત્તમ માર્ગ કરત્-ચલાવે, નઃ-અમારી આયૂંષિ-આયુ-જીવનને પ્રતારિષત્-સુખથી પરિપૂર્ણ કરે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય બ્રહ્મચર્ય દ્વારા જિતેન્દ્રિયતા આદિથી આયુની વૃદ્ધિ કરીને, ધર્મ માર્ગ પર ચાલે છે, તેને જગદીશ્વર કૃપા કરીને, આનંદયુક્ત કરે છે. જેમ એ પ્રાણ અને સૂર્ય પોતાના બળ અને તેજથી ઊંચા-નીચા સ્થાનોને પ્રકાશિત કરીને, પ્રાણીઓને સુખી કરીને સમસ્ત દિવસ-રાત આદિ કાળ વિભાગોને વિભક્ત કરે છે, તેમ જ પોતાના આત્મા, શરીર અને સેનાના બળથી ધર્મયુક્ત સાધારણ, મધ્યમ અને ઉત્તમ કર્મોનો પ્રચાર કરીને, અધર્મયુક્ત કર્મોનું નિવારણ-દૂર કરીને, ઉત્તમજનોનો અને નીચ મનુષ્યોના સમૂહોનો વિભાગ કરે. (૧૨)

બિભ્રદ્દ્રાપિં હિરણ્યયં વરુણો વસ્ત નિર્ણિજમ્ । પરિ સ્પશ્નો નિષેદિરે ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : જે આ વસ્તુઃ-વાયુ અથવા સૂર્યમાં સ્પશ્નઃ-સ્પર્શવાન અર્થાત્ સ્થૂળ-સૂક્ષ્મ સર્વ પદાર્થો નિષેદિરે-સ્થિત થાય છે, એ બન્ને નિર્ણિજમ્-શુદ્ધ હિરણ્યયમ્-જ્યોતિર્મય પદાર્થોને બિભ્રત્-ધારણ કરીને દ્રાપિમ્-બળ, તેજ અને નિદ્રાને પરિ + વસ્ત-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત કરીને જીવોના જ્ઞાનને આચ્છાદિત કરે

છે-ઢાંકી દે છે, તેમ નિર્ણયમ્-શુદ્ધ હિરણ્યમ્-જ્યોતિર્મય પ્રકાશયુક્તને વિભ્રત્-ધારણ કરીને દ્વાપિમ્-નિદ્રા આદિના હેતુ રાત્રિનું પરિવસ્ત-નિવારણ કરીને પોતાના તેજથી સર્વને આચ્છાદિત કરે છે-ઢાંકી દે છે. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ બળકારી હોવાથી અગ્નિ આદિ સમસ્ત સ્થૂલ અને સૂક્ષ્મ પદાર્થોને ધારણ કરીને આકાશમાં ગમનાગમન કરાવીને (તેને) ચલાવે છે. (દેશાન્તરમાં પહોંચાડે છે.)

જેમ સૂર્યલોક પ્રકાશસ્વરૂપ હોવાથી રાત્રિના અંધકારનું નિવારણ કરીને પોતાના તેજથી પ્રકાશ કરે છે, તેમ જ સર્વ મનુષ્યો સુશિક્ષાના બળથી સર્વ મનુષ્યોને ધારણ કરીને (સ્વયં) ધર્મ માર્ગમાં આવાગમન કરીને અન્યોને પણ ધર્મમાં આવાગમન કરાવે છે. (૧૩)

ન યં દિપ્સન્તિ દિપ્સવો ન દ્રુહ્વાણો જનાનામ્ । ન દેવમભિમાતયઃ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જનાનામ્-વિદ્વાન, ધાર્મિક મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓના દિપ્સવઃ-મિથ્યા અભિમાન અને મિથ્યા વ્યવહારને ઈચ્છનાર શત્રુ યમ્-જે દેવમ્-દિવ્ય ગુણો પરમેશ્વર અથવા વિદ્વાનનો ન, દિપ્સન્તિ-વિરોધ ન ઈચ્છે દ્રુહ્વાણઃ-દ્રોહ કરનાર જેનાથી દ્રોહ ન-ઈચ્છે નહિ, તથા જેની સાથે અભિમાતયઃ-અભિમાની મનુષ્ય ન-અભિમાનથી વર્તે નહિ, તે દિવ્યગુણોથી, તથા ઉપાસના કરવા પરમેશ્વર અને સંગતિ કરવા યોગ્ય વિદ્વાનોને સર્વે જાણો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે હિંસક, પરદ્રોહથી યુક્ત, અભિમાની લોકો છે, તેઓ વિદ્યાથી હીન હોવાના કારણે પરમેશ્વરના અથવા વિદ્વાનોના ગુણોને જાણીને (તેનાથી) ઉપકાર ગ્રહણ કરી શકતા નથી. તેથી સર્વ મનુષ્યોએ એ પરમેશ્વર અને વિદ્વાનોના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવોથી અનુરૂપ સદા વર્તવું કે રહેવું જોઈએ. (૧૪)

ઉત યો માનુષેષ્વા યશ્શ્ચક્રે અસામ્યા । અસ્માર્કમુદરેષ્વા ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે અમારી ઉદરેષુ-અંદર ઉત-અને બહાર પણ અસામિ-પૂર્ણ યશઃ-પ્રશંસા યોગ્ય કર્મને આચક્રે-સર્વ રીતે કરે છે, જે માનુષેષુ-જીવો અને જડ પદાર્થોમાં સર્વથા કીર્તિને પ્રકાશિત કરે છે, તે વરુણ = જગદીશ્વર અથવા વિદ્વાન સર્વ મનુષ્યોને ઉપાસનીય અને સેવનીય કેમ ન હોય ? (૧૫)

ભાવાર્થ : જે સૃષ્ટિકર્તા, અન્તર્યામી જગદીશ્વરના દ્વારા પરોપકાર માટે તથા જીવોને તેના કર્માનુસાર ફળોનો ભોગ કરાવવા માટે સમસ્ત સંસાર પ્રત્યેક કલ્પમાં રચવામાં આવે છે, જેની સૃષ્ટિમાં બહારનો અને અંદરનો વાયુ સંપૂર્ણ ચેષ્ટાનો હેતુ છે અને (જેના આશ્રયથી) વિદ્વાન લોકો વિદ્યાના પ્રકાશન અને અવિદ્યાના વિનાશન (ના રૂપમાં) પ્રયત્નશીલ રહે છે, જે સર્વ ધન્યવાદનું કર્મ, તે પરમેશ્વરનું જ છે, એમ સર્વ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૧૫)

પરાં મે યન્તિ ધીતયો ગાવો ન ગવ્યૂતીરનું । ડુચ્છન્તીરુચક્ષસમ્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : જેમ ગવ્યૂતિઃ-પોતાના સ્થાનમાં ડુચ્છન્તીઃ-જવાની ઈચ્છા કરતી ગાવઃ-ગાય આદિ પશુ જાતિની ન-સમાન મે-મારી ધીતયઃ-કર્મની વૃત્તિઓ ઉચ્ચક્ષસમ્-અનેક વિજ્ઞાનયુક્ત મને પરાયન્તિ-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ સ્વ કર્તાઓને તેના કરેલા કર્મો પ્રાપ્ત થાય છે એમ જાણવું જોઈએ. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એવો નિશ્ચય કરવો જોઈએ, કે જેમ ગાય આદિ પશુઓ પોતાના વેગ અનુસાર દોડીને અભીષ્ટ સ્થાન પર જઈને થાકી જાય છે, તેમ જ મનુષ્ય પોતાના બુદ્ધિ બળ અનુસાર પરમેશ્વરના અથવા સૂર્ય આદિના ગુણોનું અન્વેષણ કરીને તથા બુદ્ધિ અનુસાર તેને જાણીને થાકી જાય છે.

કોઈ પણ મનુષ્યથી બુદ્ધિનો અથવા શરીરનો વેગ અપરિમિત હોઈ શકતો નથી. જેમ પક્ષી પોતાના બળ અનુસાર આકાશમાં ઉડતા હોય છે, (છતાં પણ) તેનો અન્ત કોઈ પણ આવતો નથી, તેમ કોઈ પણ મનુષ્ય વિદ્યા વિષયના અન્તને પામી શકતો નથી. (૧૬)

सं नु वौचावहै पुनर्यतो मे मध्वाभृतम् । होतेव क्षदसे प्रियम् ॥ १७ ॥

પદાર્થ : યત:-જેથી અમે આચાર્ય અને શિષ્ય બન્ને હોતેવ-જેમ યજ્ઞ કરાવનાર વિદ્વાન નુ-પરસ્પર ક્ષદસે-અવિદ્યા રૂપ રોગથી ઉત્પન્ન દુઃખ અંધકારના વિનાશક બળની પ્રાપ્તિ માટે આભૂતમ-વિદ્વાનોના ઉપદેશથી જે ધારણ કરવામાં આવે છે, તે યજ્ઞમાનને પ્રિયમ્-પ્રિય સંપાદન કરવા સમાન મધુ-મધુર ગુણ વિશેષ વિજ્ઞાનનો વોચાવહૈ-નિત્ય ઉપદેશ કરે, તેથી મે-મારી અને તારી પુન:-ફરી-વારંવાર, વિદ્યાની વૃદ્ધિ થાય. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેમ હોતા અને યજ્ઞમાન પ્રીતિપૂર્વક પરસ્પર મળીને હવન આદિ કાર્યને પૂર્ણ કરે છે, તેમ અધ્યાપક અને અધ્યેતા = શિષ્ય મળીને સર્વ વિદ્યાઓને પ્રકાશિત કરે. આ રીતે સર્વ મનુષ્યોએ નિત્ય પ્રયત્ન કરવો જોઈએ કે જેથી “અમારી વિદ્યાવૃદ્ધિ થઈને અમે સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકીએ.” (૧૭)

दर्शं नु विश्वदर्शतं दर्शं रथमधि क्षमि । एता जुषत मे गिरः ॥ १८ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે અધિક્ષમિ-જે ઉત્તમ અને નિકૃષ્ટ વાતોના ક્ષમા વ્યવહારમાં સ્થિત થઈને વિશ્વદર્શતમ્-સર્વ વિદ્વાનોની જ્ઞાન દૃષ્ટિથી જોવા યોગ્ય પરમેશ્વરને દર્શમ્-વારંવાર જોવા માટે રથમ્-રમણીય વિમાન આદિ વાહનોને નુ-પણ દર્શમ્-પુન: પુન: જોઈને સિદ્ધ કરવા માટે મે-મારી (વેદ વિદ્યાની) ગિર:-વાણીઓનું જુષત-નિત્ય સેવન કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે કારણે ક્ષમા આદિ ગુણોથી યુક્ત મનુષ્યો-પ્રશ્ન-ઉત્તર વ્યવહારના અનુષ્ઠાન વિના ઈશ્વર અને શિલ્પવિદ્યાથી સિદ્ધ થનાર યાન-વિમાનાદિ વાહનોને જાણી શકતા નથી અને તેમાં જે ગુણો છે, તેને પણ (જાણી શકતા નથી.) તેથી તેને જાણવાનો સદા પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૧૮)

इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृळय । त्वामवस्युरा चके ॥ १९ ॥

પદાર્થ : હે વરુણ-સવોત્કૃષ્ટ જગદીશ્વર અથવા વિદ્વાન્ ! અદ્ય-આજ અવસ્યુ:-મારી રક્ષા અને વિજ્ઞાનનો ઈચ્છુક હું-ત્વામ્-આપની આચકે-સર્વત્રથી પ્રશંસા કરું છું. આપ મે-મારી કરવામાં આવેલી હવમ્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય સ્તુતિ સમૂહને શ્રુધિ-સાંભળો, ચ-અને મને મૃલ્ચ-વિદ્યાદાનથી સુખી કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર ઉપાસકો દ્વારા સાચા પ્રેમથી કરવામાં આવેલી સ્તુતિને પોતાના સર્વજ્ઞતાથી સુખ પ્રદાન કરે છે, તેમ જ (સ્તુતિવાળા) વિદ્વાનોએ પણ કરવું જોઈએ. (અર્થાત્ વિદ્વાનોએ પણ ધાર્મિક મનુષ્યોની યોગ્ય પ્રશંસાને સાંભળીને સુખપ્રદાન કરવું. જોઈએ. (૧૯)

ત્વં વિશ્વસ્ય મેધિર દિવશ્ચ ગ્મશ્ચ રાજસિ । સ ચામન્તિ પ્રતિ શ્રુધિ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે મેધિર-હે અત્યંત મેધાવી = બુદ્ધિમાન વરુણ-વિદ્વાન ત્વમ્-આપ જેમ જગદીશ્વર દિવઃ-પ્રકાશમાન સૂર્ય આદિ ચ-તથા અન્ય સર્વ લોક-લોકાન્તર ગ્મઃ-પ્રકાશરહિત પૃથિવી આદિ વિશ્વસ્ય-સર્વ જગત = લોકોની મધ્યમાં ચામન્તિ-જે-જે કાળમાં જીવોનું આવાગમન થાય છે, તેમાં પ્રકાશિત થઈ રહેલ છે. સઃ-અમારી સ્તુતિઓને સાંભળીને આનંદ પ્રદાન કરે છે, તેમ આ સંસારના મધ્યમાં રાજસિ-પ્રકાશો અને અમારી સ્તુતિઓનું પ્રતિશ્રુધિ-પ્રેમથી શ્રવણ કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : જેમ પરબ્રહ્મ-ઈશ્વરે સર્વ જગતના એક પ્રકાશમાન સૂર્ય આદિ અને બીજો પ્રકાશિત પૃથિવી આદિ બે ભેદ કરેલ છે. જે એ બંનેની ઉત્પત્તિ અને વિનાશરહિત કાળ છે, તેમાં પણ વ્યાપ્ત રહેલ (ઈશ્વર) સર્વ પ્રાણીઓની સંકલ્પરૂપમાં ઉત્પન્ન થયેલી વાતોનું શ્રવણ કરે છે, તેથી કોઈએ કદી પણ અધર્મ કરવાની કલ્પના ન કરવી જોઈએ. આ રીતે સર્વ મનુષ્યોએ સમજીને તદનુસાર આચરણ કરવું જોઈએ. (૨૦)

ઉદુત્તમં મુમુગ્ધિ નો વિ પાશં મધ્યમં ચૃત । અર્વાધ્માનિ જીવસે ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે અવિદ્યા-અંધકાર વિદારક-વિનાશક ઈશ્વર ! આપ કરુણા કરીને નઃ-અમારા જીવસે-ચિર જીવને માટે ઉત્તમમ્-શ્રેષ્ઠ મધ્યમમ્-મધ્યમ દુઃખરૂપી પાશમ્-બંધનોને ઉન્મુમુગ્ધિ-ઉત્તમ રીતે મુક્ત કરો, તથા અધ્માનિ-જે અમારા દોષરૂપી નિકૃષ્ટ બંધનો છે, તેનો પણ વ્યવચૃત-વિનાશ કરો.-વિવિધ પ્રકારથી નષ્ટ કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જેમ (જે) ધાર્મિક, પરોપકારી વિદ્વાન લોકો પ્રાર્થના કરે છે, તેના સર્વ દુઃખરૂપી બંધનોનું નિવારણ કરીને-દૂર કરીને તેના સર્વ દુઃખરૂપી બંધનોનું નિવારણ કરીને-દૂર કરીને જગદીશ્વર તેને સુખી કરે છે, તેમ અમે પણ તેનું અનુકરણ કે આચરણ કેમ ન કરીએ ? (૨૧)

સંગતિ : ચોવીસમાં સૂક્તમાં પ્રતિપાદિત પ્રાજ્ઞપત્ય આદિ અર્થોની મધ્યમાં જે 'વરુણ' શબ્દ છે, તેના અર્થના કથનની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે આ પરચીસમાં સૂક્તના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૨૫)

સૂક્ત-૨૬

વસિષ્ઠ્વા હિ મિયેધ્ય વસ્ત્રાણ્યૂર્જા પતે । સેમં નો અધ્વરં યજ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઝરૂર્જામ્-બળ, પરાક્રમ અને અન્ન આદિ પદાર્થોના પતે-પાલક, મિયેઢ્ય-અગ્નિ દ્વારા અન્તરિક્ષમાં પદાર્થોનો પ્રક્ષેપ-ફેલાવનાર વિદ્વાન્ ! આપ વસ્ત્રાણિ-કપાસ, ઊન અને રેશમના વસ્ત્રોને વસિષ્વ-ધારણ કરો. સઃ-આપ હિ-નિશ્ચયથી નઃ-અમને ઙમમ્-એ પ્રત્યક્ષ અઢ્ધવમ્-ત્રણે પ્રકારના યજ્ઞોમાં યજ-સંમિલિત થાઓ. (૧)

ભાવાર્થ : યજમાન મનુષ્યે અનેક હસ્તક્રિયાઓને પ્રત્યક્ષ કરેલા વિદ્વાનોનું વરણ કરીને, તેનો સત્કાર કરીને અનેક કાર્યો સિદ્ધ કરીને, સુખને પ્રાપ્ત કરે અને કરાવે. કોઈ પણ મનુષ્ય ઉત્તમ-પુરુષોના સંપર્ક-સંગ વિના કોઈ પણ વ્યાવહારિક અને પારમાર્થિક કાર્ય સિદ્ધ કરી શકતો નથી. (૧)

નિ નો હોતા વરેણ્યઃ સદા યવિષ્ઠ મન્મભિઃ । અગ્ને દિવિત્મતા વચઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે યવિષ્ઠ-અત્યંત બળવાન અગ્ને-વિજ્ઞાનાદિ પ્રસિદ્ધ સ્વરૂપવાળા યજમાન ! જે મન્મભિઃ-જેનાથી પદાર્થ જાણી શકાય છે, તે વિવિધ પુરુષાર્થથી યુક્ત વરેણ્યઃ-વરણ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય હોતા-સુખના દાતા પુરુષ છે, તે નઃ-અમારી દિવિત્મતા-પ્રકાશને દીપ્ત કરનાર પોતાના પ્રશસ્ત ગુણોથી વચઃ-વાણીને યજ-સિદ્ધ કરે છે તેનો સદા-નિત્ય સંગ કરવો જોઈએ. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે સજ્જનોના સંગથી સમસ્ત કામનાઓની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. તેના વિના કોઈપણ મનુષ્ય સુખી થઈ શકતો નથી. (૨)

આ હિ ષ્મા સૂનવે પિતાપિર્યંજત્યાપર્યે । સઃ સઃ સઃ વરેણ્યઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પિતા-પાલન કરનાર પિતા સૂનવે-પોતાના સંતાનોને માટે, સઃ-મિત્રને તથા આપિઃ-સુખ આપનાર વિદ્વાન આચર્યે-શ્રેષ્ઠ ગુણોમાં વ્યાપક વિદ્યાર્થીને માટે આચર્યે-સારી રીતે યત્ન કરે છે, તેમ પરસ્પર ઉત્તમ પ્રીતિથી કાર્યોને સિદ્ધ કરીને હિ-નિશ્ચયથી સ્મ-વર્તમાનમાં ઉપકાર માટે તમે સંઘટિત થાઓ. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ સંતાનોને સુખ આપનાર કૃપાલુ પિતા, મિત્રોને સુખ આપનાર મિત્ર અને વિદ્યાર્થીને વિદ્યા આપનાર વિદ્વાન અનુકૂળ વ્યવહાર કરે છે, તેમ જ સર્વ મનુષ્યોએ સર્વના ઉપકાર માટે નિરંતર પ્રયત્ન કરવો જોઈએ, એમ ઈશ્વરનો ઉપદેશ છે. (૩)

આ નો હર્ષીરિશાદસો વરુણો મિત્રો અર્યમા । સીદન્તુ મનુષો યથા ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યથા-જેમ રિશાદસઃ-દુષ્ટોને મારનાર, વરુણઃ-સર્વ વિદ્યાઓમાં શ્રેષ્ઠ મિત્રઃ-સર્વના મિત્ર અર્યમા-ન્યાયકારી મનુષઃ-સભ્ય મનુષ્ય નઃ-અમને હર્ષિઃ-સમસ્ત સુખોને આપનાર આસન પર બેસે છે, તેમ આપ પણ બેસો. (૪)

પૂર્વ્ય હોતરસ્ય નો મન્દસ્વ સઃ સઃ સઃ ચ । ઙમા ઝષુ શ્રુધી ગિરઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે પૂર્વ્ય-પૂર્ણ વિદ્વાનોના મિત્ર હોતઃ-હોતા અથવા યજમાન = યજ્ઞ કરનાર અથવા કરાવનાર

વિદ્વાન્ ! આપ ન:-અમારા અસ્ય-એ સખ્યસ્ય-મિત્ર કર્મની મન્દસ્વ-ઈચ્છા કરો, ડ-નિશ્ચય છે કે અમારી ડ્રમા:-એ જે પ્રત્યક્ષ ગિર:-વેદ વિદ્યાથી સંસ્કાર = પવિત્ર કરેલી વાણી છે, તેને સુશ્રુધિ-ઉત્તમ રીતે શ્રવણ કરો અને શ્રવણ કરાવો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય-સર્વ મનુષ્યોમાં મિત્રતા કરીને સુશિક્ષા અને વિદ્યાનું અધ્યયન કરીને-શ્રવણ કરીને, વિચારીને વિદ્વાન્ બને. (૫)

યચ્ચિદ્ધિ શશ્વાતા તના દેવદેવં યજામહે । ત્વે ડ્હૂયતે હ્વિઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે યત્-જેથી એ શશ્વાતા-અનાદિ તના-વિસ્તૃત કારણથી ડ્હૂ-જ ઉત્પન્ન છે. એથી તે દેવદેવમ્-પ્રત્યેક વિદ્વાન અથવા પૃથિવી આદિ દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત પ્રત્યેક પદાર્થને ચિત્-પણ યજામહે-સંગ અર્થાત્ સિદ્ધ કરે છે, ત્વે-તેમાં હિ-જ હ્વિઃ-હવન કરવા યોગ્ય દ્રવ્ય હૂયતે-નાખવામાં આવે છે,-તેમ તમે પણ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે કે-વિદ્વાનોનો સંગ કરીને, આ જગતમાં જેટલા દેશ્ય અને અદેશ્ય પદાર્થો છે, તે સર્વ અનાદિ અતિ વિસ્તૃત કારણથી ઉત્પન્ન થાય છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૬)

પ્રિયો નો અસ્તુ વિશ્વપતિર્હોતા મન્દ્રો વરેણ્યઃ । પ્રિયાઃ સ્વગ્નયો વ્રયમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સ્વગ્નયઃ-ઉત્તમ સુખકારક અગ્નિનું સંપાદન કરનાર અમે પ્રિયાઃ-રાજાને પ્રિય છીએ, જેમ હોતા-યજ્ઞ-કરનાર, કરાવનાર, મન્દ્રઃ-સ્તુતિને યોગ્ય ધર્માત્મા, વરેણ્યઃ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય વિદ્વાન વિશ્વપતિઃ-પ્રજાના પાલક અર્થાત્ સભાપતિ રાજા ન:-અમને પ્રિયાઃ-પ્રિય છે, તેમ અન્ય મનુષ્ય પણ પ્રિય બને. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ અમે સર્વની સાથે સૌહાર્દ = મિત્રતાપૂર્વક વ્યવહાર કરીએ છીએ અને અમારી સાથે સર્વ મિત્રતાપૂર્વક કરે છે, તેમ તમે પણ વ્યવહાર કરો. (૭)

સ્વગ્નયો હિ વાર્યં દેવાસો દધિરે ચ નઃ । સ્વગ્નયો મનામહે ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : જેમ સ્વગ્નયઃ-ઉત્તમ અગ્નિયુક્ત, દેવાસઃ-દિવ્યગુણયુક્ત વિદ્વાન ચ-અથવા પૃથિવી આદિ પદાર્થો નઃ-અમારા માટે વાર્યમ્-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય પદાર્થોને દધિરે-ધારણ કરે છે, તેમ અમે પણ સ્વગ્નયઃ-અગ્નિના ઉત્તમ અનુષ્ઠાન-તેજથી યુક્ત થઈને તેથી સમૂહને મનામહે-જાણીએ છીએ, તેમ તમે પણ જાણો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યને યોગ્ય છે કે-આ સંસારમાં ઈશ્વરે જેટલા પદાર્થો ઉત્પન્ન કરેલ છે-રચેલ છે, તેના વિશિષ્ટ જ્ઞાનને માટે વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને કાર્યની સિદ્ધિ પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. (૮)

અર્થા ન ડ્હયૈષામમૃત મર્ત્યીનામ્ । મિથઃ સન્તુ પ્રશસ્તયઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે અમૃત-અવિનાશી સ્વરૂપ જગદીશ્વર ! આપની કૃપાથી જેમ ઉત્તમ ગુણ, કર્મના ગ્રહણ

કરવાથી અથ-અનન્તર ન:-અમે લોકોમાં જે વિદ્વાન અને મૂર્ખ છે ઉભયેષામ્-તે બન્ને પ્રકારના મર્ત્યાનામ્-મનુષ્યોની મિથ:-પરસ્પર સંસારમાં પ્રશસ્તય:-પ્રશંસા સન્તુ-થાય, તેમ સર્વ મનુષ્યોની પણ થાય, તેવી અમે પ્રાર્થના કરીએ છીએ. (૯)

ભાવાર્થ : જ્યાં સુધી મનુષ્યો રાગ, દ્વેષને છોડીને પરસ્પરને માટે વિદ્યા, શિક્ષા અને પુરુષાર્થ દ્વારા પ્રશસ્ત = ઉત્તમ કર્મ કરતા નથી, ત્યાં સુધી તેઓને સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી. તેથી સર્વ મનુષ્યોએ પરમેશ્વરની આજ્ઞામાં રહીને-આજ્ઞાનું પાલન કરીને સર્વેનું નિત્ય હિત સિદ્ધ કરવું જોઈએ. (૯)

વિશ્વૈભિરગ્ને અગ્નિભિરિમં યજ્ઞમિદં વચઃ । ચનો ધાઃ સહસો યહો ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે યહો-શિલ્પકાર્યમાં કુશળના સંતાન કાર્યરૂપ અગ્નિને ઉત્પન્ન કરનાર અગ્ને-વિદ્વાન ! જેમ આપ સર્વ સુખોને માટે સહસ:-પોતાના બળસ્વરૂપથી વિશ્વેભિ:-સર્વ અગ્નિભિ:-વિદ્યુત્, સૂર્ય અને પ્રસિદ્ધ કાર્યરૂપ એ ત્રણે અગ્નિઓથી ઇમમ્-એ પ્રત્યક્ષ-અપ્રત્યક્ષ યજ્ઞમ્-સંસારના વ્યવહારરૂપ યજ્ઞ અને ઇદમ્-અમે કહેલા વચઃ-વિદ્યાયુક્ત પ્રશંસાના વાક્ય-વચન ચનઃ-ભક્ષ્ય, ભોજ્ય, લેહ્ય અને યોધ્ય-ચાર પ્રકારના અન્નને ધાઃ-ધારણ કરેલ છે, તેમ તું પણ સદા ધારણ કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પોતાના સંતાનોને એ રીતે નિત્ય સચેત-જ્ઞાન કાર્યમાં યુક્ત કરવા જોઈએ, કે જે કારણરૂપ અગ્નિ નિત્ય છે, તેના દ્વારા ઈશ્વરીય રચનાનુસાર વિદ્યુત્ આદિ રૂપવાળા કાર્યો ઉત્પન્ન થાય છે, ફરી તેના દ્વારા જઠર = ઉદરના અગ્નિ રૂપ અનેક કાર્ય (સંપન્ન) થાય છે.

એ સર્વ અગ્નિઓને કારણરૂપ (અગ્નિ) જ ધારણ કરે છે, જેટલા પણ અગ્નિના કાર્યો છે, તે વાયુના કારણે થાય છે અને સમસ્ત સંસાર તથા ત્યાં રહેલા પદાર્થોને ધારણ કરે છે. અગ્નિ અને વાયુ વિના કદી કોઈ પણ વસ્તુનું ધારણ થવું સંભવ નથી. (૧૦)

સંગતિ : પૂર્વ સૂક્તો 'વરુણ' અર્થનો આ સૂક્તમાં પ્રતિપાદિત અગ્નિનો અનુસંગી = સહાયક હોવાથી પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે આ છવીસમાં સૂક્તની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૨૬)

સૂક્ત-૨૭

અશ્વં ન ત્વા વારવન્તં વન્દધ્યા અગ્નિં નમોંભિઃ । સમ્રાજન્તમધ્વરાણામ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : અમે નમોંભિઃ-નમસ્કાર, સ્તુતિ અને અન્ન આદિ પદાર્થોની સાથે વારવન્તમ્-ઉત્તમ કૈશ વાળી યુક્ત અશ્વમ્-વેગવાન ઘોડાઓની ન-સમાન અધ્વરાણમ્-રાજ્યપાલન, અગ્નિહોત્રથી લઈને શિલ્પ પર્યન્ત યજ્ઞોમાં સમ્રાજન્તમ્-પ્રકાશમાન ત્વા-આપ વિદ્વાનની વન્દધ્યૈ-સ્તુતિ કરવા માટે પ્રવૃત્ત થઈને સેવા કરીએ છીએ. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન પોતાની વિદ્યા આદિ ગુણોથી પોતાના રાજ્યમાં પ્રકાશિત થાય છે, તેમ પરમેશ્વર પોતાના સર્વજ્ઞતા આદિ ગુણોથી સર્વત્ર પ્રકાશમાન છે. (૧)

स घां नः सूनुः शर्वसा पृथुप्रंगामा सुशेवः । मीढ्वाँ अस्माकं बभूयात् ॥ २ ॥

પદાર્થ : જે સૂનુ:-ધર્માત્મા સુપુત્ર શર્વસા-પોતાના પુરુષાર્થ બળ આદિ ગુણથી પૃથુપ્રંગામા-પૃથુ = અત્યંત વિસ્તૃત વિમાનાદિ રથો-વાહનોથી ઉત્તમ ગમન કરનાર મીઢ્વાન્-યોગ્ય સુખને સીંચનાર છે, તે ન:-અમારા પુરુષાર્થીજનોના ઘ-જ ઉત્તમ કર્મથી ધર્મ અને શિલ્પ કાર્યોને કરનાર બભૂયાત્-થાય. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી ધાર્મિક વિદ્વાન પુત્ર અનેક અનુકૂળ કાર્ય કરીને પિતા આદિના સુખોને નિત્ય સિદ્ધ કરે છે, તેમજ અનેક ગુણોથી યુક્ત એ અગ્નિ વિદ્યા અનુસાર સમ્યક્ પ્રયોગ કરવાથી અમારા સમસ્ત સુખોને સિદ્ધ કરે છે. (૨)

स नो दूराच्चासाच्च नि मर्त्यादघायोः । पाहि सदमिद्विश्वायुः ॥ ३ ॥

પદાર્થ : વિશ્વાયુ:-જેના દ્વારા વિશ્વ = સંપૂર્ણ આયુ સુખથી પ્રાપ્ત થાય છે. સ:-તે જગદીશ્વર અથવા ભૌતિક અગ્નિ અઘાયો:-જે પાપ કરવાની ઈચ્છા કરે છે, તે મર્ત્યાત્-મનુષ્ય-શત્રુજનોથી દૂરાત્-દૂર અને આસાત્-સમીપથી ન:-અમારી અને અમારું સદ:-સર્વ સુખ રહેનાર શિલ્પ વ્યવહાર અથવા દેહ આદિની નિપાહિ-નિરંતર રક્ષા કરે છે. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા ઉપાસના કરેલ ઈશ્વર અથવા ઉત્તમ રીતે સેવા કરેલા વિદ્વાન યુદ્ધમાં શત્રુઓથી રક્ષા કરનાર અને રક્ષાનું કારણ બનીને, શરીર આદિ તથા વિમાનાદિની રક્ષા કરીને અમારા માટે સંપૂર્ણ આયુને સિદ્ધ કરે છે-આપે છે. (૩)

इममू षु त्वमस्माकं सुनिं गायत्रं नव्यांसम् । अग्ने देवेषु प्र वोचः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અનંત વિદ્યામય જગદીશ્વર ! ત્વમ્-સર્વ વિદ્યાઓનો ઉપદેશ કરનાર અને સર્વ મંગલ પ્રદાન કરનાર આપ જેમ સૃષ્ટિની આદિમાં દેવેષુ-પુણ્યાત્મા અગ્નિ, વાયુ, આદિત્ય અંગિરા નામક મનુષ્યો (ઋષિઓ)ના આત્મામાં નવ્યાંસમ્-અત્યંત નવીન કરાવનાર ગાયત્રમ્-ગાયત્રી આદિ ઇંદ્રોથી યુક્ત સુસનિમ્-જેમાં સર્વ પ્રાણીઓ સુખોનું સેવન કરે છે તે ચાર વેદોનો પ્રવોચ:-ઉપદેશ કરેલ છે અને હવે પછીના કલ્પો-કલ્પોમાં ફરી (ઉપદેશ) કરશો તે (જ્ઞાન)નો વિવિધ પ્રકારથી અસ્માકમ્-અમારા આત્માઓમાં સુ-સમ્યક્ રીતે (ઉપદેશ) કરો. (૪)

ભાવાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપે જેમ બ્રહ્મા (અગ્નિ) આદિ મહર્ષિઓ અને ધાર્મિક વિદ્વાનોના આત્મામાં સત્ય જ્ઞાનને (વેદ દ્વારા) પ્રકાશિત કરીને તેઓને પરમ સુખ પ્રદાન કરેલ છે, તેમ અમારા આત્માઓમાં (એ પ્રકારનું) જ્ઞાન પ્રકાશિત કરો, જેથી અમે વિદ્વાન બનીને શ્રેષ્ઠ ધર્મ કાર્યોને સદા કરતા રહીએ.

મંત્રના મૂળ પદ દેવેષુ-ના ભાષ્યમાં સ્વામીજીએ સૃષ્ટિની આદિમાં અગ્નિ આદિ ચાર મહર્ષિઓના આત્મામાં વેદોનું જ્ઞાન પ્રકાશિત કરેલનો સ્પષ્ટ ઉલ્લેખ કરેલ છે. પરંતુ ભાવાર્થમાં 'બ્રહ્માદીનાં મહર્ષીણામ્' પાઠાન્તર મળે છે. જ્યારે શ્રીસુદર્શનદેવકૃત 'ઋગ્વેદ ભાષ્ય-ભાસ્કર'માં 'યથાઽગ્ન્યાદીનાં મહર્ષીણામ્'

પાઠ મળે છે. જેથી અગ્નિ આદિ મહર્ષિઓ એ પાઠ પદાર્થનાં ભાષ્યની સુસંગત જણાતા મેં અનુવાદમાં કૌંસમાં (અગ્નિ) પદ મૂકેલ છે. (૪)

આ નૌ ભજ પરમેષ્વા વાજેષુ મધ્યમેષુ । શિક્ષા વસ્વો અન્તમસ્ય ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ પરમેષુ-ઉત્તમ મધ્યમેષુ-મધ્યમ આનંદ પ્રદાન કરનાર વાજેષુ-સુખ પ્રાપ્તિવાળા યુદ્ધોમાં અથવા ઉત્તમ અન્નાદિ તથા અન્તમસ્ય-જે સર્વ દુઃખોનો અન્ત કરનાર-પ્રત્યક્ષ સુખ પ્રાપ્તિવાળા યુદ્ધના મધ્યમાં નઃ-અમને આશિક્ષ-સર્વ વિદ્યાઓનો ઉપદેશ કરો, એજ રીતે અમારા વસ્વઃ-ધન આદિ શ્રેષ્ઠ પદાર્થોનો આભજ-સારી રીતે સ્વીકાર કરો. (૫)

ભાવાર્થ : એ રીતે જે ધાર્મિક અને પુરુષાર્થી મનુષ્યોના દ્વારા સેવન કરેલ વિદ્વાન (હોય, તે) સર્વ વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરીને તે મનુષ્યોને નિમ્ન ભેદથી ત્રણ પ્રકારના ભોગ, લોક અને મનુષ્યો છે, તેમાંથી યથામતિ = બુદ્ધિ અનુસાર મનુષ્યોને વિદ્યા આપવી જોઈએ. (૫)

વિભક્તાસિં ચિત્રભાનો સિન્ધોર્મૂર્મા ઉપાક આ । સદ્યો દાશુષે ક્ષરસિ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જેમ હે ચિત્રભાનો-અદ્ભુત વિજ્ઞાનાદિ દીપ્તિયુક્ત અર્થાત્ વિવિધ વિદ્યાયુક્ત વિદ્વાન્ ! આપ સિન્ધોઃ-સમુદ્રના ઊર્મૌ-તરંગોમાં જળના બિંદુકણોની સમાન સર્વ પદાર્થ વિદ્યાને વિભક્તા-પૃથક્ પૃથક્ કરનાર અસિ-છો, દાશુષે-વિદ્યાનું ગ્રહણ અને અનુષ્ઠાન કરનાર મનુષ્યને માટે ઉપાકે-સમીપ-સત્ય ઉપદેશથી બોધોની સદ્યઃ-શીઘ્ર આક્ષરસિ-સર્વત્રથી વર્ષા કરો છો, તેથી આપ ભાગ્યશાળી વિદ્વાન અમારા દ્વારા સત્કાર કરવા યોગ્ય છો. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ સમુદ્રના જળકણ પૃથક્ થઈને આકાશમાં પહોંચીને (ફરી) એકત્રિત થઈને વરસે છે, તેમ વિદ્વાન વિદ્યાઓ દ્વારા સર્વ પદાર્થોને વિભક્ત કરીને, એને વારં-વાર મનુષ્યોના આત્માઓમાં પ્રકાશિત કરે છે; તેમ અમે પણ શા માટે ન કરીએ ? (૬)

યમગ્ને પૃત્સુ મર્ત્યમવા વાજેષુ યં જુનાઃ । સ યન્તા શશ્વતીરિષઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-પોતાના બળ અને તેજથી પ્રકાશમાન જગદીશ્વર ! આપ યમ્-જે ધાર્મિક શૂરવીર મર્ત્યમ્-મનુષ્યની પૃત્સુ-સેનાઓમાં અવાઃ-રક્ષા કરો છો; અને યમ્-જે યોદ્ધાઓને વાજેષુ-સંગ્રામોમાં જુનાઃ-પ્રેરિત કરો છો, જે આપ એ શાસ્વતીઃ-અનાદિ સ્વરૂપવાળી ઙ્ગઃ-કર્મનીય પ્રજાની નિરંતર રક્ષા કરો છો, એ કારણે સઃ યન્તા-આપ અમારા શત્રુઓને વશ કરનારા બનો, એ રીતે અમે પ્રતિજ્ઞા કરીએ છીએ. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ જગદીશ્વર જ અનાદિકાળથી વર્તમાન (સુધીની) પ્રજાની રક્ષા, રચના અને વ્યવસ્થા કરનાર છે, તેમ જે મનુષ્ય એ સર્વવ્યાપક, સર્વત્રથી રક્ષક પરમેશ્વરની ઉપાસના કરીને તે અનુસાર આચરણ કરે છે, તેને કદીપણ પીડા (થતી નથી) અને પરાજય પામતા નથી. (૭)

नकिरस्य सहन्त्य पर्येता कयस्य चित् । वाजो अस्ति श्रवाय्यः ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે સહન્ત્ય-સહનશીલ વિદ્વાન ! નકિઃ-જે ધર્મની મર્યાદાનું ઉલંઘન ન કરનાર પર્યેતા-સર્વ પર કૃપા કરનાર આપ યસ્ય-એ સેનાધ્યક્ષ કયસ્ય-યુદ્ધ કરનાર અને શત્રુઓને પરાજિત કરનાર ધાર્મિક શૂરવીર પુરુષના શ્રવાય્યઃ-શ્રવણ કરવા યોગ્ય વાજઃ-સંગ્રામ અસ્તિ-હોય છે તેને સર્વ અભીષ્ટ પદાર્થ આપો, એ કાર્યને માટે અમે આપને નિયુક્ત કરીએ છીએ.

ભાવાર્થ : જેમ કોઈપણ વિદ્વાનો અનંત શુભ ગુણયુક્ત, પૂર્ણતયા ન જાણવા યોગ્ય, જેનું ઉલંઘન અતિક્રમણ કરી શકાતું નથી, તે પરમેશ્વરનું ઉલંઘન અથવા તેનું પરિમાણ = માપ કરી શકતા નથી.

જેનું સમસ્ત વિજ્ઞાન બ્રાન્તિરહિત છે, એવી જે મનુષ્યની પ્રવૃત્તિ છે, તેને સર્વ મનુષ્યોએ રાજ્ય કાર્યનો અધિપતિ = રાજા સ્થાપિત કરવો જોઈએ. (૮)

स वाजं विश्वचर्षणिर्वाद्भिरस्तु तरुता । विप्रैर्भिरस्तु सनिता ॥ ९ ॥

પદાર્થ : જે વિશ્વચર્ષણિઃ-સર્વ મનુષ્યોના રક્ષક, વાજમ્-સંગ્રામ અર્થાત્ શત્રુના કારણે દુઃખોને તસ્તા-પાર લઈ જનાર સનિતા-જ્ઞાન અને સુખનો વિપ્રેભિઃ-બુદ્ધિ યાતુર્યયુક્ત પુરુષ = મેઘાવી નર અર્વાદ્ભિઃ-સેનાના ઘોડા આદિ અંગો સહિત હોય અમને વાજમ્-યુદ્ધમાં વિજયની પ્રાપ્તિ અને શત્રુઓનો પરાજય કરનાર સેનાપતિ હોય તેજ અમારી મધ્યમાં સેનાસ્વામી અસ્તુ-બને. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ (એવો નિશ્ચય કરવો જોઈએ કે-) જે સર્વ દુઃખોને પાર પહોંચાડનાર, યુદ્ધમાં વિજય પ્રાપ્ત કરાવનાર, યુદ્ધમાં નિપુણ અને ધાર્મિક વિદ્વાન હોય, તે જ અમારો સેનાપતિ બની શકે. (૯)

जराबोधु तद्विविद्धि विशेविशे यज्ञियाय । स्तोमं रुद्राय दृशीकम् ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે જરાબોધ-જરા = ગુણોની સ્તુતિથી જેનો બાધ થાય-પ્રકાશિત થાય, એવા સેનાપતિ ! આપ જેથી વિશેવિશે-પ્રાણી માત્રને માટે, યજ્ઞિયાય-યજ્ઞ કર્મને યોગ્ય, સ્ત્રાય-દુષ્ટોને રડાવનારને માટે સર્વ પદાર્થોને પ્રકાશિત કરનાર દૃશીકમ્-દર્શનીય સ્તોતમ્-સ્તુતિ સમૂહ-ગુણકીર્તનને વિવિદ્ધિ-વ્યાપ્ત કરે છે, તત્-એથી અમારા માનનીય છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : ધનુર્વેદને જાણનારના ગુણોનું શ્રવણ કર્યા વિના, એ ધનુર્વેદ = યુદ્ધ વિદ્યાનું જ્ઞાન સંભવ નથી. જે પ્રજાના સુખને માટે તીક્ષ્ણ સ્વભાવવાળા, શત્રુઓનાં બળનું હરણ કરનાર, ભૃત્યો-નોકરોને સુશિક્ષિત કરીને તેની રક્ષા કરે છે અર્થાત્ તેને રાખે છે, તે જ પ્રજાપાલક = રાજા બની શકે છે. (૧૦)

स नो महान् अनिमानो धूमकेतुः पुरुश्चन्द्रः । धिये वाजाय हिन्वतु ॥ ११ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે કે-જે ધૂમકેતુઃ-જેનો ધૂમકેતુ = ધ્વજા સમાન છે, પુસ્ચન્દ્રઃ-ઘણા જ પ્રાણીઓને આનંદ આપનાર છે, અનિમાનઃ-જેનું નિમાન = પરિમાણ કે માપ નથી, મહાન્-જે મહાન

ગુણોથી યુક્ત ભૌતિક અગ્નિ છે, સઃ-તે ધિયે-ઉત્તમ કર્મ તથા વાજાય-વિજ્ઞાનરૂપ વેગની પ્રાપ્તિ માટે નઃ-અમને હિન્વતુ-તૃપ્ત કરે છે-એટલા માટે એને સિદ્ધ કરે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે સર્વ શ્રેષ્ઠ અનિમાન = કોઈથી પણ માપ કરવા અયોગ્ય, સર્વાધાર, સર્વાનંદપ્રદ અને વિજ્ઞાન ધન જગદીશ્વર છે, જેણે મહાન ગુણોથી યુક્ત અગ્નિ બનાવેલ છે, તે (પરમેશ્વર) જ અમને સુકર્મ અને શુદ્ધ વિજ્ઞાનમાં પ્રેરિત કરો. (૧૧)

સ રેવાં ઇવ વિશ્વપતિર્દેવ્યઃ કેતુઃ શૃણોતુ નઃ । ઉક્થૈર્ગ્નિર્બૃહદ્ધાનુઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ જે દૈવ્યઃ-દેવો અર્થાત્ વિદ્વાનોમાં કુશળ, કેતુઃ-રોગો દૂર કરવામાં કારણ વિશ્વપતિઃ-પ્રજાનું પાલન કરનાર, બૃહદ્ધાનુઃ-મહાન પ્રકાશયુક્ત, રેવાન્ ઇવ-પુષ્કળ ધનવાનની સમાન અગ્નિઃ-સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર અગ્નિ = ઈશ્વર છે, તેને ઉક્થૈઃ-વેદોક્ત સ્તોત્રોથી શૃણોતુ-શ્રવણ કરો તથા નઃ-અમને શ્રવણ કરાવો-સંભળાવો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ પૂર્ણ ધનવાન વિદ્વાન-મનુષ્ય ધન અને ભોગોથી સર્વ મનુષ્યોને સુખયુક્ત કરે છે, સર્વની વાતો પ્રીતિપૂર્વક સાંભળે છે, તેમ જગદીશ્વર પણ પ્રેમથી કરેલી સ્તુતિને સાંભળીને તેને સદા સુખી કરે છે. (૧૨)

નમો મહદ્ભ્યો નમો અર્ભકેભ્યો નમો યુવ્ભ્યો નમ આશિનેભ્યઃ ।

યજામ દેવાન્વદિ શ્વન્વામ મા જ્યાયસઃ શંસમા વૃક્ષિ દેવાઃ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે દેવાઃ-સર્વ વિદ્યાઓને પ્રકાશિત કરનારા વિદ્વાનો ! અમે મહદ્ભ્યઃ-પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત વિદ્વાનોને માટે નમઃ-સત્કાર અથવા અન્ન યજામ-કરીએ અથવા આપીએ; એ રીતે અર્ભકેભ્યઃ-અલ્પ ગુણવાળા વિદ્યાર્થીઓને નમઃ-પ્રીણન = તૃપ્તિ, યુવ્ભ્યઃ-યુવાવસ્થાવાળા બળવાન વિદ્યાર્થીઓને નમઃ-સત્કાર અને આશિનેભ્યઃ-સમસ્ત વિદ્યાઓમાં વ્યાપક વૃદ્ધ વિદ્વાનોને નમઃ-સેવા આપતા અમે યદિ-સામર્થ્ય અનુકૂળ વિચારથી શ્વન્વામ-સમર્થ હોય, તો જ્યાયસઃ-વિદ્યા આદિ ઉત્તમ ગુણોથી અત્યંત પ્રશંસનીય દેવાન્-વિદ્વાનોને આયજામ-સર્વત્રથી વિદ્યાવાન કરીએ, એ રીતે પ્રત્યેક જન શંસમ્-તેની સ્તુતિ-પ્રશંસાને મા, વૃક્ષિ-કદી ન છોડીએ, અર્થાત્ સદા સ્તુતિ કરીએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં મનુષ્યોએ નમ્રતા પ્રાપ્ત કરીને સર્વનો અન્ન આદિથી સત્કાર કરવો જોઈએ, એવો ઈશ્વર ઉપદેશ આપે છે. પોતાનું જેટલું સામર્થ્ય હોય, તેટલો વિદ્વાનોનો સંગ અને સત્કાર નિત્ય કરવો જોઈએ. તેઓની નિંદા કદી પણ ન કરવી જોઈએ. (૧૩)

સંગતિ : પૂર્વ સૂક્તમાં અગ્નિનું વર્ણન છે, વિદ્વાનો જ તેને જાણનારા હોય છે, એ વિષયનું આ સૂક્તમાં વર્ણન કરવાથી છવીસમાં સૂક્તના અર્થની સાથે આ સત્તાવીસમાં સૂક્તના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૨૭)

સૂક્ત-૨૮

યત્ર ગ્રાવા પૃથુબુધ્ન ઋધ્વો ભવતિ સોતવે ।

उलूखलसुतानामवेद्विन्द्र जल्गुलः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે યજ્ઞ કર્મ કરનાર મનુષ્ય ! તું યત્ર-જે યજ્ઞાદિ વ્યવહારોમાં પૃથુબુધ્ન:-જેનું મૂળ-જડ ભાગ મોટો છે તથા જે ઋધ્વ:-ભૂમિથી થોડો ઊંચો રહેનાર ગ્રાવા-પથ્થર અને મુસળ સોતવે-અન્નાદિ ખાંડવા માટે ભવતિ-યુક્ત કરે છે, તેમાં ડૂલૂખલસુતાનામ્-ઉલૂખ = ખાંડણિયામાં મુસળ = સ્તંબલાથી ખાંડેલા પદાર્થોને ગ્રહણ કરીને તેની સદા ઉત્તમતાથી રક્ષા કર. ડૂ-યુક્તિપૂર્વક તે ખાંડિયાણામાં ધાન્ય સિદ્ધ કરવા માટે જલ્ગુલ:-તેને વારંવાર ખાંડ્યા કર. (૧)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ આપે છે કે-હે મનુષ્યો ! તમે લોકો જવ આદિ ઔષધિઓ = અન્નોના તુષ = ફોતરા આદિ સારહીન ભાગના નિવારણ અને સાર ભાગના ગ્રહણ માટે એક સ્થૂળ પથ્થરની વચ્ચે યથાયોગ્ય ખાંડો કરીને અર્થાત્ ખાંડણિયો બનાવીને ભૂમિમાં સ્થાપિત કરો, તેને ભૂમિના તળિયાથી થોડો ઊંચો રાખો જેથી ધાન્યનો સાર ભાગ સારી રીતે કાઢી શકાય. તે (ખાંડણિયા)માં જવ આદિ નાખીને મુસળથી તેને ખાંડીને ધમાધમ શબ્દ કરો. (૧)

યત્ર દ્વાવિવ જઘનાધિષવ્ણ્યા કૃતા । उलूखलसुतानामवेद्विन्द्र जल्गुलः ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-અન્ત:કરણ અને બહિષ્કરણ રૂપ = અંદર અને બહારના શરીરાદિ સાધનોથી ઐશ્વર્યવાન વિદ્વાન્ ! તું યત્ર-જે વ્યવહારમાં દ્વા-બે જઘના-જાંઘોની ડૂવ-સમાન વિસ્તૃત અધિષવ્ણ્યા-સારી રીતે અથવા અસાર ભાગ અલગ કરવાના પાત્ર અર્થાત્ પથ્થરની મોટી શિલા કૃતા-બનેલ હોય છે, તેને ઠીક કરીને ડૂલૂખલસુતાનામ્-ખાંડણિયાથી શુદ્ધ કરેલ પદાર્થોના સારને અવ-પ્રાપ્ત કર. ડૂ-અને યુક્તિપૂર્વક ડૂત્-તે ખાંડણિયાને જ જલ્ગુલ:-વારંવાર ખાંડ્યા કર. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે કે-જેમ બે જાંઘોથી ચાલવાથી ક્રિયા કરવામાં આવે છે, તેમ પથ્થરની એક મોટી શિલા નીચે રાખવા માટે અને બીજો શિલાખંડ ઉપર, હાથથી પીસવા માટે બનાવવો જોઈએ. એ બન્ને શિલાઓથી ઔષધિઓ = અન્નોને પીસીને યથાયોગ્ય ભોજન પદાર્થોને તૈયાર કરીને અને મુસળ સમાન બીજું સાધન (યુક્તિથી-ચક્કી-ઘંટી) બનાવવું જોઈએ. (૨)

યત્ર નાર્યપચ્ચવમુપચ્ચવં ચ શિક્ષતે । उलूखलसुतानामवेद्विन्द्र जल्गुलः ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-ઈન્દ્રિયોના સ્વામી જીવ ! તું યત્ર-જે કર્મમાં ઘરની મધ્યમાં નારી-સ્ત્રીઓ કામ કરનારી પોતાની સંગિની સ્ત્રીઓને માટે ડૂલૂખલ-સુતાનામ્-ઉક્ત ખાંડણિયાથી સિદ્ધ કરેલ પદાર્થોને અપચ્ચવમ્-ત્યાગ = નાખવાની અપચ્ચવમ્-પ્રાપ્તિ = કાઢવાની ચ-અને કાર્ય કરવાની શિક્ષા આદિને શિક્ષતે-શીખે છે, તે કર્મમાં એ સર્વ કાર્યને ડૂ-જિજ્ઞાસાપૂર્વક ડૂત્-જ અવ-જાણ, જલ્ગુલ:-સાંભળ અને

એ વિદ્યાઓનો ઉપદેશ કર. (૩)

ભાવાર્થ : ભોજન આદિ કાર્ય સિદ્ધ કરનારી એ ખાંડણિયા-મુસળ આદિની વિદ્યા ગૃહ-સંબંધી કાર્યની સાધિકા છે, તેથી સ્ત્રીઓએ તેને સ્વયં ગ્રહણ કરવી જોઈએ, તથા અન્યોને ગ્રહણ કરાવવી જોઈએ. જ્યાં ભોજન-પાકક્રિયા કરવામાં આવે છે, ત્યાં એ સાધનો સ્થાપિત કરવા જોઈએ. તેના (ખાંડણિયા-ઘંટી) વિના ખાંડવું અને પીસવું વગેરે ક્રિયા સિદ્ધ થઈ શકતી નથી. (૩)

યત્ર મન્થાં વિબ્ધનતે ર્શ્મીન્યમિત્વા ઙ્વ ।

उलूखलसुतानामवेद्विन्द्र जलगुलः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે ઙ્વ-સુખના અભિલાષી વિદ્વાન તથા રસનું સેવન કરનાર જીવ ! તું ર્શ્મીન્-ઙ્વ-જેમ યમિતવૈ-સૂર્ય પોતાના કિરણોને અથવા સારથી જેમ ઘોડા આદિ પશુઓની રસીઓ-દોરીઓને યત્ર-જે ક્રિયાથી સિદ્ધ થનાર વ્યવહારમાં મન્થામ્-ઘૃત આદિ પદાર્થોને કાઢવા માટે મન્થન (વલોણા)ને સારી રીતે બાંધે છે, ત્યાં **उलूखलसुतानाम्**-ખાંડણિયાથી સિદ્ધ કરેલ પદાર્થોને **अव**-તેવી રીતે સિદ્ધ કરવાની ઈચ્છા કર. **च**-અને **इत्**-એ વિદ્યાનો **जलगुलः**-યુક્તિપૂર્વક ઉપદેશ કર. (૪)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ આપે છે કે-હે વિદ્વાનો ! જેમ સૂર્ય કિરણોથી ભૂમિને આકર્ષણ દ્વારા બાંધે છે અને જેમ સારથી લગામથી ઘોડાઓને નિયંત્રિત કરે છે; તેમ મન્થન, બંધન અને ચાલનની વિદ્યાથી દૂધ આદિથી અને ઔષધિઓથી માખણ આદિને તથા રસોને યુક્તિપૂર્વક સિદ્ધ = તૈયાર કરો. (૪)

यच्चिद्धि त्वं गृहेगृह उलूखलक युज्यसे ।

इह द्युमत्तमं वद जयतामिव दुन्दुभिः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે **उलूखलक**-ખાંડણિયાથી વ્યવહાર લેનાર વિદ્વાન ! તું **यत्**-જે કારણે **हि**-પ્રસિદ્ધ-નિશ્ચયપૂર્વક **गृहेगृहे**-પ્રત્યેક ઘરમાં **युज्यसे**-ઉક્ત = ખાંડણિયાની વિદ્યાને મુક્ત કરે છે, તે તું **इह**-આ સંસાર, ગૃહ અથવા સ્થાનમાં **जयताम्**-શત્રુઓને જીતનારના **दुन्दुभिः**-નગારાઓની **इव**-સમાન **द्युमत्तमम्**-જેમાં અત્યંત પ્રશસ્ત પ્રકાશવાળા શબ્દથી યુક્ત ખાંડણિયાને વગાડ અર્થાત્ તેના વ્યવહારનો **वद**-એ વિદ્યાનો ઉપદેશ કર. (૪)

ભાવાર્થ : સર્વ ઘરોમાં ઉલૂખ = ખાંડણિયાની ક્રિયા સ્થાપિત કરવી જોઈએ-અર્થાત્ પ્રત્યેક ઘરમાં ખાંડણિયો અને સાંબેલાનું સ્થાપન કરવું જોઈએ. જેમ શત્રુઓને જીતનારા સૈનિકો નગારા વગાડીને યુદ્ધ કરે છે, તેમ રસ કાઢનાર મનુષ્યે ખાંડણિયામાં જવ આદિ અન્નોને નાખીને સાંબેલાથી ખાંડીને તથા ફોતરા કાઢી નાખીને સાર ભાગને ગ્રહણ કરવો જોઈએ. (૫)

उत स्म ते वनस्पते वातो विवात्यग्रमित् ।

अथो इन्द्राय पातवे सुनु सोममुलूखल ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જેમ **वातः**-વાયુ **इत्**-જ **वनस्पते**-વૃક્ષ આદિ પદાર્થોના **अग्रम्**-ઉપરના ભાગને

ઉત્ત-પણ વિવાતિ, સ્મ-ચલાવે છે અથો-ત્યારબાદ ઇન્દ્રાય-જીવ-પ્રાણીઓને માટે સોમમ્-સમસ્ત ઔષધિઓના સારને પાતવે-પાન કરીને સિદ્ધ કરે છે; તેમ ઝલૂઘલ-ખાંડણિયામાં જવ આદિ ઔષધિગણના સારને સુનુ-સિદ્ધ કર. (૬)

ભાવાર્થ : જ્યારે વાયુ સમસ્ત વનસ્પતિ અને ઔષધિ આદિની વૃદ્ધિ કરે છે, ત્યારે પ્રાણી-મનુષ્ય તે પુષ્ટ થયેલ પદાર્થોને ખાંડણિયામાં રાખીને, તેનો સાર ગ્રહણ કરીને ખાય છે અને તેના રસનું પાન કરે છે. તેના વિના કોઈ પદાર્થની વૃદ્ધિ અને પુષ્ટિ સંભવ નથી. (૬)

આયજી વાજસાતમા તા હ્યુચ્ચા વિજર્મૂતઃ । હરીઙ્ગવાન્ધાંસિ બપ્સતા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : આયજી-સર્વત્ર પદાર્થોથી સંગમ કરનાર, વાજસાતમા-યુદ્ધને સારી રીતે જીતનાર હોય છે, તા-તે તે બન્ને સ્ત્રી-પુરુષ હિ-નિશ્ચયથી અન્ધાંસિ-અન્નોને બપ્સતા-ખાતા હરી-ઙ્ગ-બન્ને ઘોડાઓની સમાન મુસળ અને ખાંડણિયા આદિથી ઝચ્ચા-ઉત્કૃષ્ટ કાર્યોને વિજર્મૂતઃ-વિવિધ પ્રકારથી સિદ્ધ કરીને ધારણ કરે છે. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ ભક્ષણ-ખાનાર બે ઘોડાઓ વાહન આદિનું વહન કરે છે, તેમ મુસળ અને ખાંડણિયા અનેક વિભાગ આદિ કાર્યોને નિર્વાહ કરે છે. (૭)

તા નો અદ્ય વનસ્પતી ઋષ્વાવૃષ્વેભિઃ સોતૃભિઃ । ઇન્દ્રાય મધુમત્સુતમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : જે સોતૃભિઃ-રસ કાઢવામાં કુશળ ઋષ્વેભિઃ-મહાન વિદ્વાનોને ઋષ્વૌ-મહાન-અતિ સ્થૂળ વનસ્પતી-કાષ્ઠના સાંબેલું અને ખાંડણિયો બનાવેલ હોય, જે નઃ-અમારા ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરાવનાર વ્યવહારને માટે અદ્ય-આજ મધુમત્-મધુર આદિ પ્રશંસનીય ગુણવાળા પદાર્થોને સુતમ્-સિદ્ધ કરવાના હેતુ હોય છે, તા-સાંબેલું-ખાંડણિયાને સર્વ મનુષ્યોએ સિદ્ધ કરવા યોગ્ય છે. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ પથ્થરના સાંબેલા અને ખાંડણિયા હોય છે, તેમ જ કાષ્ઠ, લોખંડ, પિત્તળ, ચાંદી અને સોના આદિના પણ બનાવી શકાય છે. તે સાધનોથી ઔષધિઓનો રસ કાઢવા આદિ કાર્યોને મનુષ્ય સિદ્ધ કરે. (૮)

ઝચ્છિષ્ટં ચમ્વૌર્ભર સોમં પવિત્ર આસૃજ । નિઘેહિ ગોરધિ ત્વચિ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! તું ચમ્વૌઃ-પાયદળ અને હાથી, ઘોડા વગેરે પર આરૂઠ થયેલ બે પ્રકારની સેનાઓની સમાન શિષ્ટમ્-વિશેષ સોમમ્-સર્વ રોગ વિનાશક; બળ, પુષ્ટિ અને બુદ્ધિવર્ધક ઉત્તમ ઔષધિરૂપ રસને ઝમ્બર-ઉત્તમ રીતે ધારણ કર અને તેનાથી બન્ને પ્રકારની સેનાઓને પવિત્રે-શુદ્ધ આસૃજ-કર. ગોઃ-પૃથિવીની અધિ-ઉપર અર્થાત્ ત્વચિ-તેની પીઠ ઉપર તે સેનાઓને નિઘેહિ-સર્વથા સંસ્થાપિત કર. (૯)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ આદિએ બે પ્રકારની સેનાઓ રાખવી જોઈએ એક વાહનો પર સવાર અને બીજી પાયદળ. તેના માટે ઉત્તમ રસ અને શસ્ત્ર આદિ સામગ્રી તૈયાર કરવી જોઈએ. (બન્ને સેનાઓને)

ઉત્તમ શિક્ષા તથા ઔષધિપ્રદાન દ્વારા શુદ્ધ બળયુક્ત અને સર્વ રોગોથી રહિત કરીને, પૃથિવી પર ચક્રવર્તી રાજ્યનું નિત્ય સેવન કરવું જોઈએ. (૯)

સંગતિ : સત્તાવીસમાં સૂક્તમાં અગ્નિ અને વિદ્વાનના જે-જે ગુણ કહેલ છે, તે સાંબેલું અને ખાંડણિયા આદિ સાધનોને ગ્રહણ કરી ઔષધિ આદિ પદાર્થોથી સંસારના પદાર્થોથી અનેક પ્રકારના ઉત્કૃષ્ટ પદાર્થો ઉત્પન્ન કરે. એ અર્થનું આ સૂક્તમાં સંપાદન કરવાથી સત્તાવીસમાં સૂક્તમાં કહેલ અર્થની સાથે આ અઠ્ઠાવીસમાં સૂક્તની સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૨૮)

સૂક્ત-૨૯

યચ્ચિવ્દિ સત્ય સોમપા અનાશસ્તા ઇવ સ્મસિં ।

આ તૂ નં ઇન્દ્ર શંસય ગોષ્વશ્વેષુ શુભ્રિષુ સહસ્ત્રેષુ તુવીમઘ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સોમપા:-ઉત્પન્ન થયેલ સર્વ પદાર્થોની રક્ષા કરનાર તુવિમઘ-અનેક પ્રકારના પૂજ્યતમ ધનયુક્ત સત્ય-અવિનાશી સ્વરૂપ, સજ્જનોમાં શ્રેષ્ઠ ઇન્દ્ર-પ્રશસ્ત ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત ન્યાયાધીશ ! આપ યચ્ચિવ્ત્-જો અમે કદી પણ અનાશસ્તાઇવ-અપ્રશંસનીય ગુણ સામર્થ્યવાળાની સમાન સ્મસિ-હોય તુ-છતાં પણ ન:-અમને સહસ્ત્રેષુ-અસંખ્ય શુભ્રિષુ-ઉત્તમ સુખદાયક ગોષુ-પશુ, ઈન્દ્રિય, પૃથિવી અને અશ્વેષુ-વેગ, અગ્નિ તથા ઘોડા આદિમાં હિ-નિશ્ચયથી આ + શંસય-પ્રશસ્ત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ આળસથી મનુષ્ય શ્રેષ્ઠતા રહિત બને છે, તેમ અમે પણ જો કોઈવાર પ્રમાદી બનીએ, તો હે ન્યાયાધીશ ! અમને પ્રશંસનીય પુરુષાર્થ અને ગુણયુક્ત કરો, જેથી અમે પૃથિવી આદિ રાજ્ય અને ઉત્તમ હાથી, ઘોડા, બળદ અને ગાય આદિ પશુઓને પ્રાપ્ત કરીને, તેનું પાલન અને વૃદ્ધિ કરીને, તેનાથી ઉપકાર ગ્રહણ કરીને, પ્રશંસનીય બનીએ. (૧)

શિપ્રિન્વાજાનાં પતે શચીવસ્તવં દંસનાં ।

આ તૂ નં ઇન્દ્ર શંસય ગોષ્વશ્વેષુ શુભ્રિષુ સહસ્ત્રેષુ તુવીમઘ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે શિપ્રિન્-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પ્રશંસનીય ઐહિક-વ્યાવહારિક અને પારમાર્થિક સુખ પ્રદાતા શચીવ:-અનેક પ્રકારના કર્મ તથા પ્રજાયુક્ત-પ્રજ્ઞાયુક્ત વાજાનામ્-સંગ્રામોની મધ્યમાં પતે-પાલક, તુવીમઘ-અનેક પ્રકારના પ્રશંસનીય વિદ્યા ધનયુક્ત ઇન્દ્ર-સર્વ રાજ્યના ઐશ્વર્યને ધારણ કરનાર ન્યાયાધીશ ! જે તવ-આપની દંસના-વેદવાણી યુક્ત વિદ્યા સહિત ક્રિયા છે, તેથી આપ સહસ્ત્રેષુ-અસંખ્ય શુભ્રિષુ-ઉત્તમ વિમાન આદિ વાહનોમાં અથવા તેના સાધનોમાં ગોષુ-સત્યભાષણ, શાસ્ત્ર-શિક્ષાયુક્ત વાણી આદિ ઈન્દ્રિયો અશ્વેષુ-વેગ આદિ ગુણોવાળા અગ્નિ આદિ પદાર્થો સહિત ઘોડા આદિ વ્યવહારોમાં ન:-અમને વિદ્વાનોને આ + શંસય-ઉત્તમ ગુણયુક્ત કરો. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જગદીશ્વરને એ રીતે પ્રાર્થના કરવી જોઈએ કે-હે ભગવન્ ! તું કૃપા કરીને જેવી રીતે ન્યાયાધીશતા, ઉત્તમ રાજ્ય આદિની પ્રાપ્તિ કરાવે છે, તેમ અમને પૃથિવીના રાજ્યની યુક્ત, સત્યભાષણશીલ, બ્રહ્મવિદ્યા અને શિલ્પવિદ્યા આદિની સિદ્ધિ કરનાર અને નિત્ય બુદ્ધિમાન બનાવ. (૨)

નિષ્વાપયા મિથૂદૃશા સ્તામબુદ્ધ્યમાને ।

આ તૂ નં ઇન્દ્ર શંસય ગોષ્વશ્વેષુ શુભ્રિષુ સહસ્ત્રેષુ તુવીમઘ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : તુવિમઘ-અનેક પ્રકારના ધનયુક્ત ઇન્દ્ર-અવિદ્યારૂપી નિદ્રા અને દોષોને દૂર કરનાર વિદ્વાન્ ! જે મિથૂદૃશા-વિષયાસક્તિ, પ્રમાદ અને શ્રેષ્ઠ કર્મોના વિનાશને બતાવનાર અબુદ્ધ્યમાને-બોધ નિવારક આલસ્યકર્મમાં રહેલા શરીર અને મન સસ્તામ્-શયન કરે છે, પુરુષાર્થનો નાશ કરે છે, તેનું આપ નિષ્વાપય-નિવારણ કરો, તુ-અને સહસ્ત્રેષુ-અનેક શુભ્રિષુ-પ્રશસ્ત ગુણવાળા ગોષુ-પૃથિવી આદિ પદાર્થો તથા અશ્વેષુ-વ્યાપ્તિશીલ = પ્રત્યેક વસ્તુમાં રહેનાર અગ્નિ આદિ વિષયોમાં ન:-અમને આ + શંસય આદરપૂર્વક ઉત્તમ ગુણવાન બનાવો. (૩)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ શરીર અને આત્માની આળસનો ત્યાગ કરીને શ્રેષ્ઠ કર્મોમાં નિત્ય પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૩)

સસન્તુ ત્યા અરાતયો બોધન્તુ શૂર રાતયઃ ।

આ તૂ નં ઇન્દ્ર શંસય ગોષ્વશ્વેષુ શુભ્રિષુ સહસ્ત્રેષુ તુવીમઘ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે તુવિમઘ-વિદ્યા, સુવર્ણ, સેના આદિ ધનયુક્ત, શૂર-શત્રુઓના બળનો નાશ કરનાર સેનાપતિ ! આપના અરાતય:-જે દાન આદિ રહિત, ધર્મ રહિત શત્રુ છે, તેઓ સસન્તુ-નિદ્રાને પ્રાપ્ત થાય-સૂઈ જાય અને જે રાતય:-દાન આદિ ધર્મના દાતા છે, ત્યા:-તે સર્વ બોધન્તુ-જાગૃત રહીને શત્રુ અને મિત્રને જાણે. તુ-અને હે ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્યવાન, સભાધ્યક્ષ, સેનાપતિ, વીર પુરુષ આપ સહસ્ત્રેષુ-બહુ જ-અસંખ્ય શુભ્રિષુ-પૃથિવી આદિ શ્રેષ્ઠ ગુણવાળા ગોષુ-સૂર્ય આદિ અને અશ્વેષુ-અગ્નિ આદિમાં ન:-અમને આ + શંસય-સર્વત્રથી શત્રુવિજયથી પ્રશંસાયુક્ત કરો.

ભાવાર્થ : અમોએ પોતાની સેનાઓમાં વીર મનુષ્યોને રાખીને આનંદિત-હર્ષિત કરવા જોઈએ, જેથી ભયથી દુષ્ટ શત્રુ સૂતા = નિષ્ચેષ્ટ રહે, કદી પણ જાગે નહિ. જેથી અમે નિષ્કંટક ચક્રવર્તી રાજ્યનું નિત્ય સેવન કરતા રહીએ. (૪)

સમિન્દ્ર ગર્દ્ધભં મૃણ નુવન્તં પાપયામુયા ।

આ તૂ નં ઇન્દ્ર શંસય ગોષ્વશ્વેષુ શુભ્રિષુ સહસ્ત્રેષુ તુવીમઘ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-ન્યાયાધીશ ! આપ ગર્દ્ધભમ્-ગર્ધેડા સમાન સ્વભાવવાળા તથા અમુયા-અમારી પાછળ પાપયા-પાપરૂપ મિથ્યા ભાષણથી યુક્ત સાક્ષી અને ભાષણ આદિ કપટથી અમારી નુવન્તમ્-

સ્તુતિ કરતા શત્રુનું સંમૂળ-હનન કરો-દંડ આપો.

હે તુવિઘ-અનેક પ્રકારની વિદ્યા અને ધર્મરૂપી ધનવાળા ઇન્દ્ર-સભાઅધ્યક્ષ અને ન્યાયાધીશ ! આપે પોતાના સહસ્ત્રેષુ-અત્યધિક શુભ્રિષુ-શુદ્ધ ભાવના અને ધર્મયુક્ત વ્યવહારોથી ગ્રહણ કરેલ ગોષુ-પૃથિવી આદિ પદાર્થોમાં તથા અશ્ત્રેષુ-હાથી, ઘોડા આદિ પશુઓમાં ન:-અમને આશંસય-સત્ય વ્યવહાર અને વર્તનવાળા અર્થાત્ અપરાધ રહિત કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જે સભાઅધ્યક્ષ ન્યાયના આસન પર બેસીને ગધેડાં સમાન સ્વભાવવાળા મૂર્ખને, ગંદા શબ્દ ઉચ્ચારણ કરનાર વ્યભિચારીને તથા અન્યાય અને મિથ્યા વચન રૂપ સાક્ષી થઈ (અન્યનો) તિરસ્કાર કરનારને યથોચિત રૂપમાં દંડ આપે, અને જે સત્યવાદી ધર્માત્મા છે, તેનો સત્કાર કરે.

જે અન્યાયપૂર્વક બીજાની વસ્તુ પચાવી પાડે છે, તેને દંડ આપીને, જેની જે વસ્તુ હોય, તેને તે અપાવે તથા જે એ ન્યાયાધીશોના સનાતન = શાશ્વત ધર્મનું સદા પાલન કરે, તેનો અમે નિરંતર સત્કાર કરીએ. (૫)

પતાતિ કુળ્લુનાચ્ચા દૂરં વાતો વનાદધિં ।

આ તૂ નં ઇન્દ્ર શંસય ગોષ્વશ્વેષુ શુભ્રિષુ સહસ્ત્રેષુ તુવીમઘ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે તુવિમઘ-અનેક પ્રકારના ધનને સિદ્ધ કરનાર ઇન્દ્ર-સવોત્કૃષ્ટ વિદ્વાન ! આપ-જેમ વાત:-વાયુ કુળ્લુનાચ્ચા-કુટિલ ગતિથી વનાત્-જગત્ અથવા કિરણોથી દૂરમ્-દૂર અધિપતાતિ-ચાલ્યો જાય તેમ કરો, અને સહસ્ત્રેષુ-બહુ જ ગોષુ-પૃથિવી, ઈન્દ્રિય, કિરણ અને ચતુષ્પા-ચોપગા પ્રાણીઓમાં અશ્ત્રેષુ-વેગ આદિ ગુણોમાં તથા શુભ્રિષુ-શુદ્ધ વ્યવહારોમાં સર્વ પ્રાણીઓ અને અપ્રાણીઓને સુશોભિત કરે છે, તેમ ન:-અમને આશંસય-સર્વત્રથી પ્રશંસિત કરો. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એમ જાણવું જોઈએ કે-આ જે વાયુ છે, તે જ સર્વત્ર ગતિ કરતો, અગ્નિ આદિથી અધિક તિર્યક્-કુટિલ ગતિ કરનારો, અત્યંત ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરાવનારો; પશુ, પક્ષી તથા વૃક્ષ આદિની ચેષ્ટા, વૃદ્ધિ અને ભંજન-નાશનો કરનારો તથા સમસ્ત વ્યવહારનું કારણ છે. (૬)

સર્વં પરિક્રોશં જહિ જમ્ભયા કૃકદાશ્વમ્ ।

આ તૂ નં ઇન્દ્ર શંસય ગોષ્વશ્વેષુ શુભ્રિષુ સહસ્ત્રેષુ તુવીમઘ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે તુવીમઘ-અનન્ત બળરૂપ ધનયુક્ત ઇન્દ્ર-સર્વ શત્રુ નિવારક સેનાઅધ્યક્ષ ! આપ ન:-અમારા સહસ્ત્રેષુ-અનેક શુભ્રિષુ-શુભ કર્મયુક્ત વ્યવહારમાં તથા અશ્ત્રેષુ-હાથી, ઘોડા રૂપ અંગોમાં વિનાશ કરાવનાર વ્યવહારને પરિક્રોશમ્-સમસ્ત રડાવનાર વ્યવહારને-દુઃખસમૂહને જહિ-વિનષ્ટ કરો. અને જે ન:-અમારા શત્રુ હોય કૃકદાશ્વમ્-દુઃખ આપનારનો પણ જમ્ભય-વિનાશ કરો, તુ-અને તેનાથી ન:-અમને આશંસય-શત્રુઓથી પૃથક્ કરી સર્વત્રથી સુખી કરો. (૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ જગદીશ્વરને એ રીતે પ્રાર્થના કરવી જોઈએ કે-‘હે પરમાત્મન ! આપ

જે અમારામાં દુષ્ટ વ્યવહાર રૂપ શત્રુ છે, તે સર્વને દૂર કરીને અમને સમસ્ત ઐશ્વર્ય પ્રદાન કરો.
(૭)

સંગતિ : પૂર્વ સૂક્તમાં પદાર્થ વિદ્યા અને તેના સાધન કહેલ છે અને તેના ઉપાદાન કારણ જગતના પદાર્થ છે. તે જગદીશ્વરથી ઉત્પન્ન થયેલ છે; અત્રે તેથી ઉપકાર ગ્રહણમાં સમર્થ સભાધ્યક્ષ સહિત સભાજનો હોય છે. એવું કથન હોવાથી અઠાવીસમાં સૂક્તના અર્થની સાથે આ ઓગણત્રીસમાં સૂક્તના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૨૯)

સૂક્ત-૩૦

આ વ્ ઇન્દ્રં ક્રિવિં યથા વાજયન્તઃ શતક્રતુમ્ । મંહિષ્ટં સિઞ્ચ ઇન્દુભિઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ યથા-જેમ ખેતી કરનાર ખેડૂત ક્રિવિમ્-કુવાને ખોદીને-પ્રાપ્ત કરીને તેના જળથી ખેતરમાં સિઞ્ચ-સિંચન કરે છે અને જેમ વાજયન્તઃ-વેગયુક્ત વાયુ ઇન્દુભિઃ-જળથી શતક્રતુમ્-અસંખ્ય કર્મો થાય છે. મંહિષ્ટમ્-અતિ મહાન ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યના નિમિત્ત અગ્નિને-સૂર્યને સંયુક્ત કરે છે; તેમ આપ પણ પ્રજાઓને સુખોથી અભિષિક્ત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્ય પ્રથમ કુવાને ખોદીને તેના જળથી સ્નાન, પાન, ખેતી, બગીચામાં સિંચન આદિ વ્યવહાર કરીને સુખી બને છે, તેમજ વિદ્વાનો યથાયોગ્ય કળાયંત્રોમાં અગ્નિને યુક્ત કરીને, તેના સંબંધથી જળ સ્થાપિત કરીને, ચલાવવાથી અનેક કાર્યો કરીને સુખી થાય છે. (૧)

શતં વા યઃ શુચીનાં સહસ્ત્રં વા સમાશિરામ્ । એદું નિમ્નં ન રીયતે ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જે પવિત્ર અને બળવાન વિદ્વાન છે તે-જે એ ભૌતિક અગ્નિ છે, તે ન-જેમ જળ નિમ્નમ્-નીચેની-ઢાળની તરફ જાય છે, તેમ શુચીનામ્-શુદ્ધ કળાયંત્ર અને પ્રકાશયુક્ત પદાર્થોમાં શતમ્-સોગણા અથવા સમાશિરામ્-જે સર્વ પ્રકારના પકવવામાં આવે તે પદાર્થોના સહસ્ત્રમ્-હજારગણા આ, ઇત્-ઉ-આધાર અને દાહ ગુણવાળો અગ્નિ છે, તેને રીયતે-જાણે છે. (૨)

ભાવાર્થ : એ અગ્નિ, સૂર્ય વિદ્યુત્ અને પ્રસિદ્ધ રૂપથી સેંકડો પ્રકારથી શુદ્ધિ કરે છે, પાકવાવાળા પદાર્થોની મધ્યમાં વેગથી હજારો પદાર્થોને પકવે છે.

જેમ જળ નીચે તરફ વહે છે, તેમ અગ્નિ ઉપર ઉપર તરફ જાય છે, અગ્નિ અને જળના વિપર્યાસથી અગ્નિને નીચે રાખીને અને તેથી ઉપર જળનું સ્થાપન કરવાથી બન્નેના યોગથી અને વરાળ વેગ આદિ ગુણ ઉત્પન્ન થાય છે. (૨)

સં યન્મદાય શુષ્મિણં એના હ્સ્યોદરે । સમુદ્રો ન વ્યચો દુધે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હું હિ-પોતાના નિશ્ચયથી મદાય-હર્ષ = આનંદ અને શુષ્મિણે-પ્રશસ્ત બળયુક્ત વ્યવહાર માટે ન-જેમ સમુદ્રઃ સમુદ્ર વ્યચઃ-અનેક વ્યવહાર અર્થાત્ વિવિધ જળ અસ્ય-એ ઈન્દ્ર નામક અગ્નિના

ઉદરે-મધ્યમાં **एना**-એ સેંકડો અને હજારો ગુણો સહિત વર્તમાન **यत्**-જે ક્રિયાઓ છે, તેને **संदधे-**સારી રીતે ધારણ કરું. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ સમુદ્રના ઉદર-મધ્યમાં અનેક ગુણો ને રત્નો છે અથવા અગાધ જળ છે, તેમ અગ્નિની મધ્યમાં અનેક ગુણો તથા અનેક ક્રિયાઓ છે. તેથી સર્વ મનુષ્યોએ અગ્નિ અને જળના પ્રયત્નથી અનેક પ્રકારના ઉપકારને ગ્રહણ કરવો જોઈએ. (૩)

अयमुं ते समंतसि कपोत इव गर्भधिम्। वचस्तच्चिन्न ओहसे ॥ ४ ॥

પદાર્થ : **अयम्**-જે ઈન્દ્ર નામક અગ્નિ પરમેશ્વરે રચેલ છે **उ-**નિશ્ચયથી અમે જાણીએ છીએ કે જેમ **गर्भधिम्**-ગર્ભ ધારણ કરનારી કબૂતરીને **कपोत इव**-કબૂતર પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ **नः**-અમારી **वचः**-વાણીને **समोहसे**-પ્રાપ્ત થાય છે, **चित्**-અને તે સિદ્ધ કરેલ **नः**-અમને **तत्**-પૂર્વોક્ત બળ આદિ ગુણોના વર્ધક આનંદને **अतसि**-નિરંતર પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ કબૂતર વેગથી કબૂતરીનો પીછો કરે છે, તેમ શિલ્પવિદ્યા દ્વારા સિદ્ધ કરેલ અગ્નિ અનુકૂળ ગતિને પ્રાપ્ત થાય છે. મનુષ્ય એ વિદ્યાને ઉપદેશ અને શ્રવણ દ્વારા પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૪)

स्तोत्रं राधानां पते गिर्वीहो वीर यस्य ते। विभूतिरस्तु सूनृता ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે **गिर्वाहः**-વેદવાણીથી પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય, **वीर**-જાણવા યોગ્ય પદાર્થોના જ્ઞાતા અને સમસ્ત દુઃખોનો વિનાશ કરનાર, **राधानाम्**-જે પૃથિવી આદિ પદાર્થોમાં-ધનોમાં સર્વ સુખ સિદ્ધ થાય છે તેના **पते**-પાવક, સભાધ્યક્ષ અને સેનાધ્યક્ષ વિદ્વાન ! **त**-આપના **सूनृता**-શ્રેષ્ઠતાથી સર્વ ગુણોનો પ્રકાશ કરનાર **विभूतिः**-વિવિધ ઐશ્વર્ય છે; તે આપની પાસેથી અમારા ગ્રહણ કરેલ **स्तोत्रम्**-સ્તુતિ સમૂહ **नः**-અમારા પૂર્વોક્ત **मदाय**-આનંદ અને **शुष्मिणे**-બળ માટે **अस्तु**-થાય. (૫)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં પૂર્વ ત્રીજા મંત્રથી **मदाय-शुष्मिणे** અને **नः** આ ત્રણેય પદોની અનુવૃત્તિ આવેલી છે. અમે સર્વ મનુષ્યોએ જે સર્વના સ્વામી, વેદોક્ત ગુણોના પુંજ (= ધારણકર્તા) વિજ્ઞાનપ્રેમી સત્ય ઐશ્વર્યથી યુક્ત, યથાયોગ્ય ન્યાય કરનાર, સભાધ્યક્ષ અથવા સેનાપતિ વિદ્વાન છે, તેને જ ન્યાયાધીશ માનવા જોઈએ. (૫)

ऊर्ध्वस्तिष्ठा न ऊतयेऽस्मिन्वाजे शतक्रतो। समन्येषु ब्रवावहै ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે **शतक्रतो**-અનેક પ્રકારના કર્મ તથા અનેક પ્રકારની પ્રજ્ઞા-બુદ્ધિ યુક્ત સભાધ્યક્ષ અને સેનાધ્યક્ષ ! જે આપની સહાયને યોગ્ય છે, તે સર્વ કાર્યોમાં અમે **संब्रवावहै**-પરસ્પર મળીને ઉપદેશ અને શ્રવણમાં સંમતિથી ચાલીએ અને આપ **नः**-અમારી **ऊतये**-રક્ષા આદિને માટે **ऊर्ध्वः**-સર્વોપરિ તિષ્ઠ-વિરાજમાન થાઓ. આ રીતે (**अस्मिन्**) એ **वाजे**-યુદ્ધમાં તથા **अन्येषु**-યુદ્ધથી ભિન્ન સાધનીય કાર્યોમાં અર્થાત્ અન્ય કર્તવ્યોમાં આપ અને હું-પ્રતિજન અથવા બે-બે મળીને પરસ્પર ઉપદેશ અને શ્રવણ નિત્ય કર્યા કરીએ. (૬)

ભાવાર્થ : સત્યાચરણવાળા, ધ્યાનાવસ્થિ મનુષ્યે આત્મસ્થિત, અન્તર્યામી જગદીશ્વરની આજ્ઞાથી, સેનાના અધિષ્ઠાતા અને સભાધ્યક્ષ દ્વારા સત્ય-અસત્ય તથા કર્તવ્ય-અકર્તવ્યનો સમ્યક નિશ્ચય કરવો જોઈએ. તેના વિના કદી કોઈનો વિજય અને સત્યનો બોધ થઈ શકતો નથી.

જે સર્વવ્યાપી જગદીશ્વરને ન્યાયાધીશ માનીને તથા ધાર્મિક, શૂરવીરને સેનાપતિ બનાવીને, શત્રુઓની સાથે યુદ્ધ કરે છે, તેનો નિશ્ચય વિજય થાય છે, અન્યનો નહિ. (૬)

योगેયોગે ત્વસ્તરં વાજેવાજે હવામહે । સખાયં ઇન્દ્રમૂતયે ॥ ૭ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : અમે સખાય:-પરસ્પર મિત્ર બનીને અમારી ઋતયે-રક્ષા આદિ માટે યોગેયોગે-પ્રત્યેક અનુપલબ્ધ-કઠિનતાથી પ્રાપ્ત પદાર્થની પ્રાપ્તિમાં તથા વાજેવાજે-પ્રત્યેક યુદ્ધમાં ત્વસ્તરમ્-સર્વથા જાણવા યોગ્ય ઇન્દ્રમ્-સમસ્ત વિજય પ્રદાન કરાવનાર જગદીશ્વરનું હવામહે-આહ્વાન કરીએ છીએ.

[સેનાધ્યક્ષ]

અમે સખાય:-પરસ્પર મિત્ર બનીને અમારી ઋતયે-વિજય સુખની પ્રાપ્તિ માટે યોગેયોગે-પ્રત્યેક યુદ્ધમાં ત્વસ્તરમ્-સર્વથા જાણવા યોગ્ય ઇન્દ્રમ્-દુષ્ટ શત્રુના નિવારક, આત્મા અને શરીરથી બળવાન, ધાર્મિક, વીર સેનાપતિ તથા સભાધ્યક્ષનું હવામહે-આહ્વાન કરીએ છીએ. (૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરસ્પર મિત્રતા કરીને, પ્રાપ્ત પદાર્થોની રક્ષા તથા સર્વત્ર વિજય કરવો જોઈએ. પરમેશ્વર અને સેનાપતિનો નિત્ય આશ્રય કરવો જોઈએ; કેવળ આટલું કરવા માત્રથી એ સિદ્ધિ થઈ શકતી નથી; પરંતુ વિદ્યા અને પુરુષાર્થથી સિદ્ધિ પ્રાપ્ત થઈ શકે છે. (૭)

આ ઘાં ગમ્ઘદિ શ્રવત્સહસ્ત્રિણીભિરૂતિભિઃ । વાજેંભિરુપં નો હવમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : યદિ-જે તે ઇન્દ્ર:-સભા અને સેનાના અધ્યક્ષ ન:-અમારા આ હવમ્-આહ્વાન અને પ્રાર્થના આદિને શ્રવત્-સાંભળે તો સ ઘ-તે જ સહસ્ત્રિણીભિઃ-અનેક પ્રશસ્ત પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનારી ઋતિભિઃ-રક્ષા આદિ વ્યવહાર અને વાજેભિઃ-અન્ન, જ્ઞાન અને યુદ્ધ આદિની સાથે ન:-અમારું હવમ્-આહ્વાન-પ્રાર્થનાને ડાગમત્-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરે. (૮)

ભાવાર્થ : જ્યાં મનુષ્ય-સત્ય ભાવથી જે સભાધ્યક્ષ અને સેનાધ્યક્ષની સેવા કરે છે, ત્યાં રક્ષાને માટે તે સેનાના અંગો અને અન્નાદિ-રત્નાદિ પદાર્થોની સાથે તેની સમીપ સ્થિત થાય છે. તેની સહાયતા વિના કોઈને પણ સાચું સુખ અને વિજય પ્રાપ્ત થઈ શકતા નથી. (૮)

અનુ પ્રત્સ્યૌર્કસો હુવે તુવિપ્રતિં નરમ્ । યં તે પૂર્વં પિતા હુવે ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! તે-તારા પિતા-જનક = પિતા અથવા આચાર્ય યમ્-જે જગદીશ્વર અથવા સભા અને સેનાના અધ્યક્ષનું પ્રત્સ્ય-સનાતન કારણ અને ઓક્સ:-સર્વના નિવાસનું નિમિત્ત આકાશનાં

કારણથી **તુવિપ્રતિમ્**-અનેક કાર્યોના જ્ઞાતા અને સમસ્ત જગતના નેતા પરમેશ્વર અથવા સભા અને સેનાના અધ્યક્ષનું **પૂર્વમ્**-પ્રથમ (અનુ) **હુવે**-આહ્વાન = ગ્રહણ કરે છે, તેની હું **હુવે**-યથાવત્ સ્તુતિ કરું છું. (૯)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે કે-હે મનુષ્યો ! તમારે અન્યોને એ રીતે ઉપદેશ કરવો જોઈએ- જે અનાદિ કારણથી અનેક પ્રકારના કાર્ય પદાર્થોને ઉત્પન્ન કરે છે અને જેની ઉપાસના પૂર્વકાળમાં લોકો એ-પૂર્વજોએ કરી છે, વર્તમાનમાં કરે છે અને ભવિષ્યમાં કરશે, તેની ઉપાસના નિત્ય કરવી જોઈએ.

અત્રે કોઈ અન્યને પૂછે કે તું કોની ઉપાસના કરે છે ? તો તેને ઉત્તર આપવો, કે જેની ઉપાસના તારા પિતા અને સર્વ વિદ્વાન કરે છે; તથા જેનું વેદ નિરાકાર, સર્વવ્યાપક, સર્વ શક્તિમાન, અજન્મા અને અનાદિ સ્વરૂપવાળા જગદીશ્વરનું પ્રતિપાદન કરે છે, તેની હું નિત્ય ઉપાસના કરું છું. (૯)

તં ત્વાં વયં વિશ્વવારા શાસ્મહે પુરુહૂત । સર્વે વસો જરિતૃભ્યઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે **વિશ્વવાર**-વિશ્વના રચયિતા **પુરુહૂત**-અનેક જનોથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય **વસો**-જેમાં સર્વ ભૂત વાસ કરે છે અથવા જે સર્વ ભૂતોમાં વાસ કરનાર **સર્વે**-સર્વના મિત્ર જગદીશ્વર ! **તમ્**-તે પૂર્વોક્ત **ત્વા**-આપની **વયમ્**-ઉપાસનાને ઈચ્છુક અમે **જરિતૃભ્યઃ**-ધાર્મિક વિદ્વાન મનુષ્યોને માટે **આ**-સર્વત્રથી **શાસ્મહે**-આશા કરી એ પ્રકાશની અમારા સર્વમાં પ્રાપ્ત થવાની કામના કરીએ છીએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોના સમાગમથી જ એ સર્વના નિર્માતા, સર્વના પૂજ્ય, સર્વના મિત્ર, સર્વાધાર અને પૂર્વ મંત્રમાં વર્ણિત પરમેશ્વરના વિજ્ઞાન = વિશેષજ્ઞાન અને તેની ઉપાસનાની નિત્ય કામના = ઈચ્છા કરવી જોઈએ. કારણ કે વિદ્વાનોના ઉપદેશ વિના કોઈને પણ યથાર્થ રૂપમાં વિશેષ જ્ઞાન (પ્રાપ્ત) થઈ શકતું નથી. (૧૦)

અસ્માકં શિપ્રિણીનાં સોમપાઃ સોમપાભ્યામ્ । સર્વે વજ્રિન્તસર્વીનામ્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : **સોમપાઃ** ઉત્પન્ન કરેલ કાર્ય પદાર્થોના રક્ષક **વજ્રિન્**-સમસ્ત અવિદ્યારૂપી અંધકારના વિનાશક અને શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનયુક્ત **સર્વે**-સમસ્ત સુખોના પ્રદાતા સભાધ્યક્ષ અને સેનાધ્યક્ષ ! **સોમપાભ્યામ્**-સાંસારિક પદાર્થોની રચના કરનાર **સર્વીનામ્**-સર્વના મિત્ર પુરુષો અને સખી સ્ત્રીઓ તથા **અસ્માકમ્**-અમારી **શિપ્રિણીનામ્**-આલોક અને પરલોકના વ્યવહાર-જ્ઞાનવાળી સ્ત્રીઓમાં સર્વ પ્રધાન **ત્વા**-આપને **વયમ્**-અમે **આશાસ્માહે**-પ્રાપ્ત કરવા ઈચ્છીએ છીએ. (૧૧)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં પૂર્વ મંત્રથી **ત્વા**, **વયમ્**, **આ**, **શાસ્મહે** એ ચાર પદોની અનુવૃત્તિ છે. સર્વ પુરુષોએ અને સ્ત્રીઓએ પરસ્પર મિત્રતા કરીને, પરમેશ્વરની ઉપાસના, આર્યોની રાજસભા, વિદ્યાસભા, ધર્મસભા (રાજાર્યસભા, વિદ્યાર્થસભા, ધર્માપસભા) અને સમસ્ત વ્યવહારોની સિદ્ધિ સદા પ્રયત્નથી કરવી જોઈએ. (૧૧)

तथा तदस्तु सोमपाः सखे वज्रिन्तथा कृणु। यथा त उश्मसीष्टये ॥ १२ ॥

पदार्थ : હે સોમપાઃ-જગતમાં ઉત્પન્ન પદાર્થોથી સર્વની રક્ષા કરનાર વજ્રિન્-સભાધ્યક્ષ ! જેમ અમે ઇષ્ટયે-પોતાના સુખ માટે તે-આપ શસ્ત્રાવિત્ સખે-મિત્રની મિત્રતાની અનુકૂળ જે મિત્રાયરણ કરવા ઉશ્મસિ-ઈચ્છીએ છીએ અને કરીએ છીએ તથા-એ જ રીતે આપની તત્-મિત્રતા અમારામાં અસ્તુ-થાય, આપ તથા-તેમ કૃણુ-કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વના હિતેથી અને સકળ વિદ્યાયુક્ત સભા અને સેનાના અધ્યક્ષ પ્રજાની નિરંતર રક્ષા કરે, તેમ જ પ્રજા અને સેનાના મનુષ્યો પણ તેની સદા રક્ષા કરે. (૧૨)

रेवतीर्नः सध्माद् इन्द्रे सन्तु तुविवाजाः। क्षुमन्तो याभिर्मदैम ॥ १३ ॥

પદાર્થ : ક્ષુમન્તઃ-જેના અનેક પ્રકારના અન્ન વિદ્યમાન છે તે અમે-યાભિઃ-જે પ્રજાઓની સાથે સધ્માદે-આનંદ યુક્ત સ્થાનમાં મદેમ-આનંદને પ્રાપ્ત કરીએ (તથા) તેમ નઃ-અમારી તુવિવાજાઃ-બહુ જ પ્રકારની વિદ્યા-બોધવાળી રેવતીઃ-પ્રશસ્ત શોભા અને ધનવાળી પ્રજા ઇન્દ્રે-પરમ ઐશ્વર્યમાં નિયુક્ત સન્તુ-થાય. (૧૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સભાધ્યક્ષ અને સેનાધ્યક્ષ સહિત સર્વ સભાસદો પર સર્વ રાજ્ય સંબંધ તથા વિદ્યા અને ધર્મના પ્રચાર સંબંધી કાર્યોનું ઉત્તર દાયિત્વ રાખીને પ્રશસ્ત સુખ સ્વયં ભોગવવું જોઈએ તથા અન્યોને ભોગ કરાવવો જોઈએ.

વેદની આજ્ઞાનુસાર વિદ્યા, રૂપ સ્વભાવયુક્ત યુવાવસ્થામાં સ્ત્રી-પુરુષોની પરસ્પર અનુમતિથી સ્વયંવર થવા યોગ્ય છે. તેઓ ગૃહકાર્યો અને પરસ્પર સત્કારમાં નિત્ય પ્રયત્ન કરે, એ સર્વ પરમેશ્વરની ઉપાસના, આજ્ઞા અને સત્પુરુષોની સભાની આજ્ઞા અનુસાર વર્તન કરે, તેથી ભિન્ન વ્યવહારમાં કદી કોઈ પુરુષે અને કોઈ સ્ત્રીએ ક્ષણ માત્ર પણ રહેવું યોગ્ય નથી. (૧૩)

आ घ त्वावान्त्मनाप्तः स्तोतृभ्यो धृष्णवियानः। ऋणोरक्षं न चक्रयोः ॥ १४ ॥

પદાર્થ : હે ધૃષ્ણો-અતિ પ્રગલ્ભ = ચતુર સભાધ્યક્ષ ! ત્મના-આત્માથી-પોતાની કુશળતાથી આપ્તઃ-સર્વ વિદ્યાયુક્ત, સત્યનો ઉપદેશ કરનાર ઇયાનઃ-રાજ્યને જાણનાર રાજન્ ત્વાવાન્-આપની સમાન ઘ-આપ જ છો જે આપ ચક્રયોઃ-રથના બે પૈડાની અક્ષમ્ ધૂરી = ધરો. ન-સમાન સ્તોતૃભ્યઃ-સ્તુતિ કરનારા જનોને આઋણોઃ-પ્રાપ્ત થાઓ છો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ રથને ધારણ કરનારી પૈડાની ધૂરી = ધરો, ધૂમવા છતાં પણ પોતાના પર રથને સ્થિત રાખીને, તેને દેશદેશાન્તરમાં-અન્ય સ્થાનમાં પહોંચાડે છે, તેમ (હે રાજન્ !) સમસ્ત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવથી સંપન્ન તમે એ સર્વ (રાજ કાર્ય)ને નિયંત્રિત કરો છો. (૧૪)

आ यद्वुवः शतक्रतवा कामं जरितृणाम्। ऋणोरक्षं न शचीभिः ॥ १५ ॥

ऋग्वेदभाष्य

પદાર્થ : હે શતક્રતો-અનેકવિધ વિદ્યા, બુદ્ધિ અને કર્મથી યુક્ત રાજસભાના સ્વામિન્ ! (સભાધ્યક્ષ-રાજન્ !) આપ સ્તુતિ કરનારા ધાર્મિક જનોથી તત્-જે આપની દુઃ-સેવા કરવામાં આવે છે તેને પ્રાપ્ત કરીને શ્ચીભિઃ-રથના યોગ્ય કર્મોથી અક્ષમ્-તેની ધુરીથી = ધરોની ન-સમાન તે જરિતૃણામ્-સ્તુતિ કરનારા ધાર્મિક જનોની સર્વ કામમ્-કામના-ઈચ્છાઓને આત્રણોઃ-તેને અનુકૂળ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરાવો છો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનોની સેવા વિદ્યાર્થીઓની અભીષ્ટની પૂર્તિ કરે છે. અર્થાત્ તેની ઈચ્છા અનુકૂળ કામોને પૂરા કરે છે, તેમ પરમેશ્વરનું સેવન (ભજન) કરાવે છે, તેથી સર્વ મનુષ્યોએ તેનું સેવન (ભજન) કરવું જોઈએ. (૧૫)

શશ્વદિન્દ્રઃ પોપ્રુથદ્ધિર્જિગાય નાનદદ્ધિઃ શાશ્વસદ્ધિર્ધનાનિ ।

સ નૌ હિરણ્યરથં દંસનાવાન્ત્સ નઃ સન્નિતા સ્નયે સ નૌડદાત્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : ઇન્દ્રઃ-સૃષ્ટિના કર્તા ઈશ્વર અને રાજ્યનું શાસન કરનાર સભાધ્યક્ષ શશ્વત્-અનાદિ સનાતન કારણથી નાનદદ્ધિઃ-અત્યંત અવ્યક્ત શબ્દ કરનાર જીવ અથવા વિદ્યુત્ આદિથી, શાશ્વસદ્ધિઃ-અત્યંત પ્રશંસનીય પ્રાણવાળા ચર તથા પ્રોપ્રુથદ્ધિઃ-સ્થૂળ જે અચર છે તે કાર્યરૂપી પદાર્થોથી ધનાનિ-પૃથિવી, સુવર્ણ આદિ ધનોને જિગાય-જીતે છે, પ્રાપ્ત કરે છે.

સઃ-તે દશનાવાન્-કર્મનું ફળ દેનાર તથા સાધનોની સંયુક્ત ઈશ્વરનઃ-અમારા માટે હિરણ્યરથમ્-જ્યોતિમાન સૂર્ય આદિ લોક તથા સુવર્ણ આદિ પદાર્થોના રથ અર્થાત્ દેશદેશાન્તરમાં ગમન કરાવનાર-પહોંચાડનાર વિમાન આદિ રથ-વાહન સમૂહને અદાત્-આપે છે અથવા આપશે. સઃ-તે નઃ-અમને સુખોના સ્નયે-ભોગને માટે સન્નિતા-વિદ્યા, કર્મ અને ઉપદેશથી વિભાગ કરનાર બનીને સમસ્ત સુખોને અદાત્-આપે છે, તેમ સભાપતિ, સેનાપતિ અને ન્યાયાધીશ પણ વર્તાવ કરે. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેમ જગદીશ્વર સનાતન જગતના કારણથી ચર-અચર અર્થાત્ ચલ શરીર અને અચલ પદાર્થ રૂપ કાર્યોને ઉત્પન્ન કરીને, તેથી સર્વ જીવોને સમસ્ત સુખ પ્રદાન કરે છે, તેમ સભાપતિ, સેનાપતિ અને ન્યાયાધીશ સભા, સેના અને ન્યાયના સર્વ અંગોની રચના કરીને, સર્વ પ્રજાઓને નિરંતર આનંદયુક્ત કરે.

જેમ ઈશ્વરથી ભિન્ન અન્ય કોઈ જગતના રચયિતા, કર્મફળદાતા અને રાજ્યના ઉત્તમ શાસક બની શકતા નથી, તેમ (સભાપતિ આદિએ) તે સર્વનું અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૧૬)

આશ્વિનાવશ્વાવત્યેષા યાતં શવીરયા । ગોમદ્દસ્ત્રા હિરણ્યવત્ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે દસ્ત્રા-દારિદ્ર્ય વિનાશક અશ્વિનૌ-ઘાવાપૃથિવી દન્દની સમાન વિદ્યા અને ક્રિયારૂપ દન્દમાં કુશળ શિલ્પી, સભાધ્યક્ષ અને સેનાધ્યક્ષ વિદ્વાનો ! તમે બન્ને ડ્ષા-અભીષ્ટ અશ્વાવત્યા-વેગ

આદિ ગુણોથી યુક્ત શ્વીર્યા-દેશદેશાન્તરને પ્રાપ્ત કરાવનારી ગતિની સાથે હિરણ્યવત્-સુવર્ણ આદિ અનેક પ્રકારના સાધનોથી તથા ગોમત્-સુખને પ્રાપ્ત કરાવનારી અનેક વિધ ક્રિયાયુક્ત રથ-વાહનને આયાતમ્-સારી રીતે દેશદેશાન્તરમાં પહોંચાડો. (૧૭)

ભાવાર્થ : પૂર્વોક્ત અશ્વિનો = ઘોં (સૂર્ય) અને પૃથિવી (પાર્થિવ પદાર્થો)ના ગુણોથી ચલાવેલ યાન-વાહન શીઘ્ર ગતિ દ્વારા ભૂમિ પર જળમાં અને આકાશમાં-અન્તરિક્ષમાં જાય છે, તેથી તેને શીઘ્ર સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૧૭)

સમાનયોજનો હિ વાં રથો દસ્ત્રાવમર્ત્યઃ । સમુદ્રે અશ્વિનેયતે ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે દસ્ત્રૌ-માર્ગ ચાલવાની પીડાને હરનાર-નષ્ટ કરનાર અશ્વિના-ઉક્ત અશ્વિ સમાન શિલ્પકારી વિદ્વાનો ! વામ્-તમારા સિદ્ધ કરેલા સમયોજન:-તુલ્ય-સમાન યોજનાવાળા અમર્ત્યઃ-ખેંચનાર મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓથી રહિત રથઃ-નોંકા આદિ વાહન સમુદ્રે-જળથી પૂર્ણ સમુદ્ર અથવા અન્તરિક્ષમાં ઈંચતે-ચાલે છે, જેના વેગથી અને અશ્વવત્યા-વેગ આદિ ગુણોથી યુક્ત શ્વીર્યા-દેશદેશાન્તરમાં પહોંચાડનાર ગતિની સાથે સમુદ્રની આર અને પાર જઈ શકે છે. તમે બન્ને તેને સિદ્ધ કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા જે વિશાળ, અગ્નિ, વરાળ, જળ અને કલાયંત્રોથી સંચાલિત થનાર નોંકા-યાન (બનાવવામાં આવે) છે, તે નિર્વિઘ્ન રૂપે સમુદ્રની પાર શીઘ્ર પહોંચાડી દે છે. એવા (નોંકાયાનો) પહોંચી શકાતું નથી. (૧૮)

ન્યૃઘ્ન્યસ્ય મૂર્ધનિ ચ્ચક્રં રથસ્ય ચેમથુઃ । પરિ દ્યામન્યદીયતે ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિનો-વિદ્યાયુક્ત શિલ્પી વિદ્વાનો ! તમે બન્ને-અઘ્ન્યસ્ય-વિનિષ્ટ ન કરવા યોગ્ય તે રથસ્ય-વિમાન આદિ વાહનમાં મૂર્ધનિ-ઉત્તમ અંગ-અગ્ર ભાગમાં જે એક તથા અન્યત્-બીજું નીચેની તરફ કલાયંત્ર બનાવો, તો તે બે ચક્ર સમુદ્ર અથવા દ્યામ્-આકાશ પર પણ નિયેમથુઃ-દેશ-દેશાન્તરમાં જવા માટે બહુ જ સુંદર છે. એ બન્ને ચક્રોથી યુક્ત રથ-યાન યથેષ્ટ માર્ગમાં ઈંચતે-પહોંચાડે છે. (૧૯)

ભાવાર્થ : સર્વ શિલ્પી વિદ્વાનોએ શીઘ્ર જવા માટે જે-જે વાહનની ઈચ્છા કરે, તે-તેના અગ્રભાગમાં એક કલાયંત્ર ચક્ર અને સર્વ કલાયંત્રોને ઘૂમાવવા માટે બીજું ચક્ર પાછળના ભાગમાં બનાવવું જોઈએ. તેની રચના દ્વારા જળ, અગ્નિ આદિનો પ્રયોગ કરીને, તે યાન-વાહનથી શિલ્પીલોક સમસ્ત સામાન-સામગ્રી સહિત ભૂમિ, સમુદ્ર અને અન્તરિક્ષ માર્ગથી સુખપૂર્વક જઈ શકે છે એ નિશ્ચિત છે. (૧૯)

કસ્ત ઉષઃ કથપ્રિયે ભુજે મર્તો અમર્ત્યે । કં નક્ષસે વિભાવરિ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાપ્રિયજન્ ! જે એ અમર્ત્યે-કારણ પ્રવાહરૂપ નાશ રહિત, કથપ્રિયે-કથનપ્રિય વિભાવરિ-વિવિધ જગતને પ્રકાશિત કરનારી ઉષાઃ-ઊષા = પ્રાતઃકાલીનવેળા ભુજે-સુખ ભોગ કરાવવા માટે પ્રાપ્ત થાય છે, તેને પ્રાપ્ત કરીને આપ કમ્-કયો મનુષ્ય નક્ષસે-પ્રાપ્ત થતો નથી, અને કઃ-

કોણ મર્ત્ત:-ભુજે-સુખભોગ માટે તે-તારી સમીપ પ્રાપ્ત થતો નથી ? (૨૦)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં કાકુ (ધ્વનિભેદ)થઈ અર્થ સમજવો જોઈએ. કોણ મનુષ્ય કાલની સૂક્ષ્મ અને વ્યર્થ નહિ ગુમાવવા યોગ્ય ગતિને જાણે છે ? સર્વ મનુષ્ય પુરુષાર્થના આરંભ સમય સુખનામક ઉપાવેળાને યથાર્થરૂપમાં નથી જાણતો ? તેથી સર્વ મનુષ્યોએ પ્રાતઃકાલ ઊઠીને જ્યાં સુધી ન સૂવે, ત્યાં સુધી સમયની એક ક્ષણ પણ વ્યર્થ ગુમાવવી ન જોઈએ. આ રીતે જાણનાર મનુષ્યો સર્વ કાળમાં સુખ ભોગવી શકે છે, અન્ય આળસુ નહિ. (૨૦)

વ્યં હિ તે અમન્મહ્યાન્તાદા પરાકાત્ । અશ્વે ન ચિત્રે અરુષિ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે કાળ વિદ્યાવિત્ જન ! જેમ વયમ્-કાળનો મહિમા જાણનાર અમે જે ચિત્રે-આશ્ચર્યરૂપ અરુષિ-લાલ ગુણ અને પ્રકાશયુક્ત ઊષા છે, તેને આ + અન્તાત્-સમીપસ્થ દેશથી અને આ + પરાકાત્-દૂર દેશથી અશ્વે-પ્રતિક્ષણ શિક્ષિત ઘોડા પર બેસીને જવા-આવવા ન-સમાન અમન્મહિ-જાણે છે, તેમ તું પણ જાણ. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાનકાળનો યથાવત્ ઉપયોગ કરવાનું જાણે છે, તેના પુરુષાર્થથી દૂરના અને સમીપના સર્વ કાર્યો સિદ્ધ થાય છે. તેથી કોઈ પણ મનુષ્યે ક્ષણમાત્ર સમય વ્યર્થ ન ગુમાવવો જોઈએ. (૨૧)

ત્વં ત્યેભિરા ગૃહિ વાજેભિર્દુહિતર્દિવઃ । અસ્મે ર્ચિં નિ ધારય ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે કાળના માહાત્મ્યને જાણનાર વિદ્વાન્ ! ત્વમ્-આપ જે દિવઃ-સૂર્યના કિરણોથી ઉત્પન્ન થયેલી તેની દુહિતઃ-પુત્રીની સમાન ઉપાવેળા ત્યેભિઃ-શોભન કાળ અવયવો અર્થાત્ દિવસ-મહિના વિભાગોથી તે અમારા માટે વાજેભિઃ-અન્ન આદિ પદાર્થોની સાથે આનંદ માટે સર્વત્રથી ધનાદિ પદાર્થોની પ્રાપ્તિની નિમિત્ત બને છે, તેથી અસ્મે-અમારા માટે રચિમ્-વિદ્યા, સુવર્ણ આદિ ધનને નિધારય-નિત્ય ગ્રહણ કરવો, અને આગૃહિ-સર્વથા તે વિદ્યાનો ઉપદેશ કરો તથા સર્વત્રથી તેને પ્રાપ્ત કરાવો, જેથી અમે વ્યર્થકાળ ગુમાવીએ નહિ. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો કાળને વ્યર્થ ગુમાવતા નથી, તેઓને સર્વ કાળ સર્વ કાર્યોની સિદ્ધિ આપનાર બને છે; અન્યને નહિ. (૨૨)

સંગતિ : આ મંત્રમાં પૂર્વ સૂક્તના અનુષંગી ઇન્દ્ર, અશ્વિ-અને ઊષા-અર્થોના પ્રતિપાદનથી પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે આ સૂક્તના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૩૦)

સૂક્ત-૩૧

ત્વમગ્ને પ્રથમો અઙ્ગિરા ઋષિર્દેવો દેવાનામભવઃ શિવઃ સર્વા ।

तव व्रते कवयो विद्वानापसोऽजायन्त मरुतो भ्राजदृष्टयः ॥ १ ॥

पદાર્થ : હે અગ્ને-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ અને વિજ્ઞાન સ્વરૂપ જગદીશ્વર ! જે કારણે ત્વમ્-આપ પ્રથમ:- અનાદિ સ્વરૂપ છો, જગતના કલ્પની આદિમાં સદા વિદ્યમાન છો, અદ્વિગ્ના:-બ્રહ્માંડમાં પૃથિવી આદિ, શરીરમાં હસ્ત, પાદ આદિ અંગોના રસ અર્થાત્ અન્તર્યામી રૂપમાં અવસ્થિત છો, ઋષિ:-સર્વ વિદ્યાઓના જ્ઞાતા અને વેદના ઉપદેષ્ટા છો, દેવાનામ્-વિદ્વાનોના દેવ:-આનંદ ઉત્પાદક શિવ:-મંગલમય અને સર્વ પ્રાણીઓના મંગલકારી તથા સખા-સર્વ દુઃખ વિનાશમાં સહાયક અભવ:-છો, અને જે વિદ્મનાપસ:- વિજ્ઞાન નિમિત્ત કાર્ય કર્મ કરનાર મસ્ત:-ધર્મને પ્રાપ્ત મનુષ્ય તવ-આપના વ્રતે-ધર્માચરણના પાલન રૂપ આજ્ઞા નિયમમાં રહે છે, તેથી તેઓ જ ભ્રાજદૃષ્ટય:-પ્રકાશમાન વિદ્યા અને જ્ઞાનવાન કવય:- વિદ્વાન અજાયન્ત-બને છે. (૧)

ભાવાર્થ : જે ઈશ્વરની આજ્ઞા, ધર્મ અને વિદ્વાનોનો સંગ સિવાય અન્ય કંઈ કરતા નથી, તેઓની પરમેશ્વરની સાથે મિત્રતા થાય છે. પછી એ મિત્રતાથી તેઓના આત્મામાં સત્યવિદ્યાનો પ્રકાશ થાય છે અને તે વિદ્વાન બનીને શ્રેષ્ઠ કર્મોનું અનુષ્ઠાન કરીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર હોવાથી પ્રસિદ્ધ થાય છે. (૧)

त्वमग्ने प्रथमो अद्भिरस्तमः कविर्देवानां परि भूषसि व्रतम् ।

विभुर्विश्वस्मै भुवनाय मेधिरो द्विमाता शयुः कतिधा चिदायवे ॥ २ ॥

[ઈશ્વર]

પદાર્થ : હે અગ્ને-સર્વ દુઃખોના વિનાશક ઈશ્વર ! જેથી ત્વમ્-આપ સર્વને અલંકૃત કરનાર, પ્રથમ:- અનાદિ સ્વરૂપ, શયુઃ-પ્રલયકાળમાં સર્વ ભૂતોને શયન કરાવનાર મેધિર:-સંગ્રામ કરાવનાર દ્વિમાતા-બે-પ્રકાશ અને અપ્રકાશવાળા લોકના નિર્માતા અદ્ભિરસ્તમ:-અત્યંત અન્તર્યામી વિભુ:-સર્વ વ્યાપક કવિ:- સર્વજ્ઞ છો, તેથી ચિત્-તેથી જ આયવે-મનુષ્ય અને વિશ્વસ્મૈ-સર્વ ભુવનાય-લોકો-સંસારને માટે દેવાનામ્-વિદ્વાનો અથવા પૃથિવી આદિ લોકોના વ્રતમ્-તે તે ધર્મયુક્ત નિયમોને કતિધા-કેટલાય પ્રકારોથી પરિ + ભૂષસિ-સુશોભિત કરો છો. (૨)

[વિદ્વાન્]

હે અગ્ને-સર્વ શત્રુઓના દાહક વિદ્વાન્ ! જેથી ત્વમ્-આપ સર્વને અલંકૃત કરનાર પ્રથમ:-પ્રથમ માનવા યોગ્ય શયુઃ-પ્રલયમાં સર્વ ભૂતોનું શયન કરાવનાર મેધિર-સંગમ કરાવનાર દ્વિમાતા-પ્રકાશ અને અપ્રકાશવાળા બન્ને લોકોના નિર્માતા અદ્ભિરસ્તમ:-અન્તર્યામી વિભુ:-સર્વ સત્મા અને સેનાના અંગોની શત્રુ સેનામાં વ્યાપક કવિ:-સર્વજ્ઞ છો, તેથી ચિત્-તે કારણે આયવે-મનુષ્ય તથા વિશ્વસ્મૈ-સર્વ ભુવનાય-લોક અર્થાત્ સંસારને માટે દેવાનામ્-વિદ્વાનોના વ્રતમ્-તે-તે ધર્મયુક્ત નિયમોને (કતિધા) કેટલાય પ્રકારથી પરિ + ભૂષસિ-સુશોભિત કરો છો. (૨)

મહાવેદભાષ્ય

૧૪૭

ભાવાર્થ : પરમેશ્વર વેદ દ્વારા અને વિદ્વાનો તેના અધ્યયન દ્વારા મનુષ્યોના વિદ્યા તથા ધર્મરૂપ વ્રતોને અને લોકોના નિયમરૂપી વ્રતોને સુશોભિત કરે છે.

જેઓએ સૂર્ય આદિ પ્રકાશવાન અને વાયુ, પૃથિવી આદિ અપ્રકાશવાન અને વાયુ, પૃથિવી આદિ અપ્રકાશવાન લોક સમૂહની રચના કરેલ છે, તે સર્વવ્યાપક છે.

જેઓ ઈશ્વરની તથા તેની રચેલી સૃષ્ટિની વિદ્યાને પ્રકાશિત કરે છે, તેઓ વિદ્વાન બની શકે છે. વિભુ = વ્યાપક ઈશ્વર અને વિદ્વાનો વિના કોઈ પણ યથાર્થ વિદ્યાને તથા કારણથી કાર્યરૂપ બનેલ સમસ્ત લોકોની રચના, ધારણ કરવા અને તેનું જ્ઞાન કરાવવામાં સમર્થ બની શકતા નથી. (૨)

ત્વમંને પ્રથ્મો માતૃરિશ્વન આવિર્ભવ સુક્રતુયા વિવસ્વતે ।

અરંજેતાં રોદસી હતૃવૂર્યેઽસઘ્નોર્ભારમયજો મહો વસો ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-પરમાત્મન્ અથવા વિદ્વાન્ ! પ્રથમ:-અનાદિ સ્વરૂપ અથવા સમસ્ત કાર્યોમાં અગ્રણી, ત્વમ્-આપ જે સુક્રતુયા-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ અને કર્મોને સિદ્ધ કરાવનાર વાયુથી હતૃવૂર્યે-હોતાઓને ગ્રહણ કરવા યોગ્ય રોદસી-વિદ્યુત્ અને પૃથિવી અરંજેતામ્-પોતાની કક્ષામાં ધૂમે છે, તે માતૃરિશ્વને-પોતાની આકાશરૂપ માત્રામાં શયન કરનાર વાયુ અને વિવસ્વતે-સૂર્યલોક આવિઃ, ભવ-એ બન્નેને પ્રકટ કરો.

હે વસો-સર્વને નિવાસ કરાવનાર ! આપ શત્રુનો અસઘ્નો:-વિનાશ કરો, જેથી મહ:-મહાન ભારમ્-ભારયુક્ત વાહનને અયજ:-દેશ-દેશાન્તરમાં પહોંચાડો છો, તેનો અમને બોધ-જ્ઞાન કરાવો. (૩)

ભાવાર્થ : (જે) કારણરૂપ અગ્નિ પોતાના કારણથી વાયુના દ્વારા સૂર્યરૂપ બનીને તથા અંધકારનો નાશ કરીને પૃથિવી તથા પ્રકાશને ધારણ કરે છે, તે યજ્ઞ અને શિલ્પના નિમિત્ત બનીને કલાયંત્ર-મશીનોમાં પ્રયુક્ત કરવામાં આવતા મહાન ભારયુક્ત વાહનોને શીઘ્ર ચલાવે છે. (દેશ-દેશાન્તરમાં પહોંચાડે છે.) (૩)

ત્વમંને મનવે દ્યાર્મવાશયઃ પુસ્ત્રવસે સુકૃતૈ સુકૃત્તરઃ ।

શ્વાત્રેણ યત્પિત્રોર્મુચ્યસે પર્યા ત્વા પૂર્વમનયન્નાપરં પુનઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-જગદીશ્વર ! સુકૃત્તર:-અત્યંત શ્રેષ્ઠકર્મ કરનાર ત્વમ્-સર્વના પ્રકાશક આપે પુસ્ત્રવસે-અનેક શબ્દોવાળા વિદ્વાન સુકૃતે-શ્રેષ્ઠ કર્મ કરનાર મનવે-વિદ્યાપ્રકાશથી સર્વ વ્યવહારને જાણનાર વિદ્વાનને માટે દ્યાર્મ-ઉત્તમ સૂર્યલોકને અવાશયઃ-પ્રકાશિત કરેલ છે, શ્વાત્રેણ-ધન અથવા વિજ્ઞાનની સાથે વિદ્યમાન્ (ત્વા) આપને વિદ્વાનો પૂર્વમ્-પૂર્વકલ્પમાં અથવા પૂર્વજન્મમાં પુનઃ-અને અપરમ્-આ વર્તમાન કલ્પમાં અથવા આગળ જન્મ-મરણ આદિ પૃથક્ પ્રતીત થનાર આપને પુનઃ-વારંવાર અનયન્-પ્રાપ્ત કરે છે.

હે જીવ ! જે જીવ ! જે ઈશ્વર શ્વાત્રેણ-ધન અને વિજ્ઞાનની સાથે (ત્વા) તને પૂર્વમ્-પૂર્વજન્મમાં અને અપરમ્-આ જન્મમાં દેહ પ્રદાન કરે છે; યત્-જેનાથી પરિ + મુચ્યસે-સર્વત્રથી દુઃખથી મુક્ત

બની જાય છે, અને જેના નિયમથી તું **પિત્રો:**-માતા-પિતાના પાસેથી મહાકલ્પના અન્તમાં **પુન:**-ફરી સંસારમાં આવે છે, તે ઈશ્વરનું સેવન **ઉપાસના**-અને જ્ઞાન પ્રાપ્ત કર. (૪)

ભાવાર્થ : જે જગદીશ્વરે સૂર્ય આદિ જગત રચેલ છે અને જે વિદ્વાનો દ્વારા સુશિક્ષા ગ્રહણ કરવામાં આવે છે, તેની પ્રાપ્તિ પુણ્ય કર્મોથી થાય છે અને ચક્રવર્તી રાજ્ય આદિ ધનની પ્રાપ્તિ પણ (તે પુણ્યકર્મોથી થાય છે.) (૪)

ત્વમંગે વૃષભઃ પુષ્ટિવર્દ્ધનં ઉદ્યતસ્ત્રુચે ભવસિ શ્રવાચ્યઃ ।

ય આહુતિં પરિ વેદા વષટ્કૃતિમેકાયુરગ્રે વિશં આવિવાસતિ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે **અને**-યજ્ઞ ક્રિયા ફલવિત્ જગત્ગુરો પરેશ ! જે **ત્વમ્**-આપ **અગ્રે**-પ્રથમ **ઉદ્યતસ્ત્રુચે**-સારી રીતે સ્ત્રુવો ગ્રહણ કરનાર યાજ્ઞિકને માટે **શ્રવાચ્યઃ**-સાંભળવા-સંભળાવવા યોગ્ય **વૃષભઃ**-સુખોની વર્ષા કરનાર **एकायुः**-એક સત્ય ગુણ-કર્મ-સ્વભાવરૂપ આયુવાળા અને **पुष्टिवर्द्धनः**-પુષ્ટિવર્ધક **भवसि**-બને છે. **यः**-જે આપ **वषट्कृतिम्**-જેમાં વષટક્રિયા-ઉત્તમ ક્રિયા કરવામાં આવે તથા **आहुतिम्**-જેમાં ધર્મયુક્ત આચરણ કરવામાં આવે તેનું વિજ્ઞાન બતાવવામાં આવે છે, **विशं**-સર્વ પ્રજા પુષ્ટિની વૃદ્ધિથી તે આપના અને સુખોના **परि + आविवासति**-સારી રીતે સેવન કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વ પ્રથમ જગતનું નિમિત્ત કારણ બ્રહ્મનું જ્ઞાન કરવું જોઈએ અને પછી યજ્ઞવિદ્યામાં જે ક્રિયાઓ છે તથા જે રીતે હોમવા યોગ્ય દ્રવ્યો છે, તે સર્વને સમ્યક્ રીતે જાણીને, તેના પ્રયોગ વિજ્ઞાનથી શુદ્ધ વાયુ, વર્ષા અને જળની શુદ્ધિના કારણભૂત દ્રવ્યોનો અગ્નિમાં હોમ કરીને, તેનું સેવન કરવાથી આ સંસારમાં મહાન સુખની વૃદ્ધિ થાય છે અને તેના દ્વારા સમસ્ત પ્રજા આનંદ પ્રાપ્ત કરે છે; એમ જાણવું જોઈએ. (૫)

ત્વમંગે વૃજિનવર્ત્તનિં નરં સક્મન્પિપર્ષિ વિદથૈ વિચર્ષणे ।

યઃ શૂરસાતા પરિતક્મ્યે ધને દ્વષ્ટ્રેભિશ્ચિત્સમૃતા હંસિ ભૂયસઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે **સક્મન્**-સર્વ પદાર્થોથી સંબંધ રાખનાર **વિચર્ષણે**-અનેક પ્રકારના પદાર્થોના યથાર્થ દ્રષ્ટા = જોનાર **અને**-રાજનીતિ વિદ્યાથી સુશોભિત સેનાપતિ ! **યઃ**-જે આપ **વિદથૈ**-ધર્મયુક્ત યજ્ઞરૂપી **શૂરસાતૌ**-સંગ્રામમાં **द्वेषैभिः**-અલ્પ સાધનોથી **वृजिनवर्त्तनिम्**-અધર્મ માર્ગમાં ચાલનાર **नरम्**-મનુષ્ય અને **भूयसः**-અનેક શત્રુઓના **हंसि**-હનન કરો છો, અને **समृता**-ઉત્તમ સત્યયુક્ત કર્મોના **पिपर्षि**-પાલનકર્તા છો, તે આપ (**परितक्म्ये**) જે ચોર પારકા પદાર્થોને હરવાની ઈચ્છાથી **परितक्म्ये**-સર્વ તરફથી જોવા યોગ્ય **धने**-સુવર્ણ, વિદ્યા અને ચક્રવર્તી રાજ્ય આદિ ધનની રક્ષાને નિમિત્ત આપ અમારા સેનાપતિ બનો. (૬)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરનો એ સ્વભાવ છે, કે જે નિયમપૂર્વક અધર્મનો ત્યાગ કરે છે, ધર્મનું સેવન કરવા ઈચ્છે છે, તેને તે કૃપા કરીને ધર્મમાં સ્થિત કરે છે તથા જે ધર્મયુક્ત યુદ્ધ અને ધર્મયુક્ત ધનને

પ્રાપ્ત કરવા ઈચ્છે છે, તેની રક્ષા કરીને તેના કર્માનુસાર તેને ધન પણ પ્રદાન કરે છે અને જે દુષ્ટાચારી છે, તેને તેના કર્માનુસાર ફળ પ્રદાન કરીને દંડ આપે છે.

જે ઈશ્વરની આજ્ઞામાં રહીને ધર્માત્મા યુદ્ધના અલ્પ સાધનોથી પણ યુદ્ધમાં પ્રવૃત્ત થાય છે, તેને (તે) વિજય પ્રદાન કરે છે, અન્યને નહિ. (૬)

ત્વં તમગ્ને અમૃતત્વ ઉત્તમે મર્ત્ત્વ દધાસિ શ્રવસે દિવેદિવે ।

યસ્તાતૃષ્ણા ઉભયાય જન્મને મયઃ કૃણોષિ પ્રય આ ચ સૂર્યે ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-મોક્ષ આદિ સુખ પ્રદાન કરનાર જગદીશ્વર ! આપ-ચ:-જે સૂરિ:-મેધાવી = બુદ્ધિમાન મનુષ્ય દિવેદિવે-પ્રતિદિન શ્રવસે-શ્રવણને યોગ્ય આપની પ્રાપ્તિને માટે મોક્ષને ઈચ્છે છે. તમ-તે ધર્માત્મા મર્ત્ત્વ-મનુષ્યને ઉત્તમે-સર્વોત્તમ અમૃતત્વે-મોક્ષ પદમાં દધાસિ-ધારણ કરો છો-સ્થાપન કરો છો; અને જે મેધાવી મોક્ષ-અત્યંત સુખ અનુભવ કરીને-ભોગવીને ફરી ઉભયાય-પૂર્વ અને પર બન્ને જન્મને-જન્મના માટે તાતૃષ્ણા:-વારંવાર તૃષ્ણા કરતા તે મોક્ષ પદથી નિવૃત્ત થાય છે; તે સૂર્યે-મેધાવીને માટે મયઃ-સુખ અને પ્રયઃ-પ્રસન્નતાને આકૃણોષિ-સિદ્ધ કરો છો-પ્રદાન કરો છો. (૭)

ભાવાર્થ : જે જ્ઞાની ધર્માત્મા મનુષ્ય મોક્ષપદ પ્રાપ્ત કરે છે, તે સમયે તેનો આધાર ઈશ્વર જ (હોય) છે. જે જન્મ વીતિ ગયો તે પ્રથમ, જે આવનાર છે તે દ્વિતીય, જે વર્તમાનમાં છે તે તૃતીય અને જે વિદ્યા અને આચાર્યથી થાય છે તે ચતુર્થ, એ ચારેય મળીને એક જન્મ (ગણવામાં આવે) છે.

જ્યાં મનુષ્ય મુક્તિને પ્રાપ્ત કરીને તથા તેને ભોગવીને જન્મે છે, તે દ્વિતીય જન્મ (કહેવાય) છે, એ બન્નેને ધારણ કરવા માટે જીવાત્મા પ્રવૃત્ત રહે છે. આ રીતે આ વ્યવસ્થા ઈશ્વરને આધીન છે ;

તેમ સમજવું જોઈએ. (૭)

ત્વં નો અગ્ને સ્તવ્યે ધનાનાં યશસં કારું કૃણુહિ સ્તવાનઃ ।

ઋદ્ધ્યામ્ કર્માપસા નવેન દેવૈર્દીવાપૃથિવી પ્રાવતં નઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-કીર્તિ અને ઉત્સાહને પ્રાપ્ત કરાવનાર જગદીશ્વર અને પરમેશ્વરના ઉપાસક ! સ્તવાનઃ-સ્તુતિ કરનાર આપ-નઃ-અમારા ધનાનામ્-વિદ્યા, સુવર્ણ અને ચક્રવતી રાજ્ય રૂપમાં પ્રસિદ્ધ ધનના સ્તવ્યે-સેવનને માટે યશસમ્-કીર્તિયુક્ત અને કાસ્મ્ ઉત્સાહથી ઉત્તમ કર્મ કરનાર શિલ્પી-ઉદ્યોગી મનુષ્યને નિયુક્ત કૃણુહિ-કરો, જેનાથી અમે પુરુષાર્થી બનીને નવીન-નવીન અપસા-પુરુષાર્થથી કર્મ-કર્મ ઋદ્ધ્યામ્-નિત્ય વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીએ, વિદ્યા પ્રાપ્તિ માટે દેવૈઃ-વિદ્વાનોથી-ઈશ્વર અને ઉપાસક તમે બન્ને નઃ-અમારી નિત્ય રક્ષા કરો, દ્યાવાપૃથિવી-સૂર્યનો પ્રકાશ અને ભૂમિ પ્રાવતમ્-અમારી રક્ષા કરે. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરને એટલા માટે પ્રાર્થના કરે કે-હે જગદીશ્વર ! આપ કૃપા કરીને અમારી

મધ્યમાં સમસ્ત ઉત્તમ ધનને પ્રાપ્ત કરાવનારી શિલ્પ આદિ વિદ્યાને જાણનાર ઉત્તમ વિદ્વાનોને બનાવો. જેનાથી અમે તેની સાથે નવીન પુરુષાર્થ કરીને પૃથિવીનું રાજ્ય અને સમસ્ત પદાર્થોથી યથાયોગ્ય ઉપકાર ગ્રહણ કરીએ. (૮)

ત્વં નોં અગ્ને પિત્રોરુપસ્થ આ દેવો દેવેષ્વનવદ્ય જાગૃવિઃ ।

તનૂકૃદ્બોધિ પ્રમતિશ્ચ કારવે ત્વં કલ્યાણ વસુ વિશ્વમોપિષે ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે અનવદ્ય-નિંદ્ય કર્મથી રહિત = ઉત્તમ કર્મયુક્ત અગ્ને-વિજ્ઞાનસ્વરૂપ સભાધ્યક્ષ ! જાગૃવિઃ-નિત્ય ધર્મ = પુરુષાર્થમાં જાગૃત, દેવઃ-સર્વ ન્યાય અને વિનયના પ્રકાશક તનૂકૃદ્-પૃથિવી આદિ વિસ્તૃતિ લોકોના વિષયમાં વિદ્યા રાખનાર છો, આપ દેવેષુ-વિદ્વાનો તેત્રીસ દિવ્યગુણવાળા દેવતાઓમાં પિત્રોઃ-માતા-પિતાના ઉપસ્થિ-સમીપસ્થ વ્યવહારમાં નઃ-અમને ઋષિષે-પ્રસિદ્ધ કરો છો.

હે કલ્યાણ-કલ્યાણકારક અર્થાત્ હે અત્યંત સુખપ્રદાતા રાજન્ ! પ્રમતિઃ-ઉત્તમ જ્ઞાનવાળા, ત્વમ્-સમસ્ત વિદ્યાના દાતા આપ કારવે-શિલ્પકાર્યની સિદ્ધિને માટે મને વિશ્વમ્-સર્વ વસુ-વિદ્યા અને ચક્રવર્તી રાજ્યથી સિદ્ધ થનાર ધનનો આ + બોધિ-સારી રીતે બોધ કરાવો. (૯)

ભાવાર્થ : પુનઃ જગદીશ્વરની આ રીતે પ્રાર્થના કરવી જોઈએ-હે ભગવન્ ! આપ અમને જ્યારે-જ્યારે જન્મ આપો, ત્યારે-ત્યારે શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનોના સંપર્કમાં જન્મ આપો, ત્યાં અમને સર્વ વિદ્યાઓથી યુક્ત કરો. જેથી અમે સમસ્ત ધન પ્રાપ્ત કરીને સુખી રહીએ. (૯)

ત્વમગ્ને પ્રમતિસ્ત્વં પિતાસિ નસ્ત્વં વયસ્કૃત્તવં જામયો વયમ્ ।

સં ત્વા રાયઃ શત્તિનઃ સં સહસ્ત્રિણઃ સુવીરં યન્તિ વ્રતપામદાભ્ય ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે અદાભ્યઃ-ઉત્તમ કર્મયુક્ત અર્થાત્ હિંસાદિ કર્મોથી રહિત અગ્ને-યથાયોગ્ય રચનાકર્મ જાણનાર સભાધ્યક્ષ ! પ્રમતિઃ-ઉત્તમ માનવાળા તથા ત્વમ્-સર્વ સુખને પ્રકટ કરનાર આપ નઃ-અમારા પિતા-પાલક અસિ-છો, ત્વમ્-દયાળુ આપ નઃ-અમારા વયસ્કૃત્-વૃદ્ધાવસ્થા પર્યન્ત વિદ્યા અને સુખથી યુક્ત આયુને સિદ્ધ કરનાર અસિ-છો, તવ-સુખના જનક આપની કૃપાથી જામયઃ-જ્ઞાનવાન સંતાન જેવા હોય તેમ કરો અને જેમ શત્તિનઃ-, સહસ્ત્રિણઃ-સેંકડો, હજારો = અસંખ્ય પ્રશંસિત પદાર્થ વિદ્યા અને કર્મયુક્ત વિદ્વાન મનુષ્ય-વ્રતપામ્-વ્રત = સત્યના રક્ષક-પાલન કરનાર સુવીરમ્-શ્રેષ્ઠ વીરો વાળા આપને પ્રાપ્ત કરીને રાયઃ-ધનને સમ્, યન્તિ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ આપનો આશ્રય કરેલ અમે પણ તે ધનોને પ્રાપ્ત કરીએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ પિતા સંતાનો દ્વારા માન અને સત્કાર કરવા યોગ્ય છે-પૂજનીય છે, તેમ પ્રજાજનોના સભાપતિ રાજા માનનીય અને પૂજનીય છે. (૧૦)

ત્વામગ્ને પ્રથમમાયુમાયવે દેવા અંકૃણવન્નહૃષસ્ય વિશ્વપતિમ્ ।

इळामकृण्वन्मनुषस्य शासनीं पितुर्यत्पुत्रो ममकस्य जायते ॥ ११ ॥

पदार्थ : हे अग्ने-अमृत स्वरूप सत्मापते ! आप જેમ देवा:-विद्वान शासनीम्-सत्यासत्याना निर्णयना निमित्त इळाम्-ચારેય વેદોની વાણીને અકૃણવન્-વિશેષ જ્ઞાનને માટે શાસનીમ્-જેથી સર્વ વિદ્યા અને ધર્માચાર યુક્ત નીતિથી તેને ગ્રહણ કરીને પ્રથમમ્-અનાદિ સ્વરૂપ જે ન્યાયથી પ્રજા યોગ્ય આયુમ્-પ્રાપ્ત થવા વિશ્વપતિમ્-પ્રજા અને પુત્ર આદિની રક્ષા કરનાર સભાપતિ રાજાને ચારેય વેદોની વાણી અને સત્ય વ્યવસ્થાને અકૃણવન્-પ્રકાશિત કરે છે, તેમ મમકસ્ય-જ્ઞાનવાન નહુષસ્ય-મનુષ્યની જે વેદવાણી છે, તેને આપ પ્રકાશિત કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર પ્રણીત વ્યવસ્થા આપનાર વેદશાસ્ત્ર વિના અને રાજનીતિ વિના પ્રજાપાલક રાજા પ્રજાનું પાલન કરી શકતો નથી. પ્રજા રાજાની અબોધ-મૂર્ખ સંતાન સમાન હોય છે, તેથી સભાપતિ રાજાએ પ્રજાને અબોધ પુત્રની સમાન માનીને શાસન કરવું જોઈએ. (૧૧)

ત્વં નોં અગ્ને તવં દેવ પાયુર્ભિર્મઘોનોં રક્ષ તન્વંશ્ચ વન્દ્ય ।

ત્રાતા તોકસ્ય તનયે ગવામ્સ્યનિમેષં રક્ષમાણસ્તવં વ્રતે ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-સમસ્ત સુખોના દાતા વન્દ્ય-સ્તુતિને યોગ્ય અગ્ને-યથોચિત સર્વની રક્ષા કરનાર પરમેશ્વર ! તવ-સર્વના અધિપતિ આપના વ્રતે-સત્યપાલન આદિ નિયમમાં પ્રવૃત્ત મઘોન:-પ્રશંસનીય ધનથી યુક્ત ન:-અમને તથા અમારા તન્વ:-શરીરોને પાયુર્ભિ:-ઉત્તમ રક્ષાદિ વ્યવહારોથી અનિમેષમ્-પ્રતિક્ષણ રક્ષ-પાલન કરો, રક્ષમાણ:-રક્ષા કરતા આપ જે આપના ઉક્ત = સત્યપાલન આદિ નિયમમાં રહેનાર તોકસ્ય-સંતાન અને ગવામ્-મન આદિ ઈન્દ્રિયો અથવા ચતુષ્પાદ પશુઓના તથા અસ્ય-સમસ્ત ચરાચર જગતના પ્રતિક્ષણ ત્રાતા-રક્ષક અર્થાત્ અત્યંત આનંદદાયક બનો. (૧૨)

ભાવાર્થ : સભાપતિ રાજાએ પરમેશ્વરના સંસારના કારણ, પાલન આદિ ગુણોની સમાન ઉત્તમ ગુણોથી રાજ્ય-નિયમોમાં પ્રવૃત્ત જનોની સદા રક્ષા કરવી જોઈએ. (૧૨)

ત્વમગ્ને યજ્યવે પાયુરન્તરોઽનિષઙ્ગાય ચતુરક્ષ ઇધ્યસે ।

યો રાતહ્વ્યોઽવૃકાય ધાયસે કીરેશ્ચિન્મન્ત્રં મનસા વનોષિ તમ્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન દેદીપ્યમાન સભાધ્યક્ષ ! તું મનસા-વિજ્ઞાનથી મન્ત્રમ્-વિચારતા અથવા વેદ મન્ત્રોનું સેવન કરનારની ચિત્-સમાન, રાતહ્વ્ય:-હવ્ય પદાર્થોના દાતા, પાયુ:-પાલનના હેતુ, અન્તર:-મધ્યસ્થ ચતુરક્ષ:-સેનાના ચાર અંગ અર્થાત્ હાથી, ઘોડા, રથના આશ્રયથી યુદ્ધ કરનાર અને પાયદળ યોદ્ધાઓમાં સારી રીતે ચિત્ આપતાં અનિષઙ્ગાય-સર્વથા પક્ષપાત રહિત ન્યાય યુક્ત અવૃકાય-ચોરી આદિ દોષોથી સર્વથા પૃથક્ ધાયસે-ઉત્તમ ગુણો-કર્મોને ધારણ કરનાર યજ્યવે-યજ્ઞ તથા શિલ્પવિદ્યાને સિદ્ધ કરનાર મનુષ્યને માટે ઇધ્યસે-પ્રદીપ્ત = તેજસ્વી બનીને પોતાનો પ્રતાપ બતાવે છે, અને જેની

वनोषि-सेवा કરે છે, તમ્-તે કૌરિ:-વિવિધ પ્રકારની વાણીથી પ્રેરણા કરનાર વિદ્વાનથી વિનયને પ્રાપ્ત કરીને પ્રજાનું પાલન કર. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ અધ્યાપકથી વિદ્યાર્થી મનથી વિદ્યાનું સેવન કરે છે, તેમ તું (સભાધ્યક્ષ) આપ વિદ્વાનના ઉપદેશ અનુસાર રાજ્ય ધર્મનું સેવન કર. (૧૩)

ત્વમગ્ન उरुशंसाय वाघते स्पार्हं यद्रेक्णाः परमं वनोषि तत्।

आध्रस्य चित्प्रमतिरुच्यसे पिता प्र पाकं शास्सि प्र दिशो विदुष्टरः ॥ १४ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિજ્ઞાનયુક્ત ન્યાયાધીશ ! યત્-જે કારણે પ્રમતિ:-ઉત્તમ જ્ઞાનયુક્ત વિદુષ્ટર:-અનેક પ્રકારના દુઃખોથી પાર કરનાર આપ ઉરુશંસાય-અનેક પ્રકારની સ્તુતિ કરનાર વાઘતે-વિદ્વાન ઋત્વિક મનુષ્યને માટે સ્પાર્હમ્-વાંછિત પરમમ્-અત્યુત્તમ રેક્ણ:-ધન પાકમ્-પવિત્ર ધર્મ અને દિશ:-ઉત્તમ વિદ્વાનોને વનોષિ-સારી રીતે યાહે છે અને રાજ્યને ધર્મથી આધ્રસ્ય-ધારણ કરીને પિતા-પિતાની ચિત્-સમાન સર્વને પ્રશાસ્સિ-શિક્ષા-ઉપદેશ કરો છો, તત્-તેથી આપ સર્વના માનનીય છો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ પિતા પોતાના સંતાનોનું પાલન, ધન-દાન, ધારણ અને શિક્ષા આપે છે, તેમ રાજા સર્વ પ્રજાના પાલક હોવાથી જીવોને માટે સર્વ ધનનો યથાવત્ વિભાગ કરીને, તેઓના કર્માનુસાર સુખ અને દુઃખ આપવા જોઈએ. (૧૪)

ત્વમગ્ને પ્રયતદક્ષિણં નરં વર્મ્મેવ સ્યૂતં પરિ પાસિ વિશ્વતઃ।

સ્વાદુક્ષદ્મા યો વસતૌ સ્યોનકૃજ્જીવયાજં યજતે સોપમા દિવઃ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સર્વને સારી રીતે જાણનાર સભાપતિ ! (અર્થાત્ રાજ્ય ધર્મ, સત્ય અને ન્યાયથી પ્રકાશમાન સભાપતિ !) આપ વર્મ્મેવ-કવચની સમાન-સર્વના રક્ષક ય:-જે સ્વાદુક્ષદ્મા-શુદ્ધ અન્ન-જળના ભોક્તા સ્યોનકૃત્-સર્વને સુખકારી મનુષ્ય વસતૌ-નિવાસ સ્થાનમાં વિવિધ સાધનયુક્ત યજ્ઞોથી યજ્ઞતે-યજ્ઞ કરે છે, તે પ્રયતદક્ષિણ્-ઉત્તમ પ્રકારથી વિદ્યા અને ધર્મોપદેશ કરનાર તથા જીવયાજમ્-જીવનો યજ્ઞ-ધર્મથી સંગત કરાવનાર સ્યૂતમ્-અનેક સાધનો શિલ્પકાર્ય-કારીગરીમાં કુશળ નમ્-નમ્ર અર્થાત્ વિનયી મનુષ્યને વિશ્વતઃ-સર્વ પ્રકારથી પરિપાસિ-પાલન-રક્ષા કરો છો સ:-તે ધર્માત્મા પરોપકારી વિદ્વાન આપ દિવઃ-સૂર્ય પ્રકાશની ઉપમા-ઉપમાને પ્રાપ્ત કરો છો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે સર્વના સુખને સિદ્ધ કરનાર સૂર્ય સર્વને પ્રકાશિત કરીને સુખ આપે છે, તેની સમાન હોય છે.

જેમ યુદ્ધ પ્રવૃત્ત વીરોની શસ્ત્રોના પ્રહારથી કવચ રક્ષા કરે છે, તેમ રાજા આદિ રાજસભાના સભાસદ ધાર્મિક મનુષ્યોની સર્વ દુઃખોથી રક્ષા કરે. (૧૫)

इमामग्ने शरणिं मीमृषो न इममध्वानं यमगाम दूरात् ।

आपिः पिता प्रमतिः सोम्यानां भूमिरस्यृषिकृन्मर्त्यानाम् ॥ १६ ॥

पदार्थ : હે અગ્ને-સહનશીલ અત્યુત્તમ વિદ્વાન્-આપ સોમ્યાનામ્-શાન્તિ આદિ ગુણયુક્ત મર્त्याનામ્-મનુષ્યોને આપિઃ-પ્રીતિપૂર્વક પ્રાપ્ત પિતા-સર્વ પાલક પ્રમતિઃ-ઉત્તમ વિદ્યાયુક્ત ભૂમિઃ-નિત્ય ભ્રમણશીલ ઋષિકૃત્-વેદાર્થ બોધ કરાવનાર છો તથા નઃ-અમારી इमाम्-એ शरणिम्-વિદ્યાદિનાશક અવિદ્યાને મીમૃષઃ-અત્યંત નિવારણ કરો છો, તે આપ અને અમે यम्-જેને અમે दूरात्-દૂરથી ઉલ્લંઘન કરીને इमम्, (વક્ષ્યમાણ) अध्वानम्-ધર્મમાર્ગની अगाम्-સન્મુખ આવે તેનું સેવન કરીએ. (૧૬)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય સત્ય ભાવથી ઉત્તમ માર્ગને પ્રાપ્ત કરવા ઈચ્છે છે, ત્યારે ઈશ્વર (તેમાં) સત્પુરુષોના સંગ માટે પ્રેમ અને જિજ્ઞાસા ઉત્પન્ન કરે છે, ત્યારે તે શ્રદ્ધાળુ બનીને બહુ દૂર રહેનાર આપ્ત યોગી વિદ્વાનોની પાસે જઈને તથા અભીષ્ટ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને ધાર્મિક બની જાય છે. (૧૬)

मनुष्वदग्ने अङ्गिरस्वदङ्गिरो ययातिवत्सदने पूर्ववच्छुचे ।

अच्छ याह्या वह्ना दैव्यं जनमा सादय बर्हिषि यक्षिं च प्रियम् ॥ १७ ॥

પદાર્થ : હે શુચે-પવિત્ર અઙ્ગિરઃ-પ્રાણની સમાન ધારણ કરનાર અગ્ને-વિદ્યાઓથી સર્વત્ર વ્યાપ્ત સભાધ્યક્ષ ! આપ મનુષ્યવત્-મનુષ્યના આવાગમન સમાન અને અઙ્ગિરસ્વત્-શરીરમાં વ્યાપ્ત પ્રાણવાયુની સમાન રાજ્યકર્મ વ્યાપ્ત પુરુષની સમાન ययातिवत्-જેમ પુરુષ યજ્ઞની સાથે કામોને સિદ્ધ કરે અને કરાવે છે અને पूर्ववत्-જેમ શ્રેષ્ઠ પ્રતિષ્ઠાયુક્ત વિદ્વાનો વિદ્યાદાતા છે; તેમ પ્રિયમ્-સર્વ જનોને પ્રસન્ન કરનાર दैव्यम्-વિદ્વાનોમાં અતિ કુશળ जनम्-મનુષ્યને अच्छ-સારી રીતે આયાહિ-પ્રાપ્ત થાઓ, તે મનુષ્યને વિદ્યા અને ધર્મની તરફ वह-ચલાવો, તથા बर्हिषि, सदने-શ્રેષ્ઠ મોક્ષના સાધનોમાં आसादय-અવસ્થિત કરો અને यक्षि-ત્યાં તેને પ્રતિષ્ઠિત કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યોએ વિદ્યા, ધર્માનુષ્ઠાન અને પ્રેમથી સભાપતિની સેવા કરી છે, તે તેને ઉત્તમ ધર્મયુક્ત માર્ગમાં પ્રેરિત કરે છે. (૧૭)

एतेनाग्ने ब्रह्मणा वावृधस्व शक्तीं वा यत्तं चकृमा विदा वा ।

उत प्र णैष्यभि वस्यो अस्मान्त्सं नः सृज सुमत्या वाजवत्या ॥ १८ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સર્વોત્કૃષ્ટ વિદ્વાન ! આપ બ્રહ્મણા-વેદવિદ્યા વાજવત્યા-ઉત્તમ અન્ન, યુદ્ધ અને વિજ્ઞાનથી યુક્ત સુમત્યા-શ્રેષ્ઠ વિચારયુક્તથી નઃ-અમારા માટે वस्यः-અત્યંત ધન अभिसृज-સર્વ પ્રકારથી પ્રકટ કરો, उत-અને આપ विदा-આપના ઉત્તમ જ્ઞાનથી वावृधस्व-નિત્ય અત્યંત ઉન્નતિ કરો, ते-આપનો यत्-જે પ્રેમ છે, તેને અમે चकृम्-કરીએ અને આપ अस्मान्-અમને प्रणेषि-શ્રેષ્ઠ બોધ પ્રાપ્ત કરાવો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય વેદોક્ત રીતે વ્યવહાર કરે છે, તેઓ જ્ઞાનવાન, સુમતિયુક્ત અને ધાર્મિક બનીને જે ઉત્તમ વિદ્વાનની સેવા કરે છે, તે (વિદ્વાન) તેને શ્રેષ્ઠ સામર્થ્ય અને ઉત્તમ વિદ્યાથી યુક્ત કરે છે. (૧૮)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈન્દ્ર આદિ અનુયોગી અગ્નિનું પ્રધાન રૂપથી ઈશ્વર અને ગૌણરૂપથી ભૌતિક અગ્નિ અર્થનો પ્રકાશ કરવાથી ગૌણ રૂપથી પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૩૧)

સૂક્ત-૩૨

इन्द्रस्य नु वीर्याणि प्र वोचं यानि चकार प्रथमानि वज्री ।

अहन्नहिमन्वपस्तर्द प्र वक्षणा अभिनत्पर्वतानाम् ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! તમે જેમ **इन्द्रस्य**-સર્વ પદાર્થોના વિદારક સૂર્યલોક સમાન સભાધ્યક્ષ રાજાનો **यानि**-જે **प्रथमानि**-પ્રસિદ્ધ **वीर्याणि**-પરાક્રમ અને આકર્ષણ આદિ સમાન કર્મ બતાવો છો. તેને હું **नु**-શીઘ્ર **प्रवोचम्**-સર્વથા ઉપદેશ કરું જેમ તે **वज्री**-સર્વ પદાર્થોનું છેદન કરનાર કિરણોયુક્ત સૂર્ય **अहिम्**-મેઘનું **अहन्**-હનન કરે છે, અને તેના અવયવ **अपः**-જળને નીચે, ઉપર અને **अनु**-પાછળ **चकार**-કરે છે, તેને **प्र** + **ततर्द**-નષ્ટ કરે છે- પૃથિવી પર પાડે છે, **पर्वतानाम्**-મેઘ અથવા પર્વતોથી **प्रवक्षणाः**-નદીઓને વિદારિત કરે છે, તેમ હું શત્રુઓનું હનન કરું, તેને નીચે, ઉપર અને પાછળ ફેંકું, કિલ્લા આદિથી આવેલ યુદ્ધ માટેની સેનાઓનું ભેદન કરું. (૧)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર દ્વારા ઉત્પન્ન કરેલ તે અગ્નિમય સૂર્યલોક જેમ પોતાના પ્રકાશ, આકર્ષણ, દાહ, છેદન અને વર્ષાની ઉત્પત્તિ નિમિત્ત રૂપ સ્વાભાવિક ગુણ-યુક્ત અનાદિ કર્મોને દિવસ-રાત કરે છે, તેમ પ્રજાપાલનમાં તત્પર રાજપુરુષોએ પણ બનવું જોઈએ. (૧)

अहन्नहिं पर्वते शिश्रियाणं त्वष्टास्मै वज्रं स्वर्गं ततक्ष ।

वाश्राइव घेनवः स्यन्दमाना अञ्जः समुद्रमव जग्मुरापः ॥ २ ॥

પદાર્થ : જેમ એ **त्वष्टा**-પોતાના કિરણોથી પદાર્થોનું છેદન અને સૂક્ષ્મ કરનાર સૂર્ય **पर्वते**-મેઘમંડળમાં **शिश्रियाणम्**-રહેનારા **स्वर्गम्**-ગર્જનારા **अहिम्**-મેઘ-વાદળાઓનું **अहन्**-હનન કરે છે, **अस्मै**-એ મેઘને માટે **वज्रम्**-છેદન કરનાર કિરણ સમૂહને **ततक्ष**-તેજ કરે છે એ કર્મથી **वाश्रा**-વાહરડાની પ્રાપ્તિ માટે ઉત્કંઠિત શબ્દ કરતી **घेनव**-ગાયોની **इव**-સમાન **स्यन्दमानाः**-વહેતું **अञ्जः**-વ્યક્ત અથવા ગતિશીલ **आपः**-જળ **समुद्रम्**-જળથી પૂર્ણ સાગરની તરફ **अवजग्मुः**-નદીઓ દ્વારા જાય છે.

એ રીતે સભાધ્યક્ષ રાજા કિલ્લામાં રહેનાર શત્રુનું હનન કરે, **અસ્મૈ**-એ દુષ્ટ શત્રુને માટે **વજ્રમ્**- છેદન કરનાર શસ્ત્ર સમૂહને **તતક્ષ-તીક્ષ્ણ** કરે, તેથી **વાશ્રા**-વાહરડાની પ્રાપ્તિ માટે ઉત્કંઠિત બનીને શબ્દ કરતી **ઘેનવઃ**-ગાયોની સમાન **સ્યન્દમાનાઃ**-વહેતા **અન્નઃ**-વ્યક્ત અથવા ગતિશીલ **આપઃ**-શત્રુઓના પ્રાણોને **સમુદ્રમ્**-અન્તરિક્ષમાં પહોંચાડે અને તે કાંટારૂપ શત્રુઓને મારીને પ્રજાને સુખ પ્રદાન કરે. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અન્તરિક્ષમાં રહેલ મેઘ = વાદળાંઓને ભૂમિ પર પાડીને જગતને જીવન પ્રદાન કરે છે, તેમ સેનાપતિ કિલ્લા તથા પર્વત આદિમાં આશ્રય કરેલા શત્રુઓને ભૂમિ પર પછાડીને પ્રજાઓને નિરંતર સુખી કરે છે. (૨)

વૃષાયમાણોઽવૃણીત્ સોમં ત્રિકદ્વુકેષ્વપિબત્સુતસ્ય ।

આ સાયકં મઘવાદત્ત વજ્રમહન્નેનં પ્રથમજામહીનામ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જેમ **વૃષાયમાણઃ**-વૃષભ = સાંઠની સમાન આચરણ કરતા **ઇન્દ્રઃ** સૂર્યલોક, મેઘની સમાન **સુતસ્ય**-આ ઉત્પન્ન જગતની મધ્યમાં **ત્રિકદ્વુકેષુ**-ત્રણ-ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ અને પ્રલય નામક વિવિધ કળાઓવાળા કાર્ય પદાર્થોમાં વિદ્યમાન **સોમમ્**-રસને **અવૃણીત્**-સ્વીકાર કરે છે, **અપિબત્**-પોતાના પ્રકાશથી તેનું પાન કરે છે, અને **મઘવા**-અનેક પ્રકારના શ્રેષ્ઠ ધનનો હેતુ સૂર્ય **સાયકમ્**-શસ્ત્રરૂપ **વજ્રમ્**-કિરણ સમૂહરૂપ અસ્ત્રને જેમ **આદત્ત**-ગ્રહણ કરે છે, તે સમાન **અહીનામ્**-મેઘોમાં **પ્રથમજામ્**-પ્રથમ ઉત્પન્ન થયેલ **એનમ્**- મેઘનું **અહન્**-હનન કરે છે, આવા ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત પુરુષ સેનાપતિનો અધિકાર પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય બને છે. અર્થાત્ સેનાપતિ બની શકે છે. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ વૃષભ = સાંઠ વીર્ય કરીને તથા બળવાન બનીને, સુખી થાય છે; તેમ એ સેનાપતિ રસનું પાન કરીને બળવાન બનીને સુખી બને.

જેમ સૂર્ય પોતાના કિરણોથી જળને ખેંચીને તેને અન્તરિક્ષમાં રાખીને ફરી વરસાવે છે, તેમ સેનાપતિ શત્રુના બળને ક્ષીણ કરીને તથા પોતાના બળની વૃદ્ધિ કરીને પ્રજાને માટે સુખની વર્ષા કરે. (૩)

યદિન્દ્રાહ્નપ્રથમજામહીનામાન્માયિનામર્મિનાઃ પ્રોત માયાઃ ।

આત્સૂર્યં જનયન્દ્યામુષાસં તાદીલા શત્રુઃ ન કિલાઽવિવિત્સે ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે સેનાપતે ! જેમ **ઇન્દ્રઃ**-સર્વ પદાર્થોને વિદીર્ણ અર્થાત્ છિન્ન-ભિન્ન કરનાર સૂર્યલોક **અહીનામ્**-નાના-નાના વાદળાઓની મધ્યમાં **પ્રથમજામ્**-સૃષ્ટિકાળમાં એક સાથે ઉત્પન્ન મેઘનું **અહન્**-હનન કરે છે, જેની **માયિનામ્**-સૂર્યના પ્રકાશનું આવરણ કરનારી મોટી છટા ઊઠે છે તે મેઘોની **માયાઃ**- તે અંધકાર રૂપ ઘટાઓનું **પ્રમિણાઃ**-સારી રીતે નિવારણ-હરણ કરે છે, **તાદીલા**-તે સમયે **યત્**-જે **સૂર્યમ્**-કિરણસમૂહ **ઉષસમ્**-પ્રાતઃકાળ અને **દ્યામ્**-પ્રકાશમય દિવસને **પ્રજનન્**-પ્રકટ કરતા દિવસને ઉત્પન્ન કરે છે. **ન** તેમ તું શત્રુઓને **વિવિત્સે**-પ્રાપ્ત થઈને તેની છળ-કપટ આદિ માયાઓનું હનન કર અને તે સમયે ન્યાયરૂપ સૂર્યને પ્રકટ કરીને સત્ય-વિદ્યાના વ્યવહાર રૂપ સૂર્યનો પ્રકાશ કર. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ કોઈ (રાજપુરુષ) શત્રુના બળ અને છળનું નિવારણ કરીને તથા તેને જીતીને સ્વરાજ્યમાં સુખ અને ન્યાયનો પ્રકાશ ફેલાવે છે, તેમ જ સૂર્ય પણ મેઘના, પ્રકાશને રોકનારી ઘટાઓનું નિવારણ કરીને તથા પોતના કિરણો ફેલાવીને, મેઘ-વાદળાંઓનો નાશ કરીને, અંધકારને દૂર કરીને પ્રકાશને પ્રકટ કરે છે. (૪)

અહન્વૃત્રં વૃત્રતરં વ્યંસમિન્દ્રો વજ્રેણ મહતા બધેન ।

સ્કન્ધાંસીવ કુલિશેના વિવૃક્ષ્ણાહિઃ શયત ઉપૃક્ષ્ણપૃથિવ્યાઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મહારથી સેનાપતે ! આપ જેમ **ઇન્દ્ર**-સૂર્ય અને વિદ્યુત્ **મહતા**-અતિ વિસ્તૃત **કુલિશેન**-અતિ તીક્ષ્ણ ધારદાર ખડ્ગ-તલવાર રૂપ **વજ્રેણ**-પદાર્થોના છેદક, ઉષ્મ-અતિ તાપયુક્ત કિરણ-સમૂહથી **વિવૃક્ષ્ણા**-કપાયેલ **સ્કન્ધાસીવ**-સ્કંધોની-કાંધની સમાન **વ્યંસમ્**-અવયવ રહિત-છિન્ન-ભિન્ન અંગ જેમ બને છે, તેમ **વૃત્રતરમ્**-અત્યંત આવરક **વૃત્રમ્**-મેઘનું **અહન્**-હનન કરે છે અર્થાત્ છિન્ન-ભિન્ન કરીને પૃથિવી પર વરસાવે છે અને તે **બધેન**-સૂર્યના ગુણોથી મૃતક સમાન બનીને **અહિઃ**-મેઘ **પૃથિવ્યાઃ**-પૃથિવીની **ઉપૃક્ષ્ણ**-ઉપર **શયતે**-શયન કરે છે, તેમ સર્વ શત્રુઓનું હનન કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ કોઈ અતિ તીક્ષ્ણ ધારવાળા શસ્ત્ર દ્વારા શત્રુના શરીરના અવયવોને કાપીને ભૂમિ પર પાડે છે અને તે મરેલો શત્રુ ભૂમિ પર શયન કરે છે, તેમ એ સૂર્ય અને વિદ્યુત્, વાદળાંઓનાં અવયવોને કાપીને, ભૂમિ પર પાડે છે, તે ભૂમિ પર પડેલા શયન કરેલ સમાન પ્રતીત થાય છે. (૫)

અયોદ્ધેવ દુર્મદ આ હિ જુહ્ને મહાવીરં તુવિબાધમ્જીષમ્ ।

નાતારીદસ્ય સમૃતિં વધાનાં સં રુજાનાઃ પિપિષ્ણ ઇન્દ્રશત્રુઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : **દુર્મદઃ**-દુષ્ટ અભિમાનની **અયોદ્ધેવ**-યુદ્ધની ઈચ્છા ન કરનાર પુરુષની સમાન મેઘ **ઋજીષમ્**-પદાર્થોના રસને એકત્ર કરીને તથા **તુવિબાધમ્**-અનેક શત્રુઓને મારનારની સમાન **મહાવીરમ્**-અત્યંત બળયુક્ત શૂરવીરની સમાન સૂર્યલોકને **આજુહ્ને**-ઈર્ષાથી આહ્વાન કરવા સમાન વર્તે છે, જ્યારે સર્વત્ર શબ્દ કરવા સમાન વર્તે છે, જ્યારે સર્વત્ર શબ્દ કરવા સમાન સૂર્ય દ્વારા મારેલ એ **ઇન્દ્રશત્રુઃ**-સૂર્યના શત્રુ મેઘને **પિપિષ્ણે**-સૂર્યથી સારી રીતે પીસી દેવામાં આવે છે, ત્યારે તે મેઘ **અસ્ય**-એ સૂર્યની **બધાનામ્**-તાડનાઓના **સમૃતિમ્**-સમૂહને **નાતારીત્**-સહન કરી શકતો નથી, **હિ**-નિશ્ચય છે કે એ મેઘના શરીરથી ઉત્પન્ન થયેલ **રુજાનાઃ**-નદીઓ, પર્વત અને પૃથિવીના કૂલ = કિનારોને કાપીને વહે છે, તેમ સેનાઓમાં પ્રકાશમાન સેનાધ્યક્ષ શત્રુઓમાં ચેષ્ટા કરે. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ મેઘ = વાદળાંઓ જગતના પ્રકાશ માટે પ્રવર્તમાન સૂર્યના પ્રકાશને એકાએક ઊઠાવીને તેને રોકીને, તેની સામે યુદ્ધ કરવા સમાન પ્રવૃત્ત થાય છે, પરંતુ સૂર્યનું સામર્થ્ય અધિક

હોય છે. જ્યારે એ સૂર્ય મેઘનું હનન કરીને-મારીને પૃથિવી પર પાડે છે, ત્યારે તેના શરીરના અવયવ રૂપ જળથી નદીઓ પૂર્ણ ભરાઈને સમુદ્રમાં જઈને મળે છે, તેમ રાજા શત્રુઓને મારીને સમાપ્ત કરે. (૬)

અપાદહસ્તો અપૃતન્યદિન્દ્રમાસ્ય વજ્રમધિ સાનોૈ જઘાન ।

વૃષ્ણો બદ્ધિઃ પ્રતિમાનં બુભૂષન્પુરુત્રા વૃત્રો અશયદ્વ્યસ્તઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે સર્વ સેનાઓના અધ્યક્ષ ! આપ વૃત્ર:-જેમ મેઘ વૃષ્ણ:-વીર્ય સિંચન કરનાર પુરુષની પ્રતિમાનમ્-સમાન બુભૂષન્-બનાવની ઈચ્છા કરતા બદ્ધિઃ-એક નિર્બળ નપુંસકની સમાન-જે ઇન્દ્રમ્-સૂર્યના પ્રત્યે અપૃતન્યત્-યુદ્ધ કરવાની ઈચ્છા કરે છે, તે અસ્ય-એ વૃત્ર = મેઘના સાનોૈ-શિખર અધિ-ઉપર ઇન્દ્ર-સૂર્ય વજ્રમ્-પોતાના કિરણ રૂપ વજ્રનો આજઘાન-પ્રહાર કરે છે, તેથી મરેલ વૃત્ર:-મેઘ અપાદ હસ્ત:- પગ-હાથ કપાયેલા મનુષ્ય સમાન વ્યસ્ત:-અનેક પ્રકારથી ફેંકાયેલ પુસ્ત્રા-અનેક સ્થાનોમાં પડેલ અશયત્-બહુ ભૂમિ પ્રદેશોમાં શયન સમાન જણાય છે, તેમ એ પ્રકારના શત્રુઓનું ઇન્ન-ભિન્ન કરીને સદા વિજય પ્રાપ્ત કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ કોઈ નિર્બળ, બળવાન સાથે યુદ્ધ કરવા પ્રવૃત્ત થાય છે, તેમ મેઘ = વાદળાંઓ રૂપ વૃત્ર, સૂર્યની સાથે યુદ્ધ કરનાર સમાન પ્રવૃત્ત થાય છે. જેમ તે અન્તમાં સૂર્ય દ્વાર ઇન્ન-ભિન્ન થઈને પરાજય પામીને પૃથિવી પર પડી જાય છે, તેમ જે ધાર્મિક રાજાની સાથે યુદ્ધમાં પ્રવૃત્ત થાય છે, તેની પણ એવી જ ગતિ-દશા થાય છે. (૭)

નદં ન ભિન્નમમુયા શયાનં મનો રુહાણા અતિ યન્ત્યાપઃ ।

યાશ્ચિદ્વૃત્રો મહિના પર્યતિષ્ઠતાસામહિઃ પત્સુતઃ શીર્ષભૂવ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે રાજાધિરાજ ! આપ જેમ એ વૃત્ર:-મેઘ મહિના-પોતાના મહિમાથી પર્યતિષ્ઠત્-સર્વત્ર એકતાથી પ્રાપ્ત અહિઃ-સૂર્યના તાપથી હનન કરેલ તાસામ્-તે જળોની મધ્યમાં સ્થિત પત્સુતઃશીઃ-પગની નીચે શયન કરનાર ભૂવ-હોય છે, તે મેઘનું શરીર મનઃ-મનનશીલ અન્તઃકરણ સમાન સ્થાણા:-ઉત્પન્ન થઈને વહેનારી નદી જે અન્તરિક્ષમાં વિદ્યમાન ચિત્-જ યા:-જે અન્તરિક્ષમાં તથા ભૂમિમાં રહેનાર આપઃ-જળ ભિન્નમ્-વિદીર્ણ તટવાળા શયાનમ્-શયન ભાવની ન-સમાન નવમ્-મહા પ્રવાહયુક્ત નદને યન્તિ-પ્રાપ્ત થતા અને તે જળ ન અમુયા-પૃથિવીની સાથે પ્રાપ્ત થાય છે-રહે છે, તેમ સર્વ શત્રુઓને બાંધીને વશમાં કરો. (૮)

ભાવાર્થ : જેટલું જળ સૂર્ય દ્વારા ઇન્ન-ભિન્ન થઈને વાયુની સાથે મેઘમંડળમાં જાય છે, તે સર્વ જળ મેઘ-વાદળાંઓ જ બની જાય છે. જ્યારે (મેઘ રૂપ) જળોનો ભંડાર અત્યધિક વધી જાય છે, ત્યારે તે ઘટ્ટ સૈન્ય સમૂહ સમાન બનીને પોતાના વિસ્તારથી સૂર્યના પ્રકાશને રોકે છે. તેને જ્યારે સૂર્ય

પોતાના કિરણોથી તોડે છે-છેદે છે, ત્યારે (એ) જળ (રૂપમાં) વિભિન્ન સ્થળે (વર્ષાને) મોટી નદીઓ તળાવ અને સમુદ્રમાં પહોંચીને શયન કરે છે-સૂવે છે.

(આ રીતે) તે (મેઘ) પૃથિવી પર વિભિન્ન સ્થળે મનુષ્યોના પગની નીચે શયન કરેલ-સૂતેલ સમાન પ્રતીત થાય છે, એ જ રીતે અધાર્મિક પણ (પ્રથમ) વધીને (પછી) શીઘ્ર નાશ પામે છે. (૮)

નીચાવયા અભવદ્ વૃત્રપુત્રેન્દ્રો અસ્યા અવ વર્ધર્જભાર।

ઉત્તરા સૂરધરઃ પુત્ર આસીદ્વાનુઃ શયે સહવત્સા ન ધેનુઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતે ! વૃત્રપુત્રા-મેઘ જેના પુત્ર સમાન છે, તે મેઘની માતા નીચાવયા:-નીચ = અલ્પ આયુને પ્રાપ્ત થયેલી સૂ:-પૃથિવી = ભૂમિમાતા ઉત્તરા-અથવા અન્તરિક્ષ નામવાળી અભવત્- છે, અસ્યા:-તેના પુત્ર મેઘના વધ:-વધ અર્થાત્ તાડન ઇન્દ્ર:-સૂર્ય અવજભાર-કરે છે.

એથી એના નીચાવયા:-અલ્પ આયુવાળા પુત્ર:-પુત્ર મેઘ અધર:-નીચે આસીત્-નીચે પડે છે અને જે દાનુ:-સર્વ પદાર્થોને આપનારી ભૂમિ જેમ સહવત્સા-વાછરડા સહિત ધેનુ:-ગાય હોય, ન: જેમ પોતાના પુત્રની સાથે શયે-સૂવા સમાન જણાય છે-તેમ પોતાના શત્રુઓને ભૂમિની સાથે શયન કરનારની સમાન કરો, અર્થાત્ તેઓનું હનન કરો. (૯)

ભાવાર્થ : મેઘની બે માતાઓ છે, એક પૃથિવી અને બીજી અન્તરિક્ષ, કારણ કે તે બન્નેથી મેઘની ઉત્પત્તિ થાય છે. જેમ કોઈ ગાય પોતાના વાછરડા સાથે રહે છે, તેમ જ્યારે જળ સમૂહ રૂપ મેઘ ઉપર જાય છે, ત્યારે અન્તરિક્ષ નામક માતા પોતાના પુત્રની સાથે સૂતેલી સમાન જણાય છે. જ્યારે વરસાદ દ્વારા (તે) ભૂમિ પર આવી જાય છે, ત્યારે ભૂમિ પોતાના પુત્રની સાથે સૂતેલી સમાન જણાય છે.

એ મેઘનો પિતા સૂર્ય છે, કારણ કે તેનો ઉત્પાદક છે. એ (સૂર્ય)ની ભૂમિ અને અન્તરિક્ષ જાણે બે સ્ત્રીઓ છે. જ્યારે તે જળને ખેંચીને વાયુ દ્વારા અન્તરિક્ષમાં ફેંકે છે, ત્યારે તે મેઘરૂપી પુત્ર વૃદ્ધિ પામીને પ્રમત = પાગલની સમાન ઉન્નત (નિયંત્રણ રહિત) બની જાય છે.

સૂર્ય તે (મેઘ)ને મારીને ભૂમિ પર પાડે છે. એ રીતે એ મેઘ ક્યારેક ઉપર તો ક્યારેક નીચે રહે છે. એ જ રીતે રાજપુરુષોએ પ્રજાના કાંટા સમાન શત્રુઓને ઈતસ્તતઃ જ્યાં-ત્યાં ફેંકીને પ્રજાઓનું પાલન કરવું જોઈએ. (૯)

અતિષ્ઠન્તીનામનિવેશનાનાં કાષ્ઠાનાં મધ્યે નિહિતં શરીરમ્।

વૃત્રસ્ય નિણ્યં વિ ચર્ન્ત્યાપો દીર્ઘ તમ્ આશયદિન્દ્રશત્રુઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ ! આપ જેમ જે વૃત્રસ્ય-મેઘના અનિવેશનાનામ્-એકત્ર-સ્થિર ન રહેનાર અતિષ્ઠન્તીનામ્-સદા વહેનાર તે જળની મધ્ય નિણ્યમ્-નિશ્ચય કરીને સ્થિર શરીરમ્-જેનું છેદન થાય એવું શરીર છે તે કાષ્ઠાનામ્-સર્વ દિશાઓની મધ્યમાં નિહિતમ્-સ્થિત હોય છે તથા જેના શરીરરૂપ અપ:-જળ દીર્ઘમ્-મહાન તમ:-અંધકારરૂપ ઘટાઓમાં વિચરન્તિ-વિચરણ કરે છે, તે ઇન્દ્રશત્રુ:-મેઘ તથા તે જળમાં સમુદાયી-એકત્ર અથવા અવયવી-નાના વાદળાઓરૂપ બનીને અશયત્-સર્વત્ર શયન કરે છે,

તેમ પ્રજાના દ્રોહી શત્રુઓ તથા તેના સહાયકો સહિતને બાંધીને **કાષ્ઠાનામ્**-સર્વ દિશાઓની મધ્યમાં સૂવડાવવા જોઈએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : સભાપતિને યોગ્ય છે, કે તે જેમ એ મેઘ-વાદળાંઓ અન્તરિક્ષમાં સ્થિત જળમાં સૂક્ષ્મ હોવાના કારણે દેખાતા નથી, ફરી જ્યારે વરસાદ દ્વારા જળ સમુદાયરૂપ ઘટ્ટ બને છે, ત્યારે જોવામાં આવે છે.

પરંતુ એ સદા ઉપર અને નીચે આવન-જાવન કરે છે અને ક્ષણ માત્ર સ્થિર રહેતાં નથી અને જે વૃત્ર = મેઘનું શરીરરૂપ છે, તે (જળ) અન્તરિક્ષમાં રહેવા છતાં અતિ સૂક્ષ્મ (હોવાના કારણે) દેખાતું નથી, તેમ મહા બળવાન શત્રુઓને અલ્પબળ બનાવીને વશમાં કરવા જોઈએ. (૧૦)

દાસપત્નીરહિગોપા અતિષ્ઠન્નિરુદ્ધા આપઃ પ્ણિનેવ્ ગાવઃ ।

અપાં બિલમ્પિહિતં યદાસીદ્ વૃત્રં જઘન્વાં અપ તદ્વવાર ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતે ! જેમ પ્ણિનેવ-ગાય આદિ પશુઓના પાલક અને ગાવઃ-ગાયોને અભીષ્ઠ સ્થાન પર રાખવા સમાન **દાસપત્નીઃ**-અતિ બળ આપનાર મેઘ જેના પતિની સમાન અને **અહિગોપાઃ**-રક્ષા કરનાર છે, તે **નિરુદ્ધાઃ**-રોકેલ **આપઃ**-જળ **અતિષ્ઠન્**-સ્થિત રહે છે, તે **અપામ્**-જળનું **યત્**-જે **બિલમ્**-ગર્ત-ખાડા સમાન સ્થાન **અપિહિતમ્**-આચ્છાદિત અર્થાત્ ઢાંકી રાખેલ **આસીત્**-છે, તે **વૃત્રમ્**-મેઘનું સૂર્ય **જઘન્વાન્**-હનન કરીને **તત્**-તે જળની **અવવાર**-અવરોધને તોડી નાખે છે-ખોલી નાખે છે, તેમ આપ દુષ્ટાચારી શત્રુઓને રોકીને ન્યાય અર્થાત્ ધર્મમાર્ગને પ્રકાશિત રાખો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે ગોપાળ પોતાની ગાયોને પોતાના અનુકૂળ સ્થાન પર રોકે છે અને પછી દ્વાર ખોલીને તેને મુક્ત કરે છે.

જેમ મેઘરૂપી વૃત્રના દ્વાર પોતાના મંડળમાં જળનું દ્વાર બંધ કરીને તે જળને વશ કરવામાં આવે છે.

જેમ સૂર્ય તે મેઘને તાડિત કરે છે અને તે જળના દ્વારને ખોલીને જળને મુક્ત કરે છે, તેમ રાજપુરુષોએ શત્રુઓને રોકીને નિરંતર પ્રજાઓનું પાલન કરવું જોઈએ. (૧૧)

અશ્વ્યો વારો અભવસ્તદિન્દ્ર સૂકે યત્વા પ્રત્યહન્દેવ એકઃ ।

અર્જયો ગા અર્જયઃ શૂર્ સોમમવાસૃજઃ સર્ત્તવે સપ્ત સિન્ધૂન્ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે **શૂર્**-વીરના સમાન નિર્ભય **ઇન્દ્ર**-શત્રુઓને વિદીર્ણ કરનાર સેનાધ્યક્ષ રાજન્ ! આપ જેમ **યત્**-તે **અશ્વ્યઃ**-વેગ આદિ ગુણોમાં શ્રેષ્ઠ **વારઃ**-વરણ-સ્વીકારવા યોગ્ય **એકઃ**-એક **દેવઃ**-દાન આદિ ગુણોથી યુક્ત મેઘ સૂર્યની સાથે યોદ્ધા **અભવઃ**-હોય છે **સૂકે**-વજની સમાન કિરણ સમૂહમાં પોતાના મેઘ જાલને-દળને **પ્રતિ** + **અહન્**-છોડે છે અર્થાત્ મેઘદળથી કિરણોને રોકે છે, સૂર્ય તે મેઘને જીતીને **ગાઃ**-તેથી પોતાના કિરણોને **અર્જયઃ**-પૃથક્ કરીને અર્થાત્ એક સ્થાનથી બીજા સ્થાનમાં પહોંચાડે છે, અને **સોમમ્**-પદાર્થોના રસને **અર્જયઃ**-જીતે છે એ રીતે કરતાં તે સૂર્યલોક જળને **સર્ત્તવે**-ઉપર, નીચે

જવા માટે સર્વ લોકમાં સ્થિર થનાર **સપ્ત, સિન્ધૂન**-ભૂમિ પર મહાન જળાશય, નદી, કુવો અને તળાવ એ ચાર જળના સ્થાન અને સમીપ, મધ્ય અને દૂર સ્થાનમાં રહેલ ત્રણ જળાશય એ સાત જળાશયોને **આવાસૂજ-ઉત્પન્ન** = નિર્માણ કરે છે, તેમ શત્રુઓમાં ચેષ્ટા કરે છે, **તત્-તેથી ત્વા**-આપને યુદ્ધોમાં અમે અધિકૃત કરીએ છીએ. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ એ મેઘ સૂર્યના પ્રકાશને (જ્યારે) રોકે છે, ત્યારે સૂર્ય પોતાના કિરણોથી તેને ઇન્ન-ભિન્ન કરીને ભૂમિ પર જળને પાડે છે, તેથી જ એ જળના આવાગમન સમુદ્રોના નિર્માણનો હેતુ હોય છે; તેમ પ્રજાપાલક રાજા શત્રુઓને રોકીને, શસ્ત્રથી તેને કાપીને, નીચે પછાડીને, પ્રજાને ધર્મયુક્ત માર્ગમાં ચલાવવામાં હેતુ બને. (૧૨)

નાસ્મૈ વિદ્યુન્ન તન્યતુઃ સિષેધ્ ન ચાં મિહમકિરદ્ધ્રાદુનિં ચ ।

ઇન્દ્રશ્ચ યદ્યુધાતે અહિશ્ચોતાપરીભ્યો મ્ઘવા વિ જિગ્યે ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે સેનાપતે ! આપ જેમ મેઘ દ્વારા **અસ્મૈ-સૂર્યને** માટે પ્રયુક્ત કરેલી **વિદ્યુત્-વિદ્યુત્ ન, સિષેધ-**એની કોઈ રૂકાવટ-અવરોધ કરી શકતી નથી, **તન્યતુઃ**-તે મેઘની ગર્જના પણ તે સૂર્યને **ન, સિષેધ-**રોકી શકતી નથી, અને તે **અહિઃ**-મેઘ **ચામ્-જે હાદુનિમ્-ગર્જના** આદિ ગુણવાળી **મિહમ્-વર્ષાને** **ચ-પણ અકિરત્-ફેંકે** છે-છોડે છે, તે પણ સૂર્યની **ન, સિષેધ-**હાનિ કરી શકતી નથી.

એ **ઇન્દ્ર-સૂર્ય** પોતાની કિરણરૂપી પૂર્ણ સેનાથી યુક્ત **ઉત્-અને** પોતાની **અપરીભ્યઃ**-અપૂર્ણ સેનાથી યુક્ત **અહિ-મેઘ ચ-પણ** એ બન્ને **યુધુધાતે**-પરસ્પર યુદ્ધ કરે છે, **યત્-અધિક** બળવાન હોવાના કારણે **મઘવા**-અત્યંત પ્રકાશમાન સૂર્ય તે મેઘને **ચ-પણ વિજિગ્યે**-સારી રીતે જીતે છે; તેમ ધર્મયુક્ત પૂર્ણબળને સિદ્ધ કરીને શત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ વૃત્ર = મેઘના વિદ્યુત્ આદિ જેટલાં યુદ્ધનાં સાધનો છે, તે સૂર્યની અપેક્ષા નિર્બળ છે; અને સૂર્યના યુદ્ધ સાધન તેની અપેક્ષા વિશાળ છે, તેથી સદા સૂર્યનો વિજય અને મેઘનો પરાજય થાય છે.-તેમ રાજપુરુષોએ ધર્મથી શત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરવો જોઈએ. (૧૩)

અહૈર્યાતારં કર્મપશ્ય ઇન્દ્ર હૃદિ યત્તે જ્ઘ્નુષો ભીરગ્ચ્છત્ ।

નવ્ ચ યન્નવતિં ચ સ્રવન્તીઃ શ્યેનો ન ભીતો અતરો રજાંસિ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્રઃ**-શત્રુ-દળના વિદારક ! યોદ્ધા શત્રુઓનું **જહનુષઃ**-હનન કરનાર તે-આપનો પ્રભાવ **અહેઃ**-મેઘની વિદ્યુત્-ગર્જના આદિ વિશેષથી પ્રાણીઓને **યત્-જે ભીઃ**-ભય **અગચ્છત્-પ્રાપ્ત** થાય છે, વિદ્વાન મનુષ્ય તે મેઘને **યાતારમ્-દેશ-દેશાન્તરમાં** પહોંચાડનાર સૂર્યથી અન્ય **કમ્-કોઈને** પણ ન દેખે, જાણે.

તે સૂર્યની તાડના કરેલ-મારેલ મેઘ **શ્યેનઃ**-બાજથી **ભીતઃ**-ડરેલ કબૂતરની **ન-સમાન** ભૂમિ પર પડીને નવ, **નવનવતિમ્-અસંખ્ય સ્રવન્તીઃ**-નદીઓ અથવા નાલીઓને પૂરિત કરે છે.

યત્-જે કારણે સૂર્ય પોતાના પ્રકાશ, આકર્ષણ અને છેદન આદિ ગુણોથી મહાન છે; તેથી રજાંસિ-સર્વ લોકોને અતર:-તારે છે, પાર કરે છે; એના સમાન આપ છો, તે આપ હૃદિ-હૃદયમાં-મનમાં જે શત્રુને અપશ્ય:-દેખો, તેનું હનન કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : રાજાના સેવક અને વીરપુરુષ,-જેમ કોઈ દ્વારા પ્રહાર કરેલ ભયભીત શ્યેન = બાજ પક્ષી ગમે ત્યાં પડે છે, તેમ સૂર્ય દ્વારા તાડિત અને આકર્ષિત જે મેઘ ગમે ત્યાં પડીને જાય છે. તે પોતાનાં શરીર નામક જળથી લોક-લોકાન્તરની મધ્યમાં અનેક નદીઓ અને નાળાઓને પરિપૂર્ણ કરે છે.

એ મેઘનું સૂર્યથી ભિન્ન અન્ય કોઈ નિમિત્ત નથી. જેમ અંધારામાં પ્રાણીઓને ભય લાગે છે, તેમ મેઘ અને વીજળીના કડાકાથી ભય લાગે છે, તે (મય)નું નિવારણ કરનાર પણ સૂર્ય જ છે.

જેમ તે (સૂર્ય) સમસ્ત લોકોના પ્રકાશ અને આકર્ષણ આદિથી વ્યવહારનો હેતુ છે, તેમ (વીર રાજપુરુષ) શત્રુઓને જીતે. આ મંત્ર નવનવતિમ્-નવાણુ શબ્દ ઉપલક્ષ હોવાથી અસંખ્ય અર્થમાં છે. (૧૪)

इन्द्रो यातोऽवसितस्य राजा शमस्य च शृङ्गिणो वज्रबाहुः ।

सेदु राजा क्षयति चर्षणीनामरान्न नेमिः परि ता बभूव ॥ १५ ॥

પદાર્થ : સૂર્યની સમાન વજ્રબાહુ:-ભુજામાં શસ્ત્ર-સમૂહને ધારણ કરનાર ઇન્દ્ર:-દુષ્ટોનું નિવારણ કરનાર યાત:-ગમન આદિ વ્યવહારોને વર્તાવનાર સભાપતિ અને સેનાપતિ અવસિતસ્ય-નિશ્ચિત ચરાચર જગતના શમસ્ય-શાન્તિયુક્ત મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓ શ્રૃંગિણ:-શિંગડાવાળા ગાય આદિ પશુઓના તથા ચર્ષણીનામ્-સાધારણ મનુષ્યોની મધ્યમાં અરાન્-પૈડાંને-આરાઓનો ધારણ કરનાર નેમિ:-ધરોની ન-સમાન રાજા-પ્રકાશમાન બનીને તા-ઉત્તમ તથા અધમ કર્મોના કર્તાઓને સુખ અને દુઃખોને તથા રજાંસિ-ઉક્ત લોકોને પરિક્ષયતિ-પહોંચાડે છે અને નિવાસ કરાવે છે, ડ, ઇત્-તેમ જ સ:-તે સર્વના રાજા-ન્યાયનો પ્રકાશ કરનાર બભૂવ-બને. (૧૫)

ભાવાર્થ : જેમ રથના પૈડાં આરાને ધારણ કરીને ચલાવે છે, જેમ એ સૂર્ય ચેતન અને જડ, શાન્ત અને અશાન્ત જગતનાં મધ્યમાં પ્રકાશમાન થઈને, સર્વ લોકોને ધારણ કરીને, તેને પોતાની કક્ષામાં ચલાવે છે, એ સૂર્ય વિના કોઈપણ સમીપ સ્થિત મૂર્તિમાન લોકનું ધારણ, આકર્ષણ, પ્રકાશ અને વાદળાંઓની વર્ષા આદિ કર્મ સંભવ થઈ શકતા નથી, તેમ રાજા ધર્મપૂર્વક રાજ્યનું પાલન કરે. (૧૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઇન્દ્ર = સૂર્ય અને વૃત્ર-મેઘના યુદ્ધનું અલંકારથી વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તનો પૂર્વ સૂક્તમાં પ્રતિપાદિત અગ્નિ શબ્દના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૩૨)

સૂક્ત-૩૩

અહો = આશ્ચર્ય છે, કે આવો નિશ્ચય હોવા છતાં (પણ) જે ઈશ્વરનો અનાદર કરીને નાસ્તિક બની જાય છે, તેઓનું એ મહાન અજ્ઞાન તેઓને ક્યાંથી પ્રાપ્ત થયું ? !! (૨)

नि सर्वसेन इषुधीरंसक्त समर्यो गा अजति यस्य वष्टि।

चोष्कूयमाण इन्द्र भूरि वामं मा पणिभूरस्मदधि प्रवृद्ध ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અધિ, પ્રવૃદ્ધ-સર્વોપરિ મહાન ગુણોથી યુક્ત, ઇન્દ્ર-શત્રુઓના વિદારક, સર્વસેન:- સર્વ સેનાઓવાળા પણિ:-સત્ય વ્યવહારવાળા ચોષ્કૂયમાણ:-શત્રુઓને પલાયન કરનાર શૂરવીર આપ ભૂરિ-બહુ જ પ્રકારથી ઇષુધીન્-ધનુષ્યોને ધારણ કરીને-જેમ અર્ય:-વૈશ્ય ગા:-પશુઓની ભૂરિ-બહુ જ પ્રકારથી સમજતિ-પ્રાપ્ત કરીને રક્ષા કરે છે ઇવ-તેમ ન્યસક્ત-શત્રુઓને દંઢબંધનોથી બાંધો અને અસ્મત્-વામમ્-અમારાથી અરુચિકર કર્મનો કર્તા મા ભૂ:-ન બનો, જેથી यस્ય આપનો પ્રતાપ વષ્ટિ-પ્રકાશિત થાય અને આપ વિજયી બનો. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ વૈશ્ય ગાયોને પાળીને, ચરાવીને દૂધ આદિથી વ્યવહાર સિદ્ધ કર્યા કરે છે. જેમ ઈશ્વર દ્વારા રચિત મહાન સૂર્યલોકના કિરણો બાણ સમાન છેદક હોવાના કારણે સર્વ પદાર્થોમાં ધૂસીને વાયુ દ્વારા તેને ઉપર નીચે પહોંચાડીને સર્વ પદાર્થોને રસયુક્ત કરીને સુખોને ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ રાજા પ્રજાઓનું પાલન કરે. (૩)

वधीर्हि दस्युं धनिनं घनेनं एकश्चरन्नपशाकेभिरिन्द्र।

धनोरधि विषुणक्ते व्यायन्नयज्वानः सनकाः प्रेतिमीयुः ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-ઐશ્વર્યથી યુક્ત શૂરવીર ! જેમ ઈશ્વર અને સૂર્ય ઉપશાકેભિ:-સામર્થ્યરૂપી કર્મોથી એક-એકલા જ ચરન્-જાણતા અથવા પ્રાપ્ત કરતા દુષ્ટો અથવા મેઘોનું હનન કરે છે, તેમ એકલા આપ ધનેન-વજ્ર રૂપી શસ્ત્રથી દસ્યુમ્-બળ તથા અન્યાયથી પરધન હરનાર દુષ્ટોનો વધી:-વધ કરો, વિનાશ કરો, વિષુણક્-અધર્મથી ધર્માત્માઓને દુઃખ આપનારનો નાશ કરનાર આપ ધનો:-ધનુષ્યથી દોરીની અધિ-ઉપર બાણોને ચડાવીને દુષ્ટોનું નિવારણ કરીને ધનીનમ્-ધાર્મિક ધનાઢ્ય પુરુષોથી વૃદ્ધિ કરો.

જેમ ઈશ્વરના નિંદક અથવા સૂર્યલોકના શત્રુ મેઘ ધનેન-સામર્થ્યથી અથવા કિરણ-સમૂહથી નાશને વિ + આયન્-વિશેષ રૂપથી પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ હિ-નિશ્ચય તે-આપની અયજ્વાન:-યજ્ઞ અર્થાત્ પૂજા ન કરનાર, સનકા:-અધર્મથી પરપદાર્થોનું સેવન કરનાર મનુષ્ય પ્રેતિમ્-મૃત્યુને ઈંચુ:-જેમ પ્રાપ્ત થાય, તેવો પ્રયત્ન કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વર અજાતશત્રુ = શત્રુઓથી રહિત છે, સૂર્યલોક પણ મેઘથી નિવૃત્ત બની જાય છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ દસ્યુ = ચોર, ડાકુ અથવા શત્રુઓને મારીને તથા શ્રીમાનો-(ધનવાન, ધર્માત્મા)ની રક્ષા કરીને, અજાતશત્રુ-શત્રુઓથી રહિત બનવું જોઈએ. (૪)

परां चिच्छीर्षां ववृजुस्त इन्द्रायज्वानो यज्वभिः स्पर्धमानाः ।

प्र यद्विवो हरिवः स्थातरुग्र निरव्रताँ अंधमो रोदस्योः ॥ ५ ॥

पદાર્થ : હે **हरिवः**-ઘોડા, હાથી આદિ પ્રશંસિત સેના-સાધનોથી યુક્ત, યુદ્ધ માટે **प्रस्थातः**-પ્રસ્થાન કરનાર, **उग्र**-દુષ્ટો પ્રત્યે તીક્ષ્ણ વ્યવહારવાળા, **इन्द्र**-શત્રુઓના વિદારક સેનાપતિ **चित्**-જેમ હરણ, આકર્ષણ ગુણયુક્ત, કિરણયુક્ત યુદ્ધમાં સ્થિત થતાં અને દુષ્ટોને અત્યંત તાપ આપનાર સૂર્યલોક **रोदस्योः**-અન્તરિક્ષ અને પૃથિવીને પ્રકાશ તથા આકર્ષણ કરતા મેઘના અવયવોને છિન્ન-ભિન્ન કરીને તેનું નિવારણ કરે છે-દૂર ભગાડે છે; તેમ આપ **यत्**-જે **अयज्वानः**-યજ્ઞ ન કરનારા અને **यज्वभिः**-યજ્ઞ કરનારાની સાથે **स्पर्धमानाः**-ઈર્ષા કરનાર છે, તે-તેઓ જેમ **शीर्षाः**-પોતાના શિરોથી = માથાથી **ववृजुः**-રહિત થાય, તેમ તે **अव्रतान्**-વ્રત = સત્યાચરણથી રહિત, મિથ્યાવાદી દુષ્ટજનોને **निरधमः**-સર્વથા દંડ આપીને શિક્ષા કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય દુલોકને, પૃથિવી આદિને તથા પ્રકાશને ધારણ કરીને તથા મેઘોના અંધકારને દૂર કરીને વર્ષાથી સર્વ પ્રાણીઓને સુખ પ્રદાન કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ સદ્ગુણ ધારણ કરીને, અધાર્મિકોને દંડિત કરીને તથા વિદ્યા, સુશિક્ષા અને ધર્મના ઉપદેશ રૂપ વર્ષાથી સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરીને સત્યરાજ્યનો પ્રચાર કરવો જોઈએ. (૫)

अयुयुत्सन्नवद्यस्य सेनामयातयन्त क्षितयो नवग्वाः ।

वृषायुधो न वध्नयो निरष्टाः प्रवद्धिरिन्द्राच्चितयन्त आयन् ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે **नवग्वाः**-નવીન શિક્ષા અને વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરવા-કરાવનાર **वृषायुधः**-બળવાન શૂરવીર શત્રુથી યુદ્ધ કરનાર **चितयन्तः**-ધનુવિદ્યા-યુદ્ધવિદ્યાથી પ્રહારના જ્ઞાતા **क्षितयः**-નિવાસશીલ મનુષ્યો ! આપ જે **अनवद्यस्य**-સદ્ગુણોથી પ્રશંસનીય સેનાધ્યક્ષની **सेनाम्**-ચતુરગિણિ સેનાને સિદ્ધ કરીને **अयातयन्त**-સુશિક્ષાથી પ્રયત્નવાળી કરો, દુષ્ટ શત્રુઓની સાથે **अयुयुत्सन्**-યુદ્ધની ઈચ્છા કરો, જે **इन्द्रात्**-શૂરવીર સેનાધ્યક્ષથી **वध्नयः**-નિર્વીર્ય, નપુંસકની **न**-સમાન શત્રુજન **चितयन्तः**-ધનિવિદ્યાના પ્રહાર આદિના જ્ઞાતા **निरष्टाः**-પ્રબળ સેનાથી ઘેરાયેલ **प्रवद्धिः**-પલાયન યોગ્ય નીચ માર્ગોથી **आयन्**-ભાગી-નીકળી જાય, તે પુરુષને સેનાપતિ સ્વીકાર કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય શરીર તથા આત્માના બળથી યુક્ત, શૂરવીર અને ધાર્મિક મનુષ્યને સેનાપતિ બનાવીને તથા સેનાને સર્વ પ્રકારે શ્રેષ્ઠ બનાવીને દુષ્ટોની સાથે યુદ્ધ કરે છે, ત્યારે જેમ સિંહની સામેથી બકરી, વીરની સામેથી ડરપોક અને સૂર્યના તેજથી મેઘ ભાગી જાય છે, તેમ તેના શત્રુ પોતાનાં સુખથી રહિત બનીને તથા પીઠ દેખાડીને ગમે ત્યાં ભાગી જાય છે, તેથી સર્વએ એવું સામર્થ્ય સંપાદન કરીને રાજ્યનો સદા ઉપભોગ કરવો જોઈએ. (૬)

त्वमेतान् रुदतो जक्षतश्चायोधयो रजस इन्द्र पारे।

अवादहो दिव आ दस्युमुच्चा प्र सुन्वतः स्तुवतः शंसमावः ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-સેના અને રાજ્યના ઐશ્વર્યથી યુક્ત સેનાધ્યક્ષ ! **त्वम्**-યુદ્ધવિદ્યામાં કુશળ આપ **एतान्**-બીજાઓને પીડા આપનાર, **दुष्टकर्म** કરનાર, **रुदतः**-રડનાર, શત્રુ તથા જીવો-જંતુઓને **च**-અને **दस्युम्**-બળ તથા અન્યાયથી અન્યના પદાર્થોનું હરણ કરનારા દસ્યુઓને દંડ આપો, તથા પોતાના નોકરોને **जक्षतः**-અનેક પ્રકારના ભોજન આદિ આપીને આનંદ કરનાર મનુષ્યોને તેની સાથે **अयोधयः**-સારી રીતે યુદ્ધ કરવો, એ ધર્મના શત્રુઓને **रजसः**-પૃથિવી લોકના **पारे**-પર ભાગમા કરીને **अवादहः**-ભસ્મ કરો.

આ રીતે **दिवः**-ઉત્તમ શિક્ષાથી ઈશ્વર, ધર્મ, શિલ્પ યુદ્ધ વિદ્યા અને પરોપકાર આદિના પ્રકાશથી **उच्चा**-ઉત્કૃષ્ટ કર્મો અથવા સુખોથી **प्रसुन्वतः**-સારી રીતે સિદ્ધ કરનારાઓને તથા **आस्तुवतः**-સર્વત્રથી ગુણોની સ્તુતિ કરનારાઓને **शंसम्-शास्त्र** બોધની **प्रावः**-સારી રીતે રક્ષા કરો તથા તેને પ્રાપ્ત કરાવો. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ યુદ્ધને માટે અનેક પ્રકારના કર્મ કરવા જોઈએ, પ્રથમ પોતાના સૈનિકોની પુષ્ટિ અને હર્ષ, દુષ્ટોના બળ અને ઉત્સાહનો ભંગ કરવાનું કામ નિત્ય કરવા જોઈએ.

જેમ સૂર્ય પોતાનાં કિરણોથી સર્વને પ્રકાશિત કરીને મેઘ અને અંધકારના નિવારણ માટે પ્રવૃત્ત થાય છે, તેમ સદા ઉત્તમ કર્મો તથા ગુણોના પ્રકાશનને માટે અને દુષ્ટ કર્મો તથા દોષોના નિવારણ માટે નિત્ય પ્રયત્નો કરવા જોઈએ. (૭)

चक्राणासः परीणहं पृथिव्यां हिरण्येन मणिना शुभ्रमानाः।

न हिन्वानासस्तितिरुस्त इन्द्रं परि स्पशो अदधात्सूर्येण ॥ ८ ॥

પદાર્થ : જેમ સૂર્ય જેને **पर्यदधात्**-સર્વત્રથી ધારણ કરે છે તે-મેઘના અવયવ વાદળો સૂર્યનાં પ્રકાશને **स्पशः**-રોકનાર **पृथिव्या-पृथिवी**નું **परीणहम्**-સર્વ તરફથી બંધન અથવા સુખના આચ્છાદક હોવાથી વ્યાપન કરીને **चक्राणासः**-અત્યંત યુદ્ધ કરતા **हिरण्येन**-પ્રકાશરૂપ **मणिना**-મણિ સમાન જેમ **सूर्येण**-સૂર્યના તેજથી **शुभ्रमानाः**-શોભાયમાન **हिन्वानासः**-સુખોને સંપાદન કરતા, **इन्द्रम्**-સૂર્યલોકનું **न**, **तितिरु**-ઉલ્લંઘન કરી શકતા નથી, તેમ સેનાધ્યક્ષ પોતાના ધાર્મિક, શૂરવીર આદિને શત્રુજન જેમ જીતવાને સમર્થ ન બને, તેમ પ્રયત્ન સર્વ લોકો કરે. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વરે સૂર્યની સાથે પ્રકાશ, આકર્ષણ આદિ કર્મો નિબદ્ધ કરેલ છે, તેમ વિદ્યા, ધર્મ, ન્યાય, શૂરવીર અને સેના આદિની સામગ્રીને પ્રાપ્ત પુરુષની સાથે પૃથિવીના રાજ્યનું નિયોજન કરેલ છે. (૮)

परि यदिन्द्र रोदसी उभे अबुभोजीर्महिना विश्वतः सीम्।

अमन्यमानाँ अ॒भि म॒न्यमानैर्निर्ब्र॑ह्म॒भिर॑ध॒मो द॒स्युमिन्द्र॑ ॥ ९ ॥

पदार्थ : હે **इन्द्र**-ઐશ્વર્યના યોજક રાજન્ ! આપ જેમ ઈન્દ્ર = સૂર્ય **મહિના**-પોતાના મહિમાથી **ઉમે**-બન્ને **રોદસી**-પ્રકાશ અને ભૂમિને **સીમ્**-જીવોના સુખોની પ્રાપ્તિને માટે **વિશ્વતઃ**-સર્વ પ્રકારે આકર્ષણથી પાલન કરતા અને **મન્યમાનૈઃ**-જ્ઞાન સંપાદક **બ્રહ્મભિઃ**-મહાન આકર્ષણ આદિ બળવાન કિરણોથી **દસ્યુમ્**-મેઘ અને **અમન્યમાનાન્**-સૂર્યના પ્રકાશને રોકનારા મેઘના અવયવોને **નિરધમઃ** સર્વથા પોતાના તાપરૂપ અગ્નિથી યુક્ત કરીને નિવારણ કરે છે, તેમ સર્વ પ્રકારે પોતાના મહિમાથી પ્રાણીઓના સુખને માટે **ઉમે**-બન્ને **રોદસી**-પ્રકાશ અને પૃથિવીનો **પરિ** + **અબુખોજીઃ**-ન્યાયથી પાલન કરો-ભોગ કરો.

એ રીતે હે **इन्द्र**-રાજ્યના ઐશ્વર્યથી યુક્ત સેનાધ્યક્ષ શૂરવીર પુરુષ ! આપ **મન્યમાનૈઃ**-વિદ્યા, સરલતાયુક્ત, દુરાગ્રહરહિત, જ્ઞાન-સાધક મનુષ્યો તથા **બ્રહ્મભિઃ**-વેદના જાણનાર વિદ્વાનોથી **અમન્યમાનાન્**-અજ્ઞાની, દુરાગ્રહી મનુષ્યો તથા **દસ્યુમ્**-દુષ્ટકર્મથી સંયુક્ત, પરદ્રોહી, પરધન હરનાર, ચોર અથવા શત્રુને **અભિ** + **નિરધમઃ**-સાક્ષાત્ શિક્ષા કરો. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યલોક પૃથિવી આદિ સમસ્ત મૂર્તિમાન લોકોને પ્રકાશિત કરીને, આકર્ષણ દ્વારા તેને ધારણ કરીને, પાલક બનીને મેઘ = વાદળો અને રાત્રિના અંધકારનું નિવારણ કરે છે, તેમ હે મનુષ્યો ! આપ લોકો સુશિક્ષિત વિદ્વાનો દ્વારા મૂર્ખોની મૂર્ખતાનું નિવારણ કરીને, દુષ્ટ શત્રુઓને શિક્ષા કરીને મહાન રાજ્ય સુખનો નિત્ય ઉપભોગ કરો. (૯)

न ये दि॒वः पृ॒थि॒व्या अ॒न्त॒मा॒पु॒र्न॒ मा॒याभि॑र्ध॒न॒दां प॒र्य॑भૂ॒वन् ।

यु॒जं व॒ज્રं વૃષ॑ભશ્ચક્ર॒ ઇન્દ્રો નિજ્યોતિષા તમસો ગા અધુક્ષત્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ રાજન્ ! આપ જેમ મેઘના **ये**-જે વાદળાં આદિ અવયવો **दिवः**-સૂર્યના પ્રકાશની તથા **पृथिव्याः**-અન્તરિક્ષની **अन्तम्**-મર્યાદા-સીમાને **नापुः**-પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી, **मायाभिः**-પોતાની ગર્જના, અંધકાર અને વીજળી આદિની માયાથી **धनदाम्**-પૃથિવીને **न**, **पर्यभूवन्**-સમ્યક્ આસ્થાદન કરી શકતા નથી, તેના પર **वृषभः**-વૃષ્ટિકર્તા **इन्द्रः**-છેદન કરનાર સૂર્ય **युजम्**-પ્રહાર કરવા યોગ્ય **वज्रम्**-કિરણ સમૂહને ફેંકીને **ज्योतिषा** પોતાના તેજ પ્રકાશથી **तमसः**-અંધકારને **निचक्रे**-દૂર કરે છે, અને **गाः**-પૃથિવી આદિ લોકોને વર્ષાથી **अधुक्षत्**-પૂર્ણ કરી દે છે, તેમ જે શત્રુજન ન્યાયના પ્રકાશને તથા ભૂમિના રાજ્યના અન્તને ન પ્રાપ્ત કરી શકે, ધન આપનારી રાજનીતિનો નાશ ન કરી શકે, તે શત્રુઓ પર પોતાની પ્રભુતા, વિદ્યાદાનથી અવિદ્યાની નિવૃત્તિ અને પ્રજાના સુખોને પૂર્ણ કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સૂર્યના પ્રકાશ અને સ્વભાવ સમાન કર્મો કરીને, સમસ્ત શત્રુઓને તથા અન્યાયરૂપી અંધકારને નષ્ટ કરીને, રાજ્યની ધર્મપૂર્વક સેવા કરવી જોઈએ.

માયાવી = કપટી લોકોનું રાજ્ય કદી સ્થિર રહેલું નથી, તેથી કપટને દૂર કરીને રાજ્ય કરવામાં તત્પર રહેવું જોઈએ. (૧૦)

अनु स्वधामक्षरन्नापो अस्यावर्द्धत मध्य आ नाव्यानाम् ।

सुधीचीनेन मनसा तमिन्द्र ओजिष्ठेन हन्मनाहन्नभि द्यून् ॥ ११ ॥

पदार्थ : હે સેનાધ્યક્ષ ! આપ જેમ અસ્ય-એ મેઘના શરીર નાવ્યાનામ્-નદી, તળાવ અને સમુદ્રોમાં આવર્द्धत-જેમ એ મેઘમાં રહેલ આપ:-જળ સૂર્યથી છિન્ન-ભિન્ન થઈને અનુસ્વધામ્-પ્રત્યેક અન્નને અક્ષરન્-પ્રાપ્ત થાય છે; અને જેમ એ મેઘ સુધીચીનેન-સાથે વર્તમાન ઓજિષ્ઠેન-અત્યંત બળયુક્ત હન્મના-હનન કરવાના સાધન મનસા-મન સમાન વેગથી એ સૂર્યના અભિદ્યૂન્-પ્રકાશયુક્ત દિવસોને અહન્-અંધકારથી ઢાંકી લે છે, અને જેમ સૂર્ય પોતાની સાથેના વર્તમાન કિરણ સમૂહના બળ અને વેગથી તમ્-તે મેઘનું અહન્-હનન કરે છે, અને પોતાના અભિદ્યૂન્-પ્રકાશયુક્ત દિવસોને પ્રકાશ કરે છે, તેમ આપ નદી, તળાવ અને સમુદ્રની મધ્યમાં નૌકા આદિ સાધનો સહિત પોતાની સેનાની વૃદ્ધિ કરો, તથા એ યુદ્ધમાં પ્રાણ આદિ સર્વ ઈન્દ્રિયોને અન્નાદિ પદાર્થોથી પુષ્ટ કરીને પોતાની સેનાનાં બળથી તમ્-તે શત્રુ સેનાનું અહન્-હનન કરો અને ન્યાય આદિને પ્રકાશિત કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુત્ દ્વારા વૃત્ર = મેઘને મારીને પાડેલી, વર્ષા-જવ આદિ અન્ન તથા નદી, તળાવ અને સમુદ્રના જળની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ મનુષ્યોએ, સર્વના શુભ ગુણોની સર્વત્રથી કરેલી વર્ષા દ્વારા પ્રજાઓને સુખી કરીને, શત્રુઓનો નાસ કરીને તથા વિદ્યા અને સદ્ગુણોને પ્રકાશિત કરીને સદા ધર્મનું સેવન કરવું જોઈએ. (૧૧)

न्यविध्यदिलीविशस्य दृढा वि शृङ्गिणामभिनच्छुष्णामिन्द्रः ।

यावत्तरो मघवन्यावदोजो वज्रेण शत्रुमवधीः पृतन्युम् ॥ १२ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-મહાધન પ્રદાન કરનાર અથવા મહાધનયુક્ત વીર ! આપ જેમ ઇન્દ્ર:-વિદ્યુત્ આદિ બળવાન સૂર્યલોક ઇલીવિશસ્ય-પૃથિવીના ખાડાઓમાં શયન કરનાર મેઘ સંબંધી દૃઢા-સુદૃઢ વાદળાં આદિને અભિનત્-ભિન્ન કરે છે, અને પોતાના યાવત્-જેટલા તર:-બળ અને યાવત્-જેટલું ઓજ:-પરાક્રમ છે, તેથી યુક્ત વજ્રેણ-કિરણ સમૂહથી શૃંગિણમ્-શીંગડા સમાન ઉન્નત શુષ્ણમ્-ઉપર ચડતા પદાર્થોને ખેતીને સૂકવી નાખનાર મેઘને ન્યવિધ્યત્-નષ્ટ અને પૃતન્યુમ્-સેનાના ઈચ્છુક શત્રુમ્-શત્રુની સમાન મેઘનું અવધી:-હનન કરે છે, તેમ આપ શત્રુઓમાં યેષ્ટા કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુત્ મેઘના અવયવોને = વાદળાંઓનું ભેદન કરીને, જળ વરસાવીને સર્વને સુખી કરે છે, તેમ મનુષ્યોને ઉપદેશ આપીને તથા કઠોર દંડ અને અસ્ત્રોની વર્ષા દ્વારા શત્રુઓનું નિવારણ કરીને, પ્રજામાં નિરંતર સુખોની વર્ષા કરવી જોઈએ. (૧૨)

अभि सिध्मो अजिगादस्य शत्रून्वि तिग्मेन वृषभेणा पुरोऽभेत् ।

सं वज्रेणासृजद्वृत्रमिन्द्रः प्रस्वां मतिमतिरच्छाशदानः ॥ १३ ॥

પદાર્થ : જેમ અસ્ય-એ વિદ્યુતના સિધ્ધ-વિજય પ્રાપ્ત કરાવનાર વેગ તિગ્મેન-તીક્ષ્ણ વૃષભેણ-વૃષ્ટિ કરનાર ઉત્તમ ગુણથી શત્રૂન્ મેઘના અવયવોને વિ + અજીગાત્-પ્રાપ્ત થાય છે અને એ મેઘને પુર:-નગરોની સમાન સમુદાયોનું વ્યભેત્-ભેદન કરે છે, જેમ શાશદાન:-અત્યંત કરનાર ઇન્દ્ર:-સૂર્ય વૃત્રમ્-મેઘને પ્રાતિસ્ત્-સારી રીતે ફેલાવે છે, તેમ જ એ સેનાધ્યક્ષે બનવું જોઈએ. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુત્ પોતાના તેજ વેગથી મેઘના અવયવોને તથા ઘટાટોપ મેઘને ઇન્ન-ભિન્ન કરીને, તેને ભૂમિ પર પાડીને, વશમાં કરે છે, (અર્થાત્ પોતાનું એ કર્મ સર્વને બતાવે છે,) તેમ જ સભાપતિ અને સેનાપતિ-બુદ્ધિ તથા શરીરના બળથી અને સેનાના વેગથી શત્રુઓને ઇન્ન-ભિન્ન કરીને તથા શત્રુઓના પ્રહારોથી તેને પછાડીને પોતાની સંમતિમાં લાવે. (૧૩)

આવઃ કુત્સમિન્દ્ર યસ્મિન્ચાકન્પ્રાવો યુધ્યન્તં વૃષભં દર્શદ્યુમ્ ।

શ્ફચ્યુતો રેણુર્નક્ષત દ્યામુચ્ચૈત્રેયો નૃષાહ્યાય તસ્થૌ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સુશીલ સભાધ્યક્ષ ! જેમ સૂર્ય યસ્મિન્-જે યુદ્ધમાં યુધ્યન્તમ્-યુદ્ધ કરતા વૃષભમ્-વૃષ્ટિ કરાવનાર દર્શદ્યુમ્-દશેય દિશાઓમાં પ્રકાશમાન અર્થાત્ ચારે દિશાઓમાં વિદ્યમાન મેઘના પ્રત્યે કુત્સમ્-વજ મારીને જગતની પ્રાવઃ-રક્ષા કરે છે; અને શ્વૈત્રેયઃ-ભૂમિનો પુત્ર મેઘ શ્ફચ્યુતઃ-ગાય આદિ પશુઓની ખરીના ચિન્હોમાં પડેલી રેણુઃ-ધૂળ-રજ દ્યામ્-પ્રકાશયુક્ત લોકને નક્ષત-પ્રાપ્ત થાય છે, તેને નૃષાહ્યાય-મનુષ્યોને માટે ચાકન્-તે કાન્તિમાન મેઘ ઉત્તસ્થૌ-ઊઠાવે છે અને સુખોને આપે છે, તેમ સભાસહિત આપે-સભાધ્યક્ષ રાજાએ પ્રજાના પાલનમાં પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય પોતાનાં કિરણોથી મેઘને ભૂમિ પર પાડીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, તેમ હે સેનાધ્યક્ષ ! તું પણ સેનાના શિક્ષણ અને શસ્ત્રબળથી શત્રુઓને અસ્ત-વ્યસ્ત કરીને તેને નીચે પછાડીને પ્રજાની નિરંતર રક્ષા કર. (૧૪)

આવઃ શમં વૃષભં તુગ્ર્યાસુ ક્ષેત્રજેષે મંઘવજ્ઞિચ્ચત્ર્યં ગામ્ ।

જ્યોક્ ચિદત્રં તસ્થિવાંસો અક્રઞ્ચત્રૂયતામર્ધરા વેદનાકઃ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-મહા ધનવાન સભાધ્યક્ષ ! આપ જેમ સૂર્ય ક્ષેત્રજેષે-ક્ષેત્ર = અનાદિ સહિત પૃથિવીના રાજ્યને પ્રાપ્ત કરવા માટે શ્ચિત્ર્યમ્-ભૂમિના આવરણ-ઢાંકવામાં કુશળ વૃષભમ્-વર્ષા કરવાના સ્વભાવવાળા મેઘને તુગ્ર્યાસુ-જળોમાં ગામ્-કિરણ સમૂહને આવઃ-કિરણ સમૂહનો પ્રવેશ કરતા શત્રૂયતામ્-શત્રુની સમાન આચરણ કરનારા તે મેઘના અવયવોને અઘરા-નીચ વેદના-દુષ્ટોને પાપ-ફળ રૂપ વેદના-દુઃખોમાં તસ્થિવાંસઃ-અવસ્થિત કિરણો તેનું છેદન જ્યોક્-નિરંતર અક્રન્-કરે છે, અત્ર-અને પછી એ ભૂમિમાં તે મેઘ અકઃ-ગમન કરે છે, તેની ચિત્-સમાન (આપ) શત્રુઓનું નિવારણ કરીને પ્રજાને સદા સુખી કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય, અન્તરિક્ષથી મેઘના જળને ભૂમિ પર પાડીને-વરસાવીને પ્રાણીઓને શાન્તિ

અને સુખ પ્રદાન કરે છે, તેમ સેનાપતિ આદિ મનુષ્યો દુષ્ટ શત્રુઓને બાંધીને તથા ધાર્મિકોનું પાલન કરીને નિરંતર સુખનો ઉપભોગ કરે અને કરાવે. (૧૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઉપમાન-ઉપમેય અલંકારથી સૂર્ય અને મેઘરૂપ અર્થના વર્ણન દ્વારા મનુષ્યોને યુદ્ધ વિદ્યાનો ઉપદેશ કરેલ છે. તેથી પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે આ સૂક્તના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૩૩)

સૂક્ત-૩૪

ત્રિશ્ચિન્નો અઘ્વા ભવતં નવેદસા વિભુર્વા યામં ઉત રાતિરશ્વિના ।

યુવોર્હિં યન્ત્રં હિમ્યેવ વાસસોઽભ્યાયં સેન્યા ભવતં મનીષિભિઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે પરસ્પર ઉપકારક મિત્ર અભ્યાયં સેન્યા-સાક્ષાત્ કાર્ય સિદ્ધિને માટે મળેલા, નવેદસા-સર્વ વિદ્યાઓના જ્ઞાતા, અશ્વિના-પોતાના પ્રકાશથી વ્યાપ્ત સૂર્ય અને ચંદ્રમા સમાન સર્વ વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત શિલ્પી = કારીગર જનો ! તમે બન્ને મનીષિભિઃ-મેઘાવી વિદ્વાન શિલ્પીજનો તથા દિવસોની સહાયથી પરસ્પર મિત્ર બનીને હિમ્યા ઇવ-હેમન્ત ઋતુની મહાશીતથી યુક્ત રાત્રિઓની સમાન નઃ-અમારા અઘ્વા-આ વર્તમાન દિવસમાં શિલ્પકાર્યના સાધક ભવતમ્-બનો, હિ-જેથી યુવોઃ-તમારા બન્નેથી યન્ત્રમ્-કલાયંત્રને સિદ્ધ કરીને યાન-સમૂહને ચલાવીએ; જેથી નઃ-અમોને વાસસઃ-રાત, દિવસના મધ્યમાં રાતિઃ-વેગાદિ ગુણોથી દૂર દેશમાં પ્રાપ્ત થાય; ઉત-અને વામ્-તમારા બન્નેથી વિભુઃ-સર્વ માર્ગોને વ્યાપ્ત કરનારા યામઃ-રથ પ્રાપ્ત થતાં અમને દેશ-દેશાન્તરમાં સુખથી ત્રિઃ-ત્રણવાર પહોંચાડે, એટલા માટે અમે આપનો સંગ કરીએ. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ રાત અને દિવસની ક્રમથી સંગતિ થાય છે, તેમ મનુષ્યોએ યંત્ર અને કલાઓની ક્રમથી સંગતિ કરવી જોઈએ. પ્રત્યેક મનુષ્યે એવો સંકલ્પ કરવો જોઈએ, કે જેમ વિદ્વાનો પાર્થિવ વસ્તુઓના યાન-કલા, કીલ અને યંત્ર આદિને રચીને તેને ફેરવવા તથા તેમાં જળ-અગ્નિ આદિના સમ્યક્ પ્રયોગથી ભૂમિ, સમુદ્ર અને આકાશમાં જનાર યાનો-વાહનોને સિદ્ધ-તૈયાર કરે છે, તેમ મારે પણ સિદ્ધ કરવા જોઈએ.

એ (શિલ્પ) વિદ્યા વિના કોઈની પણ દરિદ્રતાનો નાશ અને સંપત્તિની વૃદ્ધિ થવી સંભવ નથી. તેથી સર્વ મનુષ્યોએ અત્યંત પ્રયત્ન કરવો જોઈએ.

જેમ મનુષ્ય હેમન્ત ઋતુમાં (શીતથી રક્ષણ માટે) શરીર પર સારી રીતે વસ્ત્ર ધારણ કરે છે, તેમ સર્વ રીતે કીલ-યંત્ર-કલા આદિથી યાનોને સંયુક્ત કરવા જોઈએ. (૧)

ત્રયઃ પ્વયો મધુવાહને રથે સોમસ્ય વેનામનુ વિશ્વ ઇદ્વિદુઃ ।

ત્રયઃ સ્કમ્ભાસઃ સ્કભિતાસ આરભે ત્રિનક્તં યાથસ્ત્રિવશ્વિના દિવા ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-અગ્નિ અને જળની સમાન સંપૂર્ણ શિલ્પ વિદ્યાઓને વ્યાપ્ત કરનારા પુરુષો ! આપ = તમે બન્ને જે મધુવાહને-મધુર ગુણયુક્ત દ્રવ્યો અથવા વેગોની પ્રાપ્તિ માટે રથે-રથ = વિમાનમાં ત્રય:-ત્રણ પવય:-વજ્ર સમાન ચલાવવા માટે કલા ચક્ર ત્રય:-ત્રણ સ્કમ્ભાસ:-બાંધવા કે ધારણ કરવા માટે સ્તંભ સ્કમ્ભિતાસ:-સ્થાપિત કરવામાં આવે છે, તેમાં સ્થિત અગ્નિ અને જળની સમાન કાર્ય સિદ્ધિ કરીને ત્રિ:-ત્રણ વાર નક્તમ્-રાત્રિ અને ત્રિ:-ત્રણવાર દિવા:-દિવસમાં ઇચ્છિત સ્થાનને ઉપયાથ:-પ્રાપ્ત કરો છો, કારણ કે ત્યાં પણ તમારા બન્ને વિના કાર્ય સિદ્ધિ કદાપિ થતી નથી.

મનુષ્યો જેમાં બેસીને સોમસ્ય-ઐશ્વર્ય અથવા ચંદ્રલોકની વેનામ્-કામના અથવા યાત્રાને શીઘ્ર પ્રાપ્ત કરે છે, અને જેને આરમ્ભે-આરંભ કરવા યોગ્ય આવાગમનમાં વિશ્વે-સર્વ વિદ્વાનો ઇત્-જ વિદુ:-જાણે છે. તે ઉ-અદ્ભુત રથને વિચારપૂર્વક-ઠીક સિદ્ધ કરીને અભીષ્ટ સ્થાનોમાં શીઘ્ર આવાગમન કરો. (૨)

ભાવાર્થ : ભૂમિ, સમુદ્ર અને અન્તરિક્ષમાં જવાની ઇચ્છા કરનાર મનુષ્યોએ, (એવો પ્રયત્ન કરવો જોઈએ કે તેઓ) ત્રણ ચક્ર, અગ્નિ ઘર અને સ્તંભયુક્ત વિમાન આદિ યાન બનાવીને તથા તેમાં બેસીને, એક દિવસ અને એક રાતમાં ભૂગોળ (ની આર-પાર), સમુદ્ર અને અન્તરિક્ષ માર્ગથી ત્રણવાર જઈ શકે.

તે (યાન)માં ત્રણ એવી રીતના સ્તંભ બનાવવા જોઈએ, જેમાં સમસ્ત કલા-ઉપકરણોના અવયવો, અથવા કાષ્ઠ-લોહ આદિના થાંભલાઓમાં અવયવો રહી શકે. તેમાં અગ્નિ અને જળનો સારી રીતે પ્રયોગ કરીને તે (વિમાનાદિ)ને ચલાવવા જોઈએ. એના વિના કોઈ પણ ભૂમિ, સમુદ્ર અને અન્તરિક્ષમાં શીઘ્રતાપૂર્વક ગમનાગમન કરી શકતા નથી. તેથી તેની સિદ્ધિ = તૈયાર કરવા માટે વિશેષ પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૨)

સમાને અહન્ત્રિરવદ્યગોહના ત્રિર્દ્ય યજ્ઞં મધુના મિમિક્ષતમ્ ।

ત્રિવાજવતીરિષો અશ્વિના યુવં દોષા અસ્મભ્યમુષસંશ્ચ પિન્વતમ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-અગ્નિ અને જળયુક્ત યાનોની સિદ્ધિ કરીને તેના પ્રેરક અને ચાલક અવદ્યગોહના-દુઃખોને દૂર કરનારા વિદ્વાન મનુષ્યો ! યુવમ્-તમે બન્ને સમાને-એક અહન્-દિવસમાં મધુના-જળથી યજ્ઞમ્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય શિલ્પાદિ વિદ્યા સિદ્ધ કરનાર યજ્ઞને ત્રિ:-ત્રણ વાર મિમિક્ષતમ્-સીંચવાની ઇચ્છા કરો.

અદ્ય-આજ અસ્મભ્યમ્-શિલ્પ ક્રિયાઓને સિદ્ધ કરનાર અને કરાવનાર અમારા માટે દોષા:-રાત્રીઓમાં તથા ઉષસ:-પ્રકાશને પ્રાપ્ત થયેલ દિવસોમાં ત્રિ:-ત્રણ વાર યાનોનું પિન્વતમ્-પ્રીતિપૂર્વક સેવન કરો, અને વાજવતી:-પ્રશસ્ત વેગ આદિ ગુણોથી યુક્ત-શ્રેષ્ઠ સુખદાયક ઇષ:-ઇચ્છા સિદ્ધિ કરનાર નૌકા આદિ યાનોને ત્રિ:-ત્રણવાર પિન્વતમ્-પ્રીતિપૂર્વક સેવન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : શિલ્પ વિદ્યાના જ્ઞાતા વિદ્વાન લોક તથા યંત્રોથી યાન-વાહન ચલાવનાર લોક પ્રતિદિન

અહવદભાષ્ય

શિલ્પવિદ્યા દ્વારા યાનોને તૈયાર કરીને, ત્રણ પ્રકારથી શરીર, આત્મા અને મનના સુખને માટે ધન આદિ અનેક પદાર્થોનું ઉપાર્જન કરીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખ કરે, જેથી રાત-દિવસમાં સર્વ લોકો પોતાના પુરુષાર્થ દ્વારા એ વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરીને, આળસનો ત્યાગ કરીને, ઉત્સાહપૂર્વક તેની રક્ષામાં નિરંતર પ્રયત્ન કરે. (૩)

ત્રિવર્તિર્યાતં ત્રિરનુવ્રતે જને ત્રિઃ સુપ્રાવ્યે ત્રેધેવ શિક્ષતમ્ ।

ત્રિનાન્દ્યં વહતમશ્વિના યુવં ત્રિઃ પૃક્ષો અસ્મે અક્ષરેવ પિન્વતમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-વિદ્યા આપનાર અને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાનો ! યુવમ્-તમે બન્ને અસ્મે અમારા વર્તિઃ-વ્યવહાર માર્ગને ત્રિઃ-ત્રણ વાર યાતમ્-પ્રાપ્ત કરો, તથા સુપ્રાવ્યે-સારી રીતે પ્રવેશ કરવા યોગ્ય અનુવ્રતે-અનુકૂળ સત્યાચારરૂપ વ્રતવાળા જને-બુદ્ધિના ઉત્પાદક મનુષ્યના નિમિત્ત ત્રિઃ-ત્રણ વાર યાતમ્-પ્રાપ્ત થાવો, અને શિષ્યને માટે ત્રેધેવ-ત્રણ પ્રકાર અર્થાત્ ઉસ્તક્રિયા, રક્ષા અને ચલાવવના જ્ઞાનથી યુક્ત શિક્ષા કરતા એક અધ્યાપકની સમાન અસ્મે-અમને ત્રિઃ-ત્રણવાર શિક્ષતમ્-શિક્ષા આપ્યા કરો, અમને નાન્દ્યમ્-સમૃદ્ધિને યોગ્ય શિલ્પ-જ્ઞાનને ત્રિઃ-ત્રણવાર વહતમ્-પ્રાપ્ત કરાવો; અને અક્ષરેવ-જેમ નદી, તળાવ અને સમુદ્ર આદિ જળાશય મેઘના અક્ષરા-અવિનાશી જળોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ અમને પૃક્ષઃ-વિદ્યા સંપર્કથી ત્રિઃ-ત્રણવાર પિન્વતમ્-પ્રાપ્ત કરો. (૪)

ભાવાર્થ : શિલ્પ વિદ્યાના જ્ઞાતા વિદ્વાનોને યોગ્ય છે કે વિદ્યા (પ્રાપ્ત કરવા)ના ઈચ્છુક, અનુકૂળ સ્વભાવવાળા, બુદ્ધિમાન મનુષ્યોને હાથ-કામની વિદ્યા ભણાવીને, વારંવાર તેની ઉત્તમ શિક્ષા આપીને, કાર્ય કરવામાં સમર્થ બનાવે. વળી તે લોકો એ વિદ્યાને ગ્રહણ કરીને યથાવત્ નિપુણતા અને પુરુષાર્થથી અનેક ઉપકાર ગ્રહણ કરીને સુખી બને. (૪)

ત્રિનો ર્ચિં વહતમશ્વિના યુવં ત્રિર્દેવતાતા ત્રિરુતાવતં ધિયઃ ।

ત્રિઃ સૌભગત્વં ત્રિરુત શ્રવાંસિ નસ્ત્રિષ્ટં વાં સૂરે દુહિતા રુદ્રથમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે દેવતાતા-શિલ્પ વિદ્યામય યજ્ઞની સિદ્ધિને હેતુ અથવા વિદ્વાનો અર્થાત્ દિવ્યગુણોનો વિસ્તાર કરનારા અશ્વિના-આકાશ અને પૃથિવીની સમાન સુખદાયક વિદ્વાનો ! યુવમ્-આપ-બન્ને નઃ-અમને રચિમ્-શ્રેષ્ઠ ધન તથા ત્રિઃ-ત્રણ વિદ્યા-રાજ્યરૂપ ઐશ્વર્યને વહતમ્-પ્રાપ્ત કરાવો; નઃ-અમારી ધિયઃ-ધારણાવતી બુદ્ધિઓને ઉત્-અને બળને ત્રિઃ-ત્રણવાર પ્રવેશ કરાવો નઃ-અમારા માટે ત્રિષ્ટમ્-ત્રણ અર્થાત્ શરીર, આત્મા અને મનને સુખોમાં રાખનાર સૌભગત્વમ્-ઉત્તમ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવનાર પુરુષાર્થને ત્રિઃ-ત્રણ અર્થઆત્ નોકર, સંતાન અને સ્વાત્મ-પોતાની પત્ની આદિને શિક્ષણ વહતમ્-પ્રાપ્ત કરાવો; ઉત્-અને શ્રવાંસિ-વેદ, શાસ્ત્ર આદિનું શ્રવણ અથવા ધનને ત્રિઃ-શરીર, પ્રાણ અને મનની રક્ષા સહિત (અર્થાત્-શ્રવણ, મનન, નિદિધ્યાસન પૂર્વક) વહતમ્-પ્રાપ્ત કરાવો; વામ્-જે અશ્વિનો-વિદ્વાનોથી-

સૂર્ય-સૂર્યની દુહિતા-પુત્રી ઊષાની સમાન-ઉત્તમ વિદ્યાથી સિદ્ધ કરેલ ન:-અમારા રથમ્-વિમાનાદિ યાન સમૂહ ત્રિ:-ત્રણ અર્થાત્ પ્રેરક, સાધક અને ચાલન ક્રિયાથી આસ્હત્-આરોહણ કરીએ. એ બન્ને વિદ્વાનોને અમે શિલ્પ-કાર્યોમાં સારી રીતે યુક્ત કરીએ. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ અશ્વિનો (= અગ્નિ અને ભૂમિના) વિદ્વાનો પાસેથી શિલ્પ કાર્યોને સિદ્ધ કરીને, બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરીને, સૌભાગ્ય અને ઉત્તમ અન્ન આદિને પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. તેઓના બનાવેલ યાનોમાં બેસીને દેશ-દેશાન્તરોમાં જઈને વેપારથી-વ્યવહારથી ધન પ્રાપ્ત કરીને, સદા આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૫)

ત્રિનો^૧ અશ્વિના દિવ્યાનિ^૨ ભેષજા ત્રિઃ પાર્થિવાનિ^૩ ત્રિરુ^૪ દત્તમુદ્ભયઃ ।

ઓમાનનં શંયોર્મમકાય સૂનવે^૫ ત્રિધાતુ શર્મ^૬ વહતં શુભસ્પતી ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે શુભસ્પતી-મનુષ્યોના કલ્યાણકારક કર્મોની રક્ષા-પાલન કરનાર અશ્વિના-વિદ્યાની જ્યોતિનો વિસ્તાર કરનારા વિદ્વાનો ! તમે બન્ને ન:-અમારા માટે અદ્ભ્યઃ-સતત ગતિશીલ વાયુ અને વિદ્યુત્ આદિથી દિવ્યાનિ-વિદ્યાદિ શુભ ગુણોના પ્રકાશક ભેષજા-રસમય સોમ આદિ ઔષધિઓને ત્રિઃ-ત્રિવિધ તાપના નિવારણ માટે દત્તમ્-પ્રદાન કરો. ડ-અને પાર્થિવાનિ-પૃથ્વિના વિકારયુક્ત ઔષધિ ત્રિઃ-ત્રણ-વાર અર્થાત્ ત્રણ પ્રકારથી પ્રદાન કરો.

મમકાય-મારા સૂનવે-ઔરસી પુત્ર અથવા વિદ્યાપુત્રને માટે શંયોઃ-કલ્યાણમય સુખનું દાન અને ઓમાનમ્-રક્ષક, વિદ્યા-પ્રવેશક અને ક્રિયાજ્ઞાપક વ્યવહારને ત્રિઃ-ત્રણવાર પ્રદાન કરો, ત્રિધાતુ-લોખંડ, તાંબુ અને પીતળ એ ત્રણ ધાતુઓથી યુક્ત ભૂમિ, જળ-સમુદ્ર અને અન્તરિક્ષમાં ગતિ કરનાર શર્મ-ગૃહસ્થ અથવા સુખકારક યાનને મારા (ઔરસ અથવા વિદ્યા) પુત્રને માટે ત્રિઃ-ત્રણવાર વહતમ્-પ્રાપ્ત કરાવો. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જળ અને ભૂમિમાં જે રોગનાશક ઔષધ છે, તેનું ત્રણ પ્રકારના દુઃખોના નિવારણ માટે સેવન કરવું જોઈએ.

અનેક ધાતુઓ અને કાષ્ઠોથી યુક્ત ઘરના આકારનું યાન નિર્માણ કરીને, તેમાં જવ આદિ શ્રેષ્ઠ અન્નોને-ઔષધોને રાખીને, અગ્નિ ઘર-પ્રકોષમાં અગ્નિને પાર્થિવ બળતણ (કોલસા) આદિથી પ્રજ્વલિત કરીને, (ઉપર) જળ રાખીને, વરાળના બળથી યાનોને ચલાવીને, વ્યવહાર માટે દેશ-દેશાન્તરોમાં જઈને તથા ત્યાંથી આવીને શીઘ્ર પોતાના દેશમાં પહોંચવું જોઈએ. આ રીતે કરવાથી મહાન સુખ પ્રાપ્ત થાય છે. (૬)

ત્રિનો^૧ અશ્વિના યજ્ઞતા દિવેદિવે^૨ પરિ ત્રિધાતુ^૩ પૃથિવી મંશાયતમ્ ।

તિસ્ત્રો નાસત્યા રથ્યા પરાવત આત્મેવ વાતઃ^૪ સ્વસરાણિ ગચ્છતમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-અસત્ય વ્યવહારથી રહિત, યજતા-સાથે ચાલનાર રથ્યા-વિમાનાદિ રથોને પ્રાપ્ત કરનાર-(તેના ચાલક) અશ્વિના-જળ અને અગ્નિ સમાન શિલ્પીજનો-કારીગરો ! તમે બન્ને પૃથિવી-ભૂમિ અથવા અન્તરિક્ષને પ્રાપ્ત કરીને ત્રિ:-ત્રણવાર પરિ + અશાયતમ્-સર્વત્ર શયન કરો.

આત્મેવ-આત્માના શીઘ્ર ગમનની સમાન અને જેમ વાત:-પ્રાણ અથવા કલા ભ્રમણથી ઉત્પન્ન વાયુ સ્વસરાણિ-પોતાના કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત કરાવનાર દિવસોને દિવેદિવે-પ્રતિદિન પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ ગચ્છતમ્-દેશદેશાન્તરોને પ્રાપ્ત કરો; ન:-અમારા ત્રિધાતુ-સોના, ચાંદી આદિ ધાતુઓથી બનાવેલ યાનને પરાવત:-માર્ગો અને દૂર સ્થાનોમાં તિસ્ર:-ઊંચી, નીચી અને સમ ત્રણ ગતિઓથી મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓને પહોંચાડો છો, તેને કાર્ય સિદ્ધિને માટે અમારા માટે બનાવો. (૭)

ભાવાર્થ : સાંસારિક સુખના ઈચ્છુક મનુષ્ય, જેમ જીવ અન્તરિક્ષ આદિ માર્ગોથી શીઘ્ર બીજા શરીરમાં જાય છે અને જેમ વાયુ શીઘ્ર ગતિ કરે છે-જાય છે, એજ રીતે પાર્થિવ પદાર્થો દ્વારા કલાયંત્રોથી યુક્ત યાનોને રચીને, તેમાં જળ, અગ્નિ આદિનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને, ઈચ્છિત દૂર દેશો સુધી શીઘ્ર પહોંચો-પ્રાપ્ત કરો. આ કાર્ય વિના સાંસારિક સુખ બની શકતું નથી. (૭)

ત્રિરશ્વિના સિન્ધુભિઃ સપ્તમાતૃભિસ્ત્રય આહવાસ્ત્રેધા હવિષ્કૃતમ્ ।

તિસ્રઃ પૃથિવીરુપરિ પ્રવા દિવો નાર્કં રક્ષેથે દ્યુભિરક્તુભિર્હિતમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે પ્રવા-ગમન કરાવનાર અશ્વિના-સૂર્ય અને વાયુની સમાન શિલ્પી વિદ્વાનો ! તમે બન્ને સપ્તમાતૃભિઃ-પૃથિવી, અગ્નિ, સૂર્ય, વાયુ, વિદ્યુત્, જળ અને આકાશ એ સાત માતા સમાન ઉત્પન્ન કરનાર છે તે સિન્ધુભિઃ નદિઓ દ્યુભિઃ-દિવસો અને અક્તુભિઃ-રાત્રિઓથી જેનો ત્રય:-ઉપર, નીચે અને મધ્યમાં ચાલનાર આહવા-જળાધાર માર્ગ છે, તે ત્રેધા:-ત્રણ પ્રકારથી હવિષ્કૃતમ્-હોમને યોગ્ય, શોધિત નાર્કમ્-સર્વ દુઃખોથી રહિત હિતમ્-સુરક્ષિત દ્રવ્યોને ઉપર-ઉપર પ્રક્ષેપ કરી-ચઢાવીને, તેને તિસ્ર:-ત્રણ સ્થૂલ, ત્રસરેણુ અને પરમાણુરૂપ પૃથિવી:-વિસ્તૃત પૃથિવી અને દિવઃ-પ્રકાશયુક્ત કિરણોમાં પહોંચાડીને, તેને અત્ર-તત્ર ચલાવીને નીચે વરસાવીને, તેથી સર્વ જગતની ત્રિ:-ત્રણવાર રક્ષેથે-રક્ષા કરો. (૮)

ભાવાર્થ : વાયુ અને સૂર્યના છેદન, આકર્ષણ અને વર્ષા કરાવનાર ગુણોથી નદીઓ વહે છે (તથા) હવન કરેલ દ્રવ્ય, દુર્ગંધ આદિ દોષોનું નિવારણ કરીને, સર્વ દુઃખોથી રહિત, હિતકારી, સુખોને સિદ્ધ કરે છે. જેથી દિવસ-રાત સુખની વૃદ્ધિ થાય છે જેના વિના કોઈ પ્રાણી જીવી શકતા નથી, એટલા માટે તેની શુદ્ધિ માટે મનુષ્યોએ યજ્ઞ નામક કર્મો નિત્ય કરવા જોઈએ. (૮)

ક્વૃત્રી ચક્રા ત્રિવૃતો રથસ્ય ક્વૃત્રયો બન્ધુરો યે સનીઠાઃ ।

ક્રદા યોગો વાજિનો રાસભસ્ય યેન યજ્ઞં નાસત્યોપયાથઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-સત્યગુણ અને સ્વભાવવાળા શિલ્પી-કારીગરજનો ! તમે બન્ને યક્ષમ્-

દિવ્યગુણયુક્ત વિમાન આદિ યાનથી ગન્તવ્ય માર્ગને **કદા-ક્યારે** **ઉપયાથ-દૂર** દેશમાં રહેલ સ્થાનને સમીપની સમાન પ્રાપ્ત કરો છો ? અને **યેન-જેથી** પ્રાપ્ત કરો છો, તે **રાસભસ્ય-શબ્દ** કરનાર **વાજિન:-** પ્રશંસનીય વેગવાન **ત્રિવૃત:-**ત્રણ-રચના, ચાલન અને સામગ્રીથી પૂર્ણ **રથસ્ય-ભૂમિ,** જળ અને અન્તરિક્ષમાં રમણ કરાવનાર યાન-વિમાનમાં **ક્વ-ક્યાં** **ત્રી-ત્રણ** **ચક્રા-ચક્ર** બનાવવા જોઈએ ? અને ક્યાં એ વિમાન આદિ યાનમાં **યે-જે** **સનીડા:-**સમાન બંધન-આધાર યુક્ત ઘર-સ્થાન વિશેષો અથવા અગ્નિ ઘર વિશેષોથી યુક્ત **ત્રય-ત્રણ** જળ, અગ્નિ અને મનુષ્યોને રહેવાના સ્થાન તથા **બન્ધુર:-**નિયમપૂર્વક ચલાવવાને હેતુ કોઈ હોય છે તેનો **યોગ:-**યોગ **ક્વ-ક્યાં** રહેવો જોઈએ ? એ ત્રણ પ્રશ્નો છે. (૯)

ભાવાર્થ : અત્રે કહેલ ત્રણ પ્રશ્નોના ઉત્તર જાણવા જોઈએ-ઐશ્વર્યની ઈચ્છા રાખનાર મનુષ્યોએ, રથ (= વાહન) અગ્રભાગ, મધ્યભાગ અને અન્તભાગમાં સર્વ કલાઓના બંધનના આધાર માટે ત્રણ વિશેષ બંધન (= પ્રકોઈ) બનાવવા જોઈએ.

એક મનુષ્યોને બેસવા માટે બીજો અગ્નિ સ્થાપન માટે અને ત્રીજો જળ સ્થાપન માટે બનાવીને, જ્યારે-જ્યારે જવાની ઈચ્છા થાય, ત્યારે-ત્યારે ઉચિત માત્રામાં બળતણ રાખીને તેમાં અગ્નિ સંયોગ કરીને, કલાયંત્ર (= પંખા) થી વેગથી સંચાલિત યાનથી (મનુષ્ય) દૂરના સ્થાનને પણ નજીકના સ્થાન સમાન પહોંચી શકે છે. આ પ્રકારના યાન વિના કોઈ પણ નિર્વિદન રૂપે બીજા સ્થાનમાં જઈ શકતા નથી. (૯)

આ નાસત્યા ગચ્છતં હૂયતે હૃવિર્મધ્વઃ પિબતં મધુપેભિરાસભિઃ ।

યુવોર્હિ પૂર્વ સવિતોષસો રથમૃતાય ચિત્રં ઘૃતવન્તમિષ્યતિ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે શિલ્પીજનો ! **નાસત્યા-અસત્ય** ગુણથી રહિત અગ્નિ અને જળની સમાન આપ બન્ને જે **હવિ:-**સામગ્રીનો **હૂયતે-હવન** કરો છો, તે હવિથી શુદ્ધ થયેલ **મધ્વ:-**મધુર જળનું **મધુપેભિ:-**મધુર જળ-પાન કરનારા **આસભિ:-**પોતાના મુખોથી **પિબતમ્-પાન** કરો અને અમને આનંદ આપવા માટે **ઘૃતવન્તમ્-પુષ્કળ** જળની કલાઓથી યુક્ત **ચિત્રમ્-અદ્ભુત** વેગ આદિથી યુક્ત **રથમ્-વિમાન** આદિ યાનોથી દેશદેશાન્તરોમાં **ગચ્છતમ્-શીઘ્ર** આવાગમન કરો; **યુવોઃ-તમારા** બન્નેનું જે યાન **ઉષસ:-**પ્રાતઃકાલથી **પૂર્વમ્-પૂર્વ** **સવિતા-સૂર્ય**ની સમાન પ્રકાશમાન છે-તે **ઇષ્યતિ-શીઘ્ર** ચાલે છે; **હિ-તે** જ **ત્રહાય-સત્ય**ગમન સુખ માટે સમર્થ બને છે-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જ્યારે વાહનોમાં જળ તથા અગ્નિને પ્રદીપ્ત કરીને ચલાવવામાં આવે છે, ત્યારે તે યાન બીજા સ્થાનમાં શીઘ્ર પહોંચે છે. તેમાં જળની વરાળને કાઢવા માટે એક એવું સ્થાન બનાવવું જોઈએ, જેના દ્વારા વરાળને છોડવાથી વેગની વૃદ્ધિ થાય. આ વિદ્યાને પૂર્ણ જાણનાર જ શ્રેષ્ઠ સુખને પ્ર કરે છે. (૧૦)

આ નાસત્યા ત્રિભિરેકાદૃશૈરિહ દેવેભિર્યાતં મધુપેયમશ્વિના ।

મધુવેદભાષ્ય

૧૭૫

प्रायुस्तारिष्टं नी रपांसि मृक्षतं सेधतं द्वेषो भवतं सचाभुवा ॥ ११ ॥

पદાર્થ : હે શિલ્પીજનો ! તમે બન્ને નાસત્યા-સત્ય ગુણ, સ્વભાવ યુક્ત અશ્વિના-દ્યાવાપૃથિવી સમાન સચાભુવા-સમવાય = સંબંધ રાખનાર દેવેભિઃ-વિદ્વાનોની સાથે ઙ્રહ-એ ઉત્તમ યાનોમાં બેસીને ત્રિભિઃ-ત્રણ રાત-દિવસમાં મહાસમુદ્રની પાર, અને એકાદશભિઃ-અગિયાર રાત-દિવસમાં ભૂગોળના અન્તમાં યાતમ્-પહોંચો; અને દ્વેષઃ-શત્રુ અને રપાંસિ-દુઃખપ્રદ પાપોને નિ + મૃક્ષતમ્-સર્વથા દૂર કરો; અને મધુપેયમ્-મધુર ગુણયુક્ત પાન કરવા યોગ્ય દ્રવ્યને તથા આયુઃ-જીવનકાળની પ્ર + તારિષ્ટમ્-ઉત્તમ રીતે વધારો; અને ઉત્તમ સુખને સેધતમ્-પ્રાપ્ત કરો; અને શત્રુઓને જીતનાર ભવતમ્-બનો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય એવા (યાનોમાં બેસીને તેને ચલાવે છે; ત્યારે ત્રણ રાત-દિવસમાં સુખપૂર્વક સમુદ્રને પાર અને અગિયાર રાત-દિવસમાં ભૂગોળની ચોતરફ જઈ શકે છે. આ રીતે કરનાર વિદ્વાન સુખપૂર્વક પૂર્ણ આયુને પ્રાપ્ત કરીને, દુઃખોને દૂર કરીને તથા શત્રુઓને જીતીને ચક્રવર્તી રાજ્યના ભાગી બને છે. (૧૧)

આ નૌ અશ્વિના ત્રિવૃતા રથેનાર્વાઙ્ચં રયિં વહતં સુવીરમ્ ।

શૃણ્વન્તાં વામવસે જોહવીમિ વૃધે ચ નો ભવતં વાજસાતૌ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે શિલ્પવિદ્યામાં કુશળ, શૃણ્વન્તા-શ્રવણ કરાવનાર અશ્વિના-દેહ, વિદ્યા અને બળયુક્ત આપ બન્ને જળ અને વાયુ સમાન ત્રિવૃતા-ત્રણ-સ્થળ, જળ અને અન્તરિક્ષમાં પૂર્ણ ગતિથી જવા માટે વિદ્યમાન રથેન-વિમાન આદિ યાનથી નઃ-અમને અર્વાઙ્ચમ્-ઉપરથી નીચે અભીષ્ટ સ્થાનને, સુવીરમ્-ઉત્તમ વીરોથી-યુક્ત રયિમ્-ચક્રવર્તી રાજ્યથી સિદ્ધ કરેલ ધનને આવહતમ્-પ્રાપ્ત કરાવો; ચ-અને નઃ-અમારા વાજસાતૌ-સંગ્રામમાં વૃધે-વૃદ્ધિ માટે વિજય પ્રાપ્ત કરાવનાર ભવતમ્-થાઓ. અવસે-રક્ષા દિને માટે વામ્-તમારું-બન્નેનું જોહવીમિ-વારંવાર ગ્રહણ કરુ છું, તેમ આપ મને ગ્રહણ કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : એ જળ અને વાયુ રૂપ અશ્વોથી સંયુક્ત કરેલ રથ (= યાન) વિના કોઈ પણ ભૂમિ, જળ અને અન્તરિક્ષના માર્ગોમાં શીઘ્ર જઈ શકતા નથી, તેથી રાજ્યલક્ષ્મી, ઉત્તમસેના અને વીરપુરુષોને પ્રાપ્ત કરીને લોકો એ પ્રકારના યાનથી યુદ્ધમાં વિજય પ્રાપ્ત કરી શકે છે, તેથી એ કાર્યમાં મનુષ્ય સદા સંલગ્ન બને. (૧૨)

સંગતિ : પૂર્વ સૂક્તના એ શિલ્પવિદ્યાના સાધક 'ઈન્દ્ર'ના અર્થનું પ્રતિપાદન કરેલ છે, તથા આ સૂક્તમાં એ શિલ્પવિદ્યાના મુખ્ય સાધક 'અશ્વિનો' (શિલ્પીજન) અને દ્યાવાપૃથિવી (અગ્નિ, જળ આદિ)નું પ્રતિપાદન કરેલ છે તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૩૪)

સૂક્ત-૩૫

ह्याम्यग्निं प्रथमं स्वस्तये ह्यामि मित्रावरुणाविहावसे ।

ह्यामि रात्रीं जगतो निवेशनीं ह्यामि देवं सवितारमृतये ॥ १ ॥

पદાર્થ : હું **इह**-આ શરીર ધારણ આદિ વ્યવહારમાં **स्वस्तये**-ઉત્તમ સુખને માટે **प्रथमम्**-જીવન-શરીરધારણનું આદિ સાધન **अग्रिम्**-રૂપ ગુણવાળા અગ્નિના **ह्यामि**-ગ્રહણની ઈચ્છા કરું છું; **अवसे**-રક્ષા આદિને માટે **मित्रावरुणौ**-મિત્ર = પ્રાણ વરુણ = ઉદાન વાયુનો **ह्यामि**-સ્વીકાર કરું છું.

जगतः-સંસારની **निवेशनीम्**-નિદ્રામાં નિવાસ કરાવનારી **रात्रीम्**-સૂર્યના અભાવમાં અંધકાર રાત્રિને **ह्यामि**-પ્રાપ્ત કરું છું; **ऊतये**-ક્રિયા સિદ્ધિની ઈચ્છાને માટે **देवम्**-પ્રકાશાત્મક **सवितारम्**-સૂર્યલોકને **ह्यामि**-ગ્રહણ કરું છું. (૧)

भावार्थ : સર્વ મનુષ્યો દિવસ-રાત સુખ માટે અગ્નિ, વાયુ અને સૂર્યનો ઉપયોગ ગ્રહણ કરીને, સમસ્ત સુખોને પ્રાપ્ત કરે, ગ્રહણ કરીને, કારણ કે એ વિદ્યા વિના કદી કોઈને સુખ સંભવ નથી. (૧)

आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च ।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ॥ २ ॥

[परमेश्वर]

પદાર્થ : જે **सविता**-સર્વને ઉત્પન્ન કરનાર **देवः**-સર્વના પ્રકાશક પરમેશ્વર **आकृष्णेन**-પોતાની આકર્ષણ શક્તિથી **रजसा**-સર્વ સૂર્યાદિ લોક સમૂહની સાથે વ્યાપક બનીને **वर्तमानः**-વર્તમાન, સમસ્ત જગતમાં, **अमृतम्**-અન્તર્યામી રૂપથી અને વેદ દ્વારા મોક્ષ સાધક સત્યજ્ઞાનથી **च**-અને **मर्त्यम्**-કર્મ અને પ્રલય-પ્રાપ્તિની વ્યવસ્થાથી મરણધર્મા પ્રાણીને **निवेशयन्**-સર્વથા પોતાના સામર્થ્યમાં સ્થાપન કરતા **हिरण्ययेन**-જ્યોતિર્મય અનન્ત યશથી યુક્ત **रथेन**-જ્ઞાન રૂપ રથથી યુક્ત થઈને **भुवनानि**-લોકોને **पश्यन्**-નિહાળતા **आ + याति**-સર્વત્રથી સર્વ પદાર્થોને પ્રાપ્ત થાય છે.

[सूर्यलोक]

જે **सविता**-પ્રકાશ, વૃષ્ટિ અને રસોને ઉત્પન્ન કરનાર **देवः**-પ્રકાશક સૂર્ય **कृष्णेन**-કૃષ્ણ વર્ણયુક્ત = પ્રકાશ રહિત **रजसा**-પૃથિવી આદિ લોક-સમૂહની સાથે **आवर्तमानः**-પોતાની આકર્ષણ શક્તિથી વર્તમાન આ જગતમાં **अमृतम्**-વૃષ્ટિ દ્વારા અમૃતરૂપ રસને **च**-તથા **मर्त्यम्**-કાલ-અવસ્થાથી મરણધર્મા પ્રાણીને **निवेशयन्**-સર્વથા પોત-પોતાના સામર્થ્યમાં સ્થાપન કરતા **हिरण्ययेन**-તેજોમય **रथेन**-ગમનશક્તિથી **भुवनानि**-લોકોને **पश्यन्**-દેખાડતા **आ + याति**-સર્વત્રથી વર્ષા આદિ રૂપોની પૃથક્-પૃથક્ પ્રાપ્તિ કરાવે છે. (૨)

भावार्थ : જેમ પૃથિવી આદિ લોક સર્વ મનુષ્ય આદિને ધારણ કરે છે. સૂર્યલોક આકર્ષણથી પૃથિવી

अमृतमप्य

૧૭૭

આદિને ધારણ કરે છે. ઈશ્વર પોતાની સત્તાથી સૂર્ય આદિ લોકોને ધારણ કરે છે. એ રીતે ક્રમથી સર્વ લોકોનું ધારણ થાય છે. તેના વિના અન્તરિક્ષમાં કોઈ ભારયુક્ત લોકની પોતાની પરિધિમાં સ્થિતિ રહેવાની સંભાવના નથી. લોકોના ભ્રમણ વિના ક્ષણ, મુહૂર્ત, પ્રહર, દિવસ, રાત, પક્ષ, માસ, ઋતુ અને સંવત્સર = વર્ષ આદિ કાળના અવયવ ઉત્પન્ન થઈ શકતા નથી. (૨)

યાતિ દેવઃ પ્રવતા યાત્યુદ્વતા યાતિ શુભ્રાભ્યાં યજતો હરિભ્યામ્ ।

આ દેવો યાતિ સવિતા પરાવતોઽપ્ વિશ્વા દુરિતા બાધમાનઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે રાજપુરુષો ! આપ જેમ વિશ્વા-સર્વ દુરિતા-દુષ્ટ દુઃખોને અપબાધમાન:-દૂર કરતા યજત:-સંગ કરવા યોગ્ય દેવ:-શ્રવણ આદિ જ્ઞાન પ્રકાશક વાયુ પ્રવતા-અધો માર્ગથી યાતિ-આગમન-ગમન કરે છે અને ઉદ્વતા-ઉર્ધ્વ માર્ગ યાતિ-આવાગમન કરે છે અને જેમ સર્વ દુઃખ આપનાર અંધકાર આદિને દૂર કરતા યજત:-સંગ કરવા યોગ્ય સવિતા-પ્રકાશક સૂર્યલોક શુભ્રાભ્યામ્-શુદ્ધ હરિભ્યામ્-હરણના સાધન દિવસ-રાત તથા કૃષ્ણ અને શુકલ પક્ષોમાં પરાવત:-દૂર રહેલા પદાર્થોને પોતાના કિરણોથી પ્રાપ્ત કરીને પૃથિવી આદિ લોકોને આયાતિ-સર્વ પ્રકારથી પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ શૂરવીર સેના-સામગ્રી સહિત ઊંચા-નીચા માર્ગમાં આવાગમન કરીને, શત્રુઓને જીતીને પ્રજાની નિરંતર રક્ષા-સુખી કરે. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વરની રચેલી સૃષ્ટિમાં વાયુ ઉપર, નીચે અને સમાન ગતિથી ચાલતા નીચેના પદાર્થોને ઉપર અને ઉપરના પદાર્થોને નીચે લાવે છે, તેમ એ સૂર્યરૂપી દેવ હરણશીલ અને પોતાના કિરણોથી યુક્ત દિવસ-રાતના દ્વારા અંધકાર આદિના નિવારણથી દુઃખોનો નાશ કરીને (તથા) સુખોને પ્રકટ કરીને (તથા) ક્યારેક સુખોનો નાશ કરીને દુઃખોને પ્રકટ કરે છે, તેમ સભાપતિ આદિએ પણ સેના આદિની સાથે ગમન-આગમન કરીને તથા શત્રુઓને જીતીને પ્રજાનું પાલન કરવું જોઈએ. (૩)

અભીવૃત્તં કૃશનૈર્વિશ્વરૂપં હિરણ્યશમ્યં યજતો બૃહન્તમ્ ।

આસ્થાદ્રથં સવિતા ચિત્રભાનુઃ કૃષ્ણા રજાંસિ તવિષીં દધાનઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ રાજન ! આપ જેમ યજત:-સંગતિ અને પ્રકાશના દાતા ચિત્રભાનુઃ-વિચિત્ર દીપ્તિ = પ્રકાશથી યુક્ત સવિતા-સૂર્ય અને વાયુ કૃશનૈઃ-સૂક્ષ્મતા કરનાર કિરણો અથવા વિવિધ રૂપોથી બૃહન્તમ્-મહાન હિરણ્યશમ્યમ્-હિરણ્ય = સુવર્ણ અથવા અન્ય જ્યોતિઓને શાન્ત કરનાર અભીવૃત્તમ્-સર્વત્ર સાધનોથી પૂર્ણ વિશ્વસ્ત્રમ્-વિવિધ રૂપવાળા પ્રકાશથી યુક્ત રથમ્-રમણીય રથને કૃષ્ણા-આકર્ષણ અને કૃષ્ણવર્ણથી યુક્ત રજાંસિ-પૃથિવી આદિ લોકો તથા તવિષીમ્-બળને દધાનઃ-ધારણ કરતા આસ્થાત્-સર્વત્ર સ્થિતિ થાય છે, તેમ બનીને પોતાનો વર્તાવ કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય આદિની ઉત્પત્તિ નિમિત્ત, સૂર્ય આદિ લોકોના ધારણકર્તા, બળવાન અને સર્વ લોકોનાં આકર્ષણ નામક બળને ધારણ કરનાર વાયુ છે.

જેમ સૂર્યલોક પોતાની સમીપ રહેલા લોકોને ધારણ કરતા અને સમસ્ત રૂપને પ્રકટ કરતા બળ અને આકર્ષણ દ્વારા સર્વને ધારણ કરે છે.

જેમ એ બન્ને (વાયુ અને સૂર્ય) વિના કોઈ પરમાણુનું પણ ધારણ કરવું સંભવ નથી, તેમ રાજા શુભ ગુણોને ધારણ કરીને રાજ્યને ધારણ કરે. (૪)

વિ જનાઞ્છ્યાવાઃ શિત્તિપાદો અઘ્ચન્નથં હિરણ્યપ્રગ્નં વહન્તઃ ।

શશ્વદ્વિશઃ સવિતુર્દૈવ્યસ્યોપસ્થે વિશ્વા ભુવનાનિ તસ્થુઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે સજ્જન પુરુષ ! જેમ એ દૈવ્યસ્ય:-વિદ્વાન અને દિવ્ય પદાર્થોમાં ઉત્પન્ન થનાર સવિતુ:-સૂર્યના ઉપસ્થે-ઉપસ્થ = સાનિધ્યમાં (અર્થાત્ ગોદ અથવા આકર્ષણ શક્તિમાં) વિશ્વા-સર્વ ભુવનાનિ-પૃથિવી આદિ લોક તસ્થુ:-સ્થિત રહે છે. તેના શિત્તિપાદ:-પોતાના શ્વેત અવયવોથી યુક્ત શ્યાવા:-પ્રાપ્ત થનાર કિરણો જનાન્-વિદ્વાનોના હિરણ્યપ્રગ્નમ્-જેમાં જ્યોતિરૂપ અગ્નિના મુખની સમાન સ્થાન છે, તે રથમ્-વિમાન આદિ યાન અને શશ્વત્-અનાદિ રૂપ વિશઃ-પ્રજાઓને વહન્તઃ-ધારણ તથા વૃદ્ધિ કરતા અઘ્ચન્-અનેક પ્રકારથી પ્રકટ થાય છે, તેમ આપની સમીપ વિદ્વાન લોક રહે અને આપ વિદ્યા તથા ધર્મનો પ્રચાર કરો.-પ્રકાશિત કરો, (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સૂર્યલોકના પ્રકાશ અને આકર્ષણ આદિ ગુણ છે, તે સમસ્ત જગતને ધારણ કરીને તેને પ્રકટ કરે છે.

જે સૂર્યની સમીપ લોક છે, તે સૂર્યના પ્રકાશથી પ્રકાશિત થાય છે. જે અનાદિરૂપ પ્રજાઓ છે, તેને પણ વાયુ ધારણ કરે છે.

તેથી, સમસ્ત લોક પોત-પોતાની પરિધિમાં અવસ્થિત રહે છે, તેમ તમે લોકો પણ ગુણોને ધારણ કરો અને પોત-પોતાની વ્યવસ્થામાં સ્થિત રહીને 'અન્યાન્ સ્થાપયત્'-અન્યને સ્થાપિત કરો (પાઠાન્તર-'ન્યાયાન્ સ્થાપયત્') ન્યાયની સ્થાપના કરો. (૫)

તિસ્ત્રો દ્યાવઃ સવિતુર્દ્વા ઉપસ્થાં એકા યમસ્ય ભુવને વિરાષાટ્ ।

આણિં ન રથ્યમ્મૃતાધિતસ્થુરિહ બ્રવીતુ ય ઉ તચ્ચિકેતત્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ રથ્યમ્-રથોના ચાલક આણિમ્-સંગ્રામને જીતનાર તથા રાજ્યના નોકરોની ન-સમાન એ સવિતુ:-સૂર્યના પ્રકાશમાં જે તિસ્ત્ર:-ત્રણ અર્થાત્ દ્યાવઃ-સૂર્ય, અગ્નિ અને વિદ્યુત્ રૂપ દીપ્તિઓ અધિ + તસ્થુ:-સ્થિત રહે છે, તેમાં દ્વૌ-બે સ્વપ્રકાશ અને ભૂગોળ સૂર્યમંડળની ઉપસ્થા-સમીપ રહે છે, અને એકા-એક વિદ્યુત્ નામક દીપ્તિ જે વિરાષાટ્-શૂરવીર, જ્ઞાનવાન, પ્રાપ્તિશીલ, જીવોનું મર્ષણ કરનારી છે, તે યમસ્ય-નિયંતા વાયુના ભુવને-અન્તરિક્ષમાં હિ-જ રહે છે અને જે અમૃતા-કારણ રૂપથી નાશ રહિત, ચન્દ્ર, તારા આદિ લોક છે, તે અન્તરિક્ષમાં અર્થાત્ સૂર્ય લોકનાં પ્રકાશથી પ્રકાશિત થઈને અધિ + તસ્થુ:-સ્થિત રહે છે. યઃ જે મનુષ્ય (ડ) વાદ-વિવાદથી અર્થાત્ વિચારપૂર્વક તેને ચિકેતત્-જાણે અને તે જ્ઞાનને (ડહ-આ સંસારમાં અથવા એ વિદ્યામાં) બ્રવીતુ-સારી રીતે ઉપદેશ કરે, તેની સમાન બનીને અમને સદ્ગુણોનો-વિદ્યાનો ઉપદેશ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે કારણરૂપ અગ્નિથી જે સૂર્ય, અગ્નિ અને વિદ્યુત્ રૂપ ત્રણ દીપ્તિઓ-જ્યોતિઓ

પ્રવચન

૧૭૯

રચેલ છે, તેના દ્વારા સર્વ કાર્યો સિદ્ધ થાય છે.

(પ્રશ્ન :) જ્યારે કોઈ પ્રશ્ન કરે, કે જે જીવ શરીરોનો ત્યાગ કરીને જે યમના સ્થાનમાં જાય છે તે (યમ) કોણ છે ?

(ઉત્તર :) તેનો એ ઉત્તર છે, કે અન્તરિક્ષમાં રહેનાર 'યમ' નામક વાયુને પ્રાપ્ત થાય છે.

જેમ યુદ્ધમાં રથના નોકર આદિ અંગ (તેની) સમીપ રહે છે, તેમ જ મૃત તથા જીવિત પ્રાણી વાયુનો આશ્રય કરીને રહે છે.

પૃથિવી, ચન્દ્રમા અને તારા આદિ લોક સૂર્યના પ્રકાશને આશ્રિત રહે છે.

જે વિદ્વાન (હોય) છે, તે જ પ્રશ્નોના ઉત્તર આપી શકે છે, અન્ય મૂર્ખ નહિ. મનુષ્યોએ અવિદ્વાન-મૂર્ખોના કથનમાં વિશ્વાસ કરવો નહિ અને આપ્તોના વચન-કથનમાં અશ્રદ્ધા કરવી નહિ. (૬)

વિ સુપર્ણો અન્તરિક્ષાણ્યચ્ચદ્ ગમ્भीરવેપા અસુરઃ સુનીથઃ ।

વવેદ્દાનીં સૂર્યઃ કશ્ચિકેત કતમાં દ્વાં રશ્મિરસ્યા તંતાન ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જેમ એ સૂર્ય જે અસુરઃ-સર્વને પ્રાણ આપનાર અર્થાત્ રાત્રિમાં સૂતેલાને સૂર્યોદય સમયે ચેતનતા આપનાર છે અથવા પ્રાણોને રમણ કરાવનાર છે ગમ્भीરવેપાઃ-જેનું કંપન ગંભીર = સૂક્ષ્મ હોવાથી અવિદ્વાનો દ્વારા ન જાણવા યોગ્ય છે સુનીથઃ-ઉત્તમ પ્રકારથી પદાર્થોથી પ્રાપ્તિ કરાવનાર છે સુપર્ણઃ-ઉત્તમ પતનશીલ કિરણોથી યુક્ત છે, અસ્ય-એ સૂર્યની રશ્મિઃ-જ્યોતિ અન્તરિક્ષાણિ-અન્તરિક્ષમાં સ્થિત સર્વ લોકોને વિ + અચ્ચત્-વિખ્યાત્ = પ્રકાશિત કરે છે; તે રશ્મિગણથી યુક્ત સૂર્ય દ્વાનીમ્-એ સમયે = રાતે ક-ક્યાં છે ? એ વાતને કઃ-કોણ ચિકેત-જાણે છે ? અને કતમામ્-અનેકોમાં કોણ દ્યામ્-પ્રકાશયુક્ત પૃથિવીને અસ્ય-એ સૂર્યના રશ્મિઃ-કિરણો આતતાન-આચ્છાદિત કરી રહ્યા છે ? એ વાતને પણ કોણ જાણે છે ? અર્થાત્ કોઈ કોઈ જે વિદ્વાન છે, તે જ જાણે છે સર્વ સાધારણ મનુષ્ય જાણતા નથી. તેથી સૂર્યની ગતિ અને સ્વરૂપ આદિને આપ જાણો. (૭)

ભાવાર્થ : જ્યારે આ ભૂગોળ ભ્રમણ કરતા સૂર્ય પ્રકાશને ઢાંકીને અંધકાર ઉત્પન્ન કરે છે, ત્યારે અજ્ઞાની લોકો પૂછે છે, કે અત્યારે સૂર્ય ક્યાં ગયો છે ? એ પ્રશ્નનું એ રીતે ઉત્તર આપીને સમાધાન કરવું, કે પૃથિવીના બીજા ભાગમાં છે. જેનું ચાલવું અતિ સૂક્ષ્મ છે, જેથી સામાન્ય મનુષ્યો દ્વારા જાણી શકાતું નથી, એજ વિદ્વાનોના અભિપ્રાયને પણ (સામાન્ય મનુષ્ય જાણી શકતા નથી.) (૭)

અષ્ટૌ વ્યંચ્યત્કકુભઃ પૃથિવ્યાસ્ત્રી ધન્વ યોજના સપ્ત સિન્ધૂન્ ।

હિરણ્યાક્ષઃ સવિતા દેવ આગાદ્ધદ્રતા દાશુષે વાર્યીણિ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ ! આપ જેમ જે હિરણ્યાક્ષઃ-સુવર્ણ સમાન જ્યોતિયુક્ત તે સવિતા-વૃષ્ટિના ઉત્પાદક દેવઃ-પ્રકાશાત્મક સૂર્યલોક પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવી સંબંધી અષ્ટૌ-આઠ કકુભઃ-દિશા અર્થાત્ ચાર

દિશાઓ અને ચાર ઉપદિશાઓને ત્રી-ત્રણ-ભૂમિ, અન્તરિક્ષ અને પ્રકાશના અર્થાત્ ઉપર, નીચે અને મધ્યમાં સ્થિત ધન્વ-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય યોજના-સર્વ પદાર્થોના આધાર ત્રણ લોકો અને સપ્ત-સાત સિન્ધૂન-ભૂમિ અને અન્તરિક્ષના ઉપર-ઉપર રહેલ સાત સાગર = જળ સમુદાયોને વ્યખ્યત્-વિખ્યાત = પ્રકાશિત કરે છે, તે દાશુષે-સર્વોપકારક વિદ્યાદિ ઉત્તમ પદાર્થ આપનાર યજમાનને માટે વાર્યાણિ-સ્વીકાર અર્થાત્ ગ્રહણ કરવા યોગ્ય રત્ના-સુવર્ણ આદિ રમણીય પદાર્થોને દધત્-ધારણ કરતા આ + અગાત્ સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તમે પણ વર્તન કરો. (૮)

ભાવાર્થ : જે એ સૂર્યલોક સર્વ મૂર્ત પદાર્થોને પ્રકાશિત અને છિન્ન-ભિન્ન કરીને, વાયુ દ્વારા અન્તરિક્ષમાં લઈ જઈને, ત્યાંથી નીચે પડીને, સર્વ રમણીય સુખોને જીવો માટે પ્રાપ્ત કરાવો છે, અને પૃથિવીના મધ્યમાં રહેલ ઓગણપચાસ ગાઉ સુધીના અન્તરિક્ષમાં સ્થૂળ, સૂક્ષ્મ, લઘુ અને ગુરુ રૂપમાં રહેલ જળોની જે સ્પતસિન્ધુ એ સંજ્ઞા છે, તે સર્વને આકર્ષણથી ધારણ કરે છે, તેમ સર્વ વિદ્વાનોએ વિદ્યા અને ધર્મ દ્વારા સમસ્ત મનુષ્યોને ધારણ કરીને, તેઓને આનંદિત કરવા જોઈએ. (૮)

હિરણ્યપાણિઃ સવિતા વિચર્ષણિરુભે દ્યાવાપૃથિવી અન્તરીયતે ।

અપામીવાં બાધતે વેતિ સૂર્યમભિકૃષ્ણેન રજસા દ્યામૃણોતિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ ! જેમ હિરણ્યપાણિઃ-જ્યોતિઓ જેના હાથ સમાન ગ્રહણ-સાધન છે; જે વિચર્ષણિઃ-પદાર્થોને છિન્ન-ભિન્ન અને સવિતા-રસોને ઉત્પન્ન કરનાર સૂર્ય છે, તે ઉભે-બન્ને દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશ-ભૂમિને અન્તઃ + ઈંચતે-અન્તરિક્ષના મધ્યમાં પહોંચાડે છે; અમીવામ્-રોગ-પીડાને અપ + બાધતે-દૂર કરે છે; સૂર્ય-સર્વ પ્રાપ્ત થનાર પોતાના કિરણ સમૂહને અભિવેતિ-સર્વત્ર ઉત્પન્ન કરે છે; કૃષ્ણેન-પ્રકાશરહિત પૃથિવી આદિ રજસા-લોક સમૂહની સાથે દ્યામ્-પ્રકાશને ઋણોતિ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ બનો. (૯)

ભાવાર્થ : હે સભાપતે ! જેમ સૂર્ય અનેક લોકોની સાથે આકર્ષણ સંબંધથી વર્તમાન રહીને તથા સમસ્ત પદાર્થોને પ્રકાશિત કરતા પ્રકાશ (= દ્યુલોક) અને પૃથિવી (લોક)ની અંદર (= મધ્યમાં) (ગતિ) કરે છે, તેમ તમારે પણ કરવું જોઈએ. (૯)

હિરણ્યહસ્તો અસુરઃ સુનીથઃ સુમૃઙ્ગીકઃ સ્વવાં યાત્વર્વાઙ્ ।

અપસેધ્વન્નક્ષસો યાતુધાનાનસ્થાદ્દેવઃ પ્રતિદોષં ગૃણાનઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતે ! આપ જેમ એ હિરણ્યહસ્તઃ-હાથોની સમાન સર્વત્ર ગતિમાન, અસુરઃ-પ્રાણ આપનાર, રૂપ અને ગુણથી રહિત, સુનીથઃ-સુંદર રીતે સર્વને પ્રાપ્ત થનાર સુમૃઙ્ગીકઃ ઉત્તમ વ્યવહારોમાં સુખયુક્ત કરનાર સ્વવાં-પ્રશસ્ત સ્પર્શ આદિ ગુણથી યુક્ત અર્વાઙ્-પોતાના નીચે, ઉપર અને તિર્યક જનાર વેગોને પ્રાપ્ત કરનાર વાયુ (યાતુ-) સર્વત્ર ચાલે છે, પ્રાપ્ત થાય છે; પ્રતિદોષમ-

પ્રત્યેક રાત્રિમાં ગૂણાન:-પોતાના ગુણોથી સ્તુતિને યોગ્ય દેવ:-સર્વ વ્યવહારોનો સાધક વાયુ દુ:ખોનું નિવારણ કરીને તથા સુખોને પ્રાપ્ત કરાવીને અસ્થાત્-સ્થિત છે, તેમ યાતુધાનાન્-યાતના-પીડાઓના આધાર દસ્યુઓ તથા રક્ષસ:-દુષ્ટ કર્મ કરનાર ચોર આદિનુ અપસેધન્-નિવારણ કરતા કરતા શ્રેષ્ઠ જનોને યાતુ-પ્રાપ્ત કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે સભાપતે ! જેમ એ વાયુ પોતાના આકર્ષણ, બળ આદિ ગુણોથી સર્વ પદાર્થોને વ્યવસ્થિત રાખે છે, અને જેમ દિવસમાં ચોર પ્રબળ બની શકતા નથી, તેમ તમે પણ બનો.

જે જગદીશ્વરે અનેક ગુણ અને સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર વાયુ આદિ પદાર્થ રચેલ છે, તેમનો સર્વ ધન્યવાદ કરો. (૧૦)

ये ते पन्थाः सवितः पूर्व्यासोऽरेणवः सुकृता अन्तरिक्षे ।

तेभिर्નો अद्य पथिभिः सुगेभी रक्षा च नो अधि च ब्रूहि देव ॥ ११ ॥

પદાર્થ : હે સવિત:-સકલ જગતના ઉત્પાદક દેવ સર્વ સુખોના દાતા જગદીશ્વર ! આપ-કૃપા કરીને યે-જે તે-આપના અરેણવ:-જેમાં કિંચિત્ પણ રજ-ધૂળના અંશોની સમાન વિઘ્નરૂપ મલ નથી તથા પૂર્વ્યાસ:-જે અમારી અપેક્ષાથી પૂર્વજોથી સાધિત અને સેવન કરેલ સૂકૃતા:-સારી રીતે નિર્મિત પન્થા:-ધર્મ-માર્ગ અન્તરિક્ષે-પોતાની વ્યાપકતા રૂપ ભ્રત્તાંડમાં છે; તેભિ:-તે સુગેભી:-સુખ પૂર્વક સેવવા યોગ્ય પથિભિ:-ધર્મ માર્ગોથી ન:-અમારી અદ્ય-આજ રક્ષ-રક્ષા કરો ચ-અને ન:-અમને સર્વ વિદ્યાઓનો અધિ + બ્રૂહિ-સર્વોપરિ ઈશ્વર ભાવથી ઉપદેશ ચ-પણ કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : હે ઈશ્વર આપે જે સૂર્ય આદિ લોકોના ભ્રમણને માટે માર્ગ અને પ્રાણીઓના સુખના માટે ધર્મ-માર્ગ, આકાશ અને પોતાના મહિમાથી રચેલ છે, તેમાં એ નિયમ અનુસાર ભ્રમણ અને વિચરણ કરે છે, તે સર્વ પદાર્થોના માર્ગો તથા ગુણોનો આપ ઉપદેશ કરો. જેથી અમે લોકો જ્યાં-ત્યાં ચલાયમાન ન થઈએ અર્થાત્ ભટકીએ નહિ. (૧૧)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સૂર્યલોક, ઈશ્વર અને વાયુના ગુણોનું પ્રતિપાદન કરવાથી ચોત્રીસમાં સૂક્તમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૩૫)

સૂક્ત-૩૬

प्र वो यंहं पुरूणां विशां देवयतीनाम् ।

अग्निं सूक्तेभिर्वचोभिरीमहे यं सीमिदन्य ईळते ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : અમે જેમ અન્યે-અન્ય પરોપકારી, બુદ્ધિમાન, ધાર્મિક વિદ્વાન સૂક્તેભિ:-જેમાં સારી રીતે વિદ્યા ગ્રહણ પ્રકાર કહેલ છે, તે વચોભિ:-વેદના અર્થ જ્ઞાનયુક્ત વચનોથી દેવયતીનામ-પોતાના માટે

દિવ્ય ભોગો અને દિવ્યગુણોની ઈચ્છા કરનારી પુસ્ત્રામ્-પુષ્કળ વ:-તમારી પ્રજાની મધ્યમાં સુખને માટે યમ્-જે યહમ્-ગુણોથી મહાન અગ્નિમ્-પરમેશ્વરની સીમ્-સર્વત્રથી ઈંડતે-સ્તુતિ કરીએ છીએ, તેમ તેની ઇત્-જ પ્ર + ઈમહે-પ્રાર્થના કરીએ છીએ અને તેના ગુણોનો પ્રકાશ કરીએ છીએ. (૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાનજનો પ્રજાના સુખની સિદ્ધિ માટે સર્વવ્યાપક પરમેશ્વરનો નિશ્ચય કરીને તથા ઉપદેશ કરીને, તેના ગુણોને યત્નપૂર્વક ખતાવે છે અને સ્તુતિ કરાવે છે, તેમ તમે અને અમે પણ (ગુણોને) પ્રકાશિત કરીએ.

જેમ ઈશ્વર અગ્નિ આદિ પદાર્થોની રચના તથા રક્ષા દ્વારા જીવોમાં સમસ્ત સુખો સ્થાપિત કરે છે, તેમ અમે પણ સર્વ પ્રાણીઓના સુખોને સિદ્ધ કરીએ, એમ જાણો. (૧)

જનાસો અગ્નિં દધિરે સહોવૃધં હવિષ્મન્તો વિધેમ તે ।

સ ત્વં નો અઘ સુમનાં હ્રિહાવિતા ભવા વાજૈષુ સન્ત્ય ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે સન્ત્ય-દાનમાં શ્રેષ્ઠ ઈશ્વર ! જેમ હવિષ્મન્ત:-ઉત્તમ આદાન-પ્રદાન યોગ્ય વસ્તુઓ વાળા જનાસ:-વિદ્યાઓમાં પ્રસિદ્ધ વિદ્વાન મનુષ્ય જે તે આપના આશ્રયને દધિરે-ધારણ કરે છે, તેમ તે સહોવૃધમ્-સહ = બળને વધારનાર અગ્નિમ્-સર્વ રક્ષક આપ ઈશ્વરનું અમે વિધેમ્-સેવન કરીએ; સ: તે સુમના:-ઉત્તમ જ્ઞાનવાન ત્વમ્-આપ અઘ-આજ ન:-અમારા હ્રિહ-આ સંસારમાં અને વાજૈષુ-યુદ્ધોમાં અવિતા-રક્ષક, જ્ઞાપક તથા સર્વ વિદ્યાઓમાં પ્રવેશક ભવ-બનો. (૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ એક માત્ર, અદ્વિતીય પરમેશ્વરની ઉપાસનાથી જ સંતુષ્ટ રહેવું જોઈએ. વિદ્વાન લોકો કદાપિ ઈશ્વરનાં સ્થાનમાં અન્ય વસ્તુને ઉપાસકનાં રૂપમાં સ્વીકાર કરતા નથી. તેથી તેનો આ સંસારના યુદ્ધોમાં પણ કદી પરાજય જોવામાં આવતો નથી. એ રીતે ઈશ્વરથી ભિન્નના ઉપાસકો તેને જીતવામાં સમર્થ બની શકતા નથી. જેનો રક્ષક ઈશ્વર છે, તેનો પરાજય કેમ સંભવી શકે ? (૨)

પ્ર ત્વાં દૂતં વૃણીમહે હોતારં વિશ્વવેદસમ્ ।

મહસ્તૈ સ્તો વિ ચરન્ત્યર્ચયો દિવિ સ્પૃશન્તિ ભાનવઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન રાજદૂત ! જેમ અમે વિશ્વવેદસમ્-સર્વ શિલ્પ-સાધનોની પ્રાપ્તિ માટે હોતારમ્-ગ્રહણ કરનાર, દૂતમ્-સર્વ પદાર્થોને તપાવનાર અગ્નિને વૃણીમહે-સ્વીકાર કરીએ છીએ, તેમ વિશ્વવેદસમ્-સર્વ પ્રજાના સમાચારને જાણનાર હોતારમ્-ગ્રહણ કરનાર દૂતમ્-આજુ-બાજુ ભ્રમણ કરીને દુષ્ટોને પીડિત કરનાર) ત્વા આપને પણ અમે ગ્રહણ કરીએ છીએ.

જેમ મહસ:-મહાન ગુણોથી યુક્ત સત:-કારણરૂપ અવિનાશી, વિદ્યમાન અગ્નિના ભાનવ:-કિરણો સર્વ પદાર્થોને સ્પૃશન્તિ-સ્પર્શ કરે છે, અને અર્ચય:-પ્રકાશરૂપ જવાળાઓ દિવિ-સૂર્યના પ્રકાશમાં વિચરન્તિ-વિચરણ કરે છે, તેમ આપના પણ સર્વ કાર્યો હોવા જોઈએ. (૩)

ભાવાર્થ : હે પોતાનાં કાર્યમાં કુશળ રાજદૂત ! જેમ સર્વ મનુષ્યો દ્વારા મહાન પ્રકાશ આદિ ગુણયુક્ત અગ્નિને, પદાર્થોની પ્રાપ્તિ અને અપ્રાપ્તિ કરાવનાર હોવાથી દૂત બનાવીને, શિલ્પકાર્યોને તથા હોમવામાં આવેલા પદાર્થોને આકાશમાં પહોંચાડવાના કાર્યને સિદ્ધ કરીને, સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકાય છે.

જેમ એ વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિની દીપ્તિઓ સર્વત્ર વર્તમાન છે, પ્રસિદ્ધ અગ્નિથી હલકી હોવાથી તથા વાયુની છેદક હોવાથી અવકાશ ઉત્પન્ન કરનાર હોવાથી પ્રસિદ્ધ (અગ્નિ)ની જ્વાળાઓ ઉપર જાય છે, તેમ તું પણ એ (કાર્ય) કરીને તેના સમાન બન. (૩)

देवासंस्त्वा वरुणो मित्रो अर्यमा सं दूतं प्रल्मिन्धते।

विश्वं सो अग्ने जयति त्वया धनं यस्ते ददाश मर्त्यः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-ધર્મ, વિદ્યા અને શ્રેષ્ઠ ગુણોથી પ્રકાશમાન સભાપતે ! ય:-જે તે-આપના દૂત:-દૂત મર્ત્ય:-મનુષ્ય ધનમ્-વિદ્યા, રાજ્ય, સુવર્ણ આદિ ધન દદાશ-આપે છે; ત્વયા-જે આપની સાથે શત્રુઓને જયતિ-જીતે છે; અને મિત્ર:-મિત્રની સમાન પ્રાણ પ્રદાન કરનાર વસ્ત્ર:-ઉત્કૃષ્ટ, અર્યમા-ન્યાયકારી, દેવાસ: સભ્ય વિદ્વાન મનુષ્ય જેને સમિન્ધતે-સારી રીતે પ્રશંસિત જાણીને સ્વીકાર ને માટે શુભ ગુણોથી પ્રકાશિત કરે છે; જે ત્વા-આપને તથા સર્વ પ્રજાને પ્રસન્ન કરે છે; સ:-તે પ્રત્નમ્-કારણરૂપથી અનાદિ વિશ્વમ્-સમ્પૂર્ણ રાજ્યની સુરક્ષા કરવા યોગ્ય છે-રક્ષા કરી શકે છે. (૪)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય; સર્વ શાસ્ત્રોમાં નિપુણ, રાજ્યધર્મના શ્રેષ્ઠ જ્ઞાતા, શ્રેષ્ઠ-અવરના જ્ઞાતા, ધાર્મિક, દંઢ, સાહસી અને વીર દૂતો વિના તથા રાજા સહિત સભાસદો વિના રાજ્યને પ્રાપ્ત કરવામાં, તેની રક્ષા કરવામાં, તેની ઉન્નતિ કરવામાં અને તેનો ઉપકાર લેવામાં કોઈ સમર્થ થઈ શકતા નથી માટે સર્વએ સદા એમ જ કરવું જોઈએ. (૪)

मन्द्रो होता गृहपतिरग्ने दूतो विशामसि।

त्वे विश्वा संगतानि व्रता ध्रुवा यानि देवा अकृण्वत ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-શરીર અને આત્માના બળથી સુશોભિત રાજન્ ! જેથી આપ મન્દ્ર:-પદાર્થોની પ્રાપ્તિ કરાવનાર હોવાથી સુખના હેતુ, હોતા-સુખોના દાતા, ગૃહપતિ:-ગૃહકાર્યોના પાલક દૂત:-પીડિત કરીને દુષ્ટ શત્રુઓને તપ્ત અને છેદન કરનાર અને વિશામ્-પ્રજાઓના પતિ:-રક્ષક અસિ-છો, તેથી સર્વ પ્રજા યાનિ-જે વિશ્વા-સર્વ ધ્રુવા-નિશ્ચલ સંગત્તાનિ-ધર્મ વ્યવહારથી સંયુક્ત વ્રતા-સત્યાચરણ આદિ કર્મોને દેવા:-ધાર્મિક વિદ્વાન લોક અકૃણ્વત-કરે છે. તેને ત્વે-આપ રાજ્યપાલક-રક્ષક હોવાથી સદા સેવન કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : ઉત્તમ રાજદૂત અને સભાસદ જ રાજ્યની રક્ષા કરી શકે છે, તેનાથી વિપરીત મનુષ્યો કરી શકતા નથી. (૫)

ત્વે ઇદંને સુભગે યવિષ્ઠ્ય વિશ્વમાહૂયતે હવિઃ ।

ત્વં નો અઘ સુમના ઉતાપરં યક્ષિ દેવાન્તસુવીર્યા ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે અવિષ્ઠ્ય-વેગથી પદાર્થોને સંયુક્ત કરનાર અથવા સંયુક્ત અત્યંત ભેદન કરનાર અગ્ને-સુખોના દાતા રાજન્ ! જેમ હોતા અગ્નૌ-અગ્નિમાં વિશ્વમ્-સર્વ હવિઃ-ઉત્તમ રીતે સંસ્કાર કરેલ પદાર્થની આહૂયતે-આહુતિ આપે છે, તેમ જે સુભગે-ઉત્તમ ઐશ્વર્યયુક્ત ત્વે-આપમાં ન્યાય કરવાનું કામ સ્થાપિત કરીએ-અધિકાર આપીએ છીએ સઃ-તે આપ સુમનાઃ-ઉત્તમ વિજ્ઞાનયુક્ત-મનયુક્ત બનીને અઘ-આજ ઉત-અને અપરમ્-કાલ = બીજા દિવસે પણ નઃ-અમને સુવીર્યા-શ્રેષ્ઠ વીર્ય-પરાક્રમયુક્ત દેવાન્-વિદ્વાનોનો ઇત્-જ યક્ષિ-સંગ કરાવો. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો અગ્નિમાં હવન કરવા યોગ્ય દ્રવ્યોની આહુતિ આપીને જગતને માટે સુખ ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ રાજપુરુષ દુષ્ટોને કારાગારમાં નાખીને ધાર્મિકોને સદા આનંદિત કરે. (૬)

તં ઘેમિત્થા નમસ્વિન્ ઉપ સ્વરાજમાસતે ।

હોત્રાભિરગ્નિં મનુષઃ સમિન્ધતે તિતિર્વાસો અતિ સ્ત્રિધઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : જે નમસ્વિન્-ઉત્તમ સત્કાર કરનાર મનુષઃ-મનુષ્ય હોત્રાભિઃ-હવનયુક્ત સત્ય ક્રિયાઓથી સ્વરાજયમ્-પોતાના રાજા અગ્નિમ્-જ્ઞાનવાન સભાધ્યક્ષની ધ-જ ઉપાસતે-ઉપાસના અને તમ્-તેને સમિન્ધન્તે-પ્રકાશિત કરે છે, તે મનુષ્ય સ્ત્રિધઃ-હિંસક, વિનાશકારી શત્રુઓને અતિ તિતિર્વાસઃ-સારી રીતે જીતનાર-પાર કરનાર હોય છે. (૭)

ભાવાર્થ : સભાધ્યક્ષના ઉપાસક સભાસદ અને નોકરો વિના કોઈપણ સ્વરાજ્ય સિદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને શત્રુઓને જીતી શકતા નથી. (૭)

ઘનતો વૃત્રમતરત્રોદસી અપ ડુરુ ક્ષયાય ચક્રિરે ।

ભુવત્કળવે વૃષા દ્યુમ્ન્યાહુતઃ ક્રન્દદશ્વો ગવિષ્ટિષુ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે રાજપુરુષો ! જેમ વિદ્યુત્ સૂર્ય અને તેના કિરણો વૃત્રમ્-મેઘનુ છેદન કરીને વર્ષા કરીને, આકાશ અને પૃથિવીને જળથી પૂર્ણ કરે છે તથા પ્રાણીઓને સંસારમાં અધિક નિવાસ માટે એ કાર્યો કરે છે, એજ રીતે શત્રુઓને ઘનતઃ-મારતા રોદસી-પ્રકાશ અને અંધકારમાં અપઃ-કર્મને કરે અને સર્વ જીવોને અતરન્-દુઃખોને પાર કરે તથા ગવિષ્ટિષુ-ગાય આદિ પશુઓના સમૂહ-ધણમાં ક્રન્દત્-હણહણતા અશ્વઃ-ઘોડાઓની સમાન આહુતઃ-રાજ્ય અધિકારમાં નિયુક્ત કરેલ સભાધ્યક્ષ વૃષા-સુખની વૃષ્ટિ કરનાર ઉક્ષયાય-ચિરકાલ સુધી નિવાસ માટે કળવે-બુદ્ધિમાનોમાં દ્યુમ્ની-પુષ્કળ ઐશ્વર્યને ધારણ કરતા સુખી ભુવત્-બને. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુત્, ભૌતિક અને સૂર્ય રૂપી અગ્નિઓ મેઘને છિન્ન-ભિન્ન કરીને તથા તેને

વરસાવીને સર્વ લોકોને જળથી પૂર્ણ કરે છે અને (તેનું) એ કાર્ય પ્રાણીઓનાં દીર્ઘકાલીન સુખ માટે હોય છે, તેમ સભાધ્યક્ષ આદિ રાજપુરુષોએ કાંટારૂપી શત્રુઓને મારીને પ્રજાઓને નિરંતર તૃપ્ત કરવી જોઈએ. (૮)

સં સીદસ્વ મહાँ असि शोचस्व देववीतमः ।

वि धूममग्ने अरुषं मिथेध्य सृज प्रशस्त दर्शतम् ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે તેજસ્વિન્-વિદ્યા અને વિનયયુક્ત મિથેદ્ય-મેધાયુક્ત અગ્ને-વિદ્વાન્ સભાપતે ! જે આપ મહાન્-મહાન ગુણોથી યુક્ત અસિ-છો, તે દેવવીતમ:-વિદ્વાનોને અત્યંત વ્યાપ્ત કરનાર બનીને ન્યાયમાં સંસીદસ્વ-સ્થિત રહો અને સર્વ દોષોનો નાશ કરો અને શોચસ્વ-પ્રકાશિત થાઓ.

હે પ્રશસ્ત-પ્રશંસનીય રાજન્ ! આપ વિધૂમમ્-ધૂમ સમાન મલથી રહિત દર્શતમ્-દર્શનીય અક્ષમ્-સુંદરરૂપથી યુક્ત સૃજ-બનો. (૯)

ભાવાર્થ : મેધાવી રાજપુરુષ અગ્નિ સમાન તેજસ્વી, મહાન ગુણોયુક્ત બનીને, દિવ્યગુણોથી યુક્ત પૃથિવી આદિ ભૂતોના તત્ત્વને જાણીને, પ્રકાશમાન થતાં, નિર્મળ દર્શનીય રૂપને ઉત્પન્ન કરે. (૯)

यं त्वा देवासो मनवे दधुरिह यजिष्ठं हव्यवाहन ।

यं कण्वो मेध्यातिथिर्धनस्पृतं यं वृषा यमुपस्तुतः ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે હવ્યવાહન-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનાર સભ્યજન ! યમ્-જે મનનશીલ યજિષ્ઠમ્-અત્યંત યજ્ઞ કરનાર ત્વા-આપને દેવાસ:-વિદ્વાન મનવે-મનન કરવા યોગ્ય રાજ્ય શાસનને માટે ઇહ-આ સંસારમાં દધુ:-ધારણ કરે છે; અને યમ્-જે શિક્ષિત ધનસ્પૃતમ્-વિદ્યા, સુવર્ણ આદિ ધનથી સેવિત ત્વા-આપને મેધ્યાતિથિ:-મેધાવી-પવિત્ર અતિથિઓથી યુક્ત અધ્યાપક કણ્વ:-મેધાવી-વિદ્વાન પુરુષ દધે-ધારણ કરે છે; અને યમ્-સુખની વર્ષા કરનાર ત્વા-આપને વૃષા-વિદ્યાની વર્ષા કરનાર મનુષ્ય દધે-ધારણ કરે છે; અને યમ્-જે સ્તુતિને યોગ્ય આપને ઉપસ્તુત:-સમીપસ્થ સજ્જનોથી સ્તુતિ કરનાર રાજપુરુષ ધારણ કરે છે, તે આપને અમે સભાપતિ રૂપમાં સ્વીકાર કરીએ છીએ-નિયુક્ત કરીએ છીએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં સર્વ મનુષ્યોએ (જાણવું જોઈએ કે) વિદ્વાન અને અન્ય શ્રેષ્ઠજન મળીને જે વિચારશીલ, ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનાર, શુભગુણોથી સંપન્ન, વિદ્યા, સુવર્ણ આદિ ધનથી યુક્ત, સભ્યજનને રાજ્ય શાસન માટે નિયુક્ત કરે; તે જ પિતા સમાન પાલન કરનાર રાજા બને. (૧૦)

यमग्निं मेध्यातिथिः कण्व ईध ऋतादधि ।

तस्य प्रेषो दीदियुस्तमिमा ऋचस्तमग्निं वर्धयामसि ॥ ११ ॥

पदार्थ : मेध्यातिथिः-पवित्र અને પૂજક શિષ્ય વર્ગ યુક્ત કण्वः-વિદ્યા અને કર્મકાંડમાં કુશળ વિદ્વાન ! ऋचाद् अधि-મેઘ મંડળનાં ઉપરથી સામર્થ્ય હોવા માટે યમ્-જે અગ્નિમ્-દાહ ગુણથી યુક્ત અને સર્વ પદાર્થોના છેદક અગ્નિને ઈધે-પ્રદીપ્ત કરે છે, તસ્ય-તે અગ્નિને ઙ્ઘઃ-ઘૃતાદિ પદાર્થોને મેઘમંડળથી પ્રાપ્ત કરાવનાર કિરણ પ્ર-અત્યંત દીદિયુઃ-પ્રદીપ્ત થાય છે; અને ઙ્ઘમાઃ-એ ઋચઃ-વેદના મંત્ર તમ્-યજ્ઞના મુખ્ય સાધન તે અગ્નિનું વર્ણન કરે છે; તમ્-તે વિદ્યુત્ નામક અગ્નિમ્-સર્વત્ર વ્યાપક અગ્નિ અમે રાજપુરુષો શિલ્પ ક્રિયાની સિદ્ધિ માટે વર્ધયामસિ-વૃદ્ધિ કરીએ છીએ. (૧૧)

ભાવાર્થ : સભાધ્યક્ષાદિ રાજપુરુષોને હોતા આદિ વિદ્વાનજન વાયુ અને વૃષ્ટિની શુદ્ધિ હેતુ હવન માટે જે અગ્નિને પ્રદીપ્ત કરે છે, જેના કિરણો ઉપર ચમકે છે, જેના ગુણ વેદ મંત્ર ગાય છે, તેના રાજ્ય વ્યવહારની સાધક શિલ્પક્રિયાની સિદ્ધિ માટે વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૧)

रायस्पूर्धिं स्वधावोऽस्ति हि तेऽग्ने देवेष्वार्यम् ।

त्वं वाजस्य श्रुत्यस्य राजसि स नो मृड महां असि ॥ १२ ॥

પદાર્થ : હે સ્વધાવઃ-ભોગવવા યોગ્ય અન્નાદિ પદાર્થોથી યુક્ત અગ્ને-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી સભાધ્યક્ષ ! હિ-જે કારણે તે-આપની દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં આર્યમ્-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય મિત્રતા અસ્તિ-છે; તેથી આપ રાયઃ-વિદ્યા, સુવર્ણ અને ચક્રવર્તી રાજ્ય આદિ ધનોને પૂર્ધિ-પૂર્ણ કરો.

જે આપ મહાન્-મહાન ગુણોથી યુક્ત અસિ-છો; અને શ્રુત્યસ્ય-શ્રવણ યોગ્ય વાજસ્ય યુદ્ધના મધ્યમાં રાજસિ-પ્રકાશિત થાઓ છો, સઃ-તે ત્વમ્-પુત્રની સમાન પ્રજાની રક્ષા કરનાર આપ નઃ-અમને મૃડ-સુખયુક્ત કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : વેદોના જ્ઞાતા અને જ્ઞાનવૃદ્ધ લોકો સાથે મિત્રતા રાખનાર સભાપતિ આદિ રાજપુરુષોએ અન્ન, ધન આદિ પદાર્થોના ભંડારોને નિરંતર પરિપૂર્ણ કરીને, પ્રસિદ્ધ દસ્યુઓની સાથે યુદ્ધ માટે સમર્થ બનીને પ્રજાને મહાન સુખ પ્રદાન કરવું જોઈએ. (૧૨)

ऊर्ध्वं ऊ षु ण ऊतये तिष्ठां देवो न संविता ।

ऊर्ध्वो वाजस्य सनिता यदञ्जिभिर्वाघद्धिर्विह्वयामहे ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતે ! આપ દેવઃ-સર્વ પ્રકાશક સવિતા-સૂર્યલોકની ન-સમાન નઃ-અમારી ઋતયે-રક્ષા આદિ માટે ઋર્ધ્વઃ-ઉંચા આસન પર સુ + તિષ્ઠ-શોભાયમાન થાઓ; ડ અને ઋર્ધ્વઃ-ઉન્નત બનીને વાજસ્ય-યુદ્ધનું સનિતા-સેવન કરનાર બનો, યત્-એટલા માટે અમે અજ્ઞિભિઃ-યજ્ઞના સાધનોને પ્રકટ કરનાર (શીઘ્ર ધનોને પ્રકટ કરનાર) વાઘદ્ધિઃ-મેઘાવી વિદ્વાનોની (સર્વ ઋતુઓમાં યજ્ઞ કરનાર વિદ્વાનોની) સાથે આપને વિહ્વાયમહે-વિવિધ પ્રકારના શબ્દો = વચનોથી આપની સ્તુતિ

કરીએ છીએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : સૂર્યની સમાન ઉત્તમ તેજસ્વી સભાપતિએ યુદ્ધ કરીને દુષ્ટ શત્રુઓનું નિવારણ કરીને, પ્રાણીઓની રક્ષા માટે, યજ્ઞ સાધક વિદ્વાનોની સાથે અતિ ઉચ્ચ આસન પર બેસવું જોઈએ. (૧૩)

ઋધ્વોં નઃ પાહ્યાંહસો નિ કેતુના વિશ્વં સમત્રિણં દહ।

કૃધી ન ઋધ્વાંઞ્ચરથાય જીવસે વિદા દેવેષુ નો દવઃ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતે ! આપ કેતુના-બુદ્ધિના દાનથી નઃ-અમારી અંહસઃ-પારકા પદાર્થના હરણરૂપ પાપથી નિ + પાહિ-સર્વથા રક્ષા કરો. વિશ્વમ્-સર્વ અત્રિણમ્-અન્યાયથી પદાર્થોને ખાનાર શત્રુભાવને સંદહ-સારી રીતે ભસ્મ કરો.

ઋધ્વઃ-સર્વથી ઉત્કૃષ્ટ આપ ચરથાય-સુખની પ્રાપ્તિ માટે નઃ-અમને ઋધ્વાન્-ઉત્કૃષ્ટ ગુણ અને સુખથી યુક્ત કૃધિ-કરો. દેવેષુ-ધાર્મિક વિદ્વાનો અથવા ઋતુઓમાં જીવસે-જીવન વૃદ્ધિને માટે દુવઃ-સેવાને વિદાઃ-પ્રાપ્ત કરાવો. (૧૪)

ભાવાર્થ : ઉત્તમ ગુણ અને સ્વભાવથી યુક્ત સભાધ્યક્ષ રાજાએ રાજ્યનિયમો અને દંડના ભયથી સર્વ મનુષ્યોને પાપથી પૃથક્ કરીને, સર્વ શત્રુઓને દગ્ધ-બાળીને તથા વિદ્વાનોની સેવા કરીને જ્ઞાનસુખ તથા જીવનની વૃદ્ધિ માટે સદા સર્વ પ્રાણીઓને ઉત્તમ ગુણોથી સંપન્ન કરવા જોઈએ. (૧૪)

પાહિ નોં અગ્ને રક્ષસઃ પાહિ ધૂર્તેરરાવ્ણઃ।

પાહિ રીષત ઉત વા જિઘાંસતો બૃહદ્ધાનો યવિષ્ઠ્ય ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે બૃહદ્ધાનો-મહાન વિદ્યાદિ ઐશ્વર્યરૂપ તેજવાળા યવિષ્ઠ્ય-અત્યંત તરુણાવસ્થાથી યુક્ત અગ્ને-સર્વના અગ્રણી, સર્વના રક્ષક સભાધ્યક્ષ મહારાજ ! આપ ધૂર્તેઃ-વિશ્વાસઘાતી (કપટી, અધર્મી) અરાવ્ણઃ-દાન ધર્મ રહિત, કૃપણ રક્ષસઃ-મહાદુષ્ટ-હિંસક મનુષ્યોથી નઃ-અમારી પાહિ-રક્ષા કરો. રિષતઃ-દુષ્ટાચારી મનુષ્ય અને હિંસક-દુઃખ આપનાર સિંહ આદિ પ્રાણીથી પાહિ-રક્ષા કરો. ઉત-અને વા-પણ જિઘાંસતઃ-મારવાની ઈચ્છા કરનાર શત્રુથી અમારી રક્ષા કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ-સર્વત્રથી રક્ષા માટે, સર્વના રક્ષક, ધર્મની ઉન્નતિની ઈચ્છાવાળા અને દયાળુ સભાધ્યક્ષને સદા પ્રાર્થના કરવી જોઈએ. સ્વયં પણ દુષ્ટ સ્વભાવવાળા મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓથી અને સર્વ પાપોથી શરીર, વાણી અને મનથી દૂર રહેવું જોઈએ. કારણ કે તેમ (આચરણ) કર્યા વિના કોઈ સદા સુખી રહી શકતો નથી. (૧૫)

ઘનેવ વિષ્વગ્વિ જહારાવ્ણસ્તપુર્જમ્ભ યો અસ્મધુક્।

યો મર્ત્યઃ શિશીતે અત્યક્તુભિર્મા નઃ સ રિપુરીશત ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે તપુર્જમ્-શત્રુઓને સંતાપ પમાડનાર તથા તેના અંગોને તોડનારા શસ્ત્રોથી યુક્ત સેનાપતે ! વિષ્વક્-સર્વથા સેનાદિબળથી યુક્ત બનીને આપ અરાવ્ગઃ-સુખદાન રહિત શત્રુઓને ઘનેવ-લાઠીથી જેમ ઘડાને ફોડવામાં આવે, તેમ વિ + જહિ-વિનાશ કરો (વિશેષ રૂપથી જીતો) યઃ-જે મર્ત્યઃ-મનુષ્ય અવતુભિઃ-રાત્રિઓથી (મૃત્યુને પ્રાપ્ત કરાવનાર શસ્ત્રોથી) અસ્મધુક્-અમારા દ્રોહી અતિશિષીતે-અતિ હિંસા કરતા હોય (અત્યંત નિર્બળ કરતા હોય) સઃ તે રિપુઃ-શત્રુ નઃ-અમને પીડિત કરવામાં મા + ઈંશત-સમર્થ ન બને. (૧૬)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિ, જેમ લોકો ઘણી લોકો અને પથ્થર આદિને તોડે છે, તેમ શત્રુઓનાં અંગોને તોડીને દિવસ-રાત ધાર્મિક પ્રજાઓનાં પાલનમાં તત્પર રહે, જેથી શત્રુ એ પ્રજાઓને દુઃખી ન કરી શકે. (૧૬)

અગ્નિર્વૈન્ને સુવીર્યમ્ગ્નિઃ કણ્વાય સૌભગમ્ ।

અગ્નિઃ પ્રાર્વન્મિત્રોત મેઘ્યાતિથિમ્ગ્નિઃ સાતા ઉપસ્તુતમ્ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાન અગ્નિ-ભૌતિક અગ્નિ સમાન સાતૌ-યુદ્ધમાં અથવા શિલ્પકર્મમાં ઉપસ્તુતમ્-પ્રાપ્ત ગુણોની સ્તુતિને યોગ્ય સુવીર્યમ્-ઉત્તમ શરીર અને આત્માના પરાક્રમ રૂપ બળને તથા અગ્નિઃ-વિદ્યુત્ની સમાન કણ્વાય-ધર્માત્મા મેઘાવી શિલ્પીને માટે સૌભગમ્-ઉત્તમ ઐશ્વર્યને વૈન્ને-ઈચ્છે છે અને જે અગ્નિઃ-પાવક (સર્વના મિત્રની) સમાન મિત્રા-મિત્રોથી પ્ર + આવત્-સારી રીતે પાલન-રક્ષા કરે છે. ઉત-અને અગ્નિઃ-જઠરાગ્નિ સમાન ઉપસ્તુતમ્-શુભગુણોથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય મેઘ્યાતિથિમ્-કારીગર વિદ્વાન સેવન કરે, તે પુરુષ રાજા બની શકે છે. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેમ એ ભૌતિક અગ્નિ વિદ્વાનો દ્વારા સારી રીતે સેવન કરેલ, તેને બળ અને પરાક્રમો તથા સૌભાગ્ય પ્રદાન કરીને, શિલ્પ વિદ્યામાં નિપુણ વિદ્વાનની તથા તેના મિત્રોની સદા રક્ષા કરે છે, તેમ પ્રજા અને સેનાના ભદ્રપુરુષો દ્વારા યાચના કરવાથી, એ સભાધ્યક્ષ રાજા તેને બળ, પરાક્રમ, ઉત્સાહ અને ઐશ્વર્યની શક્તિ પ્રદાન કરીને યુદ્ધની, વિદ્યા પ્રવીણ વિદ્વાનોની તથા તેના મિત્રોનું સર્વથા પાલન કરે. (૧૭)

અગ્નિનાં તુર્વશં યદું પરાવતં ઉગ્રાદૈવં હવામહે ।

અગ્નિર્નયન્નવવાસ્ત્વં બૃહદ્રથં તુર્વીતિં દસ્યવે સહઃ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : અને જે અગ્નિના-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી સભાધ્યક્ષ રાજાની સાથે મળીને ઉગ્રાદૈવમ્-તેજ સ્વભાવવાળાને જીતવાની ઈચ્છા કરનાર તુર્વશમ્-શીઘ્રતાથી બીજાના પદાર્થોની આકાંક્ષા કરનાર યદુમ્-બીજાના ધનની ચેષ્ટા કરનાર ડાકૂ મનુષ્યને પરાવતઃ-બીજા દેશથી હવામહે-યુદ્ધ માટે આહ્વાન કરે અને તે દસ્યવે-પોતાના વિશેષ બળથી પર પદાર્થોને હરનાર ડાકૂના સહઃ-પરાભવ કરવા યોગ્ય બળને અગ્નિઃ-અગ્રણી રાજા નવવાસ્ત્વમ્-અરણ્ય-એકાન્તમાં નવીન ઘર બનાવનાર બૃહદ્રથમ્-મોટા રમણના સાધન રથોવાળા તુર્વીતિમ્-હિંસક દુષ્ટ પુરુષોને અહીં નયત્-કારાગારમાં પહોંચાડે-રાખે. (૧૮)

ભાવાર્થ : સર્વ ધાર્મિક મનુષ્યોએ તેજસ્વી સભાધ્યક્ષ રાજાની સાથે મળીને પારકા પદાર્થો હરનાર,

કુટિલ સ્વભાવવાળા અને પોતાના વિજયને ઈચ્છનાર ડાકૂઓને વેગપૂર્વક પડકાર કરી, પર્વત તથા વન આદિમાં બનાવેલ તેના ઘરોને પાડીને તથા તેને બાંધીને કારાગારમાં રાખે. (૧૮)

નિ ત્વામગ્ને મનુર્દધે જ્યોતિર્જનાયુ શશ્વતે ।

દીદેથ કળ્વ ઋતજાત ઉક્ષિતો યં નમસ્યન્તિ કૃષ્ટયઃ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-તેજસ્વી જગદીશ્વર ! યમ્-જે સર્વ સુખોના દાતા ત્વામ્-આપને શશ્વતે-સ્વરૂપથી અનાદિ જનાય-જીવની રક્ષા માટે કૃષ્ટયઃ-મનુષ્ય નમસ્યન્તિ-પૂજે છે, અને જેને હે વિદ્વાનો ! તમે દીદેથ-પ્રકાશિત કરો છો, તે જ્યોતિઃ-જ્યોતિ સ્વરૂપ, સ્વયં પ્રકાશમાન હોવાથી જ્ઞાનના પ્રકાશક પરબ્રહ્મની ઋતજાતઃ-સત્યાચરણથી પ્રસિદ્ધ ઉક્ષિતઃ-આનંદોથી અભિષિક્ત મનુઃ-વિજ્ઞાનમય ન્યાયથી સર્વ પ્રજા પાલકમાં કળ્વે-મેઘાવી મનુષ્યમાં નિદધે-સ્થાપિત કરું છું, તેની પરબ્રહ્મ સર્વ મનુષ્યો ઉપાસના કરે. (૧૯)

ભાવાર્થ : પૂજ્ય પરમાત્માની કૃપાથી પ્રજાની રક્ષા માટે રાજ્યાધિકારમાં નિયુક્ત કરેલ મનુષ્યોને, સર્વની સાથે સત્ય વ્યવહારની પ્રસિદ્ધિઓ ધાર્મિકોને આનંદિત કરવા જોઈએ, દુષ્ટોને દંડિત કરવા જોઈએ અને બુદ્ધિમાન મનુષ્યોમાં વિદ્યાની સ્થાપના કરવી જોઈએ. (૧૯)

ત્વેષાસો અગ્નેરમવન્તો અર્ચયો ભીમાસો ન પ્રતીતયે ।

રક્ષસ્વિનઃ સદમિદ્યાતુમાર્વતો વિશ્વં સમત્રિણં દહ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે તેજસ્વી સભાપતે ! આપ અગ્નેઃ-સૂર્ય વિદ્યુત્ અને પ્રસિદ્ધ રૂપ અગ્નિની ત્વેષાસઃ-પ્રકાશસ્વરૂપ ભીમાસઃ-ભયંકર અર્ચયઃ-જવાળાઓની ન-સમાન જે અમવન્તઃ-નિંદિત રોગકારક રક્ષસ્વિનઃ-રાક્ષસ, નિંદિત પુરુષ છે, તેને, તથા અત્રિણમ્-બળથી પર પદાર્થોને હરનાર શત્રુને ઇત્-જ સંદહ-સારી રીતે ભસ્મ કરો. પ્રતીતયે-સુખ પ્રાપ્તિ અથવા જ્ઞાનને માટે વિશ્વમ્-સમસ્ત સદમ્-જગતની તથા યાતુમાર્વતઃ-આપને પ્રાપ્ત કરનાર અને મારા સમાન ધાર્મિક જનોની રક્ષા કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : સભાધ્યક્ષ આદિ રાજપુરુષોએ તથા પ્રજાજનોએ જેમ અગ્નિ આદિ રાજપુરુષોએ તથા પ્રજાજનોએ, જેમ અગ્નિ આદિ વન આદિને બાળી નાખે છે, તેમ દુષ્ટાચારી પ્રાણીઓને વિનષ્ટ કરવા જોઈએ. આ રીતે યત્ન કરતા રહીને નિરંતર પ્રજાની રક્ષા કરવી જોઈએ. (૨૦)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સર્વના રક્ષક ઈશ્વર અને દૂતના દષ્ટાન્તથી-ભૌતિક અગ્નિના ગુણોનું વર્ણન, દૂતના ગુણોનો ઉપદેશ અને અગ્નિના દષ્ટાન્તથી રાજપુરુષોના ગુણોનું વર્ણન, સભાપતિનું કાર્ય, સભાપતિરૂપ અધિકારીનો પ્રકાર, અગ્નિ આદિ પદાર્થોનો ઉપયોગ, મનુષ્યોની સભાધ્યક્ષને પ્રાર્થના, સર્વ મનુષ્યોને સભાધ્યક્ષની સહાયથી દુષ્ટોનું હનન અને રાજપુરુષોના સહાયક ઈશ્વરનું વર્ણન છે, તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૩૬)

સૂક્ત-૩૭

क्रीळं वः शर्धो मारुतमनर्वाणं रथे शुभम्। कण्वा अभि प्र गायत ॥ १ ॥

पदार्थ : હે કણ્વા:-મેઘાવી વિદ્વાન મનુષ્યો ! તમે જે વ:-આપના અનર્વાણમ્-ઘોડાઓના યોગથી રહિત રથે-વિમાન આદિ યાનોમાં ક્રીડમ્-ક્રીડાના હેતુ, ગમન-આગમન ક્રિયામાં શુભમ્-શોભનીય માસ્તમ્-પવનોના સમૂહરૂપ શર્ધ:-બળ છે; તેનું અભિ + પ્ર + ગાયત-સારી રીતે શ્રવણ કરો અને ઉપદેશ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જે પવન પ્રાણીઓની ચેષ્ટા, બળ વેગ, યાન અને મંગલ વગેરે વ્યવહારોને સિદ્ધ કરે છે, તેથી એના અનેક ગુણોની પરીક્ષા કરીને તેનાથી યથાયોગ્ય ઉપકારો ગ્રહણ કરવા જોઈએ. (૧)

ये पृषतीभिर्ऋष्टिभिः साकं वाशीभिर्ज्जिभिः। अजायन्त स्वभानवः ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન-યે-જે પૃષ્ઠીભિઃ-પદાર્થોને સિંચનારી, ઋષ્ટિભિઃ-કલાયંત્ર આદિ વ્યવહારોને પ્રાપ્ત કરાવનારી અને અજ્જિભિઃ-પદાર્થોને પ્રકટ કરાવનારી વાશીભિઃ-વાણીઓની સાકમ્-સહાયથી ક્રિયાકૌશલમાં પ્રયત્ન કરે છે, તે સ્વભાનવઃ-સ્વ ઐશ્વર્યના પ્રકાશથી પ્રકાશિત અજાયન્ત-થાય છે. (૨)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! આપ લોકોએ ઈશ્વરે રચેલી સૃષ્ટિમાં કાર્ય અને સ્વભાવને પ્રકટ કરનાર વાયુથી (જે) જળનું સિંચન, ચેષ્ટા કરવી, અગ્નિ આદિની પ્રસિદ્ધિ થવી અને વાયુથી સંબંધિત વ્યવહાર અર્થાત્ કથન, શ્રવણ, સ્પર્શ થાય છે, તેનાથી ક્રિયા, વિદ્યા અને ધર્મ આદિ શુભ ગુણોનો પ્રચાર કરવો જોઈએ. (૨)

इहेव शृण्व एषां कशा हस्तेषु यद्वदान्। नियामँश्चित्रमृज्जते ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હું યત્-જે કારણે ણમ્-એ પવનોની કશા:-રજ્જુ = દોરની સમાન, ચેષ્ટાના સાધન નિયમોને પ્રાપ્ત કરાવનારી ક્રિયા હસ્તેષુ-હાથ આદિ અંગોમાં છે, તેથી સર્વ ચેષ્ટા અને જેનાથી પ્રાણી વ્યવહાર સંબંધી વચનને વદાન્ બોલે છે, તેને ઇહેવ-જેમ આ સ્થાનમાં બેસીને સાંભળે છે, તેમ શૃણ્વે-સાંભળું છું. અને સર્વ પ્રાણી અને અપ્રાણી યામન્-સુખના હેતુ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનાર માર્ગમાં જે ચિત્રમ્-અદ્ભુત કર્મને નિ + ઋજ્જતે-નિરંતર સિદ્ધ કરે છે; તેને હું પણ કરી શકું છું. (૩)

ભાવાર્થ : જે જડ અને ચેતન પદાર્થ કાર્યો કરે છે, તેનો નિમિત્ત પવન છે. જો વાયુ ન હોય, તો કોઈ પણ કાંઈ પણ કરવા સમર્થ બની શકે નહિ. વાયુની ચેષ્ટા વિના દૂર રહેલ (પ્રાણી)ના દ્વારા ઉચ્ચારિત શબ્દો સમીપસ્થોની સમાન કોઈપણ બોલી કે સાંભળી શકે નહિ.

વીર પુરુષ યુદ્ધ આદિ કાર્યોમાં જેટલા બળ અને પરાક્રમ કરે છે, તે સર્વ વાયુના વેગથી જ થાય છે. વાયુ વિના કોઈ આંખનો પલકારો = મટકું પણ કરી શકતો નથી. તેથી પદાર્થ વિદ્યા પ્રાપ્ત કરવાની ઈચ્છાવાળા સર્વ વિદ્વાનોએ સદા તેના શુભ ગુણોનું અન્વેષણ = શોધ કરવું જોઈએ. (૩)

प्र वः शर्धीय घृष्वये त्वेषदुम्नाय शुष्मिणे। देवत्तं ब्रह्म गायत ॥ ४ ॥

अग्वेदभाष्य

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! જો એ વાયુ વ:-તમારા શર્ધાય-બળ પ્રાપ્ત કરનારા ઘૃષ્ણવ્યે-જેના માટે પરસ્પર ઘૃષ્ણ = સંયૂર્ણન = લડવું ભીડવું કરે છે, તે શુષ્મિણે-અત્યંત પ્રશસ્ત બળયુક્ત વ્યવહારવાળા ત્વેષધ્યુમ્નાય-પ્રકાશમાન યશ માટે છે, તમે લોકો તેના નિયોગથી દેવત્તમ્-ઈશ્વર દ્વારા પ્રદાન કરેલ અને વિદ્વાન અથવા અધ્યાપકથી ભણાવેલ બ્રહ્મ-વેદને પ્રયાગત-સારી રીતે ષડ્જાદિ સ્વરોથી સ્તુતિપૂર્વક ગાન કરો. (૪)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યોએ ઈશ્વરોક્ત વેદોનું અધ્યયન કરીને, વાયુના ગુણોને જાણીને, નિત્ય કીર્તિકારક તથા બળવર્ધક કર્મો કરીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખ પ્રદાન કરવું જોઈએ. (૪)

પ્ર શંસા ગોષ્વઘ્ન્યં ક્રીઠં યચ્છર્થો મારુતમ્ । જમ્ભે રસસ્ય વાવૃધે ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! તમે યત્-જે ગોષુ-પૃથિવી આદિ ભૂત, વાણી અથવા ઈન્દ્રિયો તથા ગાય આદિ પશુઓમાં ક્રીઠમ્-કીડાને નિમિત્ત અઘ્ન્યં-હનન ન કરવા યોગ્ય અથવા ઈન્દ્રિયોને હિતકારી માસ્તમ્-વાયુના વિકાર રૂપ રસસ્ય-ભોજન કરેલ અન્નાદિ પદાર્થોથી ઉત્પન્ન જમ્ભે-જેથી ગાત્રોનું સંચાલન થાય મુખમાં પ્રાપ્ત થઈને શરીરમાં સ્થિત શર્ક્રઃ-બળની વવૃધે-વૃદ્ધિ કરે છે, તેનો મારા માટે પ્ર + શંસ-નિત્ય ઉપદેશ કરો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ શરીર આદિમાં જે વાયુ સંબંધી કીડા અને બળની વૃદ્ધિ છે, તેની નિત્ય વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. જેટલું રસ આદિનું જ્ઞાન છે, તે સર્વ વાયુના સંપર્કથી જ થાય છે. તેથી સર્વેએ પરસ્પર એવું અનુશાસન (= ઉપદેશ) કરવું જોઈએ, કે જેથી સર્વને વાયુના ગુણોની વિદ્યાનું જ્ઞાન થઈ શકે. (૫)

કો વો વર્ષિષ્ટ આ નરો દિવશ્ચ ગ્મશ્ચ ધૂતયઃ । યત્સીમન્તં ન ધૂનુથ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! ધૂતયઃ-શત્રુઓને કંપાવનાર નરઃ-નીતિયુક્ત યત્-જે તમે દિવઃ પ્રકાશમાન સૂર્ય આદિ ચ-તથા ગ્મઃ-પૃથિવી ચ-અને પ્રકાશ રહિત લોકોને સીમ્-સર્વત્રથી અર્થાત્ તૃણ, વૃક્ષ આદિ અવયવો સહિત ગ્રહણ કરીને કંપાવતા પવનોની ન-સમાન શત્રુઓનો અન્તમ્-નાશ કરીને, દુષ્ટોને જ્યારે આધૂનુથ-સર્વત્રથી કંપાવો છો, ત્યારે વઃ-તમારા મધ્યમાં કઃ-કોણ વર્ષિષ્ટ-અત્યંત વૃદ્ધ-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન પ્રસિદ્ધ ન થાય. (૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન રાજપુરુષોએ જેમ કોઈ બળવાન મનુષ્ય નિર્બળના કેશ = વાળ પકડીને કંપાવે-ધ્રુજાવે છે, અને જેમ વાયુ સર્વ લોકોને ધારણ કરીને, કંપાવીને, ચલાયમાન કરીને પોત-પોતાની પરિધિમાં પ્રાપ્ત કરાવે છે, એ જ રીતે સર્વ શત્રુગણને કંપાવીને, તેના સ્થાનથી ચલાયમાન કરીને-(કાઠી મૂકીને) પ્રજાની રક્ષા કરવી જોઈએ. (૬)

ન્નિ વો યામાય માનુષો દ્ધ ડગ્રાય મ્ન્યવૈ । જિહીત પર્વિતો ગિરિઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે પ્રજા અને સેનાના મનુષ્યો ! આપ જે સેનાપતિ રાજાના ભયથી **વાયો:-**વાયુના બળથી **ગિરિ:-**જળને રોકનાર અથવા ગર્જના કરનાર **પર્વત:-**મેઘની સમાન શત્રુગણ **જિહીત-ભાગી** જાય છે, પોતાના સ્થાનથી ચલાયમાન થઈ જાય છે, તે **માનુષ:-**સભાધ્યક્ષ રાજા **વ:-**તમારો **યામાય-યથાર્થ** વ્યવહારની ચલાવવા અને **મન્યવે-ક્રોધરૂપ** **ઝગાય-તીવ્ર** દંડ આપવા માટે રાજ્ય વ્યવસ્થાને **દગ્ધે-ધારણ** કરી શકે છે એમ તમે જાણો. (૭)

ભાવાર્થ : હે પ્રજા અને સેનાના મનુષ્યો ! તમારો સર્વ વ્યવહાર, રાજ્ય વ્યવસ્થાથી જ વાયુની સમાન વ્યવસ્થિત કરવામાં આવે છે, પોતાના નિયમથી વિચલિત થયેલ તમને વાયુની સમાન સભાધ્યક્ષ-રાજા બહુજ દંડ આપે, અને જેમ વાયુથી વાદળાંઓ ચાલે છે, તેમ જેના ભયથી શત્રુ ચલાયમાન થાય, તેને પિતા તુલ્ય માનો. (૭)

येषामज्मेषु पृथिवी जुजुर्वी इव विश्पतिः । भिया यामेषु रेजते ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! **येषाम-જે** મહતામ્-મહાન પવનોથી **अज्मेषु-પહોંચાડવા** અને ફેંકવા આદિ ગુણો હોવાથી **भिया-ભયથી** **जुजुर्वानिव-વૃદ્ધાવસ્થાને** પ્રાપ્ત **विश्वपतिः-પ્રજાપાલક** રાજાની સમાન **पृथिवी-પૃથિવી** આદિ લોક-સમૂહ **यामेषु-પોતાના** ગમનરૂપ-પરિધિ માર્ગોમાં સંપ્રયોગ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ વૃદ્ધાવસ્થાને પ્રાપ્ત કોઈ રાજા રોગોથી અથવા શત્રુઓના ભયથી કાંપે છે-ધૂજે છે, તેમ પવનો દ્વારા સર્વત્રથી ધારણ કરેલ પૃથિવી લોક પોતાની પરિધિમાં પ્રતિક્ષણ ધૂમે છે અને એજ રીતે સર્વ લોક ધૂમે છે. જેમ દોરાથી બંધાયેલ તેમ વાયુથી બંધાયેલ વિના કોઈ પણ લોકની સ્થિતિ અને ભ્રમણ સંભવ નથી. (૮)

स्थिरं हि जानमेषां वयो मातुर्निरैतवे । यत्सीमनु द्विता शवः ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! **एषाम्-એ** **वायूनाम्-પવનોના** **यत्-જે** **स्थिरम्-નિશ્ચલ** **जानम्-જન્મ** સ્થાન આકાશ, **शवः-બળ** અને **द्विता-બે** શબ્દ અને સ્પર્શ ગુણોનો ભાવ છે, જેના આશ્રયથી **वयः-પક્ષી** **मातुः-અન્તરિક્ષના** મધ્યમાં **सीम्-સર્વત્રથી** **निरैतवे-નિરંતર** ગતિ કરી શકે છે તે વાયુઓને આપ **अनु-અનુક્રમથી** જાણો. (૯)

ભાવાર્થ : જે એ કાર્યરૂપ વાયુ આકાશથી ઉત્પન્ન થઈને અત્ર-તત્ર ગમન-આગમન કરે છે; જ્યાં-જ્યાં આકાશ છે, ત્યાં-ત્યાં જેનું સર્વત્ર ગમન સંભવ છે, સમસ્ત પ્રાણી જેના કારણે જીવન પ્રાપ્ત કરીને બળવાન બને છે, તેનું તમે યુક્તિથી સેવન કરો. (૯)

उदु त्वे सूनवो गिरः काष्ठा अज्मेष्वत्तत । वाश्रा अभिज्ञु यातवे ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે રાજા અને પ્રજાના મનુષ્યો ! આપ **त्वे-એ** અન્તરિક્ષમાં રહેનાર **सूनवः-પ્રાણીઓના** ગર્ભને છોડાવનાર વાયુ **अभिज्ञु-સન્મુખ** જાનુ = ગોઠણવાળી અને **वाश्राः-શબ્દ** કરતી = ભાંભરતી ગાય વાછરડા તરફ જાય છે (તેમ ગાયની સમાન) **गिरः-વાણી** અને **काष्ठाः-જળના** (**काष्ठाः =**

दिशः = दिशाओना) अज्मेषु-जवाना मार्गोमां उ-निश्चयथी आयातवे-गति माटे विस्तार करे छे, तेम सुप्नो उत् + अलत-सारी रीते विस्तार करो. (१०)

भावार्थ : राज अने प्रजजनोअे, जेम अे वायु ज वाशी अने जणने यलावीने, विस्तृत करीने, शब्दो संभणावता, गमन, आगमन, जन्म, वृद्धि अने क्षयनुं कारण छे, तेम तेना द्वारा शुभ कर्म करवा जेईअे. (१०)

त्यं चिद् घा दीर्घं पृथुं मिहो नपातममृधम् । प्र च्यावयन्ति यामभिः ॥ ११ ॥

पदार्थ : छे राजपुरुषो ! तमे जेम मिहः-वर्षाना जणने सीयनार वायु यामभिः पोताना गमन-आगमनना मार्गोथी घ-ज त्यम्-ते नपातम्-जणने न पाडनार-वरसावनार अमृधम्-भीनुं न करनार पृथुम्-विस्तीर्ण दीर्घम्-स्थूण त्यम्-ते मेधने चित्-पण प्र + च्यावयन्ति-भूमि पर वरसावे छे, तेम शत्रुओने पाडीने प्रजने आनंदित करो. (११)

भावार्थ : सर्व राजपुरुषोअे, जेम पवन ज मेधना कारणे पर्याप्त जणने उपर पडोयाडीने, परस्पर संघर्ष द्वारा विद्युत् उत्पन्न करीने, जणना अपतशील, सुभाकारी, दीर्घ अवयवयुक्त मेधने भूमि पर पाडे छे, तेम धर्म विरोधीना सर्व व्यवहारोने छोडावे. (११)

मरुतो यद्ध वो बलं जनाँ अचुच्यवीतन । गिरीरंचुच्यवीतन ॥ १२ ॥

पदार्थ : छे मस्तः-वायुनी समान वर्तमान सेनापति आदि राजपुरुषो ! तमे यत्-जे कारणे वः-तमारुं ह-प्रसिद्ध बलम्-सेना आदि बण छे, तेथी जेम वायु गिरीन्-मेधोने अचुच्यवीतन-आकाश अने भूमि पर पडोयाडे छे, तेम जनान्-प्रज-जनोने अचुच्यवीतन-पोत-पोताना व्यवहारोमां प्रेरित करो. (१२)

भावार्थ : सभाध्यक्ष अने राजपुरुषो, जेम वायु मेधने अडी-तडीं यलावे छे, तेम सर्व जनोने तेना पोतानां कार्योमां न्यायव्यवस्थाथी पुरुषार्थथी प्रेरित करो. (१२)

यद्ध यान्ति मरुतः सं हं ब्रुवतेऽध्वन्ना । शृणोति कश्चिदेषाम् ॥ १३ ॥

पदार्थ : जेम यत्-जे अे मस्तः-वायु यान्ति-गमन-आगमन करे छे, तेम अध्वन्-विद्यामार्गथी शिल्पी विद्वान ह-स्पष्ट-प्रसिद्ध रुपमां सम् + आ + ब्रुवते-मणीने सर्वत्रथी परस्पर उपदेश करे.

एषाम्-अे वायुओनी विधाने कः-कोई विद्वान चित्-ज शृणोति-सांभणे छे अने ज्ञाणे छे; (अर्थात् ग्रहण करे छे;) सर्व साधारण नछि. (१३)

भावार्थ : अे वायु विधाने कोई विद्या अने क्रियामां कुशल विद्वान मनुष्य ज ज्ञाणी शके छे; अन्य मूर्ख नछि. (१३)

प्र यात् शीभमाशुभिः सन्ति कण्वेषु वो दुवः । तत्रो षु मादयाध्वै ॥ १४ ॥

पદાર્થ : હે રાજા અને પ્રજાના મનુષ્યો ! તમે આશુભિઃ-શીઘ્ર ગમન-આગમન કરાવનાર વિમાન આદિ યાનોથી શીભમ્-શીઘ્ર વાયુની સમાન પ્રયાત્-સારી રીતે અભીષ્ટ સ્થાનને પ્રાપ્ત કરો, અને જે કણ્વેષુ-મેઘાવી-બુદ્ધિમાન જનોમાં વઃ-તમારી દુવઃ-સત્ ક્રિયા-સત્કાર ભાવ છે તત્રો-તે વિદ્વાનોમાં નિશ્ચયથી તમે સુ + માદયાધ્વૈ-સારી રીતે પ્રસન્ન થાઓ-રહો. (૧૪)

ભાવાર્થ : રાજા અને પ્રજાના સર્વ વિદ્વાનો અભીષ્ટ સ્થાનોમાં શીઘ્ર જવા માટે યાન બનાવીને પોતાના કાર્યોને નિરંતર સિદ્ધ કરે, તથા ધર્માત્માની સેવા અને દુષ્ટોના તાડનમાં સદા આનંદિત રહે. (૧૪)

अस्ति हि ष्मा मदाय वः स्मसिं ष्मा वयमेषाम् । विश्वं चिदायुर्जीवसे ॥ १५ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! ણ્ણામ્-જેની વિદ્યા જ્ઞાત છે તે પવનોથી હિ-જ સ્મ-નિશ્ચયથી વઃ-તમારા મદાય-આનંદપૂર્વક જીવસે-જીવનને માટે વિશ્વમ્-સર્વ આયુઃ-વય અસ્તિ-છે, તેમ વયમ્-આપના ઉપદેશને પ્રાપ્ત કરીને અમે ચિત્-પણ સ્મસિ, સ્મ-નિરંતર બનીએ. (૧૫)

ભાવાર્થ : જેમ યોગાભ્યાસ દ્વારા પ્રાણવિદ્યાને જાણનારા, વાયુ-વિકારોને જાણનારા તથા પથ્યનું સેવન કરનારા લોકો આનંદપૂર્વક સંપૂર્ણ આયુને ભોગવે છે, એજ રીતે અન્ય મનુષ્યોએ પણ તેઓ પાસેથી તે વિદ્યાને જાણીને સંપૂર્ણ આયુ ભોગવવી જોઈએ. (૧૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અગ્નિના પ્રકાશક, સર્વ ચેષ્ટા, બળ અને આયુને નિમિત્ત વાયુનું તથા વાયુ-વિદ્યાના જ્ઞાતા રાજા અને પ્રજાના વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૩૭)

सूक्त-3८

कद्धं नूनं कधप्रियः पिता पुत्रं न हस्तयोः । दधिध्वे वृक्तबर्हिषः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે કધપ્રિયાઃ-સત્ય કથાઓથી પ્રેરિત કરનાર વૃક્તબર્હિષઃ-ઋત્વિજ વિદ્વાનો ! આપ ન-જેમ પિતા-ઉત્પન્ન કરનાર જનક હસ્તયોઃ-હાથોમાં પુત્રમ્-પુત્રને ધારણ કરે છે, અને વાયુ લોકોને ધારણ કરે છે, તેમ કદ્ધ-ક્યારે પ્રસિદ્ધથી નૂનમ્-નિશ્ચયથી યજ્ઞ કર્મને દધિધ્વે-ધારણ કરશો ? (૧)

ભાવાર્થ : જેમ પિતા પોતાના હાથોમાં પુત્રને ગ્રહણ કરીને, શિક્ષા આપીને, પાલન કરીને, સત્કાર્યોમાં સંયુક્ત કરીને, સુખી બને છે, એજ રીતે જે મનુષ્યો-જેમ વાયુ લોકને ધારણ કરે છે, તેમ વિદ્યાથી યજ્ઞને ગ્રહણ કરીને યુક્તિથી સારી રીતે સેવન કરે છે તેઓ સુખી થાય છે. (૧)

क्व नूनं कद्धो अथु गन्ता दिवो न पृथिव्याः । क्व वो गावो न रण्यन्ति ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ન-જેમ કત્-ક્યારે નૂનમ્-નિશ્ચયથી પૃથિવ્યાઃ-(ભૂમિની) વરાળ અને

દિવઃ-પ્રકાશ કર્મ કરનાર સૂર્યના **ગાવઃ**-કિરણો અર્થમ્-પદાર્થોને ગન્ત-પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ **ક્વ-ક્યાં વઃ**-તમારા દ્રવ્યને ગન્ત પ્રાપ્ત કરો છો ? જેમ **ગાવઃ**-ગાય આદિ પશુઓ પોતાના વાછરડાં પ્રત્યે **રણ્યન્તિ**-શબ્દ કરે છે-ભાંભરે છે, તેમ તમારા ગાય આદિના શબ્દ કરવા સમાન વાયુ ક્યાં શબ્દ કરે છે ? (૨)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યનાં કિરણો પૃથિવી પર રહેલાં પદાર્થોને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ તમે પણ વિદ્વાનોની સમીપ પહોંચીને વાયુઓની નિયુક્તિ ક્યાં કરવી જોઈએ એમ તેને પૂછીને, અર્થોને પ્રકાશિત કરો.

જેમ ગાયો પોતાના વાછરડાં પ્રત્યે ભાંભરીને દોડે છે, તેમ તમે પણ વિદ્વાનોનો સંગ કરવા માટે શીઘ્ર જાઓ, જઈને બોલીને અમારી ઈન્દ્રિયો વાયુની સમાન ક્યાં સ્થિત થઈને (શબ્દ આદિ) વિષયોની તરફ પ્રવૃત્ત થાય છે ? એમ પૂછીને નિશ્ચય કરો. (૨)

ક્વ વઃ સુમ્ના નવ્યાંસિ મરુતઃ ક્વ સુવિતા । ક્વોઙ્ઞ વિશ્વાનિ સૌભગા ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે **મસ્તઃ**-વાયુની સમાન શીઘ્ર ગમનશીલ મનુષ્યો ! તમે વિદ્વાનોની સમીપ પ્રાપ્ત થઈને **વઃ**-આપના **વિશ્વાનિ**-સર્વ **નવ્યાંસિ**-નવીન **સુમ્ના**-સુખ **ક્વ-ક્યાં** અને સર્વ **સુવિતા**-પ્રેરણા કરનાર ગુણ **ક્વ-ક્યાં** અને સર્વ નવીન **સૌભગા**-સૌભાગ્ય પ્રાપ્તિ કરાવનાર કર્મ **ક્વો-ક્યાં** છે ? એમ પૂછો. (૩)

ભાવાર્થ : હે શુભ કર્મમાં વાયુની સમાન શીઘ્ર ચાલનાર મનુષ્યો ! તમે વિદ્વાનોને પૂછીને, જે રીતે ક્રિયા સિદ્ધિને કારણે નવીન કર્મ નિત્ય પ્રાપ્ત થઈ શકે, તેવા પ્રયત્નો કરવા જોઈએ. (૩)

યદ્યૂયં પૃશ્નિમાતરો મર્ત્તીસઃ સ્યાતન । સ્તોતા વો અમૃતઃ સ્યાત્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે **પૃશ્નિમાતરઃ** પૃશ્નિ = આકાશ જેની માતા છે તે વાયુઓની સમાન વર્તમાન **મર્ત્તીસઃ**-મરણ ધર્મી રાજા અને પ્રજાના મનુષ્યો ! આપ પુરુષાર્થ યુક્ત **યત્**-જે સ્વ કાર્યોમાં **સ્યાતન**-થાઓ તો **વઃ**-તમારી (**સ્તોતા**-) રક્ષા કરનાર સભાધ્યક્ષ રાજા **અમૃતઃ**-અમૃત સુખ રૂપ **સ્યાત્**-બને. (૪)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ આળસ ત્યાગીને વાયુઓની સમાન પોતાના કાર્યોમાં નિયુક્ત રહેવું જોઈએ, જેથી તેના રક્ષક સભાપતિ રાજાને શત્રુઓ મારવામાં સમર્થ ન બની શકે. (૪)

મા વો મૃગો ન યવસે જરિતા ભૂદજોષ્યઃ । પથા યમસ્ય ગાદુર્પ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે રાજા અને પ્રજાજનો ! આપ ન-જેમ **મૃગઃ**-હરણ **યવસે**-ખાવા યોગ્ય ઘાસના માટે પ્રવૃત્ત થાય છે, તેમ **વઃ**-તમારા **જરિતા**-વિદ્યાઓના દાતા **અજોષ્યઃ**-અસેવનીય અર્થાત્ પૃથક્ **મા ભૂત્**-ન થાય તથા **યમસ્ય**-નિગ્રહ કરનાર વાયુના **પથા**-માર્ગથી **મોષ ગાત્**-કદી અલ્પાયુથી મૃત્યુને પ્રાપ્ત ન થાય, તેવા કામ-ઉપાય કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ હરણ નિરંતર ઘાસ ખાઈને સુખી થાય છે, તેમ પ્રાણ વિદ્યાના જ્ઞાતા મનુષ્યો યુક્તિથી આહાર-વિહાર કરીને, યમના માર્ગ મૃત્યુને પ્રાપ્ત ન કરે. પૂર્ણ આયુ ભોગવીને શરીરનો સુખપૂર્વક ત્યાગ કરે. (૫)

મો ષુ ણઃ પરાંપરાં નિર્ઠ્ઠિતિર્દુર્હણાં વધીત્ । પદીષ્ટ તૃષ્ણયા સહ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે અધ્યાપકો ! આપ જેમ **પરાઽપરા-પરા** = ઉત્કૃષ્ટ અપરા = નિકૃષ્ટ વાયુની બે ગતિ છે. તેમાંથી **દુર્હણા-દુઃખ**થી નિવારણ કરવા યોગ્ય **નિર્ઋતિઃ**-વાયુઓની પ્રતિકૂળ, રોગકારક, દુઃખપ્રદ ગતિ **તૃષ્ણયા-તૃષા** અથવા લોભ ગતિ **સહ-સહિત નઃ**-અમે કદી **મો-ન પદીષ્ટ**-પ્રાપ્ત થઈએ, તથા **માવધીત્**-વચ્ચે ન મરીએ. પરંતુ એ વાયુઓની જે સુખદાયક ગતિ છે. તે અમને નિત્ય પ્રાપ્ત થાય, એવો પ્રયત્ન કરો. (૬)

ભાવાર્થ : પવનોની ગતિ બે પ્રકારની-એક સુખદાયી અને બીજી દુઃખદાયી છે. તેમાંથી જે ઉત્તમ નિયમોથી સેવન કરેલી રોગોનો નાશ કરીને શરીર આદિના સુખનું કારણ બને છે એ પ્રથમ (ગતિ છે); અને જે નિયમભંગપૂર્વક પ્રમાદથી ઉત્પન્ન કરેલી, ક્લેષ, દુઃખ અને રોગનાશક છે, તે બીજી (ગતિ) છે.

એ બન્ને (ગતિ)માંથી મનુષ્યોએ ઈશ્વરની કૃપાથી, વિદ્વાનોના સંગથી અને પોતાના પુરુષાર્થથી પ્રથમ ગતિને ઉત્પન્ન કરીને, બીજી ગતિનો નાશ કરીને, સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ.

જે તૃષા-તરસ આદિ (શારીરિક) ધર્મ છે, તે વાયુના કારણે તથા જે લોભનો વેગ છે, તે અજ્ઞાતથી જ ઉત્પન્ન થાય છે; એમ જાણવું જોઈએ. (૬)

સત્યં ત્વેષા અમવન્તો ધન્વજ્વિદા રુદ્રિયાસઃ । મિહં કૃણવન્ત્યવાતામ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ **ધન્વન્-અન્તરિક્ષમાં ત્વેષાઃ**-બ્રહ્મ અને આભ્યન્તર ઘર્ષણથી ઉત્પન્ન વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિથી પ્રદીપ્ત **અમવન્તઃ**-જેનો રોગો અને ગમનાગમન રૂપવાળા સાથે સંબંધ છે. **સદિયાસઃ**-પ્રાણીઓના જીવનના નિમિત્ત વાયુ **અવાતામ્**-હિંસા રહિત **મિહમ્**-સીંચનારી વૃષ્ટિને **આકૃણવન્તિ**-સારી રીતે સંપાદન કરે છે, અને એનું (વાયુઓનું) **સત્યમ્**-સત્યકર્મ છે, **ચિત્**-તેમ સત્યકર્મનું અનુષ્ઠાન કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે અન્તરિક્ષમાં રહેનાર સત્ય ગુણો અને સ્વભાવવાળો પવન વર્ષાનું કારણ છે, તે જ યુક્તિથી સેવન કરેલ અનુકૂળ બનીને સુખ પ્રદાન કરે છે, અને યુક્તિ વિરુદ્ધ સેવન કરેલ પ્રતિકૂળ બનીને દુઃખ આપે છે, તેમ મનુષ્યોએ યુક્તિપૂર્વક, ધર્માનુકૂળ કર્મોનું સેવન કરવું જોઈએ. (૭)

વાશ્રેવં વિદ્યુન્મિમાતિ વૃત્સં ન માતા સિષક્તિ । યદેષાં વૃષ્ટિરસર્જિ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ **યત્**-જે **ણામ્**-એ વાયુઓના યોગથી ઉત્પન્ન થયેલી **વિદ્યુત્**-વિદ્યુત્ **વાશ્રેવ**-જેમ ગાય પોતાના **વત્સમ્**-વાછરડાની ઈચ્છા કરતી સેવન કરે છે, તેમ **મિહમ્**-વૃષ્ટિને **મિમાતિ**-ઉત્પન્ન કરે છે, અને ઈચ્છા કરનારી **માતા**-જનની દૂધથી પુત્ર ને **સિષક્તિ**-સીંચે છે **ન**-તેમ પદાર્થોનું સેવન કરે છે **વૃષ્ટિઃ**-વર્ષાને **અસર્જિ**-કરે છે, તેમ પરસ્પર શુભ ગુણ કર્મોની વર્ષાથી સુખ કરનાર બનો. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ પોતાના વાછરડાઓને લાડ કરવાની કામનાઓવાળી ગાય રૂપી માતાઓ પોતાના

પુત્રો-વાહરડાઓ પ્રત્યે ઊંચા સ્વરથી શબ્દ કરતી દોડે છે, તેમ વિદ્યુત્ મહાન શબ્દ કરતી મેઘ ખંડોનું-વાદળાઓનું સેવન કરવા માટે દોડે છે. (૯)

દિવાં ચિત્તમઃ કૃણવન્તિ પર્જન્યેનોદવાહેનં । યત્પૃથિવીં વ્યુન્દન્તિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! આપ યત્-જે વાયુ ઉદ્વાહેન-જળને ધારણ અને પ્રાપ્ત કરાવનાર પર્જન્યેન-મેઘથી દિવા-દિવસે તમઃ-અંધકાર રૂપ રાત્રિની ચિત્-સમાન અંધકાર કૃણવન્તિ-કરે છે, પૃથિવીમ્-વિસ્તીર્ણ ભૂમિને વ્યુન્દન્તિ-મેઘના જળથી આર્દ્ર-ભીની કરે છે, તેનું યુક્તિપૂર્વક સેવન કરો. (૯)

ભાવાર્થ : વાયુ જ જળના અવયવોને કઠિન બનાવીને ઘટ્ટ આકારયુક્ત મેઘ-વાદળાંઓને (ઉત્પન્ન કરીને), દિવસે પણ અંધકાર ઉત્પન્ન કરીને, ફરી વિદ્યુત્ને ઉત્પન્ન કરીને તથા તેથી તે (વાદળાંઓ)ને છિન્ન-ભિન્ન કરીને તથા પૃથિવી પર પાડીને જળથી સર્વને તર સ્નિગ્ધ કરીને અનેક ઔષધિ સમૂહને ઉત્પન્ન કરે છે, એ રીતે વિદ્વાનજનો અન્યને ઉપદેશ કરે. (૯)

અધઃ સ્વનાન્મરુતાં વિશ્વમા સદ્વા પાર્થિવમ્ । અરેજન્ત પ્ર માનુષાઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે માનુષાઃ-મનનશીલ મનુષ્યો ! તમે જે મસ્તામ્-પવનો અને વિદ્યુત્થી સ્વનાત્-ઉત્પન્ન શબ્દના અધ-પશ્ચાત્ વિશ્વમ્-સર્વ પાર્થિવમ્-પૃથિવીમાં રહેલ સર્વ વસ્તુ સદ્મ-ધર આદિ સ્થાન કંપે છે અને પ્રાણી માત્ર પ્રારેજન્ત-સારી રીતે કંપે-ધ્રુજે છે-એમ જાણો. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે જ્યોતિષ શાસ્ત્ર જાણનાર વિદ્વાનો ! આપ, વાયુના યોગથી જ સર્વ મૂર્તિમાન પદાર્થો ચેષ્ટા કરે છે, પ્રાણી વિદ્યુત્ના ભયંકર શબ્દથી ડરીને કંપે છે અને પૃથિવી આદિ પ્રતિક્ષણ ભ્રમણ કરે છે. એમ નિશ્ચયથી જાણો. (૧૦)

મરુતો વીઠ્ઠુપાણિભિશ્ચિત્રા રોધસ્વતીરનુ । યાતેમસ્ત્રિદ્રયામભિઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે મસ્તઃ-યોગાભ્યાસી અને વ્યવહારના સાધક મનુષ્યો ! તમે અસ્ત્રિદ્રયામભિઃ-નિરંતર ગમનશીલ વીઠ્ઠુપાણિભિઃ-દૃઢ બળ રૂપ ગ્રહણના સાધક વ્યવહારવાળા પવનની સહાયથી રોધસ્વતીઃ-અનેક પ્રકારના બાંધ અને આવરણવાળી ચિત્રાઃ-અદ્ભુત ગુણવાળી નદીઓ અથવા નાડીઓને ઈમ્-અવશ્ય અનુયાત-અનુકૂળતાપૂર્વક પ્રાપ્ત કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : પવનોમાં ગમન, બળ અને વ્યવહારના હેતુવાળા કર્મો સ્વાભાવિક છે, એજ નદીઓને પ્રવાહિત કરનાર (છે) અને (એ) નાડીઓમાં ગતિ કરતા રક્ત, રસ આદિને શરીરના અવયવોને પહોંચાડે છે.

તેથી યોગીજને યોગાભ્યાસથી તથા અન્ય મનુષ્યે બળાદિ સાધનોને માટે વાયુથી મહાન ઉપકારો ગ્રહણ કરવા જોઈએ. (૧૧)

स्थिरा वः सन्तु नेमयो रथा अश्वास एषाम् । सुसंस्कृता अभीशवः ॥ १२ ॥

पदार्थ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! વ:-તમારે **एषाम्**-એ પવનોનો યોગથી **सुसंस्कृता:**-ઉત્તમ શિલ્પ વિદ્યાથી સંસ્કાર કરેલ-નિષ્પન્ન **नेमयः**-કલાયકયુક્ત **रथा:**-વિમાન આદિ રથ **अभीशवः**-માર્ગોને વ્યાપ્ત કરનાર **अश्वासः**-અગ્નિ આદિ અથવા તુરંગ = ઘોડાની સમાન **स्थिरा:**-દૃઢ બળયુક્ત **सन्तु**-બને. (૧૨)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે, કે હે મનુષ્યો ! તમે વિવિધ કલાયકયુક્ત યાનોને રચીને, તેમાં શીઘ્ર ચાલવા માટે અગ્નિ અને જળ આદિનો પ્રયોગ તથા વાયુના યોગથી સુખપૂર્વક સર્વત્ર ગમન-આગમન અને શત્રુઓને જીતવા આદિ સર્વ વ્યવહાર સિદ્ધ કરો. (૧૨)

अच्छा वदा तना गिरा जरायै ब्रह्मणस्पतिम् । अग्निं मित्रं न दर्शितम् ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે સર્વ વિદ્યાઓના જ્ઞાતા વિદ્વાન્ ! આપ ન-જેમ **ब्रह्मणः**-વેદના અધ્યાપનરૂપ ઉપદેશથી **पतिम्**-પાલક **दर्शितम्**-દર્શનીય **अग्निम्**-બ્રહ્મવર્યસ્વી-તેજસ્વી **मित्रम्**-મિત્રની ન-સમાન **जरायै**-સ્તુતિ = યથાર્થ ગુણગાનને માટે **तना**-ગુણના પ્રકાશનો વિસ્તાર કરનારી **गिरा**-પોતાની વેદયુક્ત વાણીથી વિમાન આદિ યાન વિદ્યાનો **अच्छा वद**-સારી રીતે ઉપદેશ કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન લોકો ! જેમ પ્રિય મિત્ર પોતાના પ્યારા તેજસ્વી વેદોપદેષ્ટા મિત્રને સેવા અને ગુણની પ્રશંસા દ્વારા પ્રસન્ન કરે છે, તેમ સમસ્ત વિદ્યાઓનો વિસ્તાર કરનારી વેદવાણી દ્વારા વિમાન આદિ યાન બનાવવાની વિદ્યાનો, તેના ગુણોના જ્ઞાનનો સારી રીતે ઉપદેશ કરો. (૧૩)

मिमीहि श्लोकमास्यै पर्जन्यइव ततनः । गायं गायत्रमुक्थ्यम् ॥ १४ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! આપ **आस्यै**-પોતાના મુખમાં **श्लोकम्**-વેદની શિક્ષાયુક્ત વાણીને **मिमीहि**-નિર્માણ કરો-અને તે વાણીનો **पर्जन्य इव**-જેમ મેઘ ગર્જના સાથે વર્ષા કરે છે, તેમ **ततनः**-વિસ્તાર કરો, અને **उक्थ्यम्**-ઉપદેશ કરવા યોગ્ય **गायत्रम्**-ગાયત્રી છંદવાળા સ્તોત્રરૂપ વૈદિક સૂક્તોનું **गाय**-પઠન-પાઠન કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનોથી અધ્યયન કરેલા મનુષ્યો ! તમે સર્વ પ્રકારના પ્રયત્નથી વાણીને વેદ-વિદ્યાથી સુશિક્ષિત કરીને, વાયસ્પતિ બનીને, પરમેશ્વર અને વાયુ આદિના ગુણોની સ્તુતિ, શ્રવણ અને ઉપદેશ કરો. (૧૪)

वन्दस्व मारुतं गुणं त्वेषं पनस्युमर्किणाम् । अस्मे वृद्धा असन्निह ॥ १५ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! આપ જેમ **इह**-આ સમસ્ત વ્યવહારમાં **अस्मे**-અમારા મધ્યમાં **वृद्धा:** દીર્ઘ વિદ્યા અને આયુથી યુક્ત વૃદ્ધ પુરુષ સત્ય આચરણ કરનાર **असन्**-હોય, તેમ **अर्किणाम्**-પ્રશંસનીય અર્ચનાવાળા **त्वेषम्**-અગ્નિ આદિ પ્રકાશમાન દ્રવ્યોથી યુક્ત **पनस्युम्**-પોતાના આત્માના

વ્યવહારના ઈચ્છુક માસ્તમ્-વાયુ સંબંધી ગણમ્-સમૂહની વન્દસ્વ-કામના કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે રીતે પવન કાર્યોનો સાધક હોવાથી સુખદાયી બને, એ જ રીતે મનુષ્યોએ વિદ્યા અને પુરુષાર્થપૂર્વક પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૧૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વાયુનાં દષ્ટાન્તથી વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન કરવાથી પૂર્વ સૂક્તની સાથે આ સૂક્તની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૩૮)

સૂક્ત-૩૯

પ્ર યદિત્થા પરાવતઃ શોચિર્ન માનમસ્યથ ।

કસ્ય ક્રત્વા મરુતઃ કસ્ય વર્પસા કં યાથ કં હ ધૂતયઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મસ્તઃ-વિદ્વાનો ! આપ યત્-જે ધૂતયઃ-સર્વને કંપાવનાર વાયુ શોચિર્ન-દૂરથી પડે છે, તેમ પરાવતઃ-દૂરથી કસ્ય કોના માનમ્-પરિમાણને અસ્યથ-પ્રક્ષિપ્ત-છોડી દે છે, ઇત્યા-એ હેતુથી કસ્ય-સુખ સ્વરૂપ પરમાત્માના ક્રત્વા-કર્મ અને જ્ઞાન તથા વર્પસા-રૂપ સાથે કમ્-સુખપ્રદ દેશને યાથ-પ્રાપ્ત થાય છે ? એ પ્રશ્નોના ઉત્તર આપો. (૧)

ભાવાર્થ : સુખ પ્રાપ્તિની ઈચ્છાવાળા વિદ્વાનોએ, જેમ સૂર્યના કિરણો દૂર દેશથી ભૂમિ પર પહોંચીને પદાર્થોને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ સર્વ સુખદાતા પરમાત્માની અને ભાગ્યશાળી પરમ વિદ્વાનથી વાયુના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવોને સમ્યક્ જાણીને તેમાં આનંદિત રહેવું જોઈએ. એ વાયુ કારણ માનીને કારણ સ્વરૂપથી પ્રાપ્ત થાય છે. (અર્થાત્ વાયુ પોતાના કારણમાંથી આવે છે, સ્થિર થાય છે અને તેમાં = કારણમાં વિલીન પણ થઈ જાય છે.) એમ જાણો. (૧)

સ્થિરા વઃ સન્ત્વાયુધા પરાણુદે વીલૂ ડત પ્રતિષ્કભે ।

યુષ્માકમસ્તુ તવિષી પનીયસી મા મર્ત્યસ્ય માયિનઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે ધાર્મિક મનુષ્યો ! વઃ-તમારા આયુધા-આગ્નેય આદિ અસ્ત્ર-તલવાર, ધનુષ્ય, બાણ, બંદૂક, તોપ આદિ શસ્ત્ર. પરાણુદે-શત્રુઓને પીડા કરનાર યુદ્ધ ડત અને પ્રતિષ્કભે-રોકવા, બાંધવા અને હણવા રૂપ કર્મોને માટે સ્થિરા-દેહ, ચિરસ્થાયી, વીલૂ-દેહ મહાન ઉત્તમ (બળ) યુક્ત તવિષી-પ્રશસ્ત સેના પનીયસી-અત્યંત સ્તુતિ કરવા યોગ્ય અને વ્યવહાર સિદ્ધ કરનારી અસ્તુ-હોય અને પૂર્વોક્ત પદાર્થ માયિનઃ-કપટ આદિ અધર્માચરણ યુક્ત મર્ત્યસ્ય-દુષ્ટ મનુષ્યોના મા-(તેવા દેહ શસ્ત્રાસ્ત્ર અને પ્રબળ સેના) કદી ન હોય. (૨)

ભાવાર્થ : ધાર્મિક મનુષ્યો જ ઈશ્વરની કૃપાથી વિજય પ્રાપ્ત કરે છે. ઈશ્વર પણ ધર્માત્માઓને જ આશીર્વાદ આપે છે, અન્ય પાપીઓને નહિ. એ (ધર્માત્માજનોએ) શસ્ત્ર-અસ્ત્ર બનાવીને, તેને ચલાવવાનો અભ્યાસ કરીને, ઉત્તમ સેનાને શિક્ષિત કરીને તથા દુષ્ટ શત્રુઓનો વધ, નિગ્રહ અને પરાજય કરીને, ન્યાયપૂર્વક નિત્ય પ્રજાની રક્ષા કરવી જોઈએ. એ સફળતા માયાવી = છળ, કપટ કરનાર મનુષ્યો

પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૨)

પરાં હુ યત્સ્થિરં હથ નરો વર્ત્તયથા ગુરુ ।

વિ યાથન વનિનઃ પૃથિવ્યા વ્યાશાઃ પર્વતાનામ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે નરઃ-નીતિયુક્ત મનુષ્યો ! તમે જેમ વનિનઃ-સમ્યક્ વિભાગ અને સેવન કરનાર કિરણ સંબંધી વાયુ પોતાના બળથી યત્-જે પર્વતાનામ્-પર્વત અને મેઘો પૃથિવ્યાઃ-તથા ભૂમિની વ્યાશાઃ-સમસ્ત દિશાઓમાં વ્યાસવત્ વ્યાપ્ત થઈને તે સ્થિરમ્-દૃઢ અને ગુરુ-મોટા ભારે પદાર્થોને ધારણ કરે છે અને વેગથી વૃક્ષાદિને ઉખેડીને પાડી નાખે છે, તેમ વિજય માટે શત્રુઓની સેનાઓને પરાહથ-સારી રીતે નષ્ટ કરો; અને હ-નિશ્ચયપૂર્વક એ શત્રુઓને વિવર્ત્તયથ-તોડી-ફોડી, પછાડીને પોતાની કીર્તિ દ્વારા આશાઃ-દિશાઓને વિયાથન-અનેક રીતે વ્યાપ્ત કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ વેગવાન વાયુ વૃક્ષ આદિને તોડે છે અને પૃથિવી આદિને ધારણ કરે છે, તેમ ધાર્મિક, ન્યાયાધીશ અધમયુક્ત આચરણને તોડીને ધર્મયુક્ત ન્યાયથી પ્રજાઓને ધારણ કરે.

સેનાપતિલોક વિશાળ સેના રાખીને શત્રુઓને મારીને તથા પૃથિવીમાં ચક્રવર્તી રાજ્યનું સેવન કરીને સમસ્ત દિશાઓમાં પુણ્ય કીર્તિને પ્રચારિત કરે.

જેમ સર્વને પ્રાણ પ્રિય છે, તેમ એ સેનાપતિ આદિ પોતાના વિનય અને શીલને કારણે પ્રજાઓમાં (પ્રિય) બને. (૩)

નહિ વઃ શત્રુર્વિવિદે અધિ દ્યવિ ન ભૂમ્યાં રિશાદસઃ ।

યુષ્માકમસ્તુ તવિષી તના યુજા રુદ્રાસો નૂ ચિદાધૃષે ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે રિશાદસઃ-શત્રુનાશક સ્દાસઃ-અન્યાયકારી મનુષ્યોએ રડાવનાર વીર પુરુષ ! ચિત્-જે યુષ્માકમ્-તમારા આધૃષે-પ્રગલ્ભ થનાર વ્યવહાર માટે તના-વિસ્તૃત યુજા-બળાદિ સામગ્રીયુક્ત તવિષી-સેના અસ્તુ-હોય, તો અધિદ્યવિ-ન્યાયપ્રકાશ કરવામાં વઃ-તમને શત્રુઃ-શત્રુ નુ-શીઘ્ર નહિ-નહિ વિવિદે-પણ પ્રાપ્ત થાય, ભૂમ્યામ્-ભૂમિના રાજ્યમાં પણ તમારો કોઈ મનુષ્ય વિરોધી ઉત્પન્ન ન થાય. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ પવન અજાત શત્રુ છે, (અર્થાત્ તેનો કોઈ શત્રુ નથી) તેમ મનુષ્ય વિદ્યા, ધર્મ, બળ, પરાક્રમયુક્ત ન્યાયાધીશ બનીને, સર્વ પર શાસન કરીને તથા દુષ્ટ શત્રુઓનું નિવારણ કરીને શત્રુરહિત બને. (૪)

પ્ર વૈપયન્તિ પર્વતાન્વિ વિજ્વન્તિ વનસ્પતીન્ ।

પ્રો આરત મરુતો દુર્મદાં ઇવ દેવાસઃ સર્વયા વિશા ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મસ્તઃ-વાયુ સમાન બળવાન અને પ્રિય દેવાસઃ-ન્યાયાધીશ, સેનાપતિ, સભાધ્યક્ષ

વિદ્વાનો ! આપ જેમ વાયુ વનસ્પતીન્-વડ, પીપર આદિ વનસ્પતિને પ્રવેપયન્તિ-ધૂજાવે છે-કંપાવે છે, અને જેમ પર્વતાન્-વાદળાંઓને વિચિઞ્ચન્તિ-જુદા પાડી દે છે, તેમ દુર્મદા ઇવ-મદોન્મત સમાન વર્તનાર શત્રુઓને યુદ્ધથી પ્રો આરત-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાઓ અને સર્વયા-સમસ્ત વિશા-પ્રજાઓની સાથે સુખપૂર્વક વર્તો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ રાજ્યધર્મમાં નિષ્ણાત વિદ્વાન દંડ દ્વારા, ઉન્મત ડાકુઓને વશમાં કરીને, ધાર્મિક પ્રજાનું પાલન કરે છે, તેમ તમે પણ તે (પ્રજા)નું પાલન કરો.

જેમ વાયુઓ ભૂગોળમાં સર્વત્ર વિચરે છે, તેમ આપ લોકો પણ વિચરણ કરો. (૫)

उपो रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं प्रष्टिर्वहति रोहितः ।

आ वो यामाय पृथिवी चिदश्रोदबीभयन्त मानुषाः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે માનુષા:-વિદ્વાનો ! આપ વ:-પોતાના ચામાય-સ્થાનાન્તર ગમન માટે પ્રષ્ટિ-પ્રશ્નોત્તરાદિ વિદ્યાથી વ્યવહાર જાણવા માટે રોહિત:-સુક્તગુણ યુક્ત અગ્નિ પૃથિવી-સ્થળ, જળ અને અન્તરિક્ષમાં જેને ઉપોવહતિ-સારી રીતે ચલાવે છે, જેના શબ્દોને અશ્રોત્-સાંભળીને અબીભયન્ત-ભય પામે છે, તે રથેષુ-રથોમાં પૃવતી:-વાયુઓને અયુગ્ધ્વમ્-યુક્ત કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય, યાનોમાં જળ, અગ્નિ અને વાયુઓને સંયુક્ત કરીને તથા તેમાં બેસીને ગમન-આગમન કરે, તો સર્વત્ર સુખપૂર્વક ગમન-આગમન કરી શકે છે. (૬)

आ वो मक्षू तनाय कं रुद्रा अवो वृणीमहे ।

गन्ता नूनं नोऽवसा यथा पुरेत्या कण्वाय बिभ्युषे ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે સ્દા:-દુષ્ટોને રડાવનાર યુમાલીસ વર્ષ સુધી અખંડ બ્રહ્મચર્યનું સેવન કરીને સમસ્ત વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરનાર વિદ્વાનો ! યથા-જેમ અમે વ:-આપને માટે અવસા-રક્ષા આદિથી મક્ષુ-શીઘ્ર નૂનમ્-નિશ્ચિત કમ્-સુખને વૃણીમહે-સિદ્ધ-પ્રાપ્ત કરીએ છીએ, ઇત્યા-એમ આપ પણ ન:-અમારા માટે અવ:-સુખવર્ધક રક્ષાદિ કર્મ ગન્ત-કરો.

જેમ ઈશ્વર વિભ્યુષે-દુષ્ટ પ્રાણીઓ તથા દુઃખોથી ભય પામેલ તનાય-સર્વને સદ્વિદ્યા અને ધર્મના ઉપદેશ દ્વારા સુખકારક કણ્વાય-આપ્ત વિદ્વાનોની રક્ષા કરે છે, તેમ તમે અને અમે મળીને સમસ્ત પ્રજાની રક્ષા કરીએ. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ બુદ્ધિમાન લોકો વાયુ આદિ દ્રવ્યોનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને, ભયને દૂર કરીને શીઘ્ર સુખી થાય છે, તેમ આપણે પણ કરવું જોઈએ. (૭)

युष्मेषितो मरुतो मर्त्येषित आ यो नो अभ्व ईषते ।

वि तं युयोत शवसा व्योजसा वि युष्माकाभिरूतिभिः ॥ ८ ॥

पदार्थ : હે મસ્ત:-વિદ્વાનો ! આપ ય:-જે અશ્વ:-મિત્રભાવ રહિત, વિરોધી, યુષ્મેષિત:-આપ લોકોને જીતવા અને મત્યેષિત-મનુષ્યોથી વિજયની-જીતવાની ઈચ્છા કરનારા શત્રુ ન:-અમને ઈષ્તે-મારે છે, તેને શવસા-બળયુક્ત સેના તથા વ્યોજસા-અનેક પ્રકારના પરાક્રમ, યુષ્માકાભિ-આપની કૃપા, ઋતિભિ:-રક્ષા, પ્રીતિ, તૃપ્તિ અને જ્ઞાન આદિ સેનાઓ દ્વારા વિયુયોત-વિશેષત: અમારાથી દૂર કરો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે સ્વાર્થી, પરોપકાર રહિત, અન્યોને પીડા આપવામાં સંલગ્ન શત્રુ છે, તેને વિદ્યા અને શિક્ષા દ્વારા દુષ્કર્મોથી નિવૃત્ત કરીને અથવા શ્રેષ્ઠ સેના તથા સામર્થ્ય વધારીને યુદ્ધ દ્વારા જીતીને, દૂર કરીને સર્વના સુખનો તથા હિતનો વિસ્તાર કરવો જોઈએ. (૮)

असामि हि प्रयज्यवः कण्वं दद प्रचेतसः ।

असामिभिर्मरुत आ न ऊतिभिर्गन्ता वृष्टिं न विद्युतः ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે પ્રયજ્યવ:-શ્રેષ્ઠ પરોપકારી, પ્રચેતસ:-ઉત્તમજ્ઞાનયુક્ત, મસ્ત:-વિદ્વાનો ! આપ અસામિભિ:-નાશ રહિત ઋતિભિ:-રક્ષા, સેના આદિથી ન-જેમ વિદ્યુત:-સૂર્ય અને વિદ્યુત્ આદિ વૃષ્ટિમ્-વર્ષાથી સુખ કરે છે, તેમ ન:-અમને અસામિ-અખંડ સુખ દદ-પ્રદાન કરો.

હિ-નિશ્ચયપૂર્વક દુષ્ટ શત્રુઓને જીતવા માટે કણ્વમ્-આપત વિદ્વાનોની સમીપ નિત્ય આગત્-સારી રીતે જાઓ. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુઓ, સૂર્ય અને વિદ્યુત્ (એ સર્વ) વરસાદ વરસાવીને સર્વ પ્રાણીઓના સુખને માટે વિવિધ ફળ, પત્ર, પુષ્પ આદિ ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ વિદ્વાનજનો સર્વ મનુષ્યોને વેદ વિદ્યા-પ્રદાન કરીને સુખ ઉત્પન્ન કરે. (૯)

असाम्योजो विभृथा सुदानवोऽसामि धूतयः शवः ।

ऋषिद्विषे मरुतः परिमन्यव इषुं न सृजत द्विषम् ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે ધૂતય:-દુષ્ટોને કંપાવનાર, સુદાનવ:-શ્રેષ્ઠ દાતા, મસ્ત:-વિદ્વાનો ! આપ ન-જેમ પરિમન્યવ:-અત્યંત ક્રોધ યુક્ત શૂરવીર મનુષ્ય દ્વિષમ્-શત્રુ પ્રત્યે ઇષુમ્-બાણ આદિ શસ્ત્ર સમૂહને છોડો છો, તેમ ઋષિદ્વિષે-વેદ, વેદોના જ્ઞાતા અને ઈશ્વરના વિરોધી દુષ્ટ મનુષ્યોને માટે અસામિ-સમસ્ત ઓજ:-વિદ્યા, પરાક્રમ, અસામિ-સંપૂર્ણ શવ:-બળને વિભૃથ-ધારણ કરો અને તે શત્રુઓ ઉપર શસ્ત્ર-અસ્ત્ર સૃજત-છોડો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ ધાર્મિક અને શૂરવીર મનુષ્ય ક્રોધિત થઈને, શસ્ત્રાસ્ત્રોના પ્રહારોથી શત્રુઓને જીતીને, નિષ્કંટક રાજ્ય પ્રાપ્ત કરીને, પ્રજાઓને સુખી કરે છે; તેમ સર્વ મનુષ્યોએ વેદ વિદ્યાથી, વિદ્વાનોથી અને ઈશ્વરથી દ્વેષ કરનાર, પ્રત્યે સંપૂર્ણ, બળ અને પરાક્રમથી શસ્ત્રાસ્ત્રોને ચલાવીને, તેને જીતીને,

રાજ્યને વેદવિદ્યા અને ઈશ્વરના પ્રકાશથી યુક્ત કરવા જોઈએ. (૧૦)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વાયુ અને વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન કરવાથી પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે આ સૂક્તના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૩૯)

સૂક્ત-૪૦

उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयन्तस्त्वमेहे।

उप प्र यन्तु मरुतः सुदानव इन्द्र प्राशूर्भवा सचा ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે **બ્રહ્મણસ્પતે**-વેદ જ્ઞાનના રક્ષક, **ઇન્દ્ર**-સમસ્ત વિદ્યાદિ પરમેશ્વરયુક્ત વિદ્વન્ ! જેમ **સચા**-વિજ્ઞાનથી **દેવયન્તઃ**-સત્ય વિદ્યાઓની કામના કરનાર, **સુદાનવઃ**-ઉત્તમ દાન દાતા, **મસ્તઃ**-વિદ્યાઓના સિદ્ધાન્તના પ્રચારના અભિલાષી અમે **ત્વા**-આપને **ઈમહે**-પ્રાપ્ત થઈએ. જેમ સર્વ ધાર્મિક જનો **ઉપપ્રયન્તુ**-સમીપ આવે તેમ આપ **પ્રાશૂઃ**-સમસ્ત સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર **ભવ**-થાઓ, અને સર્વના હિત માટે પ્રયત્ન કરો. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ યત્નપૂર્વક વિદ્વાનોનો સંગ તથા તેની સેવા, યોગ, ધર્મ અને સર્વોપકાર આદિ ઉપાયોથી સમસ્ત વિદ્યાઓના સ્વામી પરમેશ્વરના વિજ્ઞાનથી પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય સંપૂર્ણ સુખોને સ્વયં પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ તથા અન્યોને પ્રાપ્ત કરાવવા જોઈએ. (૧)

त्वामिद्धि सहसस्पुत्र मर्त्यं उपब्रूते धने हिते।

सुवीर्यं मरुत आ स्वश्व्यं दधीत यो व आचके ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે **સહસસ્પુત્ર**-બ્રહ્મચર્ય અને વિદ્યાદિ ગુણોથી શરીર અને આત્માના સંપૂર્ણ **સહસઃ** = બળ યુક્ત પુત્ર ! **યઃ**-જે **મર્ત્યઃ**-વિદ્વાન મનુષ્ય **ત્વામ્**-તને સર્વ વિદ્યા **ઉપબ્રૂતે**-ભણાવે છે અને હે **મસ્તઃ**-બુદ્ધિમાન જનો ! આપ જે **વઃ**-આપ લોકોને **હિતે**-કલ્યાણકારક **ધને**-સત્યવિદ્યાદિ રૂપ ધનથી **આચકે**-દીપ્ત કરે **ઇત્**-તે માટે **સ્વશ્વ્યમ્**-શ્રેષ્ઠ વિદ્યાવિષયોમાં ઉત્પન્ન **સૂવીર્યમ્**-અત્યંત ઉત્તમ પરાક્રમને તમે ધારણ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો અધ્યયન અને અધ્યાપન આદિ વ્યવહારથી જ પરસ્પર ઉપકાર કરીને સુખી બને છે. (૨)

प्रेतु ब्रह्मणस्पतिः प्र देव्येतु सूनृता।

अच्छा वीरं नर्यं पङ्क्तिराधसं देवा यज्ञं नयन्तु नः ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! **બ્રહ્મણઃ**-વેદોના **પતિઃ**-પાલન-કરનાર આપ જે **પઙ્ક્તિરાધસમ્** ધર્માત્મા અને વીર મનુષ્યો સિદ્ધકારક **અચ્છાવીરમ્**-શુદ્ધ પૂર્ણ શરીર અને આત્મ બળયુક્ત વીરોની પ્રાપ્તિ માટે **યજ્ઞમ્**-પઠન, પાઠન, શ્રવણ આદિ ક્રિયારૂપ યજ્ઞને **પ્રૈતુ**-પ્રાપ્ત કરો છો.

હે વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રી ! સૂનતા-વેદવાણીની શિક્ષા યુક્ત દેવી-સમસ્ત વિદ્યા અને સુશીલતાથી પ્રકાશમાન થઈને આપ પણ જે યજ્ઞને પ્રાપ્ત કરો છો, તે યજ્ઞને દેવા:-વિદ્વાનો ન:-અમને પણ પ્રણયન્તુ-પ્રાપ્ત કરાવે. (૩)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ એવી ઈચ્છા કરવી જોઈએ, કે જેથી વિદ્યાની વૃદ્ધિ થતી રહે. (૩)

યો વાઘતે દદાતિ સૂનરં વસુ સ ધત્તે અક્ષિત્તિ શ્રવઃ ।

તસ્મા ઇઠ્ઠાં સુવીરામા યજામહે સુપ્રતૂર્ત્તિમનેહસમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : ય:-જે મનુષ્ય વાઘતે-વિદ્વાનને માટે સૂનસ્-જેથી ઉત્તમ મનુષ્ય બને, તે વસુ-ધનને દદાતિ-પ્રદાન કરે છે, અને જે અનેહસમ્-હિંસાને અયોગ્ય સુપ્રતૂર્ત્તિમ્-ઉત્તમતાથી શીઘ્ર પ્રાપ્તિ કરાવનાર સુવીરામ્-ઉત્તમ શૂરવીર પ્રાપ્ત થાય છે, ઇઠ્ઠામ્-પૃથિવી અથવા વાણીને અમે આયજામહે-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરીએ છીએ, તેથી સ:-તે મનુષ્ય અક્ષિત્તિ-કદી ક્ષય-ક્ષીણતાને પ્રાપ્ત ન થાય શ્રવઃ-ધન અને વિદ્યાના શ્રવણને ધર્તે-ધારણ કરે છે. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય શરીર, વાણી અને મનથી વિદ્વાનોની સેવા કરે છે, તે (મનુષ્ય) જ કદી નાશ ન પામનારી વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને તથા પૃથિવીનાં રાજ્યને ભોગવીને મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે છે. જે વાણીની વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરે છે, તે વિદ્વાન અન્યોને વિદ્વાન બનાવી શકે છે, અન્ય નહિ. (૪)

પ્ર નૂનં બ્રહ્મણસ્પતિર્મન્ત્રં વદત્યુક્થ્યમ્ ।

યસ્મિન્નિન્દ્રો વરુણો મિત્રો અર્યમા દેવા ઓકાંસિ ચક્રિરે ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : બ્રહ્મણસ્પતિ:-જગતના અને વેદોના પતિ-સ્વામી ન્યાયાધીશ ઈશ્વર ! નૂનમ્-નિશ્ચયપૂર્વક ઉક્થ્યમ્-બોલવા, સાંભળવા યોગ્ય વેદ વચનોમાં સ્થિત મન્ત્રમ્-વેદ મંત્ર સમૂહનો પ્રવદતિ-ઉપદેશ કરે છે, અને યસ્મિન્-જે જગદીશ્વરે ઇન્દ્ર:-વિદ્યુત, વરુણ:-સમુદ્ર, ચન્દ્ર-તારા આદિ લોક-લોકાન્તર, મિત્ર:-પ્રાણ, અર્યમા-વાયુ, દેવા:-પૃથિવી આદિ લોક અને વિદ્વાનજનો ઓકાંસિ-સ્થાનોને ચક્રિરે-કરેલ છે, તે પરમેશ્વરનો અમે સત્કાર-(ઉપાસના) કરીએ. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઈશ્વરે વેદોનો ઉપદેશ કરેલ છે, જે સમસ્ત સંસારમાં વ્યાપ્ત થઈને રહેલ છે, જેમાં સમસ્ત પૃથિવી આદિ લોક રહેલ છે અને મુક્તિકાળમાં વિદ્વાનો તેમાં નિવાસ કરે છે, તે જ સર્વ મનુષ્યો દ્વારા ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે, તેથી ભિન્ન અન્ય કોઈ (ઉપાસના યોગ્ય) નથી. (૫)

તમિદ્વોંચેમા વિદથેષુ શમ્ભુવં મન્ત્રં દેવા અનેહસમ્ ।

ઊમાં ચ વાચં પ્રતિહર્યથા નરો વિશ્વેદ્વામા વો અશ્નવત્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે દેવા:-વિદ્વાનો ! વ:-તમારા માટે અમે વિદથેષુ-જાણવા યોગ્ય, અધ્યયન અધ્યાપન આદિ વ્યવહારોમાં જે અનેહસમ્-હિંસારહિત, સર્વદા રક્ષણીય, દોષરહિત, શમ્ભુવમ્-કલ્યાણકારક, મન્ત્રમ્-પદાર્થોનું મનન કરાવનાર મંત્ર અર્થાત્ શ્રુતિ સમૂહને વોચેમ-ઉપદેશ કરીએ, તમ્-તે વેદોને ઇત્-જ

તમે ગ્રહણ કરો. **इत्-જો इमाम्-એ वाचम्-વેદ** વાણીને **प्रतिहर्यथ-વારંવાર** જાણો, તો **विश्वा-સર્વ** **वामा-** પ્રશસ્ત વાણી **वः-તમને अश्नवत्-પ્રાપ્ત** થાય. (૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ વિદ્યાના પ્રચાર માટે સર્વ મનુષ્યો માટે સદા અંગો અને ઉપનિષદો સહિત સસ્વર હસ્તક્રિયાજ્ઞાપન-પૂર્વક અર્થસહિત વેદોનો ઉપદેશ કરવો જોઈએ.

જો કોઈ મનુષ્ય ઈચ્છે, તો સંગતિથી વેદવિદ્યાને પ્રાપ્ત કરે. તેના વિના કોઈને સાચું સુખ પ્રાપ્ત થતું નથી. તેથી અધ્યાપકો અને વિદ્યાર્થીઓએ પ્રયત્નથી સમસ્ત વેદ ગ્રહણ કરાવવા અને ગ્રહણ કરવા જોઈએ. (૬)

को देवयन्तमश्नवज्जनं को वृक्तबर्हिषम्।

प्रप्रं दाश्वान्पस्त्याभिरस्थितान्तर्वावृक्षयं दधे ॥ ७ ॥

પદાર્થ : **कः-કોણ** મનુષ્ય **देवयन्तम्-વિદ્વાનોની** કામના કરનારને, અને **कः-કોણ** **वृक्तबर्हिषम्-** સર્વ વિદ્યાઓમાં કુશળનું સર્વ ઋતુઓમાં યજ્ઞ કરનારને, **जनम्-સમસ્ત** વિદ્યાઓમાં પ્રકાશિત મનુષ્યને **अश्नवत्-પ્રાપ્ત** થાય છે ? તથા કોણ **दाश्वान्-દાનશીલ** પુરુષ **प्रास्थित-પ્રતિષ્ઠાને** પ્રાપ્ત કરે છે, કોણ **पस्त्याभिः-ઉત્તમ** ગૃહવાળી ભૂમિમાં **अन्तर्वावृत्-સર્વની** અન્તર્ગત ગતિ કરનાર વાયુથી યુક્ત **क्षयम्-** નિવાસ કરવા યોગ્ય ગૃહને **दधे-ધારણ** કરે છે ? (૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્ય વિદ્યા પ્રચારની કામના કરનાર વિદ્વાનને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. સર્વ લોકો દાનશીલ બનીને સર્વ ઋતુઓમાં સુખદાયી ગૃહ રાખી શકતા નથી. પરંતુ કોઈ વિરલ ‘ભાગ્યશાળી’ જ તેને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૭)

उप क्षत्रं पृञ्चीत हन्ति राजभिर्भये चित्सुक्षितिं दधे।

नास्य वर्त्ता न तरुता महाधने नाभे अस्ति वज्रिणः ॥ ८ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય **क्षत्रम्-રાજ્યને** **पृञ्चीत-સંબંધ** તથા **सुक्षितिम्-ઉત્તમોત્તમ** ભૂમિની પ્રાપ્તિ કરાવનાર વ્યવહારને **दधे-ધારણ** કરે છે. **अस्य-એ** સર્વ સભાધ્યક્ષ **वज्रिणः-બળવાન** **राजभिः-રજપૂતોની** સાથે **भये-યુદ્ધ** સમયના ભયમાં પોતાના મનુષ્યોને કોઈ પણ શત્રુ ન-નહિ **हन्ति-મારી** શકે, **न महाधने-** નહિ મહાધનની પ્રાપ્તિ હેતુ મહાયુદ્ધમાં **वर्त्ता-વિપરીત** વર્તનવાળા અને **न-એ** વીર્ય-બળવાળાની સમીપ **अर्भे-નાના** યુદ્ધમાં **चित्-પણ** **तस्ता-બળનું** ઉલ્લંઘન કરનાર કોઈ **अस्ति-હોય** છે. (૮)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષ મહા અથવા નાના યુદ્ધમાં શત્રુઓને જીતીને, અથવા બાંધીને તેનું નિવારણ કરીને તથા ધર્મપૂર્વક રાજ્યનું પાલન કરવામાં સમર્થ હોય છે, તે આ સંસારમાં આનંદ ભોગવીને, મૃત્યુ પછી પણ મહાન આનંદને ભોગવે છે. (૮)

સંગતિ : પૂર્વ ઓગણચાલીસમાં સૂક્તમાં પ્રતિપાદિત વિદ્વાનોના કાર્યરૂપ અર્થની સાથે આ સૂક્તના બ્રહ્મણસ્પતિ આદિ શબ્દોના અર્થોના સંબંધથી પૂર્વ સૂક્તની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૪૦)

સૂક્ત-૪૧

યં રક્ષન્તિ પ્રચેતસો વરુણો મિત્રો અર્યમા । નૂચિત્સ દ્ભ્યતે જનઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : પ્રચેતસઃ-શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનવાન વસ્ત્રઃ-ઉત્તમ ગુણ અને શ્રેષ્ઠતાથી સભાધ્યક્ષને યોગ્ય મિત્રઃ-સર્વના મિત્ર અર્યમા-પક્ષપાત રહિત ન્યાય કરવામાં સમર્થ એ સર્વ યમ્-જે મનુષ્ય, રાજ્ય તથા દેશની રક્ષન્તિ-રક્ષા કરતા હોય, સઃ ચિત્-તે પણ જનઃ-પ્રજા-સેનાસ્થ મનુષ્ય આદિનું નુ-શીઘ્ર સર્વ શત્રુઓથી કદાચ દ્ભ્યતે-(હિંસ્યતે) હનન થાય છે. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, સર્વથી ઉત્તમ મનુષ્યને સેનાધ્યક્ષ અને સભાપતિ, સર્વથી મિત્રતા રાખનારને દૂત, અધ્યાપકને ઉપદેશક અને ધાર્મિક (મનુષ્ય)ને ન્યાયાધીશ બનાવવો જોઈએ. તેનાથી રક્ષા આદિ પ્રાપ્ત કરીને સર્વ શત્રુઓને સંભાળીને સર્વનું હિત કરવું જોઈએ.

કોઈએ પણ મૃત્યુનો ભય રાખવો યોગ્ય નથી, કારણ કે જેનો જન્મ થયો છે, તેનું મૃત્યુ અવશ્ય થાય છે. તેથી મૃત્યુથી ડરવું એ મૂર્ખાઓનું કામ છે. (૧)

યં બાહુતેવ પિપ્રતિ પાન્તિ મર્ત્યં રિષઃ । અરિષ્ટઃ સર્વં ઇધતે ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જે વરુણ આદિ ધાર્મિક વિદ્વાનજન બાહુતેવ-જેમ શૂરવીર બાહુબળથી ચોર આદિનું નિવારણ કરીને દુઃખોને દૂર કરે છે, તેમ યમ્-મર્ત્યમ્-મનુષ્યને પિપ્રતિ-સુખોથી પૂર્ણ કરે છે અને રિષઃ-હિંસક શત્રુઓથી પાન્તિ-રક્ષા કરે છે. સઃ-તે સર્વઃ-સમસ્ત મનુષ્ય માત્ર અરિષ્ટઃ-સર્વ પ્રકારના વિઘ્નોથી રહિત બનીને વેદ વિદ્યા આદિ ગુણોથી (સુખ-એશ્વર્યાદિ ગુણોથી) નિત્ય ઇધતે-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ સભાધ્યક્ષ અને સેનાધ્યક્ષ આદિ રાજપુરુષો બાહુબળ અને પ્રયત્નો દ્વારા શત્રુઓ, ડાકૂઓ, ચોરો અને દરિદ્રતાનું નિવારણ કરીને, મનુષ્યોની સમ્યક્ રક્ષા કરીને, પૂર્ણ સુખોને ઉત્પન્ન કરીને, સમસ્ત વિઘ્નોને દૂર કરીને તથા સર્વ મનુષ્યોને પુરુષાર્થમાં જોડીને, બ્રહ્મચર્યનું પાલન, વિષય લોલુપતાનો ત્યાગ તથા વિદ્યા અને સુશિક્ષા દ્વારા શરીર અને આત્માની ઉન્નતિ કરે છે; તેમ પ્રજાજનોએ પણ કરવું જોઈએ. (૨)

વિ દુર્ગા વિ દ્વિષઃ પુરો ઘ્નન્તિ રાજાન ઇષામ્ । નર્યન્તિ દુરિતા તિરઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે રાજાનઃ-ઉત્તમ કર્મ અને ગુણોથી પ્રકાશમાન રાજા ઇષામ્-એ શત્રુઓના દુર્ગા-દુઃખથી જાણી શકાય એવા કિલ્લાઓ અને પુરઃ-નગરોને (વિ) ઘ્નન્તિ-ઇન્ન-ભિન્ન કરીને તથા દ્વિષઃ-શત્રુઓને (તથા દુરિતા-દુઃખોને) વિ તિરોનયન્તિ-નષ્ટ કરી નાખે છે, તે ચક્રવર્તી રાજ્યને પ્રાપ્ત કરવાને સમર્થ બને છે. (૩)

ભાવાર્થ : જે અન્યાયકારી લોકો ધર્માત્માઓને દુઃખ આપીને કિલ્લામાં છુપાય જાય છે અને ફરી આવીને દુઃખ આપે છે; તેના નાશ માટે અને શ્રેષ્ઠોના પાલન માટે, ધાર્મિક વિદ્વાન રાજપુરુષ તે અન્યાયકારીઓના કિલ્લાઓનો નાશ કરી તથા તેને ઇન્ન-ભિન્ન કરીને, યાતના આપીને, મારીને

અથવા વશમાં કરીને ધર્મપૂર્વક રાજ્યનું પાલન કરે. (૩)

સુગઃ પન્થા અનૃક્ષર આદિત્યાસ ઋતં યતે । નાત્રાવખાદો અસ્તિ વઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જ્યાં આદિત્યાસ:-સમ્યક્ સેવનથી અડતાલીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય દ્વારા શરીર અને આત્માના બળયુક્ત હોવાથી સૂર્ય સમાન પ્રકાશિત અને અવિનાશી ધર્મને જાણનાર વિદ્વાનજન રક્ષા કરનાર હોય, વા એનાથી જે અનૃક્ષર-કાંટા, ખાડા, ચોર, ડાકૂ, અવિદ્યા અને ધર્માચરણથી રહિત સરળ સુગઃ-સુખથી જાણવા યોગ્ય પન્થા:-જળ, સ્થળ અને અન્તરિક્ષમાં જવા માટે તથા વિદ્યા, ધર્મ અને ન્યાય પ્રાપ્તિના માર્ગનું સંપાદન કરેલ હોય, તે અને ઋત્નમ્-બ્રહ્મા, સત્ય અને યજ્ઞને યતે-પ્રાપ્ત થવા માટે તમે લોકોને-તમને અત્ર-એ માર્ગમાં અવખાદઃ-ભય નાસ્તિ-કદી થતો નથી. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ભૂમિ, સમુદ્ર અને અન્તરિક્ષમાં રથ, નૌકા અને વિમાનોને જવા માટે સરળ-સીધા, દૃઢ તથા કાંટા, ચોર, ડાકૂઓના ભય આદિથી રહિત માર્ગો બનાવવા જોઈએ. જ્યાં કોઈને કાંઈ પણ દુઃખ અને ભય ન થાય તે સર્વ સિદ્ધ કરીને અખંડ ચક્રવર્તી રાજ્યનો ઉપભોગ કરવો અને કરાવવો જોઈએ. (૪)

યં યજ્ઞં નયથા નર આદિત્યા ઋજુના પ્થા । પ્ર વઃ સ ધીતયે નશત્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે આદિત્યા:-સમસ્ત વિદ્યાઓથી સૂર્ય સમાન પ્રકાશમાન નર:-ન્યાયયુક્ત રાજ સભાસદો ! આપ ધીતયે-સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનારી ક્રિયાઓ માટે યમ્-જે યજ્ઞમ્-રાજધર્મયુક્ત વ્યવહારને ઋજુના-શુદ્ધ સરળ યથા-માર્ગથી નયથ-પ્રાપ્ત થાઓ છો. સઃ-તે વઃ-તમને પ્રણશત્ નષ્ટ કરનાર બનતા નથી. (૫)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં પૂર્વ મંત્રથી ન-પદની અનુવૃત્તિ છે. જ્યાં વિદ્વાનજન સભાપતિ, સેનાપતિ, સભાસદ અને કર્મચારી બનીને વિજય પ્રાપ્ત કરે છે, (વિનયં કુર્વન્તિ-પાઠાન્તરથી વિનયપૂર્વક ન્યાય કરે છે.), ત્યાં કદી પણ સુખનો નાશ થતો નથી. (૫)

સ રત્નં મર્ત્યો વસુ વિશ્વં તોકમુત ત્મના । અચ્છા ગચ્છત્યસ્તૃતઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જે અસ્તૃતઃ-હિંસા રહિત મર્ત્યઃ-મનુષ્ય છે, સઃ-તે ત્મના-આત્મા, મન અને પ્રાણથી વિશ્વમ્-સર્વ રત્નમ્-મનુષ્યોના મનને રમણ કરનાર વસુ-સર્વોત્કૃષ્ટ દ્રવ્ય ઉત્ત-અને તોકમ્-સર્વ ઉત્તમ ગુણોથી યુક્ત પુત્રો-સંતાનોને અચ્છ ગચ્છતિ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરે છે.

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્ય દ્વારા સમ્યક્ રક્ષા કરેલ મનુષ્ય આદિ પ્રાણી સમસ્ત ઉત્તમ પદાર્થોને તથા સંતાનોને પ્રાપ્ત કરે છે. તેના વિના કોઈની પણ વૃદ્ધિ થતી નથી. (૬)

કથા રાધામ સખાયઃ સ્તોમં મિત્રસ્યાર્યમ્ણઃ । મહિ પ્સરો વરુણસ્ય ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : અમે સખાયઃ-સર્વના મિત્ર બનીને મિત્રસ્ય-સર્વના મિત્ર અર્યમ્ણઃ-ન્યાયાધીશ અને વસુણસ્ય-
૨૦૮

સર્વોત્તમ અધ્યક્ષના મહિ-મહાન સ્તોતમ્-ગુણ સ્તુતિ-સમૂહને કથા-કેવી રીતે રાધામ-સિદ્ધ કરીએ. કેવી રીતે અમને પ્સર:-સુખોનો ભોગ પ્રાપ્ત થાય. (૭)

ભાવાર્થ : જ્યારે કોઈ કોઈને પૂછે કે અમે કેવી રીતે મિત્રતા, ન્યાય અને ઉત્તમ વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરી શકીએ, તો તે તેને આ રીતે કહે, કે પરસ્પર વિદ્યાદાન અને પરોપકારીથી જ એ બધું પ્રાપ્ત કરી શકાય છે. તે સિવાય કોઈ પણ મનુષ્ય કોઈ સુખને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. (૭)

મા વો ઘ્નન્તં મા શર્પન્તં પ્રતિ વોચે દેવ્યન્તમ્ । સુમૈરિદ્ધ આ વિવાસે ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હું વ:-મિત્રરૂપ તમને ઘ્નન્તમ્-મારનાર જનથી માપ્રતિવોચે-સંભાષણ પણ ન કરુ-વ:-તમને શર્પન્તમ્-વ્યર્થ નિંદા વચન કહેનાર મનુષ્યથી પ્રિય મા-ન બોલું, પરંતુ સુમૈ:-સુખોથી સહિત તમારા સુખદાતા ઇત્-જ દેવ્યન્તમ્-દિવ્યગુણોની કામનાઓની આવિવાસે-સમ્યક્ સેવા સદા કરું. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, પોતાના મિત્રના શત્રુ પર અને તે શત્રુના મિત્ર પર પણ પ્રેમ કરવો નહિ. મિત્રની સદા રક્ષા કરવી જોઈએ. વિદ્વાનોની અને વિદ્વાનોના મિત્રોની પ્રિયવચન, ધન, ભોજન, વસ્ત્ર અને યાન-વાહન આદિથી નિત્ય સેવા કરવી જોઈએ. મિત્રહીન મનુષ્ય સુખની વૃદ્ધિ કરી શકતો નથી. તેથી વિદ્વાન જનો ધાર્મિકોને મિત્ર બનાવે. (૮)

ચતુરશ્ચિદ્દમાનાદ્વિભીયાદા નિધાતોઃ । ન દુસ્ક્તાય સ્પૃહયેત્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : ચતુર:-(૧) મારનાર, (૨) શાપ આપનાર અને દદમાનાત્-(૩) વિષાદિ આપનાર તથા નિધાતો:-(૪) અન્યાયથી પરદ્રવ્ય હરનાર એ ચાર પ્રકારના મનુષ્યોનો વિશ્વાસ કરવો નહિ ચિત્-અને એનાથી વિભીયાત્-નિત્ય ડરવું તથા દુસ્ક્તાય-(૫) દુષ્ટ વચન બોલનાર મનુષ્યને માટે ન સ્પૃહયેત્ એ પાંચેયને મિત્ર બનાવવાની કદી ઈચ્છા કરવી નહિ. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ દુષ્ટ કર્મ કરનારનો તથા દુષ્ટ વચન બોલનારાનો સંગ અને વિશ્વાસ કદી પણ કરવો નહિ. મિત્રનો દ્રોહ, તેનું અપમાન અને વિશ્વાસઘાત કદી પણ કરવા નહિ. (૯)

સંગતિ : આ સૂત્રમાં પ્રજાની રક્ષા, શત્રુ પર વિજય, માર્ગનું શોધન, યાનોની રચના અને તેને ચલાવવા, દ્રવ્યોની ઉન્નતિ કરવી, શ્રેષ્ઠોની મિત્રતા, દુષ્ટોમાં અવિશ્વાસ અને અધર્માચરણથી નિત્ય ડરવું. આ રીતે કથનથી પૂર્વ-સૂક્તના અર્થની સાથે આ સૂક્તની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૪૧)

સૂક્ત-૪૨

સં પૂષન્નધ્વનસ્તિર્ વ્યંહૌ વિમુચો નપાત્ । સક્ષ્વા દેવ પ્ર ણસ્પુરઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે પૂષન્-સમસ્ત જગતના પોષક, નપાત્-નાશ રહિત, દેવ:-દિવ્યગુણ સંપન્ન વિદ્વાન્ ! દુઃખના અધ્વન:-માર્ગથી વિત્તિર-પાર થઈને અમને પણ પાર કરો, અંહ:-રોગ રૂપી દુઃખોના માર્ગને

વિમુચ્ચ:-દૂર કરો, **પુર:-**પ્રથમ **ન:-**અમને **પ્રસક્ષ્વ-સવોત્કૃષ્ટ** ગુણોમાં પ્રસક્ત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જેમ ઈશ્વરની ઉપાસનાથી અને તેની આજ્ઞાના પાલનથી સમસ્ત દુઃખોને પાર કરીને સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ; તેમ ધાર્મિક, સર્વના મિત્ર અને પરોપકારી વિદ્વાનના સંગ અને ઉપદેશ દ્વારા અવિદ્યા જાળ રૂપી માર્ગને પાર કરીને વિદ્યા રૂપી સૂર્યની પ્રાપ્તિ કરવી જોઈએ. (૧)

યો નઃ પૂષન્નઘો વૃકો દુઃશેવ આદિદેશતિ । અપ્ સ્મ તં પ્થો જહિ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે **પૂષન્**-સર્વ જગતને વિદ્યાથી પુષ્ટ કરનાર વિદ્વાન્ ! આપ **યઃ**-જે **અઘઃ**-પાપ કરનાર, **દુશેવઃ**-દુઃખમાં શયન કરવાને યોગ્ય **વૃકઃ**-સ્તેન અર્થાત્ દુઃખ દેનાર ચોર **નઃ**-અમને **આદિદેશતિ**-ઉદ્દેશપૂર્વક પીડા આપે છે, **તમ્**-તે દુષ્ટ સ્વભાવવાળાને **પથઃ**-રાજધર્મ અને પ્રજામાર્ગથી **અપજહિ**-નષ્ટ કરો અને દૂર કરો. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ શિક્ષા, વિદ્યા અને સેનાના બળથી પારકું ધન હરનારા ધૂર્તો અને ચોરોને સર્વ રીતે હણવા-મારવા જોઈએ, દૂર ફેંકવા જોઈએ અને નિરંતર બંદીવાન રાખવા જોઈએ. એમ કરીને રાજધર્મ અને પ્રજાના માર્ગોને નિઃશંક અને નિર્ભય બનાવવા જોઈએ. જેમ પરમેશ્વર દુષ્ટોને તેઓના કર્મ અનુસાર શિક્ષા કરે છે, તેમ અમારે પણ દુષ્ટોને શિક્ષા, દંડ અને વેદ દ્વારા સજજન બનાવવા જોઈએ. (૨)

અપ્ ત્યં પરિપ્ચિનં મુષીવાણં હુરશ્ચિતમ્ । દૂરમધિં સ્તુતેરંજ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ રાજન્ ! આપ **ત્યમ્**-તે **પરિપ્ચિનમ્**-પ્રતિકૂળ ચાલનાર ડાકૂ **મુષીવાણમ્**-ચોર કર્મથી દીવાલને તોડીને, દૃષ્ટિનું આચ્છાદન કરીને, બીજાઓના પદાર્થોને હરનાર, **હુરશ્ચિતમ્**-ઉત્કોચક અર્થાત્ હાથથી બીજાઓના પદાર્થોને ગ્રહણ કરનાર, અનેક પ્રકારના ચોરોને **સ્તુતેઃ**-રાજધર્મ અને પ્રજામાર્ગથી **દૂરમ્**-અધ્યપાજ-તેને દંડ અને શિક્ષા આપીને દૂર કરો. (૩)

ભાવાર્થ : કોઈ ડાકૂ, કોઈ કપટપૂર્વક અપહરણ કરનાર, કોઈ મૂર્છિત કરીને પારકા પદાર્થો લેનાર, કોઈ ઉત્કોચક = લાંચ લેનાર, કોઈ રાતે સુરંગ લગાડીને જે પારકા પદાર્થો હરણ કરે છે, કોઈ વિભિન્ન વેપારની દુકાનોમાં બેસીને છળપૂર્વક પદાર્થોને હરે છે, કોઈ (અન્યાયપૂર્વક) શુલ્ક-ધન લેનાર, કોઈ કર્મચારી બનીને સ્વામીના પદાર્થોને હરે છે, કોઈ છળ-કપટ દ્વારા પારકા રાજ્યોને પોતાના બનાવી લે છે, કોઈ ધર્મોપદેશ (રૂપના ઢોંગથી) મનુષ્યોને ભરમાવીને તથા ગુરુ બનીને શિષ્યોના પદાર્થો હરણ કરે છે, કોઈ પ્રાડવિવાહ = વકીલ બનીને (મનુષ્યો-અસીલોને) લડાવીને-વિવાદમાં ફસાવીને તેના પદાર્થોને હરે છે અને કોઈ ન્યાયાસને બેસીને (અનુચિત) ધન આદિ લઈને અથવા મિત્ર ભાવથી અન્યાય કરે છે વગેરે (જેટલા છે) તે સર્વને ચોર જાણવા જોઈએ. તેઓનું સર્વ ઉપાયોથી નિવારણ કરીને મનુષ્યોએ ધર્મપૂર્વક રાજ્યશાસન કરવું જોઈએ. (૩)

त्वं तस्य द्वाविनोऽघशंसस्य कस्य चित् । पदाभि तिष्ठ तपुषिम् ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે સેના અને સભાના અધ્યક્ષ ! ત્વમ્-આપ તસ્ય-તે દ્વાવિન:-પ્રત્યક્ષ અને અપ્રત્યક્ષ અન્યોના પદાર્થોને હરનારા કસ્યચિત્-કોઈ અઘશંસસ્ય-, તપુસિમ્-ચોરોની સેનાને પદાભિતિષ્ઠ-બળ દ્વારા વશીભૂત કરો. (૪)

ભાવાર્થ : ન્યાયાધીશ આદિ મનુષ્યોએ, કોઈ અપરાધી અથવા ચોરને દંડ આપ્યા વિના છોડવો નહિ. કારણ કે તેમ ન કરવાથી પ્રજા પીડિત થતી રહેશે. તેથી પ્રજાની રક્ષા માટે દુષ્ટ કર્મ કરનાર પિતા, આચાર્ય, માતા, પુત્ર અને મિત્રને પણ સદા અપરાધ અનુસાર દંડ આપવો જોઈએ. (૪)

આ તત્તે દસ્ર મન્તુમઃ પૂષન્નવો વૃણીમહે । येन पितृनचोदयः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે દસ્ર-દુષ્ટોના નાશક, મન્તુમઃ-પ્રશસ્તજ્ઞાન યુક્ત પૂષન્-સર્વથા પુષ્ટિકારક વિદ્વાન્ ! આપ યેન-જે રક્ષા આદિથી પિતૃન્-વયોવૃદ્ધ અને જ્ઞાનથી વૃદ્ધોને અચોદયઃ-ધર્મમાં પ્રેરણા કરો તત્-તે તે-આપના અવઃ-રક્ષાદિને અમે આવૃણીમહે-સર્વથા સ્વીકાર કરીએ. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જેમ પ્રેમ અને અનુરાગથી સેવા દ્વારા માતા-પિતા અને અધ્યાપક આદિ વયોવૃદ્ધ તથા જ્ઞાનવૃદ્ધ જનોને પ્રસન્ન અર્થાત્ તૃપ્ત કરે, તેમ સમસ્ત પ્રજાઓના સુખને માટે દુષ્ટોને દંડિત કરીને શ્રેષ્ઠોને સુખી કરે. (૫)

अथा नो विश्वसौभगु हिरण्यवाशीमत्तम । धनानि सुषणा कृधि ॥ ६ ॥

પદાર્થ : વિશ્વસૌભગ-સમસ્ત ઐશ્વર્યથી યુક્ત હિરણ્યવાશીમત્તમ-અત્યંત સત્યની પ્રકાશક, ઉત્તમ રીતિ અને સુશિક્ષિત વાણીયુક્ત સભાધ્યક્ષ ! આપ નઃ-અમને સુષણા-સુખથી સેવન કરવા યોગ્ય ધનાનિ-વિદ્યારૂપી ધર્મ અને ચક્રવર્તી રાજ્યની શ્રી-લક્ષ્મીથી સિદ્ધ કરેલ ધનને પ્રાપ્ત કરાવીને અઘ-પશ્ચાત્ અમને સુખી કૃધિ-કરો. (૬)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરના અનંત સૌભાગ્ય અને ધાર્મિક સભાપતિ, સેનાપતિ અને ન્યાયાધીશના ચક્રવર્તી સુલભ સુખેશ્વર્યથી યુક્ત હોવાથી એ બન્નેનો આશ્રય કરીને મનુષ્યોએ અસંખ્ય વિદ્યા અને સુવર્ણ આદિ ધન પ્રાપ્ત કરીને અત્યંત સુખોનો ભોગ કરવો અને કરાવવો જોઈએ. (૬)

अति नः सृष्टतो नय सुगा नः सुपथा कृणु । पूर्षन्निह क्रतुं विदः ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે પૂષન્-સર્વના પોષક જગદીશ્વર અને પ્રજાના પોષક સભાધ્યક્ષ વિદ્વાન્ ! આપ ઇહ-આ સંસાર અને જન્મમાં સશ્રતઃ-વિજ્ઞાન યુક્ત વિદ્યાધર્મને પ્રાપ્ત કરેલ નઃ-અમને સુગા-સુખપૂર્વક ગમન-જવાને યોગ્ય સુપથા-ઉત્તમ વિદ્યા ધર્મયુક્ત આપ્ત = વિદ્વાનોના માર્ગથી અતિનય-અત્યંત પ્રયત્નથી ચલાવો અને અમને ઉત્તમ વિદ્યાદિ ધર્મ માર્ગથી ક્રતુમ્-ઉત્તમ કર્મ અને ઉત્તમ પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિથી વિદઃ-જ્ઞાતા કરો. (૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ જગદીશ્વરને એવી રીતે પ્રાર્થના કરવી જોઈએ, કે હે જગદીશ્વર ! આપ કૃપા કરીને અમને અધર્મ માર્ગથી દૂર કરીને ધર્મ માર્ગમાં નિત્ય ચલાવો. વિદ્વાનથી પણ પૂછવું જોઈએ અને નિવેદન કરવું જોઈએ, કે આપ અમને વેદ વિદ્યાના શુદ્ધ અને સરળ માર્ગે ચલાવો. (૭)

અભિ સૂયવસં નય ન નવજ્વારો અધ્વને । પૂષન્નિહ ક્રતું વિદઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે પૂષન્-સભાધ્યક્ષ ! આ સંસાર અને જન્માન્તરમાં અધ્વને-શ્રેષ્ઠ માર્ગ માટે અમને સૂયવસમ્-ઉત્તમ જવ આદિ ઔષધિ ઉત્પન્ન થનાર દેશને અભિનય-સર્વ રીતે પ્રાપ્ત કરાવો; અને ક્રતુમ્-ઉત્તમ કર્મ અને પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિને વિદઃ-કરાવો, જેથી એ માર્ગમાં ચાલીને અમારામાં નવજ્વારઃ-નવા-નવા સંતાપ ન-ઉત્પન્ન થાય નહિ. (૮)

ભાવાર્થ : હે પરમેશ્વર ! આપની કૃપાથી શ્રેષ્ઠ દેશ અને ગુણ અમને પ્રદાન કરો તથા સમસ્ત દુઃખોને દૂર કરીને સુખ પ્રાપ્ત કરાવો.

હે વિદ્વાન સભાપતિ ! આપ અમને વિનયપૂર્વક પાલન કરીને તથા વિદ્યાથી શિક્ષિત કરીને એ રાજ્યમાં સુખી કરો. (૮)

શ્વઘ્નિ પૂર્ધિ પ્ર ચંસિ ચ શિશીહિ પ્રાસ્યુદરમ્ । પૂષન્નિહ ક્રતું વિદઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે પૂષન્-હે સભાપતિ અને સેનાપતિ ! આપ અમને શ્વઘ્નિ-સુખ આપવાને સમર્થ છો, પૂર્ધિ-સર્વ સુખોની પૂર્તિ કરો, પ્રચંસિ-દુષ્ટ કર્મોથી પૃથક્ રાખો, શિશીહિ-સુખપૂર્વક શયન કરાવો અને દુષ્ટોનું છેદન કરો, પ્રાસિ-સર્વ સેના અને પ્રજાના અંગોને પૂર્ણ કરો અને અમારા ઉદરમ્-ઉદર-પેટને ઉત્તમ અન્નોથી પૂર્ણ કરો, ઙ્હ-એ પ્રજાના સુખને પૂર્ણ કરો તથા ક્રતુમ્-યુદ્ધ વિદ્યાને વિદઃ-પ્રાપ્ત કરો. (૯)

ભાવાર્થ : સભાપતિ રાજા અને સેનાધ્યક્ષ વિના કોઈ પણ આ સંસારમાં સામર્થ્ય પ્રદાતા, સુખી કરનાર, પુરુષાર્થ પ્રદાતા, ચોર-દસ્યુ આદિના ભયના નિવારણ કર્તા, સર્વોત્તમ ભોગોના દાતા અને ન્યાય તથા વિદ્યાના પ્રકાશક નથી. તેથી સર્વેએ તે બન્નેનો આશ્રય કરવો જોઈએ. (૯)

ન પૂષણં મેથામસિ સૂક્તૈરભિ ગૃણીમસિ । વસૂનિ દુસ્મમીમહે ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે સૂક્તૈઃ-વેદોક્ત સ્તોત્રોથી પૂષણમ્-સભાધ્યક્ષ અને સેનાધ્યક્ષની અભિગૃણીમસિ-ગુણ અને જ્ઞાન પૂર્વક સ્તુતિ કરીએ છીએ, દુસ્મમ્-શત્રુને મેથામસિ-મારે છે-હણે છે, વસૂનિ-ઉત્તમ વસ્તુઓની ઈમહે-યાચના કરીએ છીએ અને પરસ્પર દ્વેષ કદાપિ ન-કરતા નથી, તેમ તમે પણ કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : કોઈએ પણ મૂર્ખતાથી સભાપતિ અને સેનાપતિનો આશ્રય ત્યાગ કરીને શત્રુ પાસે યાચના કરવી નહિ. પરંતુ વેદો દ્વારા રાજનીતિ જાણીને, તે (બન્ને)ની સુસહાયથી શત્રુને મારીને, વિજ્ઞાન અને સુવર્ણ આદિ ધન પ્રાપ્ત કરીને તથા સુપાત્રોને દાન આપીને વિદ્યાનો વિસ્તાર કરવો જોઈએ. (૧૦)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં 'પૂષન' શબ્દનું વર્ણન, શક્તિની વૃદ્ધિ, દુષ્ટ શત્રુઓનું નિવારણ, સંપૂર્ણ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ, સુમાર્ગમાં ચાલવું, બુદ્ધિ અને કર્મની વૃદ્ધિ કહેલ છે, એથી આ સૂક્તના અર્થની સંગતિ પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે જાણવી જોઈએ. (૪૨)

સૂક્ત-૪૩

કદ્ રુદ્રાય પ્રચેતસે મીઢુષ્ટમાય તવ્યસે । વોચેમ્ શન્તમં હૃદે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : અમે **કત્-ક્યારે પ્રચેતસે-શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનયુક્ત મીઢુષ્ટમાય-અત્યંતસેવન કરવા યોગ્ય અને તવ્યસે-અત્યંત વૃદ્ધ હૃદે-હૃદયમાં રહેનાર સ્વાયે-પરમેશ્વર, જીવ અને પ્રાણવાયુને માટે શન્તમમ્-અત્યંત સુખ રૂપ વેદનો વોચેમ-સારી રીતે ઉપદેશ કરે. (૧)**

ભાવાર્થ : 'સ્દ્' શબ્દથી ત્રણ અર્થ ગ્રહણ કરવામાં આવે છે. (૧) પરમેશ્વર, (૨) જીવ અને (૩) વાયુ. તેમાં એક પરમેશ્વર સર્વજ્ઞ હોવાના કારણે જેને જેવા પાપ કર્મો કર્યા હોય, તેને તેનું ફળ આપનાર હોવાથી રુદ્ર = રડાવનાર છે, બીજો જીવ જ્યારે મૃત્યુ સમયે શરીર ત્યાગ કરે છે અને જ્યારે પાપનું ફળ ભોગવે છે, ત્યારે સ્વયં રડે છે. ત્રીજો વાયુ (ઉદર) શૂલ આદિ પીડા કર્મથી કર્મ નિમિત્ત બનીને રડાવે છે, એ રીતે એ ત્રણેય રુદ્ર છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૧)

યથા નો અદિતિઃ કરત્પશ્ચે નૃભ્યો યથા ગવે । યથા તોકાય રુદ્રિયમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : **યથા-જેમ તોકાય-ઉત્પન્ન થયેલ = સદ્યોજાત-બાળકને માટે અદિતિઃ-માતા, યથા-જેમ પશ્ચે-પશુ સમૂહના માટે પશુપાલક, યથા-જેમ નૃભ્યઃ-મનુષ્યોને માટે રાજા, યથા-જેમ ગવે-ઈન્દ્રિયોને માટે જીવ અને પૃથિવીને માટે ખેતી કરનાર-ખેડૂત કરત્-સુખોને કરે છે, તેમ નઃ-અમારા માટે સદ્રિયમ્-પરમેશ્વર અને પવનના (સુખ) કર્મ પ્રાપ્ત થાય. (૨)**

ભાવાર્થ : જેમ માતા-પિતા વિના સંતાનોને, ગોવાળ વિના પશુઓને તથા રાજસભા વિના પ્રજાઓને સુખ પ્રાપ્ત થતું નથી, તેમ વિદ્યા અને પુરુષાર્થ વિના (કોઈને) સુખ પ્રાપ્ત થતું નથી. (૨)

યથા નો મિત્રો વરુણો યથા રુદ્રશ્ચિકેતતિ । યથા વિશ્વે સજોષસઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : **યથા-જેમ મિત્રઃ-મિત્ર અને પ્રાણ વસ્તુઃ-ઉત્તમ ઉપદેષ્ટા અને ઉદ્દાન, યથા-જેમ સ્દઃ-પરમેશ્વર નઃ-અમને ચિકેતતિ-જ્ઞાનયુક્ત કરે છે; યથા-જેમ વિશ્વે-સર્વ સજોષસઃ-સ્વસમાન પ્રીતિ સેવન કરનાર વિદ્વાનજનો વિદ્યાઓને જાણનારા હોય છે, તેમ યથાર્થ વક્તા મનુષ્ય સર્વને વિદ્યાયુક્ત કરે. (૩)**

ભાવાર્થ : જેમ સર્વને (તેમ) વિદ્વાનોને પણ મિત્રતા અને શ્રેષ્ઠ આચરણ ધારણ કરીને, સર્વ મનુષ્યોને માટે સત્ય વિદ્યાઓનો ઉપદેશ કરવો જોઈએ.

જેમ પરમેશ્વરે વેદ દ્વારા સમસ્ત વિદ્યાઓને પ્રકાશિત કરેલ છે, તેમ અધ્યાપકોએ સર્વ મનુષ્યોને વિદ્યાયુક્ત કરવા જોઈએ. (૩)

गाथपतिं मेधपतिं रुद्रं जलाषभेषजम् । तच्छ्रयोः सुम्नमीमहे ॥ ४ ॥

पदार्थ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે ગાથપતિમ્-સ્તુતિ કરનારના પાલક, મેધ-પતિમ્-યજ્ઞ અને પવિત્ર પુરુષોનાં પાલક, જલાષભષેજમ્-જેના સુખને માટે ભેષજ = ઔષધ હોય, તે સ્દમ્-પરમેશ્વરનો આશ્રય કરીને, તત્-તે વિજ્ઞાન અને શ્રંયોઃ-વ્યાવહારિક, સાંસારિક સુખથી પણ સુમ્નમ્-મોક્ષના સુખની ર્મમહે-યાચના કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૪)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય, સ્તુતિઓ, ધારણાવતી બુદ્ધિઓ અને દુઃખ નિવારક ઔષધિઓને પ્રાપ્ત કરાવનાર વિદ્વાન વિના તથા પ્રાણાયામ વિના વિજ્ઞાન, સાંસારિક સુખ તથા મોક્ષ સુખને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૪)

યઃ શુક્ર ઇવ સૂર્યો હિરણ્યમિવ રોચતે । શ્રેષ્ઠો દેવાનાં વસુઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે પૂર્વોક્ત રુદ્ર સેનાપતિ સૂર્યઃ શુક્ર ઇવ-શુક્ર = તેજસ્વી, શુદ્ધ ભાસ્કર-સૂર્ય સમાન હિરણ્યમિવ-સુવર્ણ સમાન પ્રીતિકારક, દેવાનામ્-સર્વ વિદ્વાનો અને પૃથિવી આદિના મધ્યમાં શ્રેષ્ઠઃ-અત્યુત્તમ વસુઃ-સમસ્ત પ્રાણી માત્રને વસાવનાર રોચતે-પ્રીતિકારક હોય, તેને સેનાપતિ બનાવવો જોઈએ. (૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ કે-જેમ પરમેશ્વર સર્વ પ્રકાશોનો પ્રકાશક, આનંદીઓમાં આનંદી, શ્રેષ્ઠોમાં શ્રેષ્ઠ, ઉત્તમોમાં ઉત્તમ, દેવોમાં-વિદ્વાનોમાં દેવ-વિદ્વાન અને આધારોનો આધાર છે; તેમ સભાધ્યક્ષ પ્રકાશવાનોમાં પ્રકાશવાન, ન્યાયકારીઓમાં ન્યાયકારી, આનંદ દાતાઓમાં આનંદદાયક, શ્રેષ્ઠ સ્વભાવવાળાઓમાં શ્રેષ્ઠ સ્વભાવવાળો, વિદ્વાનોમાં વિદ્વાન અને નિવાસ કરાવનારાઓમાં નિવાસ કરાવનાર હોવો જોઈએ. (૫)

શં નઃ કરત્યર્વતે સુગં મેષાય મેષ્યે । નૃભ્યો નારિભ્યો ગવે ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જે રુદ્ર સ્વામી નઃ-અમારી અર્વતે-અશ્વ-ઘોડા જાતિ મેષાય-મેષ-ઘેટાં જાતિ મેષ્યે-ઘેટાં-બકરાં નૃભ્યઃ-મનુષ્ય જાતિ નારિભ્યઃ-સ્ત્રી જાતિ અને ગવે-ગાય જાતિને માટે સુગમ્-સરળ શમ્-સુખને કરતિ-નિરંતર કરે તેને જ ન્યાયાધીશ બનાવવો જોઈએ. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, સ્વયંના તથા પોતાનાં અને પરાયા મનુષ્યોનાં તથા પશુજાતિનાં સુખને માટે ઈશ્વરની પ્રાર્થના, વિદ્વાનોનો સહયોગ, પ્રાણોનો યથોચિત ઉપયોગ અને પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ. (૬)

અસ્મે સૌમ શ્રિયમધિ નિ ધેહિ શ્તસ્ય નૃણામ્ । મહિ શ્રવસ્તુવિનૃમ્ણમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે સૌમ-સર્વ સુખપ્રાપક જગદીશ્વર અને સભાધ્યક્ષ ! આપ અસ્મે-અમારા માટે અથવા અમારામાં શ્તસ્ય-બહુ જ નૃણામ્-વીરપુરુષોના તુવિનૃમ્ણમ્-અનેક પ્રકારના ધન મહિ-પૂજ્ય અથવા બહુ જ શ્રવઃ-વિદ્વાનું શ્રવણ અને શ્રિયમ્-રાજ્યલક્ષ્મીનું અધિ નિધેહિ-સ્થાપન કરો. (૭)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય ઈશ્વરની કૃપા, સભાપતિની સહાયતા અને પોતાના પુરુષાર્થ વિના પૂર્ણ વિદ્યા, પશુ, ચક્રવર્તી રાજ્ય અને લક્ષ્મી પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૭)

મા નં: સોમપરિબાધો મારાંતયો જુહુરન્ત। આ નં ઇન્દો વાજે ભજ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દો-સુશિક્ષાથી આર્દ્ર કરનાર સભાધ્યક્ષ ! ન:-અમને સોમપરિબાધ:-જે ઉત્તમ પદાર્થોને સર્વ રીતે દૂર કરનારા વિરોધી મનુષ્યો અમારા પર મા જુહુરન્ત-પ્રબળ ન બને; તથા અરાતય:-જે દાન આદિ ધર્મરહિત શત્રુ હઠાગ્રહી છે, તેઓ ન:-અમારા એ શત્રુઓને વાજે-યુદ્ધમાં પરાજય કરવા આભજ-સારી રીતે યુક્ત કરો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, અતિ શ્રેષ્ઠ બળના સહયોગથી અને યુદ્ધથી સર્વ દુષ્ટ શત્રુઓને જીતીને, સત્ય ન્યાયથી યુક્ત રાજ્યનું પાલન કરવું જોઈએ. (૮)

યાસ્તે પ્રજા અમૃતસ્ય પરસ્મિન્ધામન્નૃતસ્ય।

મૂર્ધ્ના નાભા સોમ વેન આભૂષન્તી: સોમ વેદ: ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-વિજ્ઞાન પ્રદાતા, વેન:-કમનીય = સુંદર સ્વરૂપ, મૂર્ધ્ના-સર્વોત્તમ ! તું ઋક્ષસ્ય-સત્ય સ્વરૂપ અને સત્યપ્રિય અમૃતસ્ય-નાશ રહિત, નાભા-સ્થિર સુખના બંધન રૂપ, વામન્-ન્યાય અને આનંદમય સ્થાનમાં વર્તમાન ઈશ્વરની સમાન ન્યાયકારી, તે-તારી યા:-જે પ્રજા:-પ્રજા છે, તેને આભૂષન્તી:-સર્વ પ્રકારથી ભૂષણયુક્ત-અલંકૃત કરવાની વેન:-ઈચ્છા કર અને તેને વેદ:-સર્વ વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરાવ. (૯)

ભાવાર્થ : જ્યાં મનુષ્ય અદ્વિતીય ઈશ્વરનો અને તેના ઉપાસક સેનાપતિનો આશ્રય ગ્રહણ કરે છે, ત્યાં તેને લેશ માત્ર પણ દુ:ખ પ્રાપ્ત થતું નથી.

જેમ પરમેશ્વર અને સભાપતિ શ્રેષ્ઠ આચરણવાળા મનુષ્યોને છે, તેમ પ્રજાજનોએ પણ પરમેશ્વર અને સભાપતિની નિત્ય કામના કરવી જોઈએ. તેની કામના વિના વિસ્તૃત સુખ કદાપિ સંભવ થતું નથી.-પ્રાપ્ત થતું નથી. (૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં રુદ્ર શબ્દના અર્થનું વર્ણન, સર્વ સુખોનું પ્રતિપાદન, મિત્રતાનું આચરણ, પરમેશ્વર અને સભાધ્યક્ષના આશ્રયથી સુખોની પ્રાપ્તિ, એક ઈશ્વરની જ ઉપાસના, પરમ સુખની પ્રાપ્તિ અને સભાધ્યક્ષનો આશ્રય કહેલ છે, તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૪૩)

સૂક્ત-૪૪

અગ્ને વિવસ્વદુષસંશ્ચિત્રં રાધો અમર્ત્ય।

આ દાશુષે જાતવેદો વહા ત્વમદ્યા દેવાં ઉષર્બુધઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે **વિવસ્વત્**-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ અને વિદ્યાપ્રકાશયુક્ત, **અમર્ત્ય**-મરણધર્મથી રહિત, સાધારણ મનુષ્ય સ્વભાવથી વિલક્ષણ, **જાતવેદ**:-ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થોને જાણનાર અને પ્રાપ્ત કરનાર **અગ્ને**-જગદીશ્વર અને વિદ્વાન્ ! જેથી (**ત્વમ્**) આપ **અદ્ય**-આજ **દાશુષે**-પુરુષાર્થી મનુષ્ય માટે **ઊષસ**:-પ્રાતઃકાળથી **ચિત્રમ્**-અદ્ભુત **વિવસ્વત્**-સૂર્ય સમાન પ્રકાશિત **રાઘ**:-ધન પ્રદાન કરો છો, તે આપ **ઊર્બુધ**:-પ્રાતઃકાળમાં જાણનાર વિદ્વાનોને **આવહ**-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, ઈશ્વરની આજ્ઞાનાં પાલન માટે પોતાના પુરુષાર્થથી ઈશ્વરની અને આળસ રહિત ઉત્તમ વિદ્વાનોનો આશ્રય લઈને, ચક્રવર્તી રાજ્ય, વિદ્યા અને શ્રી = લક્ષ્મી પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ.

સમસ્ત વિદ્યાઓના જ્ઞાતા = જાણનાર વિદ્વાન જન, પરમ શ્રેષ્ઠ ગુણોથી યુક્ત જે શ્રેષ્ઠ કર્મ સ્વીકાર કરવા યોગ્ય છે, તેને નિત્ય કરે, જે દુષ્ટ કર્મ છે, તે કદાપિ ન કરે. (૧)

જુષ્ટો હિ દૂતો અસિં હવ્યવાહનોઽગ્ને ર્થીરધ્વરાણામ્ ।

સજૂરશ્વિભ્યામુષસાં સુવીર્યમસ્મે ધેહિ શ્રવોં બૃહત્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે **અગ્ને**-રાજ્યવિદ્યામાં વિચક્ષણ વિદ્વાન્ ! **હિ**-જે કારણથી આપ **જુષ્ટ**:-પ્રસન્ન પ્રકૃતિ અને **દૂત**:-શત્રુઓને તાપ કરાવનાર બનીને **અધ્વરાણામ્**-અહિંસનીય યજ્ઞોને સિદ્ધ કરનાર છો, **રથી**:-પ્રશંસનીય રથયુક્ત છો, **હવ્યવાહન**:-આપવા યોગ્ય વસ્તુઓને પ્રાપ્ત થનાર છો, **સજૂ**:-પોતાના સમાનનું સેવન કરનાર **અસિ**-છો; એથી **અસ્મે**-અમારામાં **અશ્વિભ્યામ્**-વાયુ અને જળથી **ઊષસા**-પ્રાતઃકાળમાં સિદ્ધ કરેલી વિદ્યાથી સિદ્ધ કરેલ **બૃહત્**-મહાન **સુવીર્યમ્**-ઉત્તમ પરાક્રમકારક **શ્રવ**:-સર્વ વિદ્યાના શ્રવણના કારણ અન્નને **ધેહિ**-ધારણ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય વિદ્વાનોના સંગ વિના સમસ્ત વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને, શત્રુ પર વિજય, ઉત્તમ પરાક્રમ અને ચક્રવર્તી (રાજ્ય) આદિની લક્ષ્મી પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી અને અગ્નિનો જળ આદિની સાથે સંયોગ કર્યા વિના ઉત્તમ વ્યવહારોની સિદ્ધિ પણ પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. (૨)

અદ્યા દૂતં વૃણીમહે વસુમગ્નિં પુરુપ્રિયમ્ ।

ધૂમકેતું ભાત્રહ્જીકં વ્યુષ્ટિષુ યજ્ઞાનામધ્વરશ્રિયમ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : અમે **અદ્ય**-આજ-મનુષ્ય જન્મ તથા વિદ્યાના પ્રાપ્તિ સમયને પ્રાપ્ત થઈને **વ્યુષ્ટિષુ**-અનેક પ્રકારની કામનાઓમાં **ભાત્રહ્જીકમ્**-કામનાઓના પ્રકાશ **યજ્ઞાનામ્** અગ્નિહોત્રથી લઈને અશ્વમેઘ સુધી અને યોગ ઉપાસના જ્ઞાન તથા શિલ્પવિદ્યારૂપ યજ્ઞોના મધ્યમાં, **અધ્વરશ્રિયમ્**-હિંસારહિત યજ્ઞોની શ્રી-શોભારૂપ, **ધૂમકેતુમ્**-જેનો ધૂમ જ ધ્વજારૂપ છે. **વસુમ્**-સર્વ વિદ્યાઓનો નિવાસ અને પુષ્કળ ધનની પ્રાપ્તિનો હેતુ, **પુરુપ્રિયમ્**-અનેકોને પ્રિય, **દૂતમ્**-પદાર્થોને દૂર પહોંચાડનાર **અગ્નિમ્**-ભૌતિક અગ્નિની સમાન વિદ્વાન દૂતનો **વૃણીમહે**-અંગીકાર કરીએ-સ્વીકાર કરીએ. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્યા, રાજ્ય અને સુખની પ્રાપ્તિ માટે ચારેય વેદોના જ્ઞાતા વિદ્વાનને દૂત બનાવીને, અનેક ગુણોથી યુક્ત હોવાના કારણે, અનેક ગુણોની પ્રાપ્તિ કરાવનારી વિદ્યુતનો સ્વીકાર

કરીને સર્વ કાર્યોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૩)

શ્રેષ્ઠં યવિષ્ઠમતિથિં સ્વાહુતં જુષ્ટં જનાય દાશુષે ।

દેવાં અચ્છા યાતવે જાતવેદસમગ્નિમીલે વ્યુષ્ટિષુ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હું વ્યુષ્ટિષુ-વિશેષ ભણવા યોગ્ય ઈચ્છાઓની યાતવે-પ્રાપ્તિ માટે દાશુષે-દાતા, જનાય-ધાર્મિક વિદ્વાન મનુષ્યને માટે, શ્રેષ્ઠમ્-અતિ ઉત્તમ, યવિષ્ઠમ્-અતિ બળવાન, જુષ્ટમ્-વિદ્વાનથી પ્રસન્ન અને સેવિત સ્વાહુતમ્-સારી રીતે બોલાવીને, સત્યકાર યોગ્ય, જાતવેદસમ્-સમસ્ત પદાર્થોમાં વ્યાપ્ત, અતિથિમ્-સેવા કરવા યોગ્ય અગ્નિમ્-અગ્નિ સમાન વિદ્યમાન સજ્જન અતિથિ અને દેવાન્-દિવ્યગુણોયુક્ત વિદ્વાનોનો અચ્છ-સારી રીતે સત્કાર કરું. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, શ્રેષ્ઠ, ધર્મરૂપી બળયુક્ત, સર્વ વિદ્વાનો દ્વારા સત્કાર પામેલ, પ્રસન્ન સ્વભાવયુક્ત અને સર્વનો ઉપકાર કરનાર વિદ્વાન અતિથિઓનો સત્કાર કરવો જોઈએ, જેથી સર્વનું હિત થાય છે. (૪)

સ્તવિષ્યામિ ત્વામહં વિશ્વસ્યામૃત ભોજન ।

અગ્ને ત્રાતારમૃતં મિયેધ્યૃ યજિષ્ઠં હવ્યવાહન ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : અમૃત-અવિનાશી સ્વરૂપ, ભોજન-પાલનકર્તા, મિયેધ્ય-પ્રમાણ કરનાર, હવ્યવાહન-આદાન-પ્રદાન યોગ્ય પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનાર, અગ્ને-પરમેશ્વર અહમ્-હું વિશ્વસ્ય-સર્વ જગતના ત્રાતારમ્-રક્ષક, યજિષ્ઠમ્-અત્યંત યજન કરનાર-પૂજનીય, અમૃતમ્-નિત્ય સ્વરૂપ ત્વા-તારી જ સ્તવિષ્યામિ-સ્તુતિ કરીશ. (૫)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ; સર્વ જગતના રક્ષક, મોક્ષ પ્રદાતા, વિદ્યા, કામ તથા આનંદના દાતા અને સેવન કરવા યોગ્ય પરમેશ્વરને છોડીને અન્ય કોઈનું પણ ઈશ્વરનાં રૂપમાં આશ્રય તથા સ્તુતિ કદી પણ કરવી જોઈએ નહિ. (૫)

સુશંસૌ બોધિ ગૃણતે યવિષ્ઠ્ય મધુજિહ્વઃ સ્વાહુતઃ ।

પ્રસ્કણ્વસ્ય પ્રતિરન્નાયુર્જીવસૈ નમસ્યા દૈવ્યં જનમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે યવિષ્ઠ્ય-અત્યંત બળવાન, નમસ્ય-પૂજવા યોગ્ય વિદ્વાન, મધુજિહ્વઃ-મધુર જ્ઞાનરૂપ જિહ્વાયુક્ત, સુશંસૌ-ઉત્તમ સ્તુતિથી પ્રશંસિત, સ્વાહુતઃ-સુખપૂર્વક આહ્વાન-બોલાવવા યોગ્ય, પ્રસ્કણ્વસ્ય-ઉત્તમ મેધાવી વિદ્વાનના જીવસે-જીવનને માટે, આયુઃ-જીવનને પ્રતિરન્-દુઃખોથી પાર કરતા, જે આપ ગૃણતે-સત્યની સ્તુતિ કરતા મનુષ્યના માટે શાસ્ત્રોનો બોધિ-બોધ કરો; અને જેથી દૈવ્યમ્-વિદ્વાનોનાં ઉત્પન્ન થયેલ જનમ્-મનુષ્યની રક્ષા કરો છો, એથી સત્કારને યોગ્ય છો. (૬)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ, સર્વથી શ્રેષ્ઠ હોવાના કારણે નમસ્કાર કરવા યોગ્ય વિદ્વાન

મનુષ્યનો સત્કાર કરવો જોઈએ. એ રીતે એનો આશ્રય કરીને સંપૂર્ણ આયુ અને વિદ્યા પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. (૬)

હોતારં વિશ્વવેદસં સં હિ ત્વા વિશં ડ્વન્ધતે ।

સ આ વંહ પુરુહૂત પ્રચેતસોઽગ્ને દેવાં ડ્વહ દ્વવત્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે પુરુહૂત-બહુ જ વિદ્વાનોએ બોલાવેલ અગ્ને-વિશિષ્ટ જ્ઞાનયુક્ત વિદ્વાન્ ! પ્રચેતસ:- ઉત્તમ જ્ઞાનયુક્ત વિશ:-પ્રજા જે હોતારમ્-હવન કર્તા વિશ્વવેદસમ્-સમસ્ત સુખ પ્રાપ્ત ત્વા-આપને હિ-નિશ્ચયપૂર્વક સમિન્ધતે-સમ્યક્ પ્રકાશિત કરે છે; સ:-તે આપ ડ્વહ-એ યુદ્ધ આદિ કાર્યોમાં ઉત્તમ જ્ઞાનવાન દેવાન્-શૂરવીર વિદ્વાનોને આવહ-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાઓ. (૭)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોના સહયોગ વિના પ્રજાને સુખ, દિવ્યગુણોની પ્રાપ્તિ અને શત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત થતો નથી, એટલા માટે સર્વ મનુષ્યોએ તેને પ્રયત્નથી સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૭)

સવિતારમ્ મુષસમશ્વિના ભગમગ્નિં વ્યુષ્ટિષુ ક્ષયઃ ।

કળવાસસ્ત્વા સુતસોમાસ ડ્વન્ધતે હવ્યવાહં સ્વધ્વર ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે સ્વધ્વર-ઉત્તમ યજ્ઞવાળા વિદ્વાન ! જે સુતસોમા:-ઉત્તમ પદાર્થોને સિદ્ધ કરતા કળવાસ:-મેધાવી વિદ્વાનો વ્યુષ્ટિષુ-કામનાઓમાં સવિતારમ્-સૂર્ય પ્રકાશ ઉષસમ્-પ્રાતઃકાળ અશ્વિના-વાયુ અને જળ ભગમ્-ઐશ્વર્ય અગ્નિમ્-વિદ્યુત્) ક્ષય:-રાત્રિ અને હવ્યવાહમ્-હોમ કરવા યોગ્ય દ્રવ્યોને પ્રાપ્ત કરાવનાર ત્વા-આપને સમિન્ધતે-સારી રીતે પ્રકાશિત કરે છે, તે આપ પણ તેને પ્રકાશિત કરો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વ ક્રિયાઓમાં દિવસ-રાત (પ્રયત્નથી) સૂર્ય આદિ પદાર્થોનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને, વાયુ અને વર્ષાની શુદ્ધિ કરનાર શિલ્પ આદિ સમસ્ત કાર્યો કરવા જોઈએ.

વિદ્વાનોના સંગ વિના ગુણના જ્ઞાનના અભાવના કારણે કોઈ પણ ક્રિયાની સિદ્ધિ કરી શકાતી નથી. (૮)

પતિર્હ્યધ્વરાણામગ્ને દૂતો વિશામસિં ।

ઉષર્બુધ આ વંહ સોમપીતયે દેવાં અઘ્ચ સ્વર્દશઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! જે આપ હિ-નિશ્ચયપૂર્વક અધ્વરાણામ્-યજ્ઞ અને વિશામ્-પ્રજાઓના પતિ:-પાલક અસિ-છો, એથી આપ અઘ્ચ-આજ સોમપીતયે-અમૃતરૂપી રસના પાન રૂપ વ્યવહાર માટે ઉષર્બુધ:-પ્રાતઃકાળમાં જાગૃત થનાર સ્વર્દશઃ-વિદ્યારૂપી સૂર્યના પ્રકાશથી યથાવત્ નિહાળવા યોગ્ય દેવાન્-વિદ્વાન અને દિવ્યગુણોને આવહ-પ્રાપ્ત કરો. (૯)

ભાવાર્થ : સભાપતિ અને સેનાપતિ આદિ વિદ્વાન વિદ્યા અધ્યયન અને પ્રજાપાલન આદિ યજ્ઞોની રક્ષા માટે પ્રજાઓમાં દિવ્યગુણોને નિત્ય પ્રકાશિત કરે. (૯)

अग्ने पूर्वा अनुषसो विभावसो दीदेथ विश्वदर्शतः ।

असि ग्रामेष्वविता पुरोहितोऽसि यज्ञेषु मानुषः ॥ १० ॥

पદાર્થ : હે વિભાવસો-વિશેષ દીપ્તિને વસાવનાર, અગ્ને-વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરનાર વિદ્વાન્ ! વિશ્વદર્શતઃ-સર્વને જોવા યોગ્ય આપ પૂર્વા:-પૂર્વ વ્યતીત અનુ-પશ્ચાત્ ઉવસઃ-ભવિષ્યની-આવનારી અને વર્તમાન ઉષા = પ્રભાત અને રાત-દિવસોને દીદેથ-જાણીને એક ક્ષણ પણ વ્યર્થ ન વીતાવે. આપ જ ગ્રામેષુ-મનુષ્યોના નિવાસ યોગ્ય ગામોમાં અવિતા-રક્ષા કરનાર અસિ-છો અને યજ્ઞેષુ-અશ્વમેઘથી લઈને શિલ્પ પર્યન્ત ક્રિયાઓમાં માનુષઃ-મનુષ્ય-વ્યક્તિ પુરોહિત-સર્વ સાધનો દ્વારા સર્વ સુખોને સિદ્ધ કરનાર અસિ-છો.

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો સર્વ દિવસોમાં એક પણ ક્ષણ વ્યર્થ ન વિતાવે. સર્વ દિવસોને સર્વોત્તમ કાર્યો કરવા માટે જાણે. એ રીતે તેને જાણીને નિરંતર પ્રજા રક્ષક અને યજ્ઞોના કર્તા બને. (૧૦)

નિ ત્વા યજ્ઞસ્ય સાધનમગ્ને હોતારમૃત્વિજમ્ ।

મનુષ્વદેવ ધીમહિ પ્રચેતસં જીરં દૂતમર્મર્ત્યમ્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-દિવ્ય વિદ્યા સંપન્ન, અગ્ને-ભૌતિક અગ્નિ સમાન ઉત્તમ પદાર્થોનું સંપાદન કરનાર મેધાવી = બુદ્ધિમાન વિદ્વાન્ ! અમે યજ્ઞસ્ય-ત્રણ પ્રકારના યજ્ઞના સાધનમ્-મુખ્ય સાધક હોતારમ્-હવન કરનાર અને પ્રહણ કરનાર મૃત્વિજમ્-યજ્ઞ સાધક પ્રચેતસમ્-ઉત્તમ વિજ્ઞાનયુક્ત જીરમ્-વેગવાન્ અર્મર્ત્યમ્-સાધારણ મનુષ્ય સ્વભાવથી રહિત અને સ્વરૂપથી નિત્ય દૂતમ્-પ્રશંસનીય બુદ્ધિયુક્ત અને પદાર્થોને દેશ-દેશાન્તરમાં પ્રાપ્ત કરાવનાર ત્વા-આપને મનુષ્વત્-મનનશીલ મનુષ્યની સમાન નિધીમહિ-નિરંતર ધારણ કરે.

ભાવાર્થ : આઠમા મંત્રથી સુતસોમાસઃ અને કળ્વાસઃ-એ બે પદોની અનુવૃત્તિ છે. વિદ્વાન ચ-અને દ્રવ્ય-સામગ્રી વિના યજ્ઞની સિદ્ધિ કરી શકાતી નથી. (૧૧)

યદ્દેવાનાં મિત્રમહઃ પુરોહિતોઽન્તરો યાસિ દૂત્યમ્ ।

સિન્ધોરિવ પ્રસ્વનિતાસ ઋમયોઽગ્નેર્ભીજન્તે અર્ચયઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે મિત્રમહઃ-મિત્રોમાં મહાન પૂજનીય વિદ્વાન્ ! આપ મધ્યસ્થ બનીને દૂત્યમ્-દૂત કર્મને યાસિ-પ્રાપ્ત કરો છો. જે અગ્નેઃ-આત્માની સિન્ધોરિવ-સમુદ્ર સમાન પ્રસ્વનિતાસઃ-શબ્દ કરતી ઋમયઃ-લહેરો અગ્નેઃ-અગ્નિના દેવાનામ્-વિદ્વાનોના દૂત્યમ્-દૂતના સ્વભાવને યાસિ-પ્રાપ્ત થાઓ છો, તે આપ અમારા સત્કારને યોગ્ય કેમ ન હોઈ શકો ?

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ પરમેશ્વર સર્વ મનુષ્યોના મિત્ર, પૂજ્ય, પુરોહિત અને અન્તર્યામી બનીને દૂતની સમાન અન્તરાત્મામાં સત્ય અને અસત્ય કર્મને જાણો છો, એ જ રીતે ઈશ્વરની અનંત દીપ્તિઓ-જ્વાળાઓ વિચારે છે, તે જ જગદીશ્વર સર્વના ધારણકર્તા, રક્ષક, પાલક, ન્યાયકારી, મહારાજ અને સર્વના દ્વારા ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે, તેમ ઉત્તમ દૂત સત્કાર કરવા યોગ્ય છે.

(એમ તમે જાણો). (૧૨)

શ્રુધિ શ્રુત્કર્ણ વહ્નિભિર્દેવૈરગ્ને સયાવભિઃ ।

આ સીદન્તુ બર્હિષિ મિત્રો અર્યમા પ્રાતર્યાવાણો અધ્વરમ્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે શ્રુત્કર્ણ-શ્રવણ કરનાર, અગ્ને-વિદ્યા પ્રકાશક વિદ્વાન્ ! આપ પ્રીતિપૂર્વક સયાવભિઃ-સમાન જાણનાર (જનાર) વહ્નિભિઃ-સત્યાચારનો ભાર વહન-ધારણ કરનાર મનુષ્ય આદિ દેવૈઃ-વિદ્વાનો અને દિવ્યગુણો યુક્ત અસ્માકમ્-અમારી વાર્તાઓને શ્રુધિ-સાંભળો, તમે અને અમે મિત્રઃ-સર્વના હિતકારી અર્યમા-ન્યાયાધીશ, પ્રાતર્યાવાણઃ-પ્રતિદિન પુરુષાર્થથી યુક્ત સર્વે-સર્વ અધ્વરમ્-અહિંસનીય પૂર્વોક્ત યજ્ઞને પ્રાપ્ત થઈને બર્હિષિ-ઉત્તમ વ્યવહારમાં આસીદન્તુ-જ્ઞાનને પ્રાપ્ત થાઓ અને સ્થિત રહો. (૧૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો, સમસ્ત શ્રવણ વિદ્યાઓમાં અભ્યસ્ત ધાર્મિક લોકોને રાજ કાર્યોમાં નિયુક્ત કરે. વિદ્વાન લોકો સુશિક્ષિત કર્મચારીઓથી સર્વ કાર્યો સિદ્ધ કરાવે. સદા આજ્ઞાનો ત્યાગ કરીને નિરંતર પુરુષાર્થ કરવામાં પ્રયત્નશીલ રહે તેના વિના વ્યવહાર અને પરમાર્થના કાર્યો સિદ્ધ થતા નથી. (૧૩)

શ્રૃણ્વન્તુ સ્તોમં મરુતઃ સુદાનવોઽગ્નિજિહ્વા ઋતાવૃધઃ ।

પિબન્તુ સોમં વરુણો ધૃતવ્રતોઽશ્વિભ્યામુષસાં સજૂઃ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અગ્નિજિહ્વાઃ-જેની અગ્નિ સમાન શબ્દ વિદ્યાથી પ્રકાશિત જિહ્વા છે, ઋતાવૃધઃ-સત્યના વર્ધક, સુદાનવઃ-શ્રેષ્ઠ દાતા મસ્તઃ-વિદ્વાનો ! આપ અમારી સ્તોમમ્-સ્તુતિ અને ન્યાય પ્રકાશને શ્રૃણ્વન્તુ-શ્રવણ કરો, એ જ રીતે પ્રતિજન (પ્રતિદિન) સજૂઃ-સમાન સેવન, વસ્મઃ-શ્રેષ્ઠ, ધૃતવ્રતઃ-સત્ય વ્રતને ધારણ કરનારા સર્વ મનુષ્યજન ઉષસા-પ્રભાત અશ્વિભ્યામ્-વ્યાપનશીલ સભા, સેના, શાલા, ધર્માધ્યક્ષ અધ્વર્યુઓની સાથે સોમમ્-પદાર્થ વિદ્યાથી ઉત્પન્ન થયેલ આનંદરૂપી રસનું પિબન્તુ-પાન કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : (વિદ્યાસભા), ધર્મસભા અને રાજસભાના સદનો-ગૃહો દ્વારા જે આજ્ઞાઓ પ્રકાશિત કરવામાં આવે છે, તેનું સર્વ મનુષ્યોએ શ્રવણ કરીને, તેનુસાર સમ્યક્ આચરણ કરવું જોઈએ.

જે તે સભાઓના સભાસદો હોય, તેઓએ પણ પક્ષપાત રહિત બનીને, પ્રતિદિન સર્વેએ મળીને જેમ અવિદ્યા, અધર્મ અને અન્યાયનો નાશ થાય, તેમ પ્રયત્નો કરવા જોઈએ. (૧૪)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ધર્મની પ્રાપ્તિ, દૂતત્વ સંપાદન, સર્વ વિદ્યાઓનું શ્રવણ, ઉત્તમ શ્રીની પ્રાપ્તિ, શ્રેષ્ઠોનો સંગ, સ્તુતિ અને સત્કાર, પદાર્થ વિદ્યાઓ, સભાધ્યક્ષ, દૂત અને યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન, મિત્ર આદિનું ગ્રહણ, પરસ્પર મળીને સર્વ કાર્યોની સિદ્ધિ, ઉત્તમ વ્યવહારમાં સ્થિતિ, પરસ્પર વિદ્યા, ધર્મ, રાજસભાઓને સાંભળીને અનુષ્ઠાન-આચરણ કરવું કહેલ છે, તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૪૪)

સૂક્ત-૪૫

ત્વમ્-ગ્ને વસૂં-રિહ રુદ્રાં આદિત્યાં ઉત ।

યજાં સ્વધ્વરં જનં મનુજાતં ઘૃતપ્રુષમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્યુત્ સમાન વિદ્યમાન વિદ્વાન્ ! આપ ઇહ-આ સંસારમાં વસૂન્-જે ચોવીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યા પ્રાપ્ત કરેલ પંડિત, સ્વાન્-ચુમાલીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પાલન પૂર્વક વિદ્યા પ્રાપ્ત કરેલ મહાબળવાન વિદ્વાન અને આદિત્યાન્-અડતાલીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પાલન પૂર્વક વિદ્યા પ્રાપ્ત કરેલ મહાવિદ્વાન લોકોને ઉત-અને પણ ઘૃતપ્રુષમ્-યજ્ઞથી સિદ્ધ કરેલ ઘૃતનું સેવન કરનાર, મનુજાતમ્-મનનશીલ મનુષ્યથી ઉત્પન્ન થયેલ સ્વધ્વરમ્-ઉત્તમ યજ્ઞને સિદ્ધ કરનારા જનમ્-પુરુષાર્થ મનુષ્યોનો યજ્ઞ-નિરંતર સંગ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, પોતાના પુત્રોને ઓછામાં ઓછા પચીસ વર્ષની આયુ સુધી અને અધિકથી અધિક અડતાલીસ વર્ષની આયુ સુધી તથા એજ પ્રમાણે કન્યાઓને ઓછામાં ઓછા સોળ વર્ષની અને અધિકથી અધિક ચોવીસ વર્ષની વય સુધી બ્રહ્મચર્યના પાલન પૂર્વક પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત અને સુશિક્ષિત કરીને (અધ્યયન કરાવીને ત્યારપછી) સ્વયંવર નામક વિધિથી તેનો વિવાહ કરવો જોઈએ, જેથી સર્વ સદા સુખી રહે. (૧)

શ્રુષ્ટીવાનો હિ દાશુષે દેવા અગ્ને વિચેતસઃ ।

તાન્ત્રોહિદશ્વ ગિર્વણસ્ત્રયસ્ત્રિંશતમા વ્હ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે રોહિદશ્વ-વેગ આદિ ગુણયુક્ત, ગિર્વણઃ-વાણીઓથી સેવિત, અગ્ને-વિદ્વાન્ ! ત્વમ્-આપ આ સંસારમાં જે વિચેતસઃ-વિવિધ પ્રકારના શાસ્ત્રોક્ત જ્ઞાનયુક્ત, શ્રુષ્ટીવાનઃ-યથાર્થનું સેવન કરનાર, દેવાઃ-દિવ્યગુણવાન વિદ્વાન દાશુષે-દાનશીલ પુરુષાર્થી મનુષ્યને માટે સુખ પ્રદાન કરે છે, તાન્-તે ત્રયસ્ત્રિંશતમ્-ભૂમિ આદિ તેત્રીસ ગુણવાળાને હિ-નિશ્ચય કરીને આવહ-પ્રાપ્ત કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જ્યારે વિદ્વાનજન વિદ્યાર્થીઓને તેત્રીસ દેવતાઓ (પૃથિવી આદિ)ની વિદ્યાઓનો સાક્ષાત્ કરાવે છે, ત્યારે તેઓ વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોથી અનેક ઉત્તમ વ્યવહારોને સિદ્ધ કરી શકે છે. (૨)

પ્રિયમેધવદત્રિવજ્જાતવેદો વિરૂપવત્ ।

અઙ્ગિરસ્વન્મહિવ્રત પ્રસ્કળવસ્ય શ્રુધી હવમ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે જાતવેદઃ-ઉત્પન્ન પદાર્થોના જ્ઞાતા, મહિવ્રત-મહાનવ્રતયુક્ત વિદ્વાન્ ! આપ પ્રિયમેધવત્-વિદ્યા પ્રિય બુદ્ધિમાન સમાન, અત્રિવત્-ત્રણ અર્થાત્ શરીર, અન્ય પ્રાણી અને મન આદિ ઈન્દ્રિયોના દુઃખોથી રહિત સમાન, વિસ્ખવત્-વિવિધ પ્રકારના દુઃખોથી રહિત સમાન, વિસ્ખવત્-વિવિધ પ્રકારના

રૂપવાન સમાન, અઙ્ગિસ્વત્-અંગોના રસરૂપ પ્રાણ સમાન, પ્રસ્કળવસ્ય-ઉત્તમ મેધાવી મનુષ્યના હવમ્-
આદાન-પ્રદાન અધ્યયન-અધ્યાપન યોગ્ય વ્યવહારનું શ્રુધિ-શ્રવણ કરો, (૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સર્વનું પ્રિય કરનાર, શારીરિક, વાચિક અને માનસિક દોષોથી
રહિત તથા અનેક વિદ્યાઓને પ્રત્યક્ષ કરેલ વિદ્વાનજન પોતાના પ્રાણ સમાન સર્વને જાણીને, મનુષ્યોના
પ્રિય કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ તમે પણ કરો. (૩)

મહિકેરવ ઋતયૈ પ્રિયમેધા અહૂષત ।

રાજન્તમધ્વરાણામ્ગિનં શુક્રેણ શોચિષા ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મહાવિદ્વાનો ! મહિકેરવ:-જેના મહાન શિલ્પવિદ્યાને સિદ્ધ કરનાર શિલ્પી હોય એવા
પ્રિયમેધા:-સત્યવિદ્યા અને વિદ્યાથી પ્રાપ્ત કરાવનારી મેધાબુદ્ધિયુક્ત આપ અધ્વરાણામ્-પાલનીય વ્યવહાર-
આચરણરૂપ કર્મોની ઋતયે-રક્ષાદિ માટે શુક્રેણ શુદ્ધ, શીઘ્રકારક શોચિષા-તેજથી રાજન્તમ્-પ્રકાશમાન
અગ્નિમ્-પ્રસિદ્ધ અગ્નિ અને વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિની સમાન સભાપતિને અહૂષત-ઉપદેશ કરો અને તેથી
શ્રવણ કરો. (૪)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય ધાર્મિક વિદ્વાનોના સંગ વિના પરમ ઉત્તમ વ્યવહારોની સિદ્ધિ કરી
શકતા નથી, તેથી સર્વએ તેના સંગથી સમસ્ત વિદ્યાઓને સાક્ષાત્ કરવી જોઈએ. (૪)

ઘૃતાહવન સન્ત્યેમા ડુ ષુ શ્રુધી ગિરઃ ।

યાભિઃ કળવસ્ય સૂનવો હવન્તેઽવસે ત્વા ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે સન્ત્ય-સુખોની ક્રિયાઓમાં કુશળ, ઘૃતાહવન-ધૃતને સારી રીતે ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન !
જેમ કળવસ્ય-મેધાવી વિદ્વાનના સૂનવઃ-પુત્ર, વિદ્યાર્થી અવસે-રક્ષાદિ માટે યાભિઃ:-જે વેદવાણીઓથી
જે ત્વા-તને હવન્તે-ગ્રહણ કરે છે, તે આપ ડુ-પણ તેનાથી તેની ડમા-એ પ્રત્યક્ષકારક ગિરઃ:-વાણીઓને
સુશ્રુધિ-સારી રીતે શ્રવણ કરો અને ગ્રહણ કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આ સંસારમાં વિદુષી માતા, વિદ્વાન પિતા અને અનુમાન (= ચારેય વેદોના
જ્ઞાતા) આચાર્ય દ્વારા શિક્ષા અને વિદ્યા ગ્રહણ કરીને, પરમાર્થ અને વ્યવહારને સિદ્ધ કરીને, વિજ્ઞાન
અને શિલ્પની સિદ્ધિ કરવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે, તેઓ સમસ્ત સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે, અન્ય નહિ. (૫)

ત્વાં ચિત્રશ્રવસ્તમ્ હવન્તે વિક્ષુ જન્તવઃ ।

શોચિષ્કેશં પુરુપ્રિયાગને હવ્યાય વોઢ્વે ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : ચિત્રશ્રવસ્તમ-અત્યંત અદ્ભુત અને શ્રવણોથી વ્યુત્પન્ન, પુરુપ્રિય-અનેકોને તૃપ્તિ કરનાર,
અને-વિદ્યુત્ સમાન વિદ્યાઓમાં વ્યાપક વિદ્વાન ! જે જન્તવઃ:-પ્રાણીઓ-મનુષ્યો વિક્ષુ-પ્રજ્ઞાઓમાં વોઢ્વે-

વિદ્યા પ્રાપ્તિ કરાવનાર હવ્યાય-કરવા યોગ્ય પઠન-પાઠનરૂપ યજ્ઞને માટે જે શોચિષ્કેશમ્-જેનું આચરણ પવિત્ર છે, તે ત્વામ્-આપને હવન્તે-ગ્રહણ કરે છે, તે આપ તેને વિદ્યા અને શિક્ષા પ્રદાન કરીને શીઘ્ર વિદ્વાન અને શીલયુક્ત કરો. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, અનેક ગુણોયુક્ત અગ્નિની સમાન વિદ્વાનને પ્રાપ્ત કરીને વિદ્યાઓને ગ્રહણ કરવી જોઈએ. (૬)

નિ ત્વા હોતારમૃત્વિજં દધિરે વસુવિત્તમમ્ ।

શ્રુત્કર્ણ સપ્રથસ્તમં વિપ્રાં અગ્ને દિવિષ્ટિષુ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-બહુશ્રુત સજ્જન-સત્યપુરુષ ! વિપ્રા:-મેધાવી વિદ્વાન જન દિવિષ્ટિષુ-પવિત્ર અધ્યયન-અધ્યાપન રૂપ ક્રિયાઓમાં અગ્નિ સમાન જે હોતારમ્-ગ્રહણ કારક, ઋત્વિજમ્-ઋતુઓની સંગત કરનાર, શ્રુત્કર્ણમ્-સમસ્ત વિદ્યાઓનું શ્રવણ કરનાર, સપ્રથસ્તમમ્-અત્યંત વિદ્યા વિસ્તાર સાથે વર્તનાર, વસુવિત્તમમ્-પદાર્થોને સમ્યક જાણનાર ત્વા-તને નિદધિરે-ધારણ કરે છે, તું પણ તેને ધારણ કર. (૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યા પ્રચાર આદિ ઉત્તમ કાર્યોની સિદ્ધિ-પ્રાપ્ત કરવા માટે પ્રયત્ન કરે છે, ચક્રવર્તી રાજ્યની સંપત્તિ અને વિદ્યારૂપી ધનને સિદ્ધ કરવામાં સમર્થ બને છે, તેઓ શોકને પ્રાપ્ત થતાં નથી. (૭)

આ ત્વા વિપ્રાં અચુચ્ચવુઃ સુતસોમા અભિ પ્રયઃ ।

બૃહદ્ધા વિભ્રતો હવિરગ્ને મર્ત્તીય દાશુષે ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્યુત્ સમાન વિદ્યમાન વિદ્વાન્ ! જે તુ જેમ ક્રિયાઓમાં કુશળ દાશુષે-દાતા માટે પ્રયઃ-અન્ન બૃહત્-મહાન સુખકારક હવિઃ-આદાન-પ્રદાન યોગ્ય પદાર્થ અને ભાઃ-જે પ્રકાશકારક ક્રિયાઓને વિભ્રતઃ-ધારણ કરતા સુતસોમાઃ-ઐશ્વર્યયુક્ત વિપ્રાઃ-વિદ્વાનો ત્વા-તને અચુચ્ચવુઃ-સર્વ પ્રકારથી પ્રાપ્ત થાય, તેમ તું પણ તેને પ્રાપ્ત થા. (૮)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનજનો, જેથી મનુષ્યોને ઉત્તમ સુખ થાય તેને વિશેષ વિદ્યા અને પરીક્ષા દ્વારા પ્રત્યક્ષ કરીને ક્રમપૂર્વક સર્વને ગ્રહણ કરાવે, જેથી તેના સર્વ કાર્યો સિદ્ધ થાય. (૮)

પ્રાતર્યાવ્ઙાઃ સહસ્કૃત સોમપેયાય સન્ત્ય ।

ઙ્હાઘ દૈવ્યં જનં બર્હિરા સાંદયા વસો ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે સહસ્કૃત-સર્વને સિદ્ધ કરનાર, સન્ત્ય-જે સંભજનીય ક્રિયાઓમાં કુશળ વિદ્વાનોમાં

સજ્જન્ વસો-શ્રેષ્ઠ ગુણોમાં વસનાર વિદ્વાન્ ! તું ઇહ-એ વિદ્યા વ્યવહારમાં અદ્ય-આજ સોમપેયાય-સોમરસના પાન માટે પ્રાતર્યાવ્યા:-પ્રાતઃકાળ પુરુષાર્થને પ્રાપ્ત થનાર વિદ્વાનો અને દૈવ્યમ્-વિદ્વાનોમાં કુશળ જનમ્-પુરુષાર્થયુક્ત ધાર્મિક મનુષ્ય અને બર્હિ:-ઉત્તમ આસનને આસાદય-પ્રાપ્ત કર. (૯)

ભાવાર્થ : જે લોકો ઉત્તમ મનુષ્યોને જ ઉત્તમ વસ્તુઓ પ્રદાન કરે છે, તે પ્રકારના મનુષ્યોનો સંગ સર્વેએ કરવો જોઈએ. કોઈ પણ મનુષ્ય વિદ્યાવાન અને પુરુષાર્થી લોકોના સંગ અને ઉપદેશ વિના દિવ્ય સુખને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૯)

અર્વાઞ્ચં દૈવ્યં જનમગ્ને યક્ષ્વ સહૂતિભિઃ ।

અયં સોમઃ સુદાનવસ્તં પાત તિરોઅહ્યમ્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે સુદાનવ:-ઉત્તમ દાનશીલ વિદ્વાનો ! આપ સહૂતિભિઃ-સમાન આદ્વાનયુક્ત ક્રિયાઓથી અર્વાઞ્ચમ્-વેગ આદિ ગુણવાળા ઘોડાને પ્રાપ્ત કરનાર અને કરાવનાર, દૈવ્યમ્-દિવ્ય ગુણોમાં પ્રવૃત્ત, તિરોઅહ્યમ્-ચોર આદિ તિરસ્કાર કરનારા દિવસોમાં પ્રસિદ્ધ, જનમ્-પુરુષાર્થમાં પ્રકટ થયેલ મનુષ્યની પાત-રક્ષા કરો; અને જેમ અયમ્-જે સોમઃ-પદાર્થોનો સમૂહ સર્વના સત્કાર માટે છે તથા (અગ્ને-વિદ્વાન) તમ્-તેને તું પણ યક્ષ્વ-સત્કારમાં સંયુક્ત કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે, કે સદા સજ્જનોને બોલાવીને તથા તેમનો સત્કાર કરીને સર્વ પદાર્થોનું વિશેષ જ્ઞાન, તેનું શોધન અને તેનો ઉપકાર લેવાનું કાર્ય કરવું જોઈએ તથા ઉત્તરોત્તર (અધિકાધિક) તેને જાણીને તે વિદ્વાનો પ્રચાર પણ કરવો જોઈએ. (૧૦)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વસુ, રુદ્ર અને આદિત્યોની ગતિ તથા પ્રમાણ આદિનું પ્રતિપાદન કરેલ છે, તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૪૫)

સૂક્ત-૪૬

एषो उषा अपूर्व्या व्युच्छति प्रिया दिवः । स्तुषे वामश्विना बृहत् ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે વિદુષિ ! જે તું જેમ ઇષો-એ અપૂર્વ્યા-ન પૂર્વેકૃતા દિવઃ-સૂર્ય પ્રકાશથી ઉત્પન્ન થયેલી, પ્રિયા-સર્વની પ્રીતિવર્ધક, ઉષા:-દાહનિમિત્તશીલા ઊષા અર્થાત્ પ્રભાતવેળા, બૃહત્-મહાન દિવસને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ મને વ્યુચ્છસિ-આનંદિત કરે છે; અને જેમ તે અશ્વિના (અશ્વિના-નૌ) સૂર્ય અને ચંદ્રમાની સમાન અધ્યયન અને ઉપદેશ કરનારી સ્ત્રીઓના સ્તુષે-ગુણોનો પ્રકાશ કરે છે; તેમ હું પણ તને સુખોમાં વાસ કરાવું અને તારી પ્રશંસા પણ કરું. (૧)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રીઓ સૂર્ય, ચંદ્રમા અને ઉષાની સમાન સર્વ પ્રાણીઓને સુખ પ્રદાન કરે છે, તે જ (સ્ત્રીઓ) આનંદ પ્રાપ્ત કરે છે, અન્ય નહિ. (૧)

या दस्त्रा सिन्धुमातरा मनोतरा रयीणाम् । धिया देवा वसुविदा ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે યા-જે દસ્ત્રા-દુઃખોના નાશક, સિન્ધુમાતરા-સમુદ્ર અને નદીઓના પ્રમાણ-કારક, મનોતરા-મનની સમાન પાર કરનારા, ધિયા-કર્મથી રચીણામ્-ધનના દેવા-દાતા, વસુવિદા-પુષ્કળ ધનને પ્રાપ્ત કરાવનાર અગ્નિ અને જળની સમાન વર્તમાન અધ્યાપક અને ઉપદેશક છે, તેની સેવા કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ શિલ્પી = કારીગર દ્વારા ઉચિત પ્રકારથી સમ્યક્ પ્રયોગ કરવામાં આવેલ અગ્નિ અને જળ, યાનો = વાહનોને મનના વેગની સમાન ગતિ કરનાર-ચાલનાર તથા પુષ્કળ ધન પ્રાપ્ત કરાવનાર છે, તેમ અધ્યાપક અને ઉપદેશક હોવા જોઈએ. (૨)

વચ્ચન્તે વાં કકુહાસો જૂર્ણાયામધિ વિષ્ટપિ । યદ્વાં રથો વિભિષ્પતાત્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે શિલ્પીઓ ! જે જૂર્ણાયાં-વૃદ્ધાવસ્થામાં વિદ્યમાન કકુહાસઃ-મહાન વિદ્વાન વામ્-તમે શિલ્પ વિદ્યા ભણવા-ભણાવનારાઓને વિદ્યાઓનો વચ્ચન્તે-ઉપદેશ કરો, તો વામ્-આપના રથેલા રથઃ-વિમાનાદિ વાહનો વિભિઃ-પક્ષીઓની સમાન વિષ્ટપિ-અન્તરિક્ષમાં અધિ-ઉપર પતાત્-ચાલે-ઊડે. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનની પાસે શિલ્પ અને શિક્ષાને શ્રદ્ધા કરીને વિમાન આદિ યાનોની રચના કરે, તો પક્ષીની સમાન આકાશમાં ગમન-આગમનમાં સમર્થ બની શકે છે. (૩)

હવિષા જારો અપાં પિપર્તિ પપુરિર્નરા । પિતા કુટસ્ય ચર્ષણિઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે નરા-નીતિ શીખવનાર, ભણાવનાર અને ઉપદેશ કરનારાઓ-અર્થાત્ અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! તમે જેમ જારઃ-વિભાગકર્તા, પપુરિઃ-સમ્યક્ પૂર્તિકર્તા, પિતા-પાલક, કુટસ્ય-કુટિલ માર્ગનો ચર્ષણિઃ-દર્શક સૂર્ય હવિષા-આહુતિથી વધીને અપામ્-જળના યોગથી પિપર્તિ-પૂર્ણ કરીને પ્રજાઓનું પાલન કરે છે, તેમ પ્રજાનું પાલન કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય વર્ષા આદિ દ્વારા પ્રાણીઓ તથા અપ્રાણીઓને પુષ્ટ કરે છે, તેમ મનુષ્યોએ સર્વને પુષ્ટ કરવા જોઈએ. (૪)

આદારો વાં મતીનાં નાસત્યા મતવચસા । પાતં સોમસ્ય ધૃષ્ણુયા ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-પવિત્ર ગુણ-સ્વભાવયુક્ત મતવચસા-જ્ઞાનથી બોલનાર સભાપતિ અને સેનાપતિ ! તમે જે વામ્-તમારો આદારઃ-સર્વ પ્રકારથી શત્રુઓને વિદારણ કરવાનો ગુણ છે, તે અને ધૃષ્ણુયા-પ્રગલ્ભતાથી સોમસ્ય-ઐશ્વર્ય અને મતીનામ્-મનુષ્યોની પાતમ્-રક્ષા કરો. (૫)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષો દૃઢ-બળયુક્ત સેનાથી શત્રુઓને જીતીને પોતાનું અને પ્રજાઓનું ઐશ્વર્ય નિત્ય વૃદ્ધિ કરે. (૫)

યા નઃ પીપરદશ્વિના જ્યોતિષ્મતી તમસ્તિરઃ । તામસ્મે રાસાથામિષમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સભા અને સેના અધ્યક્ષો ! જેમ સૂર્ય અને ચંદ્રમાની જ્યોતિષ્મતી-ઉત્તમ

પ્રકાશયુક્ત કાન્તિ તમઃ-રાત્રિનું નિવારણ કરીને પ્રભાત અને શુકલપક્ષથી સર્વનું પોષણ કરે છે, તેમ અસ્મે-અમારી અવિદ્યાનું નિવારણ અને વિદ્યાનો પ્રકાશ કરીને નઃ-અમને (તામ્-તે) ઇષમ્-અન્ન આદિને રાસાથામ્-પ્રદાન કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અને ચંદ્રમા અંધકારને દૂર કરીને પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, તેમ સભાપતિ અને સેનાપતિ અન્યાયને દૂર કરીને પ્રજાઓને સુખી કરે. (૬)

આ નૌ નાવા મંતીનાં યાતં પારાય ગન્તવે । યુજ્જાથામશ્વિના રથમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-વ્યવહાર કરનાર શિલ્પીઓ ! આપ મતીનામ્-મનુષ્યોને નાવા-નૌકા દ્વારા પારાય-પાર ગન્તવે-જવા માટે નઃ-અમારા માટે (આયાતમ્-પ્રાપ્ત થાઓ અને) રથમ્-વિમાન આદિ યાન સમૂહને યુજ્જાથામ્-યુક્ત કરીને ચલાવો. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, રથથી ભૂમિ પર, નૌકાથી સમુદ્રમાં અને વિમાનથી આકાશમાં ગમનાગમન કરવું જોઈએ. (૭)

અરિત્રિં વાં દિવસ્પૃથુ તીર્થે સિન્ધૂનાં રથઃ । ધિયા યુયુજ્ઞ ઇન્દવઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે શિલ્પીઓ ! જે વામ્-આપના (પૃથુ-વિસ્તૃત) રથઃ-યાન સમૂહ વિવિધ વાહનો છે, તેને સિન્ધૂનામ્-સમુદ્રમાં તીર્થે-તરાવવામાં અરિત્રિમ્-વાહન રોકવામાં તથા ઊંડા જળમાં સ્થિર રાખવા માટે લોખંડના સાધનો દિવઃ-પ્રકાશમાન વિદ્યુત્, અગ્નિ આદિ અને ઇન્દવઃ-જળ આદિને (ધિયા-ક્રિયાથી) યુયુજ્ઞ-યુક્ત કરો. (૮)

ભાવાર્થ : નિશ્ચય જ કોઈ પણ મનુષ્ય અગ્નિ, જળ આદિ દ્વારા સંચાલિત યાનના વિના ભૂમિ, સમુદ્ર અને આકાશમાં સુખપૂર્વક ગમન કરી શકતો નથી. (૮)

દિવસ્કળવાસુ ઇન્દવો વસુ સિન્ધૂનાં પદે । સ્વં વૃત્તિં કુહં ધિત્સથઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે કળવાસુઃ-મેધાવી વિદ્વાનો ! તમે એ શિલ્પીઓ = કારીગરોને પૂછો, કે તમે સિન્ધૂનામ્-સમુદ્રોના પદે-માર્ગમાં જે દિવઃ-પ્રકાશમાન અગ્નિ અને ઇન્દવઃ-જળ આદિ છે, તેને તથા સ્વમ્-પોતાના વૃત્તિમ્-સુંદર રૂપ યુક્ત વસુ-ધનને કુહ-ક્યાં ધિત્સથઃ-ધારણ કરવાની અર્થાત્ રાખવાની ઈચ્છા કરો છો. (૯)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો વિદ્વાનોની શિક્ષા અનુસાર અગ્નિ-જળ આદિના પ્રયોગથી યુક્ત યાનોમાં બેસીને રાજ્યકાર્ય અને વ્યાપારની સિદ્ધિ માટે સમુદ્ર પાર જાય, તો તે પુષ્કળ રૂપ અને ધનને પ્રાપ્ત કરે. (૯)

અભૂદુ ભા ડ અંશવે હિરણ્યં પ્રતિ સૂર્યઃ । વ્યઘ્વજ્ઞિહ્વાયાઽસિંતઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે શિલ્પીઓ ! તમે જેમ અસિત:-અબદ્ધ = બંધન રહિત ભા:-પ્રકાશયુક્ત સૂર્ય:-સૂર્યના અંશવે-કિરણોના વિભાગ માટે જિહ્વા-જીભની સમાન વ્યખ્યત્-પ્રસિદ્ધતાથી પ્રકાશમાન સન્મુખ અભૂત-થાય છે, તેમ તેના પર યાનનું સ્થાપન કરીને તેમાં ઉચિત સ્થાન પર હિરણ્યમ્ સુવર્ણ આદિ ઉત્તમ પદાર્થોને રાખો.-ગોઠવો. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે યાનોથી યાત્રા કરનાર જનો ! તમે લોકો ધ્રુવ તારા, (દિશા સૂચક) યંત્ર અને સૂર્ય આદિના માધ્યમથી દિશાઓને જાણીને યાનોને ચલાવો અને ઊભા રાખો-થોભાવો. જેથી ભ્રમથી તમારું અન્ય સ્થાન પર ગમન થાય નહિ. (૧૦)

અભૂદ્ પારમેતવે પન્થાઃ ઋતસ્ય સાધુયા । અર્દશિ વિ સ્તુતિર્દિવઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ સમુદ્રાદિને પારમ્-પાર એતવે-જવા માટે જ્યાં દિવઃ-પ્રકાશમાન સૂર્ય અને ઋતસ્ય-જળના વિસ્તુતિ:-અનેક પ્રકારના ગમન માટે પન્થા-માર્ગો અભૂત્-હોય, ત્યાં સ્થિર થઈને સાધુયા-ઉત્તમ વાહનથી (યાત્રા કરીને) સુખપૂર્વક દેશ-દેશાન્તરને અર્દશિ-નિહાળે તો શ્રીમંત કેમ ન બને ? (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, ગમનાગમન માટે સરળ, શુદ્ધ માર્ગોનું નિર્માણ કરીને તથા તેમાં વિમાન આદિ યાનોથી સારી રીતે યાત્રા કરીને અનેક પ્રકારના સુખોને પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. (૧૧)

તત્તદિદ્શ્વિનોરવોઃ જરિતા પ્રતિ ભૂષતિ । મદે સોમસ્ય પિપ્રતોઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : જે જરિતા-સ્તુતિ કરનાર વિદ્વાન પિપ્રતોઃ-પૂરણ કરનારા અશ્વિનોઃ-સભાપતિ અને સેનાપતિથી સોમસ્ય-ઉત્પન્ન જગતના મધ્યે મદે-આનંદયુક્ત વ્યવહારમાં અવઃ-રક્ષા આદિને પ્રતિભૂષતિ-અલંકૃત કરે છે, તત્તત્-તે-તે સુખોને (ઇત્-જ) પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૨)

ભાવાર્થ : કોઈપણ (મનુષ્ય) વિદ્વાનો દ્વારા શિક્ષા અને ક્રિયાને ગ્રહણ કર્યા વિના સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી, તેથી તેની શોધ નિત્ય કરવી જોઈએ. (૧૨)

વાવસાના વિવસ્વતિ સોમસ્ય પીત્યા ગિરા । મનુષ્વચ્છંભૂ આ ગતમ્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : વાવસાના-અત્યંત સુખમાં વસાવનાર, શમ્ભૂ-સુખોને ઉત્પન્ન કરનાર, ભણાવનાર અને સત્યનો ઉપદેશ કરનાર આપ વિવસ્વતિ-સૂર્યના પ્રકાશમાં સોમસ્ય-ઉત્પન્ન જગતના મધ્યમાં પીત્યા-રક્ષા રૂપી ક્રિયા અને ગિરા-વાણીથી અમને મનુષ્વત્-રક્ષક મનુષ્યોની સમાન આ-ગતમ્-સર્વ પ્રકારથી પ્રાપ્ત થાઓ. (૧૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પરોપકારીજન પ્રાણીઓને માટે નિવાસ, વિદ્યા અને પ્રકાશનાં દાનથી સુખ ઉત્પન્ન કરે છે, એજ રીતે તમે પણ સર્વના માટે પુષ્કળ સુખ ઉત્પન્ન કરો. (૧૩)

યુવોરુષા અનુ શ્રિયં પરિજ્મનોરુપાચરત્ । ઋતા વનથો અક્તુઽર્ષિઃ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે ઋત્વા-ઉચિતગુણ, સુંદર સ્વરૂપયુક્ત સભા અને સેનાપતિ ! જેમ ઊષા:-પ્રભાત વેળા અક્તુર્ષિઃ-રાતોની સાથે ઉપાચરત્-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ જે પરિજ્મનોઃ-સર્વત્ર ગમનકારક, પદાર્થોના પ્રકાશક સૂર્ય અને ચંદ્રમાની સમાન વિદ્યમાન યુવોઃ-આપનો ન્યાય અને રક્ષા અમને પ્રાપ્ત થાય. આપ શ્રિયમ્-

ઉત્તમ લક્ષ્મીનું અનુવનથ:-અનુકૂળતાપૂર્વક સેવન કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ અને પ્રજાજનો પરસ્પર પ્રીતિ કરીને તથા મહાન ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને, સદા સર્વનો ઉપકાર કરવાનો પ્રયત્ન કરે. (૧૪)

ઉભા પિબતમશ્વિનોભા ન્: શર્મ' યચ્છતમ્। અવિદ્રિયાભિસ્તુતિભિઃ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે સભા અને સેનાના ઈશ ! અશ્વિના-સંપૂર્ણ વિદ્યા અને સુખને વ્યાપ્ત થનાર ! તમે બન્ને અમૃતરૂપ ઔષધિઓના રસનું પિબતમ્-પાન કરો; અને ઉભા-બન્ને અવિદ્રિયાભિઃ-અખંડિત ક્રિયાયુક્ત કૃતિભિઃ-રક્ષાઓ દ્વારા ન્:-અમને શર્મ-સુખ યચ્છતમ્-આપો-પ્રદાન કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જો સભાપતિ અને સેનાપતિ આદિ રાજપુરુષો પ્રેમ અને વિનયપૂર્વક પ્રજાઓનું પાલન કરે, તો પ્રજાજન પણ એ રીતે તેઓની રક્ષા કરે. (૧૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઊષા અને અશ્વિઓનું પ્રત્યક્ષાર્થ વર્ણન કરેલ છે, તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૪૬)

સૂક્ત-૪૭

અયં વાં મધુમત્તમઃ સુતઃ સોમં ઋતાવૃધા।

તમશ્વિના પિબતં તિરોઅહ્ન્યં ધત્તં રત્નાનિ દાશુષે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઋતાવૃધા-જળ અને યથાર્થ શિલ્પક્રિયા કરીને વૃદ્ધિ કરનાર ! અશ્વિના-સૂર્ય અને વાયુની સમાન સભા અને સેનાના ઈશ ! વામ્-જે અયમ્-એ મધુમત્તમઃ-અત્યંત મધુરાદિ ગુણયુક્ત સોમઃ-યાન વ્યાપાર અને વૈદ્યક શિલ્પ ક્રિયાથી અમે સુતઃ-સિદ્ધ કરેલ છે; તમ્-તે તિરો અહ્ન્યમ્-તિરસ્કૃત દિવસમાં ઉત્પન્ન થયેલ રસનું તમે પિબતમ્-પાન કરો; અને વિદ્યાદાન કરનાર વિદ્વાનને માટે રત્નાનિ-સુવર્ણ આદિ અને યાન આદિને ધત્તમ્-ધારણ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : સભાપતિ આદિ સદા ઔષધિઓના સારભાગ-રસનું સેવન કરીને, બળવાન બનીને, પ્રજાની સંપત્તિઓની વૃદ્ધિ કરે. (૧)

ત્રિબન્ધુરેણ ત્રિવૃતાં સુપેશાસા રથેનાયાતમશ્વિના।

કળ્વાસો વાં બ્રહ્મ કૃણ્વન્ત્યધ્વરે તેષાં સુશૃણુતં હર્વમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : અશ્વિના-અગ્નિ અને જળની સમાન સભાના અને સેનાના ઈશ ! તમે જેમ કળ્વાસઃ-મેધાવીજન અધ્વરે-અગ્નિહોત્રાદિ અને શિલ્પક્રિયાથી સિદ્ધ યજ્ઞમાં જે ત્રિબન્ધુરેણ-ત્રણ બંધનયુક્ત ત્રિવૃતા-ત્રણ શિલ્પક્રિયાના પ્રકારોથી પૂરિત સુપેશાસા-ઉત્તમ રૂપ અથવા સુવર્ણ જડેલ રથેન-વિમાન આદિ યાન દ્વારા દેશ-દેશાન્તરોમાં શીઘ્ર ગમનાગમન કરીને બ્રહ્મ-અન્નાદિ પદાર્થોને કૃણ્વન્તિ-કરે છે, તેમ તેના

દ્વારા દેશ-દેશાન્તરો અને દ્વીપ-દ્વીપાન્તરોમાં આયાતમ્-ગમનાગમન કરો, તેષામ્-તે બુદ્ધિમાનોના હવમ્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વિદ્યાઓના ઉપદેશને શ્રૃણુતમ્-શ્રવણ કરો અને અન્નાદિની સમૃદ્ધિની વૃદ્ધિ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, વિદ્વાનોથી પદાર્થ-વિજ્ઞાનપૂર્વક યજ્ઞમય શિલ્પની હસ્તક્રિયાને પ્રત્યક્ષ કરીને વ્યવહાર કાર્યોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૨)

અશ્વિના મધુમત્તમં પાતં સોમમૃતાવૃધા ।

અથાઘ દંસ્ત્રા વસુ બિભ્રતા રથે દાશ્વાંસમુપગચ્છતમ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સૂર્ય અને વાયુની સમાન કર્મ અને દસ્ત્રા-દુઃખોને દૂર કરનાર ! વસુ-સર્વોત્કૃષ્ટ ધનને બિભ્રતા-ધારણ કરનાર તથા ઋજાવૃધા-યથાર્થ ગુણ સંયુક્ત પ્રાપ્તિ સાધનથી વૃદ્ધિ પામેલ સભાના અને સેનાના પતિ ! આપ અઘ-આજ વિદ્યમાન દિવસમાં મધુમત્તમમ્-અત્યંત મધુરાદિ ગુણોથી યુક્ત સોમમ્-વીરરસની પાતમ્-રક્ષા કરો, અથ-તત્પશ્ચાત્ પૂર્વોક્ત રથે-વિમાનાદિ યાનમાં બેસીને દાશ્વાંસમ્-દાતા પુરુષની ઉપગચ્છતમ્-સમીપ પ્રાપ્ત થાઓ. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુથી સૂર્ય અને ચંદ્રમાની પુષ્ટિ અને અંધકારનો નાશ થાય છે, તેમ જ સભાપતિ અને સેનાપતિ દ્વારા પ્રજાઓનાં દુઃખોનો નાશ અને ધનની વૃદ્ધિ થાય છે. (૩)

ત્રિષ્ઠસ્થે બર્હિષિ વિશ્વવેદસા મધ્વા યજ્ઞં મિમિક્ષતમ્ ।

કળ્વાસો વાં સુતસોમા અભિઘ્વો યુવાં હવન્તે અશ્વિના ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે વિશ્વવેદસા-સમસ્ત ધન પ્રાપ્ત કરનાર અશ્વિના-ક્ષત્રિય ધર્મમાં સ્થિત સભાના અને સેનાઓના રક્ષક ! આપ જેમ અભિઘ્વઃ-સર્વ પ્રકારની વિદ્યાઓના પ્રકાશક અને વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોના સાધક, સુતસોમા-ઉત્પન્ન પદાર્થોને ગ્રહણ કરનાર, કળ્વાસઃ-મેધાવી વિદ્વાનો ત્રિસઠસ્થે-ત્રણ-ભૂમિ, જળ અને વાયુની સ્થિતિ માટે, બર્હિષિ-અન્તરિક્ષમાં, મધ્વા-મધુરરસથી વામ્-આપ અને યજ્ઞમ્-શિલ્પ કર્મને હવન્તે-ગ્રહણ કરે છે, તેમ મિમિક્ષતમ્-સિદ્ધ કરવાની ઈચ્છા કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્યો વિદ્વાનોથી વિદ્યા ગ્રહણ કરીને, યાનોની રચના કરીને શીઘ્ર ગમન કરી શકે છે, તેમ અન્ય ઉપાયથી નહિ. (તેથી એમાં અવશ્ય પરિશ્રમ કરવો જોઈએ) (૪)

યાભિઃ કળ્વામભિષ્ટિભિઃ પ્રાવંતં યુવમશ્વિના ।

તાભિઃ ધ્વૃસ્માં અવંતં શુભસ્પતી પાતં સોમમૃતાવૃધા ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે ઋજાવૃધા-સત્ય અનુષ્ઠાન-આચરણથી વર્ધમાન શુભસ્પતી-કલ્યાણકારક કર્મ અને શ્રેષ્ઠ ગુણ સમૂહના પાલક ! અશ્વિના-સૂર્ય અને ચંદ્રમાના ગુણયુક્ત સભાના સેનાધ્યક્ષ ! યુવમ્-આપ બન્ને

યાભિઃ જે અભિષ્ટિભિઃ-ઈચ્છાઓથી સોમમ્-પોતાના ઐશ્વર્ય અને કળ્વામ્-મેધાવી વિદ્વાનની પાતમ્-

રક્ષા કરો, તેનાથી અસ્માન્-અમારી સુ-સારી રીતે આવતમ્-રક્ષા કરો અને જેનાથી અમારી રક્ષા કરો, તેનાથી સર્વ પ્રાણીઓની આવતમ્-રક્ષા કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ સભાપતિ અને સેનાપતિ વગેરે રાજપુરુષો પોતાના ઐશ્વર્યની રક્ષા કરે, તેમ પ્રજા અને સેનાઓની નિરંતર રક્ષા કરે. (૫)

સુદાસેં દસ્ત્રા વસુ બિભ્રતા રથે પૃક્ષો વહતમશ્વિના ।

રયિં સમુદ્રાદુત વાં દિવસ્પર્યસ્મે ધત્તં પુરુસ્પૃહમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે દસ્ત્રા-શત્રુનાશક વસુ-વિદ્યાદિ ધન સમૂહને વિભ્રતા-ધારણ કરીને અશ્વિના-વાયુ અને વિદ્યુત્ સમાન પૂર્ણ ઐશ્વર્યયુક્ત ! આપ જેમ સુદાસે-ઉત્તમ દાસ-સેવકયુક્ત રથે-વિમાનાદિ યાનમાં સમુદ્રાત્-સમુદ્ર અને સૂર્યથી ઉત્-અને દિવઃ-પ્રકાશયુક્ત આકાશથી પાર પૃક્ષઃ-સુખ પ્રાપ્તિનું કારણ પુરુસ્પૃહમ્-જે પુષ્કળની ઈચ્છાવાળા હોય, તે રયિમ્-રાજ્ય લક્ષ્મીને ધારણ કરે, તેમ અસ્મે-અમારા માટે પરિચિન્તમ્-ધારણ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : સભાપતિ આદિ રાજપુરુષોએ સેના અને પ્રજાને માટે અનેક પ્રકારના ધન અને સમુદ્ર આદિની પાર જવા માટે વિમાન આદિ યાન બનાવીને સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૬)

યન્નાસત્યા પરાવતિ યદ્વા સ્થો અધિં તુર્વશે ।

અતો રથેન સુવૃતાં ન આ ગતં સાકં સૂર્યસ્ય રશ્મિભિઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-સત્ય ગુણ-કર્મ-સ્વભાવયુક્ત સભાધ્યક્ષ અને સેનાપતિ ! આપ યત્-જે સુવૃતા-ઉત્તમ અંગોથી પરિપૂર્ણ રથેન-વિમાન આદિ યાનથી યત્-જે કારણે પરાવતિ-દૂર દેશમાં ગમન કરવા તથા તુર્વશે-વેદ અને શિલ્પ વિદ્યાના જ્ઞાતા વિદ્વાનજનની અધિષ્ઠઃ-ઉપર સ્થિત થાઓ છો, અતઃ-એથી સૂર્યસ્ય-સૂર્યનાં રશ્મિભિઃ-કિરણોના સાકમ્-સાથે નઃ-અમને આગતમ્-સર્વ પ્રકારથી પ્રાપ્ત થાઓ.

ભાવાર્થ : રાજા અને સભાપતિ આદિ, જે યાનથી આકાશ માર્ગ દ્વારા બીજા દેશમાં જઈ શકે, તે યાનનું લોકો પ્રયત્નપૂર્વક નિર્માણ કરે. (૭)

અર્વાઞ્ચા વાં સપ્તયોઽધ્વરશ્રિયો વહન્તુ સવનેદુર્પ ।

ઇષં પૃચ્વન્તાં સુકૃતેં સુદાનવ આ બર્હિઃ સીદતં નરા ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : અર્વાઞ્ચા-ઘોડા સમાન વેગવાન પૃચ્વન્તા-સુખકારક નરા-સભા પતિ અને સેનાપતિ ! આપ જે વામ્-તમારા સપ્તયઃ-વરાળ આદિ અશ્વયુક્ત સુકૃતે-સુંદર કર્મ કરનાર, સુદાનવે-ઉત્તમ દાતા મનુષ્યને માટે ઇષમ્-ધર્મની ઈચ્છા અને ઉત્તમ અન્ન આદિ બર્હિઃ-આકાશ અને શ્રેષ્ઠ પદાર્થ સવના-યજ્ઞની સિદ્ધિની ક્રિયા અધ્વરશ્રિયઃ-તથા પાલનીય ચક્રવર્તી રાજ્યની શ્રીલક્ષ્મીઓને આવહન્તુ-પ્રાપ્ત કરાવે, તે

પુરુષોનો **ઉપસીદતમ્**-સંગ સદા કરો. (૮)

ભાવાર્થ : રાજા લોકો તથા પ્રજાજન પરસ્પર ઉત્તમ પદાર્થોને સમર્પિત કરીને સુખી બને. (૮)

તેન નાસત્યાગતં રથેન સૂર્યત્વચા ।

યેન શશ્વદૂહથુર્દાશુષે વસુ મધ્વઃ સોમસ્ય પીતયે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે **નાસત્યા**-સત્યાચરણ સ્વરૂપ સભાપતિ અને સેનાપતિ ! આપ **યેન**-જે **સૂર્યત્વચા**-સૂર્યનાં કિરણોની સમાન તેજસ્વી **રથેન**-ગમન કરાવનાર વિમાન આદિ યાનથી **આગતમ્**-સારી રીતે આગમન કરો, **તેન**-તેથી **દાશુષે**-દાનશીલ મનુષ્ય માટે **મધ્વઃ**-મધુર ગુણયુક્ત **સોમસ્ય**-પદાર્થ સમૂહના **પીતયે**-પાન અને ભોગ માટે **વસુ**-કાર્યરૂપી દ્રવ્યને **ઠ્ઠથુઃ**-પ્રાપ્ત કરાવો. (૯)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષો જેમ પોતાના હિત માટે પ્રયત્ન કરે, તેમ પ્રજાના સુખ માટે પણ પ્રયત્ન કરે. (૯)

ઉક્થેભિર્વાગવસે પુસ્વસૂ અકૈશ્ચ નિ હ્વામાહે ।

શશ્વત્કણવાનાં સદસિ પ્રિયે હિ કં સોમં પપથુરશ્વિના ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે **પુસ્વસૂ**-અનેક વિદ્વાનોમાં વાસ કરનાર **અશ્વિના**-વાયુ અને સૂર્ય સમાન વિદ્યમાન ધર્મ અને ન્યાયના પ્રકાશક ! **અવસે**-રક્ષાદિ માટે અમે **ઉક્થેભિઃ**-વેદોક્ત સ્તોત્ર અને વેદ વિદ્યાના જ્ઞાતા વિદ્વાનોના ઈષ્ટ વચનોના **અકૈઃ**-વિચારથી જ્યાં **કણવાનામ્**-વિદ્વાનોની **પ્રિયે**-પ્રિય **સદસિ**-સભામાં આપને **નિહ્યામાહે**-અત્યંત શ્રદ્ધાપૂર્વક બોલાવે છે, ત્યાં તમે **અર્વાક્**-પશ્ચાત્ **શશ્વત્**-સનાતન-અનાદિરૂપમાં **કમ્**-સુખને પ્રાપ્ત કરો; **ચ**-અને **હિ**-નિશ્ચયપૂર્વક **સોમમ્**-સોમવલી આદિ ઔષધિઓના રસનું **પપથુઃ**-પાન કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : રાજ પુરુષો અને પ્રજાજનો વિદ્વાનોની સભામાં જઈને ઉપદેશોને નિત્ય સાંભળે, જેથી સર્વને કર્તવ્ય અને અકર્તવ્યનો બોધ થઈ શકે. (૧૦)

સંગતિ : અહીં રાજા અને પ્રજાના ધર્મનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૪૭)

સૂક્ત-૪૮

સહ વામેન ન ઉષો વ્યુચ્છા દુહિતર્દિવઃ ।

સહ દ્યુમ્નેન બૃહતા વિભાવરિ રાયા દૈવિ દાસ્વતી ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે **દિવઃ**-સૂર્યપ્રકાશની **દુહિતઃ**-પુત્રીની સમાન **ઉષઃ**-ઉષા સમાન વિદ્યમાન **વિભાવરિ**-વિવિધ દીપ્તિયુક્ત **દૈવિ**-વિદ્યા અને સુશિક્ષાઓથી પ્રકાશમાન કન્યા-પુત્રી **દાસ્વતી**-પ્રશસ્ત દાનયુક્ત ! તું **બૃહતા**-મહાન ગુણ વિશેષથી **વામેન**-પ્રશંસિત પ્રકાશ સહિત, **દ્યુમ્નેન**-ન્યાયપ્રકાશ કરવા સહિત,

રાયા-વિદ્યા, ચક્રવર્તી રાજ્યલક્ષ્મી સહ-સહિત, ન:-અમને વ્યુચ્છ-વિવિધ પ્રકારથી પ્રેરણા કર. (૧)

ભાવાર્થ : જેનાથી જે ઉત્પન્ન થાય છે, તે તેના સંતાન સમાન હોય છે. જેમ કોઈ સ્વામીનો ભૃત્ય-નોકર પોતાના સ્વામીને જગાડીને તથા સચેત કરીને તેને વ્યવહારોમાં પ્રયોજે છે; જેમ ઉષા-પ્રભાતવેળા પ્રાણીઓને પુરુષાર્થયુક્ત કરીને તેને વિશાળ પદાર્થ-સમૂહને અથવા સુખથી સંયુક્ત કરીને આનંદિત કરે છે; એજ રીતે જેમ સાંજની ઉષા = સંધ્યાવેળા સર્વને વ્યવહારિક કાર્યોથી નિવૃત્ત કરીને વિશ્રામયુક્ત કરે છે, તેમ માતા-પિતાએ વિદ્યા અને સુશિક્ષા આદિ વ્યવહારોમાં પોતાની કન્યાઓને પ્રેરિત કરવી જોઈએ. (૧)

અશ્વાવતીગોમતીર્વિશ્વસુવિદો ભૂરિં ચ્યવન્ત વસ્તવે ।

उदीरय प्रति मा सूनृता उषश्चोद् राधो मघोनाम् ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે ઉષ:-ઊષા સમાન સ્ત્રી ! તું જેમ એ શુભગુણયુક્તા ઊષા છે, તેમ અશ્વાવતી:-પ્રશંસનીય વ્યાપ્તિ યુક્ત, ગોમતી:-પુષ્કળ ગાય આદિ પશુઓ સહિત, વિશ્વસુવિદ:-સર્વ પદાર્થોને સમ્યક્ જાણનારી, સૂનૃતા:-સારી સત્ય, પ્રિયાદિયુક્ત વાણીઓને વસ્તવે-સુખમાં નિવાસ માટે ભૂરિ-બહુશ: ઉદીરય-પ્રેરણાકર; અને જે વ્યવહારોથી ચ્યવન્ત-નિવૃત્ત થાય છે, તેને મઘોનામ્-ધનવાનોના સાનિધ્યથી રાધ:-સર્વોત્તમ ધનને ચોદ-પ્રેરણા કર, તેનાથી મા-મને પ્રતિ-આનંદિત કર. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ સુશોભિત ઊષા સર્વ પ્રાણીઓને સુખ પ્રદાન કરે છે, તેમ સ્ત્રીઓ પોતાના પતિઓને નિરંતર સુખી કરે. (૨)

उवासोषा उच्छाच्च नु देवी जीरा रथानाम् ।

ये अस्या आचरणेषु दधिरे समुद्रे न श्रवस्यवः ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ઊષાની સમાન જીરા-વેગ યુક્ત દેવી-સુખ આપનારી રથાનામ્-આનંદદાયક યાનોમાં ઉવાસ-વસે છે, યે-જે અસ્યા:-એ સતી સ્ત્રીના આચરણેષુ-ધર્મયુક્ત આચરણોમાં સમુદ્રે-ન-જેમ સમુદ્રમાં શ્રવસ્યવ:-સ્વયં વિદ્યાને સાંભળનારા વિદ્વાનો ઉત્તમ નૌકાથી ગમનાગમન કરે છે, તેમ દધિરે-પ્રીતિ રાખે છે, તે પુરુષ અત્યંત આનંદને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩)

ભાવાર્થ : જેને પોતાના સમાન વિદુષી = પંડિતા અને સર્વથા અનુકૂળ સ્ત્રી પ્રાપ્ત થાય છે, તે જ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩)

उषो ये ते प्र यामेषु युञ्जते मनो दानाय सूरयः ।

अत्राह तत्कण्व एषां कण्वतमो नाम गृणाति नृणाम् ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જે સૂરય:-સ્તુતિ કરનારા વિદ્વાનો ! તે-આપના દ્વારા ઉપદેશ પ્રાપ્ત કરીને અત્ર-એ ઉષ:-પ્રભાતના યામેષુ-પ્રહરોમાં દાનાય-વિદ્યાદિ દાન માટે મન:-વિજ્ઞાનયુક્ત ચિત્તને પ્રયુજ્જતે-પ્રયુક્ત કરે છે, તે જીવન્મુક્ત બને છે; અને જે કણ્વ:-મેધાવી ણામ્-એ નૃણામ્-પ્રધાન વિદ્વાનોના

નામ-નામોને ગૃણાતિ-પ્રશંસિત કરે છે, તે કણ્વતમ:-અતિશય મેધાવી = બુદ્ધિમાન બને છે. (૪)
ભાવાર્થ : જે લોકો એકાન્ત, પવિત્ર, વિધ્નબાધા રહિત સ્થાનમાં બેસીને યમથી લઈને સંયમ પર્યન્ત ઉપાસનાના નવ અંગોનો અભ્યાસ કરે છે, તેઓ પવિત્ર આત્માયુક્ત બનીને વિશેષ જ્ઞાનવાન, આપ્ત અને સિદ્ધ બની જાય છે; અને જેઓ તેઓનો સંગ કરે છે, તેઓ પણ શુદ્ધ અન્તઃકરણ યુક્ત બનીને આત્મયોગના જિજ્ઞાસુ બની જાય છે. (અર્થાત્ આત્મયોગ જાણવાના અધિકારી બને છે.) (૪)

આ ઘા યોષેવ સૂનર્યુષા યાતિ પ્રભુઞ્જતી ।

જરયન્તી વૃજનં પદ્મદીયત ઉત્પાતયતિ પક્ષિણઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : જે યોષેવ-સત્સ્ત્રીની સમાન પ્રભુઞ્જતી-સારી રીતે ભોગતી, સનરી-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થતી, જરયન્તી-જીર્ણાવસ્થાને કરતી, ઊષા:-પ્રાતઃકાળ પદ્મત્-પગોની સમાન વૃજનમ્-માર્ગને ઈચ્છે-પ્રાપ્ત કરીને, યાતિ-જાતી અને પક્ષિણ:-પક્ષીઓને ઉત્પાતયતિ-ઉડાડે છે, તે કાળમાં સર્વેએ યોગાભ્યાસ ઘ-જ કરવો જોઈએ. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ ઊષા નિર્મળ, સર્વદા સુખદાયિની અને યોગાભ્યાસની હેતુ છે, તેમ સ્ત્રીઓ એ બનવું જોઈએ. (૫)

વિ યા સૃજતિ સમનં વ્યર્થિનઃ પદં ન વેત્યોદતી ।

વયો નર્કિષ્ટે પપ્તિવાંસ આસતે વ્યુષ્ઠૌ વાજિનીવતી ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે યોગાભ્યાસીની સ્ત્રી ! આપ જેમ યા-જે ઓદતી-આર્દ્રતા કરતી, નર્કિ:-શબ્દ ન કરતી, વાજિનીવતી-અનેક ક્રિયાઓની હેતુ ઊષા:-પ્રાતઃ કાળ અર્થિનઃ-પ્રશસ્ત અર્થવાળાની પદં ન-પ્રાપ્તિના યોગ્યની સમાન સમનમ્-સુંદર સંગ્રામમાં જેમ વિવેતિ-વ્યાપ્તિ થાય છે, જેની વ્યુષ્ઠૌ-દાહક કાન્તિમા-(દિવસના તાપમાં) પપ્તિવાંસ-પતનશીલ વયઃ-પક્ષી આસતે-સ્થિર થાય છે, તે સમય = વેળા તે-તારા યોગાભ્યાસ માટેનો છે, એને તું જાણ. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ સ્ત્રીઓ વ્યવહારથી પોતાના પદાર્થો પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ પોતાના પ્રકાશથી પોતાના વ્યવહારના અધિકારને પ્રાપ્ત થાય છે.

જેમ એ ઉષા દિવસને ઉત્પન્ન કરીને, સર્વ પ્રાણીઓને જાગૃત કરીને-ઉડાડીને, તેને પોત-પોતાના કાર્યોમાં સંલગ્ન કરીને રાત્રિની નિવૃત્તિ કરે છે; અને દિવસની ઉત્પત્તિ દ્વારા દાહ (= તીવ તાપ)ને ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ સ્ત્રીઓએ બનવું અર્થાત્ કરવું જોઈએ. (૬)

एषायुक्त परावतः सूर्यस्योदयनादधि ।

शतं रथैभिः सुभगोषा इयं वि यात्यभि मानुषान् ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! જેમ ઇષા-એ ઊષા:-પ્રાતઃકાળ (પરાવત:-દૂર દેશથી) સૂર્યસ્ય-સૂર્ય મંડળના ઉદયનાત્-ઉદય અધિ-ઉપરાંત અધ્યભ્વયુક્ત-ઉપર સન્મુખથી સર્વમાં યુક્ત થાય છે, જેવી રીતે ઇયમ્-

એ સુભગા-ઉત્તમ ઐશ્વર્યયુક્ત રથેભિઃ-રમણીય યાનોથી શતમ્-અસંખ્ય માનુષાન્-મનુષ્યાદિને વિયાતિ-વિવિધ રીતે પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તમે પણ થાઓ.

ભાવાર્થ : જેમ પતિવ્રતા સ્ત્રીઓ નિયમપૂર્વક પોતાના પતિઓનું સેવન કરે છે; તથા જેમ ઊષા અને પદાર્થોનો સંયોગ દૂર દેશથી સ્થાનથી થાય છે, તેમ દૂર-સ્થિત કન્યા અને વરનો વિવાહ કરવો જોઈએ, દૂર દેશમાં પ્રેમની વૃદ્ધિ થાય છે. જેમ સમીપ-દેશ સ્થિત (વર-કન્યાઓ)ના વિવાહ કલેશ-કારક બને છે, તેમ દૂર દેશ સ્થિત (વર કન્યાઓ)ના સુખકારક બને છે. (૭)

વિશ્વમસ્યા નાનામ્ ચક્ષસે જગજ્વ્યોતિષ્કૃણોતિ સૂનરીં ।

અપ્ દ્વેષો મ્ધોનીં દુહિતા દિવ્ ડષા ઉચ્છદપ્ સ્ત્રિધઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! તમે જેમ મધોની-પ્રશંસિત ધન હેતુ, સૂનરી-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરાવનારી, દિવઃ-પ્રકાશમાન સૂર્યની દુહિતા-પુત્રીની સમાન ડષાઃ-પ્રકાશિત પ્રભાતવેળાને વિશ્વમ્-સમસ્ત જગત નાનામ્-આદર-નમન કરે છે; અને તેના-તેણીના ચક્ષસે-દર્શન કરવા અર્થાત જોવા માટે જ્યોતિઃ-પ્રકાશ કૃણોતિ-કરે છે; અને સ્ત્રિધઃ-હિંસક, દ્વેષઃ-દ્વેષી શત્રુઓનો અયોચ્છત્-દૂર વાસ કરે છે, તેમ પતિ આદિમાં વર્તો-(આચરણ કરો.) (૮)

ભાવાર્થ : જેમ સુશીલ સ્ત્રી વિધનોને દૂર કરીને કર્તવ્ય કર્મોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ ઊષા દસ્યુ, ચોર, શત્રુ આદિને દૂર કરીને કાર્યોની સિદ્ધિ કરાવનારી હોય છે. (૯)

ઉષ્ આ ભાહિ ભાનુનાં ચન્દ્રેણ દુહિતર્દિવઃ ।

આવહન્તી ભૂર્યસ્મભ્યં સૌભગં વ્યુચ્છન્તી દિવિષ્ટિષુ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે દિવઃ-સૂર્યનાં પ્રકાશની દુહિતઃ-પુત્રી સમાન કન્યા ! જેમ ડષાઃ-પ્રકાશમાન ઊષા ભાનુના-સૂર્ય અને ચન્દ્રેણ-ચંદ્રમાથી અસ્મભ્યમ્-અમે પુરુષાર્થોને માટે ભૂરિ-બહુ જ સૌભગમ્-ઐશ્વર્યના સમૂહને આવહન્તી-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવતી, દિવિષ્ટિષુ-પ્રકાશિત કાન્તિઓમાં વ્યુચ્છન્તી-નિવાસ કરાવતી, સંસારને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ તું વિદ્યા અને શમાદિથી આભાહિ-સુશોભિત થા. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ ઉત્તમ કન્યા માતૃકુળ અને પિતૃકુળ બન્નેના નામને ઉજ્જવલ કરે છે, તેમ ઊષા સ્ત્રૂળ અને સૂક્ષ્મ બન્ને પ્રકારની વસ્તુઓને પ્રકાશિત કરે છે. (૯)

વિશ્વસ્ય હિ પ્રાણનં જીવનં ત્વે વિયદુચ્છસિં સૂનરિ ।

સા નો રથેન બૃહતા વિભાવરિ શ્રુધિ ચિત્રામઘે હવમ્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે સૂનરિ-સારી રીતે વ્યવહારને પ્રાપ્ત વિભાવરિ-વિવિધ પ્રકાશયુક્ત ચિત્રામઘે-ચિત્ર = અદ્ભુત મઘ = ધન અર્થાત્ અનેક પ્રકારના ધનથી સુશોભિત સ્ત્રી ! જેમ ઊષા બૃહતા-મહાન રથેન-

રમણીય સ્વરૂપ વા વિમાનાદિ યાનથી વિદ્યમાન જેમાં વિશ્વસ્ય-સમસ્ત પ્રાણીઓના પ્રાણનમ્-પ્રાણ અને જીવનમ્-જીવિકાની પ્રાપ્તિનો સંભવ હોય છે, તેમ જ ત્વે-તારામાં હોય છે. યત્-જો તું ન:-અમને વ્યુચ્છસિ-વિવિધ પ્રકારે વાસ કરાવે છે, તે તું અમારા હવમ્-સાંભળવા-સંભળાવવા યોગ્ય વાક્યોને શ્રુધિ-સાંભળ. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ ઊંચાથી સર્વ પ્રાણીમાત્રને સુખ થાય છે, તેમ ઉત્તમ સ્વભાવવાળી સ્ત્રીથી પ્રસન્ન રહેનારને, સર્વ આનંદ પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૦)

उषो वाजं हि वंस्व यश्चित्रो मानुषे जनै।

तेनावह सुकृतो अध्वरां उप ये त्वा गृणन्ति वह्नयः ॥ ११ ॥

પદાર્થ : હે ઉષ:-પ્રભાતકાળ સમાન વિદ્યમાન સ્ત્રી ! તું ય:-જે ચિત્ર:-અદ્ભુત ગુણ-કર્મ-સ્વભાવયુક્ત, સુકૃત:-ઉત્તમ કર્મ કરનાર તારો પતિ છે, માનુષે-મનુષ્ય જને-વિદ્યા, ધર્મ આદિ ગુણોથી પ્રસિદ્ધિમાં વાજમ્-જ્ઞાન અને અન્નને હિ-નિશ્ચયપૂર્વક વસ્વ-સમ્યક્ રીતે સેવન કર.

યે-જે વહ્નય:-પ્રાપ્તિ કરાવનાર વિદ્વાન મનુષ્ય જે કારણે અધ્વરાન્-અધ્વરયજ્ઞ અથવા અહિંસનીય વિદ્વાનોની ઉપગૃણન્તિ-સમ્યક્ સ્તુતિ કરે છે અને તને ઉપદેશ આપે છે, તેન-તેથી તેઓને આવહ-સુખોને પ્રાપ્ત કરાવતી રહે છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સૂર્ય ઊંચાને પ્રાપ્ત થઈને, દિવસને ઉત્પન્ન કરીને, સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે; એમ પુરુષ પોતાની સ્ત્રીઓ-પત્નીઓને સુભૂષિત-અલંકૃત કરે તથા પુરુષોને તેની સ્ત્રીઓ પણ અલંકૃત કરે. એ રીતે પરસ્પરના અત્યંત પ્રેમ અને ઉપકાર દ્વારા સદા સુખી રહે. (૧૧)

विश्वान्देवाँ आ वह सोमपीतयेऽन्तरिक्षादुषस्त्वम्।

सास्मासु धा गोमदश्चावदुक्थ्यमुषो वाजं सुवीर्यम् ॥ १२ ॥

પદાર્થ : હે ઉષ:-પ્રભાત સમાન સ્ત્રી ! હું સોમપીતયે-સોમ આદિ પદાર્થોના પાન માટે અન્તરિક્ષાત્-ઉપરથી વિશ્વાન્-સમસ્ત દેવાન્-દિવ્યગુણયુક્ત પદાર્થો અને જે તને પ્રાપ્ત થાઉં છું, તેને તું પણ આવહ-સારી રીતે પ્રાપ્ત થા.

હે ઉષ:-ઊંચા સમાન હિતકારક અને સા-તું સવ-ઈચ્છિત પદાર્થો પ્રાપ્ત કરાવનારી અસ્માસુ-અમે ઈન્દ્રિય, કિરણ અને પૃથિવી આદિથી અશ્વાવત્-અને અત્યુત્તમ ઘોડાઓથી યુક્ત સુવીર્યમ્-શ્રેષ્ઠ વીર્ય-પરાક્રમકારક વાજમ્-વિજ્ઞાન તથા અન્નને ધા:-ધારણ કર. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ એ ઊંચા પોતાના પ્રાદુર્ભાવથી શુદ્ધ જળ, વાયુ, પ્રકાશ આદિ પ્રાપ્ત કરાવીને તથા દોષોનો નાશ કરીને, સર્વ ઉત્તમ પદાર્થોના સમૂહને પ્રકટ કરે છે, તેમ ઉત્તમ સ્ત્રી ગૃહકાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થાય. (૧૨)

यस्या रुशन्तो अर्चयः प्रति भद्रा अदृक्षत ।

सा नो रयिं विश्ववारं सुपेशसमुषा ददातु सुगम्यम् ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! યસ્યા-જેની સાનિધ્યથી એ સ્થાન્ત:-ચોર, ડાકુ, અંધકાર આદિનો નાશ થાય છે; અને ભદ્રા:-કલ્યાણકારિણી, અર્ચય:-દીપ્તિ, પ્રત્યદક્ષત-પ્રત્યક્ષ થાય છે.

સા-જેમ એ ઊષા-સુરૂપ આપનારી પ્રભાતવેળા ન:-અમારા માટે વિશ્વવારમ્-સમસ્ત આશ્ચાદન કરવા = ઢાંકવા યોગ્ય, સુપેશસમ્-સુશોભિતરૂપ યુક્ત, રયિમ્-ચક્રવર્તી રાજ્ય લક્ષ્મી સુગમ્યમ્-સુખ દદાતિ-પ્રદાન કરે છે, તેવી બનીને તું પણ અમને સુખદાયક બન. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ દિવસને ઉત્પન્ન કરનારી ઊષા વિના કાર્યો સુખપૂર્વક સિદ્ધ થતાં નથી અને પદાર્થોના સ્વરૂપની પણ પ્રાપ્તિ થતી નથી, તેમ ઉત્તમ સ્ત્રી વિના એ કાર્યો સિદ્ધ થતાં નથી. (૧૩)

ये चिद्धि त्वामृषयः पूर्वं ऊतये जुहूरेऽवसे महि ।

सा नः स्तोमाँ अभि गृणीहि राधसोषः शुक्रेण शोचिषा ॥ १४ ॥

પદાર્થ : હે ઊષા સમાન વિદ્યમાન મહિ-મહાગુણ વિશિષ્ટ વિદુષી = પંડિતા સ્ત્રી ! યે-જે પૂર્વ-જે અધ્યયન કરેલ વેદાર્થના જ્ઞાતા વિદ્વાનો ઊતયે-અત્યંત ગુણ પ્રાપ્તિ તથા અવસે-રક્ષા આદિ પ્રયોજનને માટે ત્વામ્-તને જુહૂરે-પ્રશંસિત કરે, સા-તે તું શુક્રેણ-શુદ્ધ કાર્ય હેતુ શોચિષા-ધર્મપ્રકાશથી યુક્ત રાધસા-પુષ્કળ ધનથી ન:-અમારા ચિત્-જ સ્તોમાન્-સ્તુતિ સમૂહોનો હિ-નિશ્ચયપૂર્વક અભિ-સન્મુખ ગૃણીહિ-સ્વીકાર કર. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેને વેદોનું પૂર્વ અધ્યયન કરેલ છે, તે પ્રાચીન ઋષિ અને જે વેદાધ્યયન કરી રહ્યા છે, તે અર્વાચીન ઋષિ છે, એવા મનુષ્યોને જાણવા જોઈએ.

જેમ વિદ્વાનો જે પદાર્થોને જાણીને ઉપકાર કરે છે, તેમ અન્યોને પણ કરવા જોઈએ.

જેમ વિદ્વાનો પોતાની વિદ્યાથી પદાર્થોના ગુણોને પ્રકાશિત કરીને વિદ્યા અને ઉપકાર કરે છે; જેમ એ ઊષાવેળા-પ્રભાત સમસ્ત પદાર્થોને સમ્યક્ પ્રકાશિત કરીને સ્ત્રીઓ વિશ્વને સુભૂષિત-અલંકૃત કરે. (૧૪)

उषो यद्य भानुना वि द्वारा वृणवो दिवः ।

प्र नो यच्छतादवृकं पृथु छर्दिः प्रदेवि गोमतीरिषः ॥ १५ ॥

પદાર્થ : હે દેવિ-દિવ્યગુણયુક્ત સ્ત્રી ! જેમ ઊષા:-પ્રભાતકાળ અદ્ય-આ દિવસમાં ભાનુના-પોતાના પ્રકાશથી દ્વારૌ-ગૃહાદિ તથા ઈન્દ્રિયોના પ્રવેશ અને નીકળવાના નિમિત્ત ઇદ્રો પ્રાણવ:-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે; અને જેમ ન:-અમારા માટે યત્, અવૃકમ્-હિંસક પ્રાણીઓથી ભિન્ન પૃથુ-સર્વ ઋતુઓના

સ્થાન અને અવકાશને યોગ્ય હોવાથી વિશાળ **હર્દિ**:-શુદ્ધ આચ્છાદનથી પ્રકાશમાન ગૃહ છે; અને જેમ **દિવ**:-પ્રકાશાદિ ગુણ **ગોમતી**:-બહુ જ કિરણોથી યુક્ત **ઙ્ગ**:-ઈચ્છાઓને આપે છે, તેમ (વિ) **પ્રપચ્છતાત્**-સંપૂર્ણ પ્રદાન કર. (૧૫)

ભાવાર્થ : જેમ ઊંચા પોતાના પ્રકાશથી ગત દિવસ, વર્તમાન આજના દિવસે તથા આવનાર દિવસમાં સર્વ માર્ગો અને દ્વારોને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ મનુષ્યોએ સર્વ ઋતુઓમાં ગૃહોનું નિર્માણ કરીને, તેમાં સર્વ ભોગ્ય પદાર્થોને સ્થાપિત કરીને તથા એ પ્રકારના સર્વ કાર્યો કરીને પ્રતિદિન સુખનો ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૧૫)

સન્નો રાયા બૃહતા વિશ્વપેશસા મિમિક્ષ્વા સમિલાભિરા ।

સં દ્યુમ્નેન વિશ્વતુરૌષો મહિ સં વાજૈર્વાજિનીવતિ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે **ઉષ**:-પ્રભાતકાળ સમાન **વાજિનીવતિ**-પ્રશંસિત ક્રિયાયુક્ત **મહિ**-પૂજનીય વિદ્વાન સ્ત્રી ! તું જેમ **ઉષા**:-સમસ્ત રૂપને પ્રકાશિત કરનારી પ્રાતઃકાલીન વેળા = પ્રભાત **વિશ્વપેશસા**-સમસ્ત સુંદર રૂપયુક્ત **બૃહતા**-મહાન **વિશ્વતુરા**-સર્વને પ્રવૃત્ત કરનાર **સંદ્યુમ્નેન**-વિદ્યા, ધર્માદિ ગુણ પ્રકાશયુક્ત **રાયા**-પ્રશંસિત ધન **સમિલાભિ**:-ભૂમિ, વાણી, નીતિ અને **સંવાજૈ**:-સારી રીતે યુદ્ધ, અન્ન અને વિજ્ઞાનથી **ન**:-અમને સુખ આપે છે, તેમ એનાથી તું અમને સુખ પ્રદાન કર. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેમ (વિદ્વાનોની) શિક્ષાથી મનુષ્યો ઊંચાવેળાનાં ગુણોનાં જ્ઞાનથી સંપન્ન થતાં પુરુષાર્થ સિદ્ધિથી સુખનાં સાધન રૂપ સમસ્ત વસ્તુઓ પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ માતાની શિક્ષાથી સંતાન ઉત્તમ બને છે, અન્ય પ્રકારથી નહીં. (૧૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઉષાનાં દૃષ્ટાન્તથી કન્યા અને સ્ત્રીઓનાં લક્ષણોનું પ્રતિપાદન કરવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૪૮)

સૂક્ત-૪૯

ઉષો ભદ્રેભિરા ગૃહિ દિવશ્ચિદ્રોચનાદધિ ।

વહન્ત્વરુણપ્સવ ઉપ ત્વા સોમિનો ગૃહમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે શુભ ગુણોથી પ્રકાશમાન ! જેમ **ઉષ**:-કલ્યાણ માટે **રોચનાત્**-સમ્યક્ પ્રકાશમાનથી **અધિ**-ઉપર **ભદ્રેભિ**:-કલ્યાણકારક ગુણોથી સમ્યક્ આવે છે, તેમ તું **આગહિ**-પ્રાપ્ત થા; અને જેમ એ **દિવ**:-પ્રકાશની સમીપ પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ **ત્વા**-તને **અરુણપ્સવ**:-રક્તગુણ વિશિષ્ટ છેદન કરીને ભોક્તા **સોમિન**:-ઉત્તમ પદાર્થયુક્ત વિદ્વાનના **ગૃહમ્**-નિવાસ સ્થાનને **ઉપવહન્તુ**-સમીપ પ્રાપ્ત કરે. (૧)

ભાવાર્થ : ભૂમિ સંયુક્ત સૂર્યપ્રકાશથી જે ઊંચાની ઉત્પત્તિ થાય છે, તે જેમ દિવસ રૂપમાં પરિવર્તિત થયેલ પદાર્થોને પ્રકટ-પ્રકાશિત કરીને સર્વને આહ્વાદિત અર્થાત્ હર્ષિત કરે છે, તેમ બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યા

ભણેલ સ્ત્રી શ્રેષ્ઠ હોય છે. (૧)

સુપેશસં સુખં રથં યમધ્યસ્થા ઉષસ્ત્વમ્ ।

તેના સુશ્રવસં જનં પ્રાવાદ્ય દુહિતર્દિવઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે દિવઃ-પ્રકાશમાન સૂર્યની દુહિતઃ-પુત્રી સમાન ઊષઃ-વિદ્યમાન સ્ત્રી ! તું યમ્-જેમ સુપેશસમ્-સુંદરરૂપ, સુખમ્-આનંદકારક, રથમ્-કીડાના સાધન યાનની અધ્યસ્થાઃ-ઉપર બેસનાર પ્રાણી આનંદની વૃદ્ધિ કરે છે, તેન-તે રથથી સુશ્રવસમ્-ઉત્તમ શ્રવણયુક્ત જનમ્-વિદ્વાન મનુષ્યની પ્રાવ-સારી રીતે રક્ષા આદિ કર. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રકાશ દ્વારા સ્વરૂપની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેમ સૌભાગ્યકારિણી વિદુષી સ્ત્રી દ્વારા ગૃહકાર્યોની સિદ્ધિ અને સંતાનોની ઉત્પત્તિ થાય છે, તેમ જાણીને મનુષ્યોએ તેણીના પ્રત્યે ઉપકારી બનવું જોઈએ. (૨)

વયશ્ચિત્તે પત્ત્રિણો દ્વિપચ્ચતુષ્પદર્જુનિ ।

ઉષઃ પ્રારન્નૃતૂરનું દિવો અન્તેભ્યસ્પરિ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેમ અર્જુનિ-સારી રીતે પ્રયત્નના કારણે ઊષઃ-ઊષા દિવઃ-સૂર્ય પ્રકાશની અન્તેભ્યઃ-સમીપથી ઋતુઓને સિદ્ધ અને દ્વિપત્-મનુષ્યાદિનો તથા ચતુષ્પત્-પશુ આદિનો બોધ કરાવીને સર્વે પ્રાપ્ત થઈને, જેમ એનાથી પત્ત્રિણઃ-નીચે, ઊંચે ઉડનારા વયઃ-પક્ષીઓ પ્રારન્-અત્ર-તત્ર જાય છે; ચિત્-તેમ જ તે-તારામાં ગુણ થાય. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઊષા-મુહૂર્ત, પ્રહર, દિવસ, મહિના, ઋતુ અયન (= દક્ષિણાયન, ઉત્તરાયણ) અને વર્ષોનો વિભાગ કરીને પ્રાણીઓના વ્યવહાર અને ચેતનતાનો વિભાગ કરે છે, તેમ સ્ત્રી સમસ્ત ગૃહકાર્યોનો વિભાગ કરે. (૩)

વ્યુચ્છન્તી હિ રશ્મિભિર્વિશ્વમાભાસિં રોચનમ્ ।

તાં ત્વામૃષર્વસૂયવો ગીર્ભિઃ કણ્વા અહૂષત ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે વસુયવઃ-જે પૃથિવી આદિ વસુઓનો સંયુક્ત અને વિયુક્ત કરનાર કણ્વાઃ-બુદ્ધિમાનો જેમ ઊષઃ-ઊષા વ્યુચ્છન્તી-વિવિધ પ્રકારથી વસાવનારી હિ-નિશ્ચયપૂર્વક રશ્મિભિઃ-કિરણોથી રોચનમ્-રચિકારક વિશ્વમ્-સમસ્ત સંસારને આભાસિ-પ્રકાશિત કરે છે, તેવી તામ્-તે ત્વામ્-તને સ્ત્રીને ગીર્ભિઃ-વેદશિક્ષાયુક્ત પોતાની વાણીઓથી અહૂષત-પ્રશંસિત કરે. (૪)

ભાવાર્થ : ઊષાના ગુણોની સમાન ગુણવાળી સ્ત્રી શ્રેષ્ઠ હોય છે, એમ વિદ્વાનોએ જાણવું જોઈએ અને સર્વને ઉપદેશ આપવો જોઈએ. (૪)

સંગતિ : આમાં ઊપાના ગુણોનું વર્ણન કરવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૪૯)

સૂક્ત-૫૦

ઉદુત્યં જાતવેદસં દેવં વહન્તિ કેતવઃ । દૃશો વિશ્વાય સૂર્યમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ કેતવઃ-કિરણો વિશ્વાય-સર્વને દૃશો-જોવા ડ-અને દેખાડવાના યોગ્ય-વ્યવહારને માટે ત્યમ્-તે જાતવેદસમ્-ઉત્પન્ન કરેલ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરનાર દેવમ્-પ્રકાશમાન સૂર્યમ્-રવિમંડળ અર્થાત્ સૂર્યમંડળની ઉદ્વહન્તિ-ઉપર વહે છે, તેમ ગૃહાશ્રમને સુખદાયક, સુશોભિત સ્ત્રીઓને વિવાહ વિધિથી પ્રાપ્ત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ ઘોડાઓ રથનું અને કિરણો સૂર્યનું વહન કરે છે, તેમ ધાર્મિકજન, વિદ્યા અને ધર્મરૂપી પ્રકાશથી સંપન્ન અને સમાન ગુણયુક્ત સ્ત્રીઓનો પુરુષોની સાથે વિવાહ કરે. (૧)

અપ ત્યે તાયવૌ યથા નક્ષત્રા યન્ત્યક્તુભિઃ । સૂરાય વિશ્વચક્ષસે ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે યથા-જેમ અક્તુભિઃ-રાત્રિઓની સાથે નક્ષત્રા-નક્ષત્ર આદિ ક્ષયરહિત લોક અને તાયવઃ-વાયુ વિશ્વચક્ષસે-વિશ્વને દેખાડનાર સૂરાય-સૂર્યલોકને માટે અપયન્તિ-સંયુક્ત અને વિયુક્ત થાય છે, તેમ જ વિવાહિત સ્ત્રીઓની સાથે સંયુક્ત-વિયુક્ત થયા કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જે રાતે નક્ષત્ર ચંદ્રમાની સાથે અને પ્રાણ શરીરની સાથે રહે છે, તેમ વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષો સાથે રહે. (૨)

અદૃશ્રમસ્ય કેતવો વિરશ્મયો જનાં અનુ । ભ્રાજન્તો અગ્નયૌ યથા ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : યથા-જેમ અસ્ય-એ સવિતા-સૂર્યના ભ્રાજન્તઃ-પ્રકાશમાન અગ્નયઃ-પ્રજ્વલિત કેતવઃ-જણાવનારા રશ્મયઃ-કિરણો જનાન્-મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓને અનુ-અનુકૂળતાથી પ્રકાશિત કરે છે, તેમ હું પોતાની મારી પત્ની અને મારા પતિને જ સમાગમને યોગ્ય દેખું-જાણું, અન્યને નહિ. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રદીપ્ત અગ્નિ અને સૂર્ય આદિ બહાર સર્વ સ્થાનોમાં પ્રકાશિત થાય છે, તેમ જ અન્તરાત્મામાં ઈશ્વરનો પ્રકાશ છે. તેને જાણવા માટે સર્વ મનુષ્યોએ પ્રયત્ન કરવો યોગ્ય છે, તે (ઈશ્વર)ની આજ્ઞાથી, પારકા સ્ત્રી-પુરુષોની સાથે વ્યભિચારનો સર્વથા ત્યાગ કરીને સ્ત્રી-પુરુષ પોત-પોતાના વિવાહિત સાથે જ ઋતુગામી બને-સમાગમ કરે. (૩)

તરણિર્વિશ્વદર્શતો જ્યોતિષ્કૃદસિ સૂર્ય । વિશ્વમાર્ભાસિ રોચનમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે સૂર્ય-ચરાચર (જગત)ના આત્મા ઈશ્વર ! વિશ્વદર્શતઃ-જેથી વિશ્વના દર્શક અને તરણિઃ-ક્ષિપ = શીઘ્ર અલ્પવિત સંલ્પવિત કરનાર = પાર કરનાર જ્યોતિષ્કૃત્-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ આપ ! રોચનમ્-

રુચિકારક રૂપથી **વિશ્વમ્**-સર્વ જગતને પ્રકાશિત કરો છો, તેથી આપ સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ છો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અને વિદ્યુત્ બહારના અને અંદરના સર્વ સ્થૂળ પદાર્થોને પ્રકાશિત કરી શકે છે, તેમ સૂર્ય = ઈશ્વર સર્વ અખિલ = સર્વ-સમસ્ત સંસારને પ્રકાશિત કરે છે. (૪)

પ્રત્યઙ્ દેવાનાં વિશઃ પ્રત્યઙ્-હુદૈષિ માનુષાન્ । પ્રત્યઙ્ વિશ્વં સ્વર્દૃશે ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જે આપ **દેવાનામ્**-દિવ્યપદાર્થો અને વિદ્વાનોને **વિશઃ**-પ્રજા **માનુષાન્**-મનુષ્યોને **પ્રત્યઙ્-હુદૈષિ**-સારી રીતે પ્રાપ્ત છો અને સર્વના આત્માઓમાં **પ્રત્યઙ્**-પ્રાપ્ત થાઓ છો, એથી **વિશ્વં-સ્વર્દૃશે**-સર્વ સુખોને જોવા માટે સર્વના **પ્રત્યઙ્**-પ્રત્યગાત્મરૂપથી ઉપાસનીય છો. (૫)

ભાવાર્થ : જેથી ઈશ્વર સર્વવ્યાપક, સર્વાન્તર્યામી અને સમસ્ત કર્મોના સાક્ષી છે, તેથી એ જ (ઈશ્વર) સજ્જનો દ્વારા ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૫)

યેનાં પાવકૃ ચક્ષ્ણસા ભુરુણ્યન્તં જનાં અનુ । ત્વં વરુણ પશ્યસિ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે **પાવકૃ**-પવિત્રકારક **વરુણ**-સવોત્કૃષ્ટ જગદીશ્વર ! આપ **યેન**-જે **ચક્ષ્ણસા**-વિજ્ઞાન પ્રકાશથી **ભુરુણ્યન્તમ્**-ધારણ અને પોષણ કરતા-કરતા લોકો અને જનાન-મનુષ્યાદિને **અનુપશ્યસિ**-સારી રીતે જુઓ છો, તે જ્ઞાન પ્રકાશથી અમને કૃપા કરીને સંયુક્ત કરો. (૬)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરની ઉપાસના વિના કોઈ પણ (મનુષ્યને) વિજ્ઞાનની (પ્રાપ્તિ) અને પવિત્રતા થવી સંભવ નથી, તેથી સર્વ મનુષ્યોએ એક જ ઈશ્વરની ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૬)

વિ દ્યાર્મેષિ રજસ્પૃથ્વહા મિમાનો અક્તુભિઃ । પશ્યઞ્જન્માનિ સૂર્ય ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે **સૂર્ય**-ચરાચરના આત્મા પરમેશ્વર ! આપ, જેમ સૂર્યલોક **અક્તુભિઃ**-પ્રસિદ્ધ રાત્રિઓ **પૃથુ**-વિસ્તૃત **રજઃ**-લોક સમૂહનું અને **અહા**-દિવસોનું **મિમાનઃ**-નિર્માણ કરીને **પૃથુ**-વિસ્તીર્ણ **રજઃ**-લોકોને પ્રાપ્ત થઈને નિયમ-વ્યવસ્થા કરો છો, તેમ અમારા **જન્માનિ**-પૂર્વ, પર અને વર્તમાન જન્મોને **પશ્યન્**-જોઈને **વ્યેષિ**-અનેક પ્રકારથી જાણવા અને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય છો. (૭)

ભાવાર્થ : જે (પરમેશ્વરે) સૂર્ય આદિ લોકોની રચના કરી છે, સર્વ જીવોના પાપ-પુણ્યાદિ કર્મોને જોઈને-કર્માનુસાર યથાયોગ્ય તદનુસાર ફળ પ્રદાન કરે છે, તે જ સર્વના સત્ય ન્યાયકારી રાજા છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૭)

સપ્ત ત્વા હરિતો રથે વહન્તિ દેવ સૂર્ય । શોચિષ્કેશં વિચક્ષણ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે **વિચક્ષણ**-સર્વના દ્રષ્ટા, **દેવ**-સુખદાતા, **સૂર્ય**-જ્ઞાન સ્વરૂપ જગદીશ્વર ! જેમ **સપ્ત**-હરિતાદિ સાત **હરિતઃ**-જેનાથી રસોનું હરણ કરે છે, તે કિરણો **શોચિષ્કેશમ્**-પવિત્ર દીપ્તિમાન સૂર્યલોકને **રથે**-રમણીય મુંદર રથમાં **વહન્તિ**-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ **ત્વા**-આપને ગાયત્રી આદિ વેદસ્થ સાત છંદ

પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ કિરણો વિના સૂર્યનું દર્શન થતું નથી, તેમ વેદાભ્યાસ વિના પરમાત્માના દર્શન થતાં નથી, એમ જાણવું જોઈએ. (૮)

અયુક્ત સપ્ત શુન્ધ્યુવઃ સૂરો રથસ્ય નપ્ત્યઃ । તાભિર્યાત્તિ સ્વયુક્તિભિઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઈશ્વર ! જેમ સૂરઃ-સર્વ પ્રકાશક જે સપ્ત-પૂર્વોક્ત સાત નપ્ત્યઃ-નાશ રહિત શુન્ધ્યુવઃ-શુદ્ધિકારક કિરણો છે, તેને રથસ્ય-રમણીય સ્વરૂપમાં અયુક્ત-કરતા અને તેના સહિત પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ આપ તાભિઃ-તે સ્વયુક્તિભિઃ-પોતાની યુક્તિથી સમસ્ત સંસારને સંયુક્ત રાખે છે, એવો અમને દેઢ નિશ્ચય છે. (૯)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યની સમાન સ્વયં પ્રકાશમાન, આકાશની સમાન વ્યાપ્ત અને ઉપાસકોની શુદ્ધિ = પવિત્ર કરનાર પરમેશ્વર છે, તે નિશ્ચય જ સર્વ મનુષ્યો દ્વારા ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૯)

ઉદ્વયં તમસસ્પરિ જ્યોતિષ્પશ્યન્ત્ ઉત્તરમ્ ।

દેવં દેવત્રા સૂર્યમર્ગન્મ્ જ્યોતિરુત્તમમ્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ જ્યોતિઃ-ઈશ્વર રચિત પ્રકાશમાન સૂર્યને પશ્યન્તઃ-જોઈને વચમ્-અમે તમસઃ-અજ્ઞાન-અંધકારથી પૃથક્ થઈને જ્યોતિઃ-પ્રકાશ સ્વરૂપ ઉત્તરમ્-સર્વોત્કૃષ્ટ પ્રલયથી ઉર્ધ્વ =પૂર્વ વિદ્યમાન અને પ્રલય કરનાર (અર્થાત્ પ્રલય પૂર્વ રહેલ અને પ્રલય પછી પણ રહેનાર) દેવત્રા-દેવ, મનુષ્ય અને પૃથિવી આદિ (લોક)માં વ્યાપક દેવમ્-સુખદાયક, ઉત્તમમ્-ઉત્કૃષ્ટ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવયુક્ત સૂર્યમ્-સર્વાત્મા ઈશ્વરને પર્યુદગન્મ્-સર્વ પ્રકારથી પ્રાપ્ત કરીએ, તેમ તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એ જાણવું જોઈએ, કે ઈશ્વરની સમાન અન્ય કોઈ પણ ઉત્તમ પ્રકાશક પદાર્થ નથી; અને તેની પ્રાપ્તિ વિના કોઈ પણ મનુષ્ય મુક્તિ સુખને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૧૦)

ઉદ્યન્નદ્ય મિત્રમહ આરોહન્નુત્તરાં દિવમ્ ।

હૃદ્રોગં મમ સૂર્ય હરિમાણં ચ નાશય ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે મિત્રમહઃ-મિત્રોના સત્કારને યોગ્ય, સૂર્ય-સર્વ ઔષધિ અને રોગ નિવારણના જ્ઞાતા વિદ્વાન ! આપ જેમ અદ્ય-ઉદ્યન્-ઉદયને પ્રાપ્ત થયેલ તથા ઉત્તરામ્-કારણરૂપી દિવમ્-દીપ્તિને આરોહન્-સમ્યક્ રીતે કરીને અંધકારનું નિવારણ કરીને દિવસને પ્રકટ કરો છો, તેમ મારા હૃદ્રોગમ્-હૃદયના રોગો તથા હરિમાણમ્-હરણ કરનાર ચોર આદિનો નાશય-નાશ કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યના ઉદયથી અંધકાર અને ચોર આદિ પલાયન કરી જાય છે, તેમ ઉત્તમ વૈદ્યની પ્રાપ્તિથી કુપથ્ય અને રોગનું નિવારણ થાય છે. (૧૧)

शुकेषु मे हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि ।

अथो हरिद्रवेषु मे हरिमाणं नि दध्मसि ॥ १२ ॥

पદાર્થ : જેમ શ્રેષ્ઠ વૈદ્ય કહે, તેમ અમે શુકેષુ-શુકની સમાન કરેલ કર્મો અને રોપણાકાસુ-રોપણ-રુજ કરનાર લેપ આદિ ક્રિયાઓથી મે-મારા હરિમાણમ્-ચિત્તને ખેંચનાર રોગનાશક ઔષધિઓને દધ્મસિ-ધારણ કરીએ. અથો-તત્પશ્ચાત્ હરિદ્રવેષુ-જે સુખહર મલવાહક રોગ છે, તેમાં મે-મારા-હરિમાણમ્-હરણશીલ ચિત્તને નિદધ્મસિ-નિરંતર સ્થિર કરું. (૧૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો લેપન આદિ ક્રિયાઓથી સમસ્ત રોગોનું નિવારણ કરીને બળને પ્રાપ્ત કરે. (૧૨)

उदगाद्यमादित्यो विश्वेन सहसा सह ।

द्विषन्तं मह्यं रन्धयन्मो अहं द्विषते रधम् ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ અયમ્-એ આદિત્ય:-નાશ રહિત સૂર્ય ઉદગાત્-ઉદયને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તું વિશ્વેન-સમસ્ત સહસા-બળની સાથે ઉદય પામ. જેમ તું મહ્યમ્-ધાર્મિક મનુષ્યનો દ્વિષન્તમ્-દ્વેષ કરનાર શત્રુને રન્ધયન્-મારીને વર્તે છે, તેમ અહમ્-હું દ્વિષતે-શત્રુ સામે વર્તન કરું. જેમ એ શત્રુ મને મારે છે, તેમ હું પણ મો રધમ્-મારુ નહિ. (૧૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, અનંત બળયુક્ત જગદીશ્વરના તથા બળની નિમિત્ત અને પ્રાણયુક્ત વિદ્યુતનાં દૃષ્ટાન્તથી પ્રવૃત્ત થઈને, સજ્જનોની સાથે મિત્રતા રાખીને, સમસ્ત સજ્જનોની સાથે મિત્રતા રાખીને, સમસ્ત પ્રજાઓનું પાલન કરવું જોઈએ. (૧૩)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં પરમેશ્વર અને અગ્નિનાં કાર્ય-કારણના દૃષ્ટાન્તથી રાજાના ગુણોનું વર્ણન કરવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૫૦)

સૂક્ત-૫૧

अभि त्वं मेषं पुरुहूतमृगिमयमिन्द्रं गीर्भिमदता वस्वो अर्णवम् ।

यस्य द्यावो न विचरन्ति मानुषा भुजे मंहिष्ठमभि विप्रमर्चत ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે અર્ણવમ્-સમુદ્ર સમાન ત્યમ્-તે મેષમ્-વૃષ્ટિ દ્વારા સિંચન કરનાર, પુસ્હૂતમ્-બહુજ વિદ્વાનોથી સ્તુત, ઋગિમયમ્-ઋચાઓ-મંત્રોથી માન કરવા યોગ્ય, મંહિષ્ટમ્-ગુણોથી અત્યંત મહાનતમ, ઇન્દ્રમ્-સમગ્ર ઐશ્વર્યથી અભિમદત-હર્ષિત-આનંદિત કરો.

સૂર્યના દ્યાવઃ-કિરણોની ન-સમાન વસ્ય-જેને ભુજે-ભોગ માટે માનુષા-મનુષ્યોના હિતકારક ગુણ વિચરન્તિ-વિચરે છે, તે વસ્વઃ-ધનના વિપ્રમ્-દાતા વિદ્વાનનો અભ્યર્ચત્-સદા સત્કાર કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જે રાજા બહુ ગુણોના યોગથી સૂર્ય સમાન વિદ્વાન હોય, તેનો મનુષ્યોએ સત્કાર કરવો

જોઈએ. તેના વિના કોઈને સુખ પ્રાપ્ત થતું નથી. (૧)

અभीमवन्वन्स्वभिष्टिमृतयोऽन्तरिक्षप्रां तविषीभिरावृतम्।

इन्द्रं दक्षास ऋभवो मदच्युतं शतक्रतुं जवनी सूनृताऽरुहत् ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે સેનાપતે ! જે આપની **ऊतयः**-રક્ષા પ્રજાનું પાલન કરે છે; **दक्षासः**-વિજ્ઞાનવૃદ્ધ શીઘ્ર કાર્યને સિદ્ધ કરનાર **ऋभवः**-મેઘાવી વિદ્વાનો જે **स्वभिष्टिम्**-ઉત્તમ ઈષ્ટિ = ઈચ્છાયુક્ત **अन्तरिक्षप्रां**-પોતાના તેજથી અન્તરિક્ષ અર્થાત્ આકાશમાં સર્વને સુખથી પૂર્ણ કરવા, **मदच्युतम्**-આનંદ દાતા, **शतक्रतुम्**-અનેક કર્મોના કર્તા, **तविषीभिः**-બલ અને આકર્ષણ આદિ ગુણોથી યુક્ત સેનાથી **आवृतम्**-સંયુક્ત **इन्द्रम्**-વિદ્યુતની સમાન વિદ્યમાન આપને **अभ्यवन्दन्**-કાર્યો કરવા માટે સર્વ રીતે વૃદ્ધિયુક્ત કરીએ છીએ. યુક્ત શત્રુઓને વિદારણ કરનાર રાજાને **गिभिः**-સત્ય **प्रशंसित**-વાણીઓથી જેને **जवनी**-વેગયુક્ત **सूनृता**-અન્નાદિ પદાર્થોને સિદ્ધ કરનારી રાજનીતિ **आरुहत्**-વધીને પ્રાપ્ત થાય, તે આપની રક્ષા અમે કરીએ. (૨)

ભાવાર્થ : ધાર્મિક બુદ્ધિમાન લોકો જેનો આશ્રય કરે, તેનો આશ્રય સર્વ મનુષ્યો ગ્રહણ કરે. (૨)

त्वं गोत्रमङ्गिरोभ्योऽवृणोरपोतात्रये शतदूरेषु गातुवित्।

ससेनं चिद्विमदायावहो वस्वाजावद्रिं वावसानस्य नर्त्तयन् ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે **ससेन**-સેના યુક્ત સેનાધ્યક્ષ ! આપ જેમ સૂર્ય **अङ्गिरोभ्यः**-પ્રાણ સ્વરૂપ વાયુઓથી **अद्रिम्**-પર્વત અને મેઘની સમાન વિદ્યમાન **अत्रये**-જેમાં આધ્યાત્મિક, આધિભૌતિક અને આધિદૈવિક એ ત્રણ દુઃખ નથી, તે **आजौ**-સંગ્રામમાં શત્રુઓના બળને **अपावृणोः**-દૂર કરી દો છો, **वावसानस्य**-આવરણ-ઠાંકનાર શત્રુઓની સેનાને **नर्त्तयन्**-નચાવવા સમાન કંપાવીને, **विमदाय**-વિવિધ આનંદ માટે, **वसु**-ધનને **आवहः**-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરીને **उत्-तथा गातुवित्**-ભૂગર્ભ વિદ્યાના જ્ઞાતા આપ **शतदूरेषु**-અસંખ્ય મેઘના અવયવોમાં-વાદળોમાં ઠંકાયેલ પદાર્થોથી સમાન ઠંકાયેલી પોતાની સેનાને બચાવો છો, તે આપ સત્કારને યોગ્ય છો. (૩)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિ જન જ્યાં સુધી સૂર્ય સમાન પરાક્રમ ગ્રહણ કરી શકે નહિ, ત્યાં સુધી તેઓ શત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૩)

त्वमपामपिधानावृणोरपाधारयः पर्वते दानुमद्वसु।

वृत्रं यदिन्द्र शवसावधीरहिमादित्सूर्यं दिव्यारोहयो दृशे ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-જગદીશ્વર ! **यत्**-જે કારણે **त्वम्**-આપ જેમ સૂર્ય **अपाम्**-જળનો **अपिधाना**-આચ્છાદનને દૂર કરે છે, તેમ શત્રુઓના બળને **अपावृणोः**-દૂર કરે છે, જેમ **पर्वते**-મેઘ-વાદળોમાં

दानમત્-ઉત્તમ શિખરયુક્ત વસુ-દ્રવ્ય વા જળને અધારય:-ધારણ કરનાર અને શવસા-બળથી અહિમ્-વ્યાપ્ત થવા યોગ્ય વૃત્રમ્-મેઘને અવધી:-મારે છે-હણે છે, તેમ શત્રુઓને છિન્ન-ભિન્ન કરો છો; જેમ કિરણ સમૂહ સૂર્યમ્-સૂર્યને અરોહય:-સારી રીતે સ્થાપિત કરે છે, તેમ (તમે) ન્યાયના પ્રકાશથી યુક્ત હોવાથી રાજ્ય કરવાને યોગ્ય છે. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એ જાણવું યોગ્ય છે, કે ઈશ્વર જ એવા સૂર્યને રચીને સ્થાપિત કરેલ છે, જે સર્વ લોકોને આકર્ષિત કરીને, તેને અન્તરિક્ષમાં સ્થાપિત કરીને, વર્ષા કરીને તથા સર્વને પ્રકાશિત કરીને સુખ પ્રદાન કરે છે. (૪)

ત્વં માયાભિરપ માયિનોઽધમઃ સ્વધાભિર્યે અધિ શુપ્તાવજુહ્વત ।

ત્વં પિપ્રોર્નૃમણઃ પ્રારુજઃ પુરઃપ્ર ઋજિશ્ચાનં દસ્યુહત્યૈષ્વાવિથ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે નૃમણ:-મનુષ્યોના મનના જ્ઞાતા સભાધ્યક્ષ ! ત્વમ્-આપ પુર:-પ્રથમ સ્વધાભિ:-અન્નાદિ પદાર્થોથી પિપ્રો:-ન્યાયને પૂર્ણ કરનાર ન્યાયાધીશોની આજ્ઞા અને ઋજિશ્ચાનમ્-જ્ઞાન આદિ સરળ ગુણોથી યુક્તની પ્રાવિથ-રક્ષા કરીને તથા જે માયિન:-નિંદિત બુદ્ધિવાળા માયાભિ:-છળ-કપટાદિથી અને શુપ્તૌ-સૂતેલાઓના પારકા પદાર્થોને અજુહ્વત-હરણ-ચોરી કરે છે, તે ડાકુ આદિ દુષ્ટોને અપાધમ:-દૂર કરો-અને તેઓને દસ્યુહત્યેષુ-ડાકુઓ હણવા યોગ્ય રૂપ સંગ્રામોમાં પ્રારુજ-છિન્ન-ભિન્ન કરી નાખો. (૫)

ભાવાર્થ : જે સભા આદિનો અધ્યક્ષ પોતાના સત્ય ન્યાયથી, શ્રેષ્ઠ અને દુષ્ટકર્મ કરનારાઓને યથાવત્ ફળ આપીને તેની રક્ષા કરે છે, તે જ આ લોકમાં માનને યોગ્ય સત્કારને યોગ્ય બને છે. (૫)

ત્વં કુત્સં શુષ્ણહત્યૈષ્વાવિથારન્ધયોઽતિથિગ્વાય શમ્બરમ્ ।

મહાન્તં ચિદર્બુદં નિક્રમીઃ પદા સનાદેવ દસ્યુહત્યાય જજ્ઞિષે ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! શૂરવીર મનુષ્ય ! જેથી ત્વમ્-તું પદા-પગથી આકાન્ત કરેલ શત્રુ સમૂહને મારનારની ચિત્-સમાન શુષ્ણહત્યેષુ-શત્રુઓના બળને હણવા યોગ્ય વ્યવહારોમાં મહાન્તમ્-મહાન ગુણ વિશિષ્ટ કુત્સમ્-શસ્ત્ર શ્રેષ્ઠ વજ્રને ધારણ કરીને પ્રજાની આવિથ-રક્ષા કરીને તથા દુષ્ટોને અસ્થય:-હણો-મારો છો; અતિથિગ્વાય-અતિથિઓના આવાગમનના શુદ્ધ માર્ગને માટે અર્બુદમ્-અસંખ્ય ગુણ વિશિષ્ટ શમ્બરમ્-બળની નિત્યશઃ-ક્રમથી વૃદ્ધિ કરો છો; સનાત્-સારી રીતે સેવન કરવાથી પદા-પદાકાન્ત શત્રુ સેનાનો નાશ કરો છો; દસ્યુહત્યાય-શત્રુઓને મારવા રૂપ વ્યવહાર-આચરણને માટે એવ-જ જજ્ઞિષે-ઉત્પન્ન થયા છો,એથી અમે આપનો સત્કાર કરીએ છીએ. (૬)

ભાવાર્થ : સભાધ્યક્ષાદિઓએ સૂર્ય સમાન શત્રુઓને મારીને, શ્રેષ્ઠોનું પાલન કરીને, માર્ગોને શુદ્ધ (= નિરાપદ: કરીને તથા અગણિત સેના ધારણ કરીને શત્રુઓના નાશ માટે પ્રભાવ વધારવો

જોઈએ. (૬)

ત્વે વિશ્વા તવિષી સ્ધ્યઘ્નિતા તવ રાધઃ સોમપીથાય હર્ષતે ।

તવ વજ્રશ્ચિકિતે બાહ્વોર્હિતો વૃષ્ચા શત્રોરવ વિશ્વાનિ વૃષ્ણ્યા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! ત્વે-આપમાં જે વિશ્વા-સર્વ તવિષી-બળ હિતા-સ્થાપિત કરેલ સ્ધ્યક્-સાથે સેવન કરનાર રાધઃ-ધન સોમપીથાય-સુખકારક પદાર્થોના ભોગ માટે હર્ષતે-આનંદિત કરે છે.

જે તવ-આપની બાહ્વોઃ-ભુજાઓમાં હિતઃ-ધારણ કરેલ વજ્રઃ-શસ્ત્રસમૂહ છે, જેથી આપ ચિકિતે-સુખોને જાણો છો, તેથી અમને વિશ્વાનિ-સર્વ વૃષ્ણ્યા-વીરોને હિતકારક બળની અવ-રક્ષા અને શત્રોઃ-શત્રુના બળનો નાશ કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જો શ્રેષ્ઠોમાં બળ ઉત્પન્ન થાય, તો સર્વનાં સુખની વૃદ્ધિ થાય અને જો દુષ્ટોમાં બળ ઉત્પન્ન થાય, તો સર્વનું દુઃખની વૃદ્ધિ થાય છે. તેથી શ્રેષ્ઠોનાં સુખ અને બળની વૃદ્ધિ તથા દુષ્ટોનાં બળની હાનિ નિત્ય કરવી જોઈએ. (૭)

વિ જાનીહ્યાર્યાન્યે ચ્ દસ્યવો બર્હિષ્મતે રન્ધયા શાસદ્વ્રતાન્ ।

શાકી ભવ્ યજ્માનસ્ય ચોદિતા વિશ્વેત્તા તે સધ્માદેષુ ચાકન ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! તું બર્હિષ્મતે-ઉત્તમ સુખાદિ ગુણોના ઉત્પાદક વ્યવહારની સિદ્ધિ માટે આર્યાન્-સર્વોપકારક, ધાર્મિક, વિદ્વાન મનુષ્યોને વિજાનીહિ-જાણ; અને ચે-જે દસ્યવઃ-પર પીડાકારક અધર્મી, દુષ્ટ મનુષ્યો છે, તેને જાણીને બર્હિષ્મતે-ધર્મની સિદ્ધિ માટે રન્ધય-માર અર્થાત્ હણ તે અવ્રતાન્-સત્ય ભાષણ આદિ રહિત મનુષ્યોને શાસત્-શિક્ષા દંડિત કરીને યજ્માનસ્ય-યજ્ઞકર્તાના ચોદિતા-પ્રેરક અને શાકી-ઉત્તમ શક્તિયુક્ત સામર્થ્યને ભવ-સિદ્ધ કર; જેથી તે-તારા ઉપદેશ અને સંગથી સધ્માદેષુ-સુખોની સાથે વિદ્યમાન સ્થાનોમાં તા-તે વિશ્વા-સર્વ કર્મોને સિદ્ધ કરવાની ઇત્-જ હું ચાકન-ઈચ્છા કરું છું. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ દસ્યુસ્વભાવનો ત્યાગ કરીને આર્ય સ્વભાવવાળા નિત્ય બનવું જોઈએ. તેઓ જ આર્ય છે, કે જે સત્યવિદ્યા આદિના પ્રચારથી સર્વના ઉત્તમ ભોગની સિદ્ધિને માટે તથા અધર્મ અને દુષ્ટોના નિવારણ માટે નિરંતર પ્રયત્ન કરે છે.

કોઈપણ મનુષ્ય આર્યજનોના સંગ, અધ્યયન અને ઉપદેશ વિના પૂર્ણ વિદ્વાન, ધર્માત્મા અને આર્યસ્વભાવયુક્ત બની શકતા નથી. તેથી સર્વેએ ઉત્તમ ગુણ-કર્મોનું સેવન કરીને તથા દસ્યુ કર્મનો ત્યાગ કરીને સુખી બનવું જોઈએ. (૮)

અનુવ્રતાય રન્ધયન્નપ્વ્રતાનાભૂભિરિન્દ્રઃ શ્નથયન્નનાભુવઃ ।

વૃદ્ધસ્ય ચિદ્વર્ધતો દ્યામિનક્ષતઃ સ્તવાનો વપ્રો વિજ્ઞાન સંદિહઃ ॥ ૯ ॥

ઋગ્વેદભાષ્ય

૨૪૫

પદાર્થ : મનુષ્યોને ઉચિત છે, કે જે **ઇન્દ્ર**:-પરમ વિદ્યા આદિ ઐશ્વર્ય સભા, શાલા, સેના અને ન્યાયના અધ્યક્ષ **આમ્ભૂષિ**:-ઉત્તમ વીરોને શિક્ષા કરનારી ક્રિયાઓની સાથે વિદ્યમાન **અનુવ્રતાય**-અનુકૂળ ધર્મયુક્ત વ્રતોને ધારણ કરનાર આર્ય મનુષ્યને માટે **અપવ્રતાન્**-મિથ્યા ભાષણાદિ દુષ્ટ કર્મયુક્ત ડાકુ મનુષ્યોને મિથ્યા ભાષણાદિ દુષ્ટ કર્મયુક્ત ડાકુ મનુષ્યોને **સ્થયન્**-અતિ તાડન-દંડિત કરીને **અનામ્ભુવ**:- જે ધર્માત્માના વિરોધી છે, તે પાપીઓને **ઇનથયન્**-શિથિલ કરીને **ઇનક્ષત**:-વ્યાપ્તિયુક્ત **વર્ધત**:-ગુણ-દોષોથી વધનાર **વૃદ્ધસ્ય**-જ્ઞાન આદિ ગુણોથી શ્રેષ્ઠની **સ્તવાન**:-સ્તુતિનાકર્તા **વમ્**-અધર્મનો નાશ **સંદિહ**:- ધર્મ-અધર્મનો સંદેહથી નિશ્ચય કરનાર **દ્યામ્**-સૂર્યપ્રકાશની **ચિત્**-સમાન વિદ્યાના પ્રકાશને વિસ્તૃત કરીને દુષ્ટોને **વિજધાન**-વિશેષ રૂપથી હણે છે, તે કુળને સુભૂષિત-અલંકૃત કરનાર આર્ય મનુષ્યને સભાધિપતિ રૂપમાં સ્વીકાર કરીને મનુષ્યને સભાધિપતિ પાલન કરે. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ધાર્મિક બનીને, સર્વ મનુષ્યોને અવિદ્યાથી દૂર કરીને, વિદ્યાવાન બનાવીને, ધર્મ બનાવીને, ધર્મ અને અધર્મના વિષયમાં સંશય કરીને, ફરી નિશ્ચય કરીને, ધર્મનું ગ્રહણ અને અધર્મનો ત્યાગ કરવો અને કરાવવો જોઈએ. સદા આર્યોનો સંગ અને દુષ્ટોના સંગનો ત્યાગ કરીને સર્વોત્તમ વ્યવસ્થામાં ચાલવું જોઈએ. વર્તવું જોઈએ. (૯)

તક્ષઘત્તં ડશના સહસા સહો વિ રોદસી મ્જ્મનાં બાધતે શવઃ ।

આ ત્વા વાતસ્ય નૃમણો મનોયુજ આ પૂર્યમાણમવહન્નભિ શ્રવઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે **નૃમણ**:-મનુષ્યમાં મન આપનાર **ડશના**-કામયમાન વિદ્વાન્ ! આપ **સહસા**-પોતાના સામર્થ્યથી શત્રુઓના **સહ**:-બળનો નાશ કરીને, જેમ **સૂર્ય**: સૂર્ય **રોદસી**-ભૂમિ સમક્ષ પ્રકાશ કરે છે, તેમ **મ્જ્મના**-શુદ્ધ બળથી **શવઃ**-શત્રુઓના બળને **વિબાધતે**-વલોવે છે અને **આતક્ષત્**-છેદન કરો છો; અને તે-આપના **મનોયુજ**:-મનોનુકુળ સેવક **ત્વા**-આપને આશ્રય લઈને તે-આપના **વાતસ્ય**-બળયુક્ત વાયુ સંબંધી **આપૂર્યમાણમ્**-ન્યૂનતારહિત = સંપૂર્ણ **શ્રવઃ**:-શ્રવણ તથા અન્નાદિને **અભ્યાવહન્**-પ્રાપ્ત કરે. (૧૦)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન સેનાપતિ વિના પૃથિવીનાં રાજ્યની વ્યવસ્થા, શત્રુઓનાં બળનો ક્ષય, વિદ્યા તથા સદ્ગુણોનો પ્રકાશ અને ઉત્તમ અન્નાદિની પ્રાપ્તિ થતી નથી. (૧૦)

મન્દિષ્ઠ યદુશને કાવ્યે સચાં ઇન્દ્રો વઙ્કૂ વઙ્કુતરાધિતિષ્ઠતિ ।

ડગ્રો યયિં નિરપઃ સ્ત્રોતસાસૃજદ્વિશુષ્ણસ્ય દૃહિતા ઈરયત્પુરઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે **મન્દિષ્ઠ**-અત્યંત સ્તુતિ યોગ્ય, જે **ડગ્ર**:-દુષ્ટને હણનાર, **ઇન્દ્ર**:-સભાધ્યક્ષ ! આપ-જેમ સૂર્ય **સ્ત્રોતસા**-સ્ત્રોતોથી **આપ**:-જળ વહાવે છે, તેમ **ડશને**-અતીવ સુંદર **યત્**-કાવ્યે-કવિઓનાં કર્મમાં જે **વઙ્કૂ**-કુટિલ **વઙ્કુતરા**-અત્યંત કુટિલ ચાલવાળા શત્રુ અને ઉદાસીન મનુષ્યોનાં **અધિતિષ્ઠતિ**-રાજ્યમાં અધિષ્ઠાતા બનો છો.

જેમ સવિતા (સચા-પોતાના ગુણોથી) **યયિમ્**-મેઘનું **નિરસૃજત્**-નિત્ય સર્જન કરે છે, તેમ **શુષ્ણસ્ય**

બળની દંહિતા:-વૃદ્ધિ કરનારી ક્રિયાઓને પુર:-પ્રથમ વ્યૈચયત્-પ્રાપ્ત કરો છો, તે આપ સર્વના સત્કારને યોગ્ય છો. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે કવિ, સમસ્ત શાસ્ત્રોના જ્ઞાતા, કુટિલતાના નાશક, દુષ્ટો પર ઉગ્ર, શ્રેષ્ઠો પર ક્રોમળ અને સર્વ પ્રકારથી બળવર્ધક પુરુષ છે, તેઓને સભાના અધિકાર આદિ (પદો પર) નિયુક્ત કરવા જોઈએ. (૧૧)

આ સ્મ રથં વૃષ્પાણેષુ તિષ્ઠસિ શાર્યાતસ્ય પ્રભૃતા યેષુ મન્દસે ।

ઇન્દ્ર યથા સુતસોમેષુ ચાકનોઽનર્વાણં શ્લોકમારોહસે દિવિ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-ઉત્તમ ઐશ્વર્યયુક્ત સભાધ્યક્ષ ! યથા-જેમ જેમ વિદ્વાનો પદાર્થ વિદ્યાને સિદ્ધ કરીને સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે અને જે શાર્યાતસ્ય-વીર પુરુષને યેષુ-જે સુતસોમેષુ-ઉત્તમ રસોથી યુક્ત વૃષ્પાણેષુ-પુષ્ટિકારક સોમલતાદિ પદાર્થો અર્થાત્ વૈદ્યક શાસ્ત્રાનુસાર અતિ શ્રેષ્ઠ બનાવેલ અને ઉત્તમ વ્યવહારમાં પ્રભૃતા:-ધારણ કરેલ છો, તેમ તેને પ્રાપ્ત થઈને મન્દસે-આનંદિત થઈને, અનર્વાણમ્-અગ્નિ આદિ અશ્વ સહિત પશુ આદિ અશ્વ રહિત, શ્લોકમ્-સર્વ અવયવો યુક્ત રથના મધ્યમાં સ્મ-જ આતિષ્ઠસિ-સ્થિત અને તેની ચાકન:-ઈચ્છા કરો છો; તથા દિવિ-પ્રકાશયુક્ત સૂર્યલોકમાં આરોહસે-આરોહણ કરો છો, સ્મ-એટલા માટે આપ યોગ્ય છો. (૧૨)

ભાવાર્થ : વિમાનાદિ યાનો અને વિદ્વાનોના સંગ વિના કોઈને પણ સુખ પ્રાપ્ત સંભવ નથી. તેથી વિદ્વાનોની સભા બનાવીને તથા પદાર્થોનું જ્ઞાન અને ઉપયોગ કરીને સર્વેએ આનંદ પ્રાપ્ત કરવો જોઈએ. (૧૨)

અદદા અર્ભી મહતે વચસ્યવે કક્ષીવતે વૃચ્યામિન્દ્ર સુન્વતે ।

મેનાઽભવો વૃષ્ણશ્ચસ્ય સુક્રતો વિશ્વેત્તા તે સવનેષુ પ્રવાચ્યા ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : એ સુક્રતો-શ્રેષ્ઠ-સુંદર કર્મયુક્ત ઇન્દ્ર-શિલ્પવિદ્યાના જ્ઞાતા વિદ્વાન્ ! આપ વચસ્યવે-પોતાને શાસ્ત્રોપદેશની ઈચ્છા કરનાર અને મહતે-મહાનગુણ વિશેષ સુન્વતે-શિલ્પ વિદ્યાને સિદ્ધ કરનાર કક્ષીવતે-વિદ્યા પ્રાપ્ત આંગળીયુક્ત મનુષ્યને માટે જે વૃચ્યામ્-છેદન-ભેદનરૂપ અર્ભામ્-અત્યલ્પ ક્રિયાનું અદદા:-પ્રદાન કરે છે, સવનેષુ-પ્રેરક કર્મોમાં પ્રવાચ્યા-સમ્યક્ કથન કરવા યોગ્ય મેના-વાણી વૃષ્ણશ્ચસ્ય-શિલ્પ ક્રિયાના ઈચ્છુક તે-આપનું વિશ્વા-સર્વ કાર્ય છે, તા-; ઇત્-તેને જ સિદ્ધ કરવામાં સમર્થ અભવ:- બનો. (૧૩)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યોને અગ્નિ આદિ પદાર્થોની વિદ્યાનું દાન કરીને, સર્વનું હિત સિદ્ધ કરવું જોઈએ. (૧૩)

ઇન્દ્રો અશ્રાયિ સુધ્યો નિરેકે પૃજેષુ સ્તોમો દુર્યો ન યૂપઃ ।

अश्वायुर्गव्यूरथयुर्वसूरिन्द्र इद्रायः क्षयति प्रयन्ता ॥ १४ ॥

पदार्थ : જે અશ્વયુઃ-પોતાના અશ્વો ગવ્યુઃ-પોતાના (ગૌ-) પૃથિવી, ઈન્દ્રિય અને કિરણો; સ્થયુઃ-પોતાના રથ અને વસૂયુઃ-પોતાના દ્રવ્યોની ઈચ્છા અને પ્રયન્તા-સમ્યક્ નિયમ કરનારની ઇત્-સમાન ઇન્દ્રઃ-વિદ્યાદિ ઐશ્વર્યયુક્ત વિદ્વાન રાયઃ-ધનોને ક્ષયતિ-નિવાસયુક્ત કરે છે, તે સુધ્યઃ-જે શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિમાન મનુષ્ય છે, તેનાથી દર્યઃ-જે ગૃહસંબંધી યૂપઃ-સભાની ન-સમાન ઇન્દ્રઃ-વિદ્યાદિ ઐશ્વર્યવાન વિદ્વાન નિરેકે-શંકારહિત પજ્ઞેષુ-શિલ્પાદિ વ્યવહારોમાં સ્તોમઃ-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય અશ્રાયિ-સેવન યુક્ત બને છે. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યના આશ્રયથી અનેક કાર્યો સિદ્ધ થાય છે, (તેમ) વિદ્વાનોના (આશ્રયથી) અગ્નિ, જળ આદિથી યાન નિર્માણ દ્વારા ધન પ્રાપ્તિ થાય છે. (૧૪)

इदं नमो वृषभाय स्वराजे सत्यशुष्माय तवसेऽवाचि ।

अस्मिन्निन्द्र वृजने सर्ववीराः स्मत्सूरिभिस्तव शर्मन्त्स्याम ॥ १५ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમ પૂજ્ય સભાપતિ ! જેમ સૂરિભિઃ-વિદ્વાનોએ વૃષભાય-સુખવર્ષક, સત્યશુષ્માય-વિનાશરહિત, બળયુક્ત, તવસે-અતિ બળથી પ્રવૃદ્ધ, સ્વરાજે-સ્વ પ્રકાશમાન પરમેશ્વરને ઇદમ્-એ નમઃ-સત્કાર (કરવાનું) અવાચિ-કહેલ છે, તેમ અમે પણ કરીએ. એમ કરીને એમ તવ-આપના અસ્મિન્-આ જગતના અને આ વૃજને-દુઃખ દૂર કરનાર બળથી યુક્ત શર્મન્-ગૃહમાં સ્મત્-સારી રીતે સુખી સ્યામ-બનીએ. (૧૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ વિદ્વાનોની સાથે રહીને, પરમેશ્વરની ઉપાસના તથા પૂર્ણ રીતે વિદ્વાનોનો સંગ કરીને, આ સંસારમાં પરમ આનંદની પ્રાપ્તિ કરવી અને કરાવવી જોઈએ. (૧૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સૂર્ય, અગ્નિ અને વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોનું વર્ણન બળાદિની પ્રાપ્તિ તથા અનેક વ્યવહારોના કથનથી વિવિધ અર્થોના વર્ણન અને સભાધ્યક્ષ તથા પરમેશ્વરના ગુણોનું પ્રતિપાદન કહેલ છે. છે. તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વના સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૫૧)

सूक्त-पर

त्यं सु मेषं महया स्वर्विदं शतं यस्य सुभ्वः साकमीरंते ।

अत्यं न वाजं हवनस्यदं रथमेन्द्रं ववृत्यामवसे सुवृक्तिभिः ॥ १ ॥

પદાર્થ : यस्य-જે પરમ ઐશ્વર્યવાન સભાધ્યક્ષના શતમ્-અસંખ્ય સુભ્વઃ-સુખોત્પાદક શિલ્પીઓ સુવૃક્તિભિઃ-દુઃખ દૂર કરનારી ઉત્તમ ક્રિયાઓની સાકમ્-સાથે અત્યમ્-અશ્વની ન-સમાન અગ્નિ અને જળ આદિથી અવસે-રક્ષાદિને માટે હવનસ્યદમ્-સુખપૂર્વક આકાશ માર્ગને પ્રાપ્ત કરનાર વાજમ્-વેગ યુક્ત ઇન્દ્રમ્-પરમોત્કૃષ્ટ ઐશ્વર્યના દાતા સ્વર્વિદમ્-જેનાથી આકાશ માર્ગમાં ગમનાગમન થઈ શકે, તે રથમ્-વિમાનાદિ યાનને ઈરંતે-પ્રાપ્ત કરે છે; અને જેમાં હું વવૃત્યામ્-વર્તું છું, ત્યમ્-તે મેષમ્-સુખની

વર્ષા કરનાર હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! તું તેઓને સુમહય-સારી રીતે સત્કાર કર. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો, જેમ ઘોડાને જોડીને રથ આદિને ચલાવે છે, તેમ એ અગ્નિ આદિથી યાનોને ચલાવીને કાર્યોને સિદ્ધ કરે. (૧)

સ પર્વતો ન ધ્રુવોષ્વચ્યુતઃ સહસ્રમૂતિસ્તવિષીષુ વાવૃધે ।

ઇન્દ્રો યદ્ વૃત્રમવધીન્નદીવૃતમુબ્જન્નર્ણાસિ જર્હૃષાણો અન્ધસા ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે ! રાજ-પ્રજાજન ! જેમ ધસુગુ-ધારણ કરનારાઓમાં અચ્યુતઃ-સત્ય સામર્થ્યયુક્ત અર્ણાસિ-જળને, ઉબ્જન્-બળ પકડીને ઇન્દ્રઃ-સવિતા, નદીવૃતમ્-નદીઓથી યુક્ત અને નદીઓને વર્તાવનાર વૃત્રમ્-મેઘને અવધીત્-મારે છે, સઃ-તે પર્વતઃ-પર્વતની ન-સમાન વવૃધે-વધે છે, તેમ યત્-જો તું શત્રુઓને માર, સહસ્રમૂતિઃ-અસંખ્ય રક્ષા કરનારા તવિષીષુ-બળોમાં જર્હૃષાણઃ-વારંવાર હર્ષને પ્રાપ્ત કરીને અન્ધસા-અન્નાદિથી સાથે વારંવાર વૃદ્ધિ પામતો રહે. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય સૂર્ય સમાન સેના આદિને ધારણ કરીને, મેઘ સમાન અન્ન આદિ સામગ્રીથી સંયુક્ત થઈને, બળોની વૃદ્ધિ કરે છે, તે પર્વત સમાન સ્થાયી સુખયુક્ત બનીને, શત્રુઓને હણીને રાજ્યની વૃદ્ધિ કરી શકે છે. (૨)

સ હિ દ્વરો દ્વરિષુ વૃત્ર ઋધનિ ચન્દ્રબુધ્નો મદવૃદ્ધો મનીષિભિઃ ।

ઇન્દ્રં તમ્હે સ્વપ્સ્યયા ધિયા મંહિષ્ટરાતિં સ હિ પપ્રિરન્ધસઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે ઋધનિ-પ્રાતઃકાલમાં દ્વરિષુ-અંધકારાવૃત વ્યવહારોમાં દ્વરઃ-અંધકારથી આવૃત દ્વાર ચન્દ્રબુધ્નઃ-બુધ્ન = અન્તરિક્ષમાં સુવર્ણ અને ચંદ્રમાના વર્ણથી યુક્ત મદવૃદ્ધઃ-હર્ષથી વૃદ્ધિ પામેલ અન્ધસઃ-અન્નાદિને પપ્રિઃ-પૂર્ણ કરનાર વદ્રઃ-કૂવા સમાન મેઘ છે, તેની સમાન મનીષિભિઃ-મેઘાવીઓની સાથે હિ-નિશ્ચયપૂર્વક વિદ્યમાન સભાધ્યક્ષ છે. તમ્-તે મંહિષ્ટરાતિમ્-અત્યંત પૂજનીય દાનશીલ ઇન્દ્રમ્-વિદ્વાનને સ્વપ્સ્યયા-ઉત્તમ કર્મયુક્ત વ્યવહારમાં થનારી ધિયા-બુદ્ધિથી હું અહે-આહ્વાન કરુ છું. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ; જે મેઘની સમાન પ્રજાઓનું પાલન કરે છે, સૂર્યની સમાન સુખની વર્ષા કરે છે, તે પરમ ઐશ્વર્યવાન મનુષ્યને સભાધ્યક્ષ બનાવવો જોઈએ. (૩)

આ યં પૃણન્તિ દિવિ સદ્ગર્હિષઃ સમુદ્રં ન સુભ્વૃઃ સ્વા અભિષ્ટયઃ ।

તં વૃત્રહત્યે અનુ તસ્થુરૂતયઃ શુષ્મા ઇન્દ્રમવાતા અહ્રુતપ્સવઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : સદ્ગર્હિષઃ-ઉત્તમ સ્થાન-આસનયુક્ત સુભ્વઃ-ઉત્તમ થનાર મનુષ્ય અવાતાઃ-વાયુના ચલાવવાથી રહિત નદીઓ સમુદ્રં ન-જેમ સમુદ્ર અથવા આકાશને પ્રાપ્ત થઈને સ્થિત થાય છે, તેમ જે ઇન્દ્રમ્-સભાસદો સહિત સભાપતિ સ્વાઃ-પોતાના અભિષ્ટયઃ-શુભેચ્છાયુક્ત શુષ્માઃ-બળસહિત

અહસ્તાપ્સવ:-કુટિલતારહિત ઋતય:-સુરક્ષિત પ્રજા આપૂર્ણન્તિ-સુખી કરે, તમ્-પરમૈશ્વર્યકારક વીર પુરુષને
અનુતસ્થુ:-અનુકૂળ સ્થિર રહે, તે જ ચક્રવર્તી રાજ્ય કરવાને યોગ્ય બને છે. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ નદીઓ સમુદ્રને અથવા જળને પ્રાપ્ત કરીને સ્થિર બને છે, તેમ જ સભાસહિત
વિદ્વાનને પ્રાપ્ત કરીને સમસ્ત પ્રજા સ્થિર સુખયુક્ત બને છે. (૪)

અભિ સ્વવૃષ્ટિં મદે અસ્ય યુધ્યતો ર્ઘ્વીરિવ પ્રવણે સંસ્ત્રુતયઃ ।

ઇન્દ્રો યદ્વૃજી ધૃષમાણો અન્ધસા ભિન્દ્ વલસ્ય પરિધીરિવ ત્રિતઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : યત્-જે સૂર્યની સમાન સ્વવૃષ્ટિમ્-પોતાનાં શસ્ત્રોની વૃષ્ટિ કરીને, ધૃષમાણ:-શત્રુને પ્રગલ્ભતા
દેખાડનાર, વૃજી-શત્રુઓના છેદન કરનારા શસ્ત્રોથી યુક્ત ઇન્દ્ર:-સભાધ્યક્ષ મદે-હર્ષમાં અસ્ય-એ યુધ્યત:-
યુદ્ધ કરતા બલસ્ય-શત્રુની ત્રિત:-ઉપર, મધ્ય અને તિર્યક ત્રણ પંક્તિઓથી પરિધીરિવ-સર્વપ્રકાર ઉપરની
ગોળ રેખાની સમાન બળને અભિભિન્દ્-સર્વ પ્રકારથી ભેદન કરે છે, તેના અન્ધસા-અન્નાદિ અથવા
જળથી ર્ઘ્વીરિવ-જેમ જળથી ભરપૂર નદીઓ પ્રવણે-નીચેના સ્થાનમાં ગમન કરે છે, તેમ ઋતય:-
રક્ષા આદિ સસ્ત્રુ:-ગમન કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ જળ નીચેના સ્થાનની તરફ જાય છે, તેમ સભાધ્યક્ષ = રાજા નમ્ર બનીને વિનયને
પ્રાપ્ત કરે. (૫)

પરીં ઘૃણા ચરતિ તિત્વિષે શવોડપો વૃત્વી રજસો બુધ્નમાશયત્ ।

વૃત્રસ્ય યત્પ્રવણે દુર્ગૃંભિશ્ચનો નિજઘન્થ્ હન્વોરિન્દ્ર તન્યતુમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર:-સૂર્યની સમાન સભાધ્યક્ષ ! જેમ તિત્વિષે-પ્રકાશ માટે યત્-જે સૂર્યનું શવ:-
બળ અને ઘૃણા-દીપ્તિ ઈમ્-જળનું પસ્વિરતિ-સેવન કરે છે. દુર્ગૃંભિશ્ચન:-દુઃખથી જેનું સેવન થાય વૃત્રસ્ય-
મેઘનું પરિચરતિ બુધ્નમ્-શરીર રજસ:-અન્તરિક્ષના મધ્યમાં આપ:-જળનું વૃત્વી-આવરણ કરીને અશયત્-
શયન કરે છે, તેના હન્વો:-આગળ-પાછળ મુખના અવયવો-જડબામાં તન્યતુમ્-વિદ્યુત્ને છોડીને તેને
પ્રવણે-નીચે નિજઘન્થ-મારીને પાડી દે છે, તમે (તેવા) બનીને ન્યાયમાં પ્રવૃત્ત થાઓ. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને એ યોગ્ય છે, કે તેઓએ સૂર્ય અને મેઘની સમાન પ્રવૃત્ત થઈને વિદ્યા અને
ન્યાયની વર્ષા પ્રકાશિત કરવી જોઈએ. (૬)

હૃદં ન હિ ત્વાં ન્યૃષન્ત્યૂર્મયો બ્રહ્માણીન્દ્ર ત્વ યાન્તિ વર્ધના ।

ત્વષ્ટાં ચિત્તે યુજ્યં વાવૃધે શર્વસ્તૃતક્ષુ વજ્રમ્ભિભૂત્યોજસમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : ઇન્દ્ર-વિદ્યુત્ સમાન વિદ્યમાન તે-આપની વર્ધના-વૃદ્ધિ કરનાર, બ્રહ્માણિ-મહાન અન્ન
કર્મય:-તરંગો આદિ હૃદમ્-ન-જેમ નદી જળ સ્થાનને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ હિ-નિશ્ચયપૂર્વક જ્યોતિઓને
ન્યૃષન્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તે ત્વષ્ટા-મેઘના અવયવો-વાદળાંઓ અને મૂર્તિમાન દ્રવ્યોનું છેદન કરનાર

(શવઃ-બળ) અભિભૂત્યોજસમ્-ઐશ્વર્યયુક્ત પરાક્રમ તથા યુજ્યમ્-યુક્ત કરવા યોગ્ય વજ્રમ્-પ્રકાશસમૂહનો પ્રહાર કરીને સમસ્ત પદાર્થોનું તતક્ષ-છેદન કરે છે, તેમ આપ પણ બનો. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ જળ નીચાણવાળા સ્થાન પર પહોંચીને સ્થિર અને સ્વચ્છ બની જાય છે, તેમ (રાજપુરુષ) સદ્ગુણો અને વિનયશીલ પુરુષોને પ્રાપ્ત કરીને સ્થિર અને શુદ્ધ બની જાય છે. (૭)

જગ્નવાં ઉ હરિભિઃ સંભૂતક્રતુવિન્દ્ર વૃત્રં મનુષે ગાતુયન્નપઃ ।

અયચ્છથા બાહ્લોર્વજ્રમાયસમધારયો દિવ્યા સૂર્યં દૃશે ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે સંભૂતક્રતો-ક્રિયા પ્રજ્ઞાઓને ધારણ કરેલ ઇન્દ્ર-મેઘના અવયવોનું છેદન કરનાર સૂર્યની સમાન શત્રુઓને તાડિત કરનાર સભાપતિ ! આપ-જેમ સૂર્ય પોતાના કિરણોથી વૃત્રમ્-મેઘને જઘન્વાન્-પાડીને-વરસાવીને આપઃ-જળને મનુષે-મનુષ્યોને ગાતુયન્-પૃથિવી પર પ્રાપ્ત કરાવી પ્રજાને ધારણ કરે છે, તેમ પ્રજાની રક્ષા માટે બાહ્લોઃ-બળ તથા આકર્ષણોની સમાન ભુજાઓની મધ્યમાં આયસમ્-લોખંડના વજ્રમ્-કિરણસમૂહ સમાન શસ્ત્રોને આધારયઃ-સારી રીતે ધારણ કરો, વીરોને કરાવો અને સર્વ મનુષ્યોને સુખકારક દિવિ-શુદ્ધ વ્યવહારમાં સૂર્યમ્-સૂર્યમંડળની સમાન ન્યાય અને વિદ્યાના પ્રકાશને દૃશે-દેખાડવા માટે અચ્છથાઃ-સર્વ રીતે પ્રદાન કરો. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યલોક પોતાના બળ અને આકર્ષણ દ્વારા સર્વલોકોને ધારણ કરીને તથા જળને ખેંચીને અને તેને વરસાવીને દિવ્ય સુખ ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ સભા સર્વગુણોને ધારણ કરીને તથા લક્ષ્મીને ખેંચીને (પ્રજાથી કર આદિ રૂપમાં ગ્રહણ કરીને) અને તેનું યોગ્ય પાત્રોમાં દાન કરીને પ્રજાઓને માટે આનંદને પ્રકટ કરે. (૮)

બૃહત્સ્વર્ચન્દ્રમર્મવદ્યદુક્થ્યમ્ મકૃણવત ભિયસા રોહણં દિવઃ ।

યન્માનુષપ્રધના ઇન્દ્રમૂતયઃ સ્વર્નૃષાચો મરુતોઽમદન્નનુ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : જે માનુષપ્રધનાઃ-મનુષ્યોએ ઉત્તમ ધન પ્રાપ્ત કરાવનાર તથા નૃષાચઃ-મનુષ્યોને કર્મમાં સંયુક્ત કરાવનાર મસ્તઃ-પ્રાણ આદિ છે, તે ઇન્દ્રમ્-વિદ્યુત્ને પ્રાપ્ત થઈને યત્-જે બૃહત્-મહાન સ્વશ્ચન્દ્રમ્-પોતાના આહ્વાદક પ્રકાશથી યુક્ત અમવત્-ઉત્તમ જ્ઞાન ઉક્થ્યમ્-પ્રશંસનીય સ્વઃ-સુખને અકૃણવત્-સંપાદન કરે છે; અને યત્-જે ભિયસા-દુઃખના ભયથી દિવઃ-પ્રકાશમાન મોક્ષ સુખનું રોહણમ્-આરોહણ, ક્રતયઃ-રક્ષા આદિ કરીને અન્વમદન્-તેને અનુકૂળ આનંદ કરે છે, તે મનુષ્ય મુખ્ય સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

ભાવાર્થ : વિદ્યા, ધન, રાજ્ય, પરાક્રમ, બળ અને પુરુષનો સહયોગ જે ધાર્મિક વિદ્વાનને પ્રાપ્ત થાય છે, તેના માટે (તે) ઉત્તમ સુખ ઉત્પન્ન કરે છે. (૯)

દ્યૌશ્ચિદ્સ્યામવાં અહેઃ સ્વનાદયોયવીદ્વિયસા વજ્ર ઇન્દ્ર તે ।

વૃત્રસ્ય યદ્વદ્ધાનસ્ય રોદસી મદે સુતસ્ય શવસાભિનચ્છિરઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્યના હેતુ સેનાપતિ ! જે અસ્ય-એ તે-આપના તથા એ સૂર્યના દ્વાૃઃ-પ્રકાશને અહેઃ-બદ્બધાનસ્ય-રોકનાર મેઘના સુતસ્ય-ઉત્પન્ન થયેલ વૃત્રસ્ય-આવરણકારક જળના અવયવોને અયોયવીત્-મિશ્ર અને પૃથક્ કરે છે, ચિત્-તમે અમવાન્-બળકારી વજ્રઃ-વજાના સ્વનાત્-શબ્દોથી ભિયસા-તથા ભયથી શવસા-બળની સાથે શત્રુઓ ભાગે છે. રોદસી-આકાશ અને પૃથિવીની સમાન મદે-આનંદકારી વ્યવહારમાં શત્રુના શિરઃ-શિર અભિનત્-કાપે છે; તે આપ અમારું પાલન કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યનાં કિરણો અને વિદ્યુત્ મેઘ પ્રત્યે પ્રવૃત્ત થાય છે, તેમ સેનાપતિ આદિએ બનવું જોઈએ. (૧૦)

यदिन्विन्द्र पृथिवी दशभुजिरहानि विश्वा ततनन्त कृष्टयः ।

अत्राह ते मघवन्विश्रुतं सहो द्यामनु शर्वसा बर्हणा भुवत् ॥ ११ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-ઉત્કૃષ્ટ ધન અને વિદ્યાના ઐશ્વર્યથી ઇન્દ્ર-સભાધ્યક્ષ, સેનાધ્યક્ષ ! આપ યત્-જે દશભુજિઃ-દશ ઈન્દ્રિયોથી પૃથિવી-ભૂમિને ભોગવો છો, તે-આપના બર્હણા-સમસ્ત સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર અને (શવસા-અહ-બળથી જ) દ્યામ્-રાજ્યપાલન અનુવિશ્રુતમ્-અનુકૂળ કીર્તિ કરાવનાર યજ્ઞ સહઃ-બળ ભુવત્-થાય, તેનાથી યુક્ત થઈને આપ પ્રયત્ન કરો, જેથી અત્ર-આ રાજ્યમાં કૃષ્ટયઃ-મનુષ્યો વિશ્વા-સર્વ અહાનિ-દિવસોને ઇત્-સુખથી નુ-શીઘ્ર તતનન્ત-વિસ્તાર કરે. (૧૧)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ પોતાનાં રાજ્યમાં સુખોની વૃદ્ધિ અને વિવિધ ગુણોની પ્રાપ્તિ જેમ થાય, તેવા જ કર્મો કરવા જોઈએ. (૧૧)

त्वमस्य पारे रजसो व्योमनः स्वभूत्योजा अवसे धृषन्मनः ।

चकृषे भूमिं प्रतिमानमोजसोऽपः स्वः परिभूरेष्या दिवम् ॥ १२ ॥

પદાર્થ : હે ધૃષન્મનઃ-અનંત પ્રગલ્ભ = પ્રતિભાવાન વિજ્ઞાનયુક્ત જગદીશ્વર ! પરિભૂઃ-સર્વત્ર સ્વભૂ-ત્યોજાઃ-પોતાના ઐશ્વર્ય અને પરાક્રમયુક્તથી ત્વમ્-આપ અવસે-રક્ષા આદિ માટે અસ્ય-આ સંસારના રજસઃ-પૃથિવી આદિ લોકો તથા વ્યોમનઃ-આકાશના પારે-અપર ભાગમાં પણ ણ્ણિ-પ્રાપ્ત છો, અને આપે ઓજસઃ-પરાક્રમ આદિના પ્રતિમાનમ્-અવધિ સ્વઃ-સુખ, દિવમ્-શુદ્ધ વિજ્ઞાનનો પ્રકાશ, ભૂમિમ્-ભૂમિ અને અપઃ-જળને આચકૃષે-સારી રીતે કરેલ છે, તે આપની અમે ઉપાસના કરીએ છીએ. (૧૨)

ભાવાર્થ : (જેમ) પરમેશ્વર સર્વથી પરમ શ્રેષ્ઠ અને સમસ્ત દુઃખોથી પૃથક્ રહીને, પોતાના સામર્થ્યથી સર્વ લોકોને રચીને તેમાં વ્યાપ્ત થઈને, સર્વને વ્યવસ્થિત કરીને, જીવોના પાપ-પુણ્યોની વ્યવસ્થા કરવાના કારણે ન્યાયાધીશ છે, તેમ સભાપતિ =રાજા રાજ્ય કરીને સર્વને સુખ પ્રદાન કરે. (૧૨)

त्वं भुवः प्रतिमानं पृथिव्या ऋष्ववीरस्य बृहतः पतिर्भूः ।

विश्वमाप्रा अन्तरिक्षं महित्वा सत्यमद्वा नकिरन्त्यस्त्वावान् ॥ १३ ॥

पदार्थ : હે જગદીશ્વર ! જે ત્વમ્-આપ પૃથિવ્યા:-વિસ્તૃત આકાશ અને ભુવ:-ભૂમિના પ્રતિમાનમ્-પરિમાણ = પ્રમાણકર્તા તથા બૃહત:-મહાબળવાન, ઋશ્વવીરસ્ય-મહાનગુણયુક્ત જગતના તથા મહાવીર મનુષ્યના પતિ:-પાલક ભૂ:-છો; તથા આપ વિશ્વમ્-સમસ્ત જગત અન્તરિક્ષમ્-અનેક લોકોની મધ્યમાં અવકાશસ્વરૂપ આકાશ અને સત્યમ્-કારણ રૂપથી અવિનાશી સમ્યક્ પરીક્ષા કરેલ ચારેય વેદોને મહિત્વા-મહાન વ્યાપ્તિથી વ્યાપ્ત થઈને શ્રદ્ધાપ્રા:-સાક્ષાત રૂપમાં પૂરણ કરો છો, એથી ત્વાવાન્-આપના સમાન અન્ય:-બીજો નકિ:-કોઈ નથી. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેથી ઈશ્વર સમસ્ત સંસારના નિર્માતા, પરિમાણકર્તા, વ્યાપક અને સત્યના પ્રકાશક છે, તેથી ઈશ્વરની સમાન કોઈપણ પદાર્થ થયો નથી, થશે નહિ, એમ માનીને અમે તેની ઉપાસના કરીએ છીએ. (૧૩)

न यस्य द्यावापृथिवी अनु व्यचो न सिन्धवो रजसो अन्तमानशुः ।

नोत स्ववृष्टिं मदै अस्य युध्यत एको अन्यच्चकृषे विश्वमानुषक् ॥ १४ ॥

પદાર્થ : યસ્ય-જે રજસ:-ઐશ્વર્યયુક્ત જગદીશ્વરની અનુવ્યચ:-અનંત વ્યાપ્તિને અનુકૂળ દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશ, અપ્રકાશયુક્ત લોક અને ચંદ્રમાદિ પણ અન્તમ્-અન્ત અર્થાત્ સીમાને ન-આનશુ:-પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી.

હે પરમાત્મનું ! જેમ સ્વવૃષ્ટિમ્-પોતાના પદાર્થોની વર્ષાને પ્રત્યે મદે-આનંદમાં યુધ્યત:-યુદ્ધ કરતા મેઘનો સૂર્યની સામે વિજય થતો નથી, તેમ એક:-અસહાય = અદ્વિતીય જગદીશ્વરે અન્યત્-પોતાનાથી ભિન્ન દ્વિતીય વિશ્વમ્-જગતને આનુષક્-પોતાની વ્યાપ્તિથી યુક્ત કરેલ છે, તેથી આપ ઉપાસનાને યોગ્ય છો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વરના કોઈ પણ ગુણનો કોઈ પણ મનુષ્ય અથવા લોક પાર પામી શકતા નથી. જેમ જગદીશ્વર પાપકર્મ કરનારને દુઃખરૂપ ફળ આપવા દ્વારા પીડિત કરીને, દુષ્ટોની તાડના કરીને, સૂર્ય મેઘના ખંડોને-અવયવોને પૃથક્ પૃથક્ કરીને, યુદ્ધ કરનારની સમાન (પ્રતીત થાય) છે. તેમજ સજ્જનો એ બનવું જોઈએ. (૧૪)

आर्चन्नत्र मरुतः सस्मिन्नाजौ विश्वे देवासो अमदन्ननु त्वा ।

वृत्रस्य यद्धृष्टिमता वधेन नि त्वमिन्द्र प्रत्यानं जघन्थ ॥ १५ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત સભાપતિ, સેનાપતિ ! યત્-જે ત્વમ્-આપ ભૃષ્ટિમતા-પ્રશંસિત નીતિમાન અને ન્યાય વ્યવહારથી યુક્ત વધેન-હનનથી વૃત્રસ્ય-અધર્મી મનુષ્યની સમાન આનમ્-પ્રાણને જઘન્થ-નષ્ટ કરો છો, તે ત્વા-આપનો સસ્મિન્-સર્વ આજૌ-સંગ્રામ અને અત્ર-આપમાં શ્રદ્ધા કરનાર વિશ્વેદેવાસ:-સમસ્ત વિદ્વાનો અને મસ્ત:-ઋત્વિજો ન્યાર્ચન્-નિત્ય સત્કાર કરે છે; તેથી તે પ્રજાના પ્રાણી

प्रत्यन्वमदन्-सर्वने आनंदित करीने आप-स्वयं आनंदित थाव एो. (१५)

भावार्थ : जे अेक परमेश्वरनी उपासना करीने, विद्या ग्रहण करीने, शत्रुओने जतीने तथा विजय प्राप्त करीने प्रजओने नित्य प्रसन्न राबे एे, ते विद्वानो सुभी थाय एे. (१५)

संगति : आ सूक्तमां विद्वान, विद्युत् आदि अग्नि अने ईश्वरना गुणोनुं वर्णन डोवाथी आ सूक्तना अर्थनी पूर्व सूक्तना अर्थनी साथे संगति जाषवी जेईअे. (५२)

सूक्त-५३

न्यूंषु वाचं प्र महे भ्रामहे गिर् इन्द्राय सद्ने विवस्वतः ।

नू चिद्धि रत्नं ससतामिवाविदन्न दुष्टुतिर्द्विणोदेषु शस्यते ॥ १ ॥

पदार्थ : डे मनुष्यो ! जेम अमे महे-मडासुभदाता सद्ने-स्थानमां इन्द्राय-परमेश्वर्यने माटे सु-शुभलक्षणयुक्त वाचम्-वाणीने निभ्रामहे-निश्चित धारण करीअे एीअे. स्वप्नमां ससतामिव-सूतेल मनुष्य समान विवस्वतः-सूर्य प्रकाशमां रत्नम्-रमणीय सुवर्णादिनी समान गिरः-स्तुतिओने धारण करीअे एीअे; परंतु द्विणोदेषु-सुवर्णादि अने विद्यादि आपनार अमारामां दुष्टुतिः-दुष्ट स्तुति अने पापनी कीर्ति अर्थात् निंदा न प्रशस्यते-प्रशंसित-श्रेष्ठ डोती नथी, तेम तमे पण थाओ. (१)

भावार्थ : जेम निद्रामग्न मनुष्य विश्राम प्राप्त करे एे, तेम मनुष्योअे सदा विद्या अने सुरक्षा द्वारा संस्कारित वाणी स्वीकार करीने, प्रशंसनीय कर्मनुं सेवन करीने अने निद्राने दूर करीने स्तुतिना प्रकाशना माटे प्रयत्न करवो जेईअे. (१)

दुरो अश्वस्य दुर इन्द्र गोरसि दुरो यवस्य वसुन इनस्पतिः ।

शिक्षानरः प्रदिवो अकामकर्शनः सखा सखिभ्यस्तमिदं गृणीमसि ॥ २ ॥

पदार्थ : डे इन्द्र-विद्वान ! जे अकामकर्शनः-आणसु मनुष्योने कृश करनार, शिक्षानरः-शिक्षाओने प्राप्त करनार अने सखिभ्यः-मित्रोना सखा-मित्र पतिः-पालन करनार तथा इनः-ईश्वर समान सामर्थ्ययुक्त आप अश्वस्य-व्याप्तिकारक अग्नि आदि अने अश्व आदिना द्वारोने प्राप्त करीने सुभदायक गोः-वाणी अने दूध आपनारी गायना दुरः-सुभदायक द्वारोने जाषीने, यवस्य-उत्तम जव आदि अन्न, प्रदिवः-उत्तम विज्ञान, प्रकाश अने वसुनः-उत्तम धनदाता असि-एो. तम्-ते आपनी इदम्-पूजा अथवा सत्कार पूर्वक गृणीमसि-स्तुति करीअे एीअे. (२)

भावार्थ : परमेश्वर समान धार्मिक विद्वान विना कोईने माटे समस्त पदार्थो अने सुषोने प्रदान करनार अन्य कोई नथी. परंतु जे सर्वना मित्र अने शिक्षा प्राप्त करेले मनुष्य एे, ते ज समस्त सुष प्राप्त करे एे, अन्य नडि. (२)

शचीव इन्द्र पुरुकृद् द्युमत्तम् तवेदिदमभितश्चेकिते वसु ।

अतः संगृभ्याभिभूत आ भर मा त्वायतो जरितुः काममूनयीः ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે સચીવ:-પ્રશસ્ત પ્રજ્ઞા, વાણી અને કર્મયુક્ત દ્યુમત્તમ્-અત્યંત સર્વજ્ઞતા, વિદ્યા, પ્રકાશયુક્ત, પુસ્કૃત્-પુષ્કળ સુખદાતા, ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર્યયુક્ત જગદીશ્વર અથવા ઐશ્વર્યદાતા સભાપતિ વિદ્વાન ! આપની કૃપા અને આપની સહાયથી મનુષ્ય અભિત:-સર્વત્રથી ઇદમ્-એ વસુ-ઉત્તમ ધનને ચેકિતે-જાણે છે.

હે અભિભૂતે-શત્રુઓનો પરાજય કરનાર ! જે કારણે આપ ત્વાયત:-આપ અને તેના આત્માની ઈચ્છા કરતા જરિતુ:-સ્તુતિ કરનાર ધાર્મિક ભક્તજનની કામમ્-ઈચ્છાઓને આભર:-પૂર્ણ કરો. અત:-એ પુરુષાર્થથી આપને સંગૃભ્ય-ગ્રહણ કરીને હું વર્તુ હું અને આપ મને સર્વ કામોમાં પૂર્ણ કરો. આપની ઈચ્છા કરતા, સ્તુતિ કરનાર મારી ઈચ્છિત સિદ્ધિ મોનયી:-કદાપિ ક્ષીણ ન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા પરમૈશ્વરના અથવા આપ્ત-વિદ્વાન પુરુષના સંગ વિના સર્વની કામના-ઈચ્છાઓની પૂર્તિ થઈ શકતી નથી, તેથી એ (પરમૈશ્વર)ની જ ઉપાસના કરીને તથા આપ્ત-જનનો સંગ કરીને કામનાઓની પૂર્તિ કરવી જોઈએ. (૩)

एभिर्द्युभिः सुमना एभिरिन्दुभिर्निरुन्धानो अमतिं गोभिरुश्विना ।

इन्द्रेण दस्युं दरयन्त इन्दुभिर्युतद्वेषसः समिषा रभेमहि ॥ ४ ॥

પદાર્થ : અમે જે અમતિમ્-વિજ્ઞાન અને સુખ દ્વારા અવિદ્યા, દરિદ્રતા અને સુંદર રૂપનો નિરુધ્વાન:-નિરોધ અથવા ગ્રહણ કરીને સુમના:-ઉત્તમ વિજ્ઞાનયુક્ત સભાધ્યક્ષ છે, તેની પ્રાપ્તિ કરીને તેની સહાય તથા એભિ:-એ દ્યુભિ:-પ્રકાશયુક્ત દ્રવ્ય એભિ:-એ ઇન્દુભિ:-આહ્વાદકારક ગુણ અને પદાર્થ એ ગોભિ:-પ્રશંસિત ગાય, પૃથિવી, અશ્વિના-અગ્નિ, જળ, સૂર્ય, ચંદ્ર આદિ ઇષા-ઈચ્છાના અન્નાદિ [ઇન્દુભિ:-બળદાયક સોમરસાદિ પાનકો,] ઇન્દ્રેણ-વિદ્યુત્ અને તેથી રચેલ વિદારણ કરનાર શસ્ત્રથી દસ્યુમ્-બળપૂર્વક પારકું ધન છીનનાર દુષ્ટનું દરયન્ત:-વિદારણ કરીને યુતદ્વેષસ:-દ્વેષથી મુક્ત થનાર શત્રુઓની સાથે યુદ્ધનો સુખથી સમારભેમહિ-આરંભ કરીએ.

ભાવાર્થ : જે સભા આદિના અધ્યક્ષ સંપૂર્ણ દરિદ્રતાનો નાશ કરીને, શત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરીને તથા સમસ્ત વિદ્યાઓને શીખીને અમને સુખી કરે છે, તેનો સર્વ મનુષ્યોએ આશ્રય ગ્રહણ કરવો જોઈએ. નિશ્ચય જ એની સહાય વિના કોઈ પણ વ્યાવહારિક આનંદ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી, તેથી તેની સહાયતાથી સર્વ ધાર્મિક કાર્યોનો આરંભ તથા નિત્ય સુખનું સેવન કરવું જોઈએ. (૪)

समिन्द्र राया समिषा रभेमहि सं वाजैभिः २ पुरुश्चन्द्रैरभिद्युभिः ।

सं देव्या प्रमत्या वीरशुष्मया गो अग्रयाऽश्वावत्या रभेमहि ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-સભાધ્યક્ષ ! જેમ અમે આપની સહાયથી **सम्राया**-ઉત્તમ રાજ્ય લક્ષ્મી, **समिषा**-ધર્મની ઈચ્છા અને અન્નાદિ **अभिद्युभिः**-વિદ્યા, વ્યવહાર અને પ્રકાશયુક્ત **पुस्त्र्यन्दैः**-અત્યંત આહ્લાદક સુવર્ણ અને ઉત્તમ ચાંદી આદિ ધાતુ **संवाजेभिः**-વિજ્ઞાન આદિ ગુણ અને સંગ્રામ તથા **प्रमत्या**-ઉત્તમ મતિ-બુદ્ધિયુક્ત **देव्या**-દિવ્યગુણ સહિત વિદ્યાથી યુક્ત સેનાથી **गोअग्रया**-શ્રેષ્ઠ ઈન્દ્રિય, ગાય અને પૃથિવીથી યુક્ત, **वीरशुष्मया**-શૂરવીર યોદ્ધાઓના બળથી યુક્ત, **अश्वत्या**-પ્રશસ્ત વેગ અને બળવાન ઘોડાયુક્ત સેનાને સાથે લઈને શત્રુઓની સાથે **संभेमहि**-સમ્યક્ સંગ્રામ કરીએ, એ સર્વ કાર્યો કરીને લૌકિક અને પારમાર્થિક સુખોને **रभेमहि**-સિદ્ધ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૫)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય વિદ્વાનોની સહાયતા વિના પુરુષાર્થની સિદ્ધિને સારી રીતે પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. કોઈપણ મનુષ્ય બળ, સ્વાસ્થ્ય અને સામગ્રીથી સંપન્ન, સુશિક્ષિત તથા ધાર્મિક શૂરવીરો યુક્ત ચતુરંગિણી સેના વિના શત્રુઓનો પરાજય કરીને વિજય પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તેથી તેની સદા ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૫)

ते त्वा मदां अमदन् तानि वृष्ण्या ते सोमांसो वृत्रहृत्येषु सत्पते ।

यत्कारवे दशं वृत्राण्यप्रति बर्हिष्मते नि सहस्राणि बर्हयः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે **सत्पते**-સત્પુરુષોના પાલક સભાધ્યક્ષ ! **यत्**-જે આપ **बर्हिष्मते**-વિજ્ઞાનયુક્ત **कारवे**-કર્મ કરનાર મનુષ્યને માટે **वृत्राणि**-શત્રુઓને રોકનાર કર્મ **दश**-દશ **सहस्राणि**-હજાર અર્થાત્ અસંખ્ય સેનાઓની **अप्रति**-અપ્રતીતિ જેમ થાય, તેમ પ્રતિકૂળ કર્મોની **निबर्हयः**-નિરંતર વૃદ્ધિ કરો, તેઓ આપના આશ્રિત થઈને **ते**-તેઓ **सोमांसः**-સર્વોત્કૃષ્ટ પદાર્થોને ઉત્પન્ન કરનાર **मदाः**-આનંદિત કરનાર શૂરવીર, ધાર્મિક, વિદ્વાનજન **त्वा**-આપને **वृत्रहृत्येषु**-શત્રુઓને હણવા યોગ્ય સંગ્રામોમાં **तानि**-તે **वृष्ण्या**-સુખવર્ષક સર્વોત્તમ કર્મોનું આચરણ કરીને **अमदन्**-પ્રસન્ન થાય છે. (૬)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ સદા સત્પુરુષોના સંગ દ્વારા અનેક સાધનો પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત થવું જોઈએ. (૬)

युधा युधमुप घेदैषि धृष्णुया पुरा पुरं समिदं हुंस्योजसा ।

नम्या यदिन्द्रसख्यां परावतिं निबर्हयो नमुचिं नाम मायिनम् ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-સભાધ્યક્ષ ! **यत्**-જે કારણે તમે **धृष्णुया**-દૃઢતા આદિ ગુણયુક્ત **संख्या**-મિત્ર સમૂહ **युधा**-યુદ્ધ કરનાર **ओजसा**-બળની સાથે **पुरा**-પ્રથમ **इदम्**-એ **पुरम्**-શત્રુઓનાં નગરને **संसि**-નષ્ટ કરીને તથા **युद्धम्**-યુદ્ધ કરતા શત્રુઓને **इत्**-પણ **घ**-નિશ્ચયપૂર્વક **एषि**-પ્રાપ્ત કરીને તથા **नम्या**-જેમ રાત્રિ અંધકારથી સર્વ પદાર્થોનું આવરણ કરે છે-ઢાંકી દે છે, તેમ અન્યાયથી અંધકાર કરનાર **नाम**-પ્રસિદ્ધ **ननुचिम्**-મુક્તથી રહિત **मायिनम्**-છળ, કપટયુક્ત, દુષ્ટ કર્મ કરનાર મનુષ્ય અને પશુ આદિને **परावति**-દૂર દેશમાં **निबर्हयः**-નિઃસારણ કરો છો, તેથી આપને મુદ્ધાભિષિક્ત કરીને અમે

સભાધ્યક્ષના અધિકારમાં સ્વીકાર કરીને રાજપદવીથી માન્ય કરીએ છીએ. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ અનેક મિત્રો બનાવીને, દુષ્ટ શત્રુઓનું નિવારણ કરીને – દૂર કરીને, દુષ્ટ દળોને-તથા શત્રુઓના નગરોને તોડીને, સમસ્ત અન્યાયકારી મનુષ્ય આદિને પ્રશાસિત કરીને પરમ ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૭)

ત્વં કરञ्जमुत्त પર્ણયં વધીસ્તેજિષ્ઠયાતિથિગ્વસ્ય વર્તની ।

ત્વં શ્તા વડ્ગૃદસ્યાભિનત્પુરોડનાનુદઃ પરિષૂતા ઋજિશ્વના ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ ! જે કારણે ત્વમ્-આપ એ યુદ્ધ વ્યવહારમાં તેજિષ્ઠયા-અત્યંત તીક્ષ્ણ સેના અને નીતિયુક્ત બળથી કરજ્જમ્-ધર્માત્માઓને દુઃખ આપનાર પર્ણયમ્-પારકી વસ્તુ પડાવનાર ચોરને ઉત્ત-પણ વધી:-મારીને તથા જે અતિથિગ્વસ્ય અતિથિઓના આવાગમનને માટે વર્તની-સત્કાર કરનારી ક્રિયા છે, તેની રક્ષા કરીને અનાનુદઃ-અનુકૂળ ન વર્તનાર વડ્ગૃદસ્ય-વિષ આદિ પદાર્થોના દેનાર અને દુષ્ટ વ્યવહારોનો ઉપદેશ કરનાર, દુષ્ટ મનુષ્યોના શ્તા-અસંખ્ય પુર:-નગરોને અભિનત્-ભેદન કરીને તથા જે પરિષૂતા:-સર્વ પ્રકારથી ઉત્પન્ન કરેલ પદાર્થ છે, તેની ઋજિશ્વના-કોમળ ગુણયુક્ત કૂતરાને શિક્ષા આપનારની સમાન વ્યવહારની સાથે રક્ષા કરો છો, તેથી આપજ સભા આદિના અધ્યક્ષ બનવાને યોગ્ય છો, એવો અમે નિશ્ચય કરીએ છીએ. (૮)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ દુષ્ટ શત્રુઓનું ભેદન કરીને તથા પૂર્ણ વિદ્યાવાન પરોપકારી ધાર્મિક અતિથિઓ ના સત્કાર માટે સર્વ પ્રાણીઓ અને પદાર્થોની રક્ષા કરીને ધર્મમય રાજ્યનું સેવન કરવું જોઈએ. જેમ કૂતરાઓ સ્વામીની રક્ષા કરે છે, તેમ અન્ય (પ્રાણી) રક્ષા કરી શકતા નથી. તેથી તેને સુરક્ષિત કરીને રાખવા જોઈએ. (૮)

ત્વમેતાઞ્જનરાજ્ઞો દ્વિર્દશાબન્ધુનાં સુશ્રવસોપજગ્મુષઃ ।

ષષ્ટિં સહસ્ત્રાં નવતિં નવં શ્રુતો નિ ચક્રેણ રથ્યાં દુષ્પદાવૃણક્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ અને સેનાધ્યક્ષ ! જેમ શ્રુતઃ-શ્રવણ કરનાર ત્વમ્-તમે એતાન્-એ અબન્ધુના-અબન્ધુ અર્થાત્ મિત્રરહિત અનાથ અને સુશ્રવસા-ઉત્તમ શ્રવણ, અન્નયુક્ત મિત્રની સાથે વિદ્યમાન ઉપજગ્મુષઃ-સમીપ થનાર ષષ્ટિમ્-સાઠ, નવતિમ્-નેવુ, નવ-નવ દશ, સહસ્ત્રાણિ-દશ હજાર, જનરાજ્ઞઃ-ધાર્મિક રાજાયુક્ત મનુષ્યોને દુષ્પદા-દુઃખથી પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય રથ્યા-રથને પ્રાપ્ત કરનાર ચક્રેણ-શસ્ત્ર વિશેષ અથવા ચક્રાદિ અંગયુક્ત યાન સમૂહથી દ્વિઃ-બે વાર ન્યવૃણક્-નિત્ય દુઃખોથી પૃથક્ કરો છો તથા દુષ્ટોને દૂર કરો છો, તેમ તું પણ પાપાયરણથી સદા દૂર રહે. (૯)

ભાવાર્થ : ચક્રવર્તી રાજાએ સર્વ માંડલિક અને મહામાંડલિક રાજાઓ, કર્મચારીઓ, ગૃહસ્થો અથવા વિરક્તોને (પોતાના પ્રત્યે) અનુરાગ-યુક્ત કરીને તથા શરણાગતોનું પાલન કરીને, ધર્મથી યુક્ત સાર્વભૌમ રાજ્યનું શાસન કરવું જોઈએ; અને દશ વગેરે સંખ્યાવાચી શબ્દો ઉપલક્ષણ રૂપ છે, તેથી રાજપુરુષો દ્વારા સર્વનું યથાયોગ્ય રક્ષણ અને દંડ-વિધાન કરવું જોઈએ. (૯)

त्वमाविथ सुश्रवसं तवोतिभिस्तव त्रामभिरिन्द्र तूर्वयाणम् ।

त्वमस्मै कुत्समतिथिग्वमायुं महे राज्ञे यूने अरन्धनायः ॥ १० ॥

पદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સભાધ્યક્ષ અને સેનાધ્યક્ષ ! ત્વમ્-આપ અસ્મૈ-એ મહે-સર્વોત્કૃષ્ટ ગુણયુક્ત યૂને-યુવાવસ્થામાં રાજ્ઞે-ન્યાય, વિનય અને વિદ્યાદિ ગુણોથી દેદીપ્યમાન રાજાને માટે તવ-આપના ઋતિભિઃ-રક્ષણ આદિ કર્મોથી સેનાદિ સહિત અને તવ-આપની ત્રામભિઃ-રક્ષા કરનાર ધાર્મિક વિદ્વાનોથી રક્ષા પામેલ જે અતિથિગ્વમ્-અતિથિઓ પ્રાપ્ત કરનાર અને કરાવનાર તૂર્વયાણમ્-શત્રુજનોની હિંસા કરનાર યાન સહિત આયુમ્-જીવનયુક્ત સુશ્રવસમ્-ઉત્તમ શ્રવણ અને અન્નાદિ યુક્ત મનુષ્યોથી અરંધનાયઃ-પૂર્ણ ધનયુક્ત મનુષ્યની સમાન આચરણ કરો છો અને ત્વમ્-આપ જે કુત્સમ્-વજની સમાન વીરપુરુષની આવિથ-રક્ષા કરો છો, તેને કોઈ પણ દુઃખ પ્રાપ્ત થતું નથી. (૧૦)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ શત્રુઓનું નિવારણ કરીને તથા સર્વની રક્ષા કરીને સર્વને સદા સુખી રાખવા જોઈએ. એ નિશ્ચય રાજાની ઉન્નતિ રૂપી લક્ષ્મીયુક્ત સદા બને. વિદ્યાલયના અધ્યક્ષ સર્વને ઉત્તમ શિક્ષા દ્વારા વિદ્વાન અને શસ્ત્રાસ્ત્રો (ને ચલાવવા)માં નિપુણ કરીને પ્રજાની નિરંતર રક્ષા કરે. (૧૦)

ય ઉદૂચીન્દ્ર દેવગોપાઃ સખાયસ્તે શિવતમા અસામ ।

ત્વાં સ્તોષામ ત્વયા સુવીરા દ્રાઘીય આયુઃ પ્રતરં દધાનાઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સભાધ્યક્ષ અને સેનાધ્યક્ષ ! તે-આપના દેવગોપાઃ-વિદ્વાન અને દિવ્ય ગુણ, કર્મોની રક્ષા કરનાર શિવતમાઃ-અત્યંત કલ્યાણ લક્ષણયુક્ત સખાયઃ-પરસ્પર મિત્રતા અમે અસામ-કરીએ. ત્વયા-આપની સાથે રક્ષા અને શિક્ષા કરેલ સુવીરાઃ-ઉત્તમ વીરયુક્ત પ્રતરમ્-દુઃખ દૂર કરતા દ્રાઘીયઃ-અત્યંત વિસ્તૃત સો વર્ષથી અધિક આયુઃ-વયને દધાનાઃ-ધારણ કરીને ઉદ્ધૃચિ-ઉત્તમ ઋચ્યાયુક્ત અધ્યયન વ્યવહારમાં ત્વામ્-શુભલક્ષણયુક્ત આપના સ્તોષામ-ગુણોનું કીર્તન કરીએ. (૧૧)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરસ્પર નિશ્ચિત મિત્રતા કરીને, સર્વ સ્ત્રી-પુરુષ આદિ લોકોને સુવિધાથી યુક્ત કરીને તથા કરાવીને પૂર્ણ આયુ ભોગવવી જોઈએ. (૧૧)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાન, સભાધ્યક્ષ તથા પ્રજાના પુરુષો પરસ્પર પ્રીતિપૂર્વક રહીને સુખને પ્રાપ્ત કરવાનું પ્રતિપાદન કરેલ છે; તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૫૩)

સૂક્ત-૫૪

મા નોં અસ્મિન્મઘવન્પૃત્સ્વંહંસિ નહિ તે અન્તઃ શર્વસઃ પરીણશે ।

અક્રન્દયો નદ્યોરૂં રોરુવદ્વના કથા ન ક્ષોણીર્ભિયસા સમારત ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-ઉત્તમ ધનયુક્ત જગદીશ્વર ! જે આપ પૃત્સુ-સેનાઓ અસ્મિન્-આ જગત અને પરીણશે-સર્વ પ્રકારથી નષ્ટ કરનાર અંહસિ-પાપમાં અમને માક્રન્દય:-ફસાવો નહિ, જે તે-આપના શવસ:-બળના અન્ત:-અન્તને કોઈ પણ નહિ-પામી શકતા નથી, તે આપ નદ્ય:-નદીઓની સમાન અમને ભમાવો નહિ, ભિયસા-ભયથી મારોસ્વત્-વારંવાર રડાવો નહિ જે આપ ક્ષોણી:-બહુ જ ગુણયુક્ત પૃથિવીનું નિર્માણ અને ધારણ કરવાને સમર્થ છો, તેથી મનુષ્ય આપને કથા-કેમ ન, સમાસ્ત-પ્રાપ્ત ન થાય ? (૧)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં, પરમેશ્વર અનંત હોવાથી, મનુષ્યો દ્વારા સત્ય ભાવથી ઉપાસના કરેલ એ (ઈશ્વર) દુઃખોને ઉત્પન્ન કરનારા અધર્મ માર્ગથી તેને નિવૃત્ત કરીને-દૂર કરીને સુખી કરે છે. તેનું અનંત સ્વરૂપ અને ગુણવાન હોવાથી કોઈ પણ તેના અન્ત-પારને પામી શકતા નથી. તેથી તેની ઉપાસના છોડીને કોણ અભાગી અન્યની ઉપાસના કરશે ? (૧)

अर्ची शक्राय शाकिने शचीवते शृण्वन्तमिन्द्रं मह्यन्नभिष्टुहि।

यो धृष्णुना शवसा रोदसी उभे वृषा वृषत्वा वृषभो न्यूञ्जते ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ વૃષા-જળ વરસાવનાર અને વૃષભ:-વર્ષા માટે વાદળાંઓને પ્રકટ કરનાર સૂર્ય વૃષત્વા-સુખોની વર્ષાનું તત્ત્વ અને ઘૃષ્ણુના-દેહતા આદિ ગુણયુક્ત શવસા-આકર્ષણ બળથી ઉભે-બન્ને રોદસી-દ્યૌ અને પૃથિવીને ન્યૂજતે-નિરંતર પ્રકટ-પ્રસિદ્ધ કરે છે, તેમ ય:-જે તું રાજ્યનો યથાયોગ્ય પ્રબંધ કરે છે, તે શાકિને-પ્રશંસિત શક્તિ આદિ ગુણયુક્ત શચીવતે-પ્રશંસનીય બુદ્ધિમાન શક્રાય-સમર્થને માટે અર્ચ-સત્કાર કરીને, તે સર્વના ન્યાયને શૃણવન્તમ્-શ્રવણ કરનાર ઇન્દ્રમ્-પ્રશંસનીય ઐશ્વર્યયુક્ત સભાધ્યક્ષનો મહ્યન્-સત્કાર કરીને અભિષ્ટુહિ-ગુણોની પ્રશંસા કર. (૨)

ભાવાર્થ : જે ગુણોની શ્રેષ્ઠતાના કારણે સંપૂર્ણ પૃથિવી પર પ્રસિદ્ધ, સભા આદિના અધ્યક્ષ ધર્મ પર શાસન કરીને, તેને ધર્મમાં સુસ્થિત રાખે છે, તેનો સર્વ મનુષ્યોએ આશ્રય કરવો જોઈએ. (૨)

अर्ची दिवे बृहते शूष्यं वचः स्वक्षत्रं यस्य धृषतो धृषन्मनः।

बृहच्छ्वा असुरो बर्हणा कृतः पुरो हरिभ्यां वृषभो रथो हि षः ॥ ३ ॥

પદાર્થ : વિદ્વાન્ મનુષ્ય ! તું યસ્ય-જે ધૃષત:-અધાર્મિક દુષ્ટોને કર્મો અનુસાર ફળ પ્રાપ્ત કરાવનાર સભાધ્યક્ષના ધૃષત્-દેહકર્મ કરનાર મન:-ક્રિયાસાધક વિજ્ઞાન હિ-નિશ્ચય કરીને જે બૃહચ્છ્વા:-મહાન શ્રવણયુક્ત અસુર:-જેમ પ્રજ્ઞા-બુદ્ધિ પ્રદાતા પુર:-પૂર્વ હરિભ્યામ્-હરણ, આહરણ કરનાર તથા અગ્નિ, જળ અને ઘોડાથી યુક્ત મેઘ દિવે-સૂર્યને માટે વર્તે છે, તેમ વૃષભ:-પૂર્વોક્ત વરસાવનાર, પ્રકાશ કરનાર રથ:-યાન સમૂહને બર્હણા-વૃદ્ધિથી કૃત:-નિર્મિત કરેલ છે, તે બૃહતે-વિદ્યાદિ ગુણોથી વૃદ્ધ દિવે-શુભ ગુણોનો પ્રકાશ કરનારને માટે સ્વક્ષત્રમ્-પોતાના રાજ્યની વૃદ્ધિ કર; અને શૂષ્યમ્-બળ તથા નિપુણતાયુક્ત વચ:-વિદ્યા અને શિક્ષા પ્રાપ્ત કરનાર વચનનું અર્ચ-પૂજન અર્થાત્ તેની સહાયયુક્ત શિક્ષા કર. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને ઈશ્વર દ્વારા અનુમત, સભાધ્યક્ષ આદિથી શાસિત અને એક જ મનુષ્યનાં

રાજ્ય શાસનથી રહિત રાજ્યનું નિર્માણ કરવું જોઈએ. જેથી તે રાષ્ટ્ર કદીપણ દુઃખ, અન્યાય, આળસ, અજ્ઞાન, શત્રુ અને પરસ્પરના વિરોધથી પીડિત બને નહિ. (૩)

ત્વં દિવો બૃહતઃ સાનુ કોપયોઽવ ત્મના ધૃષ્ણતા શમ્બરં ભિન્ત્ ।

યન્માયિનો બ્રન્દિનો મન્દિના ધૃષ્ણચ્છિતાં ગર્ભસ્તિમશનિં પૃતન્યસિ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ ! જે ધૃષ્ણ-શત્રુઓનો ઘર્ષણ =પરાજય કરીને ત્વમ્-આપ-જેમ સૂર્ય બૃહતઃ-મહાન સત્ય, શુભયુક્ત દિવઃ-પ્રકાશથી સાનુ-સેવનને યોગ્ય મેઘના શિખરો પર શિતામ્-અતિ તીક્ષ્ણ અશનિમ્-છેદન-ભેદન કરનાર વજ્ર સ્વરૂપ વિદ્યુત્ અને ગર્ભસ્તિમ્-વજ્રરૂપ કિરણોનો પ્રહાર કરીને શમ્બરમ્-મેઘને ભિન્ત્-કાપીને ભૂમિ પર પાડી દે છે, તેમ શસ્ત્ર અને અસ્ત્રોને ચલાવીને પોતાના ત્મના-આત્માથી દુષ્ટ મનુષ્યોને અવકોપયઃ-ક્રોધ કરીને બ્રન્દિનઃ-નિંદિત મનુષ્યાદિ સમૂહયુક્ત માયિનઃ-કપટાદિ દોષ યુક્ત શત્રુઓને વિદીર્ષા કરીને તથા તેઓના નિવારણ માટે પૃતન્યસિ-પોતાના ન્યાયાદિ ગુણોની પ્રકાશ-પ્રકટ કરનારી વિદ્યા અને વીરપુરુષોથી યુક્ત સેનાની ઈચ્છા કરો છો, તે આપ રાજ્ય (કરવા)ને યોગ્ય બનો છો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ જગદીશ્વર પાપ કર્મ કરનારાઓને તેઓના પોતાના પાપો અનુસાર દુઃખરૂપ ફળ આપીને યથાયોગ્ય રૂપથી તેઓને પીડિત કરે છે, એ જ રીતે સભાધ્યક્ષ (= રાજા) શસ્ત્ર-અસ્ત્રોની શિક્ષાથી ધાર્મિક શૂરવીરોની સેનાનું નિર્માણ કરીને દુષ્ટ કર્મ કરનારાઓનું નિવારણ કરીને, પ્રજાનું નિરંતર પાલન કરે. (૪)

નિ યદ્ વૃણક્ષિં શ્વસનસ્ય મૂર્દ્ધનિ શુષ્ણસ્ય ચિદ્ બ્રન્દિનો રોઠ્ઠવદ્વનાં ।

પ્રાચીનેન મનસા બર્હણાવતા યદ્દ્યા ચિત્કૃણવઃ કસ્ત્વા પરિ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ વિદ્વાન ! યત્-જે આપ-જેમ સવિતા = સૂર્ય વના-કિરણોયુક્ત મેઘનું નિવારણ કરે છે, તેમ પ્રાચીનેન-સનાતન બર્હણાવતા-અનેક પ્રકારની વૃદ્ધિયુક્ત મનસા-વિજ્ઞાનથી શ્વસનસ્ય-પ્રાણ સમાન બળવાન શુષ્ણસ્ય-શોષણકર્તાના મૂર્દ્ધનિ-ઉત્તમ અંગમાં પ્રહારની ચિત્-સમાન બ્રન્દિનઃ-નિંદિત કર્મ કરનાર દુષ્ટ મનુષ્યોને રોઠ્ઠવત્-રડાવતા યત્-જે કારણે અદ્ય-આજ નિવૃણક્ષિ-નિરંતર તે દુષ્ટોને પૃથક કરો છો, એથી ચિત્-પણ ત્વા-આપને કૃણવઃ-મારવા કઃ-કોઈ પણ સમર્થ પરિ-થઈ શકતો નથી. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર પોતાના અનાદિ વિજ્ઞાનથી સર્વની ઉપર ન્યાયપૂર્વક શાસન કરે છે અને સૂર્ય મેઘનું ડનન કરે છે, તેમ સભાધ્યક્ષ (= રાજા) ધર્મપૂર્વક સર્વ પર શાસન કરે અને શત્રુઓનું ડનન કરે. (૫)

ત્વમાવિથ્ય નર્યં તુર્વશં યદું ત્વં તુર્વીતિં વ્ય્યં શતક્રતો ।

ત્વં રથમેતશં કૃત્વ્યે ધને ત્વં પુરો નવતિં દમ્ભયો નવ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે શતક્રતો-બહુજ બુદ્ધિયુક્ત વિદ્વાન સભાધ્યક્ષ ! જે કારણે ત્વમ્-આપ નર્ચમ્-મનુષ્યોમાં કુશળ તુર્વશમ્-ઉત્તમ યદુમ્-પ્રયત્નશીલ મનુષ્યોની રક્ષા, ત્વમ્-આપ તુર્વીતિમ્-દોષ અને દુષ્ટ પ્રાણીઓના નાશક, વચમ્-જ્ઞાનવાનોની રક્ષા અને ત્વમ્-આપ કૃત્વ્યે-સિદ્ધ કરવા યોગ્ય ધને-વિદ્યા અને ચક્રવર્તી રાજ્યથી સિદ્ધ થયેલ દ્રવ્યના વિષય એતશમ્-વેગાદિ ગુણયુક્ત ઘોડા આદિથી યુક્ત રથમ્-સુંદર રથની આવિથ-રક્ષા કરો છો; અને ત્વમ્-આપ દુષ્ટોના નવ-નવ સંખ્યાયુક્ત નવતિમ્-નવાણુ પુરઃ-નગરોને દમ્ભયઃ-નષ્ટ કરો છો, તેથી આ રાજ્યમાં આપનો જ આશ્રય અમારે કરવો જોઈએ. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે રાજ્યની રક્ષા કરવામાં સમર્થ ન હોય, તેને રાજા કદીપણ બનાવો નહિ. (૬)

સ ઘા રાજા સત્પતિઃ શૂશુવ્જનો રાતહવ્યઃ પ્રતિ યઃ શાસમિન્વતિ ।

ઉક્થા વા યો અભિગૃણાતિ રાધસા દાનુરસ્મા ઉપરા પિન્વતે દિવઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે રાતહવ્યઃ-હવ્ય પદાર્થોના દાતા, સત્પતિઃ-સત્પુરુષોનું પાલન કરનાર, જનઃ-ઉત્તમ ગુણ અને કર્મો સહિત વિદ્યમાન રાજા-ન્યાય, વિનયાદિ ગુણોથી પ્રકાશમાન સભાધ્યક્ષ પ્રતિશાસમ્-શાસ્ત્ર-શાસ્ત્રનાં પ્રત્યે પ્રજાને ઇન્વતિ-ન્યાયમાં વ્યાપ્ત કરનાર વા-અથવા -શૂશુવત-રાજ્ય કરવાનું જાણે છે; અને જે રાધસા-ન્યાય કરીને પ્રાપ્ત કરેલ ધનથી દાનુઃ-દાનશીલ બની ઉક્થા-કહેવા યોગ્ય વેદસ્તોત્ર અને વચનોનો અભિગૃણાતિ-સર્વ મનુષ્યોને માટે ઉપદેશ કરે છે, અસ્મૈ-એ સભાધ્યક્ષને માટે દિવઃ-ઉપરા-જેમ સૂર્યના પ્રકાશથી મેઘ ઉત્પન્ન થઈને ભૂમિને પિન્વતે-સીંચે છે, તેમ સમસ્ત સુખોનું પિન્વતે-સેવન કરે છે સઃ-તેજ રાજ્ય કરી શકે છે. (૭)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય ઉત્તમ વિદ્યા, વિનય તથા ન્યાયને ધારણ કર્યા વિના અને વીર પુરુષોની સેનાનું નિર્માણ કર્યા વિના રાજ્ય પર શાસન કરવા, શત્રુઓને જીતવા તથા સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરવામાં સમર્થ બનતો નથી. તેથી તે સર્વ સભાધ્યક્ષ (= રાજા) એ કરવું જોઈએ. (૭)

અસમં ક્ષત્રમસમા મનીષા પ્ર સોમપા અર્પસા સન્તુ નેમે ।

યે તં ઇન્દ્ર દ્વદુષો વર્ધયન્તિ મહિ ક્ષત્રં સ્થવિરં વૃષ્ણયં ચ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સભાધ્યક્ષ ! જે દ્વદુષઃ-દાન કરવા સમાન તે-આપના અસમમ્-સમતારહિત કર્મ અને સાદૃશ્ય રહિત ક્ષત્રમ્-રાજ્ય તથા અસમા-સમતા અને ઉપમા રહિત મનીષા-બુદ્ધિ હોય, તો યે-જે નેમે-સર્વ સોમપાઃ-સોમ આદિ ઔષધી રસોનું પાન કરનાર ધાર્મિક વિદ્વાન પુરુષ અપસા-કર્મથી સ્થવિરમ્-વૃદ્ધ વૃષ્ણયમ્-શત્રુઓના બળનાશક સુખ વરસાવનારને માટે કલ્યાણકારક મહિ-મહાનગુણયુક્ત ક્ષત્રમ્-રાજ્યની પ્રવર્ધયન્તિ-વૃદ્ધિ કરે છે, તે સર્વ આપની સભામાં બેસવા યોગ્ય સભાસદ ચ-અને ભૃત્ય = કર્મચારી સન્તુ-બને. (૮)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ પ્રજાનો વિરોધ અને પ્રજાએ રાજપુરુષોનો વિરોધ કદીપણ ન કરવો જોઈએ. પરંતુ પરસ્પર પ્રેમ અને ઉપકારની બુદ્ધિથી સંપૂર્ણ રાજ્યની સુખોની સાથે વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ, એમ

કયા વિના રાજ્યપાલનની વ્યવસ્થા સ્થિર રહી શકતી નથી. (૮)

તુભ્યેદેતે બહુલા અદ્રિદુગ્ધાશ્ચમૂષદશ્ચમસા ઇન્દ્રપાનાઃ ।

વ્યશ્નુહિ તર્પયા કામમેષામથા મનો વસુદેયાય કૃષ્વ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સભાધ્યક્ષ ! જેમ એ બહુલા:-બહુ જ સુખ અને કર્મોને આપનાર ઇન્દ્રપાના:-પરમૈશ્વર્યના માટે સૂર્ય પ્રાપ્ત થનાર ચમસા:-મેઘ સર્વ કામોને પૂર્ણ કરે છે, તેમ અદ્રિદુગ્ધા:-મેઘ અને પર્વતોની પ્રાપ્ત વિદ્યા ચમૂષદ:-સેનાઓમાં રહેલા શૂરવીર પુરુષો તુભ્યમ્-આપને તૃપ્ત કરે તથા આપ તેઓને વસુદેયાય-શ્રેષ્ઠ ધન દેવા માટે મન:-મન કૃષ્વ-કરો અને આપ એને તર્પય-તૃપ્ત અને ણામ્-એની કામાન્-ઈચ્છાઓ પૂર્ણ કરો અથ-તદનન્તર ઇત્-જ સર્વ કામનાઓને વ્યશ્નુહિ-પ્રાપ્ત થાઓ. (૮)

ભાવાર્થ : સભા આદિના અધ્યક્ષ સુશિક્ષિત, પાલિત અને તૈયાર કરેલ શૂરવીરોની રક્ષા કરીને તથા નિરંતર તેઓનું પાલન કરીને, એને સર્વ પ્રકારનું સુખ આપે અને એ વીર લોકો સભા આદિના અધ્યક્ષોને નિત્ય સંતુષ્ટ કરતા રહે, જેથી સર્વ કામનાઓ પૂર્ણ થાય. (૮)

અપામતિષ્ઠદ્ધરુણહ્વરં તમોઽન્તર્વૃત્રસ્ય જૃઠરૈષુ પર્વતઃ ।

અભીમિન્દ્રો નદ્યો વૃવ્રિણા હિતા વિશ્વા અનુષ્ઠાઃ પ્રવૃણેષુ જિઘ્નતે ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે સભાના ઈશ-સ્વામી ! ઇન્દ્ર:-પરમ ઐશ્વર્ય દાતા આપ-જેમ સૂર્ય વૃત્રસ્ય-મેઘ સંબંધી અપામ્-જળની અન્ત:-મધ્યસ્થ જઠરેષુ-જ્યાંથી વર્ષા થાય છે; તેમાં ઘસ્ટાહ્વરમ્-ધારણ કરનાર કુટિલ કર્મોનો હેતુ તમ:-અંધકાર અતિષ્ઠત્-સ્થિત છે તેનું નિવારણ કરીને વૃવ્રિણા-રૂપની સાથે વિદ્યમાન જે પર્વત:-પક્ષી સમાન આકાશમાં ઉડનારા મેઘ = વાદળોનો ઈમ્-જળને અભિ-સન્મુખ પાડે છે-વરસાવે છે જેથી પ્રવૃણેષુ-નીચેના સ્થાનોમાં અનુષ્ઠાઃ-અનુકૂળતાથી વહેનારી વિશ્વા-સર્વ હિતા:-પ્રતિક્ષણ ગતિમાન-ચાલનારી નદ્યઃ-નદીઓ જિઘ્નતે-સમુદ્ર સુધી ગમન કરે છે, તેમ આપ થાઓ. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય જે જળને સીંચીને અન્તરિક્ષમાં પહોંચાડે છે, તેને વાયુ ધારણ કરે છે. જ્યારે એ મળીને પર્વતાકાર બનીને સૂર્યના પ્રકાશને ઢાંકી દે છે, (ત્યારે) તેને વિદ્યુત્ કાપીને ભૂમિ પર પાડી દે છે. તેથી ઉત્પન્ન થયેલી અનેક રૂપવાળી નીચે તરફ જનારી નદીઓ ચાલતી-ગતિ કરતી ભૂમિ, પર્વત અને વૃક્ષ આદિને છિન્ન-ભિન્ન કરીને વહે છે. પુનઃ (તેનું) તે જળ સમુદ્ર અને અન્તરિક્ષમાં પહોંચીને એ જ રીતે વારંવાર વરસે છે, તેમ રાજા આદિ અધ્યક્ષ હોવા જોઈએ. (૧૦)

સ શેવૃધ્મધિ ધા દ્યુમ્નમસ્મે મહિ ક્ષત્રં જનાષાડિન્દ્ર તવ્યમ્ ।

રક્ષાં ચ નો મઘોનઃ પાહિ સૂરીન્ગાયે ચ નઃ સ્વપત્યા ડ્રુષે ધાઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : ઇન્દ્ર:-પરમ ઐશ્વર્ય સંપાદક સભાધ્યક્ષ ! જે જનાષાદ્-જનોને સહન કરનાર આપ અસ્મે-અહમ્-અમાપ્ય

અમારા માટે શેવૃધમ્-સુખ તવ્યમ્-બળયુક્ત મહિ-મહા સુખદાયક પૂજનીય ક્ષત્રમ્-રાજ્યને અધિ-ધા-સારી રીતે સર્વોપરિ ધારણ કરીને મધોન:-પ્રશંસિત ધન અને ન:-અમારી રક્ષ-રક્ષા ચ-અને સૂરીન્-બુદ્ધિમાન વિદ્વાનોની પાહિ-રક્ષા કરો; ચ-અને ન:-અમને રાયે-ધન ચ-અને સ્વપત્યૈ-ઉત્તમ અપત્ય-સંતાનયુક્ત ઇષે-ઈષ્ટરૂપ રાજ્ય લક્ષ્મીને માટે દ્યુમ્નમ્-કીર્તિકારક ધનને ધા:-ધારણ કરો છો, સ:-તે આપ અમારાથી સત્કાર યોગ્ય કેમ ન બનો ? (૧૧)

ભાવાર્થ : સભાધ્યક્ષે (= રાજાએ) સમસ્ત પ્રજાનું પાલન કરીને, સર્વને સુશિક્ષિત વિદ્વાન બનાવીને ચક્રવર્તી રાજ્ય (ની ઉન્નતિ) અને ધનની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૧)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સૂર્ય, વિદ્યુત્, સભાધ્યક્ષ, શૂરવીર અને રાજ્યનું પાલન આદિનું વિધાન કરેલ છે તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૫૪)

સૂક્ત-૫૫

દિવશ્ચિદસ્ય વરિમા વિ પપ્રથ્વ ઇન્દ્રં ન મહ્વા પૃથિવી ચન પ્રતિ ।

ભીમસ્તુવિષ્માઞ્ચર્ષણિભ્ય આતપઃ શિશીતે વજ્રં તેજસે ન વંસગઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અસ્ય-સૂર્યના દિવઃ હ્વા- પ્રકાશ દ્વારા વરિમા-ઉત્તમના ભાવની મહ્વા-વૃદ્ધિ-મહાનતાથી વિપ્રથ્વે-વિશેષ કરીને પ્રકટ કરે છે. પૃથિવી-જેની બરાબર ભૂમિ ચન-પણ સમાન ન-નહિ અને ન આતપઃ-સર્વ પ્રકારે પ્રતાપયુક્ત, વંસગઃ-બળવાન વિભાગકર્તાની સમાન, પૃથિવી-ભૂમિના પ્રતિ-મધ્યમાં તેજસે-પ્રકાશ માટે, વજ્રમ્-કિરણોને શિશીતે-અતિ શીતલ જળમાં પ્રક્ષેપ કરે છે, તેમ જે દુષ્ટોને માટે ભયંકર અને ધાર્મિકોને માટે સુખદાતા બનીને, પ્રજાઓનું પાલન કરે, તે સર્વના સત્કારને યોગ્ય છે; અન્ય નહિ. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય સર્વ લોકોથી ઉત્તમગુણયુક્ત અને મહાન છે. જેમ સાંઠ-ખૂંટ ગાયોના ધણમાં ઉત્તમ અને અતિ બળવાન હોય છે, તેમ ઉત્તમ ગુણયુક્ત મહાન મનુષ્ય સભા આદિના ધર્માત્મા બનીને દુષ્ટોને ભયપ્રદાતા અને ધાર્મિકોને સુખદાતા બને. (૧)

સો અર્ણવો ન નદ્યઃ સમુદ્રિયઃ પ્રતિ ગૃભ્ણાતિ વિશ્રિતા વરીમભિઃ ।

ઇન્દ્રઃ સોમસ્ય પીતયે વૃષાયતે સનાત્સ યુધ્મ ઓજસા પનસ્યતે ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જે ઇન્દ્ર-સભાધ્યક્ષ સૂર્ય સમાન સોમસ્ય-વૈદ્યક વિદ્યાથી સંપાદિત અને સ્વાભાવિક ઉત્પન્ન રસના પીતયે-પાન માટે વૃષાયતે-બળદની સમાન આચરણ કરે છે, સ:- તે યુધ્મ:-યુદ્ધ કરનાર મનુષ્ય ન જેમ વિશ્રિતા:-અનેક પ્રકારના દોષોનું સેવન કરવાવાળી નદ્યઃ-નદીઓ અર્ણવઃ-સમુદ્રને પ્રાપ્ત થઈને સ્થિર થાય છે; જેમ સમુદ્રિયઃ-સમુદ્રમાં ચાલવા યોગ્ય નૌકાદિ યાન સમૂહ પાર પહોંચાડે છે; જેમ સનાત્-નિરંતર ઓજસા-બળ દ્વારા વરીમભિઃ-ધર્મ અને શિલ્પ ક્રિયાથી પનસ્યતે-વ્યવહાર કરનારની

સમાન આચરણ અને પૃથિવી આદિના રાજ્યને પ્રતિગૃહ્ણાતિ-ગ્રહણ કરી શકે છે, તે રાજ્ય કરવા અને સત્કાર કરવા યોગ્ય છે. તેનો સર્વ મનુષ્યો સ્વીકાર કરે. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ સમુદ્ર અનેક પ્રકારના રત્નોને તથા અનેક નદીઓને પોતાના મહિમાથી પોતાની અંદર સંરક્ષિત રાખે છે, તેમ સભાધ્યક્ષ (= રાજા) વિવિધ પદાર્થોને તથા અનેક પ્રકારની સેનાઓને અપનાવીને તથા દુષ્ટોને પરાજિત કરીને અને શ્રેષ્ઠોને સંરક્ષિત કરીને પોતાના મહિમાનો વિસ્તાર કરે છે. (૨)

ત્વં તર્મિન્દ્ર પર્વતં ન ભોજસે મહો નૃમ્ણાસ્ય ધર્મણામિરજ્યસિ ।

પ્ર વીર્યેણ દેવતાતિ ચેકિતે વિશ્વસ્મા ડગ્રઃ કર્મણે પુરોહિતઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સભાધ્યક્ષ ! જે દેવતા-વિદ્વાન ડગ્રઃ-તીવ્રકારી પુરોહિતઃ-પુરોહિતની સમાન ઉપકાર કરનાર છે. ત્વમ્-આપ-જેમ વિદ્યુત્ પર્વતમ્-મેઘનો આશ્રિત વાદળાંઓની ન-સમાન વીર્યેણ-પરાક્રમથી ભોજસે-પાલન અને ભોગના માટે તમ્-તે શત્રુનું હનન કરીને મહઃ-મહાન નૃમ્ણાસ્ય-ધન અને ધર્મણામ્-ધર્મોના યોગથી અતીરજ્યસિ-અતિશય ઐશ્વર્ય કરો છો. જે આપ વિશ્વસ્મૈ-સર્વ કર્મણે-કર્મોને માટે પ્રચેકિતે-જાણો છો, તે આપ અમારા રાજા બનો. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પ્રવૃત્તિનો આશ્રય લઈને ધન ઉત્પન્ન કરીને ભોગ પ્રાપ્ત કરે છે, સભાધ્યક્ષ-સહિત તે લોકો વિદ્યા, બુદ્ધિ, વિનય તથા ધર્મને તથા વીરપુરુષોની સેનાને પ્રાપ્ત કરીને દુષ્ટો પર ઉગ્ર તથા ધાર્મિકો પર ક્ષમાશીલ બનીને સર્વના 'હિતકારી' બને છે. (૩)

સ ઇદ્વને નમસ્યુર્ભિર્વચસ્યતે ચારુ જનેષુ પ્રબ્રુવાણ ઇન્દ્રિયમ્ ।

વૃષા છન્દુર્ભવતિ હર્યતો વૃષા ક્ષેમેણ ધેનાં મઘવા યદિન્વતિ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : યત્-જે અધ્યાપક અને ઉપદેશક વને-એકાન્તમાં એકાગ્ર ચિત્તથી જનેષુ-પ્રસિદ્ધ મનુષ્યોમાં ચારુ-સુંદર ઇન્દ્રિયમ્-મનને બ્રુવાણઃ-સારી રીતે કહે છે-ઉપદેશે છે; હર્યતઃ-અને સર્વના ઉત્તમ બોધની કામના કરીને પ્રભવતિ-સમર્થ બને છે, વૃષા-દેઠ મઘવા-પ્રશંસિત ધન અને વિદ્યાયુક્ત છન્દુઃ-સ્વચ્છન્દ વૃષા-સુખ વરસાવનાર ક્ષેમેણ-રક્ષણ સહિત ધેનામ્-વિદ્યા, શિક્ષાયુક્ત વાણીને ઇન્વતિ-વ્યાપ્ત કરે છે, સ ઇત્-તે જ નમસ્યુર્ભિઃ-નમ્ર વિદ્વાનો દ્વારા વચસ્યતે-પ્રશંસાને પ્રાપ્ત બને છે. (૪)

ભાવાર્થ : સર્વશ્રેષ્ઠ વિદ્વાન સર્વ મનુષ્યોને સમસ્ત વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરાવીને તેને વિદ્યાવાન, બહુશ્રુત, સ્વતંત્ર અને સુરક્ષિત કરે, જેથી તે સંશયરહિત બનીને સદા સુખી રહે. (૪)

સ ઇન્મહાનિ સમિથાનિ મ્જ્મનાં કૃણોતિ યુધ્મ ઓજસા જનેભ્યઃ ।

અધાં વ્તન શ્રદ્ધતિ ત્વિષીમત્ ઇન્દ્રાય વજ્રં નિઘનિઘ્નતે વૃધમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : જે સઃ-તે યુધ્મઃ-યુદ્ધ કરનાર ઉપદેશક (અવિદ્યાકુટુમ્બસ્ય પ્રહર્તા-અવિદ્યારૂપી કુટુંબનો યુદ્ધમાં નાશ કરનાર ઉપદેશક) મજ્મના-બળને ઓજસા-પરાક્રમથી યુક્ત થઈને જનેભ્યઃ-મનુષ્યાદિને સુખને માટે ઉપદેશથી મહાનિ-મહા પૂજનીય સમિથાનિ સંગ્રામોને જીતનારની સમાન અવિદ્યા પર વિજયને (પ્રાપ્ત) કૃણોતિ-કરે છે; વજ્રમ્-વજ્ર પ્રહારની સમાન શત્રુઓને વધમ્-મારવા માટે નિઘનિઘતે-મારનારની સમાન આચરણ કરે છે; તો અધ-ત્યાર પછી ઇત્-જ અસ્મૈ-એ ત્વિષીમતે-પ્રશંસિત પ્રકાશયુક્ત ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ કરાવનારને માટે સર્વ મનુષ્યો ચન-પણ શ્રદ્ધતિ-પ્રેમથી સત્યને ધારણ કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય મેઘને ઉત્પન્ન કરીને, તેને કાપીને, વર્ષા કરીને પોતાના પ્રકાશથી સર્વને આનંદિત કરે છે, તેમ અધ્યાપક અને ઉપદેશક અંધ પરંપરાનું નિવારણ, વિદ્યા ન્યાયાદિને પ્રકાશિત કરીને, સર્વ પ્રજાઓને સુખી કરે. (૫)

સ હિ શ્રવસ્યુઃ સદનાનિ કૃત્રિમા ક્ષમયા વૃધાન ઓર્જસા વિનાશયન્ ।

જ્યોતીષિ કૃણવન્નવૃકાણિ યજ્યવેઽવ સુક્રતુઃ સર્તવા અપઃ સૃજત્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જે સુક્રતુઃ-શ્રેષ્ઠબુદ્ધિ અને કર્મયુક્ત ઓજસા-પરાક્રમથી ક્ષમયા-પૃથિવીની સાથે વૃધાનઃ-વધીને, શ્રવસ્યુઃ-પોતાના આત્માને માટે અન્નની ઈચ્છાથી સમસ્ત શાસ્ત્રોનું શ્રવણ કરીને, યજ્યવે-રાજ્યના અનુષ્ઠાન માટે, સર્તવૈ-ગમન-આગમનના કૃત્રિમાણિ-કરેલા અવૃકાણિ-ચોરાદિ રહિત સદનાનિ-માર્ગ અને સુંદર ગૃહોને સુશોભિત કૃણવન્-કરીને, અપઃ-જળની વર્ષા કરાવનાર જ્યોતીષિ-ચંદ્રમા આદિ તથા નક્ષત્રોને પ્રકાશિત કરનાર સૂર્યની સમાન, વિનાશયન્-અવિદ્યાનો નાશ કરીને રાજ્યનું અવસૃજત્-નિર્માણ કરે, તેને જ સર્વ મનુષ્યોએ માતા, પિતા, મિત્ર અને રક્ષક માનવા યોગ્ય છે. (૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય સૂર્યની સમાન વિદ્યા, ધર્મ અને રાજનીતિનો પ્રકાશક બનીને સર્વ મનુષ્યોને ઉત્તમ જ્ઞાનવાન બનાવે છે, તે સમસ્ત મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓનો કલ્યાણકારી છે, એમ સર્વેએ જાણવું જોઈએ. (૬)

દાનાય મનઃ સોમપાવન્નસ્તુ તેઽર્વાઞ્ચા હરી વન્દનશ્રુદા કૃધિ ।

યમિષ્ઠાસઃ સારથયો ય ઇન્દ્ર તે ન ત્વા કેતા આ દંભુવન્તિ ભૂર્ણયઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે વન્દનશ્રુત્-સ્તુતિ અને ભાષણ-શ્રવણ કરનાર અને કરાવનાર તથા સોમપાવન્-શ્રેષ્ઠ રસોનું પાન કરનાર ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર્યયુક્ત સભાધ્યક્ષ ! તે-આપનું મનઃ-મન દાનાય-પુત્રોને વિદ્યાદિ દાનને માટે અસ્તુ-સારી રીતે થાય. જેમ વાયુ અને સૂર્યના અર્વાઞ્ચા-વેગાદિ ગુણોને પ્રાપ્ત કરનારી હરી-ધારણ-આકર્ષણ ગુણ અને જેમ ભૂર્ણયઃ-પોષક યમિષ્ઠાસઃ-અત્યંત ગમન કરતા સારથયઃ-રથોને

ચલાવનાર સારથી ઘોડા આદિને શિક્ષિત કરીને નિયમમાં રાખે છે, તેમ તમે સર્વ મનુષ્યાદિને ધર્મમાં ચલાવો અને સર્વમાં **કેતા:-**શાસ્ત્રીય પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિને **આકૃધિ-**સારી રીતે પ્રાપ્ત કરાવો, આ રીતે કરવાથી **યે-જે** તમારા શત્રુઓ છે, **તે-તમારા** વશમાં આવી જાય, જેથી **ત્વા-તમને** ન **દભ્નુવન્તિ-**દુઃખી કરી શકે નહિ. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ ઉત્તમ સારથી ઘોડાઓને સારી રીતે શિક્ષિત કરીને તેને નિયંત્રિત કરે છે અને જેમ વાયુ તિરછો-તિર્યક્ ચાલનાર હોય છે, તેમ અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્યા અને ઉત્તમ ઉપદેશથી સર્વને આચરણમાં નિયુક્ત કરે, તે બંને વિના તેઓ મનુષ્યોને ધાર્મિક બનાવી શકતા નથી. (૭)

અપ્રક્ષિતં વસું વિભર્ષિં હસ્તયોરષાઢં સહસ્તન્વિં શ્રુતો દધે ।

આવૃતાસોઽવતાસો ન કર્તૃભિસ્તનૂષુ તે ક્રતવ ઇન્દ્ર ભૂરયઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર-સભાધ્યક્ષ !** શ્રુત:-પ્રશંસાયુક્ત તું જે **અપ્રક્ષિતમ્-ક્ષયરહિત વસુ-ધન** અને **અષાઢમ્-શત્રુઓના** અસહ્ય **સહ:-બળને** **તન્વિ-શરીરમાં** **હસ્તયો:-હસ્તઆમલક સમાન** **વિભર્ષિ-ધારણ** કરે છે, જે **આવૃતાસ:-સુખોથી** યુક્ત **અવતાસ:-સમ્યક્** રક્ષિત મનુષ્યોની **ન-સમાન** **તે-આપની** **ભૂરય:-બહુજ** શાસ્ત્રવિદ્યાયુક્ત **ક્રતવ:-બુદ્ધિ** અને કર્મોને **કર્તૃભિ:-પુરુષાર્થી** મનુષ્ય **તનૂષુ-શરીરોમાં** ધારણ કરે છે, તેને હું પણ **દધે-ધારણ** કરું છું. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ સભ્ય અને વિદ્વાનજનો દ્વારા કદી ક્ષીણ ન પામનાર વિજ્ઞાન, બળ, ધન, શ્રવણ અને અનેક શુભ કર્મો ધારણ કરવામાં આવે છે, તેમ સર્વ પ્રજાજનોએ પણ ધારણ કરવા જોઈએ. (૮)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સૂર્ય, પ્રજા અને સભાધ્યક્ષના કાર્યોનું વર્ણન કરેલ છે, તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૫૫)

સૂક્ત-૫૬

एष प्र पूर्वीरिव तस्य चम्रिषोऽत्यो न योषामुदयंस्त भूर्विणिः ।

दक्षं महे पाययते हिरण्ययं रथमावृत्या हरियोगमृभ्वंसम् ॥ १ ॥

પદાર્થ : જે **एष:-એ** **भूर्विणि:-ધારણ** અને પોષણ કરનાર સભાધ્યક્ષ અને સૂર્ય **न-જેમ** **अत्य:-** ઘોડો ઘોડીથી સંયોગ કરે છે, તેમ **योषाम्-વિદ્વાન્** સ્ત્રીથી યુક્ત થઈને, **तस्य-તે** પરમેશ્વરની પ્રાપ્તિ માટે, **चम्रिष:-ભોગોને** કરનારી, **पूर्वी:-** સનાતન પ્રજાને **प्रावोदपंस्त-સારી** રીતે અધર્મ અને નિકૃષ્ટતાથી નિવૃત્ત કરીને, તે પેલી પ્રજાને માટે **महे-પૂજનીય** માર્ગમાં કર્ણ આદિ ઈન્દ્રિયોને **आवृत्य-યુક્ત** કરીને, **हिरण्यम्-અત્યંત** તેજ અને સુવર્ણ **ऋभ्वंसम्-મનુષ્યાદિને** પ્રક્ષેપણ કરનાર, **हरियोगम्-અગ્નિયુક્ત** અને અશ્વાદિ યુક્ત થયેલ **दक्षम्-બળ**, ચતુર અને શિલ્પી મનુષ્યયુક્ત **रथम्-યાન** સમૂહને **आवृत्य-સામગ્રીથી**

આચ્છાદિત્ કરીને, સુખરૂપી રસોનું પાયયતે-પાન કરાવે છે. (૧)

ભાવાર્થ : ઉપદેશક, પોતાની સમાન વિદુષી સ્ત્રી સાથે વિવાહ કરીને, જેમ તે સ્વયં પુરુષોને ઉપદેશ આપે અથવા બાળકોને ભણાવે, તેમ તેની પત્ની સ્ત્રીઓને ઉપદેશ આપે અને કન્યાઓને ભણાવે. એમ કરવાથી ક્યાંયથી પણ તેને અજ્ઞાન અને ભયથી પીડિત કરી શકશે નહિ. (૧)

તં ગૃત્યોં નેમન્નિષ્ઃ પરીણસઃ સમુદ્રં ન સંચરણે સનિષ્ઠવઃ ।

પતિં દક્ષસ્ય વિદથસ્ય નૂ સહોં ગિરિં ન વેના અધિં રોહુ તેજસા ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે કન્યા ! તું સંચરણે-સારી રીતે સંગમમાં ન-જેમ સનિષ્ઠવઃ-સમ્યક્ વિવિધ દેશોને સેવન કરનારી નદિઓ સમુદ્રમ્-સમુદ્રને પ્રાપ્ત થાય છે; ન-જેમ વાદળો ગિરિમ્-મેઘને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ જે પરીણસઃ-બહુ જ નેમન્નિષ્ઃ-પ્રાપ્ત થવા-કરવા યોગ્ય ઈચ્છિત સુખદાયક ગૃત્યઃ-પુરુષાર્થીની અને બુદ્ધિમતી બ્રહ્મચારિણી તથા વેનાઃ-બુદ્ધિમાન બ્રહ્મચારી સમાવર્તન (સંસ્કાર) પછી પરસ્પર પ્રેમપૂર્વક વિવાહ કરે.

હે દક્ષસ્ય-કન્યા ! તું સમસ્ત વિદ્યાઓમાં અતિ ચતુર વિદથસ્ય-પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત વિદ્વાનથી વિદ્યા પ્રાપ્ત કરેલ પતિમ્-સ્વામી-પતિને અધિરોહ-પ્રાપ્ત કર, તેજસા-અત્યંત તેજથી તમ્-તેને પ્રાપ્ત કરીને, સહઃ-બળને નુ-શીઘ્ર પ્રાપ્ત કર. (૨)

ભાવાર્થ : સર્વ બાળક અને કન્યાઓ વિધિપૂર્વક સેવન કરેલ બ્રહ્મચર્યથી સમસ્ત વિદ્યાઓ ભણીને, પૂર્ણ યુવાવસ્થામાં પોતાના સમાન ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવોની પરીક્ષા કરીને, પરસ્પર અત્યંત પ્રેમ ઉત્પન્ન થયા પછી વિવાહ કરીને (તેમાંથી યુવતિઓ) જે પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત હોય, તો તે કન્યાઓને ભણાવે અને ક્ષત્રિય, વૈશ્ય તથા શૂદ્ર વર્ણને યોગ્ય હોય, તો તે પોતાના વર્ણાનુસાર કર્મ કરે. (૨)

સ તુર્વિર્ણિર્મહાં અરેણુ પૌસ્યે ગિરેર્ભૃષ્ટિર્ન ભ્રાજતે તુજા શવઃ ।

યેન શુષ્ણં માયિનમાયસો મદે દુધ્ર આભૂષુ રામયન્નિ દામનિ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે શ્રેષ્ઠવરની ઈચ્છુક કન્યા ! જેમ તું જે તુર્વિર્ણિઃ-શીઘ્ર સુખકારી, દુધ્રઃ-બળથી પૂર્ણ, આયસઃ-વિજ્ઞાનથી યુક્ત, મહાન્-સર્વોત્કૃષ્ટ, પૌસ્યે-પુરુષાર્થયુક્ત વ્યવહારમાં કુશળ, તુજા-દુઃખોના નાશક, આભૂષુ-સર્વ રીતે સર્વને સુભૂષિત-અલંકૃતકારક, અરેણુ-ક્ષયરહિત કર્મને મદે-હર્ષિત થવામાં રામયત્-કીડાના હેતુ શવઃ-ઉત્તમ બળને પ્રાપ્ત થઈને, ન-જેમ ગિરેઃ-મેઘના ભૃષ્ટિઃ-ઉત્તમ શિખરે ભ્રાજતે-પ્રકાશિત થાય છે, તેમ તમ્-તે શુષ્ણમ્-બળયુક્ત, માયિનમ્-અત્યુત્તમ બુદ્ધિમાન વરને યેન-જે બળથી દામનિ-સુખદાયક ગૃહાશ્રમમાં સ્વીકાર કરી રહી છો, તેમ સઃ-તે વર પણ તને તેવાજ બળથી પ્રેમબદ્ધ કરે. (૩)

ભાવાર્થ : તે વિવાહ સર્વોત્તમ છે, જ્યાં સમાન રૂપ અને સ્વભાવયુક્ત કન્યા અને વર હોય

પરંતુ કન્યાથી વરનું બળ તથા આયુ દ્વિગુણ-બેગણી અથવા દોઢગણી હોવી જોઈએ. (૩)

દેવી યદિ તવિષી ત્વાવૃધોતય ઇન્દ્રં સિષવત્યુષસં ન સૂર્યઃ ।

યો ધૃષ્ણુના શવસા બાધતે તમ ઇર્યતિ રેણું બૃહદર્હરિષ્વણિઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! ય:-જે અર્હરિષ્વણિ:-અહિંસક, ધાર્મિક અને પાપીઓનો વિવેકકર્તા પુરુષ ધુષ્ણુના-દેહ શવસા-બળથી, ન-જેમ સૂર્ય-સૂર્ય ઉષમ્-પ્રાતઃ કાળને પ્રાપ્ત થઈને બૃહત્-મહાન-ધોર તમ:-અંધકારને દૂર કરી દે છે, તેમ તારા દુઃખને દૂર કરી દે છે.

હે પુરુષ ! યદિ-જે ત્વાવૃધા-તારી સુખવર્ધક, તવિષી-પૂર્ણ બલવતી દેવી-વિદુષી અત્યંત પ્રિયા સ્ત્રી રેણુમ્-રમણીય સ્વરૂપ તને ઇર્યતિ-પ્રાપ્ત થાય છે; અને ઋતયે-રક્ષાદિને માટે ઇન્દ્રમ્-પરમ સુખપ્રદ તને સિષવત્તિ-શ્રેષ્ઠ સુખથી યુક્ત કરે છે, તે તું અને તે સ્ત્રી તમે બન્ને પરસ્પર આનંદમાં સદા વર્તન કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જ્યારે સ્ત્રીને પ્રિય પુરુષ અને પુરુષને પ્રિય પત્ની હોય-મળે, ત્યારે મંગલ વધે. (અર્થાત્ ગૃહાશ્રમમાં નિરંતર આનંદ પ્રાપ્ત થાય.) (૪)

વિ યત્તિરો ધ્રુણમચ્યુતં રજોઽતિષ્ઠિપો દિવ આતાસુ બર્હણાં ।

સ્વર્મીઢે યન્મદ ઇન્દ્ર હર્ષ્યાઽહન્વૃત્રં નિરપામૌબ્જો અર્ણવમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત ઇન્દ્ર-સભાના ઈશ-સ્વામી જેમ ઔબ્જ:-મૃદુ કરનારથી સિદ્ધ થયેલ યત્-જે સૂર્ય દિવ:-પ્રકાશ અને આકર્ષણથી આતાસુ-દિશાઓમાં તિર:-તિર્યક-ત્રાંસા કરેલા બર્હણા-વૃદ્ધિયુક્ત અચ્યુતમ્-કારણરૂપ અને પ્રવાહરૂપથી અવિનાશી ઘસ્રામ્-આધારકર્તા રજ:-પૃથિવી આદિ સમસ્ત લોકોને વ્યતિષ્ઠિય:-વિશેષ કરીને સ્થાપન કરીને તથા મદે-આનંદયુક્ત સ્વર્મીઢે-અન્તરિક્ષમાં રહેલ હર્ષ્યા-હર્ષ ઉત્પન્ન કરાવવા યોગ્ય કર્મોને કરીને, યત્-જે વૃત્રમ્-મેઘને અહન્-નષ્ટ કરીને, આતાષુ-દિશાઓમાં આપામ્-જલોના સાનિધ્યથી અર્ણવમ્-સમુદ્રને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ (સભાપતિ) પોતાના રાજ્ય અને ન્યાયને ધારણ કરીને શત્રુઓને મારીને પોતાની સ્ત્રી-પત્નીને આનંદિત કરે. (૫)

ભાવાર્થ : જે સૂર્ય પોતાના પ્રકાશ અને આકર્ષણ આદિ ગુણોથી સર્વ લોકોને પોત-પોતાની કક્ષમાં ભ્રમણ કરાવે છે, સર્વ દિશાઓમાં પોતાના તેજથી રસને ખેંચીને ફરી વર્ષા કરાવીને પ્રજા પાલનનો નિમિત્ત બને છે, તેમ જ સ્ત્રી-પુરુષોએ વર્તવું જોઈએ-બનવું જોઈએ. (૫)

ત્વં દિવો ધ્રુણં ધિષ્ ઓર્જસો પૃથિવ્યા ઇન્દ્ર સદનેષુ માહિનઃ ।

ત્વં સુતસ્ય મદે અરિણા અપો વિ વૃત્રસ્ય સમયા પાષ્યારુજઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પર ઐશ્વર્ય સંપાદક સભાધ્યક્ષ ! માહિન:-પૂજનીય, મહાનગુણયુક્ત ત્વમ્-આપ

ઓજસા-બળથી જેમ સૂર્ય દિવઃ-દિવ્ય ગુણયુક્ત પ્રકાશથી પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવી અને પદાર્થોનો ધસગમ્-આધાર છે, તેમ સદનેષુ-ગૃહાદિમાં ધિષે-ધારણ કરો છો.

જેમ વિદ્યુત્ વૃત્રસ્ય-મેઘને મારીને અપઃ-જળને વરસાવે છે, તેમ ત્વમ્-આપ સુતસ્ય-ઉત્પન્ન થયેલ વસ્તુઓના મદે-આનંદકારક વ્યવહારમાં સમયા-સમયમાં અપઃ-જળની વર્ષાથી સર્વને સુખ પ્રદાન કરો છો. તેમ પાષ્યા-સારી રીતે ચૂર્ણ કરવા રૂપ સિદ્ધ કરેલ રસના મદે-આનંદ રૂપી વ્યવહારમાં પાષ્યા-ચૂર્ણકારક ક્રિયાથી શત્રુઓને વ્યક્તઃ-મરણ પ્રાયઃ કરીને અરિણા-સુખને પ્રાપ્ત કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો સૂર્યની સમાન ન્યાયને પ્રકાશિત કરીને તથા શત્રુઓનું નિવારણ કરીને પ્રજાઓનું પાલન કરે છે, તેમ અમારે પણ કરવું જોઈએ. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સૂર્ય અને વિદ્વાનના ગુણોના વર્ણનથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૫૬)

સૂક્ત-૫૭

પ્ર મંહિષ્ટાય બૃહતે બૃહદ્રયે સત્યશુષ્માય ત્વસે મતિં ભરે ।

અપામિવ પ્રવણે ચસ્યં દુર્ધરં રાધૌ વિશ્વાયુ શર્વસે અપાવૃતમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જેમ હું ચસ્ય-જે સભા આદિના અધ્યક્ષના શર્વસે-બળ માટે પ્રવણે-નીચેના સ્થાનમાં અપામિવ-જળની સમાન અપાવૃતમ્-દાન અને ભોગને માટે પ્રસિદ્ધ વિશ્વાયુ-પૂર્ણ આયુયુક્ત દુર્ધર્મ-દુષ્ટજનોને દુઃખથી ધારણ કરવા યોગ્ય રાધઃ-વિદ્યા અને રાજ્યથી સિદ્ધ-પ્રાપ્ત કરેલ ધન છે, તે સત્યશુષ્માય-સત્ય બળોના નિમિત્ત ત્વસે-બળવાન બૃહદ્રયે-સર્વોત્કૃષ્ટ ધનયુક્ત બૃહતે-ગુણોથી મહાન મંહિષ્ટાય-પુષ્કળ દાન કરનાર સભાધ્યક્ષને માટે મતિમ્-વિજ્ઞાનને પ્રભરે-ઉત્તમ રીતે ધારણ કરું છું, તેમ તમે પણ ધારણ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ જળ ઊંચા સ્થાનથી આવીને નીચેના સ્થાનમાં સ્થિત જળાશયમાં પહોંચીને સ્થિર ને સ્વચ્છ બની જાય છે, તેમ નમ્ર, ધાર્મિક, બળવાન અને પુરુષાર્થી મનુષ્ય માટે અક્ષયધન સ્થિર બની જાય છે.

જે રાજ્ય લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરીને તેને સર્વના હિતના માટે, વિદ્યાની વૃદ્ધિને માટે અને શરીર તથા આત્માના બલની ઉન્નતિ માટે આપે છે, તે વીર અને દાની પુરુષનો સભાપતિ, શાલાપતિ અને સેનાપતિના રૂપમાં અમે અભિષેક કરીએ. (૧)

અથ તે વિશ્વમનુ હાસદિષ્ટય આપૌ નિમ્નેવ સર્વના હ્વિષ્મતઃ ।

યત્પર્વૈતે ન સ્મશીત હર્યત ઇન્દ્રસ્ય વજ્રઃ શ્વનર્થિતા હિરણ્યયઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : યત્-જે હવિષ્મતઃ-ઉત્તમ દાન ગ્રહણકર્તા ઇન્દ્રસ્ય-ઐશ્વર્યવાન સભાધ્યક્ષનું હિરણ્યયઃ-જ્યોતિઃ સ્વરૂપ વજ્રઃ-શસ્ત્રરૂપ કિરણો પર્વતે-મેઘમાં ન-જેમ સ્થિતા-હિંસક હોય છે, તેમ હર્યતઃ-ઉત્તમ વ્યવહાર સમશીત-પ્રસિદ્ધ થાય. અધ-તદનન્તર તે-આપના સમઆશ્રયથી વિશ્વમ્-સમસ્ત સવના-ઐશ્વર્ય આપઃ-જળ નિમ્નેવ-જેમ નીચેના સ્થાનમાં જાય છે, તેમ ઇષ્ટયે-ઈચ્છિત સિદ્ધિ-પ્રાપ્તિને માટે હ-નિશ્ચયપૂર્વક અન્વસત્-હોય તે સભાધ્યક્ષ અને વિદ્યુત્નો આપણે સર્વ મનુષ્યોએ સમાશ્રય અને ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ પર્વત અને મેઘનો આશ્રય લઈને સિંહ આદિ અથવા જળ સુરક્ષિત તથા સ્થિર રહે છે, તેમ જ સભા આદિના અધ્યક્ષના આશ્રયથી પ્રજાઓ સ્થિર આનંદયુક્ત રહે છે. (૨)

અસ્મૈ ભીમાય નમસા સમધ્વર ઉષો ન શુભ્ર આ ભરા પનીયસે ।

યસ્ય ધામ શ્રવસે નામેન્દ્રિયં જ્યોતિરકારિ હરિતો નાર્યસે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! તું યસ્ય-જે સભાધ્યક્ષના ધામ-વિદ્યાદિ સુખોને ધારણ કરનાર શ્રવસે-શ્રવણ અને અન્નને માટે છે, જેને અયસે-વિજ્ઞાનને માટે હરિતઃ-દિશાઓની ન-સમાન નામ-પ્રસિદ્ધ ઇન્દ્રિયમ્-પ્રશંસિત બુદ્ધિમાન આદિ અને યક્ષુ આદિ અકારિ-કરેલ છે, અસ્મૈ-એ ભીમાય-દુષ્ટ અને પાપીઓને ભય આપનાર પનીયસે-યથાયોગ્ય વ્યવહાર સ્તુતિ કરવા યોગ્ય સભાધ્યક્ષ માટે શુભ્રે-શોભાયમાન, પવિત્રકારક અહિંસનીય-ધર્મયુક્ત યજ્ઞ ઉષઃ-પ્રાતઃકાળની ન-સમાન નમસા-નમસ્તે વચનની સાથે સમાભર-સારી રીતે ધારણ અને પોષણ કર. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જેમ પ્રભાતવેળા સંપૂર્ણ અંધકારનો નાશ કરીને તથા સર્વને પ્રકાશિત કરીને પ્રસન્ન કરે છે, તેમ જ અન્યાયથી વિનાશકર્તા તથા ગુણોની અધિકતાના કારણે પ્રશંસાયુક્ત મનુષ્યનો સન્કાર કરીને તેને યુદ્ધ આદિ કાર્ય માટે સ્થાપિત કરવો જોઈએ.

જેમ દિશાઓ વ્યવહારનું જ્ઞાન કરાવે છે, તેમ જ (જે) વિદ્યા, સુશિક્ષા, સેના, વિનય અને ન્યાયાચરણ આદિ દ્વારા સર્વને અલંકૃત કરીને તથા ધન-અન્ન આદિથી સંપન્ન કરીને નિરંતર સુખી કરે, તેને જ સભા આદિના અધિકાર પર પ્રધાન બનાવવો જોઈએ. (૩)

હુમે તં ઇન્દ્ર તે વયં પુરુષ્ટુત ચે ત્વારભ્ય ચરામસિ પ્રભૂવસો ।

નહિ ત્વદન્યો ગિર્વણો ગિરઃ સઘત્ક્ષોણીરિવ પ્રતિ નો હર્ય તદ્વચઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : પ્રભૂવસો-સમર્થ અને સુખોમાં વાસપ્રદ, ગિર્વણઃ-વેદવિદ્યાથી સંસ્કૃત વાણીઓથી સેવનીય, પુરુષ્ટુત-અનેકોથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય, હર્ય-કમનીય અને સર્વ સુખ પ્રદાતા ઇન્દ્ર-જગદીશ્વર ! તે-આપની કૃપાની સહાયથી અમે સઘત્-ક્ષોણીરિવ-જેમ શૂરવીર શત્રુઓને મારીને પૃથિવીનું રાજ્ય પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ નઃ-અમારા માટે ગિરઃ-વેદવિદ્યાથી અધિષ્ઠિત વાણીઓને પ્રાપ્ત કરાવવાની ઈચ્છા કરનાર ત્વ-આપથી ભન્યઃ-ભિન્ન નહિ-કોઈ પણ નથી. તત્-તે વચઃ-વચનોને સાંભળીને અથવા પ્રાપ્ત કરી,

જે **इमे**-એ સન્મુખ મનુષ્ય તથા **यं-जे ते**-દૂર રહેનાર મનુષ્ય અને **वयम्**-અમે પરસ્પર મળીને તે-આપના શરણમાં આવીને, **त्वारभ्य**-આપના સામર્થ્યનો આશ્રય કરીને, નિર્ભય બનીને **प्रतिचरामसि**-પરસ્પર સદા સુખપૂર્વક વિચરણ કરીએ છીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પરમેશ્વરથી ભિન્ન વસ્તુને ઉપાસ્ય રૂપમાં સ્વીકાર કરતા નથી તથા તે ઈશ્વર દ્વારા ઉપદિષ્ટ વેદોક્ત મત સિવાયના અન્ય મતને માનતા નથી, તેઓજ આ સંસારમાં પૂજનીય બને છે. (૪)

ભાવાર્થ : ઉપરોક્ત અર્થ સ્વામીજીના મૂળ સંસ્કૃત ભાવાર્થ અનુસાર છે. પરંતુ હિન્દી અનુવાદમાં નિમ્ન રીતે ભિન્ન મળે છે-યથા ‘જેવી રીતે શૂરવીરો શત્રુઓનાં બળને હરાવીને, રાજ્ય મેળવીને, સુખ ભોગવે છે, તેવી જ રીતે હે જગદીશ્વર ! અમે પણ અદ્વિતીય એવા આપનો આશ્રય લઈને સર્વ રીતે વિજયી બનીને વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરીને સુખી થઈએ છીએ.’ (૪)

भूरि त इन्द्र वीर्यं तव स्मस्यस्य स्तोतुर्मघवन्काममा पूण ।

अनु ते द्यौर्बृहती वीर्यं मम इयं च ते पृथिवी नेम ओजसे ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-ઉત્તમ ધનયુક્ત **इन्द्र**-સેનાદિ બળયુક્ત સભાધ્યક્ષ ! જે તે-આપનું જે **भूरि**-અત્યંત **वीर्यम्**-પરાક્રમ છે, જેથી અમે **स्मसि**-આશ્રિત અને જે **तव**-આપની **इयम्**-એ **बृहती**-મહાન **द्यौः**-વિદ્યા, વિનયયુક્ત ન્યાયપ્રકાશ અને રાજ્ય માટે **पृथिवी**-ભૂમિ **ओजसे**-બળવાન માટે તથા ભોગવવા માટે **नेमे**-નમ્રની સમાન છે, તે આપ **अस्य**-એ **स्तोतुः**-સ્તુતિકર્તા (ગુણ પ્રકાશ)ના **कामम्**-કામનાઓને આપૂર્ણ-પરિપૂર્ણ કરો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરના અનંત પરાક્રમનો આશ્રય લઈને કામનાઓથી સિદ્ધિ અને પૃથિવીના રાજ્યની સ્થાપના કરીને નિરંતર સુખી રહેવું જોઈએ. (૫)

त्वं तमिन्द्र पर्वतं महामुरुं वज्रेण वज्रिन्पर्वशश्वकर्त्तित्थ ।

अवासृजो निवृताः सर्तवा अपः सत्रा विश्वं दधिषे केवलं सहः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે **वज्रिन्**-પ્રશસ્ત શસ્ત્ર વિદ્યાવિત્, **इन्द्र**-દુષ્ટોનું વિદારણ કરનાર સભાધ્યક્ષ ! જે **त्वम्**-આપ **महाम्**-શ્રેષ્ઠ **उस्म**-મહાન વીરપુરુષોની સત્કાર કરવા યોગ્ય ઉત્તમ સેના **अवासृजः**-બનાવો; અને **वज्रेण**-વજ્રથી જેમ સૂર્ય **पर्वतम्**-મેઘને ઇન્ન-ભિન્ન કરીને **निवृताः**-નિવૃત્ત કરેલ **अपः**-જળને ધારણ કરીને પુનઃ પૃથ્વી પર પાડે છે-વરસાવે છે, તેમ શત્રુ દળને **पर्वशः**-પ્રત્યેક અંગથી **चकर्त्तित्थ**-ઇન્ન-ભિન્ન કરીને શત્રુઓનું નિવારણ કરો છો. **सत्रा**-કારણરૂપથી સત્યસ્વરૂપ **विश्वम्**-જગતને અર્થાત્ રાજ્યને ધારણ કરીને **केवलम्**-એકલા-અસહાય **सहः**-બળને **सर्तवै**-સર્વને સુખથી ગમન-આગમનના ન્યાય માર્ગમાં ચાલવા **दधिषे**-ધારણ કરો છો **तम्**-તે આપને સભા આદિના પતિરૂપે અમે સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે શત્રુઓના છેદનકર્તા, પ્રજાપાલનમાં સંલગ્ન તથા બળ અને વિદ્યાથી યુક્ત હોય, તેને જ સભા આદિના અધ્યક્ષ બનાવવા જોઈએ. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અગ્નિ અને સભાધ્યક્ષ આદિના ગુણોના વર્ણનથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૫૭)

સૂક્ત-૫૮

નૂ ચિત્સહોજા અમૃતો નિ તુન્દતે હોતા યદૂતો અર્ભવદ્વિવસ્વતઃ ।

વિ સાધિષ્ઠેભિઃ પૃથિભી રજો મમ આ દેવતાતા હવિષા વિવાસતિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્-જે ચિત્-વિદ્યુતની સમાન સ્વપ્રકાશ અમૃતઃ-સ્વરૂપના નાશરહિત સહોજાઃ-બળના ઉત્પાદક હોતા-કર્મફળના ભોક્તા સર્વ મન અને શરીરના ધર્તા દૂતઃ-સર્વને ચલાવનાર અર્ભવત-હોય છે. દેવતાતા-દિવ્ય પદાર્થોના મધ્યમાં દિવ્યસ્વરૂપ સાધિષ્ઠેભિઃ-અધિષ્ઠાન સાથે વિદ્યમાન પૃથિભિઃ-માર્ગોથી રજઃ-પૃથિવી આદિ લોકોને નુ-શીઘ્ર બનાવનાર વિવસ્વતઃ-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ પરમેશ્વરના મધ્યમાં વિદ્યમાન થઈને હવિષા-ગ્રહણ કરેલ શરીર સહિત નિ તુન્દતે-નિરંતર જન્મ-મરણાદિ પીડિત થઈને તથા પોતાના કર્મોના ફળોનું વિવાસતિ-સેવન-ભોગ અને પોતાના કર્મમાં વ્યામમે-સર્વ પ્રકારથી વર્તે છે, તે જીવાત્મા છે, તેમ તમે જાણો. (૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમારે જાણવું જોઈએ, કે અનાદિ, સચ્ચિદાનંદ સ્વરૂપ, સર્વ શક્તિમાન, સ્વયં પ્રકાશમાન, સર્વાધાર, સર્વ જગતના ઉત્પાદક દેશ-કાળ-વસ્તુ-પરિમાણોથી રહિત અને સર્વવ્યાપક પરમેશ્વરમાં નિત્ય વ્યાપક સંબંધથી જે અનાદિ, નિત્ય, ચેતન, અલ્પ પરિમાણ યુક્ત-સૂક્ષ્મ અને અલ્પજ્ઞ (તત્ત્વ) છે, તે જ જીવ છે. (૧)

આ સ્વમદ્વાં યુવમાનો અજરસ્તૃષ્વવિષ્યન્નતસેષુ તિષ્ઠતિ ।

અત્યો ન પૃષ્ઠં પ્રષિતસ્ય રોચતે દિવો ન સાનુ સ્તનયન્નચિક્રદત્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે યુવમાનઃ-સંયોગ અને વિભાગકર્તા અજરઃ-જરા-વૃદ્ધત્વથી રહિત દેહ આદિની અવિષ્યન્-રક્ષા કરનાર બનીને અતસેષુ-આકાશ આદિ પદાર્થોમાં તિષ્ઠતિ-સ્થિત થઈને પ્રષિતસ્ય-પૂર્ણ પરમાત્મામાં કાર્યનું સેવન કરીને ન-જેમ અત્યઃ-ઘોડા પૃષ્ઠમ્-પોતાની પીઠ પર ભારનું વહન કરે છે, તેમ દેહાદિનું વહન કરે છે.

નઃ-જેમ દિવઃ-પ્રકાશથી સાનુ-પર્વતનું શિખર અને વાદળાંઓની ઘટા પ્રકાશિત થાય છે, તેમ રોચતે- પ્રકાશમાન થાય છે.

જેમ સ્તનયન્-વીજળી શબ્દ કરે છે, તેમ અચિક્રદત્-સર્વથા શબ્દ કરે છે.

જે સ્વમ્-પોતાના કરેલા અદમ્-ભોક્તવ્ય કર્મોને તૃષુ-શીઘ્ર આ-સર્વ પ્રકારથી ભોગવે છે, તે શરીર

ધારણ કરનાર જીવ છે. (દેહી છે) (૨)

ભાવાર્થ : પૂર્ણ પરમેશ્વર દ્વારા ધારણ કરેલ, આકાશ આદિમાં પ્રયત્નશીલ રહે છે, બુદ્ધિ આદિ સર્વને પ્રકાશિત કરે છે અને ઈશ્વરની વ્યવસ્થા અનુસાર પોતાના કરેલા શુભ-અશુભ આચરણયુક્ત કર્મનું સુખ-દુઃખરૂપ ફળ ભોગવે છે, તે આ શરીરમાં સ્વતંત્રકર્તા અને ભોક્તારૂપી જીવ છે, એમ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૨)

ક્રાણા રુદ્રેભિર્વસુભિઃ પુરોહિતો હોતા નિષત્તો રયિષાઠ્ઠમર્ત્યઃ ।

રથો ન વિશ્વૃજ્જસાન આયુષુ વ્યાનુષગ્વાર્યાં દેવ ઋણ્વતિ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે સ્ત્રેભિઃ-પ્રાણો અને વસુભિઃ-વાસ આપનાર પૃથિવી આદિ પદાર્થોની સાથે નિસત્તઃ-સ્થિત, હરતા-ફરતા હોતા-દેહાદિનું ધારણ કરનાર, પુરોહિતઃ-પ્રથમ ગ્રહણ કરવા યોગ્ય, રયિષાટ્-ધનના સહનકર્તા, અમર્ત્યઃ-મરણ ધર્મ રહિત, ક્રાણા-કર્મોના કર્તા, ઋણ્જસાનઃ-કરેલા કર્મોને પ્રાપ્ત થઈને વિશ્વુ-પ્રજાઓમાં રથો ન-રથની સમાન શરીર યુક્ત બનીને આયુષુ-બાલ્યાદિ જીવન અવસ્થાઓ-વયમાં અનુષક્-અનુકૂળતાથી વિદ્યમાન વાર્યા-ઉત્તમ પદાર્થો અને સુખને વૃણ્વતિ-વિવિધ પ્રકાર સિદ્ધ કરે છે, તે જ દેવઃ-શુદ્ધ પ્રકાશ સ્વરૂપ જીવાત્મા છે, એમ જાણો. (૩)

ભાવાર્થ : જે પૃથિવી પર પ્રાણો દ્વારા ચેષ્ટા કરે છે, જેમ મનને અનુકૂળ રથની સમાન, શરીરથી જે સહજ ભાવથી કામ લે છે અને જે શ્રેષ્ઠ વસ્તુઓ અને સુખને ઈચ્છે છે, તે જ જીવે છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૩)

વિ વાતજૂતો અતસેષુ તિષ્ઠતે વૃથા જુહૂભિઃ સૃણ્યા તુવિષ્વણિઃ ।

તૃષુ યદગ્ને વનિનો વૃષાયસે કૃષ્ણં તુ એમ્ રુષદૂર્મે અજર ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે સ્વદર્મે-પોતાના સ્વભાવની ઊર્મીઓયુક્ત-અજર-વૃદ્ધાવસ્થા રહિત, અગ્ને-વિદ્યુત્ સમાન વિદ્યમાન જીવ ! જે તું અતસેષુ-આકાશાદિ વ્યાપક પદાર્થોમાં વિતિષ્ઠતે-રહીને યત્-જે વાતજૂતઃ-વાયુના પ્રેરક અને વાયુ સમાન વેગવાન તુવિષ્વણિઃ-અનેક પદાર્થોના સેવક જુહૂભિઃ-ગ્રહણ કરવાના સાધનરૂપ ક્રિયાઓ અને સૃણ્યા-ધારણ તથા હનન રૂપ કર્મની સાથે વિદ્યમાન વનિનઃ-વિદ્યુત્યુક્ત પ્રાણોને પ્રાપ્ત થઈને તું તૃષુ-શીઘ્ર વૃષાયસે-બળવાન થાય છે. જે તે-તારા કૃષ્ણમ્-કર્ષણરૂપ ગુણને અમે એમ-પ્રાપ્ત થઈએ છીએ; તે તું વૃથા-નિરર્થક અભિમાનનો ત્યાગ કરીને પોતાના સ્વરૂપને જાણ. (૪)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોને ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે, કે-‘મે’ જે બતાવેલ છે તે જ તમારું પોતાનું સ્વરૂપ છે, તેમ તમારે જાણવું જોઈએ. (૪)

તપુર્જમ્ભો વન આ વાત્ત્વોદિતો યૂથે ન સાહ્વાં અવ વાત્તિ વંસંગઃ ।

અભિબ્રજન્નક્ષિતં પાજસા રજઃ સ્થાતુશ્ચરથં ભયતે પતત્રિણઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વંસગઃ-વિભિન્ન પદાર્થોને પ્રાપ્ત થઈને વાતચોદિતઃ-પ્રાણોથી પ્રેરિત તપુર્જમ્ભઃ- જેના મુખની સમાન પ્રતાપ-તાપ, તે જીવ અગ્નિ સમાન, જેમ યૂથે-સેનામાં સાહ્યાન્-હનનશીલ જીવ આવવાતિ-સર્વ શરીરની ચેષ્ટા કરે છે. જે વિસ્તૃત થઈને દુઃખોનું હનન કરતા જે અભિબ્રજન્-જતાં-આવતાં ચરથમ્-ચરનાર, અક્ષિતમ્-ક્ષયરહિત, રજઃ-કારણ સહિત, લોક સમૂહના પાજસા-બળને ધરીને જે સ્થાતુઃ- સ્થિર વૃક્ષમાં બેઠેલ પતત્રિણઃ-પક્ષીની સમાન ભયતે-ભય પામે છે, તે તમારું આત્મસ્વરૂપ છે; તેને તમે જાણો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એ જાણવું જોઈએ કે-જે અન્તઃકરણ (= મન, બુદ્ધિ, ચિત્ત અને અહંકાર), પ્રાણ (પ્રાણ આદિ દશ વાયુ), ઈન્દ્રિય (શ્રોતાદિ દશ ઈન્દ્રિયો)નો પ્રેરક; સર્વને ધારણ કરનાર, નિયંત્રિત કરનાર તથા તેનો સ્વામી છે. તથા ઈચ્છા, દ્રેષ, પ્રયત્ન સુખ, દુઃખ અને જ્ઞાન ગુણોથી યુક્ત છે, તે આ શરીરમાં જીવ છે (એમ નિશ્ચિત જાણો.) (૫)

દ્ધુષ્ટ્વા ભૃગ્વો માનુષેષ્વા રયિં ન ચારું સુહવં જનેભ્યઃ ।

હોતારમગ્ને અતિથિં વરેણ્યં મિત્રં ન શેવં દિવ્યાય જન્મને ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન સ્વ-પ્રકાશ સ્વરૂપ જીવ ! તું જે ત્વા-તને ભૃગવઃ-પરિપક્વ જ્ઞાનવાન વિદ્વાન માનુષેષુ-મનુષ્યોમાં જનેભ્યઃ-વિદ્વાનોથી વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, ચાસ્મ્-સુંદર સ્વરૂપ, સુહવમ્-સુખપ્રદાતા, રયિમ્-ધનની ન-સમાન હોતારમ્-દાનશીલ, અતિથિમ્-અનિયમ સ્થિતિ અર્થાત્ અતિથિ સમાન દેહ-દેહાન્તર અને સ્થાન-સ્થાનાન્તરમાં જવાવાળા-જનાર, વરેણ્યમ્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય, શેવમ્-સુખરૂપ જીવને પ્રાપ્ત થઈને દિવ્યાય-શુદ્ધ-પવિત્ર જન્મને-જન્મ માટે મિત્રન્-મિત્રની સમાન તને આદધુઃ-સર્વ રીતે ધારણ કરે છે, તેને જીવ જાણ. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્ય વિદ્યા, લક્ષ્મી અને મિત્રોને પ્રાપ્ત કરીને સુખપૂર્વક ઉન્નતિ કરે છે, તેમ જીવના સ્વરૂપના જ્ઞાતા અત્યંત સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૬)

હોતારં સપ્ત જુહ્વોઙ્ઞં યજિષ્ઠં યં વાઘતો વૃણતે અધ્વરેષુ ।

અગ્નિં વિશ્વેષામરતિં વસૂનાં સપર્યામિ પ્રયસા યામિ રત્નમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેના સપ્ત-સાત જુહ્વઃ-સુખની ઈચ્છાના સાધન છે, તે હોતારમ્-સુખોના દાતા, યજિષ્ઠમ્-અત્યંત સંગમાં નિપુણ, વિશ્વેષામ્-સર્વ વસૂનામ્-પૃથિવી-આદિ લોકોને અરતિમ્-પ્રાપ્ત થનારા, યમ્-જેને વાઘતઃ-બુદ્ધિમાનજન પ્રયસા-પ્રીતિથી અધ્વરેષુ-અહિંસનીય ગુણોમાં અગ્નિમ્-અગ્નિની સમાન વૃણતે-સ્વીકાર કરે છે, તે રત્નમ્-રમણીય આનંદસ્વરૂપવાળા જીવને હું યામિ-પ્રાપ્ત થાઉં છું અને સપર્યામિ-સેવા કરું છું. (૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પોતાના આત્માને જાણીને પરબ્રહ્મને જાણે છે તે જ મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭)

अच्छिद्रा सूनो सहसो नो अद्य स्तोतृभ्यो मित्रमहः शर्म यच्छ।

अग्ने गृणन्तमंहस उरुष्योर्जो नपात्पूर्भिरायसीभिः ॥ ८ ॥

पદાર્થ : હે સહસઃ-પૂર્ણ બ્રહ્મચર્યથી શરીર અને વિદ્યાથી આત્માના બળયુક્ત જનના સૂનો-પુત્ર, મિત્રમહઃ-સર્વના મિત્ર અને પૂજનીય અગ્ને-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમાન વિદ્વાન્ ! નપાત્-અધમ-નીચ કક્ષામાં ન પાડનાર તું અદ્ય-આજ પોતાના આત્મસ્વરૂપના ઉપદેશથી નઃ-અમને અંહસઃ-પાપાયરણથી પાહિ-પૃથક્ કરીને રક્ષા કર. અચ્છિદ્રા-છેદ-ભેદરહિત શર્મ-સુખોને યચ્છ-પ્રાપ્ત કરાવ સ્તોતૃભ્યઃ-વિદ્વાનોથી વિદ્યાની પ્રાપ્તિ અમને કરાવ.

હે વિદ્વાન ! તું આત્માની ગૃણન્તમ્-સ્તુતિના કર્તાને આયસીભિઃ-સુવર્ણ આદિ અલંકારોની ઈશ્વરની રચના રૂપ પૂર્ભિઃ-રક્ષા કરવામાં સમર્થ અન્ન આદિ ક્રિયાઓની સાથે ઋર્જઃ-પરાક્રમના બળથી ઉચ્ચ-દુઃખથી પૃથક્ રાખ. (૮)

ભાવાર્થ : હે આત્મા અને પરમાત્માને જાણનારા યોગીજનો ! તમે આત્મા અને પરમાત્માના ઉપદેશથી સર્વ મનુષ્યોને દુઃખથી દૂર કરીને સુખી કરો. (૮)

ભવા વરૂથં ગૃણતે વિભાવો ભવા મઘવન્મઘવદ્ભ્યઃ શર્મી।

ઉરુષ્યાગ્ને અંહસો ગૃણન્તે પ્રાતર્મક્ષુ ધિયાવસુર્જગમ્યાત્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-ઉત્તમ ધનવાન, અગ્ને-વિજ્ઞાનાદિ ગુણયુક્ત સભાધ્યક્ષ વિદ્વાન્ ! આપ ગૃણતે-ગુણોનું કીર્તન કરનાર અને મઘવદ્ભ્યઃ-વિદ્યાદિ ધનયુક્ત વિદ્વાનોને માટે વસ્થ્યમ્-ઘરને તથા શર્મ-સુખને વિભાવઃ-પ્રાપ્ત કરાવો તથા આપ પણ ઘર અને સુખને પ્રાપ્ત ભવ-કરો. ગૃણન્તમ્-સ્તુતિ કરનાર મનુષ્યની અંહસઃ-પાપથી મક્ષુ-શીઘ્ર ઉચ્ચ-રક્ષા કરો; આપ પણ પાપથી પૃથક્ ભવ-થાઓ; એવી જે ધિયાવસુઃ-પ્રજ્ઞા અને કર્મથી વાસ કરવાને યોગ્ય પ્રાતઃ-પ્રતિદિન પ્રજ્ઞની રક્ષા કરે છે, તે સુખોને જગમ્યાત્ અત્યંત સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે વિદ્વાન ધર્મ અને વિનય દ્વારા સમસ્ત પ્રજા પર પ્રશાસન કરીને તેનું પાલન કરે, તેનોજ સભા આદિના અધ્યક્ષ રૂપે સ્વીકાર કરવો જોઈએ. (૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અગ્નિ અને વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન કરવાથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૫૮)

સૂક્ત-૫૯

વયા इदग्ने अग्नयस्ते अन्ये त्वे विश्वे अमृता मादयन्ते।

वैश्वानर नाभिरसि क्षितीनां स्थूणोव जना उपमिद्यन्थ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વૈશ્વાનર-સંપૂર્ણ નિયમમાં રાખનાર અગ્ને-જગદીશ્વર ! જે તે-આપના સાનિધ્યથી જે અન્યે-ભિન્ન વિશ્વે-સર્વ અમૃતા:-અવિનાશી અગ્નય:-સૂર્ય આદિ જ્ઞાનપ્રકાશક પદાર્થોની સમાન જીવ ત્વે-આપમાં વયા:-શાખાની ઇત્-સમાન વધીને માદયન્તે-આનંદિત થાય છે. જે આપ ક્ષિતીનામ્-મનુષ્યાદિના નાભિ:-મધ્યવર્તિ અસિ-છો, જનાન્-મનુષ્યાદિને ઉપમિત્-ધર્મવિદ્યામાં સ્થાપિત કરીને સ્થૂળેવ-ધારણ કરનાર સ્તંભની સમાન ચયન્થ-સર્વને નિયમમાં રાખો છો, તે આપજ અમારા ઉપાસ્ય દેવ છે. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ વૃક્ષ શાખાઓને-ડાળીઓને અને સ્તંભ ઘરને ધારણ કરીને સર્વને આનંદિત કરે છે, તેમ પરમેશ્વર ધારણ કરીને આનંદિત કરે છે. (૧)

**મૂર્દ્ધા દિવો નાભિરગ્નિઃ પૃથિવ્યા અથાભવદર્તી રોદસ્યોઃ ।
તં ત્વા દેવાસૌઽજનયન્ત દેવં વૈશ્વાનર જ્યોતિરિદાર્યીય ॥ ૨ ॥**

પદાર્થ : હે વૈશ્વાનર-સમસ્ત સંસારના નાયક ! જે આપ અગ્નિ:-વિદ્યુત્ની સમાન દિત્-પ્રકાશ અને પૃથિવ્યા:-ભૂમિની મધ્ય સમાન મૂર્દ્ધા-ઉત્કૃષ્ટ અને નાભિ:-મધ્યવર્તિ વ્યાપક અભવત્-થાઓ છો. અથ-એ સર્વ લોકોની રચના પછી જે રોદસ્યો-પ્રકાશ અને અપ્રકાશ રૂપ સૂર્યાદિ અને ભૂમિ આદિ લોકોમાં અરતિ:-આપ વ્યાપક થઈને અધ્યક્ષ અભવત્-થાઓ છો.

જે આર્યાય-ઉત્તમ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવયુક્ત મનુષ્યને માટે જ્યોતિઃ-જ્ઞાનપ્રકાશ અને મૂર્ત-સ્થૂળ દ્રવ્યના પ્રકાશને ઇત્- જ કરે છે. જે દેવમ્-પ્રકાશમાન ત્વા-આપને દેવાસઃ-વિદ્વાનો અજનયન્ત-પ્રકાશિત કરે છે અને જે વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિને વિદ્વાનો “અજયન્ત” પ્રકટ કરે છે, તમ્-જે આપની જ અમે ઉપાસના કરીએ. (૨)

ભાવાર્થ : જે ઈશ્વરે આર્યોને વિશિષ્ટ જ્ઞાન આપવા માટે સમસ્ત વિદ્યાઓનો પ્રકાશ કરનાર વેદોને પ્રકાશિત કર્યા છે તથા જે સર્વત્રથી શ્રેષ્ઠ અને સર્વના આધાર જગદીશ્વર છે, તેને જાણીને તેની ઉપાસના મનુષ્યોએ સદા કરવી જોઈએ. (૨)

**આ સૂર્યે ન રશ્મયો ધ્રુવાસૌ વૈશ્વાનરે દધિરેઽગ્ના વસૂનિ ।
યા પર્વતેષ્વોષધીષ્વપ્સુ યા માનુષેષ્વસિ તસ્ય રાજા ॥ ૩ ॥**

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જે આ દ્રવ્યસમૂહ જગતના આપ રાજા-પ્રકાશક અસિ-છો, તસ્ય-તેના મધ્યમાં યા-જે પર્વતેષુ-પર્વતોમાં યા-જે ઓષધીષુ-ઔષધિઓમાં જે અપ્સુ-જલોમાં અને માનુષેષુ-જે મનુષ્યોમાં વસૂનિ-દ્રવ્ય છે, તે સર્વને સૂર્યે-સૂર્યલોકમાં રશ્મયઃ-કિરણોની ન-સમાન અગ્ના, વૈશ્વાનરે-આપમાં ધ્રુવાસઃ- નિશ્ચલ પ્રજ્ઞાઓને વિદ્વાનજનો આદધિરે-ધારણ કરાવે છે. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રકાશમાન સૂર્યના વિદ્યમાન રહેવાથી સર્વ કાર્યો સંપન્ન થાય છે, તેમ મનુષ્યો

દ્વારા ઈશ્વરની ઉપાસના કરવાથી સર્વ કાર્યો સિદ્ધિ થાય છે. એમ કરનાર મનુષ્યોનાં સુખ અને ધનનો કદાપિ નાશ થતો નથી તથા દુઃખ અને દરિદ્રતા કદી પણ ઉત્પન્ન થતા નથી. (૩)

बृहतीइव सूनवे रोदसी गिरो होता मनुष्योऽं न दक्षः।

स्वर्वते सत्यशुष्माय पूर्विवैश्वानराय नृत्तमाय यहीः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : જેમ સૂનવે-પુત્રને માટે બૃહતીઇવ-મહાન ગુણયુક્ત માતા વર્તન કરે છે; જેમ રોદસી-પ્રકાશ, ભૂમિ અને દક્ષ:-ચતુર મનુષ્ય:-ભણાવનાર વિદ્વાન મનુષ્ય પિતાની ન-સમાન હોતા-પ્રદાન-આદાન કરનારા વિદ્વાન, ઈશ્વર અને સભાપતિ વિદ્વાનમાં પ્રસન્ન થાય છે; જેમ વિદ્વાનજન એ સ્વર્વતે-પ્રશંસનીય સુખ વિદ્યમાન સત્યશુષ્માય-સત્યબળયુક્ત, નૃત્તમાય-પુરુષોમાં ઉત્તમ, વૈશ્વાનરાય-પરમેશ્વરને માટે પૂર્વી:-સનાતન યહી:-મહાન ગુણ લક્ષણયુક્ત, ગિર:-વેદવાણીઓને દધિરે-ધારણ કરે છે, તેમ એ પરમેશ્વરના ઉપાસક સભાધ્યક્ષમાં સર્વ મનુષ્યોએ વર્તવું જોઈએ. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ ભૂમિ અને સૂર્યનો પ્રકાશ સર્વને ધારણ કરીને સુખી કરે છે; જેમ પિતા અથવા અધ્યાપક પુત્ર અને શિષ્યના હિત માટે પ્રવૃત્ત થાય છે; જેમ ઈશ્વર પ્રજાના સુખ માટે પ્રવૃત્ત થાય છે; તેમ સભાધ્યક્ષ (= રાજા) પ્રયત્ન કરે, એમ સમસ્ત વેદવાણીઓ પ્રતિપાદન કરે છે-બતાવે છે. (૪)

द्विश्चित्ते बृहतो जातवेदो वैश्वानर प्र रिरिचे महित्वम्।

राजा कृष्टीनामसि मानुषीणां युधा देवेभ्यो वरिवश्चकर्थ ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે જાતવેદ:-જેથી વેદ ઉત્પન્ન-પ્રકટ થયા, વેદોના જાણવા અને તેને પ્રાપ્ત કરાવવા તથા ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન વૈશ્વાનર-સર્વને પ્રાપ્ત થનાર પ્રજાયતે-જગદીશ્વર ! જે તે-આપના મહિત્વમ્-મહાન ગુણયુક્ત પ્રભાવ બૃહત:-મહાન દિવ:-સૂર્યાદિ પ્રકાશથી ચિત્-પણ પ્રરિરિચે-અધિક છે. જે આપ કૃષ્ટીનામ્-મનુષ્યાદિ માનુષીણામ્-મનુષ્ય સંબંધી પ્રજાઓના રાજા-પ્રકાશમાન અધીશ્વર-અસિ-છો; અને જે આપ દેવેભ્ય:-વિદ્વાનોને માટે યુધા-સંગ્રામથી વરિવ:-સેવાને ચકર્થ-પ્રાપ્ત કરાવો છો, તે આપ જ અમારા ન્યાયાધીશ થાઓ. (૫)

ભાવાર્થ : સભાસદ લોકોએ પરમેશ્વર અનંત સામર્થ્યવાળા હોવાના કારણે, તેની સર્વાધીશ રૂપમાં ઉપાસના કરવી જોઈએ. સભાધ્યક્ષ મહા શુભ ગુણોથી યુક્ત હોવાના કારણે તેનો સર્વાધિપતિ રૂપમાં આશ્રય લઈને, યુદ્ધ દ્વારા દુષ્ટોને જીતીને, ધાર્મિકોને પ્રસન્ન કરીને તથા પ્રજાનું પાલન કરીને વિદ્વાનોની સેવા અને સંગ નિત્ય જ કરવા જોઈએ. (૫)

प्र नू महित्वं वृषभस्य वोचं यं पूर्वो वृत्रहणं सचन्ते।

वैश्वानरो दस्युमग्निर्जघन्वाँ अधूनोत्काष्ठा अव शम्बरं भेत् ॥ ६ ॥

પદાર્થ : જે તમ્-જે પરમેશ્વરને પૂર્વ:-વિદ્વાનો પોતાના આત્માની સાથે સચન્તે-યુક્ત કરે છે; જેમ અગ્નિ-સર્વત્ર વ્યાપક વિદ્યુત્ વૃત્રહણમ્-મેઘનાશક સૂર્યનું દર્શન કરાવે છે; જેમ વૈશ્વાનર:-સંપૂર્ણ પ્રજાને નિયમમાં રાખનાર સૂર્ય દસ્યુમ્-ડાકુની સમાન શમ્બરમ્-મેઘનું જઘન્વાન્ હનન; અધૂનોત્-કંપન અને અવભેત્-વિદીર્ણ કરે છે; જેના વચ્ચે કાષ્ઠા:-દિશા પણ વ્યાપ્ય છે; તે વૃષભસ્ય-સર્વોત્તમ સૂર્યના મહિત્વમ્-મહિમાને હું નુ-શીઘ્ર પ્રવોચમ્-પ્રકાશિત કરું છું, તેમ સર્વ વિદ્વાનો પણ કરે. (૬)

ભાવાર્થ : આ સમસ્ત સંસાર જ જેનો મહિમા છે, તે જ અનંત શક્તિમાન પરમેશ્વર સર્વને ઉપાસના રૂપમાં માનવા યોગ્ય છે. (૬)

વૈશ્વાનરો મહિમ્ના વિશ્વકૃષ્ટિર્ભરદ્વાજેષુ યજતો વિભાવાં ।

શાતવનેયે શતિનીંભિર્ગ્નિઃ પુરુણીથે જરતે સૂનૃતાવાન્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : જે વિશ્વકૃષ્ટિ:-સર્વના ઉત્પાદક; યજતઃ-પૂજનીય, વિભાવા-વિશેષતઃ પ્રકાશમાન, સૂનૃતાવાન્-પ્રશંસિત અન્નાદિના આધાર, વૈશ્વાનર:-સર્વને પ્રાપ્ત કરાવનાર, અગ્નિ:-સૂર્ય સમાન જગદીશ્વર પોતાના જગત્ રૂપ મહિમ્ના-મહિમા સાથે ભરદ્વાજેષુ-ધારણ કરવા અને જાણવા યોગ્ય પૃથિવી આદિ પદાર્થોમાં શતિનીંભિઃ-અસંખ્ય ગતિયુક્ત ક્રિયાઓ સહિત, પુસ્ત્રીથે-બહુ જ પ્રાણીઓમાં પ્રાપ્ત શાતવનેયે-અસંખ્ય વિભાગયુક્ત ક્રિયાઓથી સિદ્ધ થયેલ સંસારમાં વર્તે છે, તેનું જે મનુષ્ય જરતે-અર્ચન, પૂજન કરે છે, તે નિરંતર સત્કારને પ્રાપ્ત થાય છે. (૭)

ભાવાર્થ : જે ઈશ્વર અસંખ્ય પદાર્થોમાં અસંખ્ય ક્રિયાઓની હેતુભૂત વિદ્યુત્ની સમાન છે, તે જ સમસ્ત સંસારને ધારણ કરે છે. જે મનુષ્ય તે વિદ્યાને જાણે છે, તે નિરંતર મહાન બનતો જાય છે. (૭)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વૈશ્વાનર શબ્દાર્થ વર્ણનથી એના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૫૯)

સૂક્ત-૬૦

વહ્નિં યશસં વિદથસ્ય કેતું સુપ્રાવ્યં દૂતં સદ્વોઅર્થમ્ ।

દ્વિજન્માનં રયિમિવ પ્રશસ્તં રાતિં ભૃદ્ ભૃગવે માતરિશ્વા ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ માતરિશ્વા-અન્તરિક્ષમાં શયન કરતો વાયુ ભૃગવે-શેકવા તથા પકાવવાને માટે વિદથસ્ય-યુદ્ધના કેતુમ્-ધ્વજની સમાન યશસમ્-કીર્તિકારક સુપ્રાવ્યમ્-શ્રેષ્ઠતાથી ચલાવવા યોગ્ય દૂતમ્- દેશ દેશાન્તરને પ્રાપ્ત કરવા રાતિમ્-દાનને નિમિત્ત પ્રશસ્તમ્-અત્યંત શ્રેષ્ઠ દ્વિજન્માનમ્-વાયુ અને

કારણથી જન્મરહિત વહ્નિમ્-સર્વને વહન કરનાર અગ્નિને રયિમિવ-ઉત્તમ લક્ષ્મીની સમાન સદ્યો અર્થમ્-શીઘ્રગામી પૃથિવ્યાદિ દ્રવ્યને ભરત્-ધારણ કરે છે, તેમ તમે પણ કામ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ અગ્નિ આદિ વસ્તુને ધારણ કરીને સર્વ ચેતન (પ્રાણીઓ તથા) અચેતન લોકોને ધારણ કરે છે, તેમ રાજપુરુષોએ વિદ્યા અને ધર્મમાં ધારણ-પૂર્વક પ્રજાઓને ન્યાયમાં સ્થિત રાખવી જોઈએ. (૧)

અસ્ય શાસુરુભયાસઃ સચન્તે હૃવિષ્મન્ત ડશિજો યે ચ મર્તીઃ ।

દિવશ્ચિત્પૂર્વો ન્યસાદિ હોતાપૃચ્છ્યો વિશ્વપતિર્વિક્ષુ વેધાઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : યે-જે હૃવિષ્મન્તઃ-ઉત્તમ સામગ્રીયુક્ત ડશિજઃ-શુભ ગુણ-કર્મોની કામના કરનાર ડભયાસઃ-રાજા અને પ્રજાના મર્તીઃ-મનુષ્ય જે અસ્ય-એ શાસુઃ-સત્ય, ન્યાયથી શાસન કરનાર વિક્ષુ-પ્રજાઓમાં સચન્તે-સંયુક્ત થાય છે.

જે હોતા-શુભ કર્મોને ગ્રહણ કરનાર આપૃચ્છ્યઃ-સર્વ પ્રકારના પ્રશ્નો પૂછવા યોગ્ય વેધાઃ-વિવિધ વિદ્યાને ધારણ કરનાર વિશ્વપતિઃ-પ્રજાઓના સ્વામી દિવઃ-પ્રકાશના પૂર્વઃ-પૂર્વ સ્થિત સૂર્યની ચિત્-સમાન ધાર્મિકજનોને જે રાજ્યપાલન માટે નિયુક્ત કરેલ હોય. ચ-તે જ સર્વ મનુષ્યોને આશ્રય કરવા યોગ્ય છે. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય વિદ્વાન્ ધાર્મિક ન્યાયાધીશો દ્વારા પ્રશંસિત હોય છે અને જેના વિનયથી સમસ્ત પ્રજાઓ સંતુષ્ટ હોય છે, તે સર્વના દ્વારા પિતાની સમાન સેવન કરવા યોગ્ય છે. (૨)

તં નવ્યસી હૃદ આ જાયમાનમ્સ્મત્સુકીર્તિર્મધુજિહ્મશ્યાઃ ।

યમૃત્વિજો વૃજને માનુષાસઃ પ્રયસ્વન્ત આયવો જીર્જનન્ત ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ ઋત્વિજઃ-ઋતુઓને યોગ્ય કર્મકર્તા, પ્રયસ્વન્તઃ-ઉત્તમ વિજ્ઞાનયુક્ત, આયવઃ-સત્યાસત્યનો વિવેક કરનાર, હૃદઃ-સર્વના મિત્ર, માનુષાસઃ-વિદ્વાન મનુષ્ય જાણવાની ઈચ્છા કરનારને વૃજને-અધર્મ રહિત ધર્મ માર્ગમાં જીર્જનન્ત-વિદ્યાઓથી પ્રકટ કરી દે છે. જે જાયમાનમ્-પ્રસિદ્ધ થયેલ મધુજિહ્મ-સ્વાદિષ્ટ ભોગને નવ્યસી-અતિ નૂતન પ્રજા સેવન કરે છે, તમ્-તેને અસ્મત્-અમારાથી પ્રાપ્ત થયેલી શિક્ષાથી યુક્ત સુકીર્તિઃ-અત્યંત પ્રશંસાને યોગ્ય તું આશ્યાઃ-સારી રીતે ભોગ કર. (૩)

ભાવાર્થ : જેઓ અધર્મનો ત્યાગ કરાવીને ધર્મને ગ્રહણ કરાવે છે, તેઓ મનુષ્યો દ્વારા સર્વ પ્રકારથી સત્કારણીય છે. (૩)

ડશિક્ષ્યાવકો વસુર્માનુષેષુ વરેણ્યો હોતાધાયિ વિક્ષુ ।

दमूना गृहपतिर्दम आँ अग्निर्भुवद्रयिपती रयीणाम् ॥ ४ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોને ઉચિત છે, કે જે ઝશિક્-સત્યની કામનાયુક્ત, પાવક:-અગ્નિની સમાન પવિત્ર કરનાર, વસુ:-વાસ કરનાર, વરેણ્ય:-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય, દમૂના:-દમ અર્થાત્ શાન્તિયુક્ત ગૃહપતિ-ગૃહનું પાલન કરનાર તથા રયિપતિ:-ધનનું પાલન કરનાર અગ્નિ:-અગ્નિની સમાન માનુષેષુ-યુક્તિપૂર્વક આહાર-વિહાર કરનાર મનુષ્ય વિશ્વ-પ્રજા અને દમે-ગૃહમાં રયીણામ્-રાજ્ય આદિ ધન અને હોતા-સુખોના દાતા ભુવત્-થાય, તે જ પ્રજામાં રાજા રૂપે અધાયિ-ધારણ કરવા યોગ્ય છે. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ અધર્મી મૂર્ખજનને રાજ્યની રક્ષાનો અધિકાર કદીપણ આપવો નહિ. (૪)

तं त्वा वयं पतिमने रयीणां प्र शंसामो मतिभिर्गोतमासः ।

आशुं न वाजम्भरं मर्जयन्तः प्रातर्मक्षु धियावसुर्जगम्यात् ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-પાવક સમાન પવિત્ર સ્વરૂપ વિદ્વન્ ! જેમ ધિયાવસુ:-બુદ્ધિઓમાં વસાવનાર મતિભિ:-બુદ્ધિમાનોની સાથે વાજંભરમ્-વેગને ધારણ કરનારને પ્રાત:-પ્રતિદિન આશુમશ્ચં ન-જેમ શીઘ્ર ચાલનાર ઘોડાને જોડીને સ્થાનાન્તરમાં તુરત જાય છે-આવે છે, તેમ મક્ષુ-શીઘ્ર રયીણામ્-ચક્રવર્તી રાજ્ય લક્ષ્મી આદિ ધનોનું પતિમ્-પાલન કરનારને જગમ્યાત્-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય. તેમ તમ્-તે ત્વા-તને મર્જયન્ત:-શુદ્ધ-કરાવતા ગોતમાસ:-અતિશય સ્તુતિ કરનાર વયમ્-અમે પ્રશંસામ:-સ્તુતિ દ્વારા પ્રશંસિત કરીએ છીએ. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્ય યાન-વાહનમાં ઘોડાઓને જોડીને શીઘ્ર (દેશ દેશાન્તરમાં) જાય છે, તેમ વિદ્વાનોની સાથે સંગ કરીને તેઓ વિદ્યાના પારને-અન્તને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં શરીર અને યાન આદિમાં સંયુક્ત કરવા યોગ્ય અગ્નિના દૃષ્ટાન્તથી વિદ્વાનોના ગુણોના વર્ણનથી સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૬૦)

સૂક્ત-૬૧

अस्मा इदु प्र तवसे तुराय प्रयो न हर्मि स्तोमं माहिनाय ।

ऋचीषमायाध्रिगव ओहमिन्द्राय ब्रह्माणि राततमा ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ હું ઝ-વિતર્કપૂર્વક પ્રય:-તૃપ્તિ કરનાર કર્મની ન-સમાન તવસે-બળવાન, તુરાય-કાર્ય સિદ્ધિને માટે કરતા, ઋચીષમાય-સ્તુતિ કરવાથી પ્રાપ્ત થનાર તથા અધ્રિગવે-શત્રુઓથી અસહ્ય વીરોને પ્રાપ્ત થનાર, માહિનાય-સર્વોત્કૃષ્ટ ગુણોથી મહાન, અસ્મૈ-એ ઇન્દ્રાય-સભાધ્યક્ષને માટે ઇત્-જ ઓહમ્-પ્રાપ્ત કરનાર સ્તોતમ્-સ્તુતિને રાતતમા-અત્યંત કરવા યોગ્ય બ્રહ્માણિ-સંસ્કારિત અન્ન અને ધનને પ્ર + હર્મિ-પ્રદાન કરું છું, તેમ તમે પણ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સ્તુતિયોગ્ય જનોને રાજ્યાધિકારી બનાવીને તથા તેને યથોચિત કર સંબંધી ધન આપીને, ઉત્તમ અન્નાદિથી તેનો સદા સત્કાર કરવો જોઈએ તથા રાજપુરુષોએ પ્રજાજનોનો (સત્કાર કરવો જોઈએ.) (૧)

અસ્મા ઇદુ પ્રયંઙ્વ પ્ર યંસિ ભરામ્યાઙ્ ગૂષં બાઘૈ સુવૃક્તિ ।

ઇન્દ્રાય હૃદા મનસા મનીષા પ્રત્નાય પત્યે ધિયૌ મર્જયન્ત ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ મનુષ્ય ! આપ અસ્મૈ-એ પત્નાય-પ્રાચીન સર્વના મિત્ર પત્યે-સ્વામી ઇન્દ્રાય-શત્રુઓનું વિદારણ કરનારને માટે પ્રયંઙ્વ-જેમ પ્રીતિકારક અન્ન અને ધન, તેમ પ્રયંસિ-સુખ આપો છો.

જે પરમૈશ્વર્યવાન ધાર્મિક માટે હું સર્વ સામગ્રી અર્થાત્ હૃદા-હૃદય, મનીષા-બુદ્ધિ, મનસા-વિજ્ઞાનપૂર્વક મનથી સુવૃક્તિ-ઉત્તમતાથી ગમન કરાવનાર યાનને ભરામિ-ધારણ અને પુષ્ટ કરું છું.

આઙ્ગૂષમ્-જેમ યુદ્ધમાં પ્રાપ્ત થયેલ શત્રુને બાઘે-તાડના કરવી, જે વીરને માટે સર્વ પ્રજાના મનુષ્યને ધિયઃ-બુદ્ધિ અને કર્મને મર્જયન્ત-શુદ્ધ-પવિત્ર કરે છે, તે પુરુષને માટે ઇત-જ, ડ-તર્કપૂર્વક હું પણ બુદ્ધિને શુદ્ધ-નિર્મળ બનાવું. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ-પૂર્વ પરીક્ષા કરેલ, પૂર્ણવિદ્યાયુક્ત, ધાર્મિક, સર્વના ઉપકારક અને પ્રાચીન (= અનુભવી) સભા આદિના અધ્યક્ષનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ. તેથી વિપરીતનો સ્વીકાર ન કરવો જોઈએ; અને સર્વેએ પૂર્વોક્ત સભાધ્યક્ષથી પ્રિય આચરણ કરવું જોઈએ. (૨)

અસ્મા ઇદુ ત્યમ્પમં સ્વર્ષા ભરામ્યાઙ્ગૂષમાસ્યૈન ।

મંહિષ્ટમચ્છૌક્તિભિર્મતીનાં સુવૃક્તિભિઃ સૂરિં વાવૃધધ્યૈ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું અસ્મૈ-એ સભાધ્યક્ષ માટે મતીનામ્-મનુષ્યોની વાવૃધધ્યૈ-અત્યંત ઉન્નતિ માટે આસ્યૈન-મુખથી સુવૃક્તિભિઃ-જેમાં સારી રીતે અધર્મ અને અવિદ્યા છોડી શકે અચ્છૌક્તિભિઃ-શ્રેષ્ઠ વચન સ્તુતિઓથી ઇત્-જ ડ + ત્યમ્-તેવી જ ઉપમા-કરવા યોગ્ય સ્વર્ષામ્-સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર, આઙ્ગૂષમ્-સ્તુતિને પ્રાપ્ત કરેલ, મંહિષ્ટમ્-અત્યંત વિદ્યાવૃદ્ધ, સૂરિમ્-શાસ્ત્રજ્ઞ, વિદ્વાનને ભરામિ-ધારણ કરું છું, તેમ તમે પણ કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો દ્વારા મનુષ્યોનાં સુખ માટે સર્વ પ્રકારથી ઉત્તમ અને અદ્વિતીય પ્રયત્ન કરવામાં આવે છે, તેમ એ વિદ્વાનોના સત્કાર માટે મનુષ્યોએ પણ પ્રયત્નો કરવા જોઈએ. (૩)

અસ્મા ઇદુ સ્તોમં સં હિનોમિ રથં ન તષ્ટૈવ તત્સિનાય ।

ગિરશ્ચ ગિર્વાહસે સુવૃક્તીન્દ્રાય વિશ્વમિન્વં મેધિરાય ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું મેધિરાય-સમ્યક્ જ્ઞાતા ગિર્વાહસે-વિદ્યાયુક્ત વાણીઓને પ્રાપ્ત કરાવનાર

અસ્મૈ-આ, ઇન્દ્રાય-વિદ્યાની વૃષ્ટિ કરાવનાર વિદ્વાન, ઇ-જ માટે ડ-તર્કપૂર્વક રથમ્-યાન સમૂહની ન-સમાન તત્સનાય-યાન સમૂહના બંધનને માટે તષ્ટેવ-તીક્ષ્ણ કરનાર શિલ્પીની સમાન વિશ્વમિન્વમ્-સમસ્ત વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરાવનાર સુવૃક્તિ- જેથી સમસ્ત દોષો છૂટે છે, તે સ્તોમમ્-શાસ્ત્રોની અભ્યાસયુક્ત સ્તુતિ ચ-અને ગિરઃ-વેદવાણીઓની સંહિનોમિ-સમ્યક્ વૃદ્ધિ કરું છું, તેમ તમે પણ પ્રયત્ન કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ રથ નિર્માતા દેહ રથને ચલાવવા માટે બંધનોની સાથે યંત્રકલાઓનું સમ્યક્ નિર્માણ કરીને પોતાના પ્રયોજનોને સિદ્ધ કરે છે અને સુખપૂર્વક ગમનાગમન કરીને પ્રસન્ન રહે છે, તેમ મનુષ્યોએ વિજ્ઞાનનો આશ્રય લઈને, તેના સંપર્કથી વિદ્યાઓ ગ્રહણ કરીને, સુખપૂર્વક ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષને સિદ્ધ કરીને, નિરંતર આનંદમાં રહે. (૪)

અસ્મા ઇદુ સપ્તિમિવ શ્રવસ્યેન્દ્રાયાર્ક જુહ્વારૂં સમઙ્ગે ।

વીરં દાનૌકસં વન્દધ્યૈ પુરાં ગૂર્ત્તશ્રવસં દર્માણમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું શ્રવસ્યા-પોતાની શ્રવણની ઈચ્છા જુહ્વા-વિદ્યાઓની આદાન-પ્રદાન ક્રિયાઓથી અસ્મૈ-એ ઇન્દ્રાય-પરમૈશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરનાર, ઇત્-સભાધ્યક્ષની જ ડ-વિશેષ તર્કની સાથે વન્દધ્યૈ-સ્તુતિ કરાવવા માટે સપ્તિમિવ-વેગયુક્ત ઘોડાઓની સમાન ગૂર્ત્તશ્રવસમ્-જેને સમસ્ત શાસ્ત્રોના શ્રવણને ગ્રહણ કરેલ છે, પુરામ્-શત્રુઓના નગરોમાં દર્માણમ્-વિદારણ કરવા અને દાનૌકસમ્-દાન તથા સ્થાનયુક્ત અર્કમ્-સત્કાર હેતુ વીરમ્-વિદ્યા, શૌર્ય આદિ ગુણયુક્ત વીરની ઇત્-જ સમઙ્ગે-સમ્યક્ કામના કરું છું. તેમ તમે પણ કામના-ઈચ્છા કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્ય રથમાં ઘોડાઓ જોડીને, તેમાં બેસીને ગમન-આગમન દ્વારા કર્મોની સિદ્ધિ કરી શકે છે, તેમ વર્તમાન વિદ્વાન વીર પુરુષોની સાથે સંગ કરીને સર્વ કાર્યો મનુષ્યોએ સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૫)

અસ્મા ઇદુ ત્વષ્ટાં તક્ષદ્વઙ્ગં સ્વપસ્તમં સ્વર્યં૧ રણાય ।

વૃત્રસ્ય ચિદ્વિદદ્યેન મર્મ૧ તુજન્નીશાનસ્તુજતા કિયેધાઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે, કે જે ત્વષ્ટા-પ્રકાશક, ઈશાનઃ-સમર્થ, કિયેધાઃ-કેટલાયને ધારણ કરનાર, શત્રુઓને તુજન્-મારીને વૃત્રસ્ય-મેઘની ઉપર પોતાના કિરણોને છોડીને વિદત્-પ્રાપ્ત થતા સૂર્યની સમાન ત્વર્યમ્-સુખના હેતુ સ્વપસ્તમમ્-અત્યંત ઉત્તમ કર્મોને ઉત્પન્ન કરનાર વજ્રમ્-કિરણ સમૂહનું તક્ષત્-છેદન કરીને સૂર્યની ચિત્-સમાન અસ્મૈ-એ રણાય-સંગ્રામ માટે જે મર્મ-જીવન નિમિત્તનાં સ્થાને તુજતા-કાપીને યેન-જે વજ્રથી શત્રુઓને જીતે છે, ઇદુ-તેઓને સભા આદિના અધ્યક્ષ બનાવવા જોઈએ. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય પોતાના તેજ-તાપથી મેઘનું છેદન કરીને ભૂમિ પર પાડીને-વરસાવીને તથા

જળ ફેલાવીને (સર્વને) સુખી કરે છે, તેમ સભા આદિના અધ્યક્ષ વિદ્યા તથા વિનયથી અને શસ્ત્રાસ્રની શિક્ષાથી સેનાને યુદ્ધો (કરવા)માં નિપુણ બનાવીને તથા શત્રુઓને જીતીને સમસ્ત પ્રાણીઓને આનંદિત કરે છે. (૬)

અસ્યેદુ માતુઃ સવનેષુ સદ્યો મહઃ પિતુ પપિવાઞ્ચાર્વન્ના ।

મુષાયદ્વિષ્ણુઃ પચતં સહીયાન્વિધ્યદ્વરાહં તિરો અદ્રિમસ્તા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : જે અસ્ય-એ માતુઃ-શત્રુ તથા પોતાના બળનું પરિમાણ-માપ કરનાર સભાધ્યક્ષના સવનેષુ-ઐશ્વર્યોમાં મહઃ-મહાન, પચતમ્-પરિપક્વ, ચારુ-સુંદર, પિતુમ્-સંસ્કારિત અન્નને પપિવાન્-ખાવા-પીવા તથા સહીયાન્-અત્યંત સહનશીલ વીર મનુષ્ય અન્ના-અન્નનું અસ્તા-પ્રક્ષેપણ કરવા મુષાયત્-પોતાને ચોરની ઈચ્છા કરવા સમાન વિષ્ણુઃ-સર્વ વિદ્યાઓના અંગોમાં વ્યાપક અદ્રિમ્-પર્વાતાકાર વરાહમ્-મેઘને તિરઃ-નીચે વિધ્યત્-પાડીને સૂર્યની સમાન શત્રુઓને સદ્યઃ-શીઘ્ર નષ્ટ કરે, ઇદુ-તે જ મનુષ્ય સેનાપતિ બનવા યોગ્ય છે. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અન્ન અને જળના રસોને ચોરીને (ફરી તેને વરાળ રૂપમાં) છુપાવીને, પોતાના કિરણોથી મેઘને ઘટ્ટ કરીને તેને પ્રકટ કરીને (તથા ફરી) છિન્ન-ભિન્ન કરીને (ભૂમિ પર) પાડીને વિજયી બને છે, એ જ રીતે સેના આદિના અધ્યક્ષે સેના આદિ ઐશ્વર્યોમાં સ્થિત રહેલ શૂરવીર પુરુષ શત્રુઓનો પરાજય કરે-અર્થાત્ વિજય કરે. (૭)

અસ્મા ઇદુ ગ્નાશ્ચિદ્દેવપત્નીરિન્દ્રાયાર્કમહિહત્ય ળવુઃ ।

પરિ દ્યાવાપૃથિવી જંભ્ર ઉર્વી નાસ્ય તે મહિમાનં પરિ ષ્ઠઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ ! જેમ એ સૂર્ય દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશ અને ભૂમિને જંભ્રે-ધારણ કરીને અને જેના વશમાં ઉર્વી-બહુ રૂપ-પ્રકાશ યુક્ત પૃથિવી છે. અસ્ય-એ સભાધ્યક્ષ અહિહત્યે-મેઘોના હનન વ્યવહારમાં ચિત્-પ્રકાશભૂમિ મહિમાનમ્-મહિમા ન-પરિસ્તઃ-સર્વ પ્રકાર છેદનમાં સમર્થ થઈ શકતા નથી,

તેમ તે અસ્મૈ-એ ઇન્દ્રાય-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરનાર સભાધ્યક્ષ માટે ઇદુ-જ દેવપત્નીઃ-વિદ્વાનોથી પાલનીય પતિવ્રતા સ્ત્રીઓની સમાન ગ્નાઃ-વેદવાણી અર્કમ્-દિવ્યગુણ સંપન્ન અર્ચનીય-પૂજ્ય-વીર પુરુષને પર્યવુઃ-સર્વ પ્રકારના તંતુઓની સમાન વિસ્તૃત કરે છે, તે જ રાજ્ય કરવાને યોગ્ય બને છે. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યના તેજ અને મહત્વની સામે પૃથિવી આદિ લોકોની ગણના સ્વલ્પ છે, તેમ પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત મનુષ્યની સામે મૂર્ખની ગણના તુચ્છ છે. (૮)

અસ્યેદેવ પ્ર રિરિચે મહિત્વં દિવસ્પૃથિવ્યાઃ પર્યન્તરિક્ષાત્ ।

સ્વરાળિન્દ્રો દમ આ વિશ્વગૂર્ત્તઃ સ્વરિમંત્રો વવક્ષે રણાય ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : જે **વિશ્વગૂર્તઃ**-સમસ્ત ભોજ્ય વસ્તુને ભક્ષણ કરનાર **સ્વરિઃ**-ઉત્તમ શત્રુયુક્ત **અમત્રઃ**-જ્ઞાનવાન અને જ્ઞાનનો હેતુ **સ્વરાટ્**-સ્વયં પ્રકાશમાન **ઇન્દ્ર**-પરમૈશ્વર્યયુક્ત સૂર્ય અને સભાધ્યક્ષ **દમે**-ઉત્તમ ગૃહ અને સંસારમાં **રણય**-સંગ્રામ માટે **આવવક્ષે**-રોષ અને સારી રીતે ઘાત કરે છે; અને જેની **દિવઃ**-પ્રકાશ **પૃથિવ્યાઃ**-ભૂમિ અને **અન્તરિક્ષાત્**-અન્તરિક્ષથી **ઇત્**-પણ **ષરિ**-સર્વ પ્રકાર **મહિત્વમ્**-પૂજ્ય અને મહાગુણવિશિષ્ટ મહિમા **પ્રરિરિચે**-વિશેષ છે, તે **અસ્ય**-એ સૂર્ય અને સભાધ્યક્ષના **એવ**-જ કાર્યોમાં ઉપયોગ અને સભા આદિમાં અધિકાર આપવો જોઈએ. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જેમ સૂર્ય પૃથિવી આદિના ગુણો અને પરિમાણના કારણે અધિક (=વિશાળ) છે, તેમ ઉત્તમ ગુણયુક્ત સભા આદિના અધિપતિ રાજાને અધિકાર આપીને, સર્વ કાર્યોની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૯)

અસ્યેદેવ શવસા શુષન્તં વિ વૃશ્વચ્ચઞ્જેણ વૃત્રમિન્દ્રઃ ।

ગા ન વ્રાણા અવનીરમુજ્વલ્લભિ શ્રવૌ દાવને સચેતાઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : જે **સચેતાઃ**-સમાન જ્ઞાનવાન **ઇન્દ્રઃ**-સેનાધિપતિ **અસ્ય**-એ સભાધ્યક્ષ **એવ**-ના **શવસા**-બળ તથા **વજ્રેણ**-તેજથી **શુષન્તમ્**-દ્વેષથી ક્ષીણ થયેલ **વૃત્રમ્**-પ્રકાશનું આવરણ કરનાર, મેઘની સમાન આવરણ કરનાર શત્રુનું **વિવૃશ્ચત્**-છેદન કરે છે, તે **ગાઃ**-પશુઓને પશુઓના પાળનારના બંધનથી છોડાવીને વનને પ્રાપ્ત કરાવવાની **ન**-સમાન **અવનીઃ**-પૃથિવીનું **વ્રાણાઃ**-આવરણ કરેલ જલની સમાન **દાવને** આપનારને માટે **શ્રવઃ**-અન્નને **ઇત્**-પણ **અભ્યમુચ્ચત્**-સર્વ પ્રકારથી છોડે છે, તે રાજ્ય કરવાને સમર્થ બને છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુતની સહાયથી સૂર્ય અને સૂર્યની સહાયથી વિદ્યુત વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થઈને, જગતને પ્રકાશિત કરીને, મેઘને વિચ્છિન્ન કરીને, તેને ભૂમિ પર પાડે-વરસાવે છે.

જેમ ગોવાળ ગાયોને મુક્ત કરીને તેને સુખી કરે છે, તેમ સભાસદ અને સૈનિક ન્યાયની રક્ષા કરીને તથા શત્રુઓને છિન્ન-ભિન્ન કરીને ધાર્મિક જનોને દુઃખરૂપી બંધનથી છોડાવીને તેઓને સુખી કરે. (૧૦)

અસ્યેદુ ત્વેષસા રન્ત્ સિન્ધવઃ પરિ ચદ્વજ્રેણ સીમયચ્છત્ ।

ઈશાનકૃદ્દાશુષે દશસ્યન્તુર્વીતયે ગાધં તુર્વિણિઃ કઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : **અસ્ય**-એ સભાધ્યક્ષના **ત્વેષસા**-વિદ્યા, ન્યાય, બળ પ્રકાશની સાથે જે વિદ્યમાન શૂરવીર વિદ્યુતની સમાન **રન્ત**-રમણ કરે છે **સિન્ધવઃ**-સમુદ્રની સમાન **વજ્રેણ**-શસ્ત્રથી **સીમ્**-સર્વ પ્રકારથી શત્રુની સેનાઓનો **પર્યચ્છત્**-નિગ્રહ કરે છે, તે **દાશુષે**-દાનશીલ મનુષ્યને **ઈશાનકૃત્**-ઐશ્વર્યયુક્ત કરનાર **તુર્વીતયે**-શીઘ્ર કરનારાઓને માટે **દશસ્યન્**-દાતાની સમાન આચરણ કરતા **તુર્વિણિઃ**-શીઘ્રકારીનું સેવન કરનાર

મનુષ્ય ગાધમ્-શત્રુઓમાં ઉથલ-પાથલ ક:-કરે છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય જે સભા આદિના અધ્યક્ષની સહાયતાથી શત્રુઓને જીતીને પૃથ્વીનાં રાજ્યનું સેવન કરીને સુખી તથા પ્રતાપી બને છે, તે સમસ્ત શત્રુઓમાં વિલોડન =ઉથલ પાથલ મચાવી શકે છે. (૧૧)

અસ્મા ઇદુ પ્ર ભરા તૂત્જાનો વૃત્રાય વજ્રમીશાનઃ કિયેધાઃ ।

ગોર્ન પર્વ વિ રંદા તિરણ્ચેષ્યન્નર્ણીસ્યપાં ચરધ્યૈ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ ! કિયેધા:-કેટલાય ગુણોને ધારણ કરનાર ઈશાન:-ઐશ્વર્યયુક્ત તૂત્જાન:-શીઘ્રકારી આપ જેમ-સૂર્ય અપામ્-જળના સંબંધથી અર્ણાસિ-જળના પ્રવાહને ચરધ્યૈ-વહાવવા માટે વૃત્રાય-મેઘને માટે વર્તે છે, તેમ અસ્મૈ-તે શત્રુને માટે શસ્ત્રને પ્ર-સારી રીતે ભર-ધારણ કરીને તિરણ્ચા-ત્રાંસી ગતિવાળા વજ્રથી ગોર્ન-વાણીઓના વિભાગની સમાન પર્વ-તેના અંગ-અંગને કાપવાની ઈષ્યન્-ઈચ્છા કરીને ઇદુ-એમજ વિરદ-અનેક પ્રકારથી હનન કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : હે સેનાપતિ ! જેમ પ્રાણવાયુ દ્વારા તાલુ આદિ (સ્થાનો)માં તાડન કરવાથી વિભિન્ન અક્ષરો અને પદો પૃથક્-પૃથક્ (ઉચ્ચારિત) કરવામાં આવે છે, એ જ રીતે તું શત્રુના બળને છિન્ન-ભિન્ન કરીને તથા તેના અંગોને જુદા-જુદા કરીને વિજય પ્રાપ્ત કર. (૧૨)

અસ્યેદુ પ્ર બ્રૂહિ પૂર્વાર્ણિ તુરસ્ય કર્મીણિ નવ્યં ઉક્થૈઃ ।

યુધે યદિષ્ણાન આયુધાન્યઘાયમાણો નિરિણાતિ શત્રૂન્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! યત્-જે સભા આદિના પતિ જેમ ઋદ્ધાયમાણ:-મરેલ સમાન આચરણ કરનાર આયુધાનિ-તોપ, બંદુક, તલવાર આદિ શસ્ત્ર-અસ્ત્રોને ઈષ્ણાન:-પ્રતિદિન સંભાળપૂર્વક તથા શુદ્ધ કરીને નવ્ય:-નવીન શસ્ત્રાસ્ત્ર વિદ્યા ભણેલા યુધે-સંગ્રામમાં શત્રૂન્-દુષ્ટ શત્રુઓને નિરિણાતિ-મારો છો તે તુરસ્ય-શીઘ્રતાયુક્ત અસ્ય-સભાપતિ આદિના ઇત્-જ ઉક્થૈ:-કહેવા યોગ્ય વચનોથી પૂર્વાર્ણિ-પ્રાચીન સત્પુરુષોને માટે કર્મીણિ-કરવા યોગ્ય અને કરનારના અત્યંત ઈષ્ટ કર્મોને કરે છે, તેમ પ્રબ્રૂહિ-સારી રીતે કહો. (૧૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સભા આદિના અધ્યક્ષ આદિની વિદ્યા, વિનય તથા શત્રુઓના પરાજય આદિ કાર્યોની પ્રશંસા કરીને, તેને ઉત્સાહિત કરીને તેનો સદા સત્કાર કરવો જોઈએ.

એ રાજપુરુષોએ શસ્ત્રાસ્ત્રવિદ્યા અને શિલ્પમાં નિપુણ સૈનિક વીરોનો સંગ્રહ કરીને તથા શત્રુઓને હરાવીને, પ્રજાઓની નિરંતર રક્ષા કરવી જોઈએ. (૧૩)

અસ્યેદુ ભિયા ગિર્યશ્ચ દ્વા દ્યાવાં ચ ભૂમાં જનુષસ્તુજેતે ।

उपो वेनस्य जोगुवान ओणिं सद्यो भुवद्वीर्यीय नोधाः ॥ १४ ॥

પદાર્થ : જે જોગુવાન:-અવ્યક્ત શબ્દ કરનાર નોધા:-સેનાના નાયક સભા આદિના અધ્યક્ષ સદ્ય:-શીઘ્ર વીર્યાય-પરાક્રમને સિદ્ધ કરવા માટે ભુવત્-થાઓ. જેમ-સૂર્યથી દ્વઘ્વા:-પુષ્ટ ગિરય:-મેઘની સમાન અસ્ય-એ વેનસ્ય-મેઘાવીના ઇત્-ઉ-જ ધિયા-ભયથી ચ-શત્રુજન કંપી ઉઠે છે; જેમ દ્યાવા-પ્રકાશ ચ-અને ભૂમિ તુજેતે-કંપે છે; તેમ જનુષ:-મનુષ્યો ભયને પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ અમને તે સભાધ્યક્ષની ઉપો-સમીપ ભય પ્રાપ્ત ન ભૂમ-થાય; અને તે સભાધ્યક્ષ પણ ઓણિમ્-દુઃખને દૂર કરીને સુખને પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૪)

ભાવાર્થ : વિદ્યા આદિ શુભ ગુણો વિના તથા ઈશ્વર દ્વારા સંસાર ઉત્પન્ન કર્યા વિના સભા આદિના અધ્યક્ષાદિજન પ્રજાઓનું પાલન (કરી શકતા) નથી. તેમજ સૂર્ય સમસ્ત લોકોને પ્રકાશિત તથા ધારણ કરી શકતો નથી. એટલા માટે વિદ્યા આદિ ઉત્તમ ગુણોનું ગ્રહણ તથા પરમેશ્વરની સ્તુતિ કરવી જોઈએ. (૧૪)

अस्माद्दु त्यदनु दाय्येषामेको यद्वब्ने भूरेरीशानः ।

प्रैतशं सूर्ये पस्पृधानं सौवश्ये सुष्विमावदिन्द्रः ॥ १५ ॥

પદાર્થ : જેમ વિદ્વાનોએ એવામ્-એ મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓને સુખ દાયિ-પ્રદાન કરેલ છે, તેમ જો એક:-ઉત્તમથી ઉત્તમ અભયરહિત ભૂરે:-અનેક પ્રકારના ઐશ્વર્યના ઈશાન:-સ્વામી ઇન્દ્ર:-સભાદિના પતિ સૂર્યે-સૂર્યમંડળમાં છે, તેમ સૌવશ્યે-સર્વોત્કૃષ્ટ ઘોડાઓથી યુક્ત સેનામાં યત્-જેમ પસ્પૃધાનમ્-પરસ્પર સ્પર્ધા કરતા સુષ્વિમ્-ઉત્તમ ઐશ્વર્ય પ્રદાતા એતશમ્-ઘોડાઓની અનુવબ્ને-યથાયોગ્ય યાચના કરે છે, ત્યત્-તેને અસ્મૈ-એ ઇદુ-સભાધ્યક્ષને જ માટે પ્રાવત્-સારી રીતે રક્ષા કરે છે, તે સભાને યોગ્ય હોય છે. (૧૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ; જે બહુ જ સુખોના દાતા, અશ્વવિદ્યાના જ્ઞાતા, અદ્વિતીય પુરુષાર્થી અને જે વિદ્વાન મનુષ્ય છે, તેને જ રક્ષા કાર્યમાં નિયુક્ત કરવા જોઈએ અને વિદ્યુત્ વિદ્યાનો સંગ્રહ કરવો જોઈએ. (૧૫)

एवा ते हरियोजना सुवृक्तीन्द्र ब्रह्माणि गोतमासो अक्रन् ।

एषु विश्वपेशसं धियं धाः प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् ॥ १६ ॥

પદાર્થ : હે હારિયોજન-યાનોમાં ઘોડા અને અગ્નિ આદિ પદાર્થયુક્ત થાય છે તેને ભણવા અને જાણવાવાળા ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્ય પ્રદાતા, ધિયાવસુ:-બુદ્ધિ અને કર્મના નિવાસ કરનારા આપ જે એષુ-એ સ્તુતિ તથા વિદ્યા ભણનાર મનુષ્યોમાં વિશ્વપેશસમ્-સર્વ વિદ્યારૂપ ગુણયુક્ત, ધિયમ્-ધારણાવતી

બુદ્ધિને, **પ્રાતઃ**-પ્રતિદિન **મક્ષુ**-શીઘ્ર **આધાઃ**-સારી રીતે ધારણ કરો છો; તો જેને એ વિદ્યા **જગમ્યાત્**-વારંવાર પ્રાપ્ત થાય, **ગોતમાસઃ**-અત્યંત સર્વ વિદ્યાઓની સ્તુતિ કરનાર **તે**-આપને માટે **એવ-જ સુવૃક્તિ**-સારી રીતે દોષોને પૃથક્ કરનાર શુદ્ધિ-પવિત્ર કરેલ **બ્રહ્માણિ**-મહાન સુખ કરનાર અમોને આપવા માટે **અક્રન્**-સંપાદન કરે છે, તેની સારી રીતે સેવા કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : પરોપકારી વિદ્વાનોએ, સદા પ્રયત્નપૂર્વક સુશિક્ષા અને વિદ્યાના દાન દ્વારા સર્વ મનુષ્યોને સુશિક્ષિત વિદ્વાન બનાવવા જોઈએ; તથા એ, અધ્યાપક વિદ્વાનોનો મન, વચન અને કર્મથી સત્કાર કરીને સારી રીતે નિર્મિત અન્ન આદિથી તેઓની નિત્ય સેવા કરવી જોઈએ.

વિદ્યાનું દાન અને ગ્રહણથી વધીને (અન્ય) કોઈ ઉત્તમ ધર્મ નથી, એટલા માટે સર્વે પરસ્પર પ્રેમથી વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સભાધ્યક્ષ આદિનું વર્ણન તથા અગ્નિ વિદ્યાના પ્રચાર કરવાનું વર્ણન કરેલ છે, તેથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૬૧)

સૂક્ત-૬૨

પ્ર મન્મહે શવસાનાય શૂષમાઙ્ગૂષં ગિર્વળસે અઙ્ગિસ્વત્ ।

સુવૃક્તિભિઃ સ્તુવત ઋગ્મિયાયાર્ચીમાર્ક નરે વિશ્રુતાય ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ અમે **સુવૃક્તિભિઃ**-દોષોને દૂર કરનારી ક્રિયાઓથી **શવસાનાય**-જ્ઞાન અને બળયુક્ત, **ગિર્વળસે**-વાણીઓથી સ્તુતિઓને યોગ્ય, **ઋગ્મિયાય**-ઋચ્યાઓથી પ્રસિદ્ધ, **નરે**-ન્યાય કરનાર, **વિશ્રુતાય**-અનેક ગુણોયુક્ત હોવાથી શ્રવણ કરવા યોગ્ય, **સ્તુવતે**-સત્યની પ્રશંસાયુક્ત સભાધ્યક્ષને માટે **અઙ્ગિસ્વત્**-પ્રાણોનાં બળની સમાન **શૂષમ્**-બળ અને **અર્કમ્**-પૂજનીય **આઙ્ગૂષમ્**-વિજ્ઞાન અને સ્તુતિસમૂહની **અર્ચામ**-પૂજા કરીએ અને **પ્રમન્મહે**-માનીએ તથા તેનાથી પ્રાર્થના કરીએ, તેમ તમે પણ કર્યા કરો. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા જેમ પરમેશ્વરની સ્તુતિ-પ્રાર્થના-ઉપાસના કરીને સુખ પ્રાપ્ત કરી શકાય છે. તેમ તેના સભા આદિના અધ્યક્ષનો આશ્રય લઈને વ્યાવહારિક અને પારમાર્થિક સુખો પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. (૧)

પ્ર વૌ મહે મહિ નમો ભરધ્વમાઙ્ગૂષ્યં શવસાનાય સામ ।

યેના નઃ પૂર્વે પિતરઃ પદ્જા અર્ચન્તો અઙ્ગિસ્વો ગા અવિન્દન્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે **વઃ**-તમને અને **નઃ**-અમને **અઙ્ગિસ્વઃ**-પ્રાણવિદ્યા અને **પદ્જાઃ**-ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષના જ્ઞાતા **મહે**-મહાન **શવસાનાય**-જ્ઞાન અને બળયુક્ત સભાધ્યક્ષને માટે **મહિ**-બહુ જ **સામ**-

દુઃખનાશ કરનાર આઙ્કૃષ્યમ્-વિજ્ઞાનયુક્ત નમઃ-નમસ્કાર અને અન્નનો અર્ચન્તઃ-સત્કાર કરીને પૂર્વે-પ્રથમ સર્વ વિદ્યા ભણતા પિતરઃ-વિદ્યાદિ સદ્ગુણોના રક્ષક વિદ્વાનો યેન-જે વિજ્ઞાન અને કર્મથી ગાઃ-વિદ્યા પ્રકાશયુક્ત વાણીઓથી અવિન્દન્-પ્રાપ્ત હોય, તેઓનું તમે પ્રભરધ્વમ્-ભરણ-પોષણ કર્યા કરો. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાનજનો વેદ, સૃષ્ટિ-કર્મ અને પ્રત્યક્ષ આદિ પ્રમાણો દ્વારા પ્રતિપાદિત ધર્મયુક્ત માર્ગથી ચાલીને પરમાત્માની ભક્તિ કરીને સર્વનું કલ્યાણ કરે છે, તેમ તમે પણ કરો. (૨)

इन्द्रस्याङ्गिरसां चेष्टौ विदत्स्रमा तनयाय धासिम् ।

बृहस्पतिर्भिनदत्रिं विदद्गाः समुस्त्रियाभिर्वावशन्त नरः ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે નરઃ-સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનારા મનુષ્યો ! જેમ સ્રમા-વિદ્યા, કર્મ આદિ બોધને ઉત્પન્ન કરનારી માતા તનયાય-પુત્રને માટે ધાસિમ્-અન્ન આદિ શ્રેષ્ઠ પદાર્થોને વિદત્-પ્રાપ્ત કરે છે.

જેમ બૃહસ્પતિઃ-મહાન પદાર્થોના રક્ષક સભાધ્યક્ષ; જેમ સૂર્ય ઉસ્ત્રિયાભિઃ-કિરણોથી અદ્રિમ્-મેઘનું ભિનત્-વિદારણ અને જેમ ગાઃ-સુરક્ષિત વાણીઓને વિદત્-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તમે પણ ઇન્દ્રસ્ય-પરમૈશ્વર્યવાન, પરમેશ્વર, સભાધ્યક્ષ અને સૂર્ય ચ-તથા અઙ્ગિરસામ્-વિદ્યા, ધર્મ અને રાજ્યયુક્ત વિદ્વાનોની ઇષ્ટૌ-ઈચ્છાને પ્રાપ્ત કરનારી નીતિમાં વિદ્યાદિ ઉત્તમ ગુણોનો સંવાવશન્ત-સારી રીતે વારંવાર પ્રકાશ કરો; જેથી સમસ્ત સંસારમાં અવિદ્યાદિ દુષ્ટ ગુણો નાશ પામે. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ-માતાની સમાન પ્રજાઓ-સંતાનોની સાથે વર્તન કરીને, સૂર્યની સમાન વિદ્યાદિ શુભગુણોને પ્રકાશિત કરીને, પરમેશ્વર દ્વારા પ્રોક્ત-કહેલ અને વિદ્વાનો દ્વારા આચરિત નીતિમાં સ્થિત થઈને તથા સર્વના ઉપકારનું કર્મ કરીને સદા સુખી રહેવું જોઈએ. (૩)

स सुष्टुभा स स्तुभा सप्त विप्रैः स्वरेणाद्रिं स्वयોर्इनवग्वैः ।

सरण्युभिः फलिगमिन्द्र शक्र वलं रवेण दरयो दशग्वैः ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે સઃ-તે ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર્યયુક્ત શક્ર-શક્તિને પ્રાપ્ત કરનાર સભાધ્યક્ષ ! જે આપ નવગ્વૈઃ-નવથી પ્રાપ્ત થયેલી ગતિ અને દશગ્વૈઃ-દશે દિશાઓમાં જવા સરણ્યુભિઃ-સર્વ શાસ્ત્રોમાં વિજ્ઞાન કરનારી ગતિઓથી યુક્ત વિપ્રૈઃ-બુદ્ધિમાન વિદ્વાનોની સાથે; જેમ સૂર્ય સુષ્ટુભા-ઉત્તમ દ્રવ્ય, ગુણ અને ક્રિયાઓથી સ્થિર કરનાર અને સ્તુભા-ધારણ કરનાર રવેણ-શસ્ત્રોના શબ્દથી, જેમ સૂર્ય સપ્ત-સાત સંખ્યાયુક્ત સ્વરોના મધ્યમાં વિદ્યમાન સ્વરેણ-ઉદાત્તાદિ તથા ષડ્જાદિ સ્વરથી અદ્રિમ્-બળયુક્ત ફલિગમ્-મેઘનું હનન કરે છે, તેમ શત્રુઓનું દરયઃ-વિદારણ કરો છો; સઃ-તે આપ અમારા દ્વારા સ્વર્યઃ-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય છો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ મેઘગર્જના-વિદ્યુત્ પોતાના ઉત્તમ ગુણોથી યુક્ત થઈને જીવનના હેતુ-ભૂત મેઘોત્પતિ

આદિ કર્મને સિદ્ધ કરે છે, તેમ સભા આદિના અધ્યક્ષ (=રાજા) વિદ્યા અને બળથી યુક્ત પરમોત્તમ પુરુષોની સાથે વર્તમાન વિદ્યા અને ન્યાયના પ્રકાશ દ્વારા સમસ્ત અન્યાયનો નાશ કરીને તથા દુષ્ટોનું નિવારણ કરીને ચક્રવર્તી રાજ્યનું શાસન-પાલન કરે. (૪)

गृणानो अङ्गिरोभिर्दस्म वि वरुषसा सूर्येण गोभिरन्धः ।

वि भूम्या अप्रथय इन्द्र सानु दिवो रज उपरमस्तभायः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-શત્રુઓનો **दस्म**-નાશ કરનાર સભાઅધ્યક્ષ ! **गृणानः**-ઉપદેશ કરીને આપ-જેમ વિદ્યુત્ **अङ्गिरोभिः**-પ્રાણ **उषसा**-પ્રાતઃકાળના **सूर्येण**-સૂર્યનો પ્રકાશ તથા **गोभिः**-કિરણો **अन्धः**-અન્નને પ્રકટ કરે છે-પ્રકાશિત કરે છે, તેમ ધર્મરાજ્ય અને સેનાને **विवः**-પ્રકટ કરો; તેમ વિદ્યુત્ને વિવિધ પ્રકારથી વિસ્તૃત કરો.

જેમ સૂર્ય **भूम्या**-પૃથિવીમાં શ્રેષ્ઠ **दिवः**-પ્રકાશને **सानु**-ઉપરના ભાગ **रजः**-સર્વ લોકો અને **उपरम्**-મેઘને **अस्तभायः**-સંયુક્ત કરે છે, તેમ ધર્મરાજ્યની સેનાનો વિસ્તાર કરો; અને શત્રુઓનું બંધન કરીને, આપ અમારા સર્વની સ્તુતિને યોગ્ય બનો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ-ઉષાકાળની સમાન, સૂર્યની સમાન, કિરણોની સમાન અને પ્રાણોની સમાન ઉત્તમ ગુણોને પ્રકાશિત કરીને દુષ્ટોનું નિવારણ કરવું જોઈએ.

જેમ સૂર્ય પોતાનો પ્રકાશ ફેલાવીને તથા મેઘને ઉત્પન્ન કરીને વર્ષા કરે છે, તેમ પ્રજાઓમાં ઉત્તમ વિદ્યા ઉત્પન્ન કરીને સુખની વર્ષા કરવી જોઈએ. (૫)

तदु प्रयक्षतममस्य कर्म दस्मस्य चारुतममस्ति दंसः ।

उपह्वरे यदुपरा अपिन्वन्मध्वर्णसो नद्यश्चतस्रः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમને યોગ્ય છે કે **अस्य**-એ **दस्मस्य**-દુઃખનાશક સભાઅધ્યક્ષ અને વિદ્યુત્ના **उपह्वरे**-કુટિલતાયુક્ત વ્યવહારમાં **यत्**-જે **प्रयक्षतमम्**-અત્યંત પૂજનીય **चारुतमम्**-અતિસુંદર **दंसः**-વિદ્યા અને સુખોને જાણવાના હેતુ **कर्म**-કર્મ, **अस्ति**-છે **तदु**-તેને જાણીને આચરણ કરવું જોઈએ; અને જેના એ પ્રકારના કર્મથી **मध्वर्णसः**-મધુર જળયુક્ત **नद्याः**-નદી અને **चतस्रः**-ચાર **उपराः**-દિશા **अपिन्वत्**-સેવન અને સિંચન કરે છે. તે બન્નેનું વિદ્યા દ્વારા સમ્યક્ સેવન કરવું જોઈએ. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ-શ્રેષ્ઠતમ કર્મ કરીને, યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને તથા રાજ્યનું પાલન કરીને સર્વ દિશાઓમાં યજ્ઞની વર્ષા વર્ષાવવી કરવી જોઈએ. (૬)

द्विता वि वत्रे सनजा सनीळे अयास्यः स्तवमानेभिरुकेः ।

भगो न मेने परमे व्योमन्नधारयद्रोदसी सुदंसाः ॥ ७ ॥

પદાર્થ : જેમ વિદ્વાનોથી જે સનીડે-સમીપ સ્તવમાનેભિઃ-સ્તુતિયુક્ત અર્કેઃ-સ્તોત્રોથી સનજા-સનાતન કારણથી ઉત્પન્ન થયેલ દ્વિતા-બે અર્થાત્ પ્રજા અને સભાધ્યક્ષનો વિવત્રે-વિશેષતઃ સ્વીકાર કરવામાં આવે છે, તેમ મનુષ્ય અયાસ્યઃ-અનાયાસથી સિદ્ધ કરનાર સુદંસાઃ-ઉત્તમ, કર્મયુક્તમાં, જેમ પરમે, વ્યોમન્-ઉત્તમ અન્તરિક્ષમાં રોદસી-પ્રકાશ અને ભૂમિને ભગો ન-સૂર્યની સમાન વિદ્વાન મેને-માને છે તથા અધારયત્-ધારણ કરે છે, તેમ તેને (હું) ધારણ કરું છું અને માનું છું. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ સભાપતિ દ્વારા ઐશ્વર્ય ધારણ કરવામાં આવે છે, જેમ સૂર્ય પ્રકાશ અને પૃથિવીને ધારણ કરે છે, તેમ મનુષ્યોએ ન્યાય અને વિદ્યા ધારણ કરવી જોઈએ. (૭)

સનાદિવં પરિ ભૂમા વિસ્ત્રપે પુનર્ભુવાં યુવતી સ્વેભિરેવૈઃ ।

કૃષ્ણોભિર્વક્તોષા રુશદ્ધિર્વપુભિરા ચરતો અન્યાન્યા ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે જેમ-સનાત્-સનાતન કારણોથી દિવમ્-સૂર્યનો પ્રકાશ અને ભુમા-ભૂમિને પ્રાપ્ત થઈને, પુનર્ભુવા-વારંવાર પર્યાયથી ઉત્પન્ન થઈને, યુવતી-યુવાવસ્થા પ્રાપ્ત થયેલી સ્ત્રી સમાન વિસ્ત્રે-વિભિન્ન રૂપથી યુક્ત, અક્તા-રાત્રિ, ઉષાઃ-દિવસ, સ્વેભિઃ-ક્ષણ આદિ અવયવ સ્થાદિભઃ-પ્રાપ્તિને માટે રૂપાદિ ગુણોની સાથે વપુભિઃ-પોતાની આકૃતિ આદિ શરીર અને કૃષ્ણોભિઃ-પરસ્પર આકર્ષણાદિને એવૈઃ-પ્રાપ્ત કરાવનાર ગુણોની સાથે અન્યાન્યા-ભિન્ન-ભિન્ન પરસ્પર મળેલા ચર્યાચરતઃ-જાય-આવે છે, તેમ સ્વયંવર અર્થાત્ પરસ્પરની પ્રસન્નતાથી વિવાહ કરીને એકબીજાની સાથે પ્રીતિપૂર્વક સદા આનંદમાં વર્તો. (૮)

ભાવાર્થ : જેવી રીતે રાત અને દિવસનું સંયુક્ત ચક્ર ચાલ્યા કરે છે, તેવી રીતે વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષોએ અત્યંત પ્રેમથી સર્વદા વર્તવું જોઈએ. (૮)

સનેમિ સ્વખ્યં સ્વપ્સ્યમાનઃ સૂનુદીધાર્ શવસા સુદંસાઃ ।

આમાસુ ચિદ્ધિષે પ્વક્વમન્તઃ પયઃ કૃષ્ણાસુ રુશદ્રોહિણીષુ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : જે સ્વપ્સ્યમાનઃ-ઉત્તમ કર્મ કરી રહેલાની સમાન સુદંસા-ઉત્તમ કર્મયુક્ત સ્થાત્-શુભ ગુણોની પ્રાપ્તિ કરીને, તું જેમ-સૂનુઃ-સત્યુત્ર પોતાના માતા-પિતાનું પોષણ કરવાની સમાન રાત્રિ-દિવસ સનેભિ-પ્રાચીન સખ્યમ્-મિત્રતાના કાળ-અવયવોને દાધાર-ધારણ કરીને તથા રોહિણીષુ-ઉત્પન્નશીલ કૃષ્ણાસુ-સર્વ રીતે પાકેલી ચિત્-અને આમાસુ-કાચી ઔષધિઓના અન્તઃ-મધ્યમાં પયઃ-રસને ધારણ કરે છે, તેમ શવસા-બળની સાથે ગૃહાશ્રમને દધિષે-ધારણ કર. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ દિવસ અને રાત પાકા-કાચા રસને ઉત્પન્ન કરનાર તથા ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થોની વૃદ્ધિ અને ઘ્રાસને કરનાર (થતા) સર્વના મિત્ર સમાન છે, તેમ વિદ્વાનોએ સર્વ મનુષ્યોની સાથે વર્તાવ કરવો જોઈએ. (૯)

सनात्सनीळा अवनीरवाता व्रता रक्षन्ते अमृताः सहोभिः ।

पुरू सहस्रो जनयो न पत्नीर्दुवस्यन्ति स्वसारो अह्याणम् ॥ १० ॥

पदार्थ : જેમ અવાતા:-હિંસારહિત અવની:-ભૂમિ સર્વની રક્ષા પુસ્સહસ્રા-અસંખ્ય-હજાર જનય:-ઉત્પન્ન કરનાર પતિ પત્ની:-ન-જેમ પોતાની સ્ત્રીઓની રક્ષા કરે છે, તેમ સનીડા:-સમીપમાં વિદ્યમાન અમૃતા-નાશરહિત વિદ્વાનજનો સહોભિ:-વિદ્યા, યોગ ધર્મવાળાથી સનાત્-સનાતન વ્રતા-સત્યધર્મના આચરણોની રક્ષન્તે-રક્ષા કરે છે. જેમ સ્વસાર:-બેનો અહ્યાણમ્-લજ્જાને અપ્રાપ્ત પોતાના ભાઈની દુવસ્યન્તિ-સેવા કરે છે, તેમ વિદ્યા અને ધર્મનું જ સેવન કરે છે, તેઓ મુક્તિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ પતિ લોકો પોતાની સ્ત્રીઓ, બેનો અને ભાઈઓની તથા વિદ્યાર્થીઓ આચાર્યોની સેવા કરીને સુખ અને વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ ધર્મ પર દૈવ રહેનાર ધર્માત્મા વિદ્વાન સ્ત્રી પુરુષ ધરમાં રહેવા છતાં પણ મુક્તિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૦)

સનાયુવો નમસા નવ્યો અર્કૈર્વસૂયવો મતયો દસ્મ દદ્રુઃ ।

પતિં ન પત્નીરુશ્તીરુશન્તૈ સ્પૃશન્તિ ત્વા શવસાવન્મનીષાઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે શવસાવન્-બળયુક્ત દસ્મ-અવિદ્યા-અંધકાર વિનાશક સભાપતે ! તું જેમ સનાયુવ:-સનાતન કર્મ કરનારાની સમાન આચરણ કરીને નમસા-અન્ન અને નમસ્કાર તથા અર્કૈ:-મંત્ર અર્થાત્ વિચારોની સાથે વિદ્યમાન વસૂયવ:-પોતાના માટે વિદ્યા, ધન અને મનીષા:-વિદ્વાનોની ઈચ્છા કરનાર મતય:-સર્વને જાણનારા વિદ્વાનો ન-જેમ નવ્ય:-નવીન ઝશન્તી:-કામની ચેષ્ટાથી યુક્ત પત્ની:- સ્ત્રી ઝશન્તમ્-ઈચ્છા કરનાર પતિમ્-પતિનું સ્પૃશન્તિ-આલિંગન કરે છે; અને જેમ દદ્રુ:-કુટિલ ગતિને પ્રાપ્ત થનારને જાણે છે, તેમ ત્વા-તારું પ્રજા સેવન કરે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ પત્ની અને પતિનું એક સાથે રહેવાથી સંતાન ઉત્પન્ન થાય છે, તેમ રાત્રિ અને દિવસને સાથે વર્તમાન હોવાથી સર્વ વ્યવહાર સિદ્ધ થાય છે અને જેમ સૂર્યનો પ્રકાશ અને ભૂમિની છાયા વિના તે બન્નેની ઉત્પત્તિ સંભવ નથી, તેમ પતિ-પત્ની વિના મૈથુની સૃષ્ટિની ઉત્પત્તિ સંભવ નથી. (૧૧)

સનાદેવ તવ રાયો ગભસ્તૌ ન ક્ષીયન્તે નોપ દસ્યન્તિ દસ્મ ।

દ્યુમાં અસિં ક્રતુમાં ઇન્દ્ર ધીરઃ શિક્ષા શચીવસ્તવ નઃ શચીંભિઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે દસ્મ-શત્રુનાશક શચીવ:-ઉત્તમ બુદ્ધિ અને વાણીથી યુક્ત ઇન્દ્ર-ઉત્તમ ધનવાન સભાધ્યક્ષ ! જે આપ-દ્યુમાન્-વિદ્યાદિ શ્રેષ્ઠ ગુણોના પ્રકાશથી યુક્ત ક્રતુમાન્-બુદ્ધિથી વિચાર કરીને કર્મ કરનાર ધીર:-ધ્યાની અસિ-છો. તે તવ-આપની ગભસ્તૌ-રાજનીતિના પ્રકાશમાં સનાત્-સનાતનથી રાય:-ધન નૈવ-નહિ ક્ષીયન્તે-ક્ષીણ તથા તવ-આપના પ્રબંધમાં ન-નહિ ઉપદસ્યન્તિ-નષ્ટ થાય છે. (અર્થાત્ નાશ પામતું નથી.) તે આપ આપની શચીંભિ:-બુદ્ધિ, વાણી અને કર્મથી ન:-અમને શિક્ષ-ઉપદેશ આપો.

ભાવાર્થ : જે સનાતન વેદરૂપી વિજ્ઞાનથી શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને, સભા આદિના અધ્યક્ષ બનીને, પ્રજાઓનું પાલન કરે, તે મનુષ્યને ધાર્મિક જાણવો. (૧૨)

સુનાયતે ગોતમ ઇન્દ્ર નવ્યમતક્ષુદ્ બ્રહ્મ હરિયોજનાય ।

સુનીથાય નઃ શવસાન નોધાઃ પ્રાતર્મક્ષુ ધિયાવસુર્જગમ્યાત્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : શવસાન-બળયુક્ત ઇન્દ્ર-ઉત્તમ ધનવાન સભાધ્યક્ષ ધિયાવસુઃ-બુદ્ધિ અને કર્મની સાથે વસનાર, ગોતમઃ-અત્યંત સ્તુતિને યોગ્ય તથા નોધાઃ-સ્તુતિ કરનાર આપ હરિયોજનાય-મનુષ્યોના સમાધાન માટે નવ્યમ્-નવીન બ્રહ્મ-મહાન ધનને અતક્ષુ-ક્ષીણ કરો છો, નઃ-અમને, સુનીથાય- સુખોની પ્રાપ્તિ માટે પ્રાતઃ-પ્રતિદિન, મક્ષુ-શીઘ્ર સનાયતે-સનાતન સમાન આચરણ કરો છો; તથા અમારા સુખોને માટે શીઘ્ર જગમ્યાત્-પ્રાપ્ત થાઓ. (૧૨)

ભાવાર્થ : સભા આદિના મનુષ્યોએ-તેઓનાં હિતને માટે પ્રતિદિન નવા નવા ધન અને અન્ન પ્રાપ્ત કરાવે. જેમ પ્રાણરૂપ વાયુ સુખ પહોંચાડે છે, તેમ સર્વને સુખી કરે. (૧૩)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર, સભાધ્યક્ષ, દિવસ, રાત, વિદ્વાન, સૂર્ય અને વાયુના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે આ સૂક્તાર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૬૨)

સૂક્ત-૬૩

ત્વં મહાં ઇન્દ્ર યો હ શુષ્મૈર્દ્યાવાં જજ્ઞાનઃ પૃથિવી અમે ધાઃ ।

યદ્દ તે વિશ્વા ગિરયશ્ચિદભ્વા ભિયા દૃઽઙ્ઘાસઃ કિરણા નૈજન્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર્યપ્રદ પરમાત્મન્ ! જે ત્વમ્-આપ મહાન્-અનંત ગુણયુક્ત જજ્ઞાનઃ-પ્રસિદ્ધ શુષ્મૈઃ-બળાદિના અમે-પ્રકાશમાં હ-નિશ્ચયપૂર્વક દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશ અને પૃથિવીને ધાઃ-ધારણ કરો છો. તે-આપના અભ્વા-ઉત્પન્ન રહિત સામર્થ્યના ભિયા-ભયથી હ-જ યત્-જે વિશ્વા-સર્વ ગિરયઃ-પર્વત અને મેઘ દઘ્વાસઃ-દૃઢ થયેલ છે; ચિત્-અને કિરણાઃ-કાન્તિ નૈજન્-કદી પણ કંપનને પ્રાપ્ત થતી નથી. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એમ સમજવું જોઈએ કે જે પરમૈશ્વર પોતાનાં સામર્થ્ય અને બળ આદિથી સમસ્ત જગતને રચીને પોતાનાં સામર્થ્યથી તેનું દૃઢતાપૂર્વક ધારણ કરે છે, તે જ સદા ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે.

જે સૂર્યલોકનાં દ્વારા પોતાનાં આકર્ષણ ગુણથી પૃથિવી આદિ લોકોનું ધારણ કરવામાં આવે છે, તે પણ પરમૈશ્વર દ્વારા રચવામાં આવેલ છે અને ધારણ કરવામાં આવેલ છે. તેમ જાણવું જોઈએ. (૧)

આ યદ્દરી ઇન્દ્ર વિવ્રતા વેરા તે વઙ્ગં જરિતા બાહ્વોર્ધીત્ ।

येनाविहर्यतक्रतो अमित्रान्पुरं इष्णासि पुरुहूत पूर्वीः ॥ २ ॥

पદાર્થ : હે અવિહર્યતક્રતો-દુષ્ટબુદ્ધિ અને પાપકર્મોથી રહિત, પુસ્કૂત-અનેક વિદ્વાનોથી સત્કારને પ્રાપ્ત કરાવનાર સભાધ્યક્ષ ! આપ યત્-જે કારણે વિવ્રતા-અનેક પ્રકારના નિયમોને ઉત્પન્ન કરનાર હરી-સેનાના અને ન્યાયના પ્રકાશને આવે:-સારી રીતે જાણો છો.

येन-જે વજ્ર દ્વારા અમિત્રાન્-શત્રુઓને મારો છો તથા જેનાથી તેના પૂર્વી:-અનેક પુર:-નગરોને ઇષ્णाસિ-જીતવાની ઈચ્છા કરો છો તથા શત્રુઓનો પરાજય અને પોતાના વિજય માટે પ્રતિક્ષણ જાઓ છો, એથી જરિતા-સમસ્ત વિદ્યાઓથી સ્તુતિ કરનાર મનુષ્ય તે-આપની બાહ્યો:-(ભુજાઓના બળના આશ્રયથી વજ્રમ્-આધાત્-ધારણ કરે છે. (૨)

ભાવાર્થ : સભા આદિના અધ્યક્ષ મનુષ્યોએ એવા પ્રકારના શીલ-સ્વભાવ, ગુણ અને કર્મને અપનાવવા-સ્વીકારવા જોઈએ; જેથી સર્વ મનુષ્યો તેના એ શીલ આદિને જોઈને શિષ્ટ બનીને નિષ્કપટ રાજ્યસુખને સદા ભોગવે. (૨)

त्वं सत्य इन्द्र धृष्णुरेतान्त्वमृभुक्षा नर्यस्त्वं षाट्।

त्वं शुष्णं वृजनें पृक्ष आणौ यूने कुत्साय द्युमते सचाहन् ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર પ્રદાતા સભાધ્યક્ષ ! ત્વમ્-આપ-જે કારણે સત્ય:-જીવ સ્વરૂપથી અનાદિ છો, જે કારણે ત્વમ્-આપ ધૃષ્ણુ:-દેહ છો, જે કારણે ત્વમ્-આપ ઋષ્મુક્ષા:-ગુણોથી મહાન છો, નર્ય:-મનુષ્યોમાં ચતુર છો તથા ષાટ્-સહનશીલ છો, વૃજને-તેથી જેમાં શત્રુઓને પ્રાપ્ત થાઓ છો, પૃક્ષે-સંયુક્ત એકત્ર થાઓ છો, જેમાં તે આણૌ-સંગ્રામમાં સચા-શિષ્ટોનાં સંબંધથી કુત્સાય-શસ્ત્રોને ધારણ કરેલ દ્યુમતે-ઉત્તમ પ્રકાશયુક્ત યૂને-શરીર અને આત્માના બળને પ્રાપ્ત કરેલ મનુષ્યને માટે શુષ્ણમ્-પૂર્ણ બળને પ્રદાન કરો છો. જે કારણે આપ શત્રુઓને અહન્-મારીને તથા દ્યાન્-એ ધર્માત્મા શ્રેષ્ઠ પુરુષોનું પાલન કરો છો, તેથી પૂજનીય છો. (૩)

ભાવાર્થ : સભા અને સભા આદિના અધ્યક્ષ વિના શત્રુઓનો પરાજય અને રાજ્યનું પાલન ઉચિત રૂપમાં થતું નથી, એટલા માટે સર્વ મનુષ્યોએ શિષ્ટ ગુણયુક્ત એ બન્નેના દ્વારા એ બન્ને કાર્યો કરાવવા જોઈએ. (૩)

त्वं ह त्यदिन्द्र चोदीः सखा वृत्रं यद्वज्रिन्वृषकर्मन्नुभ्नाः।

यद्ध शूर वृषमणः पराचैर्वि दस्यूर्योनावकृतो वृथाषाट् ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે વજ્રિન્-શ્રેષ્ઠ શસ્ત્રધારક તથા ઇન્દ્ર-ઉત્તમ ગુણ જ્ઞાતા સભાધ્યક્ષ ! જે કારણે ત્વમ્-આપ હ-નિશ્ચયપૂર્વક ત્યત્-તે વૃત્રમ્-શત્રુને પરાચૈ:-દૂર ચોદી:-કરી દો છો, એ કારણે શ્રેષ્ઠ પુરુષોનું ધારણ અને પાલન કરવાને સમર્થ છો.

હે વૃષકર્મન્-શ્રેષ્ઠ મનુષ્યોની સમાન ઉત્તમ કર્મ કરનાર સભાધ્યક્ષ ! યત્-જે કારણે આપ સચા-
અગ્વેદભાષ્ય

સર્વના મિત્ર હોવાથી મિત્રોની રક્ષા કરો છો. હે શૂર-નિર્ભય સેનાધ્યક્ષ ! યત્-જે આપ હ-નિશ્ચયપૂર્વક દસ્યૂન્-પારકા પદાર્થોને છીનનારા દુષ્ટોનું અકૃતઃ-દૂરથી વિ-વિશેષ કરીને છેદન કરો છો, તેથી પ્રજાની રક્ષા કરવાને યોગ્ય છો.

હે વૃષમણઃ-શૂરવીરોમાં વિચારશીલ સભાધ્યક્ષ ! આપ જે કારણે સુખોને ઝખ્નાઃ-પૂર્ણ કરો છો, તેથી સત્કાર કરવા યોગ્ય છો. હે સભાધ્યક્ષ ! જે કારણે આપ વૃથાષાટ્-સહજ સ્વભાવથી સહન કરનાર છો, તેથી યોનૌ-ઘરમાં રહેનાર સર્વ મનુષ્યોના સુખોને પૂર્ણ કરો છો. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ (એ જાણવું જોઈએ કે) જેમ સૂર્ય પોતાના પ્રકાશથી સર્વને આનંદિત કરીને, મેઘને ઉત્પન્ન કરીને, તેને વરસાવે છે અને અંધકારને દૂર કરીને પ્રકાશિત થાય છે, એ જ રીતે સભા આદિના અધ્યક્ષ વિદ્યા આદિ શુભ ગુણોથી સર્વને સુખી કરીને, શરીર તથા આત્માના બળને ઉત્પન્ન કરીને; ધર્મ, શિક્ષા તથા અભયની વર્ષા કરીને, અધર્મરૂપી અંધકારનું તથા શત્રુઓનું નિવારણ કરીને રાજ્યમાં પ્રકાશિત બને. (૪)

ત્વં હ ત્યદિન્દ્રારિષ્ણયન્દૃહસ્ય ચિન્મર્ત્તાનામજુષ્ટૌ ।

વ્યસ્મદા કાષ્ટા અર્વતે વર્ષનેવ વઙ્ગિઞ્ચ્છનથિહ્યમિત્રાન્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે અરિષ્ણયન્-પોતાના શરીરથી હિંસા અને અધર્મની ઈચ્છા નહીં કરનાર, વઙ્ગિન્-ઉત્તમ આયુધો-શસ્ત્રોથી યુક્ત ઇન્દ્ર-સભાપતે ! ત્વમ્-આપ હ-પ્રસિદ્ધ અસ્મત્-અમારી અર્વતે-ઘોડા આદિ ધનોથી યુક્ત સેનાને માટે વ્યાવઃ-અનેક પ્રકારથી સ્વીકાર કરો છો. ત્વત્-તે દૃહસ્ય-સ્થિર રાજ્ય ચિત્-અને મર્તાનામ્-પ્રજાના મનુષ્યોને શત્રુઓની અજુષ્ટૌ-અપ્રીતિ થવામાં ઘનેવ-જેમ સૂર્ય મેઘને કાપીને અમિત્રાન્-ધર્મ વિરોધી શત્રુઓને કાષ્ટાઃ-દિશાઓ પ્રતિ ઇનથિહિ-મારો. (૫)

ભાવાર્થ : સભા આદિના અધ્યક્ષો (= સભાપતિ અને સેનાપતિ) રાજ્ય અને સેના પ્રત્યે પ્રેમ ઉત્પન્ન કરીને તથા શત્રુઓ પ્રત્યે દ્વેષ ઉત્પન્ન કરીને, જેમ સૂર્ય મેઘોને છિન્ન-ભિન્ન કરે છે, તેમ દુષ્ટોને સદા છિન્ન-ભિન્ન કરવા જોઈએ. (૫)

ત્વાં હ ત્યદિન્દ્રાણીસાતૌ સ્વર્મીઠ્ઠે નર આજા હવન્તે ।

તવ સ્વધાવ ડ્યમા સમર્ય કૃતિર્વાજેષ્વતસાચ્યા ભૂત્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે સ્વધાવઃ-ઉત્તમ અન્ન અને ઇન્દ્ર-શ્રેષ્ઠ પદાર્થને પ્રાપ્ત કરાવનાર જગદીશ્વર અને સભાધ્યક્ષ ! નરઃ-રાજનીતિ જાણનાર મનુષ્ય ત્વત્-તે અર્ણસાતૌ-વિજય પ્રાપ્ત કરાવનાર શૂરવીર યોદ્ધા મનુષ્યોનું સેવન હોય, જે સ્વર્મીઠ્ઠે-સુખથી સિંચવાથી યુક્ત આજૌ-સંગ્રામમાં ત્વામ્-આપનું હ-નિશ્ચયપૂર્વક આહવન્તે-આહ્વાન કરીએ છીએ.

જે કારણે તવ-આપની જે ઇચ્છા-એ સમર્થ-સંગ્રામ અને વાજેષુ-વિજ્ઞાન, અન્ન અને સેનાદિમાં અતસાચ્યા-નિરંતર સુખોની પ્રાપ્તિ કરાવનારી કૃતિ:-રક્ષણ આદિ ક્રિયા છે, તે અમને પ્રાપ્ત ભૂત-થાય. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વ ધર્મ સંબંધી કાર્યોમાં ઈશ્વર અને સભાધ્યક્ષની સહાય લઈને નિત્ય સંપૂર્ણ કાર્યો સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૬)

ત્વં હ ત્યદિન્દ્ર સપ્ત યુધ્વન્પુરો વજ્રિન્પુરુકુત્સાય દર્દઃ ।

બર્હિન યત્સુદાસે વૃથા વર્ગ્હો રાજન્વરિવઃ પૂર્વે કઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે વજ્રિન્-ઉત્તમ શસ્ત્રોથી યુક્ત રાજન્-પ્રકાશક તથા ઇન્દ્ર-વિજય પ્રદાતા સભાના અધિપતિ ! જે આપના સપ્ત-સભા, સભાસદ્, સભાપતિ, સેના, સેનાપતિ, કર્મચારી અને પ્રજા એ સાત છે. તેની સાથે પ્રેમથી રહીને, શત્રુઓની સાથે યુધ્વન્-યુદ્ધ કરીને, જે કારણે તમે તે તે શત્રુઓના પુરઃ-નગરોનું દર્દઃ-વિદારણ કરો છો.

જે આપ અંહો-કરવા યોગ્ય રાજ્યના પુસ્કુત્સાય-અનેક મનુષ્યોને ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પૂર્વે-પૂર્ણ સુખને માટે યત્-જે વરિવઃ-સેવન કરવા યોગ્ય પદાર્થનું સુદાસે-ઉત્તમ દાતા મનુષ્યોથી યુક્ત દેશમાં બર્હિઃ-અન્તરિક્ષની ન-સમાન કઃ-કરો છો યત્-જે વૃથા-વ્યર્થ કામ કરનાર મનુષ્ય હોય, ત્યત્-તેને વર્ક્-વર્જિત કરો છો, એ કારણે અમારા સર્વના સત્કાર કરવા યોગ્ય છો. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય સંસારના કલ્યાણ માટે મેઘને નષ્ટ કરી નીચે (જળરૂપમાં) વરસાવે છે, તેમ સર્વના અધિપતિ સભાપતિ (= રાજા) સર્વ પ્રાણીઓનું હિત સિદ્ધ કરે. (૭)

ત્વં ત્યાં નં ઇન્દ્ર દેવ ચિત્રામિષમાપો ન પીપયઃ પરિજ્મન્ ।

યયા શૂર પ્રત્યસ્મભ્યં યંસિ ત્મનમૂર્જં ન વિશ્વધ ક્ષરંધ્યૈ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યુત્ સમાન પરિજ્મન્-સર્વત્રથી દુષ્ટોનો નાશ કરનાર, વિશ્વધ-વિશ્વને ધારણ કરનાર, શૂર-નિર્ભય દેવ-વિદ્યા અને શિક્ષાનો પ્રકાશ કરનાર અને ઇન્દ્ર-સુખ પ્રદાતા સભાધ્યક્ષ ! જે ત્વમ્-આપ યયા-જેથી નઃ-અમારા ત્મનમ્-આત્માને ક્ષરંધ્યૈ-સંચલિત-ચલાયમાન થવા માટે ઝર્જમ્-અન્ન અને પરાક્રમની ન-સમાન યંસિ-દુષ્ટ કર્મથી રોકી દો છો. ત્યમ્-તે ચિત્રામ્-અદ્ભુત સુખોને કરનારી ઇષમ્-ઈચ્છા તથા અન્નને અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે આપો ન-જળની સમાન પ્રતિપીપયઃ-વારંવાર પાન કરાવો છો, તેમ અમે પણ આપને સારી રીતે પ્રસન્ન કરીએ. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ અન્ન ભૂખને અને જળ તરસને નિવૃત્ત કરીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, તેમ સભાધ્યક્ષ આદિ પ્રજાને સુખી કરે. (૮)

અકારિ ત ઇન્દ્ર ગોતમેભિર્બ્રહ્માણ્યોક્તા નમસા હરિંભ્યામ્ ।

૨૮૫

૨૮૫

सुपेशसं वाजमा भरा नः प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् ॥ १ ॥

पदार्थ : हे इन्द्र-सत्माध्यक्ष ! ते-आपनी જે ગોતમેભિઃ-વિદ્યાથી ઉત્તમ શિક્ષાને પ્રાપ્ત કરેલ શિક્ષિત પુરુષોથી નમસા-અન્ન અને ધન હરિભ્યામ્-બળ અને પરાક્રમથી જે ઓક્તા-સારી રીતે પ્રશંસિત બ્રહ્માણિ-સર્વોત્કૃષ્ટ અન્ન અને ધનને અકારિ-કરો છો; તેઓની સાથે નઃ-અમારા માટે તેઓને જેમ ધિયાવસુઃ-કર્મ અને બુદ્ધિથી સુખોમાં વસાવનાર વિદ્વાન સુપેશસમ્-ઉત્તમરૂપ યુક્ત વાજમ્-વિજ્ઞાન સમૂહને પ્રાતઃ-પ્રતિદિન જગમ્યાત્-પુનઃ પુનઃ પ્રાપ્ત કરીએ અને તેને ધારણ કરીએ, તેમ આપ પૂર્વોક્ત સર્વને મક્ષુ-શીઘ્ર આભર-સર્વત્રથી ધારણ કરો. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુત્ સૂર્ય આદિનાં રૂપમાં સમસ્ત સંસારને પુષ્ટ કરે છે, તેમ સભાધ્યક્ષ આદિ પ્રજાને ઉત્તમ ધન આદિથી સંપન્ન કરે. (૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર, સભાધ્યક્ષ અને અગ્નિના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તાર્થની સાથે પૂર્વ સૂક્તાર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૬૩)

સૂક્ત-૬૪

વૃષ્ણો શર્દ્ધીય સુમંચાય વેધસે નોધઃ સુવૃક્તિં પ્ર ભરા મરુદ્ધયઃ ।

અપો ન ધીરો મનસા સુહસ્ત્યો ગિરઃ સમંજ્જે વિદથૈષ્વાભુવઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે નોધઃ-સ્તુતિ કરનાર મનુષ્ય ! આભુવઃ-સમ્યક્ ઉત્પન્ન થનાર અપઃ-કર્મ અને પ્રાણીઓની સમાન ધીરઃ-સંયમિત વિદ્વાન ! સુહસ્ત્યઃ-ઉત્તમ હસ્તક્રિયાઓમાં કુશળમાં મનસા-વિજ્ઞાન અને મરુદ્ધયઃ-વાયુના સાનિધ્યથી વિદથૈષુ-યુદ્ધાદિ ચેષ્ટામય યજ્ઞોમાં ગિરઃ-વાણી સુવૃક્તિમ્-ઉત્તમતાથી દુષ્ટોને રોકનારી ક્રિયાને સમંજ્જે-પોતાની ઈચ્છાથી ગ્રહણ કરું છું, તેમ તું પણ પ્રભર-ધારણ કર. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને, જેટલી ચેષ્ટા, ભાવના, બળ, વિજ્ઞાન, પુરુષાર્થ, ધારણ, ત્યાગ, ઉચ્ચારણ શ્રવણ, વૃદ્ધિ, હાસ, ભૂખ અને તરસ આદિ થાય છે. તે સર્વ વાયુના નિમિત્તથી થાય છે, એમ જાણવું જોઈએ. જે રીતે એ વિદ્યાને હું જાણું છું, તેમ તું પણ ગ્રહણ કર, એવો સદા ઉપદેશ કરવો જોઈએ. (૧)

તે જજિરે દિવ ઋષ્વાસં ઉક્ષણોં રુદ્રસ્ય મર્યાં અસુરા અરેપસઃ ।

પાવકાસઃ શુચયઃ સૂર્યાં ઇવ સત્વાનો ન દ્રપ્સિનોં ઘોરવર્પસઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે લોકોને ઉચિત છે કે જે રુદ્રસ્ય-જીવ અને પ્રાણ સંબંધી વાયુ દિવઃ-પ્રકાશથી જજિરે-ઉત્પન્ન થાય છે, જે સૂર્યાંઇવ-સૂર્યના કિરણોની સમાન ઋષ્વાસઃ-જ્ઞાનના હેતુ ઉક્ષણઃ-સિંચન અને પાવકાસઃ-પવિત્ર કરનાર શુચયઃ-શુદ્ધ, જે સત્વાનો-બળ અને પરાક્રમ યુક્ત પ્રાણીઓની ન-સમાન, મર્યાં-મરણધર્મયુક્ત, અસુરાઃ-પ્રકાશરહિત, અરેપસઃ-પાપોથી પૃથક્ દ્રપ્સિનઃ-અનેક પ્રકારના મોહથી યુક્ત ઘોરવર્પસઃ-ભયંકર (ગુણ) વાયુના છે, તે-તેના સંગથી વિદ્યાદિ ઉત્તમ ગુણોનું ગ્રહણ

કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાં સિંહ, હાથી અને મનુષ્ય આદિ બળવાન છે, તેમ પવન છે જેમ સૂર્યનાં કિરણો પવિત્ર કરનાર છે, તેમ વાયુ પણ છે. તેના વિના રોગ, સ્વાસ્થ્ય, મૃત્યુ તથા જન્મ આદિ વ્યવહારો થવા સંભવ નથી, તેથી મનુષ્યોએ તેના ગુણોને જાણીને સર્વ કાર્યોમાં યોગ્ય રીતે તેનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૨)

યુવાનો રુદ્રા અજરા અભોગ્ધનો વવક્ષુરધિગાવઃ પર્વતા ઇવ ।

દૂઠ્ઠા ચિદ્વિશ્વા ભુવનાનિ પાર્થિવા પ્ર ચ્યાવયન્તિ દિવ્યાનિ મ્જ્મના ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે એ પર્વતાઇવ-પર્વત અને મેઘની સમાન ધારણ કરનાર યુવાનઃ-પદાર્થોના મિશ્રણ અને પૃથક કરવામાં મહાન બળવાન અભોગ્ધનઃ-ભોજન કરવા અને મરવાથી પૃથક્, અધિગાવઃ-કિરણો નહિ ધારણ કરનાર અર્થાત્ પ્રકાશ રહિત, અજરાઃ-જન્મ લઈને વૃદ્ધ થવું ફરી મરવું વગેરે કાર્યોથી રહિત તથા કારણરૂપથી નિત્ય, સ્તાઃ-જ્વર આદિની પીડાથી રડાવનાર વાયુ જીવોને વવક્ષુઃ-રુષ્ટ કરે છે. મ્જ્મના-બળથી પાર્થિવા-ભૂગોળ આદિ દિવ્યાનિ-પ્રકાશમાં રહેનાર સૂર્યલોક ચિત્-અને, વિશ્વા-સર્વ, ભુવનાનિ-લોક દૃઢા-દૃઢ અને સ્થિરને પણ પ્રચ્યાવયન્તિ-ચલાયમાન કરે છે, તે (વાયુ)ને વિદ્યાથી યથાવત્ જાણીને કાર્યોમાં લગાવવો જોઈએ. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જેમ મેઘ જળનો આધાર છે અને પર્વત ઔષધિ આદિનો આધાર છે, તેમ એ પવન સંયોગ-વિભાગનો કર્તા, સર્વનો આધાર, સુખ-દુઃખનો નિમિત્ત, નિત્ય, રૂપરહિત અને સ્પર્શગુણયુક્ત છે, તેમ જાણવું જોઈએ. તેના વિના ભૂગોળ, જળ તથા અગ્નિના સમૂહ અને તેના કણ=પરમાણું જવા-આવવા-સ્થિર રહેવામાં સમર્થ બની શકતા નથી. (૩)

ચિત્રૈર્જ્જિભિર્વપુષે વ્યજ્જતે વક્ષઃસુ રુક્માઃ અધિ યેતિરે શુભે ।

અંસેષ્વેષાં નિ મિમૃક્ષુર્ઋષ્ટયઃ સાકં જજિરે સ્વધયા દિવો નરઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે એ ઋષ્ટયઃ-ગમનાગમનશીલ તથા નરઃ-પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનાર પવન ચિત્રૈઃ-આશ્ચર્યરૂપ ક્રિયા, ગુણ અને સ્વભાવ તથા અજ્ઞિભિઃ-પ્રકટ કરવા આદિ ધનોથી શુભે-સુંદર વપુષે-શરીરના ધારણ અને પોષણને માટે વ્યજ્જતે-વિશેષ કરીને પ્રાપ્ત થાય છે, જે વક્ષઃસુ-હૃદયોમાં સ્ક્માન્-વિદ્યુત્ તથા જઠરાગ્નિના પ્રકાશોને અધિયેતિરે-યત્નપૂર્વક સિદ્ધ કરે છે સ્વધયા-પૃથિવી, આકાશ તથા અન્નની સાકમ્-સાથે જાયન્તે-ઉત્પન્ન થાય છે અને દિવઃ-સૂર્ય આદિના પ્રકાશોને ઉત્પન્ન કરે છે. ણ્ણમ્-એ પવનોના યોગથી અંસેષુ-બળ અને પરાક્રમનું મૂળ સ્કંધોમાં નિમિમૃક્ષુઃ-સર્વ પદાર્થ સમૂહને પ્રાપ્ત થઈ શકે છે, તેને યથાવત્ રીતે જાણીને પોતાના કાર્યોમાં પ્રયુક્ત કરો. (૪)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ આ પ્રકારના દિવ્ય ગુણોવાળા પવનોનું જ્ઞાન કરીને શુદ્ધ સુખ ભોગવવા જોઈએ. (૪)

ઈશાનકૃતો ધુનયો રિશાદસો વાતાન્વિદ્યુતસ્તવિષીભિરક્રત ।

મહાવેદભાષ્ય

૨૯૭

दुहन्त्यूर्धदिव्यानि धूतयो भूमिं पिन्वन्ति पर्यसा परिज्रयः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે એ **ઈશાનકૃતઃ**-જીવોને ઐશ્વર્યયુક્ત કરનાર, **ધુનયઃ**-ધૂળને વર્ષાવનાર, વૃક્ષાદિને કંપાવનાર, **રિશાદસઃ**-જીવોને દુઃખદાયક રોગોનો નાશ કરનાર, **ધૂતયઃ**-સર્વ પદાર્થોને કંપાવનાર અને **પરિજ્રયઃ**-સર્વત્રથી પદાર્થોને જીર્ણ કરનાર વાયુ **તવિષીભિઃ**-પોતાના બળથી **વિદ્યુતઃ**-વિદ્યુત્ આદિને **અક્રત**-ઉત્પન્ન કરે છે તથા જે **પયસા**-જળ અને રસથી **ઊઘઃ**-ઉષાને **દુહન્તિ**-પૂર્ણ કરે છે; જે **ભૂમિમ્**-પૃથિવી, **દિવ્યાનિ**-શુદ્ધ જળ આદિ વસ્તુ તથા ઉત્તમ કાર્યોનું **પિન્વન્તિ**-સેવન અને સિંચન કરે છે, **વાતાન્**-તે પવનોને જાણો. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમારા માટે ઈશ્વર વાયુના ગુણોનો ઉપદેશ કરે છે. કથિત અને અકથિત ગુણયુક્ત વાયુ, વિદ્યુતનાં ઉત્પાદન દ્વારા, વર્ષા દ્વારા તથા ભૂમિ અને ઔષધિ આદિના સિંચન દ્વારા સર્વ પ્રાણીઓને સુખ પ્રદાન કરે છે, તેમ જાણો. (૫)

પિન્વન્ત્યપો મરુતઃ સુદાનવઃ પયો ઘૃતવદ્વિદથષ્વાભુવઃ ।

અત્યં ન મિહે વિ નયન્તિ વાજિનમુત્સં દુહન્તિ સ્તનયન્તમક્ષિતમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ **આભુવઃ**-સારી રીતે ઉત્પન્ન થનાર તથા **સુદાનવઃ**-ઉત્તમ દાનપ્રદાન હેતુ **મસ્તઃ**-પવન **વિદથેષુ**-યજ્ઞોમાં **ઘૃતવત્**-ઘીની સમાન **પયઃ**-જળ અને રસને **પિન્વન્તિ**-સેવન અને સિંચન કરે છે. **મિહે**-વીર્ય વૃષ્ટિને માટે **અત્યમ્**-ઘોડાની ન-સમાન **અપઃ**-પ્રાણ, જળ અને અન્તરિક્ષના અવયવોને **વિનયન્તિ**-અનેક પ્રકારે પ્રાપ્ત કરે છે. **ઉત્સમ્**-અને કૃવાની સમાન **અક્ષિતમ્**-નાશરહિત **સ્તનયન્તમ્**-શબ્દ કરીને **વાજિનમ્**-ઉત્તમવેગયુક્ત પુરુષને **દુહન્તિ**-પૂર્ણ કરે છે, તેમ કરો અને તેને કાર્યોમાં યુક્ત કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ યજ્ઞોમાં (પ્રયોગ માટે) ઘૃત્ આદિની હવિ; ખેતર અને પશુ આદિની દિપ્તિ કુવા અને ઘોડીમાં વીર્ય સેચનને માટે ઘોડો છે, તેમજ વિદ્યાની સાથે સમ્યક્ પ્રયોગ કરેલ પવન સમસ્ત કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે. (૬)

મહિષાસો માયિનશ્ચિત્રભાનવો ગિરયો ન સ્વતવસો રઘુષ્યદઃ ।

મૃગા ઇવ હસ્તિનઃ ખાદથા વના યદારુણીષુ તવિષીરયુઘ્ધવમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે **યત્**-જેમ **મહિષાસઃ**-મહાન સેવન કરવા યોગ્ય ગુણોથી યુક્ત **ચિત્રભાનવઃ**-ચિત્ર-વિચિત્ર દીપ્તિવાળા **માયિનઃ**-ઉત્તમ બુદ્ધિ હોવાના કારણે **સ્વતવસઃ**-પોતાના બળથી બળવાન **રઘુષ્યદઃ**-સારા સ્વાદને કારણે અને ઉત્તમ ચાલન ક્રિયાથી યુક્ત **ગિરયો ન**-મેઘોની સમાન જળને તથા **હસ્તિનઃ**-હાથી અને **મૃગાઙ્ગ**-બળવાન હરણોની સમાન વેગયુક્ત વાયુ **વના**-જળ અને વનોનું **ખાદથ**-ભક્ષણ કરે છે, તેમ એ **તવિષીઃ**-બળોને **આસ્મીષુ**-પ્રાપ્ત થાય છે (અર્થાત્ જેમાં સુખ પ્રાપ્ત થાય છે.); તે

સેના અને યાનોની ક્રિયાઓમાં અયુગ્ધ્વમ્-ઠીક રીતે વિચારપૂર્વક સંયુક્ત કરો. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા વાયુ વિના ગમન, ભોજન તથા યાનચાલન આદિ કર્મ કરી શકાતા નથી, એટલા માટે તે વાયુઓનો વિમાન અને નૌકા આદિ (યાનોમાં) સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને અગ્નિ અને જળના યોગથી યાનોનું શીઘ્ર સંચાલન કરવું જોઈએ. (૭)

સિંહા ઇવ નાનદતિ પ્રચેતસઃ પિશા ઇવ સુપિશૌ વિશ્વવેદસઃ ।

ક્ષપો જિન્વન્તઃ પૃષ્ઠતીભિર્ઋષ્ટિભિઃ સમિત્સબાધઃ શવસાહિમન્યવઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે પ્રચેતસઃ-ઉત્તમ વિજ્ઞાન થવા માટે સુપિશઃ-સુંદર અવયવોને કરનાર સબાધઃ-પદાર્થોને પોતાના નિયમમાં રાખનાર અહિમન્યવઃ-મેઘની વર્ષાનું જ્ઞાન કરાવનાર વાયુ ઇત્-જ ઋષ્ટિભિઃ-વ્યવહારોને પ્રાપ્ત કરાવવા અને પૃષ્ઠતીભિઃ-પોતાના ગમનાગમન વેગાદિ ગુણોથી ક્ષપઃ-રાત્રિને સંજિન્વન્તઃ-દિપ્ત કરીને વિશ્વવેદસઃ-સર્વ કર્મોને પ્રાપ્ત કરાવનાર પવન શવસા-પોતાના બળથી સિંહા ઇવ-સિંહોની સમાન તથા પિશા ઇવ-મહાન બળયુક્ત હાથીઓની સમાન નાનદતિ-અત્યંત શબ્દ કરે છે, તેઓને કાર્યોની સિદ્ધિ માટે યથાવત્ સંયુક્ત કરો. (૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેટલા બળ, પરાક્રમ, જીવન, શ્રવણ અને મનન આદિ કર્મ છે, તે સર્વ પવન દ્વારા જ થાય છે, તેમ તમે જાણો. (૮)

રોદસી આ વંદતા ગણશ્રિયો નૃષાચઃ શૂરાઃ શવસાહિમન્યવઃ ।

આ વન્ધુરેષ્વમતિર્ન દર્શતા વિદ્યુન્ન તસ્થૌ મરુતો રથેષુ વઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : ગણશ્રિયઃ-એકત્ર થઈને શોભાને પ્રાપ્ત થનાર, નૃષાચઃ-મનુષ્યોના કર્મોમાં સંયુક્ત કરનાર અને અહિમન્યવઃ-પોતાની વ્યાપ્તિને જાણનાર શૂરાઃ-શૂરવીરની સમાન મસ્તઃ-શિલ્પવિદ્યાને જાણનાર ઋત્વિજ વિદ્વાનો જે અમતિર્ન-જેમ રૂપ તથા દર્શતા-દર્શન યોગ્ય વિદ્યુત્-વિદ્યુત્ તસ્થૌ-વિદ્યમાન રહે છે, તેમ વિદ્યમાન વાયુ વન્ધુરેષુ-યાન અને યંત્રોના બંધનોમાં જે શવસા-બળથી રોદસી-પ્રકાશ અને ભૂમિને ધારણ કરે છે; તથા જે વઃ-તમારા રથેષુ-રથોમાં સંયુક્ત કરેલ કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે, તેનો અમારા માટે આવદત-ઉપદેશ કરો. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, સર્વ મૂર્ત દ્રવ્યોના આધારરૂપ અને વીરતા તથા શિલ્પવિદ્યા સંબંધી કાર્યોનો નિમિત્ત ભૂત વાયુ જ છે; તેમ જાણવું જોઈએ. (૯)

વિશ્વવેદસો ર્ચિભિઃ સમૌકસઃ સંમિશ્લાસસ્તવિષીભિર્વિર્ષિનઃ ।

અસ્તાર્ ઇષું દધિરે ગર્ભસ્ત્યોરનન્તશુષ્મા વૃષ્ણાદયો નરઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે નરઃ-વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરનાર મનુષ્યો ! તમે જે સમૌકસઃ-જેનાથી સારી રીતે નિવાસ થાય છે સંમિશ્લાસઃ-અગ્નિ આદિ ચાર તત્ત્વોની સાથે મળેલ ઇષુમ્-બાણ અને ઈચ્છા વિશેષ છોડીને

વૃષ્ણાદયઃ-રસોને વરસાવનાર અને પદાર્થોને ખાનાર **અનન્તશુભાઃ**-અનંત બળવાન **વિરપ્સિનઃ**-મહાન **વિશ્વવેદસઃ**-સર્વ પદાર્થોની પ્રાપ્તિનો હેતુ બનીને સર્વ પદાર્થોને અત્ર-તત્ર ચલાવનાર વાયુ **રયિભિઃ**-ચક્રવર્તી રાજ્યની શોભા આદિ તથા **તવિષીભિઃ**-બળ, પરાક્રમ, સેના આદિ પ્રજા તથા **ગમસ્ત્યોઃ**-કિરણયુક્ત સૂર્ય અને પ્રસિદ્ધ અગ્નિની સમાન ભુજાઓમાં બળને **દધિએ**-ધારણ કરે છે, તેના ગુણોને યથાવત્ જાણીને તેના દ્વારા વિદ્યા, શિક્ષા તથા યાન ચલાવવાની ક્રિયાઓને ગ્રહણ કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો, વિદ્વાનો વિના અને વાયુ આદિ પદાર્થોની વિદ્યા વિના વ્યાવહારિક અને પારમાર્થિક સુખ સિદ્ધ કરી શકતા નથી. (૧૦)

હિરણ્યયેંભિઃ પવિભિઃ પયોવૃધ્ન ઝજિઘ્નન્ત આપથ્યોરૂં ન પર્વતાન્ ।

મૃગા અયાસઃ સ્વસૃતૌ ધ્રુવચ્યુતૌ દુધ્નકૃતૌ મરુતૌ ભ્રાજદૃષ્ટયઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! તમે **આપથ્યો** ન-સારી રીતે **હિરણ્યયેંભિઃ**-સુવર્ણ આદિના યોગથી પ્રકાશરૂપ **પવિભિઃ**-પવિત્ર ચક્રોના રથથી માર્ગમાં ચાલવા સમાન **ભ્રાજદૃષ્ટયઃ**-જેનાથી વ્યવહાર પ્રાપ્ત કરાવનારી કાન્તિ પ્રસિદ્ધ થાય, **દુધ્નકૃતઃ**-ધારણ કરનાર બળ આદિને ઉત્પન્ન કરનાર, **ધ્રુવચ્યુતઃ**-નિશ્ચલ આકાશથી ચલાયમાન **સ્વસૃતઃ**-પોતાના ગુણોને પ્રાપ્ત કરીને ચાલનાર, **પયોવૃધ્નઃ**-જળ અને રાત્રિની વૃદ્ધિ કરનાર, **મૃગાઃ**-યજ્ઞને યોગ્ય **અયાસઃ**-પ્રાપ્ત થવાના સ્વભાવથી યુક્ત **મસ્તઃ**-પવન **પર્વતાન્**-મેઘ અને પર્વતોને **ઝજિઘ્નન્તે**-નષ્ટ કરે છે, તે પવનોના ગુણોને જાણીને પોતાનાં કાર્યોમાં સંયુક્ત કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જેના દ્વારા વર્ષા આદિ થાય છે, તે પવનોનું યુક્તિપૂર્વક સેવન કરવું જોઈએ. (૧૧)

ઘૃષ્ણં પાવકં વનિનં વિચર્ષણિં રુદ્રસ્ય સૂનું હવસાં ગૃણીમસિ ।

રજસ્તુરં તવસં મારુતં ગ્ણમૃજીષિણં વૃષ્ણં સશ્ચત શ્રિયે ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે **હવસા**-દાન અને ગ્રહણથી **શ્રિયે**-વિદ્યા, શિક્ષા અને ચક્રવર્તી રાજ્યની પ્રાપ્તિને માટે જે **રુદ્રસ્ય**-મુખ્ય વાયુના **સૂનુમ્**-પુત્ર સમાન વિદ્યમાન **વિચર્ષણિમ્**-ભેદ કરનાર તથા **વનિનમ્**-સંગ્રામ કરનાર **ઘૃષ્ણમ્**-ઘસવાના સ્વભાવયુક્ત **પાવકમ્**-પવિત્ર કરનાર **તવસમ્**-મહાબળવાન **રજસ્તુરમ્**-લોકોને શીઘ્ર ચલાવનાર **મૃજીષિણમ્**-ઉત્તમ શુદ્ધિ થવા માટે અને **વૃષ્ણમ્**-વૃષ્ટિ કરનાર **માસ્તમ્**-પવનોના **ગ્ણમ્**-સમૂહનો **ગૃણીમસિ**-ઉપદેશ કરે છે, તેને તમે પણ **સશ્ચત**-જાણો. (૧૨)

ભાવાર્થ : વાયુ સમુદાય વિના કોઈપણ વ્યાવહારિક ક્રિયા થઈ શકતી નથી, એવો નિશ્ચય કરીને મનુષ્યોએ અવશ્ય વાયુવિદ્યા ગ્રહણ કરીને પોતાના કાર્યો સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૧૨)

प्र नू स मर्त्तः शवसा जनाँ अति तस्थौ व ऊती मरुतो यमावत ।
अर्वद्धिर्वाजं भरते धना नृभिरापृच्छ्यं क्रतुमा क्षैति पुष्यति ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-યુક્તિથી સેવન કરેલ વાયુની સમાન તમે યમ્-જે મનુષ્યની આવત-રક્ષા આદિ કરો છો, સ:-તે મર્ત્ત:-મનુષ્ય ઉત્તી-રક્ષા આદિ સહિત શવસા-વિદ્યા અને ક્રિયાયુક્ત બળ અર્વદ્ધિ:-ઘોડાઓ અને નૃભિ:-મનુષ્યોની સાથે વાજમ્-વેગ, અન્ન વ:-તમે જનાન્-મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓ તથા ધના-ધનોને પૂજવા યોગ્ય ક્રતુમ્-બુદ્ધિ અને કર્મને નુ-શીઘ્ર પ્રભરતે-સારી રીતે ધારણ કરીને, આક્ષેતિ-સારી રીતે નિવાસયુક્ત કરીને શરીર અને આત્મા અન્ત:કરણથી પુષ્યતિ-બળની પુષ્ટિ કરીને તસ્થૌ-સ્થિર થાય છે. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પ્રાણ વિદ્યાને જાણીને તેનો ઉપયોગ કરે છે, તે બળવાન અને પ્રતિષ્ઠિત બનીને દુઃખો અને શત્રુઓને દૂર કરીને શ્રેષ્ઠ હાથી, ઘોડા, મનુષ્ય, ધન અને બુદ્ધિથી યુક્ત થઈને સદા પુષ્ટ રહે છે. (૧૩)

चर्कृत्यं मरुतः पृत्सु दुष्टरं द्युमन्तं शुष्मं मघवत्सु धत्तन ।

धनस्पृतमुक्थ्यं विश्वचर्षणिं तोकं पुष्येम तनयं शतं हिमाः ॥ १४ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-વાયુસમાન વર્તમાન મનુષ્યો ! જેમ અમે પુત્સુ-સેનાઓમાં ચર્કૃત્યમ્-વારંવાર કરવા યોગ્ય કાર્યોમાં કુશળ દુષ્ટરમ્-દુઃખથી પાર થવા યોગ્ય દ્યુમન્તમ્-અતિ પ્રકાશયુક્ત શુષ્મમ્-સુકાવનાર બળને મઘવત્સુ-પ્રશંસિત ધનયુક્ત રાજકાર્યોમાં ધનસ્મૃતમ્-ધનથી પ્રસન્ન અને સેવાને પ્રાપ્ત થયેલ ઉક્થ્યમ્-કહેવા-સાંભળવા યોગ્ય વિશ્વચર્ષણમ્-સર્વને જોવા યોગ્ય તોકમ્-પુત્ર તથા તનયમ્-વિદ્વાન પૌત્રને પ્રાપ્ત થઈને શતં હિમા:-હેમન્ત ઋતુયુક્ત સો વર્ષ સુધી પુષ્યેમ્-બળ અને પરાક્રમ આદિથી પુષ્ટ બનીએ, તેમ કર્મ કરીને તમે પણ સુખને ધત્તન-ધારણ કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો દ્વારા વાયુ વિદ્યાના શ્રદ્ધાને માટે યુક્તિપૂર્વક ઉપયોગ (=પ્રયોગ) કરવામાં આવે છે, તેમ અન્ય પણ આચરણ કરે. (૧૪)

नू छिरं मरुतो वीरवन्तमृतीषाहं रयिमस्मासु धत्त ।

सहस्त्रिणं शतिनं शूशुवांसं प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् ॥ १५ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-પવન સમાન વિદ્યમાન ! જેમ વિદ્વાનો અસ્માસુ-અમારામાં સ્થિરમ્-નિશ્ચલ વીરવન્તમ્-પ્રશંસિત વીર પુરુષોથી યુક્ત ઋતિષાહમ્-સત્યને સહન કરનાર રયિમ્-વિદ્યા, રાજ્ય અને સુવર્ણ આદિ ધનને ધારણ કરે અને ધિયાવસુ:-બુદ્ધિ તથા કર્મોથી યુક્ત વિદ્વાન જગમ્યાત્-શીઘ્ર પ્રાપ્ત

થાય, તેમ તેઓને તમે પ્રાતઃ-પ્રતિદિન ભક્તુઃ-શીઘ્ર ધત્ત-ધારણ કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અતિ પ્રશંસનીય, બુદ્ધિમાન અને વિદ્યા તથા પુરુષાર્થથી સંપન્ન વિદ્વાન મનુષ્ય વાયુ આદિ પદાર્થોથી પુષ્કળ સ્થાયી સુખોને સિદ્ધ કરીને આનંદ પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ એ વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને આનંદ ભોગવો. (૧૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વાયુના ગુણોનો ઉપદેશ કરવાથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૬૪)

સૂક્ત-૬૫

પશ્ચા ન તાયું ગુહા ચતન્તં નમો યુજાનં નમો વહન્તમ્ ।

સજોષા ધીરાઃ પદૈરનુ ગમન્નુપ ત્વા સીદન્વિશ્વે યજત્રાઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સર્વ વિદ્યાયુક્ત સભાપતિ ! વિશ્વે-સર્વ યજત્રાઃ-સંગતિ પ્રિય સજોષાઃ-સર્વ સમાન પ્રીતિનું સેવન કરનાર ધીરાઃ-બુદ્ધિમાન જનો પદૈઃ-પ્રત્યક્ષ પ્રાપ્ત જે ગુણોના નિયમો તેઓ દ્વારા ન-જેમ પશ્ચા-પશુને લઈ જઈ-જનાર તાયુમ્-ચોરી કરીને આનંદિત થાય છે; તેમ જે ગુહા-ગુફામાં ચતન્તમ્-વ્યાપ્ત નમઃ-વજસમાન આજ્ઞાનું યુજાનમ્-સમાધાન કરનાર નમઃ-સત્કારને વહન્તમ્-પ્રાપ્ત કરીને ત્વા-આપને અનુગમન્-અનુકૂળતાપૂર્વક પ્રાપ્ત તથા ઉપસીદન્-સમીપ સ્થિત થાય છે, તે આપને અમે પણ પ્રાપ્ત થઈને આપની સમીપ સ્થિત થઈએ છીએ. (૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ચોરના પગલાં જોઈને, ચોરને પકડીને (તેની પાસેથી) પશુ આદિ પદાર્થો લઈ/પડાવી લેવામાં આવે છે, તેમ આત્માની અંદર ઉપદેશ કરનાર, સર્વાધાર અને જ્ઞાન દ્વારા પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પરમેશ્વરને પ્રાપ્ત કરીને તમે સંપૂર્ણ આનંદનો સ્વીકાર કરો/અપનાવો. (૧)

ઋતસ્ય દેવા અનુ વ્રતા ગુર્ભુવત્પરિષ્ટિઘૌર્ન ભૂમ્ ।

વર્ધન્તીમાપઃ પન્વા સુશિશ્વિમૃતસ્ય યોના ગર્ભે સુજાતમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ન-જેમ વિદ્વાનો પરિષ્ટિઃ-સર્વ રીતે શોધવા યોગ્ય ઘૌર્ન-સૂર્યના પ્રકાશની સમાન ભુવત્-બનીને સર્વ પદાર્થોને દૃષ્ટિગોચર કરે છે, તેમ ઋતસ્ય-સત્ય ધર્મ સ્વરૂપ આજ્ઞા વિજ્ઞાન થી વ્રતા-સત્યભાષણ આદિ વ્રત-નિયમોને અનુગુઃ-પ્રાપ્ત કરીને આચરણ કરે છે તથા જેમ એ ઋતસ્ય-કારણરૂપી સત્યની યોના-યોનિ અર્થાત્ નિમિત્તમાં સ્થિત સુજાતમ્-સારી રીતે પ્રસિદ્ધ સુશિશ્વિમ્-શ્રેષ્ઠ અધ્યયન કરાવનાર સભાપતિની પન્વા-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય કર્મથી ઈમ્-પૃથિવીને આપઃ-જળ અને પ્રાણની વર્ધન્તિ-વૃદ્ધિ કરીને જ્ઞાનયુક્ત કરી દે છે, તેમ અમે ભૂમ-બનીએ અને તમે પણ બનો. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સૂર્યના પ્રકાશથી સર્વ પદાર્થો સારી રીતે દૃષ્ટિમાં આવે છે, તેમ વિદ્વાનોના સંગથી વેદવિદ્યાનું જ્ઞાન થતાં અને ધર્માચરણ કરવાથી પરમેશ્વર તથા વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થો

પોતાનાં ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ સહિત સારી રીતે સાક્ષાત્ થઈ જાય છે. એમ તમે જાણો. (૨)

પુષ્ટિર્ન ર્ણવા ક્ષિતિર્ન પૃથ્વી ગિરિર્ન ભુજ્મ ક્ષોદો ન શંભુ।

અત્યો નાજ્મન્ત્સર્ગપ્રતક્ત્ઃ સિન્ધુર્ન ક્ષોદ્ઃ ક ઈ વરાતે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય તે પરમેશ્વરને **ર્ણવા**-સુખથી પ્રાપ્ત કરાવનાર **પુષ્ટિ**:-શરીર, આત્મા અને ઈન્દ્રિયોની પુષ્ટિની ન-સમાન **ક્ષોદ**:-જળ, **શમ્બુ**-સુખસમ્પન્ન કરનારની ન-સમાન તથા **અજ્મન્**-માર્ગમાં **અત્ય**:-ઘોડાઓની સમાન **સર્ગપ્રતક્ત**:-જળનો સંકોચ-શોષિત કરનાર **સિન્ધુ**:-સમુદ્ર **ક્ષોદ**:-જળની ન-સમાન **ઈમ્**-જાણવા અને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પરમેશ્વર અને વિદ્યુત્ ૩૫ અગ્નિને **ક**:-કોણ વિદ્વાન મનુષ્ય **વરાતે**-સ્વીકાર કરે છે ? (૩)

ભાવાર્થ : કોઈ વિદ્વાન દુર્લભ મનુષ્ય જ પરમેશ્વરની પ્રાપ્તિ અને વિદ્યુત્ નું વિશેષ જ્ઞાન તથા ઉપયોગ કરી શકે છે. જેમ સર્વોત્તમ પુષ્ટિ, પૃથ્વીનું રાજ્ય, મેઘથી વૃષ્ટિ, ઉત્તમ જળ, શ્રેષ્ઠ ઘોડો અને સમુદ્ર (એ) બહુ જ સુખ આપે છે, તેમ જ પરમેશ્વર અને વિદ્યુત્ સમસ્ત આનંદોને પ્રાપ્ત કરાવે છે. પરંતુ એ બન્નેને જાણનાર મહાવિદ્વાન મનુષ્ય દુર્લભ હોય છે. (૩)

જામિઃ સિન્ધૂનાં ભ્રાતેવ્ સ્વસ્ત્રામિભ્યાન્ન રાજા વનાન્યત્તિ।

યદ્વાતજૂતો વના વ્યસ્થાદ્ગ્નિર્હૈ દાતિ રોમા પૃથિવ્યાઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : **યત્**-જે **વાતજૂત**:-વાયુથી વેગને પ્રાપ્ત થયેલ **અગ્નિ**:-અગ્નિ **વના**-વનોનું **દાતિ**-છેદન કરીને તથા **પૃથિવ્યા**:-પૃથિવીનું **હ**-નિશ્ચયપૂર્વક **રોમા**-રોમ-રુંવાડાની સમાન છેદન કરે છે, તે **સિન્ધૂનામ્**-સમુદ્ર અને નદીઓને **જામિ**:-સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર બંધુ **સ્વસ્ત્રામ્**-બેનોના **ભ્રાતેવ**-ભાઈની સમાન તથા **ઈભ્યાન્**-હાથીઓની રક્ષા કરનાર માવતને **રાજેવ**-રાજાની સમાન **વ્યસ્થાત્**-સ્થિત થઈને તથા **વનાનિ**-વનોનું **વ્યત્તિ**-અનેક રીતે ભક્ષણ કરે છે. (૪)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્યો દ્વારા વાહન ચાલન આદિ કાર્યોમાં વાયુના દ્વારા સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરેલ અગ્નિને સંચાલિત કરવામાં આવે છે, ત્યારે તે અનેક કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે; એમ જાણવું જોઈએ. (૪)

શ્વસિત્યપ્સુ હંસો ન સીદન્ક્રત્વા ચેતિષ્ઠો વિશામુષ્ઠર્ભુત્।

સોમો ન વેધા ઋતપ્રજાતઃ પશુર્ન શિશ્વા વિભુર્દૂરેભાઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે **અપ્સુ**-જલોમાં **હંસ**:-હંસ પક્ષીની ન-સમાન **સીદન્**-જતાં, આવતાં, ડૂબતાં, ઉછળતાં રહીને **વિશામ્**-પ્રજાઓને **ઉષ્ઠર્ભુત્**-પ્રાતઃકાળમાં બોધ કરાવવા તથા **ક્રત્વા**-પોતાની બુદ્ધિ અને કર્મથી **ચેતિષ્ઠ**:-અત્યંત જ્ઞાન કરાવનાર **સોમ**:-ઔષધિ સમૂહની ન-સમાન **ઋતપ્રજાતઃ**-

કારણથી ઉત્પન્ન થઈને વાયુ તથા જળમાં પ્રસિદ્ધ **વેદા:**-પુષ્ટ કરનાર **શિશુના**-વાઇરડાં આદિથી **પશુ:**-ગાય આદિની **ન-સમાન વિભુ:**-વ્યાપક થઈને **દૂરેષા:**-દૂર દેશમાં દીપ્તિયુક્ત વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિની સમાન **શ્વસિતિ**-પ્રાણ અને અપાન આદિને કરે છે, તેને શિલ્પ આદિ કાર્યોમાં સારી રીતે પ્રયુક્ત કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુત્ અગ્નિ વિના કોઈ પણ પ્રાણીની વ્યવહાર સિદ્ધિ થઈ શકતી નથી, તેમ એ (વિદ્યુદગ્નિ) વિદ્યા દ્વારા સમ્યક્ પરીક્ષાપૂર્વક કાર્યોમાં પ્રયુક્ત કરેલ, બહુ જ સુખોને સિદ્ધ કરે છે. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર, અગ્નિરૂપ વિદ્યુત્ નાં વર્ણનથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૬૫)

સૂક્ત-૬૬

રઘિર્ન ચિત્રા સૂરો ન સંદૃગાયુર્ન પ્રાણો નિત્યો ન સૂનુઃ ।

તક્વા ન ભૂર્ણિર્વના સિશક્તિ પયો ન ધેનુઃ શુચિર્વિભાવો ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ સર્વજનો **રઘિર્ન**-દ્રવ્ય સમૂહની સમાન **ચિત્રા**-આશ્ચર્ય ગુણયુક્ત **સૂર:** સૂર્યની **ન-સમાન સંદૃક્**-સારી રીતે દેખાડનાર **આયુ:**-જીવનની **ન-સમાન પ્રાણ:**-સર્વ શરીરમાં રહેનાર **નિત્ય:**-કારણરૂપથી અવિનાશી સ્વરૂપ વાયુની **ન-સમાન સૂનુ:**-કાર્યરૂપથી વાયુના પુત્રની સમાન વિદ્યમાન **પય:**-દૂધની **ન-સમાન ધેનુ:**-દૂધાળી ગાય **તક્વા**-ચોરની **ભૂર્ણિ:**-ધારણ કરનાર **વિભાવા**-અનેક પદાર્થોનો પ્રકાશ કરનાર **શુચિ:**-પવિત્ર અગ્નિ **વના**-વન અથવા કિરણોને **સિશક્તિ**-સંયુક્ત થઈને તથા સંયોગ કરે છે, તેને યથાવત્ જાણીને કાર્યોમાં ઉપયુક્ત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે ઈશ્વરે પ્રજાના હિતને માટે વિવિધ ગુણયુક્ત, અનેક કાર્યોમાં ઉપયોગી અને સત્ય સ્વભાવવાળા અગ્નિને રચેલ છે; તેની સદા ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૧)

દાધાર્ ક્ષેમમોકો ન રણ્વો યવો ન પક્વો જેતા જનાનામ્ ।

ઋષિર્ન સ્તુભ્વા વિક્ષુ પ્રશસ્તો વાજા ન પ્રીતો વયો દધાતિ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય **ઓક:**-ઘરની **ન-સમાન રણ્વ:**-રમણીય સ્વરૂપ **પક્વ:**-પાકા **યવ:**-સુખ કરાવનાર જીવની **ન-સમાન ઋષિ:**-મંત્રોના અર્થને જાણનાર વિદ્વાનની **ન-સમાન સ્તુભ્વા**-સત્કારને યોગ્ય **વાજી**-વેગવાન ઘોડાઓની સમાન **પ્રીત:**-કમનીય-સુંદર **વિક્ષુ**-પ્રજાઓમાં **પ્રશસ્ત:**-શ્રેષ્ઠ **જનાનામ્**-મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓને **જેતા**-સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર **વય:**-જીવન **દધાતિ**-ધારણ કરે છે, તે ક્ષેમમ્-રક્ષાને **દાધાર**-ધારણ કરે છે. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય જીવનના કારણભૂત બ્રહ્મચર્ય આદિને સમ્યક્ જાણીને કાર્યની સિદ્ધિ માટે તેને સમ્યક્ પ્રયોગ કરે છે અને ઉચિત આહાર-વિહાર માટે ઉપયોગી પદાર્થોને ધારણ કરે છે, તે

દીર્ઘાયુ બનીને સદા સુખી રહે છે. (૨)

દુરોકશોચિઃ ક્રતુર્ન નિત્યો જાએવ યોનાવરં વિશ્વસ્મૈ ।

ચિત્રો યદભ્રાટ્શ્વેતો ન વિક્ષુ રથો ન રુક્મી ત્વેષઃ સમત્સુ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : યત્-જે મનુષ્ય ક્રતુઃ-બુદ્ધિ અને કર્મની ન-સમાન નિત્યઃ-અવિનાશી સ્વભાવ જાએવ-ભાર્યા-પત્નીની સમાન યોનો-કારણરૂપમાં અસ્મ-અલંકર્તા શ્વેતઃ-શુદ્ધ શુકલવર્ણની ન-સમાન વિક્ષુ-પ્રજાઓમાં શુદ્ધ કરનાર રથઃ-સુવર્ણાદિથી નિર્મિત વિમાનાદિ યાનની ન-સમાન રુક્મી-રુચિકારક કર્મ અને ગુણયુક્ત દુરોકશોચિઃ-દૂર સ્થાનમાં દીપ્તિયુક્ત વિશ્વસ્મૈ-સર્વ જગતમાં સુખ કરનાર સમત્સુ-સંગ્રામોમાં ચિત્રઃ-અદ્ભુત સ્વભાવયુક્ત અભ્રાટ્-સ્વયં પ્રકાશમાન હોવાથી શુદ્ધ ત્વેષઃ-પ્રદીપ્ત સ્વભાવયુક્ત છે, તે જ ચક્રવર્તી રાજા થવાને યોગ્ય બને છે. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ (એ જાણવું જોઈએ કે) જે જ્ઞાન અને કર્મની સમાન સદા વર્તમાન રહેનાર, અનુકૂળ સ્ત્રીની સમાન સમસ્ત સુખોના નિમિત્ત સૂર્યની સમાન પ્રકાશ કરનાર, અદ્ભુત, રથની સમાન મોક્ષમાર્ગ પર લઈ જનાર અને વીરની સમાન યુદ્ધોમાં વિજય કરનાર હોય છે, તે જ રાજ્ય-લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩)

સેનેવ સૃષ્ટામં દધાત્યસ્તુર્ન દિદ્યુત્ત્વેષપ્રતીકા ।

યમો હં જાતો યમો જનિત્વં જારઃ કનીનાં પતિર્જનીનામ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે સેનાપતિ યમઃ-નિયમ કરનાર જાતઃ-પ્રકટ યમઃ-સર્વથા નિયમકર્તા જનિત્વમ્-જન્માદિ કારણયુક્ત કનીનામ્-કન્યા સમાન રહેલ રાત્રિઓનો જારઃ-આયુનો હનનકર્તા સૂર્યની સમાન જનીનામ્-ઉત્પન્ન થયેલી પ્રજાઓની પતિઃ-પાલનકર્તા સૃષ્ટા-પ્રેરિત સેનેવ-સારી શિક્ષાને પ્રાપ્ત થયેલી વીરપુરુષોનો વિજય કરનારી સેનાની સમાન અસ્તુઃ-શત્રુઓ પર શસ્ત્ર-અસ્ત્ર ચલાવનાર ત્વેષપ્રતીકા-અપરિપક્વ વિદ્યુન્ન-વીજળીની સમાન અમમ્-વિજ્ઞાનયુક્ત જનને દધાતિ-ધારણ કરે છે, તેનું સેવન કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યા તથા પૂર્ણ પ્રયત્ન દ્વારા સુશિક્ષિત સેના શત્રુઓને જીતીને વિજય પ્રાપ્ત કરે છે અને જેમ ધનુર્વેદના જ્ઞાતાઓ શત્રુઓ પર શસ્ત્ર અસ્ત્ર ચલાવીને તેને છિન્ન-ભિન્ન કરીને નષ્ટ કરે છે; તેમ ઉત્તમ સેનાપતિ સમસ્ત દુઃખોનો નાશ કરી નાખે છે, તેમ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૪)

તં વશ્ચરાથા વયં વસત્યાઽસ્તં ન ગાવો નક્ષન્ત ઙ્ઙ્ઙમ્ ।

સિન્ધુર્ન ક્ષોદ્ઃ પ્ર નીચીરૈનોન્નવન્ત ગાવઃ સ્વૃદ્દશીકે ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : જે ચરાથા-ચર-ગતિરૂપ વસત્યા-વાસ કરવા યોગ્ય પૃથિવીની સાથે વિદ્યમાન ગાવઃ-
અગ્વેદભાષ્ય

गाय न-जेम अस्तम्-धरने नक्षन्ते-प्राप्त थाय छे.

जेम गावः-किरण स्वर्णश्रीके-दर्शन माटे व्यवहारमां इदम्-सूर्यने नवन्ते-प्राप्त थाय छे.

न-जेम सिन्धुः-समुद्र नीचीः-नीयेना क्षोदः-जणने प्राप्त थाय छे; तेम वः-तमे लोकोंने प्रैनोत्-प्राप्त थाओ छे; तेनी सेवा अमे करीअे. (४)

भावार्थ : जे अे रीते परमेश्वरनुं सम्यक् सेवन करीने विद्युत् ने सिद्ध करे छे, तेओने जेम गाय धरने तथा किरणो सूर्यने प्राप्त थाय छे, अे ज रीते सुभ प्राप्त थाय छे.

जेम मनुष्य समुद्रने प्राप्त करीने अनेक कार्यों संपन्न करे छे, तेम सज्जनोअे परमेश्वरनी उपासना करीने तथा विद्युत् विद्याने (यथावत्) सिद्ध करीने सर्वने सुशोभित करवा जेईअे (अर्थात् ते विद्या द्वारा पोतानी सर्व कामनाओ-ईच्छाओने पूर्ण करवी जेईअे.) (५)

संगति : आ सूक्तमां ईश्वर अने अग्निना गुणोनुं वर्णन डोवाथी आ सूक्तनी पूर्व सूक्तार्थनी साथे संगति जाणवी जेईअे. (६६)

सूक्त-५७

वनेषु जायुर्मर्तेषु मित्रो वृणीते श्रुष्टिं राजेवाजुर्यम् ।

क्षेमो न साधुः क्रतुर्न भद्रो भुवत्स्वाधीर्होता हव्यवाट् ॥ १ ॥

पदार्थ : छे मनुष्यो ! तमे जे विद्वान वनेषु-सम्यक् सेवन करवा योग्य पदार्थ जायुः-जुतवा माटे सूर्यनी समान अजुर्यम्-युद्ध विद्यानी संग सेनानी समान योग्य श्रुष्टिम्-शीघ्रता करनारने राजेव-राजानी समान क्षेमः-रक्षक, साधुः-सत्पुरुषनी समान भद्रः-कल्याणकारी, क्रतुर्न-श्रेष्ठ बुद्धि अने कर्मकर्तानी समान स्वाधीः-सारी रीते धारण करनार, होता-दाता तथा अनुग्रह करनार अने हव्यवाट्-आदान-प्रदान योग्य पदार्थोने प्राप्त करावनार भुवत्-डोय; तथा धर्मात्मा मनुष्योनों वृणीते-स्वीकार करे, तेनुं सदा सेवन करो. (१)

भावार्थ : मनुष्योने योग्य छे, के-विद्वानोनों संग करीने सदा आनंद भोगववो जेईअे. (१)

हस्ते दधानो नृम्णा विश्वान्यमे देवान्धाद्गुहा निषीदन् ।

विदन्तीमत्र नरो धियंधा हृदा यत्तष्टान्मन्त्राँ अशंसन् ॥ २ ॥

पदार्थ : यत्-जे नरः-प्राप्ति करनार मनुष्य जेम धियन्धाः-प्रज्ञा-बुद्धि अने कर्मने धारण करनार विद्वानो तष्टान्-विद्याओने तीक्ष्ण करनार मन्त्रान्-वेदनां अवयवो तथा विचाररूपी मन्त्रोने विदन्ति-जाणो छे. अशंसन्-स्तुति करे छे.

जेम दाता-उदार मनुष्य हस्ते-हाथमां विश्वानि-समस्त नृम्णा-धनने दधानः-धारण करीने अन्य सुपात्र मनुष्योने प्रदान करे छे.

જેમ ગુહા-સર્વ વિદ્યાઓથી યુક્ત બુદ્ધિમાં નિષીદન્-સ્થિત રહેલ ઈશ્વર અથવા યોગી વિદ્વાન અત્ર-એ અમે-વિજ્ઞાન આદિમાં દેવાન્-વિદ્વાન દિવ્ય ગુણોને ધાત્-ધારણ કરે છે, તેમ-તેવા બને છે, તેઓ અત્યંત આનંદને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે અન્તર્યામી ઈશ્વર આત્મામાં સત્ય અને અસત્યનો ઉપદેશ કરે છે અને જે બહારના અધ્યાપક તથા વિદ્વાન છે તેને છોડીને-સિવાય કોઈપણ અન્યની ઉપાસના અને સંગ કરવો નહિ. (૨)

અજો ન ક્ષાં દાધારં પૃથિવીં તસ્તમ્બ દ્યાં મન્ત્રેભિઃ સત્યૈઃ ।

પ્રિયા પદાનિ પશ્વો નિ પાહિ વિશ્વાયુરગ્ને ગુહા ગુહં ગાઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત વિદ્વાન ! તું જેમ પરમાત્મા સત્યૈઃ-સત્ય લક્ષણોથી પ્રકાશિત જ્ઞાનયુક્ત મન્ત્રેભિઃ-વિચારોથી ક્ષામ્-ભૂમિને દાધાર-પોતાના બળથી ધારણ કરે છે, પૃથિવીમ્-અન્તરિક્ષમાં સ્થિત જે અન્ય લોક દ્યામ્-તથા પ્રકાશમય સૂર્યાદિ લોકોને તસ્તમ્બ-પ્રતિબંધયુક્ત કરે છે તથા પ્રિયા-પ્રીતિકારક પદાનિ-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય જ્ઞાનોને પ્રાપ્ત કરાવે છે, ગુહા-બુદ્ધિમાં સ્થિત રહેલ ગુહમ્-ગૂઢ વિજ્ઞાન અંદરના સ્થાનમાં ગાઃ-પ્રાપ્ત થાય અથવા થાય છે, પશ્વઃ-બંધનથી અમારી રક્ષા કરે છે, તેમ ધર્મથી પ્રજાની નિયાહિ-નિરંતર રક્ષા કર; અને અજો ન-ન્યાયકારી ઈશ્વર સમાન બન. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર પોતાના વિજ્ઞાન અને બળાદિ ગુણોથી સમસ્ત સંસારને ધારણ કરે છે, જેમ પ્રિય મિત્ર પોતાના મિત્રને દુઃખબંધનથી પૃથક્ કરીને પ્રિય સુખ પ્રાપ્ત કરાવે છે અને જેમ અન્તર્યામી રૂપથી (= અજ) પરમેશ્વર જીવ આદિને ધારણ કરીને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ જ સભાપતિ સત્ય ન્યાયથી રાજ્યને તથા સૂર્ય પોતાનાં આકર્ષણ આદિ ગુણોથી જગતને ધારણ કરે છે. (૩)

ય ઈં ચિકેત્ ગુહા ભવન્તમા યઃ સસાદ્ ધારામૃતસ્યૌ ।

વિ યે ચૃતન્ત્યૃતા સર્પન્ત આદિદ્વસૂનિ પ્ર વવાચાસ્મૈ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે મનુષ્ય ગુહા-બુદ્ધિ તથા વિજ્ઞાનમાં ઈમ્-વિજ્ઞાનસ્વરૂપ ભવન્તમ્-વિજ્ઞાનસ્વરૂપ જગદીશ્વર તથા સભાધ્યક્ષને ચિકેત્-જાણે છે, યઃ-જે ઋત્તસ્ય-સત્યવિદ્યારૂપ ચારેય વેદો તથા જળની ધારામ્-વાણી અને પ્રવાહને આસસાદ્-પ્રાપ્ત કરાવે છે; યે-જે મનુષ્ય ઋત્ત-સત્યને સર્પન્તઃ-સંયુક્ત કરીને વસૂનિ-વિદ્યા, સુવર્ણ આદિ ધનને વિચૃતન્તિ-ગ્રન્થિયુક્ત કરે છે. જે માટે પરમેશ્વરે પ્રવવાચ-કહેલ છે, આત્-એની પાછળ ઇત્-તેને માટે સર્વ સુખ પ્રાપ્ત થાય છે. (૪)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરની ઉપાસના તથા વિજ્ઞાન અને સત્ય વિદ્યા તથા આચરણ વિના કોઈને પણ નિર્વિદન રૂપથી સમ્યક્ સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી. (૪)

વિ યો વીરુત્સુ રોધન્મહિત્વોત પ્રજા ઉત પ્રસૂષ્વન્તઃ ।

चित्तिरुपां दमै विश्वायुः सद्भैव धीराः संमाय चक्रुः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : ધીરા:-જ્ઞાનવાન વિદ્વાનો ! સંમાય-સારી રીતે માનીને સદ્ મેવ-જેમ ઘર અને સંગ્રામને માટે જે લાભ ચક્રુ:-કરે છે, તેમ ય:-જે જગદીશ્વર અને વિદ્યુત્ મહિત્વા-સત્કાર કરીને વીસ્તુ-રચના વિશેષથી નિરોધ પ્રાપ્ત થયેલ કારણ કાર્ય દ્રવ્યોમાં પ્રજા:-પ્રજા વિરોધત્-વિશેષ કરીને આચરણ કરે છે, જે ઉત્-પ્રસૂષુ-ઉત્પન્ન થનારમાં પણ અન્ત:-મધ્યમાં વિદ્યમાન છે, જે ઉત્-વિશ્વાયુ:-પૂર્ણ આયુયુક્ત પણ ચિત્તિ:-સમ્યક્ જાણનાર દમે-શાન્તિયુક્ત ઘર તથા અપામ્-પ્રાણ અને જળની મધ્યમાં પ્રજાને ધારણ કરે છે, તેની સારી રીતે સેવા કરો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે અન્તર્યામી રૂપથી તથા રૂપ અને વેગ આદિ ગુણો હોવાના કારણે પ્રજાઓમાં વ્યાપ્ત થઈને તેને સમ્યક્ નિયંત્રિત કરે છે, તે જગદીશ્વરની ઉપાસના કરીને તથા કાર્યોમાં વિદ્યુત્ નો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને, જેમ વિદ્વાન જનો ઘરમાં રહીને તથા યુદ્ધમાં શત્રુઓને જીતીને સુખી રહે છે, તેમ સુખી રહેવું જોઈએ. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર, સભાધ્યક્ષ અને વિદ્યુત્ અગ્નિના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે આ સૂક્તાર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૬૭)

સૂક્ત-૬૮

શ્રીળન્નુપં સ્થાદિવં ભુરણ્યુઃ સ્થાતુશ્ચરથમક્તૂ ન્વ્યૂર્ણોત્ ।

પરિ યદેષામેકો વિશ્વેષાં ભુવદ્દેવો દેવાનાં મહિત્વા ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : યત્-જે ભુરણ્યુઃ-ધારણ અને પોષણ કરનાર શ્રીળન્-પરિપક્વ કરીને મનુષ્ય દિવમ્-પ્રકાશક પરમેશ્વર અને વિદ્યુત્ અગ્નિથી ઉપસ્થાત્-ઉપસ્થિત થાય અને સ્થાતુઃ-સ્થાવર, ચરથમ્-જંગમ તથા અક્તૂન્-પ્રકટ પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદાર્થોને પર્યૂર્ણોત્-આચ્છાદન અને સ્વીકાર કરે છે; તે ણ્યામ્-એ વિદ્યમાન વિશ્વેષામ્-સમસ્ત દેવાનામ્-વિદ્વાનોની મધ્યમાં એક:-સહાયરહિત દેવઃ-દિવ્યગુણયુક્ત મહિત્વા-પૂજાને સત્કારને પ્રાપ્ત થઈને વિભુવત્-વૈભવ અર્થાત્ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત થાય છે. (૧)

ભાવાર્થ : કોઈપણ મનુષ્ય ઈશ્વરની ઉપાસના કર્યા વિના અને વિદ્યુત્ વિદ્યાનો આશ્રય પ્રાપ્ત કર્યા વિના આધ્યાત્મિક અને સાંસારિક સુખ પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. (૧)

આદિત્તે વિશ્વે ક્રતું જુષન્ત શુષ્કાદ્યદેવ જીવો જનિષ્ઠાઃ ।

ભજન્ત વિશ્વે દેવત્વં નામઃ ઋતં સર્પન્તો અમૃતમેવૈઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-જગદીશ્વર આપનો આશ્રય યત્-જે વિશ્વે-સર્વ જનિષ્ઠાઃ-અતિજ્ઞાન યુક્ત સર્પન્તઃ-એક સંમત વિદ્વાનજન એવૈઃ-પ્રાપ્તિકારક ગુણો અને શુષ્કાત્-ધર્માનુષ્ઠાનના તપથી તે-આપના દેવત્વમ્-

દિવ્યગુણ પ્રાપ્ત કરનાર **ક્રતુમ્**-બુદ્ધિ અને કર્મ **નામ**-પ્રસિદ્ધ અર્થયુક્ત સંજ્ઞાને સિદ્ધ **જુષન્ત**-પ્રીતિથી સેવા કરે તેઓ **ઋત્તમ્**-સત્યરૂપનું **ભજન્ત**-સેવન કરે છે, તેમ **અમૃતમ્**-મોક્ષને **જીવઃ**-ઈચ્છાદિ ગુણયુક્ત ચેતન સ્વરૂપ મનુષ્ય **આત્**-એની અનન્તર **ઇત્**-જ એ સર્વને પ્રાપ્ત થાય. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો પરમેશ્વરની ઉપાસના અને તેની આજ્ઞાના પાલન વિના વ્યાવહારિક અને પારમાર્થિક સુખ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૨)

ઋત્તસ્ય પ્રેષાઃ ઋત્તસ્ય ધીતિર્વિશ્વાયુર્વિશ્વે અપાંસિ ચક્રુઃ ।

યસ્તુભ્યં દાશાદ્યો વા તે શિક્ષાત્તસ્મૈ ચિકિત્વાત્રયિં દયસ્વ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે ઈશ્વર અને વિદ્યુત્ અગ્નિથી **વિશ્વે**-સર્વ **પ્રેષાઃ**-સારી રીતે જેની ઈચ્છા કરવામાં આવે છે, તે બોધસમૂહને પ્રાપ્ત થાય છે. **ઋત્તસ્ય**-સત્યવિજ્ઞાન તથા કારણનું **ધીતિઃ**-ધારણ અને **વિશ્વાયુઃ**-સર્વ આયુ પ્રાપ્ત થાય છે. તેનો આશ્રય કરીને જે **ઋત્તસ્ય**-સ્વરૂપ પ્રવાહથી સત્યની મધ્યમાં વિદ્યમાન વિદ્વાનો **અપાંસિ**-ન્યાયયુક્ત કામોને **ચક્રુઃ**-કરે છે. **યઃ**-જે મનુષ્ય એ વિદ્યાને **તુભ્યમ્**-ઈશ્વરોપાસના, ધર્મ, પુરુષાર્થયુક્ત મનુષ્યને માટે **દાશાત્**-પ્રદાન કરે છે અને તેના દ્વારા ગ્રહણ કરે છે. **યઃ**-જે **ચિકિત્વાન્**-જ્ઞાનવાન મનુષ્ય તે-તારા માટે **શિક્ષાત્**-શિક્ષા કરે છે અને તારાથી શિક્ષા પ્રાપ્ત કરે છે **તસ્મૈ**-તેને માટે આપ **રયિમ્**-સુવર્ણાદિ ધન **દયસ્વ**-પ્રદાન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એ જાણવું જોઈએ, કે ઈશ્વરની રચના વિના જડ કારણથી કોઈ કાર્ય સંપન્ન (થતું નથી) તથા નાશ પામતું નથી. આધાર વિના આધેય રહી શકતું નથી. કોઈપણ (મનુષ્ય) કર્મ વિના (ક્ષરભર) પણ રહી શકતો નથી. જે વિદ્વાન હોવાથી વિદ્યા આદિ શુભ ગુણ પ્રદાન કરે છે અથવા જે તેનાથી ગ્રહણ કરે છે; તે (બન્ને)નો સત્કાર કરવો જોઈએ, અન્યોનો નહિ. (૩)

હોતા નિષત્તો મનોરપત્યે સ ચિન્નવાંસાં પતીં રયીણામ્ ।

ઙ્ચન્ત રેતો મિથસ્તનૂષુ સં જાનત સ્વૈર્દક્ષૈરમૂરાઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે **નિષત્તઃ**-સર્વત્ર સ્થિત **મનોઃ**-મનુષ્યનાં **અપત્યે**-સંતાનમાં **રયીણામ્**-રાજ્યશ્રી આદિ ધનને **હોતા**-દેનાર છે. **સઃ**-તે ઈશ્વર, વિદ્યુત્ અગ્નિ **આસામ્**-એ પ્રજાઓનું **પતિઃ**-પાલન કરનાર છે.

હે **અમૂરાઃ**-મૂઠ્ઠ-મૂર્ખતાદિથી ગુણોથી રહિત જ્ઞાનવાન **સ્વૈઃ**-પોતાના **દક્ષૈઃ**-શિક્ષા સહિત ચતુર આદિ ગુણોની સાથે **તનૂષુ**-શરીરોમાં વિદ્યમાન રહીને **મિથઃ**-પરસ્પર **રેતઃ**-વિદ્યા અને શિક્ષારૂપી વીર્યનો વિસ્તાર કરીને તમે લોકો એની **સમિચ્ચન્ત**-સમ્યક્ શિક્ષા કરો, **ચિત્**-તમે સમસ્ત વિદ્યાઓને **નુ**-શીઘ્ર **જાનત**-સારી રીતે જાણો. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરસ્પર મિત્ર બનીને સમસ્ત વિદ્યાઓને શીઘ્ર જાણીને નિરંતર આનંદિત

રહેવું જોઈએ. (૪)

પિતુર્ન પુત્રાઃ ક્રતું જુષન્ત શ્રોષન્ત્યે અસ્ય શાસં તુરાસઃ ।

વિ રાય ઔર્ણોદુરઃ પુરુક્ષુઃ પિપેશ નાકં સ્તૃભિર્દમૂનાઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : એ-જે તુરાસઃ-સારા કર્મોને શીઘ્ર કરનાર મનુષ્ય પિતુઃ-પિતાના પુત્રાઃ-પુત્રોની ન-સમાન અસ્ય-જગદીશ્વર અને સત્પુરુષની શાસમ્-શિક્ષાને શ્રોવન્-શ્રવણ કરે છે, તેઓ સુખી થાય છે.

જે દમૂનાઃ-શાન્તિયુક્ત પુસ્કુઃ-બહુ જ અન્નાદિ પદાર્થોથી યુક્ત સ્તૃભિઃ-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ગુણોથી રાયઃ-ધનના વ્યૌર્ણોત્-સ્વીકારકર્તા તથા નાકમ્-સુખનો સ્વીકાર કરીને અને દુરઃ-હિંસા કરનાર શત્રુઓના પિપેશ-અવયવો પૃથક્ પૃથક્ કરે છે, તેની સર્વ મનુષ્યો સેવા કરે. (૫)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર અને આપ્તજનોની આજ્ઞાના પાલન વિના કોઈ મનુષ્યને જરા પણ સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી. જિતેન્દ્રિયતા આદિ વિના પણ કોઈ સુખ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તેથી મનુષ્યોએ એ સર્વનું સદા સેવન કરવું જોઈએ. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર અને અગ્નિના ગુણનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૬૮)

સૂક્ત-૬૯

શુક્રઃ શુશુક્વાં ઉષો ન જારઃ પપ્રાઃ સમીચી દિવો ન જ્યોતિઃ ।

પરિ પ્રજાતઃ ક્રત્વાં બભૂથ ભુવો દેવાનાં પિતા પુત્રઃ સન્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય ઉષઃ-પ્રભાત વેળાના જારઃ-આયુનાશક સૂર્યની ન-સમાન શુક્રઃ-વીર્યવાન, શુક્ર શુશુક્વાન્-શુક્ર કરનાર પપ્રાઃ-પોતાની વિદ્યાથી પૂર્ણ ભુવઃ-ભૂમિનાં મધ્યમાં દિવઃ-પ્રકાશથી સમીચી-પૃથિવીને પ્રાપ્ત થયેલ જ્યોતિઃ-દીપ્તિની ન-સમાન પરિ-સર્વ પ્રકારે પ્રજાતઃ-પ્રસિદ્ધ, ઉત્પન્ન, ક્રત્વા-ઉત્તમ બુદ્ધિ અને કર્મની સાથે દેવાનામ્-વિદ્વાનોના પુત્રઃ-પુત્રની સમાન ભણનાર સર્વ વિદ્યાઓને ભણીને પિતા-ભણાવનાર વભૂથ-બને છે; તેનું સર્વ મનુષ્યોએ સેવન કરવું જોઈએ. (૧)

ભાવાર્થ : કોઈપણ (મનુષ્ય) વિદ્યાર્થી-ભાવ વિના વિદ્વાન બની શકતો નથી. વિદ્યુત્ આદિની વિદ્યા તથા તેના ઉચિત પ્રયોગ વિના મહાન સુખનો લાભ પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. (૧)

વેદ્યા અદૃપ્તો અગ્નિર્વિજાનન્નૂધર્ન ગોનાં સ્વાદ્યાં પિતૃનામ્ ।

જને ન શેવ આહૂર્યઃ સન્મધ્યે નિષત્તો ર્ણવો દુરોણે ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ જે ગોમાન્-ગાયોના ઋધઃ-દૂધના સ્થાન (= આવ/આંચળ)ની ન-સમાન

જને-ગુણોથી ઉત્તમ સેવવા યોગ્ય મનુષ્યમાં શેવ:-સુખ કરનારની ન-સમાન વેધા:-પૂર્ણ જ્ઞાનયુક્ત અદ્વત:-મોહરહિત સ્વાદ્મ-સ્વાદિષ્ટ પિતૃનામ્-અન્નોના ભોક્તા દુરોણે-ઘરમાં રણવ:-રમણ કરનાર આહુર્ય:-આહ્વાન કરવા યોગ્ય સભાની મધ્યમાં નિષત્ત:-રહેલ વિજ્ઞાનન્-સર્વ વિદ્યાનો અનુભવ કરીને અગ્નિ:-અગ્નિની સમાન જ્ઞાનપ્રકાશથી યુક્ત સભાધ્યક્ષ છે; તેનું સદા સેવન કરો. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ગાયોનું દૂધસ્થાન (=આવ) અને જેમ વિદ્વાન મનુષ્ય સર્વના હિતકારી હોય છે, તેમ શુભ ગુણોથી સંપન્ન, સભા આદિમાં વિરાજમાન સભા આદિના અધ્યક્ષ આદિ તમે સર્વને સુખી કરો. (૨)

પુત્રો ન જાતો ર્ણવો દુરોણે વાજી ન પ્રીતો વિશો વિ તારીત્ ।

વિશા યદહ્ને નૃભિઃ સનીલા અગ્નિર્દેવત્વા વિશ્વાન્યશ્યાઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! યત્-જે અગ્નિ:-અગ્નિની સમાન સભાધ્યક્ષ દુરોણે-ઘરમાં જાત:-ઉત્પન્ન થયેલ પુત્ર:-પુત્રની ન-સમાન રણવ:-રમણીય વાજી-અશ્વની ન-સમાન પ્રીત:-આનંદદાયક વિશ:-પ્રજાને વિતારીત્-દુઃખોથી મુક્ત કરાવે છે, અહ્ને-વ્યાપ્ત થનાર વ્યવહારમાં સનીલા:-સમાન સ્થાન વિશ:-પ્રજાઓને વિશ્વાનિ-સર્વ દેવત્વા-વિદ્યાનોના ગુણ અને કર્મોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેને તું અશ્યા:-પ્રાપ્ત થા. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને વિજ્ઞાન અને વિદ્યાનોના સંગ વિના આશ્રય વિના સર્વ સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકતા નથી, એમ જાણવું જોઈએ. (૩)

નકિષ્ટ એતા વ્રતા મિનન્તિ નૃભ્યો યદેભ્યઃ શ્રુષ્ટિં ચકર્થ્ ।

તત્તુ તે દંસો યદહન્સમાનૈર્નૃભિર્યદ્યુક્તો વિવે રપાંસિ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે તે-આપના એતા-એ વ્રતા-વ્રતો છે, તેની કોઈ પણ નકિઃ મિનન્તિ-હિંસા હનન કરી શકતા નથી. યત્-જે આપ એભ્યઃ-એ નૃભ્યઃ-મનુષ્યોને માટે યત્-જે શ્રુષ્ટિમ્-શીઘ્ર સત્ય વિદ્યાસમૂહને ચકર્થ્-કરો છો; અને અપાંસિ-સત્કર્મ અને વ્યક્ત ઉપદેશયુક્ત વચનોને વિવે:-પ્રાપ્ત કરો છો; તથા યત્-જે તે-આપના ઇદમ્-એ સમાનૈઃ-વિદ્યાદિ ગુણોની સમાન નૃભિઃ-મનુષ્યોની સાથે દંસઃ-કર્મ છે, તત્-તેને તુ-કોઈ મનુષ્ય નકિ + અહન્-હનન કરી શકતા નથી. જે યુક્ત:-યુક્ત બનીને આપ કરો છો, તેને અમે પણ સત્ય જ જાણીએ છીએ. (૪)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ, જેમ પરમેશ્વર અને આપ્ત વિદ્વાન પક્ષપાતનો ત્યાગ કરીને મનુષ્યાદિ (પ્રાણીઓ) પ્રત્યે સત્ય ઉપકારમય કર્મોની સાથે પ્રવૃત્ત થાય છે, તેમ સદા પ્રવૃત્ત થવું જોઈએ. (૪)

ઉષો ન જારો વિભાવોસ્ત્રઃ સંજ્ઞાતરૂપશ્ચિકેતદસ્મૈ ।

૨૪૦વેદભાષ્ય

त्मना वहन्तो दुरो व्यृण्वन्नवन्त विश्वे स्वर्दृशीके ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : જે ઉષ્ણ-પ્રાતઃકાળની ન-સમાન જાર:-દુઃખનો નાશ કરનાર ઉષ્ણ-કિરણોની સમાન સંજ્ઞાતસ્વ:-સમ્યક્ રૂપ જાણનાર વિભાવા-સમસ્ત પ્રકાશ કરનાર છે, તેને મનુષ્ય ચિકેતત્-જાણે. અસ્મૈ-તે ઈશ્વર અને વિદ્વાનને માટે સર્વોત્કૃષ્ટ પદાર્થ સમર્પણ કરે.

હે મનુષ્યો ! જેમ આ રીતે કરીને વિશ્વે-સમસ્ત વિદ્વાનજનો ત્મના-આત્માથી સ્વ:-સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર વિદ્યાસમૂહને વહન્ત:-પ્રાપ્ત કરીને દૃશીકે-દર્શન યોગ્ય વ્યવહારમાં દુર:-શત્રુઓને વ્યૃણ્વન્-મારે છે તથા સજ્જનોની પ્રશંસા કરે છે, તેમ તમે પણ શત્રુઓને મારો અને નવન્ત-સજ્જનોની સ્તુતિ કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યની સમાન સમસ્ત વિદ્યાઓના પ્રકાશક અને અગ્નિની સમાન સમસ્ત દુઃખોને બાળનાર-દાહક પરમેશ્વર અથવા વિદ્વાન છે, તેનો આત્મરૂપથી આશ્રય લઈને તથા દુષ્ટ વ્યવહારોનો ત્યાગ કરીને, મનુષ્યોએ સત્યવ્યવહારમાં સદા સદા સુખ પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાન, વિદ્યુત્ અને ઈશ્વરના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૬૯)

સૂક્ત-૭૦

વનેમ પૂર્વીર્યો મનીષા અગ્નિઃ સુશોકો વિશ્વાન્યશ્યાઃ ।

આ દૈવ્યાનિ વ્રતા ચિકિત્વાના માનુષસ્ય જનસ્ય જન્મ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : અમે જે સુશોક:-ઉત્તમ દીપ્તિયુક્ત ચિકિત્વાન્-જ્ઞાનવાન અગ્નિ:-જ્ઞાનાદિ ગુણયુક્ત અર્ય:- ઈશ્વર અથવા મનુષ્ય મનીષા-બુદ્ધિ તથા વિજ્ઞાનથી પૂર્વી:-પૂર્વ થયેલી પ્રજા તથા વિશ્વાનિ-સર્વ દૈવ્યાનિ-દિવ્યગુણ અને કર્મોથી સિદ્ધ થયેલ વ્રતા-વિદ્યા, ધર્મ અનુષ્ઠાન અને માનુષસ્ય-મનુષ્ય જાતિમાં થયેલ જનસ્ય-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન મનુષ્યના જન્મ-શરીરધારણથી ઉત્પત્તિને અશ્યાઃ-સમ્યક્ પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓનું આવનેમ્-સારી રીતે વિભાગથી સેવન કરીએ. (૧)

ભાવાર્થ : જે ઈશ્વરે અથવા જે મનુષ્યે કારણ, કાર્ય તથા જીવ અને શુદ્ધ ગુણ તથા કર્મ વ્યાપ્ત કરેલ છે, તે ઈશ્વરની મનુષ્યોએ ઉપાસના કરવી જોઈએ. અને તે મનુષ્યનો સત્કાર કરવો જોઈએ. તેના વિના મનુષ્ય જન્મની સફળતા થતી નથી. (૧)

ગર્ભો યો અપાં ગર્ભો વનાનાં ગર્ભશ્ચ સ્થાતાં ગર્ભશ્ચરથામ્ ।

અદ્રૌ ચિદસ્મા અન્તર્દુરોણે વિશાં ન વિશ્વો અમૃતઃ સ્વાધીઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : અમે જે જગદીશ્વર અને જીવ અપામ્-પ્રાણ અને જળની અન્ત:-મધ્ય ગર્ભ:-સ્તુતિ યોગ્ય અને અંદર રહેનાર વનાનામ્-સમ્યક્ સેવા કરવા યોગ્ય પદાર્થ અને કિરણોમાં ગર્ભ:-ગર્ભની સમાન આચ્છાદિત અદ્વૈ-પર્વત આદિ મહાન પદાર્થોમાં ચિત્-પણ ગર્ભની સમાન દુરોણે-ઘરમાં ગર્ભની સમાન વિશ્વ:-સમસ્ત ચેતન તત્વસ્વરૂપ અમૃત:-નાશરહિત સ્વાધી:-પદાર્થોનું સમ્યક્ ચિંતન કરનાર વિશામ્-પ્રજાઓની મધ્ય આકાશ અને વાયુની ન-સમાન બાહ્ય સ્થાનોમાં પણ સર્વ દિવ્યગુણ, કર્મયુક્ત વ્રતોને અણ્યા:-પ્રાપ્ત થાય, અસ્મૈ-તેના માટે સર્વ પદાર્થ છે, તેનું આવનેમ-સેવન કરીએ. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, એ જાણવું જોઈએ, કે ચેતન પરમેશ્વરથી કોઈ પણ વસ્તુ અવ્યાપ્ત નથી. ચેતન જીવ સારી રીતે કર્મ કરવાથી અને ફળોને ભોગવવાથી એક ક્ષણ પણ રહી શકતો નથી. તેથી તે સર્વવ્યાપક અન્તર્યામી (પરમેશ્વર)ને જાણીને તથા સદા પાપકર્મોનો ત્યાગ કરીને ધર્મયુક્ત કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થવું જોઈએ.

જે પૃથિવી આદિ કાર્યરૂપ પ્રજાઓ અનેક તત્વોના સંયોગથી ઉત્પન્ન અને વિયોગથી વિનિષ્ઠ થાય છે, તેમ ઈશ્વર, જીવ અને કારણ (પ્રકૃતિ) નામક પદાર્થો અનાદિ હોવાથી સંયોગ અને વિભાગથી પૃથક્ રહેવાના કારણે નિશ્ચય આરંભરહિત છે. તેમ જાણવું જોઈએ. (૨)

સ હિ ક્ષુપાવાં અગ્ની રંચીણાં દાશદ્યોઽસ્મા અરં સૂક્તૈઃ ।

एता चिकित्वा भूमा नि पाहि देवानां जन्म मर्तांश्च विद्वान् ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે ચિકિત્વ:-જ્ઞાનવાન જગદીશ્વર અને વિદ્વાન્-જ્ઞાતા ! ય:-જે ક્ષુપાવાન્-જેમાં ઉત્તમ અનેક રાત્રિઓ છે. અગ્નિ:-સર્વ સુખદાયક વિદ્યુત્ ની સમાન અસ્મૈ-એ રંચીણામ્-વિદ્યા, રત્ન, રાજ્ય આદિ પદાર્થોની પૂર્ણ પ્રાપ્તિને માટે એતા-એ અસ્-પૂર્ણ સૂક્તૈ:-ઉત્તમ વચનોથી ભૂમ-બહુજ દેવાનામ્-દિવ્યગુણ અને વિદ્વાનોના જન્મ-જન્મ મર્તાન્-મનુષ્ય ચ-મનુષ્યથી ભિન્નને દાશત્-આપો છો, સ:-તે આપ હિ-નિશ્ચય કરીને એની નિપાહિ-નિરંતર રક્ષા કરો. (૩)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વર વેદ દ્વારા, અન્તર્યામી સ્વરૂપ દ્વારા અથવા ઉપદેશો દ્વારા સમસ્ત વિદ્યાઓ સર્વ મનુષ્યોને પ્રદાન કરે છે. મનુષ્યોએ તે (પરમેશ્વર)ની ઉપાસના અને સંગતિ કરવી જોઈએ. (૩)

वर्धान्यं पूर्वीः क्षुपो विरूपाः स्थातुश्च रथमृतप्रवीतम् ।

अराधि होता स्वर्निषत्तः कृण्वन्विश्वान्यपांसि सत्या ॥ ४ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ જે અરાધિ-સિદ્ધ થયેલ અને યમ્-જે પરમેશ્વર તથા જીવને પૂર્વી:-સનાતન ક્ષપ:-શાન્તિયુક્ત રાત્રિ વિસ્ત્વા:-અનેક પ્રકારના રૂપોથી યુક્ત પ્રજા વર્ધાન્-વૃદ્ધિ કરે છે, જેને સ્થાતુ:-સ્થિત જગતને ર્ણપ્રવીતમ્-સત્ય કારણથી ઉત્પન્ન અને જળથી ચલાવવામાં આવેલ રથમ્-રમણ કરવા યોગ્ય સંસાર અને યાનને બનાવેલ છે. જે સ્વ:-સુખ સ્વરૂપ અને સુખદાયક નિષત્ત:-નિરંતર સ્થિત હોતા-ગ્રહણ કરનાર અને પ્રદાન કરનાર વિશ્વાનિ-સર્વ સત્યા-સત્યધર્મથી શુદ્ધ થયેલ અપાંસિ-કર્મોને

कृण्वन्-કરીને વર્તે છે, તે જાણો અને સત્સંગ કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જે પરમેશ્વરનું જ્ઞાન કરાવનારી એ સર્વ પ્રજાઓ છે અને જે જીવાત્મા દ્વારા (એ) જાણવા યોગ્ય છે. જે (પરમાત્મા) એ ઉત્પન્ન કર્યા વિના કોઈની ઉત્પત્તિ સંભવ નથી. જે (જીવાત્મા)ના પુરુષાર્થ વિના કોઈપણ સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી. જે સત્ય માની-માનનાર, સત્યકારી-કરનાર અને સત્યવાદી-બોલનાર છે, તેઓનું સર્વ મનુષ્યોએ સેવન કરવું જોઈએ. (૪)

गोषु प्रशस्तिं वनेषु धिषे भरन्त विश्वे बलिं स्वर्णः ।

वि त्वा नरः पुरुत्रा सपर्यन्पितुर्न जिब्रेर्वि वेदो भरन्त ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે ભરન્ત-સમસ્ત વિશ્વ તથા સર્વ ગુણોને ધારણ કરનાર જગદીશ્વર ! જે કારણે પુસ્ત્રા-પુષ્કળ દાતા આપ ગોષુ-પૃથિવી આદિ પદાર્થોમાં બલિમ્-સંવરણ સ્વ:-આદિત્ય વનેષુ-કિરણોમાં પ્રશસ્તિમ્-ઉત્તમ વ્યવહાર અને ન:-અમને વિધિષે-વિશેષ ધારણ કરો છો. વિશ્વે-સર્વ નર:-એથી વિદ્વાનો જેમ પુત્રા:-પુત્ર જિબ્રે:-વૃદ્ધાવસ્થા પ્રાપ્ત થયેલ પિતુ:-પિતાના સાનિધ્યથી વેદ:-વિદ્યા ધનને ભરન્ત-ધારણ કરે, ન-તેમ ત્વા-આપનું સપર્યન્-સેવન કરીએ છીએ. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જગદીશ્વરે નિત્ય કારણ (રૂપ પ્રકૃતિ)થી સમસ્ત કાર્યરૂપ પદાર્થોને ઉત્પન્ન કરીને સ્પર્શ આદિ ગુણો પ્રકાશિત કરેલ છે, જેની સૃષ્ટિમાં ઉત્પન્ન (પદાર્થો)ના પિતા, પુત્ર સમાન સમસ્ત જીવ દાયભાગી (ભાગીદાર) છે અને જેના દ્વારા સર્વના માટે સર્વ સુખ આપવામાં આવે છે, તેની તમે સર્વ આત્મા, મન, વાણી, શરીર અને ધનથી નિત્ય સેવા (= ભક્તિ) કર્યા કરો. (૫)

साधुर्न गृध्नुरस्तैव शूरो यातेव भीमस्त्वेषः समत्सु ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે ગૃધ્નુ:-બીજાના ઉત્કર્ષની ઈચ્છા કરનાર સાધુ:-પરોપકારી મનુષ્યની ન-સમાન અસ્તાઙ્ગ-શત્રુઓની ઉપર શસ્ત્ર પહોંચાડનાર-ફેંકનાર શૂર:-શૂરવીરની સમાન भीम:-ભયંકર યાતેવ-તથા દંડ પ્રાપ્ત કરનારની સમાન સમત્સુ-સંગ્રામોમાં ત્વેષ:-પ્રકાશમાન પરમેશ્વર અને સભાધ્યક્ષ છે, તેઓનું નિત્ય સેવન કરો. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! પરમેશ્વર અને સભા આદિના ધાર્મિક વિદ્વાન અધ્યક્ષ વિના અન્ય કોઈ આપણો રાજા, શત્રુઓને જીતનાર, દંડદાતા અને સુખોની વૃદ્ધિ કરનાર નથી, એવો નિશ્ચય કરીને તમે સર્વે પરોપકારમય સુખોની વૃદ્ધિ કરો. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર, મનુષ્ય અને સભા આદિ અધ્યક્ષના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૭૦)

सूक्त-७१

उप प्र जिन्वन्नशतीरुशन्तं पतिं न नित्यं जनयः सनीळाः ।

स्वसारः श्यावीमरुषीमजुप्रज्जित्रमुच्छन्तीमुषसं न गावः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે વિદ્વાન લોકો જે નિત્યમ્-વ્યભિચાર રહિત સ્વરૂપથી નિત્ય અવિનાશી ચિત્રમ્-આશ્ચર્ય ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવયુક્ત પરમેશ્વર અને સભાધ્યક્ષના સનીઢા:-એક ઈશ્વરના મધ્યમાં રહેવાથી સમાન સ્થાનવાળા જનય:-પ્રજા અને ડશન્તી:-શોભાયમાન સ્વસાર:-યુવતી, બહેન ડશન્તમ્-શોભાયમાન પોત-પોતાનાં પતિમ્-પાલન કરનાર પતિની ન-સમાન તથા ગાવ:-કિરણ અને ગાય શ્યાવીમ્-ધૂમાયિત વર્ણયુક્ત અને અસ્ત્રીમ્-અત્યંત લાલ વર્ણવાળી ડચ્છન્તીમ્-વિશેષ વાસ કરાવતી ડશસમ્-પ્રભાવ વેળાની ન-સમાન ડપાજુબ્રન્ સેવન કરીને પ્રજિન્વન્-અત્યંત તૃપ્ત રહો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ ધાર્મિક વિદુષી પતિવ્રતા સ્ત્રી પોતાના પતિનું ધાર્મિક વિવાહિતા સ્ત્રીનું સેવન કરે છે, તેમ જ પરમેશ્વર અને સભા આદિના અધ્યક્ષનું સર્વ મનુષ્યોએ સેવન કરવું જોઈએ. (૧)

વીळु चिद् दृळ्हा पितरौ न उक्थैरद्रि रुजन्नङ्गिरसो रवेण ।

चक्रुर्दिवो बृहतो गातुमस्मे अहः स्वर्विविदुः केतुमुस्त्राः ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : અમારે જે પિતર:-જ્ઞાની પુરુષ ડક્થૈ:-કહેલ ઉપદેશોથી ન:-અમારી દૃઢા-દૃઢ કેતુમ્-પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિ વીळુ-બળ સ્વ:-ચિત્-અને સુખને ડસ્ત્રા:-કિરણ અને ગાતુમ્-પૃથિવીની સમાન અહ:- તથા દિવસ અને બૃહત:-મહાન દિવ:-પ્રકાશમાન પદાર્થોની સમાન વિવિદુ:-જાણે છે; અને અઙ્ગિરસ:-વાયુ રવેણ-સ્તુતિ સમૂહથી અદિમ્-મેઘને રુજન્-પૃથિવી પર પાડવા-વરસાવવા સમાન અસ્મે-અમારા દુ:ખોનો ચક્રુ:-નાશ કરે છે, તેનું સેવન કરીએ. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ આપત વિદ્વાનોની સમ્યક્ સેવા કરીને, વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, બુદ્ધિ ઉત્પન્ન કરીને ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષરૂપી ફળોનું સેવન કરવું જોઈએ. (૨)

दधन्नृतं धनयन्नस्य धीतिमादिदुर्यो दिधिष्वोर्षु विभृत्राः ।

अतृष्यन्तीरपसौ यन्त्यच्छ देवाञ्जन्म प्रयसा वर्धयन्तीः ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે વિભૃત્રા:-વિશેષ ધારણ કરવાવાળી દિધિષ્વ:-આભૂષણોથી યુક્ત અતૃષ્યન્તી:-તૃષ્ણા આદિ દોષોથી રહિત વર્ધયન્તી:-ઉન્નતિ કરનારી કુમારી કન્યા દેવાન્-દિવ્યગુણોને પ્રાપ્ત કરીને અર્ચ:-વૈશ્યની ડત્-સમાન ઋત્તમ્-સત્ય વિજ્ઞાનને ધનયન્-વિદ્યા, ધન આદિ ધન યુક્ત થઈને આત્-ત્યાર પછી અસ્ય-બ્રહ્મચર્યની ધીતિમ્-ધારણાને દધન્-ધારણ કરીને પ્રયસા-અન્નની સમાન વર્તમાન અપસ:-કર્મ દેવાન્-વિદ્વાન્ જન્મ-અને વિદ્યાની પ્રાપ્તિને અચ્છ-સારી રીતે યન્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે, વેદાદિ શાસ્ત્રોમાં વિદ્વાન બનીને સમસ્ત સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ વેશ્ય જનો ધર્મ ધારણ કરીને ધન સંચય કરે છે-કમાય છે, તેમ કન્યા વિવાહ પૂર્વ ઉત્તમ બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદુષી અધ્યાપિકાઓને પ્રાપ્ત કરીને, તેની પાસેથી પૂર્ણ સુશિક્ષા અને વિદ્યા ગ્રહણ કરીને તથા વિવાહ કરીને સુસંતાનોના સુખને પ્રાપ્ત કરો. વિદ્યાના અધ્યયનનો સમય વિવાહ પછી સુલભ હોતો નથી. નિશ્ચય જ કોઈ પણ પુરુષ અથવા સ્ત્રીનો વિદ્યાગ્રહણ કરવામાં અનધિકાર નથી. (અર્થાત્ વિદ્યાધિકાર સર્વનો છે.) (૩)

મથીદ્યદીં વિભૃતો માતરિશ્વા ગૃહેગૃહે શ્યેતો જેન્યો ભૂત્ ।

આદીં રાજ્ઞે ન સહીયસે સચા સન્ના દૂત્યં ભૃગવાણો વિવાય ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : **ભૃગવાણ:**-અનેકવિધ પદાર્થવિદ્યાથી પદાર્થોને વ્યવહારમાં લાવનારાઓની સમાન વિદ્યાગ્રહણ કરેલી કન્યાઓ જેમ-એ **વિભૃત:**-અનેક પ્રકારની પદાર્થવિદ્યાને ધારણ કરનાર **શ્યેત:**-પ્રાપ્ત થવાનો **જેન્ય:**- તથા વિજયનો હેતુ તથા **માતરિશ્વા**-અન્તરિક્ષમાં શયન આદિ વિહાર કરનાર વાયુ **યત્**-જે **દૂત્યમ્**-દૂતનું કર્મ છે, તેને **આવિવાય**-સારી રીતે સ્વીકાર કરીને તથા **ગૃહે ગૃહે**-ઘર ઘર અર્થાત્ કલાયંત્રના કોષ્ટમાં **ઈમ્**-પ્રાપ્ત થયેલ અગ્નિને **મથીત્**-મથે છે. **આત્**-અથવા **સહીયસે**-યશથી સહન કરનાર **રાજ્ઞે**-રાજાને માટે **ન**-જેમ **ઈમ્**-વિજય સુખ પ્રાપ્ત કરાવનારી સેના **સચા**-સંગતિની સાથે **સન્**-વર્તમાન **ભૂત્**-થાય છે, તેમ વિદ્યાના યોગથી સુખ કરાવનારી થાઓ. (૪)

ભાવાર્થ : નિશ્ચય જ વિદ્યાગ્રહણ વિના સ્ત્રીઓને કાંઈપણ (પ્રાપ્ત) થતું નથી. જેમ વિદ્યાહીન પુરુષ, સુલક્ષણા વિદુષી સ્ત્રીઓને દુઃખ આપે છે, તેમ વિદ્યા-શિક્ષારહિત સ્ત્રીઓ પોતાના પતિઓને દુઃખ આપે છે. તેથી વિદ્યાગ્રહણ કર્યા પછી જ પરસ્પર પ્રીતિપૂર્વક સ્વયંવર-વિધિથી વિવાહ કરીને નિરંતર સુખી રહેવું જોઈએ. (૪)

મહે યત્પિત્ર ઈં રસં દિવે કરવં ત્સરત્પૃશ્ન્યશ્ચિકિત્વાન્ ।

સૃજદસ્તા ધૃષ્ણતા દિદ્યુમસ્મૈ સ્વાયાં દેવો દુહિતરિ ત્વિષિં ધાત્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ-યત્-જે **ક:**-સુખદાતા, **પૃશ્ન્ય:**-સ્પર્શ કરનાર, **અસ્તા**-ફેંકનાર, **ચિકિત્વાન્**-જાણનાર, **દેવ:**-વિદ્યા પ્રકાશને જોનાર સૂર્ય **મહે**-મહાન **પિત્રે**-પ્રકાશ આપવાથી પાલન કરનાર **દિવે**-પ્રકાશને માટે **ઈમ્**-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય **રસમ્**-ઔષધિના ફળને **અવસૃજત્**-રચીને **ઈમ્**-ત્સરત્-અંધકાર દૂર કરનાર **સ્વાયામ્**-પોતાની **દુહિતરિ**-કન્યા સમાન ઊષામાં **ત્વિસિમ્**-પ્રકાશ અને તેજને **ધાત્**-ધારણ કરીને તદનન્તર **દિદ્યુમ્**-દીપ્તિની **ધૃષ્ણતા**-દૃઢતાથી સુખ આપે છે, તેમ કર્યા કરો. (૫)

ભાવાર્થ : સર્વ માતા-પિતા આદિ મનુષ્યોએ પોત-પોતાનાં સંતાનોમાં વિદ્યા સ્થાપન કરવી જોઈએ. જેમ સૂર્ય પ્રકાશયુક્ત થઈને સર્વને પ્રકાશિત કરીને આનંદિત કરે છે, તેમ જ વિદ્યાવાન પુત્ર અને પુત્રીઓ સર્વ સુખ પ્રદાન કરે છે. (૫)

स्व आ यस्तुभ्यं दम् आ विभाति नमो वा दाशादुशतो अनु द्यून् ।
वर्धो अग्ने वयो अस्य द्विबर्हा यासद्राया सरथं यं जुनासि ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિજ્ઞાનપ્રદ ! વર્ધો-દ્વિબર્હા:-વિદ્યા અને શિક્ષાની વારંવાર વૃદ્ધિ કરનાર આપ જેમ સવિતા = સૂર્ય સ્વે-પોતાના દમે-ઘરમાં તુભ્યમ્-તને નમ:-અન્ન આદાશાત્-સારી રીતે આપીને આવિભાતિ-અને અત્યંત પ્રકાશ કરીને વા-અથવા અસ્ય-આ જગતની વય:-અવસ્થાને યાસત્-પહોંચાડે છે, તેમ ય:-જે શિષ્ય પોતાના ઘરમાં તમારા માટે અન્ન આપીને અર્થાત્ યથાયોગ્ય સત્કાર કરીને તથા આપના ગુણોને પ્રાપ્ત કરીને પ્રકાશિત થઈને અથવા એ પોતાના પુત્ર આદિની અવસ્થાને પહોંચાડે છે. અર્થાત્ ઔષધિ આદિ પદાર્થોથી નીરોગતા પ્રાપ્ત કરે છે; અને રાયા-વિદ્યાદિ ધન સરથમ્-મનોહર કર્મ અને ગુણો સહિત યમ્-જે મનુષ્યને જુનાસિ-વ્યવહારમાં ચલાવો છો, તે સર્વને અનુદ્યૂન્-પ્રતિદિન ઝણત:-અતિ ઉત્તમ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે તમારા પાલનકર્તા પિતૃજન અને આચાર્યજન તમને સુશિક્ષાથી, સૂર્યની સમાન વિદ્યારૂપી પ્રકાશથી અને અન્ન આદિના દાનથી સુખ સંપન્ન બનાવે છે. તે તમારા દ્વારા 'નિત્ય સેવન કરવા યોગ્ય' છે. (૬)

अग्निं विश्वा अग्नि पृक्षः सचन्ते समुद्रं न स्रवत सप्त यहीः ।

न जामिभिर्वि चिकित्ते वयो नो विदा देवेषु प्रमतिं चिकित्वान् ॥ ७ ॥

પદાર્થ : જે ચિકિત્વાન્-જ્ઞાનવાન-જ્ઞાનના હેતુ ન:-અમને દેવેષુ-વિદ્વાન અને દિવ્યગુણમાં પ્રમતિમ્-ઉત્તમ જ્ઞાનને વિદા:-પ્રાપ્ત કરીને વય:-જીવનનું વિચિકિત્તે-વિશેષ જ્ઞાન કરાવે છે તે અગ્નિમ્-અગ્નિની સમાન વિદ્વાન વિશ્વા:-સર્વ પૃક્ષ:-વિદ્યા સંપર્ક કરનાર પુત્ર અને દીપ્તિ સમુદ્રમ્-સમુદ્ર અને સ્રવત:-નદીની સમાન શરીરને ગમન કરાવતા સપ્ત-સાત અર્થાત્ પ્રાણ, અપાન, વ્યાન, ઉદાન, સમાન એ પાંચ અને સૂત્રરૂપ આત્માની તથા યહ્વી:-રક્ત અને વિદ્યુત્ આદિની ગતિઓની ન-સમાન અપિસચન્તે-સંબંધ કરે છે જેથી અમે મૂર્ખ અને દુઃખ આપનારી જામિભિ:-સ્ત્રીઓની સાથે ન-વસીએ નહિ. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ સમુદ્રમાં નદીઓ અને પ્રાણોમાં વિદ્યુત્ આદિ મળે છે, તેમ જ મનુષ્યો, સર્વ પુત્ર અને પુત્રીઓને બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યા અને વ્રત સંપૂર્ણ સમાપ્ત કરાવીને, તેઓના યુવાવસ્થામાં વિવાહ આદિ દ્વારા સંતાનો ઉત્પન્ન થાય તેઓને પણ વિદ્યા અને સુશિક્ષા ગ્રહણ કરાવે. આની સમાન અથવા આથી વિશેષ-અધિક અન્ય કોઈ ઉપકાર નથી. (અર્થાત્ મહાન ઉપકાર છે.) (૭)

आ यदिषे नृपतिं तेज आनद् छुचि रेतो निषिक्तं द्यौरभीके ।

अग्निः शर्धमनवद्यं युवानं स्वाध्यं जनयत्सूदयच्च ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે યુવતિ ! જેમ દ્યૌ:-પ્રકાશસ્વરૂપ અગ્નિ:-વિદ્યુત્ અષીકે-સંગ્રામમાં ઇષે-ઈચ્છાને પૂર્ણ

કરવા માટે યત્-જે નિષિક્તમ્-સ્થાપન કરેલ શુચિ-પવિત્ર રેતઃ-વીર્ય અને તેજઃ-પ્રગલ્ભતાને આનન્દ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેનાથી યુક્ત તું તેમ શર્ધમ્-બળવાન, અનવદ્યમ્-નિંદારહિત, યુવાનમ્-યુવાવસ્થાયુક્ત, સ્વાધ્યમ્-ઉત્તમ વિદ્યાયુક્ત વિદ્વાન નૃપતિમ્-મનુષ્યોમાં રાજમાન પતિને સ્વેચ્છાથી પ્રસન્નતાપૂર્વક પ્રાપ્ત કરીને આજનયત્-સંતાનોને ઉત્પન્ન ચ-તથા અવિદ્યા દુઃખને સૂદયત્-દૂર કર. (૮)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ ઉત્તમ વિદ્યા અને શારીરિક બળ વિના વ્યાવહારિક અને પારમાર્થિક (= સાંસારિક અને મોક્ષ સંબંધી) સુખ કદી પણ પ્રાપ્ત થતું નથી. સંતાનોને વિદ્યાનું દાન કર્યા વિના, માતા-પિતા આદિ ઋણમુક્ત બની શકતા નથી, એમ જાણવું જોઈએ. (૮)

મનો ન યોઽધ્વનઃ સદ્ય એત્યેકઃ સત્રા સૂરો વસ્વ ઈશે ।

રાજાના મિત્રાવરુણા સુપાણી ગોષુ પ્રિયમમૃતં રક્ષમાણા ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે વિદ્વાન મનુષ્ય જેમ મનઃ-સંકલ્પ-વિકલ્પરૂપ અન્તઃકરણની વૃત્તિની ન-સમાન અને સૂરઃ-પ્રાણીઓના ગર્ભોને બહાર કરનારી પ્રાણસ્થ વિદ્યુત્ની સમાન વિમાન આદિ યાનોથી અધ્વનઃ-માર્ગોને સદ્યઃ-શીઘ્ર એતિ-જાય છે અને યઃ-જે એકઃ-સહાયરહિત કેવલ એકાંકી સત્રા-સત્ય ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવયુક્ત વસ્વઃ-દ્રવ્યોને શીઘ્ર ઈશે-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ ગોષુ-પૃથ્વી અને રાજ્યમાં પ્રિયમ્-પ્રીતિકારક અમૃતમ્-સર્વ સુખો અને દુઃખોનો નાશ કરનાર અમૃતની રક્ષમાણા-રક્ષા કરનાર સુપાણી-ઉત્તમ વ્યવહારોથી યુક્ત મિત્રાવરુણૌ-સર્વના મિત્ર સર્વથી ઉત્તમ રાજાના-સભા અને વિદ્યાના અધ્યક્ષોની સમાન બનીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને સિદ્ધ કર્યા કરો. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્યો વિદ્યા અને વિદ્વાનોના સંગ વિના વિમાન આદિને રચીને તથા તેમાં બેસીને અન્ય દેશોમાં ગમનાગમન (કરી શકતા) નથી, સત્ય, વિજ્ઞાન અને ઉત્તમ દ્રવ્યોની પ્રાપ્તિ (કરી શકતા નથી) તથા ધાર્મિક રાજા રાજ્ય ચલાવી શકતો નથી, તેમ સ્ત્રી-પુરુષોમાં વિદ્યા તથા બળની ઉન્નતિ વિના સુખની વૃદ્ધિ (થઈ શકતી) નથી. (૯)

મા નોં અગ્ને સ્વખ્યા પિત્ર્યાણિ પ્ર મર્ષિષ્ઠા અભિ વિદુષ્કવિઃ સન્ ।

નભો ન રૂપં જરિમા મિનાતિ પુરા તસ્યા અભિશસ્તેરધીહિ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સમસ્ત વિદ્યાપ્રાપ્ત વિદ્વાન્ ! જરિમા-સ્તુતિને યોગ્ય કવિઃ-પૂર્ણ વિદ્યાને વિદુઃ-જાણકાર સન્-થઈને આપ નભોસ્ત્વં ન-જે આકાશ સર્વ રૂપવાળા પદાર્થોને નાશના સમયે પોતાનામાં ગુપ્ત કરી લે છે, (સમાવી લે છે,) તેમ નઃ-અમારા પુરા-પ્રાચીન પિત્ર્યાણિ-પિતા આદિથી ચાલ્યા આવતા સ્વખ્યા-મિત્રતા આદિ કર્મોને માભિ + પ્ર + મર્ષિષ્ઠાઃ-નષ્ટ કરો નહિ; અને તસ્યા-તે અભિશસ્તેઃ-નાશને અધીહિ-સમ્યક્ સ્મરણ રાખો એ રીતે થઈને જે સુખને મિનાતિ-નષ્ટ કરે છે, તેઓને દૂર કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ રૂપવાન પદાર્થ સૂક્ષ્મ અવસ્થાને પ્રાપ્ત થઈને અન્તરિક્ષમાં અદેશ્ય થઈ જાય છે-દેખાતા નથી, તેમ અમારી મિત્રતાઓ નાશ પામે નહિ, જેથી અમે સર્વે સર્વ પ્રકારના વિરોધનો ત્યાગ

કરીને પરસ્પર મિત્ર બનીને સદા સુખી રહી શકીએ. (૧૦)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર, સભાધ્યક્ષ, સ્ત્રી, પુરુષ અને વિદ્યુત્ વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૭૧)

સૂક્ત-૭૨

નિ કાવ્યા વેધસઃ શશ્વતસ્કર્હસ્તે દર્ધાનો નર્યા પુરૂણિ ।

અગ્નિર્ભુવદ્રયિપતી રયીણાં સત્રા ચક્રાણો અમૃતાન્નિ વિશ્વા ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે અગ્નિ:-અગ્નિ સમાન વિદ્વાન્ મનુષ્ય વેધસ:-સમસ્ત વિદ્યાઓને ધારણ અને વિધાન કરનાર શશ્વત:-અનાદિ સ્વરૂપ પરમેશ્વરના સંબંધથી પ્રકાશિત થયેલ પુરૂણિ-બહુજ સત્રા-સત્ય અર્થના પ્રકાશ કરનાર તથા અમૃતાન્નિ-મોક્ષ સુધી અર્થોને પ્રાપ્ત કરનાર વિશ્વા-સર્વ નર્યા-મનુષ્યોને સુખ થવાના હેતુ કાવ્યા-સર્વજ્ઞ નિર્મિત વેદોના સ્તોત્ર છે, તેને હસ્તે-હાથમાં પ્રત્યક્ષ પદાર્થની સમાન દર્ધાન:-ધારણ કરીને તથા વિદ્યા પ્રકાશને ચક્રાણ:-કરીને ધર્માચરણને નિ ક:-નિશ્ચય કરીને સિદ્ધ કરે છે, તે રયીણામ્-વિદ્યા, ચક્રવર્તી રાજ્ય આદિ ધનનું રયિપતિ:-પાલન કરનાર શ્રીપતિ ભુવત્-બને છે. (૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! અનન્ત સત્યવિદ્યા યુક્ત અનાદિ સર્વજ્ઞ પરમેશ્વરને તમારા હિતને માટે પોતાની વિદ્યાથી પૂર્ણ અનાદિરૂપ વેદોને પ્રકાશિત કરેલ છે. તેનું અધ્યયન અને અધ્યાપનથી ધાર્મિક વિદ્વાન બનીને તમે ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને સિદ્ધ કરો. (૧)

અસ્મે વત્સં પરિ ષન્તં ન વિન્દન્નિચ્છન્તો વિશ્વે અમૃતા અમૂરાઃ ।

શ્રમયુવઃ પદવ્યો ધિયન્ધાસ્તસ્થુઃ પદે પરમે ચાર્વગ્નેઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જે વિશ્વે-સર્વ અમૃતા:-ઉત્પત્તિ-મૃત્યુ રહિત અનાદિ અમૂરાઃ-મૂઢતાદિ દોષરહિત શ્રમયુવઃ-શ્રમથી યુક્ત પદવ્યઃ-સુખોને પ્રાપ્ત ધિયન્ધાઃ બુદ્ધિ અને કર્મને ધારણ કરનાર ઇચ્છન્તઃ-શ્રદ્ધાળુ બનીને મનુષ્ય અસ્મે-અમને વત્સમ્-પુત્ર સમાન સુખોમાં નિવાસ કરાવતી પ્રસિદ્ધ ચારેય વેદોની યુક્ત વાણીના સન્તમ્-વર્તમાનને પરિવિન્દન્-પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ અગ્નેઃ + ચારુ-શ્રેષ્ઠ જેમ હોય તેમ પરમાત્માના પરમે-સર્વોત્કૃષ્ટ પદે-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય સુખરૂપી મોક્ષપદમાં તસ્થુઃ-સ્થિત થાય છે; અને જેઓ જાણતા નથી, તેઓ તે બ્રહ્મપદને પ્રાપ્ત થતા નથી. (૨)

ભાવાર્થ : સર્વ જીવો અનાદિ છે, તેમાં જે મનુષ્ય-દેહધારી (જીવો) છે, તેને ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે, કે-હે મનુષ્યો ! તમે સર્વ વેદોના અધ્યયન અને અધ્યાપનથી અજ્ઞાનથી રહિત અને જ્ઞાનવાન તથા પુરુષાર્થી બનીને સુખી બનો. વેદાર્થ-જ્ઞાન વિના કોઈ પણ મનુષ્ય સમસ્ત વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી, તેથી તમે વેદવિદ્યાની સારી રીતે વૃદ્ધિ-ઉન્નતિ કરો. (૨)

તિસ્ત્રો યદગ્ને શરદસ્ત્વામિચ્છુચિઁ ઘૃતેન શુચયઃ સપર્યાન્ ।
નામાનિ ચિદ્ધિરે યજ્ઞિયાન્યસૂદયન્ત તન્વૃઃ સુજાતાઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વન્ ! યત્-જે શુચયઃ-પવિત્ર સુજાતાઃ-વિદ્યા, ક્રિયાઓમાં ઉત્તમ કુશળતાથી પ્રસિદ્ધ મનુષ્ય શુચિમ્-પવિત્ર ત્વામ્-તને તિસ્ત્રઃ-ત્રણ શરદઃ-ઋતુવાળા સંવત્સરોનું સપર્યાન્-સેવન કરે, તે ઇત્-જ યજ્ઞિયાનિ-કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનને સિદ્ધ કરવા યોગ્ય વ્યવહાર નામાનિ-અર્થ જ્ઞાન સહિત સંજ્ઞાઓને દધિરે-ધારણ કરે ચિત્-અને ઘૃતેન-ઘૃત અને જળની સાથે તન્વઃ-શરીરોને પણ અસૂદયન્ત-ચલાવે. (૩)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ (મનુષ્ય) વેદને ભણ્યા વિના વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. (વિદ્વાન બની શકતો નથી.) તથા વિદ્યા વિના મનુષ્ય જન્મની સફળતા અને પવિત્રતા પ્રાપ્ત થતી નથી, તેથી સર્વ મનુષ્યોએ પ્રયત્નપૂર્વક એ કર્મ સદા કરવું જોઈએ. (૩)

આ રોદસી બૃહતી વેવિદાનાઃ પ્ર રુદ્રિયા જશ્નિરે યજ્ઞિયાસઃ ।

વિદન્મતોઁ નેમધિતા ચિકિત્વાનગ્નિં પદે પરમે તસ્થિવાંસમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે સદ્રિયા-જે દુષ્ટ શત્રુઓને રડાવનારના સંબંધી વેવિદાનાઃ-અત્યંત જ્ઞાનયુક્ત યજ્ઞિયાસઃ-યજ્ઞની સિદ્ધિ કરનાર વિદ્વાનજનો બૃહતી-મહાન રોદસી-ભૂમિ, રાજ્ય અને વિદ્યાના પ્રકાશને આજશ્નિરે-ધારણ, પોષણ કરે છે અને સમગ્ર વિદ્યાઓને જાણે છે, તેઓના વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને જે ચિકિત્વાન-જ્ઞાનવાન નેમધિતા-પ્રાપ્ત પદાર્થોને ધારણ કરનાર મર્ત્તઃ-મનુષ્ય પરમે-સર્વોત્કૃષ્ટ પદે-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય મોક્ષપદમાં તસ્થિવાંસમ્-સ્થિત થઈને અગ્નિમ્-પરમેશ્વરને પ્રવિદત્-જાણે છે, તે જ સુખ ભોગવે છે. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વેદજ્ઞાતાથી ઉત્તમ નિયમપૂર્વક વેદવિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, વિદ્વાન બનીને તથા પરમેશ્વરને અને તેની રચનાને જાણીને અન્યોને વિદ્યા નિરંતર આપવી જોઈએ. (૪)

સંજાનાના ઉપ સીદન્નભિજ્ઞુ પત્નીવન્તો નમસ્યં નમસ્યન્ ।

રિરિવ્વાંસસ્તન્વઃ કૃણવત્ સ્વાઃ સઘ્વા સઘ્યુર્નિમિષિ રક્ષમાણાઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : જે સંજાનાનાઃ-સારી રીતે જાણીને પત્નીવન્તઃ-પ્રશંસિત વિદ્યાયુક્ત યજ્ઞોને જાણનારી સ્ત્રીઓ સહિત રક્ષમાણાઃ-ધર્મ અને વિદ્યાની રક્ષા કરીને વિદ્વાનજનો રિરિવાંસઃ-વિશેષ કરીને પાપોથી પૃથક્ અભિજ્ઞુ-જેવાઓની ઉપસીદન્-સન્મુખ સમીપ બેસવા જાણે છે તથા નમસ્યમ્-નમસ્કાર કરવા યોગ્ય પરમેશ્વર અને અધ્યાપક વિદ્વાનનો નમસ્યન્-સત્કાર કરે છે અને નિમિષિ-અધિક વિદ્યા હોવાથી સ્પર્ધાયુક્ત નિરંતર વ્યવહારમાં પ્રતિક્ષણમાં સઘ્યુઃ-મિત્રના સઘ્વા-મિત્રની સમાન સ્વાઃ-પોતાના તન્વઃ-શરીરોને

કૃણ્વત-બલવાન અને રોગરહિત કરે છે, તે મનુષ્ય ભાગ્યશાળી હોય છે. (૫)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર અને વિદ્વાનોના સત્કાર વિના કોઈને પણ વિદ્યાજન્ય સુખ મળી શકતું નથી, તેથી સત્કાર કરવા યોગ્યનો સત્કાર સદા કરવો જોઈએ. (૫)

ત્રિ: સ્પ્ત યદ્ ગુહ્યાનિ ત્વે ઇત્પદાવિદ્ન્નિહિતા યજ્ઞિયાસઃ ।

તેભીં રક્ષન્તે અમૃતં સ્વજોષાઃ પશૂંશ્ચ સ્થાતૃશ્ચરથં ચ પાહિ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! જેમ ત્વે-કોઈ યજ્ઞિયાસઃ-યજ્ઞને સિદ્ધ કરનાર વિદ્વાન યત્-જે નિહિતા-સ્થાપિત વિદ્યાદિ ધન રૂપ ગુહ્યાનિ-ગુપ્ત અને સર્વ રીતે સ્વીકાર કરનાર પદા-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય સ્પ્ત-સાત અર્થાત્ ચાર વેદો અને ત્રણ-ક્રિયા કૌશલ્ય, વિજ્ઞાન અને પુરુષાર્થોને ત્રિઃ-શ્રવણ, મનન અને વિચાર કરવાથી અવિન્દન્-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ તેને પ્રાપ્ત કરો.

હે જિજ્ઞાસુ સજ્જન ! જેમ સ્વજોષાઃ-સમાન પ્રીતિનું સેવન કરનાર તેભિઃ-તેઓથી અમૃતમ્-ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષરૂપી સુખ પશૂન્-પશુઓની સમાન મૂર્ખતાયુક્ત મનુષ્ય અને પશુ આદિ ચ-તથા નોકર આદિ સ્થાતૃન્-ભૂમિ આદિ સ્થાવર ચ-અને રાજ્ય, રત્નાદિ સંપત્તિ ચરથમ્-મનુષ્ય આદિ જંગમ ચ-અને સ્ત્રી-પુત્ર આદિની રક્ષન્તે-રક્ષા કરે છે, તેમ એની તું ઇત્-પણ પાહિ-રક્ષા કર. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોનું અનુકરણ કરવું જોઈએ મૂર્ખાઓનું નહિ. જેમ સત્પુરુષ કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થાય છે અને દુષ્ટ કર્મોનો ત્યાગ કરે છે, તેમ સંપૂર્ણ વ્યવહાર કરવો જોઈએ. (૬)

વિદ્વાં અગ્ને વયુનાનિ ક્ષિતીનાં વ્યાનુષક્ષુરુધોં જીવસેં ધાઃ ।

અન્તર્વિદ્વાં અધ્વનો દેવયાનાનતન્દ્રો દૂતો અંભવો હવિર્વાટ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સમસ્ત સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર જગદીશ્વર જે કારણે અન્તર્વિદ્વાન્-અન્તઃકરણના સર્વ વ્યવહારોને તથા વિદ્વાન્-બાહ્ય કાર્યોને જાણનાર અતન્દ્રઃ-આળસરહિત હવિર્વાટ્-વિજ્ઞાન આદિ પ્રાપ્ત કરાવનાર આપ ક્ષિતીનામ્-મનુષ્યોના વયુનાનિ-વિજ્ઞાનોને જીવસે-જીવનને માટે શુસ્થઃ-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય સુખોને આનુષક્-અનુકૂળતાપૂર્વક વિદ્યાઃ-વિવિધ પ્રકારથી ધારણ કરો છો. વેદ દ્વારા દેવયાનાન્-વિદ્વાનોના ગમનાગમનનાં અધ્વનઃ-માર્ગોનું દૂતઃ-વિજ્ઞાન કરાવનાર અંભવઃ-બનો છો, જેથી અમે આપનો સત્કાર અવશ્ય કરીએ. (૭)

ભાવાર્થ : જે પ્રાર્થના કરેલ અને સેવન કરેલ પરમેશ્વર અથવા વિદ્વાન ધર્મયુક્ત માર્ગને તથા વિજ્ઞાનને બતાવીને સુખ પ્રદાન કરે છે, તેનું સેવન કેમ ન કરવું જોઈએ ? (૭)

સ્વાધ્યોં દિવ આ સ્પ્ત યહ્વી રાયો દુરો વ્યૃત્જ્ઞા અંજાનન્ ।

વિદદ્ ગવ્યં સ્વર્મા દૃઢમૂર્વ યેના નુ કં માનુષી ભોજતે વિટ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ-જેમ **સ્વાધ્ય:**-સર્વના કલ્યાણને યથાવત્ વિચારનાર **ઋજ્ઞા:**-સત્યના જ્ઞાતા **યેન-જે** પુરુષાર્થથી **યહ્ની:**-મહાન **સપ્ત-સપ્ત** સંખ્યાવાળા **દિવ:**-સૂર્યની સમાન વિદ્યા **ગય:**-સર્વોત્કૃષ્ટ ધનના **દૂર:**-પ્રવેશ સ્થાનોને **વ્યજાનન-જાણે** છે તથા **સરમા-બોધ** સમાન કરનારી **માનુષી-મનુષ્યોની** **વિટ્-પ્રજા દૃઢમ્-દૃઢ-નિશ્ચલ** **ઊર્વમ્-દોષોનો** નાશ **ગવ્યમ્-પશુ** અને ઈન્દ્રિયોનો હિતકારક સુખને **નુ-શીઘ્ર વિદત્-પ્રાપ્ત** થાય છે, તેમ એ કર્મનું સદા સેવન કરો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે, કે-તેઓ જેવી વિદ્યા સ્વયં પ્રાપ્ત કરે, તેવી સર્વને નિષ્કપટતાથી સદા પ્રદાન કરે, જેથી મનુષ્યો સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકે. (૮)

આ યે વિશ્વાં સ્વપત્યાનિ તસ્થુઃ કૃણ્વાનાસો અમૃતત્વાય ગાતુમ્ ।

મહ્ના મહદ્ભિઃ પૃથિવી વિ તસ્થે માતા પુત્રૈરદિતિર્ધાયસે વેઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જેમ **યે-જે** અમૃતત્વાય-મોક્ષાદિ સુખને માટે **ગાતુમ્-ભૂમિની** સમાન બોધ સમૂહને **કૃણ્વાનાસઃ-**સિદ્ધ કરીને વિદ્વાનજન **મહદ્ભિઃ-**અત્યંત સુખકારક ગુણોની સાથે **વિશ્વા-સર્વ સ્વપત્યાનિ-**ઉત્તમ શિક્ષાયુક્ત પુત્રાદિને **મહ્ના-મહાન** ગુણોથી **ધાયસે-ધારણ**ને માટે **પૃથિવી-ભૂમિની** સમાન **પુત્રૈઃ-**પુત્રોની સાથે **માતા-માતાની** સમાન **અદિતિઃ-**પ્રકાશસ્વરૂપ સૂર્ય સ્થૂલ પદાર્થોમાં **વેઃ-**વ્યાપ્તિ કરનાર પક્ષીની સમાન **આતસ્થુઃ-**સ્થિત થાય છે, તેમ હું એ કર્મનું **વિતસ્થે-**વિશેષ કરીને ગ્રહણ કરું છું. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોની સમાન પોતાના સંતાનોને સુશિક્ષા અને વિદ્યાથી યુક્ત કરીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. (૯)

અધિ શ્રિયં નિ દંધુશ્ચારુમસ્મિન્દિવો યદક્ષી અમૃતા અકૃણ્વન્ ।

અધ ક્ષરન્તિ સિન્ધવો ન સૃષ્ટાઃ પ્ર નીચીરગ્ને અરુષીરજાનન્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : જેમ **યત્-જે** અમૃતાઃ-જન્મ-મરણરહિત મોક્ષને પ્રાપ્ત વિદ્વાનો **અસ્મિન્-આ** લોકમાં **શ્રિયમ્-**વિદ્યા અને રાજ્યના ઐશ્વર્યની શોભાને **અધિનિદધુઃ-**અધિક ધારણ **ચાસ્મ્-શ્રેષ્ઠ** વ્યવહાર **દિવઃ-**પ્રકાશ અને વિજ્ઞાનથી **અક્ષી-બહાર-અંદર** જોવાની વિદ્યાને **અકૃણ્વન્-સિદ્ધ** કરીને **સૃષ્ટાઃ-**ઉત્પન્ન કરેલી **સિન્ધવઃ-**નદીઓની **ન-સમાન** **અધ-અનન્તર** સુખોને **ક્ષરન્તિ-આપે** છે. **નીચીઃ-**નિરંતર સેવન કરનાર તથા **અસ્મીઃ-**પ્રભાતની સમાન સમસ્ત સુખ પ્રાપ્ત કરાવનારી વિદ્યા અને ક્રિયાને **પ્રાજાનન્-સમ્યક્** જાણે છે, તેમ હું **અગ્ને-વિદ્વાન** મનુષ્ય તું પણ યથાશક્તિ સર્વ કાર્યોને સિદ્ધ કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે યથાયોગ્ય રીતે વિદ્વાનોનું આચરણ અપનાવો, મૂખાઓનું નહિ. જેમ નદીઓ સુખ ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ તમે સર્વને માટે સર્વ સુખ ઉત્પન્ન કરો. (૧૦)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર અને વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૭૨)

સૂક્ત-૭૩

૩૨૨

ઋગ્વેદભાષ્ય

रुचिर्न यः पितृवित्तो वयोधाः सुप्रणीतिश्चिकित्सुषो न शासुः ।

स्योनशीरतिथिर्न प्रीणानो होतैव सद्म विधृतो वि तारीत् ॥ १ ॥

पદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ય:-જે વિદ્વાન્ પિતૃવિત્ત:-પિતા, પિતામહ આદિ અધ્યાપકોથી પ્રતીત વિદ્યાયુક્ત થયા રચિ:-ધનસમૂહની ન-સમાન વયોધા:-જીવનને ધારણ કરનાર સુપ્રણીતિ:-શ્રેષ્ઠ નીતિયુક્ત તથા ચિકિત્સુષુ:-શ્રેષ્ઠ વિદ્યાયુક્ત શાસુ:-ઉપદેશક મનુષ્યની ન-સમાન સ્યોનશી:-વિદ્યા, ધર્મ અને પુરુષાર્થ યુક્ત સુખમાં સૂવા પ્રીણાન:-પ્રસન્ન તથા અતિથિ:-મહાવિદ્વાન, ભ્રમણ અને ઉપદેશ કરનાર, પરોપકારી મનુષ્યની ન-સમાન વિધત:-અને સર્વ વ્યવહારોનું વિધાન કરે છે. તેના હોતેવ-આદાન-પ્રદાનવાળા સદ્મ-ધરની સમાન વિદ્યમાન શરીરનું વિતારીત-સેવન અને તેનાથી ઉપકાર લઈને સર્વને આપે છે, તેઓનું નિત્ય સેવન અને તેનાથી પરોપકાર કરાવ્યા કરો. (૧)

ભાવાર્થ : વિદ્યાની પ્રાપ્તિ, ધર્મનું અનુષ્ઠાન, વિદ્વાનોની સંગતિ અને ઉત્તમ વિચારો વિના કોઈ મનુષ્યને વિદ્યા અને સુશિક્ષાનો સાક્ષાત્કાર તથા વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોનું વિશેષ જ્ઞાન થતું નથી અને નિત્ય ભ્રમણશીલ વિદ્વાન અતિથિઓ (= સંન્યાસીઓ)ના ઉપદેશ વિના કોઈ ભ્રમરહિત થઈ શકતો નથી. તેથી એવા કાર્યો સદા કરવા જોઈએ. (૧)

देवो न यः सविता सत्यमन्मा क्रत्वा निपाति वृजनानि विश्वा ।

पुरुप्रशस्तो अमतिर्न सत्य आत्मेव शेवो दिधिषाय्यो भूत् ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ય:-જે સવિતા-સૂર્ય દેવ:-દિવ્યગુણની ન-સમાન સત્યમન્મા-સત્યને જણાવનાર અને જાણકાર વિદ્વાન ક્રત્વા-બુદ્ધિ અને કર્મથી વિશ્વા-સર્વ વૃજનાનિ-બલની નિપાતિ-રક્ષા કરે છે. પુસ્ત્રશસ્ત:-અનેકમાં અતિ શ્રેષ્ઠ અમતિ:-ઉત્તમ સ્વરૂપની ન-સમાન સત્ય:-અવિનાશી સ્વરૂપ દિધિષાય્યા:-ધારણ અને પોષણ કરનાર આત્મેવ-આત્માની સમાન શેવ:-સુખ સ્વરૂપ અધ્યાપક અને ઉપદેશક ભૂત-છે, તેનું સેવન કરીને વિદ્યાની ઉન્નતિ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા વિદ્વાનોના સંગ વિના સત્યવિદ્યા, બલ, સુખ, અને સૌન્દર્ય પ્રાપ્ત કરી શકાતા નથી, તેથી એ (વિદ્વાનો)ની નિત્ય સેવા કરવી જોઈએ. (૨)

देवो न यः पृथिवीं विश्वधाया उपक्षेति हितमित्रो न राजा ।

पुरः सदः शर्मसदो न वीरा अनवद्या पतिजुष्टेव नारी ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ય:-જે દેવ:-ઉત્તમ સુખોના પ્રદાતા પરમેશ્વર અને વિદ્વાન પૃથિવીમ્-ભૂમિની સમાન વિશ્વધાયા:-વિશ્વને ધારણ કરનાર હિતમિત્ર:-મિત્રોને ધારણ કરીને રાજા-સભા આદિના અધ્યક્ષની ન-સમાન ઉપક્ષેતિ-જાણે છે અને નિવાસ કરે છે તથા પુરઃ સદઃ-પ્રથમ શત્રુઓને મારનાર અને યુદ્ધને જાણનાર શર્મસદઃ-સુખમાં સ્થિર થનાર અને વીરા:-યુદ્ધમાં શત્રુઓને ફેંકનારની ન-સમાન

તથા અનવદ્યા-વિદ્યા, સૌંદર્ય આદિ શુભગુણયુક્ત નારી-નરની સ્ત્રી પતિજુષ્ટેવ-જે પતિની સેવા કરનારી તેની સમાન સુખોમાં નિવાસ કરે છે, તેનું સદા સેવન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો પરમેશ્વર અને વિદ્વાનોની સાથે પ્રવૃત્ત થયા વિના સમસ્ત બળ અને સુખ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તેથી એ બન્નેની સાથે સદા પ્રેમ રાખો. (૩)

તં ત્વા નરો દમ્ આ નિત્યમિદ્ધમગ્નેસર્ચન્ત ક્ષિતિષુ ધુવાસુ ।

અધિ દ્યુમ્નં નિ દધુર્ભૂર્યસ્મિન્ભવા વિશ્વાયુર્ધરુણો રયીણામ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિજ્ઞાન કરાવનાર વિદ્વાન ! રયીણામ્-વિદ્યા અને સમસ્ત પૃથ્વિનાં રાજ્યને સિદ્ધ કરેલ ધનને ધસ્યાઃ-ધારણ કરનાર વિશ્વાયુઃ-સંપૂર્ણ જીવનયુક્ત આપ અસ્મિન્-આ મનુષ્યજન્મ અને જગતમાં સહાયકારી ભવ-થાઓ. જે ભૂરિ-વિપુલ દ્યુમ્નમ્-વિદ્યા પ્રકાશરૂપી ધન અને કીર્તિને ધારણ કરો છો, તમ્-તે નિત્યમ્-નિરંતર ઇદ્ધમ્-પ્રદીપ્ત ત્વા-આપને ધુવાસુ-દેહ ક્ષિતિષુ-ભૂમિમાં જે નરઃ-નયન કરનાર સર્વ મનુષ્ય અધિનિદધુઃ-ધારણ કરે અને દમે-શાન્તિયુક્ત ઘરમાં આસચન્ત-કરે, તેનું નિત્ય સેવન કરો. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમેશ્વરે આ સંસારમાં અનેક પદાર્થો રચેલા છે અને જે વિદ્વાન દ્વારા જાણી શકાય છે, તેનું વિજ્ઞાન અને ઉપાસના તથા સંગતિથી સાચું સુખ પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તમે જાણો. (૪)

વિ પૃક્ષો અગ્ને મઘવાનો અશ્યુર્વિ સૂરયો દદતો વિશ્વમાયુઃ ।

સનેમ્ વાજં સમિથેષ્વર્યો ભાગં દેવેષુ શ્રવસે દધાનાઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સુખસ્વરૂપ વિદ્વાન આપના ઉપદેશથી જેમ અર્યઃ-સ્વામી અને વૈશ્ય ભાગમ્-સેવનીય પદાર્થોની સમાન મઘવાનઃ-સત્કારયુક્ત ધનવાન દદતઃ-દાનશીલ સૂરયઃ-મેધાવીજન સમિથેષુ-સંગ્રામો તથા દેવેષુ-વિદ્વાન અને દિવ્ય ગુણોમાં વાજમ્-વિજ્ઞાનને દધાનાઃ-ધારણ કરીને શ્રવસે-શ્રવણ કરવા યોગ્ય કીર્તિને માટે પૃક્ષઃ-અત્યુત્તમ અન્ન અને વિશ્વમ્-સંપૂર્ણ આયુઃ-જીવનને વ્યશ્યુઃ-વિશેષ કરીને ભોગવે અને વિસનેમ-વિશેષ કરીને સેવન કરે, તેમ અમે પણ કર્યા કરીએ. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા ઈશ્વર અને વિદ્વાનોની સહાયતા તથા પુરુષાર્થથી સમસ્ત સુખ પ્રાપ્ત કરી શકાય છે, અન્ય રીતે નહિ. (૫)

ઋતસ્ય હિ ધેનવો વાવશાનાઃ સ્મદૂધ્નીઃ પીપયન્ત દ્યુભક્તાઃ ।

પરાવતઃ સુમતિં ભિક્ષમાણા વિ સિન્ધવઃ સ્મયા સસ્તુરદ્રિમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ વાવશાનાઃ-અત્યંત શોભાયમાન સ્મદૂધ્નીઃ-પુષ્કળ દૂધ દેનારી ધેનવઃ-ગાયો પીપયન્ત-દૂધ આદિથી વૃદ્ધિ કરે છે, જેમ દ્યુભક્તાઃ-પ્રકાશના વિભિન્ન કિરણો પરાવતઃ-

દૂર દેશથી અદ્વિમ્-મેઘને સમયા-સમય પર વરસાવે છે, સિન્ધવઃ-નદીઓ સસ્તુઃ-વહે છે, તેમ તમે સુમતિમ્-શ્રેષ્ઠ વિજ્ઞાનને ભિક્ષમાણાઃ-જિજ્ઞાસાથી વિ-વિશેષતઃ જાણીને અન્ય મનુષ્યોને માટે વિદ્યા અને સુશિક્ષાપૂર્વક ઋત્વસ્ય હિ-મેઘથી ઉત્પન્ન જળની સમાન સત્યની જ વર્ષા કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિથી સમ્યક્ શુદ્ધ કરેલ જળ શક્તિદાયક બનીને વિજ્ઞાનોત્પાદક બની જાય છે, તેમ ધાર્મિક વિદ્વાન બને. (૬)

ત્વે અગ્ને સુમતિં ભિક્ષમાણા દિવિ શ્રવોં દધિરે યજ્ઞિયાસઃ ।

નક્તાં ચ ચક્રુરુષસાં વિરૂપે કૃષ્ણાં ચ વર્ણમરૂણાં ચ સં ધુઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન અધ્યાપક ! જે દિવિ-પ્રકાશસ્વરૂપ ત્વે-આપની સમીપ રહેલ ભિક્ષમાણાઃ-વિદ્યાઓની જ ભિક્ષા કરનાર યજ્ઞિયાસઃ-અધ્યયન રૂપ કર્મ ચતુર વિદ્વાનજન સુમતિમ્-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિને દધિરે-ધારણ કરે છે, તથા શ્રવઃ-શ્રવણ અને અન્નને સંધુઃ-ધારણ કરે છે; નક્તા-રાત્રિ ચ-અને ઉષસા-દિવસની સાથે કૃષ્ણમ્-શ્યામ અસ્મમ્-લાલ વર્ણમ્-વર્ણને ચ-તથા તેનાથી જુદા વર્ણોથી યુક્ત પદાર્થોને ધારણ કરે છે, ચ-અને વિસ્ત્રે-વિરુદ્ધ રૂપનું વિજ્ઞાન ચક્રુઃ-કરે છે, તેઓ સુખી થાય છે. (૭)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરની સૃષ્ટિના વિશેષ જ્ઞાન વિના કોઈપણ મનુષ્ય પૂર્ણ વિદ્વાન બની શકતો નથી. જેમ રાત્રિ અને દિવસ વિરુદ્ધ રૂપવાળા છે, તેમ સાધર્મ્ય-અનુકૂળ અને વેધર્મ્ય-વિરુદ્ધના વિચાર દ્વારા સર્વ પદાર્થોને (સર્વજન) જાણી લે. (ઉપયોગમાં લે.) (૭)

યાન્ રાયે મર્તાન્ત્સુષૂદો અગ્ને તે સ્યામ મઘવાનો વયં ચ ।

છાયેવ વિશ્વં ભુવનં સિસક્ષ્યાપપ્રિવાત્રોદસી અન્તરિક્ષમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-જગદીશ્વર ! જે આપ યાન્-જે સુસૂદઃ-ક્ષય અને વૃદ્ધિ ધર્મયુક્ત મર્તાન્-મનુષ્યોને રાયે-વિદ્યાદિ ધનને માટે સિસક્ષિ-સંયુક્ત કરો છો, તે-તેઓ વયમ્-અમે મઘવાન્ઃ-પ્રશંસિત ધનયુક્ત સ્યામ-થઈએ ચ-અને જે આપ છાયેવ-શરીરોની ઇયાની સમાન વિશ્વમ્-સમસ્ત ભુવનમ્-જગત અને રોદસી-આકાશ, પૃથિવી અને અન્તરિક્ષમ્-અન્તરિક્ષને આપપ્રિવાન્-પૂર્ણ કરનાર છો, તે આપની અમે ઉપાસના કરીએ. (૮)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ ઈશ્વરની ઉપાસના અને પુરુષાર્થ દ્વારા સ્વયં વિદ્યા આદિ ધનોથી સંપન્ન બનીને સર્વ મનુષ્યોને વિદ્યાદિ ધનોથી યુક્ત કરવા જોઈએ. (૮)

અર્વીંદ્ધિરગ્ને અર્વિતો નૃભિર્નૃવીરૈર્વીરાન્વનુયામા ત્વોતાઃ ।

ઈશાનાસઃ પિતૃવિત્તસ્ય રાયો વિ સૂર્યઃ શ્તહિમા નો અશ્યુઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સમસ્ત સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર પરમેશ્વર ! આપના દ્વારા ત્વોતાઃ-રક્ષિત અમે

અર્વશ્વિદઃ-પ્રશંસિત ઘોડાઓથી **અર્વતઃ**-ઘોડાઓને **નૃષિઃ**-વિદ્યાદિ શ્રેષ્ઠ ગુણયુક્ત મનુષ્યોથી **નૃન્**-શિક્ષા ધર્મવાળા મનુષ્યો અને **વીરૈઃ**-શૌર્યાદિ યુક્ત શૂરવીરો દ્વારા **વીરાન્**-શૂરતા આદિ ગુણયુક્ત શૂરવીરોની પ્રાપ્તિ **વનુયામ**-થવા માટે ઈચ્છા અને યાચના કરે. આપની કૃપાથી **પિતૃવિત્તસ્ય**-પિતાનાં ભોગવેલા **રાયઃ**-ધનથી **ઈશાનાસઃ**-સમર્થ સ્વામી અમે બનીએ અને **સૂરયઃ**-મેઘાવી વિદ્વાન **નઃ**-અમને **શતહિમા**-સો હેમન્ત ઋતુ સુધી **વ્યશ્યુઃ**-પ્રાપ્ત થતા રહે. (૯)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવોને અનુકૂળ આચરણ વિના મનુષ્યોને ઉત્તમ વિદ્યાઓ તથા પદાર્થોની પ્રાપ્તિ અસંભવ છે. તેથી એ કર્મોને નિત્ય પ્રેમથી કરવા જોઈએ. (૯)

एता ते अग्न उचथानि वेधो जुष्टानि सन्तु मनसे हृदे च ।

शक्रेम रायः सुधुरो यमं तेऽधि श्रवो देवभक्तं दधानाः ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે **વેધઃ**-સર્વના અન્તઃકરણમાં રહેલ હોવાથી સર્વને બુદ્ધિપ્રદધર્તા **અગ્ને**-વિજ્ઞાનદાતા જગદીશ્વર ! **તે**-આપની કૃપાથી **एता**+ **उचथानि**-વેદવચન અમારા **मनसे**-મન **च**-અને **हृदे**-આત્માને માટે **जुष्टानि**-સેવન કરેલ પ્રીતિકારક **सन्तु**-થાય. તે **ते**-આપના સંબંધથી **यमम्**-નિયમ કરનાર **देवभक्तम्**-વિદ્વાનોએ સેવન કરેલ **श्रवः**-શ્રવણને **दधानाः**-ધારણ કરીને **सुधुरः**-ઉત્તમ પદાર્થોને ધારણ કરનાર અમે **रायः**-ધનને પ્રાપ્ત કરવા માટે **अधि**-શક્રેમ-સમર્થ બનીએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સમસ્ત સુખ પ્રાપ્ત કરીને, સર્વને પ્રાપ્ત કરાવવા જોઈએ. (૧૦)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર, અગ્નિ, વિજ્ઞાન અને સૂર્યના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૭૩)

સૂક્ત-૭૪

उपप्रयन्तो अध्वरं मन्त्रं वोचेमाग्नये । आरे अस्मे च श्राण्वते ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ **उपप्रयन्तः**-સમીપ પ્રાપ્ત થનાર અમે એ **अस्मे**-અમારાથી **आरे**-દૂર **च**-અને સમીપમાં **श्राण्वते**-શ્રવણ કરીને **अग्नये**-પરમેશ્વરને માટે **अध्वरम्**-હિંસારહિત **मन्त्रम्**-વિચારનો નિરંતર **वोचेम्**-ઉપદેશ કરે, તેમ તમે પણ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, બહાર અને અંદર વ્યાપક તથા અમારાથી દૂર અને સમીપના સમસ્ત વ્યવહારોને જાણનાર પરમાત્માને જાણીને, અધર્મથી ડરીને તથા સત્ય ધર્મનું સેવન કરીને આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૧)

यः स्नीहितीषु पूर्व्यः संजग्मानासु कृष्टिषु । अरक्षद्वाशुषे गयम् ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! **पूर्व्यः**-પૂર્વજ વિદ્વાનોએ સાક્ષાત્કાર કરેલ જગદીશ્વર **संजग्मानासु**-પરસ્પર

પદાર્થ : હે સુશ્ચન્દ્ર-શ્રેષ્ઠ આનંદદાયક વિદ્વાન આપ ઇહ-આ સંસારમાં પ્રશસ્તયે-પ્રશંસા ચ-અને વીતયે-સુખોની પ્રાપ્તિને માટે જે હવ્યા-ગ્રહણ રચવા યોગ્ય દેવાન્-દિવ્યગુણો અને વિદ્વાનોની ઉપાવહાસિ-સમીપમાં સર્વ રીતે પ્રાપ્ત થાઓ છો, તાન્-તે આપને અમે પ્રાપ્ત થઈએ-કરીએ. (૬)

ભાવાર્થ : જ્યાં સુધી મનુષ્યો પરમેશ્વર, આપ વિદ્વાન તથા અગ્નિ આદિની સંગતિને માટે તથા તેના વિજ્ઞાનને માટે પ્રશંસનીય પુરુષાર્થ કરતા નથી, ત્યાં સુધી પૂર્ણ વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૬)

ન યોરુપ્લિદરશ્વ્યઃ શૃણ્વે રથસ્ય કચ્ચન । યદગ્ને યાસિં દૂત્યમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિની સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત વિદ્વાન આપ જેમ ઉપલ્લિઃ-અત્યંત શબ્દ કરનાર અશ્વ્યઃ-શીઘ્ર ચાલનાર યાનોમાં અત્યંત વેગકારક યત્-જે અગ્નિયુક્ત અને યોઃ-ચાલનાર અને ચલાવનાર રથસ્ય-વિમાનાદિ યાન સમૂહની મધ્ય સ્થિર થઈને દૂત્યમ્-દૂતની સમાન પોતાના કર્મને યાસિ-પ્રાપ્ત થાય છે, હું તે અગ્નિની સમીપ અને શબ્દોને કચ્ચન-કદી ન-ન શૃણ્વે-સાંભળીને કિન્તુ-પ્રાપ્ત થાઉં છું, તું પણ ન સાંભળીને પરંતુ પ્રાપ્ત થઈ શકે છે. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો શિલ્પ વિદ્યાથી સિદ્ધ કરેલ યાન અને યંત્રાદિમાં અત્યંત ગમન કરાવનાર અગ્નિની સમીપસ્થ શબ્દની નિકટ અન્ય શબ્દોને સાંભળી શકતા નથી. (૭)

ત્વોતો વાજ્યહયોઽભિ પૂર્વસ્માદપરઃ । પ્ર દાશ્વાં અગ્ને અસ્થાત્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્યાવાન જેમ અહ્યઃ-શીઘ્ર યાન માર્ગોને પ્રાપ્ત કરાવનાર અગ્નિ આદિ અપરઃ-અને ભિન્ન દેશ તથા ભિન્ન શિલ્પી = કારીગર ત્વોતઃ-આપના સંગમને પ્રાપ્ત થયેલ વાજી-પ્રશંસાને યોગ્ય વેગવાન દાશ્વાન્-દાતા પૂર્વસ્માત્-પ્રથમ સ્થાનથી અભિ-સન્મુખ પ્રાસ્થાત્-દેશ-દેશાન્તરમાં ચલાવનાર હોય છે, તેમ અન્ય મન આદિ પદાર્થો છે, તેમ તું જાણ. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ, કે શિલ્પવિદ્યાથી બનાવેલા યન્ત્રો વિના અગ્નિ વાહનો બનાવી શકાતા નથી. (૮)

ઉત દ્યુમત્સુવીર્યં બૃહદગ્ને વિવાસસિ । દેવેભ્યો દેવ દાશુષે ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-દિવ્ય ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવયુક્ત અગ્ને-અગ્નિ સમાન પ્રજ્ઞા =બુદ્ધિથી પ્રકાશિત વિદ્વાન તું દાશુષે-આપવાના સ્વભાવવાળા કાર્યોના અધ્યક્ષ ઉત-અથવા દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનોને માટે દ્યુમત્-શ્રેષ્ઠ પ્રકાશયુક્ત બૃહત્-મહાન સુવીર્યમ્-શ્રેષ્ઠ પરાક્રમનું વિવાસતિ-સેવન કરે છે, તેમ અમે પણ તેનું સેવન કરીએ. (૯)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો અને સેવકોએ વિદ્યા અને પુરુષાર્થ દ્વારા કાર્યોના સ્વામી વિદ્વાનોથી મહાન ઉપકાર ગ્રહણ કરવો જોઈએ. (૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર, વિદ્વાન અને વિદ્યુત્ અગ્નિના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે આ સૂક્તાર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૭૪)

સૂક્ત-૭૫

જુષસ્વ સપ્રથસ્તમ્ વચો દેવપ્સરસ્તમમ્ । હવ્યા જુહ્વાન આસનિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આસનિ-પોતાના મુખમાં હવ્યા-ભોજન કરવા યોગ્ય પદાર્થોને જુહ્વાન:-ખાનાર આપ જે વિદ્વાનોના સપ્રથસ્તમમ્-અતિ વિસ્તારયુક્ત દેવપ્સરસ્તમમ્-વિદ્વાનોએ અત્યંત ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વ્યવહાર અને વચ:-વચન છે, તમ્-તેનું જુષસ્વ-સેવન કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઉત્તમ ભોજનોથી બ્રહ્મચારી રહે છે, તેઓ શરીર અને આત્માના સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧)

અથા તે અઙ્ગિસ્તમાગ્ને વેધસ્તમ પ્રિયમ્ । વોચેમ્ બ્રહ્મ સાનસિ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે અઙ્ગિસ્તમ-સમસ્ત વિદ્યાના જ્ઞાતા અને વેધસ્તમ-અત્યંત ધારણ કરનાર અગ્ને-વિદ્વાન્ ! જેમ અમે વેદોને ભણીને અથ-તદનન્તર તે-તેને સાનસિ-સદાથી વિદ્યમાન પ્રિયમ્-પ્રીતિકારક બ્રહ્મ-ચારેય વેદોને વોચેમ-ઉપયોગ કરીએ, તેમ તું પણ કર. (૨)

ભાવાર્થ : ઉપદેશ વિના કોઈ મનુષ્યને ઈશ્વર વિષયક અથવા વિદ્યુત્ આદિ વિષયક જ્ઞાન થવું સંભવ નથી, તેથી સર્વ મનુષ્યોએ ઉપદેશ કરવો અને સાંભળવો જોઈએ. (૨)

કસ્તે જામિર્જનાનામગ્ને કો દાશ્વધ્વરઃ । કો હુ કસ્મિન્નસિ શ્રિતઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! જનાનામ્-મનુષ્યોની મધ્ય તે-આપનો ક:-કોણ મનુષ્ય હ-નિશ્ચય કરીને જામિ:-જ્ઞાતા છે ? ક:-કોણ દાશ્વધ્વર:-દાતા અને રક્ષક છે ? તું ક:-કોણ છે ? અને કસ્મિન્-શેમાં શ્રિત:-આશ્રિત અસિ-છે ? તે સર્વ વાતોનો ઉત્તર આપ. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોમાં કોઈ દુર્લભ પરમેશ્વરના અને અગ્નિના જ્ઞાતા અને જ્ઞાન કરાવનાર હોઈ શકે છે, શા માટે ? એ બંનેના અત્યંત આશ્ચર્ય-યુક્ત ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ હોવાના કારણે (હોય છે). (૩)

ત્વં જામિર્જનાનામગ્ને મિત્રો અસિ પ્રિયઃ । સખા સખિભ્યઃ ઈંદ્યઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-પંડિત ! જે કારણે જનાનામ્-મનુષ્યોને જામિ:-જળની સમાન સુખ આપનાર મિત્ર:-સર્વના મિત્ર પ્રિય:-કામના-ઈચ્છાઓને પૂર્ણ કરનાર યોગ્ય વિદ્વાન ત્વમ્-આપ સખિભ્યઃ-સર્વના મિત્ર મનુષ્યોને ઈંદ્યઃ-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય સખા-મિત્ર હોય, તેનાથી સર્વને સેવન કરવા યોગ્ય વિદ્વાન અસિ-હોય. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે સદા મિત્ર બનીને સર્વને વિદ્યાદિ શુભ ગુણ અને સુખ પ્રદાન કરે છે, તે (પરમેશ્વર અને વિદ્વાન)નું સેવન કેમ ન કરવું જોઈએ ? (૪)

यजां नो मित्रावरुणा यजां देवां ऋतं बृहत् । अग्ने यक्षि स्वं दमम् ॥ ५ ॥

पદાર્થ : હે અગ્ને-પૂર્ણ વિદ્યાવાન મનુષ્ય જે કારણે સ્વમ્-આપ પોતાના દમમ્-ઉત્તમ સ્વભાવરૂપી ઘરને યક્ષિ-પ્રાપ્ત થાઓ છો; તેથી ન:-અમારા માટે મિત્રાવરુણા-બલ અને પરાક્રમ કરનાર પ્રાણ અને ઉદાનને યજ-નીરોગ કરો. બૃહત્-મહાન વિદ્યાદિ-ગુણયુક્ત ઋતમ્-સત્ય વિજ્ઞાનને યજ-પ્રકાશિત કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વરનો પરોપકાર માટે ન્યાય આદિ શુભ ગુણ આપવાનો સ્વભાવ છે, તેમ વિદ્વાનોએ પણ પોતાનો સ્વભાવ રાખવો જોઈએ. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર, અગ્નિ અને વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૭૫)

સૂક્ત-૭૬

का त उपैतिर्मनसो वराय भुवदग्ने शंतमा का मनीषा ।

को वा यज्ञैः परि दक्षं त आप् केन वा ते मनसा दाशेम ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-શાન્તિદાયક વિદ્વાન ! તે-તું અતિશ્રેષ્ઠ વિદ્વાનની કા-કોણ ઉપેતિ:-સુખોને પ્રાપ્ત કરનારી નીતિ મનસ:-ચિત્તની વરાય-શ્રેષ્ઠતાને માટે ભુવત્-થાય છે ? કા-કોને શન્તમા-સુખપ્રાપ્તક મનીષા-બુદ્ધિ થાય છે ? ક:-કોણ મનુષ્ય વા-નિશ્ચય કરીને તે-આપના દક્ષમ્-બળને યજ્ઞૈ:-ભણવા-ભણાવવા આદિ યજ્ઞોને કરીને પરિ-સર્વત્રથી આપ-પ્રાપ્ત થાય છે ? વા-અથવા અમે કેન-કેવી રીતે મનસા-મનથી તે-આપને માટે શું દાશેમ-આપીએ. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરમેશ્વરથી અથવા વિદ્વાનથી એવી પ્રાર્થના કરવી જોઈએ-‘હે ભગવન્ ! આપ કૃપા કરીને અમારી શુદ્ધિને માટે જે શ્રેષ્ઠ કર્મ, શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ અને જે બળ છે, તે સર્વ (અમને) પ્રદાન કરો. જેથી અમે આપને જાણીને તથા પ્રાપ્ત કરીને સુખી બનીએ. (૧)

एह्यग्न इह होता नि षीदार्दब्धः सु पुरएता भवा नः ।

अर्वतां त्वा रोदसी विश्वमिन्वे यजामहे सौमनसाय देवान् ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સર્વના ઉપકારક વિદ્વાન ! અદબ્ધ:-અહિંસક અમારી સેવા કરવા યોગ્ય આપ ઇહ-આ સંસારમાં હોતા-દાતા ન:-અમને આ, ઇહિ-પ્રાપ્ત થાઓ, સુ-સારી રીતે નિ-નિત્ય સીદ-જ્ઞાન આપો, પુર એતા-પ્રથમ પ્રાપ્ત કરનાર ભવ-થાઓ. જે ત્વા-આપને વિશ્વમિન્વે-સમસ્ત સંસારને તૃપ્ત કરનાર રોદસી-વિદ્યા, પ્રકાશ અને ભૂગોળનું રાજ્ય અથવા આકાશ અને પૃથિવી અવતામ્-પ્રાપ્ત થાય, તે આપ મહે-મહાન સૌમનસાય-મનમાંથી વેરભાવ છોડાવવા માટે દેવાન્-વિદ્વાન, દિવ્યગુણોને પોતાના

આત્મામાં યજ-સંગત કરો. (૨)

ભાવાર્થ : એ રીતે સત્યભાવથી પ્રાર્થના કરેલ પરમેશ્વર અથવા સેવા કરેલ ધાર્મિક વિદ્વાન મનુષ્યોને એ સર્વ સુખ આપે છે. (૨)

પ્ર સુ વિશ્વાન્નૃક્ષસો ધક્ષ્યન્ને ભવાં યજ્ઞાનામભિશસ્તિપાવાં ।

અથા વહુ સોમપતિં હરિશ્ચ્યામાતિથ્યમસ્મૈ ચકૃમા સુદાવ્ને ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-દુષ્ટોને શિક્ષા કરનાર સભાધ્યક્ષ જે રીતે આપ વિશ્વાન્-સર્વ રક્ષસઃ-દુષ્ટ મનુષ્યો અથવા દોષોનો પ્ર-સારી રીતે ધક્ષિ-નાશ કરો છો, તેથી યજ્ઞાનામ્-જે જાણવા યોગ્ય શિલ્પ છે તેના સાધકોની અભિશસ્તિપાવા-હિંસાથી રક્ષા કરનાર સુ-સારી રીતે ભવ-થાઓ. જેમ સૂર્ય હરિશ્ચ્યામ્-ધારણ અને આકર્ષણથી સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેમ સોમપતિમ્-ઐશ્વર્યના સ્વામીને આવહ-પ્રાપ્ત થાઓ. અથ-પશ્ચાત્ અસ્મૈ-એ સુદાવ્ને-વિદ્યા, વિજ્ઞાન, સુશિક્ષા અને રાજ્યાદિ ધનના દાતા આપને માટે અમે આતિથ્યમ્-સત્કાર ચકૃમ્-કરીએ છીએ. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વરે સંસારમાં પ્રાણીઓને માટે સર્વ પદાર્થો પ્રદાન કરેલ છે, તેમ જે વિદ્યા અને સુશિક્ષા આપે તેનો સત્કાર મનુષ્યોએ કરવો જોઈએ, અન્યનો નહિ. (૩)

પ્રજાવતા વચસા વહ્નિરાસા ચ હુવે નિ ચ સત્સીહ દેવૈઃ ।

વેષિ હોત્રમુત પોત્રં યજત્ર બોધિ પ્રયન્તર્જનિતર્વસૂનામ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે યજત્ર-દાતા વહ્નિઃ-સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર તું ઇહ-આ સંસારમાં દેવૈઃ-વિદ્વાનોની સાથે સત્સિ-સભામાં પ્રજાવતા-પ્રજાની સંમતિને અનુકૂળ વચસા-વચનોથી બોધિ-બોધ કરાવે છે. જેથી હોત્રમ્-હવન કરવા યોગ્ય ચ-અને પોત્રમ્-પવિત્ર કરનારી વસ્તુઓને ઊત-પણ નિ-નિરંતર વેષિ-પ્રાપ્ત કરે છે. જનિતઃ-સુખોત્પાદક પ્રયન્તઃ-પ્રયત્નથી તું જેમ વસૂનામ્-પૃથિવ્યાદિ પદાર્થોને જાણનાર છે, તેમ હું આસા-મુખથી તારી ચ-અન્ય વિદ્વાનોની પણ આહુવે-સ્તુતિ કરું છું. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરમેશ્વરની અને ધાર્મિક વિદ્વાનોની સહાયતાથી પવિત્રતા ઉત્પન્ન કરીને સમસ્ત શ્રેષ્ઠ પદાર્થો પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. (૪)

યથા વિપ્રસ્ય મનુષો હવિર્ભિર્દેવાં અયજઃ કવિર્ભિઃ કવિઃ સન્ ।

એવા હોતઃ સત્યતર્ ત્વમદ્યાગ્ને મન્દ્રયાં જુહ્વાં યજસ્વ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે સત્યતર્-અત્યંત સત્યાચારનિષ્ઠ હોતઃ-સત્ય ગ્રહણ કરનાર દાતા અગ્ને-વિદ્વાન યથા-જેમ કોઈ ધાર્મિક વિદ્વાન અથવા વિદ્યાર્થી વિપ્રસ્ય-બુદ્ધિમાન અધ્યાપક વિદ્વાન મનુષઃ-મનુષ્યને અનુકૂળ

બનીને સર્વનો સુખદાયક બને છે, તેમ **एव-જ त्वम्-તું अद्य-અત્યારે कविभिः-પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત બહુદર્શી** વિદ્વાનોની સાથે **कविः-વિદ્વાન બહુદર્શી सन्-બનીને જે हविर्भिः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય ગુણ, કર્મ અને** સ્વભાવોની સાથે **देवान्-વિદ્વાન અને दिव्य गुणोने अयजः-પ્રાપ્ત થાય છે, તે मन्त्राया-આનંદ કરનારી** **जुह्वा-દાન ક્રિયાથી અમને यजस्व-પ્રાપ્ત થાય. (૫)**

ભાવાર્થ : જેમ કોઈ મનુષ્ય વિદ્વાનો દ્વારા વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, સર્વનો ઉપકારી બનીને, સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરીને તથા મનુષ્યોને વિદ્વાન બનાવીને આનંદિત થાય છે, તેમ જ “આપ્ત” મનુષ્ય હોય છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર અને વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૭૬)

સૂક્ત-૭૭

कथा दाशेमाग्नेये कास्मै देवजुष्टोच्यते भामिने गीः ।

यो मर्त्येष्वमृतं ऋतावा होता यजिष्ठ इत्कृणोति देवान् ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાનોની સાથે છીએ, તેમ **यः-જે मर्त्येषु-મરણધર્મયુક્ત શરીરાદિમાં અમृतः-મૃત્યુરહિત ऋतावा-સત્ય ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત होता-દાતા અને ગ્રહણકર્તા यजिष्ठः-અત્યંત સત્સંગી देवान्-દિવ્યગુણ, દિવ્યપદાર્થ અને વિદ્વાનોને कृणोति-કરે છે. अस्मै-એ ઉપદેશક भामिने-દુષ્ટોપર ક્રોધકારક अग्नेये-સત્યાસત્ય જણાવનારને માટે का-કોણ कथा-કથા હેતુથી देवजुष्टा-વિદ્વાનોની સેવિત गीः-વાણી उच्यते-કહેલ છે, તેને इत्-જ दाशेम-વિદ્યા પ્રદાન કરે, તેમ તમે પણ કરો. (૧)**

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન મનુષ્ય ઈશ્વરની સ્તુતિ અને વિદ્વાનોની સેવા કરીને તથા દિવ્ય ગુણોને પ્રાપ્ત કરીને સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ આપણે પણ (સુખ પ્રાપ્ત) કરવા જોઈએ. (૧)

यो अध्वरेषु शंतम ऋतावा होता तमू नमोभिरा कृणुध्वम् ।

अग्निर्यद्वैर्मर्त्तीय देवान्त्स चा बोधाति मनसा यजाति ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે **यः-જે अग्निः-વિજ્ઞાન સ્વરૂપ પરમેશ્વર અથવા વિદ્વાન अध्वरेषु-સદા ગ્રહણ કરવા યોગ્ય યજ્ઞોમાં शन्तमः-અત્યંત આનંદદાતા તથા ऋतावा-શુભ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવથી સત્ય છે, होता-સમસ્ત જગત અને વિજ્ઞાનના દાતા છે; તથા यत्-જે मर्त्तीय-મનુષ્યને માટે देवान्-વિજ્ઞાન આદિ શ્રેષ્ઠ ગુણોને बोधाति-સમ્યક જાણે च-અને यजाति-સંગતિ કરે એટલા માટે तम्-उ-તે પરમેશ્વર અથવા વિદ્વાનોને नमोभिः-નમસ્કાર અને અન્નોથી પ્રસન્ન आकृणुध्वम्-કરો. (૨)**

ભાવાર્થ : આપ્ત પુરુષ વિના મનુષ્યોને વિદ્યા ભણાવનાર કોઈ હોતા નથી અને તેને છોડીને અન્ય કોઈ સત્કાર કરવા યોગ્ય પણ હોતા નથી, એમ જાણવું જોઈએ. (૨)

સ હિ ક્રતુઃ સ મર્યઃ સ સાધુર્મિત્રો ન ભૂદદ્વૃતસ્ય ર્થીઃ ।

તં મેધૈષુ પ્રથમં દૈવ્યન્તીર્વિશ્નુ ઉપ બ્રુવતે દ્વસ્મમારીઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : દેવ્યન્તીઃ-કામનાયુક્ત આરીઃ-જ્ઞાનવાણી વિશ્નુઃ-પ્રજા મેધૈષુ-ભણવા-ભણાવવા અને સંગ્રામ આદિ યજ્ઞોમાં તમ્-તે દ્વસ્મમ્-દુઃખનાશક સભાધ્યક્ષ માનીને પ્રથમમ્-સર્વોત્તમ ઉપબ્રુવતે-કહે છે, કે જે મિત્રઃ-સર્વના મિત્ર ન-જેવા ભૂત્-હોય સઃ-તે હિ-જ સર્વ રીતે ક્રતુઃ-બુદ્ધિ ને સુકર્મથી યુક્ત સઃ-તે જ મર્યઃ-માનવતા રાખનાર અને સઃ-તેજ સાધુઃ-સર્વનો ઉપકાર કરનાર તથા શ્રેષ્ઠ માર્ગમાં ચાલનાર વિદ્વાન અદ્વૃતસ્ય-આશ્ચર્ય કર્મોથી યુક્ત સેનાનો ર્થીઃ-ઉત્તમ રથવાળો રથી થાય. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે સર્વોત્તમ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત સજ્જન અને સર્વનો ઉપકારક મનુષ્ય હોય, તેને જ સભાપતિના રૂપમાં રાજા માનવો જોઈએ. કોઈ એક (મનુષ્ય)ની આજ્ઞામાં રાજ્ય વ્યવહારનો અધિકાર ન આપવો જોઈએ. પરંતુ શિષ્ટ લોકોની સભાને આધીન જ સર્વ કાર્યો રાખવા જોઈએ. (૩)

સ નૌ નૃણાં નૃતમો રિશાદા અગ્નિર્ગિરોઽવસા વેતુ ધીતિમ્ ।

તના ચ્ચ યે મઘવાનઃ શર્વિષ્ટા વાજપ્રસૂતા ઇષ્યન્ત મન્મ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે નઃ-અમારી નૃણામ્-મનુષ્યોની મધ્યે નૃતમઃ-અતિ શ્રેષ્ઠ મનુષ્ય અગ્નિઃ-પાવકની સમાન અધિક જ્ઞાન પ્રકાશયુક્ત અવસા-રક્ષણ આદિથી ગિરઃ-વાણી અને ધીતિમ્-ધારણાને ઈચ્છે છે. સઃ-તે મનુષ્ય અમારા મધ્યમાં સભાધ્યક્ષના અધિકારને વેતુ-પ્રાપ્ત થાય. જે નૃણામ્-મનુષ્યોમાં રિશાદાઃ-શત્રુનાશક વાજપ્રસૂતાઃ-વિજ્ઞાન આદિ ગુણોથી સુશોભિત શર્વિષ્ટાઃ-અત્યંત બળવાન મઘવાનઃ-પ્રશંસિત ધનયુક્ત તના-વિસ્તૃત ધનોની તથા મન્મ-વિજ્ઞાન ચ-વિદ્યા આદિ શ્રેષ્ઠતમ્ ગુણોની ઇષ્યન્ત-ઈચ્છા કરે છે. તેથી અમારી સભામાં તેઓ સભાસદ બને. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરમોત્તમ સભાધ્યક્ષ સહિત મનુષ્યોવાળી સભાનું નિર્માણ કરીને રાજ્ય વ્યવહારના પાલનના વિષયમાં ચક્રવર્તી રાજ્યનું શાસન કરવું જોઈએ. તેના વિના કદી કોઈનું રાજ્ય સ્થિર રહી શકતું નથી, તેથી સદા તેનું આચરણ કરીને, એકને રાજા માનવો જોઈએ નહિ. (૪)

પુવાગ્નિર્ગોતમેભિર્ઋતાવા વિપ્રૈભિરસ્તોષ્ટ જાતવેદાઃ ।

સ ઇષુ દ્યુમ્નં પીપયત્સ વાજં સ પુષ્ટિં યાતિ જોષ્મા ચિકિત્વાન્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : ગોતમેભિઃ-અત્યંત સ્તુતિ કરનારા વિપ્રેભિઃ-બુદ્ધિમાનોથી જે જાતવેદાઃ-જ્ઞાન અને પ્રાપ્ત

થનાર **ઋઘ્નાવા**-જેના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવ સત્ય છે **અગ્નિ**:-તે ઈશ્વરની સ્તુતિ કરનાર અને **અસ્તોષ્ટ**-જેની વિદ્વાન સ્તુતિ કરે છે **એવ**-તે જ **એષુ**-એ ધાર્મિક વિદ્વાનોમાં **ચિકિત્વાન્**-જ્ઞાનવાન **દ્યુમ્નમ્**-વિદ્વાના પ્રકાશને પ્રાપ્ત કરે છે. **સ**:-તે જ **જોષમ્**-પ્રસન્નતા અને **પુષ્ટિમ્**-ધાતુઓની સામ્યતાને **આ યાતિ** પ્રાપ્ત કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ધાર્મિક વિદ્વાન આર્યજનોની સાથે નિવાસ કરીને, તેની સભામાં બેસીને તથા વિદ્યા અને સુશિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને સુખોનું સેવન કરવું જોઈએ. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર, વિદ્વાન અને અગ્નિના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૭૭)

સૂક્ત-૭૮

અભિ ત્વા ગોતમા ગિરા જાતવેદો વિચર્ષણે । દ્યુમ્નૈર્ભિ પ્ર ણોનુમઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે **જાતવેદ**:-પદાર્થોના જ્ઞાતા **વિચર્ષણે**-સર્વ પ્રથમ દર્શન યોગ્ય પરમેશ્વર ! આપની જેમ **ગોતમા**:-અત્યંત સ્તુતિ કરનાર **દ્યુમ્નૈ**:-ધન અને વિમાનાદિ ગુણો તથા **ગિરા**-ઉત્તમ વાણીઓની સાથે **અભિ**-સર્વત્રથી સ્તુતિ કરીએ છીએ અને જેમ અમે **અભિ**,-**પ્રણોનુમઃ**-અત્યંત નમ્ર બનીને **ત્વા**-આપની પ્રશંસા કરીએ છીએ; તેમ સર્વ મનુષ્યો કરે. (૧)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમેશ્વરની ઉપાસના કરીને તથા આપ વિદ્વાનોની સંગતિ કરીને વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧)

તમ્ ત્વા ગોતમો ગિરા રાયસ્કામો દુવસ્યતિ । દ્યુમ્નૈર્ભિ પ્ર ણોનુમઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે ધનપતે **રાયસ્કામ**:-ધનના ઈચ્છુક **ગોતમ**:-વિદ્વાન મનુષ્ય **ગિરા**-વાણી દ્વારા **ત્વા**-તારી **દુવસ્યતિ**-સેવા કરે છે, તેમ **તમ્** **ઉ**-તે આપની **દ્યુમ્નૈ**:-શ્રેષ્ઠ કીર્તિની સાથે વર્તમાન અમે **અભિ**-સર્વત્રથી **પ્રણોનુમઃ**-અતિ પ્રશંસા કરીએ છીએ. (૨)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરની ઉપાસના અને વિદ્વાનોના સંગ વિના મનુષ્યોને ધનની ઈચ્છાની પૂર્તિ શક્ય નથી. (૨)

તમ્ ત્વા વાજસાતમમઙ્ગિર્સ્વદ્વવામહે । દ્યુમ્નૈર્ભિ પ્ર ણોનુમઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! **દ્યુમ્નૈ**:-પુણ્યરૂપી કીર્તિઓની સાથે જે **વાજસાતમમ્**-અત્યંત પ્રશંસિત બોધથી યુક્ત વિદ્વાનની તથા **ત્વા**-આપની અમે **હવામહે**-સ્તુતિ કરીએ છીએ, **ઉ**-સારી રીતે **અઙ્ગિસ્વત્**-પ્રશંસિત પ્રાણની સમાન **અભિ**-સર્વત્રથી **પ્રણોનુમઃ**-સત્કાર કરીએ છીએ, તેમ તમે **તમ્**-તેની સ્તુતિ અને પ્રણામ કરો. (૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે વિદ્વાનોને ઉક્ત રીતે સત્કારથી સંતુષ્ટ કરીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને સિદ્ધ કરો. (૩)

तम् त्वा वृत्रहन्तम् यो दस्यूरवधूनुषे । द्युमैरुभि प्र णोनुमः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! ય:-જે ત્વમ્-તું દસ્યૂન્-મહા દુષ્ટ ડાકુઓને અવધૂનુષે-કંપાવીને નષ્ટ કરે છે. તમ્-તે વૃત્રહન્તમ્-મેઘ વરસાવનાર સૂર્યની સમાન ત્વા-તારી દ્યુમૈ:-કીર્તિકારી શસ્ત્રો સહિત અમે અભિ-સન્મુખ આવીને પ્રણોનુમ:-સ્તુતિ કરીએ. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અજાતશત્રુ (= જેનો કોઈ શત્રુ ન હોય) સભાધ્યક્ષ = રાજા દુષ્ટાચારી શત્રુઓને પરાજિત કરે છે, તેની તમે સદા સેવા કરો. (૪)

अवोचाम् रहूगणा अग्नये मधुमद्वचः । द्युमैरुभि प्र णोनुमः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! રહૂગણા:-અધર્મયુક્ત પાપીઓના સમૂહનો ત્યાગ કરનાર તમે જેમ દ્યુમૈ:-ઉત્તમ કીર્તિની સાથે વર્તમાન અગ્નયે-વિદ્વાનને માટે મધુમત્-મધુર વચ:-વચન બોલો છો, તેમ અમે પણ અવોચામ-બોલીએ. જેમ અમે તેઓને અભિ પ્રણોનુમ:-નમસ્કારાદિથી પ્રસન્ન કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને ઉચિત છે, કે ધર્મયુક્ત કીર્તિવાળા મનુષ્યોની જ પ્રશંસા કરે, અન્યની નહિ. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર અને વિદ્વાનોના ગુણ કથનથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૭૮)

सूक्त-७८

हिरण्यकेशो रजसो विसारेऽहिर्धुनिर्वातइव ध्रजीमान् ।

शुचिभ्राजा उषसो नवेदा यशस्वतीरपस्युवो न सत्याः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે કુમારી બ્રહ્મચારિણી કન્યાઓ ! રજસ:-ઐશ્વર્યની વિસારે-સ્થિરતામાં હિરણ્યકેશ: હિરણ્ય-સુવર્ણ સમાન અથવા પ્રકાશમાન ન્યાયનો પ્રકાર કરનાર ધુનિ:-શત્રુઓને કંપાવનાર અહિ:-મેઘની સમાન ધ્રજીમાન્-શીઘ્ર ચાલવાવાળો વાત ઇવ-વાયુની સમાન ઉષસ:-પ્રાતઃકાળની સમાન શુચિભ્રાજા:-પવિત્ર વિદ્યા, વિજ્ઞાનથી યુક્ત નવેદા:-અવિદ્યાનો નિષેધ કરનારી વિદ્યાયુક્ત યશસ્વતી:-શ્રેષ્ઠ કીર્તિયુક્ત અપસ્યુવ:-પ્રશસ્ત કર્મ કરનારીની ન-સમાન તમે સત્યા:-સત્ય ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવયુક્તવાળી બનો. (૧)

ભાવાર્થ : જે કન્યાઓ ચોવીસ વર્ષની વય સુધી બ્રહ્મચર્ય અને ઈન્દ્રિય સંયમપૂર્વક અંગો અને ઉપાંગો સહિત વેદ-વિદ્યાનું અધ્યયન કરે છે, તે જ મનુષ્ય જાતિને સુભૂષિત કરનારી હોય છે. (૧)

आ ते सुपर्णा अमिनन्तुँ एवैः कृष्णो नोनाव वृषभो यदीदम् ।

शिवाभिर्न स्मर्यमानाभिरागात्पतन्ति मिहः स्तनयन्त्यभ्रा ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ જેમ સુપર્ણા:-કિરણો આડમિનન્ત-સર્વથી વર્ષાને પ્રેરણા કરે છે, એવૈ:-પ્રાપ્ત થનાર ગુણો સહિત કૃષ્ણ:-આકર્ષણ કરીને વૃષભ:-વરસાવનાર સૂર્ય ઇદમ્-જળને વરસાવે છે, તેમ વિદ્યાની નોનાવ-પ્રશંસિત વૃષ્ટિ કરે તથા સ્મયમાનાભિ:-સદા પ્રસન્નમુખ શિવાભિ:-શુભ ગુણ, કર્મ યુક્ત કન્યાઓની સાથે તેની સમાન બ્રહ્મચારીઓના વિવાહની ન-સમાન સુખની યદિ-જે અગાત્-પ્રાપ્ત થાય; અને જેમ અન્ના-મેઘ સ્તનયન્તિ-ગર્જે છે અને મિહ:-વર્ષાથી જળ આપતન્તિ-વરસાવે છે, તેમ વિદ્યાને વરસાવે તો તે-તને શું અપ્રાપ્ત થાય-અર્થાત્ સમસ્ત સુખ પ્રાપ્ત થાય. (૨)

ભાવાર્થ : જે (વિદ્વાન્) બ્રહ્મચારીઓની (વિદુષી) બ્રહ્મચારિણી સ્ત્રી બને, તે કેમ સુખ પ્રાપ્ત ન કરે ? (૨)

યદીમૃતસ્ય પયસા પિયાનો નયન્નૃતસ્ય પૃથિભી રજિષ્ઠૈઃ ।

અર્યમા મિત્રો વરુણઃ પરિજ્મા ત્વચં પૃચ્ચન્ત્યુપરસ્ય યોનોૈ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : યત્-જ્યારે ર્હાસ્ય-જળના પયસા-રસને પિયાન:-પીનાર રજિષ્ઠૈ:-અત્યંત ધૂળવાળા પૃથિભિ:-માર્ગોથી ઉપરસ્ય-મેઘના યોનોૈ-કારણ રૂપ મંડલમાં ઈમ્-જળને નયન્-પ્રાપ્ત કરાવીને અર્યમા-નિયન્તા સૂર્ય મિત્ર:-પ્રાણ વસ્ત્ર:-ઉદાન અને પરિજ્મા-સર્વત્રથી ગમન-આગમનવાળો જીવ ર્હાસ્ય-સત્યની ત્વચમ્-ત્વચા રૂપ ઉપરના ભાગથી પૃચ્ચન્તિ-સંબંધ ધરાવે છે, ત્યારે સર્વના જીવનનો સંબંધ થાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : જ્યારે કાર્ય અને કારણમાં રહેલ પ્રાણ અને જળ આદિની સાથે જીવ સંબંધ ધરાવે છે-પ્રાપ્ત કરે છે, ત્યારે તે શરીર ધારણ કરવા માટે સમર્થ બને છે. (૩)

અગ્ને વાજસ્ય ગોમંત ઈશાનઃ સહસો યહો । અસ્મે ધેહિ જાતવેદો મહિ શ્રવઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે જાતવેદ:-પ્રાપ્ત વિજ્ઞાન અગ્ને-વિદ્યુત્ની સમાન વિદ્યાના પ્રકાશથી યુક્ત વિદ્વાન્ ! સહસ:-બળવાન પુરુષના યહો-પુત્ર ગોતમ:-ધનયુક્ત વાજસ્ય-અન્નના ઈશાન:-સ્વામી આપ અસ્મે-અમારામાં મહિ-મહાન શ્રવઃ-વિદ્યા શ્રવણને ધેહિ-ધારણ કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્વાન માતા-પિતાઓનાં સંતાન બનીને તથા માતા-પિતા અને આચાર્યગણોથી શિક્ષિત બનીને પુષ્કળ અન્ન, ઐશ્વર્ય તથા વિદ્યાવાન બને, તેઓ અન્યોમાં એ સર્વની વૃદ્ધિ કરે. (૪)

સ ઈધાનો વસુષ્કવિર્ગ્નિરીલેન્યો ગિરા । રેવદ્સ્મભ્યં પુર્વણીક દીદિહિ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે પુર્વણીક-બહુ જ સેનાઓથી યુક્ત જે તું જેમ બળતણથી અગ્નિ:-અગ્નિ પ્રકાશિત થાય છે, તેમ ઈન્ધાન:-પ્રકાશમાન ગિરા-વાણીથી ઈલેન્ય:-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય વસુ:-સુખમાં વાસ કરાવનાર અને કવિ:-સર્વ શાસ્ત્રનો જ્ઞાતા હોય છે સ:-તે અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે રેવત્-પુષ્કળ ધન કરનાર સર્વ વિદ્યાના શ્રવણને દીદિહિ-પ્રકાશિત કરે. (૫)

ભાવાર્થ : ... જેમ વિદ્યુત્, પ્રસિદ્ધ અગ્નિ અને સૂર્ય એ ત્રણેય રૂપોથી અગ્નિ સમસ્ત સ્થૂળ પદાર્થોને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ ચારેય વેદોના જ્ઞાતા વિદ્વાન સમસ્ત વિદ્યાઓમાં પ્રકાશિત કરે છે.

(૫)

क्षुपो राजन्नुत त्मनाग्ने वस्तोरुतोषसः । स तिग्मजम्भ रक्षसो दह प्रति ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે તિગ્મજમ્ભ-તીવ્ર મુખથી બોલનાર અગ્ને-વિદ્વાન્ રાજન્-ન્યાય અને વિનયથી પ્રકાશમાન તું ત્મના-પોતાના આત્માથી જેમ સૂર્ય ક્ષપ:-રાત્રિઓને નિવૃત્ત કરીને સ:-તે વસ્તો:-દિવસ ઉત-અને ઉષસ:-પ્રભાતને વિદ્યમાન કરે છે, તેમ ધાર્મિક સજ્જનોમાં વિદ્યા અને વિનયનો પ્રકાશ કર ઉત-અને રક્ષસ:-દુષ્ટાચારિઓને પ્રતિદહ-પ્રત્યક્ષ દગ્ધ કર-બાળી નાખ. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય સમીપસ્થ (= પોતાના ક્ષેત્રમાં રહેલ) જગતને પ્રકાશિત કરીને તથા વર્ષા કરીને સર્વની રક્ષા કરે છે-અને અંધકારનું નિવારણ કરે છે; તેમ રાજા લોકો ધાર્મિકોની રક્ષા કરીને તથા દુષ્ટોને દંડ આપીને રાજ્યની રક્ષા કરે. (૬)

अवा नो अग्न ऊतिभिर्गायत्रस्य प्रभर्मणि । विश्वासु धीषु वन्द्य ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે વન્દ્ય-અભિવાદન અને પ્રશંસા કરવા યોગ્ય અગ્ને-વિજ્ઞાનસ્વરૂપ સભાધ્યક્ષ આપ કૃતીભિ:-રક્ષા આદિથી ગાયત્રસ્ય-ગાયત્રીના પ્રગાથ વા આનંદકારક વ્યવહારનો પ્રભર્મણિ-જેમાં સારી રીતે રાજ્યાદિનું ધારણ હોય તે તથા વિશ્વાસુ-સર્વ પ્રજ્ઞાસુ-બુદ્ધિઓમાં ન:-અમારી અવ-રક્ષા કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે સભાધ્યક્ષ-રાજા આદિના દ્વારા બુદ્ધિનું ઉદ્બોધન કરવામાં આવે છે, તેનો મનુષ્યોએ સત્કાર કરવો જોઈએ. (૭)

आ नो अग्ने रयिं भर सत्रासाहं वरेण्यम् । विश्वासु पृत्सु दुष्टरम् ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-દાનદાતા અને દાન અપાવનાર સભાધ્યક્ષ આપ ન:-અમારા માટે વિશ્વાસુ-સર્વ પૃત્સુ-સેનાઓમાં સત્રાસાહમ્-સત્યને સહન કરે છે, જેથી તે વરેણ્યમ્-શ્રેષ્ઠ ગુણ અને સ્વભાવ થવાના હેતુ દુષ્ટરમ્-શત્રુઓના દુઃખ (થી) તરવા યોગ્ય રયિમ્-શ્રેષ્ઠ દ્રવ્ય સમૂહને આભર-સારી રીતે ધારણ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : સભાધ્યક્ષના આશ્રય વિના અને અગ્નિ આદિ પદાર્થોના ઉત્તમ પ્રયોગ વિના સંપૂર્ણ સુખ પ્રાપ્ત કરી શકાતું નથી, તેમ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૮)

आ नो अग्ने सुचेतुना रयिं विश्वायुपोषसम् । माडीकं धैहि जीवसे ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિજ્ઞાન અને સુખ પ્રદાતા વિદ્વાન આપ ન:-અમારા જીવસે-જીવન માટે સુચેતુના-શ્રેષ્ઠ વિજ્ઞાનથી યુક્ત વિશ્વાયુપોષસમ્-સંપૂર્ણ આયુભર પુષ્ટિકારક માડીકમ્-સુખોથી સિદ્ધ કરનાર રયિમ્-ધનને આધેહિ-સર્વ રીતે ધારણ કરો. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા સારી રીતે સેવા કરેલ વિદ્વાન, સુશિક્ષા પ્રદાન કરીને પૂર્ણ આયુ પ્રાપ્ત કરાવનારી વિદ્યા અને ધનને પ્રદાન કરે છે. (૯)

પ્ર પૂતાસ્તિગ્મશોચિષે વાચો ગોતમાગ્નયે । ભરસ્વ સુમ્નયુર્ગિરઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે ગોતમ્-અત્યંત સ્તુતિ અને સુમ્નયુઃ-સુખની ઈચ્છા કરનાર વિદ્વાન ! તું તિગ્મશોચિષે-તીક્ષ્ણ બુદ્ધિ પ્રકાશયુક્ત અગ્નયે-વિજ્ઞાનરૂપ અને વિજ્ઞાનયુક્ત વિદ્વાનને માટે પૂતાઃ-પવિત્ર કરનારી ગિરઃ-વિદ્યાની શિક્ષા અને ઉપદેશથી યુક્ત વાણીઓને ધારણ કરે છે, તે વાચઃ-વાણીને પ્રભસ્વ-સર્વ રીતે ધારણ કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે કારણે પરમેશ્વર અથવા પરમ વિદ્વાન વિના કોઈ અન્ય સત્ય વિદ્યાઓને પ્રકાશિત કરી શકતા નથી, તેથી તે બન્નેનું સદા સમ્યક્ સેવન કરવું જોઈએ. (૧૦)

યો નો અગ્નેઽભિદાસત્યન્તિ દૂરે પદીષ્ટ સઃ । અસ્માકમિદ્ વૃધે ભવ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિજ્ઞાનદાતા યઃ-જે વિદ્વાન આપ અન્તિ-સમીપ અને દૂરે-દૂર નઃ-અમારા માટે અભિદાસતિ-અભીષ્ટ વસ્તુઓને આપો છો અને પદીષ્ટ-પ્રાપ્ત થાઓ છો, સઃ-તે આપ અસ્માકમ્-અમારી ઇત્-જ વૃધે-વૃદ્ધિ-ઉન્નતિ કરનાર ભવ-થાઓ. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે અંદર અને બહાર વ્યાપ્ત પરમેશ્વર જ્ઞાન વિજ્ઞાપતિ કરે છે અને જે વિદ્વાન દૂર અને સમીપ રહીને સત્યોપદેશ દ્વારા વિદ્યાઓ પ્રદાન કરે છે, તેઓનું મનુષ્યોએ સેવન શા માટે ન કરવું જોઈએ ? (૧૧)

સહસ્ત્રાક્ષો વિચર્ષણિર્ગ્ની રક્ષાંસિ સેધતિ । હોતા ગૃણીત ડ્વચ્ચઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ ડ્વચ્ચઃ-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય સહસ્ત્રાક્ષઃ-અસંખ્ય નેત્રોના સામર્થ્યયુક્ત વિચર્ષણિઃ-સાક્ષાત્ જોનાર હોતા-સર્વોત્તમ વિદ્યા આદિ પદાર્થોના દાતા અગ્નિઃ-પરમેશ્વર રક્ષાંસિ-દુષ્ટ કર્મ અને દુષ્ટ કર્મવાળા પ્રાણીઓને સેધતિ-દૂર અને વેદોના ગૃણીતે-ઉપદેશ કરે છે, તેમ તું પણ બન. (૧૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે એ જાણી લો, કે પરમેશ્વર અથવા વિદ્વાન જે કર્મોને કરવાનો ઉપદેશ આપે છે, તે (કર્મ) કરવા યોગ્ય છે અને જેનો નિષેધ કરે છે, તે ત્યાગ કરવા યોગ્ય છે. (૧૨)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અગ્નિ, ઈશ્વર અને વિદ્વાનના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી એના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૭૯)

સૂક્ત-૯૦

इत्था हि सोम इन्मदै ब्रह्मा चकार वर्धनम् ।

शविष्ठ वज्रिन्नोजसा पृथिव्या निः शशा अहिमर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ १ ॥

पदार्थ : હે શવિષ્ઠ-બળવાન વજ્રિન્-શસ્ત્રાસ્રવિદ્યાથી સંપન્ન સભાપતિ જેમ સૂર્ય અહિમ્-મેઘને, જેમ બ્રહ્મા-ચારેય વેદોના જ્ઞાતા ઓજસા-પોતાનાં પરાક્રમથી વૃથિવ્યા:-વિસ્તૃત ભૂમિનાં મધ્યે મદે-આનંદ અને સોમે-ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ કરાવનારમાં સ્વરાજ્યમ્-પોતાના રાજ્યની અન્વર્ચન્-અનુકૂળતાથી સત્કાર કરીને ઇત્યા-એ હેતુથી વર્ધનમ્-વૃદ્ધિ ચકાર-કરે છે, તેમ જ તું સમસ્ત અન્યાયાચરણોને ઇત્-હિ-જ નિશ્શશા:-દૂર કરી દે છે. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય ચક્રવર્તી રાજ્ય કરવાની સાધન-સામગ્રીનું નિર્માણ કરીને તથા (તે રાજ્યનું) પાલન કરીને વિદ્યા અને સુખની ઉન્નતિ કરે. (૧)

स त्वामदद् वृषा मदः सोमः श्येनाभृतः सुतः ।

येना वृत्रं निरुद्धयो जघन्थ वज्रिन्नोजसार्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે વજ્રિન્-શસ્ત્ર અને અસ્રની વિદ્યાને ધારણ કરનાર અને સભાધ્યક્ષ યેન-જે ન્યાય વરસાવનાર અને મદ કરનારને જે બાજ પક્ષીની સમાન ધારણ કરવામાં આવે તે ઉત્પાદન કરેલ પદાર્થ સમૂહથી તું ઓજસા-પરાક્રમથી સ્વરાજ્યમ્-પોતાના રાજ્યને અન્વર્ચન્-શિક્ષાને અનુકૂળ કરેલ જેમ સૂર્ય અયમ્-જળને પૃથક્ કરી વૃત્રમ્-જળનો સ્વીકાર અર્થાત્ પથ્થર સમાન કઠિન કરીને મેઘને નિરંતર છિન્ન-ભિન્ન કરે છે, તેમ પ્રજાથી પૃથક્ કરીને પ્રજા સુખનો સ્વીકાર કરીને શત્રુને નિર્જઘન્થ-છિન્ન-ભિન્ન કરો છો સ:-તે વૃષા, મદ:, શ્યેનાભૃત:, સુત:-ઉક્ત ગુણવાળા સોમ:-પદાર્થોનો સમૂહ ત્વા-તને અમદત્-આનંદિત કરાવે. (૨)

ભાવાર્થ : પુરુષોએ જે પદાર્થો અને કર્મોથી પ્રજા પ્રસન્ન થાય, તેથી તેની ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. શત્રુઓનું નિવારણ કરીને સદા ધર્મરાજ્યની પ્રશંસા કરવી જોઈએ. (૨)

प्रेह्यभीहि धृष्णुहि न ते वज्रो नि यंसते ।

इन्द्र नृम्णां हि ते शवो हनौ वृत्रं जया अपोऽर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમ સુખકારક જેમ સૂર્યનો વજ્ર:-કિરણ સમૂહ વૃત્રમ્-મેઘને હન:-મારીને તથા અપ:-જળને નિર્યસતે-નિયમમાં રાખે છે, તેમ જે તે-પોતાનાં શત્રુઓ છે તેનું હનન કરીને સ્વરાજ્યમ્-પોતાના રાજ્યનો અન્વર્ચન્-સત્કાર કરીને હિ-નિશ્ચયપૂર્વક નૃમ્ણમ્-ધનને પ્રેહિ-પ્રાપ્ત થાય, શવ:-બળની અમ્બીહિ-સર્વત્રથી વૃદ્ધિ કરે, શરીર અને આત્માના બલથી ધૃષ્ણુહિ-દૃઢ થાય તથા જયા:-જીતને પ્રાપ્ત કરે, એ રીતે કરવાથી તે-આપનો પરાજય ન-થાય નહિ. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ રાજપુરુષ સૂર્યની સમાન પ્રસિદ્ધ યશવાન હોય છે, તે રાજ્યના ઐશ્વર્યનો ઉપભોગ કરનાર બને છે. (૩)

પ્રવેદનાથ

નિરિન્દ્ર ભૂમ્યા અધિ વૃત્રં જઘન્થ નિર્દિવઃ ।

સૃજા મરુત્વતીરવ જીવધન્યા ડ્રુમા અપોઽર્ચન્નનુ સ્વરાજ્યમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર્ય પ્રદાતા ! તું જેમ સૂર્ય વૃત્રમ્-મેઘનું તાડન કરીને ભૂમ્યા:-પૃથિવીની અધિ-ઉપર ડ્રુમા:-એ જીવધન્યા:-જીવોના ધન આદિની સિદ્ધિમાં હિતકારક મસ્ત્વતી:-મનુષ્યાદિ પ્રજાઓના વ્યવહારોને સિદ્ધ કરનાર અપ:-જળને નિર્જઘન્થ-નિત્ય પૃથિવીમાં પહોંચાડે છે અને દિવ:-પ્રકાશોને પ્રકટ કરે છે, તેમ અધર્મીઓને દંડ આપીને ધર્માચારનો પ્રકાશ કરીને સ્વરાજ્યમ્-પોતાના રાજ્યનો અન્વર્ચન-યથાયોગ્ય સત્કાર કરીને પ્રજાશાસન કર્યા કર અને અનેક પ્રકારના સુખોને નિસ્વસૃજ-નિરંતર સિદ્ધ કર. (૪)

ભાવાર્થ : જે રાજ્ય કરવાની ઈચ્છા કરે તે વિદ્યા, ધર્મ અને વિનયનો પ્રચાર કરીને તથા સ્વયં ધાર્મિક બનીને પ્રજાઓ પ્રત્યે, પિતા સમાન વર્તન કરે. (૪)

ઇન્દ્રો વૃત્રસ્ય દોધતઃ સાનું વજ્રેણ હીઠ્ઠિતઃ ।

અભિક્રમ્યાવ જિઘ્નતેઽપઃ સર્માય ચોદયન્નર્ચન્નનુ સ્વરાજ્યમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ ઇન્દ્ર:-સૂર્ય વજ્રેણ-કિરણોથી વૃત્રસ્ય-મેઘના અપ:-જળને અભિક્રમ્ય-આક્રમણ કરીને સાનુમ્-મેઘના શિખરોનું છેદન કરે છે, તેમ સ્વરાજ્યમ્-પોતાના રાજ્યનો અન્વર્ચન-સત્કાર કરીને રાજ જિઘ્નતે-હનન કરનાર સર્માય-પ્રાપ્ત થયેલ શત્રુના પરાજયને માટે પોતાની સેનાઓને ચોદયન્-પ્રેરિત કરીને દોધતઃ-ક્રોધિત શત્રુના બલના આક્રમણથી સેનાને ઇન્ન-ભિન્ન કરીને હીઠ્ઠિતઃ-પ્રજાઓથી અનાદરને પ્રાપ્ત થઈને શત્રુ પર ક્રોધ અવ-કર. (૫)

ભાવાર્થ : જે લોકો સૂર્યની સમાન અવિદ્યાને દૂર કરીને, વિદ્યાને પ્રકાશિત કરીને તથા દુષ્ટોને દંડિત કરીને ધાર્મિકોનો સત્કાર કરે છે, તે વિદ્વાનોમાં સન્માનિત થાય છે. (૫)

અધિ સાનો નિ જિઘ્નતે વજ્રેણ શ્તપર્વણા ।

મન્દાન ઇન્દ્રો અન્ધસઃ સખિભ્યો ગાતુમિચ્છત્યર્ચન્નનુ સ્વરાજ્યમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ ઇન્દ્ર:-વિદ્યુત્ અગ્નિ શ્તપર્વણા-અસંખ્ય સર્વોત્તમ કર્મોથી યુક્ત વજ્રેણ-પોતાના કિરણોથી મેઘના સાનાવધિ-અવયવો પર પ્રહાર કરીને નિજિઘ્નતે-પ્રકાશને રોકનાર મેઘને માટે સદા પ્રતિકૂળ રહે છે, તેમ જ જે આપ ગાતુમ્-ઉત્તમ રીતે શિક્ષાયુક્ત વાણીની ઇચ્છતિ-ઈચ્છા કરો છો, તે સખિભ્યઃ-મિત્રોને માટે મન્દાનઃ-આનંદની વૃદ્ધિ કરીને તથા સ્વરાજ્યમ્-પોતાના રાજ્યનો અન્વર્ચન-સત્કાર કરીને અન્ધસઃ-અન્નના દાતા બનો. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ સમસ્ત સંસારનો ઉપકારકર્તા સૂર્ય છે, તેમ સભા આદિના અધ્યક્ષ આદિ હોવા

જોઈએ. (૬)

इन्द्र तुभ्यमिदद्रिवोऽनुत्तं वज्रिन्वीर्यम् ।

यद्ध त्वं मायिनं मृगं तमु त्वं माययावधीरर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે અદ્રિવ:-મેઘ શિખર સમાન, પર્વતાદિ યુક્ત સ્વરાજ્યથી અલંકૃત વજ્રિન્-અત્યુત્તમ શસ્ત્રાસ્રોથી યુક્ત ઇન્દ્ર-સભાના ઈશ ! યત્-જેથી ત્વમ્-તે માયિનમ્-કપટી મૃગમ્-મૃગની સમાન પદાર્થ ભોગવનારને માયયા-બુદ્ધિથી હ-નિશ્ચયપૂર્વક અવધી:-હનન કરે છે. દિવ:-સૂર્યની સમાન અનુત્તમ-સ્વાધીન પુરુષાર્થથી ગ્રહણ કરેલ વીર્યમ્-પરાક્રમને ગ્રહણ કરીને સ્વરાજ્યમ્-પોતાના રાજ્યનો અન્વર્ચન્-સત્કાર કરીને તમુ-તે દુષ્ટને દંડ આપે છે, તે તુભ્યમિત્-તારા માટે સર્વોત્તમ ધન અમે આપીએ. (૭)

ભાવાર્થ : જે પ્રજાના પાલન માટે સૂર્યની સમાન પોતાના બળ, ન્યાય તથા વિદ્યાને પ્રકાશિત કરીને કપટી લોકોને બંધ કરી દે છે-દંડિત કરે છે, તેઓ રાજ્યની વૃદ્ધિ અને 'કર' પ્રાપ્ત કરવાને સમર્થ બને છે. (૭)

वि ते वज्रासोऽअस्थिरन्नवतिं नाव्याः अनु ।

महत्त इन्द्र वीर्यं बाह्वोस्ते बलं हितमर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર ! જે તે-તારી વજ્રાસ:-શસ્ત્રાસ્રયુક્ત દેહતર સેના નવતિમ્-નેવું નાવ્યા:-તારનારી નૌકાઓને અનુવ્ય-સ્થિરન્-અનુકૂળતાથી વ્યવસ્થિત કરે છે અને જે તે-તારી બાહ્વો:-ભુજાઓમાં મહત્-મહાન વીર્યમ્-પરાક્રમ અને તે-તારી ભુજાઓમાં બલમ્-બળ હિતમ્-રહેલ છે, તેનાથી સ્વરાજ્યમ્-પોતાના રાજ્યનો અન્વર્ચન્-યથાવત્ સત્કાર કરીને તું રાજ્ય લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કર. (૮)

ભાવાર્થ : જે રાજ્યની વૃદ્ધિ-ઉન્નતિ ઈચ્છે, તે વિશાળ અગ્નિ (થી સંચાલિત) અશ્વતરી નામક નૌકાઓનું નિર્માણ કરે અને તેના દ્વારા અન્ય દ્વીપાન્તરોમાં ગમનાગમન કરીને વ્યવહાર સંબંધી લાભોની વૃદ્ધિ કરીને પોતાના રાજ્યને ધન-ધાન્યોથી સુભૂપિત કરે. (૮)

सहस्रं साकर्मचतु परिं ष्टोभत विंशतिः ।

शतैनमन्वनोनवुरिन्द्राय ब्रह्मोद्यतमर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે સભાધ્યક્ષ ! સ્વરાજ્યમ્-પોતાના રાજ્યનો અન્વર્ચન્-સત્કાર કરતા વર્તમાન રહે છે. એનમ્-તેનો આશ્રય કરીને તે પોતાના રાજ્યને સર્વ રીતે અધર્માચરણથી પરિષ્ટોમત રોકો સાકમ્-પરસ્પર મળીને સહસ્રમ્-અસંખ્ય ગુણોથી યુક્ત પુરુષો સહિત અર્ચન્-સત્કાર કરો, જેને વિંશતિ:-વીસ શતા-સો અનુ-અનુકૂળતાથી અનોનવુ:-સ્તુતિ કરો. જે ઉદ્યતમ્-પ્રસિદ્ધ બ્રહ્મ-વેદ અને અન્નને અર્ચન્-સત્કાર કરીને વર્તે છે, તે ઇન્દ્રાય-અધિક સંપત્ વાળા સભાધ્યક્ષને માટે અનુકૂળ બનીને

સ્તુતિ કરો. (૯)

ભાવાર્થ : વિરોધના ત્યાગ વિના પરસ્પર સુખ કદી થઈ શકતું નથી. મનુષ્યોએ વિદ્યા અને ઉત્તમ સુશિક્ષાથી રહિત અને નિંદિત મનુષ્યને સભા આદિનો અધ્યક્ષ બનાવવો નહિ. (૯)

इन्द्रो वृत्रस्य तविषीं निरहन्त्सहसा सहः ।

महत्तदस्य पौंस्यं वृत्रं जघन्वाँ असृजदर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : જે **इन्द्रः**-વિદ્યુત્ રૂપ સૂર્ય **वृत्रम्**-મેઘને નષ્ટ કરવા સમાન શત્રુને **जघन्वान्**-મારતા નિરંતર હનન કરે છે તથા જે **सहसा**-બળથી સૂર્ય જેમ **वृत्रस्य**-મેઘના બળને તેમ શત્રુના બલને **तविषीम्**-બળને **निरहन्**-નિરંતર હનન કરીને તથા **स्वराज्यम्**-પોતાના રાજ્યનો **अन्वर्चन्**-સત્કાર કરીને સુખને **असृजत्**-ઉત્પન્ન કરે છે, **तत्**-તે જ **अस्य**-એના **महत्**-મહાન **पौंस्यम्**-પુરુષાર્થરૂપ બળના **सहः**-સહનનો હેતુ છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય પોતાનાં મહાન બળ અને તેજથી આકૃષ્ટ કરીને પ્રકાશિત થાય છે, તેમ જ સભા આદિના અધ્યક્ષ આદિએ મહાન બળ (= પ્રયત્નથી શુભ ગુણોથી આકૃષ્ટ (= ધારણ) કરીને ન્યાયના પ્રકાશથી રાજ્ય પર શાસન કરવું જોઈએ. (૧૦)

इमे चित्तव मन्यवे वेपैते भियसा मही ।

यदिन्द्र वज्रिन्नोजसा वृत्रं मरुत्वाँ अवधीरर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે **वज्रिन्**-શસ્ત્ર વિદ્યાના સમ્યક્ જ્ઞાતા **इन्द्र**-સભાઅધ્યક્ષ રાજન **यत्**-જે તવ-આપની **ओजसा**-સેનાના બળથી, જેમ સૂર્યના આકર્ષણ અને તાડનથી **इमे**-એ **मही**-લોક **वेपैते**-કંપે છે, તેની સમાન જે આપ **भियसा**-ભય બળથી **मन्यवे**-કોધની શાન્તિને માટે શત્રુજન **अनु**-અનુકૂળ બનીને કંપિત રહે છે જેમ **मरुत्वान्**-બહુ જ વાયુથી યુક્ત સૂર્ય **वृत्रम्**-મેઘને મારે છે, તેમ જ **स्वराज्यम्**-પોતાના રાજ્યનો **अर्चन्**-સત્કાર કરીને **चित्**-અને શત્રુને **अवधीः**-માર્યા કર. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ સભા પ્રબંધના કારણે પ્રજાઓ સુખપૂર્વક ઉત્તમ માર્ગ દ્વારા ગમનાગમન કરે છે, તેમ સૂર્યનાં આકર્ષણથી સમસ્ત ભૂગોળ ગમનાગમન કરે છે.

જેમ સૂર્ય મેઘને મારીને જળથી પ્રજાઓનું પાલન કરે છે, તેમ સભા અને સભા આદિના અધ્યક્ષ બન્ને, શત્રુ અને અન્યાયનો નાશ કરીને વિદ્યા તથા ન્યાયના પ્રચારથી પ્રજાઓનું પાલન કરે. (૧૧)

न वेपसा न तन्यतेन्द्रं वृत्रो वि बीभयत् ।

अभ्येनं वज्र आयसः सहस्रभृष्टिरायतार्चन्ननु स्वराज्यम् ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતે ! **स्वराज्यमन्वर्चन्**-પોતાના રાજ્યનો સત્કાર કરતા તું જેમ **वृत्रः**-મેઘ **वेपसा**-વેગથી **इन्द्रम्**-સૂર્યને **न विबीभयत्**-ભય પમાડી શકતો નથી અને તે મેઘ (ગર્જના અને) પ્રકાશ કરેલી

તન્યતા-વિદ્યુત્થી પણ ભયને ન-પમાડી શકતો નથી. એનમ્-એ મેઘની ઉપર સૂર્યપ્રેરિત સહસ્રભૃષ્ટિ:- હજારો પ્રકારના દાહથી યુક્ત આયસ:-લોહના શસ્ત્ર અથવા આગ્નેયાસ્ત્રની સમાન વજ્ર:-વજ્ર રૂપ કિરણ અભ્યાયત-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ આપ શત્રુઓ પર થાઓ. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ મેઘ આદિ સૂર્યનો પરાજય કરી શકતા નથી, તેમ શત્રુઓ ધાર્મિક સભાને તથા સભા આદિના અધ્યક્ષને પરાજિત કરી શકતા નથી. (૧૨)

યદ્ વૃત્રં તવ્ ચાશનિં વજ્રેણ સમયોઘયઃ ।

અહિમિન્દ્ર જિઘાંસતો દિવિ તેં બદ્ધથે શવોઽર્ચન્નનું સ્વરાજ્યમ્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર્યયુક્ત સભાપતિ ! સ્વરાજ્યમ્-પોતાના રાજ્યનો અન્વર્ચન-સત્કાર કરીને તું યત્-જેમ દિવિ-આકાશમાં સૂર્ય અણનિમ્-વિદ્યુત્નો પ્રહાર કરીને વૃત્રમ્-કુટિલ અહિમ્-મેઘનું બદ્ધથે-હનન કરે છે, તેમ વજ્રેણ-શસ્ત્રાશ્રો સહિત પોતાની સેનાઓનો શત્રુઓની સાથે સમયોઘય:-સારી રીતે યુદ્ધ કરીને શત્રુઓને જિઘાંસત:-મારનાર તવ-આપના શવ:-બળ અર્થાત્ સેનાનો વિજય થાય એ રીતે કરનાર તે-આપના ચ-યશની વૃદ્ધિ થશે. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય કિરણ-સમૂહ દ્વારા વિદ્યુત્ને મેઘ સાથે લડાવે છે, તેમ જ સેનાધ્યક્ષ આગ્નેયાસ્ત્રથી સંપન્ન સેનાને શત્રુસેના સાથે લડાવે-યુદ્ધ કરાવે. એવા સેનાપતિની કઠીપણ હાર થઈ શકતી નથી. (૧૩)

અભિષ્ટને તેં અદ્રિવો યત્સ્થા જગચ્ચ રેજતે ।

ત્વષ્ટા ચિત્તવ મન્યવ ઇન્દ્ર વેવિજ્યતે ભિયાર્ચન્નનું સ્વરાજ્યમ્ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે અદ્રિવ:-બહુ મેઘયુક્ત સૂર્યસમાન ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર્યયુક્ત સભાધ્યક્ષ યત્-જ્યારે તે-આપના અભિષ્ટને-સર્વથા ઉત્તમ ન્યાયયુક્ત વ્યવહારમાં સ્થા:-સ્થાવર જગચ્ચ-અને જંગમ રેજતે-કંપાયમાન થાય છે તથા જે ત્વષ્ટા-શત્રુચ્છેદક સેનાપતિ છે, તવ-તેના મન્યવે-ક્રોધને માટે ભિયાચિત્-ભયથી પણ વેવિજ્યતે-ઉદ્વિગ્ન થાય છે, ત્યારે આપ સ્વરાજ્યમ્-પોતાના રાજ્યનો અન્વર્ચન-સત્કાર કરીને સુખી બની શકો છો. (૧૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જેમ સૂર્યના યોગથી પ્રાણીઓ પોતાના કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થાય છે અને ભૂગોળ અનુક્રમથી (પોતાની કક્ષામાં) ભ્રમણ કરે છે, તેમ જ સભા દ્વારા શાસિત રાજ્યના યોગથી સંપૂર્ણ પ્રાણીઓ ધર્મપૂર્વક પોતાના વ્યવહારમાં વર્તમાન રહીને સન્માર્ગમાં ચાલે છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૧૪)

નહિ નુ યાદધીમસીન્દ્રં કો વીર્યાં પરઃ ।

તસ્મિન્નૃમ્ણમુત ક્રતું દેવા ઓજાંસિ સં દધુર્ચન્નનું સ્વરાજ્યમ્ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : જે પર:-ઉત્તમ ગુણયુક્ત રાજા સ્વરાજ્યમ્-પોતાના રાજ્યનો અન્વર્ચન-અનુકૂળતાથી સત્કાર

અગ્વેદભાષ્ય

કરીને આચરણ કરે છે. જે રાજ્યમાં **દેવા:**-દિવ્યગુણયુક્ત વિદ્વાનો **નૃમ્ણમ્**-ધનને **ક્રતુમ્**-અને બુદ્ધિ તથા પુરુષાર્થને **ઉત્ત**-અને પણ **ઓજાંસિ**-શરીર, આત્મા અને મનના પરાક્રમોને **સંદધુ:**-ધારણ કરે છે તથા જે પરમાત્માને પ્રાપ્ત થઈને અમે **વીર્યા**-વિદ્યા આદિ વીર્યોને **અધિમસિ**-પ્રાપ્ત થાય તે **ઇન્દ્રમ્**-અનન્ત પરાક્રમી જગદીશ્વર અથવા પૂર્ણ વીર્ય યુક્ત રાજાને પ્રાપ્ત થઈને **ક:**-કોણ પુરુષ ધનને **નુ**-શીઘ્ર **નહિ-યાત્**-પ્રાપ્ત થાય તે રાજ્યમાં કોણ પુરુષ ધનને તથા બુદ્ધિ અને પુરુષાર્થ તથા બલને શીઘ્ર ધારણ નથી કરતો ? (૧૫)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય પરમેશ્વર અને વિદ્વાનને પ્રાપ્ત કર્યા વિના વિદ્યા, શુદ્ધ બુદ્ધિ ને શ્રેષ્ઠ સામર્થ્ય પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી, તેથી તેઓનો સર્વેએ સદા આશ્રય લેવો જોઈએ. (૧૫)

યામર્થર્વા મનુષ્ણિતા દ્ધ્યઙ્ ધિયમ્લન્ત ।

તસ્મિન્બ્રહ્માણિ પૂર્વથેન્દ્ર ઉક્થા સમગ્મતાર્ચન્નનુ સ્વરાજ્યમ્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ **સ્વરાજ્યમ્**-પોતાના રાજ્યની ઉન્નતિથી સર્વનું **અન્વર્ચન્**-સત્કાર કરીને **દ્ધ્યઙ્**-ઉત્તમ ગુણોને પ્રાપ્ત થનાર **અર્થર્વા**-હિંસાદિ દોષ રહિત **પિતા**-વેદના પ્રવક્તા અધ્યાપક અને **મનુ:**-વિજ્ઞાનયુક્ત મનુષ્ય એ **યામ્**-જે **ધિયમ્**-શુભ વિદ્યા આદિ ગુણ ક્રિયાને ધારણ કરનારની બુદ્ધિને પ્રાપ્ત થઈને જે વ્યવહારમાં સુખોને **અલ્તત**-વિસ્તાર કરે છે તેમ આને પ્રાપ્ત થઈ **તસ્મિન્**-તે વ્યવહારમાં સુખોનો વિસ્તાર કરો; અને જે **ઇન્દે**-સારી રીતે સેવિત પરમેશ્વરમાં **પૂર્વથા**-પૂર્વ પુરુષોની સમાન **બ્રહ્માણિ**-શ્રેષ્ઠ અન્ન, ધન **ઉક્થા**-કહેવા યોગ્ય વચન પ્રાપ્ત થાય છે, **તસ્મિન્**-તેનું સેવન કરીને તમે પણ તેને **સમગ્મત**-પ્રાપ્ત થાઓ. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરમેશ્વરના ઉપાસકો અને વિદ્વાનોના સંગમાં પ્રીતિ રાખનાર મનુષ્યોનું અનુકરણ કરીને, ઉત્તમ બુદ્ધિ, અતિ શ્રેષ્ઠ અન્ન, ધન અને વેદવિદ્યાથી સિંચિત ભાષણોને પ્રાપ્ત કરીને તેનું સર્વને દાન કરવું જોઈએ. (૧૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સભા આદિના અધ્યક્ષ, સૂર્ય, વિદ્વાન અને ઈશ્વર શબ્દાર્થનું વર્ણન કરવાથી પૂર્વસૂક્તની સાથે આ સૂક્તના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૮૦)

સૂક્ત-૮૧

ઇન્દ્રો મદાય વાવૃથે શવસે વૃત્રહા નૃભિઃ ।

તમિન્મહત્સ્વાજિષ્ઠુતેમર્ષે હવામહે સ વાજેષુ પ્ર નોઽવિષત્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : અમે જે **વૃત્રહા**-સૂર્યની સમાન **ઇન્દ્ર:**-સેનાપતિ **નૃભિ:**-શૂરવીર નાયકોની સાથે **શવસે**-બળ અને **મદાય**-આનંદને માટે **વાવૃથે**-વધે છે. જે **મહત્સુ**-મહાન **આજિષુ**-સંગ્રામોમાં **ઉતાપિ**-અને **અર્ષે**-નાના સંગ્રામોમાં **હવામહે**-બોલાવે છે અને **તમિત્**-તેને **ઈમ્**-સર્વ રીતે સેનાધ્યક્ષ કહે છે. **સ:**-તે **વાજેષુ**- સંગ્રામોમાં **ન:**-અમારી **પ્રાવિષત્**-સારી રીતે રક્ષા કરે. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે પૂર્ણ વિદ્યાવાન, બલિષ્ઠ, ધાર્મિક, સર્વના હિતેષી, શસ્ત્રાસ્ત્રોને ચલાવવામાં અને તેની શિક્ષા આપવામાં નિપુણ; કર્મચારીઓ, વીરો તથા યોદ્ધાઓ પ્રત્યે પિતા સમાન વ્યવહાર કર્તા અને દેશ-કાળ અનુસાર યુદ્ધ કરવા માટે અવસરને અનુરૂપ કરવા યોગ્ય વ્યવહારનો જ્ઞાતા હોય, તેને સેનાપતિ બનાવવો જોઈએ અન્યને નહિ. (૧)

અસિ હિ વીરુ સેન્યોઽસિ ભૂરિ પરાદ્દિઃ ।

અસિ દુભ્રસ્ય ચિદ્ વૃધો યર્જમાનાય શિક્ષસિ સુન્વતે ભૂરિ તે વસુ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે વીર સેનાપતે ! જે તું હિ-નિશ્ચય કરીને ભૂરિ-બહુ જ સેન્ય:-સેનાયુક્ત અસિ-છે, ભૂરિ-બહુ જ પ્રકારથી પરાદ્દિ:-શત્રુઓના બળને નષ્ટ કરી ગ્રહણ કરનાર છે, દુભ્રસ્ય-નાના ચિત્-અને મહત:-મહાન યુદ્ધને જીતનાર અસિ-છે, વૃધ: બળથી વધનાર વીરોને શિક્ષસિ-શિક્ષા આપનાર છે, તે સુન્વતે-વિજયની પ્રાપ્તિ કરનાર યર્જમાનાય-સુખદાતાને તે-તારા માટે ભૂરિ-પુષ્કળ વસુ-ધન પ્રાપ્ત થાય. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ સેનાપતિઓ દ્વારા સેનાને સદા શિક્ષિત, પાલન અને હર્ષિત કરવામાં આવે છે, તેમ સૈનિકોના દ્વારા પણ સેનાપતિઓનું પાલન અને તેને આનંદિત કરવા યોગ્ય છે. (૨)

યદુદીરત આજયો ધૃષ્ણવે ધીયતે ધના ।

યુક્ષ્વા મદચ્યુતા હરી કં હનઃ કં વસૌ દધોઽસ્માં ઇન્દ્ર વસૌ દધઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સેનાના સ્વામી ! યત્-જ્યારે આજય:-સંગ્રામ ઉદીરતે-ઉત્કૃષ્ટતાથી પ્રાપ્ત થાય, ત્યારે ધૃષ્ણવે-દેહતાને માટે ધના-ધનોને ધીયતે-કરે છે, તે તું મદચ્યુતા-બહુ જ બળવાન હરી-ઘોડાઓને રથાદિમાં યુક્ષ્વ-યુક્ત કર, કં-કોઈ શત્રુને હનઃ-માર; કં-કોઈ મિત્રને વસૌ-ધન કોશમાં દધઃ-ધારણ કર અને અસ્માન્-અમને વસૌ-ધનમાં દધઃ-અધિકારી કર. (૩)

ભાવાર્થ : જ્યારે યુદ્ધ કરવું હોય, ત્યારે સેનાપતિ લોકો વાહન, શસ્ત્ર, અસ્ત્ર, ભોજન, વસ્ત્ર આદિની સામગ્રી પૂરી સંગ્રહ કરીને, થોડા શત્રુઓને મારીને, થોડાને મિત્ર બનાવીને તથા તેનો સત્કાર કરીને, યુદ્ધ આદિ કાર્યોમાં ધાર્મિકોને સંયુક્ત કરીને, તેને યુક્તિ પર યુદ્ધ કરાવીને અને સ્વયં યુદ્ધ કરીને-લડીને નિરંતર વિજય પ્રાપ્ત કરે. (૩)

ક્રત્વા મહાં અનુષ્વધં ભીમ આ વાવૃથે શવઃ ।

શ્રિય ઋષ્વ ઉપાકયોર્નિ શિપ્રી હરિવાન્દધે હસ્તયોર્વજ્રમાયસમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે હરિવાન્-બહુ જ શ્રેષ્ઠ ઘોડાઓ યુક્ત શિપ્રી-શત્રુઓને રડાવનાર ભીમ:-અને ભય પમાડનાર મહાન્-મહાન ઋષ્વ:-પ્રાપ્ત વિદ્યા સેનાપતિ શવઃ-બળ શ્રિયે-શોભા અને લક્ષ્મીને માટે ઉપાકયો:-સમીપમાં પ્રાપ્ત થયેલી પોતાની અને શત્રુઓની સેનાની સમીપ હસ્તયો:-હાથોમાં આવસમ્-

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ **ઋક્ષુઋતુઃ**-સરળ જ્ઞાન અને કર્મયુક્ત **દદિઃ**-દાતા આપ ઈશ્વરની આજ્ઞા પાલન અને ઉપાસનાથી **મદેમદે**-આનંદ-આનંદમાં **હિ-**નિશ્ચયપૂર્વક **નઃ**-અમારા માટે **ઉભયાહસ્ત્યા**-બન્ને હાથોની ક્રિયામાં ઉત્તમ **પુરુ**-બહુ જ **શતા**-સેંકડો **વસુ**-દ્રવ્યોનો **શિશીહિ**-પ્રબંધ કરો. **ગવામ્**-કિરણો, ઈન્દ્રિયો અને પશુઓના **યૂથા**-સમૂહોને **આભર**-સર્વત્રથી ધારણ કર, **રાયઃ**-ધનોને **સંગૃભાય**-સમ્યક્ ગ્રહણ કર. (૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! **સર્વાનંદ-દાતા** તથા **સમસ્ત સાધનો** અને **સાધ્ય** (રૂપ પદાર્થો)ના ઉત્પાદક (બનીને) **સમસ્ત ધન પ્રદાન કરે છે**, તે જ ઈશ્વર અમારા દ્વારા ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે, અન્ય કોઈ (વસ્તુ) નહિ. (૭)

માદયસ્વ સુતે સચા શવસે શૂર્ રાધસે ।

વિદ્યા હિ ત્વા પુરૂવસુમુપ કામાન્ત્સસૃજ્મહેઽથા નોઽવિતા ભવ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે **શૂર્**-દુષ્ટ દોષ અને શત્રુઓનું નિવારણ કરનાર અમે **સુતે**-આ ઉત્પન્ન જગતમાં **પુસ્વસુમ્**-અનેકોને વસાવનાર **ત્વા**-આપનો **ઉપ**-આશ્રય કરીને **અથ**-પશ્ચાત્ **કામાન્**-પોતાની ઈચ્છાઓને **સસૃજ્મહે**-સિદ્ધ કરીએ છીએ, **હિ**-નિશ્ચય કરીને **વિદમ**-જાણીએ પણ છીએ, **તું નઃ**-અમારો **અવિતા**-રક્ષક **ભવ**-છે; અને આ જગતમાં **સચા**-સંયુક્ત **શવસે**-બળકારક **રાધસે**-ધનને માટે **માદયસ્વ**-આનંદ પ્રદાન કર-આનંદ કરાવ. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોના દ્વારા સેનાપતિના આશ્રય વિના શત્રુઓ પર વિજય, ઈચ્છાઓની પૂર્તિ, પોતાની રક્ષા, ઉત્તમ ધન તથા બળ અને પરમ સુખ પ્રાપ્ત કરી શકાતા નથી. (૮)

एते ते इन्द्र जन्तवो विश्वं पुष्यन्ति वार्यम् ।

अन्तर्हि ख्यो जनानामर्यो वेदो अदाशुषाम् तेषां नो वेद आ भर ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-પરમેશ્વર ! જે **ते**-તારી સૃષ્ટિમાં જે **एते**-એ **जन्तवः**-જીવ **वार्यम्**-સ્વીકારને યોગ્ય **विश्वम्**-જગતને **पुष्यन्ति**-પુષ્ટ કરે છે, **तेषाम्**-તે **जनानाम्**-મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓની **अन्तः**-મધ્યમાં રહેતા **अदाशुषाम्**-દાન આદિ કર્મ રહિત મનુષ્યોને **अर्यः**-ઈશ્વર તું **वेदः**-જેથી સુખ પ્રાપ્ત થાય છે તેને **हि**-નિશ્ચય કરીને **ख्यः**-ઉપદેશ કરે છે, તે **તું નઃ**-અમારા માટે **वेदः**-વિજ્ઞાન રૂપ ધનનું **आभर**-દાન પ્રદાન કર. (૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઈશ્વર અંદર-બહાર સર્વત્ર વ્યાપક બની અંદર-બહારના સમસ્ત વ્યવહારોને જાણે છે, ઉત્તમ ઉપદેશ કરે છે અને સર્વ જીવોનું હિત કરવા ઈચ્છે છે, તેનો આશ્રય લઈને તમે લોકો પારમાર્થિક અને વ્યાવહારિક સુખ પ્રાપ્ત કરો. (૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સેનાપતિ, ઈશ્વર અને સભાધ્યક્ષના ગુણોનું વર્ણન કરવાથી આ સૂક્તના અર્થની સંગતિ પૂર્વ સૂક્તના અર્થ સાથે જાણવી જોઈએ. (૮૧)

સૂક્ત-૯૨

उपो षु शृणुही गिरो मघवन्मातथाइव ।

यदा नः सूनृतावतः कर् आदर्थयास इद्योजा न्विन्द्र ते हरी ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-સેનાપતે ! જે **ते**-આપની **हरी**-ધારણ અને આકર્ષણને માટે ઘોડા અને અગ્નિ આદિ પદાર્થ છે તેને **नु**-શીઘ્ર **योज**-યુક્ત કરો, પ્રિયવાણી બોલાનારા વિદ્વાનથી **अर्थयासे**-યાચના કરો.

હે **मघवन**-શ્રેષ્ઠ ગુણોને પ્રાપ્ત કરનાર **नः**-અમારી **गिरः**-વાણીઓને **उपोसु** શ્રુણુહિ-સમીપ આવીને સાંભળો. **आत्**-પશ્ચાત્ અમારા માટે **अतथाइवेत्**-વિપરીત આચરણ કરનાર જેમ જ **मा**-ન બન **यदा**-જ્યારે અમે તમારાથી સુખોની યાચના કરીએ છીએ, ત્યારે આપ **नः**-અમને **सूनृतावतः**-સત્યવાણી યુક્ત **कर्ः**-કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ રાજા સુસેવિત પરમેશ્વરથી અથવા સેનાપતિના દ્વારા સુસેવિત સેના સેનાપતિથી સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે અને જેમ સભા આદિના અધ્યક્ષ પ્રજાજનો અને સૈનિકોની અનુકૂળતાનુસાર વર્તાવ કરે, તેમ એની અનુકૂળતાનુસાર પ્રજાજનો અને સૈનિકોએ વર્તવું જોઈએ. એમ મનુષ્યોએ (જાણવું જોઈએ.) (૧)

अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत ।

अस्तौषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजा न्विन्द्र ते हरी ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-સભાપતે ! જે **ते**-તારા **हरी**-ધારણ અને આકર્ષણ કરનાર વાહન અથવા ઘોડાઓ છે તેને તું અમારા માટે **नुयोज**-શીઘ્ર યુક્ત કર, હે **स्वभानवः**-સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ સૂર્યાદિની સમાન **विप्राः**-બુદ્ધિમાન લોકો ! આપ **नविष्ठया**-અતિશય નવીન **मती**-બુદ્ધિ સહિત થઈને **प्रियाः**-પ્રિય થાઓ, સર્વને માટે શાસ્ત્રોની **हि**-નિશ્ચયથી **अस्तौषत**-પ્રશંસા આપ કર્યા કરો અને દુઃખોથી **अवाधूषत** છોડાઓ, **अक्षन्**-વિઘાદિ શુભ ગુણોમાં વ્યાપ્ત થાઓ, **अमीमदन्त**-અતિશય કરીને આનંદિત થાઓ અને અમને પણ તેમ (આનંદિત) કરો. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, ઉત્તમ ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવવાળા અને સર્વ પ્રકારથી પ્રશંસિત આચરણવાળા સેનાપતિ આદિના દ્વારા નવીન વિજ્ઞાન અને પુરુષાર્થની વૃદ્ધિ કરીને સદા પ્રસન્નતાથી આનંદ ભોગવવો જોઈએ. (૨)

सुसंदृशं त्वा वयं मघवन्वन्दिषीमहि ।

प्र नूनं पूर्णबन्धुरः स्तुतो याहि वशां अनु योजा न्विन्द्र ते हरी ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-પરમ પૂજિત ધનયુક્ત ઇન્દ્ર-સુખપ્રદ ! જેમ વયમ્-અને સુસંદશમ્-કલ્યાણ દષ્ટિયુક્ત ત્વા-આપને વન્દિષીમહિ-પ્રશંસિત કરીએ, તેમ અમારાથી પૂર્ણબન્ધુરઃ-પૂર્ણ સત્ય પ્રેમ બંધન યુક્ત સ્તુતઃ-પ્રશંસાને પ્રાપ્ત થઈને આપ જે પ્રજાના શત્રુ છે, તેને નુ-શીઘ્ર વશાન્-વશ કરો, જે તે-આપના હરી-ધારણ, આકર્ષણ આદિ ગુણ સમાન સુશિક્ષિત ઘોડાઓ છે તેને અનુયોજ-યુક્ત કરો, વિજયને માટે નૂનમ્-નિશ્ચયપૂર્વક પ્રયાહિ-શીઘ્ર જાઓ-પ્રયાણ કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય સર્વના દ્રષ્ટા પરમેશ્વરના પ્રશંસક સભાપતિનો આશ્રય લે છે, ત્યારે તે એ શત્રુઓનો શીઘ્ર નિગ્રહ કરી શકે છે. (૩)

સ ઘા તં વૃષણં રથમધિં તિષ્ઠાતિ ગોવિદમ્ ।

યઃ પાત્રં હારિયોજનં પૂર્ણમિન્દ્ર ચિકેતતિ યોજા ન્વિન્દ્ર તે હરી ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમ વિદ્યા, ધનયુક્ત યઃ-જે આપ હારિયોજનમ્-અગ્નિ અને ઘોડાઓથી યુક્ત કરેલ એ પૂર્ણમ્-સમસ્ત સામગ્રીથી યુક્ત પાત્રમ્-રક્ષા નિમિત્ત રથમ્-રથને બનાવવાને ચિકેતતિ-જાણો છો સઃ-તે એ રથમાં હરી-વેગાદિયુક્ત ઘોડાઓને નુયોજ-શીઘ્ર યુક્ત કરો. હે ઇન્દ્ર-સેનાપતે ! જે તે-આપના વૃષણમ્-શત્રુના સામર્થ્યનાશક ગોવિદમ્-જેથી ભૂમિનું રાજ્ય પ્રાપ્ત થાય, તમ્-તે રથ પર અધિતિષ્ઠાતિ-બેસે-વિરાજે, ધ-તે વિજયને પ્રાપ્ત કેમ ન થાય ? (૪)

ભાવાર્થ : સેનાપતિએ પૂર્ણ શિક્ષા તથા બળથી હર્ષિત-દૃષ્ટ-પુષ્ટ હાથી, ઘોડા, રથ તથા શસ્ત્ર આદિ સામગ્રીથી પરિપૂર્ણ સેનાનું નિર્માણ કરીને શત્રુઓને જીતવા જોઈએ. (૪)

યુક્તસ્તે અસ્તુ દક્ષિણ ઉત સ્વ્યઃ શંતક્રતો ।

તેન જાયામર્પ પ્રિયાં મન્દાનો યાહ્યન્ધસો યોજા ન્વિન્દ્ર તે હરી ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્રઃ-સર્વના સુખદાતા શંતક્રતો-અસંખ્ય ઉત્તમ બુદ્ધિ અને ક્રિયાઓથી યુક્ત તે-આપના જે સુશિક્ષિત હરી-ઘોડાઓ છે તેઓને રથમાં તુ નુયોજ-શીઘ્ર યુક્ત કર, જે તે-તારા રથની એકઃ-એક ઘોડો દક્ષિણઃ-જમણી તરફ ઉત-અને (બીજો) સ્વ્યઃ-ડાબી તરફ અસ્તુ-હોય તેન-તે રથ પર બેસીને શત્રુઓને જીતીને પ્રિયામ્-અતિપ્રિય જાયામ્-સ્ત્રીની સાથે બેસી મન્દાનઃ-આપ પ્રસન્ન બની અને તેને પ્રસન્ન કરીને અન્ધસઃ-અન્નાદિ સામગ્રીની ઉપયાહિ-સમીપસ્થ થઈને તમે બન્ને શત્રુઓને જીતવા માટે જાઓ-પ્રસ્થાન કરો. (૫)

ભાવાર્થ : રાજાએ પોતાની પત્ની-રાણીની સાથે સુશિક્ષિત ઘોડાઓથી યુક્ત યાન-રથમાં બેસીને યુદ્ધમાં વિજય પ્રાપ્ત કરવો જોઈએ. જ્યાં-જ્યાં યુદ્ધમાં અથવા ક્યાંય ભ્રમણ માટે જાય, ત્યાં-ત્યાં તે ઉત્તમ શિલ્પીઓ-કારીગરો દ્વારા બનાવેલ દેહ રથમાં સ્ત્રીની સાથે બેસીને જાય. (૫)

યુનર્જિમ્ તે બ્રહ્મણા કેશિના હરી ઉપ પ્ર યાહિ દધિષે ગર્ભસ્ત્યોઃ ।

ઉત્ત્વા સુતાસૌ રભસા અમન્દિષુઃ પૂષ્ણવાન્વજિન્ત્સમુ પત્ન્યામદઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે વજ્રિન્-ઉત્તમ શસ્ત્રયુક્ત સેનાધ્યક્ષ ! જેમ હું તે-તારા બ્રહ્મણા-અન્નાદિથી યુક્ત નૌકા રથમાં કેશિના-સૂર્યના કિરણો સમાન પ્રકાશમાન હરી-ઘોડાઓને યુવ્રજ્મિ-જોડું ધું, જેમાં બેસીને તું ગભસ્ત્યો:-હાથોમાં ઘોડાની લગામ-દોરી દધિષે-ધારણ કરે છે, તે રથથી ડપ-પ્રયાહિ-ઈચ્છિત સ્થાનોમાં જા. જેમ બળ અને વેગાદિ યુક્ત સુતાસ:-સુશિક્ષત ભૂત્યા:-સેવકો, જે ત્વા-તને ડ-સમ્યક્ ડદમન્દિષુ-આનંદિત કરે, તેમ તું પણ તેઓને આનંદિત કર અને પૂષ્ણવાન્-શત્રુઓની શક્તિઓને રોકનાર તું પોતાની પત્ન્યા-સ્ત્રીની સાથે સમમદ:-સારી રીતે આનંદને પ્રાપ્ત કર. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે નોકરો ઘોડાઓને કેળવતા હોય અને રથો ચલાવતા હોય, તે સર્વ સારી રીતે શિક્ષણ પામેલા હોવા જોઈએ અને પોતાની સ્ત્રીઓને પ્રસન્ન રાખીને પોતે પ્રસન્ન રહે એવા હોવા જોઈએ. સ્ત્રીઓ સાથે ધર્મકાર્યો કરવા જોઈએ. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સેનાપતિ અને ઈશ્વરના ગુણોનું વર્ણન કરવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૮૨)

સૂક્ત-૮૩

અશ્વાવતિ પ્રથમો ગોષુ ગચ્છતિ સુપ્રાવીરિન્દ્ર મર્ત્યસ્તવોતિભિઃ ।

તમિત્પૂર્ણક્ષિ વસુના ભવીયસા સિન્ધુમાપો યથાભિતો વિચેતસઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સર્વ રક્ષક રાજન્ ! જે મર્ત્ય:-શ્રેષ્ઠ શિક્ષાયુક્ત ધાર્મિક મનુષ્ય તવ-તારી ડતિભિઃ:-રક્ષાદિથી રક્ષિત કર્મચારી અશ્વાવતિ-ઉત્તમ ઘોડાઓ જોડેલ રથમાં બેસીને ગોષુ-પૃથિવી વિભાગોમાં યુદ્ધને માટે પ્રથમ:-પ્રથમ ગચ્છતિ-જાય છે, તેથી તું પ્રજાઓની સુપ્રાવી:-સમ્યક્ રક્ષા કર, તમિત્-તેઓને યથા-જેમ વિચેતસ:-ચેતનતા રહિત જડ આપ:-જળ અને વાયુ અભિત:-સર્વત્રથી સિન્ધુમ્-નદીને પ્રાપ્ત થાય છે, જેમ ભવીયસા-સર્વોત્તમ વસુના-ધનથી તું પ્રજાને પૂર્ણક્ષિ-યુક્ત કરે છે, તેમ જ સમસ્ત પ્રજા અને રાજપુરુષ પુરુષાર્થ કરીને ઐશ્વર્યથી યુક્ત બને. (૧)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિ રાજપુરુષોએ જે કર્મચારી પોતાના અધિકારના કાર્યોમાં ઠીક રીતે પ્રવૃત્ત ન થાય, તેને યથોચિત દંડ આપીને તથા જે પ્રવૃત્ત રહે છે, તેનું શ્રેષ્ઠ સન્માન કરીને તથા અનેક શ્રેષ્ઠ પદાર્થો અને સત્કારોથી તેને સંતુષ્ટ કરી રાજ કાર્યોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ.

કોઈ પણ અપરાધીને તેના અપરાધાનુસાર દંડ આપ્યા વિના તથા શુભ કર્મ કરનારને પારિતોષિક આપ્યા વિના રાજ્ય વ્યવસ્થા સારી રીતે સ્થાપિત કરી શકાતી નથી, તેથી એ કાર્ય સદા કરવા જોઈએ. (૧)

આપો ન દેવીરુપં યન્તિ હોત્રિયમવઃ પશ્યન્તિ વિતતં યથા રજઃ ।

પ્રાચૈર્દેવાસઃ પ્ર ણયન્તિ દેવયું બ્રહ્મપ્રિયં જોષયન્તે વરાઈવ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જે દેવાસ:-વિદ્વાનો મેઘને આપો ન-જેમ જળ પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ દેવી:-વિદુષી સ્ત્રીઓને ડપયન્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે; અને યથા-જેમ પ્રાચૈ:-પ્રાચીન વિદ્વાનોની સાથે વિતતમ્-વિશાળ અને જેમ

રજ:-પરમાણુ આદિ જગતના કારણ **હોત્રિયમ્**-પ્રદાન-આદાનને યોગ્ય **અવ:**-રક્ષણને **પશ્યન્તિ**-દેખે છે. **વરા** **ઇવ**-ઉત્તમ પતિવ્રતા વિદ્વાન સ્ત્રીઓની સમાન **બ્રહ્મપ્રિયમ્**-વેદ અને ઈશ્વરની આજ્ઞામાં પ્રસન્ન **દેવયુમ્**-પોતાનો આત્મા વિદ્વાન થવાથી ઈચ્છાયુક્ત **પ્રણયન્તિ**-નીતિપૂર્વક કરે છે અને **જોષયન્તે**-તેનું સેવન કરીને અન્યને તેમ કરાવે છે, તેઓ નિરંતર સુખી કેમ ન થાય ? (૨)

ભાવાર્થ : કોઈ હેતુમાં એ વિવેચન કરવું જોઈએ, કે આ વિદ્વાન છે, કે આ અવિદ્વાન છે ? આ વિષયમાં કહ્યું છે, કે જે જળની સમાન શાન્ત અને પ્રાણોની સમાન પ્રિય (હોય), ધર્મયુક્ત દિવ્ય કર્મ કરે, સર્વના શરીરો અને આત્માઓની યથાવત્ રક્ષા કરવા જાણે, ભૂગર્ભ આદિની વિદ્યાઓ દ્વારા પ્રાચીન વેદ જ્ઞાતા વિદ્વાનોની સમાન વ્યવહાર કરે અને વેદ દ્વારા ઈશ્વર-પ્રણીત ધર્મનો પ્રચાર કરે, તેને વિદ્વાન જાણવો જોઈએ અને તેથી જે વિપરીત હોય તે અવિદ્વાન છે, એવો નિશ્ચય કરવો જોઈએ. (૨)

અધિ દ્વયોરધા ઉક્થ્યં વચૌ યત્રસ્ત્રુચા મિથુના યા સંપર્યતઃ ।

અસંયત્તો વ્રતે તે ક્ષેત્તિ પુષ્યતિ ભદ્રા શક્તિર્યજમાનાય સુન્વતે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ યા-જે યત્રસ્ત્રુચા-સાધન-ઉપસાધનયુક્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક મિથુના-બન્ને મળીને **દ્વયો:**-પોતાનું અને અન્યોનું કલ્યાણ કરીને જે **ઉક્થ્યમ્**-પ્રશંસિત **વચ:**-વચનનું **સંપર્યતઃ**-સેવન કરે છે, તેમ એને તું **અદધા:**-ધારણ કર.

જે **અસંયત:**-અજિતેન્દ્રિય પણ તે-તારા **વ્રતે**-સત્ય ભાષણાદિ નિયમ પાલનમાં **ક્ષેતિ**-નિવાસ કરે છે, તેમાં **ભદ્રા**-કલ્યાણકારક **શક્તિ:**-સામર્થ્ય **ક્ષેતિ**-વાસ કરે છે અને તે **પુષ્યતિ**-પુષ્ટ થાય છે, ત્યારે **સુન્વતે**-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્તિ થનાર **યજમાનાય**-સર્વના સુખદાતાને માટે નિરંતર સુખની વૃદ્ધિ કેમ ન થાય ? (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પરોપકારમય બુદ્ધિથી સર્વના શરીર અને આત્મામાં પુષ્ટિ તથા વિદ્યારૂપી બળ ઉત્પન્ન કરીને, વિરોધનો ત્યાગ કરીને, ધર્મયુક્ત વ્યવહારનું સેવન કરીને નિરંતર સર્વ મનુષ્યોને સત્ય વ્યવહારમાં પ્રવૃત્ત કરે છે, તેઓ મોક્ષ પ્રાપ્ત કરે છે, અન્ય નહિ, તેમ જાણવું જોઈએ. (૩)

આદઙ્ગિરાઃ પ્રથમં દધિરે વયં ઇદ્ધાગ્નયઃ શમ્યા યે સુકૃત્યયાં ।

સર્વં પુણેઃ સમવિન્દન્ત ભોજનમશ્વાવન્તં ગોમન્તમા પશું નરઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે **ઇદ્ધાગ્નય**-અગ્નિ વિદ્યાને પ્રદીપ્ત કરનારા **યે-નર:**-નાયક મનુષ્યો ! આપ જેમ **સુકૃત્યયા**-સુકૃતયુક્ત **શમ્યા**-કર્મ અને **પુણે:**-પ્રશંસિત વ્યવહાર કરનાર ઉપદેશથી **પ્રથમમ્-વય:**-વય બ્રહ્મચર્યને માટે **આદધિરે**-સર્વ રીતે ધારણ કરે છે, તે **સર્વમ્-સર્વ ભોજનમ્**-આનંદનો ભોગ અને પાલનને **સમવિન્દન્ત**-સમ્યક્ પ્રાપ્ત કરે છે, **આત્-પશ્ચાત્** જેમ **અઙ્ગિરા:**-પ્રાણ સમાન પ્રિય વાઇરડા **પશુમ્**-પોતાની માતાને પ્રાપ્ત થઈને આનંદિત બને છે, તેમ આપ **અશ્વાવન્તમ્**-ઉત્તમ ધોડાઓથી યુક્ત **ગોમન્તમ્**-શ્રેષ્ઠ ગાય

અને ભૂમિ આદિ સહિત રાજ્યને પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત થાઓ. (૪)

ભાવાર્થ : કોઈપણ મનુષ્ય બ્રહ્મચર્યના સેવન વિના અંગો અને ઉપાંગો સહિત વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. વિદ્યા અને શક્તિ વિના રાજ્યના અધિકારને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી અને તેથી સહિત મનુષ્ય સત્ય સુખને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. (૪)

યજ્ઞૈરથર્વા પ્રથમઃ પથસ્તતે તતઃ સૂર્યો વ્રતપા વેન આજનિ ।

આ ગા આજદુશનાં કાવ્યઃ સર્વા યમસ્ય જાતમૃતં યજામહે ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : જેમ પ્રથમઃ-પ્રસિદ્ધ વિદ્વાન અથર્વા-હિંસારહિત પથઃ-સન્માર્ગને તતે-વિસ્તૃત કરે છે, જેમ વેનઃ-બુદ્ધિમાન વ્રતપાઃ-સત્યનું પાલન કરનાર સર્વ રીતે આજનિ-પ્રસિદ્ધ થાય છે, જેમ તતઃ-વિસ્તૃત સૂર્યઃ-સૂર્યલોક ગાઃ-પૃથિવીમાં દેશોને આજત્-ધારણ કરીને ફરે છે, જેમ કાવ્યઃ-કવિઓમાં શિક્ષાને પ્રાપ્ત ઝ્ઞાના-વિદ્યાના ઈચ્છુક વિદ્વાન વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ અમે યજ્ઞૈઃ-વિદ્યાને ભણવા, ભણાવવા, સત્સંયોગાદિ ક્રિયાઓથી યમસ્ય-સર્વ જગતના નિયંતા પરમેશ્વરની સર્વા-સાથે જાતમ્-પ્રાપ્ત થયેલ અમૃતમ્-મોક્ષને આયજામહે-પ્રાપ્ત થઈએ. (૫)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો સન્માર્ગમાં સ્થિત થઈને ઉત્તમ કર્મોથી અને વિજ્ઞાનથી પરમેશ્વરને જાણીને મોક્ષ સુખને ઈચ્છે છે, તો તેઓ અવશ્ય મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી લે છે. (૫)

બર્હિર્વા યત્સ્વપત્યાય વૃજ્યતેઽર્કો વા શ્લોકમાઘોષતે દિવિ ।

ગ્રાવા યત્ર વદતિ કારુરુક્થ્યસ્તસ્યેદિન્દ્રો અભિપિત્વેષુ રણ્યતિ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : યત્ર-જે દિવિ-પ્રકાશયુક્ત વ્યવહારમાં ઉક્થ્યઃ-કથનીય વ્યવહારોમાં નિપુણ પ્રશંસનીય શિલ્પ કામોના કર્તા ઇન્દ્રઃ-પરમ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવનાર વિદ્વાન અભિપિત્વેષુ-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય વ્યવહારમાં યત્-જે સ્વપત્યાય-સુંદર સંતાન માટે બર્હિઃ-વિજ્ઞાનને વૃજ્યતે-છોડે છે, અર્કઃ-પૂજનીય વિદ્વાન શ્લોકમ્-સત્યવાણીને વા-વિચારપૂર્વક આઘોષતે-સર્વ રીતે શ્રવણ કરાવે છે, ગ્રાવા-મેઘની સમાન ગંભીરતાથી વદતિ-બોલે છે વા-અથવા રણ્યતિ-શ્રેષ્ઠ ઉપદેશો કરે છે, ત્યાં તસ્યેત્-તે સંતાનને વિદ્યા પ્રાપ્ત થાય છે. (૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ, જેમ જળ છિન્ન-ભિન્ન થઈને, અન્તરિક્ષમાં જઈને ત્યાંથી વરસીને સુખ ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ જ કુવ્યસનોને છિન્ન-ભિન્ન કરીને તથા વિદ્યા શ્રવણ કરીને સર્વ મનુષ્યોને સુખી કરવા જોઈએ.

જેમ સૂર્ય અંધકારનો નાશ કરીને તથા પ્રકાશ ઉત્પન્ન કરીને, સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, તથા દુષ્ટોને ડરાવે છે, તેમ જ મનુષ્યોએ અજ્ઞાનને નષ્ટ કરીને તથા જ્ઞાનને ઉત્પન્ન કરીને સદા સુખ સંપાદિત કરવું જોઈએ.

જેમ મેઘ ગર્જને, વરસીને તથા દુકાળનો નાશ કરીને સુકાળ કરે છે, તેમ જ (વિદ્વાનોએ) ઉત્તમ

ઉપદેશની વર્ષાથી અધર્મનો નાશ તથા ધર્મનો પ્રકાશ કરીને મનુષ્યોને સદા આનંદિત કરવા જોઈએ. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સેનાપતિ અને ઉપદેશકના કર્તવ્યો-ગુણોનું વર્ણન કરવાથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૮૩)

સૂક્ત-૮૪

અસાવિ સોમં ઇન્દ્ર તે શવિષ્ઠ ધૃષ્ણવા ગૃહિ ।

આ ત્વા પૃણક્તિવન્દ્રિયં રજઃ સૂર્યો ન રશ્મિભિઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ધૃષ્ણો-પ્રગલ્ભ શવિષ્ઠ-પ્રશંસિત બળયુક્ત ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર્યદાતા સત્પુરુષ તે-તારા માટે જે સોમઃ-અનેક રોગનાશક ઔષધિઓનો સાર-સત્ત્વ અમે આસાવિ-સિદ્ધ કરેલ છે, જે તારી ઇન્દ્રિય-ઈન્દ્રિયોને સૂર્યઃ-સવિતા રશ્મિભિઃ-કિરણોથી રજઃ-લોકોને પ્રકાશ કરવા ન-સમાન પ્રકાશ કરે તેને તું આગહિ-પ્રાપ્ત થા, તે ત્વા-તને આપૃણક્તુ-બળ અને આરોગ્યતાથી યુક્ત કરે. (૧)

ભાવાર્થ : પ્રજા, સેના, પાઠશાલા અને સભાના મનુષ્યોની સારી રીતે પરીક્ષા કરીને સૂર્ય સમાન ગુણોવાળા પુરુષોને પ્રજા, સેના, પાઠશાલા અને સભાના અધ્યક્ષ બનાવીને તેનો સર્વ રીતે સત્કાર કરવો જોઈએ. સભાસદોની પણ એ રીતે જ સ્થાપના-પ્રતિષ્ઠા કરવી જોઈએ. (૧)

ઇન્દ્રમિદ્ધરીં વહુતોઽપ્રતિધૃષ્ટશવસમ્ ।

ઋષીણાં ચ સ્તુતીરુપં યજ્ઞં ચ માનુષાણામ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે અપ્રતિધૃષ્ટશવસમ્-અહિંસિત અત્યંત બળયુક્ત ઋષીણામ્-વેદના અર્થોને જાણનારાની સ્તુતીઃ-પ્રશંસાને પ્રાપ્ત ચ-મહા ગુણ સંપન્ન માનુષાણામ્-મનુષ્યો ચ અને પ્રાણીઓને વિદ્યાદાન સંરક્ષણનામ યજ્ઞમ્-યજ્ઞનું પાલન કરનાર ઇન્દ્રમ્-પ્રજા, સેના અને સભા આદિ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવનારને હરી-દુઃખહરણ સ્વભાવ, શ્રી, બળ, વીર્ય, નામ, ગુણ, રૂપ, અથ્થ ઉપબહતઃ-પ્રાપ્ત થાય છે, તેને ઇન્-જ સદા પ્રાપ્ત થાઓ. (૨)

ભાવાર્થ : પ્રશંસિત અને સન્માનિત અધિષ્ઠાતા લોકો વિના પ્રાણીઓને સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી. તથા ઉત્તમ કર્મ વિના ચક્રવર્તી રાજ્ય આદિની પ્રાપ્તિ તથા રક્ષા થઈ શકતી નથી. એટલા માટે સર્વેએ સદા એ કાર્યો કરવા જોઈએ. (૨)

આ તિષ્ઠ વૃત્રહૃત્રથં યુક્તા તે બ્રહ્મણા હરીં ।

અર્વાચીનં સુ તે મનો ગ્રાવાં કૃણોતુ વગ્નુનાં ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વૃત્રહન્-મેઘને સવિતા = સૂર્યની સમાન શત્રુઓને મારનાર શૂરવીર તે-તારા જે બ્રહ્મણા-અન્નાદિ સામગ્રીથી યુક્ત શિલ્પી અને સારથીએ ચલાવેલ હરી-પદાર્થને પહોંચાડનાર જળ-અગ્નિ અને ઘોડા યુક્તા-યુક્ત છે, તે અર્વાચીનમ્-ભૂમિ અને જળમાં નીચે-ઉપર આદિ સ્થાનોમાં જનાર રથમ્-રથમાં તું આતિષ્ઠ-બેસ, ગ્રાવા-મેઘની સમાન વનુના-સુંદર, મધુર વાણીમાં વક્તૃત્વને સુકૃણોતુ-સારી રીતે કર, તેથી તે-તારા મનઃ-વિજ્ઞાન વીરોને સારી રીતે ઉત્સાહિત કર્યા કરે. (૩)

ભાવાર્થ : સભા આદિના અધ્યક્ષો દ્વારા સેનામાં બે અધ્યક્ષો રાખવામાં આવે. તેમાંથી એક સેનાપતિ યુદ્ધ કરાવનાર અને બીજો વ્યાખ્યાન દ્વારા ઉત્સાહ ઉત્પન્ન કરવા માટે ઉપદેશ કરનાર (હોવો જોઈએ.)

જ્યારે યુદ્ધ થાય, ત્યારે સેનાપતિ સૈનિક કર્મચારીઓની સમ્યક્ પરીક્ષા કરીને તથા તેને ઉત્સાહિત કરીને શત્રુઓ સામે યુદ્ધ કરાવે-લડાવે, જેથી નિશ્ચિત વિજય થાય. જ્યારે યુદ્ધ સમાપ્ત થાય, ત્યારે ઉપદેશક સર્વ યોદ્ધાઓ અને સેવકોને વીરતા, કૃતજ્ઞતા, ધર્મ તથા કર્મના ઉપદેશથી ઉત્તમતા-પૂર્વક ઉત્સાહિત કરે. આવી રીતે કરનારાઓનો કદી પરાજય થઈ શકતો નથી, એમ જાણવું જોઈએ. (૩)

इममिन्द्र सुतं पिब ज्येष्ठममर्त्यं मदम्।

शुक्रस्य त्वाभ्यक्षरन्धारां ऋतस्य सदनै ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-શત્રુઓનું વિદારણ કરનાર જે ત્વા-તને જે ધારાઃ-વાણી ઋત્તસ્ય-સત્ય શુક્રસ્ય-પરાક્રમના સદને-સ્થાનમાં અભ્યક્ષરન્-પ્રાપ્ત કરે છે, તેને પ્રાપ્ત કરીને ઇમમ્-એ સુતમ્-સમ્યક્ સિદ્ધ કરેલ ઉત્તમ ઔષધિઓના રસનું પિબ-પાન કર, તેથી જ્યેષ્ઠમ્-પ્રશંસિત અમર્ત્યમ્-સાધારણ મનુષ્યને અપ્રાપ્ત એવા દિવ્ય સ્વરૂપ મદમ્-આનંદને પ્રાપ્ત કરીને શત્રુઓને જીત. (૪)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય વિદ્યા અને ઉત્તમ ભોજન વિના પરાક્રમને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી અને તેના વિના સત્યનું વિશેષ જ્ઞાન તથા વિજય પણ થતો નથી. (૪)

इन्द्राय नूनमर्चतोक्थानि च ब्रवीतन।

सुता अमत्सुरिन्दवो ज्येष्ठं नमस्यता सहः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેને સુતાઃ-સિદ્ધ ઇન્દ્રવઃ-ઉત્તમ રસયુક્ત પદાર્થ અમત્સુ-આનંદિત કરે, જેને જ્યેષ્ઠમ્-ઉત્તમ સહઃ-બલ પ્રાપ્ત હોય તેવા ઇન્દ્રાય-સભાધ્યક્ષને નમસ્યત-નમસ્કાર કરો અને તેને મુખ્ય કાર્યોમાં યુક્ત કરીને નૂનમ્-નિશ્ચયપૂર્વક અર્ચત-સત્કાર કરો, ડક્થાનિ-સારા વચનોથી બ્રવીતન-ઉપદેશ કરો, તેથી સત્કારોથી ચ-પણ પ્રાપ્ત થાય. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો સર્વનો સત્કાર કરે અને શરીર તથા આત્માના બળને પ્રાપ્ત કરીને પરોપકારી હોય તે સિવાયના અન્યને સેના અધિકાર-પદ (સેનાપતિ-પદ) પર સ્થાપિત કરવો નહીં. (૫)

नकिष्पद्रथीतरो हरी यदिन्द्र यच्छसे ।

नकिष्पानुं मज्मना नकिः स्वश्वं आनशे ॥ ६ ॥

पदार्थ : હે **इन्द्र**-સેનાને ધારણ કરનાર સેનાપતિ ! **યત્**-જે તું **રથીતરઃ**-અત્યંત રથયુક્ત યોદ્ધા છે, તે **હરી**-અગ્નિ આદિ અને ઘોડાને **નકિઃ**-**યચ્છસે**-શું રથમાં નથી દેતા-અર્થાત્ યુક્ત નથી કરતા ? શું **ત્વા**-તને **મજ્મના**-બળથી કોઈ પણ **નકિઃ** **અન્વાનશે**-વ્યાપ્ત થઈ શકતા નથી ? શું **ત્વત્**-તારાથી અધિક કોઈ પણ **સ્વશ્વઃ**-શ્રેષ્ઠ ઘોડાવાળા **નકિઃ**-નથી ? એથી તું સર્વ અંગોથી યુક્ત છે.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે સેનાપતિને આ રીતે ઉપદેશ કરો-શું તમે તેનાથી અધિક છો ? શું તમારા સમાન (અન્ય) કોઈ છે જ નહિ ? શું તમને કોઈ જીતી શકતા નથી ? તેથી તમારે સાવધાન રહેવું જોઈએ. (૬)

य एक इद्विदयते वसु मर्तीय दाशुषे । ईशानो अप्रतिष्कुत इन्द्रो अङ्ग ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે **અઙ્ગ**-મિત્ર મનુષ્ય ! **યઃ**-જે **ઇન્દ્રઃ**-સભા આદિના અધ્યક્ષ **એકઃ**-સહાય રહિત (માત્ર એક) **ઇત્**-જ **દાશુષે**-દાતા **મર્તીય**-મનુષ્યને માટે **વસુ**-દ્રવ્યને **વિદયતે**-બહુ જ પ્રકારથી આપે છે અને **ઈશાનઃ**-સમર્થ **અપ્રતિષ્કુતઃ**-નિશ્ચલ છે, તેને સેના આદિમાં અધ્યક્ષ કરો. (૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે સહાયકોથી રહિત હોવા છતાં પણ નિડર અને યુદ્ધથી નહિ હટનાર અતિ વીર મનુષ્ય હોય, તેને જ સેનાપતિ બનાવો. (૭)

कदा मर्त्तमराधसं पदा क्षुम्पमिव स्फुरत् । कदा नः शुश्रवद्विर इन्द्रो अङ्ग ॥ ८ ॥

પદાર્થ : **અઙ્ગ**-શીઘ્રકર્તા **ઇન્દ્રઃ**-સભા આદિના અધ્યક્ષ **પદા**-વિજ્ઞાન અને ધનની પ્રાપ્તિથી **ક્ષુમ્પમિવ**-જેમ સર્પ ફેણને **સ્ફુરત્**-ડોલાવે છે , યલાવે છે, તેમ **અરાધસમ્**-ધન રહિત **મર્તમ્**-મનુષ્યને **કદા**-કયા સમયમાં યલાવશો ? **કદા**-કયા સમયમાં **નઃ**-અમને ઉક્ત રીતે અર્થાત્ વિજ્ઞાન અને ધનની પ્રાપ્તિથી જેમ સર્પ ફેણને યલાવે છે, તેમ **ગિરઃ**-વાણીઓને **શુશ્રવત્**-સાંભળીને સાંભળાવશો ? (૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે દરિદ્રને પણ ધન સંપન્ન, આળસુઓને પુરુષાર્થી અને વિદ્યાહીનોને બહુશ્રુત વિદ્વાન બનાવી દે, તેને તમે સભાધ્યક્ષ બનાવો. 'ક્યારે અમારી આ વાત સાંભળશો અને ક્યારે અમે એની વાત સાંભળીશું' એ રીતે અમે પ્રજાજનો આશા રાખીને બેઠા છીએ. (૮)

यश्चिद्धि त्वा बहुभ्य आ सुतावाँ आविवासति ।

उग्रं तत्पत्यते शव इन्द्रो अङ्ग ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે **અઙ્ગ**-મિત્ર તું જે **સુતાવાન્**-અન્નાદિ પદાર્થોથી યુક્ત **ઇન્દ્રઃ**-પરમ ઐશ્વર્ય પ્રદાતા **બહુભ્યઃ**-મનુષ્યોથી **ત્વા**-તારી **આવિવાસતિ** સેવા કરે છે, જે શત્રુઓનું **ઉગ્રમ્**-અત્યંત **શવઃ**-બળ તત્-તેને **ચિત્**-

પણ આપત્યતે-પ્રાપ્ત થાય છે, તમ્, હિ-તેને જ રાજા માનો. (૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે શત્રુઓના બળનો નાશ કરીને, તમને દુઃખોથી છોડાવીને સુખયુક્ત કરવામાં સમર્થ હોય તથા જેના ભય અને પરાક્રમથી શત્રુ નાશ પામે છે, તેને સેનાપતિ બનાવીને આનંદને પ્રાપ્ત કરો. (૯)

સ્વાદોરિથ્યા વિષૂવતો મધ્વઃ પિબન્તિ ગૌર્યઃ ।

યા ઙ્દ્રેણ સયાવરીવૃષ્ણા મદન્તિ શોભસે વસ્વીરનુ સ્વરાજ્યમ્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : જેમ વૃષ્ણા-સુખ વર્ષાવનાર ઙ્દ્રેણ-સૂર્યની સાથે સયાચરી:-સમાન ગમન કરનારા વસ્વી:-પૃથિવી (આદિથી સંબંધ કરનારા) ગૌર્યઃ-કિરણો દ્વારા સ્વરાજ્યમ્-પોતાના પ્રકાશરૂપ રાજ્યની શોભસે-શોભાને માટે અનુમદન્તિ-હર્ષના હેતુ હોય છે, તે ઙ્દ્રેણ-એ રીતે સ્વાદોઃ-સ્વાદયુક્ત વિષૂવતઃ-વ્યાપ્તિવાળા મધ્વઃ-મધુર આદિ ગુણોનું પિબન્તિ-પાન કરે છે, તેમ તમે પણ વર્તન કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : પોતાના સેનાપતિ અને વીર સેનાઓ વિના પોતાના રાજ્યની શોભા અને રક્ષા થઈ શકતી નથી. જેમ સૂર્યનાં કિરણો સૂર્ય વિના રહી શકતા નથી અને ન વાયુના દ્વારા જળને ખેંચીને વરસાવી શકે છે, તેમ સેનાપતિ અને રાજા વિના પ્રજાઓ આનંદિત થઈ શકતી નથી. (૧૦)

તા અસ્ય પૃશનાયુવઃ સોમં શ્રીણન્તિ પૃશનયઃ ।

પ્રિયા ઙ્દ્રસ્ય ધેનવો વજ્રં હિન્વન્તિ સાયકં વસ્વીરનુ સ્વરાજ્યમ્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે અસ્ય-એ ઙ્દ્રસ્ય-સૂર્ય અને સેનાના અધ્યક્ષની પૃશનાયુવઃ-પોતાને સ્પર્શ કરનારા અર્થાત્ વિપરીત પોતાને સ્પર્શ કરવા ઈચ્છતા પૃશનયઃ-સ્પર્શ કરનારા તથા પ્રિયાઃ-પ્રસન્ન કરનાર ધેનવઃ-કિરણો, ગાય અને વાણી સોમમ્-ઔષધિ રસના ઐશ્વર્યને શ્રીણન્તિ-સિદ્ધ કરતા અને સાયકમ્-દુર્ગુણોનો ક્ષય કરનાર તાપ તથા શત્રુસમૂહને હિન્વન્તિ-પ્રેરણા આપે છે. વસ્વીઃ-અને તે પૃથિવીથી સંબંધ કરનારા સ્વરાજ્યમ્-પોતાના રાજ્યને અનુ-અનુકૂળ બને છે, તેને પ્રાપ્ત થાઓ. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ ગોપાલકની ગાયો જળ પીને, ઘાસ ચરીને-ખાઈને અને નિજ સુખ વધારીને અન્યોના આનંદની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ જ સેનાપતિની સેનાઓ અને સૂર્યના કિરણો ઔષધિઓથી આયુર્વેદની વિધિથી તૈયાર કરેલ અથવા પૂર્ણ પક્વ રસનું પાન કરીને, વિજય અને પ્રકાશ કરીને આનંદિત કરે છે. (૧૧)

તા અસ્ય નમસા સહઃ સપર્યન્તિ પ્રચૈતસઃ ।

વ્રતાન્યસ્ય સશ્ચિરે પુરૂણિ પૂર્વચિન્તયે વસ્વીરનુ સ્વરાજ્યમ્ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે જેમ **સ્વરાજ્યમ્**-પોતાનાં રાજ્યનો સત્કાર કરીને ન્યાયાધીશ સર્વનું પાલન કરે છે, તેમ **અસ્ય**-એ અધ્યક્ષના **નમસા**-અન્ન અને વજની સાથે વિદ્યમાન **પ્રચેતસઃ**-ઉત્તમ જ્ઞાનયુક્ત એના **સહઃ**-બળનું **સપર્યન્તિ**-સેવન કરે છે, **યાઃ**-જે **અસ્ય**-સેનાધ્યક્ષના **પૂર્વચિત્તયે**-પૂર્વ જ્ઞાનને માટે **પુસિણ**-બહુ જ **વ્રતાનિ**-સત્યભાષણ, નિયમ આદિને **સશ્ચિરે**-પ્રાપ્ત થાય છે, **તાઃ**-તે **વસ્વીઃ**-પૃથિવી સંબંધિત દેશોને આનંદ ભોગવવા માટે સેવન કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : સામગ્રી, બળ અને નિયમો વિના રાજ્ય આદિ અનેક સુખ થતાં નથી, એટલા માટે મનુષ્યોએ યમ-નિયમો અનુસાર એ સર્વનું ચિંતન કરીને, વિજય આદિ સર્વ કર્મોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૧૨)

इन्द्रो दधीचो अस्थिर्बृत्राण्यप्रतिष्कृतः । जघान नवतीर्नव ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે સેનાપતે ! જેમ **અપ્રતિષ્કુતઃ**-સર્વત્રથી સ્થિર **ઇન્દ્ર**-સૂર્યલોક **અસ્થિભિઃ**-અસ્થિર કિરણોથી **નવનવતીઃ**-નવાણુ પ્રકારની દિશાઓનાં અવયવોને પ્રાપ્ત થયેલ **દધીચઃ**-જે ધારણકર્તા વાયુ આદિને પ્રાપ્ત થાય છે, તે **વૃત્રાણિ**-મેઘના સૂક્ષ્મ અવયવ રૂપ જળનું **જઘાન**-હનન કરે છે, તેમ તું અનેક અધર્મી શત્રુઓનું હનન કર. (૧૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ, કે તે જ સેનાપતિ બનવાને યોગ્ય છે, જે સૂર્ય સમાન શત્રુઓના હિંસક અને પોતાની સેનાનો રક્ષક હોય. (૧૩)

इच्छन्नश्वस्य यच्छिरः पर्वतेष्वपश्रितम् । तद्विदच्छर्यणावति ॥ १४ ॥

પદાર્થ : જેમ **ઇન્દ્રઃ**-સૂર્ય **અશ્વસ્ય**-શીઘ્રગામી મેઘના **યત્**-જે **શર્યણાવતિ**-આકાશમાં **પર્વતેષુ**-પર્વત અને મેઘમાં **અપશ્રિતમ્**-આશ્રિત **શિરઃ**-ઉત્તમાંગની સમાન અવયવનું છેદન કરે છે, તેમ શત્રુની સેનાના ઉત્તમાંગના નાશની **ઇચ્છન્**-ઈચ્છા કરીને સુખોને સેનાપતિ **વિદિત્**-પ્રાપ્ત થાય. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ અન્તરિક્ષમાં સૂર્ય મેઘનું છેદન કરીને ભૂમિ પર પાડે છે, તેમ જ (રાજા) પર્વત તથા કિલ્લામાં આશ્રય કરેલા શત્રુઓને મારીને ભૂમિ પર પાડી દે. એ રીતે કર્યા વિના રાજ્ય વ્યવસ્થા સ્થિર થઈ શકતી નથી. (૧૪)

अत्राह गोरमन्वत नाम त्वष्टुरपीच्यम् । इत्था चन्द्रमसो गृहे ॥ १५ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ **અત્ર**-આ જગતમાં **નામ**-પ્રસિદ્ધ **ગોઃ**-પૃથિવી અને **ચન્દ્રમસઃ**-ચંદ્રલોકની મધ્યમાં **ત્વષ્ટુઃ**-છેદન કરનાર સૂર્યનો **અપીચ્યમ્**-પ્રાપ્ત થનારમાં યોગ્ય પ્રકાશરૂપ વ્યવહાર છે **ઇત્થા**-એ રીતે **અમન્વત**-માને છે, તેમ **અહ**-નિશ્ચયપૂર્વક જઈને **ગૃહે**-ઘરોમાં ન્યાય-પ્રકાશ માટે આચરણ કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જાણવું જોઈએ કે ઈશ્વર અને વિદ્યાવૃદ્ધિની હાનિ અને વિપરીતતા થઈ શકતી નથી. સર્વ કાલોમાં સર્વ ક્રિયાઓમાં સૃષ્ટિના નિયમો એક રસ રહે છે. જેમ સૂર્યનો પૃથિવીની સાથે આકર્ષણ અને પ્રકાશ આદિ સંબંધ છે, તેમ અન્ય ભૂગોળોની સાથે પણ છે. કારણ કે ઈશ્વર દ્વારા સ્થાપિત નિયમમાં વ્યભિચાર (અનિયમિતતા, વિપરીતતા) કદી થતો નથી. (૧૫)

કો અઘ્ન યુઙ્ક્તે ધુરિ ગા ઋતસ્ય શિમીવતો ભામિનો દુર્હણાયૂન્ ।

અસન્નિષૂન્હૃત્સ્વસૌ મયોભૂન્ય ઇષાં ભૃત્યામૃણધૃત્સ જીવાત્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : ક:-કોણ અઘ્ન-આજ-આ સમયે ઋતસ્ય-સત્ય આચરણ સંબંધી શિમીવત:-ઉત્તમ ક્રિયાયુક્ત, ભામિન:-શત્રુઓ પર ક્રોધ કરનાર, દુર્હણાયૂન્-શત્રુઓને જેના દુર્લભ સહસા કર્મ તેના સમાન આચરણ કરનાર, આસન્નિષૂન્-સમ્યક્ સ્થાન બાણ પહોંચાડનાર, હૃત્સ્વસ:-શત્રુઓના હૃદયમાં શસ્ત્ર પ્રહાર કરનાર અને મયોભૂન્-સ્વરાજ્ય માટે સુખ કરનાર શ્રેષ્ઠ વીરોને ધુરિ-સંગ્રામોમાં યુઙ્ક્તે-યુક્ત કરે છે. અથવા ય:-જે ઇષામ્-એની જિવિકા માટે ગા:-ભૂમિઓને ઋણાધત્-સમૃદ્ધિયુક્ત કરે સ:-તે જીવાત્-બહુ જ સમય સુધી અર્થાત્ દીર્ઘાયુ જીવે. (૧૬)

ભાવાર્થ : સર્વાધ્યક્ષ રાજા સર્વને પ્રકટ રૂપમાં આજ્ઞા પ્રદાન કરે, સમસ્ત સૈનિક વીરોને સત્ય આચરણથી યુક્ત કરે અને સદા તેઓની જીવિકા વધારીને સ્વયં દીર્ઘાયુયુક્ત બને. (૧૬)

ક ઈષતે તુજ્યતે કો વિભાય કો મંસતે સન્તમિન્દ્રં કો અન્તિ ।

કસ્તોકાય ક ઇભાયોત રાયેઽધિં બ્રવત્તન્વેઙ્ કો જનાય ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે સેનાપતે ! સેનાઓમાં રહેલા કર્મચારીઓમાં ક:-કોણ શત્રુઓને ઈષતે-મારે છે ? ક:-કોણ શત્રુઓથી તુજ્યતે-માર્યા જાય છે ? ક:-કોણ યુદ્ધમાં વિભાય-ભય પામે છે ? ક:-કોણ સન્તમ્-રાજધર્મમાં વિદ્યમાન ઇન્દ્રમ્-ઉત્તમ ઐશ્વર્યના દાતાને મંસતે-જાણે છે ? ક:-કોણ તોકાય-સંતાનોની અન્તિ-સમીપ રહે છે ? ક:-કોણ ઇભાય-હાથીને ઉત્તમ બનાવવાની શિક્ષા કરે છે ? ઉત્-અને ક:-કોણ રાયે-ધન વૃદ્ધિ માટે વર્તે છે ? અને તન્વે-શરીર તથા જનાય-મનુષ્યોને માટે અધિબ્રવત્-આજ્ઞા આપે, તેનો ઉત્તર આપ કહો. (૧૭)

ભાવાર્થ : દીર્ઘ (અડતાલીસ વર્ષના) બ્રહ્મચર્યથી, ઉત્તમ શિક્ષાથી અને અન્ય શુભ ગુણોથી યુક્ત (હોય છે) તેઓ એ સર્વ કર્મો કરી શકે છે, અન્ય લોકો નહિ.

જેમ રાજા સેનાપતિને પોતાની સંપૂર્ણ સેના અને કર્મચારીઓની વ્યવસ્થા વિષે પૂછે છે, તેમ સેનાપતિ પોતાને આધીન અધ્યક્ષોથી સ્વયં એ વાતને પૂછે. જેમ રાજા સેનાપતિને આજ્ઞા આપે, તેમ સેનાના અન્ય અધ્યક્ષોને સ્વયં આજ્ઞા આપે. (૧૭)

કો અગ્નિમીઢ્ટે હૃવિષા ઘૃતેન સ્તુચા યજાતા ઋતુભિર્ધુવેભિઃ ।

સાથે જાણવી જોઈએ. (૮૪)

સૂક્ત-૮૫

પ્ર યે શુમ્ભન્તે જનયો ન સપ્તયો યામન્નુદ્રસ્ય સૂનવઃ સુદંસસઃ ।

રોદસી હિ મરુતશ્ચક્રિરે વૃધે મદન્તિ વીરા વિદથૈષુ ઘૃષ્વયઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : યે-જે સ્દસ્ય-દુષ્ટોને રડાવનાર સૂનવઃ-પુત્ર સુદંસસઃ-ઉત્તમ કર્મ કરનાર ઘૃષ્વયઃ-આનંદયુક્ત વીરાઃ-વીરપુરુષ હિ-નિશ્ચય યામન્-માર્ગમાં જેમ અલંકારોથી સુશોભિત જનયઃ-સુશીલ સ્ત્રીઓની ન-સમાન અને સપ્તયઃ-ઘોડાની સમાન શીઘ્ર આવાગમન કરનાર મસ્તઃ-વાયુ રોદસી-પ્રકાશ અને પૃથિવીના ધારણ સમાન વૃધે-વૃદ્ધિ માટે રાજ્યનું ધારણ કરીને વિદથૈષુ-સંગ્રામોમાં વિજયને ચક્રિરે-કરે છે, તેઓ પ્રશુમ્ભન્તે-સમ્યક્ શોભાયુક્ત અને મદન્તિ-આનંદને પ્રાપ્ત થાય છે, તેનાથી તું પ્રજાનું પાલન કર. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ સુશિક્ષિત પતિવ્રતા સ્ત્રીઓ પોતાના પતિઓની અને પત્નીવ્રત પતિ પોતાની સ્ત્રીઓની સેવા કરીને તેને સુખી કરે છે તથા જેમ સુંદર અને બળવાન ઘોડાઓ માર્ગમાં શીઘ્ર પહોંચાડીને આનંદિત કરે છે, તેમ ધાર્મિક વીર સમસ્ત પ્રજાઓને પ્રસન્ન કરે છે. (૧)

ત ડક્ષિતાસો મહિમાનમાશત દિવિ રુદ્રાસો અધિ ચક્રિરે સદઃ ।

અર્ચન્તો અર્ક જનયન્ત ઇન્દ્રિયમધિ શ્રિયો દધિરે પૃશ્નિમાતરઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ડક્ષિતાસઃ-વૃષ્ટિથી પૃથ્વીનું સિંચન કરનાર પૃશ્નિમાતરઃ-જેની માતા આકાશ છે તે-તે સ્દાસઃ-વાયુ દિવિ-આકાશમાં સદઃ-સ્થિર મહિમાનમ્-પ્રતિષ્ઠાને અધ્યાશત-અધિક પ્રાપ્ત થાય છે અને તેને અધિચક્રિરે-અધિક કરે છે અને ઇન્દ્રિયમ્-ધનને દધિરે-ધારણ કરે છે, તેમ અર્કમ્-પૂજનીયનું અર્ચન્તઃ-પૂજન કરીને આપ લોકો શ્રિયઃ-લક્ષ્મીને જનયન્તઃ-વધારીને આનંદિત રહો. (૨)

ભાવાર્થ : આ જગતમાં (જેમ) વાયુ વર્ષાનો હેતુ બનીને દિવ્ય સુખોને ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ સભાધ્યક્ષ આદિ વિદ્યાથી સુશોભિત અને પરસ્પર ઉપકારકર્તા તથા પ્રેમયુક્ત રહે. (૨)

ગોમાતરો યચ્છુભયન્તે અઙ્ગિભિસ્તનૂષુ શુભ્રા દધિરે વિરુક્મતઃ ।

બાધન્તે વિશ્વમભિમાતિનમપ વર્ત્માન્વેષામનુ રીયતે ઘૃતમ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્-જે ગોમાતરઃ-પૃથિવીની સમાન માતાવાળા વિસ્વમતઃ-વિશેષ અલંકૃત શુભ્રાઃ-શુદ્ધ સ્વભાવયુક્ત શૂરવીરજનો જેમ પ્રાણ તનૂષુ-શરીરોમાં અઙ્ગિભિઃ-પ્રસિદ્ધ વિજ્ઞાનાદિ ગુણ નિમિત્તોથી શુભયન્તે-શુભ કર્મોનું આચરણ કરીને શોભાયમાન કરે છે, વિશ્વમ્-જગત્ના સર્વ પદાર્થોને અનુદધિરે-અનુકૂળતાથી ધારણ કરે છે, ણ્ણમ્-એના સંબંધથી ઘૃતમ્-જળ રીયતે-પ્રાપ્ત અને વર્ત્માનિ-

માર્ગોમાં જાય છે, તેમ અભિમાતિનમ્-અભિમાનયુક્ત શત્રુગણનો અપવાદન્ટે-બાધ કરે છે, તેની સાથે તમે વિજયને પ્રાપ્ત થાઓ. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુઓની અનેક સુખ (થાય છે) અને પ્રાણબળથી પુષ્ટિ થાય છે, તેમ શુભગુણોથી યુક્ત, વિદ્યાવાન અને શરીર તથા આત્માના બળથી સંપન્ન સત્મા આદિના અધ્યક્ષ દ્વારા પ્રજાજનો અનેક પ્રકારની રક્ષાઓને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩)

વિ યે ભ્રાજન્તે સુમંચાસ ઋષ્ટિભિઃ પ્રચ્યાવયન્તો અચ્યુતા ચિદોજસા ।

મનોજુવો યન્મરુતો રથેષ્વા વૃષવાતાસઃ પૃષતીરયુગ્ધવમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે પ્રજા અને સત્માના મનુષ્યો ! યે-જે મનોજુવઃ-મનની સમાન વેગવાન મસ્તઃ-વાયુઓની ચિત્-સમાન વૃષવાતાસઃ-શસ્ત્રો અને અસ્ત્રોને શત્રુઓ પર વર્ષાવનાર મનુષ્યોથી યુક્ત સુમંચાસઃ-ઉત્તમ શિલ્પવિદ્યા સંબંધી વા સંગ્રામરૂપ ક્રિયાઓને કરનાર ઋષ્ટિભિઃ-ચંત્ર કલાઓને ચલાવનાર દંડો અને અચ્યુતા-અક્ષય ઓજસા-બળ અને પરાક્રમયુક્ત સેના દ્વારા શત્રુની સેનાઓને પ્રચ્યાવયન્તઃ-નષ્ટ-ભ્રષ્ટ કરીને વ્યાભ્રાજન્તે-સમ્યક્ શોભાયમાન થાય છે, તેની સાથે યત્-જે રથેષુ-રથોમાં પૃષતીઃ-વાયુથી યુક્ત જળને અયુગ્ધવમ્-સંયુક્ત કરો, તેના દ્વારા શત્રુઓને જીતો. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, મનની સમાન વેગવાન વિમાન આદિ યાનોમાં જળ, અગ્નિ તથા વાયુનો સંપ્રયોગ કરીને, તેમાં બેસીને સર્વત્ર ભૂગોળમાં ગમનાગમન કરીને, શત્રુઓને જીતીને, પ્રજાઓનું સમ્યક્ પાલન કરીને તથા શિલ્પ વિદ્યા સંબંધી કાર્યોની વૃદ્ધિ કરીને સર્વનો ઉપકાર કરવો જોઈએ. (૪)

પ્ર યદ્રથેષુ પૃષતીરયુગ્ધવં વાજે અદ્રિમ્ મરુતો રંહયન્તઃ ।

ઉતારુષસ્ય વિ ઘ્યન્તિ ધારાશ્ચર્મેવોદભિર્વ્યુન્દન્તિ ભૂમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ શિલ્પીઓ યત્-જે રથેષુ-વિમાન આદિ યાનોમાં પૃષતીઃ-અગ્નિ અને શુદ્ધ જળને પ્રયુગ્ધવમ્-સંયુક્ત કરે ઉત્-અને અદ્રિમ્-મેઘને રંહયન્તઃ-પોતાના વેગથી ચલાવીને મસ્તઃ-પવન જેમ અસ્ત્રયઃ-ઘોડાઓની સમાન વાજે-યુદ્ધમાં ચર્મેવ-ચામડાની સમાન લાકડું, ધાતુ અને ચામડાથી મઢેલા કલાધરોમાં ઉદ્ધિઃ-જળની ધારાઃ-તેના પ્રવાહોને વિઘ્યન્તિ-કામની સમાપ્તિ કરવા માટે સમર્થ કરે છે અને ભૂમ્-ભૂમિને વ્યુન્દન્તિ-ભીની કરે છે અર્થાત્ રથને ચલાવતા જળ ચપકાવતા જાય છે, તેમ તે યાનો દ્વારા અન્તરિક્ષ માર્ગથી દેશ-દેશાન્તર અને દ્વીપ-દ્વીપાન્તરમાં ગમનાગમન કરીને લક્ષ્મીની વૃદ્ધિ કરો. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વાયુ વાદળોનો પરસ્પર ભેગા અને જુદા કરે છે, તેમ શિલ્પીજનો ઉત્તમ શિક્ષાથી અને અગ્નિ આદિના સંપ્રયોગથી (મનુષ્ય આદિને) અન્ય સ્થાનોમાં પહોંચાડીને કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે. (૫)

આ વો વહન્તુ સપ્તયો રઘુષ્યદો રઘુપત્વાનઃ પ્ર જિંગાત બાહુભિઃ ।

અગ્વેદભાષ્ય

सीदता बर्हिरु वः सदस्कृतं मादयध्वं मरुतो मध्वो अन्धसः ॥ ६ ॥

पदार्थ : હે મનુષ્યો ! જે રઘુષ્વદ:-ગમન કરવા-કરાવનાર રઘુપત્વાન:-અલ્પ અથવા અધિક ગમન કરનારા મસ્ત:-વાયુઓની સમાન સપ્તય:-શીઘ્ર ચાલનારા ઘોડા વ:-તમને વહન્તુ-દેશ-દેશાન્તરમાં કરે, તેને બાહુભિ:-બળ અને પરાક્રમયુક્ત હાથોથી પ્રાજિગાત-ઉત્તમ ગતિમાન કરો, તેનાથી ઝરુ-બહુ જ બર્હિ:-ઉત્તમ આસન પર આસીદત-બેસીને આકાશાદિમાં ગમનાગમન કરો, જેથી તમારું સદ:-સ્થાન કૃતમ્-સિદ્ધ ભવેત્-થાય, તેનાથી મધ્વ:-મધુર અન્ધસ:-અન્નોને પ્રાપ્ત કરીને અમને માદયધ્વમ્-આનંદિત કરો. (૬)

ભાવાર્થ : સભા આદિના અધ્યક્ષ આદિ મનુષ્ય થવા યોગ્ય કાર્ય કરીને શ્રેષ્ઠ ભોગોને પ્રાપ્ત કરે. આ સંસારમાં પદાર્થ વિજ્ઞાન અને ક્રિયા વિના કોઈને પણ ઉત્તમ ભોગ પ્રાપ્ત થઈ શકતો નથી. એટલા માટે એ કાર્યોને નિત્ય કરવા જોઈએ. (૬)

तेऽवर्धन्त स्वतवसो महित्वना नाकं तस्थुरु चक्रिरे सदः ।

विष्णुर्यद्वावद् वृषणं मदच्युतं वयो न सीदन्नधि बर्हिषि प्रिये ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિષ્ણુ:-સૂર્ય સમાન શિલ્પવિદ્યામાં નિપુણ મનુષ્ય પ્રિયે-અત્યંત સુંદર બર્હિષિ-આકાશમાં વૃષણમ્-અગ્નિ-જળની વર્ષાયુક્ત વિમાનની અધિસીદન્-ઉપર બેસીને વયો ન-જેમ પક્ષી આકાશમાં ઉડે છે અને ભૂમિ પર આવે છે, તેમ યત્-જે મદચ્યુતમ્-હર્ષને પ્રાપ્ત (કરીને) દુષ્ટોને રોકનાર મનુષ્યોની આવત્-રક્ષા કરે છે તેને જે સ્વતવસ:-સ્વકીય બળયુક્ત મનુષ્ય પ્રાપ્ત થાય છે, તે હ-તેઓ જ મહિત્વના-મહિમાથી અવર્ધન્ત-વૃદ્ધિ પામે છે અને જે વિમાનાદિ યાનોમાં આતસ્થુ:-બેસીને ઝરુ-વિપુલ સુખસાધક સદ:-સ્થાનમાં ગમનાગમન કરે છે, તેઓ નાકમ્-વિશેષ સુખ (ચક્રિરે-) પ્રાપ્ત કરે છે. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ પક્ષી આકાશમાં સુખપૂર્વક જઈને આવી જાય છે, તેમ જ જે પ્રશસ્ત શિલ્પવિદ્યાના જ્ઞાતા અધ્યાપકોથી અંગો તથા ઉપાંગો સહિત શિલ્પ વિદ્યાનો સાક્ષાત્ કરીને, તેઓના દ્વારા યાનોને સિદ્ધ કરીને તથા સારી રીતે રક્ષા કરીને તેની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓજ ઉત્તમ પ્રતિષ્ઠા અને પ્રશંસનીય ધન પ્રાપ્ત કરીને નિત્ય ઉન્નતિ કરે છે. (૭)

शूराइवेद्युधयो न जग्मयः श्रवस्यवो न पृतनासु येतिरे ।

भयन्ते विश्वा भुवना मरुद्भ्यो राजानइव त्वेषसंदृशो नरः ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે વાયુ શૂરા ઇવ-શૂરવીરોની સમાન ઇત્-જ મેઘની સાથે યુધુધયો ન-યુદ્ધ કરનારની સમાન જગ્મય:-જવા-આવવાવાળા પૃતનાસુ-સેનાઓમાં શ્રવસ્યવ:-અન્નાદિ પદાર્થોને પોતાના માટે વધારનારની સમાન યેતિરે-યત્ન કરે છે, રાજાન ઇવ રાજાઓની સમાન ત્વેષસંદ્રશ:-

પ્રકાશને દેખાડનાર નર:-નાયકની સમાન છે, જે મસ્દ્ભ્ય:-વાયુઓથી વિશ્વા-સર્વ ભુવના-સંસારસ્થ પ્રાણી ભયન્તે-ભય પામે છે, તે વાયુઓનો સમ્યક્ યુક્તિપૂર્વક ઉપયોગ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ નિડર પુરુષ યુદ્ધથી હટતા નથી, જેમ યોદ્ધાઓ યુદ્ધ માટે શીઘ્ર દોડે છે. જેમ ક્ષુધાતુર અન્ન ઈચ્છે છે અને તેમ જ જે સેનાઓમાં (છે તેઓ) યુદ્ધ ઈચ્છે છે.

જેમ દંડાધિકારીઓથી તથા સભા આદિના અધ્યક્ષોથી અન્યાયકારી લોકો કંપે છે, તેમ પવનોથી પણ સમસ્ત કુપથ્યો કરનાર તથા તેનું અનુચિત રૂપે સેવન કરનાર પ્રાણી કંપે છે. (અને ત્યારે) પોતાની મર્યાદામાં રહે છે. (૮)

ત્વષ્ટા યદ્વજ્રં સુકૃતં હિરણ્યયં સહસ્રભૃષ્ટિં સ્વપા અવર્તયત્ ।

ધૃત્ત ઇન્દ્રો નર્યપાંસિ કર્ત્તવેઽહન્વૃત્રં નિરપામૌબ્જદર્ણવમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : પ્રજા અને સેનામાં રહેલ પુરુષો જેમ સ્વપા:-ઉત્તમ કર્મ કરતા ત્વષ્ટા-છેદન કરનાર ઇન્દ્ર:-સૂર્ય કર્ત્તવે-કરવા યોગ્ય અપાંસિ-કર્મોને તથા યત્-જે સુકૃતમ્-સારી રીતે સિદ્ધ કરેલ હિરણ્યયમ્-પ્રકાશયુક્ત સહસ્રભૃષ્ટિમ્-જેનાથી હજાર પદાર્થો પાકે છે તે વજ્રમ્-વજનો પ્રહાર કરીને વૃત્રમ્-મેઘનું અહન-હનન કરે છે, અપામ્-જળોના અર્ણવમ્-સમુદ્રને નિરૌબ્જત્-નિરંતર સરળ કરે છે, તેમ દુષ્ટોને પર્યવર્તયત્-છિન્ન-ભિન્ન કરીને શત્રુઓનું હનન કરીને નરિ-મનુષ્યોમાં શ્રેષ્ઠોને આધત્તે-ધારણ કરે છે, તે રાજા બનવાને યોગ્ય હોય છે. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય મેઘને ધારણ કરીને તથા તેને વરસાવીને પ્રજાઓનું પાલન કરે છે, તેમ રાજા આદિ અન્યાયથી પૂર્ણ દુષ્ટોને નષ્ટ કરીને, સર્વના હિતને માટે સુખ રૂપી સાગરને સિદ્ધ કરે. (૯)

ઋર્ધ્વં નુનુદ્રેઽવતં ત ઓજસા દાદૃહાણં ચિદ્ધિભિદુર્વિ પર્વતમ્ ।

ધમન્તો વાણં મરુતઃ સુદાનવો મદે સોમસ્ય ર્ણ્યાનિ ચક્રિરે ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : જેમ મસ્ત:-વાયુ ઓજસા-બળથી અવતમ્-રક્ષણાદિના નિમિત્ત દાદૃહાણમ્-વધારવાને યોગ્ય પર્વતમ્-મેઘને વિભિદુ:-વિદીર્ણ કરીને તથા ઋર્ધ્વમ્-ઉંચે નુનુદ્રે-લઈ જાય છે, તેમ જે વાણમ્-બાણથી લઈને શસ્ત્રસમૂહને ધમન્તઃ-કંપાવતા સુદાનવઃ-ઉત્તમ પદાર્થોનું દાન કરનારા સોમસ્ય-ઉત્પન્ન થયેલ જગતની મધ્યમાં મદે-હર્ષમાં ર્ણ્યાનિ-સંગ્રામોમાં ઉત્તમ સાધનોને વિચક્રિરે-કરે છે, તે તેઓ રાજાઓની ચિત્-સમાન હોય છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો આ સંસારમાં જન્મ પ્રાપ્ત કરીને, વિદ્યા અને સુશિક્ષા લઈને તથા વાયુ સમાન કર્મ કરીને સુખોનો ઉપલોગ કરે. (૧૦)

जिह्वां नुनद्रेऽवतं तथा दिशासिञ्चन्नुत्सं गोतमाय तृष्णजे ।

आ गच्छन्तीमवसा चित्रभानवः कामं विप्रस्य तर्पयन्त धामभिः ॥ ११ ॥

पदार्थ : જેમ દાતા લોકો અવતમ્-નીચેના સ્થાનમાં જિહ્વામ્-કુટિલ ઉત્સમ્-કુવો ખોદીને તૃષ્ણજે-તૃષાયુક્ત ગોતમાય-બુદ્ધિમાન પુરુષને ઈમ્-જળથી અસિચન્-તૃપ્ત કરીને તયા-દિશા-તે અભીષ્ટ દિશાથી નુનુદ્રે-તેની તરસને દૂર કરી દે છે, જેમ ચિત્રભાનવઃ-વિવિધ પ્રકારના પ્રાણોના આધાર સમાન ધામભિઃ-જન્મ, નામ અને સ્થાનોથી વિપ્રસ્ય-વિદ્વાનનાં અવસા-રક્ષણની કામમ્-ઈચ્છાને તર્પયન્ત-પૂર્ણ કરે છે અને સર્વત્રથી સુખને આગચ્છન્તિ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ ઉત્તમ મનુષ્યોએ બનવું જોઈએ. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્યો કૂવા આદિ ખોદીને, ખેતર, બગીચા-વાડી આદિ સિંચીને, તેથી ઉત્પન્ન થયેલ અન્ન-ફૂલ આદિથી પ્રાણીઓને સમ્યક્ તૃપ્ત કરીને સુખી કરે છે, તેમ જ સભાપતિ આદિ, શાસ્ત્રોના વિશેષજ્ઞ વિદ્વાનોને તેઓની ઈચ્છાઓની પૂર્તિ કરીને સંતૃપ્ત કરીને, એના દ્વારા વિદ્યા, સુશિક્ષા અને ધર્મનો સમ્યક્ પ્રચાર કરીને પ્રાણીઓને આનંદિત કરે. (૧૧)

યા વः शर्मं शशमानाय सन्ति त्रिधातूनि दाशुषे यच्छताधि ।

अस्मभ्यं तानि मरुतो वि यन्त रयिं नो धत्त वृषणः सुवीरम् ॥ १२ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ આદિ મનુષ્યો ! તમે મસ્તઃ-વાયુની સમાન વઃ-તમારે યા-જે ત્રિધાતૂનિ-વાત, પિત્ત, કફયુક્ત શરીર અથવા લોખંડ, સોનું, ચાંદી આદિ ધાતુયુક્ત શર્મ-ધર સન્તિ-છે તાનિ-તેને શશમાનાય-વિજ્ઞાનયુક્ત દાશુષે-દાતાને માટે યચ્છત-આપો અને અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે તેવું ધર વિયન્ત-પ્રાપ્ત કરો. હે વૃષણઃ-સુખની વૃષ્ટિ કરનારા ! નઃ-અમારા માટે સુવીરમ્-ઉત્તમ વીરની પ્રાપ્તિ કરાવનાર રયિમ્-ધનને અધિધત્ત-ધારણ કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : સભા આદિના અધ્યક્ષ (= સભાપતિ અને સેનાપતિ) આદિએ સુખ અને દુઃખની અવસ્થામાં સર્વ પ્રાણીઓને પોતાની સમાન માનીને, સુખ અને ધન આદિથી પુત્રની સમાન તેનું પાલન કરવું જોઈએ અને પ્રજાજનો તથા સૈનિકોએ એનો પિતા સમાન સત્કાર કરવો જોઈએ. (૧૨)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વાયુની સમાન સભાધ્યક્ષ-રાજા અને પ્રજાના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તાર્થની સંગતિ પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે જાણવી જોઈએ. (૮૫)

સૂક્ત-૮૬

मरुतो यस्य हि क्षये पाथा दिवो विमहसः । स सुगोपातमो जनः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે વિમહસઃ-અનેક પૂજનીય કર્મોના કર્તા દિવઃ-વિદ્યા, ન્યાય, પ્રકાશયુક્ત તમે મસ્તઃ-વાયુની સમાન વિદ્વાનજન યસ્ય-જેના ક્ષયે-ધરમાં પાથ-રક્ષક હોય, સ હિ-તે જ સુગોપાતમઃ-સારી

રીતે જન:-મનુષ્ય બને. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રાણ વિના શરીરાદિની રક્ષા થઈ શકતી નથી, તેમ સત્ય ઉપદેશક વિના પ્રજાની રક્ષા થતી નથી. (૧)

યજ્ઞૈર્વીં યજ્ઞવાહસો વિપ્રસ્ય વા મતીનામ્ । મરુતઃ શૃણુતા હવમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે યજ્ઞવાહસ:-સત્સંકલ્પ પ્રિય યજ્ઞોને પ્રાપ્ત કરાવનારા વિદ્વાનો ! તમે મસ્ત:-વાયુની સમાન યજ્ઞ:-પોતાના વા-પારકા ભણવા-ભણાવવા અને ઉપદેશરૂપ યજ્ઞોથી વિપ્રસ્ય-વિદ્વાન વા-અથવા મતીનામ્-બુદ્ધિમાનોની હવમ્-પરીક્ષાને યોગ્ય પઠન-પાઠન રૂપ વ્યવહારને શ્રુણુત-શ્રવણ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જાણવા અને સમજાવવા રૂપી યજ્ઞોથી અથવા ક્રિયાથી સિદ્ધ યજ્ઞોથી યુક્ત થઈને તથા અન્ય મનુષ્યોને એનાથી યુક્ત કરીને અને પરોપકારથી ઐશ્વર્યની નિરંતર વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨)

ઉત વા યસ્ય વાજિનોઽનુ વિપ્રમતક્ષત । સ ગન્તા ગોઽમતિ વ્રજે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : વાજિન:-ઉત્તમયુક્ત વિદ્વાનો ! તમે યસ્ય-જે ક્રિયાકુશળ વિદ્વાન વા-ભણાવનારની સમીપથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત થયેલ વિપ્રમ્-વિદ્વાનને અન્વતક્ષત-સૂક્ષ્મપ્રજ્ઞા = બુદ્ધિ યુક્ત કરો છો, સ:-તે ગોમતિ-ઉત્તમ ઈન્દ્રિય, વિદ્યા, પ્રકાશયુક્ત વ્રજે-પ્રાપ્ત કરવાના યોગ્ય માર્ગમાં ઉત-પણ ગન્તા-પ્રાપ્ત થાય. (૩)

ભાવાર્થ : તીવ્ર બુદ્ધિ અને શિલ્પવિદ્યાથી સિદ્ધ કરેલ વિમાન આદિ વિના મનુષ્યો દ્વારા દેશ-દેશાન્તરમાં ગમનાગમન થઈ શકતું નથી, તેથી પુરુષાર્થથી એ (વિમાન) આદિનું નિર્માણ કરવું જોઈએ. (૩)

અસ્ય વીરસ્ય બર્હિષિ સુતઃ સોમો દિવિષ્ટિષુ । ઉક્થં મદશ્ચ શસ્યતે ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! આપના સુશિક્ષિત અસ્ય-એ વીરસ્ય-વીરનું સુત:-સિદ્ધ કરેલ સોમ:-ઐશ્વર્ય દિવિષ્ટિષુ-ઉત્તમ ઈષ્ટિરૂપ કર્મોથી યુક્ત વ્યવહારોમાં ઉક્થમ્-પ્રશંસિત વચન બર્હિષિ-ઉત્તમ વ્યવહાર કરવામાં મદ:-આનંદ ચ-અને સદ્વિદ્યાદિ ગુણોનો સમૂહ શસ્યતે-પ્રશંસિત થાય છે, અન્યનો નહિ. (૪)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોની શિક્ષા વિના મનુષ્યોમાં ઉત્તમ ગુણો ઉત્પન્ન થતા નથી, તેથી તેનું નિત્ય અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૪)

અસ્ય શ્રોષન્ત્વા ભુવો વિશ્વા યશ્ચર્ષણીર્ભિ । સૂરં ચિત્સસ્ત્રુષીરિષઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ લોકો અસ્ય-એ સુશિક્ષિત વિદ્વાનની ઇષઃ-ચિત્-સમાન વિશ્વા:-સર્વ સસ્ત્રુષી:-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય આભુવઃ-સર્વત્રથી સુખયુક્ત ચર્ષણી:-મનુષ્ય રૂપ પ્રજાને જેમ કિરણો સૂરમ્-

સૂર્યને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ અભિશ્રોષન્તુ-સર્વત્રથી સાંભળો. (૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય સુશિક્ષિત, સુપરીક્ષિત, શુભલક્ષણોયુક્ત, સમસ્ત વિદ્યાઓથી યુક્ત, અતિદંઢ, અતિ બળવાન, અધ્યાપક, ઉત્તમ સહાયકોયુક્ત, પુરુષાર્થી, ધાર્મિક અને વિદ્વાન છે, તે જ પરિપૂર્ણ ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષને પ્રાપ્ત કરીને, પ્રજાના દુઃખોનું નિવારણ કરીને, પરાવિદ્યાને સાંભળીને પ્રાપ્ત થાય છે, તેનાથી વિપરીત મનુષ્ય નહિ. (૫)

पूर्वीभिर्हि ददाशिम शरद्धिर्मरुतो वयम्। अवोभिश्चर्षणीनाम्॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-સભાધ્યક્ષ આદિ સજ્જનો ! જેમ તમે પૂર્વીભિ:-પ્રાચીન-સનાતન શરદ્ધિ:-સર્વ ઋતુ અને અવોભિ:-રક્ષા આદિ સર્વોત્તમ વ્યવહારોથી ચર્ષણીનામ્-સર્વ મનુષ્યોના સુખ માટે સમ્યક્ પોતાનો વર્તાવ કરે છે, તેમ હિ-નિશ્ચયપૂર્વક વયમ્-અમે પ્રજા, સભા અને પાઠશાલા આદિ પ્રત્યેક શાળાના પુરુષો આપને સુખ દદાશિમ-આપીએ. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ ઋતુઓના વાયુઓ પ્રાણીઓની રક્ષા કરીને તેને સુખી કરે છે, તેમ વિદ્વાનજન સર્વના સુખ માટે પ્રવૃત્ત થાય, કદી કોઈના દુઃખ માટે નહિ. (૬)

सुभगः स प्रयज्यवो मरुतो अस्तु मर्त्यैः। यस्य प्रयांसि पर्षथ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે પ્રયજ્યવ:-સર્વોત્તમ યજ્ઞાદિ કર્મ કરનારા મસ્ત:-સભાધ્યક્ષ આદિ વિદ્વાનો ! તમે યસ્ય-જેના માટે પ્રયાંસિ-અત્યંત પ્રીતિ કરવા યોગ્ય મનોહર પદાર્થોને પર્ષથ-પિરોસો છો-અર્થાત્ આપો છો, સ:-તે મર્ત્ય:-મનુષ્ય સુભગ:-શ્રેષ્ઠ ધન અને ઐશ્વર્યયુક્ત અસ્તુ-થાઓ. (૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યોના સભા આદિના અધ્યક્ષ આદિ વિદ્વાનજન રક્ષક હોય, તેઓ સુખપૂર્ણ ઐશ્વર્યને કેમ ન પ્રાપ્ત કરી શકે ? (૭)

शशमानस्य वा नरः स्वेदस्य सत्यशवसः। विदा कामस्य वेनतः॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે નર:-મનુષ્યો ! તમે સભાધ્યક્ષ આદિને સંગ વા-પુરુષાર્થથી શશમાનસ્ય-જાણવા યોગ્ય સત્યશવસ:-જેમાં નિત્ય પુરુષાર્થ કરવાનો હોય વેનત:-જે સર્વ શાસ્ત્રોથી સાંભળવામાં આવતો હોય તથા કામનાને યોગ્ય તથા સ્વેદસ્ય-પુરુષાર્થથી સિદ્ધ થાય છે, તે કામસ્ય-કામને વિદ-જાણો અર્થાત્ તેને સ્મરણપૂર્વક સિદ્ધ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય વિદ્વાનોના સંગ વિના સત્ય કામનાઓ તથા સત્ય અને અસત્યને જાણી શકતો નથી, તેથી સર્વેએ એ કાર્ય કરવું જોઈએ. (૮)

यूयं तत्सत्यशवस आविष्कर्त्त महित्वना। विध्यता विद्युता रक्षः॥ ९ ॥

પદાર્થ : સત્યશવસ:-નિત્ય બળયુક્ત સભાધ્યક્ષ આદિ સજ્જનો ! યૂયમ્-તમે મહિત્વના-ઉત્તમ યશથી તત્-ઉત્તમ કામને આવિ:-પ્રકટ કર્ત્-કરો, જેથી વિદ્યુતા-વિદ્યુતના લોખંડથી બનાવેલ શસ્ત્ર

અને આગ્નેયાદિ અસ્ત્રોના સમૂહથી રક્ષા:-દુષ્ટ કર્મ કરનાર મનુષ્યને વિધ્યતા-તાડના કરતા-મારીને સર્વ કામનાઓ સિદ્ધ થાય. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરસ્પર પ્રેમથી પુરુષાર્થપૂર્વક વિદ્યાઓ-(વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થ વિદ્યા) પ્રાપ્ત કરીને, દુષ્ટ સ્વભાવ અને ગુણનું નિવારણ કરીને કામનાઓની સિદ્ધિ નિત્ય કરવી જોઈએ. (૯)

गूहता गुह्यं तमो वि यात विश्वमत्रिणम्। ज्योतिष्कर्त्ता यदुष्मसि ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે સત્યશબ્સ:-નિત્યબળયુક્ત સભાધ્યક્ષ આદિ સજ્જનો ! જેમ તમે મહિત્વના-પોતાના ઉત્તમ યશથી ગુહ્યમ્-ગુપ્ત કરવા યોગ્ય વ્યવહારને ગુહ્ય-ઢાંકો અને વિશ્વમ્-સમસ્ત તમ:-અવિદ્યારૂપી અંધકારને જે અત્રિણમ્-ઉત્તમ સુખનો વિનાશ કરનાર છે તેને વિ + યાત-દૂર પહોંચાડો તથા અમે યત્-જે જ્યોતિ:-વિદ્યાના પ્રકાશને ઝ્મસિ-ઈચ્છીએ છીએ તેને કર્ત્-પ્રકટ કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : સભા આદિના અધ્યક્ષ આદિએ પરમ પુરુષાર્થથી નિરંતર રાજ્યની રક્ષા કરવી જોઈએ અને અવિદ્યા તથા અધર્મ રૂપી અંધકારનું અને શત્રુઓનું નિવારણ કરવું જોઈએ તથા 'વિદ્યા, ધર્મ, સજ્જનો તથા સુખ' નો પ્રચાર કરવો જોઈએ. (૧૦)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં જેમ શરીરસ્થ પ્રાણ આદિ વાયુ ઈચ્છિત સુખોને સિદ્ધ કરી સર્વની રક્ષા કરે છે, તેમ સભાધ્યક્ષ આદિએ સમસ્ત રાજ્યની યથાવત્ રક્ષા કરવી જોઈએ. એ અર્થના વર્ણનથી આ સૂક્તમાં કહેલ અર્થની તે પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૯૬)

સૂક્ત-૯૭

प्रत्वक्षसः प्रतवसो विरष्णिनोऽनानता अविथुरा ऋजीषिणः।

जुष्टतमासो नृतमासो अञ्जिभिर्व्यानत्रे के चिदुस्त्राइव स्तृभिः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ આદિ સજ્જનો ! આપ લોકોએ કે, ચિત્-તેઓની પ્રતિદિન રક્ષા કરવી જોઈએ કે જે પોતાની સેનાઓમાં સ્તૃભિ:-શત્રુઓને લજ્જિત કરવાના ગુણોથી અજ્ઞિભિ:-પ્રકટરક્ષા અને ઉત્તમજ્ઞાન આદિ વ્યવહારોની સાથે વર્તાવ રાખીને તથા ઉસ્ત્રા ઇવ-જેમ સૂર્યના કિરણો જળને છિન્ન-ભિન્ન કરે છે, તેમ પ્રત્વક્ષસ:-શત્રુઓને સારી રીતે છિન્ન-ભિન્ન કરે છે; તથા પ્રતવસ:-પ્રબળ જેના સેનાજન વિરષ્ણિન:-સમસ્ત પદાર્થોના વિજ્ઞાનથી મહાનુભાવ અનાનતા:-કદી શત્રુઓની સામે દીન થયા નહિ, અને અવિથુરા:-કંપન પણ પામ્યા નહિ, ઋજીષિણ:-સમસ્ત વિદ્યાઓને જાણે અને ઉત્કર્ષ સેનાના અંગોને એકઠા કરે, જુષ્ટતમાસ:-રાજા લોકોએ જેની વારંવાર ચાહના કરી હોય, નૃતમાસ:-સર્વ કર્મોને યથાયોગ્ય વ્યવહારમાં અત્યંત વર્તાવનાર હોય, વ્યાનત્રે-શત્રુઓના બળોને જુદા કરે, તેઓનો સત્કાર કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યના કિરણો તીવ્ર પ્રતાપવાળા છે, તેમ પ્રતાપી મનુષ્ય જેની પાસે છે, તેનો પરાજય કેમ થઈ શકે ? તેથી સભાધ્યક્ષ આદિએ ઉક્ત લક્ષણોવાળા મનુષ્યોની સમ્યક્ પરીક્ષા કરીને, સુશિક્ષિત કરીને, તેઓનો સત્કાર કરીને અને ઉત્સાહિત કરીને રાખવા જોઈએ. એમ કર્યા વિના કોઈ પણ રાજ્ય કરી શકતા નથી. (૧)

उपह्वेषु यदचिध्वं ययिं वयइव मरुतः केन चित्पथा ।

श्चोतन्ति कोशा उप वो रथेष्व घृतमुक्षता मधुवर्णमर्चते ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-સભા આદિ કામોમાં નિયત કરેલ મનુષ્યો ! તમે **ઉપહ્વેષુ**-પ્રાપ્ત થયેલ ત્રાંસા-સીધા ભૂમિ અને આકાશાદિ માર્ગોમાં **રથેષુ**-વિમાનાદિ રથો પર બેસી **વય ઇવ**-પક્ષીઓની સમાન **કેનચિત્**-કોઈ **પથા**-માર્ગથી **યત્**-જે **યયિમ્**-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય વિજયને **અચિધ્વમ્**-સંપાદન કરો, જાઓ, આવો, તેઓને **અર્ચતે**-જેનો સત્કાર કરતા અને સભા આદિ કામોના અધીશ-સ્વામી જેને પ્યારા છે તેને માટે આપો. જે **વઃ**-તમારો રથ **કોશાઃ**-મેઘોની સમાન આકાશમાં **શ્ચોતન્તિ**-ચાલે છે તેમાં **મધુવર્ણમ્**-મધુર અને નિર્મળ જળ **ઘૃતમ્**-જળને **ઉદ + આ + ઉક્ષત્**-સારી રીતે ઉપસિક્ત કરો અર્થાત્ તે રથોના અગ્નિ અને વાયુના કલધરોની સમીપ સમ્યક્ છાંટો. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, (ચાહે કે તેઓ) વિમાન આદિ યાન રચીને તેમાં અગ્નિ, વાયુ અને જળના સ્થાનોનું નિર્માણ કરીને, તે-તે (સ્થાનો)માં તેને સંસ્થાપિત કરીને, તેને કલાઓથી સંચાલિત કરીને, વરાળ આદિને રોકીને તથા તેને ઉપર તરફ લઈ જઈને (પ્રેરિત કરીને) પક્ષીની સમાન અને મેઘની સમાન આકાશ માર્ગમાં યથેષ્ટ સ્થાન પર ગમનાગમન કરીને વ્યવહારથી અને યુદ્ધથી વિજય તથા રાજ્યલક્ષ્મી પ્રાપ્ત કરીને તથા તેનાથી પરોપકાર કરીને, નિરાભિમાની બનીને સમસ્ત આનંદોને પ્રાપ્ત કરે અને તે સર્વને પ્રાપ્ત કરાવો. (૨)

प्रेषामज्मेषु विथुरेव रेजते भूमिर्यामेषु यद्ध युज्जते शुभे ।

ते क्रीळयो धुनयो भ्राजदृष्टयः स्वयं महित्वं पनयन्त धूतयः ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : **યત્**-જે **ક્રીડયઃ**-પોતાના સત્ય આચરણના વ્યવહારથી **ધુનયઃ**-શત્રુઓને કંપાવે **ભ્રાજદૃષ્ટયઃ**-એવા તીવ્ર શસ્ત્રોવાળા **ધૂતયઃ**-જે યુદ્ધની ક્રિયાઓમાં વિચરતા તે વીર **શુભે** શ્રેષ્ઠ વિજયને માટે **અજ્મેષુ**-સંગ્રામોમાં **પ્ર + યુજ્જતે**-પ્રયુક્ત અર્થાત્ પ્રેરણાને પ્રાપ્ત થાય છે. તે-તેઓ **મહિત્વમ્**-મહાનના જેમ હોય, તેમ **સ્વયમ્**-આપ **હ-જ પનયન્ત**-વ્યવહાર કરે છે, **ણમ્**-એના **યામેષુ**-તે માર્ગોમાં કે જેમાં મનુષ્ય આદિ પ્રાણી જાય છે, ચાલતા રથોની **ભૂમિઃ**-ધરતી **વિથુરા + ઇવ + ઈજતે**-એવી કંપે-ધૂજે

છે કે જાણે શીત જ્વર-ટાઢિયા તાવથી પીડિત છોકરી કંપે છે. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ તેજ ગતિમાં ચાલતા વાયુઓ વૃક્ષોને, ઘાસને, ઔષધિઓને ભૂમિ કણો-ધૂળને ધ્રુજાવે છે, તેમ જ વીરોને સેનાના રથોના પૈડાઓના પ્રહારોથી ભૂમિ અને શસ્ત્રોના પ્રહારોથી ભીરુ લોકો કંપે-ધ્રુજે છે. જેમ વેપારી લોકો વ્યવહારથી ધન પ્રાપ્ત કરીને ખૂબજ ધનાઢ્ય બને છે, તેમ સભા આદિના અધ્યક્ષ આદિ શત્રુવિજય દ્વારા પોતાના મહત્ત્વને પ્રસિદ્ધ કરે છે. (૩)

સ હિ સ્વસૃત્પૃષ્ઠદશ્વો યુવા ગુણોઙ્ઙુ યા ઈશાનસ્તવિષીભિરાવૃતઃ ।

અસિ સત્ય ઋણયાવાઙ્ઙેઢ્ઢોઙ્ઙ્યા ઢિયઃ પ્રાવિતાથા વૃષા ગુણઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે સેનાપતે ! સઃ-હિ-તે જ તું અચા-જેનાથી સમસ્ત વિદ્યા જાણવામાં આવે છે તે બુદ્ધિથી યુક્ત વૃષા-શીતલ, મંદ, સુગંધથી સુખ રૂપી વૃષા કરવામાં સમર્થ ગુણઃ-પવનોની સમાન વેગ અને બળયુક્ત સ્વસૃત્-પોતાના લોકોને પ્રાપ્ત થનાર પૃષ્ઠદશ્વઃ-અને મેઘની સમાન જેમાં ઘોડાઓ છે યુવા-તથા યુવાનીમાં પહોંચેલા ગુણઃ-શ્રેષ્ઠ સજ્જનોમાં ગણનાપાત્ર ઈશાનઃ-પરિપૂર્ણ સામર્થ્યયુક્ત સત્યઃ-સજ્જનોમાં સરળ સ્વભાવ અને ઋણયાવા-અન્યોનું ઋણ ચૂકાવનાર અનેઢ્ઢઃ-પ્રશંસનીય અને અસ્યાઃ-એ ઢિયઃ-બુદ્ધિ અને કર્મની પ્રાવિતા-રક્ષા કરનારા તવિષીભિઃ-પરિપૂર્ણ બળયુક્ત સેનાઓથી આવૃતઃ-યુક્ત અસિ-છે. અથ-તદન્તર અમારાથી સત્કાર કરવા યોગ્ય પણ છે. (૪)

ભાવાર્થ : બ્રહ્મચર્ય તથા વિદ્યા દ્વારા શરીર અને આત્માને પૂર્ણ બળયુક્ત અને પોતાની સેના દ્વારા રક્ષિત સેનાપતિ, પોતાની સેનાની નિરંતર રક્ષા કરીને તથા શત્રુઓને જીતીને પ્રજાઓનું પાલન કરે. (૪)

પિતુઃ પ્રત્નસ્ય જન્મના વદામસિ સોમસ્ય જિહ્વા પ્ર જિગાતિ ચક્ષ્ણા ।

યદીમિન્દ્રં શમ્યૃક્વાણ આશ્તાદિન્નામાનિ યજ્ઞિયાનિ દધિરે ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : ઋણયાવાઙ્ઙેઢ્ઢોઙ્ઙ્યા-પ્રશંસિત સ્તુતિઓવાળા અમે લોકો પ્રત્નસ્ય-પુરાતન-અનાદિ પિતુઃ-પાલનકર્તા જગદીશ્વરની વ્યવસ્થાથી પોતાના કર્માનુસાર પ્રાપ્ત થયેલ મનુષ્ય દેહના જન્મના-જન્મથી સોમસ્ય-પ્રકટ સંસારના ચક્ષ્ણા-દર્શનથી જે યજ્ઞિયાનિ-શિલ્પ આદિ કર્મોને યોગ્ય નામાનિ-જળોને વદામસિ-તમારા પ્રત્યે ઉપદેશ કરે અને યત્-જે ઈમ્-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય ઇન્દ્રમ્-વિદ્યુત્ અગ્નિના તેજને શમિ-કર્મને નિમિત્ત જિહ્વા-જીભ અથવા વાણી પ્રજિગાતિ-સ્તુતિ કરે છે, તે સર્વને તમે આશ્તા-પ્રાપ્ત થાઓ અને આત્ + ઇત્-તે જ સમયે તેને દધિરે-ધારણ કરો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, આ શરીરનો આશ્રય કરીને પિતૃભાવથી પરમેશ્વરની આજ્ઞા પાલન પ્રાર્થના કરીને, તેની ઉપાસના કરીને, (તેનો અન્યોને) ઉપદેશ આપીને અને સંસારના પદાર્થો, ગુણો, વિજ્ઞાનો તથા ઉપકારોનો સંગ્રહ કરીને પોતાના જન્મને સફળ બનાવવો જોઈએ. (૫)

શ્રિયસે કં ભાનુભિઃ સં મિમિક્ષિરે તે રશ્મિભિસ્ત ઋક્વભિઃ સુખાદયઃ ।
તે વાશીમન્ત ઙ્ઘિણો અભીરવો વિદ્રે પ્રિયસ્ય મારુતસ્ય ધામ્નઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જે ભાનુભિઃ-પ્રતિદિન કમ્-સુખનું શ્રિયસે-સેવન કરવા માટે તે-તેઓ પ્રિયસ્ય-પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરાવનારા માસ્તસ્ય-કળાના પવન અને પ્રાણવાયુના ધામ્નઃ-ઘરેથી વિદ્યા અને જળને સમ્ + મિમિક્ષિરે-સારી રીતે છંટકાવ કરવા ઇચ્છે છે, તે-તેઓ શિલ્પવિદ્યાના જ્ઞાતા હોય છે. તથા જે રશ્મિભિઃ-અગ્નિ કિરણોના સુખના સેવનને માટે કળાઓથી યાનોને ચલાવે છે. તેઓ શીઘ્ર એક સ્થાનથી બીજા સ્થાનનો વિદ્રે-લાભ પામે છે. ઋક્વભિઃ-જેમાં પ્રશંસિત સ્તુતિ વિદ્યમાન છે તેમાંથી જે સુખનું સેવન કરવા માટે સુખાદયઃ-સર્વોત્તમ પદાર્થોનું ભોજન કરનાર હોય છે. તે-તેઓ આરોગ્ય પ્રાપ્ત કરે છે. વાશીમન્તઃ-પ્રશંસિત જેની વાણી વા ઙ્ઘિણઃ-વિશેષ જ્ઞાન છે તેઓ અભીરવઃ-નિર્ભય પુરુષપ્રેમ ઉત્પન્ન કરાવનારા પ્રાણવાયુ અને કળાઓના વાયુ ગૃહથી યુદ્ધમાં પ્રવૃત્ત થાય છે, તેઓ વિજય પ્રાપ્ત કરે છે. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય પ્રતિદિન સૃષ્ટિની પદાર્થવિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, અનેક પ્રકારના ઉપકાર ગ્રહણ કરીને, તે વિદ્યાને ભણી-ભણાવીને વાત કરવામાં કુશળ બનીને, શત્રુઓને જીતીને શ્રેષ્ઠ આચરણ રાખે છે, તે સર્વ લોકો સુખી થાય છે. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં રાજા અને પ્રજાના કર્તવ્યકર્મો કહેલ છે. તેથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૮૭)

સૂક્ત-૮૮

આ વિદ્યુન્મદ્ધિર્મરુતઃ સ્વકૈં રથૈભિર્યાત ઋષ્ટિમદ્ધિરશ્વર્ષણૈઃ ।

આ વર્ષિષ્ઠયા ન ઙ્ઘા વયો ન પપ્તતા સુમાયાઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સુમાયાઃ-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિમાન મસ્તઃ-સભાધ્યક્ષ અને પ્રજા પુરુષો ! તમે નઃ-અમારા વર્ષિષ્ઠયા-અત્યંત વૃદ્ધત્વથી ઙ્ઘા-ઉત્તમ અન્ન-આદિ પદાર્થો સ્વકૈં-શ્રેષ્ઠ વિચારવાના વિદ્વાનો ઋષ્ટિમદ્ધિઃ-તાર વિદ્યામાં ચલાવવાના દંડા તથા શસ્ત્રાસ્ત્ર અશ્વર્ષણૈઃ-અન્ન આદિ પદાર્થ રૂપી ઘોડાઓના ગમનની સાથે વર્તમાન વિદ્યુન્મદ્ધિઃ-જેમાં તાર વિદ્યુત્ છે, તે રથૈભિઃ-વિમાન આદિ રથોથી વયઃ-પક્ષીઓની ન-સમાન પપ્ત-ઉડી જાઓ, આ-ઉડી આવો, યાત-જાઓ, આ-આવો.

ભાવાર્થ : જેમ પક્ષી મળીને ઉપર, નીચે તથા અન્ય ઇચ્છિત સ્થાન પર સુખપૂર્વક ગમનાગમન કરે છે, તેમ મનુષ્યોએ સમ્યક્ સિદ્ધ કરેલ વિદ્યુત્યુક્ત તાર યંત્રોથી તથા વિમાન આદિ યાનોથી ઉપર; નીચે જઈને અથવા ઇચ્છિત સમાચારો (મોકલીને) તથા (વિવિધ) દેશોમાં સુખપૂર્વક ગમનાગમન કરીને પોતાનાં કાર્યો સિદ્ધ કરીને નિરંતર સુખી રહેવું જોઈએ. (૧)

तेऽरुणेभिर्वरमा पिशङ्गैः शुभे कं यान्ति रथतूर्भिरश्वैः ।

रुक्मो न चित्रः स्वधितीवान् पव्या रथस्य जङ्घनन्त भूम ॥ २ ॥

पદાર્થ : જેમ શિલ્પના જ્ઞાતા વિદ્વાનો શુભે-ઉત્તમ વ્યવહારને માટે અસ્રોભિઃ-અગ્નિથી તપ્ત સમ્યક્ લાલ પિશંગૈઃ-વા અગ્નિ અને જળના સંયોગથી ઊઠેલી વરાળથી કિંચિત્ શ્વેત રથતૂર્ભિઃ-જે વિમાન આદિ રથોને ચલાવનાર અર્થાત્ અતિ શીઘ્ર તેને પહોંચાડવાના કારણે અગ્નિ અને જળની કળોના ઘરડૂપી અશ્વૈઃ-ઘોડાઓ છે, તેની સાથે રથસ્ય-વિમાનાદિ રથની પવ્યા-વજની સમાન પૈડાઓની ધારથી સ્વધિતિવાન્-પ્રશંસિત વજથી અન્તરિક્ષ વાયુને કાપવા રુક્મઃ-અને ઉત્તેજના રાખનાર ચિત્રઃ-શૂરતા, ધીરતા, બુદ્ધિમતા આદિ ગુણોથી અદ્ભુત મનુષ્યની ન-સમાન માર્ગનું જઙ્ઘનન્ત-હનન કરીને તથા દેશ-દેશાન્તરમાં આવે જાય છે. તે-તેઓ વસ્-ઉત્તમ કમ્-સુખને આયાન્તિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ અમે પણ ભૂમ-એમ કરીને આનંદિત બનીએ. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ શૂરવીર ઉત્તમ શાસ્ત્રોક્ત પુરુષ વેગથી જઈ-આવીને શત્રુઓને મારે છે, તેમ જ મનુષ્ય વેગવાન યાત્રોમાં બેસીને દેશ-દેશાન્તરમાં જઈને શત્રુઓને જીતે છે. (૨)

શ્રિયે કં વો અધિ તનૂષુ વાશીર્મેધા વના ન કૃણવન્ત ઋર્ધ્વા ।

યુષ્મભ્યં કં મરુતઃ સુજાતાસ્તુવિદ્યુમ્નાસૌ ધનયન્તે અદ્રિમ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મસ્તઃ-સભાધ્યક્ષાદિ સજ્જનો ! જે વઃ-તમારા તનૂષુ-શરીરોમાં શ્રિયે-લક્ષ્મીને માટે કમ્-સુખ ઋર્ધ્વા-શ્રેષ્ઠ સુખને પ્રાપ્ત કરનારી વાશીઃ-વેદવાણી મેધા-શુદ્ધ બુદ્ધિઓને વના-ઊંચા-ઊંચા વનના વૃક્ષોની ન-સમાન અધિ + કૃણવન્તે-અધિકૃત કરે છે અર્થાત્ તેના આચરણ માટે અધિકાર આપે છે.

હે સુજાતાઃ-વિદ્યાદિ શ્રેષ્ઠ ગુણોમાં પ્રસિદ્ધ ઉક્ત સજ્જનો ! જે તુવિદ્યુમ્નાસઃ-વિપુલ વિદ્યા પ્રકાશવાળા મહાત્માજન યુષ્મભ્યમ્-તમારા માટે કમ્-જેમ અત્યંત સુખ થાય, તેમ અદ્રિમ્-પર્વતની સમાન ધનયન્તે-પુષ્કળ ધન પ્રકાશિત કરે છે, તે તમારે નિત્ય સેવન યોગ્ય છે. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ મેઘ અથવા કૂવાના જળથી સિંચેલ વન અથવા બગીચાઓ પોતાના ફળોથી પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, તેમ વિદ્વાનો વિદ્યા અને સુશિક્ષા પ્રદાન કરીને પોતાના પરિશ્રમના ફળથી સર્વ મનુષ્યોને સુખી કરે છે. (૩)

અહાન્તિ ગૃધ્નાઃ પર્યા વ આગુરિમાં ધિયં વાર્કાર્યા ચ દેવીમ્ ।

બ્રહ્મ કૃણવન્તો ગોતમાસો અર્કૈરુર્ધ્વં નુનુદ્ર ઉત્સધિં પિબંધ્યૈ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ગૃધ્નાઃ-સર્વ રીતે સારી આકાંક્ષા કરનારા ગોતમાસઃ-અત્યંત જ્ઞાનવાન

સજ્જન બ્રહ્મ-ધન, અન્ન અને વેદનું પઠન કૃણવન્તઃ-કરતા અર્કેઃ-વેદ મંત્રોથી અહનિ-પ્રતિદિન ઊર્ધ્વમ્-ઉત્કર્ષતાથી પિબધ્યૈ-પીવા માટે ઉત્સધિમ્-જે ભૂમિમાં ફૂવા નિયત કરવામાં આવે તેની સમાન આ + નુનુદે-સર્વથા ઉત્કર્ષ માટે વઃ-તમારી સામે આવીને પ્રેરણા કરે છે, તેઓ વાર્કાર્યામ્-જળની સમાન નિર્મળ થવા યોગ્ય દેવીમ્-પ્રકાશને પ્રાપ્ત કરીને ઇમામ્-એ ધિયમ્-ધારણાવતી બુદ્ધિ ચ-અને ધનને પરિ + આ + અગુઃ-સર્વ ક્યાંકથી સારી રીતે પ્રાપ્ત થઈને અન્યને પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેઓ સદા સેવાને યોગ્ય છે. (૪)

ભાવાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ મનુષ્યો ! જેમ લોકો તરસ છીપાવવા આદિ પ્રયોજન માટે અતિ પરિશ્રમથી જળાશય બનાવીને પોતાનું કાર્ય સિદ્ધ કરે છે, તેમ આપ લોકો પણ પુરુષાર્થથી વિદ્વાનોના સંગ દ્વારા વિદ્યાભ્યાસ સમ્યક્ રીતે કરીને તથા સમસ્ત વિદ્યાઓના પ્રકાશથી યુક્ત બુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરીને તેને અનુકૂળ ક્રિયાઓને સિદ્ધ કરો. (૪)

एतत्पन्न योजनमचेति सस्वर्ह यन्मरुतो गोतमो वः ।

पश्यन् हिरण्यचक्रानयोदंष्ट्रान्विधावतो वराहून् ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે મસ્તઃ-મનુષ્યો ! તમે ગોતમઃ-વિદ્વાનની ન-સમાન વઃ-વિદ્યાનું જ્ઞાન ઈચ્છનારા તમને યત્-જે યોજનમ્-જોડવા યોગ્ય વિમાન આદિ યાન હિરણ્યચક્રાન્-જેના પૈડાઓમાં સોનાનું કામ વા અતિ ચમક-દમક હોય, તે અયોદંષ્ટ્રાન્-મોટી લોખંડની ખીલીવાળા વરાહૂન્-સારા શબ્દોને કરનાર વિધાવતઃ-વિવિધ માર્ગે ચાલનાર વિમાન આદિ રથોને એતત્-પ્રત્યક્ષ પશ્યન્-નિહાળીને હ-જ સસ્વઃ-ઉપદેશ કરે છે, ત્યત્-તે તેનો ઉપદેશ કરેલ તમે લોકોને અચેતિ-ચેતાવે છે તેને તમે જાણીને માનો. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ પરાવર (= અન્ત અને આદિ)ના જ્ઞાતા વિદ્વાન શ્રેષ્ઠ કર્મ કરીને આનંદ ભોગવે છે, તેમ તમે પણ વિદ્વાનોના સંગથી વિદ્યાથી સિદ્ધ ક્રિયાઓ કરીને સુખ ભોગવો. (૫)

एषा स्या वौ मरुतोऽनुभर्त्री प्रति ष्टोभति वाघतो न वाणी ।

अस्तौभ्यद् वृथासामनु स्वधां गर्भस्त्योः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે મસ્તઃ-મનુષ્યો ! તમારી જે એષા-એ કહેલી અથવા સ્યા-કહેવાની તે અનુભર્ત્રીઃ-ઈષ્ટ સુખધારક વાણી-વાણી વાઘતઃ-પ્રત્યેક ઋતુમાં યજ્ઞ કરનાર-કરાવનાર વિદ્વાનની ન-સમાન વિદ્યાઓનો પ્રતિ + સ્તોભતિ-પ્રતિબંધ કરતી અર્થાત્ પ્રત્યેક વિદ્યાઓને સ્થિર કરતી આસામ્-વિદ્યાના કામોની ગર્ભસ્ત્યોઃ-ભુજાઓમાં અનુ-સ્વધામ્-પોતાના સાધારણ સામર્થ્યને અનુકૂળ અતિબંધન કરે છે તથા વૃથા-અસત્ય વ્યવહારોને અસ્તોભ્યત્-રોકે છે, એ વાણી આપથી અમે સાંભળીએ. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ ઋત્વિકની વાણી યજ્ઞ કાર્યોને પ્રકાશિત કરીને દોષોનું નિવારણ કરે છે, તેમ વિદ્વાનોની વાણી વિદ્યાઓને પ્રકાશિત કરીને અવિદ્યાનું નિવારણ કરે છે. તેથી સર્વેએ વિદ્વાનોનો નિરંતર સંગ

કરવો જોઈએ. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં મનુષ્યોએ વિદ્યાની સિદ્ધિ માટે પઠન-પાઠનની રીતિ પ્રકાશિત કરી છે તેના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૮૮)

સૂક્ત-૮૯

આ નોં ભદ્રાઃ ક્રતવો યન્તુ વિશ્વતોઽદ્ભ્યાસો અપરીતાસ ડ્વિદ્ઃ ।

દેવા નો યથા સદમિદ્ વૃધે અસન્નપ્રાયુવો રક્ષિતારોં દિવેદિવે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : યથા-જેમ જે વિશ્વતઃ-સર્વત્રથી ભદ્રાઃ-સુખ કરનાર અને ક્રતવઃ-સારી ક્રિયા અને શિલ્પયજ્ઞમાં બુદ્ધિ રાખનાર અદ્ભ્યાસઃ-અહિંસક અપરીતાસઃ-ત્યાગ ન કરવા યોગ્ય ડ્વિદ્ઃ-પોતાના ઉત્કર્ષથી દુઃખોનો વિનાશ કરનારા અપ્રાયુવઃ-જેની વયનો વૃથા નાશ થવો પ્રતીત ન થાય દેવાઃ-એવા દિવ્ય ગુણયુક્ત વિદ્વાનો જેમ નઃ-અમને સદમ્-વિજ્ઞાન વા-ગૃહે આ + યન્તુ-સારી રીતે પહોંચાડે, તેમ દિવે-દિવે-પ્રતિદિન નઃ-અમારી વૃધે-સુખ વૃદ્ધિ માટે રક્ષિતારઃ-રક્ષક ઇત્-જ અસન્-થાઓ. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ શ્રેષ્ઠ અને સર્વ ઋતુઓમાં ઉપયોગી ઘર સર્વ સુખ પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેમ વિદ્વાન જન, વિદ્યાઓ અને શિલ્પ રૂપી યજ્ઞ, સમસ્ત સુખોને પ્રદાન કરનારા છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૧)

દેવાનાં ભદ્રા સુમતિર્ઋજૂયતાં દેવાનાં રાતિરભિ નો નિ વર્તતામ્ ।

દેવાનાં સ્વમુપ્ સેદિમા વયં દેવા ન આયુઃ પ્ર તિરન્તુ જીવસૈ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : વયમ્-અમે જે ઋજૂયતામ્-કોમળતા ઈચ્છતા દેવાનામ્-વિદ્વાનોની ભદ્રા-સુખકારક સુમતિઃ-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ વા જે પોતાની નિરાભિમાનતા ઈચ્છનારા દેવાનામ્-દિવ્ય ગુણોની રાતિઃ-વિદ્યાનું દાન અને જે પોતાની સરળતા ઈચ્છતા દેવાનામ્-દયાથી વિદ્યાથી વૃદ્ધિ કરવા ઈચ્છે છે, તે વિદ્વાનોને જે સુખ આપનાર સ્વમુપ્-મિત્રતા છે એ સર્વ નઃ-અમારે માટે અભિ + નિ + વર્તતામ્-નિત્ય સન્મુખ રહે. અને ઉક્ત સમસ્ત વ્યવહારોને ઉપ + સેદિમ-પ્રાપ્ત થાય. અને ઉક્તિ જે દેવાઃ-વિદ્વાનો છે તેઓ નઃ-અમારા જીવસે-જીવનને માટે આયુઃ-વયની પ્ર + તિરન્તુ શ્રેષ્ઠ શિક્ષાથી વૃદ્ધિ કરે. (૨)

ભાવાર્થ : આપ્ત વિદ્વાનોના સંગથી અને બ્રહ્મચર્ય આદિ નિયમો વિના કોઈનાં શારીરિક તથા આત્મિક બળ વધી શકતા નથી, તેથી સર્વ મનુષ્યોએ તેનો નિત્ય સંગ કરવો જોઈએ. (૨)

તાન્પૂર્વયા નિવિદાં હૂમહે વયં ભગં મિત્રમદિતિં દક્ષમસ્ત્રિધમ્ ।

અર્યમણં વરુણં સોમમશ્વિના સરસ્વતી નઃ સુભગા મર્યસ્કરન્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વયમ્-અમે પૂર્વયા-સનાતન નિવિદા-વેદવાણી જેથી સર્વ રીતે નિશ્ચિત કરેલ પદાર્થોને પ્રાપ્ત થાય છે તેથી કહેલ અને જે કહેવાશે તાન્-તે સર્વ વિદ્વાનોને વા અસ્ત્રિધમ્-અહિંસક અર્થાત્ જે હિંસા નથી કરતો તે ભગમ્-ઐશ્વર્યયુક્ત મિત્રમ્-સર્વનો મિત્ર અદિતિમ્-સમસ્ત વિદ્યાઓનો પ્રકાશ દક્ષમ્-અને તેની કુશળતાયુક્ત વિદ્વાન અર્ચમણમ્-ન્યાયકારી વસ્ત્રમ્-ઉત્તમ ગુણયુક્ત દુષ્ટોનો બંધનકર્તા સોમમ્-સૃષ્ટિ ક્રમથી સર્વ પદાર્થોનો નિયોડનાર તથા જે શાન્ત ચિત્ત છે, તે અશ્વિના-વિદ્યાના પઠન-પાઠનનું કામ રાખનારા વા જળ અને અગ્નિ બે-બે પદાર્થોની હૂમહે-સ્તુતિ કરીએ છીએ અને જે સંગથી ઉત્પન્ન થયેલી સરસ્વતી-વિદ્યા અને સુભગા-શ્રેષ્ઠ શિક્ષાથી યુક્ત વાણી ન:-અમને મય:-સુખ કરન્-કરે, તેમ તમે પણ કરો; અને વાણી તમારે માટે પણ તેમ કહે. (૩)

ભાવાર્થ : વેદોક્ત લક્ષણો વિના વિદ્વાનો અને અવિદ્વાનોના લક્ષણો કોઈને જ્ઞાત થઈ શકતા નથી અને વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી સિદ્ધ વાણી વિના તે સુખ આપી શકતી નથી. તેથી સર્વ મનુષ્યો વેદાર્થના વિજ્ઞાનથી એના લક્ષણો જાણીને તથા વિદ્વાનોનો સંગ સ્વીકારી અને અવિદ્વાન-મૂર્ખનો સંગ ત્યાગ કરીને સંપૂર્ણ વિદ્યાઓથી યુક્ત બને. (૩)

તન્નો વાતૌ મયોભુ વાતુ ભેષજં તન્માતા પૃથિવી તત્પિતા દ્યૌઃ ।

તદ ગ્રાવાણઃ સોમસુતૌ મયોભુવસ્તદશ્વિના શૃણુતં ધિષ્ણ્યા યુવમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે ધિષ્ણ્યા-શિલ્પ વિદ્યાના ઉપદેશક અને અશ્વિના-વિદ્યાર્થી અને અધ્યાપકો ! યુવમ્-તમે બન્ને જે શૃણુતમ્-સાંભળો તત્-તે મયોભુ-સુખદાયક ઉત્તમ ભેષજમ્-સર્વ દુઃખહર ઔષધિને ન:-અમારા માટે વાત:-વાયુ સમાન વૈદ્ય વાતુ-પ્રાપ્ત કરે વા પૃથિવી-વિસ્તૃત ભૂમિ જે માતા-માતાની સમાન માન સન્માન આપવાનું નિદાન છે તે તત્-તે માન કરાવનારા જેથી અત્યંત સુખ થાય અને સમસ્ત દુઃખની નિવૃત્તિ થાય છે ઔષધિ પ્રાપ્ત કરાવે. વા દ્યૌઃ-પ્રકાશમય સૂર્ય પિતા-પિતા સમાન જે રક્ષાનું નિદાન છે તે તત્-તે રક્ષા કરાવનારા જેથી સમસ્ત દુઃખની નિવૃત્તિ થાય છે ઔષધિને પ્રાપ્ત કરે. વા સોમસુતઃ-ઔષધિઓને રસ જેનાથી કાઢવામાં આવે તત્-તે કર્મ તથા ગ્રાવાણઃ-મેઘ આદિ પદાર્થ તત્-જે તેનાથી રસનું કાઢવું વા જે મયોભુવઃ-સુખકારક ઉક્ત પદાર્થ છે, તેઓ તત્-તે ક્રિયા કુશળતા અને અત્યંત દુઃખની નિવૃત્તિ કરાવનાર ઔષધિને પ્રાપ્ત કરે. (૪)

ભાવાર્થ : શિલ્પ વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરનાર વિદ્યાર્થી અને અધ્યાપક જેટલું ભણીને જાણે એટલું સર્વ સમસ્ત મનુષ્યોના સુખને માટે નિષ્કપટતાથી નિત્ય પ્રકાશિત કરે, જેથી અમે ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાં સ્થિત વાયુ આદિ પદાર્થોના અનેક ઉપકાર ગ્રહણ કરીને સુખી બનીએ. (૪)

તમીશાનં જગતસ્તસ્થુષ્પતિં ધિયજ્જિન્વમવસે હૂમહે વયમ્ ।

પૂષા નો યથા વેદસામસદ્ વૃધે રક્ષિતા પાયુરદબ્ધઃ સ્વસ્તયૈ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! યથા-જેમ પૂષા-પુષ્ટિદાતા પરમેશ્વર ન:-અમને વેદસામ્-વિદ્યા આદિ ધનની વૃદ્ધ-વૃદ્ધિ માટે રક્ષિતા-રક્ષક સ્વસ્તયે-સુખને માટે અદબ્ધ:-અહિંસક પૂષા-સમસ્ત પુષ્ટિના દાતા અને પાયુ:-સર્વ પ્રકારના પાલક અસત્-થાય, તેમ તું પણ બન. જેમ વયમ્-અમે અવસે-રક્ષા માટે તમ્-તે સૃષ્ટિના પ્રકાશક, જગત:-જંગમ અને તસ્થુષ:-સ્થાવર માત્ર જગતના પતિમ્-પાલક, ધિયમ્-સમસ્ત પદાર્થોના ચિંતનકર્તા, જિન્વમ્-સુખોથી તૃપ્ત કરનાર, ઈશાનમ્-સમસ્ત સૃષ્ટિની વિદ્યાનું વિધાન કરનાર ઈશ્વરનું હૂમહે-આહ્વાન કરીએ છીએ, તેમ તું પણ કર. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એવા કાર્યો કરવા જોઈએ, જેથી ઈશ્વરના ઉપદેશોથી અનુકૂળતા રહે. જેમ ઈશ્વર સર્વના અધિપતિ છે, તેમ મનુષ્યોએ પણ સર્વોત્તમ વિદ્યા આદિ શુભ ગુણોની પ્રાપ્તિ અને ઉત્તમ પુરુષાર્થથી સર્વની ઉપર અધિપતિત્વ સિદ્ધ કરવું જોઈએ.

જેમ ઈશ્વર વિજ્ઞાનમય, પુરુષાર્થમય, સર્વ સુખોના દાતા, જગતના વૃદ્ધિકર્તા અને સર્વના રક્ષક બનીને સુખને માટે પ્રવૃત્ત થાય છે, તેમ જ મનુષ્યોએ પણ કરવું જોઈએ. (૫)

સ્વસ્તિ ન્ ઇન્દ્રો વૃદ્ધશ્રવાઃ સ્વસ્તિ નઃ પૂષા વિશ્વવેદાઃ ।

સ્વસ્તિ ન્સ્તાક્ષર્યો અરિષ્ટનેમિઃ સ્વસ્તિ નો બૃહસ્પતિર્દધાતુ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : વૃદ્ધશ્રવાઃ-સંસારમાં જેની કીર્તિ અને અન્નાદિ સામગ્રી અત્યંત ઉન્નતિને પ્રાપ્ત છે, તે ઇન્દ્ર:-પરમ ઐશ્વર્યવાન પરમેશ્વર ન:-અમારે માટે સ્વસ્તિ-શરીરના સુખને દધાતુ-ધારણ કરાવે. વિશ્વવેદાઃ-જેને સંસારનું વિજ્ઞાન અને જેનું સર્વ પદાર્થોમાં સ્મરણ છે, તે પૂષા-પુષ્ટિ કરનાર પરમેશ્વર ન:-અમારે માટે સ્વસ્તિ-ધાતુઓ-(રસ-રક્તાદિ)ની સામ્યતા (આરોગ્ય)ના સુખને ધારણ કરાવે. જે અરિષ્ટનેમિઃ-દુઃખોનો વજની સમાન વિનાશ કરનાર તાક્ષર્ય:-અને જાણવા યોગ્ય પરમેશ્વર છે, તે ન:-અમારા માટે સ્વસ્તિ-ઈન્દ્રિયોની શાન્તિરૂપ સુખને ધારણ કરાવે; અને બૃહસ્પતિઃ-વેદવાણીના પ્રભુ પરમેશ્વર છે, તે ન:-અમને સ્વસ્તિ-વિદ્યાથી આત્માના સુખને ધારણ કરાવે. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જેમ પોતાના માટે સુખની કામના કરવી જોઈએ, તેમ અન્યોને માટે પણ કરવી જોઈએ. જેમ કોઈ પોતાના માટે દુઃખ નથી ઈચ્છતા, તેમ બીજાઓ માટે પણ તેની કામના ન કરવી જોઈએ. (૬)

પૃષદશ્ચા મરુતઃ પૃશ્નિમાતરઃ શુભંયાવાનો વિદથેષુ જગ્મયઃ ।

અગ્નિજિહ્વા મનવઃ સૂરચક્ષસો વિશ્વે નો દેવા અવસા ગમન્નિહ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : શુભંયાવાનઃ-જે શ્રેષ્ઠ વ્યવહારની પ્રાપ્તિ કરાવનાર અગ્નિ-જિહ્વા:-તથા અગ્નિને હવન યુક્ત કરનારા મનવઃ-વિચારશીલ સૂરચક્ષસઃ-જેમ પ્રાણ અને સૂર્યમાં પ્રસિદ્ધ વચન અને દર્શન છે પૃષદશ્ચાઃ-સેના રંગ-બેરંગી ઘોડાઓથી યુક્ત પુરુષ વિદથેષુ-જે સંગ્રામ અને યજ્ઞોમાં જગ્મયઃ-જાય છે. તેઓ વિશ્વે-સમસ્ત દેવાઃ-વિદ્વાનો ઇહ-આ સંસારમાં ન:-અમને અવસા-રક્ષા આદિ વ્યવહારોથી પૃશ્નિમાતરઃ-આકાશથી

ઉત્પન્ન થનાર મસ્તઃ-વાયુઓની સમાન આ + અગમન્-આવે, પ્રાપ્ત થયા કરે. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ બાહ્ય અને અંદરનો વાયુ સર્વ પ્રાણીઓને સુખને માટે પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ વિદ્વાનો સર્વ પ્રાણીઓના સુખને માટે પ્રવૃત્ત થાય. (૭)

ભદ્રં કર્ણેભિઃ શૃણુયામ દેવા ભદ્રં પશ્યેમાક્ષભિર્યજત્રાઃ ।

સ્થિરૈરઙ્ગૈસ્તુષ્ટુવાંસસ્તનૂભિર્વ્યંશેમ દેવહિતં યદાયુઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે યજત્રાઃ-સંગમ કરનાર દેવાઃ-વિદ્વાનો ! આપના સંગ દ્વારા તનૂભિઃ-વિસ્તૃત બળયુક્ત શરીર સ્થિરૈઃ-દૃઢ અઙ્ગૈઃ-પુષ્ટ શિર આદિ અંગ અથવા બ્રહ્મચર્ય આદિ નિયમોથી તુષ્ટુવાંસઃ-પદાર્થોના ગુણોની સ્તુતિ કરતા અમે કર્ણેભિઃ-કાનોથી યત્-જે ભદ્રમ્-કલ્યાણકારી ભણવું-ભણાવવું છે, તેને શૃણુયામ-સાંભળીએ, સંભળાવીએ. અક્ષભિઃ-બહાર અને અંદરની આંખો (અન્તર ચક્ષુ)થી જે ભદ્રમ્-શરીર અને આત્માનું સુખ છે, તેને પશ્યેમ્-નિહાળીએ. આ રીતે ઉક્ત શરીર અને અંગોથી જે દેવહિતમ્-વિદ્વાનોની હિતકારક આયુઃ-જીવન છે. તે વિ + અશેમ-વારંવાર પ્રાપ્ત થાય. (૮)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન સત્પુરુષો અને આપ્તજનોના સંગ વિના કોઈ પણ મનુષ્ય સત્ય વિદ્યા યુક્ત વાણી, સત્ય દર્શન અને સત્યપૂર્ણ આયુ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી અને તેના વિના કોઈના શરીર અને આત્મા દૃઢ બની શકતા નથી, તેથી સર્વ મનુષ્યોએ તેનું સદા અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૮)

શતમિન્નુ શરદો અન્તિ દેવા યત્રાં નશ્ચક્રા જરસં તનૂનામ્ ।

પુત્રાસો યત્ર પિતરો ભવન્તિ મા નો મધ્યા રીરિષ્તાયુર્ગન્તોઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે અન્તિ-વિદ્યા આદિ સુખ સાધનોથી જીવનારા દેવાઃ-વિદ્વાનો ! તમે યત્ર-જે સત્ય વ્યવહારમાં તનૂનામ્-પોતાના શરીરોને શતમ્-સો શરદઃ-વર્ષ જસમ્-વૃદ્ધત્વને ચક્ર-વ્યતીત કરી શકો યત્ર-જ્યાં નઃ-અમારા મધ્યા-મધ્યમાં પુત્રાસઃ-પુત્રો ઇત્-જ પિતરઃ-અવસ્થા (વય) અને વિદ્યાથી યુક્ત વૃદ્ધ નુ-શીઘ્ર ભવન્તિ-થાય છે, તે આયુઃ-જીવનને ગન્તોઃ-પ્રાપ્ત થવાને પ્રવૃત્ત થયેલ નઃ-અમને શીઘ્ર મારીરિષ્ત-નષ્ટ કરો નહિ. (૯)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરેલ બાળક પણ વૃદ્ધ (મોટો) બની જાય છે અને જે વ્યવહારમાં શુભ આચરણને કારણે વૃદ્ધાવસ્થા (મોટી વય) હોય છે, તે સર્વ વિદ્વાનોના સંગથી જ બની શકે છે અને વિદ્વાનોએ એને સર્વને પ્રાપ્ત કરાવવા જોઈએ. (૯)

અદિતિઘૌરદિતિરન્તરિક્ષમદિતિર્માતા સ પિતા સ પુત્રઃ ।

વિશ્વેદેવા અદિતિઃ પઞ્ચ જના અદિતિર્જાતમદિતિર્જનિત્વમ્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમને યોગ્ય છે કે-ઘૌઃ-પ્રકાશયુક્ત પરમેશ્વર વા સૂર્ય આદિ પ્રકાશમય

પદાર્થ અદિતિ:-અવિનાશી અન્તરિક્ષમ્-આકાશ અદિતિ:-અવિનાશી માતા-માતા વા વિદ્યા અદિતિ:-અવિનાશી સ:-તે પિતા-જનક વા પાલક પિતા સ:-તે પુત્ર:-ઔરસ અર્થાત્ નિજ વિવાહિત પુરુષથી ઉત્પન્ન વા ક્ષેત્રજ અર્થાત્ નિયોગ કરીને અન્યના ક્ષેત્રમાં થયેલ વા વિદ્યાથી ઉત્પન્ન પુત્ર અદિતિ:-અવિનાશી છે તથા વિશ્વ-સમસ્ત દેવા:-વિદ્વાનો અથવા દિવ્યગુણયુક્ત પદાર્થો અદિતિ:-અવિનાશી છે પદ્મ-પાંચ જ્ઞાનેન્દ્રિયો અને જના:-જીવ પણ અદિતિ:-અવિનાશી છે આ રીતે જે કંઈ જાતમ્-ઉત્પન્ન થયેલ વા જનિત્વમ્-થનાર છે, તે સર્વ અદિતિ:-અવિનાશી અર્થાત્ નિત્ય છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં (દ્યૌઃ) વગેરેની કારણરૂપથી અથવા પ્રવાહરૂપથી વિનાશ રહિતના માનીને દિવ્ આદિની અદિતિ સંજ્ઞા કરવામાં આવે છે. વેદોમાં જ્યાં જ્યાં અદિતિ શબ્દ પઠિત છે, ત્યાં પ્રકરણાનુસાર દિવ્-આદિમાંથી જેની-જેની યોગ્યતા હોય, તેનું-તેનું ગ્રહણ કરવું જોઈએ. ઈશ્વરની, જીવોની અને કારણાત્મક પ્રકૃતિની (તે) અવિનાશી હોવાના કારણે અદિતિ સંજ્ઞા છે જ. (૧૦)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્યાર્થી અને પ્રકાશમય પદાર્થોનું વિશ્વદેવ પદની અન્તર્ગત હોવાથી વર્ણન કરેલ છે. તેથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૮૯)

સૂક્ત-૯૦

ઋજુનીતી નો વરુણો મિત્રો નયતુ વિદ્વાન્। અર્યમા દેવૈઃ સ્વજોષાઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જેમ પરમેશ્વર ધાર્મિક મનુષ્યોને ધર્મ પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેમ દેવૈઃ-દિવ્ય ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવયુક્ત વિદ્વાનોથી સ્વજોષા:-સમાન પ્રીતિ કરનાર, વસ્મઃ-શ્રેષ્ઠ ગુણોમાં વર્તનાર, મિત્રઃ-સર્વોપકારી અને અર્યમા-ન્યાયકર્તા વિદ્વાન્-ધર્માત્મા સજ્જન વિદ્વાન ઋજુનીતિ-સરળ રીતે નઃ-અમને ધર્મ અને વિદ્યામાર્ગને નયતુ-પ્રાપ્ત કરાવે. (૧)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વર અથવા આપ્ત મનુષ્ય સત્ય વિદ્યાને ગ્રહણ કરવાના સ્વભાવવાળા પુરુષાર્થી મનુષ્યને સર્વોત્તમ ધર્મ અને વિદ્યા પ્રાપ્ત કરાવે છે, અન્યને નહિ. (૧)

તે હિ વસ્વો વસવાનાસ્તે અપ્રમૂરા મહોંભિઃ। વ્રતા રક્ષન્તે વિશ્વાહા ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : તે-તે પૂર્વોક્ત વિદ્વાનો વસવાના:-પોતાના ગુણોથી સર્વને આચ્છાદન કરતા-ઢાંકતા હિ-નિશ્ચયથી મહોંભિઃ-પ્રશંસનીય ગુણ અને કર્મોથી વિશ્વાહા-સર્વ દિવસોમાં વસ્વઃ-ધન આદિ પદાર્થોની રક્ષન્તે-રક્ષા કરે છે તથા જે અપ્રમૂરા:-મૂઢતા અને પ્રમાદરહિત ધાર્મિક વિદ્વાન છે, તે-તેઓ પ્રશંસિત ગુણ, કર્મોથી પ્રતિદિન વ્રતા-સત્યપાલન આદિ નિયમોનું પાલન કરે છે. (૨)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો વિના કોઈના પણ દ્વારા ધન અને ધર્માચરણોની રક્ષા કરી શકાતી નથી, તેથી

સર્વ મનુષ્યોએ નિત્ય વિદ્યાનો પ્રચાર કરવો જોઈએ, જેથી સર્વ વિદ્વાન બનીને ધાર્મિક બની શકે. (૨)

તે અસ્મભ્યં શર્મં યંસન્નમૃતા મર્ત્યેભ્યઃ । બાધમાના અપ્ દ્વિષઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે દ્વિષઃ-દુષ્ટોનું અપ, બાધમાના:-દુર્ગતિની સાથે નિવારણ કરીને અમૃતા:-જીવનમુક્ત વિદ્વાનો છે, તે-તેઓ મર્ત્યેભ્યઃ-અસ્મભ્યમ્-અમને-મનુષ્યોને માટે શર્મ-સુખ યંસન્-આપે. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોથી શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને તથા દુષ્ટ સ્વભાવોને (સ્વભાવવાળાને) દૂર કરીને નિત્ય આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૩)

વિ નઃ પૃથઃ સુવિતાય ચિયન્ત્વિન્દ્રો મરુતઃ । પૂષા ભગો વન્દ્યાસઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે ઇન્દ્રઃ-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યયુક્ત અને પૂષા-અન્યનુ પાલન અને પોષણ કરનાર ભગઃ- અને ઉત્તમ ભાગ્યશાળી વન્દ્યાસઃ-સ્તુતિ અને સત્કાર કરવા યોગ્ય મસ્તઃ-મનુષ્ય છે, તેઓ નઃ-અમને સુવિતાય-ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે પૃથઃ-ઉત્તમ માર્ગમાં વિ, ચિયન્તુ-નિયત કરે. (૪)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યોએ ઐશ્વર્ય, પુષ્ટિ અને સૌભાગ્ય પ્રાપ્ત કરીને, અન્યજનોને પણ તેમજ સૌભાગ્યશાળી બનાવવા જોઈએ. (૪)

ઉત નો ધિયો ગોઅગ્રાઃ પૂષન્વિષ્ણવેવ્યાવઃ । કર્તી નઃ સ્વસ્તિમતઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે પૂષન્-વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષાથી પોષણ કરનાર, વિષ્ણો-સમસ્ત વિદ્યાઓમાં વ્યાપક થનાર, એવ્યાવઃ-જેનાથી સર્વ વ્યવહારને તે અગાધ બોધને પ્રાપ્ત કરનારા વિદ્વાનો ! તમે નઃ-અમારે માટે ગોઅગ્રાઃ-જેમાં ઈન્દ્રિય અગ્રગામી હોય તે ધિયઃ-ઉત્તમ બુદ્ધિ અને ઉત્તમ કર્મોને કર્ત-પ્રસિદ્ધ કરો, ઉત-પશ્ચાત્ નઃ-અમને સ્વસ્તિમતઃ-સુખયુક્ત કરો. (૫)

ભાવાર્થ : વિદ્યાર્થીએ અધ્યાપક જેવી વિદ્યાની શિક્ષા કરે, તેમ તેનું ગ્રહણ કરીને શ્રેષ્ઠ વિચારોથી નિત્ય તેની ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૫)

મધુ વાતા ઋતાયતે મધુ ક્ષરન્તિ સિન્ધવઃ । માધ્વીર્નઃ સન્ત્વોષધીઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે પૂર્ણ વિદ્યાવાન વિદ્વાનો ! જેમ તમારા માટે અને ઋતાયતે-પોતાને સત્ય વ્યવહાર ઈચ્છનાર પુરુષને માટે વાતાઃ-વાયુ મધુ-મધુરતા અને સિન્ધવઃ-સમુદ્ર અને નદીઓ મધુ-મધુર ગુણની ક્ષરન્તિ-વર્ષા કરે છે, તેમ નઃ-અમારા માટે ઓષધીઃ-સોમલતા આદિ ઔષધિ માધ્વીઃ-મધુર ગુણ વિશેષનું જ્ઞાન કરાવનારી સન્તુ-બને. (૬)

ભાવાર્થ : હે અધ્યાપકો ! આપ અને અમે એવો પ્રયત્ન કરીએ, જેમાં સંપૂર્ણ આનંદને માટે સર્વ પદાર્થોની વિદ્યા દ્વારા ઉપકાર કરી શકીએ. (૬)

મધુ નક્ત મૃતોષસો મધુમૃત્પાર્થિવં રજઃ । મધુ દ્યૌરસ્તુ નઃ પિતા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ ન:-અમારા માટે નક્તમ્-રાત્રિ મધુ-મધુર ઊષસ:-દિવસ મધુર ગુણ યુક્ત પાર્થિવમ્-પૃથિવીમાં રજ:-અણુ અને ત્રસરેણુ આદિ સૂક્ષ્મ ભૂમિના કણ મધુમત્-મધુર ગુણોથી યુક્ત સુખ કરનાર ઉત્-અને પિતા-પાલન કરનારી દ્યૌ:-સૂર્યની કાન્તિ મધુ-મધુર ગુણવાળી અસ્તુ-હોય તેમ તમારા માટે પણ થાય. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્યોને માટે, પૃથિવી-સ્થિત પદાર્થો આનંદદાયક બને, તેવું ગુણજ્ઞાન અને હસ્તક્રિયાથી વિદ્વાનો ઉપયોગ અધ્યાપકો તથા અન્ય સર્વેએ કરવો જોઈએ. (૭)

મધુમાન્નો વનસ્પતિર્મધુમાં અસ્તુ સૂર્યઃ । માધ્વીર્ગાવો ભવન્તુ નઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ ન:-અમારા માટે મધુમાન્-જેમાં પ્રશંસિત મધુર સુખ છે, એમ વનસ્પતિ:-વનોમાં રક્ષાને યોગ્ય વડ આદિ વૃક્ષોનો સમૂહ અને મેઘ તથા સૂર્ય:-બ્રહ્માંડોમાં સ્થિર થનાર સૂર્ય અને શરીરોમાં રહેનાર પ્રાણ મધુમાન્-જેમાં મધુર ગુણોનો પ્રકાશ છે, એમ અસ્તુ-થાઓ; તથા ન:-અમારા હિતને માટે ગાવ:-સૂર્યનાં કિરણો માધ્વી:-મધુર ગુણ યુક્ત ભવન્તુ-થાઓ, તેમ તમે અમને શિક્ષા કરો. (૮)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમે અને અમે એવી રીતે મળીને પુરુષાર્થ કરીએ, જેથી આપણા સર્વ કાર્યો સિદ્ધ થાય. (૮)

શં નો મિત્રઃ શં વરુણઃ શં નો ભવત્વર્યમા ।

શં ન ઇન્દ્રો બૃહસ્પતિઃ શં નો વિષ્ણુરુરુક્રમઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમારા માટે ઉક્તમ:-જેના બહુજ પરાક્રમ છે તે મિત્ર:-સર્વનું સુખ કરનાર, ન:-અમારા માટે શમ્-સુખકારી, વા જેના બહુ જ પરાક્રમ છે તે વસ્ત્રમ:-સર્વમાં અતિ ઉન્નતિવાળા, અમારા માટે શમ્-શાન્તિ અને સુખને આપનાર, વા જેના બહુજ પરાક્રમ છે તે અર્યમા-ન્યાય કરનાર, ન:-અમારા માટે શમ્-આરોગ્ય સુખ પ્રદાતા, જેના બહુ જ પરાક્રમ છે તે બૃહસ્પતિ:-મહાન વેદવિદ્યા પાવક, વા જેના બહુજ પરાક્રમ છે તે ઇન્દ્ર:-પરમૈશ્વર્ય પ્રદાતા, ન:-અમારા માટે શમ્-ઐશ્વર્ય સુખકારી, વા જેના બહુ પરાક્રમ છે તે વિષ્ણુ:-નવ ગુણોથી વ્યાપ્ત થનાર પરમેશ્વર તથા ઉક્ત ગુણોવાળા વિદ્વાન સજ્જન પુરુષ ન:-અમારા માટે પૂર્વોક્ત સુખ અને શમ્-વિદ્યામાં સુખદાતા ભવતુ-થાઓ. (૯)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરની સમાન મિત્ર, શ્રેષ્ઠ, ન્યાયકારી, ઐશ્વર્યવાન, મહાન, સ્વામી, વ્યાપક અને સુખદાયક અન્ય કોઈ નથી અને વિદ્વાનની સમાન પ્રિયકારી, ધાર્મિક, સત્યકારી, વિદ્યાદિ ધન-પ્રદાતા, વિદ્યારક્ષક, શુભ ગુણ-કર્મોમાં વ્યાપ્ત અને મહા પરાક્રમી (અન્ય કોઈ) થઈ શકતા નથી. તેથી સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વરની સ્તુતિ-પ્રાર્થના-ઉપાસના અને વિદ્વાનોની સેવા તથા સંગતિ નિરંતર કરીને નિત્ય આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્યાર્થી અધ્યાપક અને ઈશ્વરના કર્તવ્ય કામ તથા તેના ફળનું વર્ણન

સૂક્ત-૯૧

હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૯૦)

સૂક્ત-૯૧

ત્વં સોમ પ્ર ચિકિતો મનીષા ત્વં રજિષ્ઠમનુ નેષિ પન્થામ્ ।

તવ પ્રણીતી પિતરૌ ન ઇન્દો દેવેષુ રત્નમભજન્ત ધીરાઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દો-સોમની સમાન સોમ-સમસ્ત ઐશ્વર્યયુક્ત ત્વમ્-પરમેશ્વર વા સર્વોત્તમ વિદ્વાન્ ! જે મનીષા-મનને વશ કરનારી બુદ્ધિથી ચિકિતઃ-જાણો છો વા તવ-આપની પ્રણીતી-શ્રેષ્ઠ નીતિથી ધીરાઃ-ધ્યાન અને ધૈર્યયુક્ત પિતરઃ-જ્ઞાનીજનો દેવેષુ-વિદ્વાન વા દિવ્ય ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવોમાં રત્નમ્-અત્યુત્તમ ધનનું અભજન્ત-પ્ર-રજિષ્ઠમ્-સેવન કરે છે, તેથી શાન્તિ ગુણ યુક્ત આપ નઃ-અમને રજિષ્ઠમ્-અત્યંત સીધા પન્થામ્-માર્ગને અનુ-અનુકૂળતાથી નેષિ-પહોંચાડે છે, એથી ત્વમ્-આપ અમારા સત્કાર ને યોગ્ય છો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર અને પરમ વિદ્વાન અવિદ્યાનો નાશ કરીને વિદ્યા તથા ધર્મના માર્ગમાં (સર્વને) પહોંચાડે છે, તેમ વૈદ્યકશાસ્ત્રની વિધિથી સેવન કરેલ સોમ આદિ ઔષધિઓનો સમૂહ, સર્વ રોગોનો નાશ કરીને સુખ પહોંચાડે છે. (૧)

ત્વં સોમ ક્રતુભિઃ સુક્રતુર્ભૂસ્ત્વં દક્ષૈઃ સુદક્ષૌ વિશ્વવેદાઃ ।

ત્વં વૃષા વૃષત્વેભિર્મહિત્વા દ્યુમ્નેભિર્દ્યુમ્ન્યંભવો નૃચક્ષાઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-શાન્તિગુણયુક્ત પરમેશ્વર વા ઉત્તમ વિદ્વાન ! જે કારણે ત્વમ્-આપ ક્રતુભિઃ-ઉત્તમ બુદ્ધિ અને કર્મોથી સુક્રતુઃ-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિમાન વા શ્રેષ્ઠ કર્મ કરનારા તથા દક્ષૈઃ-વિજ્ઞાન આદિ શ્રેષ્ઠ કર્મ કરનારા તથા દક્ષૈઃ-વિજ્ઞાન આદિ ગુણોથી સુદક્ષઃ-પરમ શ્રેષ્ઠ જ્ઞાની વિશ્વવેદાઃ-અને સર્વ વિદ્યા પ્રાપ્ત કરેલ ભૂઃ-બનો છો; વા જે કારણે ત્વમ્-આપ મહિત્વા-મહાન ગુણવાન હોવાથી વૃષત્વેભિઃ-વિદ્યારૂપી સુખોની વૃષા-વર્ષા અને દ્યુમ્નેભિઃ-કીર્તિ અને ચક્રવર્તી આદિ રાજ્ય ધર્મોથી દ્યુમ્ની-પ્રશંસિત ધની નૃચક્ષાઃ-મનુષ્યોમાં દર્શનીય અભવઃ-બનો છો, એથી ત્વમ્-આપ સર્વમાં ઉત્તમ ઉત્કર્ષયુક્ત થાઓ. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ ઉત્તમ રીતે સેવન કરેલ સોમ આદિ ઔષધિઓનો સમૂહ બુદ્ધિ, નિપુણતા, વીર્ય અને ધનની વૃદ્ધિ કરે છે, એ જ રીતે શ્રેષ્ઠ રીતે ઉપાસના કરેલ ઈશ્વર અને સમ્યક્ સેવા કરેલ એજ રીતે તે બુદ્ધિ આદિને ઉત્પન્ન કરે છે. (૨)

રાજો નુ તે વરુણસ્ય વ્રતાનિ બૃહદ્ ગંભીરં તવ સોમ ધામ્ ।

શુચિષ્ટર્મસિ પ્રિયો ન મિત્રો દક્ષાય્યૌ અર્યમેવાસિ સોમ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-મહા ઐશ્વર્યયુક્ત પરમેશ્વર વા વિદ્વાન ! જેથી ત્વમ્-આપ પ્રિય:-પ્રસન્ન મિત્ર:-મિત્રની ન-સમાન શુચિ:-પવિત્ર અને પવિત્રતા કરનાર અસિ-છો; તથા અર્યમેવ-યથાર્થ ન્યાય કરનાર સમાન દક્ષાય્ય:-વિજ્ઞાન કરનારા અસિ-છો.

હે સોમ-શુભકર્મ અને ગુણોના પ્રેરક વસ્ત્રાસ્ય-શ્રેષ્ઠ રાજ્ઞ:-સર્વ જગતના સ્વામી વા વિદ્યા અને પ્રકાશયુક્ત તે-આપના વ્રતાનિ-સત્યપ્રકાશ કરનારા કામ છે, જેથી તવ-આપના બૃહત્-મહાન ગમ્भीરમ્-અત્યંત અથાહ ધામ-જેમાં પદાર્થ ધરવામાં આવે તે સ્થાન છે, એથી આપ નુ-શીઘ્ર અને સદા ઉપાસના અને સેવા કરવા યોગ્ય છો. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જેમ-જેમ આ સૃષ્ટિમાં રચનાના નિયમોથી ઈશ્વરના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોને જોઈને પ્રયત્ન કરે, તેમ-તેમ વિદ્યા સંબંધી સુખ ઉત્પન્ન થઈ શકે છે તેમ (સર્વેએ) જાણવું જોઈએ. (૩)

યા તે ધામાનિ દિવિ યા પૃથિવ્યાં યા પર્વતેષ્વોષધીષ્વપ્સુ।

તેભિર્નો વિશ્વૈઃ સુમના અહેઽત્રાજન્ત્સોમ પ્રતિ હૃવ્યા ગૃભાય ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-સર્વના ઉત્પાદક રાજન્-રાજા ! તે-આપના યા-જે ધામાનિ-નામ, જન્મ અને સ્થાન દિવિ-પ્રકાશમય સૂર્ય આદિ પદાર્થ વા દિવ્ય વ્યવહારમાં વા યા-જે પૃથિવ્યામ્-પૃથિવીમાં વા યા-જે પર્વતેષુ-પર્વતોમાં વા ઔષધીષુ-ઔષધિઓમાં વા અપ્સુ-જલોમાં છે. તેભિઃ-તે વિશ્વૈઃ-સર્વનો અહેઽન્-અનાદર ન કરીને સુમના:-ઉત્તમ જ્ઞાનવાન આપ હૃવ્યા:-લેવા-દેવા યોગ્ય કામોને ન:-અમને પ્રતિ + ગૃભાય-પ્રત્યક્ષ ગ્રહણ કરાવો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વર પોતાની સૃષ્ટિમાં વેદ દ્વારા સૃષ્ટિ કરીને દર્શાવીને સમસ્ત વિદ્યાઓનો પ્રકાશ કરે છે, એજ રીતે વિદ્વાનોએ અધ્યયન કરેલા સાંગોપાંગ વેદો દ્વારા તથા હસ્તક્રિયા દ્વારા કલા-કોશલ દર્શાવીને સર્વને સમસ્ત વિદ્યા ગ્રહણ કરાવે. (૪)

ત્વં સૌમાસિ સત્પતિસ્ત્વં રાજોત વૃત્રહા। ત્વં ભદ્રો અસિ ક્રતુઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-સમસ્ત સંસારના ઉત્પાદક વા સમસ્ત વિદ્યાદાતા ! ત્વમ્-પરમેશ્વર વા પાઠશાળા આદિ વ્યવહારોના સ્વામી વિદ્વાન આપ સત્પતિઃ-અવિનાશી જે જગતના કારણનું વિદ્યમાન કાર્યજગત છે તેના પાલક અસિ-છો; ઊત-અને ત્વમ્-આપ વૃત્રહા-દુઃખ આપનાર દુષ્ટોના વિનાશ કરનારા રાજા-સર્વના સ્વામી વિદ્યાના અધ્યક્ષ છો, વા જે કારણે ત્વમ્-આપ ભદ્રઃ-અત્યંત સુખકારક છો, વા ક્રતુઃ-સમસ્ત બુદ્ધિયુક્ત વા બુદ્ધિદાતા અસિ-છો, તેથી આપ સર્વ વિદ્વાનોથી સેવન કરવા યોગ્ય છો.

દ્વિતીયઃ સોમ-સર્વ ઔષધિઓના ગુણદાતા સોમ ઔષધિ ત્વમ્-એ ઔષધિઓમાં ઉત્તમ સત્પતિઃ-સમ્યક્ પથ પાલન કરનારની પાલના કરનાર છે; ઊત-અને ત્વમ્-એ સોમ વૃત્રહા-મેઘની સમાન દોષોના નાશક રાજા-રોગનો વિનાશ કરવાના ગુણોનો પ્રકાશ કરનાર છે, વા જે કારણે ત્વમ્-એ ભદ્રઃ-સેવનને યોગ્ય વા ક્રતુઃ-ઉત્તમ બુદ્ધિનો હેતુ છે, તેથી તે સર્વ વિદ્વાનોને સેવન કરવા યોગ્ય છે. (૫)

સૂક્ત-૯૧

ભાવાર્થ : સોમ (= પરમેશ્વર, વિદ્વાન અથવા સોમલતા આદિ ઔષધિ-સમૂહ) સમસ્ત ઐશ્વર્યના પ્રકાશક, સજ્જનોના રક્ષક, રાજા, દુઃખ વિનાશક, વિજ્ઞાનદાતા અને કલ્યાણકારી છે, તેમ સમ્યક્ જાણીને તેનું સેવન કરવું જોઈએ. (૫)

ત્વં ચ સોમ નો વશો જીવાતું ન મરામહે। પ્રિયસ્તોત્રો વનસ્પતિઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-શ્રેષ્ઠ કામોના પ્રેરક પરમેશ્વર વા (સોમ) શ્રેષ્ઠ કામોનો પ્રેરણા દેતા જે ત્વમ્-તે એ ચ-અને આપ ન:-અમારા જીવાતુમ્-જીવનમાં વશ:-વશ થવાના ગુણોનો પ્રકાશ કરનાર-કરાવનાર છે વા પ્રિયસ્તોત્ર:- જેના ગુણોના કથન પ્રેમ કરનાર – કરાવનાર છે વનસ્પતિ:-સેવનીય પદાર્થોની પાલના કરનાર વા એ સોમવન ઔષધિઓમાં અત્યંત શ્રેષ્ઠ છે, એ વ્યવસ્થાથી એ બન્ને જાણીને અમે શીઘ્ર ન-મહામહે-અકાળ મૃત્યુ અને અનાયાસ મૃત્યુ ન પામીએ. (૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન કરનારા તથા વિદ્વાનોની સેવા કરનારા અને ઔષધિઓનું સેવન કરનારા છે, તે પૂર્ણ આયુ પ્રાપ્ત કરે છે. (૬)

ત્વં સોમ મહે ભગં ત્વં યૂનં ઋતાયતે। દક્ષં દધાસિ જીવસે ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-પરમેશ્વર વા સોમ અર્થાત્ ઔષધિઓનો સમૂહ ત્વમ્-વિદ્યા અને સૌભાગ્યના દાતા આપવા એ સોમ ઋતાયતે-પોતાના વિશેષ જ્ઞાનના ઈચ્છુક મહે-અતિ ઉત્તમ ગુણયુક્ત યુને-બ્રહ્મચર્ય અને વિદ્યાથી શરીર અને આત્માની તરુણ અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરેલ બ્રહ્મચારીને માટે ભગમ્-વિદ્યા અને ધનરાશિ તથા ત્વમ્-આપ જીવસે-જીવવા માટે દક્ષમ્-બળને દધાસિ-ધારણ કરાવવાથી સર્વને ચાહવા યોગ્ય છો. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને ઈશ્વર, વિદ્વાનો અને ઔષધિઓના સેવન વિના સુખ મળી શકતુ નથી. તેથી એનું સર્વેએ નિત્ય સેવન કરવું જોઈએ. (૭)

ત્વં નઃ સોમ વિશ્વતો રક્ષાં રાજન્નઘાયતઃ। ન રિષ્યેત્ત્વાવતઃ સખા ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-સર્વના મિત્ર વા મિત્રતા આપનાર (કરનાર) ત્વમ્-આપના વા એ ઔષધિ સમૂહ વિશ્વતઃ-સમસ્ત અઘાયતઃ-પોતાની દોષની ઈચ્છા કરતા વા દોષકારીથી નઃ-અમારી રક્ષ-રક્ષા કરો વા એ ઔષધિરાજ રક્ષા કરે છે.

હે રાજન્-સર્વની રક્ષાનો પ્રકાશ કરનાર ! ત્વાવતઃ-તમારા સમાન પુરુષના સખા-કોઈ મિત્ર ન + રિષ્યેત્-વિનાશને પ્રાપ્ત ન થાય વા સર્વના રક્ષક જે ઔષધિગણ એના સમાન ઔષધિનું સેવન કરનાર પુરુષ વિનાશને પ્રાપ્ત ન થાય. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરને એ રીતે પ્રાર્થના કરીને પ્રયત્ન કરવો જોઈએ, કે જેથી ધર્મના ત્યાગની અને અધર્મના ગ્રહણની ઈચ્છા જ ન થાય. ધર્મ અને અધર્મ સંબંધી પ્રવૃત્તિમાં મનની ઈચ્છા જ કારણ છે. ધર્મચ્છાની પ્રવૃત્તિ થતા અને અધર્મચ્છાની નિવૃત્તિ થતા કદી પણ ધર્મનો ત્યાગ અને અધર્મના ગ્રહણનો

(ભાવ) ઉત્પન્ન જ થઈ શકતો નથી. (૮)

સોમ્ યાસ્તૈ મયોભુવ ઋતયઃ સન્તિ દાશુષે । તાભિર્નોઽવિતા ભવ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-પરમેશ્વર ! યા:-જે તે-આપની વા સોમ આદિ ઔષધિગણની મયોભુવ:-સુખને ઉત્પન્ન કરનારી ઋતય:-રક્ષા આદિ ક્રિયા દાશુષે-દાની મનુષ્યને માટે સન્તિ-છે તાભિ:-તેથી ન:-અમારી અવિતા-રક્ષા આદિ કરનારા ભવ-થાઓ વા જે એ ઔષધિગણ હોય છે, તેનો અમે સદા ઉપયોગ કરીએ. (૮)

ભાવાર્થ : જે પ્રાણીઓના પરમેશ્વર, વિદ્વાનજન અને સમ્યક્ તૈયાર કરેલ ઔષધિ સમૂહરક્ષક હોય છે, તેઓ કેમ દુઃખ દેખી શકે ? (૮)

ઇમં યજ્ઞમિદં વચૌ જુજુષાણ ઉપાગ્હિ । સોમ્ ત્વં નૌ વૃદ્ધે ભવ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-પરમેશ્વર વા વિદ્વાન્ ! જેથી ઇમમ્-એ યજ્ઞમ્-યજ્ઞના રક્ષક વા શિલ્પ કર્મોથી સિદ્ધ કરેલ યજ્ઞને તથા ઇદમ્-એ વિદ્યા અને ધર્મ સંયુક્ત વચ:-વચનને જુજુષાણ:-પ્રીતિથી સેવન કરીને ત્વમ્-આપ ઉપાગ્હિ-સમીપ પ્રાપ્ત થાઓ છો વા એ સોમ આદિ ઔષધ સમૂહ સમીપ પ્રાપ્ત થાય છે ન:-અમારી વૃદ્ધે-વૃદ્ધિને માટે ભવ-થાઓ અથવા ઉક્ત ઔષધિ સમૂહ થાય. (૧૦)

ભાવાર્થ : જ્યારે વિજ્ઞાન દ્વારા ઈશ્વર, સેવા તથા કૃતજ્ઞતા દ્વારા વિદ્વાનજન અને વૈદ્યકવિદ્યા તથા ઉત્તમક્રિયા દ્વારા ઔષધિસમૂહ પ્રાપ્ત થઈ જાય છે, ત્યારે મનુષ્યોને સુખ થાય છે. (૧૦)

સોમં ગીર્ભિષ્ટૌ વ્યં વર્ધ્યામો વચોવિદઃ । સુમૃઢીકો ન્ આ વિશ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-જાણવા યોગ્ય ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત પરમેશ્વર ! જે કારણે સુમૃઢીક:-સમ્યક્ સુખકારક વૈદ્ય આપ અને સોમ આદિ ઔષધિગણ ન:-અમને આ + વિશ-પ્રાપ્ત થાય, એથી ત્વા-આપને તથા તે ઔષધિગણને વચોવિદઃ-જાણવા યોગ્ય પદાર્થોને જાણીને વ્યમ્-અમે ગીર્ભિ:-વિદ્યાથી શુદ્ધ કરેલી ઔષધિઓથી નિત્ય વર્ધ્યામઃ-વૃદ્ધિ કરીએ છીએ. (૧૧)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર, વિદ્વાન અને ઔષધિ-સમૂહની સમાન પ્રાણીઓને સુખ આપનાર અન્ય કોઈ નથી. તેથી સુશિક્ષા અને અધ્યયન દ્વારા તેના જ્ઞાનમાં વૃદ્ધિ કરીને, મનુષ્યોએ તેનો ઉપયોગ નિત્ય કરવો જોઈએ. (૧૧)

ગયસ્ફાનો અમીવહા વસુવિત્પુષ્ટિવર્ધનઃ । સુમિત્રઃ સોમ નો ભવ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-પરમેશ્વર વા વિદ્વાન્ ! જે કારણે આપ વા એ ઉત્તમ ઔષધ ન:-અમારા ગયસ્ફાન:-પ્રાણોને વધારનાર વા અમીવહા-અવિદ્યા આદિ દોષો તથા જ્વર આદિ દુઃખો-રોગોનો વિનાશ કરનાર વા વસુવિત્-દ્રવ્ય આદિ પદાર્થોનું જ્ઞાન કરાવનાર વા સુમિત્રઃ-જેથી ઉત્તમ કામો કરનારા મિત્ર હોય છે, તેમ પુષ્ટિવર્ધનઃ-શરીર અને આત્માની પુષ્ટિવર્ધક ભવ-થાઓ; વા એ ઔષધિસમૂહ અમને યથાયોગ્ય ઉક્ત ગુણ દાતા, બને, એથી આપ અને એ અમારા સેવન યોગ્ય છો. (૧૨)

સૂક્ત-૯૧

ભાવાર્થ : ઈશ્વર અને ઔષધિના સેવન વિના અને વિદ્વાનોના સંગ વિના પ્રાણીઓના ધનની પ્રાપ્તિ અને મિત્રોનું મિલન સંભવ નથી. તેથી સર્વેએ એનો આશ્રય અને સેવા કરવી જોઈએ. (૧૨)

સોમં રારન્ધિ નૌ હૃદિ ગાવો ન ચવસેષ્વા । મર્યૈઙ્વ સ્વ ઓક્ષ્યૈ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-પરમેશ્વર ! જે કારણે આપ ન:-અમારા હૃદિ-હૃદયમાં ન-જ જેમ ચવસેષુ-ખાવા યોગ્ય ઘાસ આદિ પદાર્થોમાં ગાવ:-ગાય રમે છે, તેમ વા જેમ સ્વે-પોતાના ઓક્ષ્યે-ઘરમાં મર્યૈઙ્વ-મનુષ્ય વિરામ કરે છે, તેમ આ-સારી રીતે રારન્ધિ રમીએ વા ઔષધિસમૂહ ઉક્ત રીતે રમે, એથી સર્વના સેવન યોગ્ય આપ વા એ છે. (૧૩)

ભાવાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જેમ પ્રત્યક્ષરૂપથી ગાય અને મનુષ્ય પોતાના ભોગના પદાર્થો અથવા સ્થાનમાં (આનંદ લે છે) કીડા કરે છે, તેમ આપ અમારા આત્મામાં પ્રકાશિત થાઓ.

જેમ પૃથિવી આદિ કાર્ય દ્રવ્યોમાં પ્રત્યક્ષ રૂપથી કિરણો પ્રદીપ્ત થાય છે, તેમ આપ અમારા આત્મામાં પ્રદીપ્ત થાઓ. આ મંત્રમાં અસંભવ હોવાથી વિદ્વાનનું શ્રદ્ધા કરવામાં આવેલ નથી. (૧૩)

યઃ સૌમ સુચ્ચે તવ રારણદેવ મર્ત્યૈઃ । તં દક્ષઃ સચતે કવિઃ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-દિવ્ય ગુણોને પ્રાપ્ત કરાવનારા વા શ્રેષ્ઠ ગુણોના હેતુ સોમ-વૈદરાજ વિદ્વાન વા ઉત્તમ ઔષધિ ય:-જે તવ-આપ વા એના સુચ્ચે-મિત્રતા વા મિત્રના કામમાં દક્ષ:-શરીર અને આત્મ બળયુક્ત કવિ:-દર્શનીય વા અવ્યાહત પ્રજ્ઞાયુક્ત મર્ત્યૈઃ-મનુષ્ય રારણત્-સંવાદ કરતા અને સચતે-સંબંધ રાખે છે, તમ્-તે મનુષ્યને સુખ કેમ પ્રાપ્ત ન થાય ? (૧૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પરમેશ્વર, વિદ્વાન અને ઔષધિઓની સાથે મિત્રભાવ રાખે છે, તેઓ વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને કદી દુઃખભાગી બનતા નથી. (૧૪)

ઊરુષ્યા ણૌ અભિશસ્તેઃ સોમ નિ પાહ્નંહસઃ । સખાં સુશેવં એધિ નઃ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-રક્ષક અને સુશેવ:-ઉત્તમ સુખદાતા સખા-મિત્ર ! જે આપ અભિશસ્તે:-સુખ વિનાશક કામથી ન:-અમને ઉચ્ચ-બચાવો વા અંહસ:-અવિદ્યા તથા જ્વરાદિ રોગોથી અમારી નિ-નિરંતર પાહિ-પાલના કરો અને ન:-અમારા સુખકારક એધિ-થાઓ, તે આપ અમારા સત્કાર કરવા યોગ્ય કેમ ન બનો ? (૧૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા ઉત્તમ પ્રકારથી સેવા કરેલ પરમ વૈદ્ય વિદ્વાન સમસ્ત અવિદ્યા આદિ પૃથક્ કરીને તેને આનંદિત કરે છે. તેથી તેનો સદા સંગ કરવો જોઈએ. (૧૫)

આ પ્યાયસ્વ સમેતુ તે વિશ્વતઃ સોમ વૃષ્ણયમ્ । ભવા વાજસ્ય સંગથે ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-અત્યંત પરાક્રમયુક્ત વૈદ્યકશાસ્ત્રના જ્ઞાતા વિદ્વાન ! તે-આપના વિશ્વતઃ-સંપૂર્ણ સૃષ્ટિથી વૃષ્ણયમ્-વીર્યવાનોમાં પરાક્રમ છે, તે અમને સમ + એતુ-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થાય તથા આપ આપ્યાયસ્વ-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત તથા વાજસ્ય-વેગવાન સેનાના સંગથે-સંગ્રામમાં રોગનાશક ભવ-બનો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનો તથા ઔષધિ સમૂહોનું સમ્યક્ સેવન કરીને, બળ તથા વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, સમસ્ત સૃષ્ટિની સર્વોત્તમ વિદ્યાઓની ઉન્નતિ કરીને, શત્રુઓને જીતીને, તથા સજ્જનોની રક્ષા કરીને શરીર તથા આત્માની નિરંતર પુષ્ટિ કરવી જોઈએ. (૧૬)

આ પ્યાયસ્વ મદિન્તમ્ સોમ વિશ્વેભિરંશુભિઃ ।

ભવાં નઃ સુશ્રવસ્તમ્ સખાં વૃધે ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે મદિન્તમ-અત્યંત પ્રશંસિત આનંદયુક્ત સોમ-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યના દાતા ! જે સુશ્રવસ્તમઃ-બહુશ્રુત વા શ્રેષ્ઠ અન્નાદિ પદાર્થોથી યુક્ત સખા-આપ મિત્ર છો, તે નઃ-અમારી વૃધે-ઉન્નતિને માટે ભવ-થાઓ અને વિશ્વેભિઃ સમસ્ત અંશુભિઃ-સૃષ્ટિના સિદ્ધાન્ત ભાગો (તત્વાવયવો)થી આ-સારી રીતે પ્યાયસ્વ-વૃદ્ધ થઈને પ્રાપ્ત થાઓ. (૧૭)

ભાવાર્થ : જે પરમ વિદ્વાન સર્વોત્તમ ઔષધિઓના સમૂહને સૃષ્ટિ ક્રમ-સંબંધી વિદ્યાઓથી મનુષ્યોની ઉન્નતિ કરે છે, તેઓનું સર્વેએ અનુકરણ કરવું જોઈએ. (૧૭)

સં તે પયાંસિ સમું યન્તુ વાજાઃ સં વૃષ્યાન્યભિમાતિષાહઃ ।

આપ્યાયમાનો અમૃતાય સોમ દિવિ શ્રવાંસ્યુત્તમાનિ ધિષ્વ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-ઐશ્વર્યને પહોંચાડનાર વિદ્વાન ! તે-આપના જે વૃષ્યાનિ-પરાક્રમવાળા પયાંસિ-જળ અને અન્ન અમને સંયન્તુ-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થાય, અને સમિમાતિષાહઃ-જેનાથી શત્રુઓને સહન કરીએ તેઓ વાજાઃ-સંગ્રામ સમ્-પ્રાપ્ત થાય, તેથી દિવિ-વિદ્યાના પ્રકાશમાં અમૃતાય-મોક્ષને માટે આપ્યાયમાનઃ-દેહ બળયુક્ત આપ વા ઉત્તમ રસને માટે દેહ બળકારક ઔષધિગણ ઉત્તમાનિ-સર્વોત્તમ શ્રવાંસિ-વચનો અને અન્નોને સંધિષ્વ-ધારણ કરો વા કરે છે. (૧૮)

ભાવાર્થ : વિદ્યા અને પુરુષાર્થથી, વિદ્વાનોના સંગથી, ઔષધિઓના સેવનથી અને પથ્યથી જે પ્રશંસનીય કર્મ, પ્રશંસનીય ગુણ અને શ્રેષ્ઠ પદાર્થ પ્રાપ્ત થાય છે, તેને ધારણ કરીને, તેની રક્ષા પ્રાપ્ત થાય છે, તેને ધારણ કરીને, તેની રક્ષા કરીને તથા ધર્મ-અર્થ-કામ સિદ્ધ કરીને મનુષ્યોએ મુક્તિ-મોક્ષની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૮)

યા તે ધામાનિ હૃવિષા યજન્તિ તા તે વિશ્વા પરિભૂરંસ્તુ યજ્ઞમ્ ।

ગયસ્ફાનઃ પ્રતરણઃ સુવીરોઽવીરહા પ્ર ચરા સોમ દુર્યાન્ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : સોમ-પરમેશ્વર વા વિદ્વાન ! તે-આપના વા એ ઔષધસમૂહના યા-જે વિશ્વ-સમસ્ત ધામાનિ-સ્થાન વા પદાર્થ હૃવિષા-વિદ્યાદાન વા ગ્રહણ કરવાની ક્રિયાઓથી યજ્ઞમ્-ક્રિયામય યજ્ઞને યજન્તિ-સંગત કરે છે તા-તે સર્વ તે-આપના વા એ ઔષધિ-સમૂહ અમને પ્રાપ્ત થાય, જેથી આપ પરિભૂઃ-સર્વોપરિ વિરાજમાન થઈને, ગયસ્ફાનઃ-ધન વૃદ્ધિ કરનાર અને પ્રતરણઃ-દુઃખથી પ્રત્યક્ષ તારનાર સુવીરઃ-સર્વોત્તમ

સૂક્ત-૯૧

વીરોથી યુક્ત અવીરહા-શ્રેષ્ઠ શિક્ષા અને વિદ્યાથી કાયરોને પણ સુખ આપનારા અસ્તુ-થાઓ, એથી અમારા દુર્યાન્-ઉત્તમ સ્થાનોને ચર-પ્રાપ્ત થાઓ. (૧૯)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય સૃષ્ટિના પદાર્થોના ગુણોના વિજ્ઞાન વિના તેના દ્વારા ઉપકાર ગ્રહણ કરી શકતા નથી. તેથી વિદ્વાનોના સંગથી પૃથિવીથી લઈને ઈશ્વર પર્યન્ત પદાર્થોથી જાણીને મનુષ્યોએ ક્રિયાની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૯)

સોમો ધેનુ સોમો અર્વન્તમાશુ સોમો વીરં કર્મણ્યં દદાતિ ।

સાદન્યં વિદથ્યં સભેયં પિતૃશ્રવણં યો દદાશદસ્મૈ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : ય:-જે સભાધ્યક્ષ આદિ અસ્મૈ-એ ધાર્મિક પુરુષને સાદન્યમ્-ઘર બનાવવા યોગ્ય સામગ્રી વિદથ્યમ્-યજ્ઞ વા યુદ્ધોમાં પ્રશંસનીય તથા સભેયમ્-સભામાં પ્રશંસનીય સામગ્રી અને પિતૃશ્રવણમ્-જ્ઞાની જનો જેથી સાંભળી શકાય છે એવા વ્યવહારને દદાશત્-આપે છે, તે સોમ:-અર્થાત્ સભાધ્યક્ષ આદિ સોમલતાદિ ઔષધિને માટે ધેનુમ્-વાણીને આશુમ્-શીઘ્ર ગમનકારી અર્વન્તમ્-ઘોડાને અથવા સોમ:-ઉત્તમ કર્મ કર્તા સોમ કર્મણ્યમ્-સવોત્તમ કામોથી સિદ્ધ થયેલ વીરમ્-વિદ્યા અને શૂરવીરતા આદિ ગુણોથી યુક્ત મનુષ્યને દદાતિ-પ્રદાન કરે છે. (૨૦)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો સુશિક્ષિત વાણીનો ઉપદેશ કરીને તથા ઉત્તમ પુરુષાર્થ પ્રાપ્ત કરીને કાર્ય સિદ્ધિ કરાવે છે, તેમ જ સોમલતા તથા અન્ય ઔષધિઓનો સમૂહ, શ્રેષ્ઠ બળોની (વૃદ્ધિ કરે છે) અને પુષ્ટિ કરે છે. (૨૦)

અષાઢ્ઠં યુત્સુ પૃતનાસુ પપ્રિં સ્વર્ષામ્પ્સાં વૃજનસ્ય ગોપામ્ ।

ભરેષુજાં સુક્ષિતિં સુશ્રવસં જયન્તં ત્વામનુ મદેમ સોમ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-સેના આદિ કાર્યોના અધિપતિ ! જેમ સોમલતાદિ ઔષધિગણ યુત્સુ-સંગ્રામોમાં અષાઢ્ઠમ્-શત્રુઓના તિરસ્કારને પ્રાપ્ત ન થવા યોગ્ય પૃતનાસુ-સેનાઓમાં પપ્રિમ્-સર્વ પ્રકારની રક્ષા કરનાર વૃજનસ્ય-પરાક્રમના ગોપામ્-રક્ષક ભરેષુજામ્-રાજ્ય સામગ્રીના સાધક બાણોને બનાવનારા સુક્ષિતિમ્-જેના રાજ્યમાં સર્વોત્તમ ભૂમિ છે સ્વર્ષામ્-સર્વના સુખદાતા અપ્સામ્-જળને આપનાર સુશ્રવસમ્-જેના ઉત્તમ યજ્ઞ વચન સાંભળવામાં આવે છે જયન્તમ્-વિજયના કરનારા ત્વામ્-આપને રોગરહિત કરીને આનંદિત કરે છે, તેમ તેને પ્રાપ્ત થઈને અમે અનુમદેમ-અનુમોદનને પ્રાપ્ત થઈએ. (૨૧)

ભાવાર્થ : સર્વ ગુણ સંપન્ન સેનાપતિ વિના અને સર્વ ગુણકારક સોમ આદિ ઔષધિઓના ગુણોના જ્ઞાન તથા સેવન વિના મનુષ્યોનું ઉત્તમ રાજ્ય અને આરોગ્ય રહી શકતું નથી, તેથી એનો આશ્રય સર્વેએ સદા કરવો જોઈએ. (૨૧)

त्वमिमा ओषधीः सोम विश्वास्त्वमपो अजनयस्त्वं गाः ।

त्वमा ततन्थोर्वन्तरिक्षं त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ ॥ २२ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-સમસ્ત ગુણ યુક્ત આરોગ્યતા અને બળ પ્રદાતા ઈશ્વર ! જે કારણે ત્વમ્-આપ
इमा:-પ્રત્યક્ષ વિશ્વા:-સમસ્ત ઓષધી:-રોગ વિનાશક-સોમલતા આદિ ઔષધિઓને અજનય:-ઉત્પન્ન
કરો છો, ત્વમ્-આપ અપ:-જળને, ત્વમ્-આપ ગા:-ઈન્દ્રિયો અને કિરણોને પ્રકાશિત કરો છો, ત્વમ્-આપ
ज्योतिषा-વિદ્યા અને શ્રેષ્ઠ શિક્ષાના પ્રકાશથી અન્તરિક્ષમ્-આકાશને ઝરુ-બહુ જ આ-સારી રીતે તતન્થ-
વિસ્તૃત કરો છો અને ત્વમ્-આપ ઉક્ત વિદ્યાદિ ગુણોથી તમ:-અવિદ્યા, નિંદિત શિક્ષા અને અંધકારનો
वि ववर्थ-સ્વીકાર કરતા નથી, તેથી આપ સર્વ લોકોથી સેવા-સેવન કરવા યોગ્ય છો. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે ઈશ્વરે આ વિવિધ પ્રકારની સૃષ્ટિ ઉત્પન્ન કરી છે, તે જ સર્વ મનુષ્યોને ઉપાસના
કરવા યોગ્ય ઈષ્ટદેવ છે. (૨૨)

देवेन नो मनसा देव सोम रायो भागं सहसावन्नभि युध्य ।

मा त्वा तनदीशिषे वीर्यस्योभयेभ्यः प्र चिकित्सा गविष्टौ ॥ २३ ॥

પદાર્થ : હે સહસાવન્-અત્યંત બળવાન દેવ-દિવ્યગુણ સંપન્ન સોમ-સર્વ વિદ્યા અને સેનાના અધ્યક્ષ !
આપ देवेन-દિવ્યગુણયુક્ત मनसा-વિચારથી रायः-રાજ્ય ધનના લાભને અभि-શત્રુઓની સન્મુખ युध्य-
યુદ્ધ કરો. જે આપ नः-અમારે માટે ધનના भागम्-ભાગના ईशिषे-સ્વામી છો, તે त्वा-તને ગવિષ્ટૌ-
ઈન્દ્રિય અને ભૂમિના રાજ્યના પ્રકાશોની સંગતિઓમાં શત્રુ मा तनत्-પીડા યુક્ત ન કરે. આપ वीर्यस्य-
પરાક્રમને उभयेभ्यः-પોતાના અને પારકા યોદ્ધાઓથી मा प्रचिकित्स-સંશય યુક્ત ન બનો. (૨૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરમ શ્રેષ્ઠ સેનાપતિ અથવા ઔષધિસમૂહનો આશ્રય કરીને, યુદ્ધમાં પ્રવૃત્ત
થઈને, પોતાની સેનાને ઉત્સાહિત કરીને અને શત્રુ સેનાને પરાજિત કરીને ચક્રવર્તી રાજ્યનું ઐશ્વર્ય
પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૨૩)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્યાર્થી અને અધ્યાપકો આદિ વિદ્યાને ભણવા આદિ કાર્યોની સિદ્ધિ કરનારા
(સોમ) સોમ શબ્દના અર્થના કથનની આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી
જોઈએ. (૮૧)

सूक्त-८२

एता उ त्या उषसः केतुमक्रत पूर्वे अर्धे रजसो भानुमञ्जते ।

निष्कृण्वाना आयुधानीव धृष्णवः प्रति गावोऽरुषीर्यन्ति मातरः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે एता:-પ્રત્યક્ષ उ-અને જે त्या:-અપ્રત્યક્ષ અર્થાત્ દૂર દેશમાં છે તેઓ

સૂક્ત-૯૨

ઉષસ:-પ્રાતઃકાલનો સૂર્યનો પ્રકાશ **કેતુમ્**-સર્વ પદાર્થોનું જ્ઞાન **અક્રતઃ**-કરાવે છે, જે **રજસઃ**-ભૂગોળના **પૂર્વે**-અર્ધ ભાગમાં **ભાનુમ્**-સૂર્યના પ્રકાશને **અઙ્ગતે**-પહોંચાડે છે અને **નિષ્કૃણવાનાઃ**-દિવસ તથા રાતને સિદ્ધ કરે છે, તે **આયુધાનીવ**-જેમ વીરોની યુદ્ધ વિદ્યાથી છોડેલા બાણ આદિ શસ્ત્રો સીધા અને તીર્યક જાય-આવે છે, તેમ **ધૃષ્ણવઃ**-પ્રગલ્ભાના ગુણોના દાતા **અસ્મીઃ**-લાલ ગુણયુક્ત અને **માતરઃ**-માતા સમાન સર્વ પ્રાણીઓનું માન કરનારી **પ્રતિગાવઃ**-તે સૂર્યના પ્રકાશના પ્રત્યાગમન અર્થાત્ ક્રમથી વધ-ઘટ થતાં સ્થાનમાં **યન્તિ**-વધી-ઘટીને પહોંચે છે. તે (ઉષા)ને તમે જાણો. (૧)

ભાવાર્થ : આ સૃષ્ટિમાં સદા સૂર્યનો પ્રકાશ ભૂગોળના અર્ધ ભાગમાં પ્રકાશિત કરે છે અને ભૂગોળના અર્ધ ભાગમાં અંધકાર રહે છે. સૂર્યના પ્રકાશ વિના કોઈ વસ્તુનું વિશેષ જ્ઞાન થતું નથી. સૂર્યના કિરણો પ્રતિક્ષણ ભૂગોળમાં ભ્રમણ કરવાને કારણે ગમન કરતા હોય તેમ જોવામાં આવે છે.

જે ઊંધાવેળા પોત-પોતાના લોકમાં છે, તે પ્રત્યક્ષ અને જે દૂર લોકમાં છે, તેને અપ્રત્યક્ષ (સમજવી જોઈએ.) એ સર્વ દિશાઓમાં પ્રવિષ્ટ છે. સમાન ગુણોવાળી (છે) અને સર્વ દિશાઓમાં પ્રવિષ્ટ છે.

જેમ શસ્ત્ર સામેની તરફ ગમન કરવાથી સીધી-ઉલટી ગતિથી ચાલે છે, તેમ ઊંધાઓ અનેક પ્રકારના અન્ય લોકોની ગતિના કારણે સીધી-ઉલટી ગતિયુક્ત થઈને ચાલે છે, તેમ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૧)

ઉદપત્તન્નરુણા ભાનવો વૃથા સ્વાયુજો અરુષીર્ગા અયુક્ષત ।

અક્રન્નુષાસો વ્યુનાનિ પૂર્વથા રુશન્તં ભાનુમરુષીરશિશ્રયુઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે **અસ્મ્યાઃ**-રક્ત ગુણવાળી **સ્વાયુજઃ**-અને સારી રીતે સર્વ પદાર્થોમાં યુક્ત થાય છે તે **ઉષસઃ**-ઉષા = પ્રભાત કાલીન **ભાનવઃ**-સૂર્યનાં કિરણો **વૃથા**-મિથ્યા સમાન **ઉત્-ઉપર અપત્તન્-**પડે છે અર્થાત્ તેમાં તાપ અલ્પ અને શીતલ સમાન હોય છે અને તેનાથી **ગાઃ**-પૃથિવી આદિ લોક **અસ્મીઃ**-ઉક્ત ગુણોથી **અયુક્ષત**-યુક્ત થાય છે.

જે **અસ્મીઃ**-રક્ત ગુણવાળા સૂર્યનાં કિરણો **વ્યુનાનિ**-સર્વ પદાર્થોનું વિશેષજ્ઞાન અને સર્વ કાર્યોને **અક્રન્**-કરાવે છે, તે **પૂર્વથા**-પાછળ-પાછળના **સ્થાન્તમ્**-અંધકારના છેદક **ભાનુમ્**-સૂર્યની સમાન જુદા-જુદા દિવસ કરાવનાર સૂર્યનું **અશિશ્રયુઃ**-સેવન કરે છે, તેનું સેવન યુક્તિપૂર્વક કરવું જોઈએ. (૨)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યનાં કિરણો ભૂગોળ પર પહોંચીને ક્રમથી (આગળ) જાય છે, તે સાંજે અને સવારે ભૂમિના સંપર્કથી અલ્પ લાલિમા યુક્ત (સોનલ વણા) બનીને આકાશને સુશોભિત કરે છે.

જ્યારે એ (ઉષા)ઓ પ્રવૃત્ત થાય છે, ત્યારે પ્રાણીઓને વિશિષ્ટ જ્ઞાન ઉપલબ્ધ થાય છે. જે (સૂર્ય કિરણો) ભૂમિને સ્પર્શ કરીને આછા લાલ બનીને તથા સૂર્યનું સેવન કરીને (તે)ને લાલ જેવા કરીને ઓષધિઓ સુધી પહોંચે છે (ઉષા રૂપ થયેલ) તે કિરણોનું જાગૃત અવસ્થામાં મનુષ્યોએ સેવન કરવું જોઈએ. (૨)

અર્ચન્તિ નારીરપસો ન વિષ્ટિભિઃ સમાનેન યોજનેના પરાવતઃ ।

इषं वहन्तीः सुकृते सुदानवे विश्वेदह यजमानाय सुन्वते ॥ ३ ॥

पदार्थ : सूर्यना किरणो विष्टिभिः-पोतानी व्याप्तिओथी समानेन-समान योजनेन-योगथी अर्थात् सर्व पदार्थोमां अेक जेवा व्याप्त थईने परावतः-दूर देशथी न-जेम नारीः-पुरुषोने अनुकूल स्त्रीओ सुकृते-धर्मिष्ठ सुदानवे-उत्तम दाता सुन्वते-ओषधि पदार्थोनों रस काढीने सेवन करनार यजमानाय-अने पुरुषार्थी पुरुषोने माटे विश्वा-समस्त सर्वोत्तम अपसः-कर्मो अने इषम्-अन्नादि पदार्थोने आवहन्तीः-सारी रीते प्राप्त करीने तेना अह-दुःखोना विनाशथी अर्चन्ति-सत्कार करे छे, तेम ठीषा पण छे, तेनुं यथा योग्य सेवन सर्वेअे करवुं जेईअे. (३)

भावार्थ : जेम पतिव्रता स्त्रीओ पोत-पोताना पतियोनी सेवा करीने तेनो सत्कार करे छे, तेम जे सूर्यनां किरणो भूमि पर पडोथीने तथा त्यांथी निवृत्य-पाछा इरीने अन्तरिक्षमां प्रकाश करीने तथा सर्व वस्तुओने सारी रीते पुष्ट करीने सर्व प्राणीओने सुखी करे छे. (३)

अधि पेशांसि वपते नृत्तूरिवापोर्णुते वक्ष उस्त्रेव बर्जहम् ।

ज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृण्वती गावो न व्रजं व्युषा आवर्त्तमः ॥ ४ ॥

पदार्थ : हे मनुष्यो ! जे उषाः-सूर्यना किरणो नृत्तूरि-जेम नाटक करनार, नट, नायनार अने बहुरूपीओ अनेक रूप धारण करे छे, तेम पेशांसि-अनेक प्रकारना रूपोने अधिवपते-स्थिर करे छे वा वक्षः + उस्त्रेव-जेम गाय पोतानी छातीने, तेम बर्जहम्-अंधकारनो नाश करनार, प्रकाशना नाशक अंधकारने अप + ऊर्णुते-ढांकती वा विश्वस्मै-समस्त भुवनस्य-उत्पन्न थयेल लोकने माटे ज्योतिः-प्रकाशने कृण्वती-करीने व्रजं, गावो न-जेम गाय निवासमां जाय छे, तेम स्थानान्तरने जती अने तमः-अंधकारने व्यावः-पोताना प्रकाशथी ढांकी दे छे, तेम उत्तम स्त्री पोताना पतिने प्रसन्न करे. (४)

भावार्थ : सूर्यनो जे शुद्ध (= सीधो) प्रकाश छे, ते दिवस अने जे भूमिने स्पर्शतो त्रांसो प्रकाश छे, ते 'ठीषा' कहेवाय छे. अेना विना संसारनुं पालन संभव नथी. तेथी मनुष्योअे तेनी विद्या अवश्य शीघ्रवी जेईअे. (४)

प्रत्यर्ची रुशदस्या अदर्शि वि तिष्ठते बाधते कृष्णामभ्वम् ।

स्वरुं न पेशो विदथैष्वज्जिचित्रं दिवो दुहिता भानुमश्रेत् ॥ ५ ॥

पदार्थ : जे अस्याः-अे प्रातःकाल अंधकारनी विनाशरूपी ठीषानी स्नात्-अंधकारनो नाश करनारी अर्चिः-दीप्ति अभ्वम्-मछानतर कृष्णम्-काणा वर्षा रूप अंधकारने बाधते-पृथक करे छे.

जे दिवः-प्रकाशरूप सूर्यनी दुहिता-पुत्रीनी समान स्वस्म-तपनार सूर्यनी न-समान चित्रम्-अद्भुत भानुम्-कान्ति पेशः-रूपनो अश्रेत्-आश्रय करे छे; वा जेम ऋत्विक्जनो विदथेषु-यज्ञनी क्रियाओमां अङ्गन-प्राप्त थाय छे, तेम वित्तिष्ठते-विविध रीते स्थिर थाय छे, ते प्रातःकालीन वेणा (ठीषा) अमने

સૂક્ત-૯૨

પ્રત્યર્દશિ-પ્રતીત થાય છે. (૫)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યની દીપ્તિ સ્વયં પ્રકાશિત થઈને સર્વને દેખાય છે, તે 'ઊષા' સૂર્યની પુત્રી સમાન છે, તેમ સર્વેએ જાણવું જોઈએ. (૫)

અતારિષ્મ તમસસ્પારમસ્યોષા ઉચ્છન્તી વ્યુના કૃણોતિ ।

શ્રિયે છન્દો ન સ્મયતે વિભાતી સુપ્રતીકા સૌમનસાર્યાજીગઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જે શ્રિયે-વિદ્યા અને રાજ્યની પ્રાપ્તિને માટે છન્દઃ-વેદોની ન-સમાન ઉચ્છન્તી-અંધકારને દૂર કરીને તથા વિભાતી-વિવિધ પ્રકારના મૂર્તિમાન પદાર્થોને પ્રકાશિત અને સુપ્રતીકા-પદાર્થોની પ્રતીતિ કરાવે છે, તે ઊષાઃ-પ્રભાતવેળા સર્વ સૌમનસાય-ધાર્મિકજનો મનોરંજનને માટે વ્યુનાનિ-પ્રશંસનીય અને મનોહર કામોને કૃણોતિ-કરાવીને અજીગઃ-અંધકારને ગળી જઈને તથા સ્મયતે-આનંદ આપે છે, તેથી અસ્ય-એ તમસઃ-અંધકારથી પારમ્-પાર કરીને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ દુઃખથી પાર આનંદને અમે અતારિષ્મ-પ્રાપ્ત થઈએ છીએ. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે, કે જેમ એ ઊષા, કર્મ, જ્ઞાન, આનંદ, પુરુષાર્થ અને ધનની પ્રાપ્તિ જેવી (કરાવનારી), દુઃખથી પાર (પહોંચાડનારી) અને અંધકારના નિવારણની હેતુ છે, તેથી એ ઊષાવેળામાં પુરુષાર્થપૂર્વક પ્રયત્ન કરીને સુખની વૃદ્ધિ અને દુઃખની હાનિ કરવી જોઈએ. (૬)

ભાસ્વતી નેત્રી સૂનૃતાનાં દિવઃ સ્તવે દુહિતા ગોતમેભિઃ ।

પ્રજાવતો નૃવતો અશ્વબુધ્યાનુષો ગોઅગ્રાં ઉપ માસિ વાજાન્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : જેમ સૂનૃતાનામ્-સારા કામો વા અન્નાદિ પદાર્થોને ભાસ્વતી-પ્રકાશિત નેત્રી-મનુષ્યોને વ્યવહારોની પ્રાપ્તિ કરાવતી વા દિવઃ-પ્રકાશમાન સૂર્યની દુહિતા-કન્યા સમાન ઊષઃ-પ્રાતઃકાળની વેળા ગોતમેભિઃ-સમસ્ત વિદ્યાઓને સારી રીતે કહેનાર અને સાંભળનાર વિદ્વાનોથી સ્તુતિ કરાય છે તેમ આની હું સ્તવે-પ્રશંસા કરું છું. હે સ્ત્રી ! જેમ આ ઊષા પ્રજાવતઃ-પ્રશંસિત પ્રજાયુક્ત નૃવતઃ-વા-સેનાદિ કામોના ઘણા નાયકોથી યુક્ત અશ્વબુધ્યાન્-જેમનાથી વેગવાન ઘોડાઓને વારંવાર ચૈતન્ય કરે ગોઅગ્રાન્-જેમનાથી રાજ્યભૂમિ આદિ પદાર્થ મળે તે વાજાન્-સંગ્રામોને ઉપમાસિ-સમીપ પ્રાપ્ત કરે છે એટલે કે જેમ પ્રાતઃકાળની વેલાથી અંધકારનો નાશ થઈ સર્વ પ્રકારના પદાર્થ પ્રકાશિત થાય છે તેમ તું થા. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ ગુણ આગરી સુલક્ષણી કન્યાથી પિતા, માતા, યાચા આદિ સુખી થાય છે તેવી જ રીતે પ્રાતઃકાળની વેલાના ગુણ અવગુણ પ્રકાશિત કરનારી વિદ્યાથી વિદ્વાન લોકો સુખી થાય છે. (૭)

ઉષસ્તમશ્યાં યશસં સુવીરં દાસપ્રવર્ગ ર્યિમશ્વબુધ્યમ્ ।

સુદંસંસા શ્રવંસા યા વિભાસિ વાજપ્રસૂતા સુભગે બૃહન્તમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : જે વાજપ્રસૂતા-સૂર્યની ગતિથી ઉત્પન્ન થયેલી સુભગા-જેની સાથે શ્રેષ્ઠતમ ઐશ્વર્યના પદાર્થો

સંયુક્ત થાય છે, તે **ઉષ્ઃ**-પ્રાતઃવેળાની છે. તે જે **સુદંસસા**-શ્રેષ્ઠ કર્મવાળા **શ્રવસા**-પૃથિવી આદિ અન્નની સાથે વિદ્યમાન વા **અશ્વબુધ્યમ્**-જેની સહાયતાથી ઘોડાઓ શિક્ષિત કરવામાં આવે છે, **દાસપ્રવર્ગમ્**-જેથી સેવક = દાસ કામ કરનારા રહી શકે છે, **સુવીરમ્**-જેથી શિક્ષિત વીરજન હોય તે **બૃહન્તમ્**-સર્વથા વૃદ્ધિ પામીને તથા **યજ્ઞસમ્**-સર્વ રીતે પ્રશંસાયુક્ત **રયિમ્**-વિદ્યા અને રાજ્યધનને **વિભાસિ**-સમ્યક્ પ્રકાશિત કરે છે, **તમ્**-તેને હું **અશ્યામ્**-પ્રાપ્ત કરું. (૮)

ભાવાર્થ : જે ઉષાકાળની વિદ્યાથી પ્રયત્નશીલ બને છે, તેઓ જ એ સર્વ વસ્તુઓને પ્રાપ્ત કરીને તથા સંપન્ન બનીને આનંદિત રહે છે, અન્ય નહિ. (૮)

વિશ્વાનિ દેવી ભુવનાભિચક્ષ્યા પ્રતીચી ચક્ષુર્વિયા વિ ભાતિ ।

વિશ્વં જીવં ચરસેં બોધયન્તી વિશ્વસ્ય વાચમવિદન્મનાયોઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેમ **પ્રતીચી**-સૂર્યની ગતિથી પતીચીન જાય છે અને **ચરસે**-વ્યવહાર કરવા વા સુખ અને દુઃખ ભોગવવા માટે **વિશ્વમ્**-સર્વ **જીવમ્**-જીવોને **બોધયન્તી**-ચેતન-જાગૃત કરતી **દેવી**-પ્રકાશને પ્રાપ્ત **ઉષાઃ**-પ્રભાત વેળા **મનાયોઃ**-માનની સમાન આચરણ કરનારા **વિશ્વસ્ય**-જીવમાત્રની **વાચમ્**-વાણીને **અવિદત્**-પ્રાપ્ત થતી **ચક્ષુઃ**-અને નેત્રની સમાન સર્વ વસ્તુના જોવામાં આવતા નિદાન **વિશ્વાનિ**-સમસ્ત **ભુવના**-લોકોને **અભિચક્ષ્ય**-સર્વ રીતે પ્રકાશિત કરીને **ર્વિયા**-પૃથિવીની સાથે **વિભાતિ**-સારી રીતે પ્રકાશિત થાય છે, તેમ તું પણ બન. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ સત્વ સ્વભાવ-ઉત્તમ સ્ત્રી સર્વ રીતે પોતાના પતિને આનંદિત કરે છે, તેમ ઊષા = પ્રભાત વેળા સમસ્ત સંસારને આનંદિત કરે છે. (૯)

પુનઃ પુનર્જાયમાના પુરાણી સમાનં વર્ણમ્ભિ શુભ્મમાના ।

શ્વઘ્નીવં કૃત્વુર્વિજં આમિનાના મર્ત્ત્ત્સ્ય દેવી જરયન્ત્યાયુઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : **સ્વઘ્નીવ**-જેમ કૃતરાં અને હરણને મારનારી વૃકી = માદા વરુની સમાન વા જેમ **કૃત્વુઃ**-છેદન કરનારી માદા બાજ **વિજઃ**-ઉડતા પક્ષીઓનું છેદન કરે છે-મારે છે, તેમ **આમિનાના**-હિંસક **મર્ત્ત્ત્સ્ય**-મરવા-જીવવાવાળા જીવ માત્રની **આયુઃ**-જીવનને **જરયન્તી**-હિન કરીને **પુનઃ પુનઃ**-પ્રતિદિન **જાયમાના**-ઉત્પન્ન થનારી **સમાનમ્**-એક સમાન **વર્ણમ્**-રૂપને **અભિ શુભ્મમાના**-સર્વત્રથી પ્રકાશિત કરીને વા **પુરાણી**-સદાથી વર્તમાન **દેવી**-પ્રકાશમાન પ્રભાતવેળા = ઊષા છે, તે જાગૃત થઈને મનુષ્યોને સેવન કરવા યોગ્ય છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ છુપાયેલી અથવા બહાર દેખાતી માદા વરુ હરણોને પકડી પાડે છે અથવા જેમ માદા બાજ પક્ષી (અન્ય) પક્ષીઓને મારે છે, તેમ જ ઊષા અમારી આયુને ધીરે ધીરે કાપે છે, તેમ જાણીને આપણે આળસનો ત્યાગ કરીને રાતના ચોથા પ્રહરમાં ઊઠીને વિદ્યા, ધર્મ અને પરોપકાર આદિ વ્યવહારોમાં સમ્યક્ નિત્ય પ્રવૃત્ત થવું જોઈએ. જેઓની આ વિષયમાં એ રીતની બુદ્ધિ હોય, તેઓ આળસ અને અધર્મમાં કેમ પ્રવૃત્ત થઈ શકે ? (૧૦)

વ્યૂર્ણવતો દિવો અન્તાં અબોધ્યપ્ સ્વસારં સનુતર્યુયોતિ ।

પ્રમિનતી મનુષ્યા યુગાનિ યોષા જારસ્ય ચક્ષસા વિ ભાતિ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પ્રભાતવેળા જેમ યોષા-કામિની સ્ત્રી જારસ્ય-વ્યભિચારી, લંપટ, કુમાર્ગી પુરુષની વચનો નાશ કરે છે, તેમ સર્વ આયુ-જીવનનો સનુત:-નિરંતર પ્રમિનતી-નાશ કરે છે, સ્વસારમ્-પોતાની બેન સમાન જે રાત્રિ છે, તેને ણ્યૂર્ણવતી-આચ્છાદિત કરીને અપયુયોતિ-તેને દૂર કરીને અર્થાત્ દિવસથી પૃથક્ કરે છે અને સ્વયં વિ-સારી રીતે ભાતિ-પ્રકાશિત થતી જાય છે, ચક્ષસા-તે ઊષા = પ્રભાતવેળાના કારણે તેના દર્શન દિવ:-પ્રકાશવાન સૂર્યના અન્તાન્-સમીપના પદાર્થોને તથા મનુષ્યા-મનુષ્યો સંબંધી યુગાનિ-વર્ષોને અબોધિ-જાણે છે, તેનું સેવન તમે યુક્તિપૂર્વક કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ વ્યભિચારિણી સ્ત્રી વ્યભિચારી પુરુષની આયુનો નાશ કરે છે, તેમ સૂર્યથી સંબંધિત અંધકારનો નાશ કરવાથી દિવસને રચનારી ઊષા છે, તેમ જાણીને દિવસ અને રાત્રિને યુક્તિથી વર્તીને મનુષ્યોએ પૂર્ણ આયુ ભોગવવી જોઈએ. (૧૧)

પશૂન્ન ચિત્રા સુભગા પ્રથાના સિન્ધુર્ન ક્ષોદ્ ઝર્વિયા વ્યશ્વૈત્ ।

અમિનતી દૈવ્યાનિ વ્રતાનિ સૂર્યસ્ય ચેતિ રશ્મિભિર્દૃશાના ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ ન-જેમ પશૂન્-ગાય આદિ પશુઓને પ્રાપ્ત કરીને વૈશ્ય ઉન્નતિ કરે છે-વૃદ્ધિ પામે છે, ન-જેમ સુભગા-સુંદર ઐશ્વર્ય કરનારી પ્રથાના-તરંગોથી શબ્દ કરતી સિન્ધુ:-અત્યંત વેગવાન નદી ક્ષોદ:-જળથી વધે છે, તેમ સુંદર ઐશ્વર્ય કરાવનારી ઊષા કલબલાટ કરનારા પક્ષીઓના શબ્દોથી શબ્દવાળી અને કોશો પ્રસાર પામતી ચિત્રા-ચિત્ર-વિચિત્ર ઊષા (ઝર્વિયા-પૃથિવીની સાથે) સૂર્યસ્ય-માર્તંડ મંડલ = સૂર્ય મંડળના રશ્મિભિ:-કિરણોથી દૃશાના-જે જોવામાં આવે છે, તે અમિનતી-સર્વ રીતે રક્ષા કરતી દૈવ્યાનિ-વિદ્વાનોમાં પ્રસિદ્ધ વ્રતાનિ-સત્યપાલન આદિ કાર્યોમાં વ્યશ્વૈત્-વ્યાપ્ત થાય અર્થાત્ જેમાં વિદ્વાનો નિયમોનું પાલન કરે છે, તેમ પ્રતિદિન પોતાના નિયમોનું પાલન કરતી ચેતિ-જાણવામાં આવે છે, તે ઊષા = પ્રભાતકાલીન વેળાની વિદ્યાનુસાર વર્તન કરીને નિરંતર સુખી થાઓ. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ પશુઓની પ્રાપ્તિ વિના વેપારી અને જળની પ્રાપ્તિ વિના નદી આદિ (જળ પ્રદેશ) સૌભાગ્યશાળી બનતા નથી, તેમ ઊષાકાલની વિદ્યા અને પુરુષાર્થ વિના મનુષ્ય પ્રશંસનીય ઐશ્વર્યવાન બની શકતા નથી, તેમ જાણવું જોઈએ. (૧૨)

ઉષ્સ્તચ્ચિત્રમા ભરાસ્મભ્યં વાજિનીવતિ । યેન તોકં ચ તનયં ચ ધામ્હે ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે સૌભાગ્યકારિણી સ્ત્રી ! વાજિનીવતિ-ઉત્તમ ક્રિયા અને અન્નાદિ ઐશ્વર્યયુક્ત તું ઉષ:-પ્રભાત સમાન અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે ચિત્રમ્-અદ્ભુત સુખકારક ધનને આભર-ધારણ કર યેન-જેથી અમે તોકમ્-પુત્ર ચ-અને તેના પાલન માટે ઐશ્વર્ય તનયમ્-પૌત્રાદિ ચ-સ્ત્રી, નોકર અને ભૂમિના

સૂક્ત-૯૨

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રતિદિન ક્રિયા અને નિપુણતા દ્વારા અગ્નિ-જળ આદિથી વિમાન આદિ યાનો સિદ્ધ કરીને અને કદી ક્ષીણ ન થનાર ધનને પ્રાપ્ત કરીને સુખી બનવું જોઈએ. (૧૬)

યાવિત્થા શ્લોકમા દિવો જ્યોતિર્જનાય ચક્રથુઃ ।

આ ન ઋર્જ વહતમશ્વિના યુવમ્ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે શિલ્પવિદ્યાના અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્વાનો ! યુવમ્-તમે જે અશ્વિના-અગ્નિ અને વાયુ જનાય-મનુષ્ય સમૂહને માટે દિવઃ-સૂર્યના જ્યોતિઃ-પ્રકાશને આ, ચક્રથુઃ-સારી રીતે સિદ્ધ કરો છો **ઇત્યા**-એટલા માટે નઃ-અમારા માટે શ્લોકમ્-શ્રેષ્ઠ વાણી અને ઋર્જમ્-પરાક્રમ અને અન્નાદિ પદાર્થોને આ, વહતમ્-સર્વ રીતે પ્રાપ્ત કરાવો. (૧૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ, કે વાયુ અને વિદ્યુત્ વિના સૂર્ય પ્રકાશ થતો નથી અને તે બન્નેની વિદ્યા તથા તેનાથી ઉપકાર ગ્રહણ કર્યા વિના કોઈને વિદ્યાની સિદ્ધિ થતી નથી. (૧૭)

एह देवा मयोभुवा दस्त्रा हिरण्यवर्त्तनी । उषर्बुधो वहन्तु सोमपीतये ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જે દેવા-દિવ્યગુણયુક્ત મયોભુવા-સુખની ભાવના કરનારા હિરણ્યવર્તની-પ્રકાશના વર્તનને રાખીને તથા દસ્ત્રા-વિદ્યાના ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરીને સમસ્ત દુઃખનો વિનાશ કરનાર અગ્નિ, વાયુ ઉષર્બુધઃ-પ્રભાતવેળાને જાગૃત કરનારા સૂર્યના કિરણોને પ્રકટ કરે છે, તેનાથી સોમપીતયે-જે વ્યવહારમાં પુષ્ટિ, શાન્તિ આદિ તથા ગુણયુક્ત પદાર્થોનું પાન કરવામાં આવે છે, તેના માટે સર્વ મનુષ્યો સામર્થ્ય ઇહ-આ સંસારમાં આવહન્તુ-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરે. (૧૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા દિવસ ઉગતા-ઉત્પન્ન થતા પણ અગ્નિ અને વાયુ વિના પદાર્થોનો ભોગ પ્રાપ્ત કરી શકાતો નથી, તેથી એ (અગ્નિ અને વાયુથી ઉપકાર ગ્રહણનું) કાર્ય નિત્ય કરવું જોઈએ. (૧૮)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઊષા અને અશ્વિ પદાર્થોના ગુણોનાં વર્ણનથી પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે આ સૂક્તાર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૯૨)

સૂક્ત-૯૩

अग्नीषोमाविमं सु मे शृणुतं वृषणा हवम् ।

प्रति सूक्तानि हर्यतं भवतं दाशुषे मयः ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણા-વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષાના દાતા અગ્નીષોમૌ-અગ્નિ અને ચંદ્રમાની સમાન વિશેષ જ્ઞાન અને શાન્તિ ગુણયુક્ત ભણાવનાર અને પરીક્ષા લેનાર વિદ્વાનો ! તમે બન્ને મે-મારા પ્રતિસૂક્તાનિ-જેમ શ્રેષ્ઠ અર્થ ઉચ્ચારણ કરવામાં આવે છે તે ગાયત્રી આદિ છંદોથી યુક્ત વેદસ્થ સૂક્તો અને ઇમમ્-એ હવમ્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વિદ્યાના શબ્દ, અર્થ અને સંબંધયુક્ત વચનને સુશ્રુણુતમ્-સારી રીતે સાંભળો દાશુષે-અને ભણવામાં મન આપનાર મારી વિદ્યાર્થી માટે મયઃ-સુખની હર્યતમ્-

કામના કરો, આ રીતે વિદ્યાના પ્રકાશક **ભવતમ્**-થાઓ. (૧)

ભાવાર્થ : કોઈપણ મનુષ્યને વિદ્યા ભણાવ્યા અને પરીક્ષા લીધા વિના પ્રાપ્ત થતી નથી અને કોઈ પણ મનુષ્ય પૂર્ણ વિદ્યા વિના બીજાને ભણાવી અથવા પરીક્ષા લઈ શકતો નથી; અને એ વિદ્યા વિના સર્વ સુખો મળતાં નથી, તેથી વિદ્યા પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. (૧)

અગ્નીષોમા યો અદ્ય વામિદં વચઃ સપર્યતિં ।

તસ્મૈ ધત્તં સુવીર્યં ગવાં પોષં સ્વશ્વ્યમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે **અગ્નિષોમૌ**-અધ્યાપક અને સુપરીક્ષક વિદ્વાનો ! **યઃ**-જે ભણનાર **અદ્ય**-આજ **વામ્**-તમારા **ઇદમ્**-એ **વચઃ**-વિદ્યાના વચનને **સપર્યતિં**-સેવે **તસ્મૈ**-તેને માટે **સ્વશ્વ્યમ્**-જે શ્રેષ્ઠ ઘોડાઓથી યુક્ત **સુવીર્યમ્**-સર્વોત્તમ બળ જે વિદ્યાભ્યાસથી થાય તે **ગવામ્**-ઈન્દ્રિય અને ગાય આદિ પશુઓના **પોષમ્**-સર્વથા શરીર અને આત્માની પુષ્ટિ કરનારા સુખને **ધત્તમ્**-પ્રદાન કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જે બ્રહ્મચારી વિદ્યા ભણાવનાર અને પરીક્ષા કરનાર પ્રત્યે ઉત્તમ પ્રેમ રાખીને, તે બન્નેનો નિત્ય સંગ કરે છે, તે જ મહાવિદ્વાન બનીને સર્વ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨)

અગ્નીષોમા ય આહુતિં યો વાં દાશાબ્દ્વિષ્કૃતિમ્ ।

સ પ્રજયા સુવીર્યં વિશ્વમાયુર્વ્યંશનવત્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : **યઃ**-જે સર્વનું હિત ચાહનાર અને **યઃ**-જે યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરનાર મનુષ્ય **અગ્નીષોમા**-ભૌતિક અગ્નિ અને વાયુ **વામ્**-એ બન્નેની મધ્યમાં **હવિષ્કૃતિમ્**-હોમ કરવા યોગ્ય પદાર્થોનાં કારણ રૂપ **આહુતિમ્**-ઘૃતાદિ સર્વોત્તમ સુગંધિત આદિ પદાર્થોથી યુક્ત આહુતિ **દાશાત્**-આપે, **સઃ**-તે **પ્રજયા**-શ્રેષ્ઠ સન્તાનયુક્ત પ્રજાથી **સુવીર્યમ્**-શ્રેષ્ઠ પરાક્રમ યુક્ત **વિશ્વમ્**-સમગ્ર **આયુઃ**-આયુને **વ્યશ્નવત્**-પ્રાપ્ત થાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો વાયુ, વર્ષા, જળ અને ઔષધિની શુદ્ધિ માટે સુસંસ્કૃત હવિનો અગ્નિમાં હોમ કરીને, ઉત્તમ સોમલતા આદિને પ્રાપ્ત કરીને પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, તેઓ શરીર અને આત્માના બળથી યુક્ત થઈને પૂર્ણ સુખકારક આયુને પ્રાપ્ત કરે છે, અન્ય નહિ. (૩)

અગ્નીષોમા ચેતિ તદ્વીર્યં વાં યદમુષ્ણીતમવસં પ્ણિં ગાઃ ।

અવાતિરતં બૃસયસ્ય શેષોઽવિન્દતં જ્યોતિરેકં બહુભ્યઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે **અગ્નીષોમા**-વાયુ અને વિદ્યુત્-યત્-જે **અવસમ્**-રક્ષા આદિ **પ્ણિમ્**-વ્યવહારને **અમુષ્ણીતમ્**-ચોરવત્ પ્રસિદ્ધ-અપ્રસિદ્ધ ગ્રહણ કરીને, **ગાઃ**-સૂર્યના કિરણોનો વિસ્તાર કરીને, **અવાતિરતમ્**-અંધકારનો વિનાશ કરીને, **બહુભ્યઃ**-અનેક પદાર્થોથી **એકમ્**-એક **જ્યોતિઃ**-સૂર્યના પ્રકાશને **અવિન્દતમ્**-પ્રાપ્ત કરાવે

સૂક્ત-૯૩

છે. જેને વૃસયસ્ય-ઢાંકનાર સૂર્યના શેષ:-અવશેષ ભાગ લોકોને પ્રાપ્ત થાય છે; વામ્-તેના તત્-તે વીર્યમ્-પરાક્રમ ચેતિ-વિદિત છે-સર્વ કોઈ જાણે છે. (૪)

ભાવાર્થ : જેટલું (પણ) પ્રસિદ્ધ અંધકારનું નિવારક અને સર્વ લોકોને પ્રકાશિત કરનાર તેજ ઉત્પન્ન થાય છે, તે સર્વ કારણરૂપ વાયુ અને વિદ્યુતથી થાય છે, એમ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૪)

યુવમેતાનિ દિવિ રોચનાન્યગ્નિશ્ચ સોમ સક્રતૂ અધત્તમ્ ।

યુવં સિન્ધૂર્ભિશસ્તેરવદ્યાદગ્નીષોમાવમુજ્વતં ગૃભીતાન્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : યુવમ્-એ સક્રતૂ-એક સમાન કામ કરનારા બે અર્થાત્ અગ્નિ:-વિદ્યુત્-ચ-અને સોમ-બહુ જ સુખ ઉત્પન્ન કરનારા વાયુ દિવિ-તારાગણમાં જે રોચનાનિ-પ્રકાશ છે, એતાનિ-એને અધત્તમ્-ધારણ કરે છે. યુવમ્-તે બન્ને સિન્ધૂન્-સમુદ્રને ધારણ કરીને અર્થાત્ તેના જળને સૂકવે છે, તે ગૃભીતાન્-નદી, મોટી નદીઓ અને સમુદ્રોને તેઓ અગ્નીષોમા-વિદ્યુત્ અને વાયુ અવદ્યાત્-નિદિત અભિશસ્તે:-તેના પ્રવાહરૂપ રમણને રોકનારા હેતુથી અમુજ્જતમ્-છોડે છે અર્થાત્ વર્ષાના માટે તેનાથી લીધેલ-શોષિત જળને પૃથિવી પર છોડે છે-વરસાવે છે. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ, કે વાયુ અને વિદ્યુત્ જ સર્વ લોકોનાં સુખ અને ધારણ આદિ વ્યવહારોમાં હેતુ હોય છે. (૫)

આન્યં દિવો માતરિશ્વા જભારામશ્નાદન્યં પરિ શ્યેનો અદ્રેઃ ।

અગ્નીષોમા બ્રહ્મણા વાવૃધાનોરું યજ્ઞાર્ય ચક્રથુરુ લોકમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે બ્રહ્મણા-પરમેશ્વરથી વાવૃધાના-ઉન્નતિ પામેલ અગ્નિષોમા-અગ્નિ અને વાયુ યજ્ઞાય-જ્ઞાન અને કર્મમય યજ્ઞને માટે ઉસ્મ્-અનેક પ્રકાર લોકમ્-જોવામાં આવે છે તે લોક સમૂહને ચક્રથુઃ-પ્રકટ કરે છે, તેમાંથી માતરિશ્વા-વાયુ જે આકાશમાં શયન કરનાર છે, તે દિવ:-સૂર્ય આદિ લોકથી અન્યમ્-બીજા અપ્રસિદ્ધ કારણ લોક છે તેને આ, જભાર-ધારણ કરે છે; તથા શ્યેન:-વેગવાન ઘોડા સમાન વર્તનાર અગ્નિ અદ્રે:-મેઘથી અમશ્નાત્-મંથન કરે છે, તેને જાણીને ઉપયોગ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! એ વાયુ અને વિદ્યુત્ના બે સ્વરૂપ છે. એક કારણરૂપ અને બીજું કાર્ય રૂપ. તેમાં જે 'કારણ' નામવાળો છે, તે વિશેષ જ્ઞાન દ્વારા જાણવા યોગ્ય છે અને જે કાર્યનામવાળો છે, તે કાર્યનામક વાયુના દ્વારા અથવા અગ્નિ દ્વારા કારણ નામક (વાયુ અથવા અગ્નિ)માં તમે પ્રવેશ કરો. એજ સરળ માર્ગ છે, કે 'કાર્ય' ના દ્વારા 'કારણ' માં પ્રવેશ કરવામાં આવે, તેમ તમે જાણો. (૬)

अग्नीषोमा हविषः प्रस्थितस्य वीतं हर्यतं वृषणा जुषेथाम् ।

सुशर्माणा स्ववसा हि भूतमथा धत्तं यजमानाय शं योः ॥ ७ ॥

पદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે વૃષણા-વર્ષા થવામાં નિમિત્ત સુશર્માણા-શ્રેષ્ઠ સુખ કરનારા અગ્નીષોમા-પ્રસિદ્ધ વાયુ અને અગ્નિ પ્રસ્થિતસ્ય-દેશ દેશાન્તરમાં પહોંચાડનાર હવિષઃ-હોમેલ ધી આદિને વીતમ્-વ્યાપ્ત થતાં, હર્યતમ્-પ્રાપ્ત થતાં, જુષેથામ્-સેવન કરતા અને સ્વવસા-ઉત્તમ રક્ષક ભૂતમ્-હોય છે. અથ-તદનન્તર હિ-એ કારણે યજમાનાય-જીવને માટે અનંત શમ્-સુખને ધત્તમ્-ધારણ કરે છે, તથા યોઃ-જે પદાર્થોને પૃથક્-પૃથક્ કરે છે, તેનો સારી રીતે ઉપયોગ કરો. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા અગ્નિમાં જેટલા પણ સુગંધ આદિથી યુક્ત દ્રવ્યો હોમવામાં આવે છે, તે વાયુ દ્વારા આકાશમાં પહોંચીને મેઘ સમૂહમાં રહેલ જળને શુદ્ધ કરીને, સર્વ પ્રાણીઓનાં સુખના કારણ બનીને ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષને સિદ્ધ કરનાર બને છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૭)

યો અग्नीષોમા હવિષા સપર્યાદૈવદ્રીચા મનસા યો ઘૃતેન ।

તસ્ય વ્રતં રક્ષતં પાતમંહસો વિશે જનાય મહિ શર્મં યચ્છતમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે વિદ્વાન મનુષ્ય દેવદ્રીચા-ઉત્તમ વિદ્વાનોનો સત્કાર કરીને મનસા-મનથી વા ઘૃતેન-ધી અને જળ તથા હવિષા-સુસંસ્કૃત કરેલ હવિથી અગ્નીસોમા-વાયુ અને અગ્નિનું સપર્યાત્-સેવન કરે તથા યઃ-જે ક્રિયા કરનાર મનુષ્ય એના ગુણોને જાણે, તસ્ય-તે બન્નેના વ્રતમ્-સત્ય ભાષણ આદિ સ્વભાવની એ બન્ને રક્ષતમ્-રક્ષા કરે છે, અંહસઃ-ક્ષુધા અને જવર આદિ રોગોને પાતમ્-નષ્ટ કરીને બચાવે છે, વિશે-પ્રજા અને જનાય-સેવકજનોને માટે મહિ-અત્યંત પ્રશંસા કરવા યોગ્ય શર્મ-સુખ વા ધરને યચ્છતમ્-પ્રદાન કરે છે. (૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિ હોત્ર-હવન આદિ કર્મથી વાયુ, વર્ષા અને જળની શુદ્ધિ દ્વારા પદાર્થોને શુદ્ધ-પવિત્ર કરે છે, તેઓ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે. (૮)

અગ્નીષોમા સવેદસા સહૃતી વનતં ગિરઃ । સં દૈવત્રા બંભૂવથુઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : જે સહૃતી-એક સમાન વાણીવાળા સવેદસા-સમ્યક્-હોમેલ પદાર્થયુક્ત અગ્નિષોમા-યજ્ઞ ફળને સિદ્ધ કરનારા અગ્નિ અને વાયુ દેવત્રા-વિદ્વાન વા દિવ્ય ગુણોમાં સમ્બંભૂવથુઃ-સંભવિત થાય છે, તેઓ ગિરઃ-વાણીઓનું વનતમ્-સમ્યક્ સેવન કરે છે. (૯)

ભાવાર્થ : યજ્ઞ આદિની ક્રિયાઓ દ્વારા વાયુની શુદ્ધિના વિના પ્રાણીઓને સુખ સંભવ નથી. તેથી મનુષ્યોએ તેને નિત્ય કરવા જોઈએ. (૯)

અગ્નીષોમાવનેન વાં યો વાં ઘૃતેન દાર્શતિ । તસ્મૈ દીદયતં બૃહત્ ॥ ૧૦ ॥

૨૪૦વેદભાષ્ય

૩૯૭

સૂક્ત-૯૩

પદાર્થ : ય:-જે મનુષ્ય વામ્-એની મધ્યમાં અનેન-એ ઘૃતેન-ઘી વા જળથી આહુતિઓ આપે છે વા વામ્-તેની ઉત્તેજનાથી ઉપકારોને ગ્રહણ કરે છે તેને માટે અગ્નીષોમા-વિદ્યુત્ અને વાયુ વૃહત્-મહાન વિજ્ઞાન અને સુખને દીદયતમ્-પ્રકાશિત કરે છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ક્રિયા રૂપી યજ્ઞોનું અનુષ્ઠાન કરે છે, તેઓ આ સંસારમાં અત્યંત સૌભાગ્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૦)

અગ્નીષોમાવિમાનિ નો યુવં હૃવ્યા જુજોષતમ્ । આ યાતમુપ ન્ઃ સર્વા ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : યુવમ્-જે અગ્નીષોમા-સમસ્ત મૂર્તિમાન પદાર્થોનો સંયોગ કરનારા અગ્નિ અને વાયુ ન્ઃ-અમને ઇમાનિ-એ હૃવ્યા-દેવા-અને લેવા યોગ્ય પદાર્થોનું જુજોષતમ્-વારંવાર સેવન કરે છે, તેઓ સર્વા-યજ્ઞનો વિશેષ વિચાર કરનારા ન્ઃ-અમને ઉપ, આ, યાતમ્-સારી રીતે મળે છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જ્યારે યજ્ઞથી સુગંધિત આદિ દ્રવ્યયુક્ત અગ્નિ, વાયુ સર્વ પદાર્થની સમીપ મળીને તેમાં સ્પર્શ કરે છે; ત્યારે સર્વની પુષ્ટિ થાય છે. (૧૧)

અગ્નીષોમા પિપૃતમર્વતો ન્ આ પ્યાયન્તામુસ્ત્રિયા હૃવ્યસૂદઃ ।

અસ્મે બલાનિ મઘવત્સુ ધત્તં કૃણુતં નો અધ્વરં શ્રુષ્ટિમન્તમ્ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે રાજા-પ્રજાના પુરુષો ! તમે અગ્નીષોમા-પાલનને માટે અગ્નિ અને વાયુની સમાન ન્ઃ-અમારા અર્વતઃ-ઘોડાઓનું પિપૃતમ્-પાલન કરો, જેમ હૃવ્યસૂદઃ-દૂધ, દહીં આદિ પદાર્થોને આપનારી સ્ત્રિયાઃ-ગાયો આ, પ્યાયન્તામ્-પુષ્ટ થાય છે, તેમ ન્ઃ-અમને શ્રુષ્ટિમન્તમ્-શીઘ્ર બહુજ સુખને માટે અધ્વરમ્-વ્યવહારરૂપી યજ્ઞને મઘવત્સુ-પ્રશંસિત ધનયુક્ત સ્થાન, વ્યવહાર વા વિદ્વાનોમાં કૃણુતમ્-પ્રકટ કરો, અસ્મે-અમારા માટે બલાનિ-બળોને ધત્તમ્-ધારણ કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : વાયુ અને વિદ્યુત્ વિના કોઈના બળ અને પુષ્ટિ થતાં નથી, તેથી સુવિસ્તારપૂર્વક એનો કાર્યોમાં ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૧૨)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વાયુ અને વિદ્યુત્ના ગુણોનું વર્ણન કરવાથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૯૩)

સૂક્ત-૯૪

ઙ્મં સ્તોમમર્હતે જાતવેદસે રથમિવ સં મહેમા મનીષયા ।

ભદ્રા હિ ન્ઃ પ્રમતિરસ્ય સંસદ્યગ્ને સુખ્યે મા રિષામા વચં તવ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્યાદિ ગુણોથી વિખ્યાત વિદ્વાન ! જેમ વચમ્-અમે મનીષયા-વિદ્યા, ક્રિયા અને શિક્ષાથી ઉત્પન્ન થયેલ બુદ્ધિ અર્હતે-યોગ્ય જાતવેદસે-જે ઉત્પન્ન થયેલ જગતના પદાર્થોને જાણે

છ

વા-ઉત્પન્ન થયેલ કાર્યરૂપ દ્રવ્યોમાં વિદ્યમાન તે વિદ્વાનને માટે રથમિવ-જેમ વિહાર કરાવનાર વિમાન આદિ યાનને, તેમ ઇમમ્-કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત એ સ્તોમમ્-ગુણ કીર્તનને સંમહેમ-પ્રશંસિત કરે; વા અસ્ય-એ તવ-આપના સચ્ચે-મિત્રતાને માટે સંસદિ-જેમાં વિદ્વાન સ્થિત થાય છે, તે સભામાં ન:-અમારી ભદા:-કલ્યાણકારક પ્રમતિ:-પ્રબળ બુદ્ધિ છે, તેને હિ-જ મા, રિષામા-નષ્ટ ન કરો, તેમ આપ પણ નષ્ટ ન કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ (લોકો) શિષ્ય વિદ્યાર્થી બનાવેલ વિમાન આદિ યાનોને સમ્યક્ સિદ્ધ કરીને મિત્રોનો સત્કાર કરે, તેમ જ પુરુષાર્થથી વિદ્વાનોનો સત્કાર કરે.

જ્યારે-જ્યારે સભાસદ સભામાં બેસે, ત્યારે ત્યારે હઠ અને દુરાગ્રહનો ત્યાગ કરીને સર્વના કલ્યાણકારી કાર્યોનો ત્યાગ ન કરે.

જે-જે અગ્નિ આદિ પદાર્થોમાં વિજ્ઞાન છે, તેને સર્વની સાથે મિત્રભાવથી વર્તીને સર્વને બતાવે. તેના વિના મનુષ્યોનું હિત સંભવ નથી. (૧)

યસ્મૈ ત્વમાયજસે સ સાધત્યનર્વા ક્ષેતિ દધતે સુવીર્યમ્ ।

સ તૂતાવ નૈનમશ્નોત્યંહતિરગ્ને સચ્ચે મા રિષામા વ્યં તવ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સર્વ વિદ્યાના વિશેષ જ્ઞાતા વિદ્વાન ! અનર્વા-ઘોડાઓ વિના અગ્નિ આદિથી ચલાવેલ વિમાન આદિ યાનની સમાન ત્વમ્-આપ યસ્મૈ-જે આયજસે-સર્વથા સુખદાયક જીવને માટે રક્ષાને સાધતિ-સિદ્ધ કરો છો, સ:-તે સુવીર્યમ્-જે મિત્રોના કામમાં સર્વોત્તમ પરાક્રમ છે, તેને દધતે-ધારણ કરે છે અને તે તૂતાવ-તેની વૃદ્ધિ કરે છે, એનમ્-એ ઉત્તમ ગુણયુક્ત પુરુષને અંહતિ:-દરિદ્રતા ન, અશ્નોતિ-પ્રાપ્ત થતી નથી, સ:-તે ક્ષેતિ-સુખમાં રહે છે, એમ તવ-આપના સચ્ચે-મિત્રભાવમાં વચમ્-અમે મા, રિષામ્-દુઃખી ન થઈએ. (૨)

ભાવાર્થ : જે લોકો વિદ્વાનોની સભામાં અથવા અગ્નિ વિદ્યામાં મિત્રતાનું આચરણ કરે છે, તેઓ શરીર અને આત્માના પૂર્ણ બળને પ્રાપ્ત કરીને તથા સુખ સંપન્ન બનીને નિવાસ કરે છે, અન્ય નહિ. (૨)

શ્કેમ ત્વા સમિધં સાધયા ધિયસ્ત્વે દેવા હવિરદન્ત્યાહૃતમ્ ।

ત્વમાદિત્યાં આ વહ તાન્ હ્યુશ્મસ્યગ્ને સચ્ચે મા રિષામા વ્યં તવ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સર્વ વિદ્યાઓમાં કુશળ સભાધ્યક્ષ ! વચમ્-અમે ત્વા-આપનો આશ્રય લઈને સમિધમ્-જેથી સમ્યક્ પ્રકાશ થાય છે, તે ક્રિયાને કરી શ્કેમ-શકીએ. ત્વમ્-આપ અમારી ધિય:-

સૂક્ત-૯૪

બુદ્ધિ અને કર્મોને સાધ્ય-સિદ્ધ કરો. ત્વે-તમારા હયાતીમા આપના દેવ:-વિદ્વાનો આહુતમ્-સારી રીતે સ્વીકાર કરેલ હવિ:-ખાવા યોગ્ય અન્નનું અદન્તિ-ભોજન કરે છે, તેથી આપ આદિત્યાન્- અડતાલીસ વર્ષ બ્રહ્મચર્યને પૂરા કરેલ બ્રહ્મચારિયોને આ, વહ-પ્રાપ્ત કરો, તાન્-તેઓને હિ-જ અમે ઝમસિ-ચાહીએ ધીએ એવા તવ-આપના સખ્યે-મિત્ર ભાવમાં મા, રિષામ-દુઃખી ન થઈએ. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્વાનોના સંગનો આશ્રય કરીને વિદ્યા અને અગ્નિ-સંબંધી કાર્યોને સિદ્ધ કરવા માટે સહનશીલતા ધારણ કરે છે, તેઓ બુદ્ધિમાન અને ક્રિયાશીલ બનીને સુખી થાય છે. (૩)

ભરામેધ્મં કૃણવામા હ્વીંષિં તે ચિતયન્તઃ પર્વણાપર્વણા વયમ્ ।

જીવાતવે પ્રતરં સાધયા ધિયોઽને સુખ્યે મા રિષામા વયં તવ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! પર્વણાપર્વણા-સંપૂર્ણ સાધનોથી ચિતયન્તઃ-ગુણોને ચૂંટીને વયમ્-અમે તે-આપને માટે વા એ અગ્નિને માટે હ્વીંષિ-યજ્ઞને યોગ્ય જે પદાર્થ છે તેને સારી રીતે કૃણવામ-કરીએ અને ઇધમ્-ઈધન =બળતણ ભરામ-લાવીએ. આપ જીવાતવે-અમારા જીવનને માટે ધિયઃ-ઉત્તમ બુદ્ધિ વા કર્મોને પ્રતરમ્-અતિ શ્રેષ્ઠતા જેમ થાય તેમ સાધ્ય-સિદ્ધ કરો. એમ તવ-આપના વા એ ભૌતિક અગ્નિના સખ્યે-મિત્ર ભાવમાં વયમ્-અમે મા, રિષામ-દુઃખી ન થઈએ. (૪)

ભાવાર્થ : સેના, સભા અને પ્રજામાં રહેલ પુરુષોને જે સજ્જનને કારણે બુદ્ધિ અને પુરુષાર્થ વધે, તેને માટે સર્વ સાધનો-ઉપકરણોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ અને તેઓની સાથે મિત્રતાનો કદી પણ ત્યાગ ન કરવો જોઈએ. (૪)

વિશાં ગોપા અસ્ય ચરન્તિ જન્તવો દ્વિપચ્ચ યદુત ચતુષ્પદક્તુભિઃ ।

ચિત્રઃ પ્રકેત ઉષસો મહાં અસ્યગ્ને સુખ્યે મા રિષામા વયં તવ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-ઉત્તમ સુખોના વિજ્ઞાપક સભા આદિ કાર્યોના અધ્યક્ષ ! આપના રાજ્યમાં વા ઉત્તમ સુખોનું વિજ્ઞાન કરાવનારા અસ્ય-એ જગદીશ્વરની સૃષ્ટિમાં વિશામ્-પ્રજાજનના યત્-જે ગોપા:-પાવક ગુણ વા જન્તવઃ-મનુષ્ય ચરન્તિ-વિચરે છે; વા અક્તુભિઃ-પ્રસિદ્ધ કર્મ, પ્રસિદ્ધ માર્ગ અને પ્રસિદ્ધ રાત્રીઓની સાથે ઉષસઃ-દિવસોને પ્રાપ્ત થાય છે; વા જે દ્વિપત્-બે પગા જીવ ચ-વા પગાહીન સર્પ આદિ ઉત-અને ચતુષ્પત્-ચોપગા પશુ આદિ વિચરે છે તથા જે ચિત્રઃ-અદ્ભુત ગુણ-કર્મ-સ્વભાવયુક્ત પ્રકેતઃ-સર્વ વસ્તુઓના જ્ઞાતા જગદીશ્વર વા સભાધ્યક્ષ આપ મહાન્-સર્વોત્તમ અસિ-છો, તે તવ-આપના સખ્યે-મિત્ર ભાવથી વયમ્-અમે મા, રિષામ-કદી બેચેન ન થઈએ. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે પરમેશ્વરની અથવા સભાપતિ વિદ્વાનના મહિમાથી કાર્ય જગતની ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ અને પ્રલય થાય છે, તેની મિત્રતામાં કદી વિદ્વન ન કરવું જોઈએ. (૫)

ત્વમધ્વર્યુરુત હોતાસિ પૂર્વ્યઃ પ્રશાસ્તા પોતાં જનુષાં પુરોહિતઃ ।

विश्वा विद्वाँ आर्त्विज्या धीर पुष्यस्यर्णे सख्ये मा रिषामा वयं तव ॥ ६ ॥

पदार्थ : હે ધીર-ધારણ આદિ ગુણયુક્ત અગ્ને-ઉત્તમ જ્ઞાન દાતા પરમેશ્વર વા સભાધ્યક્ષ ! જે કારણે પૂર્વ્ય:-પૂર્વ મહાશયોને માટે અને ચાહેલ અધ્વર્યુ:-યજ્ઞના યથોક્ત વ્યવહારને યુક્ત વર્તનાર અને ચાહનાર હોતા-દેનાર, લેનાર પ્રશાસ્તા-ધર્મ, શ્રેષ્ઠ શિક્ષા અને ઉપદેશથી પ્રચાર કરનારા પોતા-પવિત્ર અને બીજાઓને પવિત્ર કરનારા પુરોહિત:-હિત પ્રસિદ્ધ કરનારા તથા વિદ્વાન્-યથાવત્ જ્ઞાતા ત્વમ્-આપ અસિ-છો; ઉત-અને જનુષા-ઉત્પન્ન થયેલ જગતની સાથે વિશ્વા-સમસ્ત આર્ત્વિજ્યા-ઋત્વિજોના ગુણ પ્રકાશક કામોને પુષ્યસિ-દેઢ કરો છો અને કરાવો છો, એથી તવ-આપના સખ્યે-મિત્રભાવમાં વયમ્-અમે મા, રિષામ-કદી દુઃખી ન થઈએ. (૬)

ભાવાર્થ : સર્વના અધિષ્ઠાતા પરમેશ્વર અથવા વિદ્વાનો વિના સંસારનાં પાલન આદિ કર્મો સંભવ નથી, તેથી મનુષ્યોએ તે (ઈશ્વર)ની દિવસ-રાત ઉપાસના અને એ (વિદ્વાનો)ની સંગતિ કરીને સુખી બનવું જોઈએ. (૬)

यो विश्वतः सुप्रतीकः सदृङ्ङसि दूरे चित्सन्तद्दिविति रोचसे ।

रात्र्याश्चिदन्धो अति देव पश्यस्यर्णे सख्ये मा रिषामा वयं तव ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-સત્ય પ્રકાશક અને અગ્ને-સમસ્ત જ્ઞાન પ્રદાતા સભાધ્યક્ષ ! જેમ ય:-જે સદૃઙ્-સમાન જોનાર ત્વમ્-આપ સુપ્રતીક:-ઉત્તમ પ્રતીતિ કરાવનાર અસિ-છો; વા મૂર્તિમાન પદાર્થોને પ્રકાશિત કરનાર દૂરે, ચિત્-દૂરમાં જ સન્-પ્રકટ થનાર સૂર્યરૂપથી જેમ તદ્દિવ-વિદ્યુત્ ચમકે છે તેમ વિશ્વત:-સર્વત્રથી અતિ-અત્યંત રોચસે-પ્રકાશો છો, કે જેના વિના રાત્ર્યા:-રાત્રિમાં અન્ધ;; ચિત્-આંધળાની સમાન અતિ, પશ્યસિ-અત્યંત દેખો-દેખાડો છો, તે અગ્નિના વા તવ-આપના સખ્યે-મિત્રભાવમાં વયમ્-અમે મા, રિષામ્-કદી પ્રીતિ રહિત ન થઈએ. (૭)

ભાવાર્થ : દૂર સ્થિત પણ સભાધ્યક્ષ ન્યાય વ્યવસ્થાના-પ્રકાશથી-જેમ વિદ્યુત્ અથવા સૂર્ય પોતાના પ્રકાશથી મૂર્ત દ્રવ્યોને પ્રકાશિત કરે છે-તેમ ગુણહીન પ્રાણીઓને પ્રકાશિત કરે છે. તેની સાથે કયા વિદ્વાનને મિત્રતા ન કરવી જોઈએ, પરંતુ સર્વએ કરવી જોઈએ. (૭)

पूर्वो देवा भवतु सुन्वतो रथोऽस्माकं शंसो अभ्यस्तु दूढ्यः ।

तदा जानीतोत पुष्यता वचोऽग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે દેવા:-વિદ્વાનો ! તમે જેથી અસ્માકમ્-અમે જે શિલ્પ વિદ્યાના જિજ્ઞાસુઓ છીએ તેનું પૂર્વ:-પ્રથમ સુખ કરનારા રથ:-વિમાનાદિ યાન દૂઢ્ય:-જેને અધિકાર નથી તેને દુઃખપૂર્વક વિચારવા યોગ્ય ભવતુ-છો તથા ઉક્ત ગુણવાળો રથ શંસ:-પ્રશંસનીય અભિ-આગળ અસ્તુ-છો, તત્-તે વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષાથી યુક્ત વચ:-વચનથી આ, જાનીત-આજ્ઞા આપો ઉત-અને તેનાથી આપ પુષ્યત-પુષ્ટ થાઓ તથા અમને પુષ્ટ કરો.

સૂક્ત-૯૪

હે અગ્ને-ઉત્તમ શિલ્પ વિદ્યાના જ્ઞાતા પરમ પ્રવીણ ! સુન્વત:-સુખથી અભિસિક્ત કરીને તવ-આપના વા એ ભૌતિક અગ્નિની સખ્યે-મિત્રતામાં વયમ્-અમે મા, રિષામ-કદી દુઃખી ન થઈએ. (૮)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે રીતે મનુષ્યોમાં આત્મવિદ્યા, શિલ્પવિદ્યા અને વ્યવહારવિદ્યા પ્રકાશિત થઈને સુખની વૃદ્ધિ થાય, તેવા તમે પ્રયત્નો કરો. (૮)

વૃધૈર્દુઃશંસાં અપ દૂઢ્યૌ જહિ દૂરે વા યે અન્તિ વા કે ચિંદત્રિણઃ ।

અર્થા યજ્ઞાય ગૃણતે સુગં કૃધ્યગ્ને સુખ્યે મા રિષામા વયં તવ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સભા, સેના, શાલા આદિના અધ્યક્ષ વિદ્વાન્ ! આપ જેમ દૂઢ્યઃ-દુષ્ટ બુદ્ધિવાળા અને દુઃશંસાન્-જેની દુઃખ આપનારી શિખામણ છે, તે ડાકુ આદિ અત્રિણઃ-શત્રુજનોને વધૈઃ-તાડનાઓથી અપ, જહિ-અપઘાત્ અર્થાત્ દુર્ગતિથી દુઃખ આપો અને શરીર વા-વા આત્મભાવથી દૂરે-દૂર વા-અથવા અન્તિ-સમીપમાં યે-જે કેચિત્-કોઈ અધર્મી શત્રુ રહેલ હોય તેને અપિ-પણ સુશિક્ષા વા પ્રબળ તાડનાઓથી સીધા કરો, એમ કરીને અથ-પશ્ચાત્ યજ્ઞાય-ક્રિયામય યજ્ઞને માટે ગૃણતે-વિદ્યાની પ્રશંસા કરીને પુરુષને યોગ્ય સુગમ્-જે કામમાં વિદ્યા પહોંચે છે તેને કૃધિ-કરો, એ કારણે એવા સમર્થ તવ-આપની સખ્યે-મિત્રતામાં વયમ્-અમે મા, રિષામ-દુઃખ ન પામીએ. (૮)

ભાવાર્થ : સભા આદિના અધ્યક્ષ આદિએ પ્રયત્નપૂર્વક પ્રજામાંથી દુષ્ટ ઉપદેશ તથા દુષ્ટ પઠન-પાઠન આદિ કર્મોનું નિવારણ કરીને દુરસ્થ તથા સમીપસ્થ મનુષ્યોને મિત્ર સમાન માનીને, સર્વ રીતે વિરોધ રહિત રાખવા જોઈએ. જેથી પરસ્પર નિશ્ચલ આનંદની વૃદ્ધિ થાય. (૮)

યદયુક્થા અરુષા રોહિતા રથે વાતજૂતા વૃષભસ્યેવ તે રવઃ ।

આદિન્વસિ વનિનો ધૂમકેતુનાગ્ને સુખ્યે મા રિષામા વયં તવ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : અગ્ને-સમસ્ત શિલ્પ વ્યવહારનું જ્ઞાન આપનાર ક્રિયાચતુર વિદ્વાન્ ! જે કારણે આપ યત્-જે તે-આપના વા એ અગ્નિના વૃષભસ્યેવ-પદાર્થોને લઈ જનારા બળવાન બળદની સમાન વા વાતજૂતા-પવન સમાન વેગવાન અસ્મા-સરળ સ્વભાવ રોહિતા-દેહ બળ આદિથી યુક્ત ઘોડાઓ રથે-વિમાનાદિ યાનોમાં જોડવા યોગ્ય છે, તેને અયુક્થાઃ-જોડવામાં આવે છે વા એ ભૌતિક અગ્નિ જોડવામાં આવે છે, તે રથની નીકળેલ જે રવઃ-શબ્દ =ધ્વનિ તેની સાથે રહેલ ધૂમકેતુના-જેમાં ધૂમાડાની પતાકા છે, તે રથથી સર્વ વ્યવહારોથી ઇન્વસિ-વ્યાપ્ત થાઓ છો વા એ ભૌતિક અગ્નિ ઉક્ત રીતે વ્યવહારોમાં વ્યાપ્ત થાય છે, તેથી આત્-પશ્ચાત્ વનિનઃ-જેનો સમ્યક્ વિભાગ વા સૂર્ય કિરણોનો સંબંધ છે તવ-તે આપના વા જે ભૌતિક અગ્નિને કિરણોનો સંબંધ છે તેની સખ્યે-મિત્રતામાં વયમ્-અમે મા, રિષામ-પીડિત ન થઈએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેથી શિલ્પી અને ભૌતિક સર્વ હિતકારી કાર્યોને સિદ્ધ કરી શકે છે, તેથી વિમાન આદિ યાનોની સંભાવના કરવી યોગ્ય છે. (૧૦)

अधं स्वनादुत बिभ्युः पत्रिणो द्रप्सा यत्ते यवसादो व्यस्थिरन् ।

सुगं तत्ते तावकेभ्यो रथेभ्योऽग्नें सुख्ये मा रिषामा वयं तव ॥ ११ ॥

पदार्थ : હે અગ્ને-સમસ્ત વિજ્ઞાન દાતા શિલ્પીન્ ! યત્-જ્યારે તે-તમારા યવસાદઃ-અન્નાદિ પદાર્થોને ખાનારાઓ દ્રપ્સાઃ-હર્ષયુક્ત સેવક વા જવાળા આદિ ગુણ સુગમ્-તે માર્ગ કે જેમાં સુખપૂર્વક જાય છે વિ-અનેક પ્રકારથી અસ્થિરન્-સ્થિર થાય. તત્-ત્યારે તે-આપના વા એ ભૌતિક અગ્નિના તાવકેભ્યઃ-જે આપના વા એ અગ્નિના સિદ્ધ કરેલ રથ છે, તે રથેભ્યઃ-વિમાન આદિ રથોની પત્રિણઃ-પક્ષીઓ સમાન શત્રુ બિભ્યુઃ-ભય પામે અઘ-તદનન્તર ઉત્-એક નિશ્ચયની સાથે જ તે રથોના સ્વનાત્-શબ્દથી પક્ષીઓની સમાન ભય પામેલ શત્રુ વિલય પામે છે, એમ તવ-આપની વા અગ્નિના સુખ્યે-મિત્રભાવમાં વયમ્-અમે મા, રિષામ-અપ્રસન્ન ન થઈએ. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોના દ્વારા જ્યારે આગ્નેય અસ્ત્રો અને વિમાન આદિ યાનોથી યુક્ત સેનાઓનું નિર્માણ કરીને, શત્રુ વિજયને માટે વેગપૂર્વક જઈને શસ્ત્રાસ્ત્રોના પ્રહારથી તથા હર્ષયુક્ત તુમુલ શબ્દોથી શત્રુઓની સાથે યુદ્ધ કરવામાં આવે છે, ત્યારે નિશ્ચિત વિજય થાય છે, એમ જાણવું જોઈએ. આ પ્રકારનો સ્થાયી વિજય નિશ્ચયથી વિદ્વાનોના વિરોધીઓની તથા અગ્નિ આદિની વિદ્યાથી રહિત લોકોથી કદી થઈ શકતો નથી. તેથી આ કાર્યને સદા કરવું જોઈએ. (૧૧)

अयं मित्रस्य वरुणस्य धायसेऽवयातां मरुतां हेळो अद्भुतः ।

मृडा सु नो भूत्वेषां मनः पुनरग्नें सुख्ये मा रिषामा वयं तव ॥ १२ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સમસ્ત જ્ઞાન દાતા સભા આદિના અધિપતિ ! જે કારણે આપને મિત્રસ્ય-મિત્ર વા વરુણસ્ય-શ્રેષ્ઠના ધાયસે-ધારણ વા સંતોષને માટે જે અયમ્-એ પ્રત્યક્ષ અવયાતામ્-ધર્મ વિરોધી મસ્તામ્-મરવા-જીવવાવાળા મનુષ્યોના અદ્ભુતઃ-હેઠ્ઠઃ-અનાદર કરેલ છે તેથી ઇષામ્-એ નઃ-અમારા મનઃ-મનને પુનઃ-વારંવાર સુમૃદ્-સારી રીતે આનંદિત કરો એમ ભૂતુ-થાઓ. એથી તવ-તમારા સુખ્યે-મિત્રભાવમાં વયમ્-અમે મા, રિષામ-ભેયેન ન થઈએ. (૧૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સભાપતિના જે 'શ્રેષ્ઠોનું પાલન અને દુષ્ટોનું તાડન' (રૂપ કર્મ છે) તેને જાણીને, સદા તે રીતે આચરણ કરવું જોઈએ. (૧૨)

देवो देवानामसि मित्रो अद्भुतो वसुर्वसूनामसि चारुरध्वरे ।

शर्मन्त्स्याम् तव सप्रथस्तमेऽग्नें सुख्ये मा रिषामा वयं तव ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-જગદીશ્વર વા વિદ્વાન્ ! જે કારણે આપ અધ્વરે-ન છોડવા યોગ્ય ઉપાસના રૂપી યજ્ઞ વા સંગ્રામમાં દેવાનામ્-દિવ્યગુણોથી પરિપૂર્ણ વા દિવ્યગુણયુક્ત પદાર્થોમાં દેવઃ-દિવ્ય ગુણ સંપન્ન અદ્ભુતઃ-આશ્ચર્યરૂપ ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવથી યુક્ત ચારુ-અત્યંત શ્રેષ્ઠ મિત્રઃ-અત્યંત સુખદાયક અને સમસ્ત દુઃખ વિનાશક અસિ-છો, તથા વસૂનામ્-વસવા અને વસાવનાર મનુષ્યોમાં વસુઃ-વસનાર

સૂક્ત-૯૪

અને વસાવનાર અસિ-છો. એ કારણે તવ-આપના સપ્રથસ્તમે-સારી રીતે વિસ્તૃત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવની સાથે વિદ્યમાન શર્મન્-સુખમાં વયમ્-અમે સારી રીતે નિશ્ચિત સ્યામ્-રહીએ અને તવ-આપના સચ્ચે-મિત્રભાવમાં કદી મા, રિષામ-બેચેન ન થઈએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વર અને વિદ્વાનોની સુખકારિણી મિત્રતા સારી રીતે સ્થિર હોતી નથી (?) તેથી એમાં અમારે મનુષ્યોએ સુસ્થિર બુદ્ધિની સાથે પ્રવૃત્ત થવું જોઈએ. (૧૩)

તત્તૈ ભદ્રં યત્સમિદ્ધુઃ સ્વે દમે સોમાહુતો જરસે મૃહ્યત્તમઃ ।

દધાસિ રત્નં દ્રવિણં ચ દાશુષેઽન્ને સચ્ચે મા રિષામા વ્યં તવ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે અને-સમસ્ત વિજ્ઞાન પ્રદાતા ઈશ્વર વા વિદ્વાન્ ! યત્-જે કારણે સ્વે-પોતાના દમે-દમન કરેલા સંસારમાં સમિદ્ધુઃ-સમ્યક્ પ્રકાશિત સોમાહુતઃ-તથા ઐશ્વર્યકારક ગુણ અને પદાર્થોથી વૃદ્ધિ પ્રાપ્ત કરેલ અગ્નિની સમાન મુહ્યત્તમઃ-અત્યંત સુખદાયક આપ સર્વ વિદ્વાનોથી જરસે-અર્ચન-પૂજનને પ્રાપ્ત થાઓ છો વા દાશુષે-ઉત્તમ સ્વભાવના કારણે પોતાનાં વર્તનથી મનુષ્યને માટે રત્નમ્-અતિ રમણીય દ્રવિણમ્-ચક્રવર્તી રાજ્ય આદિ કાર્યોમાં સિદ્ધ ધન ચ-અને વિદ્યા આદિ શ્રેષ્ઠ ગુણોને દધાસિ-ધારણ કરો છો, તત્-એ કારણે એવા તે-આપના ભદ્રમ્-સુખકારક સ્વભાવને વયમ્-અમે કદી મા, રિષામ-ભૂલીયે નહિ પરંતુ તવ-આપની સચ્ચે-મિત્રતામાં સારી રીતે સ્થિર રહીએ. (૧૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, સૃષ્ટિક્રમ અને પ્રમાણોથી સત્પુરુષોનાં, ઈશ્વરનાં અને વિદ્વાનોનાં કર્મ તથા સ્વભાવને ધારણ કરીને તથા સર્વ પ્રાણીઓની મિત્રતા કરીને સદા વિદ્યા, ધર્મ અને શિક્ષાની ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૧૪)

યસ્મૈ ત્વં સુદ્રવિણો દદાશોઽનાગાસ્ત્વમદિતે સર્વતાતા ।

યં ભદ્રેણ શર્વસા ચોદયાસિ પ્રજાવતા રાધસા તે સ્યામ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે સુદ્રવિણઃ-સર્વોત્તમ ધનના પ્રદાતા અને અદિતે-વિનાશ રહિત જગદીશ્વર વા વિદ્વાન્ ! જે કારણે ત્વમ્-આપ સર્વતાતા-સમસ્ત વ્યવહારમાં યસ્મૈ-જે મનુષ્યને માટે અનાગાસ્ત્વમ્-નિરપરાધતાને દદાશઃ-આપો છો તથા યમ્-જે મનુષ્યને ભદ્રેણ-સુખકારક શર્વસા-શારીરિક અને આત્મિક બળ તથા પ્રજાવતા-જેમાં પ્રશંસિત પુત્ર આદિ છે, તે રાધસા-વિદ્યા, સુવર્ણ આદિ ધનથી યુક્ત કરીને સમ્યક્ વ્યવહારમાં ચોદયાસિ-પ્રેરિત કરો છો, તેથી આપની વા વિદ્વાનોની શિક્ષામાં વર્તમાન જે અમે અનેક પ્રકારથી યત્ન કરીએ તે-તે અમે આ કાળમાં સ્થિર સ્યામ-થઈએ. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યમાં અન્તર્યામી ઈશ્વર પાપ ન કરવાના ભાવને પ્રકાશિત કરે છે, તે મનુષ્ય વિદ્વાનોના સંગથી પ્રેમ કરવાવાળો બનીને સર્વ પ્રકારના ધન તથા શુભ ગુણોને પ્રાપ્ત કરીને સદા સુખી થાય છે, તેથી એ કાર્યને અમે પણ નિત્ય કરીએ. (૧૫)

સ ત્વમગ્ને સૌભગત્વસ્ય વિદ્વાનસ્માકમાયુઃ પ્ર તિરેહ દૈવ ।

૪૦૪

અગ્નિવેદભાષ્ય

तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ १६ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-સર્વેએ કામના કરવા યોગ્ય અગ્ને-જીવન અને ઐશ્વર્ય પ્રદાતા જગદીશ્વર ! જે ત્વમ્-આપે ઉત્પન્ન કરેલ વા રોગ મુક્તિની ઓષધિ આપનારા વિદ્વાન જે આપે બતાવેલ મિત્ર:-પ્રાણ, વસ્ત્ર:-ઉદાન, અદિતિ:-ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થો, સિન્ધુ:-સમુદ્ર, પૃથિવી-ભૂમિ ઉત-અને દ્યૌ:-વિદ્યુતનો પ્રકાશ છે; તે ન:-અમારી મામહન્તામ્-ઉન્નતિનું કારણ બને તત્-અને તે સર્વ વૃત્તાન્ત અસ્માકમ્-અમને સૌભગત્વસ્ય-સર્વોત્તમ ઐશ્વર્યો આપવામાં આયુઃ-જીવન વા જ્ઞાન છે, ઇહ-આ કાર્યરૂપ જગતમાં સ:- તે વિદ્વાન્-સમસ્ત વિદ્યાની પ્રાપ્તિ કરાવનાર જગદીશ્વર આપ વા પ્રમાણપૂર્વક વિદ્યા દાતા વિદ્વાન તમે બન્ને પ્રતિર-સમ્યક્ રીતે દુઃખોથી તારો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરમેશ્વર અને વિદ્વાનોના આશ્રયથી પદાર્થવિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, આ સંસારમાં સૌભાગ્ય અને આયુની પ્રયત્નપૂર્વક વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર, સભાધ્યક્ષ અને અગ્નિના ગુણોનું વર્ણન છે, જેથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૯૪)

સૂક્ત-૯૫

द्वे विरूपे चरतः स्वर्थे अन्यान्या वत्समुप धापयेते ।

हरिरन्यस्यां भवति स्वधावाञ्छुक्रो अन्यस्यां ददृशे सुवर्चा ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જે વિસ્ત્રે-પ્રકાશ અને અંધકારના પૃથક્-પૃથક્ રૂપ તથા સ્વર્થે-ઉત્તમ પ્રયોજનવાળા દ્વે-બે = રાત અને દિવસ પરસ્પર ચરતઃ-વર્તાવ કરીને તથા અન્યાન્યા-પરસ્પર વત્સમ્-ઉત્પન્ન થયેલ સંસારનું ઉપધાપયેતે-ભોજન-પાન કરાવે છે. અન્યસ્યામ્-દિવસથી અન્ય રાતમાં સ્વધાવાન્-જે પોતાના ગુણથી ધારણ કરવામાં આવે છે, તે ઔષધિ આદિ પદાર્થોનો રસ જેમાં રહેલ છે એવા હરિ:-ઉષ્ણતા આદિ પદાર્થોનું નિવારણ કરનાર ચંદ્રમા ભવતિ-પ્રકટ થાય છે; વા અન્યસ્યામ્-રાતથી અન્ય દિવસ થનારી વેળામાં શુક્ર:-આતપવાન સુવર્ચા:-સમ્યક્ પ્રકાશક સૂર્ય દદૃશે-જોવામાં આવે છે તે રાત અને દિવસ સર્વદા વર્તમાન છે, એને રેખા ગણિત આદિ ગણિત વિદ્યાથી જાણીને તેનો મધ્યમાં ઉપયોગ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : દિવસ અને રાત કદી સમાપ્ત થતા નથી, પરંતુ બીજા દેશમાં સદા વર્તમાન રહે છે. જે કાર્ય રાતે કરવા યોગ્ય તથા જે દિવસમાં (કરવા યોગ્ય) હો., તેને આળસ રહિત ભાવથી કરીને મનુષ્યોએ સમસ્ત કાર્યો સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૧)

દશોમં ત્વષ્ટર્જનયન્ત્ ગર્ભમતન્દ્રાસો યુવતયો વિભૃત્રમ્ ।

તિગ્માનીકં સ્વયંશસં જનેષુ વિરોચમાનં પરિ ષીં નયન્તિ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે અતન્દ્રાસઃ-જે એક નિયમથી સાથે રહેવાથી આળસ રહિત આદિ ગુણોથી યુક્ત યુવતયઃ-યુવાન સ્ત્રીઓની સમાન પરસ્પર સાથે મળતા અથવા ન મળવાથી સર્વ ક્યારેક અજર, અમર રહેનારી દશ-દશ દિશાઓ ત્વષ્ટુઃ-વિદ્યુત્ વા વાયુના ઇમમ્-એ પ્રત્યક્ષ અહોરાત્ર-દિવસરાતથી પ્રસિદ્ધ ગર્ભમ્-સમસ્ત વ્યવહારના કારણરૂપ વિભૃત્રમ્-જે અનેક પ્રકારોની ક્રિયાઓને ધારણ કરેલ તિગ્માનીકમ્-જેમાં અત્યંત તીક્ષ્ણ સેનાજન વિદ્યમાન જે જનેષુ-ગણિત વિદ્યાના જાણનારા મનુષ્યોમાં વિરોચમાનમ્-અનેક રીતે પ્રકાશમાન સ્વયંશસમ્-અનેક ગુણ, કર્મ, સ્વભાવ અને પ્રશંસાયુક્ત સીમ્-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય તે દિવસ અને રાતના વ્યવહારને જનયન્ત-ઉત્પન્ન કરે અને પરિ-સર્વત્રથી નયન્તિ-સ્વીકાર કરે છે, તેને તમે જાણો. (૨)

ભાવાર્થ : નિશ્ચિત દેશ અને કાળથી રહિત, વ્યાપક સ્વરૂપવાળી, પૂર્વ આદિ ક્રમથી ઉત્પન્ન થનારી અને સર્વ વ્યવહારોને સિદ્ધ કરનારી દશ દિશાઓ છે, તેનાથી મનુષ્યોએ નિયત વ્યવહારોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. આ વિષયમાં કોઈએ વિરુદ્ધ વ્યવહાર ન કરવો જોઈએ. (૨)

ત્રીણિ જાના પરિ ભૂષન્ત્યસ્ય સમુદ્ર એકં દિવ્યેકમપ્સુ ।

પૂર્વામનુ પ્ર દિશં પાર્થિવાનામૃતૂન્પ્રશાસદ્વિ દધાવનુષ્ટુ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે ગણિત વિદ્યાવિદ્ મનુષ્યો ! જે દિવસ અને રાત પૂર્વામ્-પૂર્વ પ્ર, દિશમ્-પ્રદેશ જેનો મનુષ્ય ઉપદેશ કરે છે, તેને અનુષ્ટુ-તથા તેને અનુકૂળ પાર્થિવાનામ્-પૃથિવી અને અન્તરિક્ષમાં વિદિત થયેલા પદાર્થોની મધ્ય ઋતૂન્-વસંત આદિ ઋતુઓને પ્રશાસત્-પ્રેરણા કરતા અનુ-તદનન્તર તેનું વિ, દદૌ-વિધાન કરે છે, અસ્ય-એ દિવસ અને રાતનો એકમ્-એક પગ દિવિ-સૂર્યમાંસ એક સમુદ્રે-સમુદ્રમાં અને એકમ્-એક અપ્સુ-પ્રાણ આદિ વાયુઓમાં છે તથા એ દિવસ અને રાતના અંગ ત્રિણિ-ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાનના પૃથક્ ભાવથી ઉત્પન્ન જાના-મનુષ્યોમાં થતા વ્યવહારોને પરિ, ભૂષન્તિ-શોભિત કરે છે, એ સર્વને જાણો. (૩)

ભાવાર્થ : દિવસ-રાત આદિ (કાળના) અવયવોની સત્તા વિના ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન કાળોનું થવું સંભવ નથી. તેના વિના કોઈ ઋતુનું થવું પણ સંભવ નથી.

સૂર્ય અને અન્તરિક્ષ સ્થિત વાયુની ગતિથી કાળના અવયવોનો જે સમૂહ પ્રસિદ્ધ છે, તે સર્વને જાણીને, સર્વ મનુષ્યોએ વ્યવહારની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૩)

ક ઇમં વો નિણ્યમા ચિકેત વત્સો માતૃર્જનયત સ્વધાભિઃ ।

બહ્વીનાં ગર્ભો અપસામુપસ્થાન્મહાન્કવિર્નિશ્ચરતિ સ્વધાવાન્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે બહ્વીનામ્-અનેકો અન્તરિક્ષ અને ભૂમિ તથા દિશાઓ વા અપસામ્-જલોના ઉપસ્થાત્-

સમીપસ્થ વ્યવહારથી **ગર્ભ:**-સમ્યક્ આચ્છાદન કરનાર-ઢાંકનાર **સ્વધાવાન્**-જેમાં પ્રશંસિત પોતાના અંગો વિદ્યમાન છે **મહાન્**-વ્યાપ્તિ આદિ ગુણોથી યુક્ત **વત્સ:**-પરંતુ પોતાની વ્યાપ્તિથી સર્વોપરિ સર્વને ઢાંકનાર વા **કવિ:**-અનુક્રમે દૃષ્ટિગત થનાર સમય **નિ:**-**ચરતિ**-નિરંતર ચાલી રહેલ છે અને **સ્વધાભિ:**-સૂર્ય વા ભૂમિની સાથે **માતૃ:**-માતા સમાન પાલન કરનારી રાત્રિઓને **જનયત**-પ્રકટ કરે છે **ઇમમ્**-આ **નિણ્યમ્**-નિશ્ચયથી એક-સમાન રહેનાર સમયને **ક:**-કોણ મનુષ્ય **આ, ચિકેત**-સારી રીતે જાણી શકે ? **વ:**-એ સમયના અવયવો અર્થાત્ ક્ષણ, ઘડી, પ્રહર, દિવસ, રાત, માસ, વર્ષ આદિના સ્વરૂપને પણ કોણ જાણી શકે ? (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યને, જેનો બોધ પરમ સૂક્ષ્મ છે, જે સમસ્ત કાળ વિભાગોને પ્રકટ કરે છે અને કર્મોને વ્યાપ્ત કરે છે (એવો જે) સર્વત્ર એક રસ (વિદ્યમાન) કાળ છે, તેને કોઈ નિપુણ વિદ્વાન જ જાણી શકે છે, સર્વ નહિ, એમ જાણવું જોઈએ. (૪)

આવિષ્ટ્યો વર્દ્ધતે ચારુરાસુ જિહ્વાનામૂર્ધ્વઃ સ્વયંશા ઉપસ્થે ।

ઉભે ત્વષ્ટુર્બિભ્યતુર્જાર્યમાનાત્પ્રતીચી સિંહં પ્રતિ જોષયેતે ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે **જાયમાનાત્**-પ્રસિદ્ધ **ત્વષ્ટુ:**-છેદક અર્થાત્ સર્વની અવધિ પૂરી કરનાર સમયથી **ઉભે**-બન્ને-દિવસ અને રાત **બિભ્યતુ:**-સર્વને ડરાવે છે વા જેથી **પ્રતીચી**-પશ્ચિમ દિશા પ્રકટ થાય છે વા ઉક્ત રાત્રિ-દિવસ સર્વ વ્યવહારોનું **પ્રતિ, જોષયેતે**-સેવન તથા જે સમય **ઉપસ્થે**-કામ કરનારાઓની સમીપ **સ્વયંશા:**-પોતાની કીર્તિ અર્થાત્ પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરતા વા **જિહ્વાનામ્**-કુટિલોથી **ઋર્ધ્વ:**-ઉપર-ઉપર અર્થાત્ તેના શુભ કર્મોમાં વ્યતીત ન થતા **આસુ**-એ દિશાઓ વા પ્રજાજનોમાં **ચારુ**-સુંદર **આવિષ્ટ્ય:**- પ્રકટ થયેલ વ્યવહારોમાં પ્રસિદ્ધ **વર્ધતે**-અને ઉન્નતિને પામે છે, તે **સિંહમ્**-અમને-તમને સર્વના કાપનાર સમયને તમે **યથાવત્**-જાણો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, સૃષ્ટિની ઉત્પત્તિના સમયથી ઉત્પન્ન થયેલ અગ્નિ ઉપર જવાના સ્વભાવ વાળો છે અને જે દિશા આદિમાં પ્રવિષ્ટ રહેવાના વૃદ્ધિ પામીને સૂર્યના રૂપથી દિશાઓનો બોધક છે, તે પણ કાળથી ઉત્પન્ન થઈને કાળથી નષ્ટ પામે છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૫)

ઉભે ભદ્રે જોષયેતે ન મેને ગાવો ન વાશ્રા ઉપ તસ્થુરેવૈઃ ।

સ દક્ષાણાં દક્ષપતિર્બભૂવાઙ્જન્તિ યં દક્ષિણતો હૃવિર્ભિઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : **ભદ્રે**-સુખપ્રદ **ઉભે**-રાત અને દિવસ બન્ને **મેને**-પ્રીતિ કરતી સ્ત્રીઓની **ન**-સમાન **યમ્**-જે સમયનું **જોષયેતે**-સેવન કરે છે, **વાશ્રા:**-વાઇરડાને ચાહતી **ગાવ:**-ગાયોની **ન**-સમાન સમયના અને અંગ અર્થાત્ મહિનાઓ, વર્ષ આદિ **ેવૈ:**-સર્વ વ્યવહારને પ્રાપ્ત કરાવનારા ગુણોની સાથે **ઉપતસ્થુ:**-સમીપ થાય છે વા **દક્ષિણત:**-દક્ષિણાયન કાળના વિભાગથી **હૃવિર્ભિ:**-યજ્ઞ સામગ્રી કરીને જે સમયને વિદ્વાનજન **ઙ્જન્તિ**-ચાહે છે **સ:**-તે **દક્ષાણામ્**-વિદ્યા અને ક્રિયાની કુશળતાઓમાં ચતુર વિદ્વાન અત્યુત્તમ પદાર્થોમાં **દક્ષપતિ:**-વિદ્યા તથા ચતુરાઈને પાળનારા **બભૂવ**-થાય છે. (૭)

સૂક્ત-૯૫

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ રાત-દિવસ આદિ કાળના અવયવોનું સમ્યક્ સેવન કરવું જોઈએ. તેમાં ધર્માનુસાર યજ્ઞ કર્મ આદિ શ્રેષ્ઠ વ્યવહારો જ કરવા જોઈએ, અન્ય અધર્મ આદિ નહિ. (૬)

ઉદ્યંયમીતિ સવિતેવ બાહૂ ઉભે સિચૌ યતતે ભીમ ઋજ્જન્ ।

ઉચ્છ્રુક્રમત્કમજતે સિમસ્માન્નવા માતૃભ્યો વસના જહાતિ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ભીમ:-ભયંકર ઋજ્જન્-સર્વને પ્રાપ્ત થતો કાળ માતૃભ્ય:-માન કરનાર ક્ષણ આદિ પોતાના અવયવોથી સવિતેવ-જેમ સૂર્યલોક પોતાની આકર્ષણ શક્તિથી ભૂગોળ આદિ લોકોને ધારણ કરે છે, તેમ ઉદ્યંયમીતિ-વારંવાર નિયમમાં રાખે છે. બાહૂ-બળ અને પરાક્રમ વા ઉભે-સૂર્ય અને પૃથિવી સિચૌ-વા વર્ષા દ્વારા સિંચનાર વાયુ અને અગ્નિને યતતે-વ્યવહારમાં લાવે છે તે કાળ અત્કમ્-નિરંતર શુક્રમ્-પરાક્રમને સિમસ્માત્-સમસ્ત જગતથી ઉદ્-ઉપરની શ્રેણીને અજતે-પહોંચાડે છે અને નવા-નવીન વસના-આચ્છાદનને જહાતિ-છોડે છે, એ જાણો. (૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે કાળથી સૂર્ય આદિ જગત ઉત્પન્ન થાય છે અને ક્ષણ આદિ દ્વારા સર્વને ઠાંકે છે, સર્વ નિયમોનો નિમિત્ત છે તથા સર્વ પદાર્થોની પ્રવૃત્તિનો આધાર છે, તેને જાણીને તમારે ઠીક સમય પર કાર્યો કરવા જોઈએ. (૭)

ત્વેષં રૂપં કૃણુત્ ઉત્તરં યત્સંપૃજ્ઞાનઃ સદને ગોભિરુદ્ધિઃ ।

કવિર્બુદ્ધં પરિ મર્મૃજ્યતે ધીઃ સા દેવતાતા સમિતિર્બભૂવ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ યત્-જે સંપૃજ્ઞાન:-સમ્યક્ પરિચય કરતા-કરાવતા કવિ:-જેના ક્રમથી દર્શન થાય છે, તે સમય સદને-ઘરમાં ગોભિ:-સૂર્યનાં કિરણો વા અદ્ધિ:-પ્રાણ આદિ વાયુઓથી ઉત્તસ્મ્-ઉત્પન્ન થનાર ત્વેષમ્-મનોહર બુદ્ધમ્- પ્રાણ અને બળ સંબંધી વિજ્ઞાન અને સ્વમ્-સ્વરૂપને કૃણુતે-કરે છે તથા જે ધી:-ઉત્તમ બુદ્ધિ વા ક્રિયા પરિ-મર્મૃજ્યતે-સર્વ રીતે શુદ્ધ થાય છે સા-તે દેવતાતા-ઈશ્વર અને વિદ્વાનોની સાથે સમિતિ:-વિશેષ જ્ઞાનની મર્યાદા બભૂવ-થાય છે, એ સમસ્ત ઉક્ત વ્યવહારને જાણીને બુદ્ધિને ઉત્પન્ન કરે. (૮)

ભાવાર્થ : કાળ વિના કાર્ય સ્વરૂપ ઉત્પન્ન થઈને લીન થતું નથી. બ્રહ્મચર્ય આદિ કાળના સેવન વિના સમસ્ત શાસ્ત્રોના જ્ઞાનથી યુક્ત બુદ્ધિ ઉત્પન્ન થતી નથી. તેથી મનુષ્યોએ કાળના પરમ સૂક્ષ્મ સ્વરૂપને જાણીને તેને વ્યર્થ ન ગુમાવવો જોઈએ, પરંતુ આળસ ત્યાગીને સમયાનુસાર વ્યાવહારિક અને પારમાર્થિક કાર્યો સદા કરવા જોઈએ. (૮)

ઉરુ તે ઋયઃ પર્યેતિ બુદ્ધં વિરોચમાનં મહિષસ્ય ધામ્ ।

વિશ્વેંભિરગ્ને સ્વયંશોભિરુદ્ધોઽદબ્ધેભિઃ પાયુભિઃ પાહ્યસ્માન્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! તે-આપના સંબંધથી જેમ સૂર્ય તેમદ્બ્ધ:-પ્રકાશમાન થયેલ સમય

સૂક્ત-૯૬

કોઈ પણ સમય અનુસાર કાર્ય કર્યા વિના પ્રાણ આદિથી યથાવત્ રીતે ઉપકાર કરી શકતા નથી. તેથી આ સર્વ જાણીને તથા સમસ્ત કાર્યોની સિદ્ધિ કરીને સદા આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૧૧)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં કાળ અને અગ્નિના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૮૫)

સૂક્ત-૯૭

સ પ્રત્લથા સહસા જાયમાનઃ સદ્યઃ કાવ્યાનિ બલ્ધન્ત વિશ્વાં ।

આપ્શ્ચ મિત્રં ધિષ્ણાં ચ સાધન્દેવા અગ્નિં ધારયન્દ્રવિણોદામ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે દેવાઃ-વિદ્વાનો દ્રવિણોદામ્-દ્રવ્યોના દાતા અગ્નિમ્-પરમેશ્વર વા ભૌતિક અગ્નિને ધારયન્-ધારણ કરે છે-કરાવે છે. તે સર્વ કામોને સાધન્-સિદ્ધ કરે છે-કરાવે છે. તેના આપઃ-પ્રાણ ચ-અને વિદ્યાના અધ્યાપન આદિ કામ મિત્રમ્-મિત્ર ધિષ્ણા-ચ-અને બુદ્ધિ તથા હસ્તક્રિયાથી સિદ્ધ થાય છે. જે મનુષ્ય સહસા-બળથી પ્રત્લથા-પ્રાચીનોની સમાન જાયમાનઃ-પ્રકટ થઈને વિશ્વા-સમસ્ત કાવ્યાનિ-વિદ્વાનોને માટે કાવ્યોને સદ્યઃ-શીઘ્ર બદ્-યથાવત્ અધત્-ધારણ કરે છે, સઃ-તે વિદ્વાન બને છે અને સુખી થાય છે. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય બ્રહ્મચર્ય અને વિદ્યા પ્રાપ્તિ વિના વિદ્વાન બની શકતો નથી અને વિદ્વતા વિના પરમેશ્વર અને વિદ્યુતને જાણ્યા વિના કાર્ય કરી શકતો નથી, તેથી તેનું નિત્ય અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૧)

સ પૂર્વયા નિવિદાં કવ્યતાયોરિમાઃ પ્રજા અંજનયન્મનૂનામ્ ।

વિવસ્વતા ચક્ષસા દ્યામપ્શ્ચ દેવા અગ્નિં ધારયન્દ્રવિણોદામ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ જે પૂર્વયા-પ્રાચીન નિવિદા-વેદવાણી કવ્યતા-જેથી કવિતા આદિ કાર્યોનો વિસ્તાર કરે તેથી મનૂનામ્-વિચારશીલ પુરુષોથી સમીપ આયોઃ-સનાતન કારણથી ઇમાઃ-એ પ્રત્યક્ષ પ્રજાઃ-ઉત્પન્ન થનાર પ્રજાજનોને અંજનયન્-ઉત્પન્ન કરે છે; વા વિવસ્વતા-ચક્ષસા-સર્વ કાર્યોના દેખાડનાર સૂર્યથી દ્યામ્-પ્રકાશ, અપઃ-જળ, ચ-પૃથિવી વા ઓષધિ આદિ પદાર્થો તથા જે દ્રવિણોદામ્-ધન આપનારા અગ્નિમ્-પરમેશ્વરને દેવાઃ-આપ્ત વિદ્વાનજન ધારયન્-ધારણ કરે છે. સઃ-તે નિત્ય ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૨)

ભાવાર્થ : જ્ઞાન (અર્થાત્ ચેતના) વાન ઉત્પાદક વિના કોઈ જડ કાર્યરૂપ વસ્તુ સ્વયં ઉત્પન્ન થઈ શકતી નથી. તેથી (સર્વ જન) સર્વશક્તિમાન જગદીશ્વરને સમસ્ત સંસારના ઉત્પાદક માને. (૨)

તમીઠત પ્રથમં યજ્ઞસાધં વિશ્ આરીરાહુતમૃજ્જસાનમ્ ।

ઋર્જઃ પુત્રં ભરતં સૂપ્રદાનું દેવા અગ્નિં ધારયન્દ્રવિણોદામ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પ્રથમમ્-સમસ્ત ઉત્પન્ન જગતની પૂર્વ વર્તમાન યજ્ઞસાધમ્-વિજ્ઞાન યોગાભ્યાસ આદિ યજ્ઞોથી જાણવામાં આવતા ઋક્ષસાનમ્-વિવેક આદિ સાધનોથી સમ્યક્ સિદ્ધ કરાતા આહુતમ્-વિદ્વાનોથી સત્કારને પ્રાપ્ત આરીઃ-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય વિશઃ-પ્રજાજનો અને ભરતમ્-ધારણ વા પુષ્ટિ કરનાર સુપ્રદાનુમ્-જેનાથી જ્ઞાન પ્રદાન થાય છે, તે ઋર્જઃ-કારણરૂપ વાયુથી પુત્રમ્-પ્રસિદ્ધ થયેલ પ્રાણને ઉત્પન્ન કરનાર અને દ્રવિણોદામ્-ધન આદિ પદાર્થોના દાતા અગ્નિમ્-જગદીશ્વરને દેવાઃ-વિદ્વાનો ધારયન્-ધારણ કરે છે-કરાવે છે, તમ્-તે પરમેશ્વરની તમે નિત્ય ઈચ્છત-સ્તુતિ કરો. (૩)

ભાવાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ મનુષ્યો ! તમે જે ઈશ્વરને સર્વ જીવોને માટે સર્વ સૃષ્ટિઓને રચીને પ્રાપ્ત કરાવેલ છે અને જેને સૃષ્ટિને ધારણ કરનારા વાયુ અને સૂર્ય નિર્માણ કરેલ છે, તેને છોડીને અન્યની કદાપિ ઈશ્વરના રૂપમાં ઉપાસના કરો નહિ. (૩)

સ માતરિશ્ચા પુરુવારપુષ્ટિર્વિદ્ ગાતું તનયાય સ્વર્વિત્ ।

વિશાં ગોપા જનિતા રોદસ્યોર્દેવા અગ્નિં ધારયન્દ્રવિણોદામ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ જે ઈશ્વરે તનયાય-પોતાના પુત્રની સમાન જીવને માટે સ્વર્વિત્-સુખ પહોંચાડનારી માતુમ્-વાણીને વિદત્-પ્રાપ્ત કરાવેલ છે, પુસ્વારપુષ્ટિઃ-જેથી અત્યંત સમસ્ત વ્યવહારનો સ્વીકાર કરવાની પુષ્ટિ થાય છે, તે માતરિશ્ચા-અન્તરિક્ષમાં શયન કરનાર અને બહાર-અંદર રહેનાર વાયુ રચેલ છે, જે વિશામ્-પ્રજાજનોનું ગોપાઃ-પાલન અને રોદસ્યોઃ-પ્રકાશ અને અંધકારના દર્શક લોક સમૂહોના જનિતા-ઉત્પન્ન કરનાર છે જે દ્રવિણોદામ્-ધન દાતાની સમાન અગ્નિમ્-જગદીશ્વરને દેવાઃ-ઉક્ત વિદ્વાનો ધારયન્-ધારણ કરે છે, કરાવે છે. સઃ-તેને સર્વ દિવસ ઈષ્ટ દેવ માનવા યોગ્ય છે. (૪)

ભાવાર્થ : વાયુરૂપી નિમિત્ત વિના કોઈની પણ વાણી પ્રવૃત્ત થઈ શકતી નથી, તેમજ કોઈની પુષ્ટિ પણ થઈ શકતી નથી. ઈશ્વર વિના જગતની ઉત્પત્તિ અને રક્ષા થઈ શકતી નથી, એમ જાણવું જોઈએ. (૪)

નક્તોષાસા વર્ણમામેમ્યાને ધાયયેતે શિશુમેકં સમીચી ।

દ્યાવાક્ષામા રુક્મો અન્તર્વિ ભાતિ દેવા અગ્નિં ધારયન્દ્રવિણોદામ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેની સૃષ્ટિમાં વર્ણમ્-સ્વરૂપ અર્થાત્ ઉત્પન્ન માત્રને આમેમ્યાને-વારંવાર વિનાશ કરતા સમીચી-સંગને પ્રાપ્ત નક્તોષાસા-રાત અને દિવસ વા દ્યાવાક્ષામા-સૂર્ય અને પૃથિવી લોકને શિશુમ્-બાળકને ધાયયેતે-દૂધ પાન કરાવનારા માતા-પિતાની સમાન રસ આદિનું પાન કરાવે છે, જેની ઉત્પન્ન કરેલી વિદ્યુત્થી યુક્ત રુક્મઃ-સ્વયં પ્રકાશ સ્વરૂપ પ્રાણ અન્તઃ-સર્વની મધ્ય વિ, ભાતિ-વિશેષ પ્રકાશને પ્રાપ્ત થાય છે. જે દ્રવિણોદામ્-ધન આદિ પદાર્થ આપનારી સમાન એકમ્-અદ્વિતીયમાત્ર સ્વરૂપ અગ્નિમ્-પરમેશ્વરને દેવાઃ-આપ્ત વિદ્વાનો ધારયન્-ધારણ કરે છે અને કરાવે છે, તે જ સર્વના પિતા છે. (૫)

ભાવાર્થ : જે સ્તનપાન કરાવતા બાળકની પાસે રહેલ બે સ્ત્રીઓ દૂધપાન કરાવે છે, તેમ જ દિવસ

સૂક્ત-૯૬

અને રાત તથા સૂર્ય અને પૃથિવી છે. જેના નિયમથી એમ બને છે, તે (ઈશ્વર) સર્વનો ઉત્પાદક કેમ ન હોય ? (૫)

રાયો બુધ્નઃ સંગમનો વસૂનાં યજ્ઞસ્ય કેતુર્મન્મસાધનો વેઃ ।

અમૃતત્વં રક્ષમાણાસ એનં દેવા અગ્નિં ધારયન્દ્રવિણોદામ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! **વેઃ**-મનોહર **યજ્ઞસ્ય**-સમ્યક સમજાવવા યોગ્ય વિદ્યા બોધને **બુધ્નઃ**-સમજાવવા અને **કેતુઃ**-સર્વ વ્યવહારને અનેક પ્રકારથી જ્ઞાપક **મન્મસાધનઃ**-વા વિચારયુક્ત કામોને સિદ્ધ કરાવનાર તથા **રાયઃ**-વિદ્યા, ચક્રવર્તી રાજ્ય, ધન અને **વસૂનામ્**-તેત્રીસ દેવતાઓમાં અગ્નિ, પૃથિવી આદિ આઠ દેવતાઓને **સંગમનઃ**-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરાવનાર છે; વા **અમૃતત્વમ્**-મોક્ષ માર્ગને **રક્ષમાણાસઃ**-જે રક્ષે છે, તે **દેવાઃ**-આપ્ત વિદ્વાનો જે **દ્રવિણોદામ્**-ધન આદિ પદાર્થોના દાતાની સમાન સર્વ જગતને આપનારા **અગ્નિમ્**-પરમેશ્વરને **ધારયન્**-ધારણ કરે છે વા કરાવે છે; **એનમ્**-તેને તમે ઈષ્ટ દેવ માનો. (૬)

ભાવાર્થ : જીવનમુક્ત અથવા દેહાભિમાન રહિતમુક્ત વિદ્વાન જેનો આશ્રય પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત રહે છે, તેની (ઈશ્વરની) સર્વેએ ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૬)

નૂ ચ પુરા ચ સદનં રયીણાં જાતસ્ય ચ જાયમાનસ્ય ચ ક્ષામ્ ।

સતશ્ચ ગોપાં ભવતશ્ચ ભૂરેદેવા અગ્નિં ધારયન્દ્રવિણોદામ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેને **દેવાઃ**-વિદ્વાનો **નુ**-શીઘ્ર અને **ચ**-વિલંબથી વા **પુરા**-કાર્યથી પૂર્વ **ચ**-અને મધ્યમાં **રયીણામ્**-વર્તમાન પૃથિવી આદિ કાર્ય દ્રવ્યોની **સદનમ્**-ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ અને વિનાશના નિમિત્ત વા **જાતસ્ય**-ઉત્પન્ન કાર્યજગતના **ચ**-નાશ થતાં અને **જાયમાનસ્ય**-કલ્પના અંતમાં પુનઃ ઉત્પન્ન થનાર કાર્યરૂપ જગતના **ચ**-પુનઃ એ જ પ્રમાણે જગતનું ઉત્પન્ન અને વિનાશ થવામાં **ક્ષામ્**-પોતાની વ્યાપ્તિથી નિવાસના હેતુ વા **ભૂરેઃ**-વ્યાપક **સતઃ**-અનાદિ વિદ્યમાન, વિનાશરહિત, કારણભૂત તથા **ચ**-કાર્યરૂપ **ભવતઃ**-વર્તમાન **ચ**-ભૂત અને ભવિષ્ય ઉક્ત જગતના **ગોપામ્**-રક્ષક અને **દ્રવિણોદામ્**-ધન આદિ પદાર્થોના દાતા **અગ્નિમ્**-જગદીશ્વરને **ધારયન્**-ધારણ કરે છે વા કરાવે છે, તે એક સર્વ શક્તિમાન જગદીશ્વરને ધારણ કરો વા કરાવો. (૭)

ભાવાર્થ : ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન એ ત્રણે કાલને ઈશ્વર વિના જાણવાવાળા પ્રભુ કાર્ય, કારણ વા પાપી અને પુણ્યાત્માજનોના કર્મની વ્યવસ્થા કરનાર અન્ય કોઈ પદાર્થ નથી, એ સર્વ મનુષ્યોએ માનવું જોઈએ. (૭)

દ્રવિણોદા દ્રવિણસસ્તુરસ્ય દ્રવિણોદાઃ સનરસ્ય પ્ર ચંસત્ ।

દ્રવિણોદા વીરવતીમિષં નો દ્રવિણોદા રાસતે દીર્ઘમાયુઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે **દ્રવિણોદાઃ**-ધન આદિ પદાર્થોના દાતા **તુરસ્ય**-શીઘ્ર સુખકારક **દ્રવિણસઃ**-

દ્રવ્ય સમૂહના વિજ્ઞાનને પ્ર, યસત્-નિયમમાં રાખનાર વા જે દ્રવિણોદા:-પદાર્થોના વિભાગ દર્શાવનાર સનરસ્ય-એક બીજાથી જે અલગ કરવામાં આવે તે પદાર્થ વા વ્યવહારના વિજ્ઞાનને નિયમમાં રાખે વા જે દ્રવિણોદા:-શૂરવીરતા આદિ ગુણોના દાતા વીરવતીમ્-જેથી પ્રશંસિત વીર બને તે ઇષમ્-અન્નાદિ પ્રાપ્તિની યાહનાને નિયમમાં રાખનાર વા જે દ્રવિણોદા:-આયુર્વેદ અર્થાત્ વેદક શાસ્ત્રના દાતા ન:- અમારા માટે દીર્ઘમ્-દીર્ઘ આયુ:-જીવન રાસતે-પ્રદાન કરે, તે ઈશ્વરની સર્વ મનુષ્યો ઉપાસના કરે. (૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમગુરુ પરમેશ્વર દ્વારા વેદના માધ્યમથી સર્વ પદાર્થોનું વિશેષ જ્ઞાન કરાવેલ છે, તેનો આશ્રય કરીને યથાયોગ્ય વ્યવહાર કરવા માટે અને ધર્મ-અધર્મ-કામ-મોક્ષની સિદ્ધિ માટે દીર્ઘાયુષ્યની તમે રક્ષા કરો. (૮)

एवा नो अग्ने समिधा वृधानो रैवत्पावक श्रवसे वि भाहि।

तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે પાવક-આપ પવિત્ર અને સંસારને પવિત્ર કરનાર તથા અગ્ને-સમસ્ત મંગલ પ્રકટ કરનાર પરમેશ્વર ! સમિધા-જેના સમાન વ્યવહાર પ્રકાશિત થાય છે, તે વેદવિદ્યાથી વૃધાન:-નિત્ય વૃદ્ધિયુક્ત આપ ન:-અમને રેવત્-રાજ્ય આદિ પ્રશંસિત શ્રીમાનને માટે વા શ્રવસે-સમસ્ત વિદ્યાના શ્રવણ અને અન્નોની પ્રાપ્તિ માટે એવ-જ વિ, ભાહિ-અનેક રીતે પ્રકાશ કરાવો છો, તત્-જે આપના બનાવેલા મિત્ર:-બ્રહ્મચર્યના નિયમોથી બળને પ્રાપ્ત કરેલ પ્રાણ, વસ્મઃ-ઉપર ગતિમાન ઉદાન વાયુ, અદિતિ:-અન્તરિક્ષ, સિન્ધુ:-સમુદ્ર, પૃથિવી, ભૂમિ ઉત-અને દ્યૌ:-પ્રકાશમાન સૂર્ય આદિ લોક ન:- અમારા મામહન્તામ્-સત્કારના હેતુ થાય. (૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેની વિદ્યા વિના યથાર્થ વિશેષ જ્ઞાન થતું નથી અને જેને ભૂમિથી લઈને આકાશ સુધી સૃષ્ટિ રચેલ છે તથા જેની અમે ઉપાસના કરીએ છીએ, તેની તમે ઉપાસના કરો. (૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અગ્નિ શબ્દના ગુણોના વર્ણનથી એના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૯૬)

સૂક્ત-૯૭

अप नः शोशुचद्दधमग्ने शुशुग्ध्या रयिम्। अप नः शोशुचद्दधम् ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સભાપતે ! આપ ન:-અમારા અધમ્-રોગ અને આલસ્યરૂપી પાપનું અપ, શોશુચત્-વારંવાર નિવારણ કરો, રયિમ્-ધનને આ-સારી રીતે શુશુગ્ધિ-શુદ્ધ અને પ્રકાશિત કરાવો તથા ન:- અમારા અધમ્-મન, વચન અને શરીરથી ઉત્પન્ન પાપની અપ-, શોશુચત્-શુદ્ધિ માટે દંડ આપો.

(૧)

સૂક્ત-૯૭

ભાવાર્થ : સભાધ્યક્ષ (રાજા) સર્વ મનુષ્યો માટે અહિતકારી જે જે પ્રમાદ રૂપ કર્મ છે, તેને દૂર કરીને પુરુષાર્થ દ્વારા લક્ષ્મી પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. (૧)

સુક્ષેત્રિયા સુગાતુયા વસૂયા ચં યજામહે। અપં નઃ શોશુચદ્ધમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સભાધ્યક્ષ ! જે આપને વસૂયા-જેને પોતાને ધનની ચાહના હોય, સુગાતુયા-જેમાં સારી પૃથિવી હોય અને સુક્ષેત્રિયા-બીજ વાવવા યોગ્ય શ્રેષ્ઠ ક્ષેત્ર = ખેતર હોય, તે જે નીતિથી હોય, તેથી ચ-તથા શસ્ત્ર અને અસ્ત્ર બાંધનારી સેનાથી અમે યજામહે-સંગ કરતા હોય, તે આપ નઃ-અમારા અધમ્-દુષ્ટ વ્યસનને અપ, શોશુચત્-દૂર કરો. (૨)

ભાવાર્થ : સભાધ્યક્ષ રાજાએ સામ, દંડ, ભેદ રૂપી ક્રિયાઓથી યુક્ત નીતિ અપનાવીને, પ્રજાઓના દુઃખોને દૂર કરવા માટે નિત્ય ઉદ્યમ કરવો જોઈએ. પ્રજાએ એવો જ સભાધ્યક્ષ બનાવવો જોઈએ. (૨)

પ્ર યદ્ધન્દિષ્ઠ ણ્ણાં પ્રાસ્માકાસશ્ચ સૂર્યઃ। અપં નઃ શોશુચદ્ધમ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સભાપતે ! યત્-જે આપની સભામાં ણ્ણામ્-એ મનુષ્ય આદિ પ્રજાજનોની મધ્ય અસ્માકાસઃ-અમારામાંથી પ્ર, સૂર્યઃ-અત્યંત બુદ્ધિમાન વિદ્વાન ચ-અને વીરપુરુષ હોય, તે સભાસદ બને. ધન્દિષ્ઠઃ-અતિ કલ્યાણકારક આપ નઃ-અમારા અધમ્-શત્રુજન્ય દુઃખરૂપ પાપને પ્ર + અપ + શોશુચત્-દૂર કરો. (૩)

ભાવાર્થ : ... જ્યારે વિદ્વાનજન સભા આદિનો અધ્યક્ષ હોય, આપ્તજન સભાસદ હોય અને પૂર્ણ શારીરિક બળયુક્ત કર્મચારી હોય, ત્યારે રાજ્ય આદિની પ્રાપ્તિ અને સારી રીતે વિજય થાય છે. એથી વિપરીતમાં વિપરીત પરિણામ થાય છે. (૩)

પ્ર યત્તે અગ્ને સૂર્યો જાયેમહિ પ્ર તે વયમ્। અપં નઃ શોશુચદ્ધમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-આપ ઉત્તર-પ્રત્યુત્તરથી કહેનારા ! યત્-જે તે-આપની જેમ સૂર્યઃ-પૂર્ણ વિદ્યાવાન વિદ્વાન સભાસદ છે, તે તે-આપના તેવા જ વયમ્-અમે પણ પ્ર, જાયેમહિ-પ્રજાજન હોય અને એવા તમે નઃ-અમારા અધમ્-વિરોધરૂપ પાપને પ્ર + અપ + શોશુચત્-સમ્યક્ રીતે દૂર કરો.

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જેવી રીતે ધાર્મિક સભાધ્યક્ષ આદિ મનુષ્ય હોય, તેવા જ પ્રજાજનો પણ હોવા જોઈએ. (૪)

પ્ર યદ્ગ્નેઃ સહસ્વતો વિશ્વતો યન્તિ ભાનવઃ। અપં નઃ શોશુચદ્ધમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમે યત્-જે સહસ્વતઃ-પ્રશંસિત બળવાળા અગ્નેઃ-ભૌતિક અગ્નિના ભાનવઃ-પ્રદીપ્ત કિરણો વિશ્વતઃ-સર્વ સ્થાનથી પ્રયન્તિ-પ્રસરે છે વા જે નઃ-અમારા અધમ્-દરિદ્રતાને અપ + શોશુચત્-દૂર કરે છે, તેને કાર્યમાં સારી રીતે સંયુક્ત કરો-જોડો. (૫)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મૂર્તદ્રવ્ય એવું નથી જે વિદ્યુત્થી વ્યાપ્ત ન હોય, જે અગ્નિ શિલ્પક્રિયા દ્વારા કાર્યોમાં પ્રયોગ કરેલ ધન ઉત્પન્ન કરનાર હોય છે, તેને મનુષ્યોએ સારી રીતે જાણવા જોઈએ.

ત્વં હિ વિશ્વતોમુખ વિશ્વતઃ પરિભૂરસિં । અપ ન્ : શોશુચ્ચદ્ધમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે વિશ્વતોમુખ-સર્વમાં વ્યાપ્ત હોવાથી અને અન્તર્યામીથી સર્વને શિક્ષા = ઉપદેશ આપનાર જગદીશ્વર ! જે કારણે ત્વં, હિ-આપ જ વિશ્વતઃ-સર્વત્રથી પરિભૂઃ-સર્વથી ઉપર વિરાજમાન અસિ-છો એથી ન્:-અમારા અધમ્-દુષ્ટ સ્વભાવ સંગ રૂપ પાપને અપ + શોશુચ્ચ-દૂર કરાવો. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા સત્ય પ્રેમભાવથી પ્રાર્થના કરેલ અન્તર્યામી ઈશ્વર આત્મામાં સત્ય ઉપદેશ દ્વારા પાપથી પૃથક્ કરીને શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોમાં પ્રવૃત્ત કરે છે. તેથી એ નિત્ય ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૬)

દ્વિષૌ નો વિશ્વતોમુખાતિ નાવેવ પારય । અપ ન્ : શોશુચ્ચદ્ધમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે વિશ્વતોમુખ-સર્વોત્તમ ઐશ્વર્યથી યુક્ત પરમાત્મન્ ! આપ નાવેવ-જેમ નાવથી સમુદ્ર પાર થાય, તેમ ન્:-અમને દ્વિષઃ-ધર્મથી દ્વેષ કરનાર અર્થાત્ તે (ધર્મ)થી વિરુદ્ધ ચાલનાર તેનાથી અતિ,-પારય-પાર પહોંચાડો-કરો. ન્:-અમારા અધમ્-શત્રુઓથી ઉત્પન્ન થયેલ દુઃખોને અપ + શોશુચ્ચ દૂર કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ ન્યાયાધીસ ડાકુ આદિને નૌકા આદિમાં નાખીને સમુદ્રની સામે પાર નિર્જન જંગલ વાળા સ્થાનમાં બંધ કરીને પ્રજાઓનું પાલન કરે છે. તેમજ સમ્યક્ ઉપાસના કરેલ ઈશ્વર ઉપાસકોના કામ, ક્રોધ, લોભ, મોહ, ભય અને શોક આદિ શત્રુઓને શીઘ્ર નિવૃત્ત કરી-હટાવીને તેને જિતેન્દ્રિયાદિ ગુણો પ્રદાન કરે છે. (૭)

સ ન્ : સિન્ધુમિવ નાવયાતિ પર્ષા સ્વસ્તયે । અપ ન્ : શોશુચ્ચદ્ધમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! સ:-તે આપ કૃપા કરીને ન્:-અમારા સ્વસ્તયે-સુખને માટે નાવયા-નાવથી સિન્ધુમિવ-જેમ સમુદ્રથી પાર કરાય છે, તેમ દુઃખોથી અતિ, પર્ષ-અત્યંત પાર કરો. ન્:-અમારા અધમ્-અશાન્તિ અને આલસ્યને અપ + શોશુચ્ચ-નિરંતર દૂર કરો. (૮)

ભાવાર્થ : (જેમ) પાર લઈ જનાર (નાવિક) મનુષ્ય આદિને સુખપૂર્વક નૌકા દ્વારા સમુદ્રથી પાર કરે છે, તેમ પરમેશ્વર વિજ્ઞાન દ્વારા દુઃખસાગરથી પાર કરે છે અને શીઘ્ર સુખયુક્ત કરે છે. (૮)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સભાધ્યક્ષ, અગ્નિ અને ઈશ્વરના ગુણોના વર્ણનથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૮૭)

સૂક્ત-૯૮

ઋગ્વેદભાષ્ય

૪૧૫

વૈશ્વાનરસ્ય સુમતૌ સ્યામ્ રાજા હિ કં ભુવનાનામભિશ્રીઃ ।

દ્રુતો જાતો વિશ્વમિદં વિ ચષ્ટે વૈશ્વાનરો યતતે સૂર્યેણ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે વૈશ્વાનર:-સમસ્ત જીવોને યથાયોગ્ય વ્યવહારોમાં વર્તાવનાર ઈશ્વર વા જઠરાગ્નિ !
વા ઇત:-કારણથી જાત:-પ્રસિદ્ધ થયેલ ઇદમ્-એ પ્રત્યક્ષ કમ્-સુખને વિશ્વમ્-વા સમસ્ત જગતને વિચષ્ટે-
વિશેષ ભાવથી દર્શાવે છે અને જે સૂર્યેણ-પ્રાણ વા સૂર્યલોકની સાથે યતતે-યત્ન કરનાર હોય છે,
વા જે ભુવનાનામ્-લોકોનું અભિશ્રીઃ-સર્વ પ્રકારનું ધન છે તથા જે ભૌતિક અગ્નિથી સર્વ પ્રકારનું ધન
છે તથા જે ભૌતિક અગ્નિથી સર્વ પ્રકારનું ધન થાય છે વા રાજા-જે ન્યાયાધીશ સર્વનો અધિપતિ છે
તથા પ્રકાશમાન વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિ છે તે વૈશ્વાનરસ્ય-સમસ્ત પદાર્થોના દાતા ઈશ્વરના ભૌતિક અગ્નિની
સુમતૌ-શ્રેષ્ઠ મતિમાં અર્થાત્ જે અત્યંત ઈશ્વરની પ્રસિદ્ધ કરેલી મતિ = બુદ્ધિ વા ભૌતિક અગ્નિથી
અત્યંત પ્રસિદ્ધ થયેલી મતિ તેમાં હિ-જ વચમ્-અમે સ્યામ્-સ્થિર થઈએ. (૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વ્યવહાર બનીને સમસ્ત સંસારને પ્રકાશિત કરે છે, તેના ઉત્તમ ગુણોથી
પ્રસિદ્ધ તેની આજ્ઞામાં તમે નિત્ય પ્રવૃત્ત થાઓ અને જે એ પ્રકારના સૂર્ય આદિનો પ્રકાશક અગ્નિ
છે, તેની વિદ્યાને સિદ્ધ કરવામાં (પણ નિત્ય) પ્રવૃત્ત થાઓ. તેમ કર્યા વિના કોઈ પણ મનુષ્યની પાસે
પૂર્ણ સંપત્તિ થઈ શકતી નથી. (૧)

પૃષ્ટો દિવિ પૃષ્ટો અગ્નિઃ પૃથિવ્યાં પૃષ્ટો વિશ્વા ઓષધીરા વિવેશ ।

વૈશ્વાનરઃ સહસા પૃષ્ટો અગ્નિઃ સ નો દિવા સ રિષઃ પાતુ નક્તમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જે અગ્નિ:-ઈશ્વર અને ભૌતિક અગ્નિ દિવિ-દિવ્ય ગુણ સંપન્ન જગતમાં પૃષ્ટ:-વિદ્વાનોને
પૂછાતા વા જે પૃથિવ્યામ્-અન્તરિક્ષ અને ભૂમિમાં પૃષ્ટ:-પૂછવા યોગ્ય છે વા જે પૃષ્ટ:-પૂછવા યોગ્ય
વૈશ્વાનર:-સર્વ મનુષ્યમાત્રના સત્ય વ્યવહારમાં પ્રવૃત્ત કરાવનાર અગ્નિ:-ઈશ્વર અને ભૌતિક અગ્નિ
વિશ્વા-સમસ્ત ઓષધી:-સોમલતા આદિ ઔષધિમાં આ, વિવેશ-પ્રવિષ્ટ થઈ અને સહસા-બળ આદિ
ગુણોની સાથે રહેલ પૃષ્ટ:-પૂછવા યોગ્ય છે, તે ન:-સ:-અમને દિવા-રિષઃ-મારનારથી અને નક્તમ્-
રાતે મારનારથી પાતુ-બચાવે વા ભૌતિક અગ્નિ બચાવે છે. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોની સમીપ જઈને ઈશ્વરના તથા વિદ્યુત્ આદિના ગુણોને પૂછીને
તથા (ઈશ્વરની ઉપાસના અને અગ્નિના ગુણોના) ઉપકારોનો આશ્રય લઈને હિંસામાં પ્રવૃત્ત ન રહેવું
જોઈએ. (૨)

વૈશ્વાનર ત્વ તત્સત્યમસ્ત્વસ્માન્ રાયૌ મઘવાનઃ સચન્તામ્ ।

તન્નો મિત્રો વરુણો મામહન્તામદિતિઃ સિન્ધુઃ પૃથિવી ઉત દ્યૌઃ ॥ ૩ ॥

સૂક્ત-૯૯

જાતવેદસે સુનવામ્ સોમમરાતીયતો નિ દહાતિ વેદઃ ।

સ નઃ પર્ષદતિ દુર્ગાણિ વિશ્વા નાવેવ સિન્ધુ દુરિતાત્યગ્નિઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે જાતવેદસે-ઉત્પન્ન થયેલ ચરાચર જગતને જાણનાર અને પ્રાપ્ત થનાર તથા ઉત્પન્ન થયેલ સર્વ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન જગદીશ્વરને માટે અમે સોમમ્-સમસ્ત ઐશ્વર્યયુક્ત સાંસારિક પદાર્થોનો સુનવામ્-નિચોડ કરીએ છીએ અર્થાત્ યથાયોગ્ય સર્વથી વર્તીએ છીએ અને જે અરાતીયતઃ-અધર્મીઓની સમાન વર્તનાર દુષ્ટજનના વેદઃ-ધનને નિ, દહાતિ-નિરંતર નષ્ટ કરે છે, સઃ-તે અગ્નિઃ-વિજ્ઞાનસ્વરૂપ ઈશ્વર જેમ નાવિક નાવેવ-નૌકાથી સિન્ધુમ્-નદી વા સમુદ્રને પાર કરાવે છે, તેમ નઃ-અમને અતિ-અત્યંત દુર્ગાણિ-દુર્ગતિ અને અતિદુરિતા-અતિ દુઃખ દેનાર વિશ્વા-સમસ્ત પાપાચરણોથી પર્ષત્-પાર કરે છે, તે જ આ જગતમાં અન્વેષણીય = શોધ કરવા યોગ્ય છે. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ મહા નૌકા = જહાજ ચાલક જન દુર્ગમ મહાસાગરોમાં જહાજથી મનુષ્ય આદિને સુખપૂર્વક પાર પહોંચાડે છે, તેમ જ ઉત્તમ પ્રકારથી ઉપાસના કરેલ ઈશ્વર દુઃખરૂપી મહાસાગરમાં પડેલ મનુષ્યોને વિજ્ઞાન આદિના દાન દ્વારા સામે પાર પહોંચાડે છે.

પરમેશ્વરનો ઉપાસક મનુષ્ય જ શત્રુઓનો પરાજય કરીને પરમ આનંદને પ્રાપ્ત કરી શકે છે, કોઈ અન્યનું એવું સામર્થ્ય કેમ હોઈ શકે ? (૧)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વરના ગુણોના વર્ણનથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૯૯)

સૂક્ત-૧૦૦

સ યો વૃષા વૃષ્ણયેભિઃ સમોકા મહો દિવઃ પૃથિવ્યાશ્ચ સમ્રાટ્ ।

સતીનસત્વા હવ્યો ભરેષુ મરુત્વાન્નો ભવત્વિન્દ્ર ઋતી ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે યઃ-જે વૃષા-વર્ષાનો હેતુ સમોકાઃ-જેમાં યોગ્ય નિવાસનું સ્થાન છે, સતીનસત્વા-જે જળને એકત્ર કરે છે, હવ્યઃ-તથા ગ્રહણ કરવા યોગ્ય મરુત્વાન્-જેનો પ્રશંસિત વાયુ છે, જે મહઃ-અત્યંત દિવઃ-પ્રકાશ તથા પૃથિવ્યાઃ-ભૂમિલોક ચ-અને સમસ્ત મૂર્તિમાન લોકો અને પદાર્થોની મધ્ય સમ્રાટ્-સમ્યક્ પ્રકાશમાન ઇન્દ્રઃ-સૂર્યલોક છે, સઃ-તે જેમ વૃષ્ણયેભિઃ-શ્રેષ્ઠતામાં ઉત્પન્ન થનારા કિરણો દ્વારા ભરેષુ-પાલન અને પુષ્ટિ કરનારા પદાર્થોમાં નઃ-અમારા ઋતી-રક્ષા આદિ વ્યવહારોને માટે ભવતુ-થાય છે, તેમ ઉત્તમ યત્ન કરો. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે પરિમાણથી મહાન વાયુરૂપ કારણથી પ્રકટ અને પ્રકાશસ્વરૂપ સૂર્યલોક છે, તેનાથી વિદ્યાપૂર્વક અનેક ઉપકારો ગ્રહણ કરવા જોઈએ. (૧)

યસ્યાનાપ્તઃ સૂર્યસ્યેવ યામો ભરૈભરે વૃત્રહા શુષ્મો અસ્તિ ।

વૃષન્તમઃ સખિભિઃ સ્વેભિરેવૈર્મરુત્વાન્નો ભવત્વિન્દ્ર ઋતી ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : યસ્ય-જે પરમેશ્વર વા વિદ્વાન સભાધ્યક્ષના ભરૈભરે-ધારન કરવા યોગ્ય-પદાર્થ-પદાર્થ વા યુદ્ધ-યુદ્ધમાં સૂર્યસ્યેવ-પ્રત્યક્ષ સૂર્યલોકની સમાન વૃત્રહા-પાપીઓને યથાયોગ્ય પાપનું ફળ આપવાથી ધર્મને ધૂપાવનારનો વિનાશ કરીને તથા શુષ્મઃ-જેમાં પ્રશંસિત બળ છે તે યામઃ-મર્યાદા અનાપ્તઃ + અસ્તિ-મૂર્ખ અને શત્રુઓને પ્રાપ્ત થતા નથી, સઃ-તે વૃષન્તમ્-અત્યંત સુખદાયક તથા મસ્ત્વાન્-પ્રશંસિત એના જનયુક્ત વા જેની સૃષ્ટિમાં પ્રશંસિત વાયુ છે, તે ઇન્દ્રઃ-પરમૈશ્વર્યવાન ઈશ્વર વા સભાધ્યક્ષ સજ્જન સ્વેભિઃ-પોતાના સેવકોએ એવૈઃ-પ્રાપ્ત કરેલ પ્રશંસિત જ્ઞાનો અને સખિભિઃ-ધર્માનુકૂળ આજ્ઞાનું પાલન કરનારા મિત્રો દ્વારા ઉપાસના અને પ્રશંસા પ્રાપ્ત કરેલ નઃ-અમારી ઋતી-રક્ષા આદિ વ્યવહારોને સિદ્ધ કરવા માટે ભવતુ-થાય. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોના દ્વારા જે સૂર્યલોક તથા આપ્ત વિદ્વાનોના ગુણોનો અન્ત જાણવો અતિ કઠિન છે, તો પરમેશ્વરના ગુણોના અન્તની તો વાત જ ક્યાં કરવી ? એ બન્નેના આશ્રય વિના કોઈની પૂર્ણ રક્ષા સંભવ નથી. તેથી એ બન્નેની સાથે મિત્રતા રાખવી જોઈએ. (૨)

દિવો ન યસ્ય રેતસો દુધાનાઃ પન્થાસો યન્તિ શવસાપરીતાઃ ।

તરદ્ દ્વૈષાઃ સાસહિઃ પૌંસ્યૈભિર્મરુત્વાન્નો ભવત્વિન્દ્ર ઋતી ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : યસ્ય-જે ઈશ્વર વા સભાધ્યક્ષ વા અધ્યાપક વિદ્વાનોને દિવઃ-સૂર્યલોકની ન-સમાન રેતસઃ-પરાક્રમની શવસા-પ્રબળતાથી અપરીતાઃ-ન છોડેલ દુધાનાઃ-વ્યવહારોને પૂર્ણ કરનાર તરદ્ દ્વૈષાઃ-જેમાં વિરોધોથી પાર હોય, તે પન્થાસઃ-માર્ગ યન્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે અને જાય છે વા જે પૌંસ્યૈભિઃ-બળોની સાથે વિદ્યમાન સાસહિઃ-અત્યંત સહનશીલ મસ્ત્વાન્-જેની સૃષ્ટિમાં પ્રશંસિત પ્રજા છે, તે ઇન્દ્રઃ-પરમૈશ્વર્યવાન પરમેશ્વર વા સભાધ્યક્ષ નઃ-અમારા ઋતી-રક્ષા આદિ વ્યવહારને માટે ભવતુ-થાઓ. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યના પ્રકાશથી સર્વ માર્ગો સ્પષ્ટ જોવા યોગ્ય, જવા યોગ્ય અને ડાકુ, ચોર તથા કાંટાથી રહિત બને છે. તેમ જ વેદ દ્વારા પરમેશ્વર (ની પ્રાપ્તિ) નો તથા વિદ્વાનનો માર્ગ સુપ્રકાશિત થાય છે. તેમાં ગયા (ચાલ્યા) વિના કોઈ પણ મનુષ્ય દ્વેષ આદિ દોષોથી પૃથક્ થઈ શકતો નથી, તેથી સર્વેએ એ માર્ગોથી જવું-ચાલવું જોઈએ. (૩)

સો અઙ્ગિરોભિરઙ્ગિરસ્તમો ભૂદ્ વૃષા વૃષભિઃ સખિભિઃ સખા સન્ ।

ઋગ્મિભિર્ઋગ્મી ગાતુભિર્જ્યેષ્ઠો મરુત્વાન્નો ભવત્વિન્દ્ર ઋતી ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે અદ્વિરોધિઃ-અંગોમાં રસરૂપ પ્રાણીની સાથે અદ્વિસ્તમઃ-અત્યંત પ્રાણની સમાન વા વૃષભિઃ-સુખની વર્ષાનાં કારણોથી વૃષા-સુખ સિંચનાર વા સખિભિઃ-મિત્રોની સાથે સખા-મિત્ર વા ત્રિમિભિઃ-ઋગ્વેદ ભણેલાઓની સાથે ત્રમી-ઋગ્વેદી વા ગાતુભિઃ-વિદ્યાથી સુશિક્ષાને પ્રાપ્ત થયેલી વાણીઓથી જ્યેષ્ઠઃ-પ્રશંસનીય સન્-થયેલ ભૂત-છે, સઃ-તે મસ્ત્વાન્-પોતાની સૃષ્ટિમાં, પ્રજાને ઉત્પન્ન કરનાર વા પોતાની સેનામાં પ્રશંસિત વીર પુરુષ રાખનાર ઇન્દ્રઃ-ઈશ્વર અને સભાપતિ નઃ-અમારા કૃતી-રક્ષા આદિ વ્યવહારને માટે ભવતુ-થાઓ. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે યથાર્થ રૂપમાં ઉપકારી અને સર્વથી ઉત્તમ પરમેશ્વર અથવા સભાપતિ વિદ્વાન છે, તેઓની તમે નિત્ય સેવા કરો. (૪)

સ સૂનુભિર્ન રુદ્રેભિર્ઋશ્વા નૃષાહ્યૈ સાસહ્વાં અમિત્રાન્ ।

સનીડેભિઃ શ્રવસ્યાનિ તૂર્વન્મરુત્વાન્નો ભવત્વિન્દ્ર કૃતી ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : મસ્ત્વાન્-જેની સેનામાં પ્રશંસિત વીર પુરુષ છે વા સાસહ્વાન્-જે શત્રુઓનો તિરસ્કાર કરે છે, તે ઇન્દ્રઃ-પરમ ઐશ્વર્યવાન સભાપતિ સૂનુભિઃ-પુત્ર વા પુત્રોની સમાન સેવકોની નઃ-સમાન સનીડેભિઃ-પોતાની સમીપ રહેનાર સ્ત્રેભિઃ-જે શત્રુઓને રડાવનાર છે તેના તથા ઋશ્વા-મહાન બુદ્ધિમાન, મંત્રીની સાથે વિદ્યમાન શ્રવસ્યાનિ-ધનાદિ પદાર્થોમાં ઉત્તમ વીરજનોને એકત્ર કરીને નૃષાહ્યે-જે શૂરવીરોને સહન યોગ્ય છે, તે સંગ્રામમાં અમિત્રાન્-શત્રુજનોને તૂર્વન્-મારીને ઉત્તમ યત્ન કરે છે, સઃ-તે નઃ-અમારા કૃતી-રક્ષા આદિ વ્યવહારને માટે ભવતુ-થાઓ. (૫)

ભાવાર્થ : જે સેના આદિના અધ્યક્ષ પુત્રની સમાન સત્કાર કરેલ અને શસ્ત્રાસ્ત્રચાલન તથા યુદ્ધવિદ્યામાં સુશિક્ષિત થયેલ (સૈનિકો)થી યુક્ત બળવાન સેનાનું નિર્માણ કરીને, અતિ કઠિન યુદ્ધમાં પણ દુષ્ટ શત્રુઓને પરાજિત કરીને તથા ધાર્મિક મનુષ્યોનું પાલન કરીને ચક્રવર્તી રાજ્ય (નું શાસન) કરી શકે છે, તે જ સમસ્ત સૈનિકો અને પ્રજાજનો દ્વારા સદા સત્કાર કરવા યોગ્ય છે. (૫)

સ મન્યુમીઃ સમદનસ્ય કૃતાસ્માકેભિર્નૃભિઃ સૂર્યં સનત્ ।

અસ્મિન્નહન્ત્સત્પતિઃ પુરુહૂતો મરુત્વાન્નો ભવત્વિન્દ્ર કૃતી ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જે મન્યુમીઃ-ક્રોધને મારનાર વાર સમદનસ્ય-જેમાં આનંદ છે તેના કર્તા-કરનાર અને સત્પતિઃ-સજ્જન તથા ઉત્તમ કાર્યોનું પાલન કરનાર પુરુહૂતઃ-વા મહાન વિદ્વાન અને શૂરવીરોએ જેની સ્તુતિ અને પ્રશંસા કરેલ હોય, મસ્ત્વાન્-જેની સેના શ્રેષ્ઠ વીરજન છે, ઇન્દ્રઃ-તે પરમ ઐશ્વર્યવાન સેનાપતિ અસ્માકેભિઃ-અમારા શરીર, આત્મા અને બળની સમાન બળોથી યુક્ત વીર નૃભિઃ-મનુષ્યોની સાથે વર્તમાન થઈને સૂર્યમ્-સૂર્યના પ્રકાશની સમાન યુદ્ધ ન્યાયનું સનત્-સમ્યક્ સેવન કરે, સઃ-તે અસ્મિન્-આજના દિવસે નઃ-અમારા કૃતી-રક્ષા આદિ વ્યવહારને માટે નિરંતર ભવતુ-થાઓ. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યને પ્રાપ્ત થયેલ સમસ્ત પદાર્થો પૃથક્-પૃથક્ પ્રકાશિત થવા છતાં આનંદપ્રદ

સૂક્ત-૧૦૦

હોય છે, તેમ જ ધાર્મિક ન્યાયાધીશોને પ્રાપ્ત કરીને પુત્ર, પૌત્ર, સ્ત્રી, સેવક આદિની સાથે વર્તમાનજન વિદ્યા, ધર્મ અને ન્યાયમાં પ્રસિદ્ધ આચરણયુક્ત બનીને કલ્યાણકારી થાય છે.

જે સદા ક્રોધને જીતેલ મનુષ્ય સર્વ રીતે નિત્ય પ્રસન્નતા આપનાર હોય છે, તે જ સેનાપતિના અધિકાર-પદ પર નિયુક્ત કરવા યોગ્ય હોય છે.

જે ભૂતકાળના અવશિષ્ટ-બાકીના કાર્યોને જાણનાર અને વર્તમાન કાળમાં શીઘ્ર કાર્ય કરનાર તથા વિચારશીલ છે, તે જ સદા વિજયી બને છે, અન્ય નહિ. (૬)

તમૂતયો રણયજ્ઞૂરસાતૌ તં ક્ષેમસ્ય ક્ષિતયઃ કૃણવત્ ત્રામ્ ।

સ વિશ્વસ્ય કરુણસ્યેશ્ઠ એકો મરુત્વાન્નો ભવત્ત્વિન્દ્ર ઋતી ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : જેનો ઋતયઃ-રક્ષા આદિ વ્યવહાર સેવન કરે, તમ્-તે સેના આદિના અધિપતિને શૂરસાતૌ-જેમાં શૂરવીરોનું સેવન થાય છે, તે સંગ્રામમાં ક્ષિતયઃ-મનુષ્ય ત્રામ્-પોતાની રક્ષા કરનાર કૃણવત્-કરે, જે ક્ષેમસ્ય-અત્યંત કુશળતાના કરનાર છે, તમ્-તેને પોતાના રક્ષકને ઉક્ત સંગ્રામમાં રણયન્-રટે અર્થાત્ વારંવાર તેની સ્તુતિ (વિનંતી) કરે; જે એકઃ-કેવલ એક સભાધ્યક્ષ વિશ્વસ્ય-સમસ્ત કસ્રગસ્ય-કરુણારૂપી કાર્ય કરવામાં ફેણે-સમર્થ છે, સઃ-તે મસ્ત્વાન્-પોતાની સેનામાં પ્રશંસિત વીરોને રાખનાર વા ઇન્દ્રઃ-સેના આદિના રક્ષક નઃ-અમારા ઋતી-રક્ષા આદિ વ્યવહારને માટે ભવતુ-થાય. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે એકલો જ અનેક યોદ્ધાઓને જીતી લે છે, તેને યુદ્ધમાં અથવા અન્યત્ર પ્રોત્સાહિત કરવો જોઈએ. વીરોમાં જેવી વીરતા પ્રોત્સાહન દ્વારા ઉત્પન્ન થાય છે, તેવી અન્ય રીતે થઈ શકતી નથી. (૭)

તમ્પ્સન્ત શવસ ઉત્સવેષુ નરો નરમવસે તં ધનાય ।

સો અન્ધે ચિત્તમસિ જ્યોતિર્વિદન્મરુત્વાન્નો ભવત્ત્વિન્દ્ર ઋતી ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! નરમ્-સર્વ કામ યથાયોગ્ય ચલાવનાર જે મનુષ્યને શવસઃ-વિદ્યા, બળ તથા ધન આદિ અનેક બળ અપ્સન્ત-પ્રાપ્ત થાય, તમ્-તે અત્યંત પ્રબળ યુદ્ધ કરનારથી પણ યુદ્ધ કરનાર સેના આદિના અધિપતિને ઉત્સવેષુ-ઉત્સવ અર્થાત્ આનંદના કામોમાં સત્કાર આપો (કરો). તથા તમ્-તેને નરઃ-શ્રેષ્ઠ અધિકાર પ્રાપ્ત મનુષ્ય અવસે-રક્ષા આદિ વ્યવહાર અને ધનાય-ઉત્તમ ધન પ્રાપ્તિ માટે પ્રાપ્ત થાય, જે અન્ધે-આંધળાની સમાન કરનાર તમસિ-અંધકારમાં જ્યોતિઃ-સૂર્ય આદિના ઉજ્જવળ રૂપ પ્રકાશને ચિત્-જે વિદત્-પ્રાપ્ત થાય છે, સઃ-તે મસ્ત્વાન્-પોતાની સેનામાં ઉત્તમ વીરોને રાખનાર ઇન્દ્રઃ-પરમૈશ્વર્યવાન સેનાપતિ વા સભાપતિ નઃ-અમારા ઋતી-શ્રેષ્ઠ આનંદને માટે ભવતુ-થાઓ. (૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે શત્રુઓને જીતીને તથા ધાર્મિકોને સંરક્ષણ આપીને વિદ્યા અને ધનની

ઉન્નતિ કરે છે તથા જેને પ્રાપ્ત કરીને જેમ સૂર્યનો પ્રકાશ છે, તેમ વિદ્યાના પ્રકાશને પ્રાપ્ત કરે છે, તે મનુષ્યને આનંદોલ્લાસના દિવસોમાં આપ લોકો સન્માનિત કરો. એમ કર્યા વિના કોઈનો પણ શ્રેષ્ઠ કાર્યોમાં ઉત્સાહ થતો નથી. (૮)

સ સ્વ્યેનં યમતિ વ્રાઘતશ્ચિત્સ દક્ષિણે સંગૃમ્હીતા કૃતાનિ ।

સ કીરિણાં ચિત્સનિતા ધનાનિ મરુત્વાન્નો ભવત્વિન્દ્ર ઋતી ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : જે સ્વ્યેન-સેનાની જમણી બાજુ અને ઊભેલી પોતાની સેનાને વ્રાઘત:-અત્યંત બળવાન શત્રુઓને ચિત્-પણ યમતિ-નિયમથી ચલાવે છે, તે શત્રુઓને જીતનાર બને છે. જે દક્ષિણે-જમણી તરફ ઊભેલી એ સેનાથી સંગૃમ્હીતા-ગ્રહણ કરેલ સેનાના અંગો તથા કૃતાનિ-કરેલ કાર્યોને યથોચિત નિયમમાં લાવે છે, સ:-તે પોતાની સેનાની રક્ષા કરી શકે છે. જે કીરિણા-શત્રુઓના વિક્ષેપના -પાડવાના પ્રબંધથી ચિત્-પણ તેના સનિતા-સમ્યક્ એકત્ર કરેલ ધનાનિ-ધનોને લઈ લે છે - પડાવી લે છે, સ:- તે મસ્ત્વાન્-પોતાની સેનામાં સર્વોત્તમ વીરોને રાખનાર ઇન્દ્ર:-પરમૈશ્વર્યવાન સેનાપતિ ન:-અમારા ઋતી-રક્ષા આદિ વ્યવહારોને માટે ભવતુ-થાય. (૯)

ભાવાર્થ : જે સેનાના વ્યુહોની, સેનાનાં અંગોના શિક્ષણ તથા તેનાં રક્ષણ વિજ્ઞાનની અને યુદ્ધની પૂર્ણ સામગ્રીની વ્યવસ્થા કરી શકે છે. તે જ શત્રુના પરાજય દ્વારા વિજયને પ્રાપ્ત કરવામાં અને પ્રજાનું રક્ષણ કરવામાં સમર્થ બને છે. (૯)

સ ગ્રામેભિઃ સનિતા સ રથેભિર્વિદે વિશ્વાભિઃ કૃષ્ટિભિર્વૈદ્ય ।

સ પૌંસ્યેભિરભિભૂરશસ્તીર્મરુત્વાન્નો ભવત્વિન્દ્ર ઋતી ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : જે મસ્ત્વાન્-પોતાની સેનામાં ઉત્તમ વીરોને રાખનાર ઇન્દ્ર:-પરમૈશ્વર્યવાન સેના આદિના અધીશ = અધિપતિ ગ્રામેભિઃ-ગામોમાં રહેનારા પ્રજાજનોની સાથે સનિતા-સમ્યક્ રીતે પૃથક્-પૃથક્ કરેલ ધનને ભોગવે છે, સ:-તે આનંદિત થાય છે. જે વિદે-યુદ્ધવિદ્યા તથા વિજયોને જેનાથી જાણે તે ક્રિયા માટે રથેભિઃ-સેનાના વિમાનાદિ અંગો અને વિશ્વાભિઃ-સમસ્ત કૃષ્ટિભિઃ-શિલ્પ ક્રિયામાં અતિ કુશળતાથી પ્રકાશમાન હોય, સ:-તે અને જે અશસ્તીઃ-અપ્રશંસનીય શત્રુઓની ક્રિયાને જાણીને તેનો - શત્રુઓનો અભિભૂ:-તિરસ્કાર કરનાર છે, સ:-તે પૌંસ્યેભિઃ-શ્રેષ્ઠ શરીર અને આત્માના બળની સાથે વર્તમાન નુ-શીઘ્ર અઘ-આજ ન:-અમારા ઋતી-રક્ષા આદિ વ્યવહારને માટે ભવતુ-થાય. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ; જે પુર (મહાનગર), નગર તથા ગામોની સારી રીતે રક્ષા કરનાર, સેનાના સર્વ અંગોની પૂર્ણ સામગ્રીથી યુક્ત, કલા-કૌશલ, શસ્ત્રાસ્ત્ર અને યુદ્ધની ક્રિયાઓના જ્ઞાતા, પૂર્ણ વિદ્યા અને બળથી પુષ્ટ તથા શત્રુઓના પરાજયથી પ્રજા-પાલનમાં પ્રસન્ન રહેનાર હોય, તેને જ સેનાપતિ આદિ બનાવવા જોઈએ, અન્યને નહિ. (૧૦)

સ જામિભિર્યત્સમજાતિ મીઠ્ઠેઽ જામિભિર્વા પુરુહૂત એવૈઃ ।

મહાવેદભાષ્ય

૪૨૧

અપાં તોક્સ્ય તનયસ્ય જેષે મરુત્વાન્નો ભવત્વિન્દ્ર ઋતી ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : જે અપામ્-પ્રાપ્ત થયેલ મિત્ર, શત્રુ અને ઉદાસીનો વા તોક્સ્ય-બાળકો વા તનયસ્ય-પૌત્ર આદિની વચ્ચે વર્તાવ રાખીને ચત્-જ્યારે મીઠ્ઠે-સંગ્રામોમાં એવૈઃ-પ્રાપ્ત થયેલ જામિભિઃ-શત્રુજનો સહિત અજામિભિઃ-બંધુ વર્ગોથી અન્ય શત્રુઓ સહિત વા-અથવા ઉદાસીન મનુષ્યોની સાથે વિરોધ ભાવ પ્રકટ કરીને પુસ્તૂતઃ-અનેકોથી પ્રશંસાને પ્રાપ્ત વા યુદ્ધમાં બોલાવેલ મસ્ત્વાન્-પોતાની સેનામાં ઉત્તમ વીરોને રાખનાર ઇન્દ્રઃ-પરમૈશ્વર્યવાન સેનાપતિ જેષે-ઉક્ત પોતાના ભાઈ-બંધુઓનો ઉત્સાહ ઉત્કર્ષ આપવા વા શત્રુઓને જીતવાના સમજાતિ-સમ્યક્ નિયમ જાણે છે, ત્યારે સઃ-તે નઃ-અમારી ઋતી-રક્ષા આદિને માટે સમર્થ ભવતુ-થાઓ. (૧૧)

ભાવાર્થ : એ રાજ્ય વ્યવહારમાં કોઈ ગૃહસ્થ મનુષ્ય સિવાય અન્ય કોઈ બ્રહ્મચારી, વાનપ્રસ્થી અથવા સંન્યાસીનું પ્રવૃત્ત થવું યોગ્ય નથી.

ઉત્તમ મિત્રો અને બંધુવર્ગ વિના યુદ્ધમાં કોઈ શત્રુઓનો પરાજય કરી શકતો નથી. એ રીતે ધાર્મિક મનુષ્ય વિના કોઈ અન્ય સેના આદિ અધિપતિ પદને યોગ્ય નથી, તેમ જાણવું જોઈએ. (૧૧)

સ વજ્રભૃદ્સ્યુહા ભીમ ડગ્રઃ સહસ્ત્રચેતાઃ શતનીથઃ ઋશ્વર્વા ।

ચમ્રીષો ન શવ્સા પાઞ્ચજન્યો મરુત્વાન્નો ભવત્વિન્દ્ર ઋતી ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : ચમ્રીષઃ-જે પોતાની સેનાથી શત્રુઓની સેનાને મારનારાની ન-સમાન વજ્રભૃત્-અતિ વજ્ર સમાન = કરાલ શસ્ત્રોને બાંધનાર દસ્યુહા-ડાકુ, ચોર, લંપટ, લબાડ આદિ દુષ્ટોને મારનાર ભીમઃ-તેને ભય અને ડગ્રઃ-અતિ કઠોર દંડ દેનાર, સહસ્ત્રચેતાઃ-હજારો સારી રીતે જ્ઞાન પ્રકટ કરનાર, શતનીથઃ-જેનાથી સેંકડો યથાયોગ્ય વ્યવહારોનું વર્તન છે, પાઞ્ચજન્યઃ-જે સર્વ વિદ્યાઓથી યુક્ત અધ્યાપક, ઉપદેશક, રાજ્ય સંબંધી સભા, સેના અને સર્વ અધિકારીઓના અધિષ્ઠાતાઓમાં ઉત્તમ બનેલ છે; મસ્ત્વાન્-અને પોતાની સેનામાં ઉત્તમ વીરોને રાખનાર ઇન્દ્રઃ-પરમૈશ્વર્યવાન સેના આદિના અધિપતિ ઋશ્વર્વા-અત્યંત શવ્સા-બળવાન સેનાથી શત્રુઓને સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે, સઃ-તે નઃ-અમારા ઋતી-રક્ષા આદિ વ્યવહારોને માટે ભવતુ-થાય. (૧૨)

ભાવાર્થ - કોઈપણ મનુષ્ય ધનુર્વેદના વિશેષ જ્ઞાન અને પ્રયોગ, શત્રુઓનો નાશ, ભયંકર તીવ્ર બળ અને વિશાળ સેના વિના સેનાપતિ બની શકતો નથી અને એમ થયા વિના શત્રુઓનો પરાજય અને પ્રજાનું પાલન પણ સંભવ નથી, એમ જાણવું જોઈએ. (૧૨)

તસ્ય વજ્રઃ ક્રન્દતિ સ્મત્સ્વર્ષા દિવો ન ત્વેષો રવથઃ શિમીવાન્ ।

તં સંચન્તે સુનયસ્તં ધનાનિ મરુત્વાન્નો ભવત્વિન્દ્ર ઋતી ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : જે સભાધ્યક્ષના સ્મત્-કામમાં વર્તનની અનુકૂળતાનું સ્વર્ષાઃ-સુખથી સેવન અને રવથઃ-મહાશબ્દકારી શિમીવાન્-જેથી પ્રશંસિત કામ થાય છે, તે વજ્રઃ-શસ્ત્ર અને અસ્ત્રોનો સમૂહ ક્રન્દતિ-શ્રેષ્ઠ જુનોને બોલાવે અને દુષ્ટોને રડાવે છે. તસ્ય-તેના દિવઃ-સૂર્યના ત્વેષઃ-પ્રકાશની ન-સમાન ગુણ,

કર્મ અને સ્વભાવ પ્રકાશિત થાય છે, જે એવા છે તમ્-તે સનય:-ઉત્તમ સેવા એટલે કે સજ્જનોએ કરેલા ઉત્સાહનું સચન્ને-સેવન કરે છે અને તમ્-તે ધનાનિ-સમસ્ત ધનનું સેવન કરે છે, આ રીતે મસ્ત્વાન્-જે સભાધ્યક્ષ પોતાની સેનામાં ઉત્તમ વીરો રાખનાર ઇન્દ્ર:-પરમેશ્વર્યવાન તથા ન:-અમારી કૃતી-રક્ષા આદિ વ્યવહારોને માટે યત્ન કરે છે, તે અમારો રાજા ભવતુ-થાય. (૧૩)

ભાવાર્થ : સભાસદો, રાજ્ય કર્મચારીઓ, સૈનિકો અને પ્રજાઓએ એવા ઉત્તમ કર્મોનું સેવન કરવું જોઈએ, જેથી વિદ્યા, ન્યાય, ધર્મ અને પુરુષાર્થ ઉન્નત થઈને, સૂર્યની સમાન પ્રકાશિત થાય. એવા કર્મો વિના સુખનો ઉપભોગ, ધન અને રક્ષા થઈ શકતા નથી, તેથી આ પ્રકારના કર્મ સભા આદિના અધ્યક્ષોએ કરવા જોઈએ. (૧૩)

યસ્યાર્જસ્ટ્રં શર્વસા માનમુક્થં પરિભુજદ્રોદસી વિશ્વતઃ સીમ્ ।

સ પારિષ્ત્ક્રતુભિર્મન્દસાનો મરુત્વાન્નો ભવત્વિન્દ્ર કૃતી ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : યસ્ય-જે સભા આદિના અધિપતિના શર્વસા-શારીરિક તથા આત્મિક બળથી યુક્ત પ્રજાજન માનમ્-સત્કાર, ઉક્થમ્-વેદ વિદ્યા તથા સીમ્-ધર્મ અને ન્યાયની મર્યાદાને વિશ્વતઃ-સર્વત્રથી અજસ્રમ્-નિરંતર પાલન અને જે રોદસી-વિદ્યાનો પ્રકાશ અને પૃથિવીના રાજ્યને પણ પરિભુજત્-સારી રીતે પાલન કરે.

જે ક્રતુભિઃ-ઉત્તમ બુદ્ધિમાનીના કામોની સાથે મન્દસાનઃ-પ્રશંસા આદિથી પરિપૂર્ણ થયેલ સુખોથી પ્રજાઓનું પારિષત્-પાલન કરે છે, સઃ-તે મસ્ત્વાન્-પોતાની સેનામાં ઉત્તમ વીરોને રાખનાર ઇન્દ્ર:-પરમેશ્વર્યવાન સભાપતિ નઃ-અમારા કૃતી-રક્ષા આદિ વ્યવહારોને સિદ્ધ કરનાર નિરંતર ભવતુ-થાય. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે સત્પુરુષોનું સન્માન, દુષ્ટોનું અપમાન, પૂર્ણ વિદ્યા તથા ધર્મની મર્યાદા, પુરુષાર્થ અને આનંદ એને કરવામાં સમર્થ હોય, તે જ સભા આદિના અધ્યક્ષ આદિના અધિકારને યોગ્ય બની શકે છે. (૧૪)

ન યસ્ય દેવા દેવતા ન મર્તા આપ્શ્ચન શર્વસો અન્તમાપુઃ ।

સ પ્રરિક્વા ત્વક્ષસા ક્ષમો દિવશ્ચ મરુત્વાન્નો ભવત્વિન્દ્ર કૃતી ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : યસ્ય-જે પરમ ઐશ્વર્યવાન જગદીશ્વરના શર્વસઃ-બળની અન્તમ્-અવધિને દેવતા-દિવ્ય ઉત્તમજનોમાં દેવાઃ-વિદ્વાનો ન-નહિ મર્તાઃ-સાધારણ મનુષ્ય ન-નહિ ચન-તથા આપઃ-અન્તરિક્ષ અને પ્રાણ પણ આપુઃ-પામી શકતા નથી, જે ત્વક્ષસા-પોતાના બળરૂપ સામર્થ્યથી ક્ષમઃ-પૃથિવી, દિવઃ-સૂર્યલોક તથા ચ-અને લોકોને પ્રરિક્વા-રચીને વ્યાપ્ત થઈ રહેલ છે, સઃ-તે મસ્ત્વાન્-પોતાની પ્રજાને પ્રશંસિત કરનાર ઇન્દ્ર:-પરમેશ્વર્યવાન પરમેશ્વર નઃ-અમે લોકોના કૃતી-રક્ષા આદિ અમારા વ્યવહારને માટે નિરંતર ઉદ્યત્ ભવતુ-થાઓ. (૧૫)

સૂક્ત-૧૦૦

ભાવાર્થ : શું અનન્ત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા તે પરમાત્માનો અન્ત કોઈ પામી શકે છે જે પોતાની શક્તિથી જ પ્રકૃતિ નામક પરમ સૂક્ષ્મ સનાતન (= નિત્ય) કારણથી સર્વ પદાર્થોને સંઘાત (સ્થૂળ) રૂપમાં કરીને તથા તેનું સંરક્ષણ કરીને પ્રલયકાળમાં તેને છિન્ન-ભિન્ન કરે છે ? તેની સર્વેએ ઉપાસના શા માટે ન કરવી જોઈએ ? (૧૫)

રોહિચ્છ્યાવા સુમદંશુર્લલામીર્ઘુક્ષા રાયઃ ઋજ્રાશ્વસ્ય ।

વૃષણ્વન્તં બિભ્રતી ધૂર્ષુ રથં મન્દ્રા ચિકેત નાહુષીષુ વિક્ષુ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : જે ઋજ્રાશ્વસ્ય-ઋતુગામિની વેગવાન અશ્વ તે સભાધ્યક્ષથી સંબંધ રાખનાર શિલ્પીઓને સુમદંશુ:-જેનું ઉત્તમ જવલન લલામી:-જેમાં પ્રશંસિત સૌંદર્ય દુક્ષા-અને જેનો પ્રકાશ જ નિવાસ છે, તે રોહિત્-નીચે લાલ, શ્યાવા-ઉપર કાળી અગ્નિની જ્વાળા ધૂર્ષુ-લોખંડની સમ્યક બનેલી કળાઓમાં પ્રયુક્ત કરેલી, વૃષણ્વન્તમ્-વેગવાન, રથમ્-વિમાન આદિ યાન સમૂહને બિભ્રતી-ધારણ કરીને, મન્દ્રા-આનંદ આપનારી, નાહુષીષુ-મનુષ્યોના એ વિક્ષુ-સંતાનોને નિમિત્ત રાચે-ધનની પ્રાપ્તિને માટે વિદ્યમાન છે, તેને જે ચિકેત-સારી રીતે જાણે, તે જ ધનવાન બને છે. (૧૬)

ભાવાર્થ : જ્યારે વિમાનચાલન આદિ કાર્યોમાં સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરેલ અગ્નિ, બળતણથી પ્રજ્વલિત થાય છે, ત્યારે બે રૂપમાં જોવામાં આવે છે. એક ચમકદાર અને બીજું કાળું. તેથી અગ્નિનું 'શ્યામકર્ણારિવ' એવું નામ છે. જેમ ઘોડાના શિર પર બે કાન જોવામાં આવે છે, તેમ અગ્નિની ઉપર કાળી કજજલ = કાજલ નામવાળી શિખા હોય છે. તે એ (અગ્નિ) કાર્યોમાં સારી રીતે પ્રયુક્ત કરેલ, બહુવિધ ધનને પ્રાપ્ત કરાવીને પ્રજાઓને આનંદિત કરે છે. (૧૬)

एतत्त्यत्तं इन्द्र वृष्णा उक्थं वाषांगिरा अभि गृणन्ति राधः ।

ऋज्राश्वः प्रष्टिभिरम्बरीषः सहदेवो भयमानः सुराधाः ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમ વિદ્યા-ઐશ્વર્યયુક્ત સભાધ્યક્ષ ! જે વાષાંગિરા:-ઉત્તમ પ્રશંસિત વિદ્વાનની વાણીઓથી પ્રશંસિત પુરુષ એતત્-એ પ્રત્યક્ષ તે-આપના ઉક્થમ્-પ્રશંસિત વચન વા કામને સર્વ લોકો અભિગૃણન્તિ-આપની અભિમુખ કહે છે તે અને ત્યત્-અગ્રસ્થ વા અનુમાનિક આપનું રાધ:-ધન, વૃષ્ણો-શરીર અને આત્માની પ્રસન્નતા માટે હોય છે. તથા જે અમ્બરીષ:-શબ્દ વિદ્યાના જ્ઞાતા સહદેવ:-વિદ્વાનોની સાથે રહેનાર ભયમાન:-અધર્માચરણથી ડરીને તેથી પૃથક્ વર્તાવ-વર્તન અને દુષ્ટોને ભય પમાડનાર સુરાધા:-જે સર્વોત્તમ ધનથી યુક્ત ઋજ્રાશ્વ:-જેની સરળ મહાન રાજનીતિ આપે છે, પ્રષ્ટિભિ:-પૂછેલા પ્રશ્નોનું સમાધાન આપે છે, તે અમારાથી સેવન યોગ્ય કેમ ન હોય ? (૧૭)

ભાવાર્થ : જ્યારે વિદ્વાન ઉત્તમ રીતે ઉપદેશ આપે છે, ત્યારે અજ્ઞાનીજન વિશ્વાસ પ્રાપ્ત કરીને તે ઉપદેશનું શ્રવણ કરીને, સુવિદ્યા ધારણ કરીને, ધનાઢ્ય બનીને આનંદિત થાય છે. (૧૭)

दस्यूञ्छिम्यँश्च पुरुहूत एवैर्हत्वा पृथिव्यां शर्वा नि बर्हीत् ।

૪૨૪

ऋગ्वेદભાષ્ય

सनक्षेत्रं सखिभिः श्वित्त्वेभिः सन्त्सूर्यं सनदपः सुवज्रः ॥ १८ ॥

पदार्थ : હે **સુવજ્ર**:-જેના શ્રેષ્ઠ શસ્ત્ર અને અસ્ત્રોનો સમૂહ અને **પુસ્કૂત**:-બહુ જ સત્કાર કરેલ છે તે **શર્વા**-સમસ્ત દુઃખોનો વિનાશ કરનાર સભા આદિના અધિપતિ **શ્વિત્ત્વેભિઃ**:-શ્વેત અર્થાત્ સ્વચ્છ તેજસ્વી **સખિભિઃ**:-મિત્રોની સાથે અને **એવૈઃ**:-પ્રશંસિત જ્ઞાન અને કર્મોની સાથે **દસ્યૂન્**-ડાકુઓને **હત્વા**-સારી રીતે મારીને **શિમ્યૂન્**-શાન્ત ધાર્મિક સજ્જનો **ચ**-અને નોકર આદિને **સનત્**-પાળે, દુઃખોને **નિ,બર્હીત્**-દૂર કરે, જે **પૃથિવ્યામ્**-પોતાના રાજ્યથી યુક્ત ભૂમિમાં **ક્ષેત્રમ્**-પોતાનું નિવાસસ્થાન **સૂર્યમ્**-સૂર્યલોક, પ્રાણ **અપઃ**:-અને જળને **સનત્**-સેવે, તે સર્વને **સનત્**-સદા સેવનને યોગ્ય બને. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે સજ્જનોથી યુક્ત થયેલ મનુષ્ય અધાર્મિક વ્યવહારોનો ત્યાગ કરીને, ધાર્મિક વ્યવહારોનો પ્રચાર કરીને તથા વિદ્યાની યુક્તિથી સિદ્ધ પદાર્થોનું સેવન કરીને, પ્રજાના દુઃખોનો નાશ કરે, તેને જ સભાનો અધ્યક્ષ સર્વેએ માનવો જોઈએ, અન્યને નહિ. (૧૮)

વિશ્વાહેન્દ્રો અધિવક્તા નો અસ્ત્વપરિહૃતાઃ સનુયામ વાજમ્ ।

તન્નો મિત્રો વરુણો મામહન્તામદિતિઃ સિન્ધુઃ પૃથિવી ઉત દ્યૌઃ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર**:-પ્રશંસિત વિદ્યા અને ઐશ્વર્યયુક્ત વિદ્વાન **નઃ**:-અમારા માટે **વિશ્વાહા**-પ્રતિદિન અધિવક્તા-અધિકાધિક ઉપદેશક **અસ્તુ**-થાઓ, તેથી **અપરિહૃ વૃતાઃ**:-સર્વ પ્રકારની કુટિલતાનો ત્યાગ કરેલા અને જે **વાજમ્**-વિશેષ જ્ઞાન **સનુયામ્**-અન્યને આપીએ અને આપ સેવન કરે. **નઃ**:-અમારા તત્-એ વિજ્ઞાનને **મિત્રઃ**:-મિત્ર, **વરુણઃ**:-શ્રેષ્ઠ સજ્જન **અદિતિઃ**:-અન્તરિક્ષ, **સિન્ધુઃ**:-સમુદ્ર, નદી **પૃથિવી**-ભૂમિ **ઉત**-અને **દ્યૌઃ**:-સૂર્ય આદિ પ્રકાશમાન લોકોનો પ્રકાશ **મામહન્તામ્**-માન-સત્કારથી વૃદ્ધિ કરીએ. (૧૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને, જે સદા વિદ્યા આપનાર છે, તેની સરળ ભાવથી સેવા કરીને વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરીને શ્રેષ્ઠ મિત્ર, આકાશ, નદીઓ, ભૂમિ અને દુલોકથી ઉપકાર ગ્રહણ કરીને, સર્વ મનુષ્યોમાં સત્કારની સાથે રહેવું જોઈએ. કદાપિ વિદ્યા ગુપ્ત રાખવી નહિ, પરંતુ સર્વેએ તેને પ્રસિદ્ધ કરવી જોઈએ. (૧૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સભા આદિના અધિપતિ, ઈશ્વર અને અધ્યાપકોના ગુણોના વર્ણનથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૦૦)

સૂક્ત-૧૦૧

પ્ર મન્દિને પિતુમર્દર્ચતા વચો યઃ કૃષ્ણગર્ભા નિરહન્નૃજિશ્વના ।

અવસ્યવો વૃષણં વજ્રદક્ષિણં મરુત્વન્તં સૃખ્યાય હવામહે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : તમે **યઃ**:-જે ઉપદેશકો અને અધ્યાપકો **ઋજિશ્વના**-એવા પાઠથી કે જેમાં ઉત્તમ વાણીઓની ધારણ શક્તિની અનેક પ્રકારથી વૃદ્ધિ થાય, તેથી મૂર્ખતાનું **નિઃ**:-અહન્-નિરંતર હનન થાય, તે **મન્દિને-**

સૂક્ત-૧૦૧

આનંદિત અને આનંદ પ્રદાતાને માટે **પિતૃમત્**-શ્રેષ્ઠ બનાવેલ અન્ન અર્થાત્ પુરી, કચોરી, લાડુ, બાલુશાહી (એક મીઠાઈ), જલેબી, ઈમરતી (જલેબી જેવી એક મીઠાઈ) આદિ સર્વોત્તમ પદાર્થોવાળું ભોજન તથા **વચઃ**-પ્રિય વાણીથી **પ્રાર્ચત**-સારી રીતે નિવેદન કરીને તેનો સત્કાર કરો અને **અવસ્યવઃ**-પોતાના રક્ષા આદિ વ્યવહારોને ચાહીને **કૃષ્ણગર્ભાઃ**-જેઓએ રેખાગણિત આદિ વિદ્યાઓનો મર્મને પ્રકટ કરેલ છે, તે અમે લોકો **સખ્યા**-મિત્રના કામ વા મિત્રતાને માટે **વૃષણમ્**-વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરનારા **વજ્રદક્ષિણમ્**-જેથી અવિદ્યાનો વિનાશ કરનારી વા વિદ્યા આદિ ધન આપનારી દક્ષિણા મળે **મસ્ત્વન્તમ્**-જેની સમીપ પ્રશંસિત વિદ્યાવાન ઋત્વિજ અર્થાત્ આપ યજ્ઞ કરો, અન્યોને કરાવો, એવા ભણનારા હોય, તે અધ્યાપક અર્થાત્ શ્રેષ્ઠ ભણાવનારનો **હવામહે**-સ્વીકાર કરીએ છીએ, તેનો તમે પણ સારી રીતે સત્કારની સાથે સ્વીકાર કરો. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જેનાથી તેઓ વિદ્યા ગ્રહણ કરે તેઓનો મન, વચન, કર્મ, ધનથી સદા સત્કાર કરવો જોઈએ. જે ભણાવવાને યોગ્ય હોય તેઓએ પ્રયત્નપૂર્વક ઉત્તમ શિક્ષા આપીને વિદ્વાન બનાવવો જોઈએ. સદા શ્રેષ્ઠોની સાથે મિત્રતા કરીને ઉત્તમ કર્મ કરનારાઓની રક્ષા કરવી જોઈએ. (૧)

યો વ્યંસં જાહ્વાણેન મન્યુના યઃ શમ્બરં યો અહન્પિપ્રુમવ્રતમ્ ।

ઇન્દ્રો યઃ શુષ્ણમ્શુષ્ણં ન્યાવૃણઙ્મરુત્વન્તં સુખ્યાય હવામહે ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : **યઃ**-જે સભા અને સેના આદિના અધિપતિ **ઇન્દ્રઃ**-સમસ્ત ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત **જાહ્વાણેન**-સજ્જનોને સંતોષ આપનારા **મન્યુના**-પોતાના ક્રોધથી દુષ્ટ અને શત્રુજનોને **વ્યંસમ્ નિ**, **અહન્**-એવા મારે કે જેથી અંસ - હાંસડીથી - સ્કંધ અલગ થઈ જાય વા **યઃ**-જે શૂરવીરતા ગુણોથી યુક્ત વીર **શમ્બરમ્**-અધર્મથી સંબંધિતને અત્યંત મારે વા **યઃ**-ધર્માત્મા સજ્જન પુરુષ **પિપ્રુમ**-જે અધર્મી પેટભરાને માટે નિરંતર મારે અને **યઃ**-જે અતિ બળવાન **અવ્રતમ્**-જેના કોઈ નિયમ નહિ અર્થાત્ બ્રહ્મચર્ય, સત્યપાલન આદિ વ્રતો કરતા નથી તેને **અવૃણક્**-પોતાથી પૃથક્ કરે, તે **શૃષ્ણમ્**-બળવાન, **અશુષ્ણમ્**-શોકરહિત - હર્ષયુક્ત **મસ્ત્વન્તમ્**-સમ્યક્ પ્રશંસિત ભણનારને રાખનાર સમસ્ત ઐશ્વર્યયુક્ત સભાપતિનો **સખ્યાય**-મિત્રોના કામ વા મિત્રતાને માટે અમે **હવામહે**-સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રચંડ ક્રોધથી દુષ્ટોને મારીને, વિદ્યાની ઉન્નતિને માટે બ્રહ્મચર્ય આદિ વ્રતોનો પ્રચાર કરીને તથા અવિદ્યા અને કુશિક્ષાઓનો નિષેધ કરીને સર્વના સુખ માટે નિત્ય પ્રયત્ન કરે છે, તેની મિત્રતા કરવી જોઈએ. (૨)

યસ્ય દ્યાવાપૃથિવી પૌસ્યં મહદ્યસ્ય વ્રતે વરુણો યસ્ય સૂર્યઃ ।

યસ્યેન્દ્રસ્ય સિન્ધવઃ સર્ચતિ વ્રતં મરુત્વન્તં સુખ્યાય હવામહે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : અમે **યસ્ય**-જે **ઇન્દ્રસ્ય**-પરમૈશ્વર્યવાન જગદીશ્વર વા સભાધ્યક્ષ રાજાના **વ્રતે**-સામર્થ્ય વા સ્વભાવમાં **મહત્**-અત્યંત ઉત્તમ ગુણ અને **પૌસ્યમ્**-પુરુષાર્થયુક્ત બળ છે, **યસ્ય**-જેના **દ્યાવાપૃથિવી**-સૂર્ય અને ભૂમિ સમાન સહનશીલતા અને નીતિનો પ્રકાશ વિદ્યમાન છે, **યસ્ય**-જેના **વ્રતમ્**-સામર્થ્ય

વા શીલ = સ્વભાવને તસ્મા:-ચંદ્રમા વા ચંદ્રમાની શાન્તિ આદિ ગુણ છે; યસ્ય-જેના સામર્થ્ય અને શીલને સૂર્ય:-સૂર્યમંડળ અને તેના ગુણ સશ્ચતિ-પ્રાપ્ત થાય છે અને સિન્ધવ:-સમુદ્ર પ્રાપ્ત થાય છે, તે મસ્ત્વન્તમ્-સમસ્ત પ્રાણીઓથી તથા સમય-સમય પર યજ્ઞાદિ કરનારાઓથી યુક્ત સભાધ્યક્ષને સઙ્ખ્યાય-મિત્રના કામ વા મિત્રતાને માટે હવામહે-સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૩)

ભાવાર્થ : જેના સામર્થ્ય વિના પૃથિવી આદિ (ના રાજ્ય)ની સ્થિતિ સંભવ નથી, જે સભા આદિના અધ્યક્ષની પ્રકાશની સમાન વિદ્યા, પૃથિવીની સમાન ક્ષમા, ચંદ્રમાની સમાન શાન્તિ, સૂર્યની સમાન નીતિરૂપી જ્યોતિ અને સમુદ્રની સમાન ગંભીરતા છે, તેને છોડીને મનુષ્યે કોઈ અન્યને મિત્ર ન બનાવવો જોઈએ. (૩)

यो अश्वांनां यो गवां गोपतिर्वशी य आरितः कर्मणि कर्मणि स्थिरः ।

वीळोश्चिदिन्द्रो यो असुन्वतो वधो मरुत्वन्तं सङ्ख्याय हवामहे ॥ ४ ॥

પદાર્થ : ય:-જે ઇન્દ્ર:-દુષ્ટોનો વિનાશ કરનાર સભા આદિના અધિપતિ, અશ્વાનામ્-ઘોડાના અધ્યક્ષ, ય:-જે ગવામ્-ગાય આદિ પશુ વા પૃથિવી આદિની રક્ષા કરનાર, ય:-જે ગોપતિ:-પોતાની ઈન્દ્રિયોનો સ્વામી અર્થાત્ જિતેન્દ્રિય રહીને પોતાની ઈચ્છાનુસાર તે ઈન્દ્રિયોને ચલાવનાર વશી-મનસ, બુદ્ધિ, ચિત્ત અને અહંકારને યથાયોગ્ય વશમાં રાખનાર, આરિત:-સભાની આજ્ઞાને પ્રાપ્ત થયેલ, કર્મણિ કર્મણિ-કર્મ-કર્મમાં સ્થિર:-નિશ્ચિત, ય:-જે અસુન્વત:-યજ્ઞકર્તાઓનો વિરોધ કરનાર વીळો-બળવાનને વધ: ચિત્-વજની સમાન મારનાર હોય, તે મસ્ત્વન્તમ્-શ્રેષ્ઠ પ્રશંસિત ભણાવનારને રાખનાર સભાપતિને સઙ્ખ્યાય-મિત્રતા વા મિત્રના કામને માટે હવામહે-અમે સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જે સર્વના પાલનકર્તા, જિતેન્દ્રિય, શાન્ત, જ્યાં-જ્યાં સભા દ્વારા નિર્દિષ્ટ કરેલ હોય તે-તે કર્મમાં સ્થિર બુદ્ધિથી પ્રવૃત્ત રહેનાર અને દુષ્ટ તથા બળવાન શત્રુઓ પર વિજય કરનાર છે, તેની સાથે મનુષ્યોએ નિરંતર મિત્રતા કરીને સદા સુખોનો ઉપભોગ કરવો જોઈએ. (૪)

यो विश्वस्य जगतः प्राणतस्पतिर्यो ब्रह्मणे प्रथमो गा अविन्दत् ।

इन्द्रो यो दस्यूरधराँ अवातिरन् मरुत्वन्तं सङ्ख्याय हवामहे ॥ ५ ॥

પદાર્થ : ય:-જે ઉત્તમ દાનશીલ, પ્રથમ:-સર્વના વિખ્યાત કરનાર, ઇન્દ્ર:-ઈન્દ્રિયોથી યુક્તજીવ, બ્રહ્મણે-ચારે વેદોના જ્ઞાતાને માટે ગા:-પૃથિવી, ઈન્દ્રિયો અને પ્રકાશયુક્ત લોકોને અવિન્દત્-પ્રાપ્ત કરતા, વા ય:-જે શૂરતા આદિ ગુણયુક્ત વીર દસ્યૂન્-હૃદયપૂર્વક અન્યોનું ધન હરનારાઓને અધરાન્-નીચતા પ્રાપ્ત કરાવતા, અવાતિરન્-અધોગતિને પહોંચાડતા; વા ય:-જે સેનાધિપતિ વિશ્વસ્ય-સમસ્ત જગત:-જંગમરૂપ પ્રાણત:-જીવિત જીવસમૂહના પતિ:-અધિપતિ = સ્વામી હોય, તે મસ્ત્વન્તમ્-પોતાની સમીપ ભણાવનારને રાખનારને રાખવાવાળા સભાધ્યક્ષને અમે સઙ્ખ્યાય-મિત્રતાને માટે હવામહે-સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૫)

ભાવાર્થ : પુરુષાર્થ વિના વિદ્યા, અન્ન અને ધનની પ્રાપ્તિ થતી નથી અને શત્રુનો પરાજય પણ

સૂક્ત-૧૦૧

થતો નથી. જે ધાર્મિક સેનાપતિ મિત્રભાવથી પોતાના પ્રાણ સમાન સર્વથી પ્રેમ રાખે છે, તેને કદીપણ દુઃખ થતું નથી, તેથી એ કાર્યો સદા કરવા જોઈએ. (૫)

યઃ શૂરૈર્ભિર્હવ્યો યશ્ચ ભીરુભિર્યો ધાવદ્ભિર્હૂયતે યશ્ચ જિગ્યુભિઃ ।

ઇન્દ્રં યં વિશ્વા ભુવનાભિ સંન્દધુર્મરુત્વન્તં સ્ખ્યાયં હવામહે ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે પરમેશ્વર્યવાન સેના આદિના અધિપતિ શૂરૈર્ભિઃ-શૂરવીરોથી હવ્યઃ-આત્માન કરવા અર્થાત્ ચાહવા યોગ્ય, યઃ-જો ભીરુભિઃ-ડરપોક ચ-અને નિર્ભયોથી તથા યઃ-જે ધાવદ્ભિઃ-દોડતા મનુષ્યથી વા યઃ-જે ચ-બેઠેલા અને ચાલનારા તેનાથી જિગ્યુભિઃ-વા જીતનારા લોકોથી હૂયતે-બોલવામાં આવતા વા યમ્-જે ઇન્દ્રમ્-ઉક્ત સેનાધ્યક્ષને વિશ્વા-સમસ્ત ભુવના-લોકના પ્રાણી અભિ-સન્મુખતાથી સંદધુઃ-સમ્યક્ ધારણ કરે છે, તે મસ્ત્વન્તમ્-શ્રેષ્ઠ અધ્યાપકને રાખનાર સેનાધીશને સ્ખ્યાય-મિત્રતાને માટે અમે હવામહે-સ્વીકાર કરીએ છીએ, તેનો તમે પણ સ્વીકાર કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જે પરમાત્મા અને સેનાપતિ સર્વ લોકોને તથા સર્વ લોકોને સર્વ તરફથી મિલન કરાવે છે, તે સર્વના દ્વારા સેવન કરવા યોગ્ય અને મિત્રભાવથી માનવા યોગ્ય છે. (૬)

રુદ્રાણામેતિ પ્રદિશાં વિચક્ષુણો રુદ્રેભિર્યોષાં તનુતે પૃથુ જયઃ ।

ઇન્દ્રં મનીષા અભ્યર્ચતિ શ્રુતં મરુત્વન્તં સ્ખ્યાયં હવામહે ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : વિચક્ષુણઃ-પ્રશસ્ત ચાતુર્ય આદિ ગુણોથી યુક્ત વિદ્વાન સ્દાણામ્-પ્રાણોની સમાન દુષ્ટો અને શ્રેષ્ઠોને રડાવનાર વિદ્વાનોના પ્રદિશા-જ્ઞાનમાર્ગથી પૃથુઃ-વિસ્તૃત જયઃ-તેજને = પ્રતાપને એતિ-પ્રાપ્ત થાય છે અને સ્દેભિઃ-પ્રાણ વા નાના વિદ્યાર્થીની સાથે યોષા-વિદ્યાથી મળી અને મૂર્ખતાથી પૃથક્ થયેલી સ્ત્રી તેને તનુતે-વિસ્તૃત કરે છે, તેથી જે વિચક્ષુણ વિદ્વાન મનીષા-પ્રશંસિત બુદ્ધિથી શ્રુતમ્-પ્રખ્યાત ઇન્દ્રમ્-શાળા આદિના અધ્યક્ષનો અભ્યર્ચતિ-સર્વત્રથી સત્કાર કરીને તે મસ્ત્વન્તમ્-પોતાની સમીપ અધ્યાપકને રાખનારને સ્ખ્યાય-મિત્રતાને માટે અમે હવામહે-સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો દ્વારા પ્રાણાયામથી પ્રાણોને, સત્કારથી શ્રેષ્ઠોને અને તિરસ્કારથી દુષ્ટોને જીતીને, સમસ્ત વિદ્યાઓનો વિસ્તાર કરીને, પરમેશ્વર તથા અધ્યાપકની અર્ચના કરીને ઉપકારના દ્વારા સર્વ પ્રાણીઓનો સત્કાર કરવામાં આવે છે, તેઓ સુખી થાય છે. (૭)

યદ્ વાં મરુત્વઃ પરમે સધસ્થે યદ્વાવમે વૃજને માદયાસે ।

અત્ આ યાંહ્યધ્વરં નો અચ્છાં ત્વાયા હ્વિશ્ચક્રમા સત્યરાધઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત્વઃ-પ્રશંસિત વિદ્યાયુક્ત સત્યરાધઃ-વિદ્યા આદિ સત્ય ધનયુક્ત વિદ્વાન ! યત્-જે કારણે આપ પરમે-અત્યંત ઉત્કૃષ્ટ સધસ્થે-સ્થાનમાં અને યત્-જે કારણે વા-ઉત્તમ અવમે-અધમ

વા-વા મધ્યમ વ્યવહારમાં **બૃજને**-જેમાં મનુષ્ય દુઃખોને ત્યાગી **માદયાસે**-આનંદ આપે છે, **અતઃ**-
એ કારણે **નઃ**-અમને **અધ્વરમ્**-ભણવા ભણાવવાના, અહિંસનીય અર્થાત્ ન ત્યાગવા યોગ્ય યજ્ઞને
અચ્છ-સારી રીતે **આ**, **યાહિ**-આવો, પ્રાપ્ત થાઓ. **ત્વાયા**-આપની સાથે અમે **હવિઃ**-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય
વિશેષ જ્ઞાનને **ચક્રમ્**-કરીએ અર્થાત્ એ વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીએ. (૮)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન સર્વત્ર આનંદ પ્રદાતા, વિદ્યાદાતા અને સત્ય ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળા છે,
તેઓના સંગથી મનુષ્યોને નિરંતર સમસ્ત વિદ્યાઓ અને શ્રેષ્ઠ શિક્ષાઓ પ્રાપ્ત કરીને સર્વદા આનંદિત
રહેવું જોઈએ. (૮)

ત્વાયેન્દ્ર સોમં સુષુમા સુદક્ષ ત્વાયા હવિશ્ચક્રમા બ્રહ્મવાહઃ ।

અથા નિયુત્વઃ સર્ગણો મરુદ્ધિર્સ્મિન્ યજ્ઞે બર્હિષિ માદયસ્વ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર**-પરમ વિદ્યારૂપી ઐશ્વર્યથી યુક્ત વિદ્વાન ! **ત્વાયા**-આપની સાથે અમે **સોમમ્**-
ઐશ્વર્ય કરનાર વેદશાસ્ત્રના બોધને **સુસુમ**-પ્રાપ્ત થઈએ.

હે **સુદક્ષ**-શ્રેષ્ઠ યાતુર્યયુક્ત બળ અને **બ્રહ્મવાહઃ**-અનન્ત ધન અને વેદ વિદ્યાની પ્રાપ્તિ કરાવનાર
વિદ્વાન ! **ત્વાયા**-આપના સહિત અમે **હવિઃ**-ક્રિયા-કૌશલયુક્ત કાર્યોનું **ચક્રમ**-વિધાન કરીએ.

હે **નિયુત્વઃ**-સમર્થ ! **અથાઃ**-તદનન્તર **મરુદ્ધિઃ**-ઋત્વિજ અર્થાત્ અધ્યાપક અને **સર્ગણઃ**-પોતાના
વિદ્યાર્થીઓના સમૂહની સાથે વર્તમાન આપ **અસ્મિન્**-એ **બર્હિષિ**-અત્યંત ઉત્તમ **યજ્ઞે**-ભણવા-ભણાવવાના
સત્કારથી પ્રાપ્ત કરેલ વ્યવહારમાં **માદયસ્વ**-આનંદિત થાઓ અને અમને પણ આનંદિત કરો. (૯)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોના સંગ વિના કોઈપણ મનુષ્ય વિદ્યારૂપી ઐશ્વર્ય અને આનંદ પ્રાપ્ત કરી શકતો
નથી, તેથી સર્વ મનુષ્યો વિદ્વાનોનો સત્કાર કરીને તથા તેના દ્વારા વિદ્યા અને સુશિક્ષા સર્વ પ્રકારથી
સન્માનિત થાય. (૯)

માદયસ્વ હરિભિર્યે ત ઇન્દ્ર વિ ષ્યસ્વ શિપ્રે વિ સૃજસ્વ ધેને ।

આ ત્વા સુશિપ્ર હરયો વહન્તૂશન્ હૃવ્યાન્ પ્રિતિ નો જુષસ્વ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે **સુશિપ્ર**-શ્રેષ્ઠ સુખ પહોંચાડનાર **ઇન્દ્ર**-પરમૈશ્વરયુક્ત સેનાપતિ ! **યે**-જે **તે**-આપના
પ્રશંસિત યુદ્ધમાં અતિ પ્રવીણ અને ઉત્તમતાયુક્ત શિક્ષિત ધોડાઓ છે, તે **હરિભિઃ**-ધોડાઓથી **નઃ**-અમને
માદયસ્વ-આનંદિત કરો; **શિપ્રે**-અને સર્વ સુખ પ્રાપ્તિ કરાવનાર તથા **ધેને**-વાણીની સમાન સમસ્ત
આનંદ રસના આપનારા આકાશ અને ભૂમિ લોકને **વિષ્યસ્વ**-પોતાનાં રાજ્યથી નિરંતર પ્રાપ્તિ થાય.
વિસૃજસ્ય-અને ત્યાગ અર્થાત્ વૃદ્ધાવસ્થામાં તપ કરવા માટે એ રાજ્યનો ત્યાગ કરો. જે **હરયઃ**-ધોડાઓ
ત્વામ્-આપનું **આ**, **વહન્તુ**-વહન કરે છે વા જેનાથી **ઉશન્**-આપ અનેક પ્રકારની કામનાઓ કરીને
હૃવ્યાન્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય યુદ્ધ આદિના કાર્યોનું સેવન કરો છો, તે કાર્યોના પ્રત્યે **નઃ**-અમને **જુષસ્વ**-

સૂક્ત-૧૦૨

પ્રસન્ન કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : સેનાપતિએ સેનાના સર્વ અંગોને પૂર્ણ બળથી યુક્ત તથા સુરક્ષિત કરીને, સર્વ વિદ્નોને દૂર કરીને તથા પોતાના રાજ્યનું પાલન કરીને સર્વ પ્રજાઓને નિરંતર પ્રસન્ન રાખવી જોઈએ. (૧૦)

મૃસ્તૌત્રસ્ય વૃજનસ્ય ગોપા વ્યમિન્દ્રેણ સનુયામ વાજમ્ ।

તન્નો મિત્રો વરુણો મામહન્તામદિતિઃ સિન્ધુઃ પૃથિવી ઉત દ્યૌઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : જે મસ્તૌત્રસ્ય-વાયુ આદિના વેગાદિ ગુણોથી પ્રશંસાને પ્રાપ્ત વૃજનસ્ય-અને દુઃખવર્જિત અર્થાત્ જેમાં ન થાય તેવા વ્યવહારના ગોપા:-રાખનાર સેનાધિપતિ છે, તે ઇન્દ્રેણ-ઐશ્વર્યદાતા સેનાપતિની સાથે વર્તમાન વયમ્-અમે જે કારણે વાજમ્-સંગ્રામનું સનુયામ્-સેવન કરીએ તત્-એ કારણે મિત્ર:-મિત્ર વસગ:-શ્રેષ્ઠ ગુણવાનજન, અદિતિ:-સમસ્ત વિદ્વાન મંડળી, સિન્ધુઃ-સમુદ્ર, પૃથિવી-ભૂમિ ઉત-અને દ્યૌઃ-સૂર્યલોક ન:-અમારો મામહન્તામ્-સત્કાર કરવાનો હેતુ થાય. (૧૧)

ભાવાર્થ : નિશ્ચય જ યુદ્ધમાં કોઈના પણ દ્વારા પૂર્ણ બળવાન સેનાપતિ વિના શત્રુઓનો પરાજય કરી શકાતો નથી. કોઈ સેનાપતિ સુશિક્ષિત, પૂર્ણ બલવાન, અંગો તથા ઉપાંગોથી યુક્ત અને દષ્ટ-પુષ્ટ એના વિના શત્રુઓને જીતવા તથા રાજ્યનું પાલન કરવામાં સમર્થ થઈ શકતો નથી. એના વિના મિત્ર આદિ સુખદાયી થઈ શકતા નથી. તેથી એ સર્વ મનુષ્યોને યથાવત્ માનવા જોઈએ. (૧૧)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર, સભા, સેના અને શાળા આદિના અધિપતિઓના ગુણોનું વર્ણન છે, એથી આ સૂક્તાર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૦૧)

સૂક્ત-૧૦૨

इमां ते धियं प्र भरे महो महामस्य स्तोत्रे धिषणा यत्त आनजे ।

तमुत्सवे च प्रसवे च सासहिमिन्द्रं देवासः शवसामदन्ननु ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સર્વ વિદ્યાદાતા શાળા આદિના અધિપતિ ! યન્-જે તે અસ્ય-એ આપની ધિષણા-વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષા કરેલી વાણી આનજે-સર્વજનોએ ઈચ્છી, પ્રકટ કરી અને સમજી છે. જે તે-આપના ઇમામ્-એ મહ:-મહાન મહીમ્-સત્કાર કરવા યોગ્ય ધિયમ્-બુદ્ધિને સ્તોત્રે-પ્રશંસનીય વ્યવહારમાં પ્રભરે-અત્યંત ધરે અથવા સત્કાર કરે. વા ઉત્સવે-ઉત્સવ ચ-અને સાધારણ કામમાં વા પ્રસવે-પુત્ર આદિના ઉત્પન્ન થતા અને ચ-મરણમાં જે સાસહિમ-અતિ ક્ષમાપન કરનાર ઇન્દ્રમ્-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ કરાવનાર આપને દેવાસ:-વિદ્વાનજનો શવસા-બળથી અનુ, અમદન્-આનંદ આપે છે વા આનંદિત થાય છે, તમ્-તે આપને હું પણ અનુમોદિત કરું. (૧)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ સર્વ ધાર્મિક વિદ્વાનોની વિદ્યા, બુદ્ધિ અને કર્મોને ધારણ કરીને સ્તુતિની સાથે વ્યવહારોનું સેવન કરવું જોઈએ.

જેઓને વિદ્યા અને સુખ પ્રાપ્ત થાય છે, તેઓ સર્વના સુખના અને દુઃખના વ્યવહારોમાં સન્માનિત કરીને સદા આનંદિત કરે. (૧)

अस्य श्रवो नद्यः सप्त बिभ्रति द्यावाक्षामा पृथिवी दर्शतं वपुः।

अस्मे सूर्याचन्द्रमसाभिचक्षे श्रद्धे कर्मिन्द्र चरतो वितर्तुर्म॥ २ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યપ્રદ ! અસ્ય-નિશેષ વિદ્યાયુક્ત જગદીશ્વરના વા સમસ્ત વિદ્યા ભણાવનાર આપજનોના શ્રવ:-સામર્થ્ય વા અન્ન અને સપ્ત-સાત પ્રકારના સ્વાદયુક્ત જળવાળી નદ્ય:-નદી દર્શતમ્-જોવા અને વિતર્તુર્મ્-અનેક પ્રકારની નૌકા આદિ પદાર્થોથી તરવા યોગ્ય મહાનદીમાં તરવા માટે કમ્-સુખકારક વયુ:-રૂપને-શરીરને બિભ્રતિ-ધારણ કરતી વા પોષણ કરાવતી તથા દ્યાવાક્ષામા-પ્રકાશ અને ભૂમિ મળીને વા પૃથિવી-અન્તરિક્ષ, સૂર્યાચન્દ્રમસા-સૂર્ય અને ચંદ્રમા આદિ લોક ધારણ કરીને પુષ્ટિ કરાવો છો, એ સર્વ અસ્મે-અમારા અભિચક્ષે-મુખની સન્મુખ જોવા શ્રદ્ધે-અને શ્રદ્ધા કરાવવા માટે પ્રકાશ અને ભૂમિ વા સૂર્ય અને ચંદ્રમા બે - બે ચરત:-પ્રાપ્ત થાય છે તથા અન્તરિક્ષ પ્રાપ્ત થાય છે તેમજ અન્ય ઉક્ત પદાર્થો પ્રાપ્ત થાય છે. (૨)

ભાવાર્થ : પરમાત્માના રચવાથી પૃથિવી આદિ આદિ લોક અને તેમાં રહેલ પદાર્થો પોત-પોતાનાં રૂપને ધારણ કરીને સર્વ પ્રાણીઓને જોવા માટે અને શ્રદ્ધા માટે અવસ્થિત બનીને તથા સુખને ઉત્પન્ન કરીને જવા-આવવા આદિ વ્યવહારોના નિમિત્ત બને છે.

વિદ્યા વિના એથી (સાંસારિક) કોઈ પ્રકારનું પણ સુખ થતું નથી. તેથી ઈશ્વરની ઉપાસનાથી અને વિદ્યાનોના સંગથી લોક-વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરીને સર્વને સદા સુખી રાખવા જોઈએ. (૨)

तं स्मा रथं मघवन् प्राव सातये जैत्रं यं ते अनुमदाम संगमे।

आजा न इन्द्र मनसा पुरुष्टुत त्वायद्भ्यो मघवञ्छर्म यच्छ नः॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-પ્રશસ્ત, પૂજ્ય એ ધનયુક્ત ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્યપ્રદ સેનાપતિ ! આપ ન:-અમને સાતયે-બહુ જ ધન પ્રાપ્તિને માટે જૈત્રમ્-જેથી સંગ્રામોમાં જીતે તમ્-તે સ્મ-અદ્ભુત ગુણોને પ્રકાશિત કરનાર રથમ્-વિમાન આદિ રથસમૂહ જોડીને આજા-જ્યાં શત્રુઓ વીર જઈ-જઈને મળે, તે સંગમે-સંગ્રામમાં પ્ર;અવ-પહોંચાડો અર્થાત્ આપના રથને ત્યાં લઈ જાઓ; કયા રથને ? કે યમ્-જે તે-આપના રથની અને અનુ, મદામ-પાછળથી પ્રશંસા કરીએ.

હે પુષ્ટુત-બહુ જ શૂરવીરોમાં પ્રશંસા પ્રાપ્ત મઘવન્-પ્રશંસિત ધનયુક્ત ! આપ મનસા-વિશેષ જ્ઞાન ત્વાયદ્ભ્ય:-પોતાનાથી આપની યાહના કરતા ન:-અમારા માટે અદ્ભુત શર્મ-સુખ યચ્છ-પ્રદાન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જ્યારે શૂરવીર સૈનિક અને સેનાપતિ યુદ્ધ કરવા જાય, ત્યારે તેઓએ એકબીજાને અનુમોદન આપવેલાખ્ય

સૂક્ત-૧૦૨

અને રક્ષણ કરીને શત્રુઓની સાથે યુદ્ધ કરાવીને, તે શત્રુઓનો પરાજય કરીને, પોતાના લોકોને હર્ષિત કરીને તથા શત્રુઓને પણ સંતુષ્ટ કરીને સદા વર્તાવ કરવો જોઈએ. (૩)

વયં જયેમ ત્વયા યુજા વૃતમસ્માકમંશમુદવા ભરેભરે ।

અસ્મભ્યમિન્દ્ર વરિવઃ સુગં કૃધિ પ્ર શત્રૂણાં મઘવન્ વૃષ્યા રુજ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર**-શત્રુ દળ વિદારક સેનાપતિ ! તમે **ભરેભરે**-પ્રત્યેક સંગ્રામમાં **અસ્માકમ્**-અમારા **વૃતમ્**-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય **અંશમ્**-સેવા વિભાગ **અવ**-રાખો, ચાહો, જાણો, પ્રાપ્ત થાઓ, પોતાનામાં રમાઓ, માંગો, પ્રકાશિત કરો, તેનાથી આનંદિત થવા આદિ ક્રિયાઓથી સ્વીકાર કરો; વા ભોજન, વસ્ત્ર, ધન, વાહન, ધનભંડારનો ભાગ વહેંચો તથા **અસ્મભ્યમ્**-અમારા માટે **વરિવઃ**-પોતાનું સેવન **સુગમ્**-સુગમ **કૃધિ**-સરળ કરો.

હે **મઘવન્**-પ્રશસ્ત બળવાન ! તમે **વૃષ્યા**-શસ્ત્ર વર્ષાવનારાઓની શસ્ત્રવૃષ્ટિને માટે હિતરૂપ પોતાની સેનાથી **શત્રૂણામ્**-શત્રુઓની સેનાઓને **પ્ર**, **રુજ**-સમ્યક્ કાપો અને એવા સાથી **ત્વયા**, **યુજા**-જે આપ તેઓની સાથે **વયમ્**-યુદ્ધ કરનારા અમે શત્રુઓના બળને **ઉત્**-જયેમ-સમ્યક્ રીતે જીતીએ. (૪)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ જ્યારે જ્યારે યુદ્ધ કરવા પ્રવૃત્ત થાય, ત્યારે ત્યારે ધન, શસ્ત્ર, કોશ (= ધનભંડાર) તથા યાનરૂપી સેનાના સાધનો-ઉપસાધનો પૂર્ણ કરીને અને પ્રશસ્ત સેનાપતિથી રક્ષિત થઈને અન્ય મંત્રણા અને યુક્તિથી શત્રુઓની સાથે યુદ્ધ કરીને શત્રુઓની સેનાને સદા જીતે. આ પ્રકારના પુરુષાર્થ વિના નિશ્ચય જ કોઈની જીત થઈ શકતી નથી. તેથી આ કાર્ય સદા કરવા જોઈએ. (૪)

નાના હિ ત્વા હવમાના જના ડુમે ધનાનાં ધર્ત્તરવસા વિપન્યવઃ ।

અસ્માકં સ્મા રથમા તિષ્ઠ સાતયે જૈત્રં હીન્દ્ર નિભૃતં મનસ્તવ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર**-યથાયોગ્ય વીરોના રક્ષક ! આપ **ધનાનામ્**-રાજ્યની વિભૂતિઓને **સાતયે**-અલગ વિભાગ-વહેંચવા માટે **સ્મ**-આનંદપૂર્વક જેમાં **તવ**-તમારી **મનઃ**-વિચાર કરનારી ચિત્તની વૃત્તિ **નિભૃતમ્**-નિરંતર ધારણ કરેલી હોય તે **અસ્માકમ્**-અમારા **જૈત્રમ્**-જે મહાન દંઢ જેથી શત્રુ જીતી શકાય **રથમ્**-એવા વિજય કરાવનાર વિમાન આદિ યાન **હિ**-જ ને **આતિષ્ઠ**-સારી રીતે સ્વીકારી સ્થિત થાઓ.

હે **ધર્ત્તઃ**-ધારણ કરનાર ! તમારી આજ્ઞામાં પોતાનું વર્તન રાખીને **અવસા**-રક્ષા આદિ આપના ગુણોની સાથે વર્તમાન **નાના**-અનેક પ્રકાર **હવમાનાઃ**-ચાહેલ-ઈચ્છેલ **વિપન્યવઃ**-વિવિધ વ્યવહારોમાં ચતુર બુદ્ધિમાન **જનાઃ**-લોકો **ડુમે**-એ પ્રત્યક્ષથી પરીક્ષા કરેલ અમે **ત્વામ્**-તમારો અનુકૂળ **હિ**-જ વર્તન રાખીએ. (૫)

ગોજિતાં બાહુ અમિતક્રતુઃ સિમઃ કર્મન્કર્મજ્ઞતમૂતિઃ ખજંકરઃ ।

૪૩૨

અગ્નિવેદભાષ્ય

સૂક્ત-૧૦૨

પ્રતિમાનમ્-પરિમાણ વા ઉપમાન જેમ હોય, તેમ સનાત્-સનાતન કારણ વા ઓજસ:-બળ વા જનુષા-ઉત્પન્ન કરેલ કામથી તિસ્ત્ર:-ત્રણ પ્રકાર ભૂમી:-નીચેની, ઉપરની અને મધ્યમ અર્થાત્ ઉત્તમ, અધમ અને મધ્યમ ભૂમિ તથા ત્રીણિ-ત્રણ પ્રકારના રોચના-પ્રકાશયુક્ત વિદ્યા, શબ્દ અને સૂર્ય; તથા ન્યાય કરવો, બળ અને રાજ્યપાલન આદિ કામોમાં તમે બન્ને યથાયોગ્ય નિર્વાહ કરનારા અસિ-છો; અને ઉક્ત પંચભૂતમય ઇદમ્-આ વિશ્વમ્-સમસ્ત ભુવનમ્-જેમાં પ્રાણી હોય છે તે જગતના અતિ, વવક્ષિથ-અત્યંત નિર્વાહ કરવાની ઈચ્છા કરો છો એથી ઈશ્વર ઉપાસના કરવા યોગ્ય અને વિદ્વાન આપ સત્કાર કરવા યોગ્ય છો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે અદ્વિતીય ઈશ્વર દ્વારા કારણથી સમસ્ત કાર્ય જગત રચીને તથા પાલન કરીને સંહાર કરવામાં આવે છે, તેને જ ઈષ્ટ (દેવ) માનવા જોઈએ.

જે અનુપમ સામર્થ્યવાળા સભાપતિ પ્રસિદ્ધ ન્યાય આદિ ગુણોથી સમસ્ત રાજ્યને સંતુષ્ટ કરે છે, તેનો સત્કાર કરવો જોઈએ. (૮)

ત્વાં દેવેષુ પ્રથમં હવામહે ત્વં બંભૂથ પૃતનાસુ સાસહિઃ ।

સેમં નઃ કારુમ્પમન્યુમુદ્ધિદમિન્દ્રઃ કૃણોતુ પ્રસવે રથં પુરઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સેનાપતે ! જે કારણે ત્વમ્-આપ પૃતનાસુ-પોતાની વા શત્રુઓની સેનાઓમાં સાસહિઃ-અત્યંત સહનશીલ બંભૂથ-હોય છે, તેથી દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં પ્રથમમ્-પ્રથમ ત્વામ્-સમગ્ર સેનાના અધિપતિ આપનો હવામહે-અમે સ્વીકાર કરીએ છીએ.

જે ઇન્દ્રઃ-સમસ્ત ઐશ્વર્યને પ્રકટ કરનાર આપ પ્રસવે-જેમાં વીર જનને પ્રેરિત કરવામાં આવે છે તે રાજ્યમાં અદ્ભુદમ્-પૃથિવીનું વિદારણ કરીને ઉત્પન્ન થનાર કાષ્ટ વિશેષથી બનાવેલ રથમ્-વિમાન આદિ રથને પુરઃ-પુરઃસરમ અગ્રિમ રહે છે. સઃ-તે આપ નઃ-અમારે માટે ઇમમ્-એ ઉપમન્યુમ્-સમીપમાં માનવા યોગ્ય કાસ્મ્-ક્રિયા-કૌશલ કરનાર જનને કૃણોતુ-પ્રસિદ્ધ કરે. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે ઉત્તમ વિદ્વાન, સેનાની રક્ષા કરનાર તથા શત્રુ સૈન્યને ઇન્ન-મિન્ન કરવામાં નિપુણ, શિલ્પજ્ઞાતા લોકોના પ્રિય અને યુદ્ધમાં અગ્રગામી થવાના કારણે અતિ યોદ્ધા છે તેને જ સેનાપતિ બનાવવો જોઈએ. (૯)

ત્વં જિગેથ ન ધનાં રુરોધિથાર્ભેષ્વાજા મઘવન્મહત્સુ ચ ।

ત્વામુગ્રમવસે સં શિંશીમસ્યથાં ન ઇન્દ્ર હવનેષુ ચોદય ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-પરમ પૂજ્ય ધનાદિ સામગ્રીયુક્ત ઇન્દ્ર-શત્રુ વિદારક સેનાપતિ ! જે ત્વમ્-આપ ચતુરંગ = ચોતરફ નાકાબંધી સેના સહિત અર્ભેષુ-અલ્પ મહત્સુ-મહાન ચ-અને મધ્યમ આજા-સંગ્રામોમાં શત્રુઓને જિગેથ-જીતેલ છો અને ઉક્ત સંગ્રામોમાં ધના-ધન આદિ પદાર્થોને ન-ન સ્તોધિથ-

સૂક્ત-૧૦૩

પરમેશ્વરની રચનાથી જ પ્રસિદ્ધ છે, એમ માનો. આવો વિચિત્ર સંસાર વિધાતા વિના સંભવ થઈ શકતો નથી, તેથી નિશ્ચય જ આ જગતનો રચયિતા ઈશ્વર છે અને જીવરચિત સૃષ્ટિનો કર્તા જીવ છે. (૧)

સ ધારયત્પૃથિવીં પૃપ્રથચ્ચ વજ્રેણ હૃત્વા નિરુપઃ સસર્જ ।

અહન્નહિમભિનદ્રૌહિણં વ્યહન્વ્યંસં મઘવા શર્ચીભિઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! મઘવા-સૂર્યલોક શર્ચીભિઃ-કામોથી પૃથિવીમ્-પૃથિવીને ધારયત્-ધારણ કરે છે, પોતાના તેજ ચ-અને વિદ્યુત્ આદિને પૃપ્રથચ્-ફેલાવે છે, તે પોતાના તેજથી સર્વ જગતને પ્રકાશિત કરે છે, વજ્રેણ-પોતાના કિરણ સમૂહથી મેઘને હૃત્વા-મારીને અપઃ-જળોને નિઃ, સસર્જ-નિરંતર ઉત્પન્ન કરે છે, ફરી અહિમ્-મેઘનું અહન્-હનન કરે છે, રૌહિણમ્-રોહિણી નક્ષત્રમાં ઉત્પન્ન થયેલા મેઘનું અભિનત્-વિદારણ કરે છે, વ્યંસમ્-વિ, અહન્-માત્ર સાધારણ વિદારણ જ નહિ પરંતુ કટિ, અંસ, ભુજા આદિને જેમ એવા રંડ, મુંડ, મુયંડ, ઉદંડ વીરની સમાન વિશેષ કરીને મેઘોનું હનન કરે છે, સઃ-તે સૂર્યલોક ઈશ્વરે રચેલ છે, તેમ જાણો. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, એ જોવું જોઈએ કે પ્રસિદ્ધ સૂર્યલોક છે, તે છેદન, આકર્ષણ, પ્રકાશન આદિ કર્મોથી વર્ષા કરીને, પૃથિવીને ધારણ કરીને, અવ્યક્ત [= અપ્રકટ] પદાર્થોને પ્રકાશિત કરીને સર્વ પ્રાણીઓને વ્યવહારમાં ચલાવે છે, તે પરમાત્માની રચના વિના કદાપિ સંભવ થઈ શકતું નથી. (૨)

સ જાતૂર્ભર્મા શ્રદ્ધધાનુ ઓજઃ પુરો વિભિન્દન્નચરુદ્ધિ દાસીઃ ।

વિદ્વાન્વિજ્ઞિન્દસ્યવે હૈતિમસ્યાર્યં સહૌ વર્ધયા દ્યુમ્નમિન્દ્ર ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વજ્રિન્-પ્રશંસિત શસ્ત્ર સમૂહયુક્ત ઇન્દ્ર-શ્રેષ્ઠ પદાર્થોના દાતા સેના આદિના સ્વામી ! જે જાતૂર્ભર્મા-ઉત્પન્ન થયેલ સાંસારિક પદાર્થોને ધારણ શ્રદ્ધધાનઃ-અને સારા કાર્યોમાં પ્રીતિ કરનારા વિદ્વાન્-વિદ્વાન આપ અસ્ય-એ દુષ્ટજનની દાસીઃ-નાશ પામનારી સમાન દાસી પ્રધાન ધુરઃ-નગરીઓના દસ્યવે-દુષ્ટ કામ કરતા જનને માટે વિભિન્દન્-વિનાશ કરીને વ્યચરત્-વિચરે છે, સઃ-તે આપ શ્રેષ્ઠ સજ્જનોને માટે હૈતિમ્-અતિ વર્ધક વજ્રને આર્યમ્-શ્રેષ્ઠ વા અતિ શ્રેષ્ઠના એ સહઃ-બળ દ્યુમ્નમ્-ધન વા ઓજઃ-પરાક્રમની વર્ધય-વૃદ્ધિ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય દસ્યુઓ (ચોર, ડાકુ, લબાડ, લંપટ, કજિયાખોરો)નો વિનાશ કરીને, શ્રેષ્ઠોને હર્ષિત કરીને તથા શરીર અને આત્માના બળની વૃદ્ધિ કરીને ધન આદિ દ્વારા સુખોની વૃદ્ધિ કરે છે. તેઓ સર્વના દ્વારા 'શ્રદ્ધા કરવા યોગ્ય છે.' (૩)

તદૂચુષે માનુષેમા યુગાનિ કીર્ત્તેન્યં મઘવા નામ્ બિભ્રત્ ।

ઉપપ્રયન્દસ્યુહૃત્યાય વજ્રી યદ્ધ સૂનુઃ શ્રવસે નામ્ દુધે ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે મઘવા-પુષ્કળ ધનવાન સૂનુઃ-વીરનો પુત્ર વજ્રી-પ્રશંસિત શસ્ત્ર-અસ્ત્ર ધારણ કરેલ સેનાપતિ-જેમ સૂય પ્રકાશમાન છે, તેમ પ્રકાશિત થઈને ઊચુષે-કહેવાની યોગ્યતાને માટે વા દસ્યુહૃત્યાય-જેને

માટે ડાકુઓનું હનન કરવામાં આવે, તે શ્રવસે-ધનને માટે ઇમા-એ માનુષા-મનુષ્યોમાં થનાર યુગાનિ-વર્ષોને તથા ક્ષીર્તેન્યમ્-કીર્તનીય નામ-પ્રસિદ્ધ અને જળને વિભ્રત્-ધારણ કરીને ઉપપ્રયન્-ઉત્તમ મહાત્માની સમીપ જઈને યત્-જે નામ-પ્રસિદ્ધ કામને દઘે-ધારણ કરે છે તત્-તે ઉત્તમ કાર્યને હ-નિશ્ચયથી અમે પણ ધારણ કરીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય (દિવસ-રાત આદિ:કાળ અવયવોને તથા જળને ધારણ કરીને સર્વ પ્રાણીઓનાં સુખને માટે અંધકારનો નાશ કરીને સુખ પ્રદાન કરે છે, તેમ જ સેનાપતિ સુખપૂર્વક વર્ષો અને સુખને ધારણ કરીને શત્રુઓના નાશ દ્વારા સર્વના સુખને માટે ધન ઉત્પન્ન કરે. (૪)

યદસ્યેદં પશ્યતા ભૂરિં પુષ્ટં શ્રદિન્દ્રસ્ય ધત્તન વીર્યીય ।

સ ગા અવિન્દત્સો અવિન્દદશ્વાન્સ ઓષધીઃ સો અપઃ સ વનાનિ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સઃ-તે સેનાપતિ સૂર્યની સમાન ગાઃ-ભૂમિઓને અવિન્દત્-પ્રાપ્ત થાય છે, સઃ-તે અશ્વાન્-મહાન પદાર્થોને અવિન્દત્-પ્રાપ્ત થાય છે, સઃ-તે ઓષધીઃ-ઔષધિઓ અર્થાત્ ઘઉં, અડદ, મગ, ચણા આદિને પ્રાપ્ત થાય છે; સઃ-તે અપઃ-સૂર્ય જેમ જળને તેમ કર્મોને પ્રાપ્ત થાય છે સઃ-તથા તે સૂર્ય વનાનિ-જેમ તેમ વનોને પ્રાપ્ત થાય છે, અસ્ય-એ ઇન્દ્રસ્ય-સેનાબળયુક્ત સેનાપતિના તત્-તે કર્મને વા ઇદમ્-આ ભૂરિં-બહુ જ પુષ્ટમ્-દૃઢ શ્રુત્-સત્યાચરણને તમે પશ્યત-જુઓ અને વીર્યાય-બળ પ્રાપ્તિ માટે ધત્તન-ધારણ કરો. (૫).

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ તેની પ્રાપ્તિ ઉત્તમ સત્યાચરણથી (થાય) તેને જ ધારણ કરવા જોઈએ. તેના વિના સત્ય પરાક્રમ અને સર્વ પદાર્થોનો લાભ થતો નથી. (૫)

ભૂરિકર્મણે વૃષભાય વૃષ્ણે સત્યશુષ્માય સુનવામ્ સોમમ્ ।

ય આદૃત્યા પરિપન્થીવ શૂરોડયજ્વનો વિભજન્નેતિ વેદઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : અમે યઃ-જે શૂરઃ-નિડર શૂરવીર પુરુષનો આદૃત્ય-આદર સત્કાર કરીને પરિપન્થીવ-જેમ સર્વ પ્રકારના માર્ગમાં ચાલતા ડાકુ બીજાઓનાં ધન આદિ સર્વસ્વને હરી લે છે, તેમ ચોરોના પ્રાણ તથા તેના પદાર્થોને છીનવીને હરી લેવા. તે વિભજન્-વિભાગ અર્થાત્ શ્રેષ્ઠ અને દુષ્ટ પુરુષોના જુદા-જુદા કરીને તેમાંથી અયજ્વનઃ-જે યજ્ઞ કરતા નથી. તેના વેદ-ધનને એતિ-છીનવી લઈને તે ભૂરિકર્મણે-બહુ કામ કરનારા વૃષભાય-શ્રેષ્ઠ વૃષ્ણો-સુખદાયક સત્યશુષ્માય-નિત્ય બળવાન સેનાપતિને માટે જેમ સોમમ્-ઐશ્વર્ય સમૂહને સુનવામ્-ઉત્પન્ન કરે, તેમ તમે પણ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે ડાકુની સમાન દૃઢ સાહસી બનીને ચોરોનું સર્વસ્વ હરીને તથા સત્કર્મ કરનારાઓનો આદર કરીને પુરુષાર્થી, બળવાન અને ઉત્તમ મનુષ્ય હોય, તેને જ સેનાપતિ બનાવવો જોઈએ. (૬)

તદિન્દ્ર પ્રેવ વીર્યં ચકર્થ યત્સન્તં વજ્રેણાબોધયોઽહિમ્ ।

સૂક્ત-૧૦૪

અનુ ત્વા પત્નીર્હૃષિત વયશ્ચ વિશ્વે દેવાસો અમદન્નનુ ત્વા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સેનાપતિ ! આપ સસન્તમ્-સૂતેલા ચિંતારહિત અહિમ્-સર્પ વા શત્રુને યત્-જે વજ્રેણ-તીક્ષ્ણ શસ્ત્રથી અબોધયઃ-જગાડો છો તત્-તે વીર્યમ્-પોતાના બળને પ્રેવ-પ્રકટ જેમ ચકર્થ-કરો છો અનુ-પશ્ચાત્ હૃષિતમ્-ઉત્પન્ન થયેલ છે આનંદ જેને તે ત્વા-આપને પત્ની-આપની સ્ત્રીજન અને વયઃ-જ્ઞાનવાન વિશ્વે-સમસ્ત દેવાસશ્ચ-વિદ્વાનજન પણ ત્વા-આપને અન્વમદન્-અનુકૂળતાથી પ્રસન્ન કરે છે. (૬)

ભાવાર્થ : બળવાન સેનાપતિના દ્વારા દુષ્ટ પ્રાણી તથા દુષ્ટ શત્રુ-જન વિધિપૂર્વક મારી નાખવામાં આવે છે. (૭)

શુષ્ણં પિપ્તુ કુયવં વૃત્રમિન્દ્ર યદાવધીર્વિ પુરઃ શમ્બરસ્ય ।

તન્નો મિત્રો વરુણો મામહન્તામદિતિઃ સિન્ધુઃ પૃથિવી ઉત દ્યૌઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સેનાપતિ ! યદા-જ્યારે સૂર્ય શુષ્ણમ્-બળવાન કુયવમ્-જેથી જવ આદિ થાય છે અને પિપ્તુમ્-જળ આદિ પદાર્થોને પરિપૂર્ણ કરે છે, તે વૃત્રમ્-મેઘ વા શમ્બરસ્ય-અત્યંત વરસનાર બળવાન મેઘની પુરઃ-સંપૂર્ણ ઘટાટોપ અને ઉભરેલી મંડળીઓ-ખાડાઓ (વાદળાંઓના થર જામેલી રીંછડીઓ જેવી વાદળીઓ ડેકા દેતી હોય તે)નું હનન કરે છે, તેમ શત્રુઓની નગરીઓને વિ, અવધીઃ-મારો છો - નાશ કરો છો, તત્-ત્યારે, મિત્રઃ-મિત્ર, વરુણઃ-ઉત્તમ ગુણયુક્ત, અદિતિઃ-અન્તરિક્ષ, સિન્ધુઃ-સમુદ્ર, પૃથિવી-પૃથિવી ઉત-અને દ્યૌઃ-સૂર્યલોક, નઃ-અમારાથી મામહન્તામ્-સત્કાર કરાવવાના હેતુ બનો છો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જેવી રીતના સૂર્યના ગુણો છે, તેની ઉપમા અર્થાત્ અનુસારથી પોતાના ગુણોના દ્વારા સેવક આદિથી તથા પૃથિવી આદિથી ઉપકારો લઈને તથા શત્રુઓને મારીને નિરંતર સુખી રહેવું જોઈએ. (૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈશ્વર, સૂર્ય અને સેનાધિપતિના ગુણોના વર્ણનથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૦૩)

સૂક્ત-૧૦૪

યોનિષ્ટ ઇન્દ્ર નિષદે અકારિ તમા નિ ષીદ સ્વાનો નાર્વી ।

વિમુચ્યા વયોઽવસાયાશ્વાન્દોષા વસ્તોર્વહીયસઃ પ્રપિત્વે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-ન્યાયાધીશ ! તે-આપના નિષદે-બેસવા માટે યોનિઃ-જે રાજ સિંહાસન અમે અકારિ-કરેલ છે, તમ-તેના પર આપ આ નિષીદ-બેસો; અને સ્વાનઃ-હણહણતા અર્વા-ઘોડાની ન-સમાન પ્રપિત્વે-પહોંચવા યોગ્ય સ્થાનમાં કોઈ સમય જવા ઈચ્છતા આપ વયઃ-પક્ષી વા આયુની અવસાય-

રક્ષા આદિ વ્યવહારને માટે અશ્વાન્-દોડતા ઘોડાને વિમુચ્ચ-છોડીને દોષા-રાત્રિ વા વસ્તો:-દિવસે વહીયસ:- આકાશ માર્ગથી શીઘ્ર પહોંચાડનાર અગ્નિ આદિ પદાર્થોને સંયુક્ત કરો અર્થાત્ વિમાન આદિ રથોને અગ્નિ-જળ આદિ કળાઓથી - યંત્રોથી યુક્ત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : ન્યાયાધીશોએ ન્યાયાસન પર બેસીને પ્રસિદ્ધ શબ્દોમાં વાદી અને પ્રતિવાદીને સંબોધન કરીને, પ્રતિદિન યથોચિત્ ન્યાય કરીને તથા તેઓને પ્રસન્ન કરીને સર્વને સુખી કરવા જોઈએ.

અતિ પરિશ્રમથી આયુની ક્ષીણતા થાય છે, એ વિચાર કરીને શીઘ્ર જવા માટે ક્રિયા-કૌશલથી અગ્નિ આદિના દ્વારા વિમાન આદિ યાન બનાવવા જોઈએ. (૧)

ઓ ત્યે નર્ ઇન્દ્રમૂતયે ગુનૂં ચિત્તાન્ત્સદ્યો અધ્વનો જગમ્યાત્ ।

દેવાસૌ મન્યું દાસસ્ય ષ્ચમ્નન્તે ન આ વક્ષન્ત્સુવિતાય વર્ણમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : ત્યે-જે નર:-સજ્જન કૃત્યે-રક્ષાને માટે ઇન્દ્રમ્-સભા અને સેના આદિના અધિપતિની સદ્યઃ-શીઘ્ર ઓ, ગુ:-સન્મુખ પ્રાપ્ત થાય છે, તાન્-તેને ચિત્-પણ એ સભાપતિ અધ્વન:-શ્રેષ્ઠ માર્ગોને જગમ્યાત્-નિરંતર પહોંચાડે.

જે દેવાસ:-વિદ્વાનો દાસસ્ય-પોતાના સેવકના મન્યુમ્-ક્રોધને ષ્મનન્-નિવૃત્ત કરે, તે-તેઓ ન:-અમારી સુવિતાય-પ્રેરણાને પ્રાપ્ત થયેલ સેવકને માટે વર્ણમ્-આજ્ઞાપાલન કરવાને નુ-શીઘ્ર આ, વક્ષન્-પહોંચાડે. (૨)

ભાવાર્થ : જે પ્રજાજન અને સૈનિક લોકો સત્યની રક્ષાને માટે સભા આદિના અધ્યક્ષ આદિના શરણમાં પહોંચે, તેની એ યથાવત્ રક્ષા કરે.

જે વિદ્વાનો વેદ અને ઉત્તમ શિક્ષા દ્વારા મનુષ્યોના દોષોનું નિવારણ કરીને શાન્તિ આદિનું સેવન કરે, તેઓની સર્વેએ સેવા કરવી જોઈએ. (૨)

અવ ત્મનાં ભરતે કેતવેદા અવ ત્મનાં ભરતે ફેનમુદન્ ।

ક્ષીરેણ સ્નાત્ઃ કુર્યવસ્ય યોષે હૃતે તે સ્યાતાં પ્રવૃણે શિફાયા ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : કેતવેદા:- (કેતઃ = પ્રજ્ઞાતુ, વેદો = ધન) જેણે ધન જાણી લીધું છે, તે રાજપુરુષ ત્મના-જાતે પ્રજાના ધનને અવ, ભરતે-પોતાનું કરીને લઈ લે છે, અર્થાત્ અન્યાયપૂર્વક પડાવી લે છે; અને જે પ્રજાપુરુષ ત્મના-જાતે જ ફેનમ્-વ્યાજ પર વ્યાજ = ચક્રવર્તી વ્યાજ લઈને વધારેલ વા અન્ય પ્રકારથી વધારેલ રાજધનને અવ ભરતે-અધર્મથી લે છે, તે બન્ને ક્ષીરેણ-જળથી પૂર્ણ ભરેલ ઉદન્-જલાશય અર્થાત્ નદ-નદીઓમાં સ્નાતઃ-સ્નાન કરે છે, તેથી ઉપરથી-શરીરથી શુદ્ધ થાય છે પણ જેમ કુર્યવસ્ય-ધર્મ અને અધર્મથી મળેલા જેનો વ્યવહાર છે, તે પુરુષની ગોષે-આગળ-પાછળના વિવાહની પરસ્પર વિરોધ કરતી (નવી-જુની ઝઘડતી) સ્ત્રીઓ શિફાયા:-અતિ ભ્રમરવાળી નદીના પ્રવૃણે-પ્રબળ

સૂક્ત-૧૦૪

પ્રવાહમાં પડીને હતે-નાશ સ્યાતામ્-પામે છે, તેમ નાશ થાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : જે પ્રજાવિરોધી રાજપુરુષ અથવા રાજવિરોધી પ્રજાજન છે, તે બન્ને સુખની વૃદ્ધિ કરી શકતા નથી.

જે રાજપુરુષ પક્ષપાતપૂર્વક પોતાના પ્રયોજનને માટે પ્રજાજનોને પીડિત કરીને ધન સંચિત કરે છે અને જે પ્રજાજન ચોરી અને કપટ દ્વારા રાજકીય ધનને નષ્ટ કરે છે, તે બન્ને તેમ શીઘ્ર નષ્ટ થાય છે, જેમ બે શૌક સ્ત્રીઓ પરસ્પર ઝઘડા અને કોધને કારણે નદીમાં ડૂબીને પ્રાણોને ત્યાગે છે.

તેથી રાજપુરુષ પ્રજાજનની સાથે અને પ્રજાજન રાજપુરુષની સાથે વિરોધ છોડીને પરસ્પર સહાયક બનીને સદા વર્તાવ કરે. (૩).

યુયોપ્ નાભિરુપરસ્યાયોઃ પ્ર પૂર્વીભિસ્તિરતે રાષ્ટિઃ શૂરઃ ।

અઙ્ગસી કુલિશી વીરપત્ની પયો હિન્વાના ઉદભિર્ભરન્તે ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જ્યારે શૂરઃ-નિર્ભયતાથી શત્રુઓને મારનાર શૂરવીર પ્ર; પૂર્વાભિઃ-પ્રજાજનોની સાથે તિરસ્તે-રાજ્યનો યથાવત્ ન્યાય કરીને પાર થાય છે અને રાષ્ટિ-તે રાજ્યમાં પ્રકાશિત થાય છે, ત્યારે આયોઃ-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય ઉપરસ્ય-મેઘની નાભિઃ-બંધન-ચોતરફથી ઉમટેલાં વાદળોની વર્ષા યુયોપ-સર્વને મોહિત કરે છે. અર્થાત્ રાજધર્મથી પ્રજાસુખને માટે જળવર્ષા પણ થાય છે, તે થોડી નહિ પરંતુ અઙ્ગસી-પ્રસિદ્ધ કુલિશી-જે સૂર્યના કિરણરૂપી વજ્રથી સર્વ રીતે રહેલી અર્થાત્ સૂર્યના પ્રચંડ તાપથી સૂકાવાથી બચેલી વીરપત્ની-મોટી-મોટી નદીઓ જેનાથી મોટો વીર સમુદ્ર જ છે, તે પયઃ-જળને હિન્વાનાઃ-હિલોરા લેતી ઉદભિઃ-જળથી ભરન્તે-ભરાઈ જાય છે. (૪)

ભાવાર્થ : સુરાજ્યમાં સર્વ પ્રકારનું સુખ પ્રજાને થાય છે. સુરાજ્ય વિના દુઃખ થાય છે અને દુકાળ પડે છે. તેથી વીરપુરુષે રીતિથી રાજ્યનું પાલન કરવું જોઈએ. (૪)

પ્રતિ યત્સ્યા નીથાદર્શિ દસ્યોરોકો નાચ્છા સદનં જાનતી ગાત્ ।

અથ સ્મા નો મઘવઙ્ચર્કૃતાદિન્મા નો મઘેવ નિષ્ણપી પરાં દાઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : સભા આદિના સ્વામીએ યત્-જે નીથા-ન્યાય રક્ષાને પહોંચાડેલી પ્રજા દસ્યોઃ-પારકું ધન હરનારા ડાકુના ઓકઃ-ઘરની ન-સમાન પાલી જેવી અદર્શિ-દેખાય છે, સ્યા-તે અચ્છ-સારું જાનતી-જાણતી સદનમ્-ઘરને પ્રતિ, ગાત્-પ્રાપ્ત થઈને અર્થાત્ ઘરથી પાછી ફરી જાય છે.

હે મઘવન્-સભા આદિના સ્વામી ! નિષ્ણપી-સ્ત્રીની સાથે નિરંતર લાગી રહેલ તું નઃ-અમને મઘેવ-જેમ ધનને તેમ મા, પરા, દાઃ-બગાડ નહિ અથ-તદનન્તર નઃ-અમને ચર્કૃતાત્-નિરંતર કરવા યોગ્ય કામથી ઇત્-જ વિરુદ્ધ વ્યવહાર ન સ્મ-બતાવો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ સુદૃઢ અને સુરક્ષિત ઘર ચોરોથી તથા ઠંડી, ગરમી અને વર્ષાથી મનુષ્યોની તથા ધન આદિની રક્ષા કરે છે, તેમ જ સભાધ્યક્ષ રાજાઓ દ્વારા સંરક્ષિત પ્રજા એની પાલના કરે છે.

જેમ કામી મનુષ્ય પોતાના શરીર, ધર્મ, વિદ્યા અને શિષ્ટાચારોનો નાશ કરે છે, તથા જેમ ઈર્ષ્યા અને અભિમાનના યોગથી મનુષ્ય પ્રાપ્ત કરેલ પુષ્કળ ધનને અન્યાયોમાં ફેંકીને તેને ક્ષીણ કરી દે છે, તેમ (રાજા આદિ) પ્રજાનો વિનાશ ન કરે. પરંતુ પ્રજા દ્વારા નિરંતર કરેલા ઉપકારોને ધ્યાનમાં રાખીને, નમ્રતા અને પ્રેમની સાથે એ (પ્રજાજનો)નું સદા પાલન કરે. દુષ્ટ શત્રુઓથી ડરીને કદીપણ પલાયન ન કરે. (૫)

સ ત્વં નં ઇન્દ્ર સૂર્યે સો ઽઅપ્સ્વનાગાસ્ત્વ આ ભજ જીવશંસે ।

માન્તરાં ભુજમા રીરિષો નઃ શ્રદ્ધિતં તે મહત ઽઈન્દ્રિયાય ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સભાના સ્વામી જે તે-આપની મહત્તે-બહુ જ અને પ્રશંસા કરવા યોગ્ય ઇન્દ્રિયાય-ધનને માટે નઃ-અમારો શ્રદ્ધિતમ્-શ્રદ્ધાભાવ છે, સઃ-તે ત્વમ્-આપ નઃ-અમને ભુજમ્-ભોગ કરવા યોગ્ય પ્રજાને અન્તરામ્-મધ્યમાં મા આરીરિષઃ-રિભાવો નહિ, મારો નહિ અને સઃ-તે આપ સૂર્યે-સૂર્ય, પ્રાણ, અપ્સુ-જળ અનાગાસ્ત્વે-અને નિષ્પાપમાં તથા જીવશંસે-જેમાં જીવોની પ્રશંસા, સ્તુતિ થાય એ વ્યવહારમાં ઉપમાને આ, ભજ-સમ્યક્ ભજો-સેવા કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જે પ્રજાઓ શ્રદ્ધાપૂર્વક રાજ્ય વ્યવહારની સિદ્ધિ માટે પુષ્કળ ધન પ્રદાન કરે છે, તેની સભાપતિઓએ કદી હિંસા ન કરવી જોઈએ. પરંતુ જે ડાકુ અને ચોરરૂપ પ્રજાઓ છે, તેની સદા હિંસા કરવી જોઈએ.

જે સેનાપતિનો અધિકાર પ્રાપ્ત કરે, તે સૂર્યની સમાન ન્યાય અને વિદ્યાના પ્રકાશનું, જળની સમાન શાન્તિ અને તૃપ્તિનું, અન્યાય અને અપરાધના ત્યાગનું તથા પ્રજાની સાથે પ્રશંસનીય વ્યવહારનું સેવન કરીને રાષ્ટ્રને પ્રસન્ન રાખે. (૬)

અર્ધા મન્યે શ્રત્તે અસ્મા અધાયિ વૃષાં ચોદસ્વ મહતે ધનાય ।

મા નો અકૃતે પુરુહૂત યોનાવિન્દ્ર ક્ષુધ્યદ્ધ્યો વય આસુતિં દા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે પુસ્કૂત-અનેકોથી સત્કાર પ્રાપ્ત ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર્યદાતા અને શત્રુઓનો નાશ કરનાર સેનાપતિ ! વૃષા-અતિ સુખ વરસાવનાર આપ અકૃતે-વિચાર કર્યા વિના યોનો-નિમિત્તમાં નઃ-અમારા વયઃ-અભીષ્ટ અન્ન અને આસુતિમ્-સંતાનને મા, દાઃ-છિન્ન-ભિન્ન ન કરો અને ક્ષુધ્યદ્ધ્યઃ-ભૂખ્યાઓને અન્ન-જળ આદિ અધાયિ-ધરો = આપો. અમને મહત્તે-બહુ જ પ્રકારના ધનાય-ધનને માટે ચોદસ્વ-પ્રેરણા કર. અધઃ-તદનન્તર અસ્મૈ-એ ઉક્ત કામને માટે તે-તારી શ્રત્-શ્રદ્ધા વા સત્ય આચરણમાં મન્યે-માનું ઇં. (૭)

ભાવાર્થ : ન્યાયાધીશ આદિ રાજપુરુષો એ નિરપરાધ પ્રજાઓની હિંસા કદી પણ ન કરવી જોઈએ. સદા તેનાથી 'કર' લેવો જોઈએ. તેનું પાલન કરીને તથા તેને ઉન્નત કરીને વિદ્યા તથા પુરુષાર્થમાં

સૂક્ત-૧૦૫

પ્રવૃત્ત કરીને આનંદિત કરવા જોઈએ. સભાપતિઓનાં આ સત્ય કામનું પ્રજાજનોએ સદા માન કરવું જોઈએ. (૭)

મા નો વધીરિન્દ્ર યા પરા દ્વા મા નઃ પ્રિયા ભોજનાનિ પ્ર મૌષીઃ ।

આણ્ડા યા નો મઘવઞ્ચક્ર નિર્ભેન્મા નઃ પાત્રા ભેત્સહજાનુષાણિ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-પ્રશંસિત ધનયુક્ત શક્ર-સર્વ વ્યવહાર કરવામાં સમર્થ ઇન્દ્ર-શત્રુઓનો વિનાશ કરનાર સભાના સ્વામી ? આપ નઃ-અમે પ્રજાસ્થ મનુષ્યોને મા, વધીઃ-મારો નહિ, મા, પરા, દ્વાઃ-અન્યાયપૂર્વક દંડ આપો નહિ, સ્વાભાવિક કામ અને નઃ-અમારા સહજાનુષાણિ-જે જન્મથી સિદ્ધ તેના વર્તમાન પ્રિયા-પ્રિય ભોજનાનિ-ભોજનના પદાર્થોને મા, પ્ર, મૌષીઃ-ચોરો નહિ, નઃ-અમારા આણ્ડા-ઈંડાના સમાન જે ગર્ભમાં સ્થિત પ્રાણીઓને મા નિર્ભેત્-વિદીર્ષા કરો નહિ, નઃ-અમારા પાત્રાઃ-સોના-ચાંદીના પાત્રોને મા, ભેત્-બગાડો નહિ. (૮)

ભાવાર્થ : હે સભાપતિ ! તું અન્યાયથી કોઈને હેરાન કરતો નહિ અને કોઈ ધાર્મિક સજ્જનથી વિમુખ પણ બનીશ નહિ. ચોરી આદિ દોષરહિત જનો પર પરમેશ્વર દયા બતાવે છે, તેવી રીતે પોતાના રાજ્યના કામ કરવા લાગેલા રહેવું. આવા વ્યવહાર વિના પ્રજાને રાજાથી સંતોષ થતો નથી. (૮)

અર્વાઙિહિ સોમકામં ત્વાહુર્યં સુતસ્તસ્ય પિબા મદાય ।

ઊરુવ્યચા જઠર આ વૃષસ્વ પિતેવ નઃ શૃણુહિ હૂયમાનઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ ! જેથી ત્વા-આપને સોમકામમ્-કુટેલા-પીસેલા પદાર્થોના રસની કામના કરનારા આહુઃ-બતાવે છે, એથી આપ અર્વાઙ્-અંતરંગ વ્યવહારમાં આ, ઇહિ-આવો. અયમ્-એ જે સુતઃ-કાઢેલા પદાર્થોનો રસ છે, તસ્ય-તેનું મદાય-હર્ષને માટે પિબ-પાન કરો. ઊરુવ્યચાઃ-જેનું બહુ જ અને અનેક પ્રકારનું પૂજન-સત્કાર છે, તે આપ જઠરે-જેથી સર્વ વ્યવહાર થાય છે તે ઉદરમાં આ, વૃષસ્વ-આસેચન કરો અર્થાત્ ઉક્ત પદાર્થનું સમ્યક્ પાન કરો તથા અમારાથી હૂયમાનઃ-પ્રાર્થનાને પ્રાપ્ત થયેલ આપ પિતેવ-જેમ પ્રેમ કરતો પિતા પુત્રની વાત સાંભળે છે, તેમ નઃ-અમારી વાત શ્રુણુહિ-સાંભળો. (૯)

ભાવાર્થ : પ્રજાજનો દ્વારા સભાપતિ આદિ રાજપુરુષોને અન્ન, પાન, વસ્ત્ર, ધન, વાહન અને મધુર ભાષણ આદિ દ્વારા સદા પ્રસન્ન કરવા જોઈએ અને રાજપુરુષો દ્વારા પ્રજાના પ્રાણીઓનું પુત્ર સમાન નિરંતર પાલન કરવું જોઈએ. (૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સભાપતિ, રાજા અને પ્રજાએ કરવા યોગ્ય વ્યવહારમાં વર્ણનથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૦૪)

સૂક્ત-૧૦૫

૪૪૨

અગ્નિવેદભાષ્ય

चन्द्रमा अप्स्वश्न्तरा सुपर्णो धावते दिवि ।

न वो हिरण्यनेमयः पदं विन्दन्ति विद्युतो वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે રોદસી-સૂર્યપ્રકાશ વા ભૂમિની સમાન રાજ અને પ્રજાજન સમૂહ મે-મને પદાર્થ વિદ્યા જાણવાની ઉત્તેજનાથી જે અપ્સુ-પ્રાણરૂપી વાયુની અન્ત:-મધ્ય સુપર્ણ:-સમ્યક્ ગમન કરનાર વા ચન્દ્રમા-આનંદદાયક ચંદ્રલોક દિવિ-સૂર્યના પ્રકાશમાં આ૦ ધાવતે-અતિ શીઘ્ર ભ્રમણ કરે છે અને હિરણ્યનેમય:-જેની સુવર્ણરૂપી ચમક-દમક ઝળઝળાહટ છે, તે વિદ્યુત:-વિદ્યુત્ લપટ-ઝપટથી દોડતી વ:-તમારી પદમ્-વિચારયુક્ત શિલ્પ વ્યવહારને ન વિન્દન્તિ-પ્રાપ્ત થતી નથી. અર્થાત્ તમે તેને યથોચિત કામમાં લેતા નથી. અસ્ય-એ પૂર્વોક્ત વિષયને તમે વિક્તમ્-જાણો. (૧)

ભાવાર્થ : હે રાજપુરુષો અને પ્રજાજનો ! જે ચંદ્રમાની છાયા, આકાશ અને જલના સંયોગથી શીતલતાયુક્ત પ્રકાશ છે, તેને તમે જાણો.

જે વિદ્યુત્ ચમકે છે, તે નેત્રો દ્વારા ગ્રહણ કરવા યોગ્ય હોય છે. જે ઘૂંપાયેલી હોય છે, તેનું ચિહ્ન નેત્ર દ્વારા ગ્રહણ કરી શકાતું નથી. તે સર્વ જાણીને તમે સુખ સિદ્ધ કરો. (૧)

अर्थमिद्धा उ अर्थिन आ जाया युवते पतिम् ।

तुञ्जाते वृष्यं पयः परिदाय रसं दुहे वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ २ ॥

પદાર્થ : જેમ અર્થિન:-પ્રશંસિત પ્રયોજનવાળા જન અર્થમ્-જે પ્રાપ્ત થાય છે તેને વૈ-જ પતિમ્-પતિનો જાયા-સંબંધ કરનારી સ્ત્રીની સમાન આ, યુવતે-સમ્યક્ સંબંધ કરે છે, ઉ-જે તો જેમ રાજા અને પ્રજા જે વૃષ્યમ્-શ્રેષ્ઠતમ પય:-અન્ન ઇત્-અને રસમ્-સ્વાદિષ્ટ ઔષધિઓથી કાઢેલ રસને પરિદાય-સર્વત્રથી આપીને દુઃખોને તુજ્જાતે-દૂર કરે છે, તેમ તેઓની હું પણ દુહે-વૃદ્ધિ કરું. શેષ અર્થ પ્રથમ મંત્રમાં કહેલ સમાન જાણવા જોઈએ. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ સ્ત્રી ઈચ્છિત પતિને તથા પુરુષ ઈચ્છિત સ્ત્રીને - પત્નીને પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત થાય છે, તેમ પ્રયોજનોને સિદ્ધ કરવામાં સંલગ્ન વિદ્યુત્, પૃથિવી, સૂર્ય અને પ્રકાશની વિદ્યાનો (સાથ) લઈને તથા પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરીને સદા સુખ પહોંચાડે છે. તે વિદ્યાના જ્ઞાતાજનોના સંગ વિના એ વિદ્યા પ્રાપ્ત થતી નથી. તથા દુઃખનો વિનાશ પણ સંભવ નથી. તેથી તેનું સર્વેએ પ્રયત્નપૂર્વક ગ્રહણ કરવું જોઈએ. (૨)

मो षु देवा अदः स्वश्र्व पादि दिवस्परि ।

मा सोम्यस्य शंभुवः शूनै भूम कदाचन वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે દેવા:-વિદ્વાનો ! તમારાથી દિવ:-સૂર્યના પ્રકાશથી પરિ-ઉપર અદ:-તે પ્રાપ્ત થનાર સ્વ:-સુખ કદા, ચન-ક્યારેય મો, અવ, પાદિ-ઉત્પન્ન થયેલ નથી.

સૂક્ત-૧૦૫

અમે સોમ્યસ્ય-ઐશ્વર્યને યોગ્ય શંભુવઃ-જેથી સુખ થાય તે વ્યવહારની સુ, શૂને-સુંદર ઉન્નતિમાં વિરુદ્ધભાવથી ચાલનાર કદી મા-ભૂમ-થઈને નહિ. અન્ય અર્થ પ્રથમ મંત્રોક્ત સમાન જાણવો જોઈએ. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ આ સંસારમાં ધર્મ અને સુખથી વિરુદ્ધ કામો ન કરવા જોઈએ. પુરુષાર્થ દ્વારા નિરંતર સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૩)

યજ્ઞં પૃચ્છામ્યવમં સ તદ્ દૂતો વિ વૌચતિ ।

ક્વ ઋતં પૂર્વ્યં ગતં કસ્તદ્વિભર્તિ નૂતનો વિત્તં મૈ અસ્ય રૌદસી ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! હું આપના પ્રત્યે જે અવમમ્-રક્ષા આદિ કરનારા ઉત્તમ વા નિકૃષ્ટ યજ્ઞમ્-સમસ્ત વિદ્યાથી પરિપૂર્ણ પૂર્વ્યમ્-પૂર્વજોએ સિદ્ધ કરેલ ઋતમ્-સત્યમાર્ગ વા ઉત્તમ જલસ્થાન ક્વ-ક્યાં ગતમ્-ગયા ? કઃ-અને કોણ નૂતનઃ-નવીન જન તત્-તેને વિભર્તિ-ધારણ કરે છે, એ પૃચ્છામિ-પૂછું છું, સઃ-તે દૂતઃ-ઈતસ્તતઃથી વાતચીત વા પદાર્થોને જાણીને આપ તત્-સર્વ વિષયને વિવોચતિ-વિવેકપૂર્વક કહો. વિત્તં મૈ-આદિના અર્થ પ્રથમ મંત્રોક્ત જાણવા જોઈએ.

ભાવાર્થ : વિદ્યાની ઈચ્છા કરનારા વિદ્યાર્થીઓ = બ્રહ્મચારીઓએ વિદ્વાનોની પાસે જઈને અનેક પ્રકારના પ્રશ્નો કરીને તથા તેના ઉત્તર પ્રાપ્ત કરીને વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ.

હે અધ્યાપક વિદ્વાનો ! તમે સ્વયં રોકટોક વિના આવો અને મારા દ્વારા આ સંસારના પદાર્થોની વિદ્યાઓને જાણીને તથા અન્ય સર્વને એ જ રીતે ભણાવીને સત્ય અને અસત્યને યથાર્થરૂપમાં જણાવો. (૪)

અમી યે દૈવાઃ સ્થનં ત્રિષ્વા રૌચને દિવઃ ।

કદ્વ ઋતં કદનૃતં ક્વ પ્રત્ના વ આહૃતિર્વિત્તં મૈ અસ્ય રૌદસી ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમે દિવઃ-પ્રકાશક સૂર્યના રોચતે-પ્રકાશમાં ત્રિષુ-ત્રણ અર્થાત્ નામ, સ્થાન અને જન્મમાં અમી-પ્રકટ અને અપ્રકટ યે-જે દૈવાઃ-દિવ્યગુણયુક્ત પૃથિવી આદિ લોક આ-સારી સ્થન-સ્થિતિ કરે છે, વઃ-એની મધ્ય ઋતમ્-સત્યકારણ કત્-ક્યાં અને અનૃતમ્-અસત્ય કાર્યરૂપ કત્-ક્યાં અને વઃ-એમના પ્રત્ના-જૂના પદાર્થ અને એમના આહૃતિઃ-હોમ એટલે કે વિનાશ ક-ક્યાં થાય છે, તે સર્વ પ્રશ્નોના ઉત્તર કહો. શેષ પૂર્વવત્. (૫)

ભાવાર્થ : જ્યારે સર્વ લોકોનો હોમ અર્થાત્ પ્રલય થાય છે, ત્યારે કાર્યજગત, કારણજગત અને જીવ ક્યાં રહે છે ? એ પ્રશ્ન છે.

ઉત્તર : સર્વવ્યાપક ઈશ્વરમાં અને આકાશમાં કારણરૂપમાં સમસ્ત જગત (રહે છે) અને સમસ્ત જીવ સુષુપ્તવત્ - સૂતેલા સમાન રહે છે.

એક-એક સૂર્યના પ્રકાશ અને આકર્ષણના ક્ષેત્રમાં જેટલા-જેટલા લોકો છે, તે-તે સર્વ ઈશ્વરના દ્વારા રચીને તથા ધારણ કરીને વ્યવસ્થિત કરવામાં આવે છે, એમ જાણવું જોઈએ. . પ્રલય અવસ્થામાં

જગત અને જીવની સ્થિતિના મૂળ શબ્દો સ્વામીજીના ભાવાર્થમાં નિમ્ન છે - સર્વવ્યાપક રૂંધ્ર આકાશે
 ચ કારણસ્ત્રોણ સર્વ જગત્, સુષુપ્તવજ્જીવાશ્ચ વર્તન્ત ઇતિ-અર્થ ઉપર આપેલ છે - અનુવાદક) (૫)

કદ્વઃ ક્રુતસ્ય ધર્ણસિ કદ્વરુણસ્ય ચક્ષણમ્।

કદર્યમ્ણો મહસ્પથાતિ ક્રામેમ દૂઢ્યો વિત્તં મે અસ્ય રોદસી ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! વ:-એ સ્થૂલ પદાર્થોના રુઢસ્ય-સત્ય કારણને ધર્ણસિ-ધારણ કરનાર કત્-
 ક્યાં છે ? વસ્ત્રાસ્ય-જળ આદિ કાર્યરૂપ પદાર્થોનું ચક્ષણમ્-દર્શન કત્-ક્યાં છે ? તથા મહઃ-મહાન
 અર્યમ્ણઃ-સૂર્યલોકનો જે દૂઢ્યઃ-અતિ ગંભીર દુઃખથી ધ્યાનમાં આવવા યોગ્ય વ્યવહાર છે તેને
 કત્-ક્યા યથા-માર્ગથી અમે અતિ, કામેમ-પાર કરીએ અર્થાત્ તે વિદ્યાથી પરિપૂર્ણ બનીએ. શેષ
 અર્થ પૂર્વવત્ (૬)

ભાવાર્થ : વિદ્યાના ઈચ્છુકોએ વિદ્વાનોની સમીપ પહોંચીને, કાર્ય-કારણ આદિ વિદ્યાના માર્ગોથી
 સંબંધ-વિષયક પ્રશ્નો કરીને તથા તેના ઉત્તર પ્રાપ્ત કરીને, ક્રિયા-કૌશલથી કાર્યોને સિદ્ધ કરીને તથા
 દુઃખોનો નાશ કરીને સુખોને પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. (૬)

અહં સો અસ્મિ યઃ પુરા સુતે વદામિ કાનિ ચિત્।

તં મા વ્યન્ત્યાધ્યોરૂઃ વૃકો ન તૃષ્ણજં મૃગં વિત્તં મે અસ્ય રોદસી ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ય:-જે અહમ્-સંસારને ઉત્પન્ન કરનાર સૂતે-ઉત્પન્ન આ જગતમાં કાનિ-
 ચિત્-કોઈ વ્યવહારોને પુરા-સૃષ્ટિથી પૂર્વ વા હું વિદ્વાન ઉત્પન્ન થયેલ સંસારમાં કોઈ વ્યવહારોને વિદ્યાની
 ઉત્પત્તિથી પૂર્વ વદામિ-કહું છું. સ:-તે હું સેવન કરવા યોગ્ય અસ્મિ-છું, તમ્-તે મા-મને આધ્યઃ-
 સમ્યક્ ચિંતન કરનારા આપ લોકો જેમ વૃકઃ-ચોર વા વ્યાઢ તૃષ્ણજમ્-તૃષ્ણાતુર મૃગમ્-હરણની ન-
 સમાન વ્યન્તિ-ચાહો, શેષ વિત્તં મે-પૂર્વવત્ (૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોને ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે, કે - હે મનુષ્યો ! તમે જેમ મેં સૃષ્ટિ રચીને
 વેદ દ્વારા જેવી રીતે ઉપદેશ આપેલ છે, તેને તેવી જ રીતે સ્વીકાર કરો. મને ઉપાસ્યને છોડીને અન્યની
 આપ લોકો કદી ઉપાસના કરો નહિ.

જેમ મૃગયા = શિકારમાં પ્રવૃત્ત થયેલ ચોર અથવા વાઘ હરણને પ્રાપ્ત કરવાની કામના = ઈચ્છા
 કરે છે, તેમ સર્વ દોષોનો ત્યાગ કરીને તમે મારી કામના કરો અને એ જ રીતે વિદ્વાનની પણ (કામના
 કરો.) (૭)

સં મા તપન્ત્યભિતઃ સપત્નીરિવ્ પર્ણિવઃ। મૂષો ન શિશ્ના।

વ્યદન્તિ માધ્યઃ સ્તોતારં તે શતક્રતો વિત્તં મે અસ્ય રોદસી ॥ ૮ ॥

સૂક્ત-૧૦૫

પદાર્થ : હે શતક્રતો-અસંખ્ય ઉત્તમ વિચારવાન વા અનેકો સર્વોત્તમ કર્મ કરનાર ન્યાયાધીશ ! તે-આપની પ્રજા વા સેનામાં રહેનાર તથા સ્તોતારમ્-ધર્મને ગાનાર હું છું, મા-તેઓને જે પર્શવ:- પારકાને-અન્યને મારનાર તથા પાર્શ્વસ્થ મનુષ્ય આદિ પ્રાણી સપત્નીસ્વિ, અભિતઃ, સમ્, તપન્તિ-જેમ એક પતિને અધિક સ્ત્રીઓ દુઃખી કરે છે, એમ દુઃખ આપે છે.

જે આધ્ય:-અન્યોના મનમાં વ્યથા ઉત્પન્ન કરનારા મૂષ:-ઉંદર જેમ શિશ્વના-અશુદ્ધ સૂત્રો-દોરાઓને વિ, અદન્તિ-કાપી-કાપીને ખાય છે ન-તેમ મા-મને સંતોષ આપે છે તે અન્યાય કરનારા જનોને તમે યથાવત્ દંડ આપો. વિતં-શેષ પૂર્વવત્. (૮)

ભાવાર્થ : હે ન્યાયાધીશ આદિ મનુષ્યો ! જેમ અધિક શૌક સ્ત્રીઓ પોતાના પતિને ક્લેશ પહોંચાડે છે, અથવા જેમ પોતાના પ્રયોજનમાં સફળ અથવા અસફળ થતાં ઉંદરો પારકા દ્રવ્યોને વિનિષ્ટ કરે છે અને જેમ વ્યભિચારિણી વેશ્યા આદિ સ્ત્રીઓ વિદ્યુત્ ની સમાન ચમકદાર (દેખાતી) કામી મનુષ્યના ઉપસ્થેન્દ્રિયના રોગ દ્વારા ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષના અનુષ્ઠાનમાં અવરોધક હોવાના કારણે, તે (કામી મનુષ્ય)ને પીડા આપે છે, તેમ જે ડાકુ આદિ લોકો અસત્ય નિશ્ચય, કાર્ય અને વચનથી અમને ક્લેશ આપે છે, તેને યથોચિત દંડિત કરીને તેઓનું તથા અમારું આપ નિરંતર પાલન કરો. એમ કર્યા વિના નિરંતર રાજ્યના ઐશ્વર્યનો યોગ અધિક થઈ શકતો નથી. (૮)

અમી યે સપ્ત ર્શ્મયસ્તત્રાં મે નાભિરાતંતા ।

ત્રિતસ્તદ્વેદાપ્ત્યઃ સ જામિત્વાય રેભતિ વિત્તં મે અસ્ય રોંદસી ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જ્યાં અમી યે-જે સપ્ત-સાત ર્શ્મયઃ-કિરણોની સમાન નીતિ પ્રકાશ છે, તત્ર-ત્યાં મે-મારી નાભિઃ-શરીર મધ્યસ્થા સર્વ પ્રાણ બાંધનાર અંગ આતતા-પ્રસરેલ છે જેમાં નિરંતર મારી સ્થિતિ છે, તત્-તેને જે આપ્યઃ-સજ્જનોમાં ઉત્તમ જન ત્રિતઃ-ત્રણેય અર્થાત્ ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાનકાળથી વેદ-જાણે અર્થાત્ રાત-દિવસ વિચારે સઃ-તે પુરુષ જામિત્વાય-રાજ્ય ભોગવવા માટે કન્યાની સમાન રેભતિ-પ્રજાજનોની રક્ષા, પ્રશંસા અને ચાહના કરે છે. અન્ય અર્થ પૂર્વવત્. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યની સાથે કિરણોની શોભા અને સંગતિ છે, તેમ જ રાજપુરુષોની સાથે પ્રજાઓની શોભા અને સંગતિ થાય.

જે મનુષ્ય કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાન યથાવત્ જાણે છે, તે પ્રજાપાલનમાં પિતા સમાન બનીને સર્વ પ્રજાઓને પ્રસન્ન કરી શકે છે, અન્ય નહિ. (૯)

અમી યે પન્નોક્ષણો મધ્યે તસ્થુર્મહો દિવઃ ।

દેવત્રા નુ પ્રવાચ્યં સધીચીના નિ વાવૃતુર્વિત્તં મે અસ્ય રોંદસી ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ આદિ સજ્જનો ! તમને જેમ અમી-પ્રત્યક્ષ વા અપ્રત્યક્ષ ઉક્ષણઃ-જળ સિંચનાર વા સુખ સિંચનાર મહાન પન્ન-અગ્નિ, વાયુ, વિદ્યુત્, મેઘ અને સૂર્યમંડળનો પ્રકાશ મહઃ-મહાન દિવઃ-દિવ્યગુણ અને પદાર્થયુક્ત આકાશની મધ્યે-મધ્યમાં તસ્થુઃ-સ્થિર છે; અને જેમ સધીચીનાઃ-એકત્ર

રહેનાર ગુણ **દેવત્રા-વિદ્વાનોમાં નિ, વાવૃતુ:-**નિરંતર વર્તમાન છે, તેમ **ચે-જે** નિરંતર વર્તમાન છે, તે પ્રજા તથા રાજાઓના સંગીઓ પ્રત્યે વિદ્યા અને ન્યાય પ્રકાશની વાત **નુ-શીઘ્ર પ્રવાચ્યમ્-કરવી** જોઈએ. શેષ મંત્રાર્થ પ્રથમ મંત્ર સમાન જાણવા જોઈએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય આદિ ઘટ-પટ = ઘડો - વસ્ત્ર આદિ પદાર્થોમાં સંયુક્ત થઈને વર્ષા આદિ દ્વારા મહાન સુખને ઉત્પન્ન કરે છે અને પૃથિવી આદિ સર્વ પદાર્થોમાં આકર્ષણ આદિની સાથે અવસ્થિત રહે છે, તેમ જ સભા આદિના અધ્યક્ષ (= રાજા) આદિ, મનુષ્યોને મહાન સુખી બનાવીને તથા તેની સાથે ન્યાય અને પ્રેમપૂર્વક વર્તાવ કરીને નિરંતર એને સુખી કરે. (૧૦)

સુપુર્ણા એત આસતે મધ્ય આરોધને દિવઃ ।

તે સૈધન્તિ પથો વૃકં તરન્તં યહ્વતીરપો વિત્તં મૈ અસ્ય રૌદસી ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે પ્રજાજનો ! આપ જેમ **એતે-જે સુપુર્ણા:-**સૂર્યનાં કિરણો **દિવઃ:-**સૂર્યના પ્રકાશથી યુક્ત આકાશની **મધ્યે-વચ્ચે આરોધને-અવરોધમાં આસતે-સ્થિર** છે.

જેમ તે-તે **તરન્તમ્-પાર** કરનારી **વૃકમ્-વિદ્યુત્** ને પાડીને **યહ્વતી:-**મહાનનો વર્તાવ રાખીને **અપઃ-જળ** અને **પથઃ-માર્ગોને સૈધન્તિ-સિદ્ધ** કરે છે, તેમ આપ રાજ કામોને સિદ્ધ કરો. શેષ મંત્રાર્થ પૂર્વવત્. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યનાં કિરણો આદિ પદાર્થો ઈશ્વરના નિયમમાં યથાવત્ સ્થિર રહે છે - વર્તે છે, તેમ તમે પ્રજાજનોને પણ રાજનીતિના નિયમોમાં સ્થિર રાખવા જોઈએ.

જેમ એ સભા આદિના અધ્યક્ષ આદિ, દુષ્ટ મનુષ્યોનું નિવારણ કરીને પ્રજાઓની રક્ષા કરે છે, તેમ તમારે પણ ઈર્ષા આદિનું નિવારણ કરીને એની રક્ષા કરવી જોઈએ. (૧૧)

નવ્યં તદુક્થ્યં હિતં દેવાસઃ સુપ્રવાચનમ્ ।

ઋતમર્ષન્તિ સિન્ધવઃ સત્યં તાતાન સૂર્યો વિત્તં મૈ અસ્ય રૌદસી ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે **દેવાસઃ-વિદ્વાનો !** આપ જેમ **સિન્ધવઃ-સમુદ્ર સત્યમ્-જલની અર્ષન્તિ-પ્રાપ્ત** કરાવે છે અને **સૂર્યઃ-સૂર્યમંડળ તતાન-તેનો વિસ્તાર** અર્થાત્ વર્ષા કરાવે છે, તેમ જે **ઋતમ્-વેદ, સૃષ્ટિક્રમ,** પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણ, વિદ્વાનોનું આચરણ, અનુભવ અર્થાત્ સ્વયં વાત મનમાં ઉત્પન્ન થવી તથા આત્માની શુદ્ધતાને અનુકૂળ **નવ્યમ્-ઉત્તમ નવીન નવીન વ્યવહારો** તથા અને **ઉક્થ્યમ્-પ્રશંસનીય વચનોમાં થનાર હિતમ્-સર્વનો પ્રેમપૂર્વક પદાર્થ તત્-તેને સુપ્રવાચનમ્-સારી રીતે ભણાવવા, ઉપદેશ કરવા જેમ બને તેમ પ્રાપ્ત કરો. શેષ પૂર્વવત્ અર્થ જાણવા. (૧૨)**

ભાવાર્થ : જેમ સમુદ્રથી ઉઠીને જળ ઉપર જઈને સૂર્યના તાપથી ફેલાઈને તથા વરસીને સર્વ પ્રજાજનોને સુખ આપે છે, તેમ વિદ્વાન મનુષ્યોએ નિત્ય નવીન વિચારો દ્વારા ગૂઢ વિદ્યાઓ જાણીને, તેને પ્રકાશિત કરીને, સર્વનું હિત સિદ્ધ કરીને તથા સત્ય ધર્મનો વિસ્તાર કરીને નિરંતર આનંદ કરવો જોઈએ. (૧૨)

અગ્ને તવ ત્યદુક્થ્યં દેવેષ્વસ્ત્યાપ્યમ્ ।

સ નં: સત્તો મનુષ્વદા દેવાન્યક્ષિ વિદુષ્ટરો વિત્તં મેં અસ્ય રૌદસી ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સકળ વિદ્યા વિજ્ઞાત વિદ્વાનજન ! તવ-આપના ત્યત્-તે જે આપ્યમ્-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય મનુષ્વત્-મનુષ્યોમાં જેવા હોય તેવા ઉક્થ્યમ્-સર્વોત્તમ વિદ્યા વચન દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં અસ્તિ-હું, સ:-તે સત્ત:-અવિદ્યા આદિ દોષનાશક વિદુષ્ટર:-અતિશય વિદ્વાન આપ ન:-અમને દેવાન્-વિદ્વાન બનાવતા તેઓની આયક્ષિ-સંગતિમાં પહોંચાડો અર્થાત્ વિદ્વાનોની પદવીને પમાડો. શેષ મંત્રાર્થ પૂર્વવત્. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે સર્વ વિદ્યાઓને ભણાવીને વિદ્વાનોનું નિર્માણ કરવામાં કુશળ છે, તેઓથી સંપૂર્ણ વિદ્યાઓ તથા ધર્મોપદેશોને સર્વ મનુષ્યો ગ્રહણ કરે, અન્યથી નહિ. (૧૩)

સત્તો હોતા મનુષ્વદા દેવાં અચ્છાં વિદુષ્ટર: ।

અગ્નિર્હવ્યા સુષૂદતિ દેવો દેવેષુ મેધિરો વિત્તં મેં અસ્ય રૌદસી ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સત્ત:-વિજ્ઞાનવાન, દુઃખનાશક દેવાન્-વિદ્વાન વા દિવ્ય-દિવ્ય ક્રિયાયોગોને હોતા-ગ્રહણ કરનાર વિદુષ્ટર:-અત્યંત જ્ઞાની અગ્નિ:-શ્રેષ્ઠ વિદ્યાના જ્ઞાતા અને સમજાવનારા મેધિર:-બુદ્ધિમાન દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં દેવ:-પ્રશંસનીય વિદ્વાન મનુષ્ય મનુષ્વત્-જેમ ઉત્તમ મનુષ્ય શ્રેષ્ઠ કર્મોનું અનુષ્ઠાન કરી પાપોનો ત્યાગ કરી સુખી થાય છે, તેમ હવ્યા-દેવા-લેવા યોગ્ય પદાર્થોને અચ્છ, આ, સુષૂદતિ-સારી રીતે પુષ્કળ આપે છે, તે ઉત્તમ વિદ્વાનથી વિદ્યા અને શિક્ષા ગ્રહણ કરવા જોઈએ. (૧૪)

ભાવાર્થ : એવા ભાગ્યહીન કોણ મનુષ્ય હશે જે વિદ્વાનોથી વિદ્યા અને શિક્ષા ગ્રહણ ન કરીને તેનો વિરોધી બને ? (૧૪)

બ્રહ્મા કૃણોતિ વરુણો ગાતુવિદ્મં તમીમહે ।

વ્યૂર્ણોતિ હૃદા મૃતિં નવ્યોં જાયતામૃતં વિત્તં મેં અસ્ય રૌદસી ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : અમે જે બ્રહ્મ-સત્યસ્વરૂપ બ્રહ્મ-પરમેશ્વર વા વરુણ:-સર્વોત્તમ વિદ્વાન ગાતુવિદમ્-વેદવાણીને જાણનારને કૃણોતિ-કરે છે, તમ્-તેઓને ઈમહે-યાચે છે અથવા માગે છે કે તેઓની કૃપાથી જે નવ્ય:-નવીન વિદ્વાન હૃદા-હૃદયથી મૃતિમ્-વિશેષજ્ઞાનને વ્યૂર્ણોતિ-ઉત્પન્ન કરે છે અર્થાત્ શ્રેષ્ઠતમ રીતે વિચાર કરે છે, તે અમારી વચ્ચે જાયતામ્-ઉત્પન્ન થાય. શેષ અર્થ પૂર્વવત્. (૧૫)

ભાવાર્થ : કોઈ મનુષ્યની ઉપર, પૂર્વના સંચિત પુણ્યકર્મો અને વર્તમાનમાં કરવામાં આવતા વિશુદ્ધ કર્મો વિના પરમેશ્વરનો અનુગ્રહ થતો નથી; અને તેના વિના કોઈ પૂર્ણ વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. તેથી અમારી મધ્યમાં પૂર્ણ વિદ્યા પ્રાપ્ત શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળા મનુષ્યો સદા થાય, આથી

સર્વ લોકોએ પરમેશ્વરને પ્રાર્થના કરવી જોઈએ. એ રીતે નિત્ય પ્રાર્થના કરેલ પરમેશ્વર સર્વ વ્યાપકતાના કારણે તેઓના આત્માને પ્રકાશિત કરે છે, નિશ્ચિત છે. (૧૫)

असौ यः पन्था आदित्यो दिवि प्रवाच्यं कृतः।

न स देवा अतिक्रमे तं मर्तासो न पश्यथ वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ १६ ॥

પદાર્થ : હે દેવા:-વિદ્વાનો ! અસૌ-એ આદિત્ય:-અવિનાશી સૂર્ય સમાન પ્રકાશક ય:-જે પન્થા:-વેદ પ્રતિપાદિત માર્ગ દિવિ-સમસ્ત વિદ્યાના પ્રકાશમાં પ્રવાચ્યમ્-સારી રીતે કહેવા યોગ્ય જેમ હોય, તેમ કૃત:-ઈશ્વર સ્થાપિત સ:-તે તમારે અતિક્રમે-ઉલ્લંઘન કરવા યોગ્ય ન-નથી.

હે મર્તાસ:-કેવલ મરવા-જીવવાવાળા વિચારરહિત મનુષ્યો ! તમ્-તે પૂર્વોક્ત માર્ગને તમે ન, પશ્યથ-જોતા નથી. શેષ પૂર્વવત્ (૧૬).

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, 'જે વેદોક્ત માર્ગ છે, તે જ સત્ય છે,' તેમ જાણીને સમસ્ત સત્ય વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરીને સદા આનંદિત રહેવું જોઈએ.

એ માર્ગના વિદ્વાનોનું કદી ખંડન કરવું નહિ. એ માર્ગ વિદ્યા વિના જ્ઞાન પણ થતું નથી. (૧૬)

त्रितः कूपेऽवहितो देवान्हवत ऊतये।

तच्छुश्राव बृहस्पतिः कृण्वन्नंहूरणादुरु वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ १७ ॥

પદાર્થ : જે ઝરુ-બહુ જ તત્-તે વિદ્યાના પાઠનું સુશ્રાવ-શ્રવણ કરે છે તે વિજ્ઞાનને કુણવન્-પ્રકટ કરીને ત્રિત:-વિદ્યા, શિક્ષા અને બ્રહ્મચર્ય એ ત્રણ વિષયોનો વિસ્તાર કરીને અર્થાત્ તેની ઉન્નતિ કરીને કૂપે-કૂવાના આકારના પોતાના હૃદયમાં અવહિત:-સ્થિર કરીને તથા બૃહસ્પતિ:-મહાન વેદવાણીના પાલક અંહૂરણાત્-જે વ્યવહારમાં અધર્મ હોય તેનાથી પૃથક થઈને ઋતયે-રક્ષા, આનંદ, કાન્તિ, પ્રેમ, તૃપ્તિ આદિ અનેક સુખોને માટે દેવાન્-દિવ્યગુણયુક્ત વિદ્વાનો વા દિવ્યગુણોને હવતે-ગ્રહણ કરે છે. શેષ મંત્રાર્થ પૂર્વવત્ (૧૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય-દેહધારી જીવ પોતાની બુદ્ધિ અને પ્રયત્નથી વિદ્વાનો દ્વારા સમસ્ત વિદ્યાઓનું શ્રવણ કરીને, મનન કરીને, નિશ્ચય કરીને, તથા સાક્ષાત્કાર કરીને દુષ્ટ ગુણો તથા સ્વભાવોને તથા પાપોનો ત્યાગ કરીને વિદ્વાન બને છે, તે આત્મા અને શરીરની રક્ષા આદિ પ્રાપ્ત કરીને બહુ જ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૭)

अरुणो मा सकृद् वृकः पथा यन्तं ददर्श हि।

उज्जिहीते निचाय्या तष्टेव पृष्ट्यामयी वित्तं मे अस्य रोदसी ॥ १८ ॥

પદાર્થ : જે અરુણા:-સમસ્ત વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને વા પ્રકાશિત કરતા વૃક:-શાન્તિ આદિ ગુણયુક્ત ચંદ્રમાની સમાન વિદ્વાન મા, સકૃત્-મને એકવાર યથા, યન્તમ્-શ્રેષ્ઠ માર્ગથી ચાલતાને દર્દર્શ-

સૂક્ત-૧૦૬

દેખતા વા ઉક્ત ગુણયુક્ત મહિના આદિ કાળ વિભાગોને કરનાર ચંદ્રમાની સમાન વિદ્વાન શ્રેષ્ઠ માર્ગથી ચાલનારને જુએ છે, તે નિચાચ્ય-યથાયોગ્ય સમાધાન આપીને પૃષ્ઠ્યામયી-પીઠમાં કલેશરૂપ રોગવાન તષ્ટેવ-શિલ્પી વિદ્વાન જેમ શિલ્પ વ્યવહારોને સમજાવે, તેમ ઝજિહિતે-ઉત્તમતાથી સમજાવે હિ-જ છે. શેષ મંત્રાર્થ પૂર્વવત્. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન ચંદ્રમાની સમાન શાન્ત સ્વભાવને તથા સૂર્યની સમાન પ્રકાશને પ્રસિદ્ધ કરવાના સ્વભાવને ધારણ કરીને સર્વેમાં સમસ્ત વિદ્યાને ફેલાવે છે, તે જ 'આપ્ત' છે. (૧૮)

एनाङ्गूषेण वयमिन्द्रवन्तोऽभि घ्याम वृजने सर्ववीराः ।

तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ १९ ॥

પદાર્થ : જે એના-એ આઙ્ગૂષેણ-પરમ વિદ્વાનથી સર્વવીરા:-સમસ્ત વીરજન ઇન્દ્રવન્ત:-જેનો પરમૈશ્વર્યયુક્ત સભાપતિ છે અને વયમ્-અમે વૃજને-વિદ્યા, ધર્મયુક્ત બળમાં અભિ, સ્યામ-અભિમુખ બનીએ અર્થાત્ સર્વ રીતે તેમાં પ્રવૃત્ત થઈને ન:-અમને તત્-તે વિજ્ઞાનને મિત્ર:-પ્રાણ, વસ્યા:-ઉદાન અદિતિ:-અન્તરિક્ષ, સિન્ધુ:-સમુદ્ર, પૃથિવી-પૃથિવી ઉત-અને દ્યૌ:-સૂર્યનો પ્રકાશ વા વિદ્યાનો પ્રકાશ એ સર્વ મામહન્તામ્-ઉન્નત કરે. (૧૯)

ભાવાર્થ : જેના ભણાવવાથી વિદ્યા અને સુશિક્ષાની વૃદ્ધિ થાય, તેની સંગતિથી, મનુષ્યોએ સમસ્ત વિદ્યાઓમાં સર્વ રીતે નિશ્ચય કરવો જોઈએ. (૧૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સમસ્ત વિદ્વાનોના ગુણ અને કર્મના વર્ણનથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૦૫)

સૂક્ત-૧૦૬

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमृतये मारुतं शब्दो अदितिं हवामहे ।

रथं न दुर्गाद्वसवः सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहसो निष्षिपत्तन ॥ १ ॥

પદાર્થ : સુદાનવ:-જેના સર્વોત્તમ દાન આદિ કામ વા વસવ:-જે વિદ્યાદિ શુભ ગુણોમાં વસે છે; તે હે વિદ્વાનો ! તમે રથમ્-વિમાન આદિ યાનને ન-જેમ દુર્ગાત્-ભૂમિ, જળ અને અન્તરિક્ષના કઠિન માર્ગથી બચાવો છો, તેમ ન:-અમને વિશ્વસ્માત્-સમસ્ત અંહસ:-પાપના આચરણથી નિષ્ષિપત્તન-બચાવો.

અમે ઋતયે-રક્ષા આદિ પ્રયોજનને માટે ઇન્દ્રમ્-વિદ્યુત્ વા પરમ ઐશ્વર્યવાન સભાધ્યક્ષ મિત્રમ્-સર્વના પ્રાણરૂપી વાયુ વા સર્વ મિત્ર, વસ્યામ્-કામ કરનાર ઉદાનવાયુ વા શ્રેષ્ઠ ગુણયુક્ત વિદ્વાન, અગ્નિમ્-સૂર્ય આદિ રૂપ અગ્નિ વા જ્ઞાનવાન જન, અદિતિમ્-માતા, પિતા, પુત્ર ઉત્પન્ન થયેલ જગતનું કારણ

વા જગતની ઉત્પત્તિ, માસ્તમ્-વાયુઓ વા મનુષ્યોનો સમૂહ તથા શર્દ્ધઃ-બળને હવામહે-પોતાના કાર્યની સિદ્ધિને માટે સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્ય સારી રીતે બનાવેલ વિમાન આદિ યાનથી અત્યંત કઠિન માર્ગથી પણ સુખપૂર્વક આવાગમન કરીને, કાર્યોને સિદ્ધ કરીને તથા સમસ્ત દરિદ્રતા આદિ દુઃખથી છૂટીને જીવે છે, તેમ તે ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાં રહેલ પૃથિવી આદિ પદાર્થોને અથવા વિદ્વાનોને જાણીને, ઉપકાર કરીને તથા યથાવત્ સેવન કરીને અનુપમ સુખ પામી શકે છે. (૧)

ત આદિત્યા આ ગતા સર્વતાતયે ભૂત દૈવા વૃત્રતૂર્યેષુ શંભુવઃ ।

રથં ન દુર્ગાદ્વિસવઃ સુદાનવો વિશ્વસ્માન્નો અંહસો નિષ્પિપર્ત્તનઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે દેવાઃ-દિવ્ય ગુણયુક્ત વિદ્વાનો ! જેમ આદિત્યાઃ-કારણરૂપથી નિત્ય દિવ્યગુણવાળા જે સૂર્ય આદિ પદાર્થો છે, તે-તે વૃત્રતૂર્યેષુ-મેઘાવયવો અર્થાત્ વાદળાંઓનું હિંસન-વિનાશ કરવું જેમાં હોય છે, તે સંગ્રામોમાં શંભુવઃ-સુખની ભાવના કરાવનાર હોય છે, તેમ જ આપ અમારી સમીપ આ, ગત-આવો અને આવીને જેમાં શત્રુઓનું હનન થાય તે સંગ્રામોમાં સર્વતાતયે-સમસ્ત સુખને માટે શંભુવઃ-સુખની ભાવના કરાવનાર ભૂત-થાઓ. શેષ મંત્રાર્થ પ્રથમ મંત્રની સમાન જાણવા જોઈએ. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વર દ્વારા રચેલ પૃથિવી આદિ પદાર્થ સમસ્ત પ્રાણીઓના ઉપકાર માટે છે, તેમ સર્વના ઉપકાર માટે વિદ્વાનોએ નિત્ય પ્રવૃત્ત રહેવું જોઈએ.

જેમ સુદૅઢ વાહનમાં બેસીને લોક બીજા દેશમાં જઈને વેપાર દ્વારા અથવા વિજય દ્વારા ધન અને પ્રતિષ્ઠા પ્રાપ્ત કરીને તથા દરિદ્રતા અને અપ્રતિષ્ઠાથી મુક્ત બનીને સુખી થાય છે, તેમ વિદ્વાનજન ઉપદેશ દ્વારા વિદ્યા પ્રાપ્ત કરાવીને સર્વને સુખી કરે. (૨)

અવન્તુ નઃ પિતરઃ સુપ્રવાચના ઉત દેવી દેવપુત્રે ઋતાવૃધા ।

રથં ન દુર્ગાદ્વિસવઃ સુદાનવો વિશ્વસ્માન્નો અંહસો નિષ્પિપર્ત્તનઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : દેવપુત્રે-જેના દિવ્ય ગુણ અર્થાત્ સર્વોત્તમ વિદ્વાન વા દિવ્ય રત્નોયુક્ત પર્વતાદિ પદાર્થો વા પુત્રોના પાલક વા જે ઋતાવૃધા-સત્ય કારણથી વધે છે; તે દેવી-સારા ગુણોયુક્ત ભૂમિ અને સૂર્યનો પ્રકાર જેમ નઃ-અમારી રક્ષા કરે છે, તેમ સુપ્રવાચનાઃ-જેના સારા અધ્યાપન અને ઉપદેશ છે, તે પિતરઃ-વિશેષ જ્ઞાનવાન મનુષ્યો અમને ઉત-નિશ્ચયથી અવન્તુ-રક્ષા આદિ વ્યવહારોથી પાળે. શેષ મંત્રાર્થ પ્રથમ મંત્રાર્થ સમાન ગણવા જોઈએ. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઔષધિ આદિથી તથા પ્રકાશ આદિથી પૃથિવી અને સૂર્ય સર્વના સુખની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ આપ વિદ્વાન જન સર્વ મનુષ્યોને સુશિક્ષા અને અધ્યાપન દ્વારા વિદ્યા આદિ સદ્ગુણોની

સૂક્ત-૧૦૭

વૃદ્ધિ કરીને સુખી કરે છે.

જેમ મનુષ્ય ઉત્તમ વાહન પર બેસીને દુર્ગમ માર્ગોને પાર સુખથી પહોંચીને સમસ્ત ક્લેશથી ધૂટીને સુખી થાય છે, તેમ જ એ (વિદ્વાનો) અમને દુષ્ટ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોથી પૃથક્ કરીને ધર્માચરણમાં ઉન્નત કરે. (૩)

નરાશંસં વાજિનં વાજયન્નિહ ક્ષયદ્વીરં પૂષણં સુમ્નૈરીમહે।

રથં ન દુર્ગાદ્વિસવઃ સુદાનવો વિશ્વસ્માન્નો અંહસો નિષ્ણિપર્તન ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જેમ વાજયન્-સર્વોત્તમ પદાર્થોનું વિશેષ જ્ઞાન કરાવનાર વા યુદ્ધ કરાવનાર અમે **ઇહ-** આ સૃષ્ટિમાં **સુમ્નૈઃ-** સુખોથી યુક્ત **નરાશંસમ્-** મનુષ્યોએ પ્રાર્થના કરવા યોગ્ય વિદ્વાનને તથા **વાજિનમ્-** વિજ્ઞાન અને યુદ્ધ વિદ્યામાં નિપુણ **ક્ષયદ્વીરમ્-** જેના શત્રુઓને કાપનારા વીર અને જે **પૂષણમ્-** શરીર અને આત્માની પુષ્ટિ કરાવનાર છે, તે સભાધ્યક્ષને **ઈમહે-** પ્રાપ્ત થઈએ તેમ તું શુભ ગુણોની યાચના કર. શેષ મંત્રાર્થ પૂર્વવત્. (૪)

ભાવાર્થ : અમે શુભ ગુણોથી યુક્ત સુખી મનુષ્યોની મિત્રતાને પ્રાપ્ત કરીને શ્રેષ્ઠ બનીને યાનયુક્ત શિલ્પીઓની સમાન દુઃખથી પાર થઈએ. (૪)

બૃહસ્પતે સદમિન્નઃ સુગં કૃધિ શં યોર્યત્તે મનુર્હિતં તદીમહે।

રથં ન દુર્ગાદ્વિસવઃ સુદાનવો વિશ્વસ્માન્નો અંહસો નિષ્ણિપર્તન ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે **બૃહસ્પતે-** પરમ અધ્યાપક અર્થાત્ શ્રેષ્ઠ અધ્યાપક ! તે-આપના જે **મનુર્હિતમ્-** મનનું હિત કરનાર છે, **શમ્-** સુખ વા **યોઃ-** ધર્મ, અર્થ અને મોક્ષની પ્રાપ્તિ કરાવનાર છે, તથા **યત્-** જે **સદમ્,** **ઇત્-** સદા તમે **નઃ-** અમારે માટે **સુગમ્-** સુખ **કૃધિ-** કરો અર્થાત્ સિદ્ધ કરો **તત્-** તે ઉક્ત સમસ્તને અમે **ઈમહે-** માગીએ છીએ. શેષ મંત્રાર્થ પૂર્વવત્. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જેમ અધ્યાપકથી વિદ્યા પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે, તેમ જ સર્વ વિદ્વાનોથી વિદ્યા સ્વીકાર કરીને દુઃખોને નષ્ટ કરવા જોઈએ. (૫)

ઇન્દ્રં કુત્સો વૃત્રહણં શચીપતિં કાટે નિબાલ્હઃ ઋષિરહ્નદૂતયે।

રથં ન દુર્ગાદ્વિસવઃ સુદાનવો વિશ્વસ્માન્નો અંહસો નિષ્ણિપર્તન ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : **કુત્સઃ-** વિદ્યારૂપી વજ્ર લઈને વા પદાર્થોને છિન્ન-ભિન્ન કરીને **નિબાલ્હઃ-** નિરંતર સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર **ઋષિઃ-** ગુરુ અને વિદ્યાર્થી **કાટે-** જેમાં સમસ્ત વિદ્યાઓની વર્ષા થાય છે, તે અધ્યાયન વ્યવહારમાં **ઋતયે-** રક્ષા આદિને માટે જે **વૃત્રહણમ્-** શત્રુઓનો વિનાશ કરનાર વા **શચીપતિમ્-** વેદવાણીના પાલક **ઇન્દ્રમ્-** પરમૈશ્વર્યવાન શાળા આદિના અધિપતિને **અહ્ત્-** બોલાવીએ; અમે પણ તેઓને બોલાવીએ-

આહ્વાન કરીએ. (૬)

ભાવાર્થ : વિદ્યાર્થીએ કપટી અધ્યાપક સમીપ ન રહેવું જોઈએ, પરન્તુ વિદ્વાનોની સમીપ રહીને, વિદ્વાન બનીને ઋષિત્વભાવવાન બનવું જોઈએ. પોતાના આત્માની રક્ષાને માટે અધર્મથી ડરીને સદા ધર્મમાં સ્થિત રહેવું જોઈએ. (૬)

દેવૈર્નો દેવ્યદિતિર્નિ પાતુ દેવસ્ત્રાતા ત્રાયતામપ્રયુચ્છન્ ।

તન્નો મિત્રો વરુણો મામહન્તામદિતિઃ સિન્ધુઃ પૃથિવી ઉત દ્યૌઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : જે દેવૈઃ-જે વિદ્વાન વા દિવ્ય ગુણોની સાથે વર્તમાન અપ્રયુચ્છન્-પ્રમાદ ન કરતા ત્રાતા-સર્વની રક્ષા કરનાર દેવઃ-વિદ્વાન છે, તે નઃ-અમારી નિ, પાતુ-નિરંતર રક્ષા કરે; તથા દેવી-દિવ્યગુણ ભરેલ સર્વ જે અદિતિઃ-પ્રકાશયુક્ત વિદ્યા સર્વની ત્રાયતામ્-રક્ષા કરે, તત્-તે પૂર્વોક્ત સમસ્ત કર્મને નઃ-અને અમને મિત્રઃ-મિત્ર, વસ્તુઃ-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન, અદિતિઃ-અખંડિત નીતિ, સિન્ધુઃ-સમુદ્ર પૃથિવી-ભૂમિ ઉત-અને દ્યૌઃ-સૂર્યનો પ્રકાશ મામહન્તામ્-વૃદ્ધિ કરે-ઉન્નતિ કરે. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ; જે પ્રમાદરહિત, વિદ્વાનોમાં વિદ્વાન, વિદ્યાના રક્ષક અને વિદ્યાદાન દ્વારા સર્વના સુખોના વર્ધક છે, તેઓનો સત્કાર કરીને વિદ્યા અને ધર્મનો સંસારમાં પ્રસાર કરવો જોઈએ. (૭)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સમસ્ત વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન છે, તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૦૬)

સૂક્ત-૧૦૭

યજ્ઞો દેવાનાં પ્રત્યૈતિ સુમ્નમાદિત્યાસો ભવતા મૃલ્યન્તઃ ।

આ વોઽર્વાચીં સુમતિર્વૃત્યાદ્ઘોશ્ચિદ્યા વરિવોવિત્તરાસન્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : મુડ્યન્તઃ-હે આનંદિત કરતા આદિત્યાસઃ-સૂર્યની સમાન વિદ્યાયોગના પ્રકાશને પ્રાપ્ત વિદ્વાનો ! તમે જે દેવાનામ્-વિદ્વાનોની યજ્ઞઃ-સંગતિથી સિદ્ધ કરેલ શિલ્પકામ સુમ્નમ્-સુખની પ્રતિ, એતિ-પ્રતીતિ કરાવે છે, તેને પ્રકટ કરનારા ભવત-થાઓ.

યા-જે વઃ-તમને અંહોઃ-વિશેષ જ્ઞાન જેમ થાય, તેમ અર્વાચી-તે સમયથી સુમતિઃ-ઉત્તમ બુદ્ધિ વૃત્યાત્-વર્તે છે, તે ચિત્-પણ અમારે માટે વરિવોવિત્તરા-એવી હોય કે જેથી ઉત્તર જનોની સમ્યક્ સુશ્રૂષા આ, અસન્-સર્વત્રથી થાય. (૧)

ભાવાર્થ - આ સંસારમાં વિદ્વાનોએ જે પોતાના પુરુષાર્થથી શિલ્પક્રિયા પ્રત્યક્ષ કરેલ છે, તેને સર્વ મનુષ્યોને માટે પ્રકાશિત કરે, જેથી અનેક મનુષ્યો શિલ્પક્રિયા કરીને સુખી થાય. (૧)

સૂક્ત-૧૦૮

उप नो देवा अवसा गमन्त्वङ्गिरसां सामभिः स्तूयमानाः ।

इन्द्र इन्द्रियैर्मरुतो मरुद्भिरादित्यैर्નો अदितिः शर्म यंसत् ॥ २ ॥

પદાર્થ : સામભિઃ-સામવેદના ગાનથી સ્તૂયમાનાઃ-સ્તુતિની પ્રાપ્તિ થયેલ આદિત્યૈઃ-પૂર્ણ વિદ્યાવાન મનુષ્ય વા બાર મહિનાઓ મસંહિદઃ-વિદ્વાનો વા વાયુઓ અને ઇન્દ્રિયૈઃ-ધન સહિત ઇન્દ્રઃ-સભાધ્યક્ષ મસ્તઃ-વા વાયુ અદિઃ-વિદ્વાનોના પિતા વા સૂર્યપ્રકાશ અને દેવાઃ-વિદ્વાનોના અદ્વિત્સામ્-પ્રાણ વિદ્યાના જાણનાર નઃ-અમે લોકોને અવસા-રક્ષા આદિ વ્યવહારથી ઉપ, આ, ગમન્તુ-સમીપમાં સર્વ રીતે આવે અને નઃ-અમારા માટે શર્મ-સુખ યંસત્-પ્રદાન કરે. (૨)

ભાવાર્થ : જિજ્ઞાસુજનો જે વિદ્વાનોની અથવા વિદ્વાનજનો જે જિજ્ઞાસુઓની સમીપ જાય, તેઓ વિદ્યા, ધર્મ અને સુશિક્ષાના વ્યવહારને છોડીને અન્ય કોઈ કાર્ય કદીપણ કરે નહિ. જેથી દુઃખના નાશ સાથે સુખની નિરંતર વૃદ્ધિ થાય. (૨)

तन्न इन्द्रस्तद्वरुणस्तदग्निस्तदर्यमा तत्सविता चनो धात् ।

तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ ३ ॥

પદાર્થ : જેમ મિત્રઃ-મિત્ર, વસ્રઃ-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન, અદિતિઃ-અખંડિત આકાશ, સિન્ધુઃ-સમુદ્ર, પૃથિવી-ભૂમિ ઉત-અને દ્યૌઃ-સૂર્ય આદિનો પ્રકાશ નઃ-અમને મામહન્તામ્-આનંદિત કરે છે, તત્-તેમ ઇન્દ્રઃ-વિદ્યુત્ વા ધનાઢ્યજન નઃ-અમારા માટે, તત્-તે ધન વા અન્નની અર્થાત્ તેના આપેલા ધનાદિ પદાર્થોને વસ્રઃ-જળ વા ગુણોથી ઉત્કૃષ્ટ, તત્-તે શરીર સુખને અગ્નિઃ-પવિત્ર અગ્નિ વા ન્યાયમાર્ગ ચલાવનાર વિદ્વાન, તત્-એ આત્મસુખને અર્યમા-નિયમકર્તા વાયુ વા ન્યાયકર્તા સભાધ્યક્ષ તત્-ઈન્દ્રિયોના સુખને સવિતા-સૂર્ય વા ધર્મ કાર્યોમાં પ્રેરણા કરનાર ધર્મજાજન તત્-તે સામાજિક સુખ અને ચનઃ-અન્નને ધાત્-ધારણ કરતા વા ધારણ કરે. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ સંસારના પૃથિવી આદિ પદાર્થો સુખદાયક છે. તેમ જ વિદ્વાનોએ સુખદાયક બનવું જોઈએ. (૩)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સમસ્ત વિદ્વાનોના ગુણનું વર્ણન છે, તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૦૭)

સૂક્ત-૧૦૮

य इन्द्राग्नी चित्रतमो रथो वामभि विश्वानि भुवनानि चष्टे ।

तेना यातं सुरथं तस्थिवांसाथा सोमस्य पिबतं सुतस्य ॥ १ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે ચિત્રતમઃ-અતિશય આશ્ચર્ય સ્વરૂપ ગુણ અને ક્રિયાયુક્ત રથઃ-વિમાન આદિ યાનસમૂહ વામ્-એ તસ્થિવાંસા-સ્થિત થયેલ ઇન્દ્રાગ્ની-વાયુ અને અગ્નિને પ્રાપ્ત થઈને વિશ્વાનિ-સર્વ ભુવનાનિ-

૪૫૪

ऋग्वेदभाष्य

ભૂગોળના સ્થાનોને અભિ; ચષ્ટે-સર્વ રીતે દેખાડે છે અથ-ત્યાર પછી જેથી એ બન્ને અર્થાત્ વાયુ અને અગ્નિ સરથમ્-રથ આદિ સામગ્રી સહિત સેના વા ઉત્તમ સામગ્રીને આ, યાતમ્-પ્રાપ્ત થઈને સમ્યક્ ઈચ્છિત સ્થાનને પહોંચાડે છે તથા સુતસ્ય-ઈશ્વરે ઉત્પન્ન કરેલ સોમસ્ય-સોમ આદિના રસનું પિબતમ્-પાન કરે છે. તેન-તેથી સમસ્ત શિલ્પી મનુષ્યોએ સર્વસ્થાનોમાં જવું-આવવું જોઈએ. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, કલાઓમાં સમ્યકે યુક્ત કરીને સંચાલિત કરેલ વાયુ-અગ્નિથી યુક્ત વિમાન આદિ યાનો આકાશ, સમુદ્ર અને ભૂમિ માર્ગોથી અન્ય દેશોમાં જઈને-આવીને, સદા પોતાના અભિપ્રાયની સિદ્ધિ દ્વારા આનંદરસનો ઉપભોગ કરવો જોઈએ. (૧)

યાવદિદં ભુવનં વિશ્વમસ્ત્યુરુવ્યચા વરિમતા ગમ્भीરમ્ ।

તાવાં અયં પાતવે સોમો અસ્ત્વરમિન્દ્રાગ્ની મનસે યુવધ્યામ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે યાવત્-જેટલા ઉચ્ચચા-બહુ જ વ્યાપ્તિ અર્થાત્ સંપૂર્ણ અને વરિમતા-બહુ જ સ્થૂળતાની સાથે વર્તમાન ગમ્भीરમ્-અગાધ ભુવનમ્-સર્વ વસ્તુઓને રહેવાનું સ્થાન ઇદમ્-એ પ્રકટ-અપ્રકટ વિશ્વમ્-જગત અસ્તિ-છે, તાવાન્-તેટલા અયમ્-એ સોમઃ-ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થોના સમૂહ છે, તેનું મનસે-વિજ્ઞાન કરાવવા ઇન્દ્રાગ્ની-વાયુ અને અગ્નિ અરમ્-પરિપૂર્ણ છે, તેથી તે યુવધ્યામ્-તે બન્નેથી પાતવે-રક્ષા આદિને માટે તેટલો બોધ અને પદાર્થોનો સ્વીકાર કરો. (૨)

ભાવાર્થ : વિચક્ષણ = અતિ બુદ્ધિમાન મનુષ્યોએ એ જાણી લેવું જોઈએ, કે જ્યાં જ્યાં મૂર્તિમાન (= સ્થૂળ) લોક છે, ત્યાં ત્યાં વાયુ અને વિદ્યુત્ વ્યાપક હોવાના સ્વરૂપથી વિદ્યમાન છે. જેટલું મનુષ્યોનું સામર્થ્ય છે, તેટલા તેના ગુણોને જાણીને તથા પુરુષાર્થથી તેનો ઉપયોગ કરીને પૂર્ણ સુખી થવું જોઈએ. (૨)

ચક્રાથે હિ સધ્યર્જ્ઙ્ નામ્ ભદ્રં સંધીચીના વૃત્રહણા ઉત સ્થઃ ।

તાવિન્દ્રાગ્ની સધ્યર્જ્ઙ્ચા નિષદ્યા વૃષ્ણઃ સોમસ્ય વૃષ્ણા વૃષેથામ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સંધીચીના-એકત્ર મળેલા અને વૃત્રહણૌ-મેઘને હણનારા સધ્યર્જ્ઙ્-સહ પ્રશંસનીય નિષદ્યા-નિત્ય સ્થિર થઈને, વૃષ્ણઃ-પુષ્ટિ કરીને, સોમસ્ય-રસવાન પદાર્થ સમૂહની વૃષ્ણા-પુષ્ટિ કરનારા ઇન્દ્રાગ્ની-પૂર્વોક્ત વાયુ અને સૂર્યમંડળ ભદ્રમ્-વૃષ્ટિ આદિ કાર્યથી પરમ સુખકારક સધ્યર્જ્ઙ્-એક સાથે પ્રકટ થઈને નામ-જળને ચક્રાથે-કરે છે, ઉત-અને કાર્ય સિદ્ધિ કરનારા અસ્થઃ-થઈને વૃષેથામ્-તથા સુખરૂપી વર્ષા કરે છે, તૌ-તે બન્ને (વાયુ + સૂર્ય)ને હિ-પણ આ-સમ્યક્ જાણો. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, અત્યંત ઉપયોગી વાયુ અને વિદ્યુત્નું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને (એનો) શા માટે ઉપયોગ ન કરવો જોઈએ ? (૩)

સમિદ્ધેષ્વગ્નિષ્વાનજાના યતસ્ત્રુચા બર્હિરુ તિસ્તિરાણા ।

તીવૈઃ સોમૈઃ પરિષિક્તે ભિર્વાગેન્દ્રાગ્ની સૌમનસાય યાતમ્ ॥ ૪ ॥

સૂક્ત-૧૦૮

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે તમે **યતસ્તુચા**-જેમાં સુચ અર્થાત્ હોમ કરવાના કામમાં જે સુવો હોય છે તેના સમાન કલાધર વિદ્યમાન **તિસ્તિરાણા**-વા જે યંત્રકલાદિથી ઢાંકેલ હોય છે, **આનજાના**-તે આપ પ્રસિદ્ધ અને પ્રસિદ્ધ કરનાર **ઇન્દ્રાગ્ની**-વાયુ અને વિદ્યુત્ **તીવૈઃ**-તીક્ષ્ણ અને વેગાદિ ગુણયુક્ત **સોમૈઃ**-રસરૂપ જળથી **પરિષિક્તેભિઃ**-સર્વ રીતે કરેલી સિંચાઈઓ સહિત **સમિદ્ધેષુ**-સમ્યક્ પ્રદીપ્ત **અગ્નિષુ**-કલાધરોની અગ્નિઓમાં થઈને **અર્વાક્**-પછી **બર્હિઃ**-અન્તરિક્ષમાં **યાતમ્**-પહોંચાડે છે **ઉ**-અને **સૌમનસાય**-સર્વોત્તમ સુખને માટે **આ**-સારી રીતે આવે પણ છે. તેની સમ્યક્ શિક્ષા કરીને કાર્યસિદ્ધિને માટે કલાઓમાં - યંત્રોમાં લગાવવા જોઈએ. (૪)

ભાવાર્થ : જ્યારે શિલ્પીઓ દ્વારા વાયુ અને વિદ્યુત્ કાર્ય સિદ્ધિને માટે સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરવામાં આવે છે, ત્યારે એ બંને સુખ લાભ માટે સમર્થ બને છે. (૪)

યાનીન્દ્રાગ્ની ચ્ચક્રથુર્વીર્યાણિ યાનિ રૂપાણ્યુત વૃષ્ણયાનિ ।

યા વાં પ્રત્લાનિ સ્વખ્યા શિવાનિ તેભિઃ સોમસ્ય પિબતં સુતસ્ય ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : **ઇન્દ્રાગ્ની**-સ્વામી અને સેવક **વામ્**-તમારા **યાનિ**-જે **વીર્યાણિ**-પરાક્રમયુક્ત કામ છે, **યાનિ**-જે **સ્વાણિ**-શિલ્પ વિદ્યાથી સિદ્ધ ચિત્ર-વિચિત્ર અદ્ભુત રૂપવાન વિમાન આદિ અને **વૃષ્ણયાનિ**-પુરુષાર્થયુક્ત કામ છે; **યા**-જ તમારે બંનેને **પ્રત્લાનિ**-પ્રાચીન **શિવાનિ**-મંગળયુક્ત **સ્વખ્યા**-મિત્રોના કામ છે, **તેભિઃ**-તેઓથી **સુતસ્ય**-કાઢવામાં આવેલ **સોમસ્ય**-સંસારી પદાર્થોના રસનું **પિબતમ્**-પાન કરો, **ઉત**-અને અમારા માટે **ચક્રથુઃ**-તેના દ્વારા સુખ હશે. (૫)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં ઈન્દ્ર શબ્દથી ધનાઢ્ય અને અગ્નિથી વિદ્યાવાન શિલ્પીનું ગ્રહણ કરવામાં આવે છે. વિદ્યા અને પુરુષાર્થ વિના કદી પણ કાર્ય સિદ્ધિ થતી નથી. અને મિત્રતા વિના કદી વ્યવહાર સિદ્ધ થઈ શકતો નથી, તેથી એ કાર્યો સદા કરવા જોઈએ. (૫)

યદબ્રવં પ્રથમં વાં વૃણાનોરુઽ યં સોમો અસુરૈર્નો વિહવ્યઃ ।

તાં સત્યાં શ્રદ્ધામ્ભ્યા હિ યાતમથા સોમસ્ય પિબતં સુતસ્ય ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે સ્વામી અને શિલ્પીજનો ! **વામ્**-તમારા માટે **પ્રથમમ્**-પ્રથમ **યત્**-જે મેં **અબ્રવમ્**-કહેલ વા **અસુરૈઃ**-વિદ્યાહીન મનુષ્યોની **વૃણાનો**-સ્તુતિ કરેલ **વિહવ્યઃ**-વિવિધ રીતે ગ્રહણ કરવા યોગ્ય **અયમ્**-એ પ્રત્યક્ષ **સોમઃ**-ઉત્પન્ન પદાર્થોનો સમૂહ તમારો છે, તેનાથી **નઃ**-અમારી **તામ્**-તે **સત્યામ્**-સત્ય **શ્રદ્ધામ્**-પ્રીતિને અભિ, **યા**, **યાતમ્**-સમ્યક્ રીતે પ્રાપ્ત થાઓ **અથ**-તદનન્તર **હિ**-નિશ્ચયપૂર્વક **સુતસ્ય**-કાઢવામાં આવેલ **સોમસ્ય**-સંસારી પદાર્થોના રસનું **પિબતમ્**-પાન કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જન્મ સમયે સર્વ અવિદ્વાન હોય છે, પશ્ચાત્ વિદ્યાભ્યાસ કરીને વિદ્વાન બને છે. તેથી વિદ્યાહીન જન મૂર્ખ, વિદ્યાવાન શ્રેષ્ઠ અને અલ્પ વિદ્યાવાન કનિષ્ઠ ગણવામાં-માનવામાં આવે

છે. કોઈપણ હોય, પરંતુ તેના પ્રત્યે સત્ય જ બોલવું જોઈએ. કોઈના પ્રત્યે પણ અસત્ય ન બોલવું જોઈએ. (૬)

યદિન્દ્રાગ્ની મદથઃ સ્વે દુરોણે યદ્ બ્રહ્મણિ રાજનિ વા યજત્રા ।

અતઃ પરિ વૃષણાવા હિ યાતમથા સોમસ્ય પિબતં સુતસ્ય ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણૌ-સુખરૂપી વર્ષા કરનારા યજત્રા-સારી રીતે મળીને સત્કાર કરવા યોગ્ય ઇન્દ્રાગ્ની-સ્વામી અને સેવકો ! તમે બન્ને યત્-જે કારણે સ્વે-પોતાના દુરોણે-ઘરમાં વા યત્-જે કારણે બ્રહ્મણિ-બ્રાહ્મણોની સભા અને રાજનિ-રાજાઓની સભા વા-અને સભામાં મદથઃ-આનંદિત થાઓ છો, અતઃ-એથી પરિ, આ, યાતમ્-સર્વ રીતે આવો, અથ, હિ-તદનન્તર એક નિશ્ચયપૂર્વક સુતસ્ય-ઉત્પન્ન થયેલ સોમસ્ય-સંસારી પદાર્થોના રસનું પિબતમ્-પાન કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જ્યાં - જ્યાં સ્વામી અને શિલ્પી, અધ્યાપક અને વિદ્યાર્થી તથા રાજપુરુષ અને પ્રજાજન જાય અથવા આવે ત્યાં-ત્યાં એ બન્ને સભ્યતાથી સ્થિત થઈને વિદ્યા અને શાન્તિથી યુક્ત વચન બોલીને સુશીલતાથી સત્ય બોલે અને સત્ય શ્રવણ કરે. (૭)

યદિન્દ્રાગ્ની યદુષુ તુર્વશેષુ યદ્ દ્રુહ્યુષ્વનુષુ પૂરુષુ સ્થઃ ।

અતઃ પરિ વૃષણાવા હિ યાતમથા સોમસ્ય પિબતં સુતસ્ય ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્રાગ્ની-સ્વામી અને શિલ્પી જનો ! તમે બન્ને યત્-જે કારણે યદુષુ-શ્રેષ્ઠ યત્ન કરનાર મનુષ્યોમાં વા તુર્વશેષુ-જે હિંસક મનુષ્યોને વશમાં કરે તેમાં વા યત્-જે કારણે દ્રુહ્યુષુ-દ્રોહીજનોમાં વા અનુષુ-પ્રાણ અથવા જીવન સુખ દાતામાં તથા પુસ્મુ-જે શ્રેષ્ઠ ગુણ, વિદ્યા અને કામોમાં પરિપૂર્ણ છે તેમાં યથોચિત્ અર્થાત્ જેથી જેવું ઈચ્છીએ તેવા વ્યવહાર વર્તનવાળા સ્થઃ-થાય. અતઃ-એ કારણે સર્વ મનુષ્યોમાં વૃષણૌ-સુખરૂપી વર્ષા કરતા આ, યાતમ્-સમ્યક્ રીતે આવો હિ-નિશ્ચયપૂર્વક અથ-તદનન્તર સુતસ્ય-કાઢવામાં આવેલ સોમસ્ય-જગતના પદાર્થોના રસનું પરિ, પિબતમ્-સારી રીતે પાન કરો. (૮)

ભાવાર્થ : જે ન્યાય અને સેનાના અધિકારને પ્રાપ્ત મનુષ્યોમાં યથાયોગ્ય વર્તમાન છે; સર્વ મનુષ્યોએ તેઓને જ તેના કાર્યોમાં સ્થાપન કરીને-માનીને કામોની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૮)

યદિન્દ્રાગ્ની અવમસ્યાં પૃથિવ્યાં મધ્યમસ્યાં પરમસ્યામુત સ્થઃ ।

અતઃ પરિ વૃષણાવા હિ યાતમથા સોમસ્ય પિબતં સુતસ્ય ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્રાગ્ની-ન્યાયાધીશ અને સેનાધીશ ! યત્-જે તમે બન્ને અવમસ્યામ્-નિકૃષ્ટ, મધ્યમસ્યામ્-મધ્યમ ઉત્-અને પરમસ્યામ્-ઉત્તમ ગુણવાળી પૃથિવ્યામ્-પોતાની રાજ્યભૂમિમાં અધિકાર પામેલ સ્થઃ-

સૂક્ત-૧૦૯

છો, તે સર્વ ક્યારેક સર્વની રક્ષા કરવા યોગ્ય છે. અતઃ-એ કારણે ઉક્ત રાજ્યમાં પરિ, વૃષણૌ-સર્વ રીતે સુખરૂપી વર્ષા કરનાર બનીને આ, યાતમ્-આવો. હિ-નિશ્ચયપૂર્વક અથ-ઉપરાંત તે રાજ્યભૂમિમાં સુતસ્ય-ઉત્પન્ન થયેલ સોમસ્ય-સંસારી પદાર્થોના રસનું પિબતમ્-પાન કરો. આ એક અર્થ છે.

(દ્વિતીય અર્થ :) યત્-જે એ ઇન્દ્રાગ્ની-વાયુ અને વિદ્યુત્ અવમસ્યામ્-નિકૃષ્ટ, મધ્યમસ્યામ્-મધ્યમ ઉત્-વા પરમસ્યામ્-ઉત્તમ ગુણવાળી પૃથિવ્યામ્-પૃથિવીમાં સ્થઃ-છો, અતઃ-એથી અહીં પરિ, વૃષણૌ-સર્વ પ્રકારથી સુખરૂપી વર્ષા કરનાર બનીને આ, યાતમ્-આવો અને અથ-એ ઉપરાંત હિ-નિશ્ચયપૂર્વક જે સુતસ્ય-કાઢવામાં આવેલ સોમસ્ય-પદાર્થોના રસનું પિબતમ્-પાન કરે છે તેઓને કામ સિદ્ધિને માટે કલાઓ-યંત્રોમાં સંયુક્ત કરીને મહાન લાભ સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૯)

ભાવાર્થ : ઉત્તમ, મધ્યમ, નિકૃષ્ટ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોના ભેદથી જે-જે રાજ્યો છે, ત્યાં-ત્યાં ઉત્તમ, મધ્યમ, કનિષ્ટ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળા મનુષ્યોને રાખીને ચક્રવર્તી રાજ્ય સ્થાપિત કરીને સર્વેએ આનંદ ભોગવવો જોઈએ.

એ રીતે આ સૃષ્ટિમાં સ્થિત અને સર્વ લોકોમાં વર્તમાન વાયુ અને વિદ્યુત્ને જાણીને તથા તેનો ઉત્તમ પ્રયોગ કરીને અને કાર્યોની સિદ્ધિ કરીને સર્વ દરિદ્રતા આદિ દુઃખોને નષ્ટ કરવા જોઈએ. (૯)

યદિન્દ્રાગ્ની પરમસ્યાં પૃથિવ્યાં મધ્યમસ્યામવમસ્યામુત સ્થઃ ।

અતઃ પરિ વૃષણાવા હિ યાતમથા સોમસ્ય પિબતં સુતસ્ય ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : આ મંત્રનો અર્થ પૂર્વ (૯) મંત્ર અનુસાર જાણવો જોઈએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : બે પ્રકારના ઈન્દ્ર (= વાયુ) અને અગ્નિ છે. એક તો તે જે ઉત્તમ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોમાં અથવા પવિત્ર ભૂમિમાં સ્થિત છે. તે ઉત્તમ (છે.) અને જે અપવિત્ર ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોમાં અથવા અશુદ્ધ ભૂમિ આદિ પદાર્થોમાં રહે છે - તે નિકૃષ્ટ છે.

આ બે પ્રકારના વાયુ અને અગ્નિ ઉપરથી નીચે અને નીચેથી ઉપર આવે (જાય) છે તેથી બન્ને મંત્રોમાં પ્રથમ પ્રયુક્ત 'અવમ અને પરમ' શબ્દો દ્વારા એ અર્થ બતાવવામાં આવેલ છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૧૦)

યદિન્દ્રાગ્ની દિવિ ષ્ઠો યત્પૃથિવ્યાં યત્પર્વતેષ્વોષધીષ્વપ્સુ ।

અતઃ પરિ વૃષણાવા હિ યાતમથા સોમસ્ય પિબતં સુતસ્ય ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : યત્-જે કારણે ઇન્દ્રાગ્ની-વાયુ અને વિદ્યુત્ દિવિ-પ્રકાશમાન આકાશમાં, યત્-જે કારણે પૃથિવ્યામ્-પૃથિવીમાં, યત્-જે કારણે પર્વતેષુ-પર્વતોમાં, અપ્સુ-જલોમાં અને ઓષધીષુ-ઔષધિઓમાં સ્થઃ-વર્તમાન છે, અતઃ-એ કારણે પરિ, વૃષણૌ-સર્વ પ્રકારથી સુખની વર્ષા કરનારા તેઓ હિ-નિશ્ચયપૂર્વક આ, યાતમ્-પ્રાપ્ત થાય છે. અથ-તદનન્તર સુતસ્ય-કાઢવામાં આવેલ સોમસ્ય-જગતના પદાર્થોના રસનું

પિબતમ્-પાન કરે છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે ધનંજય વાયુ અને કારણ નામક અગ્નિ, એ સર્વ પદાર્થોમાં સ્થિત છે. એ બન્ને સમ્યક્ રીતે જાણીને તથા સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરેલ, અનેક કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે. (૧૧)

યદિન્દ્રાગ્ની ઉદિતા સૂર્યસ્ય મધ્યે દિવઃ સ્વધયા માદયેથે ।

અતઃ પરિ વૃષણાવા હિ યાતમથા સોમસ્ય પિબતં સુતસ્ય ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : યત્-જે કારણે ઇન્દ્રાગ્ની-વાયુ અને વિદ્યુત્ ઉદિતા-ઉદયને પ્રાપ્ત થયેલ સૂર્યસ્ય-સૂર્યમંડળના વા દિવઃ-અંતરિક્ષના મધ્યે-મધ્યમાં સ્વધયા-અન્ન અને જળથી સર્વને માદયેથે-હર્ષ આપે છે. અતઃ-એથી વૃષણા-સુખની વર્ષા કરનારા પરિ-સર્વ રીતે આ, યાતમ્-આવે છે અર્થાત્ બહાર અને અંદરથી પ્રાપ્ત થાય છે તથા હિ-નિશ્ચયપૂર્વક અથ-તદનન્તર સુતસ્ય-કાઢવામાં આવેલ સોમસ્ય-જગતના પદાર્થોના રસનું પિબતમ્-પાન કરે છે. (૧૨)

ભાવાર્થ : વાયુ અને વિદ્યુત્ વિના કોઈપણ લોકનું અથવા પ્રાણીનું રક્ષણ અને જીવન સંભવ નથી; તેથી એ બન્ને જગતના પાલનમાં પ્રમુખ છે. (૧૨)

એવેન્દ્રાગ્ની પપિવાંસા સુતસ્ય વિશ્વાસ્મભ્યં સં જયતં ધનાનિ ।

તન્નો મિત્રો વરુણો મામહન્તામદિતિઃ સિન્ધુઃ પૃથિવીઃ ઉત દ્યૌઃ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : મિત્રઃ-મિત્ર, વસ્ત્રઃ-શ્રેષ્ઠ ગુણયુક્ત, અદિતિઃ-ઉત્તમ વિદ્વાન, સિન્ધુઃ-સમુદ્ર, પૃથિવી-પૃથિવી ઉત-અને દ્યૌઃ-સૂર્યનો પ્રકાશ જેને નઃ-અમારા માટે મામહન્તામ્-વૃદ્ધિ-ઉન્નત કરે, તત્, એવ-તેઓ વિશ્વા-સમસ્ત ધનાનિ-ધનોને સુતસ્ય-પદાર્થોથી કાઢવામાં આવેલ રસનું પપિવાંસા-પાન કરેલ ઇન્દ્રાગ્ની-અતિ ધનાઢ્ય વા યુદ્ધવિદ્યામાં કુશળ વીરજન અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે સંજયતમ્-સારી રીતે જીતે અર્થાત્ સિદ્ધ કરે. (૧૩)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન, બળવાન અને ધાર્મિક કોશાધ્યક્ષ અને સેનાપતિ વિના ઉત્તમ પુરુષાર્થી જનોનાં વિદ્યા આદિ ધન વધારી શકાતા નથી.

જેમ મિત્ર આદિ પોતાના મિત્રોને સુખ આપે છે, તેમ કોશાધ્યક્ષ અને સેનાપતિ આદિ પ્રજાના પ્રાણીઓને સુખ આપે છે. તેથી સર્વેએ એ બન્નેનું સદા પાલન કરવું જોઈએ. (૧૩)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વાયુ અને વિદ્યુત્ આદિના ગુણોના વર્ણનથી તેના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૦૮)

સૂક્ત-૧૦૯

વિ હ્યચ્ચં મનસા વસ્ય ડુચ્છન્નિન્દ્રાગ્ની જ્ઞાસ ઉત વા સજાતાન્ ।

નાન્યા યુવત્પ્રમતિરસ્તિ મહ્યં સ વાં ધિયં વાજયન્તીમતક્ષમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જેમ ઇન્દ્રાગ્ની-વિદ્યુત્ અને જે દૃષ્ટિગોચર અગ્નિ છે તેઓને ઇચ્છન્-ઈચ્છીને વસ્ય:- જેઓએ ચોવીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પાલન કરેલ છે તેમાં પ્રશંસનીય હું તથા જ્ઞાસ:- જ્ઞાતાજન છે. તેઓને વા જાણવા યોગ્ય પદાર્થોને સજાતાન્-વા એક સંગ થયેલ પદાર્થોને ઉત્-અને વા-વિદ્યાર્થી વા જ્ઞાપકોને મનસા-વિશેષ જ્ઞાનથી જાણવાની ઈચ્છા કરીને યુવત્-સર્વ વસ્તુઓને યથાયોગ્ય કાર્યોમાં પ્રયુક્ત કરનાર હું એને હિ-નિશ્ચયપૂર્વક વિ, અચ્ચમ્-અન્યોના પ્રત્યે ઉત્તમતાની સાથે કહું, તેમ તમે પણ કહો. જે મારી પ્રમતિ:-પ્રબળ મતિ અસ્તિ-છે, તેમ તમારી પણ થાય, ન, અન્યા-અન્ય ન થાય.

જેમ હું વામ્-તમે બન્ને અધ્યાપક અને વિદ્યાર્થીથી વાજયન્તીમ્-સમસ્ત વિદ્યાઓને જ્ઞાપક કરાવનારી ધિયમ્-ઉત્તમ બુદ્ધિને અતક્ષમ્-સૂક્ષ્મ કરું અર્થાત્ કઠિન વિષયને સરળતાથી જાણું, તેમ સ:-તે અધ્યાપક અને વિદ્યાર્થી મહ્યમ્-મારા માટે સૂક્ષ્મ કરે. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને ઉચિત છે કે સત્ય પ્રીતિ અને પુરુષાર્થના દ્વારા સદ્ વિદ્યા આદિનો બોધ કરાવતા, અતિશ્રેષ્ઠ બુદ્ધિને ઉત્પન્ન કરીને, વ્યવહાર અને અધ્યાત્મની સિદ્ધિ કરનારા કાર્યો અવશ્ય કરે. (૧)

અશ્રવં હિ ભૂરિદાવત્તરા વાં વિજામાતુરુત વાં ઘા સ્યાલાત્ ।

અથા સોમસ્ય પ્રયતી યુવભ્યામિન્દ્રાગ્ની સ્તોમં જનયામિ નવ્યમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જે વામ્-એ ભુરિદાવત્તરા-અત્યંત બહુ જ ધનની પ્રાપ્તિ કરાવનારા ઇન્દ્રાગ્ની-વિદ્યુત્ અને ભૌતિક અગ્નિ છે વા જે ઉક્ત ઇન્દ્રાગ્ની વિજામાતુ:-વિરોધી જમાઈ સ્યાલાત્-સાળાથી ઉત્, વા-અથવા અને ઘ-અન્ય જનોથી ધનને અપાવે છે એ હું અશ્રવમ્-સાંભળી ચૂક્યો છું અથ, હિ-અત્યારે યુવભ્યામ્-એનાથી સોમસ્ય-એશ્વર્ય અર્થાત્ ધનાદિ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ કરનારા વ્યવહારને પ્રયતી-સમ્યક્ રીતે આપવા માટે નવ્યમ્-નવીન સ્તોમમ્-ગુણના પ્રકાશને હું જનયામિ-પ્રકટ કરું છું. (૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યો (ને માટે એ ઉચિત છે કે તેઓએ) વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોના ગુણગાન અને સમ્યક્ પ્રયોગના દ્વારા નવીન તથા કાર્ય સિદ્ધિ કરનારા કલાયંત્ર આદિનું નિર્માણ કરીને અનેક કાર્યોને સંપન્ન કરીને ધર્મ, અર્થ, કામની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨)

મા ચ્છેદ્વા ર્શ્મીરિતિ નાધમાનાઃ પિતૃણાં શક્તીરનુચ્છમાનાઃ ।

ઇન્દ્રાગ્નિભ્યાં કં વૃષણો મદન્તિ તા હ્યદ્રીં ધિષણાયા ઉપસ્થે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જેમ વૃષણ:-બળવાન જન જે અદ્વી-જે કદી વિનાશને પ્રાપ્ત થનાર નથી તા-તે ઇન્દ્ર અને અગ્નિઓને સમ્યક્ રીતે જાણી ઇન્દ્રાગ્નિભ્યામ્-એથી ધિષણાયા:-અતિ વિચારયુક્ત બુદ્ધિની ઉપસ્થે-

સમીપમાં સ્થિર કરવા યોગ્ય અર્થાત્ તે બુદ્ધિની સાથેના યોગ્ય વ્યવહારમાં **કમ્-સુખને** પ્રાપ્ત કરીને **મદન્તિ-આનંદિત** થાય છે વા સુખની ચાહના કરે છે, તેમ **પિતૃણામ્-રક્ષા** કરનારા જ્ઞાની વિદ્વાનો વા રક્ષાથી અનુયોગ પ્રાપ્ત થયેલ વસંત આદિ ઋતુઓના **રમીન્-વિદ્યાયુક્ત** જ્ઞાન પ્રકાશીને **નાધમાના:-** ઐશ્વર્યની સાથે ચાહીને **શક્તી:-**વા સામર્થ્યને **અનુ ચચ્છમાના:-**અનુકૂળતાની સાથે નિયમમાં લાવીને અને આનંદિત થઈએ **હિ-જ** છીએ અને **ઈતિ-એમ** જાણીને એ વિદ્યાઓના મૂળને અમે **મા, છેદમ-કાપી**એ નહિ. (૩)

ભાવાર્થ : ઐશ્વર્યની કામનાવાળા મનુષ્યોએ ક્યારેય પણ વિદ્વાનોની સેવા અને સંગતિનો ત્યાગ કરીને તથા વસંત આદિ ઋતુઓનું યથોચિત વિજ્ઞાન અને સેવનને છોડીને વર્તાવ ન કરવો જોઈએ. વિદ્યા તથા બુદ્ધિની ઉન્નતિ અને વ્યવહારની સિદ્ધિ પ્રયત્નપૂર્વક કરવી જોઈએ. (૩)

યુવાભ્યાં દેવી ધિષ્ણા મદાયેન્દ્રાગ્ની સોમમુશ્તી સુનોતિ ।

તાર્વશ્વિના ભદ્રહસ્તા સુપાણી આ ધાવતં મધુના પૃક્તમ્પ્સુ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે **સોમમ્-ઐશ્વર્યની** ઝણતી-કાન્તિ કરાવનારી **દેવી-સર્વોત્તમ** શિક્ષા અને શાસ્ત્રવિદ્યા આદિથી પ્રકાશમાન **ધિષ્ણા-બુદ્ધિ મદાય-આનંદને** માટે **યુવાભ્યામ્-જેથી** કાર્યોને **સુનોતિ-સિદ્ધ** કરે છે, તે બુદ્ધિથી જે **ઇન્દ્રાગ્ની-વિદ્યુત્** અને ભૌતિક અગ્નિ **અપ્સુ-કલાધરોમાં** જળનાં સ્થાનોમાં **મધુના-જળથી** **પૃક્તમ્-સંપર્ક** અર્થાત સંબંધ કરે છે વા **ભદ્રહસ્તા-જેનાથી** ઉત્તમ સુખ કરનારા હાથોની સમાન ગુણ **સુપાણી-સર્વોત્તમ** વ્યવહાર વા **અશ્વિના-જે** સર્વમાં વ્યાપ્ત થનાર છે, **તૌ-તે** વિદ્યુત્ અને ભૌતિક અગ્નિ રથોમાં સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરીને તેઓને **આ, ધાવતમ્-ચલાવે** છે. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જ્યાં સુધી બુદ્ધિઓને ઉત્તમ શિક્ષા, ઉત્તમ વિદ્યા અને ક્રિયા-કૌશલથી યુક્ત કરતા નથી, ત્યાં સુધી તેઓ વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોથી ઉપકાર ગ્રહણ કરી શકતા નથી. તેથી એને યત્નપૂર્વક સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૪)

યુવામિન્દ્રાગ્ની વસુનો વિભાગે ત્વસ્તમા શુશ્રવ વૃત્રહત્યે ।

તાવાસદ્યાં બર્હિષિ યજ્ઞે અસ્મિન્પ્ર ચર્ષણી માદયેથાં સુતસ્ય ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હું **વસુન:-**ધનનું **વિભાગે-સેવન** વ્યવહારમાં **વૃત્રહત્યે-વા** જેમાં શત્રુઓ અને મેઘોનુ હનન થાય, તે સંગ્રામમાં **યુવામ્-તે** બન્ને **ઇન્દ્રાગ્ની-વિદ્યુત્** અને સાધારણ અગ્નિ **ત્વસ્તમા-અત્યંત** બળવાન અને બળના આપનારા એ **સુશ્રવ-શ્રવણ** કરું છું, એથી **તૌ-તે** બન્ને **પ્રચર્ષણી-સમ્યક્** સુખને પ્રાપ્ત કરનારા **અસ્મિન્-એ** **બર્હિષિ-સમીપ** વર્ધમાન **યજ્ઞે-શિલ્પવ્યવહારના** નિમિત્ત **સુતસ્ય-ઉત્પન્ન** કરેલ વિમાન આદિ રથને **આસદ્ય-પ્રાપ્ત** થઈને **માદયેથામ્-આનંદ** પ્રદાન કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જેના દ્વારા ધનનું વિતરણ કરે છે અથવા શત્રુઓને જીતીને સાર્વભૌમ રાજ્ય કરી શકે છે, તે (વિદ્યુત્ અને અગ્નિ)નો તેઓ કાર્ય સિદ્ધિને માટે શા માટે સમ્યક્ પ્રયોગ

સૂક્ત-૧૧૦

કરે નહિ ? (૫)

પ્ર ચર્ષણિભ્યઃ પૃતનાહવૈષુ પ્ર પૃથિવ્યા રિરિચાથે દિવશ્ચ ।

પ્ર સિન્ધુભ્યઃ પ્ર ગિરિભ્યો મહિત્વા પ્રેન્દ્રાગ્ની વિશ્વા ભુવનાત્યન્યા ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : ઇન્દ્રાગ્ની-વાયુ અને વિદ્યુત્ અન્યા-વિશ્વા-ભુવના-અને સમસ્ત લોકોને મહિત્વા-પ્રશંસિત કરાવીને પૃતનાહવૈષુ-સેનાઓથી પ્રવૃત્ત થઈને યુદ્ધોમાં ચર્ષણિભ્યઃ-મનુષ્યોથી પ્ર, પૃથિવ્યાઃ-સારી રીતે પૃથિવી વા પ્ર, સિન્ધુભ્યઃ-સારી રીતે સમુદ્રો વા પ્ર, ગિરિભ્યઃ-સારી રીતે પર્વતો વા પ્ર, દિવશ્ચ-અને સારી રીતે સૂર્યથી પ્ર, અતિ-રિરિચાથે-અત્યંત ઉન્નતિ પામીને પ્રતીત થાય છે. અર્થાત્ કલાયંત્રોની સહાયથી ઉન્નતિ કે વૃદ્ધિ પામીને કામ આપે છે. (૬)

ભાવાર્થ : વાયુ અને વિદ્યુત્ની સમાન મહાન (અન્ય) કોઈ લોક થઈ શકતા નથી, કારણ કે એ બન્ને સર્વ લોકોને વ્યાપ્ત કરીને સ્થિત છે. (૬)

આ ભરતં શિક્ષતં વજ્રબાહુ અસ્માં ઇન્દ્રાગ્ની અવતં શચીભિઃ ।

ઙ્ગમે નુ તે ર્શમયઃ સૂર્યસ્ય ચેભિઃ સપિત્વં પિતરો ન આસન્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : વજ્રબાહુ-જેના વજ્રની સમાન બળ અને વીર્ય છે, તેઓ ઇન્દ્રાગ્ની-વિદ્યાર્થી અને અધ્યાપકો ! તમે બન્ને જેમ ઙ્ગમે-એ સૂર્યસ્ય-સૂર્યના ર્શમયઃ-કિરણો છે અને તે-રક્ષા આદિ કરે છે; અને જેમ પિતરઃ-પિતૃજન ચેભિઃ-જે કામોથી નઃ-અમારે માટે સપિત્વમ્-સમાન વ્યવહારોની પ્રાપ્તિ કરનારા વા વિજ્ઞાનને આપીને ઉપકાર કરનારા આસન્-થાય છે, તેમ શચીભિઃ-સમ્યક્ કાર્ય વા ઉત્તમ બુદ્ધિઓથી અસ્માન્-અમારો આ, ભરતમ્-સ્વીકાર કરો, શિક્ષતમ્-શિક્ષા આપો અને નુ-શીઘ્ર અવતમ્-પાળો. (અર્થાત્ રક્ષણ આદિ કરો.)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સુશિક્ષાથી મનુષ્યોમાં સૂર્ય સમાન વિદ્યાના પ્રકાશક અને માતા-પિતા સમાન કૃપાપૂર્વક રક્ષા કરનાર અધ્યાપક છે તથા સૂર્ય સમાન પ્રકાશિત બુદ્ધિમાન વિદ્યાર્થી છે, તે બન્નેનો નિત્ય સત્કાર કરો. આ કર્મ વિના વિદ્યાની ઉન્નતિ કદી સંભવ નથી. (૭)

પુરંદરા શિક્ષતં વજ્રહસ્તાસ્માં ઇન્દ્રાગ્ની અવતં ભરૈષુ ।

તન્નો મિત્રો વરુણો મામહન્તામદિતિઃ સિન્ધુઃ પૃથિવી ઉત દ્યૌઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : જે પુરંદરા-શત્રુઓના નગરોનો વિધ્વંસ કરનારા વા વજ્રહસ્તા-જેના વિદ્યારૂપી વજ્ર હાથની સમાન છે, તેઓ ઇન્દ્રાગ્ની-ઉપદેશ શ્રવણ અથવા ઉપદ્રષ્ટા - કરનારી તું જેમ મિત્રઃ-મિત્ર, વસ્મઃ-ઉત્તમ ગુણયુક્ત, અદિતિઃ-અન્તરિક્ષ, સિન્ધુઃ-સમુદ્ર, પૃથિવી-ઉત-અને દ્યૌઃ-સૂર્યનો પ્રકાશ નઃ-અમારી

मामहन्ताम्-उन्नति करावे છે, તેમ અस्मान्-અમને તત્-તે ઉક્ત પદાર્થોના વિશેષ જ્ઞાનની શિક્ષતમ્-શિક્ષા આપો અને ભરેષુ-સંગ્રામ આદિ વ્યવહારોમાં અવતમ્-રક્ષા આદિ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ મિત્ર આદિ મિત્રની રક્ષા કરીને તેની ઉન્નતિ કરે છે. અને તેને અનુકૂળ વ્યવહાર કરે છે, તેમ ઉપદેશ લેનાર અને ઉપદેશક પરસ્પર વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરીને પ્રેમથી મિત્રતામાં પ્રવૃત્ત રહે. (૮)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઈન્દ્ર અને અગ્નિ શબ્દના અર્થનું વર્ણન છે, તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૦૯)

સૂક્ત-૧૧૦

તત્ મે અપસ્તદુ તાયતે પુનઃ સ્વાદિષ્ટા ધીતિરુચથાય શસ્યતે ।

અયં સમુદ્ર ઙ્હ વિશ્વદેવ્યઃ સ્વાહાકૃતસ્ય સમુ તૃષ્ણુત ઋભવઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઋભવઃ-બુદ્ધિમાન વિદ્વાનો ! તમે જેમ ઙ્હ-આ લોકમાં અયમ્-એ વિશ્વદેવ્યઃ-સમસ્ત પ્રશસ્ત ગુણોને યોગ્ય સમુદ્રઃ-સમુદ્ર છે અને જેમ તમારામાં સ્વાહાકૃતસ્ય-સત્યવાણીથી ઉત્પન્ન થયેલ ધર્મની ઉચ્ચથાય-કહેવા યોગ્ય સ્વાદિષ્ટા-અતિ મધુરગુણવાળી ધીતિઃ-બુદ્ધિ શસ્યતે-પ્રશંસનીય થાય છે ઙ્હ-વા જેમ મે-મારા તતમ્-ફેલાયેલા અર્થાત્ સર્વને વિદિત અપઃ-કામ તાયતે-પાલન કરે છે, તત્-ઙ્હ, પુનઃ-તેમ ફરી તો અમને સમ્ તૃષ્ણુત-સમ્યક્ તૃપ્ત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ સમસ્ત રત્નોથી યુક્ત સમુદ્ર દિવ્યગુણયુક્ત છે, તેમ જ ધાર્મિક અધ્યાપકોએ મનુષ્યોમાં સત્યકર્મો અને સત્ય બુદ્ધિનો પ્રચાર કરીને દિવ્યગુણોને પ્રસિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૧)

આભોગયં પ્ર યદિચ્છન્ત એતનાપાકાઃ પ્રાજ્ઞો મમ કે ચિદાપયઃ ।

સૌધન્વનાસશ્ચરિતસ્ય ભૂમનાગ્ચ્છત સવિતુર્દાશુષો ગૃહમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે પ્રાજ્ઞઃ-પ્રાચીન અપાકાઃ-રોટલી આદિનો સ્વયં પાક તથા યજ્ઞાદિ કર્મ ન કરનાર સંન્યાસીઓ ! આપ જે કે, ચિત્-કોઈ જન મમ-મારી આપયઃ-વિદ્યામાં સમ્યક્ વ્યાપ્ત થવાની કામના કરી યત્-જે આ ભોગયમ્-સમ્યક્ ભોગવવાના પદાર્થોમાં પ્રશંસિત ભોગની ઙ્હચ્છન્તઃ-ઈચ્છા કરે છે તેને તે ભોગને પ્ર એતન-પ્રાપ્ત કરો.

હે સૌધન્વનાસઃ-ધનુષ્ય બાણને બાંધનારાઓમાં અત્યંત નિપુણો ! જ્યારે તમે ભૂમના-બહુ જ ચરિતસ્ય-કરેલ કામના સવિતુઃ-ઐશ્વર્યથી યુક્ત દાશુષઃ-દાતાના ગૃહમ્-ઘર અગચ્છત-આવો, ત્યારે જિજ્ઞાસુઓ અર્થાત્ ઉપદેશ શ્રવણ કરનારના પ્રત્યે સત્યધર્મ ગ્રહણ કરવાનો આદેશ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : હે ગૃહસ્થ આદિ મનુષ્યો ! તમે સંન્યાસીઓથી સત્ય વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરીને, કોઈ દાનશીલ મનુષ્યની સભામાં જઈને ત્યાં યુક્તિથી બેસીને તથા વિનમ્રતાથી વર્તાવ કરીને વિદ્યા અને વિનયનો પ્રચાર કરો. (૨)

તત્સવિતા વોઽમૃતત્વમાસુવદગૌહ્યં ચચ્ચૃવયન્ત્ એતન ।

ત્યં ચિચ્ચમ્સમસુરસ્ય ભક્ષણમેકં સન્તમકૃણુતા ચતુર્વયમ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે બુદ્ધિમાનો ! તમે જે સવિતા-ઐશ્વર્ય પ્રદાતા વિદ્વાન વ:-તમારે માટે યત્-જે અમૃતત્વમ્-મોક્ષભાવને આ, અસુવત્-સારી રીતે ઐશ્વર્યનો યોગ કરે, તત્-તેને અગોહ્યમ્-પ્રકટ શ્રવયન્ત:-સંભળાવતા સર્વ ક્રિયાઓને એતન-સમજાવો, અસુરસ્ય-જે પ્રાણોમાં રમી રહ્યો છે, તે મેઘનું ચમસમ્-જેમાં સર્વ ભોજન કરે છે અર્થાત્ જેનાથી ઉત્પન્ન થયેલ અન્નને સર્વ આરોગે છે. ત્યમ્-તે ભક્ષણમ્-સૂર્યના પ્રકાશને ગળી જવા ચિત્-સમાન, ચતુર્વયમ્-જેમાં ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષ છે એવા એકમ્-એક સન્તમ્-પોતાના વર્તાવને અકૃણુત-કરો. (૩)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ વાદળાંઓ પ્રાણ પોષક અન્ન અને જળ આદિ પદાર્થોનો દાતા બનીને સુખ પહોંચાડે છે, તેમ જ તમે પણ વિદ્યાના દાતા બનીને, વિદ્યાર્થીઓને વિદ્યાન બનાવીને શ્રેષ્ઠ ઉપકાર કરો. (૩)

વિષ્ટ્વી શમીં તરણિત્વેન વાઘતો મર્ત્તીસઃ સન્તો અમૃતત્વમાનશુઃ ।

સૌધન્વના ઋભવઃ સૂરચક્ષસઃ સંવત્સરે સમપૃચ્ચન્ત ધીતિભિઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે સૌધન્વના:-શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનવાન સૂરચક્ષસઃ-અર્થાત્ જેનું જ્ઞાન પ્રબળ છે વાઘત:-વા વાણીને સારી રીતે કહેનાર, સાંભળનાર મર્ત્તીસઃ-મરવા અને જીવવાવાળા ઋભવઃ-બુદ્ધિમાન જન સંવત્સરે-વર્ષમાં ધીતિભિઃ-નિરંતર પુરુષાર્થયુક્ત કામોથી કાર્ય સિદ્ધિનો સમપૃચ્ચન્ત-સંબંધ રાખે છે અર્થાત્ કામની રીત રાખે છે, તેઓ તરણિત્વેન-શીઘ્રતાથી વિષ્ટ્વી-વ્યાપ્ત થનાર શમી-કામોને સન્ત:-કરતા અમૃતત્વમ્-મોક્ષભાવને આનશુઃ-પ્રાપ્ત થાય છે - કરે છે. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પ્રતિ ક્ષણ ઉત્તમ પુરુષાર્થ કરે છે, તેઓ મોક્ષ સુધીના પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરીને સુખી થાય છે. આળસુ મનુષ્યો કદાપિ સુખ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૪)

ક્ષેત્રમિવ વિ મમુસ્તેજનેનું એકં પાત્રમૃભવો જેહમાનમ્ ।

ઉપસ્તુતા ઉપમં નાધમાના અમર્ત્યેષુ શ્રવ ઇચ્છમાનાઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : જે ઉપસ્તુતા:-કિનારે આવનારાથી પ્રશંસાને પ્રાપ્ત થયેલ નાધમાના:-અન્યોથી પોતાના પ્રિયજનથી યાચના કરેલ અમર્ત્યેષુ-અવિનાશી પદાર્થોમાં શ્રવઃ-અન્નને ઇચ્છમાના:-ઈચ્છીને ઋભવઃ-બુદ્ધિમાનો તેજનેન-પોતાની ઉત્તેજનાથી ક્ષેત્રમિવ-ખેતરની સમાન જેહમાનમ્-પ્રયત્નોથી સિદ્ધ કરાવનારા એકમ્-એક ઉપમમ્-ઉપમારૂપ અર્થાત્ અતિ શ્રેષ્ઠ પાત્રમ્-જ્ઞાનોના સમૂહનું વિ, મમુઃ-વિશેષ માન કરે છે, તેઓ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ લોકો ખેતરને ખેડીને, (તેમાં) બીજ વાવીને, તેની રક્ષા કરીને, તેથી અન્ન આદિ પ્રાપ્ત કરીને તથા તેનું ભોજન કરીને આનંદિત થાય છે, તેમ વેદોક્ત કલા-કૌશલથી પ્રશંસનીય યાનોને

રચીને, તેમાં બેસીને, તેને ચલાવીને, અન્ય દેશમાં જઈને તથા વ્યવહાર દ્વારા અથવા રાજ્ય શાસન દ્વારા ધન પ્રાપ્ત કરીને લોકો સુખી થાય છે. (૫)

આ મનીષામન્તરિક્ષસ્ય નૃભ્યઃ સ્તુચેવ ઘૃતં જુહવામ વિદ્વાનાં ।

તરણિત્વા યે પિતુરસ્ય સશ્ચિર ઋભવો વાજમરુહન્દિવો રજઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : યે-જે ઋભવઃ-સૂર્યના કિરણો તરણિત્વા-શીઘ્રતાથી વાજમ્-પૃથિવી આદિ અન્ન પર અસ્તુ-આરોહણ કરીને = ચડીને અને દિવઃ-પ્રકાશયુક્ત આકાશની મધ્યમાં રજઃ-લોકસમૂહને સશ્ચિરે-પ્રાપ્ત થાય છે, અને અસ્ય-એ અન્તરિક્ષસ્ય-આકાશની મધ્યમાં વિદ્યમાન થઈ નૃભ્યઃ-મનુષ્યોને માટે સ્તુચેવ-જેમ હવન કરવાના પાત્રથી ઘૃતને હોમે, તેમ ઘૃતમ્-જળ તથા પિતુઃ-અન્નને પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેના સાનિધ્યથી અમે વિદ્મના-જેથી વિદ્વાન સત્-અસત્ નો વિચાર કરે છે, તે જ્ઞાનથી મનીષામ્-વિચારવાળી બુદ્ધિને આ, જુહવામ્-ગ્રહણ કરીએ. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ એ સૂર્યનાં કિરણો લોક-લોકાન્તર પર આરોહણ કરીને શીઘ્ર જળ વરસાવીને તથા ઔષધિઓને ઉત્પન્ન સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, તેમ રાજા આદિ જન પ્રજાઓને સુખી કરે. (૬)

ઋભુર્ન ઇન્દ્રઃ શવસા નવીયાનૃભુર્વાજૈભિર્વસુભિર્વસુર્દદિઃ ।

યુષ્માકં દેવા અવસાહનિ પ્રિયેઙ્ઙિભિ તિષ્ઠેમ પૃત્સુતીરસુન્વતામ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : જે નવીયાન-અત્યંત નવીન ઋભુઃ-બહુ જ વિદ્યાઓનો પ્રકાશ કરનાર વિદ્વાન જેમ ઇન્દ્રઃ-સૂર્ય પોતાના પ્રકાશ અને આકર્ષણથી સર્વને આનંદ આપે છે, તેમ શવસા-વિદ્યા અને સુશિક્ષાના બલથી નઃ-અમને સુખ આપે વા જે ઋભુઃ-ધીર બુદ્ધિ આપુ અને સભ્યતાનો પ્રકાશ કરનાર વાજૈભિઃ-વિજ્ઞાન, અન્ન અને સંગ્રામોથી વા વસુભિઃ-ચક્રવર્તી રાજ્ય આદિ ધનથી વસુઃ-આપ સુખમાં વાસ કરવા અને દદિઃ-અન્યોના સુખોના દાતા છો, તેનાથી પોતાના રાજ્યના અને સેનાજનોના અવસા-રક્ષા આદિ વ્યવહારની સાથે વર્તમાન દેવાઃ-વિદ્યા અને સુશિક્ષાને ચાહતા અમે વિદ્વાનો પ્રિયે-પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરનારા અહનિ-દિવસમાં અસુન્વતામ્-શ્રેષ્ઠ ઐશ્વર્યના વિરોધી યુષ્માકમ્-તમે શત્રુજનોની પૃત્સુતીઃ-તે સેનાઓને જે સંબંધ કરાવનારાઓને ઐશ્વર્ય પહોંચાડનારી છે અભિ-સન્મુખ તિષ્ઠેમ-સ્થિત થાય અર્થાત્ તિરસ્કાર કરે. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય પોતાના પ્રકાશથી તેજસ્વી બની સર્વ ચેતન-અચેતન પદાર્થોનાં જીવનના નિમિત્તથી આહ્વાદિત કરે છે, તેમ વિદ્વાન શૂરવીરો અને વિદ્વાન નિપુણ સહાયકોથી યુક્ત અમે લોકો સુશિક્ષિત અને હૃષ્ટ-પુષ્ટ પોતાની સેનાઓથી, સેનાઓ સહિત, શત્રુઓને હરાવીને તથા ધાર્મિક પ્રજાઓનું સમ્યક્ પાલન કરીને ચક્રવર્તી રાજ્યનું નિરંતર સેવન કરીએ. (૭)

નિશ્ચર્મણ ઋભવો ગાર્મપિંશત સ વત્સેનાસૃજતા માતરં પુનઃ ।

અગ્નિવેદભાષ્ય

૪૬૫

સૂક્ત-૧૧૧

સૌધન્વનાસઃ સ્વપ્સ્યયા નરો જિવ્રી યુવાના પિતરાકૃણોતન ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે ઋગ્નવઃ-બુદ્ધિમાન મનુષ્યો ! તમે ચર્મણઃ-ચારાથી ગામ્-ગાયને નિરર્પિણત-નિરંતર અવયવી કરો અર્થાત્ ચારો વગેરેના ખાન-પાનથી પુષ્ટ કરો પુનઃ-પશ્ચાત્ વત્સેન-તેના વાછરડાની સાથે માતરમ્-માતા ગાયને સમસૃજત-યુક્ત કરો.

હે સૌધન્વનાસઃ-ધનુર્વિદ્યાકુશળ નરઃ-અને વ્યવહારોને યથાયોગ્ય વર્તનારા વિદ્વાનો ! તમે સ્વપ્સ્યયા-જેમાં સુંદર કામ બને તે નિપુણતાથી જિવ્રી-શ્રેષ્ઠ જીવનયુક્ત વૃદ્ધ પિતરા-પોતાના માતા-પિતાને યુવાના-યુવાવસ્થાવાળા સમાન અકૃણોતન-નિરંતર કરો. (૮)

ભાવાર્થ : પૂર્વોક્ત કર્મ વિના કોઈપણ રાજ્ય કરી શકતા નથી, તેથી એને મનુષ્યોએ સદા કરવા જોઈએ. (૮)

વાજેભિર્નો વાજસાતાવવિહ્વૃભુમાં ઇન્દ્ર ચિત્રમા દર્ષિ રાધઃ ।

તન્નો મિત્રો વરુણો મામહન્તામદિતિઃ સિન્ધુઃ પૃથિવી ઉત દ્યૌઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર્યયુક્ત સેનાધ્યક્ષ ! ઋગ્નમાન્-જેના પ્રશંસિત બુદ્ધિમાન જન વિદ્યમાન છે, તે આપ નઃ-અમારે માટે જે રાધઃ-ધનને મિત્રઃ-મિત્ર, વરુણઃ-શ્રેષ્ઠગુણયુક્ત, અદિતિઃ-અન્તરિક્ષ, સિન્ધુઃ-સમુદ્ર, પૃથિવી-પૃથિવી ઉત-અને દ્યૌઃ-સૂર્યનો પ્રકાશ મામહન્તામ્-ઉન્નત બનાવે તત્-તે ચિત્રમ્-અદ્ભુત ધનને અવિદ્ ઢિ-વ્યાપ્ત થાઓ અર્થાત્ સર્વ રીતે સમજો અને નઃ-અમને વાજેભિઃ-અન્નાદિ સામગ્રીઓથી વાજસાતૌ-સંગ્રામમાં આદર્ષિ-આદરયુક્ત કરો. (૯)

ભાવાર્થ : કોઈપણ સેનાપતિ બુદ્ધિમાનોના સહયોગ વિના શત્રુઓને જીતી શકતા નથી. (૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં બુદ્ધિમાનોનાં કાર્યો અને ગુણોનું વર્ણન છે, એથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૧૦)

સૂક્ત-૧૧૧

તક્ષત્રથં સુવૃતં વિદ્વનાર્પસસ્તક્ષન્હરીં ઇન્દ્રવાહા વૃષણ્વસૂ ।

તક્ષન્પિતૃભ્યામૃભવો યુવદ્વયસ્તક્ષન્વત્સાય માતરં સચાભુવમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે પિતૃભ્યામ્-સ્વામી અને શિક્ષા આપનારની યુક્ત વિદ્ મનાપસઃ-જેના અતિ વિચારયુક્ત કર્મ છે, તેઓ ઋગ્નવઃ-ક્રિયામાં ચતુર મેઘાવીજન વૃષણ્વસૂ-જેનામાં વિદ્યા અને શિલ્પક્રિયાના બળથી યુક્ત મનુષ્ય નિવાસ કરે છે - કરાવે છે, હરી-તે એક સ્થાનથી બીજા સ્થાને શીઘ્ર પહોંચાડે તથા ઇન્દ્રવાહા-પરમૈશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવનારા જળ અને અગ્નિને તક્ષન્-અતિ સૂક્ષ્મતાની સાથે સિદ્ધ કરે વા સુવૃતમ્-શ્રેષ્ઠ કોષ્ટ પર કોષ્ટયુક્ત રથમ્-વિમાન આદિ રથને તક્ષન્-વિસ્તૃત કરે તથા વત્સાય-સંતાનને માટે સચાભુવમ્-વિશેષ જ્ઞાનની ભાવના કરાવતી માતરમ્-માતાનું યુવત્-મિલન જેમ થાય, તેમ તક્ષન્-તેને ઉન્નત કરીવે તે અધિક ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત થાય. (૧)

અગ્નિવેદમાપ્ય

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો જ્યાં સુધી આ સંસારમાં કાર્ય-ગુણોનાં દર્શન તથા પરીક્ષા દ્વારા કારણના પ્રત્યે પ્રવૃત્ત થતા નથી, ત્યાં સુધી તેઓ શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ કરી શકતા નથી. (૧)

આ નૌ યજ્ઞાય તક્ષત ઋભુમદ્વયઃ ક્રત્વે દક્ષાય સુપ્રજાવતીમિષમ્ ।

યથા ક્ષયામ્ સર્વવીરયા વિશા તન્નઃ શર્દ્ધાય ધાસથા સ્વિન્દ્રિયમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે બુદ્ધિમાનો ! તમે નઃ-અમારી યજ્ઞાય-જેથી પરસ્પર પદાર્થ મિશ્ર કરવામાં આવે છે તે શિલ્પક્રિયાની સિદ્ધિ માટે વા ક્રત્વે-ઉત્તમ જ્ઞાન અને ન્યાયનું કામ અને દક્ષાય-બળને માટે ઋભુમત્-જેમાં પ્રશંસિત મેધાવી અર્થાત્ બુદ્ધિમાન જન વિદ્યમાન છે, તે વયઃ-જીવનને તથા સુપ્રજાવતીમ્-જેમાં સારી પ્રજા વિદ્યમાન હોય અર્થાત્ પ્રજાજન પ્રસન્ન હોય ઇષમ્-તે ઈચ્છેલા અન્નને આતક્ષત-સમ્યક્ ઉત્પન્ન કરો, યથા-જેમ અમે સર્વવીરયા-સમસ્ત વીરોથી યુક્ત વિશા-પ્રજાની સાથે ક્ષયામ-નિવાસ કરીએ, તમે પણ પ્રજાની સાથે નિવાસ કરો વા જેમ અમે શર્દ્ધાય-બળને માટે તત્-તે સુ, ઇન્દ્રિયમ્-ઉત્તમ વિજ્ઞાન અને ધનને ધારણ કરીએ, તેમ તમે પણ નઃ-અમારી બળ પ્રાપ્તિ માટે ઉત્તમ જ્ઞાન અને ધનને ધાસથ-ધારણ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં વિદ્વાનોની સાથે અવિદ્વાન અને અવિદ્વાનોની સાથે વિદ્વાન નિત્ય પ્રેમપૂર્વક વ્યવહાર કરે. એ કર્મ વિના શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ, પ્રજામાં બળ અને ઉત્તમ પ્રજાઓ થતી નથી. (૨)

આ તક્ષત સાતિમ્સ્મભ્યમ્ભવઃ સાતિં રથાય સાતિમર્વૈતે નરઃ ।

સાતિં નો જૈત્રીં સં મહેત વિશ્વહા જામિમર્જામિં પૃતનાસુ સક્ષણિમ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે ઋભવઃ-શિલ્પવિદ્યામાં અતિ નિપુણ નરઃ-મનુષ્યો ! તમે અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે વિશ્વહા-પ્રતિદિન રથાય-વિમાન આદિ યાન સમૂહની સિદ્ધિ માટે સાતિમ્-અલગ વિભાગ કરવા તથા અર્વૈતે-ઉત્તમ ઘોડાને માટે સાતિમ્-જુદા-જુદા ઘોડાઓની શિક્ષાને આ, તક્ષત-સર્વ રીતે સિદ્ધ કરો અને પૃતનાસુ-સેનાઓમાં સાતિમ્-વિદ્યાદિ સર્વોત્તમ પદાર્થ વા જામિમ્-પ્રસિદ્ધ અને અજામિમ્-અપ્રસિદ્ધ સક્ષણિમ્-સહનશીલ શત્રુઓને જીતીને નઃ-અમારા માટે જૈત્રીમ્-જીત આપનારી સાતિમ્-ઉત્તમ ભક્તિને સમ્, મહેત-સમ્યક્ પ્રશંસિત કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો અમારા રક્ષક અને શત્રુના વિજયકર્તા છે, તેઓનો સત્કાર અમે નિરંતર કરીએ. (૩)

ઋભુક્ષણમિન્દ્રમા હુવ ઋતય ઋભૂન્વાજાન્મરુતઃ સોમપીતયે ।

ઉભા મિત્રાવરુણા નૂનમ્શ્વિના તે નૌ હિન્વન્તુ સાતયે ધિયે જિષે ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હું ઋતયે-રક્ષા આદિ વ્યવહારને માટે ઋભુક્ષણમ્-જે બુદ્ધિમાનોને વસાવે વા સમજાવે છે તે ઇન્દ્રમ્-પરમૈશ્વર્યયુક્ત ઉત્તમ બુદ્ધિમાનનો આહુવે-સમ્યક્ સ્વીકાર કરું છું.

હું સોમપીતયે-પદાર્થોથી કાઢેલા રસને પાનાર યજ્ઞને માટે વાજાન્-જે અત્યંત જ્ઞાનવાન મસ્તઃ-

સૂક્ત-૧૧૨

અને પ્રત્યેક ઋતુમાં અર્થાત્ સમય સમય પર યજ્ઞ કરનાર વા કરાવનાર ઋષ્મૂન્-ઋત્વિજ છે, તે બુદ્ધિમાનોનો સ્વીકાર કરું છું.

હું ઉમા-બન્ને મિત્રાવસ્થા-સર્વના મિત્ર, સર્વથી શ્રેષ્ઠ, અશ્વિના-સમસ્ત સર્વોત્તમ ગુણોમાં રહેનારા, અધ્યાપક અને વિદ્યાર્થીઓનો સ્વીકાર કરું છું, જે ધિયે-ઉત્તમ બુદ્ધિની પ્રાપ્તિ માટે સાતયે-વા સંવિભાગને માટે વા જિષે-શત્રુઓને જીતવાને ન:-અમને સમજાવવા અને વૃદ્ધિ કરવાને સમર્થ છે, તે-વિદ્વાનજન અમને નૂનમ્-નિશ્ચયથી હિન્વન્તુ-વૃદ્ધિ કરે અને સમજાવે. (૪)

ભાવાર્થ : જે લોકો, ક્રિયામાં નિપુણ આપ્તજનોની સેવા કરે છે, તેઓ સુશિક્ષા અને વિદ્યાયુક્ત બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને તથા શત્રુઓને જીતીને શા માટે ન વૃદ્ધિ કરે-ઉન્નત બને ? (૪)

ઋભુર્ભરાય સં શિશાતુ સાતિં સમર્યજિદ્વાજો અસ્માં અવિષ્ટુ।

તન્નો મિત્રો વરુણો મામહન્તામદિતિઃ સિન્ધુઃ પૃથિવી ઉત દ્યૌઃ ॥૫ ॥

પદાર્થ : હે મેધાવી સમર્યજિત્-સંગ્રામોમાં જીતનારા ઋષ્મુઃ-પ્રશંસિત વિદ્વાન ! વાજઃ-વેગાદિગુણ યુક્ત આપ ભરાય-સંગ્રામ માટે આવેલ શત્રુઓનો સંશિશાતુ-સારી રીતે નાશ કરો, અસ્માન્-અમારી અવિષ્ટુ-રક્ષા આદિ કરો, જેમ નઃ-અમારા માટે જે મિત્રઃ-મિત્ર, વસ્થાઃ-શ્રેષ્ઠ ગુણયુક્ત અદિતિઃ-વિદ્વાન સિન્ધુઃ-સમુદ્ર પૃથિવી-પૃથિવી ઉત-અને દ્યૌઃ-સૂર્યનો પ્રકાશ મામહન્તામ્-સિદ્ધ કરે, ઉન્નતિ કરાવે, તેમ જ આપ તત્-તે સાતિમ્-પદાર્થોને પૃથક્-પૃથક્ કરવા અમારા માટે સિદ્ધ કરો. (૫)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોનું એ પણ મુખ્ય કામ છે કે તેઓ જિજ્ઞાસુ અજ્ઞાની વિદ્યાર્થીને સુશિક્ષા અને વિદ્યાનાં દાનથી ઉન્નતિ કરાવે. જેમ મિત્ર આદિ અથવા પ્રાણ આદિ સર્વની વૃદ્ધિ કરી - ઉન્નતિ કરી સુખી કરે છે, તેમ જ વિદ્વાનો પણ વર્તાવ કરે. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં બુદ્ધિમાનોમાં ગુણોના વર્ણનથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૧૧)

સૂક્ત-૧૧૨

ઈલે દ્યાવાપૃથિવી પૂર્વચિત્તયેઽગ્નિં ઘર્મ સુરુચં ચામન્નિષ્ટયે।

યાભિર્ભરે કારમંશાય જિન્વથસ્તાભિરૂ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગતમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત થનાર અધ્યાપક અને ઉપદેશક ! આપ જેમ ચામન્-માર્ગમાં પૂર્વચિત્તયે-પૂર્વ વિદ્વાનોથી સંચિત કરેલ ઇષ્ટયે-ઈચ્છિત સુખને માટે દ્યાવાપૃથિવી-સૂર્યનો પ્રકાશ અને ભૂમિ યાભિઃ-જેની ઋતિભિઃ-રક્ષાઓથી યુક્ત ભરે-સંગ્રામમાં ઘર્મમ્-પ્રતાપયુક્ત સુસ્ત્વમ્-સમ્યક્ પ્રદીપ્ત અને રુચિકારક અગ્નિમ્-વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તાભિઃ-તે રક્ષાઓથી અંશાય-ભાગને માટે કારમ્-જેમાં ક્રિયા કરે છે તે વિષયને સુ, જિત્વયઃ-ઉત્તમતાથી પ્રાપ્ત થાય છે ઉ-તો કાર્ય સિદ્ધિ કરવા માટે આગતમ્-સદા આવે એ હેતુથી હું ઇલે-આપની સ્તુતિ કરું છું. (૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પ્રકાશયુક્ત સૂર્યાદિ અને પ્રકાશરહિત ભૂમિ આદિ લોક સર્વના ઘર આદિના ચયન અને આધાર માટે હોય છે, તથા વિદ્યુત્ની સાથે એ બન્ને સંબંધ રાખીને સર્વના ધારણકર્તા છે, તેમ તમે પણ પ્રજાઓમાં વર્તાવ કરો. (૧)

યુવોર્દનાય સુભરાં અસશ્ચતો રથમા તસ્થુર્વચસં ન મન્તવે ।

યાભિર્ધિયોઽવથઃ કર્મન્નિષ્ટયે તાભિરૂ ષુ કૃતિભિરશ્વિના ગતમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્વાનો ! સુભરાઃ-જે સમ્યક્ ધારણ અને પોષણ કર્તા અને આનંદને સિદ્ધ કરનારા છે વા અસશ્ચતઃ-જે કોઈ નિંદિત કર્મ અને કુસંગમાં ન મળે તે સજ્જન મન્તવે-વિશેષ જાણવા માટે જેમ વચસં, ન-સર્વની પ્રશંસાની સાથે વિખ્યાત કરેલ અત્યંત બુદ્ધિમાન વિદ્વાનજનને પ્રાપ્ત થાય, તેમ યુવોઃ-આપના રથમ્-જે વિમાન આદિ યાનને આ, તસ્થુઃ-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થઈને સ્થિર થાય છે, તેની સાથે ડ-અને યાભિઃ-જેનાથી ધિયઃ-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિઓને કર્મન્-કામની વચ્ચે ઇષ્ટયે-ઈચ્છિત સુખને માટે અવથઃ-રાખે છે, તાભિઃ-તે કૃતિભિઃ-રક્ષાઓની સાથે તમે દાનાય-સુખ આપવા માટે અમારા પ્રત્યે સુ, આ, ગતમ્-સારી રીતે આવો. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે તમને બુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરાવે, તેઓની તમે સર્વથા સુરક્ષા કરો. જેમ આપ લોકો તેઓની સેવા કરે, તેમ તેઓ પણ તમને શુભ વિદ્યાનો બોધ કરાવે. (૨)

યુવં તાસાં દિવ્યસ્ય પ્રશાસને વિશાં ક્ષયથો અમૃતસ્ય મ્જ્મનાં ।

યાભિર્ધેનુમસ્વં પિન્વથો નરા તાભિરૂ ષુ કૃતિભિરશ્વિના ગતમ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે નરા-વિદ્યા, વ્યવહારમાં પ્રધાન અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશકજનો ? યુવમ્-તમે બન્ને દિવ્યસ્ય-અત્યંત શુદ્ધ અમૃતસ્ય-નાશરહિત પરમાત્માના મ્જ્મના-અનંત બળની સાથે જે પરમાત્માના સંબંધમાં પ્રજાજન છે તાસામ્-તેઓની વિશામ્-પ્રજાઓને પ્રશાસને-શિક્ષા કરવામાં ક્ષયથઃ-નિવાસ કરો છો; ડ-અને યાભિઃ-જેઓની કૃતિભિઃ-રક્ષાઓથી અસ્વમ્-જે દુષ્ટ કામને ઉત્પન્ન કરતી નથી તે ધેનુમ્-સર્વ સુખની વર્ષા કરનારી વાણીનું પિન્વથઃ-સેવન કરો છો, તાભિઃ-તે રક્ષાઓની સાથે સુ, આ, ગતમ્-અમને સારી રીતે પ્રાપ્ત થાઓ. (૩)

ભાવાર્થ : તે વિદ્વાનો જ ધન્ય છે, કે જે પ્રજાજનોને વિદ્યા, સુશિક્ષા અને સુખની વૃદ્ધિને માટે પ્રસન્ન કરે છે તથા તેઓના શરીર અને આત્માનાં બળની નિત્ય વૃદ્ધિ કરે છે. (૩)

યાભિઃ પરિજ્મા તનયસ્ય મ્જ્મનાં દ્વિમાતા તૂર્ષુ તરણિર્વિભૂષતિ ।

યાભિસ્ત્રિમન્તુરભવદ્વિચક્ષુણસ્તાભિરૂ ષુ કૃતિભિરશ્વિના ગતમ્ ॥ ૪ ॥

સૂક્ત-૧૧૨

પદાર્થ : હે અશ્વિના-વિદ્યા અને ઉપદેશની પ્રાપ્તિ કરાવનારા વિદ્વાનો ! યાભિઃ-જેનાથી દ્વિમાતા-બન્ને અગ્નિ અને જળનું પ્રમાણ કરનાર તૂર્ષુ-શીઘ્ર કરનારાઓમાં તરણિઃ-ઉછળવા સમાન વેગવાન પરિજ્મા-સર્વત્ર ગમન કરતો વાયુ તનયસ્ય-પોતાનાથી ઉત્પન્ન અગ્નિના મજ્મના-બળથી સુ, વિભૂષતિ-સમ્યક્ સુશોભિત થઈને ડ-તથા યાભિઃ-જેનાથી ત્રિમન્તુઃ-કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાન વિદ્યાને માનનાર વિચક્ષણઃ-વિવિધ રીતે સર્વ વિદ્યાઓને પ્રત્યક્ષ કરાવનાર અભવત્-થાય છે, તાભિઃ-તેની કૃતિભિઃ-રક્ષાઓની સાથે સર્વ અમને વિદ્યા આપવા માટે આ, ગતમ્-પ્રાપ્ત થાઓ. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રાણોની સમાન પ્રેમભાવથી અને સંન્યાસીની સમાન ઉપકાર ભાવથી સર્વની વિદ્યા સંબંધી ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૪)

યાભીં રેભં નિવૃતં સિતમદ્વ્ય ઉદ્વન્દનમૈરયતં સ્વર્દૃશે ।

યાભિઃ કણ્વં પ્ર સિષાસન્તમાવતં તાભિરૂ ષુ કૃતિભિરશ્વિના ગતમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! તમે યાભિઃ-જે કૃતિભિઃ-રક્ષાઓથી સિતમ્-શુદ્ધ ધર્મયુક્ત નિવૃત્તમ્-નિરંતર સ્વીકાર કરેલ શાસ્ત્ર બોધની રેભમ્-સ્તુતિ અને વન્દનમ્-ગુણ પ્રશંસકને સ્વઃ-સુખને દ્વશે-જોવાને માટે અદ્ બ્યઃ-જળથી ડત, ઈરયતમ્-પ્રેરણા કરો; અને યાભિઃ-જેથી સિષાસન્તમ્-વિભાગ કરવાની ઈચ્છા કરનાર કણ્વમ્-બુદ્ધિમાન વિદ્વાન પ્ર, આવતમ્-રક્ષા કરો, તાભિઃ; ડઃ-તેઓની રક્ષાઓની અમારા પ્રત્યે સુ, આ, ગતમ્-શ્રેષ્ઠતાથી આવો. (૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્વાનોની સુરક્ષા કરીને, તેઓથી વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને તથા જલ આદિ પદાર્થોથી શિલ્પવિદ્યાને સિદ્ધ કરીને વૃદ્ધિયુક્ત બને છે, તેઓ સમસ્ત સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫)

યાભિરન્તકં જસમાનમારણે ભુજ્યું યાભિરવ્યથિભિર્જિજિન્વથુઃ ।

યાભિઃ કર્કન્ધું વચ્યં ચ જિન્વથસ્તાભિરૂ ષુ કૃતિભિરશ્વિના ગતમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સભા અને સેનાના સ્વામી વિદ્વાનો ! આપ યાભિઃ-જેની કૃતિભિઃ-રક્ષાઓથી આરણે-સર્વત્રથી યુદ્ધ થવામાં અન્તકમ્-દુઃખોનો નાશક અને જસમાનમ્-શત્રુઓને મારીને પુરુષ અને તથા યાભિઃ-જેની અવ્યથિભિઃ-પીડારહિત આનંદકારક રક્ષાઓથી ભુજ્યુમ્-પાલન કરનાર પુરુષને જિજિન્વથુઃ-પ્રસન્ન કરે છે ચ-અને યાભિઃ-જેની રક્ષાઓથી કર્કન્ધુમ્-શિલ્પી-કારીગરી કરનારા વચ્યમ્-જ્ઞાતા પુરુષની જિન્વથઃ-પ્રસન્નતા કરો છો તાભિઃ ડ-તે રક્ષાઓની સાથે અમારા પ્રત્યે સુ, આ, ગતમ્-સારી રીતે આવો. (૬)

ભાવાર્થ : રક્ષકો અને અધિષ્ઠાતાઓ વિના નિશ્ચયથી યોદ્ધા લોકો યુદ્ધમાં શત્રુઓની સાથે લડવામાં અને પ્રજાઓના પાલનમાં સમર્થ બની શકતા નથી.

જે પુણ્યપૂર્વક વિદ્વાનોની રક્ષા કરતા નથી, તેઓ પરાજયને પ્રાપ્ત થઈને રાજ્ય કરવામાં સમર્થ

બની શકતા નથી. (૬)

યાભિઃ શુચન્તિં ધનસાં સુષંસદં તપ્તં ધર્મમોમ્યાવન્તમત્રયે ।

યાભિઃ પૃશ્નિંગું પુરુકુત્સમાવતં તાભિરૂ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગતમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-ઉપદેશક અને અધ્યાપકો ! તમે બન્ને યાભિઃ-જે ઋતિભિઃ-રક્ષાઓથી અત્રયે-જેમાં આધ્યાત્મિક, આધિભૌતિક અને આધિદૈવિક દુઃખ નથી તેવા વ્યવહારને માટે શુચન્તિમ્-પવિત્રકારક ધનસામ્-ધનના વિભાગકર્તા સુષંસદમ્-સારી સભાવાળા તપ્તમ્-ઐશ્વર્યયુક્ત ધર્મમ્-શ્રેષ્ઠ યજ્ઞવાન ઓમ્યાવન્તમ્-જેના રક્ષકોને પ્રાપ્ત કરનારા પુરુષ પ્રશંસિત છે, તેઓની અને યાભિઃ-જેની રક્ષાઓથી પૃશ્નિંગુમ્-વિમાનાદિથી અન્તરિક્ષમાં જવાવાળા પુરુકુત્સમ્-બહુ જ શસ્ત્રઅસ્ત્રયુક્ત પુરુષની આવતમ્-રક્ષા કરે તાભિઃ, ડ-તે રક્ષાઓથી અમને સુ, આ, ગતમ્-શ્રેષ્ઠતાથી પ્રાપ્ત થાઓ. (૭)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોમાં યોગ્ય છે, કે ધાર્મિકોની રક્ષા અને દુષ્ટોની તાડનાથી સત્ય વિદ્યાઓનો પ્રકાશ કરે. (૭)

યાભિઃ શર્ચીભિર્વૃષણા પરાવૃજં પ્રાન્ધં શ્રોણં ચક્ષસુ એતવે કૃથઃ ।

યાભિર્વર્ત્તિકાં ગ્રસિતામમુજ્વતં તાભિરૂ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગતમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણા-સુખવર્ષક અશ્વિના-સભાપતિ અને સેનાપતિ ! તમે યાભિઃ-જે શર્ચીભિઃ-રક્ષા સંબંધી કાર્યો અને પ્રજાઓથી પરાવૃજમ્-વિરોધ કરનારા અન્ધમ્-અવિદ્યાન્ધકારયુક્ત શ્રોણમ્-બહેરા સમાન વર્તમાન પુરુષને ચક્ષસે-વિદ્યાયુક્ત વાણીના પ્રકાશને માટે એતવે-શુભ વિદ્યા પ્રાપ્ત થવાને પ્ર, કૃથઃ-સમ્યક્ યોગ્ય કરો; અને યાભિઃ-જે રક્ષાઓથી ગ્રસિતામ્-ગળેલી વર્ત્તિકામ્-નાની ચકલીની સમાન પ્રજાને દુઃખોથી અમુચ્ચતમ્-છોડાવો, તામિરૂ-તેઓની ઋતિભિઃ-રક્ષાઓથી અમને સુ, આ, ગતમ્-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાઓ. (૮)

ભાવાર્થ : સભાપતિ અને સેનાપતિએ પોતાની વિદ્યા અને ધર્મના આશ્રયથી પ્રજાઓમાં વિદ્યા અને વિનયનો પ્રચાર કરીને અવિદ્યા અને અધર્મના નિવારણના દ્વારા સર્વને નિરંતર અભયદાન કરવા જોઈએ. (૮)

યાભિઃ સિન્ધું મધુમન્તમસશ્ચતં વસિષ્ઠં યાભિરજરાવર્જિન્વતમ્ ।

યાભિઃ કુત્સં શ્રુતર્યં નર્યમાવતં તાભિરૂ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગતમ્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો અજરૌ-વૃદ્ધાવસ્થારહિત વિદ્વાનો ! તમે યાભિઃ-જે ઋતિભિઃ-રક્ષાઓથી મધુમન્તમ્-મધુર ગુણયુક્ત સિન્ધુમ્-સમુદ્રને અસશ્ચતમ્-જાણો; વા યાભિઃ-જે રક્ષાઓથી વસિષ્ઠમ્-જે અત્યન્ત ધર્માદિ કર્મોમાં રહેનાર તેની અર્જિન્વતમ્-પ્રસન્નતા કરો વા યાભિઃ-જેથી કુત્સમ્-વજ્ર લઈને શ્રુતર્યમ્-શ્રવણથી અતિ શ્રેષ્ઠ નર્યમ્-મનુષ્યોમાં સર્વોત્તમ પુરુષની આવતમ્-

સૂક્ત-૧૧૨

રક્ષા કરો; તાભિર-તે રક્ષાઓની સાથે અમારી રક્ષાને માટે સ્વાગતમ્-સારી રીતે આવ્યા કરો. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ યજ્ઞવિધિ સર્વ પદાર્થોનું સમ્યક્ શોધન કરીને અને તે સર્વનું સેવન કરીને રોગોને દૂર કરીને સદા સુખી રહેવું જોઈએ. (૯)

યાભિર્વિશ્પલાં ધનસામથર્વ્યં સહસ્ત્રમીલ્હ આજાવજિન્વતમ્ ।

યાભિર્વશમશ્વ્યં પ્રેણિમાવતં તાભિરૂ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગંતમ્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સેના અને યુદ્ધના અધિકારી જનો ! યાભિ:-જે ઋતિભિ:-રક્ષાઓથી સહસ્ત્રમીલ્હે-અસંખ્ય પરાક્રમ આદિ ધન જેમાં છે તે આજૌ-સંગ્રામમાં વિશ્પલામ્-પ્રજાનું પાલન કરનારાઓને ગ્રહણ કરનારી ધનસામ્-અને પુષ્કળ ધન આપનારી અથર્વ્યમ્-નષ્ટ ન કરવા યોગ્ય પોતાની સેનાને અજિન્વતમ્-પ્રસન્ન કરો; વા યાભિ:-જે રક્ષાઓથી વશમ્-મનોહર પ્રેણિમ્-અને ડાકુઓના નાશને માટે પ્રેરણા કરવા યોગ્ય અશ્વ્યમ્-ઘોડાઓ વા અગ્ન્યાદિ પદાર્થોના વેગોમાં ઉત્તમની આવતમ્-રક્ષા કરો; તાભિરૂ-તે રક્ષાઓની સાથે પ્રજાપાલનને માટે સ્વાગતમ્-સારી રીતે આવ્યા કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એ અવશ્ય જાણવું જોઈએ, કે શરીર તથા આત્માની પુષ્ટિ અને સુશિક્ષિત સેના વિના યુદ્ધમાં (જીત થઈ શકતી નથી) અને તે (જીત) વિના પ્રજાનું પાલન, લક્ષ્મીનો સંચય અને રાજકીય વૃદ્ધિ થઈ શકતી નથી. (૧૦)

યાભિઃ સુદાનૂ ઔશિજાય વૃણિજે દીર્ઘશ્રવસે મધુ કોશો અક્ષરત્ ।

કક્ષીવન્તં સ્તોતારં યાભિરાવતં તાભિરૂ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગંતમ્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે સુદાનૂ-શ્રેષ્ઠ દાન પ્રદાતા અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્વાનો ! યાભિ:-જે ઋતિભિ:-રક્ષાઓથી દીર્ઘશ્રવસે-જેના મહાન વિદ્યાદિ પદાર્થ, અન્ન અને ધન વિદ્યમાન છે તે વૃણિજે-વ્યવહાર કરનારા ઔશિજાય-ઉત્તમ બુદ્ધિમાન પુત્રને માટે કોશ:-મેઘ મધુ-મધુર ગુણયુક્ત જળને અક્ષરત્-વર્ષાવે છે, વા તમે યાભિ:-જે રક્ષાઓથી કક્ષીવન્તમ્-ઉત્તમ સહાયથી યુક્ત સ્તોતારમ્-વિદ્યાના ગુણોના પ્રશંસક જનોની આવતમ્-રક્ષા કરો; તાભિરૂ-તે રક્ષાઓની સાથે અમારી રક્ષા કરવા માટે સ્વાગતમ્-સારી રીતે શીઘ્ર આવ્યા કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોને યોગ્ય છે, કે જે લોકો દ્વીપ-દ્વીપાન્તરમાં અથવા દેશ-દેશાન્તરમાં વેપાર કરવા માટે જાય અને આવે, તેઓની રક્ષા પ્રયત્નપૂર્વક કરવામાં આવે. (૧૧)

યાભીં ર્સાં ક્ષોદસોદ્નઃ પિપિન્વથુરનશ્વં યાભી રથમાવતં જિષે ।

યાભિસ્ત્રિશોકં ડસ્ત્રિયાં ડદાજત તાભિરૂ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગંતમ્ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! આપ બન્ને યાભિ:-જે શિલ્પ ક્રિયાઓથી ડદમઃ-

જળના ક્ષોદસા-પ્રવાહની સાથે રસામ્-જેમાં પ્રશંસિત જળ વિદ્યમાન હોય, તે નદીને પિપિન્વથુ:-પૂરી કરો અર્થાત્ નહેરો આદિ પ્રબંધથી તેમાં જળ પહોંચાડો; વા યાભિ:-જે આવવા-જવાની ગતિથી જિષ્ણ-શત્રુઓને જીતવા માટે અનશ્વમ્-ઘોડારહિત રથમ્-વિમાન આદિ રથસમૂહને આવતમ્-રાખો; વા યાભિ:- જે સેનાઓથી ત્રિશોક:-જે દુષ્ટ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવમાં શોક છે, તે વિદ્વાન ઝસ્ત્રિયા:-કિરણોમાં થયેલ વિદ્યુત્ અગ્નિની ચિનગારીને ઉદાજત-ઉપર પહોંચાડો, તાભિરુ-તે ઋતિભિ:-સર્વ રક્ષારૂપ ઉક્ત વસ્તુઓથી સ્વાગતમ્-અમારા પ્રત્યે સારી રીતે આવો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ સમસ્ત શિલ્પશાસ્ત્રથી નિપુણ વિદ્વાન વિમાન આદિ યાનોમાં કલાયંત્રોને રચીને, તેમાં જળ અને વિદ્યુત્ આદિને પ્રયુક્ત કરીને તથા યંત્રો દ્વારા કલાઓને સંચાલિત કરીને પોતાના ઈચ્છિત (દેશ)માં જવું-આવવું કરે છે, તેમ જ સભાપતિ અને સેનાપતિ કરે. (૧૨)

યાભિઃ સૂર્યં પરિયાથઃ પરાવતિ મન્ધાતારં ક્ષૈત્રપત્યેષ્વાવતમ્ ।

યાભિર્વિપ્રં પ્ર ભરદ્વાજમાવતં તાભિરુ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગતમ્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ - હે અશ્વિના-શિલ્પ વિદ્યાના સ્વામી અને સેવકો ! તમે બન્ને યાભિ:-જે ઋતિભિ:-રક્ષાદિથી પરાવતિ-દૂર દેશમાં સૂર્યમ્-પ્રકાશમાન સૂર્યની સમાન મન્ધાતારમ્-વિમાન આદિ યાનથી શીઘ્ર દૂર દેશમાં પહોંચાડનાર બુદ્ધિમાનને પર્યાથઃ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાઓ; યાભિ:-જે રક્ષાઓથી ક્ષૈત્રપત્યેષુ-માંડલિક રાજાઓના કામમાં તેઓની આવતમ્-રક્ષા કરો; અને ભરદ્વાજમ્-વિદ્યા અને સદ્ગુણોને ધારણ કરનારાઓને સમજાવનાર વિપ્રમ્-મેધાવી પુરુષની પ્રાવતમ્-સારી રીતે રક્ષા કરો; તાભિઃ, ઋ-તેઓની રક્ષાઓથી અમારા પ્રત્યે સુ, આ, ગતમ્-પ્રાપ્ત થાઓ. (૧૩)

ભાવાર્થ : વ્યાવહારિક લોકોના દ્વારા વિમાન આદિ યાનોના દ્વારા દૂર દેશોમાં જવું-આવવું કરી શકાતું નથી. (અને) એટલા માટે મહાન લાભ પણ થઈ શકતો નથી. તેથી એ (વિમાનાદિ યાન-નિર્માણ કાર્ય)ને સદા કરવું જોઈએ. (૧૩)

યાભિર્મહામતિથિગ્વં કશોજુવં દિવોદાસં શમ્બરહત્ય આવતમ્ ।

યાભિઃ પૂર્ભિદ્યૈ ત્રસદસ્યુમાવતં તાભિરુ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગતમ્ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-રાજા અને પ્રજામાં શૂરવીર પુરુષો ! તમે બન્ને શમ્બરહત્યે-જેમાં સેના વા બીજાઓના બળ અને પરાક્રમ હોય, તે યુદ્ધ આદિ વ્યવહારમાં યાભિ:-જે ઋતિભિ:-રક્ષાઓથી મહામ્-મહાન પ્રશંસનીય અતિથિગ્વમ્-અતિથિઓને પ્રાપ્ત થવા કશોજુવમ્-જળને ચલાવવા અને દિવોદાસમ્-દિવ્ય વિદ્યારૂપ ક્રિયાઓને આપના સેનાપતિની આવતમ્-રક્ષા કરો; વા જે રક્ષાઓથી પૂર્ભિદ્યૈ-શત્રુઓના નગર વિદીર્ણ થાય, જેથી તે સંગ્રામમાં ત્રસદસ્યુમ્-ડાકુઓથી ભય પામેલ શ્રેષ્ઠજનની આવતમ્-રક્ષા કરો; તાભિઃ-તે રક્ષાઓથી અમારી રક્ષાને માટે સુ, આ, ગતમ્-સારી રીતે આવો. (૧૪)

ભાવાર્થ : પ્રજા અને સેનાના મનુષ્યોએ સમસ્ત વિદ્યાવાન ધાર્મિક પુરુષને સભાપતિ બનાવીને

સૂક્ત-૧૧૨

તથા તેઓની રક્ષા કરીને તથા સર્વને ભયભીત કરનારા ડાકુ-ચોરોને મારીને સ્વયં સુખ પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ તથા અન્યોને પ્રાપ્ત કરાવવું જોઈએ. (૧૪)

યાભિર્વમ્નં વિપિપાનમુપસ્તુતં કલિં યાભિર્વિત્તજાનિં દુવસ્યથઃ ।

યાભિર્વ્યશ્વમુત પૃથિમાર્વતં તાભિરૂ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગંતમ્ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-રાજા અને પ્રજાજનો ! તમે યાભિઃ-જે ઋતિભિઃ-રક્ષાઓથી વિપિપાનમ્-વિશેષતઃ ઔષધિઓના રસોના પાનના સ્વભાવવાળા ઉપસ્તુતમ્-અગ્ર પ્રતીત થયેલ ગુણોથી પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કલિમ્-સર્વ દુઃખ દૂર કરનાર વા જ્યોતિષ શાસ્ત્રોક્ત ગણિત વિદ્યાને જાણનાર વિત્તજાનિમ્-તથા જેને હૃદયને પ્રિય સુંદર પત્ની પ્રાપ્ત કરી છે એ વમ્નમ્-રોગ નિવૃત્ત કરવા માટે વમન કરતા પુરુષની દુવસ્યથઃ-સેવા કરો. યાભિઃ-વા જે રક્ષાઓથી વ્યશ્વમ્-વિવિધ ઘોડાઓ વા અગ્નિ આદિ પદાર્થોથી યુક્ત સેના વા યાનની સેવા કરો; ઋત્-અને યાભિઃ-જે રક્ષાઓથી પૃથિમ્-વિશાળ બુદ્ધિયુક્ત પુરુષની આવતમ્-રક્ષા કરો, તાભિઃ, ઋ-તેઓથી આરોગ્યને સુ, આ, ગતમ્-સારી રીતે સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાઓ. (૧૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, સદ્ વેદો દ્વારા ઔષધોનું સેવન કરીને, રોગોનું નિવારણ કરીને, બળ અને બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરીને તથા સેનાપતિની, શિલ્પીની અને વિસ્તૃત પુરુષાર્થ કરનાર મનુષ્યની સારી રીતે સેવા કરીને શારીરિક અને આત્મિકસુખ નિરંતર પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૧૫)

યાભિર્નરા શયવે યાભિરત્રયે યાભિઃ પુરા મનવે ગાતુમીષથુઃ ।

યાભિઃ શારીરાજંતં સ્યૂમરશ્મયે તાભિરૂ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગંતમ્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે નરા-ઉત્તમ કાર્યમાં પ્રવૃત્ત કરાવનાર અશ્વિના-સમસ્ત વિદ્યાના અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્વાનજનો ! તમે બન્ને પુરા-પ્રથમ યાભિઃ-જે ઋતિભિઃ-રક્ષાઓથી શયવે-સુખથી શયન કરનારાઓને શાન્તિ , વા યાભિઃ-જે રક્ષાઓથી અત્રયે-શરીર, મન અને વાણીના દોષોથી રહિત પુરુષોને માટે સમસ્ત સુખ અને યાભિઃ-જે રક્ષાઓથી મનવે-મનનશીલ પુરુષને માટે ગાતુમ્-પૃથિવી વા ઉત્તમ વાણીને ઈષથુઃ-પ્રાપ્ત કરવાની ઈચ્છા કરો; યાભિઃ-જે રક્ષાઓથી સ્યૂમરશ્મયે-સૂર્યની જેમ સંયુક્ત ન્યાય પ્રકાશ કરનાર પુરુષને માટે સુખની ઈચ્છા કરો વા જેથી શત્રુઓને શારીઃ-બાણોની ગતિઓને આજતમ્-પ્રાપ્ત કરાવો, તાભિરૂ-તે રક્ષાઓથી પોતાની સેનાઓની રક્ષા માટે સુ, આ, ગતમ્-સારી રીતે ઉત્સાહને પ્રાપ્ત થાઓ.

ભાવાર્થ : અધ્યાપક અને ઉપદેશકોને યોગ્ય છે, કે તેઓ વિદ્યા અને ધર્મના ઉપદેશથી સર્વ મનુષ્યોને વિદ્વાન અને ધાર્મિક બનાવીને તેઓને નિરંતર પુરુષાર્થી બનાવે. (૧૬)

યાભિઃ પઠર્વા જઠરસ્ય મ્જ્મનાગ્નિનાદીદેચ્ચિત ઙ્ઙ્ઙો અજ્મન્ના ।

યાભિઃ શયીતમર્વથો મહાધને તાભિરૂ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગંતમ્ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સભા અને સેનાના અધિપતિ ! તમે બન્ને યાભિઃ-જે ઋતિભિઃ-રક્ષાઓથી

પઠર્વા-વિદ્યાર્થીઓને જે પ્રાપ્ત થાય છે, વા મજ્મના-બળથી જઠરસ્ય-ઉદરના મધ્યમાં ચિત્તઃ-સંચિત કરેલ ઇદ્ધઃ-પ્રદીપ્ત અગ્નિઃ-અગ્નિની ન-સમાન અજ્મન્-જેમાં શત્રુઓને પતન પાડે છે તે મહાન ધનની પ્રાપ્તિ કરાવનાર યુદ્ધમાં આ, અદીદેત્-સમ્યક્ પ્રદીપ્ત થાય; વા યાભિઃ-જે રક્ષાઓથી શર્યાત્મ-હિંસા કરનારાઓને પ્રાપ્ત પુરુષની અવથઃ-રક્ષા કરો; તાભિરુ-તે રક્ષાઓથી પ્રજા અને સેનાની રક્ષા માટે સુ, આ, ગતમ્-આવાગમન કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેમ કોઈ વીરતા આદિ ગુણોથી સુશોભિત રાજા રક્ષા યોગ્યની રક્ષા કરે અને હિંસા-યોગ્યને મારે તથા અગ્નિ જેમ વનને બાળે, તેમ શત્રુ સેનાને સળગાવે તથા શત્રુઓનું વિશાળ ધન (પ્રજાને) પ્રાપ્ત કરાવે, તેમ જ સભાપતિ અને સેનાપતિએ કરવું જોઈએ. (૧૭)

યાભિરઙ્ગિરો મનસા નિરુણ્યથોઽગ્રં ગચ્છંથો વિવરે ગોઅર્ણસઃ ।

યાભિર્મનું શૂરમિષા સમાવતં તાભિરુ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગતમ્ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે અઙ્ગિરઃ-જાણનાર વિદ્વાન ! તું મનસા-વિજ્ઞાનથી વિદ્યા અને ધર્મનો સર્વને બોધ કરાવ.

હે અશ્વિના-સેનાનું પાલન અને યુદ્ધ કરાવનાર જન ! તમે યાભિઃ-જે ઋતિભિઃ-રક્ષાઓની સાથે ગોઅર્ણસઃ-પૃથિવી જળના વિવરે-અવકાશમાં નિરુણ્યથઃ-સંગ્રામ કરતા અને અગ્રમ્-ઉત્તમ વિજયને ગચ્છંથઃ-પ્રાપ્ત થાઓ છો; વા યાભિઃ-જે રક્ષાઓથી શૂરમ્-શૂરવીર મનુમ્-મનનશીલ મનુષ્યની સમાવતમ્-સમ્યક્ રક્ષા કરો. તાભિરુ-તે રક્ષા અને ઇવા-ઈચ્છાથી અમારી રક્ષાને માટે સુ, આ, ગતમ્-ઉચિત સમય પર આવ્યા કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન વિજ્ઞાન દ્વારા સમસ્ત સુખોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ જ સર્વ રાજપુરુષોએ અનેક સાધનો દ્વારા પૃથિવી પર તથા નદી, સમુદ્ર અને આકાશમાં શત્રુઓને જીતીને સમ્યક્ સુખ પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૧૮)

યાભિઃ પત્નીર્વિમદાયં ન્યૂહથુરા ઘં વા યાભિરુણીરશિક્ષતમ્ ।

યાભિઃ સુદાસં ઋહથુઃ સુદેવ્યંશુ તાભિરુ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગતમ્ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-વિદ્યાર્થી અને અધ્યાપક બ્રહ્મચારીજનો ! તમે યાભિઃ-જે ઋતિભિઃ-રક્ષાઓથી વિમદાય-વિવિધ આનંદને માટે પત્નીઃ-પતિની સાથે યજ્ઞ સંબંધ કરનારી વિદુષી સ્ત્રીઓને ન્યૂહથુઃ-નિશ્ચયપૂર્વક ગ્રહણ કરો, વા-વા યાભિઃ-જે રક્ષાઓથી અસ્ત્રીઃ-બ્રહ્મચારીણી કન્યાઓને ઘ-જ આ, અશિક્ષતમ્-સમ્યક્ શિક્ષિત કરો; અને યાભિઃ-જે રક્ષા આદિ ક્રિયાઓથી સુદાસે-સારી રીતે દાન કરવામાં સુદેવ્યમ્-ઉત્તમ વિદ્વાનોમાં ઉત્પન્ન થયેલ વિજ્ઞાનને ઋહથુઃ-પ્રાપ્ત કરાવો, તાભિઃ-તે રક્ષાઓથી વિદ્યા ડ-અને વિનયને સુ, આ, ગતમ્-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાઓ. (૧૯)

ભાવાર્થ : સુખ પ્રાપ્ત કરવાની ઈચ્છાવાળા પુરુષો અને સ્ત્રીઓએ ધર્મની સાથે સેવન કરેલ બ્રહ્મચર્યથી પૂર્ણ વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને યુવાવસ્થા પ્રાપ્ત થતાં પોતાની સદૃશ્યતા અનુસાર જ વિવાહ કરવા જોઈએ

સૂક્ત-૧૧૨

અથવા બ્રહ્મચર્ય- અવસ્થામાં જ રહીને નિત્ય સ્ત્રી-પુરુષોને ઉત્તમ શિક્ષા આપવી જોઈએ.

સમાન ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ વિના ગૃહાશ્રમને ધારણ કરીને કોઈ કાંઈ પણ સુખ અથવા ઉત્તમ સંતાન પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી, તેથી એ રીતે વિવાહ કરવો જોઈએ. (૧૯)

યાભિઃ શન્તાતી ભવંથો દદાશુષે ભુજ્યું યાભિર્વંથો યાભિરઘ્નિગુમ્ ।

ઓમ્યાવતીં સુભરામૃતસ્તુભં તાભિરૂ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગંતમ્ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સભાપતિ અને સેનાપતિ ! તમે બન્ને દદાશુષે-વિદ્યા અને સુખદાતાને માટે યાભિઃ-જે ઋતિભિઃ-રક્ષા આદિ ક્રિયાઓથી શન્તાતી-સુખકર્તા ભવતઃ-થાઓ છો; વા યાભિઃ-જે રક્ષાઓથી ભુજ્યુમ્-સુખના ભોક્તા વા પાલન કરનારાઓની અવથઃ-રક્ષા કરો છો; વા યાભિઃ-જે રક્ષાઓથી અઘ્નિગુમ્-પરમૈશ્વર્યયુક્ત ઈન્દ્ર અને ઓમ્યાવતીમ્-રક્ષા કરનારા વિદ્વાનોમાં ઉત્પન્ન જે ઉત્તમ વિદ્યા તેથી યુક્ત સુભરામ્-જેથી સમ્યક્ સુખોના ઋહસ્તુભમ્-અને સત્ય ધારણ થાય છે તે નીતિની રક્ષા કરો છો; તાભિરૂ તે રક્ષાઓથી સત્યને સુ, આ, ગતમ્-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાઓ. (૨૦)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ રાજપુરુષોએ સર્વને સુખ પહોંચાડનાર બનવું જોઈએ. અને આપ્તજનોની વિદ્યા અને નીતિને ધારણ કરીને મંગલ = કલ્યાણ પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૨૦)

યાભિઃ કૃશાનુમસને દુવસ્યથો જ્વે યાભિર્યૂનો અર્વંન્તમાર્વતમ્ ।

મધુ પ્રિયં ભરંથો યત્સરઙ્ઘ્યસ્તાભિરૂ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગંતમ્ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સભાપતિ અને સેનાપતિ ! તમે બન્ને યાભિઃ-જે ઋતિભિઃ-રક્ષાદિ ક્રિયાઓથી અસને-ફેંકવાના કૃશાનુમ્-દુર્બળની દુવસ્યથઃ-સેવા કરો; વા યાભિઃ-જે રક્ષાઓથી જ્વે-વેગમાં યૂનઃ-યુવાવસ્થાયુક્ત વીરો અર્વંન્તમ્-અને ઘોડાઓની આવતમ્-રક્ષા કરો; ઋ-અને સરઙ્ઘ્યઃ-યુદ્ધમાં વિજય કરનારા સેનાદિ જનોથી યત્-જે પ્રિયમ્-કામના યોગ્ય તે મધુર અન્ન આદિ પદાર્થોને ભરંથઃ-ધારણ કરો; તાભિઃ-તે રક્ષાઓથી યુક્ત થઈને રાજ્યપાલનને માટે સુ, આ, ગતમ્-સારી રીતે આવો. (૨૧)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોને ઉચિત છે, કે દુઃખોથી દુર્બળ થયેલા પ્રાણીઓને (દુઃખોથી) અને યુવાવસ્થાવાળા મનુષ્યોને વ્યભિચારથી બચાવે.

અથ આદિ સેનાઓની રક્ષા માટે સર્વ આવશ્યક વસ્તુ પરિપૂર્ણ કરે અને પ્રતિક્ષણ નિરીક્ષણ દ્વારા સર્વની વૃદ્ધિ કરે. (૨૧)

યાભિર્નરં ગોષુયુધં નૃષાહ્વે ક્ષેત્રસ્ય સાતા તનયસ્ય જિન્વથઃ ।

યાભી રથાં અવંથો યાભિર્વંતસ્તાભિરૂ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગંતમ્ ॥ ૨૨ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સભા અને સેનાના અધ્યક્ષ ! તમે બન્ને નૃષાહ્વે-વીરોને સહન અને સાતા-સેવન કરવા યોગ્ય સંગ્રામમાં યાભિઃ-જે ઋતિભિઃ-રક્ષાઓથી ગોષુયુધમ્-ભૂમિ પર યુદ્ધ કરનારા નરમ્-

નાયકને જિન્વથ:-પ્રસન્ન કરો; યાભિ:-વા જે રક્ષાઓથી ક્ષેત્રસ્ય-સ્ત્રી અને તનયસ્ય-સંતાનને પ્રસન્ન રાખો; ડ-અને યાભિ:-જે રક્ષાઓથી રથાન્-રથો અર્વત:-અને ઘોડાઓની અવથ:-રક્ષા કરો; તાભિ:- તે રક્ષાઓથી સર્વ પ્રજાઓની રક્ષા કરવા સુ, આ, ગતમ્-સારી રીતે પ્રવૃત્ત થાઓ. (૨૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ યુદ્ધમાં શત્રુઓને મારીને તથા પોતાના (સૈનિક આદિ) કર્મચારીઓની રક્ષા કરીને સેનાના અંગોની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ.

સ્ત્રીઓ અને બાળકોને યુદ્ધમાં કદીપણ મારવા ન જોઈએ. તથા યુદ્ધ ન કરનારાઓ, દર્શકો અને દૂતોને પણ ન મારવા જોઈએ. (૨૨)

યાભિઃ કુત્સમાર્જુનેયં શતક્રતૂ પ્ર તુર્વીતિં પ્ર ચ દ્ભીતિમાર્વતમ્ ।

યાભિર્ધ્વસન્તિં પુરુષન્તિમાર્વતં તાભિરૂ ષુ ઋતિભિરશ્વિના ગતમ્ ॥ ૨૩ ॥

પદાર્થ : હે શતક્રતૂ-અસંખ્ય ઉત્તમ બુદ્ધિ, કર્મયુક્ત અશ્વિના-સભા અને સેનાના પતિ ! આપ બન્ને યાભિ:-જે ઋતિભિ:-રક્ષા આદિથી સૂર્ય અને ચંદ્રમાની સમાન પ્રકાશમાન થઈને આર્જુનેયમ્-સુંદર રૂપની સાથે સિદ્ધ કરેલ કુત્સમ્-વજ્રનું ગ્રહણ કરીને તુર્વીતિમ્-હિંસક, દ્ભીતિમ્-દંભી, ધ્વસન્તિમ્-નીચ ગતિ જનાર પાપીને પ્ર, આવતમ્-સારી રીતે મારો; ચ-અને યાભિ:-જે રક્ષાઓથી પુરુષન્તિમ્-અનેકોને પૃથક્ ભાગ-વેચનારની પ્ર, આવતમ્-રક્ષા કરો, તાભિ:, ડ-તે રક્ષાઓથી ધર્મી રક્ષા કરવા માટે સુ, આ, ગતમ્-સારી રીતે તત્પર થાઓ. (૨૩)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ મનુષ્યોએ શસ્ત્ર-અસ્ત્રોના પ્રયોગોને જાણીને, દુષ્ટ શત્રુઓનું નિવારણ કરીને આ જગતમાં જેટલા અધર્મયુક્ત કર્મો છે, તે સર્વને ધર્મોપદેશથી દૂર કરીને, અનેક પ્રકારની રક્ષાઓ કરીને તથા પ્રજાઓનું પાલન કરીને પરમ આનંદ ભોગવવો જોઈએ. (૨૩)

અર્જસ્વતીમશ્વિના વાચમસ્મે કૃતં નો દસ્ત્રા વૃષણા મનીષામ્ ।

અઘ્યૂત્યેઽવસે નિ હ્વયે વાં વૃધે ચ નો ભવતં વાજસાતૌ ॥ ૨૪ ॥

પદાર્થ : હે વસ્ત્રા-સર્વના દુઃખ નિવારક, વૃષણા-સુખની વર્ષા કરનારા, અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશકજનો ! તમે બન્ને અસ્મે-અમારામાં અર્જસ્વતીમ્-બહુ જ પુત્ર-પૌત્ર કરનારી વાચમ્-વાણીને કૃતમ્-કરો, અઘ્યૂત્યે-છળ આદિ દોષ રહિત વ્યવહારમાં ન:-અમારી અવસે-રક્ષાદિને માટે મનીષામ્-યોગ વિજ્ઞાનવાળી બુદ્ધિને કરો. વાજસાતૌ-યુદ્ધાદિ વ્યવહારમાં ન:-અમારી ચ-અને અન્ય લોકોની વૃધે-વૃદ્ધિને માટે નિરંતર ભવતમ્-પ્રવૃત્ત થાઓ, તે માટે વામ્-તમે બન્નેને હું નિહ્યે-નિત્ય બોલાવું છું. (૨૪)

ભાવાર્થ : કોઈપણ મનુષ્ય આપત વિદ્વાનોના સમાગમ વિના પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત વાણી અને બુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી તથા એ બન્ને વિના શત્રુ વિજય અને સર્વત્રથી વૃદ્ધિ (થઈ શકતી) નથી. (૨૪)

द्युभिर्^१क्तुभिः^२ परि^३ पातम^४स्मानरि^५ष्टेभिर^६श्विना^७ सौ^८भगेभिः^९ ।

तन्नो^१ मि^२त्रो^३ वरु^४णो^५ माम^६हन्ता^७मदि^८तिः^९ सि^{१०}न्धुः^{११} पृ^{१२}थि^{१३}वी^{१४} उ^{१५}त^{१६} द्यौ^{१७} ॥ २५ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશકજનો ! તમે બન્ને દ્યુભિઃ-દિવસ અને અક્તુભિઃ-રાત્રિ અરિષ્ટેભિઃ-હિંસાને અયોગ્ય સૌભગેભિઃ-સુંદર ઐશ્વર્યોની સાથે વર્તમાન અસ્માન્-અમારી સર્વદા પરિ, પાતમ્-સર્વ રીતે રક્ષા કરો, તત્-તમારા તે કામને મિત્રઃ-મિત્ર, વસ્ત્રઃ-ધર્માદિ કાર્યોમાં શ્રેષ્ઠ, અદિતિઃ-માતા, સિન્ધુઃ-સમુદ્ર વા નદી, પૃથિવી-ભૂમિ વા આકાશસ્થ વાયુ ઉત-અને દ્યૌઃ-વિદ્યુત્ વા સૂર્યનો પ્રકાશ નઃ-અમારા માટે મામહન્તામ્-નિરંતર વૃદ્ધિ કરે. (૨૫)

ભાવાર્થ : જેમ માતા-પિતા સંતાનોને, મિત્ર મિત્રને અને પ્રાણ શરીરને તૃપ્ત કરે છે, સમુદ્ર ગંભીરતા આદિને, પૃથિવી વૃક્ષ આદિને અને સૂર્ય પ્રકાશને ધારણ કરીને તથા સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરીને ઉપકાર કરે છે, તેમ અધ્યાપક અને ઉપદેશક સમસ્ત સત્ય વિદ્યાઓ તથા સુશિક્ષાઓ પ્રાપ્ત કરાવીને અભીષ્ટ સુખ પ્રાપ્ત કરાવે. (૨૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સૂર્ય અને પૃથિવી આદિના ગુણો, સભા અને સેનાના અધ્યક્ષોના કર્તવ્યો તથા તેઓને માટે પરોપકાર આદિ કર્મોનું વર્ણન કરેલ છે. તેથી આ સૂક્તના અર્થની સંગતિ પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે જાણવી જોઈએ. (૧૧૨)

સૂક્ત-૧૧૩

इदं^१ श्रेष्ठं^२ ज्योतिषां^३ ज्योतिरागाच्चि^४त्रः^५ प्रके^६तो^७ अजनिष्ट^८ विभ्वा^९ ।

यथा^१ प्रसूता^२ सवि^३तुः^४ सवाय^५ एवा^६ रात्र्युषसे^७ योनि^८मारैक्^९ ॥ १ ॥

પદાર્થ : યથા-જેમ પ્રસૂતા-ઉત્પન્ન થયેલી રાત્રી-રાત સવિતુઃ-સૂર્યના સંબંધથી સવાય-ઐશ્વર્યના હેતુ ઉષસે-પ્રાતઃકાળને માટે યોનિમ્-પ્રત્યેક ઘરને આરૈક્-પૃથક્ - પૃથક્ પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ જ ચિત્રઃ-અદ્ભુત ગુણ-કર્મ-સ્વભાવયુક્ત પ્રકેતઃ-બુદ્ધિમાન-વિદ્વાન જે इदમ્-એ જ્યોતિષામ્-પ્રકાશકોની મધ્ય શ્રેષ્ઠમ્-સર્વોત્તમ જ્યોતિઃ-પ્રકાશ સ્વરૂપ બ્રહ્મને, આ, આગાત્-પ્રાપ્ત થાય છે એવ-તે વિમ્વા-વ્યાપક પરમાત્માની સાથે સુખ-ઐશ્વર્યને માટે અજનિષ્ટ-ઉત્પન્ન થાય છે અને દુઃખ સ્થાનથી પૃથક્ થાય છે. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યોદયને પામીને અંધકાર નષ્ટ થાય છે, તેમજ ઈશ્વરના જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને દુઃખ નષ્ટ પામે છે. તેથી સર્વેએ ઈશ્વરના જ્ઞાન (પ્રાપ્તિ) માટે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૧)

रुशद्वत्सा^१ रुशती^२ श्वेत्यागादारै^३गु कृष्णा^४ सदनान्यस्याः^५ ।

समानबन्धू^१ अमृते^२ अनूची^३ द्यावा^४ वर्णी^५ चरत^६ आमिना^७ने ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે એ સ્પદ્વત્સા-પ્રકાશિત સૂર્યરૂપ વાહરડાની કામના કરનારી વા સ્પાતી-

રક્તવર્ણયુક્ત શ્વેત્યા-શુક્લ વર્ણયુક્ત અર્થાત્ ગુલાબી વર્ણની પ્રભાતવેળા આ, અગાત્-પ્રાપ્ત થાય છે. અસ્યા:-, ડ-એ અદ્ભુત ઊષાનાં સદનાનિ-સ્થાનોને પ્રાપ્ત થયેલી કૃષ્ણા-કાળા વર્ણવાળી રાત આરૈક્-સારી રીતે પૃથક્ - પૃથક્ વર્તે છે, તે બન્ને અમૃતે-પ્રવાહરૂપથી નિત્ય આમિનાને-પરસ્પર એક બીજીને ફેંકવા સમાન અનૂચી-વર્તમાન દ્યાવા-પોત-પોતાના પ્રકાશથી પ્રકાશમાન સમાનવન્ધુ-બે સહોદર વા બે મિત્રોની સમાન વર્ણમ્-પોત-પોતાના રૂપને ચરત:-પ્રાપ્ત થાય છે, તે બન્નેનું યુક્તિથી સેવન કરો. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સ્થાનમાં રાત રહે છે, તે સ્થાનમાં થોડા સમય પછી ઊષા રહે છે. એ બન્નેથી ઉત્પન્ન સૂર્ય બે માતાઓવાળા (પુત્ર)ની સમાન છે. એ રાત અને ઊષા સદા બંધુ સમાન જવા-આવવાવાળી છે, એમ તમે જાણો. (૨)

સમાનો અધ્વા સ્વસ્ત્રોરનન્તસ્તમન્યાન્યાં ચરતો દેવશિષ્ટે ।

ન મૈથેતે ન તસ્થતુઃ સુમેકે નક્તોષાસા સમનસા વિરૂપે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સ્વસ્ત્રો:-બહેનની સમાન વર્તન રાખનારી રાત્રી અને ઊષાના અનન્ત:-અર્થાત્ સીમારહિત આકાશ સમાન:-સમાન અધ્વા-માર્ગ છે, જે દેવશિષ્ટે-પરમેશ્વરના શાસન અર્થાત્ યથાવત્ નિયમને પ્રાપ્ત વિસ્ત્રે-વિરુદ્ધરૂપ સમનસા-તથા સમાન ચિત્તવાળા મિત્રોની સમાન વર્તમાન સુમેકે-અને નિયમમાં છોડેલી નક્તોષાસા-રાત અને પ્રભાતવેળા તમ્-તે પોતાના નિયમને અન્યાન્યા-પૃથક્-પૃથક્ ચરત:-પ્રાપ્ત થાય છે અને તે કદાચિત્ ન-નહિ મૈથેતે-નષ્ટ થાય છે તથા ન તસ્થતુઃ-ન સ્થિર થાય છે, તેને તમે યથાવત્ જાણો. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ વિરુદ્ધ રૂપવાળા બે મિત્ર સીમારહિત અનંત આકાશમાં ન્યાયાધીશની નિયંત્રિત કરેલ સાથે જ વિચરે છે, તેમ રાત્રી અને ઊષા પરમેશ્વરના નિયમથી નિયંત્રિત રહીને વર્તમાન રહે છે. (૩)

ભાસ્વતી નેત્રી સૂનૃતાનામચૈતિ ચિત્રા વિ દુરો ન આવઃ ।

પ્રાર્પ્યાં જગદ્વયું નો રાયો અંખ્યદુષા અંજીગર્ભુવનાનિ વિશ્વા ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! તમને જે ભાસ્વતી-અત્યંત ઉત્તમ પ્રકાશવાળી સૂનૃતાનામ્-વાણી અને જાગૃત વ્યવહારોને નેત્રી-પ્રાપ્ત કરનાર તથા ચિત્રા-અદ્ભુત ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળી ઉષા:-પ્રભાતવેળા ન:-અમારા માટે સંસાર દુર:-દારોને વિ, આવ:-પ્રકટ કરતી જેવી વા જે ન:-અમારા માટે જગત્-સંસારને પ્રાર્પ્ય-સમ્યક્ અર્પણ કરીને, રાય:-ધનને વિ, અંખ્યત્-પ્રસિદ્ધ કરે છે ડ-અને વિશ્વા-સમસ્ત ભુવનાનિ-લોકોને અંજીગ:-પોતાની વ્યાપ્તિથી ગળી જવા સમાન છે, તેને અચૈતિ-અવશ્ય જાણવી છે. (૪)

ભાવાર્થ : જો કે ઊષા સમસ્ત જગતને પ્રકાશિત કરીને, સર્વ પ્રાણીઓને જગાડીને, સંપૂર્ણ સંસારને વ્યાપ્ત કરીને, સર્વ પદાર્થોને વર્ષા દ્વારા સમર્થ બનાવીને, પુરુષાર્થયુક્તને તથા ધન આદિ પ્રાપ્ત કરાવીને

માતાની સમાન સર્વ પ્રાણીઓની રક્ષા કરે છે, તેથી તે (ઊષા) વેળા વ્યર્થ આળસમાં ગુમાવવી ન જોઈએ. (૪)

जिह्वाश्ये॑रुं चरित्वे म॒घो॒न्याभोगयं॑ इ॒ष्टये॑ रा॒य उ॑ त्वम् ।

द॒भ्रं पश्य॑द्भ्य उर्वि॒या वि॒चક્ષ॑ उ॒षा अ॒जीग॒र्भुवनानि॑ वि॒श्वा ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! ત્વમ્-તું જે ઝર્વિયા-અનેક રૂપયુક્ત મઘોનિ-અધિક ધન પ્રાપ્ત કરાવનારી
ઉષા:-પ્રાતઃવેળા વિશ્વા-સમસ્ત ભુવનાનિ-લોકોને અજીગ:-ગળી જતી જિહ્વાશ્યે-વા જે વક્ સૂનાર અર્થાત્
સૂવામાં વક્તાને પ્રાપ્ત થયેલ જનને માટે વા ચરિત્વે-વિચરવા વિચક્ષે-વિવિધ પ્રકટતાને માટે આભોગયે-
જેમાં સર્વત્રથી સુખ ભોગ હોય તે પુરુષાર્થથી યુક્ત ક્રિયાને માટે ઇષ્ટયે-વા જેમાં મળે છે તે યજ્ઞને
માટે વા રાયે-ધનને માટે વા પશ્યદ્ભ્ય:-દેખતા મનુષ્યોને માટે દભ્રમ્-નાની એવી ઉ-વસ્તુને પણ પ્રકાશિત
કરે છે, તે ઊષાને જાણ. (૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો રાત્રિના ચોથા પ્રહરમાં જાગૃત થઈને (રાતે) શયન સમય સુધી વ્યર્થ સમય
ગુમાવતા નથી, તેઓ જ સુખી થાય છે, અન્ય નહિ. (૫)

क्षत्राय॑ त्वं श्रव॑से त्वं मही॒या इ॒ष्टये॑ त्वमर्थ॑मिव त्वमित्यै ।

विस॑दृशा जी॒विताभि॑प्र॒चક્ષ॑ उ॒षा अ॒जीग॒र्भुवनानि॑ वि॒श्वा ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ સભાધ્યક્ષ રાજન ! જેમ ઉષા:-પ્રભાતવેળા પોતાના પ્રકાશથી વિશ્વા-સમસ્ત
ભુવનાનિ-લોકોને અજીગ:-ઢાંકી દે છે, તેમ ત્વમ્- તું અભિપ્રચક્ષે-સમ્યક્ શાસ્ત્ર બોધથી સિદ્ધ વાણી
આદિ વ્યવહારરૂપ ક્ષત્રાય-રાજ્યને માટે અને ત્વમ્-તું શ્રવસે-શ્રવણ અને અન્નને માટે ત્વમ્-તું ઇષ્ટયે-
ઈષ્ટ સુખ અને મહીયૈ-સત્કારને માટે અને ત્વમ્-તું ઇત્યૈ-સંગ પ્રાપ્તિને માટે વિસદૃશા-વિવિધ ધર્મયુક્ત
વ્યવહારોને અનુકૂળ અર્થમિવ-દ્રવ્યોની સમાન જીવિતા-જીવનાદિને સદા સિદ્ધ કર્યા કર. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યા અને વિનયથી પ્રકાશિત થયેલ સત્પુરુષ, સમસ્ત સમીપસ્થ પદાર્થોને પ્રાપ્ત
કરીને તેના ગુણોના પ્રકાશથી સર્વના પ્રયોજનને સિદ્ધ કરનારા હોય છે, તેમ રાજા આદિ જન વિદ્યા,
ન્યાય તથા ધન આદિને અપનાવીને સાર્વભૌમ રાજ્યની રક્ષા દ્વારા સંપૂર્ણ આનંદને સિદ્ધ કરે. (૬)

एषा दि॒वो दु॑हि॒ता प्र॒त्यदर्शि॑ व्यु॒च्छन्ती॑ यु॒वतिः॑ शु॒क्रवा॑साः ।

वि॒श्व॒स्येशा॑ना॒ पार्थि॑वस्य॒ वस्व॑ उ॒षો अ॒द्येह॑ सु॒भगे॑ व्यु॒च्छ ॥ ७ ॥

પદાર્થ : જેમ શુક્રવાસા:-શુદ્ધ પરાક્રમયુક્ત, વિશ્વસ્ય-સમસ્ત પાર્થિવસ્ય-પૃથિવીમાં પ્રસિદ્ધ થયેલ,
વસ્વ:-ધનને ઈશાના-સમ્યક્ સિદ્ધ કરનારી, વ્યુચ્છન્તી-તથા અનેક પ્રકારના અંધકારોને દૂર કરતી ઇષા-
એ દિવ:-સૂર્યની યુવતી:-યુવતિ અર્થાત્ અત્યંત પરાક્રમયુક્ત દુહિતા-પુત્રી પ્રભાતવેળા પ્રત્યદર્શિ-વારંવાર
જોવામાં આવે છે, તેમ હે સુભગે-શ્રેષ્ઠ ભાગ્યવતી ઉષ:-સુખમાં રહેનારી વિદુષી અદ્ય-આજ તું ઇહ-

અહીં વ્યુચ્છ-દુઃખોને દૂર કર. (૭)

ભાવાર્થ : જે બ્રહ્મચર્ય-સંપન્ન વિદ્વાન સજ્જન યુવકના દ્વારા પોતાની સમાન, બ્રહ્મચર્ય સંપન્ના, સુંદર રૂપવાળી, પરાક્રમયુક્તા, સરલ સ્વભાવ અને સુખદાયિની, વીસથી લઈને ચોવીસ વર્ષ વચ્ચેની પૂર્ણ યુવતી કન્યાથી વિવાહ કરે, ત્યારે ઊંધાની સમાન ઉત્તમ પ્રકાશથી યુક્ત થઈને, તેઓ વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષ સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકે. (૭)

પરાયતીનામન્વેતિ પાથં આયતીનાં પ્રથ્થમા શશ્વતીનામ્ ।

વ્યુચ્છન્તીં જીવમુંદીરયન્ત્યુષા મૃતં કં ચન બોધયન્તી ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે ઉત્તમ સૌભાગ્યવર્ધક સ્ત્રી ! જેમ એ **ઉષા**:-પ્રભાતવેળા **શશ્વતીનામ્**-પ્રવાહથી અનાદિ સ્વરૂપ **પરાયતીનામ્**-પૂર્વ વ્યતીત થયેલી પ્રભાતવેળાએ પછી **આયતીનામ્**-આવનારી વેળાઓમાં **પથમા**-પહેલી **વ્યુચ્છન્તી**-અંધકારનો નાશ કરતી અને **જીવમ્**-જીવને **ઉદીરયન્તી**-કામોમાં પ્રવૃત્ત કરાવતી **કમ્**-કોઈ **ચન-મૃતમ્**-મરેલ સમાન સૂતેલ જનને **બોધયન્તી**-જગાડતી **પાથ**:-આકાશમાર્ગને **અન્વેતિ**-અનુકૂળતાથી જાય છે, તેમ તું પણ પતિવ્રતા બન. (૮)

ભાવાર્થ : સૌભાગ્યની કામના કરનારી સ્ત્રીઓ ઊંધાવેળા સમાન પૂર્વકાળની, ભવિષ્યકાળની અને વર્તમાનકાળની સુશીલ પતિવ્રતા સ્ત્રીઓના શાશ્વત ધર્મનો આશ્રય કરીને પોત-પોતાના પતિઓને સુશોભિત કરતી, સંતાનોને જન્મ આપીને તથા તેઓનું સમ્યક્ પાલન કરીને, તેઓને વિદ્યા અને સુશિક્ષા આપીને નિરંતર આનંદિત બને. (૮)

ઉષો યદ્ગ્નિં સમિધેં ચકર્થં વિ યદાવ્શ્ચક્ષ્ણા સૂર્યસ્ય ।

ચન્માનુષાન્યમાણાં અજીગસ્તદ્દેવેષુ ચકૃષે ભદ્રમર્જઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે **ઉષ**:-પ્રભાતવેળાની સમાન વર્તમાન વિદુષી સ્ત્રી ! **યત્**-જે તું **સૂર્યસ્ય**-સૂર્યના **ચક્ષ્ણા**-પ્રકાશથી **સમિધે**-સારી રીતે પ્રકાશને માટે **અગ્નિમ્**-વિદ્યુત્ અગ્નિને પ્રદીપ્ત **ચકર્થં**-કરે છે; **વા યત્**-જે તું **દુઃખોને દૂર વિ**, **આવઃ**-કરે છે; **વા યત્**-જે તું **ચક્ષ્યમાણાન્**-યજ્ઞ કરનારા **માનુષાન્**-મનુષ્યોને **અજીગઃ**-પ્રાપ્ત થઈને પ્રસન્ન કરે છે; **તત્**-તે **દેવેષુ**-વિદ્વાન પતિઓમાં વસીને **ભદ્રમ્**-કલ્યાણકારક **અર્જઃ**-સંતાનોને ઉત્પન્ન **ચકૃષે**-કર. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યની સંબંધિની ઊંધાવેળા સર્વ પ્રાણીઓની સાથે સંગત કરીને સર્વ જીવોને સુખ પહોંચાડે છે, તેમ સુશીલ વિદુષી સ્ત્રીઓ પતિઓને પ્રસન્ન કરીને, ઉત્તમ સંતાનોને જન્મ આપી શકે છે, અન્ય કુભાર્યા = દુષ્ટ પત્નીઓ નહિ. (૯)

ક્રિયાત્યા યત્સમયા ભવાતિ યા વ્યુષ્ણ્યાશ્ચ નૂનં વ્યુચ્છાન્ ।

अनु पुर्वीः कृपते वावशाना प्रदीध्याना जोषमन्याभिरेति ॥ १० ॥

पदार्थ : હે સ્ત્રી ચત્-જે યા:-જો પૂર્વા:-પ્રથમગત પ્રભાવવેળા સર્વ પદાર્થોને કિયતિ-કેટલોક સમયા-સમય વ્યૂષ:-પ્રકાશ કરતી રહી યા: ચ-અને જે વ્યુચ્છાન્-સ્થિર પદાર્થોની વાવશાના-કામના જેમ કરતી પ્રદીધ્યાના-અને પ્રકાશ કરતી કૃપતે-અનુગ્રહ કરતી નૂનમ્-નિશ્ચયપૂર્વક આ, ભવાતિ-સારી રીતે રહેતી અર્થાત્ પ્રકાશ કરતી તેની સમાન એ બીજી વિદ્યાવતી વિદુષી અન્યાભિ:-અન્ય સ્ત્રીઓની સાથે જોષમન્વેતિ-પ્રીતિથી અનુકૂળતાથી પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તું મારી સાથે પતિની સાથે સદા વર્તાવ કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : (પ્રશ્ન :) ઊપાકાળ કેટલા સમયનો હોય છે ?

(ઉત્તર :) સૂર્યોદયથી પૂર્વ પાંચ ઘડી (બે કલાક)નો ઊપાકાળ હોય છે.

(પ્રશ્ન :) કોણ સ્ત્રીઓ સુખ પ્રાપ્ત કરે છે ?

(ઉત્તર :) જે અન્ય વિદુષી સ્ત્રીઓ અને જે પોતાના પતિનો સંગ કરે. તે સ્ત્રીઓ પ્રશંસા યોગ્ય પણ બને. જે કરુણા ધારણ કરે છે, તે પતિઓને પ્રસન્ન રાખે છે. જે પતિઓને અનુકૂળ રહે છે, તે સદા આનંદિત રહે છે. (૧૦)

ઈયુષ્ટે યે પૂર્વતરામપશ્યન્વ્યુચ્છન્તીમુષસં મર્ત્યાસઃ ।

અસ્માભિરુ નુ પ્રતિચક્ષ્યાઽભૂદો તે યન્તિ યે અપરીષુ પશ્યાન્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : યે-જે મર્ત્યાસઃ-મનુષ્યો વ્યુચ્છન્તીમ્-જગાડતી પૂર્વતરામ્-અતિ પ્રાચીન ઊષસમ્-પ્રભાતવેળા ઈયુઃ-પ્રાપ્ત થઈને તે-તેઓ અસ્માભિ:-અમારી સાથે સુખને અપશ્યન્-દેખે છે, જે પ્રભાતવેળા અમારી સાથે પ્રતિચક્ષ્યા-પ્રત્યક્ષ જોવા યોગ્ય અભૂત્-હોય છે, તે નુ-શીઘ્ર સુખદાયક હોય છે ઝ-અને યે-જે અપરીષુ-આવનારી ઊપાઓમાં વ્યતીત થયેલી ઊપાને પશ્યાન્-દેખે તે-તેઓ ઓ-જ સુખને યન્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે - કરે છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઊપાવેળાથી પૂર્વ શય્યાથી ઊઠીને આવશ્યક (નિત્યકર્મ) કરીને પરમેશ્વરનું ધ્યાન કરે છે, તેઓ બુદ્ધિમાન અને ધાર્મિક બની જાય છે.

જે સ્ત્રી-પુરુષો જગદીશ્વરનું ધ્યાન કરીને પ્રીતિપૂર્વક (પરસ્પર) સંવાદ કરે છે, તેઓ અનેક પ્રકારના સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૧)

યાવયદ્ દ્વેષા ઋતૃપા ઋતૃજાઃ સુમ્નાવરી સૂનૃતા ઈરયન્તી ।

સુમઙ્ગલીર્બિભ્રન્તી દેવવીતિમિહાદ્યોષઃ શ્રેષ્ઠતમા વ્યુચ્છ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે ઊષ:-ઊપાવત્ વર્તમાન વિદુષી સ્ત્રી યાવયદ્ દ્વેષા:-જેઓએ દ્વેષયુક્ત કર્મોને છોડી દીધા, ઋતૃપાઃ-સત્યની રક્ષક ઋતૃજાઃ-સત્યના વ્યવહારમાં પ્રસિદ્ધ, સુમ્નાવરી-જેમાં પ્રશંસિત સુખ વિદ્યમાન, વા સુમઙ્ગલી:-જેમાં સુંદર મંગલ હોય, તે સૂનૃતાઃ-વેદાદિ સત્ય શાસ્ત્રોની સિદ્ધાન્ત વાણીઓનો ઈરયન્તી-

શીઘ્ર પ્રેરણા કરતી, શ્રેષ્ઠતમા-અતિશય ઉત્તમ ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવથી યુક્ત, દેવવીતિમ્-વિદ્વાનોની વિશેષ નીતિને વિખ્રતી-ધારણ કરીને, તું ઇહ-અહીં અદ્ય-આજ વ્યુચ્છ-દુઃખને દૂર કર. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ ઊંધા અંધકારનું નિવારણ કરીને, પ્રકાશને પ્રકટ કરીને, ધાર્મિકોને સુખી કરીને તથા ચોર આદિને પીડિત કરીને સર્વ પ્રાણીઓને પ્રસન્ન કરે છે, તેમ જ વિદ્યા અને ધર્મરૂપી પ્રકાશથી યુક્ત અને શમ આદિ ગુણોથી સંપન્ન વિદુષી ઉત્તમ સ્ત્રીઓ પોતાના પતિઓથી-સંતાનોને જન્મ આપીને, ઉત્તમ શિક્ષાથી અવિદ્યારૂપી અંધકારને દૂર કરીને તથા વિદ્યારૂપી સૂર્યનો પ્રકાશ પ્રાપ્ત કરીને પોતાનાં કુળને સુભૂષિત-અલંકૃત કરે. (૧૨)

શશ્વત્પુરોષા વ્યુવાસ દેવ્યથો અદ્યેદં વ્યાવો મ્ઘોની ।

અથો વ્યુચ્છાદુત્તરાં અનુ દ્યૂનજરામૃતાં ચરતિ સ્વધાભિઃ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! પુરા-પ્રથમ દેવી-અત્યંત પ્રકાશમાન, મ્ઘોની-પ્રશંસિત ધન પ્રાપ્તિ કરનારી અજરા-પૂર્ણ યુવાવસ્થાયુક્ત અમૃતાઃ-રોગરહિત, ઊષાઃ-પ્રભાતવેળાની સમાન ઊવાસ-વાસ કર; અને અથો-તદનન્તર જેમ પ્રભાતવેળા ઉત્તરાન્-આવવા-જવાવાળા અનુ, દ્યૂન્-દિવસોને અનુકૂળ સ્વધાભિઃ-પોતાની મેળે ધારણ કરેલ પદાર્થોની સાથે શશ્વત્-નિરંતર વિ, ચરતિ-વિચરતી અને અંધકારને વિ, ઉચ્છાત્-દૂર કરતી તથા અદ્ય-વર્તમાન દિવસમાં ઇદમ્-આ જગતની વ્યાવઃ-વિવિધ પ્રકારની રક્ષા કરે છે, તેમ તું બન. (૧૩)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેમ ઊંધા કારણ અને પ્રવાહ રૂપથી નિત્ય હોવાના કારણે ત્રણેય કાળોમાં પ્રકાશિત પદાર્થોને પ્રકાશિત કરીને વર્તમાન રહે છે, તેમ આત્મભાવથી નિત્ય સ્વરૂપવાળી તું ત્રણેય કાળોનાં ઉત્તમ વ્યવહારોને વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી પ્રકાશિત કરીને તથા સૌભાગ્યવતી બનીને સદા સુખયુક્ત થા-બન. (૧૩)

વ્યવ્જિભિર્દિવ આતાસ્વદ્યૌદપ કૃષ્ણાં નિર્ણિજં દેવ્યાવઃ ।

પ્રબોધયન્ત્યરુણેભિરશ્વૈરોષા યાતિ સુયુજા રથેન ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! તમે જેમ પ્રબોધયન્તી-સૂતેલાને જગાડીને દેવી-દિવ્યગુણયુક્ત ઊષાઃ-પ્રાતઃ સમયની વેળા અવ્જિભિઃ-પ્રકટ કરનાર ગુણોની સાથે દિવઃ-આકાશથી આતાસુ-સર્વત્ર વ્યાપ્ત દિશાઓમાં સમસ્ત પદાર્થોને વ્યદ્યૌત્-વિશેષ પ્રકાશિત કરે છે, નિર્ણિજમ્-વા નિશ્ચયરૂપ કૃષ્ણામ્-કૃષ્ણવર્ણ રાત્રિને અપાવઃ-દૂર કરે છે, વા અસ્મોભિઃ-રક્ત આદિ ગુણયુક્ત અશ્વૈઃ-વ્યાપનશીલ કિરણોની સાથે વર્તમાન સુયુજા-સારી રીતે યુક્ત રથેન-રમણીય સ્વરૂપથી આ, યાતિ-આવે છે, તેની સમાન તમે પણ વર્તાવ કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ ઊંધા દિશાઓમાં વ્યાપ્ત છે, તેમ કન્યાઓ વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત થાય. જેમ ઊંધા પોતાની કાન્તિથી સુશોભિત થઈને રમણીય સ્વરૂપની સાથે પ્રકાશિત થાય છે, તેમ જ કન્યાઓ પોતાના

શીલ આદિ તથા સુંદર રૂપથી શોભિત થાય. જેમ ઊંધા અંધકારને દૂર કરીને પ્રકાશને ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ તે કન્યાઓ મૂર્ખતાનું નિવારણ-દૂર કરીને સુસભ્યતા આદિ ગુણોની સાથે પ્રકાશિત થાય. (૧૪)

આવહન્તી પોષ્યા વાર્યાણિ ચિત્રં કેતું કૃણુતે ચેકિતાના ।

ઈયુષીણામુપમા શશ્વતીનાં વિભાતીનાં પ્રથમોષા વ્યશ્વૈત્ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! તમે જેમ **ઉષા:-**પ્રાતઃવેળા **પોષ્યા-પુષ્ટિ** કરાવનાર અને **વાર્યાણિ-સ્વીકાર** કરવા યોગ્ય ધનાદિ પદાર્થોને **આવહન્તી-પ્રાપ્ત** કરાવે છે; અને **ચેકિતાના-અત્યંત** ચેતના કરતી **ચિત્રમ્-અદ્ભુત** **કેતુમ્-કિરણ**ને **કૃણુતે-કરતી** અર્થાત્ પ્રકાશિત કરે છે; **વિભાતીનામ્-વિશેષ** કરીને પ્રકાશિત કરતી સૂર્ય કાન્તિઓ અને **ઈયુષીણામ્-ચાલતી** **શશ્વતીનામ્-અનાદિરૂપ** ઘડીઓથી **પ્રથમા-પહેલી** **ઉપમા-દેષાન્તરૂપ** **વ્યશ્વૈત્-વ્યાપ્ત** થાય છે, તેમજ (તમે) શુભ ગુણ-કર્મોમાં **ચરત-વિચરણ** કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે નિશ્ચિત જાણો, કે જેમ ઊંધા-કાળથી લઈને કર્મોની ઉત્પત્તિ થાય છે, તેમ સ્ત્રીઓથી આરંભ કરીને જ ગુહકાર્યોની ઉત્પત્તિ થાય છે. (૧૫)

ઉદીર્ધ્વં જીવો અસુર્ન આગાદપ્ પ્રાગાત્તમ્ આ જ્યોતિરેતિ ।

આરૈક્વપન્થ્યાં યાતવે સૂર્યાયાગન્મ્ યત્ર પ્રતિરન્ત્ આયુઃ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઊંધાની ઉત્તેજનાથી **ન:-અમારા** **જીવ:-જીવનના** ધર્તા ઈચ્છાદિ ગુણયુક્ત **અસુ:-પ્રાણ આ, અગાત્-સર્વત્રથી** પ્રાપ્ત થઈને, **જ્યોતિ:-પ્રકાશ પ્ર, અગાત્-પ્રાપ્ત** થઈને, **તમ:-રાત્રિ અપ, એતિ-દૂર** થઈ જાય છે; અને **યાતવે-જવા - આવવાના** **પન્થ્યામ્-માર્ગો** **આરૈક્-અલગ** પ્રકટ થાય છે, જેથી અમે **સૂર્યાય-સૂર્યને** **આ, અગન્-સારી** રીતે પ્રાપ્ત કરીને તથા **યત્ર-જેમાં** પ્રાણી **આયુઃ-જીવનને** **પ્રતિરન્તે-પ્રાપ્ત** થઈને આનંદથી વિતાવે છે, તેને જાણીને **ઉદીર્ધ્વેમ્-પુરુષાર્થ** કરવામાં યેષ્ટા કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : પ્રાતઃ કાળની ઊંધા સર્વને જગાડે છે અને અંધકારને દૂર કરે છે, જેમ એ સાયંકાળની ઊંધા (= સંધ્યા સમયની આભા) સર્વ પ્રાણીઓને દૈનિક કાર્યોથી નિવૃત્ત કરીને શયન કરાવે છે અને માતાની સમાન સર્વનું પાલન કરીને વ્યવહાર-યુક્ત કરે છે, તેમ જ સન્સ્વભાવ - સજ્જન વિદુષી સ્ત્રી હોય છે. (૧૬)

સ્યૂર્મના વાચ ઉદિયર્તિ વહ્નિઃ સ્તવાનો રેભ ઉષસો વિભાતિઃ ।

અદ્યા તદુચ્છ ગૃણતે મઘોન્યસ્મે આયુર્નિ દિદીહિ પ્રજાવત્ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે મઘોનિ-પ્રશંસિત ધનયુક્ત સ્ત્રી ! તું **અસ્મે-અમારા** તથા **ગૃણતે-પ્રશંસા** કરતા **પત્યે-પતિને** માટે જે **પ્રજાવત્-બહુ જ પ્રજા**યુક્ત **આયુઃ-જીવનનો** હેતુ અન્ન છે, **તત્-તે અદ્ય-આજ નિ, દિદીહિ-નિરંતર** પ્રકાશિત કર, જે તારા **રેભઃ-સ્તવાનઃ-ગુણ** પ્રશંસાકર્તા **વહ્નિઃ-અગ્નિ** સમાન નિર્વાહ કરનાર પતિ તારા

માટે **વિભાતી**:-પ્રકાશવતી **ઊષસ**:-પ્રભાતવેળાને જેમ સૂર્ય તેમ **સ્યૂમના**-સકળ વિદ્યાઓથી યુક્ત પ્રિય **વાચ**:-વેદવાણીઓને **ઉત્**, **ઇર્વાર્તિ**-શ્રેષ્ઠતાથી જાણે છે, તેનો તું **ઉચ્છ**-સારી રીતે નિવાસ કરાવ. (૧૭)

ભાવાર્થ : જ્યારે પતિ અને પત્ની મિત્રતાપૂર્વક પરસ્પર વિદ્યા અને સુશિક્ષાનો સંગ્રહ કરીને, પ્રશંસનીય અન્ન, ધન આદિ વસ્તુઓનો સંચય કરીને તથા સૂર્યની સમાન ધર્મ અને ન્યાયનો પ્રકાશ કરીને સુખપૂર્વક રહે છે, ત્યારે તે ગૃહાશ્રમના પૂર્ણ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૭)

યા ગોમતીરુષસઃ સર્વવીરા વ્યુચ્છન્તિ દાશુષે મર્ત્યાય ।

વાયોરિવ સૂનૃતાનામુદર્કે તા અશ્વદા અશ્નવત્સોમસુત્વા ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે **યા**:-જે **સુનૃદતાનામ**-શ્રેષ્ઠ વાણી અને અન્નાદિના **ઉદર્કે**-ઉત્કૃષ્ટતાથી પ્રાપ્તિમાં **વાયોરિવ**-જેમ વાયુથી **ગોમતી**:-બહુ જ ગાયો વા કિરણોયુક્ત **ઊષસ**:-પ્રભાતવેળા વર્તમાન છે, તેમ વિદુષી સ્ત્રી **દાશુષે**-સુખ આપનાર **મર્ત્યાય**-મનુષ્યને માટે **વ્યુચ્છન્તિ**-દુઃખ દૂર કરતી અને **અશ્વદા**:-અશ્વ આદિ પશુઓને આપનારી **સર્વવીરા**:-જેનાથી સમસ્ત વીરજન થાય છે **તા**:-તે વિદુષી સ્ત્રીઓને **સોમસુત્વા**-ઐશ્વર્યની સિદ્ધિ કરનાર જન **અશ્નવત્**-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તેને પ્રાપ્ત થાઓ. (૧૮)

ભાવાર્થ : બ્રહ્મચારીઓને ઉચિત છે, કે તેઓ સમાવર્તન પશ્ચાત્ પોતાની સમાન વિદ્યા, સુશીલતા, રૂપ અને લાવણ્ય = સૌંદર્યતાથી યુક્ત હૃદયને પ્રિય લગાડનારી તથા પ્રભાતવેળાની સમાન પ્રશંસનીયા બ્રહ્મચારિણીઓથી વિવાહ કરીને ગૃહાશ્રમમાં સુખથી રહે. (૧૮)

માતા દેવાનામદિતેરનીકં યજ્ઞસ્ય કેતુર્બૃહતી વિભાહિ ।

પ્રશસ્તિકૃદ્ બ્રહ્મણે નો વ્યુચ્છા નો જને જનય વિશ્વવારે ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે **વિશ્વવારે**-સમસ્ત કલ્યાણનો સ્વીકાર કરનારી કુમારી ! **યજ્ઞસ્ય**-ગૃહાશ્રમ વ્યવહારમાં વિદ્વાનોના સત્કાર આદિ કર્મને **કેતુ**:-જ્ઞાયયિત્રી પતાકા સમાન પ્રસિદ્ધ **અદિતે**:-ઉત્પન્ન થયેલ સંતાનની રક્ષા માટે **અનીકમ્**-સેનાની સમાન **પ્રશસ્તિકૃત્**-પ્રસંશા કરનાર અને **બૃહતી**-મહાન સુખ વધારનારી **દેવાનામ્**-વિદ્વાનોની **માતા**-જનની **બ્રહ્મણે**-વેદ વિદ્યા વા પરમેશ્વરના જ્ઞાનને માટે પ્રભાત વેળાની સમાન **વિભાહિ**-વિશેષ પ્રકાશિત થાય. **ન**:-અમારા **જને**-પરિવારજનોમાં પ્રીતિને **આ**, **જનય**-સારી રીતે ઉત્પન્ન કર અને **ન**:-અમને સુખમાં **વ્યુચ્છ**-સ્થિર કર. (૧૯)

ભાવાર્થ : સજ્જન પુરુષોએ સજ્જન સ્ત્રીની સાથે જ વિવાહ કરવો જોઈએ, જેથી ઉત્તમ સંતાન અને ઐશ્વર્યની નિત્ય વૃદ્ધિ થાય. પત્ની સંબંધથી ઉત્પન્ન દુઃખની સમાન આ સંસારમાં અન્ય કોઈ મહાન કષ્ટ નથી. તેથી પુરુષની પરીક્ષા કરીને ઉત્તમ લક્ષણો યુક્ત સ્ત્રીની સાથે વિવાહ કરવો જોઈએ અને સ્ત્રીએ પણ હૃદયને પ્રિય અને પ્રશંસનીય રૂપ તથા ગુણોથી યુક્ત પુરુષનું જ ગ્રહણ કરવું જોઈએ. (૧૯)

यच्चिन्नमर्ज उषसो वहन्तीजानाय शशमानाय भद्रम् ।

तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ २० ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે **ઉષસઃ**-ઊષાની સમાન સ્ત્રી **શશમાનાય**-પ્રશંસિત ગુણયુક્ત **ઈજાનાય** સંગશીલ પુરુષને માટે તથા **નઃ**-અમારે માટે **યત્**-જે **ચિત્રમ્**-અદ્ભુત **ભદ્રમ્**-કલ્યાણકારી **અજઃ**-સંતાનને **વહન્તિ**-પ્રાપ્તિ કરાવતી વા જે સ્ત્રીઓથી **મિત્રઃ**-મિત્ર, **વરુણઃ**-ઉત્તમ પિતા, **અદિતિઃ**-શ્રેષ્ઠ માતા, **સિન્ધુઃ**-સમુદ્ર વા નદી, **પૃથિવી**-ભૂમિ **ઉત**-અને **દ્યૌઃ**-વિદ્યુત્ વા સૂર્ય આદિ પ્રકાશમાન પદાર્થ પાલન કરવા યોગ્ય છે, તે સ્ત્રીઓ વા **તત્**-તે સંતાનને નિરંતર **મામહન્તામ્**-ઉપકારમાં પ્રવૃત્ત કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : શ્રેષ્ઠ પંડિત સ્ત્રીઓ જ સંતાનોને ઉત્પન્ન કરીને તથા તેની સમ્યક્ રક્ષા કરીને ઉત્તમ શિક્ષાથી તેની ઉન્નતિ કરી શકે છે.

જે પુરુષો સ્ત્રીઓનો સત્કાર કરે છે અને જે સ્ત્રીઓ પુરુષોનો સત્કાર કરે છે, તેના કુળમાં સમસ્ત સુખ નિવાસ કરે છે અને દુઃખ ત્યાંથી **પલાયન્તે**-ભાગી જાય છે. (૨૦)

(સંગતિ :) આ સૂક્તમાં રાત્રિ અને ઊષાના ગુણોનું વર્ણન તથા તેના દૃષ્ટાન્તથી સ્ત્રી-પુરુષોનાં કર્તવ્ય-કર્મનો ઉપદેશ કરેલ છે, તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૧૩)

સૂક્ત-૧૧૪

इमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्र भरामहे मतीः ।

यथा शमसद् द्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन्ननातुरम् ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! **યથા**-જેમ **દ્વિપદે**-મનુષ્યાદિ **ચતુષ્પદે**-અને ગાય આદિને માટે **શમ્**-સુખ **અસત્**-થાય **અસ્મિન્**-એ **ગ્રામે**-બહુજ ઘરવાળા નગર આદિ ગામોમાં **વિશ્વમ્**-સમસ્ત ચરાચર જીવાદિ **અનાતુરમ્**-રોગ-પીડારહિત **પુષ્ટમ્**-પુષ્ટિને પ્રાપ્ત **અસત્**-થાય; તથા **તવસે**-બળયુક્ત **ક્ષયદ્વીરાય**-જેમાં દોષોનો નાશ કરનારા વીરપુરુષો વિદ્યમાન **સ્વાય**-તે યુમાલીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પાલન કરનારા **કર્પર્દિને**-બ્રહ્મચારી પુરુષને માટે **ઇમાઃ**-પ્રત્યક્ષ આપ્તોનો ઉપદેશ તથા વેદાદિ શાસ્ત્રોના બોધથી સંયુક્ત **મતીઃ**-શ્રેષ્ઠ પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિથી **પ્ર**, **ભરામહે**-ધારણ કરે છે. (૧)

ભાવાર્થ : જ્યારે આપત વેદજ્ઞાતા અધ્યાપક અને ઉપદેશક તથા અધ્યાપિકાઓ અને ઉપદેશિકાઓ, બ્રહ્મચારીઓ અને શ્રોતાઓને તથા બ્રહ્મચારિણીઓ તથા શ્રવણ કરનારી સ્ત્રીઓને વિદ્યા-સંપન્ન કરે છે, ત્યારે તેઓ શરીર અને આત્માના બળને પ્રાપ્ત કરીને સમસ્ત સંસારને સુખી બનાવે છે. (૧)

मृळा नो रुद्रोत नो मयस्कृधि क्षयद्वीराय नमसा विधेम ते ।

यच्छं च योश्च मनुरायेजे पिता तदश्याम तव रुद्र प्रणीतिषु ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્ર-દુષ્ટ શત્રુઓને રડાવનાર રાજન્ ! જે અમે ક્ષયદ્વીરાય-વિનાશ કરેલ શત્રુસેનાના વીર જેને તે તે-આપને માટે નમસા-અન્ન વા સત્કારથી વિધેમ-વિધાન કરીએ અર્થાત્ સત્કાર કરીએ તે ન:-અમને મૃડ-સુખી કરો તથા ન:-અમારા માટે મય:-સુખ કૃધિ-કરો.

હે સ્ત્ર-ન્યાયાધીશ ! મનુ:-મનનશીલ પિતા-પિતાની સમાન આપ યત્-જે રોગોનું શમ્-નિવારણ ચ-જ્ઞાન યો:-દુઃખોને પૃથક કરવા ચ અને ગુણોની પ્રાપ્તિનો આયેજે-સર્વ રીતે સંગ કરાવો છો તત્-તેને અશ્યામ-પ્રાપ્ત થઈએ. ઉત-તેઓજ અમે તવ-તમારી પ્રણીતિષુ-ઉત્તમ નીતિઓમાં પ્રવૃત્ત થઈને નિરંતર સુખી થઈએ. (૨)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ સ્વયં સુખી થઈને સમસ્ત પ્રજાઓને સુખી કરે, એ વિષયમાં આળસ ન કરે અને પ્રજાજન રાજનીતિના નિયમોમાં રહીને રાજપુરુષોને સદા પ્રસન્ન રાખે. (૨)

અશ્યામ તે સુમતિં દૈવયજ્યયા ક્ષયદ્વીરસ્ય તવ રુદ્ર મીઢ્વઃ ।

સુમ્નાયન્નિદ્વિશો અસ્માકમા ચરારિષ્ટવીરા જુહવામ તે હ્રવિઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મીઢ્વ:-પ્રજાને સુખથી સિંચન કરવા અને સ્ત્ર-સત્યોપદેશ કરનાર સભાધ્યક્ષ રાજન્ ! અમે દેવયજ્યયા-વિદ્વાનોની સંગતિ અને સત્કાર દ્વારા ક્ષયદ્વીરસ્ય-વીરોનો નિવાસ કરાવનારા તવ-તારી સુમતિમ્-શ્રેષ્ઠ પ્રજા અશ્યામ-પ્રાપ્ત થાય.

જે સુમ્નાયન્-સુખ કરાવતા તું અસ્માકમ્-અમારી અરિષ્ટવીરા-હિંસારહિત વીરોવાળી વિશ:-પ્રજાઓને આ, ચર-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થા, તે તે-તારી પ્રજાઓને અમે ઇત્-પણ પ્રાપ્ત થઈએ અને તે-તારા માટે હ્રવિઃ-આપણા યોગ્ય પદાર્થોને જુહવામ્-આપે-પ્રદાન કરે. (૩)

ભાવાર્થ : રાજા દ્વારા પ્રજાઓને નિરંતર સુખી કરવી જોઈએ અને પ્રજા પણ રાજાને આનંદિત કરે. જે રાજા પ્રજા પાસેથી કર લઈને તેનું પાલન ન કરે તો રાજાને ડાકુ સમાન જાણવો જોઈએ અને જો પાલન કરેલી પ્રજા રાજભક્ત ન હોય, તો તેને ચોર સમાન જાણવી જોઈએ. તેથી પ્રજાઓ રાજાને કર આપે છે, કે જેથી તે અમારું પાલન કરે. રાજા પણ એ પ્રયોજનથી પ્રજાનું પાલન કરે છે, કે તેઓ મને કર આપે. (૩)

ત્વષં વયં રુદ્રં યજ્ઞસાધં વ ઇંકું ઙ્ઙુ કવિમવસે નિ હ્રયામહે ।

આર્ અસ્મદૈવ્યં હેઠ્ઠો અસ્યતુ સુમતિમિદ્વયમ્સ્યા વૃણીમહે ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : વયમ્-અમે અવસે-રક્ષા આદિને માટે જે ત્વેષમ્-વિદ્યા, ન્યાય પ્રકાશવાન વઙ્ઙુમ્-દુષ્ટ શત્રુઓ પ્રત્યે કુટિલ કવિમ્-સમસ્ત શાસ્ત્રોને ક્રમશઃ જોનાર અને યજ્ઞસાધમ્-પ્રજા પાલનરૂપ યજ્ઞને સિદ્ધ કરનારા દૈવ્યમ્-વિદ્વાનોમાં કુશળ સ્ત્રમ્-શત્રુઓને રોકનારાને નિ, હ્રયામહે-પોતાના સુખ-દુઃખનું નિવેદન કરે તથા વયમ્-અમે જે અસ્ય-એ રુદ્રની સુમતિમ્-ધર્માનુકૂળ ઉત્તમ પ્રજાને આ, વૃણીમહે-

અમારા **ઉક્ષિતમ્-વીર્ય** સિંચનથી સ્થિત થયેલ ગર્ભને **મા-મારો** નહિ, **ન:-અમારા પિતરમ્-પાલક** અને જનક પિતા વા ઉપદેશકને **મા-મારો** નહિ **ઉત-અને માતરમ્-માન**, સન્માન તથા જનની માતા વા વિદુષી સ્ત્રીને **મા-મારો** નહિ, **ન:-અમારી પ્રિયા:-સ્ત્રી** આદિના પ્રિય **તન્વ:-શરીરોને મા-મારો** નહિ અને અન્યાયકારી દુષ્ટોને **રીરિષ:-મારો**. (૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઈશ્વર પક્ષપાત છોડીને ધાર્મિકોને ઉત્તમ ફળ પ્રદાન દ્વારા સુખ આપે છે અને પાપીઓને પાપ (ના દુઃખરૂપ) ફળ પ્રદાન કરીને પીડા આપે છે, તેમ તમે પણ પ્રયત્ન કરો. (૭)

મા નસ્તોકે તનયે મા ન આયૌ મા નો ગોષુ મા નો અશ્વૈષુ રીરિષઃ ।

વીરાન્મા નો રુદ્ર ભામિતો વંધીર્હવિષ્મન્તઃ સદ્મિત્ત્વા હવામહે ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે **સ્વ-દુષ્ટોને** રડાવનાર સભાપતિ ! **હવિષ્મન્ત:-જેના** પ્રશંસાયુક્ત સંસારનો ઉપકાર કરવાનું કામો છે તે અમે જે કારણે **સદમ્-સ્થિર** વર્તમાન જ્ઞાનને પ્રાપ્ત **ત્વામ્-ઇત્-આપને** જ **હવામહે-સ્વીકારીએ** છીએ એથી **ભામિત:-ક્રોધને** પ્રાપ્ત આપ **ન:-અમારા તોકે-સઘ** ઉત્પન્ન બાળક વા **તનયે-બાળાઓથી** જે ઉપર છે તે બાળકનો **મા-રીરિષ:-ઘાત** કરો નહિ, **ન:-અમારા આયૌ-જીવન** વિષયમાં **મા-હિંસા** કરો નહિ, **ન:-અમારા ગોષુ-ગાય** આદિના પશુસંઘાત = ધણનો **મા-ઘાત** કરો નહિ, **ન:-અમારા અશ્વૈષુ-ઘોડાઓને મા-મારો** નહિ, **ન:-અમારા વીરાન્-વીરોને મા-વધી:-મારો** નહિ. (૮)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ કોષિત થઈને કદીપણ અન્યાયથી કોઈની હત્યા કરવી નહિ. ગાય આદિ પશુઓની રક્ષા કરવી જોઈએ અને પ્રજાજનોએ રાજાના આશ્રયથી જ સદા આનંદિત રહેવું જોઈએ. સર્વએ મળીને ઈશ્વરને આ રીતે પ્રાર્થના કરવી જોઈએ, કે હે જગદીશ્વર ! આપની કૃપાથી અમે બાલ્યાવસ્થામાં વિવાહ આદિ કુકર્મોથી પુત્ર આદિનો વિનાશ કદી ન કરીએ અને પુત્ર આદિ પણ અમારાથી અપ્રિય આચરણ ન કરે; તથા સંસારના ઉપકારક ગાય આદિ પશુઓની અમે કદી હત્યા ન કરીએ. (૮)

उप ते स्तोमान्पशुपाड्वाकरं रास्व पितर्मरुतां सुम्नमस्मे ।

भद्रा हि ते सुमतिर्मृळयत्तमाथा वयमव इत्ते वृणीमहे ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે **મસ્તામ્-પ્રત્યેક ઋતુમાં** યજ્ઞ કરાવનારી **પિત:-પાલના** કરીને દુષ્ટોને રડાવનાર સભાપતિ ! **હિ-જે** કારણે હું **પશુપા ઇવ-જેમ** પશુઓના પાલક ચારનારા ગાય આદિ પશુઓથી દૂધ, દહીં, ઘૃત, છાસ આદિ લઈને પશુઓના સ્વામીને આપે છે, તેમ **સ્તેમાન્-પ્રશંસનીય** રત્નાદિ પદાર્થોને **તે-આપને** માટે **ઉપ, આ, અકરમ્-આગળ** કરું છું એ કારણે આપ **અસ્મે-મારા** માટે **સુમ્નમ્-સુખ** રાસ્વ-પ્રદાન કરો, **અથ-તદનન્તર** જે **તે-આપની મૃડયત્તમા-સર્વ** પ્રકારની સુખ કરનારી **ભદ્રા-કલ્યાણરૂપી સુમતિ:-** શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ અને જે **તે-આપની અવ:-રક્ષા** કરનારી તે મતિ-બુદ્ધિ અને રક્ષા કરવાની **વયમ્-અમે** જેમ **વૃણીમહે-સ્વીકાર** કરીએ છીએ, **ઇત્-તેમ** આપ પણ અમારો સ્વીકાર કરો. (૯)

ભાવાર્થ : પ્રજાજન રાજપુરુષોથી રાજનીતિને અને રાજપુરુષો પ્રજાજનોથી પ્રજા વ્યવહારને જાણીને,
૪૮૯

જાણવા યોગ્ય વિષયોથી જાણકાર બનીને શાશ્વત ધર્મનો આશ્રય કરે. (૯)

આરે તે ગોઘ્નમુત પૂરુષઘ્નં ક્ષયદ્વીર સુમ્નમ્સ્મે તે અસ્તુ।

મૃલા ચ નો અધિં ચ બ્રૂહિ દેવાધાં ચ નઃ શર્મ યચ્છ દ્વિબર્હીઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે ક્ષયદ્વીર-શૂરવીરજનોનો નિવાસ કરાવનાર અને દેવ-દિવ્ય સર્વોત્તમ કર્મ કરાવનાર વિદ્વાન્ સભાપતિ ! પુસ્ત્રઘ્નમ્-પુરુષોને મારવા ચ-અને ગોઘ્નમ્-ગાય આદિ ઉપકારક પશુઓનો વિનાશ કરનારા પ્રાણીનું નિવારણ કરીને તે-આપના ચ-અને અસ્મે-અમારા માટે સુમ્નમ્-સુખ અસ્તુ-થાઓ, અધા-તદનન્તર નઃ-અમને મૃડ-સુખી કરો ચ-અને હું આપને સુખ આપું આપ અમને અધિબ્રૂહિ-અધિક ઉપદેશ આપો ચ-અને હું આપને અધિક ઉપદેશ કરું દ્વિબર્હીઃ-વ્યવહાર અને પરમાર્થની વૃદ્ધિ કરનાર આપ નઃ-અમારા માટે શર્મ-ઘરનું સુખ યચ્છ-પ્રદાન કરો ચ-અને આપના માટે હું સુખ આપું. સર્વ અમે ધર્માત્માઓની આરે-નિકટ અને દુરાચારીઓથી દૂર રહીએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રયત્ન-પૂર્વક પશુ ઘાતકોથી અને મનુષ્યોના હત્યારાઓથી દૂર નિવાસ કરવો જોઈએ તથા પોતાનાથી તેઓનો દૂર નિવાસ કરાવવો જોઈએ.

રાજા અને રાજપુરુષોએ પરસ્પર ઉપદેશ કરીને, સભા બનાવીને તથા રક્ષા કરીને વ્યવહાર અને પરમાર્થને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૧૦)

અવૌચામ્ નમૌ અસ્મા અવસ્યવઃ શૃણોતુ નો હવં રુદ્રો મરુત્વાન્।

તન્નો મિત્રો વરુણો મામહન્તામદિતિઃ સિન્ધુઃ પૃથિવી ઉત દ્યૌઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : અવસ્યવઃ-પોતાની રક્ષા ઈચ્છતા અમે અસ્મૈ-એ માન કરવા યોગ્ય સભાધ્યક્ષને માટે નમઃ-“નમસ્તે” એવા વાક્યને અવૌચામ્-બોલે અને તે મસ્વાન્-બળવાન સ્ત્રઃ-વિદ્યાવાન સભાપતિ તન્-તે નઃ-અમારા હવમ્-બોલવવા રૂપ પ્રશંસા વાક્યને શૃણોતુ-શ્રવણ કરે.

હે મનુષ્યો ! જે નઃ-અમારા “નમસ્તે” શબ્દને મિત્રઃ-મિત્ર, વસ્ત્રઃ-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન્, અદિતિઃ-અન્તરિક્ષ, સિન્ધુઃ-સમુદ્ર, પૃથિવી-પૃથિવી ઉત્-અને દ્યૌઃ-પ્રકાશની વૃદ્ધિ કરે છે અર્થાત્ ઉક્ત પદાર્થોને જાણનાર સભાપતિને વારંવાર “નમસ્તે” શબ્દ કહેતા તેને આપ મામહન્તામ્-વારંવાર પ્રશંસાયુક્ત કરે. (૧૧)

ભાવાર્થ : પ્રજાજનોએ રાજાજનોને પ્રિય આચરણ નિત્ય કરવું જોઈએ અને રાજાઓએ પ્રજાજનોના વચન સાંભળવા જોઈએ. આ રીતે મળીને ન્યાયની વૃદ્ધિ કરીને અન્યાયનું નિવારણ કરવું જોઈએ. (૧૧)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં બ્રહ્મચારી, વિદ્વાન્, સભાધ્યક્ષ અને સભાસદ્ આદિના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૧૪)

સૂક્ત-૧૧૫

૪૯૦

અઘ્વેદભાષ્ય

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः।

आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અનીકમ્-નેત્રથી જોવામાં આવતો નથી તથા દેવાનામ્-વિદ્વાનો અને સર્વોત્તમ પદાર્થો વા મિત્રસ્ય-મિત્રની સમાન વર્તમાન સૂર્ય વા વરુણસ્ય-આનંદદાયક જળ, ચંદ્રલોક અને પોતાની વ્યાપ્તિ આદિ પદાર્થો વા અગ્ને:-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિ વા અન્ય સર્વ પદાર્થોને ચિત્રમ્-અદ્ભુત ચક્ષુ:-દર્શક છે, તે બ્રહ્મ ઉદ્ગાત્-ઉત્કર્ષતાથી પ્રાપ્ત છે.

જે જગદીશ્વર સૂર્ય:-સૂર્યની સમાન જ્ઞાનનો પ્રકાશ કરનાર, વિજ્ઞાનથી પરિપૂર્ણ જગત:-જંગમ ચ-અને તસ્થુષ:-અન્તર્યામી અર્થાત્ જેણે જગતના આત્મા-અન્તર્યામી અર્થાત્ જેણે અન્તરિક્ષમ્-આકાશ, દ્યાવાપૃથિવી-પ્રકાશ અને ભૂમિ લોકને આ, અપ્રા:-સમ્યક્ રીતે પરિપૂર્ણ કરેલ છે અર્થાત્ જેને સ્વયં પૂર્ણ ભરેલ છે, તે પરમાત્માની તમે ઉપાસના કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જે પરિમાણવાળો પદાર્થ છે, તે પરમાત્મા ન હોઈ શકે. તે અવ્યક્ત, સર્વશક્તિમાન પરમેશ્વર સિવાય સમસ્ત જગતને ઉત્પન્ન કરી શકતો નથી અને સર્વવ્યાપક, સચ્ચિદાનંદ સ્વરૂપ, અનંત, અન્તર્યામી, ચરાચર જગતના આત્મા પરમેશ્વર વિના અન્ય કોઈ સંસારને ધારણ કરનાર, જીવોના પાપ-પુણ્યોના સાક્ષી અને તે અનુસાર જીવોને સુખ-દુઃખ ફળ આપનાર અન્ય કોઈ નથી. એવા પરમેશ્વરની ઉપાસના વિના ધર્મ - અર્થ - કામ - મોક્ષ પ્રાપ્ત કરવા કોઈ જીવ = મનુષ્ય સમર્થ નથી. તેથી એ પરમેશ્વર ઉપાસના કરવા યોગ્ય સમર્થ નથી. તેથી એ પરમેશ્વર ઉપાસના કરવા યોગ્ય ઈષ્ટ દેવ છે, તેમ સર્વેએ માનવું જોઈએ. (૧)

સૂર્યો દેવીમુષસં રોચમાનાં મર્યો ન યોષામ્ભ્યેતિ પ્શ્ચાત્।

યત્રા નરો દેવ્યન્તો યુગાનિ વિતન્વતે પ્રતિ ભદ્રાય ભદ્રમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઈશ્વરે ઉત્પન્ન કરીને કક્ષા-નિયમમાં સ્થાપિત કરેલ એ સૂર્ય:-સૂર્યમંડળ રોચમાનામ્-રુચિ કરાવનાર દેવીમ્-અને સર્વ પદાર્થોને પ્રકાશિત કરનારી ઉષસમ્-પ્રાત:કાલની વેળાને તેના થવાના પશ્ચાત્-પછી જેમ મર્ય:-પતિ યોષામ્-પોતાની સ્ત્રીને પ્રાપ્ત થાય છે, ન-તેમ અભ્યેતિ-સર્વત્રથી દોડી રહ્યો છે. યત્ર-જે વિદ્યમાન સૂર્યમાં દેવ્યન્ત:-મનોહર ગતિથી સુંદર ગણિત વિદ્યાને જાણતા-જણાવતા નર:-જ્યોતિષ વિદ્યાના ભાવોને અન્યોની સમજમાં પહોંચાડનાર જ્યોતિષીજન યુગાનિ-પાંચ-પાંચ સંવત્સરો-વર્ષોની ગણનાથી જ્યોતિષમાં યુગ વા સત્યયુગ, ત્રેતાયુગ, દ્વાપરયુગ અને કલિયુગને જાણીને ભદ્રાય-શ્રેષ્ઠ સુખને માટે ભદ્રમ્-તે શ્રેષ્ઠ સુખના પ્રતિ, વિતન્વતે-પ્રત્યે વિસ્તાર કરે છે, તે પરમેશ્વર સર્વને ઉત્પન્ન કરનાર છે, તેમ તમે જાણો. (૨)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે ઈશ્વરે સૂર્ય રચીને પ્રત્યેક બ્રહ્માંડની મધ્યમાં સ્થાપિત કરેલ છે, જેના

આશ્રયથી ગણિત આદિ સર્વ વ્યવહાર સિદ્ધ થાય છે, તેનું સેવન આપ લોકો દ્વારા કેમ ન કરવામાં આવે ? (૨)

ભદ્રા અશ્વાં હરિત્ઃ સૂર્યસ્ય ચિત્રા એતંગ્વા અનુમાદ્યાસઃ ।

નમસ્યન્તો દિવ આપૃષ્ઠમસ્થુઃ પરિ દ્યાવાપૃથિવી યન્તિ સદ્યઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : ભદ્રા:-સુખકારક અનુમાદ્યાસઃ આનંદદાયક ગુણથી પ્રશંસા યોગ્ય નમસ્યન્તઃ-સત્કાર કરીને વિદ્વાનજન જે સૂર્યસ્ય-સૂર્યલોકની ચિત્રા:-અદ્ભુત અનેક વર્ણ એતંગ્વા:-એ પ્રત્યક્ષ પદાર્થોની પ્રાપ્ત થઈને અશ્વાઃ-બહુ જ વ્યાપ્ત થનારા કિરણો હરિતઃ-દિશા અને દ્યાવાપૃથિવી-આકાશ અને ભૂમિને સદ્યઃ-શીઘ્ર પરિ, યન્તિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે. દિવઃ-તથા પ્રકાશિત કરવા યોગ્ય પદાર્થોના પૃષ્ઠમ્-પાછળના ભાગ પર આ, અસ્થુઃ-સમ્યક્ સ્થિર થાય છે, તેની વિદ્યાને ઉપકારમાં લાવો. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે, કે શ્રેષ્ઠ આપ્ત અધ્યાપકોની પાસે પહોંચીને તથા તેઓને નમસ્કાર કરીને, તેઓથી ગણિત આદિ ક્રિયા-કૌશલને ગ્રહણ કરીને, સૂર્ય સંબંધી વ્યવહારના અનુષ્ઠાનથી કાર્યની સિદ્ધિ કરે. (૩)

તત્સૂર્યસ્ય દેવત્વં તન્મહિત્વં મધ્યા કર્તોર્વિતં સં જંભાર ।

યદેદયુક્ત હરિતઃ સ્ધસ્થાદાદ્રાત્રી વાસસ્તનુતે સિમસ્મૈ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યદા-જ્યારે તત્-તે પ્રથમ મંત્રોક્ત સૂર્યસ્ય-સૂર્યમંડળની મધ્યા-મધ્યમાં વિતતમ્-વ્યાપ્ત બ્રહ્મ એ સૂર્યનો દેવત્વમ્-પ્રકાશની મહિત્વમ્-મહાનતાને કર્તોઃ-અને કામને સંજંભાર-સંહાર કરીને - અર્થાત્ પ્રલય સમયમાં સૂર્યના સમસ્ત વ્યવહારને હરી લે છે આત્-અને ફરી જ્યારે સૃષ્ટિને ઉત્પન્ન કરે છે, ત્યારે સૂર્યને અયુક્ત-યુક્ત અર્થાત્ ઉત્પન્ન કરીને નિયમ કક્ષામાં સ્થાપન કરે છે.

સૂર્ય સ્ધસ્થાત્-એક સ્થાનથી હરિતઃ-દિશાઓને પોતાના કિરણોથી વ્યાપ્ત થઈને સિમસ્મૈ-સમસ્ત લોકને માટે વાસઃ-પોતાના નિવાસનો તનુતે-વિસ્તાર કરીને તથા જે બ્રહ્મના તત્ત્વથી રાત્રી-રાત્રિ થાય છે, તત્, ઇત્-તે બ્રહ્મની ઉપાસના તમે કરો અને તેને જગતના કર્તા જાણો. (૪)

ભાવાર્થ : હે સજ્જનો ! જો કે સૂર્ય આકર્ષણ દ્વારા પૃથિવી આદિ પદાર્થોને ધારણ કરે છે, પૃથિવી આદિથી મહાન-મોટો પણ છે અને સર્વને પ્રકાશિત કરીને વ્યવહાર યુક્ત કરે છે, તેમ છતાં એ (સૂર્ય) પરમેશ્વર દ્વારા કરેલ ઉત્પાદન, ધારણ અને આકર્ષણ વિના ઉત્પન્ન થઈ શકતો નથી, ટકી શકતો નથી અને આકર્ષણ કરી શકતો નથી. એ ઈશ્વર વિના એવા લોકલોકાન્તરોનું નિર્માણ, ધારણ અને પ્રલય કરવામાં કોઈ સમર્થ બની શકતા નથી. (૪)

तन्मित्रस्य वरुणस्याभिचक्षे सूर्यो रूपं कृणुते द्यौरुपस्थे ।

अनन्तमन्यद्रुशदस्य पाजः कृष्णमन्यद्भरितः सं भरन्ति ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેના સામર્થ્યથી મિત્રસ્ય-પ્રાણ અને વસ્તુસ્ય-ઉદાનના અભિચક્ષે-સન્મુખ દર્શન કરવા માટે દ્યૌઃ-પ્રકાશની ઉપસ્થે-સમીપમાં રહેલ સૂર્યઃ-સૂર્યલોક અનેક પ્રકારના સ્વમ્-પ્રત્યક્ષ જોવા યોગ્ય રૂપને કૃણુતે-પ્રકટ કરે છે.

અસ્ય-એ સૂર્યના અન્યત્-સર્વથી જુદા સ્થાત્-લાલ અગ્નિ સમાન સળગતા પાજઃ-બળ તથા રાત્રિના અન્યત્-જુદા કૃષ્ણમ્-કાળા-કાળા અંધકાર રૂપને હરિતઃ-દિશા વિદિશા સં, ભરન્તિ-ધારણ કરે છે તત્-તે અનન્તમ્-દેશ, કાળ અને વસ્તુના વિભાગથી શૂન્ય-રહિત પરબ્રહ્મનું સેવન કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જેના સામર્થ્યથી રૂપ, દિવસ, રાત્રિની પ્રાપ્તિના નિમિત્તભૂત સૂર્ય થેત અને કાળા રૂપનો વિભાગ કર્તા થઈને દિવસ અને રાત્રિને ઉત્પન્ન કરે છે, તે અનન્ત બ્રહ્મને છોડીને કોઈ અન્યની ઉપાસના મનુષ્ય ન કરે, એમ વિદ્વાનોએ નિરંતર ઉપદેશ કરવો જોઈએ. (૫)

અદ્યા દૈવા ઉદિતા સૂર્યસ્ય નિરંહસઃ પિપૃતા નિરવદ્યાત્ ।

તન્નો મિત્રો વરુણો મામહન્તામદિતિઃ સિન્ધુઃ પૃથિવી ઉત દ્યૌઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે દેવાઃ-વિદ્વાનો ! સૂર્યસ્ય-સમસ્ત જગત્ના ઉત્પાદક જગદીશ્વરની ઉપાસનાથી ઉદિતા-ઉદય અર્થાત્ સર્વ રીતે ઉત્કર્ષની પ્રાપ્તિમાં પ્રકાશમાન થયેલા તમે નિઃ-નિરંતર અવદ્યાત-નિન્દિત અંહસઃ-પાપ આદિ કર્મોથી નિષ્પિપૃત-નિર્ગત થાઓ અર્થાત્ પોતાના આત્મા, મન અને શરીર આદિને દૂર રાખો તથા જેને મિત્રઃ-પ્રાણ, વસ્તુઃ-ઉદાન, અદિતિઃ-અન્તરિક્ષ, સિન્ધુઃ-સમુદ્ર, પૃથિવી-પૃથિવી ઉત-અને દ્યૌઃ-પ્રકાશ આદિ પદાર્થ સિદ્ધ કરે છે તત્-તે વસ્તુ વા કર્મ નઃ-અમને સુખ આપે છે, તેને તમે અદ્ય-આજ મામહન્તામ્-વારંવાર પ્રશંસ્તિ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પાપથી દૂર રહીને, ધર્મનું આચરણ કરીને તથા ઈશ્વરની ઉપાસના કરીને શાન્તિપૂર્વક ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષની પૂર્તિ કરવી જોઈએ. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સૂર્ય શબ્દથી ઈશ્વર અને સૂર્યલોકના અર્થનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૧૫)

સૂક્ત-૧૧૬

નાસત્યાભ્યાં બર્હિરિવ પ્ર વૃજ્ઞે સ્તોમૌં ઇયમ્યૈભ્રિયૈવ વાતઃ ।

યાવર્ભગાય વિમદાય જાયાં સૈનાજુવા ન્યૂહતૂ રથૈન ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! નાસત્યાભ્યામ્-સાચા પુણ્યાત્મા શિલ્પી = કારીગરે જોડેલ રથૈન-વિમાનાદિ

રથથી યૌ-જે સેનાજુવા-વેગપૂર્વક સેનાને ચલાવનારા બે સેનાપતિ અર્ભગાય-નાના બાળક વા વિમદાય-જેથી વિશેષ આનંદ થાય તે યુવાનને માટે જાયામ્-સ્ત્રીની સમાન પદાર્થોને ન્યૂહતુ:-નિરંતર એક દેશથી બીજા દેશમાં પહોંચાડે છે, તેમ સમ્યક્ યત્ન કરતા હું સ્તોમાન્-માર્ગને પાર કરવા માટે મોટા મોટા પૃથિવી, પર્વતો આદિને બર્હિરિવ-જેમ વૃદ્ધિ પામેલા જળને તેમ પ્ર, વૃજ્જે-છિન્ન-ભિન્ન કરતા તથા વાત:-વાયુ જેમ અધિયેવ-વાદળોને પ્રાપ્ત થાય, તેમ એક દેશમાં ડ્યર્મિ-જવું છું. (૧)

ભાવાર્થ : યાનો-વાહનોમાં પ્રયુક્ત પૃથિવીથી બનેલા પદાર્થો તથા જળ અને અગ્નિ આદિ (પદાર્થો) શું શું અદ્ભુત્ કાર્ય સિદ્ધ નથી કરી શકતા ? (૧)

વીહુપત્મભિરાશુહેમભિર્વા દેવાનાં વા જૂતિભિઃ શાશદાના ।

તદ્રાસંભો નાસત્યા સહસ્ત્રમાજા યમસ્ય પ્રધને જિગાય ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે શાશદાના-પદાર્થોને યથાયોગ છિન્ન-ભિન્ન કરનારા નાસત્યા-સત્ય સ્વભાવના સભાપતિ અને સેનાપતિ ? આપ જેમ વીહુપત્મભિઃ બળપૂર્વક પડતા અને આશુહેમભિઃ-શીઘ્ર પહોંચાડતા પદાર્થોથી વા-અથવા દેવાનામ્-વિદ્વાનોની જૂતિભિઃ-જેને પોતાની ઈચ્છાનુકૂળ મળેલ કાર્ય સિદ્ધ થાય તે યુદ્ધની ક્રિયાઓથી વા-નિશ્ચયપૂર્વક પોતાના કાર્યોને નિરંતર તર્ક-વિતર્કથી સિદ્ધ કરો છો, તેમ તત્-તે આચરણ કરતા રાસભઃ-કહેલ ઉપયોગને જે પ્રાપ્ત તે પૃથિવી આદિ પદાર્થ સમૂહની સમાન પુરુષ પ્રધને-સર્વોત્તમ ગુણ જેમાં પ્રાપ્ત થાય તે આજા-સંગ્રામમાં યમસ્ય-સમીપ આવેલ મૃત્યુની સમાન શત્રુઓના સહસ્ત્રમ્-અસંખ્ય વીરોને જિગાય-જીતે. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ અને જળ વનમાં અથવા પૃથિવીમાં પ્રવિષ્ટ થઈને, તેને બાળી નાખે છે અથવા કાપી નાખે છે, તેમ અત્યંત વેગથી ઉત્પન્ન કરનારા વિદ્યુત્ આદિ (પદાર્થો) સિદ્ધ કરેલા શસ્ત્રાસ્રોથી શત્રુઓને જીતવા જોઈએ. (૨)

તુગ્રો હ ભુજ્યુમ્શ્વિનોદમેઘે ર્યિં ન કશ્ચિન્મમૃવાં અવાહાઃ ।

તમૂહથુનોભિરાત્મન્વતીભિરન્તરિક્ષપ્રુદ્ધિરપોદકાભિઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-વાયુ અને વિદ્યુત્ સમાન બળવાન સેનાપતિઓ ! તમે તુગ્રઃ-શત્રુઓને મારનાર સેનાપતિ શત્રુજનને મારવા માટે જે ભુજ્યુમ્-રાજ્યની પાલના કરનાર વા સુખ ભોગનાર પુરુષને ઉદમેઘે-જેના જળોથી સંસાર સિંચવામાં આવે છે એ સમુદ્રમાં જેમ કશ્ચિત્-કોઈ મમૃવાન્-મરતા રયિમ્-ધનને છોડો, ન-તેમ અવાહાઃ-છોડે છે. તમ્-હ-તેને અપોદકાભિઃ-જેમાં જળ આવે - જાય છે. અન્તરિક્ષપ્રુદ્ધિઃ-અવકાશમાં ચાલતી આત્મન્વતીભિઃ-અને પ્રંશસાયુક્ત વિચારવાળા ક્રિયા કરવામાં નિપુણ જેમાં વિદ્યમાન છે, તે નૌભિઃ-નૌકાઓથી ઝહથુઃ-એક સ્થાનથી બીજા સ્થાનમાં પહોંચાડો. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ કોઈ મરણાસન્ન મનુષ્ય ધન, પુત્ર આદિના મોહથી વિરક્ત થઈને શરીરથી નીકળી

જાય છે, તેમ યુદ્ધના ઈચ્છુક વીરોએ અનુભવ કરવો જોઈએ.

જ્યારે મનુષ્ય બીજા દ્વીપોમાં સમુદ્રને પાર કરીને શત્રુ વિજય માટે જવા ઈચ્છે, ત્યારે દંઢ, વિશાળ અંદર જળ પ્રવેશ આદિ દોષોથી રહિત, આત્મીયજનો સાથે વિરાજિત-બેસી અને શસ્ત્રાસ્ત્ર આદિ સાધન સામગ્રીથી સુશોભિત નૌકાઓની સાથે જાય. (૩)

તિસ્રઃ ક્ષપસ્ત્રિરહાતિવ્રજદ્વિર્નાસંત્યા ભુજ્યુમૂહથુઃ પતઙ્ગૈઃ ।

સમુદ્રસ્ય ધન્વન્નાર્દસ્ય પારે ત્રિભી રથૈઃ શતપદ્મિઃ ષઠ્ઠૈઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-સત્યથી પરિપૂર્ણ સભાપતિ અને સેનાપતિ ! તમે બન્ને તિસ્રઃ-ત્રણ ક્ષપઃ-રાત્રિ અહા-ત્રણ દિવસ અતિવ્રજખિદ્ઃ-અત્યંત ચાલતા પદાર્થ પતઙ્ગૈઃ-જે ઘોડા સમાન વેગવાન છે તેની સાથે વર્તમાન ષઠ્ઠૈઃ-જેમાં શીઘ્ર લઈ જનારા છ કાળના ઘર વિદ્યમાન છે, તે શતપદ્મિઃ-સેંકડો પગોની સમાન વેગયુક્ત ત્રિભિઃ-ભૂમિ, અન્તરિક્ષ અને જળમાં ચાલનારા રથૈઃ-રમણીય, સુંદર, મનોહર વિમાન આદિ રથોથી ભુજ્યુમ્-રાજ્યનું પાલન કરનારાઓએ સમુદ્રસ્ય-જેમાં સારી રીતે પરમાણુરૂપ જળ જાય છે, તે અન્તરિક્ષ વા ધન્વન્-જેમાં બહુજ રેતી છે તે ભૂમિ વા આર્દસ્ય-કાદવયુક્ત જે સમુદ્ર તેઓની પારે-પાર ત્રિઃ-ત્રણવાર ઠ્ઠૈઃ-પહોંચાડો. (૪)

ભાવાર્થ : અહો ! મનુષ્ય જ્યારે ત્રણ દિવસ-રાતમાં સમુદ્ર આદિને પેલે પાર જશે અને આવશે, ત્યારે કોઈ પણ દુઃખ રહેશે ખરું ? કોઈ પણ નહિ. (૪)

અનારમ્ભણે તદવીરયેથામનાસ્થાને અગ્રમ્ભણે સમુદ્રે ।

યદશ્વિના ઠ્ઠૈઃ ભુજ્યુમસ્તં શતારિત્રાં નાવમાતસ્થિવાંસમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : અશ્વિનૌ-વિદ્યામાં વ્યાપ્ત થનારા સેનાપતિ અને સભાપતિ ! યત્-જે તમે બન્ને અનારમ્ભણે-જેમાં આવવા-જવાનો આરંભ, અનાસ્થાને-રહેવાનું સ્થાન અને અગ્રમ્ભણે-ગ્રહણ - પકડવાનું નથી, તે સમુદ્રે-અન્તરિક્ષ વા સાગરમાં શતારિત્રામ્-જેમાં જળનો તાગ લેવા સો હલેસાં વા સો થાંભલાઓ લાગેલા રહે છે અને નાવમ્-જેને બાળતા વા પાઠવતા-મોકલતા તે નાવને વિદ્યુત્ અને વાયુના વેગની સમાન ઠ્ઠૈઃ-વહાવો અને અસ્તમ્-જેમાં દુઃખોને દૂર કરે તેવા ઘરમાં આતસ્થિવાંસમ્-ધરેલ-રાખેલ ભુજ્યુમ્-ખાવા-પીવાના પદાર્થ સમૂહને અવીરયેથામ્-એક દેશથી બીજા દેશમાં લઈ જાઓ, તત્-તે તમારો અમે સદા સત્કાર કરીએ. (૫)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ આધાર રહિત માર્ગમાં વિમાન આદિથી જવું જોઈએ. જ્યાં યોદ્ધાઓને યથાવત્ સંરક્ષિત કરવામાં આવતા નથી, ત્યાં સુધી શત્રુને જીતી શકાતા નથી.

જેમાં સો અરિત્ર = હલેસાં હોય છે, એવી અતિ વિશાળ નૌકા બનાવી શકાય છે. આ મંત્રમાં 'શત' શબ્દ અસંખ્યાવાચી પણ લઈ શકાય છે. તેથી અતિ વિશાળ નૌકાનું વિધાન અહીં પ્રતીત થાય

છે. મનુષ્ય જેવડી (મોટી) નૌકા બનાવી શકે એવડી (મોટી) નૌકા બનાવવી જોઈએ. આ રીતે શીઘ્ર જવાના સ્વભાવવાળા મનુષ્ય ભૂમિ અને અન્તરિક્ષમાં જવા-આવવા યોગ્ય અન્ય યાન પણ બનાવે. (૫)

યમશ્વિના દ્વદથુઃ શ્વેતમશ્વમઘાશ્વાય શશ્વદિત્સ્વસ્તિ ।

તદ્દ્વાં દાત્રં મહિં કીર્ત્તેન્યં ભૂતૈદ્વો વાજી સદમિદ્ભવ્યો અર્યઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-જળ અને પૃથિવીની સમાન શીઘ્ર સુખદાયક સભા-સેનાપતિ ! તમે બન્ને અઘાશ્વાય-જે ન મારવા યોગ્ય અને શીઘ્ર પહોંચાડનાર છે, તે વૈશ્યને માટે યમ્-જે શ્વેતમ્-સારી રીતે વધેલ અશ્વમ્-માર્ગમાં વ્યાપ્ત પ્રકાશમાન વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિને દ્વદથુઃ-આપો છો તથા જેથી શશ્વત્-નિરંતર સ્વસ્તિ-સુખને પ્રાપ્ત કરીને વામ્-તમે બન્નેની કીર્ત્તેન્યમ્-કીર્તિને માટે મહિ-મોટા રાજપદ દાત્રમ્-અને આપવા યોગ્ય ઇત્-જ પદાર્થને ગ્રહણ કરી પૈદ્ધઃ-સુખથી લઈ જનાર વાજી-સમ્યક્ જ્ઞાનવાન પુરુષ તે સદમ્-જેમાં બેસે છે તે રથને રચીને અર્યઃ-વણિકજન (વાણીયા) હવ્યઃ-પદાર્થોને લેવા યોગ્ય ભૂત-થાય છે. તત્, ઇત્-તે પૂર્વોક્ત વિમાન આદિને બનાવો. (૬)

ભાવાર્થ : જે સભાપતિ અને સેનાપતિ વેપારીઓની રક્ષા કરીને તથા તેને યાનો-વાહનો પર બેસાડીને દ્વીપ-દ્વીપાન્તરમાં મોકલે, તે બન્ને લક્ષ્મી સંપન્ન બનીને સુખી થાય છે. (૬)

યુવં નરા સ્તુવતે પઙ્ગિયાય કક્ષીવતે અરદતં પુરન્ધિમ્ ।

કારોતરાચ્છ્રુફાદશ્વસ્ય વૃષ્ણઃ શતં કુમ્ભાં અસિઞ્ચતં સુરાયાઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે નરા-વિનયને પ્રાપ્ત સભાપતિ અને સેનાપતિ ! યુવમ્-તમે બન્ને પઙ્ગિયાય-પદોમાં પ્રસિદ્ધ થનારા કક્ષીવતે-પ્રશસ્ત શાસનયુક્ત અને સ્તુવતે-સ્તુતિ કરતા વિદ્યાર્થીને માટે પુરન્ધિમ્-બહુ જ પ્રકારની બુદ્ધિ અને સારા માર્ગને અરદતમ્-ચિંતાઓ તથા વૃષ્ણઃ-બળવાન અશ્વસ્ય-ઘોડાની સમાન અગ્નિ સંબંધી કલા ધરના કારોતરાત્-જેથી વ્યવહારોને કરીને શિલ્પીજનો તર્કની સાથે પાર થાય છે, તે શફાત્-ખરીની સમાન જળ સિંચવાના સ્થાનથી સુરાયાઃ-ખેંચેલા રસથી ભરેલ શતમ્-સો કુમ્ભાન્-ઘડાઓ લઈને અસિઞ્ચતમ્-સિંચન કરો. (૭)

ભાવાર્થ : આપ અધ્યાપક પુરુષ-યુગલ જે શાન્તિ આદિ ગુણોથી યુક્ત સજ્જન વિદ્યાર્થીને માટે, શિલ્પકાર્ય-હેતુ ઉસ્તક્રિયાથી યુક્ત બુદ્ધિને ઉત્પન્ન કરે છે, તે (વિદ્યાર્થી) ઉત્તમ શિલ્પી બનીને યાનોની રચના કરી શકે છે.

શિલ્પીજન જે યાનમાં જળ સંસ્થાપિત કરીને અને તેની નીચે અગ્નિ પ્રજ્વલિત કરીને (જળ) વરાળથી યાન ચલાવે છે તે (યાન)થી તેઓ - જેમ કોઈ ઘોડાઓથી તેમ - વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોથી શીઘ્ર અન્ય દેશમાં જઈ શકે છે. (૭)

હિમેનાગ્નિં ઘ્નંસમવારયેથાં પિતૃમતીમૂર્જમસ્મા અધત્તમ્ ।

ऋषीसे अत्रिमाश्विनावनीतमुन्निन्यथुः सर्वगणं स्वस्ति ॥ ८ ॥

पदार्थ : હે અશ્વિના-યજ્ઞાનુષ્ઠાન કરનારા પુરુષો ! તમે બન્ને હિમેન-શીતલ જળથી અગ્નિમ્-અગ્નિ અને ઘ્નસમ્-રાત્રિની સાથે દિવસને અવાસ્યેથામ્-નિર્વારો અર્થાત્ વિનાવો અસ્મૈ-એ માટે પિતુમતીમ્-પ્રશંસિત અન્નયુક્ત ઋર્જમ્-બળ રૂપી નીતિને અધત્તમ્-પુષ્ટ કરો અને ઋષીસે-દુઃખથી જેની આભા જતી રહી તે વ્યવહારમાં અત્રિમ્-ભોગવનારા અવનીતમ્-પશ્ચાત્ પ્રાપ્ત કરીને સર્વગણમ્-જેમાં સમસ્ત ઉત્તમ પદાર્થોનો સમૂહ છે, તે સ્વસ્તિ-સુખની ઉન્નિન્યથુઃ-ઉન્નતિ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ આ સંસારના ઉપકાર માટે યજ્ઞ શોધિત જળથી તથા વનોના સંરક્ષણથી પરિતાપ = ઉષ્ણતાનું નિવારણ કરવું જોઈએ. સારી રીતે તૈયાર કરેલ અન્નથી બળ ઉત્પન્ન કરવું જોઈએ અને યજ્ઞના અનુષ્ઠાનથી ત્રણે પ્રકારના દુઃખોનું નિવારણ કરીને સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૮)

પરાવતં નાસત્યાદેથામુચ્ચાબુધનં ચક્રથુર્જિહ્વાબારમ્ ।

ક્ષરન્નાપો ન પાયનાય રાયે સહસ્ત્રાય તૃષ્યતે ગોતમસ્ય ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-અગ્નિ અને વાયુ સમાન વર્તમાન સભાપતિ અને સેનાધિપતિ ! તમે બન્ને જિહ્વારમ્-જેની કુટિલ વરણ અને ઉચ્ચાબુધનમ્-તેથી જેમાં ઊંચું અન્તરિક્ષ અર્થાત્ અવકાશ છે તે રથ આદિને અવતમ્-રાખો અને અનેક કામોની સિદ્ધિ ચક્રથુઃ-કરો અને તેને યથાયોગ્ય વ્યવહારમાં પરા, અનુદેથામ્-પ્રેરિત કરો, જે ગોતમસ્ય-અત્યંત સ્તુતિ કરનારાઓના રથ આદિ ઉપર તૃષ્યતે-તરસ્યાને માટે પાયનાય-પીવા માટે આપઃ-વરાળ રૂપ જન જેમ ક્ષરન્-પડે છે, ન-તેમ સહસ્ત્રાય-અસંખ્ય રાયે-ધનને માટે અર્થાત્ ધન આપવા માટે પ્રસિદ્ધ થાય છે, તેવા રથ આદિને બનાવો. (૯)

ભાવાર્થ : શિલ્પીઓ વિમાન આદિ યાનોમાં પ્રચુર માત્રામાં મધુર જળ રાખવા માટે કુંડ બનાવીને અગ્નિથી સંચાલિત કરીને, તેમાં ઉપકરણ અને સામગ્રી ભરીને, અન્ય દેશમાં જઈને તથા અસંખ્ય ધન પ્રાપ્ત કરીને પરોપકાર કરવો જોઈએ. (૯)

જુજુસ્મૌ નાસત્યોત વૃત્રિં પ્રામુઞ્ચતં દ્રાપિમિવ ચ્યવાનાત્ ।

પ્રાતિરતં જહિતસ્યાયુર્દસ્ત્રાદિત્પતિમકૃણુતં ક્વીનામ્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-રાજસભા અને ધર્મસભાના પતિ ! તમે બન્ને ચ્યવાનાત્-પલાયમાનના દ્રાપિમિવ-કવચની સમાન વૃત્રિમ્-સમ્યક્ વિભાગ કરનારાને પ્રામુઞ્ચતમ્-સારી રીતે દુઃખથી પૃથક્ કરો, ઉત્-અને જુજુસ્મઃ-વૃદ્ધ વિદ્યાવાન શાસ્ત્રજ્ઞ અધ્યાપકથી ક્વીનામ્-યુવાનીથી તેજ ધારિણી બ્રહ્મચારિણી કન્યાઓને શિક્ષા અકૃણુતમ્-કરો, આત્-તદનન્તર નિયત સમયની પ્રાપ્તિમાં તેમાંથી એક-એક ઇત્-જ ના એક એક પતિમ્-રક્ષક પતિ કરો.

હે દસ્ત્રા-વૈદ્યોની સમાન પ્રાણ આપનારા ! જહિતસ્ય-ત્યાગીની આયુઃ-જીવનને પ્રાતિસ્તમ્-સારી રીતે પાર કરીને પહોંચાડો. (૧૦)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષો અને ઉપદેશકોએ દાતાઓનું દુઃખ નષ્ટ કરવું જોઈએ, વિદ્યામાં પ્રવૃત્ત કુમાર અને કુમારીઓની રક્ષા કરીને, તેઓને વિદ્યા અને સુશિક્ષા અપાવવી જોઈએ. બાલ્યાવસ્થા અર્થાત્ પચ્ચીસમાં વર્ષ પૂર્વ પુરુષનાં અને સોળમાં વર્ષ પૂર્વ સ્ત્રીઓના વિવાહનું નિવારણ કરીને - રોકીને, ત્યાર પછી અડતાલીસમાં વર્ષ સુધી પુરુષનો તથા ચોવીસમાં વર્ષ સુધી સ્ત્રીનો સ્વયંવર વિવાહ કરાવીને સર્વના આત્મા અને શરીરનાં બળની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૦)

તદ્વાં નરા શંસ્યં રાધ્યં ચાભિષ્ટિમન્નાસત્યા વરૂથમ્ ।

યદ્વિદ્વાંસાં નિધિમિવાપંગૂઢમુદ્દર્શતાદૂપથુર્વન્દનાય ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે નરા:-ધર્મની પ્રાપ્તિ, નાસત્યા-અને સદા સત્યનું પાલન તથા વિદ્વાંસા-સમસ્ત વિદ્યાના જ્ઞાતા ધર્મરાજ, સભાપતિ વિદ્વાનો ! વામ્-તમારા બન્નેના યત્-જે શંસ્યમ્-પ્રશંસનીય ચ-અને રાધ્યમ્-સિદ્ધ કરવા યોગ્ય, અભિષ્ટિમત્-જેમાં ઈચ્છિત સુખ છે, વસ્થમ્-જે સ્વીકાર કરવા યોગ્ય, અપગૂઢમ્-જેમાં ગુપ્ત-ધન અલગ થઈ ગયું એવું જે પૂર્વોક્ત ગૃહાશ્રમ સંબંધી કર્મ છે. તત્-તેને નિધિમિવ-ધનના ભંડાર ની સમાન દર્શતાત્-દેખાવા રૂપથી વન્દનાય-સર્વત્રથી સત્કાર કરવા યોગ્ય સંતાન અને પ્રશંસાને માટે ઝત્, ઋપથુઃ-ઊંચ્ય શ્રેણીને પહોંચાડો અર્થાત્ ઉન્નતિ કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો વિદ્યારૂપી ભંડારથી વધીને સુખદાયક ધન તમે બીજા કોઈને જાણો નહિ. એ કર્મ વિના ઈચ્છિત સંતાન અને સુખ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી અને સમીક્ષા (સત્યાસત્યના વિચાર) વિના વિદ્યાની વૃદ્ધિ થઈ શકતી નથી, એમ જાણો. (૧૧)

તદ્વાં નરા સ્નયે દંસં ડગ્રમાવિષ્કૃણોમિ તન્યતુર્ન વૃષ્ટિમ્ ।

દ્ધ્યઙ્હ યન્મધ્વાર્થર્વણો વામર્વસ્ય શીર્ષ્ણા પ્ર યદીમુવાર્ચ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે નરા-સુનીતિયુક્ત સભાપતિ અને સેનાપતિ ! વામ્-તમે બન્નેથી દધ્યઙ્-વિદ્યા ધર્મને ધારણ કરનારાઓનો આદર કરનાર આર્થર્વણ:-રક્ષા કરનારનું સંતાન હું સ્નયે-સુખનું સમ્યક્ સેવન કરવા માટે જેમ તન્યતુઃ-વિદ્યુત્ વૃષ્ટિમ્-વર્ષાને, ન-તેમ યત્-જે ડગ્રમ્-ઉત્કૃષ્ટ દંસ:-કર્મને આવિષ્કૃણોમિ-પ્રકટ કરું છું, જે યત્-વિદ્વાન વામ્-તમારા બન્નેને માટે અને મારા માટે અશ્વસ્ય-શીઘ્ર ગમનકારક પદાર્થના શીર્ષ્ણા-શિરની સમાન ઉત્તમ કામથી મધુ-મધુર ઈમ્-શાસ્ત્રના બોધને હ-પ્રોવાચ-કહે તત્-તેને તમે બન્ને લોકમાં નિરંતર પ્રકટ કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ વર્ષા વિના કોઈને સુખ થતું નથી, તેમ વિદ્વાન અને વિદ્યા વિના સુખ તથા બુદ્ધિની વૃદ્ધિ અને તેના વિના ધર્મ આદિ પદાર્થ સિદ્ધ થતા નથી. તેથી એ કર્મો મનુષ્યોએ સદા કરવા જોઈએ. (૧૨)

અર્જોહવીતાસત્યા કરા વાં મહે યામન્પુરુભુજા પુરન્ધિઃ ।

શ્રુતં તચ્છાસુરિવ વધ્નિમત્યા હિરંણ્યહસ્તમશ્વિનાવદત્તમ્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-અસત્ય અજ્ઞાનના વિનાશથી સત્યનો પ્રકાશ કરનાર, પુસ્ત્રુજા-બહુજ આનંદોને

ભોગવવા તથા અશ્વિનો-શુભગુણ અને વિદ્યામાં વ્યાપ્ત થનારા અધ્યાપકો ! જે પુરન્ધિ:-બહુ વિદ્યાયુક્ત વિદ્વાન વધિમત્યા:-જેની પ્રશંસિત વૃદ્ધિ છે, તે ઉત્તમ સ્ત્રીના કરા-કર્મ કરતા બે પુત્રોને મહે-અત્યંત યામન્- સુખ ભોગવવા માટે અજોહવીત્-નિરંતર ગ્રહણ કરે; અને વામ્-તમારા બન્નેના જે શ્રુતમ્-સાંભળેલા તત્-તેના શાસુરિવ-જેમ પૂર્ણ વિદ્યા ભણાવનારથી શિષ્ય ગ્રહણ કરે, તેમ નિરંતર ગ્રહણ કરે, તેઓ તમે બન્ને વિદ્યા ઈચ્છુક સર્વ જનોને માટે જે એમ છે કે હિરણ્યહસ્તમ્-જેના હાથમાં સુવર્ણ આવે છે તે ભણેલા, શીખેલા બોધને અદત્તમ્-નિરંતર આપો. (૧૩)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ વિદ્વાન પુરુષ વિદ્યુષી સ્ત્રીનું પાણિગ્રહણ-વિવાહ કરીને ગૃહાશ્રમમાં વ્યવહારને સિદ્ધ કરે છે, તેમ આપ બુદ્ધિમાન વિદ્યાર્થીઓનો સંગ્રહ કરીને, વિદ્વાનો પૂર્ણ પ્રચાર કરો અને જેમ ભણનાર-વિદ્યાર્થી, અધ્યાપકથી વિદ્વાનો સંગ્રહ કરીને આનંદિત થાય છે, તેમ વિદ્વાન સ્ત્રી-પુરુષ પોતાનાં તથા અન્યોનાં સંતાનોને સુશિક્ષાપૂર્વક વિદ્યા પ્રદાન કરીને પ્રસન્ન થાય. (૧૩)

આસ્નો વૃકસ્ય વર્તિકામ્-ભીકે યુવં નરા નાસત્યામુમુક્તમ્ ।

ઉતો કૃવિં પુરુભુજા યુવં હ કૃપમાણમકૃણુતં વિચક્ષે ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : પુસ્ત્રુજા-બહુજનોને સુખનો ભોગ કરાવનાર નાસત્યા-અસત્યથી પૃથક્ રહેનાર નરા-અને સુખોને પહોંચાડનારા સભાપતિ અને સેનાપતિઓ ! યુવમ્-તમે બન્ને અભીકે-ઈચ્છિત વ્યવહારમાં વૃકસ્ય-વરુના આસ્ર:-મુખથી વર્તિકામ્-બટેર પક્ષીની સમાન સર્વ મનુષ્યોને અવિદ્યાજન્ય દુઃખથી અમુમુક્તમ્-છોડાવો; ઉતો-અને હ-પણ યુવમ્-તમે બન્ને સર્વ વિદ્યાઓને વિચક્ષે-વિખ્યાત કરવા માટે કૃપમાણમ્-કૃપા કરનારા કવિમ્-વિદ્યાના પારંગત પુરુષને અકૃણુતમ્-સિદ્ધ કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, સુખ પરિણામવાળા અને સર્વના અભિલાષિત વિદ્યા ગ્રહણ નામક વ્યવહારમાં સર્વ જનોને પ્રવૃત્ત કરીને, દુઃખ રૂપી ફળ આપનાર અન્યાયયુક્ત કર્મથી તેને દૂર કરીને તથા સર્વ પ્રાણીઓની ઉપર દયા કરીને તેઓને સુખી કરવા જોઈએ. (૧૪)

ચરિત્રં હિ વેરિવાચ્છેદિ પર્ણમાજા ખેલસ્ય પરિતમ્યાયામ્ ।

સદ્યો જઙ્ગામાયસીં વિશ્પલાયૈ ધને હિતે સર્તવે પ્રત્યધત્તમ્ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ અને સેનાપતિ ! તમે બન્નેથી આજા-સંગ્રામમાં પરિતમ્યાયામ્-રાત્રિમાં ખેલસ્ય-શત્રુના ખંડના ચરિત્રમ્-સ્વાભાવિક ચરિત્ર અર્થાત્ શત્રુજનોની જુદી-જુદી બનેલી ટુકડીઓની ચાલાકીઓ વેરિવ-ઉડતા પંખીની જેમ પર્ણમ્-પંખો કાપવામાં આવે, તેમ સદ્યઃ-શીઘ્ર અચ્છેદિ-છિન્ન-ભિન્ન કરવામાં આવે તથા તમે હિતે-સુખવર્ધક ધને-સુવર્ણ આદિ ધનને નિમિત્ત વિશ્પલાયૈ-પ્રજાજનોને સુખદાયક નીતિને માટે આયસીમ્-લોખંડના વિકારથી બનેલી જઙ્ગામ્-જેથી મારે છે તેની ખાલને સર્તવે-શત્રુઓ પર જવા અર્થાત્ ચડાઈ કરવા માટે હિ-જે પ્રત્યધત્તમ્-પ્રત્યક્ષ ધારણ કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : પ્રજાપાલનમાં સંલગ્ન શ્રેષ્ઠ રાજા આદિ જનોએ પક્ષીની પાંખોની સમાન દુષ્ટોના પગોને યુદ્ધમાં કાપી નાખવા જોઈએ. શસ્ત્રાસ્રોને ધારણ કરીને પ્રજાઓનું પાલન કરવું જોઈએ. કારણ કે પ્રજાથી

જે 'કર' લેવામાં આવે છે, તેનો પ્રત્યુપકાર 'તેઓની રક્ષા કરવી' એ જ છે. એમ સમજવું જોઈએ. (૧૫)

શૃતં મેષાન્વૃક્ચે ચક્ષદાનમૃજાશ્વં તં પિતાન્ધં ચકાર।

તસ્મા અક્ષી નાસત્યા વિચક્ષુ આર્ધત્તં દસ્રા ભિષજાવનૃવન્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : જે વૃક્ચે-વૃકી અર્થાત્ ચોરની સ્ત્રીને માટે શૃતમ્-સેંકડો મેષાન્-ઈર્ષા કરનારાને આપવા વા જે એવો ઉપદેશ કરવો અને જે ચોરોમાં સરળ ઘોડાવાળા છે તમ્-તે ચક્ષદાનમ્-સ્પષ્ટ ઉપદેશ કરનાર વા ત્રજ્ઞાશ્વમ્-સરળ ઘોડાવાળાને પિતા પ્રજાજનોનું પાલન કરનાર રાજા જેમ અન્ધમ્-આંધળો દુઃખી થાય, તેમ દુઃખી ચકાર-કરે.

હે નાસત્યા-સત્યની સાથે વર્તાવ રાખનાર અને દસ્રા-રોગનાશક ધર્મ રાજ અને સભાપતિ ભિષજૌ-વૈદ્યજનોની સમાન વર્તાવ રાખનારા ! તમે બન્ને જે આજ્ઞાની, કુમાર્ગામી, વ્યભિચારી અને રોગી છે, તસ્મૈ-તે અનર્વન્-અજ્ઞાનીને માટે વિચક્ષે-અનેક વિધ જોવાને અક્ષી-વ્યવહાર અને પરમાર્થ વિદ્યારૂપી નેત્રોને આ, અધત્તમ્-સારી રીતે પોઢી (= પુષ્ટ) કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : સભાપતિ સહિત રાજા હિંસક, ચોર અને લંપટ મનુષ્યોને કારાગૃહમાં અંધ સમાન બનાવીને તથા ઉપદેશ અને વ્યાવહારિક શિક્ષા દ્વારા તેને ધાર્મિક બનાવીને, ધર્મ અને વિદ્યાનો પ્રેમી બનાવે તથા પથ્ય અને ઔષધિ પ્રદાન દ્વારા નીરોગી કરે. (૧૬)

આ વાં રથં દુહિતા સૂર્યસ્ય કાર્ષ્ણેવાતિષ્ઠદર્વીતા જયન્તી।

વિશ્વે દેવા અન્વમન્યન્ત હૃદ્ધિઃ સમું શ્રિયા નાસત્યા સચેથે ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-સમ્યક્ વિજ્ઞાનનો પ્રકાશ કરનારા સભા અને સેનાપતિજનો ! સૂર્યસ્ય-સૂર્યની દુહિતા-જે ઉપદેશમાં હિત કરનારી કન્યા જેવી કાન્તિ પ્રભાતવેળા અને કાર્ષ્ણેવ-કાષ્ઠ આદિ પદાર્થોની સમાન વામ્-તમારી જયન્તી-શત્રુઓને જીતનારી સેના અર્વતા-ઘોડા જોડેલા રથમ્-રથને આ, અતિષ્ઠત્-સ્થિત થાય અર્થાત્ રથ પર સ્થિત થાય વા જેને વિશ્વે-સમસ્ત દેવાઃ-વિદ્વાનો હૃદ્ધિઃ-પોતાનાં ચિત્તથી અનુ, અમન્યન્ત-અનુમાન કરે તેને ડ-જો શ્રિયા-શુભ લક્ષણયુક્ત લક્ષ્મી અર્થાત્ શ્રેષ્ઠ ધનથી યુક્ત સેનાને તમે સં, સચેથે-સમ્યક્ એકત્ર કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! સમસ્ત વિદ્વાનો દ્વારા પ્રશંસિત અને શસ્ત્રાસ્ત્ર, વાહન તથા ઉપકરણ આદિથી યુક્ત લક્ષ્મી સંપન્ન ધર્મયુક્ત ન્યાયને પ્રકાશિત કરો. (૧૭)

યદયાતં દિવોદાસાય વૃત્તિર્ભરદ્વાજાયાશ્વિના હ્યન્તા।

રેવદુવાહ સચનો રથો વાં વૃષભશ્ચ શિંશુમારશ્ચ યુક્તા ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે હ્યન્તા-ચાલનાર, યુક્તા-યોગાભ્યાસ કરનાર અને અશ્વિના-શત્રુસેના વ્યાપ્ત થનાર સભા અને સેનાના પતિઓ ! તમે બન્ને દિવોદાસાય-ન્યાય અને વિદ્યા પ્રકાશના દાતા ભરદ્વાજાય-

જેના પુષ્ટ થઈને પુષ્ટિમાન વેગવાળા યોદ્ધા છે, તેને માટે **યત્-જે વર્તિ:-**વર્તમાન **રેવત્-અત્યંત** ધનયુક્ત ગૃહ આદિ વસ્તુને **અયાતામ્-પ્રાપ્ત** થાઓ **ચ-અને** જે **વામ્-તમારા** બન્નેના **વૃષભ:-**વિજયની વર્ષા કરનાર **શિશુમાર:-**જેથી ધર્મનું ઉલ્લંઘન કરનારનો વિનાશ કરે છે, જે **સચન:-**સમસ્ત પોતાની સેનાના અંગોથી યુક્ત **રથ:-**મનોહર વિમાનાદિ રથ તેમને ઈચ્છિત સ્થાનમાં **ઝવાહ-પહોંચાડે** છે, તેની **ચ-**તથા ઉક્ત ગૃહ આદિની રક્ષા કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ રાજપુરુષોએ સર્વ પોતાની સામગ્રી ન્યાયપૂર્વક રાજ્યપાલનના માટે જ સંગ્રહિત કરવી જોઈએ. (૧૮)

રયિં સુક્ષત્રં સ્વપત્યમાયુઃ સુવીર્યં નાસત્યા વહન્તા ।

આ જહ્વાવીં સમનસોપ વાજૈસ્ત્રિરહ્નો ભાગં દધતીમયાતમ્ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે **સમનસા-સમાન** વિજ્ઞાનયુક્ત, **વહન્તા-શ્રેષ્ઠ** સુખને પ્રાપ્ત થયેલ, **નાસત્યા-સત્ય** ધર્મપાલક સેનાપતિ અને સભાપતિ ! તમે બન્ને સનાતન ન્યાયના સેવનથી **રયિમ્-ધન** સમૂહ, **સુક્ષત્રમ્-શ્રેષ્ઠ** રાજ્ય, **સ્વપત્યમ્-શ્રેષ્ઠ** સંતાન, **આયુઃ-દીર્ઘાયુ** **સુવીર્ય-શ્રેષ્ઠ** પરાક્રમને તથા **વાજૈ:-**જ્ઞાન વા વેગયુક્ત નોકરોની સાથે વર્તમાન **જહ્વાવીમ્-છોડવા** યોગ્ય શત્રુઓની સેનાની વિરોધી એ સેનાને તથા **અહ્ન:-**દિવસના **ભાગમ્-સેવન** યોગ્ય વિભાગ અર્થાત્ સમયને તથા **ત્રિ:-**ત્રણવાર **દધતીમ્-ધારણ** કરતી સેનાની **ઉપ, આ, આયાતમ્-સમીપ** સમ્યક્ પ્રાપ્ત થાઓ. (૧૯)

ભાવાર્થ : વિદ્યા, સત્ય અને ન્યાયના સેવન વિના કોઈપણ મનુષ્ય એ ધન આદિને પ્રાપ્ત કરીને તથા રાખીને સુખ પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી, તેથી ધર્મનાં સેવનથી જ રાજ્ય આદિ પ્રાપ્ત કરી શકાય છે. (૧૯)

પરિવિષ્ટં જાહુષં વિશ્વતઃસીં સુગેભિર્નક્તમૂહથૂ રજોભિઃ ।

વિભિન્દુનાં નાસત્યા રથેન વિ પર્વતાં અજરયૂ અયાતમ્ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે **નાસત્યા-સત્ય** ધર્મનું પાલન કરનારા સભા અને સેનાધીશો ! તમે બન્ને જેમ **અજરયૂ-જીર્ણતા** આદિ દોષોથી રહિત સૂર્ય અને ચંદ્રમા **સુગેભિઃ-સુખ** ગમન માર્ગ અને **રજોભિઃ-લોકોની** સાથે **નક્તમ્-રાત્રિ** અને **પર્વતાન્-મેઘ** વા પહાડોને યથાયોગ્ય વ્યવહારોમાં લાવે છે, તેમ **વિભિન્દુના-વિવિધ** રીતે ઈન્ન-ભિન્ન કરનારા **રથેન-રથથી** સેનાને યથાયોગ્ય કાર્યમાં **ઝહથુઃ-પહોંચાડો,** **વિશ્વતઃ-સર્વત્રથી** **સીમ્-મર્યાદાને** **પરિવિષ્ટમ્-વ્યાપ્ત** થાઓ, **જાહુષમ્-પ્રાપ્ત** થવા યોગ્ય નગર આદિના રાજ્યને પ્રાપ્ત કરીને **પર્વતની** સમાન શત્રુઓને **વિ, અયાતમ્-વિભેદ** કરીને પ્રાપ્ત થાઓ. (૨૦)

ભાવાર્થ : જેમ રાજસભાના સદસ્યો ધર્મયુક્ત માર્ગોથી (ઉપાયોથી) રાજ્ય પ્રાપ્ત કરીને કિલાઓ તથા પર્વત આદિમાં પણ રહેનારા શત્રુઓને વશમાં કરીને પોતાના પ્રભાવને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ સૂર્ય અને ચંદ્રમા પૃથિવી પર સ્થિત પદાર્થોને પ્રકાશિત કરે છે. જેમ એ (સૂર્ય અને ચંદ્રમા) ઉપસ્થિત

ન રહેતા અંધકાર વ્યાપી જાય છે, તેમ એ (રાજસભાસદો)ના અભાવમાં અન્યાય રૂપ અંધકાર પ્રવૃત્ત થઈ જાય છે. (૨૦)

एकस्या वस्तोरावतं रणाय वशमश्विना सनये सहस्रा ।

निरहतं दुच्छना इन्द्रवन्ता पृथुश्रवसो वृषणावरातीः ॥ २१ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણૌ-શસ્ત્રાસ્ત્રની વર્ષા કરનારા, ઇન્દ્રવન્તા-બહુ જ ઐશ્વર્યયુક્ત, અશ્વિના-સૂર્ય અને ચંદ્રમાની સમાન સભા અને સેનાના અધીશો દુચ્છના:-જેથી સુખ નીકળી ગયેલ તે શત્રુ સેનાઓને જેમ અંધકાર અને મેઘોની સૂર્ય જીતે છે, તેમ એકસ્યા:-એક સેનાના રણાય-સંગ્રામને માટે જે મોકલવી છે તેથી વસ્તો:-એક દિવસની વચ્ચે આવતમ્-પોતાની સેનાનો વિજયને ઈચ્છો અને તે સેનાઓને પોતાના વશમ્-વશમાં કરીને સહસ્રા-સનયે હજારો ધનાદિ પદાર્થો ભોગવવા માટે પૃથુશ્રવસ:-જેના પુષ્કળ અન્ન આદિ પદાર્થ છે અને અરાતી:-જે કોઈને સુખ ન આપતી તે શત્રુ સેનાઓને નિરહતમ્-નિરંતર મારો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અને ચંદ્રમાના ઉદયથી અંધકાર દૂર થતાં સર્વ પ્રાણીઓ આનંદિત થાય છે, તેમ ધર્મયુક્ત વ્યવહારના કારણે શત્રુઓ અને અધર્મ દૂર થતાં ધાર્મિકજનો સુરાજ્યમાં સુખી થાય છે. (૨૧)

शरस्य चिदारचत्कस्यावतादा नीचादुच्चा चक्रथुः पातवे वाः ।

शयवे चिन्नासत्या शचीभिर्जसुरये स्तर्यं पिष्यथुर्गाम् ॥ २२ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-સત્ય વિજ્ઞાનયુક્ત સભા અને સેનાધીશો ! તમે બન્ને શચીભિ:-પોતાની બુદ્ધિઓથી શરસ્ય-મારનારની તરફથી આવેલ નીચાત્-નીચ કામોનું સેવન કરીને અવતાત્-હિંસા કરનારાથી ચિત્-અને આર્ચત્કસ્ય-અન્યોની પ્રશંસા કરનાર વા સત્કાર કરીને શિષ્ટજનની તરફથી આવેલ ઉચ્ચા-ઉત્તમ કર્મનું સેવન કરીને રક્ષા કરનારાઓથી પ્રજાજનોના પાતવે-પાલન કરીને રક્ષા કરનારાઓથી પ્રજાજનોના પાતવે-પાલન માટે બળને આ, ચક્રથુ:-સારી રીતે કરો; ચિત્-અને શયવે-સૂતેલા અને જસુરયે-હિંસક જનોને માટે સ્તર્યમ્-જે નૌકા આદિમાં સારી છે, તે વા:-જળ અને ગામ્-પૃથિવીને પિષ્યસુ:-વધારો. (૨૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે શત્રુઓના નાશક અને મિત્રોના પૂજક (= પ્રશંસક) મનુષ્યોનો સત્કાર કરો અને તેઓને ભૂમિ પ્રદાન કરો.

જેમ વાયુ અને સૂર્ય ભૂમિ અને વૃક્ષોથી જળ ખેંચીને તથા તેને વરસાવીને સર્વની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ તમે શ્રેષ્ઠ કર્મોથી સંસારની વૃદ્ધિ કરો. (૨૨)

अवस्यते स्तुवते कृष्णियाय ऋजूयते नासत्या शचीभिः ।

पुंशं न नृष्टमिव दर्शनाय विष्णाव्वं ददथुर्विश्वकाय ॥ २३ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-અસત્યનો ત્યાગ અને સત્યનું ગ્રહણ કરનારા અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! તમે બન્ને શ્રીચીમ્-સારી શિક્ષા કરનારી વાણીઓથી અવસ્યતે-પોતાની રક્ષા અને સ્તુવતે-ધર્મને ઈચ્છીને રક્ષાયતે-સરળ સ્વભાવથી વર્તનાર કૃષ્ણિયાય-આકર્ષણને યોગ્ય અર્થાત્ બુદ્ધિ જેને ચાહે છે તે વિશ્વકાય-સંસાર પર દયા કરનારા દર્શનાય-ધર્મ-અધર્મને જોનારા મનુષ્યને માટે પશુમ્, ન-જેમ પશુઓને પ્રત્યક્ષ બતાવે તેમ અને જેમ નષ્ટમિવ-ખોવાયેલી વસ્તુને શોધીને બતાવે, તેમ વિષ્ણાવ્વમ્-વિદ્યામાં રમણ કરતા વિદ્વાનોને જે બોધ પ્રાપ્ત થાય છે, તેને દદથુઃ-આપો. (૨૩)

ભાવાર્થ : આપ ઉપદેશક અને અધ્યાપકજન-જેમ (કોઈ) પ્રત્યક્ષ ગાય આદિને અથવા અદ્રષ્ટ વસ્તુને બતાવીને તેનો સાક્ષાત્ કરાવે છે - તેમ શમાદિ ગુણોથી યુક્ત બુદ્ધિમાન શ્રોતાઓ અને અધ્યેતાઓ (= ભણનારાઓ) ને પૃથિવીથી લઈને પરમેશ્વર સુધીની, અંગો અને ઉપાંગો સહિત વિદ્યાઓ સાક્ષાત્ કરાવવી. એ વિષયમાં તેઓ કપટ, આળસ આદિ નિંદિત કર્મ કદી પણ કરે નહિ. (૨૩)

दश रात्रीरशिवेना नव द्यूनवर्नद्धं शनथितमप्स्वन्तः ।

विप्रुतं रेभमुदनि प्रवृक्तमुन्निन्यथुः सोममिव स्रुवेण ॥ २४ ॥

પદાર્થ : નાસત્યા-અસત્યનો ત્યાગ અને સત્યનું ગ્રહણ કરનાર અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! તમે બન્ને જેમ શ્રીચીમ્-સારી શિક્ષા કરનારી વાણીઓથી અશિવેન-અમંગલ કરનારા યુદ્ધની સાથે વર્તમાન શિલ્પીજન અવનદ્ધમ્-નીચેથી બાંધેલી, શનથિતમ્-ઠીલી કરેલી, ઉદનિ-જળમાં વિપ્રુતમ્-ચલાવેલી પ્રવૃક્તમ્-અને ગમે ત્યાં જતી રોકીને નૌકા આદિને દશ-દશ રાત્રીઃ-રાત્રિ નવ-નવ દ્યૂન-દિવસો સુધી અપ્સુ-જળમાં અન્તઃ-અંદર સ્થિર કરીને પછી ઉપર પહોંચાડવી એ રીતે અને જેમ સ્રુવેણ-ઘી વગેરેને ઉઠાવવાનું સાધન સ્રુવાથી સોમમિવ-સોમલતાદિ ઔષધિઓને ઉઠાવે છે, તેમ રેભમ્-સર્વના પ્રશંસકો શ્રેષ્ઠ સજ્જનોની ઉન્નિન્યથુઃ-ઉન્નતિ કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ :હે મનુષ્યો ! જેમ જળની અંદર નૌકા આદિમાં બેઠેલી સેનાઓ શત્રુઓ દ્વારા મારી શકાતી નથી, તેમ વિદ્યા, સત્ય અને ધર્મોપદેશમાં સ્થાપિત જનો અવિદ્યાથી ઉત્પન્ન દુઃખથી પીડિત થતાં નથી.

જેમ ઉચિત સમય શિલ્પીજન નૌકા આદિને જળમાં ઈતસ્તતઃ આમ-તેમ લઈ જઈને શત્રુઓને જીતે છે, તેમ વિદ્યાદાનથી તમે અવિદ્યાને જીતો.

જેમ યજ્ઞમાં હોમેલ દ્રવ્ય વાયુ અને જળની શુદ્ધિ કરનાર હોય છે, તેમ ઉત્તમ ઉપદેશ આત્માને શુદ્ધ કરનાર હોય છે. (૨૪)

प्र वां दुंसांस्यश्विनाववोचमस्य पतिः स्यां सुगवः सुवीरः ।

उत पश्यन्नश्नुवन्दीर्घमायुरस्तमिवेज्जरिमाणं जगम्याम् ॥ २५ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિનૌ-સર્વ શુભ કર્મ અને વિદ્યા વ્યાપિન સજ્જનો ! હું વામ્-તમે બન્ને ઉપદેશકો અને અધ્યાપકોના દંસાંસિ-ઉપદેશ અને અધ્યાપન આદિ કર્મોને પ્ર,-અવોચમ્-કહું તેથી સુગવઃ-સર્વોત્તમ ગાયો અને સર્વોત્તમ વાણી આદિ પદાર્થોવાળા સુવીરઃ-પુત્ર, પૌત્ર આદિ નોકર યુક્ત પશ્યન્-સત્ય-અસત્યને જોઈને ઝત-અને દીર્ઘમ્-દીર્ઘ આયુઃ-જીવનને અશ્રુવત્-સુખથી વ્યાપ્ત કરીને અસ્ય-એ રાજ્ય વા વ્યવહારને પતિઃ-પાલન કરનાર સ્યામ્-બનું તથા સંન્યાસી મહાત્મા જેમ અસ્તમિવ-ઘરને પામીને નિર્લોભતાથી ત્યાગી દે છે, તેમ જરિમાણમ્-વૃદ્ધિ શરીરનો ત્યાગ કરીને સુખપૂર્વક ઇત્-જ જગધ્યામ્-શીઘ્ર ચાલ્યો જાઉં. (૨૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય સદા ધાર્મિક આપ્તજનોના કર્મોનું સમ્યક્ સેવન કરીને, ધર્મ અને જિતેન્દ્રિયતા દ્વારા વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરીને તથા આયુની વૃદ્ધિ કરીને ઉત્તમ સહાયકોથી યુક્ત બનીને સંસારનું પાલન કરે. યોગાભ્યાસ દ્વારા જીર્ણ શરીરનો ત્યાગ કરીને વિજ્ઞાનથી મુક્તિને પ્રાપ્ત કરે. (૨૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં પૃથિવી આદિ પદાર્થોના ગુણોના દૃષ્ટાન્ત તથા અનુકૂળતાથી સત્મા અને સેનાના અધિપતિ આદિના ગુણ-કર્મોના વર્ણનથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૧૬)

સૂક્ત-૧૧૭

મધ્વઃ સોમસ્યાશ્વિના મદાય પ્રત્નો હોતા વિવાસતે વામ્ ।

બર્હિષ્મતી રાતિર્વિશ્રિતા ગીરિષા યાતં નાસત્યોપ વાજૈઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-વિદ્યામાં રમણ કરતા નાસત્યા-અસત્યથી પૃથક્ રહેનારા સભાપતિ અને સેનાપતિ ! તમે બન્ને ઙ્ઘા-પોતાની ઈચ્છાથી પ્રત્નઃ-પ્રાચીન વિદ્યા અધ્યેતા = ભણનાર હોતા-સુખદાતા જેમ વાજૈઃ-વિજ્ઞાન આદિ ગુણોની સાથે મદાય-રોગ નિવૃત્તિના આનંદને માટે વામ્-તમે બન્નેની મધ્વઃ-મધુર સોમસ્ય-સોમલતા આદિ ઔષધિની જે બર્હિષ્મતી-પ્રશંસિત વૃદ્ધિયુક્તા રાતિઃ-દાન ક્રિયા અને વિશ્રિતા-વિવિધ પ્રકારના શાસ્ત્રવક્તા વિદ્વાનોએ સેવન કરેલી ગીઃ-વાણી છે તેનું જે આ, વિવાસતે-સમ્યક્ સેવન કરે છે. તેની સમાન ઉપ, યાતમ્-સમીપ આવીને રહો અર્થાત્ ઉક્ત પોતાની ક્રિયા અને વાણીનો તેવી રીતે પ્રચાર કરતા રહો. (૧)

ભાવાર્થ : હે સભાપતિ અને સેનાપતિ ! આપ બન્ને આપ્તજનોના ગુણો અને કર્મોના સેવન દ્વારા વિજ્ઞાન આદિને પ્રાપ્ત કરીને તથા શરીરના રોગોના નિવારણને માટે સોમ આદિ ઔષધિઓ અને અવિદ્યામાં નિવારણને માટે વિદ્યાઓનું સેવન કરીને અભીષ્ટ સુખની સિદ્ધિ કરો. (૧)

યો વામશ્વિના મનસો જવીયાત્રથઃ સ્વશ્વો વિશં આજિગાતિ ।

યેન ગચ્છંથઃ સુકૃતો દુરોણં તેન નરા વૃત્તિરસ્મભ્યં યાતમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે નરા-ન્યાયની પ્રાપ્તિ કરાવનારાઓ અશ્વિના-વિચારશીલ સભા અને સેનાધીશો ! ય:- જે સુકૃત:-શ્રેષ્ઠ સાધનોથી બનાવેલ સ્વશ્ચ:-જેમાં શ્રેષ્ઠ વેગવાન વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થ વા ઘોડાઓ લાગેલા-જોડાયેલા છે, તે મનસ:-વિચારશીલ અત્યંત વેગવાન મનથી પણ જવીયાન્-અધિક વેગયુક્ત અને રથ:-યુદ્ધની અત્યંત રમત કરનાર રથ છે, તે વિશ:-પ્રજાજનોની આજિગતિ-સારી રીતે પ્રશંસા કરાવતા અને વામ્-તમે બન્ને યેન-જે રથમાં વર્તિ:-વર્તમાન દુરોણમ્-ઘરે ગચ્છથ:-જાઓ છો, તેન-તેથી અસ્મભ્યમ્-અમને યાતમ્-પ્રાપ્ત થાઓ. (૨)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ મનની સમાન વેગવાન અને વિદ્યુત્ આદિથી યુક્ત અનેક પ્રકારના યાનો પર આરૂઢ થઈને પ્રજાઓને સંતુષ્ટ કરવી જોઈએ. જે-જે કાર્યથી પ્રશંસા થાય, તેનું સેવન કરવું જોઈએ, અન્યનું નહિ. (૨)

ઋષિં નરાવંહસઃ પાઞ્ચજન્યમૃબીસાદત્રિં મુઞ્ચથો ગુણેન ।

મિનન્તા દસ્યોરશિવસ્ય માયા અનુપૂર્વ વૃષણા ચોદયન્તા ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે નરૌ-વિદ્યા પ્રાપ્તિ કરાવનારા, વૃષણા-સુખ વર્ષાવનારા, ચોદયન્તા-વિદ્યા આદિ શુભ ગુણોમાં પ્રેરણા કરનારા તથા અશિવસ્ય-સર્વને દુઃખ આપનારા દસ્યો:-દસ્યુઓની માયા:-કપટ ક્રિયાઓને મિનન્તા-કાપનારા સભા અને સેનાધીશો ! તમે બન્ને અનુપૂર્વમ્-અનુકૂળ વેદોમાં કહેલ અને શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનોએ માનેલ સિદ્ધાન્ત જેના તે પાઞ્ચજન્યમ્-પ્રાણ, અપાન, ઉદાન, વ્યાન અને સમાનમાં સિદ્ધ કરેલ યોગ સિદ્ધિને તથા જેના સંબંધમાં અત્રિમ્-આત્મા, મન અને શરીરના દુઃખો નાશ પામે છે, તે ગુણેન-ભણવા ભણાવનારાઓની સાથે વર્તમાન ઋષિમ્-વેદોના પારંગત અધ્યાપકોને ઋષીસાત્-જેમાં વિદ્યાનો પ્રકાશ નાશ પામેલ છે તે અવિદ્યારૂપ અંધકાર અંહસઃ-અને વિદ્યા ભણવાથી રોકનાર રૂપ અત્યંત પાપથી મુઞ્ચથઃ-પૃથક્ રાખો છો. (૩)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોનું એ સર્વોત્તમ કાર્ય છે, કે વિદ્યા પ્રચાર કરનારાઓની દુઃખથી રક્ષા કરવી અને તેઓને સુખમાં સ્થાપિત કરતા તથા ચોર આદિનું નિવારણ કરવું (તેઓ) સ્વયં વિદ્યા અને ધર્મથી યુક્ત બનીને વિદ્વાનોને વિદ્યા અને ધર્મ પ્રચારમાં પ્રેરિત કરીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને સારી રીતે સિદ્ધ કરે. (૩)

અશ્વં ન ગૂઢહર્મશ્વિના દુરેવૈઋષિં નરા વૃષણા રેભમ્પ્સુ ।

સં તં રિણીથો વિપ્રુતં દંસોભિર્ન વાં જૂર્યન્તિ પૂર્વ્યા કૃતાનિ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે નરા-સુખની પ્રાપ્તિ વૃષણા-અને વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરનારા અશ્વિના-સભા અને સેનાપતિઓ ! તમે બન્ને દુરેવૈ:-દુઃખ દેનાર દુષ્ટ મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓ દંસોભિઃ-અને શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનોએ આચરણ કરેલ કર્મોથી તાડનાને પ્રાપ્ત અશ્મ્-અતિ ગતિમાન વિદ્યુત્ની સમાન વિપ્રુતમ્-વિવિધ રીતે શ્રેષ્ઠ વ્યવહારોને

જાણનાર રેખમ્-સમસ્ત વિદ્યા ગુણોની પ્રશંસા કરનાર અપ્સુ-વિદ્યામાં વ્યાપ્ત થવા અને વેદાદિ શાસ્ત્રોમાં નિશ્ચય રાખનારા તમ્-તે પૂર્વ મંત્રોક્ત ઋષિમ્-વેદ પારંગત વિદ્વાનની ન-સમાન ગૂઢમ્-પોતાના આશયને ગુપ્ત રાખનાર સજ્જન પુરુષને સુખથી સં, રિણીય:-સમ્યક્ યુક્ત કરો, જેથી વામ્, પૂર્વ્યા, કૃતાનિ-તમારા પૂર્વજોએ કરેલ વિદ્યા પ્રચારરૂપ કાર્ય તેઓ ન-નહિ જૂર્યન્તિ-જીર્ણ થાય અર્થાત્ નાશને પ્રાપ્ત થાય નહિ. (૪)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષો દ્વારા, જેમ ચોરો દ્વારા ચોરેલ અને ગુપ્ત સ્થાનમાં રાખેલ પીડિત ઘોડાને લઈને તેની સુખપૂર્વક રક્ષા કરી શકાય છે, તેમ મૂર્ખ અને દુષ્ટકર્મ કરનારાથી અપમાનિત વિદ્યા પ્રચારકજનોને સમસ્ત પીડાઓથી બચાવીને તેની પૂજા = સત્કાર તથા સંગતિ કરીને તેઓની સેવા કરી શકાય છે, તેઓના જે વિદ્યુત્ વિદ્યાના પ્રચાર સંબંધી કાર્યો છે, તે અજર અને અમર છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૪)

સુષુપ્વાંસં ન નિર્ઋતેરુપસ્થે સૂર્યં ન દસ્ત્રા તમસિ ક્ષિયન્તમ્ ।

શુભે રુક્મં ન દર્શતં નિખાતમુદૂપથુરશ્વિના વન્દનાય ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે દસ્ત્ર-દુઃખ વિનાશક અશ્વિના-ખેતી કાર્યની વિદ્યામાં પરિપૂર્ણ સભા અને સેનાના અધીશો ! તમે બન્ને વન્દનાય-પ્રશંસા કરવા માટે નિર્ઋતે:-ભૂમિના ઉપસ્થે-ઉપર તમસિ-રાત્રિમાં ક્ષિયન્તમ્-નિવાસ કરો છો અને સુષુપ્વાંસમ્-સુખથી સૂતેલાની ન-સમાન વા સૂર્યમ્-સૂર્યની ન-સમાન અને શુભે-શોભા માટે સ્વમમ્-સુવર્ણની ન-સમાન દર્શતમ્-જોવા યોગ્ય રૂપ નિખાતમ્-હળની કોસથી ખેડેલ ખેતરમાં ઉદૂપથુ:-ઉપરથી વાવો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રજાના સમસ્ત પ્રાણીઓ સુરાજ્યને પામીને, રાતે સુખથી સૂઈને, દિવસે પોતાના ઈચ્છિત કર્મોને કરે છે, ઉત્તમ શોભા માટે સુવર્ણ આદિને પ્રાપ્ત કરે છે અને ખેતી આદિ કર્મો કરે છે, તેમ ઉત્તમ પ્રજાઓને પ્રાપ્ત કરીને રાજપુરુષ મહાન બની જાય છે. (૫)

તદ્વાં નરા શંસ્યં પઙ્ગિયેણ કક્ષીવતા નાસત્યા પરિજ્મન્ ।

શ્પાદશ્વસ્ય વાજિનો જનાય શ્તં કુમ્ભાં અસિઞ્ચતં મધૂનામ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે પઙ્ગિયેણ-પ્રાપ્ત થવા યોગ્યમાં પ્રસિદ્ધ થયેલ કક્ષીવતા-શિક્ષક વિદ્વાનની સાથે વર્તમાન નાસત્યા-સત્ય વ્યવહાર કરનારા નરા-મનુષ્યોમાં શ્રેષ્ઠ સર્વને પોતપોતાની રીતે સંલગ્ન કરનારા સભા ને સેનાધીશો ! તમે બન્ને જે પરિજ્મન્-જેમાં સર્વ રીતે જાય છે, તે માર્ગને વાજિન:-વેગવાન અશ્વસ્ય-ઘોડાની શ્પાદ-ભરી કે તે સમાન વિદ્યુત્ વેગથી જનાય-શ્રેષ્ઠ ગુણો અને ઉત્તમ વિદ્યાઓમાં પ્રસિદ્ધ વિદ્વાનને માટે મધૂનામ્-જળના શ્તમ્-સેંકડો કુમ્ભાન્-ઘડાઓને અસિઞ્ચતમ્-સુખથી સિંચો અર્થાત્ ભરો તત્-તે વામ્-તમારી શંસ્યમ્-પ્રશંસા કરવા યોગ્ય કાર્યને અમે જાણીએ છીએ. (૫)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ મનુષ્ય આદિના સુખને માટે માર્ગમાં અનેક ઘોડાઓના જળથી પ્રતિદિન

સિંચન કરાવવું જોઈએ, જેથી ઘોડાની ખરી-ડાબલાથી ધૂળ ન ઉડે, જેથી પોતાની સેનાના લોકો સુખપૂર્વક ગમનાગમન કરી શકે. એવી રીતે એવા પ્રશંસનીય કર્મ કરીને પ્રજાઓને નિરંતર પ્રસન્ન રાખવી જોઈએ. (૬)

યુવં નરા સ્તુવતે કૃષ્ણિયાય વિષ્ણાવ્વં દદથુર્વિશ્વકાય ।

ઘોષાયૈ ચિત્પિતૃષદૈ દુરોણે પતિં જૂર્યન્ત્યા અશ્વિનાવદત્તમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે નરા-સર્વ કાર્યોમાં પ્રધાન અને અશ્વિનૌ-સર્વ વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત સભા અને સેનાધીશો ! યુવમ્-તમે બન્ને કૃષ્ણિયાય-ખેતીના કામની યોગ્યતા રાખનાર અને સ્તુવતે-સત્યવાદી પિતૃષદે-જેની સમીપ વિદ્યા વિજ્ઞાનદાતા સ્થિત હોય વિશ્વકાય-અને જે સર્વ પર દયા કરે છે, તે રાજાને માટે દુરોણે-ઘરમાં વિષ્ણાવ્વમ્-ખેતીમાં વ્યાપ્ત કાર્યોમાં પ્રાપ્ત થઈને ખેતી કરનાર મનુષ્યને દદથુઃ-આપો ચિત્-અને જૂર્યન્ત્યૈ-વૃદ્ધત્વને કરનારી ઘોષાયૈ-જેમાં પ્રશંસિત શબ્દ વા ગાય રહેવાના વિશેષ સ્થાન છે, તે ખેતીને માટે પતિમ્-સ્વામી અર્થાત્ તેની રક્ષા કરનારાઓને અદત્તમ-આપો. (૭)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ ન્યાયાધીશજન ખેતી આદિ કર્મ કરનારા મનુષ્યોને માટે સર્વ સાધનો તથા રક્ષક પુરુષ અને પ્રજાઓને માટે સત્ય ન્યાય આપીને તેઓને પુરુષાર્થમાં પ્રવૃત્ત કરે. તથા કાર્ય સિદ્ધિને પ્રાપ્ત થયેલ તે પ્રજાઓને ધર્માનુસાર પોતાનો ભાગ યથોચિત્ રૂપથી ગ્રહણ કરે. (૭)

યુવં શ્યાવાય રુશંતીમદત્તં મહઃ ક્ષોણસ્યાશ્વિના કળવાય ।

પ્રવાચ્યં તદ્ વૃષણા કૃતં વાં યન્નાર્ષદાય શ્રવો અધ્યધત્તમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણા-બળવાન અશ્વિના-બહુજ્ઞ જ્ઞાન-વિજ્ઞાની વાતો, શ્રવણ અને જાણેલ સભા અને સેનાધીશો ! યુવમ્-તમે બન્ને મહઃ-મહાન ક્ષોણસ્ય-અધ્યાપકથી શ્યાવાય-જ્ઞાની કળવાય-બુદ્ધિમાનને માટે સ્થાતીમ્-પ્રકાશ કરનારી વિદ્યાને અદત્તમ્-પ્રદાન કરો તથા યત્-જે વામ્-તમે બન્નેના પ્રવાચ્યમ્-યથોચિત્ કહેવા યોગ્ય શાસ્ત્ર કૃતમ્-કરવા યોગ્ય કામ શ્રવઃ-શ્રવણ કરવા છે, તત્-તેને તથા નાર્ષદાય-સર્વોત્તમ વ્યવહારોમાં મનુષ્ય આદિને પહોંચાડનારા જનોમાં સ્થિત થઈને બાળકને અધ્યધત્તમ્-પોતાના પર ધારણ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : સભાધ્યક્ષ દ્વારા જેવો ઉપદેશ બુદ્ધિમાનોને કરવામાં આવે, તેવો જ ઉપદેશ સર્વ લોકોના સ્વામીને માટે પણ કરવામાં આવે. એ રીતે મનુષ્યો પ્રત્યે વર્તાવ કરવો જોઈએ. (૮)

પુરૂ વર્ષાસ્યશ્વિના દધાના નિ પેદવ્ ઝહથુરાશુમશ્વમ્ ।

સહસ્રસાં વાજિનમપ્રતીતમહિહનં શ્રવસ્યં તરુત્રમ્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-શિલ્પીજનો ! પુરૂ-બહુ જ વર્ષાસિ-રૂપોને દધાના-ધારણ કરેલ તમે બને પેદવે-શીઘ્રગમન માટે શ્રવસ્યમ્-પૃથિવી આદિ પદાર્થોમાં થયેલ અપ્રતીતમ્-ગુપ્ત, વાજિનમ્-વેગવાન,

अहिहनम्-मेघने मारनार, सहस्रसाम्-उज्जरो कर्मोनुं सेवन करनार, आशुम्-शीघ्र पडोंयाडनार तस्त्रम्-
अने समुद्र आदि पार उतारनारा अश्वम्-विद्युत् रूप पार अग्निने न्यूहथुः-यलावो. (८)

भावार्थ : अे रीते शीघ्र गति आपनार विद्युत् अग्नि आदि विना अन्य देशमां सुभपूर्वक जवा-
आववामां अने शीघ्र सभायारोने ग्रहण करवामां कोर् पण समर्थ थर् शकता नथी. (८)

एतानि वां श्रवस्या सुदानू ब्रह्माङ्गूषं सदनं रोदस्योः ।

यद्वां पञ्जासौ अश्विना हवन्ते यातमिषा च विदुषे च वाजम् ॥ १० ॥

पदार्थ : उे सुदान्-सुंदर दानशील अश्विनौ-सत्मा सेनाधीशो ! वाम्-तमे बन्नेना एतानि-अे
श्रवस्या-अन्न आदि पदार्थोमां उत्तम प्रशंसा योग्य कर्म छे अे कारणे वाम्-तमे बन्ने पञ्जासः-विशेष
ज्ञानदाता, मित्र जन, यत्-जे रोदस्योः-पृथिवी अने सूर्यना सदनम्-आधार रूप, आङ्गूषम्-विद्याओना
ज्ञानदाता ब्रह्म-सर्वज्ञ परमेश्वरने हवन्ते-ध्यान मार्गथी ग्रहण करीने च-अने जेने तमे लोको यातम्-
प्राप्त थाओ छे तेओना वाजम्-विज्ञानने इष-ईच्छा अने च-सम्यक् यत्न तथा योगाभ्यासथी विदुषे-
विद्वानने माटे यथोयित् पडोंयाडो. (१०)

भावार्थ : सर्व मनुष्योअे, सर्वना आधार स्थान, सर्वना द्वारा उपासना करवा योग्य अने सर्वना
रययिता परमेश्वर जे उपायोथी ज्ञानी शकय छे, ते उपायोथी तेने ज्ञानीने तथा अन्योने पण अेवी
रीते ज्ञावीने संपूर्ण आनंद प्राप्त करवो जेईअे. (१०)

सूनोर्मर्निनाश्विना गृणाना वाजं विप्राय भुरणा रदन्ता ।

अगस्त्ये ब्रह्मणा वावृधाना सं विष्पलां नासत्यारिणीतम् ॥ ११ ॥

पदार्थ : उे रदन्ता-सारी रीते लभनार ! सूनोः-पोताना संताननी समान मानेन-सत्कारथी विप्राय-
मेघावीजनने माटे वाजम्-सत्य बोधने गृणाना-उपदेश अने भुरणा-सुभ धारण करीने नासत्या-सत्यथी
परिपूर्ण वावृधाना-बुद्धिने प्राप्त अने ब्रह्मणा-वेदथी अगस्त्ये-ज्ञावा योग्य व्यवहारोमां श्रेष्ठ कामना
कारणे विष्पलाम्-प्रज्जानोनी पालक विद्याने अश्विना-प्राप्त थर्ने सत्मा-सेनाधीशो ! तमे बन्ने मित्रताथी
प्रज्जानी साथे समरिणीतम्-मणो. (११)

भावार्थ : जेम माता-पिता संतानोने अने संतानो माता-पिताने, अध्यापक शिष्योने अने शिष्य
अध्यापकोने, पतिजनो पत्नीओने अने पत्नीओ पतिओने तथा मित्र मित्रोने परस्पर प्रसन्न राभे
छे, तेम ज राजओअे प्रज्जानोने अने प्रज्जओ राजओने प्रसन्न राभे. (११)

कुह यान्ता सुष्टुतिं काव्यस्य दिवो नपाता वृषणा शयुत्रा ।

हिरण्यस्येव कलशं निखातमुदूपथुर्दशमे अश्विनाहन् ॥ १२ ॥

पदार्थ : यान्ता-गमन करनार, नपाता-न पडनार, वृषणा-श्रेष्ठ कामनाओनी वर्षा करावनार
५०८ अग्वेदभाष्य

તથા શયુત્રા-સૂતેલા પ્રાણીઓની રક્ષા કરનારા અશ્વિના-સભા-સેનાધીશો ! તમે બન્ને દશમે-દશમાં અહન-દિવસે હિરણ્યસ્યેવ-સુરર્ણના નિખાતમ્-વચ્ચે પોલા કલશમ્-ઘડાની સમાન દિવઃ-વિજ્ઞાનયુક્ત કાવ્યસ્ય-કવિતાઓની સુષ્ટુતિમ્-પ્રશસ્ત સ્તુતિને કુહ-ક્યાં ઉદૂપથુઃ-ઉત્કર્ષથી વાવો છો ? (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ ધનાઢ્યજન સુવર્ણ આદિના (ધાતુઓના) પાત્રોમાં દૂધ આદિ રાખીને તથા પકાવીને ખાઈને, પ્રશંસિત થાય છે, તેમ બન્ને શિલ્પીજન એ વિદ્યાના તથા ન્યાયના માર્ગમાં પ્રજાને પ્રવૃત્ત કરીને ધર્મ તથા ન્યાયના ઉપદેશોથી તેઓને પરિપક્વ બનાવીને રાજ્ય લક્ષ્મીનું સુખ ભોગવતા ક્યાં પ્રશંસિત થઈ શકે છે ? (એ પ્રશ્નનો) ‘ધાર્મિક વિદ્વાનોમાં’ ઉત્તર છે. (૧૨)

યુવં ચ્યવાનમશ્વિના જરન્તં પુનર્યુવાનં ચક્રથુઃ શર્ચીભિઃ ।

યુવો રથં દુહિતા સૂર્યસ્ય સહ શ્રિયા નાસત્યાવૃણીત ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-સત્યાચરણયુક્ત અશ્વિના-શરીર અને આત્માના બળથી યુક્ત સભા-સેનાધીશો ! યુવમ્-તમે બન્ને શર્ચીભિઃ-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ અને કર્મોની સાથે વર્તમાન પોતાના સંતાનોની યથોચિત્ સેવા કરીને યુવાન ચક્રથુઃ-કરો. પુનઃ-પછી યુવોઃ-તમે બન્નેની યુવતિ અર્થાત્ યૌવનાવસ્થાને પ્રાપ્ત સૂર્યસ્ય-સૂર્યની કરેલી ઉપાવેલાની સમાન દુહિતા-કન્યા શ્રિયા-ધન, શોભા, વિદ્યા વા સેવાની સહ-સાથે વર્તમાન ચ્યવાનમ્-ગમન અને જરન્તમ્-પ્રશંસિત યુવાનમ્-યુવાનીથી પરિપૂર્ણ રથમ્-રમણ કરવા યોગ્ય મનોહર પતિને અવૃણીત-વરે અને પુત્ર પણ એવો યુવાન થતાં યુવતી સ્ત્રીને વરે - વિવાહ કરે. (૧૩)

ભાવાર્થ : માતા-પિતા આદિને અત્યંત ઉચિત છે, કે તેઓ પોતાના સંતાનોને ઉપદેશ આપે કે - જ્યારે એ પૂર્ણ સુશિક્ષા, વિદ્યા, શરીર અને આત્માનું બળ, સુંદર રૂપ, સૌંદર્ય, સદાચાર, સ્વાસ્થ્ય, ધર્મ અને ઈશ્વર સંબંધી વિજ્ઞાન અને શુભ ગુણોથી યુક્ત બને, ત્યારે પોતાની ઈચ્છિત અને પરીક્ષા દ્વારા સ્વયંવર વિધિથી સમાન ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત, પૂર્ણ યુવાવસ્થામાં પહોંચેલ અને બળવાન કુમાર અને કુમારીઓ વિવાહ કરીને ઋતુગામી બનીને તથા ધર્મપૂર્વક વર્તીને શ્રેષ્ઠ રીતે સંતાનોને ઉત્પન્ન કરે. તેના વિના કદાપિ કુળની ઉન્નતિ થઈ શકતી નથી. તેથી સજ્જનોએ એ રીતે સદા કરવું જોઈએ. (૧૩)

યુવં તુગ્રાય પૂર્વેભિરેવૈઃ પુનર્મન્યાવભવતં યુવાના ।

યુવં ભુજ્યુમર્ણસો નિઃ સંમુદ્રાદ્વિભિરૂહથુર્ઋજ્રેભિરશ્વૈઃ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે પુનર્મન્યૌ-વારંવાર જાણનારા, યુવાના-યુવાવસ્થાને પ્રાપ્ત વિદ્યા ભણેલા સ્ત્રી-પુરુષો ! યુવમ્-તમે બન્ને તુગ્રાય-બળને માટે પૂર્વેભિઃ-પૂર્વ સજ્જનોએ કરેલ એવૈઃ-વિજ્ઞાન આદિ ઉત્તમ વ્યવહારોથી સુખી અભવતમ્-થાઓ, યુવમ્-તમે બન્ને વિભિઃ-આકાશમાં ઉડનારા પક્ષીઓની સમાન બન્ને ઋજ્રેભિઃ-જેની જાણ પણ ન થાય તેવા જોડેલા સરળ ગતિથી ચલાવનાર અને અશ્વૈઃ-શીઘ્ર ગમનશીલ વિદ્યુત્

આદિ પદાર્થોથી નિર્મિત વિમાનાદિ યાનોથી **અર્ણસઃ**-અગાધ જળ ભરેલ **સમુદ્રાત્**-સમુદ્રથી પાર **ભુજ્યુમ્**-શરીર અને આત્માનું પાલન કરનારા પદાર્થોને **નિસ્થથુઃ**-નિર્વાહો અર્થાત્ નિરંતર પહોંચાડો. (૧૪)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી અને પુરુષ પૂર્વકાલમાં આપ્તજનો દ્વારા કરેલ કર્મોને કરીને - આચરણ કરીને, ધર્મયુક્ત બ્રહ્મચર્યથી સંપૂર્ણ વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરીને, ક્રિયા-કોશલથી વિમાનાદિ યાનોનું નિર્માણ કરીને તથા ભૂગોળમાં સર્વત્ર વિચરણ કરીને નિત્ય આનંદિત થાય. (૧૪)

અજોહવીદશ્વિના તૌગ્ર્યો વાં પ્રોઢઃ સમુદ્રમવ્યથિર્જગન્વાન્ ।

નિષ્ટમૂહથુઃ સુયુજા રથેન મનોજવસા વૃષણા સ્વસ્તિ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે **વૃષણા**-શ્રેષ્ઠ બળવાન, **અશ્વિના**-વિદ્યા અને ઉત્તમ શીલમાં વ્યાપ્ત સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને **વામ્**-તમારા **તૌગ્ર્યઃ**-બળથી સિદ્ધ કરેલ **પ્રોઢઃ**-ઉત્તમતાથી પ્રાપ્ત **અવ્યથિઃ**-વ્યથા-કષ્ટ રહિત **જગન્વાન્**-જે નિરંતર ગમનશીલ સેનાનો સમૂહ છે, તે **સમુદ્રમ્**-સમુદ્રનો **અજોહવીત્**-વારંવાર તિરસ્કાર કરે અર્થાત્ તેનાથી પાર થતાં તેની ગંભીરતા ન માને, **તમ્**-તે ઉક્ત સેના સમૂહને **સુયુજા**-સુંદરતાથી જોડેલ **મનોજવસા**-મન સમાન વેગથી ગમન કરતા **રથેન**-રમણીય વિમાન આદિ યાન સમુદાયથી **સ્વસ્તિ**-સુખપૂર્વક **નિસ્થથુઃ**-નિર્વાહ અર્થાત્ દેશાન્તરમાં પહોંચાડો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જ્યારે બ્રહ્મચર્ય પાલન કરેલ પુરુષ શત્રુવિજયને માટે સમુદ્ર પાર જવા ઇચ્છે, ત્યારે તે પત્નીસહિત અને સેના સહિત જ વેગવાન યાનોથી જાય અને આવે. (૧૫)

અજોહવીદશ્વિના વર્ત્તિકા વામાસ્નો યત્સીમમુઞ્ચતં વૃકસ્ય ।

વિ જયુષા યયથુઃ સાન્વદ્રેર્જાતં વિષ્વાચો અહતં વિષેણ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે **અશ્વિના**-શીઘ્ર જનારા સભા-સેનાધીશો ! **વર્ત્તિકા**-સંગ્રામમાં વર્તમાન સેના **યત્સીમ્**-જે સમય **વામ્**-તમે બન્નેને **અજોહવીત્**-નિરંતર બોલાવે, ત્યારે તેને **વૃકસ્ય**-જેમ વરુના **આસ્નઃ**-મુખમાંથી તેમ શત્રુમંડળથી **અમુઞ્ચતમ્**-છોડાવો અર્થાત્ તેઓને જીતો અને પોતાની સેનાને બચાવો.

તમે બન્ને **જયુષા**-જય આપનાર પોતાના રથથી **અદ્રેઃ**-પર્વતના **સાનુ**-શિખરે **વિ**, **યયથુઃ**-વિવિધ રીતે જાઓ અને **વિષ્વાચઃ**-વિવિધ ગતિવાળા શત્રુમંડળના **જાતમ્**-ઉત્પન્ન બળને **વિષેણ**-તેથી વિપરીત કરનાર વિષરૂપ પોતાના બળથી **અહતમ્**-વિનાશ - નષ્ટ કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેમ બળવાન, દયાળુ, શૂરવીર મનુષ્ય વાઘના મુખમાંથી બકરીને છોડાવે છે, તેમ રાજપુરુષ ડાકુઓના ભયથી પ્રજાઓને પૃથક્-સુરક્ષિત રાખે.

જ્યારે શત્રુઓ પર્વતોમાં હોવાના કારણે મારી ન શકાય, ત્યારે તેઓના અન્ન-જળ આદિ દૂષિત કરીને તેઓને વશમાં લાવવા જોઈએ. (૧૬)

शतं मेषान्वृक्ये मामहानं तमः प्रणीतमश्विने पित्रा ।

आक्षी ऋज्राश्वे अश्विनावधत्तं ज्योतिरन्धाय चक्रथुर्विचक्षे ॥ १७ ॥

पદાર્થ : હે અશ્વિનૌ-સભા-સેનાધીશો ! તમે બન્ને જે અશ્વિને-અમંગળકારી પિત્રા-પ્રજાપાલક ન્યાયાધીશો તમઃ-દુઃખ રૂપ અંધકાર પ્રણીતમ્-યથોચિત્ પહોંચાડ્યા તે વૃક્યે-વરુની માદાને માટે શતમ્-સેંકડો મેષાન્-ઘેંટાઓને મામહાનમ્-આપવા સમાન પ્રજાજનોને પીડા આપતા રાજ્યાધિકારીને છોડાવો-પૃથક્ કરો.

ઋજ્રાશ્વે-સુશિક્ષિત ઘોડા આદિ પદાર્થોથી યુક્ત સેનામાં અક્ષી-નેત્રોનું આ, અધત્તમ્-આઘાત કરો અર્થાત્ દૃષ્ટિ કરો ત્યાંના બનેલા-બગાડેલા વ્યવહારને વિચારો અને અન્ધાય-અંધની સમાન અજ્ઞાનીને માટે વિચક્ષે-વિજ્ઞાનપૂર્વક નિહાળવા જ્યોતિઃ-વિદ્યા પ્રકાશને ચક્રથુઃ-પ્રકાશિત કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : હે સભાપતિ અને સેનાપતિ આદિ રાજપુરુષો ! તમે લોકો, વરુ માદા = સ્ત્રી સ્વાર્થ સિદ્ધિ માટે જેમ ઘેંટાઓ પર પ્રવૃત્ત થાય છે, તેમ પ્રજામાં અન્યાયથી પ્રવૃત્ત થનાર પોતાના કર્મચારીઓને સમ્યક્ દંડ આપીને, જેમ નેત્રોવાળો-દેખતો મનુષ્ય કૂવાથી, અંધ મનુષ્યને દૂર રાખીને તેને સુખી કરે છે, તેમ અન્યાયકારી કર્મચારીઓથી પીડિત પ્રજાઓને પૃથક્ રાખો. (૧૭)

શુનમન્ધાય ભરમહ્યત્સા વૃકીરશ્વિના વૃષણા નરેતિ ।

જારઃ કનીનઙ્ગવ ચક્ષદાન ઋજ્રાશ્વઃ શતમેકં ચ મેષાન્ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણા-સુખવર્ષક અને નરા-ધર્મ અને અધર્મનો વિવેક કરનારા અશ્વિના-સભા-સેનાધીશો ! સા-તે વૃકીઃ-ચોરની સ્ત્રી શતમ્-એકસો ચ-અને એકમ્-એક મેષાન્-ઘેંટાઓને અહ્યત્-હાકલ કરીને જેમ બોલાવે ઙ્ગવ-એ રીતે વા ઋજ્રાશ્વઃ-સરળ ગતિ ચાલનાર ઘોડાવાળો ચક્ષદાનઃ-જેથી વિદ્યા વચન આપવામાં આવે છે તે જારઃ-વૃદ્ધ વા જાર કર્મ કરનારા ચાલક કનીનઙ્ગવ-પ્રકાશમાન મનુષ્યની સમાન તમે અન્ધાય-અંધને માટે ભરમ-પોષણ અર્થાત્ તેનું પાલન અને શુનમ્-સુખ ધારણ કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ અવિદ્યાના કારણે અંધ (= અજ્ઞાની) મનુષ્યોને અન્યાય કરનારાઓથી અને સચરિત્રા સ્ત્રીઓને વ્યભિચારીઓના સંપર્કથી, જેમ વરુઓથી ઘેંટાં-બકરાંઓને છોડાવે, તેમ છોડાવીને તેઓનું નિરંતર પાલન કરે. (૧૮)

મ્હી વામૂતિરશ્વિના મયોભૂરૂત સ્ત્રામં ધિષ્ણ્યા સં રિણીથઃ ।

અથા યુવામિદહ્યત્પુરન્ધિરાગ્ચ્છતં સીં વૃષણાવૌભિઃ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણૌ-સુખવર્ષકો, ધિષ્ણ્યા-બુદ્ધિમાન અશ્વિના-સભા અને સેનાના અધિકાર પ્રાપ્ત જનો ! વામ્-તમારા બન્નેની જે મ્હી-મહાન ઉત્-અને મયોભૂઃ-ઉત્પન્ન કરાવનારી કૃતિ-રક્ષા આદિ

યુક્ત નીતિ છે, તેથી સ્વામ્-દુઃખ આપનાર સુખ અન્યાયને યુવામ્-તમે બન્ને સં, રિણીથ:-સારી રીતે દૂર કરો, અથ-તદનન્તર જે પુરન્ધિ:-અત્યંત બુદ્ધિમાન યૌવનથી પૂર્ણ યુવતી-સ્ત્રીને અહ્યત્-બોલાવે ઇત્-તેની સમાન અવોભિ:-રક્ષા આદિ સાથે સીમ્-જ આ, અગચ્છત્મ્-આવો. (૧૯)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ ન્યાયથી અન્યાયને પૃથક્ કરીને તથા ધર્મમાં પ્રવૃત્ત અને શરણાગત લોકોની રક્ષા કરીને સર્વ રીતે કૃતકૃત્ય થવું જોઈએ. (૧૯)

અધેનું દસ્રા સ્તર્યં વિષક્તામપિન્વતં શયવે અશ્વિના ગામ્ ।

યુવં શચીંભિર્વિમદાય જાયાં ન્યૂહથુઃ પુરુમિત્રસ્ય યોષામ્ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે દસ્રા:-દુઃખ કરનારા અશ્વિના-ભૂગર્ભ વિદ્યાને જાણતા સ્ત્રી-પુરુષો ! યુવમ્-તમે બન્ને શચીંભિ:-કર્મોની સાથે વિષક્તામ્-વિવિધ પ્રકારના પદાર્થોથી યુક્ત સ્તર્યમ્-સુખોને ઢાંકનારી નૌકા વા અધેનુમ્-ન દોવાનારી ગામ્-ગાયને અપિન્વતમ્-જળથી સિંચો વિમદાય-વિશેષ મદ્યુક્ત અર્થાત્ પૂર્ણ યુવાન શયવે-સૂતેલ પુરુષને માટે પુસમિત્રસ્ય-બહુ મિત્રવાળાની યોષામ્-યુવતિ કન્યાને જાયામ્-પત્ની રૂપમાં ન્યૂહથુઃ-નિરંતર પ્રાપ્ત કરાવો. (૨૦)

ભાવાર્થ : હે રાજપુરુષો ! જેમ તમે સર્વના મિત્ર બનેલ મનુષ્યની ઉત્તમ લક્ષણોયુક્ત, હૃદયને પ્રિય, બ્રહ્મચારિણી, વિદુષી, સુશીલ, સુખદાયિની અને ધાર્મિક કુંવારી કન્યાને પત્નીના રૂપમાં વિવાહ કરીને તેની સુરક્ષા કરો છો, તેમ જ સામ (દામ-દંડ) આદિ રાજકર્મોથી સર્વ ભૂમિનાં રાજ્યને પ્રાપ્ત કરીને તેનું સદા ધર્મપૂર્વક પાલન કરો. (૨૦)

યવં વૃકેણાશ્વિના વપન્તેષં દુહન્તા મનુષાય દસ્રા ।

અભિ દસ્યું વકુરેણા ધમન્તોરુ જ્યોતિશ્ચક્રથુરાર્યાય ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : દસ્રા-દુઃખ દૂર કરનારા અશ્વિના-સુખમાં રમણ કરતા સભા-સેનાધીશો ! તમે બન્ને મનુષાય-વિચારવાન મનુષ્યને માટે વૃકેણ-છિન્ન-ભિન્ન કરનાર હળ આદિ શસ્ત્ર અસ્ત્રથી યવમ્-યવ આદિ અન્નની સમાન વપન્તા-વાવતાં અને ઇષમ્-અન્નને દુહન્તા-પૂર્ણ કરતાં તથા આર્યાય-ઈશ્વરના પુત્રની સમાન વર્તમાન ધાર્મિક મનુષ્યને માટે વકુરેણ-પ્રકાશમાન સૂર્યે કરેલ જ્યોતિઃ-પ્રકાશ જેમ અંધકારને તેમ દસ્યુમ્-ડાકુ દુષ્ટ પ્રાણીઓને અભિ-ધમન્તા-અગ્નિથી બાળતા ઝરુ-અત્યંત મહાન રાજ્યને ચક્રથુઃ-કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ પ્રજાને માટે કાંટા સમાન, વ્યભિચારી, ચોર, અસત્યાભાષી અને કઠોર વાણીવાળા દુષ્ટોને નિયંત્રિત કરીને અને ખેતી આદિ કામોમાં પ્રવૃત્ત પ્રજાના વૈશ્યોની રક્ષા કરીને તથા ખેતી આદિ કામોની ઉન્નતિ કરીને વિસ્તૃત રાજ્યનું સેવન કરવું જોઈએ. (૨૧)

આથર્વગાયાશ્વિના દધીચેઽશ્વ્યં શિરઃ પ્રત્યૈરયતમ્ ।

૫૧૨

અગ્નિવેદભાષ્ય

सं वां मधु प्र वोचदृतायन्त्वाष्ट्रं यद्दस्त्रावपिकक्ष्यं वाम् ॥ २२ ॥

पदार्थ : हे दस्त्रौ-दुःખनी निवृत्ति करनारा अने अश्विना-श्रेष्ठ कर्मोमां प्रवृत्त करावनारा सत्मा-सेनाधीशो ! वाम्-तमे बन्ने यत्-जे आथर्वणाय-जेना संकट टणी गयेल तेना पुत्रने माटे तथा दधीचे-विद्या अने धर्मने धारण करेल मनुष्योनी प्रशंसा करनाराओने माटे अश्व्यम्-घोडाओमां थयेल शिरः-उत्तम अंगने प्रत्यैरयतम्-प्राप्त करो. सः-ते ऋहायन्-पोताना सत्य व्यवहारने ईर्यता वाम्-तमारा बन्नेने माटे अपिकक्ष्यम्-विद्यानी कक्षाओमां थयेल बोधना प्रत्ये जे वर्तमान ते त्वाष्ट्रम्-शीघ्र समस्त विद्याओमां व्याप्त थनारा विद्वानना मधु-मधु विज्ञाननो प्र, वोचत्-उपदेश करे. (२२)

भावार्थ : सत्मापति अने सेनापति आदि राजपुरुषो पर श्रद्धा राखी अने शुभ कर्मोमां प्रेरित करता रडे तथा ते विद्वानो तेमने सत्यनो उपदेश आपीने प्रमाद अने अधर्मथी निवृत्त करे. (२२)

सदा कवी सुमतिमा चके वां विश्वा धियो अश्विना प्रावतं मे ।

अस्मे रयिं नासत्या बृहन्तमपत्यसाचं श्रुत्यं रराथाम् ॥ २३ ॥

पदार्थ : हे नासत्या-सत्य व्यवहारयुक्त कवी-सर्व पदार्थोमां बुद्धिनो उपयोग करनारा अने अश्विना-विद्यानी प्राप्ति करावनारा सत्मा-सेनाधीशो ! वाम्-तमारी सुमतिम्-धर्मयुक्त श्रेष्ठ बुद्धिने हुं आ, चके-सम्यक् श्रवण करूं. तमे बन्ने मे-मारा माटे विश्वाः-समस्त धियः-धारणावती बुद्धिओने सदा-सदा प्र, अवतम्-प्रवेश करावो तथा अस्मे-अमारा माटे बृहन्तम्-अति प्रवृद्ध अपत्यसाचम्-पुत्र-पौत्रादि युक्त श्रुत्यम्-श्रवण योग्य रयिम्-धनने रराथाम्-प्रदान करो. (२३)

भावार्थ : विद्यार्थीओ अने राजा आदि गृहस्थोअे आप्त विद्वानोनी समीपथी उत्तम बुद्धिओने प्राप्त करवी जेईअे अने अे विद्वानो तेओने विद्या आदि धन प्रदान करीने निरंतर सुशिक्षित अने धार्मिक विद्वान बनावे. (२३)

हिरण्यहस्तमश्विना रराणा पुत्रं नरा वधिमत्या अदत्तम् ।

त्रिधा ह श्यावमश्विना विकस्तमुज्जीवस ऐरयतं सुदानू ॥ २४ ॥

पदार्थ : हे रराणा-उत्तम गुणोना आपनारा, नरा-श्रेष्ठ पदार्थोनी प्राप्ति करावनारा तथा अश्विना-रक्षा आदि कर्मोमां व्याप्त थनारा अध्यापको ! तमे बन्ने हिरण्यहस्तम्-जेना हाथमां सुवर्ण आदि धन वा हाथनी समान, विद्या अने तेज आदि पदार्थो छे, ते वधिमत्याः-वृद्धि आपनारी विद्यानी पुत्रम्-रक्षकजनने मारा माटे अदत्तम्-आपो.

हे सुदानू-सुंदर दानशील सज्जनोनी समान वर्तमान अश्विना-अैश्वर्यवान अध्यापको ! तमे बन्ने श्यावम्-विद्या प्राप्त विकस्तम्-अनेक रीते विद्या प्रदान करनारा मनुष्यने जीवसे-ज्जवनने माटे ह-ज त्रिधा-त्रण प्रकार अर्थात् मन, वाणी अने शरीरनी शिक्षा आदिनी साथे उद, ऐरयतम्-प्रेरित करो अर्थात् समजावो. (२४)

ભાવાર્થ : અધ્યાપકો પુત્રોને અને અધ્યાપિકાઓ પુત્રીઓને બ્રહ્મચર્યથી યુક્ત કરીને, તેઓના દ્વિતીય વિદ્યારૂપી જન્મને સંપન્ન કરીને અને તેને જિવિકા-સાધનોને શીખવીને સમય પર તેઓના માતા-પિતાને સોંપી દે અને તેઓ ઘરે પહોંચીને પણ પોતાની શિક્ષાને ભૂલે નહિ. (૨૪)

एतानि वामश्विना वीर्याणि प्र पूर्वाण्यायवोऽवोचन् ।

ब्रह्म कृण्वन्तो वृषणा युवभ्यां सुवीरांसो विदथ्मा वदेम ॥ २५ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણા-વિદ્યાને વર્ષાવનારા અને અશ્વિનૌ-પ્રશંસિત કર્મોમાં વ્યાપ્ત સ્ત્રી-પુરુષો ! વામ-તમે બન્નેના જે **एतानि-એ** પ્રશંસિત **पूर्वाणि-પૂર્વ** વિદ્યાનોથી નિયત કરેલ **वीर्याणि-પરાક્રમયુક્ત** કામ છે તેને **आयवः-મનુષ્ય પ્રાવોચન્-** સારી રીતે કહે, **युवभ्याम्-તરુણ** અવસ્થાયુક્ત તમે બન્ને **ब्रह्म-અન્ન** અને ધનને **कृण्वन्त-સિદ્ધ** કરીને **सुवीरांसः-જેની** ઉત્તમ શિક્ષા અને ઉત્તમ વિદ્યાયુક્ત વીર પુત્ર-પૌત્ર અને સેવકવાળા અમે **विदथम्-વિજ્ઞાન** કરાવનાર ભણવા-ભણાવવા રૂપ યજ્ઞનો **आ, वदेम-ઉપદેશ** કરીએ. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાનો દ્વારા લોકોપકાર કરનારા વિદ્યા અને ધર્મોપદેશ તથા પ્રચારરૂપી કાર્ય કરેલ છે અથવા કરી રહ્યા છે, તેઓની પ્રશંસા અને અન્ન આદિથી અથવા ધનથી તેઓની સેવા મનુષ્ય કરે.

કોઈપણ મનુષ્ય વિદ્યાનોના સંગ વિના વિદ્યા આદિ રત્નોને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. કોઈ કપટ આદિ દોષોથી રહિત આપત વિદ્યાનોના સંગ વિના તથા તેઓ દ્વારા અધ્યયન કર્યા વિના કોઈ સુશીલતા અને વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરવામાં સમર્થ બની શકતા નથી. (૨૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં રાજા, પ્રજા અને વિદ્યા ભણવા-ભણાવવા આદિ કાર્યોના વર્ણનથી પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે આ સૂક્તના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૧૭)

सूक्त-११८

आ वां रथौ अश्विना श्येनपत्वा सुमृळीकः स्ववाँ यात्वर्वाङ् ।

यो मर्त्यस्य मनसो जवीयान्त्रिबन्धुरो वृषणा वातरंहाः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણા-બળવાન અશ્વિના-શિલ્પ કાર્યોના જ્ઞાતા સ્ત્રી-પુરુષો ! વામ-તમે બન્નેને **यः-જે** ત્રિબન્ધુરઃ-જેમાં નીચે, વચ્ચે અને ઉપર બંધન હોય **श्येनपत्वा-બાજ** પક્ષીની સમાન જનાર **वातरंहाः-જેનો** વાયુ સમાન વેગ **मर्त्यस्य-મનુષ્યના** **मनसः-મનથી** પણ **जवीयान्-અત્યંત** ગતિમાન અને **सुमृळीकः-શ્રેષ્ઠ** સુખદાતા **स्ववान्-જેમાં** પ્રશંસિત નોકર વા પોતાના પદાર્થો વિદ્યમાન છે એવો **रथः-રથ** છે, તે **अर्वाङ्-નીચે** આ, યાતુ-આવે. (૧)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષ જ્યારે એ રીતે જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને તેનો ઉપયોગ કરે, ત્યારે કયું એવું સુખ છે, જેને સિદ્ધ ન કરી શકે ? (૧)

त्रिबन्धुरेण त्रिवृता रथेन त्रिचक्रेण सुवृता यातमर्वाक् ।

पिन्वतं गा जिन्वतमर्वतो नो वर्धयतमश्विना वीरमस्मे ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સભા-સેનાધીશો ! તમે બન્ને ત્રિબન્ધુરેણ-જે ત્રણ પ્રકારના બંધનોથી યુક્ત, ત્રિચક્રેણ-જેમાં કલના ત્રણ ચક્ર લાગેલ ત્રિવૃત-અને ત્રણ ઓઢવાના વસ્ત્રોથી યુક્ત જે સુવૃતા-સર્વોત્તમ મનુષ્ય વા શ્રેષ્ઠ શૃંગારોની સાથે વર્તમાન રથેન-રથ છે, તેથી અર્વાક્-ભૂમિની નીચે આ, યાતમ્-આવો, ન:-અમારી ગા:-પૃથિવીમાં જે ભૂમિ છે તેનું પિન્વતમ્-સેવન કરો, અર્વત:-રાજ્ય પ્રાપ્ત કરેલ મનુષ્ય વા ઘોડાઓને જિન્વતમ્-જીવાડો-સુખ આપો, અસ્મે-અમને તથા અમારા વીરમ્-શૂરવીર પુરુષોની વર્ધયતમ્-વૃદ્ધિ કરો - ઉન્નતિ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ ઉત્તમ સાધનોવાળા તથા આપ્ત સહાયકોવાળા થઈને અને સર્વ સ્ત્રી-પુરુષોને સમૃદ્ધિયુક્ત કરીને પ્રશંસિત થાય. (૨)

પ્રવદ્યામના સુવૃતા રથેન દસ્ત્રાવિમં શૃણુતં શ્લોકમદ્રૈઃ ।

કિમ્દ્ગ્ વાં પ્રત્યવર્તિ ગમિષ્ઠાહુર્વિપ્રાસો અશ્વિના પુરાજાઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે પ્રવદ્યામના-સારી રીતે ચાલનાર, સુવૃતા-સાધનોથી યુક્ત, રથેન-વિમાનાદિ રથથી અદ્રે:-પર્વત પર જવા અને દસ્ત્રૌ-દાન આદિ શ્રેષ્ઠ કર્મો કરનારા અશ્વિના-સભા-સેનાધીશો વા સ્ત્રી-પુરુષો ! વામ્-તમે બન્ને દ્ગમ્-એ શ્લોકમ્-વાણીને શૃણુતમ્-સાંભળો કે અદ્ગ્-હે ઉક્ત સજ્જનો ! પુરાજા:-પૂર્વ વૃદ્ધ વિપ્રાસ:-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિમાન વિદ્વાનો ગમિષ્ઠા-અતિ ચાલતા તમે બન્નેના પ્રતિ-પ્રત્યે કિમ્-કોણ અર્વર્તિમ્-ન વર્તનાર ન કહેવા યોગ્ય નિંદિત વ્યવહારનો આહુ: ઉપદેશ કરે છે ? અર્થાત્ કોઈ નહિ. (૩)

ભાવાર્થ : હે રાજા આદિ સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે લોકો, જે-જે આપ્તજન ઉપદેશ કરે, તેનો જ સ્વીકાર કરો. સજ્જનોના ઉપદેશ વિના સંસારમાં મનુષ્યોની ઉન્નતિ થતી નથી.

જ્યાં આપ્તજનોનો ઉપદેશ થતો નથી, ત્યાં (મનુષ્ય અજ્ઞાનરૂપી) અંધકારમાં ડૂબેલ પશુઓની સમાન વર્તવ કરીને, દુઃખનો સંચય કરે છે. (૩)

આ વાં શ્યેનાસો અશ્વિના વહન્તુ રથે યુક્તાસ આશવઃ પત્ન્યાઃ ।

યે અપ્તુરો દિવ્યાસો ન ગૃધ્રા અભિ પ્રયો નાસત્યા વહન્તિ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-સત્યની સાથે વર્તમાન અશ્વિના-સર્વ વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત સ્ત્રી-પુરુષો ! યે-જે અપ્તુર:-અન્તરિક્ષમાં શીઘ્રતા કરનાર દિવ્યાસ:-અને સારી રીતે રમનાર ગૃધ્રા:-ગીધ પંખીઓની ન-સમાન પ્રય:-પ્રીતિયુક્ત અર્થાત્ ઈચ્છિત સ્થાનને અભિ, વહન્તિ-સર્વત્રથી પહોંચાડે છે તે શ્યેનાસ:-

બાજ પક્ષીની સમાન ચાલનાર પતંગ્ગાઃ-સૂર્યની સમાન નિરંતર પ્રકાશમાન આશવઃ-અને શીઘ્રતા યુક્ત ઘોડાઓની સમાન અગ્નિ આદિ પદાર્થ રથે-વિમાનાદિ રથમાં યુક્તાસઃ-યુક્ત કરેલ વામ્-તમને બન્નેને આ, વહન્તિ-પહોંચાડે છે. (૪)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! જેમ આકાશમાં પોતાની પાંખોથી ઉડતા ગીધ આદિ પક્ષીઓ સુખપૂર્વક આવે-જાય છે, તેમ તમે સુસાધિત વિમાન આદિ ચયાનોથી અન્તરિક્ષમાં આવો-જાઓ. (૪)

આ વાં રથં યુવતિસ્તિષ્ઠદત્ર જુષ્ટ્વી નરા દુહિતા સૂર્યસ્ય ।

પરિ વામશ્વા વપુષઃ પતંગ્ગા વયો વહન્ત્વરુષા અભીકૈ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે નરા-સર્વના નેતા સભા-સેનાધીશો ! વપુષઃ-સુંદર રૂપની જુષ્ટ્વી-પ્રીતિને પામીને વા સુંદર રૂપનું સેવન કરતી સુંદરી યુવતિઃ-નવયૌવના દુહિતા-કન્યા સૂર્યસ્ય-સૂર્યનાં કિરણોને પ્રાતઃ કાળની વેળા જેમ પૃથિવી પર સ્થિત, તેમ વામ્-તમે બન્નેના રથમ્-રથ પર આ, તિષ્ઠત્-આવીને બેસે અત્ર-એ અભીકૈ-સંગ્રામમાં પતંગ્ગાઃ-ગમન કરીને અસ્મા-લાલ રંગવાળા વયઃ-પક્ષીઓની સમાન અશ્વાઃ-શીઘ્રગામી અગ્નિ આદિ પદાર્થ વામ્-તમે બન્નેને પરિ, વહન્તુ-સર્વત્ર પહોંચાડે. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યનાં કિરણો સર્વત્ર વિચરે છે, જેમ પતિવ્રતા સ્ત્રી પતિને સુખ પહોંચાડે છે અને જેમ પક્ષી ઉપર-નીચે ગતિ કરે છે, તેમ યુદ્ધમાં શ્રેષ્ઠ યાન અને ઉત્તમ વીર ઈચ્છિત (કાર્યો) સિદ્ધ કરે છે. (૫)

ઉદ્વન્દનમૈરતં દંસનાભિરુદ્દેભં દંસ્ટ્રા વૃષણા શચીભિઃ ।

નિષ્ટૌગ્ર્યં પારયથઃ સમુદ્રાત્ પુનશ્ચ્યવાનં ચક્રથુર્યુવાનમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે દંસ્ટ્રા-દુઃખ દૂર કરનારા અને વૃષણા-સુખવર્ષક સભા-સેનાધીશો ! તમે બન્ને શચીભિઃ-કર્મ અને બુદ્ધિઓ વા દંસનાભિઃ-વચનોની સાથે જેમ તૌગ્ર્યમ્-બળવાન મારનાર રાજાનો પુત્ર ચ્યવાનમ્-જે ગમનકર્તા બલી યુવાનમ્-યુવાન છે, તેને સમુદ્રાત્-સાગરથી નિઃ, પારયથઃ-નિરંતર પાર કરીને પુનઃ-ફરી આ પાર આવેલ ને ઉત્, ચક્રથુઃ-ત્યાં પહોંચાડો છો, તેમ જ વન્દનમ્-પ્રશંસિત યાન અને રેભમ્-પ્રશંસિત મનુષ્યને ઉદૈરતમ્-અહીં - ત્યાં પહોંચાડો. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ જહાજ ચાલક મનુષ્યને સમુદ્ર પાર કરાવીને સુખી કરે છે, તેમ રાજસભા શિલ્પીકારો અને ઉપદેશકોને દુઃખથી પાર કરીને નિરંતર આનંદિત કરે. (૬)

યુવમત્રયેઽવનીતાય ત્પ્તમૂર્જમોમાનમશ્વિનાવધત્તમ્ ।

યુવં કળવાયાપિરિપ્તાય ચક્ષુઃ પ્રત્યધત્તં સુષ્ટુતિં જુજુષાણા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે જુજુષાણા-સેવા અને પ્રીતિને પ્રાપ્ત અશ્વનૌ-સમસ્ત ગુણોમાં વ્યાપ્ત સ્ત્રી-પુરુષો ! યુવમ્-

તમે બન્ને **અવનીતાય-અવિદ્યા-અજ્ઞાન** દૂર કરવા અને **અપિરિપ્તાય-સમસ્ત વિદ્યાઓથી વૃદ્ધિને માટે અત્રયે-જેને ત્રણ પ્રકારનું દુઃખ નથી તે કળવાય-બુદ્ધિમાનને માટે તપ્તમ્-તપસ્યાથી ઉત્પન્ન ઓમાનમ્-રક્ષા આદિ શ્રેષ્ઠ કામોના પાલન કરનારા ઋર્જમ્-પરાક્રમને અધત્તમ્-ધારણ કરો અને યુવમ્-તમે બન્ને તેથી **ચક્ષુઃ-સમસ્ત વ્યવહારનું દર્શક ઉત્તમ જ્ઞાન અને સુષ્ટુતિમ્-સુંદર પ્રશંસાની પ્રતિ, અધત્તમ્-પ્રતીતિ સાથે ધારણ કરો. (૭)****

ભાવાર્થ : સભાધ્યક્ષ અને સેનાધ્યક્ષ આદિ રાજપુરુષોએ વેદ આદિની વિદ્યાના પ્રચારને માટે પ્રયત્નશીલ ધાર્મિક વિદ્વાનોની રક્ષા કરીને તથા તેઓથી વિનય પ્રાપ્ત કરીને પ્રજાઓનું પાલન કરવું જોઈએ. (૭)

યુવં ધેનું શયવૈ નાધિતાયાપિન્વતમશ્વિના પૂર્વાયં ।

અમુઞ્ચતં વર્તિકામંહસો નિઃ પ્રતિ જઙ્ગાં વિશ્પલાયા અધત્તમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે **અશ્વિના-સુશિક્ષિત સમસ્ત વિદ્યાઓમાં રમણ કરતા સ્ત્રી-પુરુષો ! યુવમ્-તમે બન્ને નાધિતાય-ઐશ્વર્યયુક્ત પૂર્વાય-પૂર્વ વિદ્વાનોએ કરેલ શયવે-કે જે સુખપૂર્વક સૂવે છે તે વિદ્વાનને માટે ધેનુમ્-સુશિક્ષિત વાણીનું અપિન્વતમ્-સેવન કરો, જેને અંહસા-અધર્મના આચરણથી નિરમુઞ્ચતમ્-નિરંતર છોડાવો, તેથી વિશ્પલાયાઃ-પ્રજાજનોનાં પાલન માટે જઙ્ગામ્-સમસ્ત સુખ ઉત્પાદક વર્તિકામ્-વિનય, નમ્રતા આદિ ગુણોયુક્ત શ્રેષ્ઠ નીતિને પ્રત્યધત્તમ્-પ્રીતિથી ધારણ કરો. (૮)**

ભાવાર્થ : હે રાજપુરુષો ! પરસ્પરના વ્યવહારથી ઐશ્વર્ય-સંપન્ન અને ધનવાન કુળમાં ઉત્પન્ન સર્વ પ્રજાજનો સત્ય ન્યાયથી સંતુષ્ટ કરીને, બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યા-ગ્રહણને માટે તમે લોકો પ્રવૃત્ત કરો. જેથી કોઈનો પણ પુત્ર અને પુત્રી વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી વંચિત રહે નહિ. (૮)

યુવં શ્વેતં પેદવે ઇન્દ્રજૂતમહિહનમશ્વિનાદત્તમશ્વમ્ ।

જોહૂત્રમર્યો અભિભૂતિમુગ્રં સહસ્ત્રસાં વૃષણં વીઙ્વઙ્ગમ્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે **અશ્વિના-યજ્ઞાદિ કર્મ કરાવનારી સ્ત્રી અને સમસ્ત લોકોના અધિપતિ પુરુષ ! યુવમ્-તમે બન્ને પેદવે-જવા-આવવાને માટે જે અર્યઃ-સર્વના સ્વામી સર્વ સભાઓના પ્રધાન રાજા ઇન્દ્રજૂતમ્-સભાધ્યક્ષ રાજાને પ્રેરણા માટે જોહૂત્રમ્-અત્યંત ઈર્ષા કરતા વા શત્રુઓની સ્પર્ધા કરતા વૃષણમ્-શત્રુઓની સેના પર શસ્ત્રાસ્રની વર્ષા કરાવનાર વીઙ્વઙ્ગમ્-બળવાન દેહ અંગોથી યુક્ત ઝગ્રમ્-દુષ્ટ શત્રુઓથી અસહનીય અભિભૂતિમ્-અને શત્રુઓનો તિરસ્કાર કરનાર સહસ્ત્રસામ્-વા હજારો કામોનું સેવન કરનાર શ્વેતમ્-સફેદ અશ્વમ્-સર્વમાં વ્યાપ્ત વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિને અહિહનમ્-મેઘને છિન્ન-ભિન્ન કરનાર સૂર્યની સમાન તમારા બન્ને માટે આપે છે, તેને માટે નિરંતર સુખ અદત્તમ્-આપો. (૯)**

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય મેઘને વરસાવીને સર્વ પ્રજાને સુખ આપે છે, તેમ શિલ્પવિદ્યાના જ્ઞાતા સ્ત્રી-

પુરુષ સંપૂર્ણ પ્રજાને સુખ પ્રદાન કરે અને પોતાની મધ્યમાં જે શ્રેષ્ઠ રથી વીર સ્ત્રી-પુરુષ હોય, તેઓનો સદા સત્કાર કરે. (૯)

તા વાં નરા સ્વર્સે સુજાતા હવામહે અશ્વિના નાધમાનાઃ ।

આ ન ઉપ વસુમતા રથેન ગિરો જુષાણા સુવિતાય યાતમ્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે સુજાતા-શ્રેષ્ઠ વિદ્યા ગ્રહણ કરવા આદિમાં ઉત્તમ કર્મોમાં પ્રસિદ્ધ થયેલ ગિરઃ-શુભ વાણીનું જુષાણા-સેવન અને અશ્વિના-પ્રજાના અંગોનું પાલન કરનારા નરા-ન્યાયમાં પ્રવૃત્ત સ્ત્રી-પુરુષો ! નાધમાનાઃ-જેને બહુ જ ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત છે તે અમે જે વામ્-તમારી અવસે-રક્ષા આદિને માટે સુ, હવામહે-સુંદરતાથી બોલાવે તા-તે તમે વસુમતા-જેમાં પ્રશંસિત સુવર્ણ આદિ ધન વિદ્યમાન છે તે રથેન-મનોહર વિમાન આદિ યાનથી નઃ-અમને સુવિતાય-ઐશ્વર્યને માટે ઉપ, આ, યાતમ્-આવીને મળો. (૧૦)

ભાવાર્થ : પ્રજાના સ્ત્રી-પુરુષો જે રાજપુરુષોને પ્રસન્ન કરે, તેઓ પ્રજાજનોને નિરંતર પ્રસન્ન રાખે, જેથી પરસ્પરની રક્ષા દ્વારા ઐશ્વર્ય-સમૂહની નિત્ય વૃદ્ધિ થાય. (૧૦)

આ શ્યેનસ્ય જવસા નૂતનેનાસ્મે યાતં નાસત્યા સજોષાઃ ।

હવે હિ વામશ્વિના રાતહવ્યઃ શશ્વત્તમાયા ઉષસો વ્યુષ્ટૌ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-સત્યયુક્ત અશ્વિના-સમસ્ત ગુણોયુક્ત સ્ત્રી-પુરુષો વા સભા-સેનાધીશો ! સજોષાઃ-જેનો એકતાપ્રેમ રાતહવ્યઃ-વા જેને સમ્યક્હોમની સામગ્રી-આપી તે હું શશ્વત્તમાયાઃ-અત્યંત અનાદિરૂપ ઉષસઃ-પ્રભાતવેળાને વ્યુષ્ટૌ-વિશેષ ઈચ્છતા સમયમાં જે વામ્-તમને હવે-સ્તુતિ દ્વારા આહ્વાન કરું તે તમે હિ-નિશ્ચયપૂર્વક શ્યેનસ્ય-બાજ પક્ષીના જવસા-વેગની સમાન નૂતનેન-નવીન રથથી અસ્મે-અમને આ, યાતમ્-આવીને મળો. (૧૧)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષ રાત્રિના ચોથા પ્રહરમાં ઉઠીને આવશ્યક નિત્ય કર્મ કરીને, જગદીશ્વરની ઉપાસના અને યોગાભ્યાસ કરીને, રાજકાર્ય અને પ્રજાકાર્ય કરવામાં પ્રવૃત્ત થાય.

રાજા આદિએ પ્રશંસનીય પ્રજાજનોનો સત્કાર કરવો જોઈએ અને પ્રજાજનોએ પણ સ્તુતિ યોગ્ય રાજપુરુષોની સ્તુતિ કરવી જોઈએ. કોઈ પણ અધર્મનું આચરણ કરનારાઓની નિંદા કરવી ઉચિત નથી. તેથી સર્વ ધર્મ વ્યવસ્થા અનુસાર આચરણ કરે. (૧૧)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સ્ત્રી-પુરુષ અને રાજા-પ્રજાના ધર્મનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૧૮)

સૂક્ત-૧૧૯

આ વાં રથં પુરુમાયં મનોજુવં જીરાશ્વં યજ્ઞિયં જીવસેં હુવે ।

सहस्रकेतुं वनिनं शतद्वसुं श्रुष्टीवानं वरिवोधामभि प्रयः ॥ १ ॥

पदार्थ : હે સમસ્ત ગુણોમાં વ્યાપ્ત સ્ત્રી-પુરુષો ! પ્રયઃ-પ્રીતિ કરનારમાં જીવસે-જીવનને માટે વામ્-તમે બન્નેની પુસ્માયમ્-બહુજ બુદ્ધિથી બતાવેલ, જીરાશ્વમ્-જેથી પ્રાણધારી જીવોને પ્રાપ્ત થાય વા તેઓને એકત્ર કરતાં, યજ્ઞિયમ્-જે યજ્ઞના દેશમાં જવા યોગ્ય, સહસ્રકેતુમ્-જેમાં હજારો પતાકાઓ લાગેલી હોય, શતદ્વસુમ્-સેકંડો પ્રકારનું ધન હોય, વનિનમ્-અને પુષ્કળ જળ વિદ્યમાન હોય, શ્રુષ્ટીવાનમ્-જે શીઘ્ર ગતિથી ચાલનાર, મનોજુવમ્-મન સમાન વેગવાન, વરિવોધામ્-જેથી મનુષ્ય સુખ સેવનને ધારણ કરીને રથમ્-તે મનોહર વિમાન આદિ યાનની અધ્યાહુવે-સર્વ રીતે પ્રશંસા કરું છું. (૧)

ભાવાર્થ : પ્રયત્નશીલ વિદ્વાન શિલ્પી લોકો જો ઈચ્છે, તો તેઓના દ્વારા (બુદ્ધિમત્તાપૂર્વક નિર્મિત, અનેક પ્રાણીઓના વાહક, યજ્ઞીય દેશને પ્રાપ્ત કરાવનાર, સહસ્રો પતાકાઓ યુક્ત, ધનથી પરિપૂર્ણ, જળ પ્રબંધયુક્ત અનેક શીઘ્ર ગતિઓયુક્ત, મન સમાન વેગવાન અને સંપૂર્ણ સુખ દાયક) બનાવી શકાય છે. (૧)

ऊर्ध्वा धीतिः प्रत्यस्य प्रयामन्यधायि शस्मन्त्समयन्त आ दिशः ।

स्वदामि घर्मं प्रति यन्त्यूतय आ वामूर्जानी रथमश्विनारुहत् ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સભા-સેનાધીશો ! વામ્-તમારી બન્ને શસ્મન્-પ્રશંસાને યોગ્ય પ્રયામનિ-અતિ ઉત્તમ યાત્રામાં જે ઊર્જાની-પરાક્રમયુક્ત નીતિ અને ઊર્ધ્વાઃ, ધીતિઃ-ઉન્નતિયુક્ત ધારણ વા ઊંચ્ય ધારણ જે મનુષ્યોએ અધાયિ-ધારણ કરી છે તેઓ દિશઃ-દાન આદિ ઉત્તમ કર્મ કરનારા મનુષ્યો સમ, આ, અચન્તે-સારી રીતે આવે છે.

જે રથમ્-મનોહર વિમાન આદિ યાનમાં શિલ્પીકાર જન આ, અસ્ત-આરોહણ કરે છે. તેના પર તમે પણ આરોહણ કરો-ચડો.

જે ધર્મમ્-ઉજ્જવળ સંગુધીયુક્ત ભોજન કરવા યોગ્ય પદાર્થોને ઋતયઃ-મનોહર રક્ષાદિ વ્યવહાર અમારે માટે યન્તિ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓને પ્રતિ-તમે પ્રાપ્ત થાઓ. અને જે ઉજ્જવળ સુગંધિયુક્ત ભોજન કરવા યોગ્ય પદાર્થોનો હું સ્વદામિ-સ્વાદ ચાખું અસ્ય-તે સ્વાદને તમે પ્રતિ-પ્રતીતિથી પ્રાપ્ત થાઓ. (૨)

વિદ્યોદય : હે મનુષ્યો ! તમે સુસંસ્કૃત, રોગ નિવારક અને બલકારક અન્નોનું ભોજન કરો. યાત્રામાં સંપૂર્ણ સામગ્રી લઈને પરસ્પર પ્રેમ અને રક્ષા કરીને દેશ-દેશાન્તરમાં જાઓ (પરંતુ) ક્યાંક પણ નીતિનો ત્યાગ કરો નહિ. (૨)

सं यन्मिथः पस्पृधानासो अगमंत शुभे मखा अमिता जायवो रणै ।

युवोरहं प्रवणे चैकिते रथो यदश्विना वहथः सूरिमा वरम् ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સ્ત્રી-પુરુષો ! યત્-જે વિદ્વાન ચેકિતે-યુદ્ધ કરવાને જાણે છે વા જે યુવોઃ-
अश्वेत्

તમે બન્નેના **રથ:-**અતિ સુંદર રથ **મિથ:-**પરસ્પર યુદ્ધની વચ્ચે લડાઈ કરનાર છે વા જે **વરમ્-અતિશ્રેષ્ઠ સૂરિમ્-યુદ્ધ વિદ્યાના જ્ઞાતા ધાર્મિક વિદ્વાનને તમે વહથ:-**પ્રાપ્ત થતા તેની સાથે વર્તમાન **અહ-શત્રુઓને બાંધવા વા તેઓને હરાવવામાં યન્-જે શુભે-શુભ ગુણ પ્રાપ્ત કરવા માટે પ્રવળે-જેમાં વીર જાય છે તે રળે-સંગ્રામમાં પસ્પૃધાનાસ:-ઈર્ષાથી એક-બીજાને બોલવતાં મચ્ચા:-**યજ્ઞ સમાન ઉપકારક **અમિતા:-**પાડેલ નહિ **જાયવ:-**શત્રુઓને જીતનાર વીર પુરુષ **સમગમત્-સારી રીતે જાય, તેને માટે આ-ઉત્તમ યત્ન પણ કરો. (૩)**

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ જ્યારે શત્રુઓને જીતવા માટે પોતાની સેનાઓને મોકલે, ત્યારે લક્ષ્મી-સંપન્ન, કૃતજ્ઞ, યુદ્ધ કુશળ અને યુદ્ધ કરાવી શકે તેવા વિદ્વાનો સેનાઓની સાથે અવશ્ય જાય. સમસ્ત સેના તેઓને અનુમતીથી જ યુદ્ધ કરે, જેથી નિશ્ચિત્ વિજય થાય.

જ્યારે યુદ્ધ સમાપ્ત થઈ જાય અને વીર લોકો પોત-પોતાના સ્થાનો પર સ્થિત થઈ જાય, ત્યારે તેઓને એકત્રિત કરીને અતિ હર્ષ અને વિજય-ભાવના ઉત્પન્ન કરનાર વ્યાખ્યાન (વિદ્વાનો) આપે. જેથી તેઓ સર્વ યુદ્ધ માટે ઉત્સાહિત થઈને શત્રુઓને અવશ્ય જીતે. (૩)

યુવં ભુજ્યું ભુરમાણં વિભિર્ગતં સ્વયુક્તિભિર્નિવહન્તા પિતૃભ્ય આ ।

યાસિષ્ટં વર્તિવૃષણા વિજેન્યં દિવોદાસાય મહિં ચેતિ વામવઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : **વૃષણા-સુખવર્ષક અને સર્વ ગુણોમાં રમણ કરનારા સભા-સેનાધીશો ! યુવમ્-તમે બન્ને વામ્-પોતાની ભુરમાણમ્-પુષ્ટિકારક ભજ્યુમ્-ભોજન કરવા યોગ્ય પદાર્થોને વિભિઃ-પક્ષીઓએ ગતમ્-પ્રાપ્ત કરેલ સમાન સ્વયુક્તિભિઃ-પોતાની રીતે પિતૃભ્યઃ-રાજ્યનું પાલન કરનારા વીરોને માટે નિવહન્તા-નિરંતર પહોંચાડતા મહિ-અત્યંત અવઃ-રક્ષક પદાર્થો અને વર્તિઃ-જે સેના સમૂહ ચેતિ-જાણી શકાય તેને પણ લઈને દિવોદાસાય-વિદ્યાના પ્રકાશક સેનાધ્યક્ષને માટે વિજેન્યમ્-જીતવા યોગ્ય શત્રુસેના સમૂહને આ, યાસિષ્ટમ્-થાઓ. (૪)**

ભાવાર્થ : સેનાપતિઓ જે સેનાને હૃષ્ટ-પુષ્ટ અર્થાત્ સરસ ખાન-પાનથી પુષ્ટ બનેલ અને પોતાના ચાહનાર સેનાને સારી રીતે ખાન-પાન આપી, સુશિક્ષા આપી અને તેઓને એવા પદાર્થો આપે જેનાથી આગળ લાભ થવાનો હોય તેવી પ્રવૃત્તિઓ કરીને, તે સેનાથી શત્રુઓને જીતી શકે. (૪)

યુવોર્શ્વિના વપુષે યુવાયુજં રથં વાણીં યેમતુરસ્ય શર્ધ્યમ્ ।

આ વાં પતિત્વં સુખ્યાય જગ્મુષી યોષાવૃણીત્ જેન્યા યુવાં પતીં ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે **અશ્વિના-સભા-સેનાધીશો ! યુવોઃ** તમે પોતાના **શર્ધ્યમ્-બળથી યુક્ત યુવાયુજમ્-તમે જોડેલ રથમ્-મનોહર સેના આદિ યુક્ત યાનને અસ્ય-એ રાજકાર્યની વચ્ચે સ્થિર થયેલ વાણી-ઉપદેશ કરનારાની સમાન વયુષે-શ્રેષ્ઠ રૂપ થવા માટે યેમતુઃ-નિયમમાં રાખો છો. વામ્-તમારા બન્નેના**

સઘ્યાય-મિત્રભાવ અર્થાત્ અત્યંત પ્રીતિને માટે જેન્યા-નિયમ પાલન કરનારામાં શ્રેષ્ઠ પત્ની-પાલન કરનાર યુવામ્-તમારી સાથે પતિત્વમ્-પતિભાવને જગમુષી-પ્રાપ્ત થનારી યોષા-યૌવનથી પરિપૂર્ણ બ્રહ્મચારિણી યુવતી સ્ત્રી તમારામાંથી પોતાના મનથી ઈચ્છિત એક પતિને આ અવૂળીત-સારી રીતે વરે-વિવાહ કરે. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ બ્રહ્મચર્ય પાલનપૂર્વક યુવાવસ્થાને પ્રાપ્ત વિદુષી કુમારી પોતાને પ્રિય પતિને પામીને નિરંતર તેની સેવા કરે છે અને જેમ બ્રહ્મચર્ય પાલન કરેલ યુવક પોતાની ઈચ્છિત સ્ત્રી પામીને આનંદિત થાય છે, તેવા જ સભાપતિ અને સેનાપતિ સદા થાય. (૫)

યુવં રેભં પરિષૂતેરુરુષ્યથો હિમેન ઘર્મ પરિતપ્તમત્રયે ।

યુવં શયોરંવસં પિપ્વથુર્ગવિ પ્ર દીર્ઘેણ વન્દનસ્તાર્યાયુષા ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : સર્વ વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત સ્ત્રી-પુરુષો ! જેમ યુવમ્-તમે બન્ને અત્રયે-આધ્યાત્મિક, આધિ ભૌતિક અને આધિ દૈવિક એ ત્રણ પ્રકારનાં દુઃખથી રહિત જે ઉત્તમ સુખને માટે પરિસૂતે:-સર્વત્રથી બીજા વિદ્યા જન્મમાં પ્રસિદ્ધ થયેલ વિદ્વાનથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરેલ પરિતપ્તમ્-સર્વ પ્રકાર સંકિલષ્ટ = કલેશને પ્રાપ્ત રેભમ્-સમસ્ત વિદ્યાની પ્રશંસા કરનાર વિદ્વાન મનુષ્યને હિમેન-શીતથી ઘર્મમ્-ઉષ્ણતા સમાન ઉક્લેશ:-રક્ષા કરો. અર્થાત્ શીત દ્વારા ગરમીથી જેમ બચી શકાય, તેમ રક્ષા કરો. યુવમ્-તમે બન્ને ગવિ-પૃથિવીમાં શયો:-શયન કરેલાની અવસમ્-રક્ષા આદિની પિપ્વથુ:-વૃદ્ધિ કરો, વન્દન:- પ્રશંસા યોગ્ય વ્યવહાર, દીર્ઘેણ-પ્રલંબિત- દીર્ઘ - આયુષા-આયુને જેમ તમે બન્નેએ તારિ-પાર કરી, તેમ અમે પણ પ્ર-પ્રયત્ન કરીએ. (૬)

ભાવાર્થ : હે વિવાહિત સ્ત્રી પુરુષો ! જેમ શીતથી ઉષ્ણતાનો નાશ કરવામાં આવે છે, તેમ તમે વિદ્યાથી અવિદ્યાનો નાશ કરો. જેથી આધ્યાત્મિક, આધિભૌતિક અને આદિદૈવિક દુઃખ નષ્ટ પામે.

જેમ ધાર્મિક રાજપુરુષ ચોર આદિનું નિવારણ કરીને સૂતેલાં પ્રજાજનોની રક્ષા કરે છે અને જેમ સૂર્ય અને ચંદ્રમા સમસ્ત સંસારને પુષ્ટ કરીને જીવનદાતા છે, તેમ તમે આ સંસારમાં પ્રવૃત્ત થાઓ. (૬)

યુવં વન્દનં નિર્ઘ્નં જરણ્યયા રથં ન દસ્ત્રા કરુણા સમિન્વથઃ ।

ક્ષેત્રાદા વિપ્રં જનથો વિપન્યયા પ્ર વામત્રં વિધતે દંસનાં ભુવત્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે કરુણા-ઉત્તમ કર્મ કરનાર વા દસ્ત્રા-દુઃખ દૂર કરનાર સ્ત્રી-પુરુષો ! યુવમ્-તમે બન્ને જરણ્યયા-વિદ્યા વૃદ્ધિ અર્થાત્ અત્યંત વિદ્યા ભણેલ વિદ્વાનોને યોગ્ય વિદ્યાથી યુક્ત નિર્ઘ્નમ્-જેમાં નિરંતર સત્ય વિદ્યમાન, વન્દનમ્-પ્રશંસા કરવા યોગ્ય, વિપ્રમ્-વિદ્યા અને સુશિક્ષાના યોગથી શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિમાન વિદ્વાનને રથમ્-વિમાન આદિ યાનથી ન-સમાન સમિન્વથઃ-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થાઓ. ક્ષેત્રાત્-ગર્ભાશય - ઉદર નિવાસ સ્થાનથી અર્થાત્ ગર્ભાશયથી ઉત્પન્ન સંતાનની સમાન પોતાના નિવાસથી ઉત્તમ કામને

આ, જનથ:-સમ્યક્ પ્રકટ કરો, જે અત્ર-આ સંસારમાં વામ્-તમારા બન્નેના ગૃહા-શ્રમની મધ્યના સંબંધ પ્ર,મુવત્-પ્રબળ થાય, તેમાં વિપન્યયા-પ્રશંસિત ધર્મથી નીતિથી યુક્ત દંસના-કામોને વિધતે-વિધાન કરવા પ્રવૃત્ત થયેલ મનુષ્યને માટે ઉત્તમ રાજ્યના અધિકારોને આપો. (૭)

ભાવાર્થ : મનનશીલ સ્ત્રી-પુરુષ જન્મથી લઈને જ્યાં સુધી બ્રહ્મચર્યપૂર્વક સમસ્ત વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરે, ત્યાં સુધી સંતાનોને સુશિક્ષા આપીને યથાયોગ્ય વ્યવહારોમાં નિરંતર નિયુક્ત કરે. (૭)

અગચ્છતં કૃપમાણં પરાવતિ પિતુઃ સ્વસ્ય ત્યજસા નિબાધિતમ્ ।

સ્વર્વતીરિત ઋતીર્યુવોરહ ચિત્રા અભીકે અભવન્નભિષ્ટયઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાના વિચારોમાં રમણ કરતા સ્ત્રી-પુરુષો ! આપ સ્વસ્ય-પોતાના પિતુઃ-પિતા સમાન વર્તમાન અધ્યાપકથી પરાવતિ-દૂર દેશમાં સ્થિત અને ત્યજસા-સંસારના સુખના ત્યાગથી, નિબાધિતમ્-કષ્ટ સહન કરતા, કૃપ-માણમ્-કૃપાકારક સ્વભાવયુક્ત સંન્યાસીને નિત્ય અગચ્છતમ્-પ્રાપ્ત થાઓ; ઇતઃ-એ યતિથી યુવોઃ-તમારા બન્નેના અભીકે-સમીપમાં અહ-નિશ્ચયપૂર્વક, ચિત્રાઃ-અદ્ભુત, અભિષ્ટયઃ-ઈચ્છિત, સ્વર્વતીઃ-પ્રશંસિત સુખ જેમાં વિદ્યમાન છે, ઋતીઃ-તે રક્ષા આદિ કામના અભવત્-સિદ્ધ થાય. (૮)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્યો પૂર્ણ વિદ્યાવાન, આપ્ત, રાગ-દ્વેષ તથા પક્ષપાત રહિત, સર્વની પર કૃપા કરનાર, સર્વથા સત્યમય, અસત્યનો ત્યાગ કરનાર, જિતેન્દ્રિય, યોગ સિદ્ધાન્તને પ્રાપ્ત કરેલ પર તથા અવરના જ્ઞાતા જીવનમુક્ત, સંન્યાસ આશ્રમમાં વિદ્યમાન ઉપદેશ આપવા માટે ભ્રમણશીલ અને વેદોના જ્ઞાતા મનુષ્યને પ્રાપ્ત કરીને ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષની વિધિ-સહિત સિદ્ધિઓ પ્રાપ્ત કરે. એવા પ્રકારના મનુષ્યોનો સંગ અને ઉપદેશ-શ્રવણ વિના કોઈપણ યથાર્થજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૮)

ઉત સ્યા વાં મધુમન્મક્ષિકારપન્મદે સોમસ્યૌશિજો હુવન્યતિ ।

યુવં દધીચો મન આ વિવાસથોઽથા શિરઃ પ્રતિ વામશ્વ્યં વદત્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે મંગલયુક્ત રાજા અને પ્રજાજનો ! યુવમ્-તમે બન્ને જે ઔશિજઃ-મનોહર ઉત્તમ પુરુષના પુત્ર સંન્યાસી મદે-હર્ષને નિમિત્ત પ્રવર્તમાન સ્યા-તે મક્ષિકા-શબ્દ કરનારી માખી જેમ અરપત્-ગૂંજે છે, તેમ વામ્-તમે બન્નેને મધુમત્-જેમાં પ્રશંસિત ગુણ છે, તે વ્યવહારની સમાન હુવન્યતિ-પોતાના આપવા-લેવા ઈચ્છે છે, તે સોમસ્ય-ધર્મની પ્રેરણા કરનાર અને દધીચઃ-વિદ્યા ધર્મની ધારણા કરનારના તીરથી મનઃ-વિજ્ઞાનનું આ, વિવાસથઃ-સારી રીતે સેવન કરો. અથ-તદનન્તર ઉત-તર્ક-વિતર્કથી તે વામ્-તમારા બન્નેના પ્રત્યે પ્રીતિપૂર્વક એ જ્ઞાનને તથા અશ્વ્યમ્-વિદ્યામાં વ્યાપ્ત થયેલ વિદ્વાનોમાં ઉત્તમ શિરઃ-શિરની સમાન પ્રશંસિત વ્યાખ્યાન પ્રતિ, વદત્-કહો. (૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ મધમાખીઓ પાર્થિવ (પુષ્પ આદિ)થી રસ ચૂસીને મધપૂડામાં સંચય કરીને આનંદિત રહે છે, તેમ જ યોગવિદ્યારૂપી ઐશ્વર્યથી સંપન્ન, સત્યોપદેશથી સુખ ઉપજાવનાર,

બ્રહ્મ- નિષ્ઠ વિદ્વાન સંન્યાસીથી સત્ય શિક્ષા શ્રવણ કરીને, માનીને અને ધ્યાનમાં લાવીને તમે સદા સુખી થાઓ. (૯)

યુવં પેદવે પુરુવારમશ્વિના સ્પૃધાં શ્વેતં તરુતારં દુવસ્યથઃ ।

શયૈરભિદ્યું પૃતનાસુ દુષ્ટરં ચર્કૃત્યમિન્દ્રમિવ ચર્ષણીસહમ્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સમસ્ત વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત સભા - સેનાધીશો ! યુવમ્-તમે બન્ને પેદવે-પહોંચાડવા વા જવા માટે સ્પૃધામ્-શત્રુઓને ઈર્ષાથી બોલાવનારની પૃતનાસુ-સેનાઓમાં ચર્કૃત્યમ્-નિરંતર કરવા યોગ્ય શ્વેતમ્-અત્યંત ગમન કરવા વૃદ્ધિ પામેલ પુસ્વારમ્-જેનાથી બહુજ લેવા યોગ્ય કામો થાય છે, દુષ્ટરમ્-જે શત્રુઓનું દુઃખ સાથે ઉલ્લંઘન કરી શકાય છે, ચર્ષણીસહમ્-જેથી મનુષ્યો શત્રુઓને સહન કરે છે, જે શયૈઃ-તોડવા - ફોડવા યોગ્ય યંત્રોથી બાંધેલ વા અભિદ્યુમ્-જે સર્વત્ર વિદ્યુત્ની અગ્નિ ચમકતી એ ઇન્દ્રમિવ-સૂર્યના પ્રકાશની સમાન વર્તમાન તસ્તારમ્-સંદેશાના તારનો અર્થાત્ ગમે ત્યાં પહોંચાડનાર તાર યંત્રનું દુવસ્યથઃ-સેવન કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્યો દ્વારા વિદ્યુત્ (તાર) વિદ્યાથી ઈચ્છિત કાર્યો સિદ્ધ કરી શકાય છે, તેમ પરિવારના સંગથી સમસ્ત વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરીને ધર્મ આદિ કાર્યો સિદ્ધ કરી શકાય છે. એ બન્ને દ્વારા જ સાંસારિક અને પામાર્થિક કાર્યોની સિદ્ધિ કરી શકાય છે, તેથી પ્રયત્નપૂર્વક વિદ્યુત્ (તાર) વિદ્યા અવશ્ય સિદ્ધ કરવી જોઈએ. (૧૦)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં રાજા-પ્રજા, સંન્યાસી-મહાત્માઓની વિદ્યાના વિચારનું આચરણ કહેવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૧૯)

સૂક્ત-૧૨૦

કા રાધદ્ધોત્રાશ્વિના વાં કો વાં જોષ ઉભયોઃ । કથા વિધાત્યપ્રચેતાઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-ગૃહાશ્રમ ધર્મમાં વ્યાપ્ત સ્ત્રી-પુરુષો ! વામ્-તમે ઉભયોઃ-બન્નેની કા-કોણ હોત્રા-સેના શત્રુઓના બળને ધીનવીને તથા ઉત્તમ જીત આપવાની રાધત્-સિદ્ધિ કરે ? વામ્-તમારા બન્નેના જોષે-પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરનાર વ્યવહારમાં કથા-કેવી રીતે કઃ-કોણ અપ્રચેતાઃ-વિદ્યા, વિજ્ઞાન રહિત અર્થાત્ મૂઢ શત્રુ પરાજયનું વિધાતિ વિધાન કરે ? (૧)

ભાવાર્થ : સભાપતિ અને સેનાપતિ વીરો અને વિદ્વાનોના વ્યવહારોના જ્ઞાતા લોકોની સાથે વ્યવહાર કરે, તો પછી તે બન્નેનો પરાજય કરનાર અને તેઓના વિજયને રોકવામાં કોઈ સમર્થ બની શકે નહિ.

ક્યારેય પણ કોઈનું પ્રયોજન મૂર્ખોની સહાયતાથી સિદ્ધ થતું નથી, તેથી સદા વિદ્વાનોની મિત્રતાનું સેવન કરો. (૧)

विद्वांसाविहुरः पृच्छेदविद्वानित्थापरो अचेताः । नू चिन्न मर्त्ते अक्रौ ॥ २ ॥

पदार्थ : જેમ અચેતા:-અજ્ઞાન અવિદ્વાન્-મૂર્ખ વિદ્વાંસૌ-બે વિદ્યાવાન પંડિતોને દુર:-શત્રુઓને મારવા વા મનમાં અત્યંત ક્લેશ કરનારી વાતોને પૃચ્છેત્-પૂછે, ઇત્યા-એમ અપર:-અને વિદ્વાન મહાત્મા પોતાની રીતે ઇત્-જે નુ-શીઘ્ર પૂછે, અકૌ-ન કરનારા મર્તે-મનુષ્યના નિમિત્ત ચિત્-પણ નુ-શીઘ્ર પૂછે જેથી એ આળસ છોડીને પુરુષાર્થમાં પ્રવૃત્ત થાય. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનજન વિદ્વાનોની સંમતિથી વર્તાવ કરે, તેમ અન્ય પણ વર્તાવ કરે. સદા વિદ્વાનોને પૂછીને તથા સત્ય-અસત્યનો નિર્ણય કરીને સત્યનું આચરણ કરે અને અસત્યનો ત્યાગ કરે. આ વિષયમાં કોઈએ કદાપિ આળસ કરવી નહિ, કારણ કે, 'પૂછ્યા વિના કોઈપણ જાણી શકતા નથી' કોઈએ પણ મૂર્ખોના ઉપદેશ પર વિશ્વાસ કરવો નહિ. (૨)

તા વિદ્વાંસાં હવામહે વાં તા નો વિદ્વાંસા મન્મ વોચેતમદ્ય ।

પ્રાર્ચદ્યમાનો યુવાકુઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાંસા-સંપૂર્ણ વિદ્યા ભણેલ શ્રેષ્ઠ આપ્ત અધ્યાપક તથા ઉપદેશક વિદ્વાન અદ્ય-આ સમયમાં ન:-અમારા માટે મન્મ-માનવા યોગ્ય ઉત્તમ વેદોમાં કહેલ જ્ઞાનનો વોચેતમ્-ઉપદેશ કરે. તા-તે સમસ્ત વિદ્યાથી ઉત્પન્ન પ્રશ્નોનો ઉત્તર આપવા અને વિદ્વાંસા-સર્વ વિદ્યાના વિજ્ઞાપકો વામ્-તમે બન્ને વિદ્વાનોનો અમે હવામહે-સ્વીકાર કરીએ છીએ, જે દ્યમાન:-સર્વની ઉપર દયા કરતા યુવાકુ:-મનુષ્યોને સમસ્ત વિદ્યાઓની સાથે સંયોગ કરાવનાર મનુષ્ય તા-તે તમે બન્ને વિદ્વાનોનો પ્ર, આર્ચત્-સત્કાર કરે, તેનો તમે પણ સત્કાર કરો. (૩)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જે જેને સત્ય વિદ્યાઓ પ્રદાન કરે, તેની તે મન-વચન-શરીરથી સેવા કરે. જે કપટથી વિદ્યાને ગુપ્ત રાખે તેનો નિરંતર તિરસ્કાર કરે.

આ રીતે સર્વે મળીને વિદ્વાનોનું સન્માન અને મૂર્ખોનું અપમાન નિરંતર કરે, જેથી સત્કાર કરેલ વિદ્વાન, વિદ્યાનો પ્રચાર કરવામાં પ્રયત્ન કરે અને સત્કાર ન કરેલ મૂર્ખ પણ વિદ્યામાં પ્રયત્ન કરે. (૩)

વિ પૃચ્છામિ પાક્વ્યાઙ્ઞુ ન દેવાન્વષટ્કૃતસ્યાદ્ભુતસ્ય દસ્ટ્રા ।

પાતં ચ સહ્યાસો યુવં ચ રભ્યસો નઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે દસ્ટ્રા-દુઃખ દૂર કરનાર અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્વાનો ! હું યુવમ્-તમને બન્નેને સહ્યાસ:-અતિશય વિદ્યા બળથી પૂર્ણ, રભ્યસ:-અત્યંત ઉત્તમ પુરુષાર્થયુક્ત, પાક્વ્યા-વિદ્યા અને યોગના અભ્યાસથી પરિપક્વ બુદ્ધિયુક્ત તે દેવાન્-વિદ્વાનોની ન-સમાન વષટ્કૃતસ્ય-ક્રિયાથી સિદ્ધ કરેલ શિલ્પ વિદ્યાથી ઉત્પન્ન થનાર અદ્ભૂતસ્ય-આશ્ચર્યરૂપ કામના વિજ્ઞાનને માટે પ્રશ્નોને વિ, પૃચ્છામિ-પૂછું છું ચ-અને તમે બન્ને તેના ઉત્તર આપો જેથી હું તમારી સેવા કરું છું ચ-અને તમે ન:-અમારી પાતમ્-

રક્ષા કરો. (૪)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનજન નિત્ય બાળકથી લઈને વૃદ્ધ સુધી સર્વને સિદ્ધાન્ત વિદ્યાઓનો ઉપદેશ કરે, જેથી તેઓની રક્ષા અને ઉન્નતિ થઈ શકે અને તે (શ્રોતાજન) તેઓની સેવા કરીને સુશીલતાપૂર્વક પૂછીને સમાધાન પ્રાપ્ત કરે. આ રીતે પરસ્પરના ઉપકારથી સર્વ સુખી થાય. (૪)

પ્ર યા ઘોષે ભૃગવાણે ન શોભે યયા વાચા યજતિ પઙ્ગિયો વામ્ ।

પ્રૈષયુર્ન વિદ્વાન્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે સમસ્ત વિદ્યાઓમાં રમણ કરનારા અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! પઙ્ગિય:-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય બોધોને પ્રાપ્ત ઇષયુ:-સર્વ જનોના ઈચ્છિત સુખને પ્રાપ્ત થનાર મનુષ્ય વિદ્વાન્-વિદ્યાવાન સજજનની ન-સમાન યયા-જે વાચા-વાણીથી વામ્-તમારો પ્ર, યજતિ-સુંદર સત્કાર કરે છે, તે વાણીથી હું શોભે-શોભા પામું પ્ર-જે વિદુષી સ્ત્રી ભૃગવાણે-શ્રેષ્ઠ ગુણોથી પરિપક્વ બુદ્ધિમાન વિદ્વાનોની સમાન આચરણ કરનાર ઘોષે-ઉત્તમ વાણીને નિમિત્ત સત્કાર કરતી ન-જેવી દેખાય છે, તે વાણીથી હું ઉક્ત સ્ત્રીનો પ્ર-સત્કાર કરું. (૫)

ભાવાર્થ : હે અધ્યાપક અને ઉપદેશક મહાનુભાવો ! આપ બન્ને આપની સમાન સર્વના કલ્યાણ માટે સદા પ્રવૃત્ત રહો. એજ રીતે વિદુષી સ્ત્રી પણ (રહે.)

સર્વ મનુષ્યો વિદ્યા, ધર્મ, સુશીલતા આદિથી યુક્ત થઈને નિરંતર સુશોભિત બને.

કોઈ પણ વિદ્વાન મૂર્ખ સ્ત્રીની સાથે વિવાહ ન કરે અને કોઈપણ વિદુષી (સ્ત્રી) મૂર્ખની સાથે વિવાહ ન કરે. પરંતુ મૂર્ખ મૂર્ખોની સાથે અને વિદ્વાન વિદુષીની સાથે સંબંધ કરે. (૫)

શ્રુતં ગાયત્રં તર્કવાનસ્યાહં ચિદ્ધિ રિરેભાશ્વિના વામ્ ।

આક્ષી શુભસ્પતી દન્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે અક્ષૌ-રૂપ પ્રકાશક નેત્રોની સમાન વર્તમાન શુભસ્પતી-ધર્મનું પાલન અને અશ્વિના-વિદ્યાની પ્રાપ્તિ કરાવનારા વા ઉપદેશ કરનારા વિદ્વાનો વામ્-તમારા પાસેથી તર્કવાનસ્ય-વિદ્યા પ્રાપ્ત વિદ્વાનના ચિત્-પણ ગાયત્રમ્-તે જ્ઞાનને જે ગાનારની રક્ષા કરે છે વા શ્રુતમ્-સાંભળેલ ઉત્તમ વ્યવહારને આ, દન્-ગ્રહણ કરતા અહમ્-હું હિ-જ સિંભ-ઉપદેશ કરું. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને આપનો દ્વારા જે-જે ભણાવામાં અને શ્રવણ કરવામાં આવે છે, તેને બીજાઓને નિત્ય ભણાવવા જોઈએ અને ઉપદેશ કરવો જોઈએ. જેમ બીજાઓથી સ્વયં વિદ્યા ગ્રહણ કરે, તેમ તે બીજાઓને આપવી જોઈએ. નિશ્ચય જ વિદ્યા-દાનથી સમાન (શ્રેષ્ઠ) બીજું કોઈ મહાન દાન નથી. (૬)

યુવં હ્યાસ્તં મહો રન્ યુવં વા યન્નિરતંસતમ્ ।

તા નો વસૂ સુગોપા સ્યાતં પાતં નો વૃકાદઘાયોઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે વસૂ-નિવાસ કરાવનારા અધ્યાપકો-ઉપદેશકો ! રન્-અન્યોને સુખ દેતા જે યુવમ્-પરપ

તમે યત્-જેના પર આસ્તમ્-બેસો વા-અથવા યુવમ્-તમે બન્ને ન:-અમારી સુગોપા-સમ્યક્ રક્ષા કરનારા સ્યાતમ્-થાઓ, તે મહ:-મહાન અઘાયો:-જે પોતાને અન્યાય કરવાથી પાપ ઈચ્છતા વૃકાત્-તે ચોર, ડાકુથી ન:-અમારું પાતમ્-પાલન કરો અને તા-તેઓ હિ-જ આપ બન્ને નિરતંતંસતમ્-વિદ્યા આદિ ઉત્તમ અલંકારોથી પરિપૂર્ણ શોભાયમાન કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ સભાપતિ અને સેનાપતિ ચોર આદિના ભયથી પ્રજાઓની રક્ષા કરે, તેમ એ બન્નેનું સર્વેએ પાલન કરવું જોઈએ. ધર્મ-કર્મમાં સંલગ્ન સર્વ અધ્યાપક, ઉપદેશક અને શિક્ષક અધર્મનો નાશ કરે. (૭)

મા કસ્મૈ ધાતમ્ભ્યમિત્રિણે નો માકુત્રા નો ગૃહેભ્યો ધેનવો ગુઃ ।

સ્તનાભુજો અશિશ્વીઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે રક્ષક સભા-સેનાધીશો ! તમે કસ્મૈ-કોઈ અમિત્રિણે-જેનો કોઈ મિત્ર નહિ અર્થાત્ સર્વનો શત્રુ એવા મનુષ્યને માટે ન:-અમને મા-ન અભિધાતમ્-કહો, આપની રક્ષા દ્વારા ન:-અમારી સ્તનાભુજ:-દૂધ ભરેલ સ્તનોથી પોતાના વાઇરડાઓ સહિત મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓનું પાલન કરતી ધેનવ:-ગાયો અશિશ્વી:-વાઇરડાથી રહિત અર્થાત્ - વંધ્યા મા-ન રહે અને તે અમારા ગૃહેભ્ય:-ઘરોથી અકુત્ર-વિદેશમાં ન ગુ:-પહોંચે - જાય. (૮)

ભાવાર્થ : પ્રજાજન રાજપુરુષોને આ રીતે કહે 'અમને શત્રુ પીડિત ન કરી શકે તથા અમારી ગાય આદિ પશુઓનું અપહરણ ન કરી શકે, એવો આપ લોકો પ્રયત્ન કરો. (૮)

દુહીયન્મિત્રધિતયે યુવાકુ રાયે ચ નો મિમીતં વાજવત્યૈ ।

ઙ્ષે ચ નો મિમીતં ધેનુમત્યૈ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે સર્વ વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત સભા-સેનાધીશો ! તમે બન્ને જે ગાયો દુહીયન્-દૂધ આદિથી પૂર્ણ કરે છે તેઓને ન-અમારા મિત્રધિતયે-જેથી મિત્રોની ધારણા થાય તથા યુવાકુ-સુખથી મિલન અને દુઃખથી અલગ થાય તે રાયે-ધનને ચ-અને જીવનને માટે મિમીતમ્-માનો, વાજવત્યૈ-જેમાં પ્રશંસિત જ્ઞાન વા ધેનુમત્યૈ-ગાયના સંબંધ વિદ્યમાન છે તેને ચ-તથા ઙ્ષે-ઈચ્છા માટે ન:-અમને મિમીતમ્-પ્રેરિત કરો અર્થાત્ પહોંચાડો. (૯)

ભાવાર્થ : જે ગાય આદિ પશુઓ મિત્રપાલન, જ્ઞાન અને ધનને નિમિત્તભૂત હોય, તેઓની મનુષ્યો નિત્ય રક્ષા કરે, સર્વને પુરુષાર્થ માટે પ્રવૃત્ત કરે, જેથી સુખનો સંયોગ અને દુઃખનો વિયોગ થાય. (૯)

અશ્વિનોરસનું રથમનશ્વં વાજિનીવતોઃ । તેનાહં ભૂરિં ચાકન ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : અહમ્-હું વાજિનીવતો:-જેની પ્રશંસિત વિજ્ઞાનયુક્ત સભા અને સેના વિદ્યમાન છે તે

અશ્વિનો:-સભા-સેનાધીશોના **અનશ્વમ્**-જેમાં ઘોડા વગેરે જોડાતા નથી. **રથમ્**-તે રમણ કરવા યોગ્ય વિમાનાદિ યાનનું **અસનમ્**-સેવન કરું અને તેન-તેના દ્વારા **ભૂરિ**-બહુ જ **ચાકન**-પ્રકાશિત બનું. (૧૦)

ભાવાર્થ : ભૂમિ, જળ અને આકાશમાં ગમન કરવા માટે જે યાન બનાવવામાં આવે છે, તેમાં પશુ જોડવામાં આવતા નથી, પરંતુ તે (યાન) જળ-અગ્નિ અને કલાયંત્ર આદિ દ્વારા ચાલે છે. (૧૦)

અયં સમહ મા તનૂહ્યાતે જનાં અનું। સોમપેયં સુખો રથઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે **સમહ**-સત્કાર સાથે વર્તમાન વિદ્વાન્ ! આપ જે **અયમ્**-એ **સુખઃ**-સુખ અર્થાત્ જેમાં સુંદર અવકાશ તથા **રથઃ**-રમણ વિહાર કરવા માટે જેમાં સ્થિત થાય તે વિમાન આદિ યાન છે જેથી અધ્યાપક અને ઉપદેશકોને **અનૂહ્યાતે**-અનુકૂળ એક દેશથી બીજા દેશમાં પહોંચાડવામાં આવે છે તેથી **મા**-મને **જનાન્**-વા મનુષ્યો અથવા **સોમપેયમ્**-ઐશ્વર્યયુક્ત મનુષ્યોને પીવા યોગ્ય ઉત્તમ રસને **તનુ-**વિસ્તૃત કરો અર્થાત્-ઉન્નતિ કરાવો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે શ્રેષ્ઠ યાનને બનાવનાર શિલ્પી હોય, તેનો સર્વેએ સત્કાર કરવો જોઈએ. (૧૧)

અધ્ સ્વર્ણસ્ય નિર્વિદેઽભુજ્જતશ્ચ રેવતઃ। ઉભા તા બસ્ત્રિં નશ્યતઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હું **સ્વર્ણસ્ય**-નિદ્રા **અભુજ્જતઃ**-આપ પણ નથી ભોગતા તે **ચ**-અને **રેવતઃ**-ધનવાન પુરુષની નિકટથી **નિર્વિદે**-ઉદાસીન ભાવને પ્રાપ્ત થાવું. **અધ**-તદનન્તર જે **ઉભા**-બે પુરુષાર્થહીન છે **તા**-તે બન્ને **વસ્ત્રિ**-સુખના સ્તંભન-રોકાવાથી **નશ્યતઃ**-નાશ પામે છે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે ઐશ્વર્યવાન હોવા છતાં દાતા નથી, જે દરિદ્ર હોવા છતાં મોટી-મોટી અભિલાષો યુક્ત છે, એ બન્ને આળસુ બનીને નિરંતર દુઃખભાગી બને છે. તેથી સર્વેએ પુરુષાર્થમાં પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૧૨)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં પ્રશ્નોત્તર, ભણવા-ભણાવવા અને રાજધર્મના વિષયનું વર્ણન હોવાથી આના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૨૦)

સૂક્ત-૧૨૧

કદિત્થા નૂંઃ પાત્રં દેવયતાં શ્રવદ્ ગિરો અઙ્ગિરસાં તુરણ્યન્।

પ્ર યદાનુઙ્વિશ્ આ હર્મ્યસ્યોરુ ક્રૈંસતે અધ્વરે યજત્રઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે પુરુષ ! તુ **અધ્વરે**-ન વિનાશ કરવા યોગ્ય પ્રજાપાલનરૂપ વ્યવહારમાં **યજત્રઃ**-સંગ કરનાર **તુરણ્યન્**-શીઘ્ર કરતા જેમ જ્ઞાન ઈચ્છનાર **નૂન્**-પ્રાપ્તવ્ય શિક્ષાને યોગ્ય બાલક વા મનુષ્યનું **પાત્રમ્**-પાલન કરે તથા **દેવયતામ્**-ઈચ્છતા **અઙ્ગિરસામ્**-અને વિદ્યાના સિદ્ધાન્તરસને પ્રાપ્ત વિદ્વાનોની **યત્**-જે **ગિરઃ**-વેદ વિદ્યાની શિક્ષારૂપ વાણીઓને **શ્રવત્**-સાંભળે તેને **ઙ્ગિ**-એ રીતે **કત્**-ક્યારે સાંભળશે અને જેમ ધર્માત્મા રાજા **હર્મ્યસ્ય**-ન્યાયાલયની મધ્યમાં વર્તમાન થઈને વિનયથી **વિશઃ**-પ્રજાજનોને

પ્રાનદ્-પ્રાપ્ત થાય ઝરુ-અને બહુ જ આ, ક્રંસતે-આક્રમણ કરે અર્થાત્ તેના વ્યવહારોમાં દોડાવે, એમ ક્યારે થશે ? (૧)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! જેમ આપ્તજન સર્વ મનુષ્યોને સત્ય સમજાવતા અને અસત્યથી તેઓને નિવૃત્ત કરતા સુશિક્ષા પ્રદાન કરે છે, તેમ તમે લોકો પોતાના સંતાન આદિને નિરંતર સુશિક્ષા આપો. જેથી તમારા કુળમાં અયોગ્ય સંતાન કદીપણ થાય નહિ. (૧)

સ્તમ્ભીદ્ દ્યાં સ ધ્વરુણં પ્રુષાયદ્ધુર્વાજાય દ્રવિણં નરો ગોઃ ।

અનુ સ્વજાં મહિષશ્ચક્ષત્ વ્રાં મેનામશ્વસ્ય પરિ માતરં ગોઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જેમ મહિષ:-મહાન સૂર્ય ગોઃ-(ભૂમિને ધારણ કરનાર છે, તેમ ઋષુ:-સમસ્ત વિદ્યાઓથી યુક્ત આપ્ત બુદ્ધિ મેધાવી નર:-ધર્મ અને વિદ્યાની પ્રાપ્તિ કરાવનાર સજ્જન વાજાય-વિજ્ઞાન વા અન્નને માટે અશ્વસ્ય-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય રાજ્યની સ્વજામ્-આપથી ઉત્પન્ન કરેલી વ્રામ્-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય માતરમ્-માતા સમાન પાલન કરનારી મેનામ્-વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી પ્રાપ્ત વાણીને પરિ, ચક્ષત-સર્વત્રથી કહે વા જેમ સૂર્ય ધામ્-પ્રકાશને સ્તમ્ભીત્-ધારણ કરે તેમ સ, હ-તે જ ગોઃ-પૃથિવી પર દ્રવિણમ્-ધન વધારીને ખેતરને ધસ્ટામ્-જળની સમાન અનુ-પ્રુષાયત્-સિંચન કરે. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય આપ્ત વિદ્વાનોના સંગ દ્વારા વિદ્યા, વિનય અને ન્યાયને ધારણ કરે, તે સુખ- પૂર્વક વધી શકે છે અને મહાન તથા પૂજ્ય બની શકે છે. (૨)

નક્ષદ્ધર્વમરુણીઃ પૂર્વ્ય રાટ્ તુરો વિશામઙ્ગિરસામનુ દ્યૂન્ ।

તક્ષદ્ધ્વઞ્નં નિયુતં તસ્તમ્ભદ્ દ્યાં ચતુષ્પદે નર્યાય દ્વિપાદે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે તુર:-તુરંત આલસ્ય ત્યાગી વિદ્વાન મનુષ્ય ચતુષ્પદે-ગાય આદિ પશુઓ દ્વિપાદે-મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓ વા નર્યાય-મનુષ્યોમાં અતિ શ્રેષ્ઠ મહાત્મજનને માટે અનુ,દ્યૂન્-પ્રતિદિન પૂર્વ્યમ્-પૂર્વ વિદ્વાનોએ અનુષ્ઠાન કરેલ હવમ્-દેવા-લેવા યોગ્ય અને અસ્ટામ્:-રાજનીતિઓને નક્ષત્-પ્રાપ્ત થાય, નિયુતમ્-નિત્ય કાર્યયુક્ત કરેલ વજ્રમ્-શસ્ત્ર-અસ્ત્રોને તક્ષત્-તિક્ષણ કરીને શત્રુઓને મારે તથા તેઓના દ્યામ્-વિદ્યા અને ન્યાયના પ્રકાશનું તસ્તમ્ભત્-સ્તંભન કરે, તે અઙ્ગિરસામ્-અંગોના રસ અથવા પ્રાણની સમાન પ્રિય વિશામ્-પ્રજાજનોની મધ્યમાં રાટ્-પ્રકાશમાન રાજા થાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : જે લોકો વિનય આદિ દ્વારા મનુષ્ય આદિ તથા ગાય આદિ પશુઓની અતીત = ભૂતકાળના આપ્ત રાજાઓની સમાન પાલન કરે છે તથા અન્યાયથી કોઈને મારતા નથી, તે જ સુખ પામે છે, અન્ય નહિ. (૩)

અસ્ય મદે સ્વર્યં દા ઋતાયાપીવૃતમુસ્ત્રિયાણામનીકમ્ ।

यद्धं प्रसर्गे त्रिककुम्भिवर्त्तदप द्रुहो मानुषस्य दुरो वः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : **યત્**-જે **ત્રિકકુપ્**-મનુષ્યો એવા છે કે જેની પૂર્વ આદિ દિશા વા અધ્યાપકો અને ઉપદેશકોથી યુક્ત છે **અસ્ય**-એ પ્રત્યક્ષ **માનુષસ્ય**-મનુષ્યના **ઉસ્ત્રિયાણામ્**-ગાયોની **પ્રસર્ગે**-ઉત્તમતાથી ઉત્પન્ન કરાવવારૂપ **મદે**-આનંદને નિમિત્ત **ત્રહાય**-સત્ય વ્યવહાર વા જળને માટે **અપીવૃતમ્**-સુખ અને બળથી યુક્ત **સ્વર્યમ્**-વિદ્યા અને સુશિક્ષા વચનોમાં શ્રેષ્ઠ **અનીકમ્**-સેનાને **દાઃ**-આપે તથા એ **દ્રુહઃ**-ગાય આદિ પશુઓના દ્રોહી અર્થાત્ મારનારા પશુહિંસક મનુષ્યોને **નિવર્તત્**-રોકે હિંસા ન થવા દે **દુરઃ**-તે દુષ્ટોના દ્વારા **અપઃ**-**વઃ** બંધ કરી દે, **હ-**તે જ ચક્રવર્તી રાજા થવાને યોગ્ય છે. (૪)

ભાવાર્થ : એ જ રાજપુરુષ ઉત્તમ હોય છે, જે પ્રજાસ્થિત મનુષ્યો અને ગાય આદિ પ્રાણીઓનાં સુખને માટે હિંસક મનુષ્યોનું નિવારણ કરીને ધર્મમાં સ્થિત થાય છે અને પરોપકારી હોય છે. જે અધર્મના માર્ગોને બંધ કરીને ધર્મના માર્ગોને ખોલે છે, તે જ રાજકર્મોને યોગ્ય બને છે. (૪)

તુભ્યં પયો યત્પિતરાવનીતાં રાધઃ સુરેતસ્તુરણે ભુરણ્યૂ ।

શુચિ યત્તે રેક્ષ્ણ આર્યજન્ત સર્વદુઘાયાઃ પયં ઉસ્ત્રિયાયાઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : ...હે સજ્જન ! **યત્**-જે **તુરણે**-દૂધ આદિ પદાર્થોને પીવા શીઘ્રતા કરતા **તુભ્યમ્**-તારા માટે **ભુરણ્યૂ**-ધારણ અને પુષ્ટિ કરનારા **પિતરૌ**-માતા-પિતા **સુરેતઃ**-જેનાથી ઉત્તમ વીર્ય ઉત્પન્ન થાય છે, તે **પયઃ**-દૂધ અને **રાધઃ**-શ્રેષ્ઠ સિદ્ધિકારક ધનની **અનીતામ્**-પ્રાપ્તિ કરાવે; તથા જેમ **યત્**-દૂધ આદિ પીવાની શીઘ્રતા કરતાં જે **તે**-તારા માટે દયાળુ ગાય આદિ પશુઓને રાખનાર મનુષ્ય **સર્વદુઘાયાઃ**-જેથી એક સમાન સુખ ધારણ કરનાર થાય છે તે દૂધને પૂરા કરનારી **ઉસ્ત્રિયાયાઃ**-ઉત્તમ પુષ્ટિ આપતી ગાયનું **શુચિ**-શુદ્ધ-પવિત્ર **પયઃ**-પીવા યોગ્ય દૂધને **રેક્ષ્ણઃ**-પ્રશંસિત ધનની સમાન આ, અર્યજન્ત-સારી રીતે આપે, તેમ તે મનુષ્યોની તું નિરંતર સેવા કર અને તેઓના ઉપકારને કદાપિ ન ભૂલ. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે જેમ માતા-પિતા અને વિદ્વાનોની સેવા રૂપી ધર્મથી સુખ પ્રાપ્ત કરે, તેમ જ ગાય આદિની રક્ષા રૂપી ધર્મથી સુખ પ્રાપ્ત કરે. તેઓનું અપ્રિય આચરણ કદી ન કરે. કારણ કે તે સર્વના ઉપકારકર્તા છે, એટલા માટે. (૫)

અધ પ્ર જજ્ઞે તરણિર્મમત્તુ પ્ર રોચ્યસ્યા ઉષસો ન સૂરઃ ।

ઇન્દુર્યેભિરાષ્ટ સ્વેદુહ્વ્યૈઃ સ્ત્રુવેણ સિજ્વજ્જરણાભિ ધામ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે શ્રેષ્ઠ કર્મોનું અનુષ્ઠાન કરનાર મનુષ્ય ! આપ **ઉષસઃ**-પ્રભાત સમયથી **સૂરઃ**-સૂર્યની ન-સમાન **યેભિઃ**-જેનાથી **સ્વેદુહ્વ્યૈ**-પોતાના દેવા-લેવા યોગ્ય દૂધ આદિ પદાર્થોથી ઐશ્વર્ય અર્થાત્ ઉત્તમ પદાર્થ સિદ્ધ થાય છે, તેનાથી અને **સ્ત્રુવેણ**-સુવા આદિના યોગથી **ધામ**-યજ્ઞ ભૂમિને **અભિસિજ્ઞન્**-સર્વત્રથી સિંચતા સજ્જનોની સમાન **અસ્યાઃ**-એ ગાયના દૂધ આદિ પદાર્થોથી **પ્ર, રોચિ**-સંસારમાં સમ્યક્

પ્રકાશમાન થાય અને **इन्द्रः-ऐश्वर्ययुक्त** **जरणा-प्रशंसित** કામોને **आष्ट-प्राप्त** થાય, **तरणिः-दुःખ**ને પાર કરેલ સુખનો વિસ્તાર કરનાર અર્થાત્ વધારનાર આપ **ममत्तु-आनंद** ભોગવો **अध-तदन्तर प्र,** **जज्ञे-प्रसिद्ध** થાઓ. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે ગાય આદિની રક્ષા કરીને તથા તેની વૃદ્ધિ કરીને વૈદ્યકશાસ્ત્ર અનુસાર તેના દૂધ આદિનું સેવન કરીને બળવાન તથા અત્યંત ઐશ્વર્યયુક્ત નિરંતર બને.

જેમ કોઈ સાધનથી યુક્તિપૂર્વક ખેતર તૈયાર કરી જળથી તેને સિંચીને તથા અન્ન આદિથી યુક્ત થઈને બળ અને ઐશ્વર્યથી સૂર્ય સમાન પ્રકાશિત થાય છે, તેમ જ એ પ્રશંસનીય કાર્યોને કરતા સર્વ પ્રકાશિત થાય. (૬)

स्विध्मा यद् वनधितिरपस्यात्सूरौ अध्वरे परि रोधना गोः ।

यद्ध प्रभासि कृत्व्याँ अनु द्यूनर्निविशे पश्विषे तुराय ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે સજ્જન મનુષ્ય ! તે **यत्-जे** એવી ઉત્તમ ક્રિયા કરી **स्विध्मा-जेथી** સુંદર સુખનો પ્રકાશ થતાં તે **वनधितिः-वनो**નું ધારણ અર્થાત્ રક્ષા કરી અને જે **गोः-गायनी** **रोधना-रक्षा** કરવાને માટે કામ કરેલ છે તેથી તું **अध्वरे-जे**માં હિંસા આદિ દુઃખ નથી, તે રક્ષાને કારણે **कृत्व्यान्-श्रेष्ठ** કામોનું **अनु, द्युन्-प्रतिदिन** **सूरः-प्रेरक** સૂર્યલોકની સમાન **अर्निविशे-બળદ** ગાડી આદિમાં જે બેસનાર તેને માટે અને **पश्विषे-पशुओनी** વૃદ્ધિની ઈચ્છાને માટે તથા **तुराय-शीघ्र** જવા માટે **यत्-जे ह-**નિશ્ચયપૂર્વક **प्रभासि-प्रकाशित** થાય છે, તે આપ **पर्यपस्यात्-पोताना** સર્વોત્તમ કામોની ઈચ્છા કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે લોકો પશુઓનાં પાલન અને વર્ધનને માટે વનોની રક્ષા કરીને, તેમાં તેઓને ચરાવીને તથા દૂધ આદિનું સેવન કરીને ખેતી આદિ કાર્યોને યથાવત્ કરે, તે રાજ્યરૂપી ઐશ્વર્યથી સૂર્યની સમાન પ્રકાશમાન થાય છે; અન્ય ગાય આદિના હિંસક લોકો નહિ. (૭)

अष्टा महो दिव आदो हरी इह द्युम्नासाहमभि योधान उत्सम् ।

हरिं धत्तै मन्दिनं दुक्षन्वृधे गोरभसमद्रिभिर्वाताप्यम् ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! તે-તમારા **यत्-जे** યોધાન:-યુદ્ધ કરનારા **वृधे-सुख** વર્ધનને માટે જેમ **आदः-**રસ આદિ પદાર્થોનું ભક્ષણ કરનાર અને **अष्टा-सर्वत्र** વ્યાપ્ત થનાર સૂર્યલોક **महः-मडान** **दिवः-दीप्तिथी** પોતાના **हरी-प्रकाश** અને આકર્ષણને **अद्रिभिः-मेघ** વા પર્વતોની સાથે પ્રચરિત કરે છે, તેમ **इह-आ** સંસારમાં **उत्सम्-कूवाने** બનાવી **द्युम्नासाहम्-जेथी** ધન મળે તે **हरिम्-धोडा** અને **मन्दिनम्-मनोडर** **वाताप्यम्-**શુદ્ધ વાયુથી પામવા યોગ્ય **गोरभसम्-गायोना** મહત્વને **अभि, दुक्षन्-सर्व** રીતે પૂર્ણ કરે, તે આપ સત્કાર કરવા યોગ્ય છો. (૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ સૂર્ય પોતાના પ્રકાશથી સમસ્ત સંસારને આનંદિત કરીને, આકર્ષણથી ભૂગોળને ધારણ કરે છે, તેમ નદી, સ્રોત અને કૂવા આદિ બનાવીને તથા વનોમાં ઘાસ આદિ વધારીને ગાય અને ઘોડા આદિની રક્ષા તથા વૃદ્ધિ કરીને દૂધ આદિના સેવનથી નિરંતર આનંદિત થાઓ. (૮)

ત્વમાયસં પ્રતિ વર્તયો ગોર્દિવો અશ્માનમુપનીતમૃભ્વા ।

કુત્સાય યત્ર પુરુહૂત વન્વજ્ઞુષ્ણમનન્તૈઃ પરિયાસિ વૃદ્ધૈઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે વન્વ-સારી રીતે સેવન કરનાર અને પુરુહૂત-અનેક મનુષ્યોને ઈર્ષાથી બોલાવેલ મનુષ્ય ! ત્વમ્-તું જેમ સૂર્ય દિવઃ-દિવ્ય સુખ આપનાર પ્રકાશથી અંધકારને દૂર કરીને, અશ્માનમ્-વ્યાપ્ત થનાર, ઉપનીતમ્-પોતાની સમીપ આવેલ મેઘને છિન્ન-ભિન્ન કરીને સંસારમાં પહોંચાડે છે, તેમ ત્રઘ્વા-મેઘાવી અર્થાત્ ધીરબુદ્ધિ યુક્ત પુરુષની સાથે આયસમ્-લોખંડના બનાવેલ શસ્ત્ર-અસ્ત્ર લઈને કુત્સાય-વજ્રને લઈને શુષ્ણમ્-શત્રુઓના પરાક્રમને શુષ્ક કરનાર બળને ધારણ કરીને યત્ર-જ્યાં ગાયોને મારનારા છે, ત્યાં તેઓને અનન્તૈઃ-જેની અસીમ સંખ્યા છે તે વૃદ્ધૈઃ-ગાયને મારનારને મારવાના ઉપાયોથી પરિયાસિ-સર્વથી પ્રાપ્ત થાય છે, તેઓને ગોઃ-આદિ પશુઓની સમીપથી પ્રતિ, વર્તયઃ-પણ પાછા વાળો. (૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ સૂર્ય મેઘને વરસાવીને તથા અંધકારને દૂર કરીને સર્વને આહ્લાદિત કરે છે, તેમ ગાય આદિની રક્ષા કરીને, તથા તેઓના હિંસકોને રોકીને નિરંતર સુખી થાઓ. આ કર્મ બુદ્ધિમાનોની સહાયતા વિના સંભવ નથી, તેથી બુદ્ધિમાનોના સહયોગથી જ તેને કરો. (૯)

પુરા યત્સૂરસ્તમસો અપીતેસ્તમદ્રિવઃ ફલિગં હેતિમસ્ય ।

શુષ્ણસ્ય ચિત્પરિહિતં યદોજો દિવસ્પરિ સુગ્રથિતં તદાદઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે અદ્રિવઃ-જેના રાજ્યમાં પ્રશંસિત પર્વત વિદ્યમાન છે, તેવા વિખ્યાત હે રાજન્ ! આપ જેમ સૂરઃ-સૂર્ય ફલિગમ્-મેઘને છિન્ન-ભિન્ન કરીને તમસઃ-અંધકારનો અપીતેઃ-વિનાશ કરનાર દિવઃ-પ્રકાશથી પ્રકાશમાન થાય છે, તેમ પોતાની સેનાથી તમ્-એ શત્રુબળનો આ, અદઃ-વિદારો અર્થાત્ વિનાશ કરો, યત્-જેને પુરા-પૂર્વ નિવૃત્ત કરતા રહ્યા છો તેને સુગ્રથિતમ્-ઠીક બાંધીને રોકો, યત્-જે અસ્ય-એના પરિહિતમ્-સર્વત્રથી સુખ આપનાર ઓજઃ-બળ છે તત્-તેને નિવૃત્ત કરીને શુષ્ણસ્ય-શોષક શત્રુને પરિ-સર્વત્રથી ચિત્-પણ હેતિમ્-તેના હાથથી વજ્રને પાડી નાખો, જેથી તે ગાયોને મારનાર ન બની શકે. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે રાજપુરુષો ! જેમ સૂર્ય મેઘને મારીને તથા તેને ભૂમિ પર પાડીને - વરસાવીને સર્વ પ્રાણીઓને તૃપ્ત કરે છે, તેમ તમે ગાયના હિંસકો-મારનારને પાડીને ગાય આદિને નિરંતર સુખી કરો. (૧૦)

અનુ ત્વા મહી પાજસી અચક્રે દ્યાવાક્ષામા મદતામિન્દ્ર કર્મન ।

ત્વં વૃત્રમાશયાનં સિરાસુ મહો વજ્રેણ સિષ્વપો વરાહુમ્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર**-પરમ ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત સભાધ્યક્ષ આદિ સજ્જનપુરુષ ! **ત્વમ્**-આપ સૂર્ય જેમ **વૃત્રમ્**-મેઘને ઇન્ન-ભિન્ન કરે છે, તેમ **સિરાસુ**-બંધુરૂપ નાડીઓમાં **મહઃ**-મહાન **વજ્રેણ**-શસ્ત્ર અને અસ્ત્રોના સમૂહથી **વરાહમ્**-ધર્મયુક્ત ઉત્તમ વ્યવહાર વા ધાર્મિક જનોને મારનારા દુષ્ટ શત્રુને મારીને **આશયાનમ્**-સંપૂર્ણ ગાઠ નિદ્રાથી સમાન **સિષ્વપઃ**-સુવડાવો જેથી **મહી**-મહાન **પાજસી**-રક્ષક અને પોતાનો પ્રકાશ કરવામાં **અચક્રે**-ન રોકાયેલ **દ્યાવાક્ષામા**-સૂર્ય અને પૃથિવી **ત્વા**-આપને પ્રાપ્ત થઈને તેમાંથી પ્રત્યેક **કર્મન્**-રાજ્યના કાર્યમાં તમને અનુકૂળતાથી આનંદ પ્રદાન કરે. (૧૧)

ભાવાર્થ : **રાજપુરુષોએ વિનય અને પરાક્રમથી દુષ્ટ શત્રુઓને બાંધીને, મારીને તથા દૂર કરીને મિત્રોને ધાર્મિક બનાવીને તથા સર્વ પ્રજાજનોને ઉત્તમ કર્મમાં પ્રવૃત્ત કરીને, આનંદિત થવું જોઈએ. (૧૧)**

ત્વમિન્દ્ર નર્યો યાં અવો નૃન્તિષ્ઠા વાતસ્ય સુયુજો વહિષ્ઠાન્ ।

યં તે કાવ્ય ડશનાં મન્દિનં દાદ્ વૃત્રહણં પાર્યં તતક્ષ વજ્રમ્ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર**-પ્રજાપાલક **કાવ્યઃ**-ધીર શ્રેષ્ઠ મેઘાવીના પુત્ર, **ડશના**-ધર્મની કામના કરનાર, **નર્યઃ**-મનુષ્યોમાં શ્રેષ્ઠ-સાધુજન ! **ત્વમ્**-આપ યાન્-જે **વહિષ્ઠાન્**-અત્યંત વિદ્યા ધર્મની પ્રાપ્તિ કરાવનાર **વાતસ્ય**-પ્રાણની મધ્ય યોગાભ્યાસથી **સુયુજઃ**-શ્રેષ્ઠયુક્તયોગી **નૃન્**-ધાર્મિક જનોની **અવઃ**-રક્ષા કરો છો તેની સાથે ધર્મની મધ્યમાં **તિષ્ઠ**-સ્થિર થાઓ, જે **તે**-આપના માટે **યમ્**-જે **વૃત્રહણમ્**-શત્રુનાશક વીર **મન્દિનમ્**-પ્રશંસાને યોગ્ય **પાર્યમ્**-જેથી પૂર્ણ કામ બને તે મનુષ્યને **દાત્**-આપે **વા**-જે શત્રુઓ પર **વજ્રમ્**-અતિ તેજ શસ્ત્રો અને અસ્ત્રોને **તતક્ષ**-ફેંકે **તે**-તેની સાથે પણ ધર્મથી વર્તો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ **રાજપુરુષ પરમેશ્વરના ઉપાસકો, અધ્યાપકો, ઉપદેશકો તથા અન્ય શ્રેષ્ઠ વ્યવહાર કરનાર પ્રજાજનો અને સૈનિકોની રક્ષા કરે, તેમ જ તેની (રાજપુરુષોની) તેઓ પણ નિરંતર રક્ષા કરે. (૧૨)**

ત્વં સૂરોં હરિતોં રામયો નૃન્ભરંચ્ચક્રમેતશો નાયમિન્દ્ર ।

પ્રાત્યં પારં નવતિં નાવ્યાનામપિં કર્ત્તમવર્ત્તયોડયજ્યૂન્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર**-પરમ ઐશ્વર્યદાતા સભાધ્યક્ષ ! **ત્વમ્**-આપ **અયમ્**-એ **સૂરઃ**-સૂર્યલોક જેમ **હરિતઃ**-કિરણોને વા જેમ **અતશઃ**-શ્રેષ્ઠ ઘોડાને **ચક્રમ્**-જેથી રથ ચાલે છે તે પૈડાને યથાયોગ્ય કામમાં યુક્ત થાય છે. **ન**-તેમ **અયજ્યૂન્**-વિષયોમાં સંગ ન કરનારા અને **નૃન્**-પ્રજાજનોને ધર્મની પ્રાપ્તિ કરાવનારા મનુષ્યોની **ભરત્**-પુષ્ટિ અને પાલન કરો તથા **નાવ્યાનામ્**-નોંકાઓથી પાર કરવા યોગ્ય જે **નવતિમ્**-જળમાં ચાલનાર નેવું રથ છે તેને **પારમ્**-સમુદ્રથી પાર **પ્રાસ્ય**-ઉત્તમતાથી પહોંચાડો તથા તે ઉક્ત પુરુષાર્થી પુરુષોને **અપિ**-પણ **કર્ત્તમ્**-કૃવા ખોદવા તથા કર્મ કરવા **અવર્ત્તયઃ**-પ્રવૃત્ત કરાવો અને આપ અહીં અમને

સદા રમયઃ-આનંદમાં રમણ કરાવો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય સર્વને પોત-પોતાના કર્મમાં પ્રેરિત કરે છે, તેમ આપ્ત વિદ્વાનજન અવિદ્વાનોને શાસ્ત્રમાં અને શરીર સંબંધી કર્મમાં પ્રવૃત્ત કરીને સર્વ સુખોને સિદ્ધ કરે. (૧૩)

ત્વં નોં અસ્યા ઇન્દ્ર દુર્હણાયાઃ પાહિ વજ્રિવો દુરિતાદુભીકૈં ।

પ્ર નો વાજાન્નથ્યોઃ઼્ અશ્વબુધ્યાન્નિષે યન્ધિ શ્રવસે સૂનૃતાયૈ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : વજ્રિવઃ-જેની પ્રશંસિત વિશેષ જ્ઞાનયુક્ત વિદ્યમાન છે, તે ઇન્દ્ર-અધર્મ વિનાશક હે સેનાધ્યક્ષ ! રથ્યઃ-રથને લઈ જનાર યુક્ત બનીને ત્વમ્-તું અબીકૈ-સંગ્રામમાં અસ્યાઃ-એ પ્રત્યક્ષ દુર્હણાયાઃ-દુઃખથી મારવા યોગ્ય શત્રુઓની સેના અને દુરિતાત્-દુષ્ટ આચરણથી નઃ-અમારી પાહિ-રક્ષા કર તથા ઇષે-ઈચ્છા અવસે-સાંભળવું વા અન્ન અને સૂનૃતાયૈ-ઉત્તમ સત્ય અને પ્રિયવાણીને માટે નઃ-અમારા અશ્વબુધ્યાન્-અન્તરિક્ષમાં થયેલ અગ્નિ આદિ પદાર્થોને ચલાવવા વા વધારવા જે જાણે છે તને તથા વાજાન્-વિશેષ જ્ઞાન વા વેગયુક્ત સંબંધીઓને પ્ર, યન્ધિ-સારી રીતે આપ. (૧૪)

ભાવાર્થ : સેનાપતિએ પોતાની સેના શત્રુઓ દ્વારા મારી જાય તથા દુષ્ટ આચરણ કરવાથી પૃથક્ રાખવી જોઈએ, વીરોને બળ, ઈચ્છાનુસાર બળવર્ધક પીવાના પદાર્થો તથા પુષ્કળ અન્ન આપીને, તેને પ્રસન્ન કરીને, શત્રુઓને જીતીને પ્રજાઓનું નિરંતર પાલન કરવું જોઈએ. (૧૪)

મા સા તેં અસ્મત્સુમતિર્વિ દસદ્વાજપ્રમહઃ સમિષો વરન્ત ।

આ નોં ભજ મઘવન્ગોષ્વર્યો મંહિષ્ટાસ્તે સઘમાદઃ સ્યામ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે વાજપ્રમહઃ-વિજ્ઞાન વા વિદ્વાનોએ સારી રીતે સત્કાર કરેલ મઘવન્-અને પ્રશંસિત ધનથી યુક્ત જગદીશ્વર ! તે-આપની કૃપાથી જે સુમતિઃ-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ છે, સા-જે અસ્મત્-અમારી નિકટથી મા, વિ, દસત્-વિનાશને પ્રાપ્ત ન થાય, સર્વ મનુષ્યો ઇષઃ-ઈચ્છા અને અન્ન આદિ પદાર્થોને સં, વરન્ત-સમ્યક્ સ્વીકાર કરે, અર્યઃ-સ્વામી ઈશ્વર આપ નઃ-અમને ગોષુ-પૃથિવી, વાણી, ધેનુ = ગાય અને ધર્મના પ્રકાશોમાં આ, ભજ-ચાહો, જેથી મંહિષ્ટાઃ-અત્યંત સુખ અને વિદ્યા આદિ પદાર્થોથી વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થયેલ અમે તે-આપના સઘમાદઃ-અત્યંત આનંદ સાથે સ્યામ-અર્થાત્ આપના વિચારમાં મગ્ન રહીએ. (૧૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઉત્તમ બુદ્ધિ આદિની પ્રાપ્તિને માટે પરમેશ્વરને સ્વામી માનવા જોઈએ અને તેઓથી પ્રાર્થના કરવી જોઈએ. જેથી ઈશ્વરના જેવા ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ છે, તેવા પોતાનામાં (પ્રાપ્ત) કરીને પરમાત્માની સાથે આનંદમાં નિરંતર રહે. (૧૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સ્ત્રી-પુરુષ અને રાજ-પ્રજા આદિના ધર્મનુ વર્ણન હોવાથી પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે આ સૂક્તના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૨૧)

સૂક્ત-૧૨૨

મહાવેદભાષ્ય

૫૩૩

प्र वः पान्तं रघुमन्यवोऽन्धो यज्ञं रुद्राय मीढुषे भरध्वम् ।

दिवो अस्तोष्यसुरस्य वीरैरिषुध्येव मरुतो रोदस्योः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે રઘુમન્યવ:-અલ્પ ક્રોધવાળા મનુષ્યો ! જેમ રોદસ્યો:-ભૂમિ અને સૂર્યમંડળમાં મસ્ત:-વાયુ વિદ્યમાન છે, જેમ રૂઘુધ્યેવ-ધનુષ્યમાં બાણ ચડાવવામાં આવે છે, તેમ વીર:-વીર મનુષ્યોની સાથે વર્તમાન તમે મીઢુષે-સજ્જનો પ્રત્યે સુખ રૂપી વૃષ્ટિ કરનાર અને સ્દાય-દુષ્ટોને રડાવનાર સભાધ્યક્ષાદિને માટે વ:-તમારી પાન્તમ્-રક્ષા કરતા યજ્ઞમ્-સંગ કરવા યોગ્ય ઉત્તમ વ્યવહાર અને અન્ધ:-અન્નને તથા દિવ:-વિદ્યા પ્રકાશો જે અસુરસ્ય-અવિદ્વાનોના સંબંધમાં વર્તમાન ઉપદેશ આદિ તેઓને જેમ પ્ર, ભરધ્વમ્-ધારણ અને પુષ્ટ કરો, તેમ હું તેથી તમારા વ્યવહારની અસ્તોષિ-સ્તુતિ કરું છું. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા જ્યારે યોગ્ય પુરુષોની સાથે મળીને પુરુષાર્થ કરવામાં આવે છે, ત્યારે કઠિન કાર્ય પણ સહજ ભાવથી સિદ્ધ કરી શકાય છે. (૧)

પત્નીવ પૂર્વહૂતિં વાવૃધ્ધ્યાં ઉષાસાનક્તાં પુરુધા વિદાને ।

સ્તરીનાત્કં વ્યુતં વસાના સૂર્યસ્ય શ્રિયા સુદૃશી હિરણ્યૈઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે સરલ સ્વભાવયુક્ત શ્રેષ્ઠ સ્ત્રી ! તું પત્નીવ-જેમ યજ્ઞાદિ કર્મમાં સાથે રહેનારી વિદ્વાનની વવૃધ્ધ્યૈ-વૃદ્ધિ કરવા અર્થાત્ ગૃહસ્થાશ્રમ આદિ વ્યવહારોને વધારવા માટે પૂર્વહૂતિમ્-જેને પ્રથમ બોલાવવા અર્થાત્ સર્વ કાર્યોમાં જેની પ્રથમ સેવા કરવાની હોય તે પોતાના પતિનો સ્વીકાર કરીને પુસ્થા-જે બહુજ વ્યવહાર અને પદાર્થોથી ધારણ કરનારા વિદાને-જાણવામાં આવતા તે ઉષાસાનક્તા-રાત્રિ-દિવસની સમાન વર્તે, તેમ વર્તન કર; તથા સૂર્યસ્ય-સૂર્ય મંડળની હિરણ્યૈઃ-સુવર્ણ સમાન ચમકતી જ્યોતિઓ અને શ્રિયા-ઉત્તમ શોભાથી સુદૃશી-જે તારુ સુંદર દર્શન તે અત્કમ્-કૂવાની સમાન વ્યુતમ્-અનેક પ્રકારની બનેલ વિસ્તારયુક્ત વસ્ત્રને વસાના-મહેકતી સ્તરી:-જેમ કલાયંત્રાદિના સંયોગથી ઢાંકેલ નાવ હોય, ન-તેવી નિરંતર બન. (૨)

ભાવાર્થ : પતિવ્રતા પત્ની સુશીલ પતિને પ્યાર કરે છે અને પત્નીવ્રત પતિ સુશીલ પત્નીને (પ્યાર કરે છે) તે બન્ને જેમ દિવસ અને રાત સંબંધ છે, તેમ વર્તન કરીને વસ્ત્રો અને આભૂષણોથી સુશોભિત થઈને ધર્મ-વ્યવહારમાં યથોચિત્ રૂપથી પ્રયત્ન કરે. (૨)

મમત્તુ નઃ પરિજ્મા વસર્હા મમત્તુ વાતો અપાં વૃષણવાન્ ।

શિશીતમિન્દ્રાપર્વતા યુવં નસ્તન્નો વિશ્વે વરિવસ્યન્તુ દેવાઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જેમ વસર્હા-નિવાસ કરવાની યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરીને તથા પરિજ્મા-પ્રાપ્ત પદાર્થોને સર્વત્રથી

ખાતો અને બાળતો અગ્નિ ન:-અમને મમત્તુ-આનંદિત કરે, વા અપામ્-જળની વૃષણવાન્-વર્ષા કરાવનાર
વાત:-વાયુ અમને મમત્તુ-આનંદયુક્ત કરે.

હે ઇન્દ્રાપર્વતા-સૂર્ય અને મેઘની સમાન વર્તમાન અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! યુવમ્-તમે બન્ને
ન:-અમને શિશીતમ્-અતિ તીક્ષ્ણ બુદ્ધિથી યુક્ત કરો; વા વિશ્વે-સર્વ દેવા:-વિદ્વાનો ન:-અમારે માટે
વરિવસ્યન્તુ-સેવન અર્થાત્ આશ્રય કરે, તેમ તત્-તે સર્વને અમે નિરંતર સત્કારયુક્ત કરીએ. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો જેમ અમને પ્રસન્ન કરે, તેમ અમે પણ તેઓને પ્રસન્ન કરીએ. (૩)

उत त्या में यशसां श्वेतनायै व्यन्ता पान्तौशिजो हुवध्यैः ।

प्र वो नपातम्पां कृणुध्वं प्र मातरां रास्पिनस्यायोः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! મે-મારા યશસા-ઉત્તમ યશથી, શ્વેતનાયૈ-પ્રકાશને માટે, વ્યન્તા-અનેક
પ્રકારના બળથી યુક્ત, પાન્તા-રક્ષા કરનારા, ત્યા-તેઓ પૂર્વોક્ત અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો હુવધ્યૈ-
અમને ગ્રહણ કરવા માતરા-માન કરનારા રાસ્પિનસ્ય-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય આયો:-જીવન અર્થાત્ આયુને
વૃદ્ધિ માટે પ્ર-પ્રવૃત્ત થાય છે; તથા જેમ તમે અપામ્-જળને નપાતમ્-વિનાશ રહિત માર્ગને વા જળ
ન પાડવાને પ્ર, કૃણુધ્વમ્-સિદ્ધ કરો, તેમ ઉત-નિશ્ચયથી ઔશિજ:-કામના કરનારના સંતાનમાં વ:-
તમારી આયુની નિરંતર વૃદ્ધિ કરું. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઉત્તમ શિક્ષાથી તમે અમારી આયુની વૃદ્ધિ કરો છો, તેમ અમે
પણ તમારા જીવનની વૃદ્ધિ કરીએ. (૪)

आ वो रुवण्युमौशिजो हुवध्यै घोषेव शंसमर्जुनस्य नंशे ।

प्र वः पूष्णे दावन आँ अच्छा वोचेय वसुतातिमग्नेः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! ઔશિજ:-વિદ્યાની કામના કરનારનો પુત્ર હું વ:-તમારા સ્વણ્યુમ્-સુંદર
કહેલ ઉત્તમ ઉપદેશને આ, હુવધ્યૈ-ગ્રહણ કરવા માટે અર્જુનસ્ય-રૂપના શંસમ્-પ્રશંસિત વ્યવહારને
વા ઘોષેવ-વિદ્વાનોની વાણીની સમાન દુઃખનો નંશે-નાશ અને વ:-તમારી પૂષ્ણો-પુષ્ટિ કરનાર તથા
દાવને-બીજાઓને આપવા માટે અગ્ને:-અગ્નિના સાનિધ્યથી જે વસુતાતિમ્-ધન તેને જ પ્ર, આ, અચ્છા,
વોચેય-ઉત્તમતાથી સારી રીતે કહું. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ વેદો સર્વને આરોગ્ય પ્રદાન કરીને રોગોની શીઘ્ર નિવૃત્તિ કરે છે, તેમ સર્વ વિદ્વાનજન
સર્વને સુખી કરીને સુપ્રતિષ્ઠિત બનાવે. (૫)

श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमोत श्रुतं सदने विश्वतः सीम् ।

श्रोतुं नः श्रोतुंरतिः सुश्रोतुः सुक्षेत्रा सिन्धुरद्धिः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે મિત્રાવસ્થા-મિત્ર અને શ્રેષ્ઠ જન સુશ્રોતુઃ-મે-સારું સાંભળનાર મને ઇમા-એ હવા-આપવા યોગ્ય વચનોને શ્રુતમ્-સાંભળો ઉત-જ અને સદને-સભા વા વિશ્વતઃ-સર્વત્રથી સીમ્-મર્યાદામાં શ્રુતમ્-સાંભળો અર્થાત્ ત્યાંની ચર્યાને સમજો તથા અભિદઃ-જળથી જેમ સિન્ધુઃ-નદી સુક્ષેત્રા-ઉત્તમ ખેતરોને પ્રાપ્ત થાય, તેમ શ્રોતુરાતિઃ-જેનું સાંભળેલું બીજાને આપવું છે, તે નઃ-અમારા વચનોને શ્રોતુ-સાંભળો છે. (૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ સર્વના પ્રશ્નો સાંભળીને, તેનું યશોચિત સમાધાન કરવું જોઈએ. (૬)

સ્તુષ્વે સા વાં વરુણ મિત્ર રાતિર્ગવાં શતા પૃક્ષયામેષુ પૃજે ।

શ્રુતરથે પ્રિયરથે દધાનાઃ સદ્યઃ પુષ્ટિં નિરુન્ધાનાસો અગમન્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : જેમ વિદ્વાનજન ! પૃજે-પદાર્થોને પહોંચાડનાર શ્રુતરથે-સાંભળેલ રમણ કરવા યોગ્ય રથ વા પ્રિયરથે-અતિ મનોહર રથમાં સદ્યઃ-શીઘ્ર પુષ્ટિમ્-પુષ્ટિને દધાનાઃ-ધારણ કરીને તથા દુઃખને નિરુન્ધાનાસઃ-રોકીને અગમન્-જાય, તેમ હે વસ્ત્રા-ગુણોથી શ્રેષ્ઠતાને પ્રાપ્ત અને મિત્ર-મિત્ર તમે પૃક્ષયામેષુ-પૂછવામાં આવતા યમ, નિયમોમાં ગવાં, શતા-સેંકડો વચનોને પ્રાપ્ત થાઓ અને જે તમારી રાતિઃ-દાન આપનારી સ્ત્રી છે, સા-તે વામ્-તમારી બન્નેની સ્તુષ્વે-સ્તુતિ કરે છે, તેમ હું પણ સ્તુતિ કરું. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ આ જગતમાં વિદ્વાન લોકો પુરુષાર્થથી અનેક અદ્ભુત યાનોને બનાવે છે, તેમ અન્ય મનુષ્યોએ પણ બનાવવા જોઈએ. (૭)

અસ્ય સ્તુષ્વે મહિમઘસ્ય રાધઃ સચા સનેમ્ નહુષઃ સુવીરાઃ ।

જનો યઃ પૃજેભ્યો વાજિનીવાનશ્વાવતો રથિનો મહ્યં સૂરિઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ અસ્ય-આ અશ્વાવતઃ-પુષ્કળ ઘોડાઓથી યુક્ત રથિનઃ-પ્રશંસિત રથ અને મહિમઘસ્ય-પ્રશંસિત ઉત્તમ ધનવાનના રાધઃ-ધનની તુષ્વે-સ્તુતિ અર્થાત્ પ્રશંસા કરો છો તે આપના એ કાર્યને સુવીરાઃ-સુંદર શૂરવીર મનુષ્યો યુક્ત અમે સચા-સંબંધથી સનેમ્-સમ્યક્ સેવન કરીએ.

યઃ-જે નહુષઃ-શુભ-અશુભ કામોમાં બંધાયેલ જનઃ-મનુષ્ય પૃજેભ્યઃ-અનેક સ્થાનમાં પહોંચાડનાર યાનોથી વાજિનીવાન્-પ્રશંસિત વેદોક્ત ક્રિયાયુક્ત હોય છે, તે સૂરિઃ-વિદ્વાન મહ્યમ્-મારા માટે એ વેદોક્ત શિલ્પવિદ્યા આપે. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ પુરુષાર્થી મનુષ્ય સમૃદ્ધિવાન્ બને છે, તેમ સર્વેએ બનવું જોઈએ. (૮)

જનો યો મિત્રાવરુણાવભિધ્રુગપો ન વાં સુનોત્યક્ષણયાધ્રુક્ ।

સ્વયં સ યક્ષમ્ હૃદયે નિ ધત્ત આપ યદીં હોત્રાભિર્ઋતાવા ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે સત્ય ઉપદેશકો અને યજ્ઞ કરનારાઓ ! ય:-જે જન:-વિદ્વાન્ વામ્-તમે બન્નેને અપ:-પ્રાણ અર્થાત્ બળને મિત્રાવસ્થા-જેમ પ્રાણ અને ઉદાન તેમ અભિધુક્-પ્રથમ દ્રોહ કરતા વા અક્ષણયાધુક્-કુટિલ રીતિથી દ્રોહ કરતા ન-નહિ સુનોતિ-ઉત્પન્ન કરતા સ:-તે સ્વયમ્-આપ હૃદયે-પોતાના હૃદયમાં યક્ષમ્-રાજરોગ (યક્ષ્મા) ને નિ, ધત્તે-નિરંતર ધારણ કરતા વા યત્-જે ઋજ્ઞાવા-સત્ય ભાવથી સેવન કરનાર હોત્રાભિ:-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય ક્રિયાઓથી ઈમ્-સર્વત્રથી આપના વ્યવહારને પ્રાપ્ત થાય છે, તે આપ-પોતાના હૃદયમાં સુખને નિરંતર ધારણ કરે છે. (૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પરોપકારી વિદ્વાનોથી દ્રોહ કરે છે, તે સદા દુઃખી અને જે તેઓથી પ્રેમ કરે છે, તે સુખી થાય છે. (૯)

સ વ્રાઘતો નહુષો દંસુજૂતઃ શર્ધસ્તરો નરાં ગૂર્ત્તશ્રવાઃ ।

વિસૃષ્ટરાતિર્યાતિ બાઢસૃત્વા વિશ્વાસુ પૃત્સુ સદમિચ્છૂરઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : જે દંસુજૂત:-વિનાશ કરનારા વીરોને પ્રેરિત કરેલ, શર્ધસ્તર:-અત્યંત બળવાન, ગૂર્ત્તશ્રવા:-જેના પુરુષાર્થની સાથે સાંભળવા અને અન્ન આદિ પદાર્થ, વિસૃષ્ટરાતિ:-જેને અનેક પ્રકારના દાન આદિ સર્વોત્તમ કામ સિદ્ધ કરેલ, બાઢસૃત્વા-જે પ્રશંસિત બળથી ચાલનાર શૂર:-અને શત્રુઓને મારનાર નહુષ:-મનુષ્ય નરામ્-નાયક વીરોની વિશ્વાસુ-સમસ્ત પૃત્સુ-સેનાઓમાં સદમ્-શત્રુનાશક વીર સેનાજનને ઇત્-જ ગ્રહણ કરીને વ્રાઘત:-વિરોધ કરનારાઓને યુદ્ધને માટે યાતિ-પ્રાપ્ત થાય છે, સ:-તે વિજય પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ શત્રુઓની અધિક યુદ્ધની સામગ્રી તૈયાર કરીને ઉત્તમ સહયોગથી તે શત્રુઓને જીતવા જોઈએ. (૧૦)

અધ્ ગ્મન્તા નહુષો હવં સૂરેઃ શ્રોતાં રાજાનો અમૃતસ્ય મન્દ્રાઃ ।

નભોજુવો યન્નિરવસ્ય રાઘઃ પ્રશસ્તયે મહિના રથવતે ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે મન્દ્રા:-આનંદકારક રાજાન:-પ્રકાશમાન સજ્જનો ! તમે અમૃતસ્ય-આત્મરૂપથી મરણ ધર્મ રહિત સૂરે:-સમસ્ત વિદ્યાવિદ નહુષ:-વિદ્વાનના હવમ્-ઉપદેશને શ્રોત-સાંભળો. નભોજુવ:-વિમાનાદિથી આકાશમાં ગમન કરતા તમે યત્-જે નિરવસ્ય-રક્ષાહીનનું રાઘ:-ધન છે તેને ગ્મન્ત-પ્રાપ્ત થાઓ. અધ-તદનન્તર મહિના-મહાન પ્રશસ્તયે-પ્રશંસિત રથવતે-પુષ્કળ રથવાળાઓને ધન પ્રદાન કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે લોકો પરમેશ્વર, પરમ વિદ્વાન અને પોતાના આત્માના વિરોધી નથી હોતા અને તેઓના ઉપદેશોને ગ્રહણ કરે છે, તેઓ વિદ્યા પ્રાપ્ત કરેલ 'મહાશય' (મહાન ભાવવાળા) બની જાય છે. (૧૧)

एतं शब्दं धाम यस्य सूरैरित्यवोचन् दशतयस्य नंशे ।

द्युम्नानि येषु वसुताती रारन्विश्वे सन्वन्तु प्रभृथेषु वाजम् ॥ १२ ॥

पदार्थ : वसुताति:-धन आदि ऐश्वर्ययुक्त हुं જેમ વિદ્વાન્ यस્ય-જે દશતયસ્ય-દશ પ્રકારની વિદ્યાઓથી યુક્ત સૂરે:-વિદ્વાનનાં સાનિધ્યથી જે શર્ધમ્-બળયુક્ત ધામ-સ્થાનને અવોચન્-કહે; વા જે વિશ્વે-સર્વ વિદ્વાનો વાજમ્-જ્ઞાન વા અન્નને રારન્-આપે, યેષુ-જેઓ પ્રવૃથેષુ-શ્રેષ્ઠ ધારણ કરેલ પદાર્થોમાં દ્યુમ્નानિ-યશ વા ધનનું સન્વન્તુ-સેવન કરે, ઇતિ-એ રીતે તે જ્ઞાન અને એતમ્-એ પૂર્વોક્ત સર્વ પદાર્થોનું સેવન કરીને દુઃખોનો નંશે-નાશ કરું. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનજનો સમસ્ત વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરીને સંપૂર્ણ વિદ્યાઓના જ્ઞાતા (બનીને) અન્યોને તેનો ઉપદેશ કરે છે, તે 'યશસ્વી' બને છે. (૧૨)

મન્દામહે દશતયસ્ય ધાસેર્દ્વિર્યત્પઞ્ચ બિભ્રતો યન્ત્યન્ના ।

કિમિષ્ટાશ્વ ઙ્ઙષ્ટરશ્મિરેત ઙ્ઙશાનાસસ્તરુષ ઋઙ્ઙજતે નૂન્ ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : યત્-જે પઞ્ચ-અધ્યાપક, ઉપદેશક અને ભણનાર અને ઉપદેશ શ્રવણ કરનાર તથા સામાન્યજન દશતયસ્ય-દશ પ્રકારના ધાસે:-વિદ્યા, સુખને ધારણ કરનારા વિદ્વાનની વિદ્વાને તથા અન્ના-સુસંસ્કારથી સિદ્ધ કરેલ અન્નોને દ્વિ:-બે વાર યન્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે; વા જે એતે-એ ઙ્ઙશાનાસ:-સમર્થ તસ્મઃ:-અવિદ્યા, અજ્ઞાનમાં ડૂબાડનારને ઋઙ્ઙજતે-પ્રસિદ્ધ કરે છે, તે બિભ્રત:-વિદ્યા સુખથી સર્વની પુષ્ટિ નૂન્-અને વિદ્યાઓની પ્રાપ્તિ કરાવનારા મનુષ્યોની અને મન્દામહે-સ્તુતિ કરીએ છીએ, તેઓની શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને મનુષ્ય ઙ્ઙષ્ટાશ્વ:-જેને ઘોડાઓ પ્રાપ્ત થયા વા ઙ્ઙષ્ટરશ્મિ:-જેઓએ કલા યંત્રાદિના કિરણો સંયુક્ત કર્યા એથી કિમ્-શું ન થઈ શકે ? (૧૩)

ભાવાર્થ : જે સુશિક્ષા દ્વારા સર્વને વિદ્વાન બનાવીને, સાધનો દ્વારા ઈષ્ટને સિદ્ધ કરનારા સમર્થ વિદ્વાનોનું સેવન કરતા નથી, તેઓ અભીષ્ટ સુખ પણ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૧૩)

હિરણ્યકર્ણ મણિગ્રીવમર્ણસ્તન્નો વિશ્વે વરિવસ્યન્તુ દેવાઃ ।

અર્યો ગિરઃ સદ્ય આ જગમુષીરોસ્ત્રાશ્ચાકન્તૂભયેષ્વસ્મે ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : જે વિશ્વે-દેવાઃ-સમસ્ત વિદ્વાન નઃ-અમારા માટે જગમુષીઃ-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય ગિરઃ-વાણીઓની સદ્યઃ-શીઘ્ર આ, ચાકન્તુ-સમ્યક્ કામના કરે; વા ઉભયેષુ-પોતાના તથા બીજાઓના કારણે તથા અસ્મે-અમારામાં જે અર્ણઃ-સારું બનેલું જળ છે તેની કામના કરે, જે અર્થઃ-વૈશ્ય પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય સર્વ દેશ, ભાષાઓ અને ઉસ્ત્રાઃ-ગાયોની કામના કરે, તે હિરણ્યકર્ણમ્-કાનોમાં કુંડલ અને મણિગ્રીવમ્-ડોકમાં મણી પહેરેલ વૈશ્યને તત્-તથા તે ઉક્ત વ્યવહાર અને અમારી આ, વરિવસ્યન્તુ-સારી રીતે

સેવા કરે, તે સર્વની અમે પ્રતિષ્ઠા કરાવીએ. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન ને વિદુષીઓ પુત્રો અને પુત્રીઓને શીઘ્ર વિદ્વાન અને વિદુષી બનાવે છે તથા જે વૈશ્ય = વેપારીઓ સર્વ દેશોની ભાષાઓને જાણીને દેશ-દેશાન્તર અને દ્વીપ-દ્વીપાન્તરથી ધન લાવીને લક્ષ્મીવાન બને છે, તેઓનો સર્વેએ સર્વ રીતે સત્કાર કરવો જોઈએ. (૧૪)

चत्वारो मा मशरारस्य शिश्वस्त्रयो राज्ञ आयवसस्य जिष्णोः ।

रथो वां मित्रावरुणा दीर्घाप्साः स्यूमगभस्तिः सूरौ नाद्यौत् ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે મિત્રાવરુણા-મિત્ર અને શ્રેષ્ઠધન ! જે વામ્-તમારા રથ:-રથ છે, તે મા-મને પ્રાપ્ત થાય જે મશરારસ્ય-દુષ્ટ શબ્દોનો વિનાશ કરીને આયવસસ્ય-પૂર્ણ સામગ્રીયુક્ત જિષ્ણો:-શત્રુઓને જીતનારા રાજ્ઞ:-ન્યાય અને વિનયથી પ્રકાશમાન રાજાના સ્યૂમગભસ્તિ:-બહુ જ કિરણોથી યુક્ત સૂર:-સૂર્યના ન-સમાન રથ અદ્યૌત્-પ્રકાશ કરીને તથા જેઓની દીર્ઘાપ્સા:-જે શ્રેષ્ઠ ગુણોમાં બહુજ વ્યાપ્તિ છે, તેઓ ચત્વાર:-બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય, વૈશ્ય, શૂદ્ર વર્ણો અને બ્રહ્મચર્ય, ગૃહસ્થ, વાનપ્રસ્થ, સંન્યાસ એ ચાર આશ્રમો તથા ત્રય:-સેના આદિકામોમાં અધિપતિ, પ્રજાજન અને નોકર એ ત્રણ શિશ્વ:-શાસનીય-શીખવવા યોગ્ય હોય, તે રાજ્ય કરવા યોગ્ય છે. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે રાજાના રાષ્ટ્રમાં વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ અનુસાર નિશ્ચિત કરેલ અને ધર્મ પર ચાલનારા ચાર વર્ણો અને ચાર આશ્રમો તથા સેના, પ્રજા અને ન્યાયાધીશ એ ત્રણ (હોય) છે, તે સૂર્ય સમાન યશથી સુશોભિત બને છે. (૧૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં રાજા, પ્રજા અને સામાન્ય મનુષ્યોના ધર્મનાં વર્ણનથી આ સૂક્તમાં કહેલ અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૨૨)

સૂક્ત-૧૨૩

पृथू रथो दक्षिणाया अयोज्यैर्न देवासो अमृतासो अस्थुः ।

कृष्णादुदस्थादर्यार्इ विहायाश्चिकित्सन्ती मानुषाय क्षयाय ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે માનુષાય-મનુષ્યોના એ ક્ષયાય-ઘરને માટે ચિકિત્સન્તી-રોગોને દૂર કરતી વિહાયા:-મહાન પ્રશંસિત અર્યા-વૈશ્યની કન્યા જેમ પ્રાતઃકાળની વેળા કૃષ્ણાત્-અંધકારથી ઉદસ્થાત્-ઉપર ઊઠીને ઉદય કરે છે, તેમ વિદ્વાને અયોજિ-સંયુક્ત કરેલી અર્થાત્ પોતાની સંગિની અને તે એનમ્-એ વિદ્વાનને પતિભાવથી યુક્ત કરતી, પોતાનો પતિ માનતી તથા જે સ્ત્રી-પુરુષોનો દક્ષિણાયા:-દક્ષિણ દિશાથી પૃથુ:-વિસ્તૃત રથ:-રથ ચાલે છે, તેનો અમૃતાસ:-વિનાશ રહિત દેવસ:-શ્રેષ્ઠ-શ્રેષ્ઠ ગુણ આ-અસ્થુ:-ઉપસ્થિત થાય છે. (૧)

ભાવાર્થ : જે ઊંચા સમાન ગુણયુક્ત સ્ત્રી અને ચંદ્રમા સમાન ગુણવાન પુરુષ હોય, તે બન્નેનો વિવાહ થતાં નિરંતર સુખ થાય છે. (૧)

पूर्वा विश्वस्माद् भुवनादबोधि जयन्ती वाजं बृहती सनुत्री ।

उच्चा व्यख्यद्युवतिः पुनर्भूरोषा अंगन्प्रथमा पूर्वहूतौ ॥ २ ॥

પદાર્થ : પૂર્વહૂતૌ-પૂર્વ વિદ્યમાન (વિદ્યાવૃદ્ધ, વયોવૃદ્ધ)જનોના આદર થાય છે, તે ગૃહસ્થાશ્રમમાં જે પુનર્ભૂઃ-વિવાહ કરેલી પતિના મૃત્યુ પશ્ચાત્ નિયોગથી ફરી સંતાન ઉત્પન્ન કરનારી તે વાજમ્-ઉત્તમ જ્ઞાનને જયન્તી-જીતીને બૃહતી-મહાન સનુત્રી-સર્વ વ્યવહારોને પૃથક કરનારી અને પ્રથમા-પ્રથમ યુવતિઃ-યુવાવસ્થાને પ્રાપ્ત થનારી નવોઢા સ્ત્રી સમાન ઉષાઃ-ઊષાકાળની વેળા વિશ્વસ્માત્-સમસ્ત ભુવનાત્-જગતના પદાર્થોથી પૂર્વા-પ્રથમ અબોધિ-જાણવામાં આવતી અને ઉચ્ચા-ઊંચી વસ્તુઓને વિ, અખ્યત્-સમ્યક્ પ્રકટ કરતી, તેમ આ, અગન્ આવે છે તે વિવાહને યોગ્ય છે. (૨)

ભાવાર્થ : સર્વ કન્યાઓ સોની ચતુર્થાશ (= ૨૫ વર્ષની) વય વિદ્યાભ્યાસમાં વ્યતીત કરીને, પૂર્ણ વિદ્યાવતી બનીને, પોતાના સમાન પતિથી વિવાહ કરીને ઊષા-પ્રભાતવેળાની સમાન ઉત્તમ સ્વરૂપવાળી થાય. (૨)

यद्दद्य भागं विभजासि नृभ्य उषो देवि मर्त्यत्रा सुजाते ।

देवो नो अत्र सविता दमूना अनागसो वोचति सूर्याय ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે સુજાતે-ઉત્તમ કીર્તિથી પ્રકાશિત અને દેવિ-શ્રેષ્ઠ લક્ષણોથી શોભાને પ્રાપ્ત સુલક્ષણી કન્યા ! તું અદ્ય-આજ નૃભ્યઃ-વ્યવહારોની પ્રાપ્તિ કરાવનારા મનુષ્યોને માટે ઉષઃ-ઊષાની સમાન યત્-જે ભાગમ્-સેવન કરવા યોગ્ય વ્યવહારનું વિભજાસિ-શ્રેષ્ઠ રીતે સેવન કરતી અને જે અત્ર-એ ગૃહાશ્રમમાં દમૂનાઃ-મિત્રોમાં ઉત્તમ મર્ત્યત્રા-મનુષ્યોમાં સવિતા-સૂર્યની સમાન દેવઃ-પ્રકાશમાન તારો પતિ સૂર્યાય-પરમાત્માના વિજ્ઞાનને માટે નઃ-અમને અનાગસઃ-અપરાધ રહિત વ્યવહારોને વોચતિ-કહે, તે તમે બન્નેનો અમે નિરંતર સત્કાર કરીએ. (૩)

ભાવાર્થ : જ્યારે સ્ત્રી અને પુરુષ બન્ને વિદ્યાવાન, ધાર્મિક, વિદ્યા પ્રચારક અને પરસ્પર સદા પ્રસન્ન રહેનાર હોય, ત્યારે તેઓ ગૃહાશ્રમમાં અત્યંત સુખના ભાગી બને છે. (૩)

गृहंगृहमहना यात्यच्छा दिवेदिवे अधि नामा दधाना ।

सिषासन्ती द्योतना शश्वदागादग्रमग्रमिद्धजते वसूनाम् ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે સ્ત્રી જેમ ઊષા = પ્રાતઃકાલીન વેળા અહના-દિવસ વા વ્યાપ્તિથી ગૃહંગૃહમ્-ઘર-ઘરમાં અચ્છાધિયાતિ-શ્રેષ્ઠ રીતે સારી રીતે ઉપરથી આવતી દિવેદિવે-અને પ્રતિદિન નામ-નામ દધાના-ધરે છે = ધારણ કરે છે અર્થાત્ પ્રતિદિનના નામ રવિવાર, સોમવાર વગેરે ધરીને દ્યોતના-પ્રકાશમાન વસૂનામ્-પૃથિવી આદિ લોકોના અગ્રમગ્રમ્-પ્રથમ-પ્રથમ સ્થાનને ભજતે-ભજે = સેવે છે અને શશ્વત્-નિરંતર ઇત્-જ આ, અગાત્-આવે છે, તેમ સિષાસન્તી-શ્રેષ્ઠ પદાર્થો પતિ આદિને આપવા ઇચ્છે છે,

તે ઘરના કાર્યોને સુશોભિત કરનારી છે. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યની જ્યોતિ સામેના પદાર્થ પર પડે છે અને નિયમપૂર્વક સમય અનુસાર પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ સ્ત્રીએ પણ થવું જોઈએ. (૪)

ભર્ગસ્ય સ્વસા વરુણસ્ય જામિરુષઃ સૂનૃતે પ્રથમા જરસ્વ ।

પૃષ્ઠા સ દઘ્યા યો અઘસ્ય ધાતા જયેમ તં દક્ષિણયા રથેન ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે સૂનૃતે-સત્ય આચરણયુક્ત સ્ત્રી ! તું ઉચ્ચ:-પ્રાતઃકાલીનવેળાની સમાન વા ભર્ગસ્ય-ઐશ્વર્યની સ્વસા-બહેન સમાન વા વરુણસ્ય-ઉત્તમ પુરુષની જામિઃ-કન્યા સમાન પ્રથમા-પ્રખ્યાતિ પ્રશંસાને પ્રાપ્ત થયેલી વિદ્યાની જરસ્વ-સ્તુતિ કર.

યઃ-જે અઘસ્ય-પાપને ધાતા-ધારણ કરનાર હોય તમ્-તેને દક્ષિણયા-સુશિક્ષિત સેના અને રથેન-વિમાન આદિ યાનથી જેમ અમે જયેમ-જીતીએ, તેમ તું દઘ્યા:-તેનો તિરસ્કાર કર, જે મનુષ્ય પાપી હોય, સઃ-તે પશ્ચા-પાછળ કરવા અથવા તિરસ્કાર કરવા યોગ્ય છે. (૫)

ભાવાર્થ : સ્ત્રીઓએ પોત-પોતાના ઘરમાં ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ, શ્રેષ્ઠ રીતિ(નું પ્રચલન) અને દુષ્ટોનું તાડન નિરંતર કરવું જોઈએ. (૫)

ઉદીરતાં સૂનૃતા ઉત્પુરન્ધીરુદગ્નયઃ શુશુચાનાસો અસ્થુઃ ।

સ્પાર્હા વસૂનિ તમ્સાપંગૂઢાવિષ્કૃણવન્ત્યુષસો વિભાતીઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે સત્પુરુષો ! સૂનૃતા-સત્યભાષણ આદિ ક્રિયાવાન બનીને તમે જેમ પુસ્ત્રી:-શરીરને આશ્રિત ક્રિયાને ધારણ કરતી અને શુશુચાનાસઃ-નિરંતર પવિત્ર કરનાર અગ્નયઃ-અગ્નિઓની સમાન ચમકતી-દમકતી સ્ત્રીઓ ઉદીરતામ્-શ્રેષ્ઠ પ્રેરણા પ્રદાન કરે વા સ્પાર્હા-ઈચ્છવા યોગ્ય વસૂનિ-ધન આદિ પદાર્થો ઉદસ્થુઃ-ઉન્નતિથી પ્રાપ્ત થાય વા જેમ ઉષસઃ-પ્રભાતકાલ તમસા-અંધકારથી અપગૂઢા-આવૃત્ત-ઢંકાયેલા પદાર્થોને તથા વિભાતીઃ-સમ્યક્ પ્રકાશને ઉદાવિષ્કૃણવન્તિ-ઉપરથી પ્રકટ કરે છે, તેમ (તમે) બનો. (૬)

ભાવાર્થ : જ્યારે સ્ત્રીઓ ઊંચાની સમાન વ્યવહાર કરતી અવિદ્યા તથા મલિનતાને દૂર કરીને તથા વિદ્યા-પવિત્રતા આદિને સારી રીતે પ્રકાશિત કરીને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, ત્યારે તે નિરંતર સુખ-યુક્ત બને છે. (૬)

અપાન્યદેત્યભ્યૃન્યદેતિ વિષ્ણુરૂપે અહની સં ચરેતે ।

પરિક્ષિતોસ્તમો અન્યા ગુહાકરદ્યૌદુષાઃ શોશુચતા રથેન ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : જે વિષ્ણુસ્વે-સંસારમાં વ્યાપ્ત અહની-રાત અને દિવસ એક સાથે સં, ચરેતે-સંચાર કરતા

અર્થાત્-આવાગમન કરે છે તેમાં પરિક્ષિતો:-સર્વત્રથી વસનાર અંધકાર અને પ્રકાશની મધ્યમાં ગુહા-અંધકારથી સંસારને ઢાંકનારી તમ:-રાત્રી અન્યા-અને કાર્યોને અક:-કરતી તથા ઊષા:-સૂર્યના પ્રકાશથી પદાર્થોને તપાવનાર દિવસ શોશુચતા-અત્યંત પ્રકાશ અને રથેન-રમણ કરવા યોગ્ય રૂપથી અદ્વૈત્-અજવાળું કરતા અન્યત્-પોતાથી ભિન્ન પ્રકાશને અપ, એતિ-દૂર કરતા તથા અન્યત્-અન્ય પ્રકાશને અભ્યેતિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે. (તેમ)એ સર્વ વ્યવહારની સમાન સ્ત્રી-પુરુષો પોતાનો વર્તાવ કરે.

(૭)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં અંધકાર અને પ્રકાશરૂપ બે પદાર્થો છે, જેથી સદા (પૃથિવીઆદિ) લોકમાં અર્ધ ભાગમાં દિવસ અને રાત થાય છે. જે વસ્તુ અંધકારને ત્યાગે છે, તે પ્રકાશને ગ્રહણ કરે છે. પ્રકાશ જેટલા અંધકારને ત્યાગે છે, તેટલાને રાત લઈ લે છે. બન્ને વારાફરતી સદા પોતાની વ્યાપકતા દ્વારા પ્રત્યેક પ્રાપ્ત દ્રવ્યને આચ્છાદિત કરે છે અને સાથે જ વર્તમાન રહે છે.

એ બન્નેનો જ્યાં-જ્યાં સંયોગ થાય છે ત્યાં-ત્યાં સંધ્યા અને જ્યાં-જ્યાં વિયોગ (થાય છે) ત્યાં-ત્યાં રાત અને દિવસ (થાય છે)

જે સ્ત્રી અને પુરુષ એ રીતે સંયુક્ત અને વિયુક્ત થઈને દુઃખના કારણોમાં ત્યાગ કરે છે અને સુખ કારણોને ગ્રહણ કરે છે, તેઓ સદા આનંદિત રહે છે. (૭)

સદૃશીરઘ સદૃશીરિદુ શ્વો દીર્ઘ સંચન્તે વરુણસ્ય ધામ્ ।

અનવદ્યાસ્ત્રિંશતં યોજનાન્યેકૈકા ક્રતું પરિં ચન્તિ સદ્ઘઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : જે અઘઃ-આજના દિવસે અનવદ્યાઃ-પ્રશંસિત સદૃશીઃ-એક સમાન ડ-અથવા તો શ્વઃ-આગળના દિવસે સદૃશીઃ-એક સમાન રાત અન પ્રભાતવેળા વસ્ત્રાસ્ય-વાયુના દીર્ઘમ્-મહાન સમય વા ધામ-સ્થાનને સચન્તે-સંયોગને પ્રાપ્ત થતી અને એકૈકા-તેમાંથી પ્રત્યેક ત્રિંશતમ્-યોજનાનિ-એકસોવીસ ગાઉ અને ક્રતુમ્-કર્મને સદ્ઘઃ-શીઘ્ર પરિ, ચન્તિ-પર્યાયથી પ્રાપ્ત થાય છે, તે ઇત્-કોઈએ વ્યર્થ ન ગુમાવવા જોઈએ. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વરના નિયમથી નિયત વિતેલ, વર્તમાન અને ભવિષ્યના રાત-દિવસની વિપરીતતા થતી નથી, તેમજ સમસ્ત સૃષ્ટિકર્મની વિપરીતતા થતી નથી; અને તેમ મનુષ્ય આગસનો ત્યાગ કરીને સૃષ્ટિકર્મ અનુસાર પ્રયત્ન કરે છે, તેઓ પ્રશંસિત વિદ્યા અને ઐશ્વર્યવાન બને છે. જેમ એ રાત-દિવસ યથા સમય જાય અને આવે છે, તેમ જ મનુષ્યોએ સદા વ્યવહારમાં આચરણ કરવું જોઈએ. (૮)

જાનત્યહ્નઃ પ્રથમસ્ય નામ શુક્રા કૃષ્ણાદ્જનિષ્ટ શિવતીચી ।

ઋતસ્ય યોષા ન મિનાતિ ધામાહરહર્નિષ્કૃતમાચરન્તી ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેમ પ્રથમસ્ય-વિસ્તરિત પ્રથમ અહ્નઃ-દિવસ વા દિવસના પ્રથમ-આરંભ ભાગનું

નામ-નામ જાનતી-જણાવતી શુક્રા-શુદ્ધિ કરનારી શ્વિતીચી-શ્વેત વર્ણને પ્રાપ્ત થયેલી પ્રાતઃકાલીન વેળા કૃષ્ણાત્-કાળા રંગના અંધકારથી અજનિષ્ટ-પ્રસિદ્ધ-પ્રકટ થાય છે, વા ઋક્ષસ્ય-સત્ય આચરણવાળા મનુષ્યની યોષા-સ્ત્રીની સમાન અહરહઃ-પ્રતિદિન આચરન્તિ-આચરણ કરતી નિષ્કૃતમ્-ઉત્પન્ન થયેલ વા નિશ્ચયને પ્રાપ્ત ધામ-સ્થાનને ન,-મિનાતિ-નષ્ટ કરતી નથી, તેમ તું પણ બન. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ ઊષા અંધકારથી ઉત્પન્ન થઈને દિવસને પ્રકટ કરે છે અને દિવસની વિરોધી નથી, તેમ સ્ત્રી સત્યાચરણથી પોતાના માતા-પિતા અને પતિના કુળને ઉત્તમ યશથી સંપન્ન અને પ્રશંસનીય બનાવે તથા પોતાના શ્વસુર અને પતિના પ્રત્યે કોઈ પણ અપ્રિય આચરણ કરે નહિ. (૯)

કન્યેવ તન્વારૂં શાશ્વાદાનાં એષિં દેવિ દેવમિયક્ષમાણમ્ ।

સંસ્મયમાના યુવતિઃ પુસ્તાદાવિર્વક્ષાંસિ કૃણુષે વિભાતી ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે દેવિ-કામના કરનારી કુંવારી ! જે તું તન્વા-શરીરથી કન્યેવ-કન્યાની સમાન વર્તમાન શાશ્વાદાના-વ્યવહારોમાં અતિ તેજ બતાવતી ઇયક્ષમાણમ્-અત્યંત સંગ કરતા દેવમ્-વિદ્વાન પતિને એષિ-પ્રાપ્ત થઈને પુસ્તાત્-અને સન્મુખ વિભાતિ-અનેક પ્રકારના સદ્ગુણોથી પ્રકાશમાન યુવતિઃ-યુવાનીને પ્રાપ્ત થયેલી સંસ્મયમાના-મંદ-મંદ હાસ્યયુક્ત વક્ષાંસિ-છાતી આદિ અંગોને આવિઃ, કૃણુષે-પ્રસિદ્ધ કરે છે, તે તું ઊષાકાલની ઉપમાને પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ વિદુષી બ્રહ્મચારિણી પૂર્ણ વિદ્યા અને શિક્ષાને તથા પોતાની સમાન એવું હૃદયને પ્રિય પતિને પામીને સુખી થાય છે, તેમ અન્ય બ્રહ્મચારિણીઓએ પણ કરવું જોઈએ. (૧૦)

સુસંકાશા માતૃમૃષ્ટેવ યોષાવિસ્તન્વં કૃણુષે દૃશે કમ્ ।

ભદ્રા ત્વમૃષો વિતરં વ્યુચ્છ ન તત્તે અન્યા ઉષસો નશન્ત ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે કન્યા ! સુસંકાશા-સુશિક્ષાથી સમ્યક્ શિક્ષિત યોષા-યુવતી માતૃમૃષ્ટેવ-વિદુષી માતાએ સત્યશિક્ષા પ્રદાન કરીને શુદ્ધ-પવિત્ર સમાન કરેલ જે દૃશે-જોવાને તન્વમ્-પોતાના શરીરને આવિઃ-પ્રકટ કૃણુષે-કરતી ભદ્રા-અને મંગલરૂપ આચરણ કરતી કમ્-સુખસ્વરૂપ પતિને પ્રાપ્ત કરે છે. તે ત્વમ્-તું વિતરમ્-સુખદાયક પદાર્થ અને સુખનો વ્યુચ્છ-સ્વીકાર કર.

હે ઉષઃ-ઊષા સમાન વર્તમાન સ્ત્રી ! જેમ અન્યાઃ-અને ઉષસઃ-પ્રભાતકાળ ન-નહીં નશન્ત-વિનાશને પ્રાપ્ત થતો નથી, તેમ તે-તારા તત્-ઉક્ત સુખો વિનાશને પ્રાપ્ત થાય નહિ. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ ઊષા-વેળા નિયમથી પોત-પોતાના સમય અને દેશને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ સ્ત્રીઓ પોત-પોતાના પતિને પ્રાપ્ત કરીને ઋતુકાળને સફળ બનાવે. (૧૧)

અશ્વાવતીર્ગોમંતીર્વિશ્વવારા યતમાના રશ્મિભિઃ સૂર્યસ્ય ।

પરાં ચ યન્તિ પુનરાં ચ યન્તિ ભદ્રા નામ વહમાના ઉષાસઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે સૂર્યસ્ય-સૂર્યમંડળની રશ્મિભિઃ-કિરણોની સાથે ઉત્પન્ન યતમાનાઃ-શ્રેષ્ઠ યત્ન કરતી અશ્વાવતીઃ-જેની પ્રશંસિત વ્યાપ્તિઓ ગોમતીઃ-જે બહુ પૃથિવી આદિ લોક કિરણોથી યુક્ત વિશ્વવારાઃ-સમસ્ત જગતને પોતાનામાં લેતી અને ભદ્રા-કલ્યાણકારક નામ-નામોને વહમાનાઃ-સર્વની બુદ્ધિમાં પહોંચાડતી ઉષસઃ-પ્રભાતવેળા નિયમપૂર્વક પરા, યન્તિ-પાછળ જાય છે ચ-અને પુનઃ-ફરી ચ-પણ આ-યન્તિ-આવે છે, તેમ નિયમથી તમે પોતાનું આચરણ કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ ઊષા-સૂર્યના સંયોગથી નિયમને પ્રાપ્ત છે, તેમ વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર પ્રેમને સ્થિર કરનાર બને. (૧૨)

ऋतस्य रश्मिनुयच्छमाना भद्रंभद्रं क्रतुमस्मासु धेहि ।

उषो नो अद्य सुहवा व्युच्छास्मासु रायो मधवत्सु च स्युः ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે ઉષઃ-પ્રાતઃ સમયની વેળા સમાન અલબેલી સ્ત્રી ! તું અદ્ય-આજ જેમ ઋત્તસ્ય-જલની રશ્મિમ્-કિરણને પ્રભાત સમયની વેળા સ્વીકાર કરેલી છે, તેમ મનથી પ્યારે પતિને અનુચ્છમાના-અનુકૂળતાપૂર્વક પ્રાપ્ત થઈને અસ્માસુ-અમારામાં ભદ્રં ભદ્રમ્-ક્રતુમ્-કલ્યાણ-કલ્યાણકારક બુદ્ધિ વા કલ્યાણ-કલ્યાણકારક કામને ધેહિ-ધર આપ. સુહવા-અને ઉત્તમ સુખદાયક બનીને નઃ-અમને વ્યુચ્છ-સ્થિર કર જેથી મધવત્સુ-પ્રશંસિત ધનયુક્ત અસ્માસુ-અમારામાં રાયઃ-શોભા-(શ્રિય) ચ-પણ સ્યુઃ-થાય. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઉત્તમ સ્ત્રીઓ પોત-પોતાના પતિ આદિની યથોચિત સારી રીતે સેવા કરીને પ્રજા, ધર્મ અને ઐશ્વર્યની નિત્ય વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ જ ઊષા-વેળા પણ છે. (૧૩)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઊષાકાળના દૃષ્ટાન્તથી સ્ત્રીઓના ધર્મનું વર્ણન કરવાથી આ સૂક્તમાં કહેલ અર્થની પૂર્વ સૂક્તમાં રહેલ અર્થની સાથે સંગતિ છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૧૨૩)

સૂક્ત-૧૨૪

उषा उच्छन्ती समिधाने अग्ना उद्यन्तसूर्य उर्विया ज्योतिरश्रेत् ।

देवो नो अत्र सविता न्वर्थ प्रासावीद् द्विपत्र चतुष्पदित्यै ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જ્યારે સમિધાને-પ્રદીપ્ત અગ્નૌ-અગ્નિના નિમિત્ત સૂર્યઃ-સૂર્યમંડળ ઉદ્યન્-ઉદય પામીને ઉર્વિયા-પૃથિવીની સાથે જ્યોતિઃ-પ્રકાશનો અશ્રેત્-સંયોગ થાય છે, ત્યારે ઉચ્છન્તી-અંધકારનું નિઃસરણ કરીને ઉષાઃ-પ્રાતઃકાલીન વેળા ઉત્પન્ન થાય છે; તેમ અત્ર-આ સંસારમાં સવિતા-કર્મમાં પ્રેરણ કરનાર દેવઃ-ઉત્તમ પ્રકાશક ઉક્ત સૂર્યમંડળ નઃ-અમારા અર્થમ્-પ્રયોજનને ઇત્યૈ-પ્રાપ્ત કરાવવા માટે પ્રાસાવીત્-સારાંશને ઉત્પન્ન કરે છે તથા દ્વિપત્-બે પગવાળા મનુષ્ય આદિ વા ચતુષ્પત્-ચારપગા પશુ આદિ પ્રાણીઓને નુ-શીઘ્ર પ્ર-ઉત્તમતાથી ઉત્પન્ન કરે છે. (૧)

ભાવાર્થ : પૃથિવીનો સૂર્યના કિરણોની સાથે સંયોગ થાય છે તે જ તિર્યક થઈને ઊષા વેળાનું

કારણ બને છે. જો સૂર્ય ન હોય તો વિવિધ રૂપોવાળા પદાર્થોનું દર્શન થતું નથી. (૧)

અમિનતી દૈવ્યાનિ વ્રતાનિ પ્રમિનતી મનુષ્યા યુગાનિ ।

ઈયુષીણામુપમા શશ્વતીનામાયતીનાં પ્રથમોષા વ્યદ્યૌત્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેમ **ઊષા**-પ્રાતઃકાલીન વેળા **દૈવ્યાનિ**-દિવ્યગુણયુક્ત **વ્રતાનિ**-સત્યપદાર્થો વા સત્યકર્મોને **અમિનતી**-ન છેડતી અને **મનુષ્યા**-મનુષ્યોના સંબંધી **યુગાનિ**-વર્ષોને **પ્રમિનતી**-સારી રીતે વ્યતીત કરીને **શશ્વતીનામ્**-સનાતન પ્રભાતવેળા વા પ્રકૃતિઓ અને **ઈયુષીણામ્**-ભૂતકાલીન પ્રભાતવેળાની **ઉપમા**-ઉપમા દૃષ્ટાન્ત અને **આયતીનામ્**-ભવિષ્યની પ્રભાતવેળાઓમાં **પ્રથમા**-પ્રથમ સંસારને **વ્યદ્યૌત્**-અનેક રીતે પ્રકાશિત કરે છે અને જાગૃત અર્થાત્ વ્યવહાર કરતા મનુષ્યોને યુક્તિની સાથે સદા સેવન કરવા યોગ્ય છે, તેમ તું પોતાનું વર્તન રાખ. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ એ ઊષા વિસ્તૃત પૃથિવી અને સૂર્યના સંયોગની સાથે સંયુક્ત થઈને જેટલા પૂર્વના સ્થાનને છોડે છે; તેટલા બાકીના સ્થાનને ગ્રહણ કરીલે છે.

વર્તમાન અને ભૂતકાલીન ઊષાઓની સમાન રૂપવાળી (એ ઊષા) ભવિષ્યની ઊષાઓની આદિમાં (પ્રથમ) બનીને, કાર્ય અને કારણનું જ્ઞાન કરાવતી, સત્યધર્મના આચરણના નિમિત્તરૂપ કાળનું અવયવ (સમયનું અંગ) હોવાથી, આયુનો ડ્રાસ કરતી જાય છે, એ ઊષાનું સેવન કરવાથી બુદ્ધિ અને આરોગ્ય આદિ શુભગુણો પ્રદાન કરે છે, તેમ વિદુષી સ્ત્રીઓ બને. (૨)

एषा दिवो दुहिता प्रत्यदर्शि ज्योतिर्वसाना समना पुरस्तात् ।

ऋतस्य पन्थामन्वेति साधु प्रजान्तीव न दिशो मिनान्ति ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જેમ **ઊષા**-ઊષાકાળ **જ્યોતિઃ**-પ્રકાશને **વસાના**-ગ્રહણ કરીને **સમના**-સંગ્રામમાં **દિવઃ**-સૂર્યના પ્રકાશની **દુહિતા**-કન્યા સમાન અમે **પુસ્તાત્**-દિવસમાં પ્રથમ **પ્રત્યર્દશિ**-પ્રતીતિથી જોઈ-નિહાળી વા જેમ સમસ્ત વિદ્યા ભણેલ વીર જન **ઋતસ્ય**-સત્ય કારણના **પન્થામ્**-માર્ગને **અન્વેતિ**-અનુકૂળતાથી પ્રાપ્ત થઈને વા **સાધુ**-સમ્યક્ જેમ થાય, તેમ **પ્રજાનતીવ**-વિજ્ઞાનવતી વિદુષી સ્ત્રીની સમાન ઊષા વેળા **દિશઃ**-દિશાઓનો **ન**, **મિનાતિ**-ત્યાગ કરતી નથી, તેમ પોતાનું આચરણ કરતી સ્ત્રી શ્રેષ્ઠ બને. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઊષા-વેળાઓ નિયમથી પોત-પોતાના સમયે અને દેશને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ સ્ત્રીઓ પોત-પોતાના પતિને પ્રાપ્ત કરીને ગૃહસ્થ ધર્મ-ઋતુકાલને સફળ કરે. (૩)

उपो अदर्शि शुन्ध्युवो न वक्षो नोधाइवाविरकृत प्रियाणि ।

अद्भसन्न संसतो बोधयन्ती शश्वत्तमागात्पुनरेयुषीणाम् ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જેમ ઊષાકાળ **વક્ષઃ**-પ્રાપ્ત વસ્તુને **શુન્ધ્યુવઃ**-સૂર્યના કિરણોની **ન**-સમાન વા **પ્રિયાણિ**-પ્રિય વચનોની **નોધા** **ઙ્વ**-સર્વ શાસ્ત્રોની પ્રશંસા કરનારા વિદ્વાનોની સમાન વા **અદમસત્**-ભોજનના

પદાર્થોને પકાવનારી ન-સમાન સસત:-સૂતેલા પ્રાણીઓને બોધયન્તી-નિરંતર જાગૃત કરતી અને એયુષીણામ્-સર્વત્રથી વ્યતીત થયેલી ઊષાવેળાની શસ્વત્તમા-અતિશય સનાતન થઈને પુન:-ફરી આ, અગાત્-આવે છે અને આવિરકૃત-સંસારને પ્રકાશિત કરે છે તે અમે ઉપો-સમીપમાં અર્દશિ-દેખી; તેવી સ્ત્રીઓ ઉત્તમ હોય છે. (૪)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી ઊષા-વેળાની સમાન, સૂર્યની સમાન અને વિદ્વાનોની સમાન પોતાના સંતાનોને ઉત્તમ શિક્ષાથી વિદ્વાન બનાવે છે, તે સર્વના દ્વારા સત્કારને યોગ્ય છે. (૪)

पूर्वे अर्द्धे रजसो अप्स्यस्य गवां जनित्र्यकृत प्र केतुम् ।

व्यु प्रथते वितरं वरीय ओभा पूणन्ती पित्रोरुपस्था ॥ ५ ॥

પદાર્થ : જેમ ઊષા-વેલા કન્યાની સમાન ઉમા-બન્ને લોકોને પૂણન્તી-સુખ પૂર્ણ કરે છે અને પિત્રો:- પોતાના માતા-પિતાની સમાન ભૂમિ અને સૂર્યમંડળની ઉપસ્થા-ગોદ-ખોળામાં વિરાજમાન થાય છે વિતરમ્-જેનાથી વિવિધ પ્રકારના દુઃખોને પાર કરીએ છીએ, તે વરીય:-અત્યુત્તમ કામને વિ, ઉ, પ્રથતે-વિશેષરૂપથી વિસ્તૃત કરતી તથા ગંવામ્-સૂર્યના કિરણોને જનિત્રી-ઉત્પન્ન કરનારી અપ્સ્યસ્ય-વિસ્તૃત સંસારમાં થયેલ રજસ:-લોક સમૂહના પૂર્વે-પ્રથમ આગળ-પૂર્વે વર્તમાન અર્દ્ધે-અર્ધ ભાગમાં કેતુમ્-કિરણોને પ્ર, આ, અકૃત-પ્રસિદ્ધ કરે છે, તેમ વર્તન કરતી સ્ત્રી ઉત્તમ હોય છે. (૫)

ભાવાર્થ : ઊષાથી ઉત્પન્ન થયેલ સૂર્યનો પ્રકાશ અર્ધ ભૂગોળમાં સદા પ્રકાશિત રહે છે. ભૂગોળના બીજા અર્ધ ભાગમાં રાત્રી હોય છે. એ બન્નેના મધ્યમાં સદા ઊષા વિરાજમાન રહે છે. એ રીતે નિરંતરતાથી રાત, ઊષા અને દિવસ ક્રમપૂર્વક વર્તમાન રહે છે.

આથી શું સાર નીકળ્યો, કે ભૂગોળમાં જેટલો ભાગ સૂર્યની સમીપ (= સન્મુખ હોય છે) તેટલામાં દિવસ, જેટલો (ભાગ) દૂર (= વિપરીત દિશામાં હોય છે) તેમાં રાત અને સંધ્યા સમયમાં ઊષા (હોય છે.) આ રીતે લોકોના ભ્રમણના કારણે (દિવસ આદિ) ધૂમતા-ફરતા જોવામાં આવે છે. (૫)

एवेदेषा पुरुतमा दृशे कं नाजामिं न परि वृणक्ति जामिम् ।

अरेपसा तन्वाइ शाशदाना नार्भादीषते न महो विभाती ॥ ६ ॥

પદાર્થ : જેમ અરેપસા-કંપરહિત નિર્ભય તન્વા-શરીરથી શાશદાના-અતિ સુંદરી પુસ્તમા-બહુ પદાર્થોને ઈચ્છતી સ્ત્રી દૃશે-જોવાને માટે કમ્-સુખને પતિની ન-સમાન પરિ વૃણક્તિ-સર્વત્રથી ન-ત્યાગતી નથી. પતિ પણ જામિમ્-પોતાની સ્ત્રીની ન-સમાન સુખનો ન-ત્યાગ કરતો નથી અને અજામિમ્-જે પોતાની સ્ત્રી નથી, તેનો સર્વ રીતે ત્યાગ કરે છે, તેમ એવ-જ એષા-ઉષાવેળા અર્ભાત્-અલ્પ ઇત્-પણ મહ:-મહાન સૂર્યના તેજનો વિભાતિ-પ્રકાશ કરાવતી અતિ વિસ્તૃત સૂર્યના પ્રકાશનો ત્યાગ કરતી નથી. પરંતુ સમસ્તને ઈષતે-પ્રાપ્ત થાય છે. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ પતિવ્રતા સ્ત્રી પોતાના પતિને છોડીને-ત્યાગીને બીજાનો સંગ કરતી નથી અને પત્નીવ્રત પુરુષ પોતાની પત્નીથી ભિન્ન અન્ય સ્ત્રીનો સંગ કરતો નથી; જેમ વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષ નિયમાનુસાર

અને સમયાનુસાર સમાગમ કરે છે, તેમ જ ઊષા-વેળા નિયત સ્થાન અને સમય સિવાય અન્યત્ર પ્રવૃત્ત થતી નથી. (૬)

અભ્રાતેવ પુંસ એતિ પ્રતીચી ગર્ત્તાર્ગિવ સ્નયે ધનાનામ્ ।

જાયેવ પત્યે ઉશ્તી સુવાસાં ઉષા હસ્ત્રેવ નિ રિણીતે અપ્સઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : એ **ઉષા**:-ઊષા પ્રતીચી-પ્રત્યેક સ્થાનમાં પહોંચીને **અભ્રાતેવ**-ભાઈ રહિત કન્યા જેમ **પુંસ**:-પુરુષને પ્રાપ્ત થાય, તેની સમાન વા જેમ **ગર્ત્તાર્ગિવ**-દુઃખ રૂપી ખાડામાં પડેલ જન **ધનાનામ્**-ધન આદિ પદાર્થોનો **સ્નયે**-વિભાગ કરવા માટે રાજગૃહને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ સર્વ ઊંચા-નીચા પદાર્થોને **એતિ**-પહોંચાડે છે તથા **પત્યે**-પોતાના પતિને માટે **ઉશ્તી**-કામના કરતી **સુવાસા**:-અને સુંદર વસ્ત્રોવાળી **જાયેવ**-વિવાહિતા સ્ત્રીની સમાન પદાર્થોનું સેવન કરતી અને **હસ્ત્રેવ**-હસતી સ્ત્રીની સમાન **અપ્સઃ**:-રૂપને **નિ, રિણીતે**-નિરંતર પ્રાપ્ત થાય છે. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ ભાઈ વગરની કન્યા, પોતાના પ્રિય પતિને સ્વયં પ્રાપ્ત કરી લે છે, જેમ ન્યાયાધીશ રાજા (અને) રાણી ધનના વિભાગને માટે ન્યાયાસન પ્રાપ્ત કરે છે અને જેમ પ્રસન્ન મુખવાળી સ્ત્રી આનંદમગ્ન પતિને પ્રાપ્ત કરે છે તથા સુંદરરૂપની સાથે હાવ-ભાવ પ્રકટ કરે છે, તેમ જ ઊષા છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૭)

સ્વસા સ્વસ્ત્રે જ્યાયસ્યૈ યોનિમારૈગપૈત્યસ્યાઃ પ્રતિચક્ષ્યૈવ ।

વ્યુચ્છન્તી રશ્મિભિઃ સૂર્યસ્યાઙ્ઙ્યઙ્કત્તે સમનગાઈવ વ્રાઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે કન્યા ! જેમ **વ્યુચ્છન્તી**-અંધકારનું નિવારણ કરનારી **વ્રાઃ**-પદાર્થોનો સ્વીકાર કરનારી ઊષા **સૂર્યસ્ય**-સૂર્યમંડળનાં **રશ્મિભિઃ**-કિરણોની સાથે **ઙ્ઙ્યઙ્કત્તે**-પ્રસિદ્ધ રૂપને **સમનગા** ઇવ-નિશ્ચિત સ્થાને જનારી સ્ત્રીની સમાન **અઙ્કત્તે**-પ્રકાશ કરે છે વા જેમ **સ્વસા**-બહેન **જ્યાયસ્યૈ**-મોટી **સ્વસ્ત્રે**-બહેનને માટે **યોનિમ્**-પોતાના સ્થાનને **ઐક્**-ત્યાગતી અર્થાત્ ઉત્થાન દેતી તથા **અસ્યાઃ**-જેમ એ પોતાની બહેનની વર્તમાન સ્થિતિને **પ્રતિચક્ષ્યૈવ**-પ્રત્યક્ષ જોઈને તેમ વિવાહને માટે **અપૈતિ**-દૂર જાય છે, તેમ તું પણ બન. (૮)

ભાવાર્થ : નાની બહેન પોતાની મોટી બહેનનો વર્તમાન વૃતાન્ત જાણીને, સ્વયંવર-વિધિને માટે દૂર દેશમાં પણ રહેલ યોગ્ય પતિને ગ્રહણ કરે.

જેમ શાન્ત સ્વભાવવાળી પતિવ્રતા સ્ત્રીઓ પોત-પોતાના પતિની સેવા કરે છે, તેમ તે પોતાના પતિની સેવા કરે.

જેમ સૂર્ય પોતાની કાન્તિની સાથે અને કાન્તિ સૂર્યની સાથે નિત્ય અનુકૂળતાથી વર્તે છે, તેમ જ સ્ત્રી અને પુરુષે વર્તન કરવું જોઈએ. (૮)

આસાં પૂર્વીસામહસુ સ્વસૃણામપરા પૂર્વીમ્ભ્યૈતિ પ્શ્ચાત્ ।

ઋગ્વેદભાષ્ય

૫૪૭

તા: પ્રત્નવન્નવ્યસીનૂનમસ્મે રેવદુચ્છન્તુ સુદિનાં ઉષાસઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : જેમ આસામ્-એ પૂર્વાસામ્-પ્રથમ ઉત્પન્ન મોટી સ્વસૂણામ્-બહેનોમાં અપરા-અન્ય પછી જન્મેલી નાની બહેન અહસુ-કોઈ દિવસોમાં પોતાની પૂર્વામ્-મોટી બહેનની અભ્યેતિ-આગળ જાય અને પશ્ચાત્-પછી પોતાના ઘરે ચાલી જાય, તેમ સુદિનાઃ-જેનાથી શ્રેષ્ઠ દિવસો થાય છે તે ઉષાસઃ-ઊષા-વેળા અસ્મે-અમારા માટે નૂનમ્-નિશ્ચયયુક્ત પ્રત્નવત્-જેમાં પ્રાચીન ધનની નિધિ છે, તે રેવત્-પ્રશંસિત પદાર્થયુક્ત ધનને નવ્યસીઃ-પ્રતિદિન અત્યંત નવીન બનીને પ્રકાશ કરે, તાઃ-તે ઉચ્છન્તુ-અંધકારનું નિવારણ કરે. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ ઘણી-અધિક દૂર-દૂર દેશોમાં વિવાહ કરેલી બહેનો ક્યારેક કોઈની સાથે મળીને પોતાના વ્યવહારને બતાવે છે, તેમ પહેલાંની ઊષા વેળાઓ વર્તમાન ઊષા વેળાની સાથે મળીને પોતાના વ્યવહારને પ્રકટ કરે છે. (૯)

પ્ર બૌધયોષઃ પૂણતો મધોન્યબુદ્યમાનાઃ પૂણયઃ સસન્તુ ।

રેવદુચ્છ મઘવદ્ભ્યો મઘોનિ રેવત્સ્તોત્રે સૂનૃતે જારયન્તી ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે મધોનિ-શ્રેષ્ઠ ધનયુક્ત ઉષઃ-ઊષાની સમાન વર્તમાન સ્ત્રી તું જે અબુદ્યમાનાઃ-અચેતન નિદ્રાધીન વા પૂણયઃ-વ્યવહારયુક્ત પ્રાણી ઊષાકાળ અથવા દિવસમાં સસન્તુ-સૂવે તેનું પૂણતઃ-પાલન કરનાર પુષ્ટ પ્રાણીઓને ઊષાના પ્રકાશની સમાન પ્ર, બોધય-બોધ કરાવ-જાગૃત કરાવ.

હે મધોનિ-પુષ્કળ ધન એકત્ર કરનારી સૂનૃતે-શ્રેષ્ઠ સત્યસ્વભાવયુક્ત યુવતી ! તું ઊષાકાળ સમાન જારયન્તી-વય વ્યતીત કરાવતી મઘવદ્ભ્યઃ-પ્રશંસિત ધનયુક્ત રેવત્-ઉત્તમ ધનયુક્ત વ્યવહાર જેમ થાય, તેમ સ્તોત્રે, સ્તુતિ-પ્રશંસા કરનારાને માટે રેવત્-સ્થિર ધનની ઉચ્છ-પ્રાપ્તિ કરાવ. (૧૦)

ભાવાર્થ : કોઈએ પણ રાત્રિના અન્તિમ પ્રહરમાં અથવા દિવસે સૂવું ન જોઈએ. કારણકે નિદ્રા અને દિવસ અધિક ઉષ્ણતાકારક હોવાથી રોગ ઉત્પન્ન થાય છે તેમજ કાર્ય અને આયુનો હાસ થાય છે.

જેમ પુરુષાર્થપૂર્વક યુક્તિથી મનુષ્ય પુષ્કળ ધન પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ સૂર્યોદય પૂર્વ ઊઠીને યત્ન કરનાર મનુષ્ય દરિદ્રતાનો જહાતિ-ત્યાગ કરે છે. (૧૦)

અવેયમશ્વૈદ્યુવતિઃ પુરસ્તાદ્યુક્તે ગવામરુણાનામનીકમ્ ।

વિ નૂનમુચ્છાદસતિ પ્ર કેતુર્ગૃહ્ગૃહ્મુપ તિષ્ઠાતે અગ્નિઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : જેમ ઇયમ્-એ પ્રભાતવેળા અસ્માનામ્-લાલાશ પડતા ગવામ્-સૂર્યનાં કિરણોને અનીકમ્-સેનાની સમાન સમૂહને યુક્તે-સંયુક્ત કરે-જોડે છે અને પુરસ્તાદવાશ્વૈત્-પ્રથમથી વધે છે, તેમ યુવતિઃ-પૂર્ણ ચોવીસ વર્ષની યુવા સ્ત્રી લાલ રંગની ગાય આદિ પશુઓના સમૂહને જોડે છે પછી ઉન્નતિને પ્રાપ્ત થાય છે, એથી પ્ર, કેતુઃ-જેની શિખા ઊઠેલી છે તે વધતી ઊષા અસતિ-થાય અને નૂનમ્-નિશ્ચયથી વ્યુચ્છાત્-સર્વને પ્રાપ્ત થાય. અગ્નિઃ-તથા સૂર્યમંડળનો તરુણ તાપ ઉત્કટ તડકો ગૃહ્ ગૃહમ્-

ઘર-ઘરમાં **ઉપ, તિષ્ઠાતે**-ઉપસ્થિત થાય, યુવતી પણ શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિમાન થઈને નિશ્ચય સર્વ પદાર્થોને પ્રાપ્ત થાય અને તેનો ઉત્કટ પ્રતાપ પ્રત્યેક ઘરમાં ઉપસ્થિત થાય અર્થાત્ સર્વ સ્ત્રી-પુરુષ જાણે છે અને માને છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ ઊંધાવેલા અને દિવસ સદા સંયુક્ત રહે છે, તેમ વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષ વર્તાવ કરે અને આવશ્યકતાનુસાર સર્વ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરે, ત્યારે તે બન્નેના તેજ અને પ્રભાવની વૃદ્ધિ થાય છે. (૧૧)

उत्ते वयश्चिद्वसतेरपत्नरश्च ये पितुभाजो व्युष्टौ ।

अमा सते वहसि भूरि वाममुषो देवि दाशुषे मर्त्याय ॥ १२ ॥

પદાર્થ : હે **નર:-**મનુષ્યો ! **યે-જે** પિતુભાજ:-અન્નનો વિભાગ કરનારા તમે **ચિત્-પણ** જેમ **વય:-** અવસ્થાને **વસતે:-**નિવાસથી **ઉત્ અપ્તનૂ-શ્રેષ્ઠતાથી** પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ જ **વ્યુષ્ટૌ-વિશેષ** નિવાસમાં **અમા-સમીપનું** ઘર વા **સતે-વર્તમાન** વ્યવહારને માટે થાય.

હે **ઉષ:-**પ્રાતઃકાલીન પ્રકાશની સમાન વિદ્યાપ્રકાશયુક્ત **દેવિ-ઉત્તમ** વ્યવહારની દાત્રિ સ્ત્રી ! જે તું **ચ-પણ** **દાશુષે-દેનાર** **મર્ત્યાય-પોતાના** પતિને માટે તથા સમીપસ્થ ઘર તથા વર્તમાન વ્યવહારને માટે **ભૂરિ-બહુ** **વામમ્-પ્રશંસનીય** વ્યવહારની **વહસિ-પ્રાપ્તિ** કરતી તે **તે-તારા** માટે ઉક્ત વ્યવહારની પ્રાપ્તિ તારો પતિ પણ કરે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ પક્ષીઓ ઉપર અને નીચે જાય છે, તેમ ઊંધા રાત અને દિવસની ઉપર અને નીચે જાય છે. જેમ સ્ત્રી પતિથી પ્રિય આચરણ કરે, તેમ પતિ પણ સ્ત્રીથી પ્રિય ચારણ કરે. (૧૨)

अस्तौद्वं स्तोम्या ब्रह्मणा मेऽवीवृधध्वमुशतीरुषासः ।

युष्माकं देवीरवसा सनेम सहस्रिणं च शतितं च वाजम् ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે **ઉષાસ:-**ઊંધાની સમાન **સ્તોમ્યા:-**સ્તુતિ કરવા યોગ્ય **દેવી:-**દિવ્ય વિદ્યા ગુણયુક્તા પંડિતા ! **બ્રહ્મણા-વેદથી** **ઉશતી:-**કામના અને કાન્તિને પ્રાપ્ત થઈને તમે **મે-મારા** માટે વિદ્યાઓની **અસ્તોદ્ધવમ્-સ્તુતિ** પ્રશંસા કરો અને **અવીવૃધધ્વમ્-અમારી** ઉન્નતિ કરાવો તથા **યુષ્માકમ્-તમારી** અવસારક્ષા આદિથી **સહસ્રિણમ્-જેમાં** હજારો ગુણ વિદ્યમાન **ચ-અને** જે **શતિનમ્-સેંકડો** પ્રકારની વિદ્યાઓથી યુક્ત **ચ-અને** **વાજમ્-અંગો,** ઉપાંગો અને ઉપનિષદો સહિત વેદાદિ શાસ્ત્રોનો બોધ-જ્ઞાન તેઓને બીજાઓ માટે અમે **સનેન-પ્રદાન** કરીએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઊંધા-વેળાઓ શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ યુક્ત છે, તેમ જ સ્ત્રીઓ પણ બને તથા તેમજ પુરુષો અતિ શ્રેષ્ઠ બને.

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઊંધાના દૃષ્ટાન્તથી સ્ત્રીઓના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની

પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૨૪)

સૂક્ત-૧૨૫

પ્રાતા રત્નં પ્રાતરિત્વા દધાતિ તં ચિકિત્વાન્પ્રતિગૃહ્યા નિ ધત્તે ।

તેન પ્રજાં વર્ધયમાન્ આયૂં રાયસ્પોષેણ સચતે સુવીરઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે ચિકિત્વાન્-વિશેષ જ્ઞાનવાન પ્રાતરિત્વા-પ્રાતઃકાળમાં જાગનાર સુવીરઃ-સુંદર વીર પુરુષ પ્રાતઃ રત્નમ્-પ્રભાતકાળમાં રમણ કરવા યોગ્ય આનંદમય પદાર્થને દધાતિ-ધારણ કરતા તથા પ્રતિગૃહ્યા-આદાન-પ્રદાન કરીને ફરી તમ્-તેને નિ, ધત્તે-નિત્ય ધારણ વા તેન-તે રાયસ્પોષેણ-ધનની પુષ્ટિથી પ્રજામ્-પુત્ર-પૌત્રાદિ સંતાનો તથા આયુઃ-વયને વર્ધયમાન્-વિદ્યા અને શિક્ષાથી વધારીને સચતે-તેનો સંબંધ કરે છે, તે નિરંતર સુખી થાય છે. (૧)

ભાવાર્થ : જે આજસનો ત્યાગ કરીને, ધર્મયુક્ત વ્યવહારથી ધન પ્રાપ્ત કરીને તથા તેની સમ્યક્ રક્ષા કરીને સ્વયં ભોગ કરીને બીજાને ભોગ કરાવીને તથા દઈને-લઈને નિરંતર ઉત્તમ પ્રયત્ન કરે, તે સમસ્ત સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૧)

સુગુરંસત્સમુહિરણ્યઃ સ્વશ્વૌં બૃહદસ્મૈ વયં ઇન્દ્રોં દધાતિ ।

યસ્ત્વાયન્તં વસુના પ્રાતરિત્વો મુક્ષીજયેવ પદિમુત્સિનાતિ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે પ્રાતરિત્વઃ-પ્રાતઃ સમયથી લઈને શ્રેષ્ઠ યત્ન કરનાર યઃ જે ઇન્દ્રઃ-ઐશ્વર્યવાન પુરુષ વસુના-ઉત્તમ ધનની સાથે અયન્તમ્-આવીને ત્વા-તને દધાતિ-ધારણ કરીને અસ્મૈ-એ કાર્ય માટે બૃહત્-બહુ જ વયઃ-ચિરકાલ સુધી જીવન તથા મુક્ષીજયેવ-જે મુંજ (વાસ) ઉત્પન્ન થયેલ તેથી જેમ બાંધવાનું થાય, તેવા સાધનો પદિમ્-પ્રાપ્ત થતાં ધનને ઝત્સિનાતિ-અત્યંત બાંધીને અર્થાત્ સંબંધ કરીને તે સુગુઃ-સુંદર ગાયો સુહિરણ્યઃ-શ્રેષ્ઠ સુવર્ણ આદિ ધન તથા સ્વશ્વઃ-શ્રેષ્ઠ ઘોડાવાળા અસત્-બને. (૨)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન પોતાની પાસે આવેલા શિષ્યોને ઉત્તમ શિક્ષા દ્વારા અને અધર્મ તથા વિષય લાલસાના ત્યાગના ઉપદેશથી તેને દીર્ઘાયુ, વિદ્યાવાન્ અને શ્રીમાન બનાવે છે, તે આ સંસારમાં પુણ્ય-યશવાન બને છે. (૨)

આયમદ્ય સુકૃતં પ્રાતરિચ્છન્નિષ્ટેઃ પુત્રં વસુમતા રથેન ।

અંશોઃ સુતં પાયય મત્સરસ્ય ક્ષયદ્વીરં વર્ધય સૂનૃતાંભિઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે ધાત્રી - હું અદ્ય-આજ વસુમતા-પ્રસંશિત ધનયુક્ત રથેન-રમણ કરવા યોગ્ય રથ આદિ યાનથી પ્રાતઃ-પ્રભાત કાળ ઇષ્ટેઃ-ઈચ્છેલ ગૃહાશ્રમના સ્થાનથી સુકૃતમ્-ધર્મયુક્ત કામની ઇચ્છન્-ઈચ્છા કરતા જે પુત્રમ્-પવિત્ર બાળકને આયમ્-પ્રાપ્ત કરું, તે સુતમ્-ઉત્પન્ન થયેલ પુત્રને મત્સરસ્ય-
૫૫૦

આનંદ કરાવનાર જે અંશો:-સ્ત્રી શરીરના તેના અવયવથી જે રસ અર્થાત્ દૂધ ઉત્પન્ન થાય છે તે દૂધનું પાયય-પાન કરાવ.

હે વીર ! સૂન્તાભિ:-વિદ્યા, સત્યભાષણ આદિ શુભ ગુણયુક્ત વાણીઓથી ક્ષયદ્વીર્મ-શત્રુઓના ક્ષય કરનાર પ્રશંસિત વીર પુરુષની વર્ધ્ય-ઉન્નતિ કર. (૩)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષ પૂર્ણ બ્રહ્મચર્યથી વિદ્યાનો સંગ્રહ કરીને તથા પરસ્પરની પ્રસન્નતાથી વિવાહ કરીને ધાર્મિક વ્યવહારથી પુત્ર આદિ ઉત્પન્ન કરે. તેની રક્ષા માટે તેને ધાર્મિક ધાત્રીને સોંપી દે અને તે એને સુશિક્ષાથી સંપન્ન કરે. (૩)

उप क्षरन्ति सिन्धवो मयोभुव ईजानं च यक्ष्यमाणं च धेनवः ।

पृणन्तं च पपुर्णि च श्रवस्यवो घृतस्य धारा उप यन्ति विश्वतः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : જે સિન્ધવ:-મોટી નદીઓની સમાન મયોભુવ:-સુખની ભાવના કરનાર મનુષ્ય અને ધેનવ:-દૂધાળી ગાયોની સમાન વિવાહિત સ્ત્રી વા ધાત્રી ઈજાનમ્-યજ્ઞ કરનાર ચ-અને ધેનવ-દૂધાળી ગાયોની સમાન વિવાહિત સ્ત્રી વા ધાત્રી ઈજાનમ્-યજ્ઞ કરનાર ચ-અને યક્ષ્યમાણમ્-યજ્ઞ કરવા ઉત્સુક પુરુષની ઉપ, ક્ષરન્તિ-સમીપ આનંદ વર્ષાવે છે વા જે શ્રવસ્યવ:-સ્વયં શ્રવણને ઈચ્છુક વિદ્વાન ચ-અને વિદુષી સ્ત્રી પૃણન્તમ્-(સ્વયં) પુષ્ટિ પામેલ ચ-અને પપુર્ણિમ્-(સ્વયં) પુષ્ટિ પામેલ ચ-પણ પુરુષને શિક્ષા આપે છે, તે વિશ્વત:-સર્વત્રથી ઘૃતસ્ય-જળની ધારા:-ધારાઓની સમાન સુખોને ઉપ, યન્તિ-પ્રાપ્ત કરે છે. (૪)

ભાવાર્થ : જે પુરુષ અને સ્ત્રીઓ ગૃહાશ્રમમાં પરસ્પર પ્રિય આચરણ કરીને તથા વિદ્યાઓનો અભ્યાસ કરીને સંતાનોને અભ્યાસ કરાવે છે, તેઓ નિરંતર સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. (૪)

नाकस्य पृष्ठे अधि तिष्ठति श्रितो पृणाति स ह देवेषु गच्छति ।

तस्मा आपो घृतमर्षन्ति सिन्धवस्तस्मा इयं दक्षिणा पिन्वते सदा ॥ ५ ॥

પદાર્થ : ય:-જે મનુષ્ય દેવેષુ-દિવ્યગુણ વા ઉત્તમ વિદ્વાનોમાં ગચ્છતિ-જાય છે, સ:, હ-તે જે વિદ્યાના શ્રિત:-આશ્રયને પ્રાપ્ત થાય છે. નાકસ્ય-જેમાં કિંચિત્ દુઃખ નથી તેવા ઉત્તમ સુખના પૃષ્ઠે-આધાર અધિ, તિષ્ઠતિ-સ્થિર થાય છે. વા પૃણાતિ-વિદ્યા, સુશિક્ષા અને સંસ્કૃત અન્ન આદિ પદાર્થોથી સ્વયં પુષ્ટ થાય છે અને સંતાનને પુષ્ટ કરે છે, તસ્મૈ-તેને માટે આપ:-પ્રાણ વા જળ સદા-સદા ઘૃતમ્-ધી અર્ષન્તિ-વરસાવે છે તથા તસ્મૈ-તેને માટે ઇયમ્-એ (અધ્યાપકને) ભણાવવાથી મળેલી દક્ષિણા-દક્ષિણા અને સિન્ધવ:-મહા નદી સદા-સદા પિન્વતે-પ્રસન્નતા કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો માનવ શરીર પ્રાપ્ત કરીને સત્પુરુષોનો સંગ અને ધર્માચરણ સદા કરે છે, તેઓ સદા સુખી થાય છે. જે વિદ્વાન અને જે વિદુષીઓ બાળકો તથા વૃદ્ધોને અને બાળાઓ, યુવતીઓ

તથા વૃદ્ધાઓને નિષ્કપટ ભાવથી વિદ્યા અને સુશિક્ષા નિરંતર પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેઓ આ સંસારમાં સમસ્ત સુખોને પ્રાપ્ત કરીને મોક્ષને પ્રાપ્ત થાય છે. (૫)

દક્ષિણાવતામિદિમાનિ ચિત્રા દક્ષિણાવતાં દિવિ સૂર્યાસઃ ।

દક્ષિણાવન્તો અમૃતં ભજન્તે દક્ષિણાવન્તઃ પ્રતિરન્ત આયુઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : દક્ષિણાવતામ્-જેઓની પાસે ધર્મપૂર્વક ઉપાર્જિત ધન, વિદ્યા આદિ પુષ્કળ પદાર્થો વિદ્યમાન છે, તે મનુષ્યોને **ઇમાનિ**-એ પ્રત્યક્ષ **ચિત્રા**-અનેક પ્રકારના અદ્ભુત સુખ પ્રાપ્ત થાય છે. **દક્ષિણાવતામ્**-જેઓને પ્રશંસિત ધર્મને અનુકૂળ ધન અને વિદ્યાની દક્ષિણાનું દાન મળે છે, તે સજ્જનોને **દિવિ**-ઉત્તમ પ્રકાશમાં **સૂર્યાસઃ**-સૂર્ય સમાન તેજસ્વી જન પ્રાપ્ત થાય છે. **દક્ષિણાવન્તઃ**-બહુ જ વિદ્યાદાન યુક્ત સત્પુરુષ **ઇત્-જ અમૃતમ્**-મોક્ષનું **ભજન્તે**-સેવન કરે છે અને **દક્ષિણાવન્તઃ**-અનેક પ્રકારથી અભય આપનાર જન **આયુઃ**-આયુ = પ્રાણધારણ, **પ્રતિરન્તે**-સારી રીતે પાર કરે છે અર્થાત્ પૂર્ણ આયુ ભોગવે છે. (૬)

ભાવાર્થ : જે બ્રાહ્મણ સાર્વજનિક સુખને માટે વિદ્યા અને સુશિક્ષાનું દાન, જે ક્ષત્રિય ન્યાય-વ્યવહાર દ્વારા અભયદાન, જે વૈશ્ય ધર્મપૂર્વક ઉપાર્જિત ધનનું દાન અને જે શૂદ્ર સેવાનું દાન કરે છે, તેઓ પૂર્ણ આયુષ્યવાન થઈને આ લોક અને પરલોકમાં આનંદને નિરંતર ભોગવે છે. (૬)

મા પૃણન્તો દુરિતમેન આરન્મા જારિષ્ઠુઃ સૂરયઃ સુવ્રતાસઃ ।

અન્યસ્તેષાં પરિધિરન્તુ કશ્ચિદપૃણન્તમ્ભિ સં યન્તુ શોકાઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ **પૃણવન્તઃ**-સ્વયં અને પોતાના સંતાન આદિને પુષ્ટ કરીને **દુરિતમ્**-દુઃખને માટે પ્રાપ્ત થાય છે અર્થાત્ **એનઃ**-પાપાયરણ **મા, આ, ક્ષસ્ન્**-કરો નહિ અને દુઃખકારક પાપાયરણ જેથી થાય તેવા **મા, જારિષ્ઠુઃ**-અસત્ય કર્મો કરો નહિ, પરંતુ **સુવ્રતાસઃ**-શ્રેષ્ઠ સત્ય આચરણયુક્ત **સૂરયઃ**-વિદ્વાન બનીને ધર્મનું જ આચરણ કરો; અને જે તમારા અધ્યાપક હોય **તેષામ્**-તે ધાર્મિક વિદ્વાનો તથા તમારી વચ્ચે **કશ્ચિત્**-કોઈ **અન્યઃ**-ભિન્ન **પરિધિઃ**-મર્યાદા અર્થાત્ તમને સર્વને આવરણ કરનાર-ઢાંકનાર, ગુપ્ત રાખનાર મૂર્ખાઈથી બચાવનાર પ્રકાર **અસ્તુ**-થાય; અને **અપૃણન્તમ્**-ધર્મથી ન પુષ્ટ થનાર અને ન અન્યોને પુષ્ટ કરનાર પરંતુ અધર્મથી પુષ્ટ થનાર તથા અધર્મથી જ અન્યોને પુષ્ટ કરનાર મનુષ્યને **શોકાઃ**-શોક-વિલાપ **અભિ, સમ્, યન્તુ**-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે. (૭)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં એક ધાર્મિક અને બીજા પાપી એમ બે પ્રકારના મનુષ્યો છે. તેઓ ભિન્ન-ભિન્ન સ્થાન અને આચરણયુક્ત છે. અર્થાત્ જેઓ ધાર્મિક છે, તેઓ ધાર્મિક મનુષ્યોના અનુસરણથી ધર્મમાર્ગ પર ચાલે છે અને જેઓ દુષ્ટ છે, તેઓ અધાર્મિકના અનુસરણથી અધર્મ પર ચાલે છે.

ધાર્મિકોએ કદીપણ અધાર્મિકોના માર્ગ પર ન ચાલવું જોઈએ (જ્યારે) અધાર્મિકોએ તો ધર્મમાર્ગ

પર (અધર્મ ત્યાગીને) ચાલવું યોગ્ય છે. આ રીતે પ્રત્યેક જાતિમાં ધાર્મિક અને અધાર્મિક બે માર્ગ છે. તેમાં ધાર્મિકોને સુખ અને અધાર્મિકોને દુઃખ સદા પ્રાપ્ત થાય છે. (૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ધર્માનુકૂળ આચરણનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૨૫)

સૂક્ત-૧૨૬

અમન્દાન્ સ્તોમાન્ ભરે મનીષાસિન્ધાવધિ ક્ષિયતો ભાવ્યસ્ય ।

યો મૈ સહસ્રમમિમીત સવાનતૂર્તો રાજા શ્રવ ઇચ્છમાનઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : ય:-જે અતૂર્ત:-હિંસા આદિથી દુઃખને ન પ્રાપ્ત અને શ્રવ:-શ્રેષ્ઠ ઉપદેશ શ્રવણની ઇચ્છમાન:-ઈચ્છા કરતા રાજા-પ્રકાશમાન સભાધ્યક્ષ સિન્ધૌ-નદીની સમીપ ક્ષિયત:-નિરંતર નિવાસ કરીને ભાવ્યસ્ય-પ્રસિદ્ધ થવા યોગ્ય મે-મારી નજીક સહસ્રમ્-હજારો સવાન્-ઐશ્વર્ય યોગ્ય અમન્દાન્-મંદભાવ રહિત તીવ્ર અને સ્તોમામ્-પ્રશંસા કરવા યોગ્ય વિદ્યા સંબંધી વિશેષજ્ઞાનોનું મનીષા-બુદ્ધિ દ્વારા અમિમીત-નિરંતર માન કરે છે, તેને હું અધિ-મારા મનમાં પ્ર, ભરે, સમ્યક રીતે ધારણ કરું. (૧)

ભાવાર્થ : જ્યાં સુધી સમસ્ત શાસ્ત્રોને જાણનાર વિદ્વાનની આજ્ઞાથી પુરુષાર્થી વિદ્વાન ન થાય, ત્યાં સુધી તેને રાજ્યના અધિકારમાં સ્થાન ન કરે. (૧)

શતં રાજો નાધમાનસ્ય નિષ્કાઞ્છતમશ્વાન્પ્રયતાન્ત્સદ્ય આદમ્ ।

શતં કક્ષીવાં અસુરસ્ય ગોનાં દિવિ શ્રવોઽજરમા તંતાન ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જે કક્ષીવાન્-વિદ્યાના બહુ જ વ્યહારોને જાણનાર વિદ્વાન અસુરસ્ય-મેઘ સમાન શ્રેષ્ઠ ગુણી નાધમાનસ્ય-ઐશ્વર્યવાન રાજા:-રાજાના શતમ્-સો નિષ્કાન્-સુવર્ણ મહોરો, પ્રયતાન્-સુશિક્ષિત શતમ્-સો અશ્વાન્-ઘોડાઓ અને દિવિ-આકાશમાં અજરમ્-અવિનાશી ગોનામ્-શતમ્-સૂર્યમંડળના સેંકડો કિરણોની સમાન શ્રવ:-શ્રવણ કરવા યોગ્ય યશને આ-; તંતાન-વિસ્તૃત્ કરે છે, તેને હું સદ્ય:-શીઘ્ર આદમ્-સ્વીકાર કરું છું. (૨)

ભાવાર્થ : જે લોકો ન્યાયકારી વિદ્વાન રાજાથી સત્કાર પામે છે, તેઓ યશનો વિસ્તાર કરે છે. (૨)

ઉપ મા શ્યાવાઃ સ્વનયૈન દત્તા વધૂમન્તો દશ રથાસો અસ્થુઃ ।

ષ્ટિઃ સહસ્રમનુ ગવ્યમાગાત્સનત્કક્ષીવાં અભિપિત્વે અહ્નામ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે સ્વનયૈન-પોતાના ધન આદિ પદાર્થોને પહોંચાડવા અર્થાત્ આપનાર-દાતાને શ્યાવાઃ-સૂર્યનાં કિરણોની સમાન દત્તા:-આપેલ દશ-૪ દશ-દસ રથાસઃ-૨૪ વધૂમન્તઃ-જેમાં પ્રશંસિત વધૂ-

વહુઓ વિદ્યમાન છે, તે મા-મને સેનાપતિની **ઉપાસ્થુ:** સમીપ સ્થિત થાય છે તથા જે **કક્ષીવાન્**-યુદ્ધમાં પ્રશંસિત કક્ષાવાળા અર્થાત્ જેની તરફ શ્રેષ્ઠ વીર યોદ્ધાઓ છે, તે **અભિપિત્વે**-સર્વત્રથી પ્રાપ્તિને માટે **અહ્લામ્**, **સહસ્રમ્**-હજાર દિવસ **ગવ્યમ્**-ગાયોના દૂધ આદિ પદાર્થોને **અન્વાગાત્**-પ્રાપ્ત થાય છે અને જેની **ષષ્ટિ:**-પાછળ સાંઠ પુરુષો ચાલે છે, તે **સનત્**-સદા સુખની વૃદ્ધિ કરનાર છે. (૩)

ભાવાર્થ : જે કારણે સર્વ યોદ્ધાઓ રાજાથી ધન આદિ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ ઈચ્છે છે, તેથી રાજાએ તેઓને યથાયોગ્ય આપવું જોઈએ. તેમ કર્યા વિના ઉત્સાહ રહેતો નથી. (૩)

ચત્વારિંશદ્દશરથસ્ય શોણાઃ સહસ્રસ્યાગ્રે શ્રેણિં નયન્તિ ।

મદ્ચ્યુતઃ કૃશનાવતો અત્યાન્કક્ષીવન્ત ઉદમૃક્ષન્ત પજ્ઞાઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે **દશરથસ્ય**-દશ રથોથી યુક્ત સેનાપતિના **ચત્વારિંશત્**-ચાલીસ **શોણા:**-લાલ ઘોડાઓ, **સહસ્રસ્ય**-હજાર યોદ્ધાઓ અને હજાર રથોની **અગ્રે**-આગળ **શ્રેણિમ્**-પોતાની પંક્તિને **નયન્તિ**-પહોંચાડે છે અર્થાત્ એક સાથે મળીને આગળ ચાલે છે વા જે સેનાપતિ ના નોકરો એવા છે **પજ્ઞા:**-કે જેની સાથે માર્ગોમાં જાય છે અને **કક્ષીવન્ત:**-જેની પ્રશંસિત કક્ષા વિદ્યમાન છે અર્થાત્ જેના સાથી વીર લડનારા છે, તે **મદ્ચ્યુત:**-જે મદ ઝરતા તે **કૃશનાવત:**-સુવર્ણ આદિના અલંકારો-ઘરેણાંઓ પહેરેલાં તથા **અત્યાન્**-જે માર્ગોથી રમતાં-પહોંચતાં તે ઘોડા, હાથી, રથ આદિને **ઉદમૃક્ષન્ત**-ઉત્કર્ષતાથી સહે છે, તે શત્રુઓને જીતવાને યોગ્ય છે. (૪)

ભાવાર્થ : જેના ચાર ઘોડાઓવાળા રથ દશેય દિશાઓમાં છે, જેના હજારો ઘોડે સવારો, લાખો પાયદળ સૈનિક, અક્ષય કોશ, પૂર્ણ વિદ્યા અને વિનય આદિ ગુણો છે, તે જ સામ્રાજ્ય કરી શકે છે. (૪)

પૂર્વામનુ પ્રયતિમા દદે વસ્ત્રીન્ યુક્તાં અષ્ટાવરિધાયસો ગાઃ ।

સુબન્ધવો યે વિશ્યાઙ્વ વ્રા અનસ્વન્તઃ શ્રવ ણેષન્ત પજ્ઞાઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : **યે**-જે એવા છે કે **સુબન્ધવ:**-જેના ઉત્તમ બંધુજન **અનસ્વન્ત:**-યાન, શકટ વિદ્યમાન છે **વ્રા:**-તથા જે ગમન કરનારા અને **પજ્ઞા:**-બીજાઓને પ્રાપ્ત તે **વિશ્યાઙ્વ**-પ્રજાજનોમાં ઉત્તમ વણિક-વૈશ્યજનોની સમાન **શ્રવ:**-અન્નને **ણેષન્ત**-ઈચ્છે તે **વ:**-તમારા **ત્રીન્**-ત્રણ **યુક્તાન્**-આજ્ઞા આપેલ અને અધિકાર પામેલ નોકરો, **અષ્ટૌ**-આઠ સભાસદો, **અરિધાયસ:**-જેથી શત્રુઓ ધારણ કરતા સમજતા તે વીરો અને **ગા:**-બળદ આદિ પશુઓને તથા એ સર્વની **પૂર્વામ્**-પૂર્વની **પ્રયતિમ્**-ઉત્તમ યત્નની રીતિને હું **અનુ**, **આ**, **દદે**-અનુકૂળતાથી ગ્રહણ કરું છું. (૫)

ભાવાર્થ : જે લોકો સભાપતિ, સેનાપતિ તથા શાલાધ્યક્ષને, નિપુણ આઠ સભાસદોને, શત્રુ વિનાશક વીરોને, ગાય આદિ પશુઓને, મિત્રોને, ધન સંપન્ન વેપારીઓને તથા ખેડૂતોને સંરક્ષિત કરીને અન્ન

આદિ ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ 'મનુષ્યશિરોમણિ' છે. (૫)

આગધિતા પરિગધિતા યા કશીકેવ જઙ્ગહે ।

દદાતિ મહ્યં યાદુરી યાશૂનાં ભોજ્યા શતા ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : યા-જે આગધિતા-સમ્યક્ ગ્રહણ કરેલ પરિગધિતા-સર્વત્રથી શ્રેષ્ઠતમ ગુણયુક્ત જઙ્ગહે-અત્યંત ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વ્યવહારમાં કશીકેવ-પશુઓને તાડન કરવા માટેની કશીકાની સમાન યાશૂનામ્-શ્રેષ્ઠ યત્નશીલની યાદુરી-શ્રેષ્ઠ યત્નયુક્ત નીતિ ભોજ્યા-ભોગવવા યોગ્ય શતા-સેંકડો વસ્તુઓ મહ્યમ્-મને દદાતિ-આપે છે, તે સર્વને સ્વીકાર કરવા યોગ્ય છે. (૬)

ભાવાર્થ : જે નીતિથી અગણિત સુખ થાય, તે સર્વેએ પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. (૬)

उपोष मे परा मृश मा मे दभ्राणि मन्यथाः ।

सर्वाहर्मस्मि रोमशा गन्धारीणामिवाविका ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે પતિ રાજન્ ! જે અહમ્-હું ગન્ધારીણામ્ ઇવ-પૃથિવીનું રાજ્ય ધારણ કરનારીઓમાં જે અવિકા-રક્ષા કરનારીઓ હોય છે, તેમ રોમશા-પ્રશંસિત રોમ-રૂંવાડાવાળી સર્વા-સર્વ પ્રકારની અસ્મિ-હું તે મે-મારા ગુણોને પરા મૃશ-વિચારો મે-મારા દભ્રાણિ-કામોને નાના મા, ઉપોષ-પોતાની પાસે ન મન્યથા:-માનો. (૭)

ભાવાર્થ : રાણી રાજાને કહે, કે હું તમારાથી ન્યૂન નથી. જેમ તમે પુરુષોનાં ન્યાયાધીશ છો, તેમ હું સ્ત્રીઓનો ન્યાય કરનારી છું. જેમ પહેલાની રાણીઓ પ્રજાસ્થિત સ્ત્રીઓનો ન્યાય કરનારી હતી, તેમ હું પણ છું. (૭)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં રાજાઓના ધર્મનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૨૬)

સૂક્ત-૧૨૭

अग्निं होतारं मन्ये दास्वन्तं वसुं सूनुं सहसो जातवेदसं विप्रं न

जातवेदसम् । य ऊर्ध्वया स्वध्वरो देवो देवाच्या कृपा ।

घृतस्य विभ्राष्टिमनु वष्टि शोचिषाऽऽजुह्वानस्य सर्पिषः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે કન્યા જેમ હું ય:-જે ઊર્ધ્વયા-ઉત્તમ વિદ્યાથી સ્વધ્વર:-સુંદર યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન અર્થાત્ આરંભ કરનારી છે, તે દેવાચ્યા-જે વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત થાય છે અને જેનાથી વ્યવહારને સમર્થ કરે છે, તે કૃપા-કૃપાથી દેવ:-જે મનોહર અતિ સુંદર છે; અને તે જનને આજુહ્વા-નસ્ય-સારી રીતે હોમવા અને સર્પિષ:-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ઘૃતસ્ય-ઘીના શોચિષા-પ્રકાશની સાથે વિભ્રાષ્ટિમ્-જેથી અનેકના પ્રકારના

પદાર્થોને પકવવામાં આવે છે તે અગ્નિની સમાન અનુવષ્ટિ-અનુકૂળતાથી ઈચ્છે છે. વા જે અગ્નિમ્-અગ્નિની સમાન હોતારમ્-ગ્રહણ કરનાર દાસ્વન્તમ્-દેનાર વસુમ્-તથા બ્રહ્મચર્યથી વિદ્યાની મધ્યમાં નિવાસ કરેલ સહસઃ-બળવાન પુરુષના સૂનુમ્-પુત્રને જાતવેદસમ્-જેની પ્રસિદ્ધ વેદ વિદ્યા છે, તે વિપ્રમ્-મેધાવીની ન-સમાન જાતવેદસમ્-પ્રકટ વિદ્યાવાળા વિદ્વાનને પતિ મન્યે-માનું છું, તેમ એવા પતિનો તું પણ સ્વીકાર કર. (૧)

ભાવાર્થ : જેની શુભ, ગુણ અને સ્વભાવોમાં બહુ જ પ્રશંસા હોય અને જેના શરીરબળ અને આત્મબળ શ્રેષ્ઠ હોય, તેવા પુરુષને સ્ત્રી પતિ રૂપમાં સ્વીકાર કરે. એ જ રીતે પુરુષ પણ એ રીતની સ્ત્રીનો પત્ની રૂપમાં સ્વીકાર કરે. (૧)

यजिष्ठं त्वा यजमाना हुवेम ज्येष्ठङ्गिरसां विप्र मन्मभिर्विप्रेभिः

शुक्र मन्मभिः । परिज्मानमिव द्यां होतारं चर्षणीनाम् ।

शोचिष्केशं वृषणं यमिमा विशः प्रावन्तु जूतये विशः ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે વિપ્ર-મેધાવી વિદ્વાન્ ! યજમાનાઃ-વ્યવહારોનો સંગ કરનાર લોકો, મન્મભિઃ-માન કરનારાઓ, વિપ્રેભિઃ-વિચક્ષણ વિદ્વાનોની સાથે, અઙ્ગિરસામ્-પ્રાણીઓની મધ્યમાં, જ્યેષ્ઠમ્-અતિ પ્રશંસિત, યજિષ્ઠમ્-અત્યંત યજ કરનારા ત્વા, હુવેમ-તમને પ્રશંસિત કરે છે. શુક્ર-શુદ્ધ આત્માવાળા, ધર્માત્માજન યમ્-જે મન્મભિઃ-વિદ્વાનોની સાથે, ચર્ષણીનામ્-મનુષ્યોની મધ્યે, હોતારમ્-દાન દાતા, પરિજ્માનમિવ-સર્વત્રથી ભોગનારની સમાન, દ્યામ્-પ્રકાશરૂપ શોચિષ્કેશમ્-જેના લટ જેમ ચળકતા કેશ છે, તે વૃષણમ્-બળવાન તને ડૂમાઃ-એ વિશઃ-પ્રજાજન પ્રાવન્તુ-સમ્યક્ રીતે પ્રાપ્ત થાય, તે તું જૂતયે-રક્ષા આદિને માટે વિશઃ-પ્રજાજનોને સમ્યક્ પ્રાપ્ત થા અને પાલન કર. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જે વિદ્વાનની પ્રશંસા કરે અને સર્વ પ્રજાજનો (પણ જેની પ્રશંસા કરે), તે આપ્તજનનો સર્વ આશ્રય કરે. (૨)

स हि पुरू चिदोजसा विरुक्मता दीद्यानो भवति द्रुहन्तरः

परशुर्न द्रुहन्तरः । वीळु चिद्यस्य समृतौ श्रुवद्वनेव यत्स्थिरम् ।

निःषहमाणो यमते नायते धन्वासहा नायते ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યસ્ય-જેની સમૃતૌ-સારી રીતે પ્રાપ્તિ કરાવનાર ક્રિયાને નિમિત્ત ચિત્-જ વનેવ-વનોની સમાન વીડુ-દૃઢ સ્થિરમ્-નિશ્ચળ બળને નિઃ સહમાનઃ-નિરંતર સહનશીલ વીરોવાળા શ્રુવત્-શ્રવણ કરતા શત્રુઓને યમતે નિયમનમાં લાવે અર્થાત્ તેના સાંભળેલા તે બળને છિન્ન-ભિન્ન કરીને તેને શત્રુતા કરવાથી રોકે વા જેને શત્રુજન નાયતે-નહિ પ્રાપ્ત થતા વા ધન્વાસહા-જે પોતાના ધનુષ્યથી શત્રુઓને સહન કરનાર શત્રુજનોને સારી રીતે જીતે, વા યત્-જેના વિજયને શત્રુજન નાયતે-

નહિ પ્રાપ્ત થતા, વા જે દુહન્ટર:-દ્રોહ કરનારને મારતા તે પશુ:-ફરસી વા કુહાડાની ન-સમાન પુરુ-
તીવ્ર બહુ જ પ્રકારથી જેમ-તેમ વિસ્ખમતા-જેનાથી અનેક પ્રકારની પ્રીતિઓ થાય તે ઓજસા-બળની
સાથે દીઘાન:-પ્રકાશમાન દુહન્ટર:-દુહન્ટર ભવતિ-થાય છે અર્થાત્ જેની સહાયથી અતિ દ્રોહ કરનાર
શત્રુને જીતે છે સઃ, હિ, ચિત્-તે જ ક્યારેક વિજયી થાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : જે શત્રુઓથી હારતો નથી પરંતુ પોતાના પ્રશંસિત બળ (ઉત્તમ સેના) દ્વારા તેને જીતી
શકે છે, તે જ પ્રજાપાલક જનોમાં સર્વ શ્રેષ્ઠ = શિરોમણિ છે, એમ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૩)

દૃઢા ચિદસ્મા અનુ દુર્યથા વિદે । તેજિષ્ઠાભિરરણિભિર્દાષ્ટ્યવસેઽગ્નયે દાષ્ટ્યવસે ।

પ્ર યઃ પુસ્ત્રિણિ ગાહતે તક્ષદ્વનેવ શોચિષા ।

સ્થિરા ચિદન્ના નિ રિણાત્યોજસા નિ સ્થિરાણિ ચિદોજસા ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યથા-જેમ વિદ્વાન તેજિષ્ઠાભિ:-અત્યંત તેજસ્વી અરણિભિ:-અરણીઓથી
અસ્મૈ-એ વિદે-શાસ્ત્રવેતા અવસે-રક્ષક અગ્નયે-અગ્નિ સમાન વર્તમાન સભાધ્યક્ષના માટે દાષ્ટિ-અરણીના
રગડવાથી કાપતા વા વિદ્વાનજન દૃઢા-સ્થિરા-નિશ્ચલ ચિત્-પણ વિજ્ઞાનોને અનુ, દુઃ-અનુક્રમથી આપે,
તેમ યઃ-જે અવસે-રક્ષાદિ કરવાને માટે દાષ્ટિ-કાપતા અથવા ઉક્ત ક્રિયા કરતા વા તક્ષત્-પોતાના
તેજથી જળ આદિને ઈન્ન-ભિન્ન કરતા સૂર્યમંડળ વનેવ-જેમ કિરણોને તેમ શોચિષા-ન્યાય અને સેનાના
પ્રકાશથી પુસ્ત્રિણિ-બહુ જ શત્રુદળોને પ્ર, ગાહતે-સારી રીતે વિલોડન અર્થાત્ વલોવતા વા ઓજસા-પરાક્રમથી
સ્થિરાણિ-સ્થિર કર્મોને નિ-નિરંતર પ્રાપ્ત થતા ચિત્-અને ઓજસા-કોમળ કામથી અન્ના-ખાવા યોગ્ય
અન્નોને ચિત્-પણ નિ, રિણાતિ-નિરંતર પ્રાપ્ત થાય છે-કરે છે. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન જન વિદ્યાના પ્રચારથી મનુષ્યોના આત્માઓને પ્રકાશિત કરીને સર્વને પુરુષાર્થમાં
પ્રવૃત્ત કરે છે, તેમ વિદ્વાન ન્યાયાધીશ પ્રજાઓને ઉદ્યમી બનાવે છે. (૪)

તમસ્ય પૃક્ષમુપરાસુ ધીમહિ નક્તં યઃ સુદર્શિતરો દિવાતરાદપ્રાયુષે દિવાતરાત્ ।

આદસ્યાયુર્ગ્રભણવદ્વીલુ શર્મ ન સૂનવે ।

ભક્તમભક્તમવો વ્યન્તો અજરા અગ્નયો વ્યન્તો અજરાઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યઃ-જે સુદર્શિતરઃ અત્યંત સુંદર દર્શન યોગ્ય સંપૂર્ણ કલાઓથી યુક્ત-
ખીલેલ ચંદ્રમાની સમાન રાજા અસ્ય-આ સંસારના દિવાતરાત્-અત્યંત પ્રકાશમાન સૂર્યથી અપ્રાયુષે-
જે વ્યવહાર (રાતે) પ્રાપ્ત થતો નથી તેથી નક્તમ્-રાતે સર્વ પદાર્થોને બતાવે છે. તમ્-તે પૃક્ષમ્-ઉત્તમ
કામોનો સંબંધ કરનારાઓને દિવાતરાત્-અત્યંત પ્રકાશમાન સૂર્યની સમાન તેનાથી ઉપરાસુ-દિશાઓમાં
અમે ધીમહિ ધારણ કરીએ અર્થાત્ શ્રવણ કરીએ. આત્-તદનન્તર અસ્ય-એ મનુષ્યના ગ્રભણવત્ જેમાં

પ્રશંસિત સર્વ વ્યવહારનું ગ્રહણ તે વીકુ-દેહ ભક્તમ્-સેવનને માટે વા અમક્તમ્-સેવન ન કરેલ અવઃ-રક્ષા આદિ યુક્ત કર્મ અને આયુઃ-જીવનને સૂનવે-જેમ પુત્રને માટે, ન-તેમ શર્મ-ધરને વ્યન્તઃ-વિવિધ પ્રકારથી પ્રાપ્ત થઈને અજરાઃ-પૂર્ણ આયુવાળા વા અગ્નયઃ-વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિની સમાન વ્યન્તઃ-વયહાનિરહિત = અજરાઃ-વૃદ્ધાવસ્થા થઈ રહિત અમે ધારણ કરીએ. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ ચંદ્રમા તારાગણ અને ઔષધિઓને પુષ્ટ કરે છે, તેમ સજ્જનોએ પ્રજાજનોનું પાલન-પોષણ કરવું જોઈએ. જેમ સંતાનોને માતા-પિતા તૃપ્ત કરે છે, તેમ સર્વ પ્રાણીઓને અમે તૃપ્ત કરીએ. (૫)

સ હિ શર્ધો ન મારુતં તુવિષ્વણિરજ્જ્વતીષૂર્વરાસ્વિષ્ટનિઃ આર્તનાસ્વિષ્ટનિઃ ।
આદ્ભૂવ્યાન્યાદ્દિર્યજ્જસ્ય કેતુરર્હણા ।

અથ સ્માસ્ય હર્ષતો હૃષીવતો વિશ્વે જુષન્ત પન્થાં નરઃ શુભે ન પન્થામ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે વિશ્વ-સર્વ નરઃ-વ્યવહારોની પ્રાપ્તિ કરાવનારા મનુષ્યો ! હૃષીવતઃ-જે બહુ જ આનંદથી પૂર્ણ હર્ષતઃ-અને જેનાથી સર્વ પ્રકારનો આનંદ પ્રાપ્ત થયો અસ્ય-એ યજ્જસ્ય-સંગ કરવા યોગ્ય અર્થાત્ પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય વ્યવહારની શુભે-શ્રેષ્ઠતાને માટે ન-જેમ બને, તેમ પન્થામ્-ધર્મયુક્ત માર્ગનું જુષન્ત-સેવન કરો. અથ-એ પછી જે કેતુઃ-જ્ઞાનવાન આદદિઃ-ગ્રહણ કરનાર અર્હણા-સત્કાર કરેલ અર્થાત્ નમ્રતાની સાથે કરેલ હવ્યાનિ-ભોજન યોગ્ય પદાર્થોનું આદત્-સેવન કરે. વા માસ્તમ્-વાયુના શર્ધઃ-બળની ન-સમાન અજ્જ્વતીષુ-જેના પ્રશંસિત સંતાનો વિદ્યમાન છે, તો ઉર્વરાસુ-સુંદરી આર્તનાસુ-સત્યાચરણયુક્ત સ્ત્રીઓની સમીપ તુવિષ્વણિઃ-જેની બહુ જ ઉત્તમ નિરંતર બોલ-ચાલ ઇષ્ટનિઃ-અને જે સત્કાર કરવા યોગ્ય છે, સઃ, સ્મ-તે જ વિદ્વાન ઇષ્ટનિઃ-ઈચ્છા કરનાર હિ-નિશ્ચયની સાથે પન્થામ્-ન્યાયમાર્ગને પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય હોય છે. (૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ધર્મથી ઉપાર્જિત પદાર્થોનો ઉપભોગ પ્રજાઓમાં ધર્મયુક્ત વિદ્યાઓનો પ્રચાર કરે છે, તેઓ ધર્મ માર્ગનો પ્રચાર કરી શકે છે. (૬)

દ્વિતા યદી કીસ્તાસો અભિદ્યવો નમસ્યન્ત ઉપવોચન્ત ભૃગવો મશ્નન્તો
દાશા ભૃગવઃ । અગ્નિરીશે વસૂનાં શુચિર્યો ધર્ણિરૈષામ્ ।
પ્રિયાં અપિધીર્વનિષીષ્ટ મેધિર આ વનિષીષ્ટ મેધિરઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્-જે કીસ્તાસઃ-મેધાવી વિદ્વાન અભિદ્યવઃ-જે અગ્રવિદ્યા આદિ ગુણોથી પ્રકાશિત, નમસ્યન્તઃ-જે ધર્મનું આચરણ કરનાર, ભૃગવઃ-તથા અવિદ્યા અને અધર્મનો નાશ કરનાર જ્ઞાનને મશ્નન્તઃ-મથીને ભૃગવઃ-તથા દુઃખભંજક છે, તેઓ દાશા-વિદ્યા દાન માટે વિદ્યાર્થીઓને દ્વિતા-જેમ બે નું હોવું થાય, તેમ અર્થાત્ એક પછી એક ઈમ્-સન્મુખ પ્રાપ્ત થયેલી વિદ્યા ઉપવોચન્ત-અને

ગુણનો ઉપદેશ કરે; વા જેમ **एषाम्**-એ **वसूनाम्**-પૃથિવી આદિ લોકોની મધ્યમાં **यः**-જે **धर्णिः**-શિલ્પવિદ્યા વિષયક કામોને ધારણ કરનાર, **शुचिः**-પવિત્ર તથા અન્યોને શુદ્ધ કરનાર, **अग्निः**-અગ્નિ છે; વા જેમ **मेधिरः**-મેઘાવી **प्रियान्**-પ્રસન્ન ચિત્ત અને **अपिधीन्**-શ્રેષ્ઠ ગુણોને ધારણ કરનાર તથા દુઃખોને ઢાંકનાર વિદ્વાનોની **वनिषीष्ट**-યાચના કરે અર્થાત્ તેની પાસેથી કોઈ પદાર્થ માંગે; વા **मेधिरः**-સંગ કરનાર પુરુષ આપનારની **आ**, **वनिषीष्ट**-સારી રીતે યાચના કરે વા વિદ્યાની **ईशे**-ઈશ્વરતા પ્રકટ કરે, અર્થાત્ વિદ્યાધિકારને પ્રકાશિત કરે, તેમ તમે તે વિદ્વાન અને અગ્નિ આદિ પદાર્થોનું સેવન કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાર્થી વિદ્વાનોથી નિત્ય વિદ્યા માંગે, તેને વિદ્વાન નિત્ય વિદ્યા આપે. એ (વિદ્યાના) આપનાર અને લેનારની સમાન (અન્ય) કોઈ પણ ઉત્તમ કર્મ નથી. (૭)

**विश्वासां त्वा विशां पतिं हवामहे सर्वासां समानं दम्पतिं भुजे सत्यगिर्वाहसं
भुजे । अतिथिं मानुषाणां पितुर्न यस्यास्या ।**

अमी च विश्वे अमृतासु आ वयो हव्या देवेष्व्वा वयः ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ અમે **भुजे**-શરીરમાં વિદ્યાનું **विश्वासाम्**-સર્વ **विशाम्**-પ્રજાજનોનું વા **सर्वासाम्**-સમસ્ત ક્રિયાઓનું **पतिम्**-પાલન કરનાર અધિપતિ **त्वा**-તારો **हवामहे**-સ્વીકાર કરે છે; **च**-અને જેમ **अमी**-જે **देवेषु**, વિદ્વાનોમાં **आ**-સમ્યક્ **वयः**-વિદ્યાદિ ગુણોની કામનાવાળા **हव्या**-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય જ્ઞાનને ગ્રહણ કરીને તથા **आ**, **वयः**-સમ્યક્ વિદ્યાદિ ગુણોને પ્રાપ્ત કરેલ **विश्वे**-સર્વ **अमृतासु**: અમર અર્થાત્ વિદ્યા પ્રકાશથી મૃત્યુરૂપી દુઃખથી રહિત બનેલ અને **यस्य**-જેની **आसया**-બેઠકની, **पितुः**-અન્નની **न**-સમાન **भुजे**-વિદ્યાનંદ ભોગવવા માટે **मानुषाणाम्**-મનુષ્યોના **समानम्**-પક્ષપાતરહિત **अतिथिम्**-અતિથિ સમાન સત્કાર કરવા યોગ્ય **सत्यगिर्वाहसम्**-સત્યવાણીની પ્રાપ્તિ કરાવનાર, તારું પાલન કરનારનો સ્વીકાર કરીએ છીએ, તેમ **दम्पतिम्**-સ્ત્રી-પુરુષનું સેવન કરીએ છીએ. (૮)

ભાવાર્થ : જ્યાં સુધી પક્ષપાત રહિત આપ વિદ્વાન રાજ્યાધિકારી બનતાં નથી, ત્યાં સુધી રાજા અને પ્રજાની ઉન્નતિ થતી નથી. (૮)

**त्वमग्ने सहसा सहन्तमः शुष्मिन्तमो जायसे । देवतातये रयिर्न देवतातये ।
शुष्मिन्तमो हि ते मदो द्युष्मिन्तम उत क्रतुः ।**

अथ स्मा ते परि चरन्त्यजर श्रुष्टीवानो नाजर ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે અજર-તરુણ વય-વૃદ્ધના દોષરહિતની **न**-સમાન **अजर**-અજન્મા પરમેશ્વરમાં રમણ કરતા **अग्ने**-શૂરવીર વિદ્વાન્ ! **देवतातये**-વિદ્વાનને માટે **रयिः**-ધન જેમ **न**-તેમ **देवतातये**-વિદ્વાનોના સત્કારને માટે **सहन्तम्**-અતિ સહનશીલ **शुष्मिन्तमः**-અત્યંત પ્રશંસિત બળવાન **त्वम्**-આપ **सहसा**-

બળથી જાયસે-પ્રકટ થાય છે. તે-આપના શુષ્મિન્તમ્-અત્યંત બળયુક્ત દ્યુમિન્તમ્-જેના સંબંધમાં બહુ જ ધન હોય, તે અતિ ધની મદ:-હર્ષ ઉત્-અને ક્રતુ:-યજ્ઞ હિ-જ છે. અઘ-અનન્તર તે-આપની શ્રુષ્ટીવાન:-શીઘ્ર ક્રિયાવાળા સ્મ-જ પરિચરન્તિ-સર્વ તરફથી ચાલતા અને આપની પરિચર્યા કરતા તે આપનો અમે આશ્રય કરીએ. (૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો શરીર તથા આત્માનાં બળથી યુક્ત, વિદ્વાન્ અને ઐશ્વર્યવાન પ્રજાઓવાળા છે તેઓ જ 'સુખકારક' બને છે. (૯)

પ્ર વૌ મહે સહસા સહસ્વત ઉષ્બુધે પશુષે નાગનયે સ્તોમૌ બભૂત્વગ્નયૈ ।

પ્રતિ યદીં હવિષ્માન્ વિશ્વાસુ ક્ષાસુ જોગુવે ।

અગ્રે રેભો ન જરત ઋષૂણાં જૂર્ણિર્હૌત ઋષૂણામ્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! વ:-તમારા સહસ્વતે-બહુ બળયુક્ત, ઉષ્બુધે-પ્રત્યેક પ્રભાત સમય = ઊષાકાળમાં જાગનાર અને પશુષે-પ્રબંધ બાંધનાર મહે-મહાન જોગુવે-નિરંતર ઉપદેશક અગ્નયે-વિદ્યુત્ની ન-સમાન અગ્નયે-પ્રકાશમાનને માટે વિશ્વાસુ-સર્વ ક્ષાસુ-ભુમિઓમાં હવિષ્માન્-જેમાં પ્રશંસિત ગ્રહણ કરેલ વ્યવહાર વિદ્યમાન છે, તે સ્તોમ:-પ્રશંસા સહસા-બળ દ્વારા પ્ર, બભૂતુ-સમર્થ બને. રેભ:-ઉપદેશકની ન-સમાન અગ્રે-પ્રથમ ઋષૂણામ્-જેને વિદ્યા પ્રાપ્ત કરેલ હોય અથવા જે વિદ્યાને જાણવા ઈચ્છે છે, તેની વિદ્યાઓની ઈમ્-સર્વત્રથી પ્રતિ, જરતે-પ્રત્યક્ષ સ્તુતિ કરનાર યત્-જે હોતા-ભોજન કરનાર જૂર્ણિ:-રોગી હોય તે ઋષૂણામ્-પ્રાપ્ત કરેલ વૈદ્યવિદ્યા અર્થાત્ ઉત્તમ વૈદ્ય છે, તેની સમીપ જઈને રોગરહિત બને. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનજન વિદ્યાની પ્રાપ્તિ માટે પ્રયત્ન કરે છે, તેમ એ વિષયમાં સર્વ મનુષ્યોએ પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૧૦)

સ નો નેદિષ્ટં દદૃશાન્ આ ભ્રાગ્નેં દેવેભિઃ સર્ચનાઃ સુચેતુનાં મહો રાયઃ સુચેતુનાં ।

મહિ શવિષ્ટ નસ્કૃધિ સ્વચક્ષે ભુજે અસ્યૈ ।

મહિ સ્તોતૃભ્યો મઘવન્ત્સુવીર્ય મર્થીરુગ્રો ન શર્વસા ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-પ્રશંસિત ધનયુક્ત, શવિષ્ટ-અત્યંત બલવાન વિદ્યાદિ ગુણોને પ્રાપ્ત, અગ્ને-અગ્નિ સમાન પ્રકાશાળાન સ:-તે દદૃશાન્-જોયેલ વિદ્વાન ! આપ સુચેતુના-સુંદર સમજદાર અને દેવેભિઃ-વિદ્વાનોની સાથે ન:-અમારા માટે મહ:-બહુ જ સર્ચના:-સંબંધ કરવા યોગ્ય રાયઃ-ધનને આ, ભર-સમ્યક્ ધારણ કરે.

અસ્યૈ-એ પ્રજાને માટે સ્વચક્ષે-શ્રેષ્ઠતાથી કહેવા ઉપદેશ આપવા અને ભુજે-એનું પાલન કરવા માટે શર્વસા-પોતાના પરાક્રમથી ઝગ્ર:-પ્રચંડ પ્રતાપવાનની ન-સમાન મર્થી:-દુષ્ટોને મંથનાર આપ નેદિષ્ટમ્-અત્યંત સમીપ મહિ-બહુ સુવીર્યમ્-ઉત્તમ પરાક્રમને સારી રીતે ધારણ કરો અને એ સુચેતુના-સુંદર

જ્ઞાન આપનાર ગુણથી મહિ-અધિકતાથી જેમ બને, તેમ સ્તોતૃભ્યઃ-સ્તુતિ, પ્રશંસા કરનારાઓથી નઃ-અમને વિદ્યાવાન કૃધિ-કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : વિદ્યાથીઓએ આપત અધ્યાપકોથી સારી રીતે પ્રાર્થના કરીને તથા તેઓની સેવા કરીને પૂર્ણ વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. જેથી રાજપુરુષ અને પ્રજાજન વિદ્યાવાન બનીને નિરંતર ધર્મનું આચરણ કરે. (૧૧)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાન અને રાજધર્મનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૨૭)

સૂક્ત-૧૨૮

અયં જાયત મનુષો ધરીમણિ હોતા યજિષ્ઠ ડશિજામનુ વ્રતમગ્નિઃ સ્વમનુ વ્રતમ્ ।
વિશ્વશ્રુષ્ટિઃ સખીયતે રયિરિવ શ્રવસ્યતે ।

અદબ્ધ્યો હોતા નિ ષદદિડસ્પદે પરિવીત ડુડસ્પદે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે અયમ્-એ મનુષ્ય ડઠ્ઠ:-જેમ સ્તુતિને યોગ્ય જગદીશ્વરને પદે-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય વિજ્ઞાનમાં, તેમ ડઠ્ઠ:-પ્રશંસિત ધર્મના પદે-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય વ્યવહારમાં અદબ્ધ્યઃ-હિંસા આદિ દોષ રહિત, હોતા-ઉત્તમ ગુણોને ગ્રહણ કરનાર, પરિવીત:-જે સર્વત્રથી વિજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને બનેલા નિ, ષદત્-સ્થિર થઈને, રયિરિવ-વા ધનની સમાન વિશ્વશ્રુષ્ટિ:-જેની સમસ્ત શીઘ્ર ગતિવાન શ્રવસ્યતે-સાંભળનારને માટે અગ્નિ:-અગ્નિની સમાન વા ડશિજામ્-કામના કરનાર મનુષ્યોને અનુ-અનુકૂળ વ્રતમ્-સ્વભાવની સમાન અનુ, વ્રતં, સ્વમ્-પોતાના અનુકૂળ આચરણને પ્રાપ્ત વા ધરીમણિ-સુખોને ધારણ કરતા વ્યવહારોમાં હોતા-દાતા યજિષ્ઠ:-અત્યંત સંગ કરીને જાયત-પ્રકટ થાય છે, તે મનુષઃ-મનનશીલ વિદ્વાન સર્વની સાથે સખીયતે-મિત્રની સમાન આચરણ કરનાર અને સર્વના સત્કારને યોગ્ય બને છે. (૧)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાની ઈચ્છા કરનારના અનુગામી, સુશીલ, ધર્મયુક્ત વ્યવહારમાં પૂર્ણ નિષ્ઠાવાન, સર્વના મિત્ર અને શુભગુણ પ્રદાતા હોય, તે જ ‘મનુષ્યમુકુટમણિ’ બની શકે છે. (૧)

તં યજ્ઞસાધમર્ષિ વાતયામસ્યૃતસ્ય પથા નમસા હ્વિષ્મતા દેવતાતા હ્વિષ્મતા ।
સ ન ડર્જામુપાભૃત્યયા કૃપા ન જૂર્યંતિ ।

યં માતરિશ્વા મનવે પરાવતો દેવં ભાઃ પરાવતઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જેમ યમ્-જે દેવમ્-ગુણદાતાને પરાવતઃ-દૂરથી જે ભાઃ-સૂર્યની કાન્તિની સમાન મનવે-મનુષ્યને માટે માતરિશ્વા-વાયુ પરાવતઃ-દૂરથી ધારણ કરનાર સઃ-જે દાતા વિદ્વાન અયા-એ કૃપા-કલ્પનાથી નઃ-અમને ડર્જામ્-પરાક્રમયુક્ત પદાર્થોની ઉપાભૃતિ-સમીપ આવેલ આભૂષણ અર્થાત્ જેમ

સુંદરતા થાય, તેમ ન-નહિ જૂર્યતિ-રોગી કરતા અને તે જેમ દેવતાતા-વિદ્વાનની સમાન હવિષ્મતા-પુષ્કળ દાન દાતા ર્હસ્ય-સત્યના પથા-માર્ગ પર ચાલે છે, તેમ હવિષ્મતા-બહુ જ પ્રહણકર્તા નમસા-સત્કારની સાથે તમ્-તે અગ્નિ સમાન પ્રતાપી યજ્ઞસાધમ્-યજ્ઞ સાધનાર વિદ્વાનને અપિ-નિશ્ચયપૂર્વક સાથે અમે વાતયામસિ-વાયુની સમાન સર્વ કાર્યોમાં પ્રેરણા કરીએ. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ સર્વ મૂર્તિમાન પદાર્થોને ધારણ કરીને પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, તેમ વિદ્વાન મનુષ્યના વિદ્યા અને ધર્મને ધારણ કરીને સર્વ મનુષ્યોને સુખી કરે. (૨)

एवेन सद्यः पर्येति पार्थिवं मुहुर्गी रेतो वृषभः कनिक्रदद्दध्रेतः कनिक्रदत् ।

शतं चक्षाणो अक्षभिर्देवो वनेषु तुर्वणिः ।

सदो दधान उपरेषु सानुष्वग्निः परेषु सानुषु ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! આપ જેમ મુહુર્ગી:-વારંવાર વાણીને પ્રાપ્ત, રેત:-જળને કનિક્રદત્-નિરંતર ગર્જવનાર, રેત:-પરાક્રમને કનિક્રદત્-અત્યંત શબ્દાયમાન કરનાર અને દધત્-ધારણ કરીને વૃષભ:-વર્ષા કરનાર તથા વનેષુ-કિરણોમાં તુર્વણિ:-અંધકાર અને શીતનો વિનાશ કરીને, દેવ:-નિરંતર પ્રકાશમાન ઉપરેષુ-મેઘ અને સાનુષુ-પૃથક પર્વતોનાં શિખરો વા પરેષુ-ઉત્તમ સાનુષુ-પર્વતોનાં શિખરોમાં સદ:-જેમાં જન બેસે છે, તે સ્થાનોને દધાન:-ધારણ કરીને અગ્નિ:-વિદ્યુત્ તથા સૂર્યરૂપ અગ્નિ એવેન-પોતાની લપટ-ઝપટ ચાલથી પાર્થિવમ્-પૃથિવીમાં જઈને પદાર્થોને સદ્ય:-શીઘ્ર પર્યેતિ-બધી બાજુથી પ્રાપ્ત થતું તેમ અક્ષભિ:-ઈન્દ્રિયોથી શતમ્-અસંખ્ય ઉપદેશોને ચક્ષાણ:-કરનાર બનીને પ્રસિદ્ધ થાઓ (૩)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અને વાયુ સર્વને ધારણ કરીને તથા મેઘને વરસાવીને સમસ્ત સંસારને આનંદિત કરે છે, તેમ વિદ્વાનો વેદવિદ્યાને ધારણ કરીને તથા અન્ય મનુષ્યોના આત્માઓમાં વર્ષા કરીને સર્વ મનુષ્યોને સુખી કરે છે. (૩)

स सुक्रतुः पुरोहितो दमेदमेऽग्निर्यज्ञस्याध्वरस्य चेतति क्रत्वा यज्ञस्य चेतति ।

क्रत्वा वेधा इषूयते विश्वा जातानि पस्पशे ।

यतो घृतश्रीरतिथिरजायत वह्निर्वेधा अजायत ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સુક્રતુ:-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ અને કર્મવાળા પુરોહિત:-પૂર્વ જેણે હિત સંપાદન કરેલ છે અને અગ્નિ:-અગ્નિની સમાન પ્રતાપી વર્તમાન દમેદમે-ગૃહે-ગૃહે ક્રત્વા-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ વા કર્મથી યજ્ઞસ્ય-વિદ્વાનોના સત્કારરૂપની ચેતતિ-જ્ઞાપન કરાવવા સમાન અધ્વરસ્ય-ન છોડવા યજ્ઞસ્ય-પરંતુ સંગ કરવા યોગ્ય શ્રેષ્ઠ યજ્ઞ આદિ કામનું ચેતતિ-વિજ્ઞાન કરાવતા વા જે ક્રત્વા-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ વા કર્મથી વેધા:-મેઘાવી ઇષૂયતે-બાણની સમાન વિષયોમાં પ્રવેશ કરીને તથા વિશ્વા-સમસ્ત જાતાનિ-ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થોનો પસ્પશે-પ્રબંધ કરીને વા યત:-જેથી ઘૃતશ્રી:-ધીનું સેવન કરીને અતિથિ:-જેની કોઈ રહેવાની

તિથિ નિશ્ચિત નથી તે સત્કારને યોગ્ય વિદ્વાન અજાયત-પ્રસિદ્ધ થાય; અને વહ્નિ:-વસ્તુના ગુણાદિની પ્રાપ્તિ કરાવનાર અગ્નિની સમાન વેદ્યા:-મેધાવી = ધીર પુરુષ અજાયત-પ્રસિદ્ધ થાય સ: તે જ વિદ્વાન વિદ્યાના ઉપદેશને માટે સર્વને સમ્યક્ આશ્રય કરવાને યોગ્ય છે. (૪)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન લોકો, દેશ-દેશોમાં, નગર-નગરમાં દ્વીપ-દ્વીપમાં, ગામ-ગામમાં અને ઘર-ઘરમાં સત્યનો ઉપદેશ કરે છે, તે સર્વના દ્વારા 'સત્કાર કરવાને યોગ્ય' બને છે. (૪)

ક્રત્વા યદસ્ય તવિષીષુ પૃજ્વતેઽગ્નેરવેણ મરુતાં ન ભોજ્યેષિરાય
ન ભોજ્યાં। સ હિ ષ્મા દાનમિન્વતિ વસૂનાં ચ મજ્મનાં।
સ નસ્ત્રાસતે દુરિતાદ્ભિહુતઃ શંસાદ્ઘાદ્ભિહુતઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : યત્-જે અસ્ય-એ સેનાપતિની ક્રત્વા-બુદ્ધિ અને અવેન-રક્ષા આદિ કામથી મસ્તામ્-વાયુ અને અગ્ને:-વિદ્યુત્ની ઇષિરાય-વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરેલ પુરુષને માટે ભોજ્યા-ભોજન કરવા યોગ્ય પદાર્થોની ન-સમાન વા ભોજ્યા-પાલન યોગ્ય પદાર્થોની ન-સમાન પદાર્થોને તવિષીષુ-પ્રશંસિત બળયુક્ત સેનાઓમાં પૃજ્વતે-સંબંધ કરીને વા જે હિ-ઠીક-ઠીક મજ્મના-બળથી વસૂનામ્-પ્રથમ કક્ષા પ્રવિષ્ટ વિદ્વાનો તથા ચ-પૃથિવી આદિ લોકોનું દાનમ્-આપવામાં આવતા જે પદાર્થ તેને ઇન્વતિ-પ્રાપ્ત થતા વા જે ન:-અમને અભિહુત:-અભિમુખ પ્રાપ્ત કુટિલ દુરિતાત્-દુઃખદાયી અભિહુત:-સર્વત્રથી વક-વાંકા-ચૂંકા, નાનાં મોટાં અઘાત્-પાપથી ત્રાસતે-ઉદ્વેગ કરીને અર્થાત્ ઉઠાવીને વા શંસાત્-પ્રશંસાથી સંયોગ કરીને સ:, સ્મ-તે જ સુખને પ્રાપ્ત કરીને તથા સ:-તે સુખ કરનાર બનીને તથા તે જ વિદ્વાન સર્વથી સત્કાર કરવા યોગ્ય અને તે સર્વ તરફથી રક્ષા કરનાર બને છે. (૫)

ભાવાર્થ : જે (મનુષ્યોને) ઉત્તમ શિક્ષા અને વિદ્યાનાં દાન દ્વારા દુષ્ટ સ્વભાવો અને દુર્ગુણોથી તથા અધર્માચરણથી નિવૃત્ત કરીને - દૂર કરીને શુભ ગુણોમાં પ્રવૃત્ત કરાવે છે, તે જ આ સંસારમાં કલ્યાણકારી 'આપ્ત' લોક બને છે. (૫)

વિશ્વો વિહાયા અરતિર્વસુર્દધે હસ્તે દક્ષિણે તરણિર્ન શિશ્રથચ્છૃવસ્યયા ન
શિશ્રથત્। વિશ્વસ્મા ઇદિષુધ્યતે દૈવત્રા હવ્યમોહિષે।
વિશ્વસ્મા ઇત્સુકૃતે વારમૃણવત્યગ્નિદ્વારા વ્યૃણવતિ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : વિશ્વ-સમસ્ત વિહાયા:-વિદ્યા આદિ શુભ ગુણોમાં વ્યાપ્ત, અરતિ:-ઉત્તમ વ્યવહારોની પ્રાપ્તિ કરાવનાર અને તરણિ:-તારણહાર વસુ:-પ્રથમ શ્રેણીનો બ્રહ્મચારી વિદ્વાન શ્રવસ્યયા-પોતાને ઉત્તમ ઉપદેશ શ્રવણની ઈચ્છાથી જેમ અગ્નિ:-વિદ્યુત્ શિશ્રયત્-શિથિલ ન થાય, તેમ ન શિશ્રયત્-શિથિલ થાય નહિ; વા દક્ષિણે-જમણા હસ્તે-હાથમાં જેમ આમળું ધારણ કરે - (હસ્તામલકવત્) તેમ દેવત્રા-વિદ્વાનોમાં હું વિદ્યાને દધે-ધારણ કરું; વા વિશ્વસ્મૈ-સર્વ ઇષુધ્યતે-ધનુષ્યની સમાન આચરણ કરતા

જનસમૂહને માટે તું હવ્યમ્-આપવા યોગ્ય પદાર્થનો આ, ઝહિષે-તર્ક-વિતર્ક કરીને ઇત્-તેમજ જે વિશ્વસ્મે-સર્વ સુકૃતે-સુકર્મ કરનારા જનસમૂહને માટે દ્વારા-ઉત્તમ વ્યવહારોના દ્વારોને ઋઘ્વતિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તે સુખ ઇત્-જ નો વારમ્-સ્વીકાર પ્રાપ્ત થાય છે, તે સુખ ઇત્-જ નો વારમ્-સ્વીકાર કરવા વિઃ ઋઘ્વતિ-વિશેષતાને પ્રાપ્ત થાય છે. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય સમસ્ત અભિવ્યક્ત પદાર્થોને પ્રકાશિત કરીને સર્વને માટે સમસ્ત સુખોને ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ અહિંસક વિદ્વાનજન વિદ્યાઓનો પ્રકાશ કરીને સર્વને આનંદિત કરે છે. (૬)

સ માનુષે વૃજને શન્તમો હિતોઽગ્નિર્યજ્ઞેષુ જેન્યો ન વિશ્પતિઃ પ્રિયો યજ્ઞેષુ
વિશ્પતિઃ । સ હૃવ્યા માનુષાણામિલા કૃતાનિ પત્યતે ।

સ નસ્ત્રાસતે વરુણસ્ય ધૂર્તેર્મહો દેવસ્ય ધૂર્તેઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : જે પ્રિયઃ-પ્રીણન = તૃપ્તિકારક છે, તે વિશ્પતિઃ-પ્રજાઓના પાલક રાજા નઃ-અમને ધૂર્તેઃ-હિંસકથી ત્રાસતે-ઉદ્વેગ તથા સઃ-તે ધૂર્તેઃ-અવિદ્યાનો નાશ કરાવે તથા મહઃ-મહાન દેવત્ય-વિદ્યાદાતા વસ્ત્રાસ્ય-ઉત્તમ વિદ્વાનની પાસેથી જે યજ્ઞેષુ-સંગ કરવા યોગ્ય વ્યવહારોમાં માનુષાણામ્-મનુષ્યોને ઇલા-શ્રેષ્ઠ સંસ્કારોથી યુક્ત કૃતાનિ-સિદ્ધ કરેલ શુદ્ધ વચન હૃવ્યા-જે ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે, તેને સ્થિર કરે છે તથા સઃ-તે સર્વને પત્યતે-પ્રાપ્ત કરે છે; વા યજ્ઞેષુ-અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞોમાં અગ્નિઃ-અગ્નિની સમાન વા જેન્યઃ-વિજયશીલની ન-સમાન વિશ્પતિઃ-પ્રજાજનોના પાલક માનુષે-મનુષ્યોના વૃજને-તે માર્ગમાં કે જેમાં ગમન કરતા હિતઃ-હિત સિદ્ધ કરનાર શન્તમ્-અત્યંત સુખકારી થાય છે, સઃ-તે વિદ્વાન સર્વના સત્કારને યોગ્ય બને છે. (૭)

ભાવાર્થ : જે લોકોને ઉપદેશ દ્વારા ધર્મમાર્ગમાં પ્રવૃત્ત કરે છે અને જે લોકો ન્યાયાધીશ રાજાની સમાન પ્રજાપાલક, ડાકુ આદિના ભયના નિવારક તથા વિદ્વાનોના મિત્ર છે, તે જ ‘અંધપરંપરાઓ’ ને રોકનાર બની શકે છે. (૭)

અગ્નિં હોતારમીલતે વસુધિતિં પ્રિયં ચેતિષ્ઠમરતિં ન્યૈરિરે હવ્યવાહું ન્યૈરિરે ।

વિશ્વાયું વિશ્વવેદસું હોતારં યજતં ક્વિમ્ ।

દેવાસૌ રુણ્વમવસે વસૂયવૌ ગીર્ભી રુણ્વં વસૂયવઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે દેવાસઃ-વિદ્વાનજન જે અગ્નિમ્-અગ્નિની સમાન વર્તમાન, હોતારમ્-દાતા, વસુધિતિમ્-જેનાથી ધનની ધારણ છે અરતિમ્-અને જે વિદ્યા પ્રાપ્ત કરેલ છે, તે હવ્યવાહમ્-આદાન-પ્રદાન યોગ્ય વ્યવહારની પ્રાપ્તિ કરાવનાર, ચેતિષ્ઠમ્-ચેતનાવાળા અને પ્રિયમ્-પ્રીતિકારક વિદ્વાનને જાણવાની ઈચ્છા કરેલ ન્યૈરિરે-નિરંતર પ્રેરણા આપે છે; વા વિશ્વાયુમ્-જે સર્વ વિદ્યાદિ ગુણોના બોધને

પ્રાપ્ત કરે છે, વિશ્વવેદસમ્-જેનું સમગ્ર વેદ ધન તે હોતારમ્-ગ્રહણ કરનાર, યજતમ્-સત્કાર કરવા યોગ્ય, કવિમ્-પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત અને રણવમ્-સત્યોપદેશક, સત્યવાદી પુરુષને વસૂયવ:-જે ધન આદિ પદાર્થોથી ઈચ્છા કરે છે, તેની સમાન ચ્યેરિ-નિરંતર પ્રાપ્ત થાય છે; વા જે વસૂયવ:-ધન આદિ પદાર્થોના ઈચ્છુક અવસે-રક્ષા આદિને માટે ગીર્ભિ:-સુસંસ્કૃત વાણીઓથી રણવમ્-સત્યવાદીની ઈચ્છા-સ્તુતિ કરે છે, તે સર્વની તમે પણ સ્તુતિ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! વિદ્વાન લોકોની જેની સેવા અને સંગતિથી વિદ્યા પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓની સેવા અને સંગતિથી તમારે પણ એ વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. (૮)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૨૮)

સૂક્ત-૧૨૯

યં ત્વં રથમિન્દ્ર મેધસાતયેऽપાકા સન્તમિષિર પ્રણયસિ પ્રાનવદ્ય નયસિ ।

સદ્યશ્ચિત્તમભિષ્ટયે કરો વશશ્ચ વાજિનમ્ ।

સાસ્માકમનવદ્ય તૂતુજાન વેધસામિમાં વાચં ન વેધસામ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇષિર-ઈચ્છા કરનાર ઇન્દ્ર-વિદ્વાન સભાપતિ ! ત્વમ્-આપ મેધસાતયે-પવિત્ર પદાર્થોનો સમ્યક્ વિભાગ કરવા માટે યમ્-જે અપાકા-પૂર્ણ જ્ઞાની સન્તમ્-વિદ્યમાન રથમ્-વિદ્વાનને રમણ કરવા યોગ્ય રથને પ્રણયસિ-પ્રાપ્ત કરાવવા સમાન વિદ્યાને પ્રણયસિ-પ્રાપ્ત કરો છો; ચ-અને હે અનવદ્ય-પ્રશંસાયુક્ત વશ:-કામના કરતા આપ અભિષ્ટયે-ઈચ્છિત પદાર્થની પ્રાપ્તિને માટે વાજિનમ્-પ્રશંસિત જ્ઞાનવાનની ચિત્-સમાન તમ્-તેને સદ્ય:-શીઘ્ર કર:-સિદ્ધ કરો; વા હે તૂતુજાન-શીઘ્ર કાર્યોના કર્તા અનવદ્ય-પ્રશંસિત ગુણો થી યુક્ત સ:-તે આપ અસ્માકમ્-અમે વેધસામ્-મેધાવીની ન-સમાન વેધસામ્-બુદ્ધિમાનોની ઇમામ્-એ વાચમ્-સુશિક્ષિત વાણીને સિદ્ધ કરો અર્થાત્ તેનો ઉપદેશ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન સર્વ મનુષ્યોને વિદ્યાઓમાં અને વિનયમાં પ્રવૃત્ત કરે છે, તે અભીષ્ટ-ઈચ્છિત કાર્ય સિદ્ધ કરી શકે છે. (૧)

સ શ્રુધિ યઃ સ્મા પૃતનાસુ કાસુ ચિદ્વક્ષાય્ય ઇન્દ્ર ભરહૂતયે નૃભિરસિ પ્રતૂત્તયે

નૃભિઃ । યઃ શૂરૈઃ સ્વૃઃ સન્નિતા યો વિપ્રૈર્વાજં તરુતા ।

તમીશાનાસં ઇરધન્ત વાજિનં પૃક્ષમત્યં ન વાજિનમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત સેનાપતિ ! ય:-જે આપ પ્રતૂત્તયે-શીઘ્ર આરંભ કરવા માટે નૃભિ:-નાયક = મુખ્ય અગ્રણી મનુષ્યોની સમાન નૃભિ:-પોતાના અધિકારી કર્મચારી મનુષ્યોથી ભરહૂતયે-અન્યોનું પાલન કરનાર રાજા જનોની સ્પર્ધા અર્થાત્ તેની હાર કરવા માટે કાસુ ચિત્-કોઈ પણ પૃતનાસુ-

સેનાઓમાં તથા દક્ષાઘ્ય:-રાજ કાર્યોમાં અતિ ચતુર અસિ-હોય; વા ય:-જે આપ શૂર:-નિડર શૂરવીરોની સાથે સ્વ:-સુખનો સનિતા-સમ્યક્ વિભાગ કરનાર; વા ય:-જે વિપ્રૈ:-મેધાવીની સાથે વાજમ્-વિશેષ જ્ઞાનને તસ્તા-પાર કરનાર, વાજિનમ્-વિશેષ જ્ઞાનવાન, અત્યમ્-વ્યાપ્ત થનારની ન-સમાન પૃક્ષમ્-સુખને સિંચનાર વાજિનમ્-ઘોડાઓને ધારણ કરે છે, તમ્-તે આપને ઈશાનાસ:-સમર્થજન ઇચ્છન્ત-જે પ્રેરણા કરનારને ધારણ કરે છે, તેની સમાન આચરણ કરે અર્થાત્ પ્રેરણા કરે; અને સ: સ્મ-તે જ આપ સર્વના ન્યાયને શ્રુધિ-સાંભળે. (૨)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન ન્યાયધીશોની સાથે રાજધર્મને (સર્વત્ર) પ્રાપ્ત કરાવે છે, તે પ્રજાઓમાં આનંદદાયી બને છે. (૨)

દ્સ્મો હિ ષ્મા વૃષ્ણં પિન્વસિ ત્વચ્ચં કં ચિદ્વાવીરરું શૂર મર્ત્ય પરિવૃણક્ષિ મર્ત્યમ્ । ઇન્દ્રોત તુભ્યં તદ્દિવે તદ્ રુદ્રાય સ્વયંશસે ।

મિત્રાય વોચ્ચં વરુણાય સપ્રથઃ સુમૃલીકાય સપ્રથઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે શૂર-શત્રુનાશક ઇન્દ્ર-સભાપતિ ! હિ-જે કારણ દસ્મ:-શત્રુ વિનાશક આપ જે કચ્ચિત્-કોઈ ત્વચમ્-ધર્મને ઢાંકનારને યાવી:-પૃથક્ કરીને તથા વૃષ્ણમ્-વિદ્યાદિ ગુણોની વર્ધા કરીને અસ્મ્-વા અન્યોને તેની પ્રાપ્તિ કરાવનાર મર્ત્યમ્-મનુષ્યની સમાન મર્ત્યમ્-મનુષ્યને પરિવૃણક્ષિ-સર્વ રીતે છોડીને સ્વતંત્રતા આપીને વા પિન્વસિ-તેનું સેવન કરો છો; એ કારણે તે સ્વયંશસે-સ્વકીર્તિથી યુક્ત મિત્રાય-સર્વના મિત્રને માટે વા તુભ્યમ્-આપને માટે તત્-તે વ્યવહારને વોચમ્- હું કહું વા દિવે-કામના કરનાર સ્દાય-દુષ્ટોને રડાવનાર વસ્ણાય-શ્રેષ્ઠ ધર્માચરણ કરનાર સુમૃલીકાય-અને ઉત્તમ સુખ કરનારને માટે સપ્રથઃ-સર્વ રીતે વિસ્તૃત મનુષ્યની સમાન સપ્રથઃ-પ્રસિદ્ધિ અર્થાત્ શ્રેષ્ઠ કીર્તિયુક્ત તત્-તે ઉક્ત આપના શ્રેષ્ઠ વ્યવહારને ઉત-તર્ક-વિતર્કથી સ્મ-જ કહું. (૩)

ભાવાર્થ : જે લોકો સર્વ મનુષ્યોને મિત્રભાવથી સત્યનો ઉપદેશ કરે છે અને ધર્મનું સેવન કરે છે, તેઓ જ 'સુખકારક' બને છે. (૩)

અસ્માકં વ ઇન્દ્રમુશ્મસીષ્ટયે સઘાયં વિશ્વાયું પ્રાસહં યુજં વાજેષુ

પ્રાસહં યુજમ્ । અસ્માકં બ્રહ્મોતયેઽવા પૃત્સુષુ કાસુ ચિત્ ।

નહિ ત્વા શત્રુઃ સ્તરતે સ્તૃણોષિ યં વિશ્વં શત્રું સ્તૃણોષિ યમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે અસ્માકમ્-અમારા અને વ:-તમારા ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત વા વાજેષુ-રાજજનનો પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય પૃત્સુષુ, કાસુ, ચિત્-કોઈ સેનાઓમાં પ્રાસહમ્-ઉત્તમતાથી સહનશીલ યુજમ્-અને યોગાભ્યાસયુક્ત ધર્માત્મા પુરુષની સમાન પ્રાસહમ્-અત્યંત સહનાર યુજમ્-અને યોગ કરનાર વિશ્વાયુમ્-સમસ્ત શુભ ગુણ પ્રાપ્ત કરેલ સઘાયમ્-મિત્રજનની ઇષ્ટયે-ઈચ્છિત પદાર્થની

પ્રાપ્તિને માટે **उश्मसि**-કામના કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કામના કરો.

હે વિદ્વાન્ ! **अस्माकम्**-અમારી **ऊतये**-રક્ષા આદિ માટે આપ **ब्रह्म**-વેદની **अव**-રક્ષા કરો, તેમ કર્યા પછી **यम्**-જે **विश्वम्**-સમગ્ર **शत्रुम्**-શત્રુગણને **स्तृणोषि**-આચ્છાન કરીને અર્થાત્ પોતાના પ્રતાપથી ઢાંકીને તથા **यम्**-જે વિરોધ કરનારને **स्तृणोषि**-ઢાંકીને અર્થાત્ પોતાના પ્રચંડ પ્રતાપથી રોકીને તે **शत्रुः**-શત્રુ **त्वा**-આપને **नहि**-નહિ, **स्तरते**-ઢાંકી શકતો નથી. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જ્યાં સુધી બની શકે, ત્યાં સુધી બહુ જ મિત્રો બનાવવાનો પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. પરંતુ અધાર્મિક મિત્ર ન બનાવવા જોઈએ અને દુષ્ટો પ્રત્યે મિત્રતાનું આચરણ ન કરવું જોઈએ. તેમ કરવાથી શત્રુઓનું બળ વધી શકતું નથી. (૪)

नि षू न्मातिमतिं कयस्य चित्तेजिष्ठाभिररणिभिर्નોतिभिर्ग्राभिरुग्रોतिभिः ।

नेषि णो यथा पुरानेनाः शूर मन्यसे ।

विश्वानि पूरोरप ष्षि वह्निरासा वह्निरौ अच्छ ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે **उग्र**-તેજસ્વી **शूर**-દુષ્ટને મારનાર વિદ્વાન્ ! **तेजिष्ठाभिः**-અત્યંત પ્રતાપયુક્ત **अरणिभिः**-સુખ આપનારી, **उग्राभिः**-તીવ્ર **ऊतिभिः**-રક્ષા આદિ ક્રિયાઓની **न**-સમાન **ऊतिभिः**-રક્ષાઓ દ્વારા, **अतिमतिम्**-અત્યંત વિચારવાળી બુદ્ધિને **नि**, **नम**-નમો અર્થાત્ નમ્રતાપૂર્વક વર્તો; વા **यथा**-જેમ **अनेनाः**-પાપરહિત મનુષ્ય **पुरा**-પૂર્વ શ્રેષ્ઠ કર્મોની પ્રાપ્તિ કરે છે, તેમ **नः**-અમને આપ **मन्यसे**-જાણીને તથા **सु**, **नेषि**-સુંદરતાથી શ્રેષ્ઠ કામોને પ્રાપ્ત કરાવો છો; વા **आसा**-પોતાની પાસે **वह्निः**-પહોંચાડનારની સમાન **नः**-અમને **अच्छ**, **ष्षि**-સમ્યક્ સિંચન વા **कयस्य**-વિશેષ જ્ઞાન આપવા તથા **पूरोः**-પૂર્ણ વિદ્વાન મનુષ્યને **चित्**-પણ **वह्निः**-પહોંચાડનાર આપ **विश्वानि**-સમસ્ત દુઃખોને **अप**-દૂર કરો છો, તે આપ અમોને સેવન કરવા યોગ્ય છો. (૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યોની બુદ્ધિને સુરક્ષાથી વધારીને પાપોમાં અશ્રદ્ધા ઉત્પન્ન કરે છે, તે જ સર્વને સુખ પહોંચાડી શકે છે. (૫)

प्र तद्वौचेयं भव्यायेन्दवे हव्यो न य इषवान्मन्म रेजति रक्षोहा मन्म रेजति ।

स्वयं सो अस्मदा निदो वधैरजेत दुर्मतिम् ।

अव स्रवेद्घशंसोऽवतरमव क्षुद्रमिव स्रवेत् ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હું **स्वयम्**-આપ જેમ **हव्यः**-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય **रक्षोहा**-દુષ્ટ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળાને મારનાર **मन्म**-વિચાર કરવા યોગ્ય જ્ઞાનનો **रेजति**-સંગ્રહ કરનારની **न**-સમાન **यः**-જે **इषवान्**-જ્ઞાનવાન **मन्म**-જાણવા યોગ્ય વ્યવહારનો **रेजति**-સંગ્રહ કરે છે, **तत्**-તે ઉપદેશ કરવા યોગ્ય જ્ઞાનને **भव्याय**-

જે વિદ્યા ગ્રહણની ઈચ્છા કરનાર હોય છે, તે **ઇન્દ્રવે-આર્દ્ર** અર્થાત્ કોમળ હૃદયવાળાને માટે **પ્ર, વોચેયમ્-શ્રેષ્ઠતાથી** કહું. જે **અસ્મત્-અમારાથી** શિક્ષા પામીને **વધૈ:-મારવાના ઉપાયોથી નિદ:-નિંદા કરનારાઓ** તથા **દુર્મતિમ્-દુષ્ટ બુદ્ધિવાળા** જનને **અજેત-દૂર કરે, સ:-તે અવતરમ્-અધોમુખી લજ્જાયુક્ત મુખવાળા** પુરુષને **ક્ષુદ્રમિવ-તુચ્છ આશયવાળાની સમાન અવ, સ્વવેત્-તેના સ્વભાવથી વિપરીત દંડ આપવો અને અધશંસ:-જે પાપના પ્રશંસક તે ચોર, ડાકુ, લંપટ, લબાડ આદિ જન અવ, આ, સ્વવેત્-પોતાના સ્વભાવથી સારી રીતે વિપરીત ગમન કરે. (૬)**

ભાવાર્થ : જે શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળા વિદ્યાર્થીઓ છે, તેઓને વિદ્યાન પ્રેમથી વિદ્યા પ્રદાન કરે. નિંદા કરનારા ચોરોને કાઢી મૂકે અને સ્વયં પણ સદા ધાર્મિક બને. (૬)

**વનેમ તદ્દોત્રયા ચિતન્ત્યા વનેમ રયિં રયિવઃ સુવીર્યં રણ્વં સન્તં સુવીર્યમ્ ।
દુર્મન્માનં સુમન્તુભિરેમિષા પૃચ્ચીમહિ ।**

આ સત્યાભિરિન્દ્રં દ્યુમ્નહૂતિભિર્યજત્રં દ્યુમ્નહૂતિભિઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે **રયિવ:-ધનવાન !** જેમ અમે **હોત્રયા-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય ચિતન્ત્યા-ચેતાવનારી બુદ્ધિમતીથી** જે જ્ઞાનનું **વનેમ-સમ્યક્ સેવન કરે;** વા **સુવીર્યમ્-શ્રેષ્ઠ પરાક્રમયુક્ત રયિમ્-ધન તથા સન્તમ્-વર્તમાન રણવમ્-ઉપદેશક સુવીર્યમ્-વિદ્યા અને ધર્મથી ઉત્તમ આત્માના બળનું વનેમ-સેવન કરે;** વા **સુમન્તુભિ:-શ્રેષ્ઠ વિદ્યાવાન પુરુષો અને ઈમ્-પામવા યોગ્ય ઇષા-ઈચ્છાથી દુર્મન્માનમ્-દુષ્ટજન માન કરનારને જે મારનાર છે તેનો આ, પૃચ્ચીમહિ-સારી રીતે સંબંધ કરે તથા દ્યુમ્નહૂતિભિ:-ધન વા યશની વાતચીતોથી યજત્રમ્-સારી રીતે સંગ કરવા યોગ્ય વ્યવહારની સમાન સત્યાભિ:-સત્ય આચરણ યુક્ત દ્યુમ્નહૂતિભિ:-ધન વિષયક વાતોથી ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યનો આ-સારી રીતે સંબંધ કરે, તેમ તત્-ઉક્ત સમસ્ત વ્યવહારને આપ ભજો અને તેનાથી સંબંધ કરો. (૭)**

ભાવાર્થ : માતા-પિતા આદિએ અથવા વિદ્વાનોએ પોતાનાં સંતાનોને એ રીતે ઉપદેશ આપવો જોઈએ- અમારા ધર્મયુક્ત કર્મો છે, તેનું આચરણ કરવું જોઈએ અન્યોનું નહિ. આ રીતે સત્ય આચરણોથી અને પરોપકારથી ઐશ્વર્યની નિરંતર વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૭)

**પ્રપ્રા વો અસ્મે સ્વયંશોભિરૂતી પરિવર્ગ ઇન્દ્રો દુર્મતીનાં દરીમન્દુર્મતીનામ્ ।
સ્વયં સા રિષયધ્યૈ યા ન ઉપેષે અત્રૈઃ ।**

હતેમસન્ન વક્ષતિ ક્ષિપ્તા જૂર્ણિર્ન વક્ષતિ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મિત્રો ! **વ:-તમારા માટે અસ્મે-અને અમારા માટે ઇન્દ્ર:-ઐશ્વર્યવાન વિદ્વાન દુર્મતીનામ્-દુષ્ટ બુદ્ધિયુક્ત દુષ્ટ મનુષ્યોના પરિવર્ગે-સર્વ તરફના સંબંધમાં અને દુર્મતીનામ્-દુષ્ટ બુદ્ધિવાળા દુરાચારી મનુષ્યોને દરીમન્-અત્યંત વિદારણમાં સ્વયંશોભિ:-પોતાની પ્રશંસા અને ઋતી-રક્ષા દ્વારા પ્રપ્ર, વક્ષતિ-અહવદભાષ્ય**

શ્રેષ્ઠતાથી ઉપદેશ કરે, યા-જે સેના ન:-અમારી **उपेक्षे**-સમીપ આવવા માટે **अत्रैः**-આતતાથી શત્રુજનોએ **क्षिप्ता**-પ્રેરિત કરેલી અર્થાત્ શીખવેલી છે, **सा**-તે **रिषयध्वै**-બીજાઓનું હનન કરાવવા માટે પ્રવૃત્ત થયેલ **स्वयम्**-આપ **ईम्**-સર્વત્રથી **हता**-નષ્ટ **असत्**-થાય પરન્તુ તે **जूर्णिः**-શીઘ્રતા કરનારની **न**-સમાન **न**, **वक्षति**- પ્રાપ્ત થાય નહિ અર્થાત્ શીઘ્રતા કરી જ શકે નહિ પરંતુ ત્યારે નાશ જ પામે. (૮)

ભાવાર્થ : જેઓ દુષ્ટોના સંગ છોડીને તથા સત્સંગ દ્વારા યશસ્વી બનીને, અતિ પ્રશંસિત સેના દ્વારા પ્રજાજનોની રક્ષા કરે છે, તેઓ ઉત્તમ ઐશ્વર્યવાન બની જાય છે. (૮)

त्वं न इन्द्र राया परीणसा याहि पथाँ अनेहसा पुरो याह्यरक्षसा ।

सचस्व नः पराक आ सचस्वास्तमीक आ ।

पाहि नो दूरादारादिभिष्टिभि सदा पाह्यभिष्टिभिः ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-વિદ્યા વા ઐશ્વર્યયુક્ત વિદ્વાન્ ! **त्वम्**-આપ **परीणसा**-બહુ જ **राया**-ધનથી **नः**-અમને **याहि**-પ્રાપ્ત થાઓ; અને **अनेहसः**-રક્ષામય જે ધર્મ છે તેથી **अरक्षसा**-અને જેમાં દુષ્ટ પ્રાણી વિદ્યમાન નથી તે **पथा**-માર્ગ દ્વારા **पुरः**-પ્રથમ જે વર્તમાન છે તેને **याहि**-પ્રાપ્ત થાઓ; અને **नः**-અમને **पराके**-દૂર દેશમાં **आ**, **सचस्व**- સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય અને **अस्तमीके**-સમીપમાં અમોને **सचस्व**-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થાઓ, મળો; અને જે **अभिष्टिभिः**-સર્વત્રથી ક્રિયાઓથી સંગ કરીએ તે **दूरात्**-દૂર અને **आरात्**-સમીપથી **नः**-અમારી **पाहि**-રક્ષા કરો; અને **सदा**-સર્વકાળમાં **अभिष्टिभिः**-સર્વત્રથી ઈચ્છિત ક્રિયાઓથી અમારી **पाहि**-રક્ષા કરો. (૯)

ભાવાર્થ : ઉપદેશકોએ ધર્મયુક્ત માર્ગમાં પ્રવૃત્ત બનીને તથા સર્વને પ્રવૃત્ત કરીને, ઉપદેશ દ્વારા સમીપના અને દૂરના મનુષ્યોનો સંગ કરીને તેઓના ભ્રમનો નાશ કરીને તથા તેઓને સત્ય પ્રાપ્ત કરાવવા દ્વારા સર્વની નિરંતર રક્ષા કરવી જોઈએ. (૯)

त्वं न इन्द्र राया तरूषसोग्रं चित्त्वा महिमा संक्षुदवसे महे मित्रं नावसे ।

ओजिष्ठ त्रातरविता रथं कं चिदमर्त्य ।

अन्यमस्मद्रिषेः कं चिदद्रिवो रिर्िक्षन्तं चिदद्रिवः ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-પરમૈશ્વરયુક્ત રાજન ! **त्वम्**-આપ **तरूषसा**-જેથી શત્રુઓનાં બળને પાર કરવામાં આવે તે કાળ અને **राया**-શ્રેષ્ઠ લક્ષ્મીથી **महे**-અત્યંત **अवसे**-રક્ષા આધિ સુખને માટે વા **मित्रम्**-મિત્રની **न**-સમાન **अवसे**-રક્ષા આદિ વ્યવહારને માટે જે **त्वा**-આપનો **महिमा**-મહાન ભાવ પ્રતાપ **सक्षत्**-સંબંધે અર્થાત્ મળે તે આપ **चित्**-પણ **नः**-અમારી રક્ષા કરો.

હે **ओजिष्ठ**-અત્યંત પ્રતાપી **अवितः**-રક્ષા કરનાર **अमर्त्य**-પોતાની કીર્તિ કલાપથી મરણ ધર્મ રહિત **त्रातः**-રાજ્યપાલક **कं**, **चित्**-કોઈ પણ **रथम्**-રમણ કરવા યોગ્ય રથને પ્રાપ્ત થાઓ.

હે અદ્વિવ:-પુષ્કળ મેઘો-વાદળાંઓવાળા સૂર્યની સમાન તેજસ્વી આપ અસ્મત્-અમારાથી કં, ચિત્-કોઈ પણ અન્યમ્-બીજાઓને રિષિઃ-મારો.

હે અદ્વિવ:-પર્વત અને ભૂમિઓનાં રાજ્યથી યુક્ત આપ રિશ્વન્તમ્-હિંસા કરવાની ઈચ્છા કરનારા ઝગમ્-તીવ્ર પ્રાણીઓને ચિત્-પણ મારો, તાડના આપો. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોનું એજ મહત્વ છે કે જે શ્રેષ્ઠોનું પાલન કરવું અને દુષ્ટોનો નાશ કરવો. (૧૦)

પાહિ નં ઇન્દ્ર સુષ્ટુત સ્ત્રિધૌઽવયાતા સદમિદુર્મતીનાં દેવઃ સન્ દુર્મતીનામ્ ।
હન્તા પાપસ્ય રક્ષસંસ્ત્રાતા વિપ્રસ્ય માવતઃ ।

અથા હિ ત્વા જનિતા જીર્જનદ્વસો રક્ષોહણં ત્વા જીર્જનદ્વસો ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે સુષ્ટુત-શ્રેષ્ઠ પ્રશંસિત ઇન્દ્ર-સભાપતિ ! અવયાતા-વિરુદ્ધ માર્ગે જતાં અને દેવઃ-સત્ય ન્યાયની કામના અર્થાત્ શોધ કરતાં સન્-થયેલ દુર્મતીનામ્-દુષ્ટ મનુષ્યોનો સદમ્-સ્થાનની ઇત્-સમાન દુર્મતીનામ્-દુષ્ટ બુદ્ધિવાળા મનુષ્યોના પ્રચારનો વિનાશ કરીને સ્ત્રિધઃ-દુઃખનો હેતુ પાપથી નઃ-અમારી પાહિ-રક્ષા કરો.

હે વસો-સજ્જનોમાં વાસ કરનારાઓ ! જનિતા-ઉત્પન્ન કરનારા પિતા, ગુરુ જે રક્ષોહણમ્-દુષ્ટનાશક ત્વા-આપને જીર્જનત્-ઉત્પન્ન કરે.

હે વસો-વિદ્યાઓમાં વાસ અર્થાત્ પ્રવેશ કરનારાઓ ! જે રક્ષક ત્વા-આપને જીર્જનત્-ઉત્પન્ન કરે, તે હિ-જ આપ અથ-એથી અનન્તર પાપસ્ય-પાપ આચરણ કરનારા રક્ષસઃ-અર્થાત્ અન્યોને પીડા આપનારાને હન્તા-મારવાવાળા તથા માવતઃ-મારા સમાન વિપ્રસ્ય-બુદ્ધિમાન ધર્માત્મા પુરુષની ત્રાતા-રક્ષા કરનારા બનો. (૧૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોનું એ જ પ્રશંસનીય કર્મ છે, કે પાપનું ખંડન કરવું અને ધર્મનું મંડન કરવું. કોઈએ પણ દુષ્ટ મનુષ્યનો સંગ અને શ્રેષ્ઠ મનુષ્યના સંગનો ત્યાગ ન કરવો જોઈએ. (૧૧)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાનો અને સજ્જનોના ધર્મોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તમાં કહેલ અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૨૯)

સૂક્ત-૧૩૦

એન્દ્રં યાહ્યર્પ નઃ પરાવતો નાયમચ્છાં વિદથાનીવ સત્પતિરસ્તં રાજેવ સત્પતિઃ ।

હવામહે ત્વા વયં પ્રયસ્વન્તઃ સુતે સર્વા ।

પુત્રાસો ન પિતરં વાર્જસાતયે મંહિષ્ટં વાર્જસાતયે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમેશ્વર્યવાન રાજન્ ! અયમ્-એ શત્રુજન વિદથાનીવ-જેમ સંગ્રામોમાં આવે

તેમ આવીને પ્રાપ્ત થાય છે એથી આપ ન:-અમારી સમીપ પરાવત:-દૂર દેશથી ન ઉપાયાહિ-આવો નહિ પરંતુ નજીકથી આવો. સત્પતિ:-ધાર્મિક સજ્જનોના પતિ રાજેવ-જે પ્રકાશમાનની સમાન સત્પતિ:-સત્યાચરણના રક્ષક આપ અમારા અસ્તમ્-ધરને પ્રાપ્ત થાઓ. પ્રયસ્વન્ત:-અત્યંત પ્રયત્નશીલ વયમ્-અમે સચા-સંબંધથી સુતે-ઉત્પન્ન થયેલા સંસારમાં વાજસાતયે-યુદ્ધના વિભાગને માટે અને વાજસાતયે-પદાર્થોના વિભાગને માટે પુત્રાસ:-પુત્રજન જેમ પિતરમ્-પિતાને ન-તેમ મંહિષ્ટમ્-અતિ સત્કારયુક્ત ત્વા-આપની અચ્છ-સારી રીતે હવામહે-સ્તુતિ કરીએ છીએ. (૧)

ભાવાર્થ : સર્વ રાજા લોકો અને પ્રજાજન આ સંસારમાં પિતા-પુત્ર સમાન વર્તન કરીને પુરુષાર્થી બને. (૧)

પિબા સોમમિન્દ્ર સુવાનમદ્રિંભિઃ કોશેન સિવ્તમવતં ન વંસંગસ્તાતૃષાણો
ન વંસંગઃ । મદાય હર્યતાય તે તુવિષ્ટમાય ધાયસે ।

આ ત્વા યચ્છન્તુ હરિતો ન સૂર્યમહા વિશ્વેવ સૂર્યમ્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સભાપતિ ! તાતૃષાણ:-અત્યંત તૃષ્ણાતુર વંસંગ:-વૃષભની ન-સમાન બળવાન વંસંગ:-સમ્યક્ વિભાગ કરનાર આપ અદ્રિંભિઃ-શિલાખંડોથી સુવાનમ્-કાઢવા યોગ્ય કોશેન-મેઘથી અવતમ્-વધેલ સિવ્તમ્-અને સંયુક્ત કરેલની ન-સમાન સોમમ્-સુંદર ઔષધિઓના રસનું પિબ-સમ્યક્ પાન કરો. તુવિષ્ટમાય-અત્યંત બહુ જ પ્રકારથી ધાયસે-ધારણ કરનાર મદાય-આનંદને માટે હર્યતાય-અને કામના કરેલ તે-આપના માટે એ દિવ્ય ઔષધિઓનો રસ પ્રાપ્ત થાય અર્થાત્ ઈચ્છિત સૂર્યમ્-સૂર્યને અહા-વિશ્વેવ-સર્વ દિવસની જેમ વા સૂર્યમ્-સૂર્યમંડળની જેમ હરિત:-દિશા વિદિશા ન-તેમ ત્વા-આપને જે લોકો આ, યચ્છન્તુ-સારી રીતે નિરંતર ગ્રહણ કરે, તેઓ સુખને પ્રાપ્ત થાય. (૨)

ભાવાર્થ : જે સાધનો અને ઉપકરણોથી આયુર્વેદની રીત મહાઔષધિઓનો રસ તૈયાર કરીને તથા તેનું સમ્યક્ સેવન કરે છે, તેઓ નીરોગ રહીને પ્રયત્ન કરી શકે છે. (૨)

અવિન્દહિવો નિહિતં ગુહાં નિધિં વેર્ન ગર્ભ પરિવિતમશ્મન્યનન્તે અન્તરશ્મનિ ।

વ્રજં વ્રજી ગવામિવ સિષાસન્નઙ્ગિસ્તમઃ ।

અપાવૃણોદિષ્ ઇન્દ્રઃ પરીવૃતા દ્વાર ઇષઃ પરીવૃતાઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે વ્રજી-શાસન માટે દંડ ધારણ કરેલ વ્રજંગવામિવ-જેમ ગાયનો સમૂહ ગૌશાળામાં ગમન કરતા આવે જાય છે, તેમ સિષાસન્-જનોને તાડન કરવા અર્થાત્ દંડ આપવાની ઈચ્છા કરતા અથવા જેમ જેમ અઙ્ગિસ્તમઃ-અતિ શ્રેષ્ઠ ઇન્દ્રઃ-પરમૈશ્વર્યવાન સૂર્ય ઇષઃ-ઈચ્છા કરવા યોગ્ય પરીવૃતાઃ-છૂપી અર્થાત્ ઢંકાયેલી ઇષઃ-ઈચ્છાઓને તથા દ્વારઃ-દ્વારોને અપાવૃણોત્-ખોલે તથા અનન્તે-દેશ, કાળ, વસ્તુ ભેદથી પ્રતીત ન થતા અશ્મનિ-આકાશમાં અશ્મનિ-વર્તમાન મેઘની અન્તઃ-વચ્ચે પરિવિતમ્-સર્વત્રની

વ્યાપ્ત અને અતિ મનોહર જળ વા **વે:**-પક્ષીના ગર્ભમ્-ગર્ભની ન-સમાન ગુહા-બુદ્ધિમાં નિહિતમ્-સ્થિત નિધિમ્-જેમાં નિરંતર પદાર્થ ધરવામાં આવે તે નિધિરૂપ પરમાત્માને **દિવ:**-વિજ્ઞાનના પ્રકાશથી અવિન્દત્-પ્રાપ્ત થાય છે, તે અતુલ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩)

ભાવાર્થ : જે યોગના અંગો, ધર્મ, વિદ્યા અને સત્સંગના અનુષ્ઠાનથી પોતાના આત્મામાં સ્થિત પરમાત્માને જાણી લે છે, તે જેમ સૂર્ય અંધકારને (દૂર કરે છે), તેમ પોતાની સંગતિ કરનારાઓની આ વિદ્યાનું નિવારણ કરીને તથા વિદ્યારૂપી પ્રકાશને ઉત્પન્ન કરીને, સર્વને મોક્ષ માર્ગમાં પ્રવૃત્ત કરીને આનંદિત કરી શકે છે. (૩)

**દાદૃહાણો વજ્રમિન્દ્રો ગર્ભસ્ત્યોઃ ક્ષદ્વેવ તિગ્મમસનાય સં શ્યદહિહત્યાય
સં શ્યત્। સંવિવ્યાન ઓજસા શવોંભિરિન્દ્ર મ્જ્મનાં।**

તષ્ટેવ વૃક્ષં વનિનો નિ વૃશ્ચસિ પરશ્વેવ નિ વૃશ્ચસિ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! આપ જેમ સૂર્ય અહિહત્યાય-મેઘને મારવા તિગ્મમ્-પોતાનાં તીવ્ર કિરણરૂપી વજ્રને સં, શ્યત્-તીક્ષ્ણ કરે છે, તેમ ગર્ભસ્ત્યોઃ-પોતાની ભુજાઓના ક્ષદ્વેવ-જળની સમાન અસનાય-ફેંકવા માટે તીવ્ર વજ્રમ્-શસ્ત્રને નિરંતર ધારણ કરીને દાદૃહાણઃ-દોષોનો વિનાશ કરે છે. **ઇન્દ્ર:**-અને વિદ્વાન બનીને શત્રુઓને સં, શ્યત્-અતિ સૂક્ષ્મ કરે છે અર્થાત્ તેનો વિનાશ કરે છે.

હે **ઇન્દ્ર**-દુષ્ટોના દોષનાશક ! આપ વૃક્ષમ્-વૃક્ષને મ્જ્મના-બળથી તષ્ટેવ-જેમ સુથાર આદિ કાપનાર તેમ ઓજસા-પરાક્રમ અને શવોંભિઃ-સેના આદિ બળની સાથે સંવિવ્યાનઃ-સારી રીતે પ્રાપ્ત થઈને વનિનઃ-વન વા બહુ જ કિરણો જેના વિદ્યમાન તેથી સમાન દોષોને નિ, વૃશ્ચસિ-નિરંતર કાપે છે વા પરશ્વેવ-જેમ કુહાડાથી કોઈ પદાર્થ કાપે, તેમ અવિદ્યા અર્થાત્ મૂર્ખતાને પોતાના જ્ઞાનથી નિ વૃશ્ચસિ-કાપો છો, તેમ અમે પણ કરીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પ્રમાદ, આલસ્ય આદિ દોષોને પૃથક્ કરીને સંસારમાં ગુણોને ધારણ કરે છે, તેઓ સૂર્યનાં કિરણોની સમાન આ જગતમાં શોભાયમાન બને છે. (૪)

ત્વં વૃથા નદ્યં ઇન્દ્ર સર્તવેઽચ્છાં સમુદ્રમસૃજો રથાંઙિવ વાજયતો રથાંઙિવ ।

હુત ઋતીરયુજ્જત સમાનમર્થમક્ષિતમ્ ।

ધેનૂરિવ્ મનવે વિશ્વદોહસો જનાય વિશ્વદોહસઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર**-વિદ્યાના અધિપતિ ! ત્વમ્-આપ જેમ નદ્યઃ-નદી સમુદ્રમ્-સમુદ્રને વૃથા-પ્રયોજન વિના ભરી દે છે, તેમ રથાનિવ-રથો પર બેસનારાની સમાન વાજયતઃ-સંગ્રામ કરી રહેલાઓને રથાનિવ-રથોની સમાન જ સર્તવે-જવાને અચ્છ, અસૃજઃ-ઉત્તમ રીતે કલાયંત્રોથી યુક્ત માર્ગોને બનાવે છે;

વા **જનાય**-ધર્મયુક્ત વ્યવહારમાં પ્રસિદ્ધ મનુષ્યોને માટે જે **વિશ્વદોહસઃ**-સમસ્ત જગતને પોતાના ગુણોથી પરિપૂર્ણ કરે તેની સમાન **મનવે**-વિચારશીલ મનુષ્યને માટે **વિશ્વદોહસઃ**-સંસાર સુખને પરિપૂર્ણ કરનાર બનીને આપ **ધેનૂરિવ**-દૂધાળી ગાયોની સમાન **ઇતઃ**-પ્રાપ્ત થયેલી **ઋતીઃ**-રક્ષાદિ ક્રિયાઓ તથા **અક્ષિતમ્**-અક્ષય **સમાનમ્**-સમાન અર્થાત્ કામની સમાન **અર્થમ્**-પદાર્થનો **અયુજ્જત**-સંયોગ કરે છે, તે અત્યંત આનંદને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : જે ગાયોની સમાન સુખનું અને રથની સમાન માર્ગનું અવલંબન કરીને, ધાર્મિક ન્યાયાધીશની સમાન બનીને સર્વને પોતાની સમાન બનાવે છે, તે આ લોકમાં 'પ્રશંસિત' બની જાય છે. (૫)

इमां ते वाचं वसूयन्त आयवो रथं न धीरं स्वपा अतक्षिषुः सुम्नाय त्वामतक्षिषुः ।

शुम्भन्तो जेन्यं यथा वाजेषु विप्र वाजिनम् ।

अत्यमिव शवसे सातये धना विश्वा धनानि सातये ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે **વિપ્ર**-મેઘાવી ધીર બુદ્ધિમાન જન ! જે તે-આપની નજીક **इमाम्**-એ **वाचम्**-વિદ્યા, ધર્મ અને સત્યયુક્ત વાણીને પ્રાપ્ત **आयवः**-વિદ્વાનજન **वसूयन्तः**-પોતાને માટે વિજ્ઞાન આદિ ધનની ઇચ્છા કરતા **स्वपाः**-જેના ઉત્તમ ધર્માનુકૂળ કામ છે, તે **धीरः**-ધીર પુરુષ **रथम्**-પ્રશંસિત રમણ કરવા યોગ્ય રથને ન-જેમ, તેમ **अतक्षिषुः**-સૂક્ષ્મબુદ્ધિનો સ્વીકાર કરે છે; વા **शुम्भन्तः**-શોભાને પ્રાપ્ત થયેલ **यथा**-જેમ **वाजेषु**-સંગ્રામોમાં **जेन्यम्**-જે શત્રુઓને જીતે છે, તે **वाजिनम्**-અતિ ચતુર વા સંગ્રામયુક્ત પુરુષને **अत्यमिव**-ઘોડાની સમાન **शवसे**-બળને માટે તથા **सातये**-સમ્યક્ વિભાગ કરવા માટે **धनानि**-દ્રવ્યાદિ પદાર્થોની સમાન **विश्वा**-સમસ્ત ધના-વિદ્યાદિ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરીને **सुम्नाय**-સુખ અને **सातये**-સમ્યક્ ભોગને માટે **त्वाम्**-આપને **अतक्षिषुः**-ઉત્તમતાથી સ્વીકાર કરે વા પોતાના ગુણોથી ઢાંકે, તે સુખી થાય છે. (૬)

ભાવાર્થ : જેઓ ચતુર્વેદ જ્ઞાતા આપ્ત વિદ્વાનથી સમસ્ત વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરીને વિસ્તૃત બુદ્ધિવાળા બને છે, તેઓ સંપૂર્ણ એશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને, રથની સમાન, ઘોડાની સમાન અને ધીર પુરુષની સમાન ધર્મના માર્ગ પર ચાલીને કૃતકૃત્ય બની જાય છે. (૬)

भिनत्पुरो नवतिमिन्द्र पूरवे दिवोदासाय महि दाशुषे नृतो वज्रेण दाशुषे नृतो ।

अतिथिग्वाय शम्बरं गिरेरुग्रो अवाभरत् ।

महो धनानि दर्यमान ओजसा विश्वा धनान्योजसा ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે **नृतो**-પોતાના અંગોને યુદ્ધ આદિમાં ચલાવનાર, વા **नृतो**-વિદ્યાપ્રાપ્તિમાં સ્વ શરીરની યેષ્ટા કરનાર અને **इन्द्र**-દુષ્ટ વિદારક ! જે આપ **वज्रेण**-શસ્ત્ર વા ઉપદેશથી શત્રુઓનાં **नवतिम्**-નેવું

પુર:-નગરોનું બિનત્-વિદારણ, નષ્ટ-ભષ્ટ કરો છો; વા મહિ-મહાનતાથી સત્કારયુક્ત દિવોદાસાય-ઈચ્છિત પદાર્થોને સારી રીતે આપનાર અને દાશુષે-વિદ્યાદાન કરેલ પૂર્વે-પૂર્ણ સાધનાથી યુક્ત મનુષ્યને માટે સુખને ધારણ કરો છો; તથા અતિથિગ્વાય-અતિથિઓને પ્રાપ્ત કરીને અને દાશુષે-દાન કરવાવાળાને માટે ઝગ્ર:-તીક્ષ્ણ સ્વભાવ અર્થાત્ પ્રચંડ પ્રતાપવાન સૂર્ય ગિરે:-જેમ પર્વત આગળ શમ્બરમ્-મેઘને તેમ ઓજસા-પોતાના પરાક્રમથી મહ:-વિપુલ ધનાનિ-ધન આદિ પદાર્થોને દયમાન:-આપનાર ઓજસા-પરાક્રમથી વિશ્વા-સમસ્ત ધનાનિ-ધનોને અવાભરત્-ધારણ કરો છો, તે આપ કિંચિત્ પણ દુઃખને પ્રાપ્ત કેમ થઈ શકો ? (૭)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં નવતિ-શબ્દ ‘બહુ’નું ગ્રહણ થાય છે. જે શત્રુઓને જીતીને, અતિથિઓનો સત્કાર કરીને તથા ધાર્મિકોને વિદ્યા પ્રદાન કરીને વર્તમાન છે, તે સૂર્ય જેમ મેઘને (ધારણ કરે છે), તેમ સંપૂર્ણ ઐશ્વર્યને ધારણ કરે છે. (૭)

इन्द्रः समत्सु यजमानमार्यं प्रावद्विश्वेषु शतमूतिराजिषु स्वर्मीढिष्वजिषु ।
मनवे शासदव्रतान्त्वचं कृष्णामरन्धयत् ।

दक्षन्न विश्वं ततृषाणमौषति न्यर्शसानमौषति ॥ ८ ॥

પદાર્થ : જે શતમૂતિ:-જેથી અસંખ્ય રક્ષા થાય તે ઇન્દ્ર:-પરમ ઐશ્વર્યવાન રાજા સ્વર્મીઢિષુ-જેમાં સુખ સિંચન કરવામાં આવે તે આજિષુ-પ્રાપ્ત થયેલ આજિષુ-સંગ્રામોમાં ધાર્મિક શૂરવીરોની સમાન વિશ્વેષુ-સમગ્ર સમત્સુ-સંગ્રામમાં યજમાનમ્-અભય પ્રદાતા આર્યમ્-શ્રેષ્ઠ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવયુક્ત પુરુષનું પ્રાવત્-સારી રીતે પાલન કરે; વા મનવે-વિચારશીલ ધાર્મિક મનુષ્યની રક્ષા માટે અવ્રતાન્-દુષ્ટ આચરણ કરનારા ડાકુઓને શાસત્-શિક્ષા આપે તથા તેની ત્વચમ્-સંબંધિત ત્વચાનો કૃષ્ણામ્-ખેંચીને અરન્ધયત્-નાશ કરે; વા અગ્નિ જેમ વિશ્વમ્-સર્વ પદાર્થ માત્રને દક્ષન્-બાળે છે અને તતૃષાણમ્-તૃષાતુર પ્રાણીને ઓષતિ-બાળે છે, અતિ દહન કરે છે, ન-તેમ અર્શસાનમ્-પ્રાપ્ત થયેલ શત્રુગણને ન્યોષતિ-નિરંતર બાળે તે જ ચક્રવર્તિ રાજ્ય કરવાને યોગ્ય હોય છે. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ આર્ય (= શ્રેષ્ઠ) ગુણ-કર્મ-સ્વભાવને સ્વીકારીને, દસ્યુ (= નિકૃષ્ટ) ગુણ-કર્મ-સ્વભાવનો ત્યાગ કરીને, શ્રેષ્ઠોની રક્ષા કરીને તથા દુષ્ટોને દંડિત કરીને ધર્મથી રાજ્ય કરવું જોઈએ. (૮)

सूरश्चक्रं प्र बृहज्जात ओजसा प्रपित्वे वाचमरुणो मुषायतीशान आ मुषायति ।
उशाना यत्पर्रावतोऽजगन्नूतये कवे ।

सुम्नानि विश्वा मनुषेव तुर्वणिरहा विश्वेव तुर्वणिः ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે કવે-વિદ્વાન્ ! યત્-જે ઓજસા-પોતાના બળથી અસ્મા:-લાલ રંગયુક્ત તુર્વણિ:-મેઘને ઇન્ન-ભિન્ન કરે છે; તથા જાત:-પ્રકટ થઈને સૂર:-સૂર્યમંડળ જેમ વિશ્વેવાહા-સર્વ દિવસોને વા

પ્રપિત્વે-ઉત્તરાયણથી બૃહત્-મહાન ચક્રમ્-ચાકડાની સમાન વિદ્યમાન જગતને પ્ર-પ્રકટ કરે છે, તેમ તુર્વણિ:-દુષ્ટોની હિંસા કરનારા ઉત્તમોત્તમ મનુષેવ-મનુષ્યની સમાન વિશ્વા-સમસ્ત સુમ્નાનિ-સુખ અને વાચમ્-વાણીને આ-સારી રીતે પ્રકટ કરે છે; વા જેમ સૂર્ય મુષાયતિ-ખંડન કરનારની સમાન આચરણ કરે છે, તેમ ઈશાન:-સમર્થ બનીને ડશના-વિદ્યાદિ ગુણોથી કાન્તિમાન આપ કૃતયે-રક્ષા આદિ વ્યવહારને માટે પરાવત:-પરે અર્થાત્ દૂરથી અજગત્-પ્રાપ્ત થાઓ અને દુષ્ટોને મુષાયતિ-ખંડ-ખંડ કરો, તે સર્વના સત્કારને યોગ્ય છે. (૯)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યની સમાન વિદ્યા, વિનય અને ધર્મના પ્રકાશક લોકો સર્વની ઉન્નતિ માટે પ્રયત્ન કરે છે, તેઓ સ્વયં પણ 'ઉન્નત' બને છે. (૯)

સ નો નવ્યેભિર્વૃષકર્મન્નુવથૈઃ પુરાં દર્ત્તઃ પાયુભિઃ પાહિ શૃગ્મૈઃ ।

દિવોદાસેભિરિન્દ્ર સ્તવાનો વાવૃધીથા અહોભિરિવ દ્યૌઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : વૃષકર્મન્-જેના વરસવાના મેઘની સમાન કામ છે, તે પુરામ્-શત્રુ-નગરોને દર્ત્તઃ-વિદારક-વિનાશક અને ઇન્દ્ર-સર્વના રક્ષક કે સભાપતિ ! દિવોદાસેભિઃ-જે પ્રકાશ આપનારી સ્તવાનઃ-સ્તુતિ પ્રશંસાને પ્રાપ્ત થયેલ છે, સઃ-તે આપ નવ્યેભિઃ-નવીન ઉવથૈઃ-પ્રશંસા કરવા યોગ્ય શૃગ્મૈઃ-સુખો અને પાયુભિઃ-રક્ષાઓથી દ્યૌઃ-જેમ સૂર્ય અહોભિરિવ દિવસોથી, તેમ નઃ-અમારી પાહિ-રક્ષા કરો અને વાવૃધીથાઃ-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થાઓ. (૧૦)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ સૂર્યની સમાન, વિદ્યા, સુશિક્ષા અને ધર્મોપદેશ દ્વારા પ્રજાઓને ઉત્સાહિત કરવી જોઈએ અને તેની પ્રશંસા કરવી જોઈએ, એજ રીતે પ્રજાજનોએ પણ રાજપુરુષોની (કરવી જોઈએ.) (૧૦)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં રાજા અને પ્રજાજનના કામોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૩૦)

સૂક્ત-૧૩૧

ઇન્દ્રાય હિ દ્યૌરસુરો અનમ્નતેન્દ્રાય મહી પૃથિવી વરીમભિદ્યુમ્નસાતા વરીમભિઃ ।

ઇન્દ્રં વિશ્વે સજોષસો દેવાસો દધિરે પુરઃ ।

ઇન્દ્રાય વિશ્વા સવનાનિ માનુષા રાતાનિ સન્તુ માનુષા ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઇન્દ્રાય-પરમેશ્વર-યુક્ત ઈશ્વરને માટે દ્યૌઃ-સૂર્ય અને અસુરઃ-મેઘ વા જે ઇન્દ્રાય-પરમેશ્વરયુક્ત ઈશ્વરને માટે મહી-મહાન પ્રકૃતિ અને પૃથિવી-ભૂમિ વરીમભિઃ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય વ્યવહારોથી દ્યુમ્નસાતા-પ્રશંસાના વિભાગ અર્થાત્ અલગ-અલગ પ્રતીતિ થવાને નિમિત્ત અનમ્નત-નમે-નમ્રતાને ધારણ કરે; વા જે ઇન્દ્રમ્-સર્વ દુઃખ વિનાશક પરમેશ્વરને સજોષસઃ-એક સમાન પ્રીતિ

કરનાર વિશ્વે-સમસ્ત દેવાસઃ-વિદ્વાનજન પુરઃ-સત્કારપૂર્વક દધિરે-ધારણ કરે, તે ઇન્દ્રાય-પરમેશ્વરને માટે હિ-જ માનુષા-મનુષ્યોના એ વ્યવહારોની સમાન વરીમભિઃ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય ધર્મોથી વિશ્વા-સમસ્ત સવનાનિ-ઐશ્વર્ય જે માનુષા-મનુષ્ય સંબંધી છે, તે રાતાનિ-આપેલ સન્તુ-થાય, તેને જાણો. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ, કે જેટલો પણ કાર્ય અને કારણરૂપ સંસાર છે અને જેટલા જીવ છે, તો સર્વ પરમેશ્વરનું જ રાજ્ય છે. (૧)

વિશ્વેષુ હિ ત્વા સવનેષુ તુજ્જતે સમાનમેકં વૃષમણ્યવઃ પૃથક્ સ્વઃ સનિષ્યવઃ
પૃથક્ । તં ત્વા નાવં ન પર્ષણિં શૂષસ્ય ધુરિ ધીમહિ ।

ઇન્દ્રં ન યજ્ઞેશ્ચિતયન્ત આયવઃ સ્તોમેભિરિન્દ્રમાયવઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર ! પૃથક્-પૃથક્-અલગ-અલગ સનિષ્યવઃ-ઉત્તમતાથી સેવનારા વૃષમણ્યવઃ-જેનો વૃષભના ક્રોધ સમાન ક્રોધ છે તે અમે જે સમાનમ્-સર્વત્ર એક રસ વ્યાપ્ત એકમ્-જેનો ક્રોધ બીજો સહાયક નથી. (અદ્વિતીય છે.) તે સ્વઃ-સુખ સ્વરૂપ ત્વા-આપને વિશ્વેષુ-સમગ્ર સવનેષુ-ઐશ્વર્ય આદિ પદાર્થોમાં વિદ્વાન લોકો જેમ તુજ્જતે-રાખે છે, માને છે, જાણે છે, તેમ હિ-જ તમ્-તે ત્વા-આપને શૂષસ્ય-બળવાન પુરુષની ધુરિ-ધારણ કરનાર કાષ્ઠ પર પર્ષણિમ્-સિંચવા યોગ્ય નાવમ્-નોકાની ન

સમાન ધીમહિ-ધારણ કરીએ; વા ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યકારક સૂર્યમંડળને જેમ તેની આયવઃ-ચોતરફ ભ્રમણ કરતા લોક તેમ વા જેમ યજ્ઞેઃ-વિદ્વાનોના સંગ અને સેવનથી ઇન્દ્રમ્-પરમ ઐશ્વર્યને ન-તેમ ચિતયન્તઃ-સમ્યક્ ચિંતન કરતા આયવઃ-પુરુષાર્થને પ્રાપ્ત થનાર અમે સ્તોમેભિઃ-સ્તુતિઓ દ્વારા આપની પ્રશંસા કરીએ. (૨)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો જેમ સચ્ચિદાનંદ સ્વરૂપ, નિત્ય-શુદ્ધ-બુદ્ધ-મુક્ત સ્વભાવ, સર્વત્ર એક સમાન વ્યાપક, સર્વાધાર, સમસ્ત ઐશ્વર્યના દાતા અને એક માત્ર અદ્વિતીય પરમાત્માની ઉપાસના કરે છે, તે જ પરમેશ્વર (અન્ય) મનુષ્યો દ્વારા (પણ) નિરંતર ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૨)

વિ ત્વા તતસ્રે મિથુના અવસ્યવો વ્રજસ્ય સાતા ગવ્યસ્ય નિઃસૃજઃ સક્ષન્ત
ઇન્દ્ર નિઃસૃજઃ । યદ્ ગવ્યન્તા દ્વા જના સ્વૃચન્તા સમૂહસિ ।

આવિષ્કરિક્રદ્ વૃષણં સચાભુવં વજ્રમિન્દ્ર સચાભુવમ્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમેશ્વરપ્રદ જગદીશ્વર ! સક્ષન્તઃ-સહતા નિઃસૃજઃ-નિરંતર અનેકાનેક વ્યવહારોને ઉત્પન્ન કરનારા અવસ્યવઃ-અને પોતાની રક્ષા ઈચ્છનારા નિઃસૃજઃ-અત્યંત સંપન્ન મિથુના-સ્ત્રી અને પુરુષ બે-બેજન ત્વા-આપને પ્રાપ્ત થઈને વ્રજસ્ય-જવા યોગ્ય ગવ્યસ્ય-ગાયોને માટે હિતકારક અર્થાત્

જેમાં ગાયો આરામ માટે જાય તે ગમાણ આદિ સ્થાનના સાતા-સેવનમાં જેમ દુઃખ છૂટે, તેમ દુઃખોનો વિતતસ્ત્રે-ત્યાગ કરે છે.

હે **ઇન્દ્ર-દુઃખ** વિદારક ! **યત્**-જે **ગવ્યન્તા**-ગાયોની સમાન આચરણ કરતા **દ્વા-બે** **સ્વઃ**-સુખ સ્વરૂપ આપને **યન્તા-પ્રાપ્ત** કરીને **જના-સ્ત્રી-પુરુષો**ને **આવિષ્કરિક્રત્**-પ્રકટ કરતા આપ **સમૂહસિ-**તેઓને સારી રીતે ચેતના પ્રદાન કરો છો, તે **સચાભુવમ્**-સમવાય સંબંધથી પ્રસિદ્ધ થઈને **વજ્રમ્**-દુષ્ટોને વજની સમાન દંડ આપવા **વૃષણમ્**-સર્વને સિંચન અને **સચાભુવમ્**-સત્યની ભાવના કરાવનાર આપની બન્ને નિત્ય ઉપાસના કરે. (૩)

ભાવાર્થ : જે પુરુષ અને સ્ત્રીઓ સમસ્ત સંસારના પ્રકાશક, રચયિતા, ધારણકર્તા, દાતા અને સર્વના અન્તર્યામી ઈશ્વરનું જ સેવન કરે છે, તેઓ નિરંતર સુખી રહે છે. (૩)

**વિદુષ્ટે અસ્ય વીર્યસ્ય પૂરવઃ પુરો યદિન્દ્ર શારદીરવાતિરઃ સાસહાનો અવાતિરઃ ।
શાસસ્તમિન્દ્ર મર્ત્યમર્યજ્યું શવસસ્પતે ।**

મહીમમુષ્ણાઃ પૃથિવીમિમા અપો મન્દસાન ઇમા અપઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર-સર્વના** ધર્તા ! જેમ **પૂરવઃ**-મનુષ્ય તે-આપના **અસ્ય-એ વીર્યસ્ય**-પરાક્રમના **પુરઃ**-પ્રથમ પ્રભાવને **વિદુઃ**-જાણે, તેમ અન્ય પણ જાણે; તથા **યત્**-જે **સાસહાનઃ**-સહન કરતાજન **ઇમાઃ**-એ પ્રજા અને **શારદીઃ**-શરદ્ ઋતુ સંબંધી **અપઃ**-જળને **અવાતિરઃ**-પ્રકટ કરે, તેમ આપ પણ જાણો અને **અવાતિરઃ**-પ્રકટ કરો.

હે **શવસઃ**-બળના પતે-સ્વામી **ઇન્દ્ર-સર્વ** રક્ષક ! જેમ આપ જે **અયજ્યુમ્**-યજ્ઞ (ન) કરનાર **મર્ત્યમ્**-મનુષ્યને **શાસઃ**-શીખવો; વા જે **મન્દસાનઃ**-કામના ફરતા **મહીમ્**-મહાન **પૃથિવીમ્**-પૃથિવીને પામીને **ઇમાઃ**-એ **અપઃ**-પ્રાણોની સમાન વર્તમાન પ્રજાજનોને પીડિત કરે, **તમ્**-તેને આપ **અમુષ્ણા**-ચોરાવો, છૂપાવો અને એમ પણ શીખવીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જે આપ્તજનોના પ્રભાવને જાણીને ધર્મનું આચરણ કરે છે, તે દુષ્ટો પર શાસન કરી શકે છે. (૪)

આદિત્તે અસ્ય વીર્યસ્ય ચર્કિરન્મદૈષુ વૃષન્નુશિજો યદાવિથ સઘ્રીયતો યદાવિથ ।

ચકર્થ કારમૈભ્યઃ પૃતનાસુ પ્રવન્તવે ।

તે અન્યામન્યાં નદ્યૈ સનિષ્ણાત શ્રવસ્યન્તઃ સનિષ્ણાત ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે **વૃષન્**-આનંદવર્ષક વિદ્વાન્ ! **યત્**-જે ધર્માત્માજન તે-આપના **અસ્ય-એ વીર્યસ્ય**-પરાક્રમના પ્રભાવથી **મદૈષુ**-આનંદોમાં વર્તમાન **અશિજઃ**-ધર્મની કામના કરતા જન **ચર્કિરન્**-દુષ્ટોથી નિરંતર દૂર કરે; વા **શ્રવસ્યન્તઃ**-પોતાને માટે અન્નની ઈચ્છા કરતા **પ્રવન્તવે**-સમ્યક્ વિભાગ કરવા

માટે પૃતનાસુ-મનુષ્યોમાં સનિષ્ણત-સેવન કરે અર્થાત્ અન્યામન્યામ્-અલગ-અલગ નદ્યમ્-નદીને જેમ મેઘ તેમ કારમ્-જે કરવામાં આવે તે કામનું સનિષ્ણત-સેવન કરે; તે સખીયત:-મિત્રની સમાન આચરણ કરતા લોકોનું આપ આવિથ-પાલન કરો, યત્-જે કારણે જેનું આદિથ-પાલન કરો તેથી તેને પુરુષાર્થવાન ચકર્થ-જ કરો. ઇષ્ય:-એ ધાર્મિક સજ્જનોથી સર્વ રાજ્યનું પાલન કરો અને જે આપના કર્મચારી પુરુષો હોય તે-તેઓ પણ ધર્મથી આદિત્-જ પ્રજાજનોનું પાલન કરે. (૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પ્રજાપાલનના કાર્યમાં અધિકૃત કરવામાં આવેલ હોય, તેઓ ધર્મપૂર્વક પ્રજાપાલન કરવાની ઈચ્છા કરતા (તે માટે) ઉત્તમ પ્રયત્ન કરે. (૫)

उतो नो अस्या उषसो जुषेत ह्यर्कस्य बोधि हविषो हवीमभिः स्वर्षाता
हवीमभिः । यदिन्द्र हन्तवे मृधो वृषा वज्रिञ्चितसि ।

आ मे अस्य वेधसो नवीयसो मन्म श्रुधि नवीयसः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે વજ્રિન્-પ્રશંસિત શસ્ત્રયુત વિદ્વાન્ ! ઇન્દ્ર-દુષ્ટવિદારક આપ જેમ અર્કસ્ય-સૂર્ય અને અસ્યા:-એ ઉષસ:-ઊષાના પ્રભાવથી જન સંચેત બનીને જાગે છે, તેમ ન:-અમને બોધિ-સચેત કરો. હિ, ઉતો-અને નિશ્ચયપૂર્વક સ્વર્ષાતા-સુખોને અલગ-અલગ કરવામાં હવીમભિ:-સ્પર્ધા કરવા યોગ્ય કામોની સમાન હવીમભિ:-પ્રશંસા યોગ્ય કામોથી હવિષ:-આપવા યોગ્ય પદાર્થોનું જુષેત-સેવન કરો.

યત્-જે વૃષા-સાંઠની સમાન બળવાન આપ મૃધ:-સંગ્રામોમાં સ્થિત શત્રુઓને હન્તવે-મારવાનું ચિકેતસિ-જાણો. નવીયસ:-અત્યંત નવીન વિદ્યા ભણનાર વેધસ:-બુદ્ધિમાન મે-હું વિદ્યાર્થી અને અસ્ય-એ નવીયસ:-અત્યંત નવીન અધ્યાપક વિદ્વાનના મન્મ-વિજ્ઞાન ઉત્પન્ન કરનારા શાસ્ત્રને આશ્રુધિ-સારી રીતે શ્રવણ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યથી ઉત્પન્ન ઊષાની જાગેલ લોકો પ્રકાશમાં પોત-પોતાનો વ્યવહાર કરે છે, તેમ વિદ્વાનો દ્વારા જગાડેલ. (બોધ યુક્ત કરેલ) લોકો વિજ્ઞાન રૂપી પ્રકાશમાં પોત-પોતાના કર્મ કરે છે.

જે દુષ્ટોની નિવૃત્તિ કરીને હટાવીને તથા શ્રેષ્ઠોની સેવા કરીને નવીન ભણેલ વિદ્વાનોની વિદ્યાઓને શ્રવણ કરે છે, તે અભીષ્ટ-ઈચ્છિતની પ્રાપ્તિમાં સફળ બને છે. (૬)

त्वं तमिन्द्र वावृधानो अस्म्युरमित्रयन्तं तुविजात् मर्त्यं वज्रेण शूर मर्त्यम् ।

जहि यो नो अघायति शृणुष्व सुश्रवस्तमः ।

रिष्टं न यामन्नप भूत दुर्मतिर्विश्वाप भूत दुर्मतिः ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે તુવિજાત્-અનેકોમાં પ્રસિદ્ધ શૂર-શત્રુઓને મારનાર ઇન્દ્ર-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યથી યુક્ત સુશ્રવસ્તમ:-અત્યંત સુંદરતાથી શ્રવણ કરનાર અને વાવૃધાન:-વર્ધમાન અસ્મયુ:-અમારામાં પોતાની ઈચ્છા કરનાર ત્વમ્-આપ વજ્રેણ-શસ્ત્રથી અમિત્રયન્તમ્-શત્રુતા કરતા મર્ત્યમ્-મનુષ્યને જહિ-મારો. ય:-

જે ન:-અમારા માટે અઘાયતિ-પોતાનું દુષ્કર્મ-પાપ ઈચ્છે છે, તમ્-તે મર્ત્યમ્-મનુષ્યને મારો; અને જે યામન્-રાત્રિમાં દુર્મતિ:-દુષ્ટ મતિવાળા મનુષ્ય અપ ભૂતુ-અપ્રસિદ્ધ અર્થાત્ દુષ્ટપાયેલ હોય તેને રિષ્ટમ્-બે મારનારા ન-જેમ મારે, તેમ જહિ-મારો અર્થાત્ અતિ (કઠોર) દંડ આપો. જે દુર્મતિ:-દુષ્ટમતિ હોય તે વિશ્વા-સમસ્ત અમારાથી અપ ભૂતુ-દુષ્ટપાયેલ દૂર હોય એ આપ શ્રુણુષ્વ-શ્રવણ કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે ધાર્મિક રાજા, રાજપુરુષો અને પ્રજાજનો હોય, તે સર્વ, નિપુણતાઓથી દ્વેષકર્તાઓને તથા પરધનનું અપહરણકર્તાઓને મારીને, ધર્મરાજ્યનું શાસન કરીને તથા માર્ગોને ભયરહિત કરીને વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરે. (૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં શ્રેષ્ઠ અને દુષ્ટ મનુષ્યોનો સત્કાર અને તાડન-દંડનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૩૧)

સૂક્ત-૧૩૨

ત્વયા વયં મઘવન્પૂર્વ્યે ધનુ ઇન્દ્રત્વોતા: સાસહ્યામ પૃતન્યતો વનુયામ વનુષ્યત: ।

નેદિષ્ટે અસ્મિન્નહન્યધિ વોચા નુ સુન્વતે ।

અસ્મિન્યજ્ઞે વિ ચયેમા ભરે કૃતં વાજયન્તો ભરે કૃતમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-પરમ પ્રશંસિત બહુ ધનયુક્ત ઇન્દ્રત્વોતા:-અતિ શ્રેષ્ઠ ઐશ્વર્યયુક્ત જે આપ તેઓનું પાલન કરેલ વયમ્-અમે ત્વયા-આપની સાથે પૂર્વ્યે-પૂર્વ મહાશયોને માટે ધને-ધનના નિમિત્ત પૃતન્યત:-મનુષ્યોની સમાન આચરણ કરતા મનુષ્યોને સાસહ્યામ-નિરંતર સહન કરે; વનુષ્યત:-તથા સેવન કરનારાઓનું વનુયામ્-સેવન કરીએ; તથા ભરે-રક્ષામાં કૃતમ્-પ્રસિદ્ધ થયેલાઓને વાજયન્ત:-સમજાવતા અમે અસ્મિન્-એ યજ્ઞે-યજ્ઞમાં તથા ભરે-રક્ષામાં કૃતમ્-ઉત્પન્ન વ્યવહારને વિચયેમ્-વિશેષ ખોજે અને નેદિષ્ટે-અતિ સમીપ અસ્મિન્-એ અહનિ-આજના દિવસે સુલ્લતે-વ્યવહારોની સિદ્ધિ કરનારાઓને માટે આપ સત્ય ઉપદેશ નુ-શીઘ્ર અધિવોચ-સર્વના ઉપરાંત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ ધાર્મિક સેનાપતિની સાથે પ્રેમ કરીને તથા ઉત્સાહપૂર્વક શત્રુઓને જીતીને સર્વોત્તમ ધનનો સંગ્રહ કરવો જોઈએ અને સેનાપતિ સમયોચિત વ્યાખ્યાન દ્વારા વીરતા આદિ ગુણોનો ઉપદેશ આપે અને શત્રુઓની સાથે સેનાઓનું યુદ્ધ કરાવે. (૧)

સ્વર્જેષે ભરં આપ્રસ્ય વક્મન્યુષ્વર્બુધ: સ્વસ્મિન્નજ્ઞસિ ક્રાણસ્ય સ્વસ્મિન્નજ્ઞસિ ।

અહન્નિન્દ્રો યથા વિદે શીર્ષ્ણાશીર્ષ્ણોપ્વાચ્ય: ।

અસ્મત્રા તેં સધ્ધ્રક સન્તુ રાતયો ભદ્રા ભદ્રસ્ય રાતય: ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યથા-જેમ સધ્ધ્રક-સાથે જનાર ઇન્દ્ર:-સૂર્યમંડળ સ્વર્જેષે-સુખથી જીતનાર

વિદે-જ્ઞાનવાન પુરુષને માટે શીર્ષ્ણાશીર્ષ્ણા-શિર માથે ઉપવાચ્ય:-સમીપ રહેનાર યોગ્ય છે, તેમ ભરે-સંગ્રામમાં આપ્રસ્ય-પૂર્ણ બળ ક્રાણસ્ય-કરીને સમયના વિભાગ ઉપર્બુધ:-ઉષ:કાળ અર્થાત્ રાત્રિના ચોથા પ્રહરમાં જાગૃત થયેલ તમે વક્મનિ-ઉપદેશમાં જેમ સ્વસ્મિન્-પોતાના અઙ્જસિ-પ્રસિદ્ધ વ્યવહારને માટે, તેમ સ્વસ્મિન્-પોતાના અઙ્જસિ-ઈચ્છિત વ્યવહારમાં જેમ મેઘને સૂર્ય અહન્-મારે છે, તેમ શત્રુઓને મારો. જે અસ્મત્રા-અમારી મધ્ય ભદ્રા-કલ્યાણ કરનારા રાતય:-દાન આદિ કામ તે-તમે ભદ્રસ્ય-કલ્યાણ કરનારાના રાતય:-દાનની સમાન થાય, તે-તમારા સન્તુ-બને. (૨)

ભાવાર્થ : જે સભાપતિ સર્વ શૂરવીરોનો પોતાની સમાન સત્કાર કરે છે, તે શત્રુઓને જીતીને સર્વને સુખ આપી શકે છે. સંગ્રામમાં પોતાના પદાર્થો અન્યોને માટે અને અન્યોના પદાર્થો પોતાના માટે માનવા જોઈએ. એ રીતે પરસ્પર પ્રીતિથી વિરોધ છોડીને વિજય પ્રાપ્ત કરવો જોઈએ. (૨)

તત્તુ પ્રયઃ પ્રત્લથા તે શુશુક્વનં યસ્મિન્યજ્ઞે વારમકૃણવત્ ક્ષયમૃતસ્ય વારસિ ક્ષયમ્ । વિ તદ્વોચેરધં દ્વિતાન્તઃ પશ્યન્તિ રશ્મિભિઃ ।

સ ઘા વિદે અન્વિન્દ્રો ગવેષણો બન્ધુક્ષિદ્ભ્યો ગવેષણઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! ગવેષણ:-જે વાણીની ઈચ્છા કરે છે, તે ઇન્દ્ર:-ઐશ્વર્યવાનની સમાન તે-આપના પ્રત્લથા-પ્રાચીન યસ્મિન્-જે યજ્ઞે વ્યવહારમાં ઋક્સ્ય-સત્યનો શુશુક્વનમ્-અતિ પ્રકાશિત ક્ષયમ્-નિવાસનો વારમ્-સ્વીકાર કરવા માટે વા:-જળ અને ક્ષયમ્-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય પદાર્થની સમાન જે પ્રયઃ-પ્રીતિકારક વચનને અકૃણવત્-ઉચ્ચારણ કરે, તેના તત્-તે પૂર્વોક્ત વચનને તુ-તો આપ પ્રાપ્ત અસિ-છો.

અધ-તદનન્તર દ્વિતા-જેમ બેનું થવું બને તેમ રશ્મિભિઃ-કિરણોની સાથે અન્તઃ-અંદર જેને પશ્યન્તિ-દેખે છે, તત્-તેને તું વિ, વોચે:-સમ્યક્ કહે; અને સઃ-તે બન્ધુક્ષિદ્ભ્યઃ-બંધુઓને નિવાસ કરાવતા પુરુષોને માટે ગવેષણ:-કિરણોને ઈષ્ટ સૂર્યની સમાન ઐશ્વર્યવાનમાં અનુ, વિદે-અનુકૂળતાથી જાણું છું. ઘ-તેને આપ પણ જાણો. (૩)

ભાવાર્થ : જેઓ સત્યગુણોથી પ્રેમ કરે છે, તેઓ વિદ્વાન બને છે, જે વિદ્વાન હોય, તો સૂર્યના પ્રકાશથી સર્વ પદાર્થોને 'હસ્તામલકવત્' - હાથમાં રાખેલ આંમળા સમાન પ્રત્યક્ષ જોઈ શકે છે. (૩)

નૂ ઇત્યા તે પૂર્વથા ચ પ્રવાચ્યં । યદ્ગિરોભ્યોઽવૃણોરપ વ્રજમિન્દ્ર શિક્ષન્નપ વ્રજમ્ । એભ્યઃ સમાન્યા દિશાઽસ્મભ્યં જેષિ યોત્સિં ચ ।

સુન્વદ્ભ્યો રન્ધયા કં ચિદવ્રતં હૃણાયન્તં ચિદવ્રતમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-અધ્યાપનથી અજ્ઞાન નાશ કરનાર ! શિક્ષન્-વિદ્યા ગ્રહણ કરાવતા આપ અપ, વ્રજમ્-ન જાણવાયોગ્ય કુટિલગામીની સમાન વ્રજમ્-અધર્મમાર્ગીજનનો અપાવૃણો:-સ્વીકાર ન કરો.

અદ્વિરોભ્યઃ-પ્રાણ સમાન વિદ્વાનજનોએ **યત્**-જે **પૂર્વથા**-પ્રાચીન પદ્ધતિ = રીતથી **પ્રવાચ્યમ્**-સમ્યક્ કહેવા યોગ્યને **ચ**-પણ **નુ**-શીઘ્ર ગ્રહણ કરો. જે આપ **અભ્યઃ**-એ વિદ્વાન અને **સુન્વદ્ભ્યઃ**-પદાર્થોના સારને ખેંચીને **અસ્મભ્યમ્**-અમારા માટે **સમાન્યા**-એક સમાન વર્તમાન **દિશા**-દિશાઓથી શત્રુઓને **આ**, **યોત્સિ**-સારી રીતે લડતા-લડતા **ચ**-અને **જેષિ**-જીતે છે; વા **હ્રણાયન્તમ્**-હરણની સમાન ઉછળતા-ફૂદતા **અવ્રતમ્**-સત્યભાષણાદિ વ્યવહાર રહિત પુરુષની **ચિત્**-સમાન **અવ્રતમ્**-અસત્યાચરણથી યુક્તજનને **સ્થય**-મારો; **ચ**-અને તેમ **કં**, **ચિત્**-કોઈ દુષ્ટને દંડ આપ્યા વિના છોડો નહિ. **ઇત્યા**-એમ વર્તીને તે-આપના આ જન્મ અને પરજન્મમાં આનંદની સિદ્ધિ થશે, એને જાણો. (૪)

ભાવાર્થ : જેના રાજ્યમાં દુષ્ટવાણીવાળા ચોર અને દુષ્ટવાણીવાળા વ્યભિચારી નથી, તે સામ્રાજ્ય કરવામાં સમર્થ બને છે. (૪)

સં યજ્જનાન્ ક્રતુભિઃ શૂરં ઈક્ષયદ્ધને હિતે તરુષન્ત શ્રવસ્યવઃ પ્ર યક્ષન્ત શ્રવસ્યવઃ । તસ્મા આયુઃ પ્રજાવદિદ્ બાધે અર્ચન્ત્યોજસા ।

ઇન્દ્રં ઓક્વયં દિધિશન્ત ધીતયો દેવાં અચ્છા ન ધીતયઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! **શ્રવસ્યવઃ**-સ્વયં શ્રવણની ઈચ્છા કરનારાની સમાન વર્તમાન **શ્રવસ્યવઃ**-સ્વયં શ્રવણની ઈચ્છા કરનાર તમે જેમ **ક્રતુભિઃ**-બુદ્ધિ વા કર્મોથી **યત્**-જે **જનાન્**-ધાર્મિક જનોને **હિતે**-સુખ કરનારા **ધને**-ધનના નિમિત્ત **તસ્મન્ત**-પાર કરો, ઉદ્ધાર કરો; અને **પ્રયક્ષન્ત**-દુષ્ટોને દંડ આપો. જે **શૂરઃ**-નિર્ભય શૂરવીર પુરુષ **સમીક્ષયત્**-જ્ઞાન કરાવે, વ્યવહાર દર્શાવે **તસ્મૈ**-તેના માટે **પ્રજાવત્**-જેમાં બહુ સંતાનો વિદ્યમાન હોય તેવી **આયુઃ**-આયુ થાય.

હે શ્રેષ્ઠ વિચારશીલ પુરુષો ! તમે **ધીતયઃ**-ધારણ કરેલાની **ન**-સમાન **ધીતયઃ**-ધારણ કરનાર બનેલ પરમૈશ્વર્યયુક્ત પરમેશ્વરમાં **ઓક્વયમ્**-ધરોમાં શ્રેષ્ઠ વ્યવહારને સિદ્ધ કરો, **દેવાન્**-વિદ્વાનોને **અચ્છ**-શ્રેષ્ઠ **દિધિવન્ત**-ઉપદેશ કરીને સમજાવો છો તે આપ **બાધે**-દુષ્ટ વ્યવહારની બાધાઓ માટે **ઓજસા**-પરાક્રમથી **અર્ચન્તિ**-સત્કાર કરનારાની સમાન કષ્ટમાં **ઇત્**-જ રક્ષા કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનોની સંગતિ અને સેવાથી વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરીને પુરુષાર્થથી પરમ ઐશ્વર્યની ઉન્નતિ કરે છે, તેઓ સર્વને બુદ્ધિમાન અને સુખી કરી શકે છે. (૫)

યુવં તર્મિન્દ્રાપર્વતા પુરોયુધા યો નઃ પૃતન્યાદપ્ તન્તમિદ્ધતં વજ્રેણ તન્તમિદ્ધતમ્ ।
દૂરે ચત્તાય છન્ત્સદ્ ગહનું યદિનક્ષત્ ।

અસ્માકં શત્રૂન્ પરિ શૂર વિશ્વતો દર્મા દર્ષીષ્ટ વિશ્વતઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે **પુરોયુધા**-પૂર્વ યુદ્ધ કરનારા **ઇન્દ્રાપર્વતા**-સૂર્ય અને મેઘની સમાન વિદ્યમાન સભાપતિ, સેનાધીશો ! **યુવમ્**-તમે **યઃ**-જે **નઃ**-અમારી **પૃતન્યાત્**-સેનાને ઈચ્છે **તમ્**-તેને **વજ્રેણ**-ધારદાર તીક્ષ્ણ

શસ્ત્ર વા અસ્ત્ર અર્થાત્ કલાકૌશલથી બનેલ શસ્ત્રથી અપ, હતમ્-અત્યંત મારો. જેમ તમે બન્ને જેને-જેને હતમ્-મારો તંતમ્-તેને તેને ઇત્-જ અમે પણ મારીએ અને જેને-જેને મારીએ તંતમ્-તેને-તેને ઇત્-જ તમે મારો.

હે શૂર-શૂરવીર ! દર્મા-શત્રુઓને વિદીર્ણ કરતા આપ જે અસ્માકમ્-અમારા શત્રૂન્-શત્રુઓને વિશ્વતઃ-સર્વત્રથી દર્ષીષ્ટ-દળી નાખો, વિદીર્ણ કરો, તેને અમે પણ વિશ્વતઃ-સર્વત્રથી પરિ-સર્વ રીતે દળીએ, વિદીર્ણ કરી નાખીએ. યત્-જે ચત્તાય-યાચિતને માટે ગહનમ્-કઠિન વ્યવહારને દૂરે-દૂરમાં છન્ત્સત્-સ્વીકાર-સ્વીકાર કરો અને શત્રુની સેનાથી ઇનક્ષત્-વ્યાપ્ત હોય, તેની તમે નિરંતર રક્ષા કરો. (૬)

ભાવાર્થ : સૈનિકોએ જે સેનાપતિ આદિના શત્રુ છે, તેઓને પોતાનાં પણ શત્રુ જાણવા જોઈએ. તે શત્રુઓ દ્વારા કરવામાં આવેલી પરસ્પરની કૂટથી રહીને, શત્રુઓને વિદીર્ણ કરીને પ્રજાજનોની સમ્યક્ રક્ષા કરવી જોઈએ. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં રાજધર્મનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૩૨)

સૂક્ત-૧૩૩

उभे पुनामि रोदसी ऋतेन द्रुहो दहामि सं महीरनिन्द्राः ।

अभिल्लग्य यत्र हुता अमित्रा वैलस्थानं परि तृढा अशोरन् ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું અનિન્દ્રાઃ-જેમાં અવિદ્યામાન રાજધન છે તે મહીઃ-પૃથિવી-ભૂમિઓનો અભિલ્લમ્ય-સર્વત્રથી સંગ કરીને અર્થાત્ તેને પ્રાપ્ત કરીને ઋત્ત્વેન-સત્યથી ઉભે-બન્ને રોદસી-પ્રકાશ અને પૃથિવીને પુનામિ-પવિત્રકર્તા છું અને દ્રુહઃ-દ્રોહ કરનારાઓને સંદહામિ-સારી રીતે બાળું છું યત્ર-જ્યાં વૈલસ્થાનમ્-પડવાન = ખાડાઓના સ્થાનને પ્રાપ્ત પરિ, તૃઢાઃ-સર્વત્રથી મારેલા હતાઃ-મરેલને અમિત્રાઃ-મિત્રભાવ રહિત શત્રુજન અશોરન્-સૂવે, તેમ હું યત્ન કરું છું, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ નિરંતર એવી કામના = ઈચ્છા કરવી જોઈએ, કે સત્ય વ્યવહારથી રાજ્યની વૃદ્ધિ, પવિત્રતા, શત્રુઓનું નિવારણ અને નિષ્કંટક રાજ્ય બને. (૧)

अभिल्लग्यां चिदद्रिवः शीर्षा यातुमतीनाम् ।

छिन्धि वटूरिणां पदा महावटूरिणा पदा ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે અદ્રિવઃ-મેઘની સમાન વર્તમાન શૂરવીર તું પ્રશંસિત બળને અભિલ્લગ્ય-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરીને યાતુમતીનામ્-જેમાં અત્યંત હિંસક માર-ફાડ કરનારા વિદ્યમાન હોય તે સેનાઓના મહાવટૂરિણા-મહા વર્ણયુક્ત પદા-ચતુર્થ ભાગથી જેમ ચિત્-તેમ વટૂરિણા-વીંટાળેલ પદા-શસ્ત્રોના ચોથાભાગથી વા

પોતાના પગથી દબાવીને **શીર્ષા**-શત્રુઓના માથાઓને **છિન્ધિ-છિન્ન-ભિન્ન** કર. (૨)

ભાવાર્થ : જે પોતાના બળની ઉન્નતિ-વૃદ્ધિ કરીને, શત્રુઓના બળને છિન્ન-ભિન્ન કરીને, તેને પગથી દબાવે છે, તે રાજ્ય કરવાને યોગ્ય બને છે. (૨)

અર્વાસાં મઘવઞ્જહિ શર્ધો યાતુમતીનામ્ ।

વૈલસ્થાનકે અર્મકે મહાવૈલસ્થે અર્મકે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-પરમ ધનયુક્ત રાજન્ ! **અર્મકે**-જે દુઃખ આપનારા અને **વૈલસ્થાનકે**-જેમાં ખાડાઓયુક્ત સ્થાને છે તેની સમાન **અર્મકે**-દુઃખ આપનાર **મહાવૈલસ્થે**-મોટા-મોટા ખાડાઓથી યુક્ત આ સ્થાનમાં **આસામ્ યાતુમતીનામ્**-હિંસક સેનાઓના **શર્ધઃ**-બળને **અવ, જહિ-છિન્ન-ભિન્ન** કરો. (૨)

ભાવાર્થ : સૈનિક વીરોએ શત્રુઓની સેનાઓને અતિ દુર્ગમ અને ખાડાઓ આદિથી યુક્ત સ્થાનમાં પાડીને - પછાડીને મારવી જોઈએ. (૩)

યાસાં તિસ્રઃ પંચાશતોઽભિવ્લઙ્ગૈરપાવપઃ ।

તત્સુ તે મનાયતિ ત્વક્ત્સુ તે મનાયતિ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે પરમ શ્રેષ્ઠ ધનયુક્ત રાજન્ ! **યાસામ્**-જે શત્રુસેનાઓની વચ્ચે **તિસ્રઃ**-ત્રણ વા **પંચાશતઃ**-પચાસ સેનાઓને **અભિવ્લઙ્ગૈઃ**-ચોતરફથી જવા-આવવા આદિ વ્યવહારોથી **અપાવપઃ**-દૂર પહોંચાડો તે સેનાઓનું (**તત્-**) ત્યાં પહોંચવું **તે**-તારા માટે **સુમનાયતિ**-પોતાના શ્રેષ્ઠ મનની સમાન આચરણ કરે છે, પરંતુ **તક્ત્**-તે **તે**-તારા માટે **સુમનાયતિ**-પોતાના શ્રેષ્ઠ મનની સમાન આચરણ કરે છે. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એવું બળ વધારવું જોઈએ, જેથી એકલો (વીર) **સાર્ધશતસ્ય**-દોઢસો દુષ્ટોને જીતી શકે અને પોતાનું બળ સુરક્ષિત રાખે. (૪)

(અત્રે મંત્રમાં **પંચાશતઃ**-પદનો પચાસ અર્થ કરેલ છે. પરંતુ **તિસ્રઃ**-**પંચાશતઃ**-પચાસની ત્રણ ટુકડી સેના એવા સંયુક્ત અર્થથી દોઢસોનું ગ્રહણ થાય છે. જેને સ્વામીજીએ સંસ્કૃત ભાવાર્થમાં **સાર્ધશતસ્ય**-લખેલ છે. જેથી દોઢસો એવો અર્થ થઈ શકે છે. - અનુવાદક)

પિશાઙ્ગ્ભૃષ્ટિમમ્ભૃણં પિશાચિમિન્દ્ર સં મૃણ । સર્વ રક્ષો નિ બર્હય ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર**-દુષ્ટ વિદારક રાજન્ ! આપ **પિશાઙ્ગ્ભૃષ્ટિમ્**-સમ્યક્ પીતવર્ણ બનતા જેનો પાક થાય છે **અમ્ભૃણમ્**-તે નિરંતર ભયંકર **પિશાચિમ્**-પીસનાર, દુઃખદાયક જનને **સમ્મૃણ**-સારી રીતે મારો અને **સર્વમ્**-સમસ્ત **રક્ષઃ**-દુષ્ટજનને **નિબર્હય**-બહાર કાઢો. (૫)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ દુષ્ટોનું મૂળ સહિત નિવારણ કરીને, સર્વ સજ્જનોની નિરંતર વૃદ્ધિ કરવી

જોઈએ. (૫)
શ્રેણી-૫
શ્રેણી-૫

अवर्मह इन्द्र दादृहि श्रुधी नः शुशोच हि द्यौः क्षा न भीषाँ अद्रिवो घृणान्
भीषाँ अद्रिवः। शुष्मिन्तमो हि शुष्मिभिर्वधैरुग्रेभिरोयसे।

अपूरुषघ्नो अप्रतीत शूर सत्वभिस्त्रिसप्तैः शूर सत्वभिः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે અદ્રિવ:-પ્રશંસિત મેઘયુક્ત સૂર્યની સમાન વર્તમાન **ઇન્દ્ર**-શ્રેષ્ઠ ગુણોથી પ્રકાશિત પુરુષ !
આપ **અવ**:-અધોમુખી કુટિલને **દાદૃહિ**-વિદારો-મારો **ન**:-અમારા **શુશોચ**-ન્યાયને વિચારો, **શ્રુધિ**-સાંભળો
અને **દ્યૌ**:-જેમ પ્રકાશ **ક્ષા**:-ભૂમિની, **ન**-તેમ **મહ**:-અત્યંત રક્ષા કરો.

હે અદ્રિવ:-પ્રશંસિત પર્વતોવાળા ! આપ **હિ-જ** **ભીષા**-ભયથી **ઘૃણાત્**-પ્રકાશિત સમાન ન્યાયનો
પ્રકાશ કરો અને **ભીષા**-ભય દ્વારા દુષ્ટોને દંડ આપો.

હે **શૂર**-નિર્ભય-નિડર-શૂરવીર પુરુષ ! **શુષ્મિન્તમ**:-જેમાં અત્યંત - બહુજ બળ વિદ્યમાન છે,
અપૂસ્વઘ્ન:-જે પુરુષોને ન મારનાર આપ **ઉગ્રેભિ**:-તીક્ષ્ણ સ્વભાવવાળા **શુષ્મિભિ**:-બળવાન પુરુષોની
સાથે તીક્ષ્ણ શત્રુઓને **વધૈ**:-મારવાના ઉપાયોથી **ઈંયસે**-જાઓ છે, તે આપ **ત્રિસપ્તૈ**:-એકવીસ **સત્વભિ**:-
વિદ્વાનોની સાથે જ વર્તાવ રાખો. હે **અપ્રતીત**-પ્રતીત ન થનાર ગૂઢ વિચારયુક્ત **શૂર**:-દુષ્ટોને મારનાર
આપ **હિ-જ** **સત્વભિ**:-પદાર્થોથી યુક્ત થાઓ. (૬)

ભાવાર્થ : ધાર્મિક જનોએ નીચતાનું નિવારણ કરીને, શ્રેષ્ઠતાનો પ્રચાર કરીને, ઉત્તમ બળની વૃદ્ધિ
માટે શૂરવીર પુરુષો દ્વારા પ્રજાઓની રક્ષા કરીને, દશ પ્રમાણ તથા એક જીવાત્માથી દશ ઈન્દ્રિયોની
સમાન પુરુષાર્થ કરીને પદાર્થોની યથાયોગ્ય વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૬)

વનોતિ हि सुन्वन्क्षयं परीणसः सुन्वानो हि ष्मा यजत्यव द्विषो देवानामव
द्विषः। सुन्वान इत्सिषासति सहस्रा वाज्यवृतः।

सुन्वानायेन्द्रो ददात्याभुवं रयिं ददात्याभुवम् ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર**:-સુખ પ્રદાતા **સુન્વાનાય**-પદાર્થોનો સાર કાઢનાર પુરુષને **આભુવમ્**-જેમાં સમ્યક્
સુખ થાય તે **રયિમ્**-ધનને **દદાતિ**-આપે છે, તે **સુન્વાન**:-પદાર્થોના સારને પ્રકટ કરીને **અવૃત**:-પ્રકટ
વાજી-પ્રશસ્ત જ્ઞાનવાન પુરુષ **સહસ્રા**-હજારો **દેવાનામ્**-વિદ્વાનોના **અવ**, **દ્વિષ**:-અતિ શત્રુને **ઇત્-જ**
સિષાસતિ-અલગ કરવા ઈચ્છે છે, જે **અવ**, **દ્વિષ**:-અત્યંત વેર કરનારને અલગ કરવા ઈચ્છે છે,
તે સર્વને માટે **આભુવમ્**-જેમાં શ્રેષ્ઠ સુખ હોય તે ધનને **દદાતિ**-આપે છે અને જે **હિ**-નિશ્ચયથી **સુન્વાન**:-
પદાર્થોના સારને સિદ્ધ કરીને **યજતિ**-સંગ કરે છે, **સ્મ**-તે જ **પરીણસ**:-બહુ પદાર્થો અને **ક્ષયમ્**-ઘરને
સુન્વન્-સિદ્ધ કરીને **હિ-જ** સુખ **વનોતિ**-ભોગવે છે. (૭)

ભાવાર્થ : જે સર્વથી મિત્રતા કરાવીને સર્વના શત્રુઓનું નિવારણ કરે છે, તે સર્વના 'કલ્યાણકારી'
બનીને સર્વને બહુ જ સુખ આપી શકે છે. (૭)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં શ્રેષ્ઠોનું પાલન, દુષ્ટોની નિવૃત્તિથી રાજ્યની સ્થિરતાનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૩૩)

સૂક્ત-૧૩૪

આ ત્વા જુવો રારહાણા અભિપ્રયો વાયો વહન્ત્વિહ પૂર્વપીતયે સોમસ્ય પૂર્વપીતયે ।
ઠુર્ધ્વા તે અનુ સૂનૂતા મનસ્તિષ્ઠતુ જાનતી ।
નિયુત્વતા રથેના યાહિ દાવને વાયો મ્ખસ્ય દાવને ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વાયો-વાયુ સમાન વર્તમાન વિદ્વાન્ ! ઇહ-આ સંસારમાં સોમસ્ય-ઔષધિ આદિ પદાર્થોના રસને પૂર્વપીતયે-પૂર્વ સજ્જનોના પીવા સમાન પૂર્વપીતયે-જેને પીવો છે, તેને માટે જુવઃ-વેગવાન રારહાણાઃ-છોડનાર વાયુ ત્વા-આપને પ્રયઃ-પ્રીતિપૂર્વક અભિ; આ, વહન્તુ-ચોતરફથી પહોંચાડે છે.

હે વાયો-જ્ઞાનવાન પુરુષ ! જે તે-આપની ઠુર્ધ્વા-ઉન્નતિયુક્ત અતિ શ્રેષ્ઠ સૂનૂતા-પ્રિયવાણી જાનતી-અને જ્ઞાનવતી થયેલી સ્ત્રી મનઃ-મનને અનુ, તિષ્ઠતુ-અનુકૂળ રહેલ હોય, તે આપ મ્ખસ્ય-યજ્ઞના સંબંધમાં દાવને-જેમ દાન કરનારને માટે તેમ દાવને-દેનારને માટે નિયુત્વતા-જેમાં બહુ જ ઘોડાઓ વિદ્યમાન છે, તે રથેન-રમણ કરવા યોગ્ય વાહનથી આ, યાહિ-આવો. (૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન લોકો સર્વ પ્રાણીઓમાં પ્રાણોની સમાન પ્રિય બનીને, અનેક ઘોડાઓવાળા યાનો = વાહનોથી જાય અને આવે = ગમનાગમન કરે. (૧)

મન્દન્તુ ત્વા મન્દિનો વાયવિન્દવોઽસ્મત્ક્રાણાસઃ સુકૃતા અભિદ્યવો ગોભિઃ
ક્રાણા અભિદ્યવઃ । યદ્દ ક્રાણા ડુરધ્યૈ દક્ષં સચન્ત ઠુતયઃ ।
સધ્રીચીના નિયુતો દાવને ધિય ઉપ બ્રુવત ડુ ધિયઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે વાયો-વાયુની સમાન મનોહ વિદ્વાન્ ! યત્-જે અસ્મત્-અમારાથી ક્રાણાસઃ-શ્રેષ્ઠ કર્મ કરતા અભિદ્યવઃ-જેની ચોતરફ વિદ્યાનો પ્રકાશ વિદ્યમાન સુકૃતાઃ-જે સુંદર શ્રેષ્ઠ કર્મવાળા અભિદ્યવઃ-અને સર્વત્રથી સૂર્યનાં કિરણો સમાન અત્યંત પ્રકાશમાન ડુન્દવઃ-આદ્રયિત ક્રાણાઃ-પુરુષાર્થ કરતા સજ્જનોની સમાન મન્દિનઃ-અને સુખની કામના કરતા ત્વા-આપને મન્દન્તુ-ચાહે. તે હ-જ ઠુતયઃ-રક્ષા આદિ ક્રિયાવાન ક્રાણાઃ-કર્મ કરનારા દક્ષમ્-બળને ગોભિઃ-ભૂમિઓની સાથે ડુરધ્યૈ-પ્રાપ્ત થવા સચન્ત-યુક્ત થાય છે અર્થાત્ સંબંધ જોડે છે. જે દાવને-દાનને માટે સધ્રીચીનાઃ-સાથ-સત્કાર પ્રાપ્ત કરવા વા આવવા-જવાવાળા નિયુતઃ-નિયુક્ત કરેલ અર્થાત્ કોઈ વિષયમાં લગાવેલી ધિયઃ-બુદ્ધિઓને ઉપ, બ્રુવતે-ઉપદેશ કરે છે, તેઓ ડુમ્-સર્વત્રથી ધિયઃ-કર્મોને પ્રાપ્ત થાય છે. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્વાનોની સેવા કરે છે અને સત્યનો ઉપદેશ કરે છે, તેઓ શરીર અને આત્માનાં બળને કેમ પ્રાપ્ત ન કરી શકે ? (૨)

વાયુયુક્તે રોહિતા વાયુરુણા વાયુ રથે અજિરા ધુરિ વોઢવે વહિષ્ઠા ધુરિ વોઢવે । પ્ર બોધયા પુરન્ધિં જાર આ સસતીમિવ ।

પ્ર ચક્ષય રોદસી વાસયોષસઃ શ્રવસે વાસયોષસઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! ધુરિ-સર્વના આધારભૂત જગતમાં વોઢવે-પદાર્થોને પહોંચાડવા વહિષ્ઠા-અત્યંત પહોંચાડનાર વાયુ:-વાયુ વોઢવે-દેશાન્તરમાં પહોંચાડવા માટે ધુરિ-ચલાવવાના મુખ્ય ભાગમાં રોહિતા-લાલ-લાલ રંગના અગ્નિ આદિ પદાર્થોને વા વાયુ:-વાયુ અસ્થા-પદાર્થોને વહન કરવામાં સમર્થ જળ, ધુમાડો આદિ પદાર્થોને વાયુ:-વાયુ અજિરા-ફેંકવા યોગ્ય પદાર્થોને રથે-રથમાં યુક્તે-જોડે છે. અર્થાત્ કલાકૌશલથી પ્રેરિત તે પદાર્થોનો સંબંધ કરે છે, એથી આપ જાર:-પ્રિય પુરુષ જેમ સસતીમિવ-સૂતેલી સ્ત્રીને જગાડે, તેમ પુરન્ધિમ્-બહુજ ઉત્તમ બુદ્ધિમતી સ્ત્રીને પ્રાબોધય-સમ્યક્ બોધ કરાવો, રોદસી-પ્રકાશ અને પૃથિવીનું પ્ર, ચક્ષય-ઉત્તમ વ્યાખ્યાન કરો અર્થાત્ તેના ગુણોનું વર્ણન કરો. ષસ:-દહન આદિ કરનારના પદાર્થો અર્થાત્ અગ્નિ આદિને કલાયંત્રાદિમાં વાસય-વસાવો-સ્થાપન કરો અને શ્રવસે-સંદેશાદિ સાંભળવા માટે ષસ:-દિવસોને વાસય-તાર, વિદ્યુત્ની વિદ્યાને સ્થિર કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જેઓ વાયુની સમાન પ્રયત્ન કરે છે અને આપનો સમાન લોકોને બોધયુક્ત કરે છે, તેઓજ સૂર્યની સમાન અને પૃથિવીની સમાન પ્રકાશયુક્ત અને 'સોઢારો'-સહનશીલ' હોય છે. (૩)

તુભ્યમુષાસઃ શુચયઃ પરાવતિ ભદ્રા વસ્ત્રા તન્વતે દંસુ રશ્મિષુ ચિત્રા નવ્યેષુ રશ્મિષુ । તુભ્યં ધેનુઃ સંબર્દુઘા વિશ્વા વસૂનિ દોહતે ।

અર્જનયો મરુતો વક્ષણાભ્યો દિવ આ વક્ષણાભ્યઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ શુચયઃ-શુદ્ધ ષાસઃ-પ્રાતઃ કાલીન વાયુ પરાવતિ-દૂર દેશમાં દંસુ-જેમાં મનુષ્ય મનનું દમન કરે છે, તે રશ્મિષુ-કિરણોમાં અને નવ્યેષુ-નવીન રશ્મિષુ-કિરણોમાં તેમ તુભ્યમ્-તારા માટે ચિત્રા-ચિત્ર-વિચિત્ર અદ્ભુત ભદ્રા-સુખકારક વસ્ત્રા-વસ્ત્ર વા ઢાંકવાના અન્ય પદાર્થોને તન્વતે-વિસ્તૃત કરે છે; વા જેમ સંબર્દુઘા-સર્વ કાર્યોને પૂર્ણ કરે છે ધેનુઃ-વાણી તુભ્યમ્-તારા માટે વિશ્વા-સમસ્ત વસૂનિ-ધનોને દોહતે-પૂર્ણ કરે છે; વા જેમ અર્જનયઃ-ઉત્પન્ન ન થનાર મસ્તઃ-વાયુ વક્ષણાભ્યઃ-જે જળ આદિ પદાર્થોને વહાવનારી નદીઓમાં દિવઃ-પ્રકાશની મધ્ય વક્ષણાભ્યઃ-વહાવનારા કિરણોથી જળનો આ-સારી રીતે વિસ્તાર કરે છે, તેમ તું બન. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો કિરણોની સમાન ન્યાય પ્રકાશનું, સુશિક્ષિત વાણીની સમાન વક્તૃત્વતાનું અને નદીની સમાન શુભ ગુણોનું વહન કરે છે, તેઓ સંપૂર્ણ કલ્યાણને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪)

તુભ્યં શુક્રાસઃ શુચ્યસ્તુરણ્યવો મદેષૂગ્રા ઇષણન્ત ભુર્વણ્યપામિષન્ત ભુર્વિણિ ।
ત્વાં ત્સારી દસમાનો ભગમીદ્વે તક્વવીચૈ ।

ત્વં વિશ્વસ્માદ્ભુવનાત્પાસિ ધર્મીણાસુર્યાત્પાસિ ધર્મીણા ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જે ત્વમ્-આપ ધર્મણા-ધર્મથી અસુર્યાત્-દુષ્ટોના નિજ વ્યવહારથી પાસિ-રક્ષા કરો છો; વા ધર્મણા-ધર્મની સાથે વિશ્વસ્માત્-સમગ્ર ભુવનાત્-સંસારની પાસિ-રક્ષા કરો છો; તથા ત્સારી-કુટિલગામી અને દસમાનઃ-શત્રુઓનો સંહાર કરીને આપ તક્વવીચૈ-જેમાં ચોરોનો સંબંધ નથી તે માર્ગમાં ભગમ્-ઐશ્વર્યની ઈદ્વે-પ્રશંસા કરો છો, તે ત્વામ્-આપને જે અપામ્-જળ વા કર્મોની ભુર્વિણિ-ધારણાયુક્ત વ્યવહારમાં ઇષન્ત-ચાહે છે, તે તુરણ્યવઃ-પાલન અને શુચ્યઃ-પવિત્રતા કરનારા શુક્રાસઃ-શુદ્ધ વીર્ય ઝગ્રાઃ-તીવ જન મદેષુ-આનંદોમાં ભુર્વિણિ-અને પાલન પોષણ કરનારા વ્યવહારમાં તુભ્યમ્-તમારા માટે ઇષણન્ત-ઈચ્છા કરે. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે - કે જે જેની રક્ષા કરે તેની તેઓ પણ રક્ષા કરે. દુષ્ટોના નિવારણ દ્વારા ઐશ્વર્યની કામના કરે. દુષ્ટો પર કદી વિશ્વાસ કરે નહિ. (૫)

ત્વં નો વાયવેષામપૂર્વ્યઃ સોમાનાં પ્રથમઃ પીતિમર્હસિ
સુતાનાં પોતિમર્હસિ । ઉતો વિહુત્મતીનાં વિશાં વવર્જષીણામ્ ।
વિશ્વા ઇત્તૈ ધેનવો દુહ આશિરં ઘૃતં દુહત આશિરમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે વાયો-પ્રાણ સમાન વર્તમાન બળવાન ! અપૂર્વ્યઃ-પૂર્વોએ પ્રસિદ્ધ ન કરેલ તે અપૂર્વ ગુણી ત્વમ્-આપ નઃ-અમારી સુતાનામ્-શ્રેષ્ઠ ક્રિયાથી કાઢવામાં આવેલ સોમાનામ્-ઐશ્વર્યકારક મહા ઔષધિઓના રસનું પીતિમ્-પાન કરવાને અર્હસિ-યોગ્ય છો; અને પ્રથમઃ-પૂર્વ વિખ્યાત આપ ણામ્-એ ઉક્ત પદાર્થોના રસોને પીતિમર્હસિ-પાન કરવાને યોગ્ય છો; જે તે-આપની વિશ્વાઃ-સમસ્ત ધેનવઃ-ગાયો ઇત્-જ આશિરમ્-ભોગવવાને ઘૃતમ્-કાન્તિયુક્ત ધીને દુહતે-પુરુ કરે છે; અને આશિરમ્-સારી રીતે ભોજન કરવા યોગ્ય દૂધ આદિ પદાર્થોને દુહે-પૂરા પાડીને તેની અને વવર્જષીણામ્-નિરંતર દોષોનું વર્જન કરીને વિહુત્મતીનામ્-જેમાં વિશેષતાથી હોમ કરનાર વિચારશીલ મનુષ્ય વિદ્યમાન છે, તે વિશામ્-પ્રજાઓનું ઉતો-નિશ્ચયથી પાલન કરો. (૬)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ બ્રહ્મચર્ય, ઉત્તમ ઔષધોનું સેવન અને ઉચિત આહાર-વિહારથી શરીર અને આત્માના બળની વૃદ્ધિ કરીને ધર્મપૂર્વક પ્રજા પાલનમાં સ્થિર રહેવું જોઈએ. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વાયુના દૃષ્ટાન્તથી શૂરવીરોના ન્યાય વિષયમાં પ્રજાકર્મનું વર્ણન હોવાથી

આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૩૪)

સૂક્ત-૧૩૫

સ્તીર્ણં બર્હિરુપં નો યાહિ વીતયે સહસ્ર્રેણ નિયુતાં નિયુત્વતે
શતિનીંભિર્નિયુત્વતે । તુભ્યં હિ પૂર્વપીતયે દેવા દેવાયં યેમિરે ।
પ્ર તેં સુતાસો મધુમન્તો અસ્થિરન્મદાય ક્રત્વેં અસ્થિરન્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે દેવાય-દિવ્યગુણને માટે તુભ્યમ્-હિ-આપને જ પૂર્વપીતયે-પૂર્વ રસ આદિ પીવાને દેવા:-વિદ્વાનો યેમિરે-નિયમ કરે તેઓ તે-આપના મદાય-આનંદ અને ક્રત્વે-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિને માટે મધુમન્ત:-પ્રશંસિત મધુર ગુણયુક્ત સુતાસ:-ઉત્પન્ન કરેલ પદાર્થ પ્રાસ્થિરન્-સારી રીતે સ્થિત થાય અને સુખ રૂપ અસ્થિરન્-સ્થિર થાય, તેમ તે આપ ન:-અમારા સ્તીર્ણમ્-ઢંકાયેલા બર્હિ:-શ્રેષ્ઠ વિશાળ ઘરને વીતયે-સુખ પ્રાપ્ત કરવા માટે ઉપ, યાહિ-પાસે પહોંચો. નિયુત્વતે-જેના બહુ જ ઘોડાઓ વિદ્યમાન છે તેને માટે સહસ્ર્રેણ-હજારો નિયુતા-નિશ્ચિત વ્યવહારથી પાસે પહોંચો; અને શતિનીંભિ:-જેમાં સેંકડો વીરો વિદ્યમાન છે, તે સેનાઓની સાથે નિયુત્વતે-બહુ જ બળથી મળેલાને માટે અર્થાત્ અત્યંત બળવાનને માટે પાસે પહોંચો. (૧)

ભાવાર્થ : વિદ્યા અને ધર્મના જિજ્ઞાસુ મનુષ્યોમાં વિદ્વાનોનું સદા આહ્વાન કરવું જોઈએ અને તેઓની સેવા તથા સંગતિ દ્વારા વિજ્ઞાનની ઉન્નતિ કરીને નિત્ય આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૧)

તુભ્યાયં સોમઃ પરિપૂતો અદ્રિંભિઃ સ્પાર્હાં વસાનઃ પરિ કોશમર્ષતિ શુક્રા
વસાનો અર્ષતિ । તવાયં ભાગ આયુષુ સોમો દેવેષુ હૂયતે ।
વહ વાયો નિયુતો યાહ્યસ્મયુર્જુષાણો યાહ્યસ્મયુઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે વાયો-વિદ્વાન્ ! આપ નિયુત:-કલાકૌશલથી નિયત કરેલ ઘોડાઓને જેમ વાયુ તેમ પોતાના વાહનોને એક દેશથી બીજા દેશમાં વહ-પહોંચાડો અને જુષાણ:-પ્રસન્ન ચિત્ત અસ્મયુઃ-મારી સમાન આચરણ કરીને યાહિ-પહોંચો, અસ્મયુઃ-મારી સમાન આચરણ કરીને આવો. જે આવો જે તવ-આપનું અયમ્-એ આયુષુ-જીવન અને દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં સોમ:-ઔષધિગણ સમાન ભાગ:-સેવન કરવા યોગ્ય ભાગ છે; વા જે આપ હૂયતે-સ્તુતિ કરો છો તે વસાન:-વસ્ત્ર આદિ ઓઢીને શુક્રા-શુદ્ધ વ્યવહારોને અર્ષતિ-પ્રાપ્ત થાઓ છો.

જે અયમ્-એ અદ્રિંભિઃ-મેઘોથી પરિપૂત:-સર્વત્રથી પવિત્ર થયેલ સોમ:-ચંદ્રમાની સમાન પ્રશંસા કરવામાં આવેલ વા કોશમ્-મેઘને પર્યર્ષતિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય તેની સમાન સ્પાર્હાં-ઈચ્છિત વસ્ત્રોને વસાન:-ધારણ કરેલ આપ પ્રાપ્ત થાઓ, તે તુભ્યં-આપને માટે ઉક્ત સર્વ વસ્તુ પ્રાપ્ત થાઓ. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સુંદર વસ્ત્ર, આભૂષણ અને વેશ ધારણ કરીને શુભ કાર્ય કરે છે, તેઓ

સર્વત્ર પ્રશંસા પ્રાપ્ત કરે છે. (૨)

આ નો નિયુદ્ધિઃ શતિનીંભિરધ્વરં સહસ્ત્રિણીભિરુપ યાહિ વીતયે વાયોં હૃવ્યાનિ
વીતયે। તવાયં ભાગ ઋત્વિયઃ સરશ્મિઃ સૂર્યે સચા।

અધ્વર્યુભિર્ભરમાણા અયંસત્ વાયોં શુક્રા અયંસત્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વાયો-વિદ્વાન્ ! તવ-આપના જે અધ્વર્યુભિઃ-સ્વયં યજ્ઞની ઈચ્છા કરનારાઓએ ભરમાણાઃ-
ધારેલ કરેલ મનુષ્ય અયંસત-નિવૃત્ત થયેલ સુખ જેમ હોય, તેમ અયંસત-નિવૃત્ત થાય અર્થાત્ સાંસારિક
સુખનો ત્યાગ કરે. જે આપનો સૂર્યે-સૂર્યની વચ્ચે સચા-સમ્યક્ સંયોગ કરેલ શુક્રાઃ-શુદ્ધિ કિરણોની
સમાન સરશ્મિઃ-પ્રકાશની સાથે વર્તમાન ઋત્વિયઃ-જેનો ઋતુ સમય પ્રાપ્ત થયો તે અયમ્-એ ભાગઃ-
ભાગ છે, તે આપ વીતયે-વ્યાપ્ત થવા માટે હૃવ્યાનિ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થોની ઉપયાહિ-સમીપ
પહોંચીને પ્રાપ્ત થાઓ.

હે વાયો-પ્રશંસિત બળયુક્ત જે શતિનીંભિઃ-પ્રશંસિત સેંકડો અંગોથી યુક્ત સેનાઓની સાથે વા
સહસ્ત્રિણીભિઃ-જેમાં અનેક હજાર શૂરવીરોના સમૂહયુક્ત સેનાઓની સાથે વા નિયુદ્ધિઃ-વાયુના ગુણની
સમાન ઘોડાઓથી વીતયે-કામનાને માટે નઃ-અમારા અધ્વરમ્-રાજ્ય પાલન રૂપ યજ્ઞને પ્રાપ્ત થાય
છે, તેને આ-આવીને પ્રાપ્ત થાઓ. (૩)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ શત્રુના બળથી ચારગણું અથવા તેથી પણ અધિક બળ વધારીને અધાર્મિક
શત્રુઓની સાથે યુદ્ધ કરવું જોઈએ. તે રાજપુરુષો પ્રજાજનોથી પ્રતિવર્ષ જેટલો કર ગ્રહણ કરવા યોગ્ય
હોય, તેટલો જ ગ્રહણ કરે તથા સદા ધાર્મિક વિદ્વાનોની સેવા કરે. (૩)

આ વાં રથોં નિયુત્વાન્વક્ષદવસેઽભિ પ્રયાંસિ સુધિતાનિ વીતયે વાયોં હૃવ્યાનિ
વીતયે। પિબતં મધ્વો અન્ધસઃ પૂર્વપેયં હિ વાં હિતમ્।

વાયુવા ચન્દ્રેણ રાધસા ગતમિન્દ્રશ્ચ રાધસા ગતમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે સભા-સેનાધીશો ! જે વામ્ તમારા નિયુત્વાન્-વાયુ સમાન વેગવાન રથઃ-રથ પીતયે-
આનંદની પ્રાપ્તિને માટે સુધિતાનિ-સારી રીતે ધારણ કરેલ પ્રયાંસિ-પ્રીતિને અનુકૂળ પદાર્થોને અભ્યાવક્ષત્-
ચોતરફથી સારી રીતે પહોંચે અને અવસે-વિજયની પ્રાપ્તિ વા વીતયે-ધર્મની પ્રવૃત્તિને માટે હૃવ્યાનિ-
આપવા યોગ્ય પદાર્થોને સર્વત્ર સમ્યક્ પહોંચાડે, તે તમે જેમ ઇન્દ્રઃ-વિદ્યુત્ રૂપી અગ્નિ ચ-અને વાયુ
આવે, તેમ રાધસા-જેથી સિદ્ધિ પ્રાપ્ત થાય તે પદાર્થની સાથે આ, ગતમ્-આવો.

જે મધ્વઃ-મધુર અન્ધસઃ-અન્નનો પૂર્વપેયમ્-પૂર્વ મનુષ્યોને પીવા યોગ્ય વામ્-અને તમારા બન્ને
માટે હિતમ્-સુખરૂપ ભાગ છે, તેનું પિબતમ્-પાન કરો અને ચન્દ્રેણ-સુવર્ણરૂપ રાધસા-શ્રેષ્ઠ સિદ્ધિકારક
ધનની સાથે આગતમ્-આવો.

હે વાયો વાયુની સમાન પ્રિય ! આપ ઉત્તમ સિદ્ધિકારક સુવર્ણની સાથે સુખભોગને આ-પ્રાપ્ત
૫૮૯

થાઓ.

હે વાયો-દુષ્ટોની હિંસા - નાશ કરનાર ! આદાન-પ્રદાન યોગ્ય પદાર્થોને પણ આ-પ્રાપ્ત થાઓ. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ અને વિદ્યુત્ સર્વમાં વ્યાપક બનીને સર્વ વસ્તુઓનો સંપર્ક કરે છે, તેમ સજ્જનોએ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે સર્વ સાધનોનો ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૪)

આ વાં ધિયોં વવૃત્યુરધ્વરાં ઉપેમમિન્દું મર્મજન્ત વાજિનમાશુમત્યં ન વાજિનમ્ ।
તેષાં પિબતમસ્મયૂ આ નોં ગન્તમિહોત્યા ।

इन्द्रवायू सुतानामद्रिभिर्युवं मदाय वाजदा युवम् ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્રવાયૂ-સૂર્ય અને વાયુની સમાન સભા-સેનાધીશો ! જે ઉપદેશકો અને અધ્યાપકો વિદ્વાનજનો વામ્-તમારા ધિયઃ-બુદ્ધિ અને ક્રમો વા અધ્વરાન્-હિંસા ન કરનારાજનો ઇમમ્-એ ઇન્દુમ્-પરમ ઐશ્વર્ય અને વાજિનમ્-પ્રશંસિત વેગયુક્ત આશુમ્-કામમાં શીઘ્રતા કરનારા વાજિનમ્-અનેક શુભ લક્ષણોયુક્ત અત્યમ્-નિરંતર ગમન કરતા ઘોડાઓની ન-સમાન આ, વવૃત્યુઃ-સારી રીતે વર્તે, કાર્યમાં લાવે અને પરમ ઐશ્વર્યને ઉપ, મર્મજન્ત-સમીપમાં અત્યંત શુદ્ધ કરે તેષામ્-તેના અદ્રિભિઃ-સારી રીતે પર્વતનો ટૂકડો = પથ્થર વા ખાંડણિયા સાંબેલાથી સુતાનામ્-સિદ્ધ કરે અર્થાત્ કૂટીને પીસીને પદાર્થોના રસને મદાય-આનંદને માટે યુવમ્-તમે બન્ને પિબતમ્-પાન કરો; તથા અસ્મયૂ-અમારી સમાન આચરણ કરીને વાજદા-વિજ્ઞાન પ્રદાતા યુવમ્-તમે બન્ને આ સંસારમાં કૃત્યા-રક્ષા આદિ ઉત્તમ ક્રિયાથી નઃ-અમને આગન્તમ્-પ્રાપ્ત થાઓ. (૫)

ભાવાર્થ : જે ઉપદેશકો અને અધ્યાપકો મનુષ્યોની બુદ્ધિને શુદ્ધ કરીને સુશિક્ષિત ઘોડાઓની સમાન તેનાથી પરાક્રમ કરાવે છે તેઓ આનંદના ભાગી બને છે. (૫)

इमे वां सोमा अप्स्वा सुता इहाध्वर्युभिर्भरमाणा अयंसत वायो शुक्रा अयंसत ।
एते वामभ्यंसृक्षत तिरः पवित्रमाशवः ।

युवायवोऽति रोमाण्यव्यया सोमासो अत्यव्यया ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે પરમ ઐશ્વર્યવાન અને વાયો-વાયુની સમાન બળવાન પુરુષ ! જે ઇમે-ઇહ-આ સંસારમાં અદ્વર્યુભિઃ-યજ્ઞના ઈચ્છુકોને અપ્સુ-જળમાં સુતાઃ-ઉત્પન્ન કરેલી સોમાઃ-મહાન ઔષધિ ભસ્માણાઃ-પુષ્ટિ કરીને તમે બન્ને ને અયંસત-આપે અને શુક્રાઃ-શુદ્ધ તે અયંસત-ગ્રહણ કરે; વા જે એતે-એ આશવઃ-એકત્ર થાય અને યુવાયવઃ-તમારા બન્નેની ઈચ્છા કરતા સોમાસઃ-ઐશ્વર્યયુક્ત અવ્યયા-નાશ રહિત અતિ રોમાણિ-અત્યંત રોમ અર્થાત્ નાળિયેરની જટા - છોતાના આકાર અતિ, અવ્યયા-સનાતન સુખોની સમાન તિરઃ-તિર્યક્ પવિત્રમ્-શુદ્ધિકારક પદાર્થો અને વામ્-તમે બન્ને અભિ-અસૃક્ષત-સર્વત્રથી સિદ્ધ કરે, તેનું તમે પાન કરે અને સારી રીતે પ્રાપ્ત થાઓ.(૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેના સેવનથી દેહ તથા સ્વસ્થ શરીર અને આત્મા થાય છે તથા જે

અન્તઃકરણને શુદ્ધ કરે છે, તેનું તમે નિત્ય સેવન કરો. (૬)

અતિ વાયો સસતો યાહિ શશ્વતો યત્ર ગ્રાવા
વદતિ તત્ર ગચ્છતં ગૃહમિદ્રશ્ચ ગચ્છતમ્ ।
વિ સૂનૃતા દદૃશે રીયતે ઘૃતમા પૂર્ણયા નિયુતા
યાથો અધ્વરમિન્દ્રશ્ચ યાથો અધ્વરમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે વાયો-વાયુ સમાન બલિષ્ઠ વિદ્વાન ! આપ સસતઃ-અવિદ્યાનું ઉલ્લંઘન કરેલ અને શશ્વતઃ-સનાતન વિદ્યાથી યુક્ત પુરુષોને યાહિ-પ્રાપ્ત થાઓ.

યત્ર-જ્યાં ગ્રાવા-મેધાવી = ધીરબુદ્ધિ પુરુષ અતિ,વદતિ-અત્યંત ઉપદેશ કરે છે, તત્ર-ત્યાં આપ ચ-અને ઇન્દ્રઃ-ઐશ્વર્યયુક્ત મનુષ્ય ગચ્છતમ્-જાઓ, અને ગૃહમ્-ગૃહમાં ગચ્છતમ્-જાઓ, સૂનૃતા-ઉત્તમ શિક્ષિત સત્યપ્રિય વાણી, વિ,દદૃશે-વિશેષતાથી જોવામાં આવે છે અને ઘૃતમ્-પ્રકાશિત વિજ્ઞાનનો આ, રીયતે-સમ્યક્ સંબંધ થાય અર્થાત્ મળે ત્યાં પૂર્ણયા-પૂર્ણ નિયુતા-અભિલ અંગયુક્ત વાયુની ગતિ સમાન ગતિથી જે આપ ઇન્દ્રઃ-ચ-અને ઐશ્વર્યવાન જન અધ્વરમ્-અહિંસા આદિ લક્ષણ ધર્મને યાથઃ-પ્રાપ્ત થાઓ છો, તે તમે બન્ને અધ્વરમ્-યજ્ઞને પ્રાપ્ત યજ્ઞને યાથઃ-પ્રાપ્ત થાઓ છો. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો, જે દેશમાં અથવા સ્થાનમાં આપ વિદ્વાનો સત્યનો ઉપદેશ કરે, તે સ્થાન પર જઈને તેઓના ઉપદેશનું નિત્ય શ્રવણ કરે. જેથી તેઓ વિદ્યાયુક્ત વાણી, સત્યવિજ્ઞાન અને ધર્મનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી શકે. (૭)

અત્રાહ તદ્વહેથે મધ્વ આહૃતિં યમશ્વત્થમ્પતિષ્ઠન્ત
જાયવોઽસ્મે તે સન્તુ જાયવઃ ।
સાકં ગાવઃ સુવતે પચ્યતે યવો ન તે વાયુ ડપં દસ્યન્તિ
ધેનવો નાપં દસ્યન્તિ ધેનવઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે વાયો-વાયુ સમાન વિદ્વાન ! જે અધ્યાપક અને ઉપદેશક અત્રાહ-અહિં નિશ્ચયથી તત્-તે વિષયને વહેથે-પ્રાપ્ત કરાવે છે; વા જેમ અશ્વત્થમ્-પીપળવૃક્ષને પક્ષીઓ, તેમ જાયવઃ-જીતનારા યમ્-જે આપની ઉપતિષ્ઠન્ત-સમીપ સ્થિત હોય; અને મધ્વઃ-મધુર વિજ્ઞાનને આહૃતિમ્-સર્વ રીતે ગ્રહણ કરવાને ઉપસ્થિત થાય, તે-તેઓ અસ્મે-અમારી મધ્યમાં જાયવઃ-જીતનારા શૂર સન્તુ-થાય, એમ સારી રીતે આચરણ કરીને તે આપની ગાવઃ-ગાયો સાકમ્-સાથે સુવતે-વિયાતી યવઃ-મળેલ વા પૃથક્-પૃથક્ વ્યવહાર સાથે પચ્યતે-સિદ્ધ થાય તથા ધેનવઃ-ગાયો જેમ અપ, દસ્યન્તિ-નષ્ટ થતી નથી, ન-તેમ ધેનવઃ-વાણી ન;ઉપ, દસ્યન્તિ-નષ્ટ થતી નથી. (૮)

ભાવાર્થ : જો સર્વ મનુષ્યો દ્વારા શ્રેષ્ઠજનોના સંગની કામના અને પરસ્પર પ્રીતિ કરવામાં આવે, તો તેની વિદ્યાનો તથા બળનો હ્રાસ અને ભેદ બુદ્ધિ ઉત્પન્ન થાય નહિં. (૮)

इमे ये ते सु वायो बाह्वोजसोऽन्तर्नदी ते पतयन्त्युक्षणो महि ब्राधन्त उक्षणः ।
धन्वञ्चिद् ये अनाशवो जीराश्चिदगिरौकसः ।

सूर्यस्येव रश्मयो दुर्नियन्तवो हस्तयोर्दुर्नियन्तवः ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે વાયો-વિદ્વાન ! જે-જે ઇમે-એ યોદ્ધાજન તે-આપની સહાયથી બાહ્વોજસ:-ભુજાઓના બળની અન્ત:-મધ્યે સુ, પતયન્તિ-પાલકની સમાન આચરણ કરે છે, તેને ઉક્ષણ:-સિંચવામાં સમર્થ કરો.

યે- જે તે-આપના ઉપદેશથી મહી-બહુજ બ્રાધન્ત:-વર્ધમાન વધીને સારી રીતે પાલકની સમાન આચરણ કરે છે તેઓને ઉક્ષણ:-બળપ્રદાન કરો.

જે ધન્વન્-અન્તરિક્ષમાં નદી-નદીની ચિત્-સમાન વર્તમાન અનાશવ:-કોઈમાં વ્યાપ્ત નહિ જીરા:-વેગવાન અગિરૌકસ:-જેનું અવિદ્યમાન પાણીની સાથે રહેવાનું સ્થાન-ગૃહ દુર્નિયન્તવ-દુઃખથી ગ્રહણ કરવા યોગ્ય તે રશ્મય:-કિરણ જેમ સૂર્યસ્યેવ-સૂર્યને તેમ ચિત્-અને હસ્તયો:-પોતાના બાહુબળથી શત્રુઓને દુર્નિયન્તવ:-દુઃખથી ગ્રહણ કરવા યોગ્ય સારી પાલના કરનારાની સમાન આચરણ કરે, તે વીરોનો નિરંતર સત્કાર કરો. (૯)

ભાવાર્થ :- રાજપુરુષોએ બહુજ બળયુક્ત અને શત્રુઓથી ન ડરનારા વીર પુરુષોને સદા સેનામાં રાખવા જોઈએ; જેથી રાજાનું તેજ સદા વધતું રહે. (૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં મનુષ્યોનાં પરસ્પરના વર્તાવનાં વર્ણનથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૩૫)

સૂક્ત-૧૩૬

प्र सु ज्येष्ठं निचिराभ्यां बृहन्नमो हव्यं मतिं भरता मृडयद्भ्यां स्वादिष्ठं
मृडयद्भ्याम् । ता सम्राजा घृतासुती यज्ञेयज्ञ उपस्तुता ।

अथैनोः क्षत्रं न कुतश्चनाधृषे देवत्वं नू चिदाधृषे ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે મૃડયદ્ભ્યામ્-સુખદાતાઓની સમાન, નિચિરાભ્યામ્-નિરંતર સનાતન મૃડદ્ભ્યામ્-સુખકારક અધ્યાપક અને ઉપદેશકની સાથે જ્યેષ્ઠમ્-અત્યંત પ્રશંસાને યોગ્ય, સ્વાદિષ્ટમ્-અત્યંત સ્વાદ, હવ્યમ્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થ, બૃહત્-બહુ જ નમ:-અન્ન અને મતિમ્-બુદ્ધિને નુ-શીઘ્ર પ્ર, સુ, ભરત-સમ્યક્ સુંદરતાથી સ્વીકાર કરો. યજ્ઞે યજ્ઞે-પ્રત્યેક યજ્ઞમાં ઉપસ્તુતા-પ્રાપ્ત ગુણોથી પ્રશંસિત ઘૃતાસુતી-જેનો ધીની સાથે પદાર્થોનો સાર કાઢવો, સમ્રાજા-જે સમ્યક્, પ્રકાશમાન, તા-તે ઉક્ત મહાશયોને

સારી રીતે ગ્રહણ કરો. અથ-અનન્તર **एकोः-બન્ને ક્ષત્રમ્-રાજ્ય આધૃષે-ધૃષ્ટતાથી ચિત્-અને દેવત્વમ્-વિદ્વતા આધૃષે-ધૃષ્ટતાથી = ધિક્કારથી કુતશ્ચન-ક્યારેક ન-નાશ પામે નહિ. (૧)**

ભાવાર્થ : જેઓ બહુજ સમયથી પ્રવૃત થયેલ અધ્યાપકો અને ઉપદેશકોની પાસે વિદ્યા અને ઉત્તમ ઉપદેશોને શીઘ્ર ગ્રહણ કરે છે, તેઓ ચક્રવર્તી રાજા બની શકે છે. આ સંસારમાં એવા લોકો ને ઐશ્વર્યનો કદી દ્રાસ થતો નથી. (૧)

**अदर्शि गातुरवे वरीयसी पन्था ऋतस्य समयंस्त रश्मिभिश्
चक्षुर्भगस्य रश्मिभिः। द्युक्षं मित्रस्य सादनमर्यम्णो वरुणस्य च।
अथा दधाते बृहदुक्थ्यं वय उपस्तुत्यं बृहद् वयः ॥ २ ॥**

પદાર્થ : જેથી **उवे-બહુ જ વિસ્તારને માટે વહીયસી-અત્યંત શ્રેષ્ઠ ગાતુઃ-ભૂમિ અર્દર્શિ-દેખાતી,** વા જ્યાં સૂર્યના **रश्मिभिः-કિરણો સમાન રશ્મિભિઃ- કિરણોની સાથે ચક્ષુઃ-નેત્ર, ઋતસ્ય-જળ અને ભગસ્ય-સૂર્યની સમાનધનનો પન્થા-માર્ગ સમયંસ્ત-મળે છે,** વા **मित्रस्य-મિત્ર, અર્યમ્ણઃ-ન્યાયાધીશ અને વસ્ણસ્ય-શ્રેષ્ઠ પુરુષનો દ્યુક્ષમ્-પ્રકાશ લોકમાં સાદનમ્-જેમાં સ્થિર થાય તે ઘર પ્રાપ્ત થાય છે. અથ-અથવા જેમ વયઃ-બહુજ પક્ષીઓ બૃહત્-એક મોટા કામને, તેમ જે વયઃ-મનોહર જન ઉપસ્તુત્યમ્-સમીપમાં પ્રશંસિત બૃહત્-મહાન અને ઉક્થ્યમ્-કહેવા યોગ્ય કામને ધારણ કરે છે ચ-અને જે બે મળીને કોઈ કામને દધાતે-ધારણ કરે છે, તેઓ સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. (૨)**

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યના પ્રકાશથી પૃથિવી પર માર્ગ દેખાય છે, તેમ જ ઉત્તમ વિદ્વાનોના સંગથી સત્યવિદ્યાઓ પ્રકાશિત થાય છે.

જેમ પક્ષી ઉત્તમ આશ્રય પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત થાય છે, તેમ સદ્ વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરીને મનુષ્યો સદા સુખી રહે છે. (૨)

**ज्योतिष्मतीमदितिं धारयत्क्षितिं स्वर्वतीमा संचेते दिवेदिवे जागृवांसां दिवेदिवे।
ज्योतिष्मत् क्षत्रमांशाते आदित्या दानुनस्पतीं।
मित्रस्तयोर्वरुणो यातयज्जनोऽर्यमा यातयज्जनः ॥ ३ ॥**

પદાર્થ : જેમ આદિત્યા-સૂર્ય અને પ્રાણ દિવે દિવે-પ્રતિદિન સ્વર્વતીમ્-બહુ સુખકારી ધારયત્ક્ષિતિમ્-અને ભૂમિને ધારણ કરીને, **ज्योतिष्मतीम्-બહુ પ્રકાશન અદિતિમ્-દ્યુલોકનો આસચેતે-સર્વત્રથી સંબંધ કરે છે,** તેમ **यातयज्जनः-જેના શ્રેષ્ઠ પ્રયત્ન કરનારા મનુષ્ય છે, તે અર્યમા-ન્યાયાધીશ, વસ્ણઃ-શ્રેષ્ઠ પ્રાણ તથા यातयज्जनः-પુરુષાર્થવાન પુરુષ મિત્રઃ-સર્વનો પ્રાણ અને दानुनः-દાનનું પતી-પાલન કરનારા જાગૃવાંસા-સર્વ કાર્યોમાં જાગૃત સભા અને સેનાધીશ દિવે દિવે-પ્રતિદિન જ્યોતિષ્મત્-બહુ ન્યાયયુક્ત ક્ષત્રમ્-રાજ્યને આજ્ઞાતે-પ્રાપ્ત થાય છે, તયોઃ-તે બન્નેના પ્રભાવથી સમસ્ત પ્રજા અને સૈનિકો અત્યંત સુખને પ્રાપ્ત થાય છે. (૩)**

ભાવાર્થ : જેઓ સૂર્ય અને પ્રાણની સમાન તથા યોગીની સમાન સચેતન બનીને, વિદ્યા, વિનય અને ધર્મ દ્વારા સેનાઓ અને પ્રજાઓને પ્રસન્ન રાખે છે, તેઓ અત્યધિક યશને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩)

અયમિત્રાય વરુણાય શન્તમ્: સોમો ભૂત્વવપાનેષ્વાભંગો દેવો દેવેષ્વાભંગ: ।
તં દેવાસો જુષેરત વિશ્વે અદ્ય સજોષસ: ।

તથા રાજાના કરથો યદીમહઃ ઋતાવાના યદીમહે ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જેમ અયમ્-એ અવયાનેષુ-અત્યંત રક્ષા આદિ વ્યવહારોમાં મિત્રાય-સર્વના મિત્ર અને વરુણાય-સર્વની ઉત્કૃષ્ટતાને માટે અભગ:-સમસ્ત ઐશ્વર્ય, શન્તમ:-અત્યંત સુખ સોમ:-અને સુખયુક્ત ઐશ્વર્યકારક ન્યાય ભૂતુ-બને, તેમ જે દેવ:-સમ્યક સુખ પ્રદાતા, દેવેષુ-દિવ્ય વિદ્વાનો અને દિવ્યગુણોમાં આભગ:-સમસ્ત સૌભાગ્ય યુક્ત હોય, તમ્-તેને અદ્ય-આજ સજોષસ:-સમાન ધર્મનું સેવન કરનારા વિશ્વે-સમસ્ત દેવાસ:-વિદ્વાનજન્ જુષેરત-સેવન કરે ;વા તેનાથી પ્રીતિ કરે અને જેમ યત્-જે વ્યવહારને રાજાના-પ્રકાશમાન સભા - સેનાપિત કરથ:-કરે, તથા-તેમ તે વ્યવહારને અને ઈમહે-માંગીએ અને જેમ ઋતાવાના-સત્યનો સંબંધ કરનારા યત્-જે કામને કરે, તેમ તેને અમે પણ ઈમહે-યાચના કરીએ, માંગીએ. (૪)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જેમ આપ્તજન ધર્મયુક્ત વ્યવહારથી ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરીને તેનો સર્વના ઉપકારક કાર્યમાં ખર્ચ કરે છે અને જેમ સત્યના જિજ્ઞાસુઓ વિદ્વાનોથી યાચના કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્ય પોતાના ઐશ્વર્યને ઉત્તમ કાર્યોમાં ખર્ચ કરે તથા વિદ્વાનોથી વિદ્યાની યાચના કરે. (૪)

યો મિત્રાય વરુણાયાવિધ્વજ્જનોઽનુર્વાણં તં પરિ પાતો અંહસો દાશ્વાંસમ્ મર્ત્તમંહસ: ।

તમર્યમાભિ રક્ષત્યજૂયન્તમનુ વ્રતમ્ ।

ઉક્થૈર્ય ઇનો: પરિભૂષતિ વ્રતં સ્તોમૈરાભૂષતિ વ્રતમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે સભા - સેનાધીશો ! ય:-જે જન:-યશથી પ્રસિદ્ધ પામેલ મિત્રાય-સર્વોપકારક વરુણાય-સર્વોત્તમ સ્વભાવવાળા મનુષ્યને માટે તમે બન્ને અવિધત્-સેવા કરે, તમ્-તે અનુર્વાણમ્-વેર આદિ દોષોથી રહિત મર્ત્તમ્-મનુષ્યને અંહસ:-દુષ્ટ આચરણથી તમે બન્ને પરિપાત:-સર્વથી બચાવો તથા તમ્-તે દાશ્વાંસમ્-વિદ્યાદાતા મનુષ્યને અંહસ:-પાપથી બચાવો ય:-જે અર્યમા-ન્યાયકારી સજ્જન વ્રતમ્-સત્યાચરણ કરવા અને ઋજૂયન્તમ્- પોતે કોમલતા ઈચ્છનાર મનુષ્યની અભિરક્ષતિ-સર્વત્રથી રક્ષા કરે છે તેની તમે બન્નેના અનુ-પછી રક્ષા કરો જે ઇનો:-એ વ્રતમ્-સુંદરશીલને પરિભૂષતિ-સર્વત્રથી સુશોભિત કરે છે, વા સ્તોમૈ:-પ્રશંસા કરવા યોગ્ય વ્યવહારોથી વ્રતમ્-સુંદરશીલને આભૂષતિ-સારી રીતે શોભિત કરે છે, તેઓનું સર્વ વિદ્વાનો નિરંતર પાલન કરે. (૫)

ભાવાર્થ : જેઓ ધર્મ અને અધર્મને જાણવા ઈચ્છે તથા ધર્મનું ગ્રહણ અને અધર્મનો ત્યાગ કરવા

ઈચ્છે, તેઓને વિદ્વાનો ભણાવીને તથા ઉપદેશ આપીને વિદ્યા ધર્મ આદિ શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોથી સર્વત્રથી સુભૂષિત કરે છે. (૫)

નમો દિવે બૃહતે રોદસીભ્યાં મિત્રાય વોચં વરુણાય મીદુષે સુમૃઢીકાય
મીદુષે । ઇન્દ્રમગ્નિમુપં સ્તુહિ દ્યુક્ષમર્યમણં ભગમ્ ।

જ્યોગ્જીવન્તઃ પ્રજયા સચેમહિ સોમસ્યોતી સચેમહિ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ હું બૃહતે-બહુ જ દિવે-પ્રકાશકને માટે વા રોદસીભ્યામ્-પ્રકાશ અને પૃથિવીથી મિત્રાય-સર્વના મિત્ર, વરુણાય-શ્રેષ્ઠ, મીદુષે-શુભ ગુણોનું સિંચન કરનાર, સુમૃઢીકાય-સુખ કરનાર અને મીદુષે-સુખ પ્રદાતાને માટે નમઃ-સત્કાર વચન વોચમ્-કહું, તેમ આપ પણ કહો.

જેમ હું ઇન્દ્રમ્-પરમૈશ્વર્યવાન અગ્નિમ્-અગ્નિની સમાન વર્તમાન, દ્યુક્ષમ્-પ્રકાશયુક્ત, અર્યમણમ્-ન્યાયાધીશ અને ભગમ્-ધર્મનું સેવન કરનારને કહું, તેમ આપ ઉપ, સ્તુહિ-તેની સમીપ પ્રશંસા કરો.

જેમ જીવન્તઃ-પ્રાણ ધારણ માટે જીવતા અમે પ્રજયા-સુસંતાન આદિ સહિત પ્રજાની સાથે જ્યોક્-નિરંતર સચેમહિ-સંબંધ થાય અને સોમસ્ય-ઐશ્વર્યની કૃતી-રક્ષા આદિ ક્રિયાની સાથે સચેમહિ-સંબંધ થાય, તેમ આપનો પણ સંબંધ થાઓ. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોનું અનુકરણ કરીને, (સ્વયંને) પદાર્થ વિદ્યાને માટે પ્રવૃત્ત કરીને તથા પ્રજા અને ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને નિરંતર પ્રસન્ન રહેવું જોઈએ. (૬)

કૃતી દેવાનાં વ્યમિન્દ્રવતો મંસીમહિ સ્વયંશસો મરુદ્ધિઃ ।

અગ્નિર્મિત્રો વરુણઃ શર્મ યંસન્ તદ્શ્યામ મઘવાનોં વ્યં ચ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મસદ્ધિઃ-પ્રાણોની સાથે શ્રેષ્ઠ અગ્નિઃ-વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિ, મિત્રઃ-મિત્ર, વરુણઃ-ચંદ્રમા, શર્મ-સુખ યંસન્-આપે છે, તેમ તત્-તે સુખને ઇન્દ્ર વન્તઃ-બહુ જ ઐશ્વર્યયુક્ત સ્વયંશસઃ-જેને પોતાનો યશ વિદ્યમાન છે, તે વ્યમ્-અમે દેવાનામ્-સત્યની કામના કરનાર વિદ્વાનોની કૃતી-રક્ષા આદિ ક્રિયાથી મંસીમહિ-જાણીએ; ચ-અને એથી વ્યમ્-અમે મઘવાનઃ-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત કલ્યાણને અશ્યામ-ભોગવીએ. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ આ સંસારમાં પૃથિવી આદિ પદાર્થ સુખ અને ઐશ્વર્ય કરનારા છે, તેમ વિદ્વાનોની શિક્ષા અને સંગતિ છે. તેના દ્વારા સુખ અને ઐશ્વર્યવાન બનીને નિરંતર પ્રસન્ન રહીએ. (૭)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વાયુ અને ઈન્દ્ર આદિ પદાર્થોના દૃષ્ટાન્તથી મનુષ્યોને માટે વિદ્યા અને સુશિક્ષાનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૩૬)

સૂક્ત-૧૩૭

सुषुमा यातमद्रिभिर्गोश्रीता मत्सरा इमे सोमासो मत्सरा इमे ।

आ राजाना दिविस्पृशास्मत्रा गन्तमुप नः ।

इमे वां मित्रावरुणा गवाशिरः सोमाः शुक्रा गवाशिरः ॥ १ ॥

पદાર્થ : હે મિત્રાવરુણા-પ્રાણ અને ઉદાનની સમાન વર્તમાન દિવિસ્પૃશા-શુદ્ધ વ્યવહારમાં સ્પર્શ કરનારા રાજાના-પ્રકાશમાન સભા-સેનાધીશો ! જે ઇમે-એ અદ્રિભિઃ-મેઘોથી ગોશ્રીતાઃ-કિરણોને પ્રાપ્ત મસ્તરાઃ-આનંદ પ્રાપ્ત અમે સુષુમ-કોઈ વ્યવહારને સિદ્ધ કરે તેઓને વામ્-તમે બન્ને આયાતમ્-આવો, સારી રીતે પ્રાપ્ત થાઓ.

જે ઇમે-એ મત્સરાઃ-આનંદ પહોંચાડનારી સોમાસઃ-સોમવલ્લી આદિ ઓષધી છે, તેને અસ્મત્રા-અમને સારી રીતે પહોંચાડો.

જે ઇમે-ગવાશિરઃ-ગાયો વા ઈન્દ્રિયોમાં વ્યાપ્ત થાય તેની સમાન શુક્રાઃ-શુદ્ધ સોમાઃ-ઐશ્વર્ય-યુક્ત પદાર્થ અને ગવાશિરઃ-ગાયો વા કિરણોથી વ્યાપ્ત થાય તેની તથા નઃ-અમારી ઉપાગન્તમ્-સમીપ પહોંચો. (૧)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જેમ પૃથિવી આદિ પદાર્થો જીવનના હેતુ છે, તેમ મેઘ અત્યંત પ્રાણદાયી છે. જેમ એ વર્તાવ કરે છે, તેમ મનુષ્ય કરે. (૧)

इम आ यातमिन्द्रवः सोमासो दध्याशिरः सुतासो दध्याशिरः ।

उत वामुषसो बुधि साकं सूर्यस्य रश्मिभिः ।

सुतो मित्राय वरुणाय पीतये चारुर्ऋताय पीतये ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી અને અધ્યાપક ! જે ચારુ-સુંદર મિત્રાય-મિત્રને માટે પીતયે-પીવાને તથા વરુણાય-ઉત્તમજનને માટે વ્રહ્માય-સત્યાચરણ અને પીતયે-પીવાને ઉષસઃ-પ્રભાતકાળના બુધિ-પ્રબોધમાં સૂર્યમંડળના રશ્મિભિઃ-કિરણોની સાકમ્-સાથે ઓષધિઓનો રસ સુતઃ-સર્વત્રથી સિદ્ધ કરેલ છે, તેને તમે આયાતમ્-પ્રાપ્ત કરો; તથા વામ્-તમારા માટે ઇમે-એ ઇન્દ્રવઃ-આદ્ર અને ટપકતો સોમાસઃ-દિવ્ય ઓષધિઓનો રસ તથા દધ્યાશિરઃ-જે પદાર્થનું દહીં સાથે ભોજન કરવામાં આવે છે તેની સમાન દધ્યાશિરઃ-દહીંયુક્ત ભોજન સુતાસઃ-સિદ્ધ કરે છે, ઉત-તેને પણ પ્રાપ્ત કરો. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા આ સંસારમાં જેટલા રસ અને ઓષધિઓ બનાવવા યોગ્ય હોય, તે સર્વને; મિત્રતા, ઉત્તમકર્મોથી સેવન અને આલસ્ય આદિના નાશને માટે સમર્પિત કરી દેવા જોઈએ. (૨)

तां वां धेनुं न वासरीमंशुं दुहन्त्यद्रिभिः सोमं दुहन्त्यद्रिभिः ।

अस्मत्रा गन्तमुप नोऽर्वाञ्चा सोमपीतये ।

अयं वां मित्रावरुणा नृभिः सुतः सोम आ पीतये सुतः ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે મિત્રાવરુણા-પ્રાણ અને ઉદાનની સમાન સર્વમિત્ર અને સર્વોત્તમ સજ્જનો ! ન:- અમારી અર્વાઞ્ચા-અભિમુખ થઈને તમે વામ્-તમારી જે વાસરીમ્-નિવાસ કરનારી ધેનુમ્-ગાયોની ન-સમાન અદ્વિભિઃ-પથ્થરોથી અંશુમ્-વધેલી સોમવલ્લીને દુહન્તિ-દોહીને, જલાદિથી પૂર્ણ કરીને વા અદ્વિભિઃ-મેઘોથી સોમપીતયે-શ્રેષ્ઠ ઔષધિ રસનું જે પાન કરવામાં આવે, તેને માટે સોમમ્-ઐશ્વર્યને દુહન્તિ-પરિપૂર્ણ કરીને તામ્-તેને અસ્મત્રા-અમારી ઉપાગન્તમ્-સમીપ પહોંચાડો જે અયમ્-એ નૃભિઃ-મનુષ્યોએ સોમઃ-સોમવલ્લી આદિ લતાઓનો રસ સુતઃ-સિદ્ધ કરેલ છે, તે વામ્-તમારા માટે આપીતયે-સારી રીતે પીવા માટે સુતઃ-સિદ્ધ કરવામાં આવેલ છે. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ દૂધાળી ગાયો સુખોને સોમલતા આદિનો રસ સર્વ રોગોને નષ્ટ કરે છે. (૩)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સોમલતાના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની સાથે પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૩૭)

સૂક્ત-૧૩૮

પ્રપ્ર પૂષ્ણાષ્ટુવિજાતસ્ય શસ્યતે મહિત્વમસ્ય તવસો ન તન્દતે સ્તોત્રમસ્ય ન તન્દતે । અર્ચામિ સુમ્નયન્નહમન્ત્યૂતિં મયોભુવમ્ ।

વિશ્વસ્ય યો મન આયુયુવે મ્ખો દેવ આયુયુવે મ્ખઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જે અસ્ય-એ તુવિજાતસ્ય-બહુઓમાં પ્રસિદ્ધ પૂષ્ણઃ-પ્રજા પોષક રાજપુરુષનો મહિત્વમ્-મહિમા પ્રપ્ર, શસ્યતે-અત્યંત પ્રશંસિત કરવામાં આવે છે; વા જે અસ્ય-એના તવસઃ-બળની સ્તોત્રમ્-સ્તુતિ ન, તદન્તે-પ્રશંસકજન નષ્ટ કરતા નથી અર્થાત્ છોડતા નથી અને વિદ્યાને ન તન્દતે-નષ્ટ કરતા નથી; વા યઃ-જે મ્ખઃ-વિદ્યા પ્રાપ્ત કરેલ દેવઃ-વિદ્વાન વિશ્વસ્ય-સંસારના મનઃ-અન્તઃકરણને આયુયુવે-સર્વત્રથી બાંધીને અર્થાત્ પોતાની તરફ ખેંચે છે; વા જે મ્ખઃ-યજ્ઞની સમાન વર્તમાન સુખનો આયુયુવે-સારી રીતે બાંધે છે, તે અનયયૂતિમ્-પોતાની નજીક રક્ષા આદિ ક્રિયા રાખનાર અને મયોભુવમ્-સુખની ભાવના કરાવનારા પ્રજાપોષકનું સુમ્નયન્-સુખ ઈચ્છીને અહમ્-હું અર્ચામિ-સત્કાર કરું છું. (૧)

ભાવાર્થ : જેઓ શુભ કર્મ કરે છે, તેઓ અત્યંત પ્રશંસિત બને છે. જે સુશીલતા અને વિનય દ્વારા સર્વના ચિત્તને ધર્મયુક્ત કર્મોમાં બાંધે છે, તેઓનો સર્વેએ સત્કાર કરવો જોઈએ. (૧)

प्र हि त्वा पूषन्नजिरं न यामनि स्तोमैभिः कृण्व ऋणवो यथा मृध उष्ट्रो
न पीपरो मृधः। हुवे यत्त्वा मयोभुवं देवं सख्याय मर्त्यः।

अस्माकमाङ्गूषान् द्युम्निस्कृधि वाजेषु द्युम्निस्कृधि ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે પૂષન-પુષ્ટિકર્તા ! યથા-જેમ આપ મૃધ:-સંગ્રામોને ઋણવ:-પ્રાપ્ત કરો અર્થાત્ અમને પહોંચાડો, વા ઉષ્ટ્ર:-ઊંટની ન-સમાન મૃધ:-સંગ્રામોને પીપર:-પાર કરાવો અર્થાત્ તેનાથી ઉદ્ધાર કરો, તેમ સ્તોમેભિઃ-સ્તુતિઓથી યામનિ-પહોંચાડનારા વ્યવહારમાં અજિસ્મ-જ્ઞાનવાન અર્થાત્ અતિ પ્રવીણની ન-સમાન ત્વા-આપને પ્ર, કણ્વે-પ્રશંસિત કરું છું અને આપને હું હુવે-હઠથી બોલાવું છું યત્-જે કારણે સખ્યાય-મિત્રતાને માટે મયોભુવમ્-સુખકારક દેવમ્-મનોહર ત્વા-આપને મર્ત્ય:-મરણ ધર્મા મનુષ્યમાં હઠથી બોલાવું છું. એ કારણે અસ્માકમ્-અમારા આઙ્ગૂષાન્-વિદ્યા પામેલ વીરોને દ્યુમ્નિ:-યશસ્વી કૃધિ-કરો અને વાજેષુ-સંગ્રામોમાં દ્યુમ્નિ:-પ્રશંસિત કીર્તિમાન હિ-જ કૃધિ-કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો બુદ્ધિમાન વિદ્યાર્થીઓને વિદ્યાવાન બનાવે અને શત્રુઓને જીતી લે, તેઓ કીર્તિની સાથે 'માનનીય' થાય છે. (૨)

यस्य ते पूषन्सख्ये विपन्यवः क्रत्वा चित्सन्तोऽवसा बुभुजिर इति क्रत्वा
बुभुजिरे। तामनु त्वा नवीयसीं नियुतं राय ईमहे।

अहेळमान उरुशंसु सरि भव वाजेवाजे सरि भव ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે પૂષન્-પુષ્ટિકર્તા વિદ્વાન્ ! યસ્ય-જેની તે-આપની સખ્યે-મિત્રતામાં ક્રત્વા-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિથી અવસા-રક્ષા આદિની સાથે વિપન્યવ:-વિશેષરૂપથી પોતાની પ્રશંસાના ઈચ્છુક જન નિયુતમ્-અસંખ્ય રાય:-રાજ્ય લક્ષ્મીઓને બુભુજિરે-ભોગવે છે, ઇતિ-એ રીતે ચિત્-જ સન્ત:-બનીને ક્રત્વા-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિથી જે અસંખ્ય રાજ્યલક્ષ્મીને બુભુજિરે-ભોગે છે તામ્-તે નવીયસીમ્-અત્યન્ત નવીન ઉક્તશ્રીને તથા અનુ-અનુકૂળતાથી ત્વા-આપને અમે ઈમહે-માંગીએ છીએ.

હે ઉક્ષાંસ-બહુ જ પ્રશંસિત વિદ્વાન્ ! અમારાથી અહેઢમાન:-અનાદર ન પામીને આપ વાજેવાજે-પ્રત્યેક સંગ્રામમાં સરી-પ્રશંસિત જ્ઞાતાજન જેના વિદ્યમાન છે એવા ભવ-થાઓ અને ધર્મયુક્ત વ્યવહારમાં પણ સરી-ઉક્ત ગુણવાન ભવ-બનો. (૩)

ભાવાર્થ : જેઓ બુદ્ધિમાનોની સંગતિ તથા મિત્રતાથી નવી-નવી વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ બુદ્ધિમાન બનીને વિજયી થાય છે. (૩)

अस्या ऊ षू ण उप सातये भुवोऽहेळमानो ररिवाँ अजाश्व श्रवस्यतामजाश्व।
ओ षू त्वा ववृतीमहि स्तोमैभिर्दस्म साधुभिः।

नहि त्वां पूषन्नतिमन्यं आघृणे न तैः सख्यमपहृवे ॥ ४ ॥

पदार्थ : હે પૂષન્-પુષ્ટિકારક ! અજાશ્વ-જેના બકરાં અને ઘોડાઓ વિદ્યમાન છે એવા શ્રવસ્યતામ્-પોતાને ધન ઈચ્છનારમાં અજાશ્વ-જેના બકરાં-ઘોડાંઓના તુલ્ય તેની સમાન હે વિદ્વન્ ! આપ ન:-અમારા માટે અસ્યા:-એ શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિનો સાતયે-વિભાગ કરવા રરિવાન્-દાતા અને અહેડમાન:-સત્કાર યુક્ત સૂપ, ભુવ:-ઉત્તમતાથી સમીપ થાઓ. મરિ-હે આઘૃણે-સર્વત્ર પ્રકાશમાન પુષ્ટિકારક પુરુષ ! હું તે-આપનો સખ્યમ્-મિત્રભાવ અને મિત્રતાના કામને ન, અપહૃવે-છૂપાવું નહિ ત્વા-આપનું નહિ, અતિમન્યે-અત્યંત માન ન કરું પરંતુ આપને યથાયોગ્ય માનું ઉ-અને ઓ-હે દસ્મ-દુઃખનાશક સ્તોમેભિ:-સ્તુતિઓથી યુક્ત સાધુભિ:-સજ્જનોની સાથે વર્તમાન અમે ત્વા-આપશ્રી સુ, વવૃતીમહિ-સારી રીતે નિરંતર વર્તન કરીએ અર્થાત્ આપને અનુકૂળ બનીએ. (૪)

ભાવાર્થ : ધાર્મિક વિદ્વાનોની સાથે પ્રસિદ્ધ રૂપમાં મિત્રતા રાખીને અનેક પ્રકારની બુદ્ધિઓ સર્વ મનુષ્યોએ પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. કદીપણ શિષ્ટ મનુષ્યોનું અપમાન ન કરવું જોઈએ. (૪)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં પુષ્ટિકર્તા વિદ્વાન તથા ધાર્મિક સામાન્યજનની પ્રશંસાનું વર્ણન હોવાથી આસૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૩૮)

સૂક્ત-૧૩૯

अस्तु श्रौषट् पुरो अग्निं धिया दध आ नु तच्छर्धो दिव्यं वृणीमह इन्द्रवायू
वृणीमहे। यद्ध क्राणा विवस्वति नाभा सन्दायि नव्यसी।

अध प्र सू न उप यन्तु धीतयो देवाँ अच्छा न धीतयः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ધીતય:-આંગળીઓની ન-સમાન ધીતય:-ધારણ કરનાર આપ ધિયા-કર્મથી ન:-અમને દેવાન્-વિદ્વાનોને અચ્છ-સારી રીતે ઉપ, યન્તુ-થાઓ. જેઓએ વિવસ્વતિ-સૂર્યમંડળમાં નાભા-મધ્યભાગની આકર્ષણ વિદ્યા અર્થાત્ સૂર્યમંડળના પ્રકાશમાં બહુ જ પ્રકાશને યન્ત્ર કલાઓથી ખેંચીને તેની ઉષ્ણતા એકત્ર કરવામાં નવ્યસી-અત્યંત નવીન શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ વા કર્મ સંદાયિ-સમ્યક્ આપ્યા તે ક્રાણા-કર્મ કરવાના હેતુ ઇન્દ્રવાયૂ-વિદ્યુત્ અને પ્રાણ હ-જ ને અમે સુ, વૃણીમહે-સુંદર રીતે ધારણ કરીએ. હું જે શ્રૌષટ્-હવિષ પદાર્થ આપનારી વિદ્યા બુદ્ધિ પુર:-પૂર્ણ અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ અને દિવ્યમ્-શુદ્ધ પ્રાણીમાં થયેલ શર્ધ:-બળને આ, દધે-સારી રીતે ધારણ કરું. યત્-જે પ્રાણ વિદ્યુત્જન્ય સુખને અમે પ્ર, વૃણીમહે-સારી રીતે સ્વીકાર કરીએ અધ-તદનંતર તત્-તે સુખ સર્વને નુ અસ્તુ-શીઘ્ર પ્રાપ્ત થાય.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ આંગળીઓ સર્વ કામોમાં ઉપયુક્ત બને છે, તેમ તમે પણ પુરુષાર્થમાં (ઉપયુક્ત) બનો. જેથી તમારામાં બળની વૃદ્ધિ થાય. (૧)

यद्ध त्यन्मित्रावरुणावृतादध्याददाथे अनृतं स्वेन मन्युना दक्षस्य स्वेन मन्युना।

युवोरित्थाधि सद्मस्वपश्याम हिरण्यम् ।

धीभिश्चन मनसा स्वेभिरक्षभिः सोमस्य स्वेभिरक्षभिः ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે મિત્રાવસ્થા-પ્રાણ અને ઉદાનની સમાન વર્તમાન સભા-સેનાધીશો ! સદમસુ-ઘરોમાં મનસા-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિથી ધીભિઃ-કામોથી સોમસ્ય-ઐશ્વર્યનું સ્વેભિઃ-નિજ ઉત્તમોત્તમ જ્ઞાન વા અક્ષભિઃ-પ્રાણની સમાન સ્વેભિઃ-નિજ અક્ષભિઃ-ઈન્દ્રિયોની સાથે વર્તાવ રાખીને અમે યુવોઃ-તમારા ઘરોમાં હિરણ્યમ્-સુવર્ણમય ધનને અધિ, અપશ્યામ-અધિક નિહાળીએ ચન-અને પણ ચત્-જે સત્ય છે, ત્યત્ હ-તેને જ ઋજ્ઞાત્-સત્ય જે ધર્માનુકુળ વ્યવહાર હોય તેને ગ્રહણ કરીએ. સ્વેન-નિજ મન્યુના-ક્રોધના વ્યવહારના દક્ષસ્ય-બળની સાથે અનૃતમ્-મિથ્યા વ્યવહારને છોડીએ, તમે પણ સ્વેન-પોતાના મન્યુના-ક્રોધ રૂપી મિથ્યા વ્યવહારને છોડો. જેમ આપ સત્ય વ્યવહારથી સત્યને અભિ, આ દદાથે-અધિક રૂપમાં ગ્રહણ કરો. ઇત્યા-એ રીતે અમે પણ ગ્રહણ કરીએ. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સત્યનું ગ્રહણ અને અસત્યનો ત્યાગ કરીને તથા પોતાના પુરુષાર્થથી પૂર્ણ બળ અને ઐશ્વર્ય (પ્રાપ્ત) કરીને પોતાના અન્તઃકરણ અને પોતાની ઈન્દ્રિયોને સત્ય કર્મમાં પ્રવૃત્ત કરવી જોઈએ. (૨)

युवां स्तोमैभिर्देवयन्तो अश्विनाश्रावयन्तइव श्लोकमायवो३ युवां हव्याभ्या३
यवः । युवोर्विश्वा अधि श्रियः पृक्षश्च विश्ववेदसा ।

पुषायन्ते वां पवयो हिरण्यये रथे दस्त्रा हिरण्यये ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-વિદ્યા અને ન્યાયનો પ્રકાશ કરનારા વિદ્વાનો ! શ્લોકમ્-તમારા યશનું આશ્રાવન્યતઇવ-સર્વત્રથી શ્રવણ કરનારા સ્તોમેભિઃ-સ્તુતિઓથી યુવામ્-તમારી દેવયન્તઃ-કામના કરનારા જન યુવામ્-તમારી અભિ-સન્મુખ હવ્યા-લેવા યોગ્ય હોમના પદાર્થોને આયવઃ-પ્રાપ્ત કરેલ વળી માત્ર એટલું જ નહિ પરંતુ હે દસ્ત્રા-દુઃખ દૂર કરનારા વિશ્વવેદસા-સમસ્ત જ્ઞાનયુક્ત ઉક્ત વિદ્વાનો ! જેમ વામ્-તમારા હિરણ્યયે-સુવર્ણમય રથે-વિહારની સિદ્ધિ કરનારા રથમાં પવયઃ-ચક્ર વા પૈડાની સમાન પુષાયન્તે-મધુરતા આદિને ભરે છે, તેમ યુવોઃ-તમારી સહાયથી હિરણ્યયે-સુવર્ણરથમાં વિશ્વાઃ-સમગ્ર અધિ-અધિક શ્રિયઃ-સંપત્તિઓને ચ-તથા પૃક્ષઃ-અન્નાદિ પદાર્થોને આયવઃ-પ્રાપ્ત થયેલ છે. (૩)

ભાવાર્થ : જે લોકો પૂર્ણ વિદ્યાવાન આપ પુરુષોનો આશ્રય કરે છે, તેઓ ધન-ધાન્ય આદિ ઐશ્વર્યોથી પૂર્ણ બની જાય છે. (૩)

अचेति दस्त्रा व्यूनाकमृण्वथो युज्जते वां रथयुजो दिविष्टिष्वध्वस्मानो
दिविष्टिषु । अधि वां स्थाम बन्धुरे रथे दस्त्रा हिरण्यये ।

पथेव यन्तावनुशासता रजोऽञ्जसाशासतारजः ॥ ४ ॥

पदार्थ : હે દસ્ત્રા-દુઃખ કરનારા વિદ્વાનો ! આપ જે નાકમ્-દુઃખ રહિત વ્યવહારને વ્યૂવચ્ચ-પ્રાપ્ત કરાવો છો તથા દિવિષ્ટિષુ-આકાશ માર્ગોમાં વામ્-તમારા રથયુજ:-રથને યુક્ત કરનારા અગ્નિ આદિ પદાર્થ વા દિવિષ્ટિષુ-દિવ્ય વ્યવહારોમાં અધ્વસ્માન:-નીચે દશામાં ન પડનાર જન યુજ્જતે-રથને યુક્ત કરે છે, તે અચેતિ-જ્ઞાન થાય છે, જાણવામાં આવે છે એથી ૩-૪ હે દસ્ત્રા-દુઃખ દૂર કરનારા રજ:-લોકોને અનુશાસતા-અનુકૂળ શિક્ષા આપવા અજ્જસા-સાક્ષાત્ રજ:-ઐશ્વર્યની શાસતા-શિક્ષા આપવા પથેવ-જેમ માર્ગમાં, તેમ આકાશમાર્ગમાં યન્તૌ-ચલાવનારાઓ વામ્-તમારા હિરણ્યયે-સુવર્ણમય બન્ધુરે-દૃઢ બંધનોથી યુક્ત રથે-વિમાન આદિ રથમાં અમે અધિ ષ્ટામ-અધિષ્ઠિત થઈએ = બેસીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત કરીને (તેઓથી) શિલ્પ વિદ્યા ભણીને વિમાનાદિ યાનનું નિર્માણ કરીને અન્તરિક્ષમાં જાય છે, તેઓ સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. (૪)

શचीभिर्नः शचीवसू दिवा नक्तं दशस्यतम् ।

मा वां रातिरुप दसत्कदा चनास्मद्रातिः कदा चन ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે શચીવસૂ-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિનો વાસ કરાવનારા વિદ્વાનો ! તમે દિવા-દિવસ વા નક્તમ્-રાત્રિમાં શચિભિ:-કર્મોથી ન:-અમને વિદ્યા દશસ્તમ્-પ્રદાન કરો વામ્-તમારા રાતિ:-પ્રદાન કદા, ચન-કદી પણ નાશ પામે નહિ. (૫)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં અધ્યાપક અને ઉપદેશક સુશિક્ષિત વાણીથી દિવસ-રાત વિદ્યાઓનો ઉપદેશ કરે, જેથી કોઈની પણ ઉદારતા નાશ પામે નહિ. (૫)

वृषन्निन्द्र वृषपाणास इन्द्रव इमे सुता अद्रिषुतास उद्भिदस्तुभ्यं सुतास उद्भिदः ।

ते त्वा मदन्तु दावनें महे चित्राय राधसे ।

गीर्भिर्गिर्वाहः स्तवमान आ गहि सुमृळीको न आ गहि ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે વૃષન્-સિંચન સમર્થ અતિ બળવાન ! ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વરયુક્ત જન જે ઇમે-એ તુભ્યમ્-તમારા માટે વૃષપાણાસ:-મેઘ જેથી વર્ષે છે, તે વર્ષા બિન્દુથી પાન કરનાર એવા અદ્રિષુતાસ:-જે મેઘથી ઉત્પન્ન ઉદ્ભિદ:-પૃથિવીનું વિદારણ કરીને-ફાડીને પ્રસિદ્ધ થનાર ઇન્દ્રવ:-અને રસવાન વૃક્ષ સુતા:-ઉત્પન્ન થયેલ તથા ઉદ્ભિદ:-વિદારણ ભાવને પ્રાપ્ત અર્થાત્ કૂટી પીસીને બનાવેલ ઓષધ આદિ પદાર્થ સુતાસ:-ઉત્પન્ન થયેલ છે, તે-તેઓ દાવને-સુખદાયક, મહે-મહાન, ચિત્રાય-અદ્ભુત રાધસે-ધનને માટે ત્વા-આપને મદન્તુ-આનંદિત કરે.

હે ગિર્વાહ:- ઉપદેશરૂપી વાણીઓની પ્રાપ્તિ કરાવનાર આપ ગીર્ભિ:- શાસ્ત્રયુક્ત વાણીઓથી સ્તવમાન:- ગુણોનું કીર્તન કરતા ન:- અમારા પ્રતિ આ, ગહિ-આવો તથા સુમૃડીક:- ઉત્તમ સુખદાયક બનીને અમારી પાસે આ, ગહિ-આવો. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એવી ઓષધિના રસનું અને ઓષધિઓનું સેવન કરવું જોઈએ, જે પ્રમાદ ઉત્પન્ન ન કરે, જેનાથી એશ્વર્યની વૃદ્ધિ થાય. (૬)

ઓ ષૂ ણોં અગ્ને શ્રુણુહિ ત્વમીંઠિતો દેવેભ્યોં બ્રવસિ યજ્ઞિયેંભ્યોં રાજંભ્યો યજ્ઞિયેંભ્યઃ । યદ્દુ ત્યામઙ્ગિરોંભ્યો ધેનું દેવા અદત્તન ।

વિ તાં દુહે અર્યમા કર્ત્તરિ સર્ચાં ણુષ તાં વેદ મે સર્ચા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન ! અમે ઈંડિત:-સ્તુતિ પ્રશંસા યુક્ત કરેલ ત્વમ્-આપ યજ્ઞિયેભ્યઃ:-યજ્ઞાનુષ્ઠાન કરવાને યોગ્ય દેવેભ્યઃ:-વિદ્વાનો તથા યજ્ઞિયેભ્યઃ:-અશ્વમેઘાદિ યજ્ઞ કરવાને યોગ્ય રાજભ્યઃ:-રાજ્ય કરનારા ન્યાયાધીશોને માટે બ્રવસિ-કહો છો એ કારણે આપ ન:-અમારા વચનને ઓ, ષુ, શ્રુણુહિ-જેમ શોભે તેમજ સાંભળો.

હે દેવા:-વિદ્વાનો યત્-હ, ત્યામ્-જે પ્રસિદ્ધ જ ધેનુમ્-ગુણોને પરિપૂર્ણ કરનારી વાણીને તમે અઙ્ગિરોંભ્યઃ:-પ્રાણ વિદ્યાના જ્ઞાતાને માટે અદત્તન-આપો. તામ્-તેને તથા જેને કર્ત્તરિ-કર્મ કરનારને નિમિત્ત સર્ચા-સહાનુભૂતિ કરનાર અર્યમા-ન્યાયાધીશ વિ, દુહે-પૂરણ કરે છે, તામ્-તે વાણીને મે મારા સર્ચા-સહાયી ણુષ-એ ન્યાયાધીશ વેદ-જાણે છે. (૭)

ભાવાર્થ : અધ્યાપકોની એ યોગ્યતા છે, કે સર્વ વિદ્યાર્થીઓને નિષ્કપટતાથી સમસ્ત વિદ્યા પ્રતિદિન ભણાવીને પરીક્ષાને માટે તે ભણેલને સાંભળે, જેથી ભણેલ વિદ્યાર્થીઓ તેને ભૂલે નહિ. (૭)

મો ષુ વોં અસ્મદ્ભિ તાનિ પૌંસ્યા સનાં ભૂવન્ દ્યુમ્નાનિ મોત જારિષુરસ્મત્પુરોત જારિષુઃ । યદ્ વશ્ચિત્રં યુગેયુગે નવ્યં ઘોષાદમર્ત્યમ્ ।

અસ્માસુ તન્મરુતો યચ્ચં દુષ્ટરં દિધૃતા યચ્ચં દુષ્ટરમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-પ્રત્યેક ઋતુમાં યજ્ઞ કરનારા વિદ્વાનો ! વ:-તમારા તાનિ-તે મના-સનાતન પૌંસ્યા-પુરુષોમાં ઉત્તમ બળ અસ્મત્-અમારાથી મો, અભિ, ભૂવન્-તિરસ્કૃત ન થાય, જે પુરા ઉત-પહેલાં પણ જારિષુ:-નષ્ટ થયેલ ઉત-તે પણ દ્યુમ્નાનિ-યશ વા ધન અસ્મત્-અમારાથી મા, જારિષુ:-ફરી નષ્ટ ન થાય, યત્-જે વ:-તમારા યુગે યુગે-પ્રત્યેક યુગમાં ચિત્રમ્-અદ્ભુત અમર્ત્યમ્-અવિનાશી નવ્યમ્-નવીનોમાં થયેલ યશ યત્, ચ-અને જે દુસ્તરમ્-શત્રુઓને દુઃખથી પાર થવા યોગ્ય બળ, યત્-ચ-અને જે દુસ્તરમ્-શત્રુઓને દુઃખથી પાર કરવા યોગ્ય કામ ઘોષાત્-વાણીથી તમે દિધૃત્-ધારણ કરો તત્-તે અસ્માસુ-અમારામાં સુ-જેમ શ્રેષ્ઠતા થાય, તેમ ધારણ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એવી કામના કરવી જોઈએ અને પ્રયત્ન કરવો જોઈએ કે જેથી બળ, કીર્તિ, ધન, આયુ અને રાજ્યની નિત્ય વૃદ્ધિ થાય. (૮)

दध्यङ् हं मे जपुषं पूर्वो अङ्गिराः प्रियमैधुः कण्वो अत्रिर्मनुर्विदुस्ते मे पूर्वे मनुर्विदुः । तेषां देवेष्वार्यतिरस्माकं तेषु नाभयः ।

तेषां पदेन मह्या नमे गिरेन्द्राग्नी आ नमे गिरा ॥ ९ ॥

પદાર્થ : જે દધ્યઙ્-ધારણ કરનારાઓને પ્રાપ્ત થનાર પૂર્વ:-શુભ ગુણોથી પરિપૂર્ણ અઙ્ગિરા:-પ્રાણ વિદ્યાના જ્ઞાતા પ્રિયમેધ:-જેને ધારણાવતી બુદ્ધિ પ્રિય છે, તે અત્રિ:-સુખોને ભોગનાર, મનુ:-વિચારશીલ અને કણ્વ:-મેધાવીજન મે-મારા મહિ-મહાન જનુષમ્-વિદ્યારૂપ જન્મને હ-પ્રસિદ્ધ વિદુ:-જાણે છે, તેઓ મે-મારા પૂર્વે-શુભ ગુણોથી પરીપૂર્ણ પૂર્વજન એ મનુ:-જ્ઞાનવાન છે એ પણ વિદુ:-જાણે છે; તે-તેઓ મે-મારા પૂર્વે-શુભ ગુણોથી પરિપૂર્ણ પૂર્વજન એ મનુ:-જ્ઞાનવાન છે. એ પણ વિદુ:-જાણે છે, તેષામ્-તેઓનો દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં આર્યતિ:-સમ્યક્ વિસ્તાર છે, અસ્માકમ્-અમારો તેષુ-તેઓમાં નાભય:-સંબંધ છે. તેષામ્-તેઓને પદેન-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય વિજ્ઞાન અને ગિરા-વાણીથી હું આ, નમ્હે-સારી રીતે નમ્ર બનું છું, જે ઙ્ગિરા-પ્રાણ અને વિદ્યુતના અધ્યાપક અને ઉપદેશક હોય, તેને હું ગિરા-વાણીથી આ, નમ્હે-નમસ્કાર કરું છું. (૯)

ભાવાર્થ : સંસારમાં જે વિદ્વાનો છે, તે જ વિદ્વાનોના પ્રભાવને જાણી શકે છે, તુચ્છ હૃદયવાળા નહિ. જેઓ જેનાથી વિદ્યાઓ ગ્રહણ કરે, તેઓ તેઓનું સદા પ્રિયાચરણ કરે. અન્ય સર્વ મનુષ્યોએ આપત વિદ્વાનોના માર્ગ પર જ ચાલવું જોઈએ, અન્ય મૂર્ખાઓનો (માર્ગ) પર નહિ. (૯)

होता यक्षद् वनिनो वन्त वार्यं बृहस्पतिर्यजति वेन उक्षभिः पुरुवारैर्भिरुक्षभिः ।

जगृभ्मा दूरआदिशं श्लोकमद्रेरधु त्मना ।

अधारयदरिन्दानि सुक्रतुः पुरु सद्धानि सुक्रतुः ॥ १० ॥

પદાર્થ : હોતા-સદ્ગુણ ગ્રહણ કરનાર જન પુસ્ત્રારેભિ:-જેનો સ્વીકાર કરવા યોગ્ય ગુણ છે, તે ઉક્ષભિ:-મહાત્માઓની સાથે જે વાર્યમ્-સ્વીકાર કરવા યોગ્યજનનો યક્ષત્-સંગ કર; વા જેનો સ્વીકાર કરવા યોગ્ય ગુણ તે ઉક્ષભિ:-મહાત્માજનોની સાથે વર્તમાન વેન:-કામના કરનાર અને બૃહસ્પતિ:-મહાન વાણીના પાલક વિદ્વાન જે સ્વીકાર કરવા યોગ્યનો યજતિ-સંગ કરે છે સુક્રતુ:-સુંદર બુદ્ધિવાળા જન ત્મના-આપથી જે પુરુબહુ જ સદમાનિ-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય પદાર્થોને અધારયત્-ધારણ કરાવે; વા સુક્રતુ:-શ્રેષ્ઠ કર્મ કરનાર જન અદ્રે:-જેમ મેધથી અરિન્દાનિ-જળને, તેમ દૂર આદિશમ્-દૂરથી જે કહેવામાં આવે તે વિષય અને શ્લોકમ્-વાણીને ધારણ કરાવે, તે સર્વમાં વનિન:-પ્રશંસનીય વિદ્યા કિરણો જેના વિદ્યમાન છે, તે સજ્જન વન્ત-સારી રીતે સેવન કરે, અધ:-એના પછી ઉક્ત સમસ્ત વિષયને અમે પણ જગૃભ્મ-ગ્રહણ કરીએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ મેઘથી ચ્યુત જળ સર્વ પ્રાણીઓ તથા અપ્રાણીઓને જીવાડે છે, તેમ વેદ આદિ વિદ્યાઓને ભણાવનાર ભણનારથી પ્રાપ્ત કરેલ સર્વ મનુષ્યોની વૃદ્ધિ-ઉન્નતિ કરે છે.

જેમ મહાન આપ્તજનોની સાથે સંપર્ક કરવાથી સજ્જન લોકો જાણવા યોગ્યને જાણી લે છે, તેમ વિદ્યાના સંસર્ગથી મનુષ્ય ઈચ્છિત (વિષય)ને પ્રાપ્ત કરી લે છે. (૧૦)

ये देवासो दिव्येकादश स्थ पृथिव्यामध्येकादश स्थ ।

अप्सुक्षितौ महिनैकादश स्थ ते देवासो यज्ञमिमं जुषध्वम् ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે દેવાસ:-વિદ્વાનો ! તમે જે-જે દિવિ-સૂર્યાદિ લોકમાં એકાદશ-દશ પ્રાણ અગિયારમો જીવ સ્થ-છે; વા જે પૃથિવ્યામ્-પૃથિવીમાં એકાદશ-ઉક્ત અગિયાર ગણનું અધિ, સ્થ-સ્થાન છે; વા જે મહિના-મહત્વની સાથે અપ્સુક્ષિત:-અન્તરિક્ષ વા જળમાં નિવાસ કરનારા એકાદશ-દશ ઈન્દ્રિય અને એક મન સ્થ-છે, તે-તેમને જેમ છે, તેમ તેઓને જાણીને હે દેવાસ:-વિદ્વાનો ! તમે ઇમમ્-એ યજ્ઞમ્-સંગ કરવા યોગ્ય વ્યવહાર રૂપ યજ્ઞનું જુષધ્વમ્-પ્રીતિપૂર્વક સેવન કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરની આ સૃષ્ટિમાં જે પદાર્થો સૂર્યાદિ લોકમાં છે અર્થાત્ જે અન્યત્ર છે, તે જ અહીં છે અને જેટલા અહીં છે, તેટલા જ ત્યાં છે. તેને યથાવત્ જાણીને મનુષ્યોએ નિરંત યોગ ક્ષેમ કરવા જોઈએ. (૧૧)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાનોના શીલનું વર્ણન હોવાથી તેના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૩૯)

સૂક્ત-૧૪૦

वेदिषदे प्रियधामाय सुद्युते धासिमिव प्र भरु योनिमग्नये ।

वस्त्रोणेव वासया मन्मना शुचिं ज्योतीरथं शुक्रवर्णं तमोहनम् ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ મન્મના-જેનાથી માનતા, જાણતા તે વિચારથી વેદિષદે-જે વેદીમાં સ્થિર થાય તે અગ્નયે-અગ્નિને માટે ધાસિમિવ-જેથી પ્રાણોને ધારણ કરાય તે અન્નની સમાન જેમ હવન કરવા યોગ્ય પદાર્થોને, તેમ પ્રિયધામાય-જેને સ્થાન પ્રિય તે સુદ્યુતે-સુંદર કાન્તિમાન વિદ્વાનને માટે યોનિમ્-ઘરને પ્ર, ભર-સમ્યક્ ધારણ કરીને તે જ્યોતીરથમ્-જ્યોતિની સમાન તમોહનમ્-અંધકાર વિનાશક શુક્રવર્ણમ્-શુદ્ધ સ્વરૂપ શુચિમ્-પવિત્ર મનોહર યાનને વસ્ત્રોણેવ-વસ્ત્રથી વાસય-ઢાંકો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ હોતાજન અગ્નિમાં કાષ્ટ રાખીને તથા ઘી આદિ હવિ હોમીને એ (અગ્નિ)ની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ પવિત્ર મનુષ્યોએ ભોજન અને વસ્ત્રોથી વિદ્વાનની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧)

अभि द्विजन्मा त्रिवृदन्नमृज्यते संवत्सरे वावृधे जग्धमी पुनः ।

अन्यस्यासा जिह्वया जेन्यो वृषा न्यन्येन वनिनो मृष्ट वारणः ॥ २ ॥

पदार्थ : જેઓએ સંવત્સરે-સંવત્સરના અન્તે ત્રિવૃત્-જ્ઞાન, કર્મ અને ઉપાસના વિષયમાં જે સાધન રૂપથી વર્તમાન તે અન્નમ્-ભોગવવા યોગ્ય પદાર્થ વા ઋજ્યતે-ઉપાર્જન કર્યા કર અન્યસ્ય-અન્યના આસા-મુખ અને જિહ્વા-જીભની સાથે ઈમ્-તે જ અન્ન પુન:-વારં-વાર જગધમ્-ભોજન કરેલ હોય, તે દ્વિજન્મા-વિદ્યામાં દ્વિતીય જન્મવાળા બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય અને વૈશ્ય કુળના જન અભિ, વાવૃધે-સર્વત્રથી વધીને જેન્ય:-વિજયશીલ અને વૃષા-બળદની સમાન અત્યંત બળવાન બને છે, એથી અન્યેન-અને મિત્રવર્ગની સાથે વારણ:-સમસ્ત દોષોની નિવૃત્તિ કરનાર તું વનિન:-જળને નિ, મૃષ્ટ-નિરંતર શુદ્ધ કર. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અન્ન આદિ પદાર્થોનો પુષ્કળ માત્રામાં સંચય કરીને, તેને સુસંસ્કૃત કરીને ખાય છે તથા અન્યોને ખવડાવે છે અને હવન આદિ દ્વારા વર્ષાની શુદ્ધિ કરે છે, તેઓ બળવાન બને છે. (૨)

કૃષ્ણપ્રુતૌ વેવિજે અસ્ય સ્ક્ષિતા ઉમા તરેતે અભિ માતરા શિશુમ્ ।

પ્રાચાજિહ્વં ધ્વસયન્તં તૃષુચ્યુતમા સાચ્યં કુપયં વર્ધનં પિતુઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે પ્રાચાજિહ્વમ્-દૂધ આદિ પ્રદાન પૂર્વે સારી રીતે જીભ કાઢવી, ધ્વસયન્તમ્-ચંચળતાથી નીચે પડવું વા તૃષુચ્યુતમ્-શીઘ્ર પડેલ આ, સાચ્યમ્-સમ્યક્ સંબંધ કરનાર અર્થાત્ ઉપાડી લેનાર કુપયમ્-ગુપ્ત રાખવા યોગ્ય અને પિતુઃ-પિતાના વર્ધનમ્-યશ અને પ્રેમ વધારનાર શિશુમ્-બાળકને સ્ક્ષિતૌ-એક સાથે રહેનારી માતરા-ધાત્રી અને માતા અભિ, તરેતે-દુઃખથી ઉત્તીર્ણ કરતી અસ્ય-એ બાળકની તે ઉમા-બન્ને માતાઓ કૃષ્ણપ્રુતૌ-વિદ્વાનોના ઉપદેશથી ચિત્તના આકર્ષણ ધર્મને પ્રાપ્ત કરીને વેવિજે-નિરંતર કંપે છે અર્થાત્ ડરે છે, કે બાળકને જરા પણ દુઃખ ન થાય. (૩)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ સદ્ અસદ્ = સારા ખરાબ જ્ઞાનને વધારનારા, રોગ આદિ કલેશોનો નાશ કરનારા અને પ્રેમને ઉત્પન્ન કરનારા ઉપદેશને પ્રાપ્ત કરેલી બાળકી બન્ને માતા (જન્મદાત્રી અને ધાત્રી) પોતાના પ્રેમના કારણે સદા ડરતી રહે છે. (૩)

મુમુક્ષ્વોઙ્ મનવે માનવસ્યતે રઘુદ્રુવઃ કૃષ્ણસીતાસઃ ઋ જુવઃ ।

અસમના અજિરાસો રઘુષ્વદો વાતજૂતા ઉપ યુજ્યન્ત આશવઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જેઓ મુમુક્ષ્વઃ-સંસારથી મુક્તિના ઈચ્છુક છે, તેઓ રઘુદ્રુવઃ-સ્વાદિષ્ટ અન્નને પ્રાપ્ત થનારા, જુવઃ-વેગવાન, અસમનાઃ-અસમાન મનયુક્ત, અજિરાસઃ-જેને શીઘ્ર પ્રાપ્ત છે, રઘુષ્વદઃ-સન્માર્ગગામી વાતજૂતાઃ-પવન સમાન વેગવાન, આશવઃ-શુભ ગુણોમાં વ્યાપ્ત, કૃષ્ણસીતાસઃ-જેનાથી ખેતીના કામ ખેડૂત ખેતીના કામોમાં ઉ-તર્ક-વિતર્કની સાથે ઉપ, યુજ્યન્તે-ઉપયોગ કરે છે, તેમ માનવસ્યતે-પોતાને મનુષ્યોની ઈચ્છા કરનારાઓ મનવે-મનનશીલ વિદ્વાન યોગી પુરુષને માટે ઉપયોગ કરે. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ ખેડૂત ખેતરને સારી રીતે ખેડીને, તૈયાર કરીને તથા બીજ વાવીને (અન્નરૂપી)

ફળયુક્ત બને છે, તેમ મુમુક્ષુજન દમથી ઈન્દ્રિયોને વશમાં કરીને, શમથી મનને શાન્ત કરીને તથા પોતાના આત્માને પવિત્ર કરીને બ્રહ્મજ્ઞાની જનોની સેવા કરે. (૪)

આદસ્ય તે ધ્વસયન્તો વૃથૈરતે કૃષ્ણમભ્વં મહિ વર્પઃ કરિક્રતઃ ।

યત્સીં મહીમવનિં પ્રાભિ મર્મૃશદભિશ્વસન્તસ્તનયન્નેતિ નાનદત્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : યત્-જે કૃષ્ણમ્-કાળા રંગના અભ્વમ્-ન થનારા મહિ-મહાન વર્પઃ-રૂપને ધ્વસયન્તઃ-વિનાશ કરવા સમાન કરિક્રતઃ-અત્યંત કાર્ય કરનારા જન વૃથા-મિથ્યા પ્રેરતે-પ્રેરણા કરે છે, તે-તેઓ અસ્ય-એ મોક્ષની પ્રાપ્તિને યોગ્ય નથી.

જે મહીમ્-મહાન અવનિમ્-પૃથિવીને અભિ, મર્મૃશત્-સર્વત્રથી અત્યંત સહન કરતાં, અભિશ્વસન્-ચોતરથી શ્વાસ લેતા, નાનદત્-અત્યંત બોલતા અને સ્તનયન્-વિદ્યુત્ સમાન ગર્જના કરતા શ્રેષ્ઠ ગુણોને સીમ્-સર્વત્રથી એતિ-પ્રાપ્ત કરે છે આત્-એ પછી તે મુક્તિને પ્રાપ્ત થાય છે. (૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આ સંસારમાં શરીરને માટે અધર્મનું આચરણ કરે છે, તેઓ દંઢ બંધનને પ્રાપ્ત થાય છે. પરંતુ જે શાસ્ત્ર ભણીને, યોગનો અભ્યાસ કરીને ધર્મનું આચરણ કરે છે, તેઓની મુક્તિ થાય છે. (મોક્ષ પ્રાપ્ત કરે છે.) (૫)

ભૂષન્ ન યોઽધિં બ્રૂષુ નમ્નતે વૃષેવ પત્નીરભ્યેતિ રોરુવત્ ।

ઓજાયમાનસ્તન્વશ્ચ શુમ્ભતે ભીમો ન શૃઙ્ગા દવિધાવ દુર્ગૃભિઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે ભૂષન્-અલંકૃત કરવાની ન-સમાન બ્રૂષુ-ધર્મ ધારણીઓમાં અધિ, નમ્નતે-અધિક નમ્ર થઈને વા પત્નીઃ-યજ્ઞ સંબંધીની સ્ત્રીઓને રોસ્વત્-અત્યંત વાતચીત કહી સંભળાવે વા વૃષેવ-જેમ બળદની સમાન બળને તથા દુર્ગૃભિઃ-દુઃખથી પકડવા યોગ્ય ભીમઃ-ભયંકર સિંહ શૃઙ્ગા-શિંગડાઓને ન-તેમ ઓજાયમાનઃ-બળદની સમાન આચરણ કરીને તન્વઃ-શરીરને ચ-પણ શુમ્ભતે-સુંદર સુશોભિત કરીને વા દવિધાવ-નિરંતર ચલાવતા અર્થાત્ ચેષ્ટા કરતા અત્યંત સુખને અભિ, એતિ-પ્રાપ્ત થાય છે. (૬)

ભાવાર્થ : જે સિંહની સમાન મુશ્કેલીથી પકડમાં આવનાર, વૃષભ = સાંઢ (બળદ)ની સમાન બળવાન, પુષ્ટ અને નીરોગ શરીરવાળા એ મહા ઓષધિઓનું સેવન કરનારા મનુષ્યો સર્વ સજ્જનો સુશોભિત કરે, તેઓ આ સંસારમાં સુશોભિત થાય છે. (૬)

સ સંસ્તિરો વિષ્ટિર સં ગૃભાયતિ જાનન્નેવ જાનતીર્નિત્ય આ શયે ।

પુનર્વર્ધન્તે અપિ યન્તિ દેવ્યમન્યદ્ વર્ષઃ પિત્રોઃ કૃણ્વતે સર્વા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સઃ-તે સંસ્તિરઃ-સમ્યક આરુઢક = ઢાંકનાર વિષ્ટિરઃ-સુખ વિસ્તારક

વિદ્વાન સં, ગૃભાયતિ-સુંદરતાથી સારા પદાર્થોને ગ્રહણ કરે છે, તેમ જાનન્-જાણીને નિત્ય:-નિત્ય હું જાનતી:- જ્ઞાનવતી શ્રેષ્ઠ સ્ત્રીઓની એવ-જ આ, શયે-પાસે શયન કરું છું.

જેઓ પિત્રો:- માતા-પિતાના અન્યત્-અને દેવ્યમ્-વિદ્વાનોમાં પ્રસિદ્ધ વર્ષ:- રૂપને અપિ, યન્તિ-નિશ્ચયથી પ્રાપ્ત થાય છે, તેઓ પુન:-વારંવાર વર્દ્ધન્તે-વૃદ્ધિ પામે છે અને કૃણવતે-શ્રેષ્ઠ કાર્યોને પણ કરે છે, તેમ તમે પણ સચા-સોપેલ અર્થાત્ મળેલ કામ કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાવાન પુરુષોની સાથે વિદુષી સ્ત્રીઓનો વિવાહ થાય છે, તેની સદા વૃદ્ધિ = ઉન્નતિ થાય છે. જે ઉત્તમ ગુણોને ગ્રહણ કરે છે, તે આ જન્મમાં પુરુષાર્થી બનીને પરજન્મમાં પણ સુખી થાય છે. (૭)

તમગ્રુવઃ કેશિનીઃ સં હિ રૈભિર ઋધ્વાસ્તસ્થુર્મમ્મુષીઃ પ્રાયવે પુનઃ ।

તાસાં જરાં પ્રમુઞ્ચન્નેતિ નાનદ્દસું પરં જનયઞ્જીવમસ્તૃતમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : જે અગ્રુવઃ-અગ્રણી કેશિનીઃ-પ્રશંસિત કેશયુક્ત યુવાવસ્થા પ્રાપ્ત કન્યા તમ્-તે વિદ્વાન પતિને સં રૈભિરે-સુંદરતાથી કહે છે, તે હિ-જ પ્રાયવે-મોકલવા અર્થાત્ અન્ય દેશ તે પતિને પહોંચાડવા મમ્મુષી-મરવા સમાન બનીને પુનઃ-ફરી તેના ઘરે આવવા સમયે ઋધ્વાઃ-ઊંચ્ય પદવી પ્રાપ્ત કરેલ સમાન તસ્થુઃ-સ્થિર થાય છે.

જે અસ્તૃતમ્-નાશ ન પામેલ પરમ્-સર્વને ઈષ્ટ અસુમ્-એવા પ્રાણને વા જીવમ્-જીવાત્માને નાનદત્-નિરંતર રટાવે અને તાસામ્-ઉક્ત તે કન્યાઓની જરામ્-વૃદ્ધાવસ્થાને પ્રમુઞ્ચન્-સારી રીતે છોડે છે તથા વિદ્યાઓને જનયન્-ઉત્પન્ન કરીને ઉત્તમ શિક્ષાઓનો પ્રચાર કરાવે છે, તે ઉત્તમજન એતિ-પ્રાપ્ત કરે છે. (૮)

ભાવાર્થ : જે કન્યાઓ બ્રહ્મચર્યપૂર્વક સમસ્ત વિદ્યાઓનો અભ્યાસ કરે છે, તે આ જન્મમાં પ્રશંસિત બનીને તથા બહુજ સુખ ભોગવીને જન્માતર = પરજન્મમાં પણ શ્રેષ્ઠ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે.

જે વિદ્વાનો પણ શરીર અને આત્માના બળને નષ્ટ પામવા દેતા નથી, તેઓ વૃદ્ધાવસ્થા આદિ રોગોથી રહિત રહે છે. (૮)

અધીવાસં પરિ માતૂ રિહન્નહં તુવિગ્રેભિઃ સત્વભિર્યાતિ વિ જયઃ ।

વયો દધત્ પદ્વતે રેરિહત્ સદાનુ શ્યેની સચતે વર્તનીરહં ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે વીર ! જેમ જયઃ-વેગયુક્ત અગ્નિ માતુઃ-માન પ્રદાતી પૃથિવીને અધિવાસમ્-ઉપરથી શરીરને જેનાથી ઢાંકવામાં આવે તે વસ્ત્રની સમાન ઘાસ આદિનો પરિ, રિહન્-પરિત્યાગ કરીને અહ-પ્રસિદ્ધમાં તુવિગ્રેભિઃ-બહુ જ શબ્દોવાળા સત્વભિઃ-પ્રાણીઓની સાથે વિ, યાતિ-વિવિધ રીતે પ્રાપ્ત થાય છે અને જેમ વર્તનિઃ-વર્તમાન શ્યેની-બાજ પક્ષીની સ્ત્રી બાજિની વયઃ-આયુને દધત્-ધારણ કરીને

પદ્ધતે-પગોવાળા દ્વિપદ અને ચોપગા પ્રાણીઓને માટે સચતે-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ દુષ્ટોને અનુ, રેરિહત-અનુક્રમથી વારંવાર છોડીને આપ સદા-સદા અહ-જ તેને નિગ્રહ સ્થાનમાં પહોંચાડો. (૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અગ્નિ જંગલોને બાળે છે અને પર્વતોને તોડે છે, તેમ તમે અન્યાય અને અધર્મીઓનું નિવારણ કરીને તથા દુષ્ટોનાં અભિમાનને તોડીને સત્યધર્મનો પ્રચાર કરો. (૯)

અસ્માકમગ્ને મઘવત્સુ દીદિહ્યધ્ શ્વસીવાન્ વૃષભો દમૂનાઃ ।

અવાસ્યા શિશુમતીરદીદેર્વમેવ યુત્સુ પરિજર્ભુરાણઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન વર્તમાન વિદ્વાન્ વૃષભઃ-શ્રેષ્ઠ દમૂનાઃ-ઈન્દ્રિયોનું દમન કરનાર, શ્વસીવાન્-પ્રાણવાન અને પરિજર્ભુરાણઃ-સર્વ રીતે પુષ્ટ થઈને આપ અસ્માકમ્-અમારા યુત્સુ-સંગ્રામ અને મઘવત્સુ-બહુ જ ધન જે ઘરોમાં વા મિત્રવર્ગોમાં વર્ભેવ-કવચની સમાન શિશુમતીઃ-પ્રશંસિત બાળકોવાળી સ્ત્રી વા પ્રજાઓને દીદિહિ-પ્રકાશિત કરો. અધ-એ પછી દુઃખોને અઘાસ્થ-વિરુદ્ધતાથી દૂર ફેંકીને સુખને અદીદેઃ-પ્રકાશિત કરો.

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! યુદ્ધમાં જેમ કવચથી શરીર સુરક્ષિત કરવામાં આવે છે, તેમ તું ન્યાયથી પ્રજાઓની રક્ષા કર. યુદ્ધમાં સ્ત્રીઓને માર નહિ. જેમ ધનવાનોની સ્ત્રીઓ નિત્ય પ્રસન્ન રહે છે, તેમ તું પ્રજાઓની રક્ષા કર. (૧૦)

ઙ્ઙદમગ્ને સુધિતં દુર્ધિતાદધિ પ્રિયાદુ ચિન્મન્મનઃ પ્રેયો અસ્તુ તે ।

યત્તે શુક્રં તન્વોઙ્ઙે રોચતે શુચિ તેનાસ્મભ્યં વનસે રત્નમા ત્વમ્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન ! દૂર્ધિતાત્-દુઃખની સાથે ધારણ કરેલ વ્યવહાર ઉ-જે તો પ્રિયાત્-પ્રિય વ્યવહારથી સુધિતમ્-સુંદર ધારણ કરેલ ઙ્ઙદમ્-એ મન્મનઃ-મારું મન તે-તમને પ્રેયઃ-અત્યંત પ્રિય અસ્તુ-થાય.

યત્-જે તે-તમારા ચિત્-નિશ્ચયપૂર્વક તન્વઃ-શરીરને શુચિ-પવિત્ર કરનાર શુક્રમ્-શુદ્ધ પરાક્રમ અધિરોચતે-અધિકતર પ્રકાશમાન થાય છે તેન-તેથી અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે ત્વમ્-આપ રત્નમ્-મનોહર ધનનું આ, વનસે-સમ્યક્ સેવન કરો છો. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ દુઃખમાં શોક ન કરવો જોઈએ અને સુખમાં હર્ષિત ન થવું જોઈએ, જેથી પરસ્પરના ઉપકારને માટે ચિત્ત લાગી શકે અને જે ઐશ્વર્ય છે, તે સર્વના સુખ માટે વહેંચવામાં આવે. (૧૧)

રથાય નાવમુત નો ગૃહાય નિત્યારિત્રાં પદ્વતીં રાસ્યગ્ને ।

અસ્માકં વીરાં ઉત નો મઘોનો જનાંશ્ચ યા પારયાચ્છર્મ યા ચ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-શિલ્પવિદ્યા પ્રાપ્ત વિદ્વાન ! આપ યા-જે અસ્માકમ્-અમારા વીરાન્-વીરો ઉત-

અન્ય પણ મઘોન:-ધનવાન જનાન્-મનુષ્યો તથા ન:-અમને ચ-પણ સમુદ્રને પાસ્યાત્-પાર ઉતારે ચ- અને યા-જે અમે શર્મ-સુખને સમ્યક્ પ્રાપ્ત કરીએ તે નિત્યારિત્રામ્-નિત્યદેઢ બંધનયુક્ત જળની ઊંડાઈની પરીક્ષા કરીને સ્તંભો તથા પદ્મતીમ્-પગોની સમાન પ્રશંસિત પૈડાઓથી યુક્ત નાવમ્-મોટી નૌકાને ન:- અમારા રથાય-સમુદ્ર આદિમાં રમણને માટે ઉત-વા ગૃહાય-ઘરને માટે રાસિ-આપો છો. (૧૨)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ, જેવી રીતે મનુષ્ય અને ઘોડાઓ આદિ પગ દ્વારા જાય છે, તેવી મોટી નૌકા બનાવીને અન્ય દ્વીપોમાં અથવા સમુદ્રમાં યુદ્ધને માટે અને વ્યવહારને માટે આવાગમન કરીને એશ્વર્યની નિરંતર ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૧૨)

અभी नो अग्न उक्थमिज्जुगुर्या द्वावाक्षामा सिन्धवश्च स्वगूर्ताः ।

गव्यं यव्यं यन्तौ दीर्घाहेषं वरमरुण्यो वरन्त ॥ १३ ॥

પદાર્થ : જેમ દ્વાવાક્ષામા-અન્તરિક્ષ અને ભૂમિ સિન્ધવ:-સમુદ્ર અને નદી તથા અસ્મય:-ઊષ: કાળ ચ-અને વર્મ-શ્રેષ્ઠ રત્નાદિ પદાર્થો ઇષમ્-અન્ન ઉક્થમ્-પ્રશંસનીય ગવ્યમ્-ગાયનું દૂધ આદિ વા યવ્યમ્-જવ થનાર ખેતરને યન્ત:-પ્રાપ્ત થઈને સ્વગૂર્તા:-પોત-પોતાના સ્વાભાવિક ગુણોથી ઉદ્યત દીર્ઘા-બહુ જ અહા-દિવસોનો વરન્ત-સ્વીકાર કરવામાં આવે, તેમ હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! ન:-અમને અભિ, ઇત્, જુગુર્યા:-સર્વત્રથી ઉદ્યમ = પુરુષાર્થમાં જ લગાવો. (૧૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સદા પુરુષાર્થી બનવું જોઈએ. જે વાહનોથી ભૂમિ, સમુદ્ર અને નદીમાં સુખપૂર્વક શીઘ્ર જઈ શકાય, તે વાહનોમાં બેસીને, પ્રતિદિન રાતના ચોથા પ્રહરમાં ઊઠીને તથા દિવસે ન સૂઈને સદા પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. કારણ કે પુરુષાર્થી લોકો જ એશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૧૩)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાનોના પુરુષાર્થ અને ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૪૦)

સૂક્ત-૧૪૧

बळित्था तद् वपुषे धायि दर्शतं देवस्य भर्गः सहस्रो यतो जनि ।

यदीमुप ह्वरते साधते मतिर्ऋतस्य धेना अनयन्त सस्त्रुतः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્-જે દર્શતમ્-દર્શન યોગ્ય દેવસ્ય:-વિદ્વાનના ભર્ગ:-શુદ્ધ તેજ પ્રત્યે મારી મતિ:-બુદ્ધિ ઉપહસ્તે-જઈને કાર્ય સિદ્ધિ કરે છે તથા સસ્ત્રુત:-જે સમાન સત્ય માર્ગને પ્રાપ્ત થાય છે, તે ઋત્સ્ય-સત્ય વ્યવહારની ધેના:-વાણીઓને ઈમ્-સર્વત્રથી અનયન્ત-સત્યતાને પહોંચાડે છે તથા યત:- જે કારણે તત્-તે તેજ સહસ:-વિદ્યાબળથી જનિ-ઉત્પન્ન થાય છે, તે કારણે બલિત્થા-તે સત્ય તેજ અર્થાત્ વિદ્વાનોના ગુણોનો પ્રકાશ એ રીતે અર્થાત્ ઉક્ત રીતે વપુષે-પોતાના સ્વરૂપને માટે તમારાથી ધાયિ-ધારણ કરવામાં આવે છે.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! બુદ્ધિથી, વચનથી અને સત્ય આચારણથી વિદ્યમાન મનુષ્યોના દર્શનીય સ્વરૂપ ધારણ કરાવમાં આવે છે અને કામના સિદ્ધ કરવામાં આવે છે, તે વાણીનો તથા તે સત્યનો તમે સદા સ્વીકાર કરો. (૧)

પૃક્ષો વપુઃ પિતુમાન્નિત્ય આ શયે દ્વિતીયમા સપ્તશિવાસુ માતૃષુ ।

તૃતીયમસ્ય વૃષભસ્ય દોહસે દશપ્રમતિં જનયન્ત યોષ્ણઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : નિત્ય-નિત્ય પિતુમાન્-પ્રશંસિત અન્નયુક્ત હું પ્રમથ પૃક્ષ:-પૂછવા-કહેવા યોગ્ય વપુ:- સુંદર રૂપનો આ શયે-આશય લઈને અર્થાત્ આશ્રિત બનું છું. અસ્ય-એ વૃષભસ્ય-યજ્ઞાદિ કર્મ દ્વારા જળ વરસાવનારનું મારું દ્વિતીયમ્-બીજું સુંદર રૂપ સપ્તશિવાસુ-સાત પ્રકારની કલ્યાણ કરનારી માતૃષુ- અને માન કરનારી માતાઓની સમીપ આ-સારી રીતે વર્તમાન અને તૃતીયમ્-ત્રીજા દશપ્રમતિમ્-દશ પ્રકારની ઉત્તમ મતિ જેમાં હોય છે, તે સુંદર રૂપને દોહસે-કામોની પરિપૂર્ણતાને માટે યોષ્ણઃ-પ્રત્યેક વ્યવહારનું મિશ્રણ કરનારી સ્ત્રી જનયન્ત-પ્રકટ કરે છે. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આ સાત પ્રકારના લોકોમાં બ્રહ્મચર્યથી પ્રથમ, ગૃહાશ્રમથી દ્વિતીય અને વાનપ્રસ્થ તથા સંન્યાસની તૃતીય કર્મ-ઉપાસના-વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરે છે, તે દશ ઈન્દ્રિયોનું, પ્રાણોનું અને વિષય, મન, બુદ્ધિ, ચિત્ત, અહંકાર તથા જીવોનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરે છે. (૨)

નિર્યદીં બુઘ્નાન્મહિષસ્ય વર્ષસ ઈશાનાસઃ શર્વસા ક્રન્ત સૂરયઃ ।

યદીમનુ પ્રદિવો મધ્વ આધ્વે ગુહા સન્તં માતરિશ્વા મથાયતિ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : યત્-જે ઈશાનાસઃ-ઐશ્વર્યયુક્ત સૂરયઃ-વિદ્વાનજન શર્વસા-બળથી જેમ આધ્વે-સર્વત્રથી અન્ન આદિને પૃથક્ કરવા માટે માતરિશ્વા-પ્રાણવાયુ જઠરાગ્નિનું મથાયતિ-મંથન કરે છે, તેમ મહિષસ્ય-મહાન વર્ષસઃ-રૂપ અર્થાત્ સૂર્યમંડળના સંબંધમાં સ્થિત બુઘ્નાત્-અન્તરિક્ષથી ઈમ્-આ પ્રત્યક્ષ વ્યવહારને અનુક્રન્ત-અનુક્રમથી પ્રાપ્ત થાય; વા મધ્વ-વિશેષ જ્ઞાનયુક્ત પ્રદિવઃ-કાન્તિમાન આત્માના ગુહા-ગુહાશયમાં અર્થાત્ બુદ્ધિમાં સન્તમ્-વર્તમાન ઈમ્-પ્રત્યક્ષ યત્-જે જ્ઞાનને નિષ્ક્રન્ત-નિરંતર ક્રમથી પ્રાપ્ત થાય, તેથી તેઓ સુખી થાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : તેઓ જ બ્રહ્મજ્ઞાની બને છે, જે ધર્માચરણપૂર્વક યોગાભ્યાસ તથા સત્સંગ કરીને તથા પોતાના આત્માને જાણીને પરમાત્માને જાણે છે (અને) તેઓ જ મુમુક્ષુજનોને આ વાત જણાવી શકે છે. (૩)

પ્ર યત્પિતુઃ પરમાન્નીયતે પર્યા પૃક્ષુધો વીરુધો દંસુ રોહતિ ।

ઉભા યદસ્ય જનુષં યદિન્વત આદિદ્યવિષ્ઠો અભવદ્ ઘૃણા શુચિઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : પુરુષ દ્વારા પરમાત્-ઉત્કૃષ્ટ-ઉત્તમ યત્નની સાથે યત્-જે અસ્ય-પ્રત્યક્ષ વૃક્ષજાતિનું સંબંધી પિતુઃ-અન્ન પ્રાણીયતે-પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે, વા જે દંસુ-બીજાઓને દબવવા આદિ કારણે પૃક્ષુધઃ-
૬૧૦

વાતચોદિત:-પ્રાણ વા વાયુથી પ્રેરિત વિદ્વાન દ્વાર:-કુટિલતા કરતા અગ્નિની ન-સમાન વ્યસ્થાત્-વિશેષતાથી સ્થિર છે. તસ્ય-તે શુચિજન્મન:-પવિત્ર જન્મા વિદ્વાનના યત્મન્-ચાલ-ચલનમાં કૃષ્ણાજંહસ:-જેના કાળા મારવા છે તે દક્ષુષ:-બાળતા આ, વ્યધ્વન:-અનેક પ્રકાર વિરુદ્ધ માર્ગવાળા અગ્નિના રજ:-કણની સમાન જરણા:-પ્રશંસા-સ્તુતિ થાય છે. (૭)

ભાવાર્થ : જેઓ ધર્મ પર સ્થિર રહે છે, તેઓ સૂર્યની સમાન પ્રસિદ્ધ થાય છે, તેઓના દ્વારા અર્જિત યશ સર્વ દિશાઓમાં પ્રસિદ્ધ થાય છે. (૭)

રથો ન યાતઃ શિવ્વભિઃ કૃતો દ્યામઙ્ગેભિરુષેભિરીયતે ।

આદસ્ય તે કૃષ્ણાસો દક્ષિ સૂર્યઃ શૂરસ્યેવ ત્વેષથાદીષતે વયઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : જે કૃષ્ણાસ:-જે ખેંચે છે તેઓ સૂર્ય:-વિદ્વાનજન જેમ શિવ્વભિઃ:-ખીલા અને બંધનોથી કૃત:-સિદ્ધ કરેલ દ્યામ્-આકાશને અસ્ત્રેભિઃ:-લાલ વર્ણયુક્ત અઙ્ગેભિઃ:-અંગો સાથે યાત:-પ્રાપ્ત થયેલ રથ:-રથ ઈંચતે-ચાલે છે, ન-તેમ વા વયઃ:-પક્ષી અને શૂરસ્યેવ-ત્વેષથાત્-જેમ શૂરવીરના પ્રકાશિત વ્યવહારથી તેમ કલાકૌશલ્યથી ઈંષતે-દેખે છે, તેઓ સુખ પામે છે. હે વિદ્વન્ ! આત્-એના પછી જે આપ અગ્નિની સમાન પાપોને ધક્ષિ-બાળો છો અસ્ય-એથી તે-આપને સુખ થાય છે. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ ઉત્તમ વાયુ યાનથી મનુષ્ય સુખપૂર્વક આકાશમાં ગમન-આગમન કરે છે, તેમ વિદ્વાન જન વિદ્યાથી ધર્મમાર્ગમાં વિચરવાને સમર્થ બને છે. (૮)

ત્વયા હ્યાગ્ને વરુણો ધૃતવ્રતો મિત્રઃ શાશ્વદ્રે અર્યમા સુદાનવઃ ।

યત્સીમનુ ક્રતુના વિશ્વથા વિભુરાન્ન નેમિઃ પરિભૂરજાયથાઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન ! જેમ ત્વયા-તમારી સાથે યત્-જે વસ્તુ:-શ્રેષ્ઠ ધૃતવ્રત:-સત્યવ્રતને ધારણ કરેલ, મિત્રઃ:-સર્વના મિત્ર અને અર્યમા-ન્યાયાધીશ સુદાનવઃ:-શ્રેષ્ઠ દાનશીલ હિ-જ બને છે તેમ તેઓના સંગથી આપ જેમ નેમિઃ:-પૈડાં અરાન્ ન-આરાને, તેમ વિશ્વથા-વા જેમ સર્વ રીતે વિભુ:-ઈશ્વર વ્યાપક છે, તેમ ક્રતુના-ઉત્તમ બુદ્ધિથી પરિભૂઃ:-સર્વોપરિ સીમ્-સર્વત્રથી અનુ, અજાયથાઃ:-અનુક્રમથી થાઓ, જેથી દુઃખને શાશ્વદ્રે-નષ્ટ કરો. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વર ન્યાયકારી અને સર્વ વિદ્યાઓમાં પ્રવીણ છે, તેમ વિદ્વાનોના સંગથી બુદ્ધિમાન મનુષ્યો ન્યાયકારી અને પૂર્ણ વિદ્યાવાન બને. (૯)

ત્વમગ્ને શશમાનાય સુન્વતે રત્નં યવિષ્ઠ દેવતાતિમિન્વસિ ।

તં ત્વા નુ નવ્યં સહસો યુવન્વયં ભગં ન કારે મહિરત્ન ધીમહિ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે સહસઃ:-બળ સંબંધ યુવન્-યૌવન-ભાવને પ્રાપ્ત, યવિષ્ઠ-અત્યંત તરુણ, મહિરત્ન-પ્રશંસિત

ગુણોથી રમણીય, અગ્ને-અગ્નિ સમાન વર્તમાન વિદ્વાન્ ! જે ત્વમ્-આપ શશમાનાય-અધર્મના ઉલ્લંઘનથી ધર્મને પ્રાપ્ત થયેલ સુન્વતે-અને ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનારા ઉત્તમ જનને માટે રત્નમ્-રમણીય જ્ઞાન વા તેના સાધનને તથા દેવતાતિમ્-પરમેશ્વરને ઇન્વસિ-ધ્યાનયોગથી વ્યાપ્ત થાઓ છો તમ્-તે નવ્યમ્-નવીન વિદ્વાનોમાં પ્રસિદ્ધ ત્વા-આપને કારે-કર્તવ્ય વ્યવહારમાં ભગમ્-ઐશ્વર્યની ન-સમાન વયમ્-અમે નુ-શીઘ્ર ધીમહિ-ધારણ કરીએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેઓ અધર્મનો ત્યાગ કરીને, ધર્મનું અનુષ્ઠાન કરીને, પરમાત્માને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ મનોહર આનંદને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૦)

અસ્મે રયિં ન સ્વર્થં દમૂનસં ભગં દક્ષં ન પપૃચાસી ધર્ણસિમ્ ।

રશ્મીરિવ યો યમતિ જન્મની ઉભે દેવાનાં શંસમૃત આ ચં સુક્રતુઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : જે સુક્રતુઃ-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિવાન વિદ્વાન્ ! અસ્મે-અમારા માટે સ્વર્થમ્-જે સારુ પ્રયોજન હોય વા જે અનર્થ સાધનો રહિત તે રયિમ્-ધનની ન-સમાન દમૂનસમ્-ઈન્દ્રિયોને વિષયોમાં દબાવી દેવાની સમાન રૂપ ભગમ્-ઐશ્વર્યનો અને દક્ષમ્-ચતુરની ન-સમાન ધર્ણસિમ્-ધારણ કરનારાઓનો પપૃચાસિ-સંબંધ કરે છે; વા રશ્મીરિવ-જેમ કિરણોને, તેમ ઋજો-સત્ય વ્યવહારમાં દેવાનામ્-વિદ્વાનોના ઉભે-બે જન્મની પૂર્વ-અપર જન્મ ચ-અને શંસમ્-પ્રશંસાને યઃ-જે આ, યમતિ-વધારે છે, તે અમારાથી સત્કાર કરવા યોગ્ય છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યનાં કિરણોની સમાન સર્વને ધર્મયુક્ત પુરુષાર્થમાં સંયુક્ત કરે છે અને સ્વયં પણ તેમ વર્તે છે, તેઓ પૂર્વ અને પર જન્મને પવિત્ર કરે છે. (૧૧)

ઉત નઃ સુદ્યોત્મા જીરાશ્વો હોતા મન્દ્રઃ શૃણવચ્ચન્દ્રરથઃ ।

સ નો નેષન્નેષતમૈરમૂરોઽગ્નિર્વામં સુવિતં વસ્યો અચ્છ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : જે મન્દ્રઃ-પ્રશંસાયુક્ત ચન્દ્રરથઃ-જેના રથમાં સોના ચાંદી વિદ્યમાન, જે સુદ્યોત્મા-ઉત્તમ પ્રકાશયુક્ત, જીરાશ્વઃ-જેના વેગવાન બહુ જ ઘોડાઓ છે, તે હોતા-દાનશીલજન નઃ-અમને શૃણવત્-સાંભળે; ઉત-અને જે અમૂરઃ-ગમનશીલ, વસ્યઃ-નિવાસ કરવા યોગ્ય, અગ્નિઃ-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમાન જન સુવિતમ્-ઉત્પન્ન કરેલા વામમ્-સુરૂપને નેષતમૈઃ-અત્યંત પ્રાપ્તિ કરાવનારા ગુણોથી અચ્છ-શ્રેષ્ઠ નેષત્-પ્રાપ્ત કરે, સઃ-તે નઃ-અમારી મધ્યે પ્રશંસિત થાય છે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે સર્વના ન્યાયનું શ્રવણ કરનાર, અંગો અને ઉપાંગોથી યુક્ત સામગ્રીયુક્ત અને વિદ્યારૂપી પ્રકાશથી યુક્ત મનુષ્ય, વિદ્યા માટે ઉત્સુક સર્વ લોકોને વિદ્યાવાન બનાવે છે, તે પ્રકાશવાન આત્માવાન હોય છે. (૧૨)

અસ્તાવ્યગ્નિઃ શિમીવદ્ધિરકૈઃ સામ્રાજ્યાય પ્રતરં દધાનઃ ।

મહાવેદભાષ્ય

अमी च ये मघवानो वयं च मिहं न सूरौ अति निष्टतन्युः ॥ १३ ॥

पदार्थ : જે શિમિવશ્દિઃ-પ્રશંસિત કર્મોથી યુક્ત અર્કૈઃ-સત્કાર કરવા યોગ્ય વિદ્વાનોની સાથે પ્રતરમ્-શત્રુબળોને જેનાથી તરે તે સેનાગણને દધાનઃ-ધારણ કરીને અગ્નિઃ-સૂર્યની સમાન સુશીલતાથી પ્રકાશિત સામ્રાજ્યાય-ચક્રવર્તી રાજ્યને માટે અસ્તાવિ-સ્તુતિ પ્રાપ્ત કરે છે ચ-અને ચે-જેઓ અમી-તેઓ મઘવાનઃ-પરમ પૂજિત ધનયુક્ત જન જેમ સૂરઃ-સૂર્ય મિહમ્-વર્ષાને ન-તેમ વિદ્યાને અતિ, નિ, તતન્યુઃ-અત્યંત નિરંતર વિસ્તૃત કરે છે, તે પૂર્વોક્ત સજ્જન ચ-(અને) પૂર્વોક્ત જનોની વયમ્-અમે પ્રશંસા કરીએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ; જેઓ ધાર્મિક વિદ્વાનો દ્વારા સુશિક્ષિત બનીને ધર્મપૂર્વક રાજ્યનો વિસ્તાર કરીને પ્રયત્નશીલ રહે છે, તેઓને જ રાજ્યમાં તથા વિદ્યા અને ધર્મોપદેશનાં કાર્યમાં સ્થાપિત કરવા જોઈએ. (૧૩)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ વર્તમાન છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૧૪૧)

સૂક્ત-૧૪૨

સમિદ્ધો અગ્ન આ વહ દેવાં અદ્ય યતસ્ત્રુચે ।

તન્તું તનુષ્વ પૂર્વ્યં સુતસૌમાય દાશુષે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિની સમાન શ્રેષ્ઠ પ્રકાશયુક્ત સમિદ્ધઃ-વિદ્યાર્થી પ્રકાશિત અધ્યાપક વિદ્વાન્ ! આપ અદ્ય-આજના દિવસે સુતસૌમાય-જેઓએ મહાન ઓષધિઓનો રસ નિષ્પાદન કરેલ છે અને યતસ્ત્રુચે-યજ્ઞ પાત્ર ઊઠાવેલ છે, તે યજમાન દાશુષે-દાનશીલ જનને માટે દેવાન્ વિદ્વાનોની આ, વહ-પ્રાપ્તિ કરો અને પૂર્વ્યમ્-પ્રાચીનોએ કરેલ તન્તુમ્-વિસ્તારને તનુષ્વ-વિસ્તૃત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ બાળપણ અને યુવાવસ્થામાં માતા-પિતા આદિ સંતાનોને સુખી કરે, તેમ પુત્રો (= સંતાનો) બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યા ભણીને, યુવાવસ્થા થતાં વિવાહ કરીને પોતાનાં માતા-પિતા આદિને આનંદિત કરે. (૧)

ઘૃતવન્તમુપ માસિ મધુમન્તં તનૂનપાત્ ।

યજ્ઞં વિપ્રસ્ય માવતઃ શશમાનસ્ય દાશુષઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે તનૂનપાત્-શરીરને નષ્ટ ન કરનાર વિદ્વાન્ ! આપ માવતઃ-મારા સમાન દાશુષઃ-દાનશીલ શશમાનસ્ય-અને દુઃખ ઉલ્લંઘનને માટે વિપ્રસ્ય-મેધાવી જનના ઘૃતવન્તમ્-બહુ જ ઘૃત અને મધુમન્તમ્-પ્રશંસિત મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત યજ્ઞમ્-યજ્ઞનું ઉપ, માસિ-પરિમાણ કરનાર છો. (૨)

ભાવાર્થ : વિદ્યાર્થીઓએ વિદ્વાનોની સંગતિ કરીને વિદ્વાનોની સમાન બનવું જોઈએ. (૨)

शुचिः पावको अब्द्रुतो मध्वा यज्ञं मिमिक्षति ।

नराशंसस्त्रिरा दिवो देवो देवेषु यज्ञियः ॥ ३ ॥

પદાર્થ : જે પાવક:-પવિત્ર કરનાર અગ્નિની સમાન અદ્ભુત:-આશ્ચર્ય ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ યુક્ત, શુચિ:-પવિત્ર, યજ્ઞિય:-યજ્ઞ કરવા યોગ્ય, નરાશંસ:-નરોથી પ્રશંસાને પ્રાપ્ત થતા દેવ:-કામના કરતા જન દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં દિવ:-કામનાથી મધ્વા-મધુર સાકર વા મધથી યજ્ઞમ્-યજ્ઞને ત્રિ:-ત્રણ વાર આ, મિમિક્ષતિ-સારી રીતે સિંચવા વા પૂરા કરવાની (કામના) કરે છે, તે સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો કુમાર = બાલવય, યુવાની અને વૃદ્ધાવસ્થામાં વિદ્યાપ્રચારરૂપી વ્યવહાર કરે છે, તેઓ કાવિક, વાચિક અને માનસિક સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩)

इङ्ळितो अग्न् आ वहेन्द्रं चित्रमिह प्रियम् ।

इयं हि त्वा मतिर्ममाच्छां सुजिह्व वच्यते ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે સુજિહ્વ-મધુર ભાષી જિહ્વાયુક્ત અગ્ને-સૂર્ય સમાન પ્રકાશસ્વરૂપ વિદ્વાન્ ! ઈંઙ્લિત:-પ્રશંસિત આપ ઇહ-આ જન્મમાં પ્રિયમ્-પ્રીતિ કરનારા ચિત્રમ્-અનેક પ્રકારના ઇન્દ્રમ્-પરમૈશ્વર્યને આ, વહ-પ્રાપ્ત કરો. જે મમ-મારી ઇયમ્-આ મતિ:-પ્રજ્ઞા બુદ્ધિ તમારાથી અચ્છ-શ્રેષ્ઠ વચ્યતે-કહેવાય છે હિ-તે જ ત્વા-આપને પ્રાપ્ત થાય. (૪)

ભાવાર્થ : સર્વેએ પુરુષાર્થ દ્વારા વિદ્વાનોની પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરીને મહાન ઐશ્વર્યનો શ્રેષ્ઠ સંગ્રહ કરવો જોઈએ. (૪)

स्तृणानासो यतस्त्रुचो बर्हिर्यज्ञे स्वध्वरे ।

वृञ्जे देवव्यचस्तममिन्द्राय शर्म सप्रथः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : જે સ્વધ્વરે-શ્રેષ્ઠ શોભાયુક્ત યજ્ઞે-વિદ્યાદાનરૂપી યજ્ઞમાં ઇન્દ્રાય-પરમ ઐશ્વર્યને માટે સપ્રથ:-પ્રખ્યાત ગુણોની સાથે વર્તમાન બર્હિ:-બૃહત્ દેવવ્યચસ્તમમ્-વિદ્વાનોની અત્યંત વ્યાપ્ત શમ્-ધરને સ્તૃણાનાસ:-ઢાંકીને યતસ્ત્રુચ:-પુરુષાર્થને પ્રાપ્ત થાય છે, તેઓ દુઃખ અને દરિદ્રતાનો વૃજ્ઞે-ત્યાગ કરી દે છે. (૫)

ભાવાર્થ : પુરુષાર્થો લોકો સિવાય અન્યોને ધન અને રાજ્યલક્ષ્મી પ્રાપ્ત થતી નથી. જેઓ વિદ્વાનોના નિવાસથી યુક્તધામમાં વાસ કરે છે, તે લોકો અવિદ્યા અને દરિદ્રતાને નષ્ટ કરી નાખે છે. (૫)

वि श्रयन्तामृतावृधः प्रयै देवेभ्यो महीः ।

पावकासः पुरुस्पृहो द्वारो देवीरसश्चतः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! **દેવેભ્યઃ**-વિદ્વાનોને માટે જે **પાવકાસઃ**-પવિત્ર કરનારી, **ઋજ્ઞાવૃધઃ**-સત્ય આચરણ અને શ્રેષ્ઠ જ્ઞાન વધારેલી, **પુસ્પૃહઃ**-અનેકોએ ઈચ્છેલી, **દ્વારઃ**-દ્વારોની સમાન **દેવીઃ**-મનોહર **અસશ્ચતઃ**-પરસ્પર વિલક્ષણ **મહીઃ**-પ્રશંસનીય વાણી વા પૃથિવી જેની **પ્રયૈ**-પ્રીતિને માટે વિદ્વાનો કામના કરે છે તેનો આપ લોકો **વિશ્રયન્તામ્**-વિશેષરૂપથી આશ્રય કરો. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વના ઉપકારને માટે વિદ્યા-સુશિક્ષા-યુક્ત વાણીઓની તથા રત્ન પ્રદાન કરનારી ભૂમિઓની કામના કરવી જોઈએ અને તેના આશ્રયથી પવિત્રતા રાખવી જોઈએ. (૬)

આ ભન્દમાને ઉપાકે નક્તોષાસાં સુપેશાસા ।

યહ્વી ઋતસ્ય માતરા સીદતાં બર્હિરા સુમત્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જેમ **ઋજ્ઞાસ્ય**-સત્ય વ્યવહારનું **માતરા**-માન કરાવનારી, **યહ્વી**-કારણથી ઉત્પન્ન થયેલી, **ઉપાકે**-પરસ્પરની સાથે વર્તમાન, **સુપેશાસા**-શ્રેષ્ઠ રૂપયુક્ત અને **ભન્દમાને**-કલ્યાણ કરનારી **નક્તોષાસા**-રાત અને પ્રભાતવેળા **આ**, **સીદતામ્**-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થાય, તેમ **આ**, **સુમત્**-જેમાં બહુ જ આનંદ પ્રાપ્ત થાય છે, તે **બર્હિઃ**-ઉત્તમ ગૃહને પ્રાપ્ત થાઓ. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ દિવસ-રાત રૂપી કાલ ખંડ સર્વ પ્રાણીઓ તથા અપ્રાણીઓને નિયમથી પોત-પોતાની ક્રિયાઓમાં પ્રવૃત્ત કરે છે, તેમ સર્વ વિદ્વાનોએ સર્વ મનુષ્યોને ઉત્તમ ક્રિયાઓમાં પ્રવૃત્ત કરાવવા જોઈએ. (૭)

મન્દ્રજિહ્વા જુગુર્વળી હોતારા દૈવ્યાં કવી ।

યજ્ઞં નો યક્ષતામિમં સિધ્મઘ દિવિસ્પૃશમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ **અઘ**-આજ **મન્દ્રજિહ્વા**-જેની જીભ પ્રશંસિત છે, તેઓ **જુગુર્વળી**-અત્યંત પુરુષાર્થી, **હોતારા**-ગ્રહણ કરનારા, **દૈવ્યા**-દિવ્ય ગુણોમાં પ્રસિદ્ધ, **કવી**-પ્રબળ પ્રજ્ઞાવાન અધ્યાપક અને ઉપદેશક લોકો **નઃ**-અમારા માટે **દિવિસ્પૃશમ્**-પ્રકાશમાં સંલગ્નતા કરાવવા તથા **સિધ્મ**-મંગલકારી **ઇમમ્**-એ **યજ્ઞમ્**-વિદ્યાદિની પ્રાપ્તિના સાધક વ્યવહારનો **યક્ષતામ્**-સંગ કરે છે, તેમ તમે પણ સંગ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો ધર્મયુક્ત વ્યવહારની સાથે પરસ્પર સંગ કરે છે, તેમ અન્યોએ પણ કરવો જોઈએ. (૮)

શુચિર્દેષ્વર્પિતા હોત્રા મરુત્સુ ભારતી ।

ઇઠ્ઠા સરસ્વતી મહી બર્હિઃ સીદન્તુ યજ્ઞિયાઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : જે **દેવેષુ**-વિદ્વાનોમાં **અર્પિતા**-સમર્પણ કરેલી, **હોત્રા**-આપવા યોગ્ય ક્રિયા વા **મરુત્સુ**-સ્તુતિ કરનારાઓમાં **ભારતી**-ધારણ, પોષણ કરવાવાળી, **શુચિઃ**-પવિત્ર, **ઇલા**-પ્રશંસાને યોગ્ય **સરસ્વતી**-પ્રશંસિત વિજ્ઞાનો સંબંધ રાખનારી અને **મહી**-મહાન **યજ્ઞિયાઃ**-યજ્ઞ સિદ્ધ કરાવવાની યોગ્ય ક્રિયા **બર્હિઃ**-સમીપ

પ્રાપ્ત વધેલ વ્યવહારને સીદન્તુ-પ્રાપ્ત થાય, તેને સમસ્ત વિદ્યાર્થીઓ પ્રાપ્ત થાય. (૯)

ભાવાર્થ : વિદ્યાર્થીઓએ એવી ઈચ્છા કરવી જોઈએ-‘વિદ્વાનોમાં જે વિદ્યાયુક્ત વાણી છે, તે અમને પ્રાપ્ત થાય. (૯)

તન્નસ્તુરીપમદ્ભુતં પુરુ વારં પુરુ ત્મનાં ।

ત્વષ્ટા પોષાય વિ ઘ્વતુ રાયે નાભા નો અસ્મયુઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! અસ્મયુઃ-અમારી કામના ત્વષ્ટા-વિદ્યા અને ધર્મથી પ્રકાશમાન આપ ન:- અમારું પુરુ-બહુ જ પોષાય-પોષણ કરવા માટે તથા રાયે-ધન થવા માટે નાભા-નાભિમાં પ્રાણની સમાન વિ, ઘ્વતુ-પ્રાપ્ત થાય અને ત્મના-આત્માથી જે તુરીપમ્-તુરંત રક્ષા કરનાર અદ્ભુતમ્-અદ્ભુત-આશ્ચર્યરૂપ પુરુ, વા, અસ્મ-બહુ જ વા પૂર્ણ ધન છે, તત્-તેને ન:-અમારા માટે પ્રાપ્ત કરાવો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન અમને યાહે તેને અમે પણ યાહીએ, જે અમને ન યાહે તેને અમે પણ ન યાહીએ. તેથી એક-બીજાની વિદ્યા અને સુખની કામના કરનાર = યાહનાર આચાર્ય તથા વિદ્યાર્થીઓ વિદ્યાની ઉન્નતિ કરી શકે છે. (૧૦)

અવસૃજન્નુપ ત્મનાં દેવાન્યક્ષિ વનસ્પતે ।

અગ્નિર્હવ્યા સુષૂદતિ દેવો દેવેષુ મેધિરઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે વનસ્પતે-કિરણોના પતિ સૂર્યની સમાન વર્તમાન ! આપ જે કારણે ત્મના-આત્માની દેવાન્-વિદ્યાની કામના કરનારાઓને ઉપાવસૃજન્-પોતાની સમીપ વિવિધ વિદ્યાથી પરિપૂરિત કરીને, દેવેષુ-પ્રકાશમાન લોકોમાં, દેવઃ-અત્યંત દેદીપ્યમાન, મેધિરઃ-સંગ કરાવનાર અગ્નિઃ-જેમ અગ્નિ હવ્યા-હોમમાં આપવા યોગ્ય પદાર્થોને સુષૂદતિ-સુંદરતાથી ગ્રહણ કરી પરમાણુરૂપ કરે છે, તેમ વિદ્યાનો યક્ષિ-સંગ કરો છો. એથી સત્કારને યોગ્ય છો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય, પૃથિવી આદિ દિવ્ય પદાર્થ રૂપી દેવોમાં, દિવ્ય સ્વરૂપવાળું બનીને જળ વરસે છે, તેમ વિદ્વાન લોકો જગતમાં વિદ્યાર્થીઓમાં વિદ્યા વરસાવે. (૧૧)

પૂષ્ણવતૈ મરુત્વતે વિશ્વદેવાય વાયવે ।

સ્વાહા ગાયત્રવેપસે હવ્યમિન્દ્રાય કર્ત્તન ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે સ્વાહા-સત્યક્રિયાથી પૂષ્ણવતે-જેના બહુ જ પુષ્ટિકારક ગુણ, મસ્ત્વતે-જેમાં પ્રશંસાયુક્ત વિદ્યાની સ્તુતિ કરવાવાળા વા વિશ્વદેવાય-સમસ્ત વિદ્વાનો વિદ્યમાન વાયવે-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય ગાયત્રવેપસે-ગાનારની રક્ષા કરતા જેથી રૂપ પ્રકટ થાય છે, તે ઇન્દ્રાય-પરમૈશ્વર્યને માટે

હવ્યમ્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય કર્મને કર્ત્તન-કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે ધનથી પુષ્ટિ, વિદ્યા અને વિદ્વાનોનો સત્કાર, વેદ વિદ્યાની પ્રવૃત્તિ અને સર્વનો ઉપકાર થાય, તે જ ધર્મયુક્ત ધન છે, અન્ય નહિ. (૧૨)

સ્વાહાકૃતાન્યા ગૃહ્યર્પ હૃવ્યાનિ વીતયૈ ।

ઇન્દ્રા ગૃહિ શ્રુધી હવં ત્વાં હવન્તે અધ્વરે ॥ ૧૩ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર્ય યોજક વિદ્વાન ! આપ અધ્વરે-અહિંસનીય વ્યવહારમાં વીતયે-વિદ્યાની પ્રાપ્તિને માટે સ્વાહાકૃતાનિ-સત્યક્રિયાથી હૃવ્યાનિ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થોને ઉપાગૃહિ-પ્રાપ્ત થાઓ. જે ત્વામ્-તમારી હવન્તે-વિદ્યાનું જ્ઞાન ઈચ્છતા વિદ્યાર્થીઓ સ્તુતિ કરે છે, તે આપ આ, ગૃહિ-આવો વિદ્યાર્થીઓ સ્તુતિ કરે છે, અને હવમ્-સ્તુતિનું શ્રુધિ-શ્રવણ કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક જેટલું શાસ્ત્ર (વિદ્યાર્થીઓને) ભણાવે તેની પ્રતિદિન અથવા પ્રતિમાસ પરીક્ષા કરે. વિદ્યાર્થીઓમાં જે જેને વિદ્યા આપે; તેઓની તે તન-મન-ધનથી સેવા કરે. (૧૩)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અધ્યાપક અને વિદ્યાર્થીઓના ગુણો તથા વિદ્યાની પ્રશંસા હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૪૨)

સૂક્ત-૧૪૩

પ્ર તવ્યસીં નવ્યસીં ધીતિમગ્નયૈ વાચો મતિં સહસઃ સૂનવૈ ભરે ।

અપાં નપાદ્ યો વસુભિઃ સહ પ્રિયો હોતા પૃથિવ્યાં ન્યસીદદૃત્વિયઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હું અપાં, નપાત્-જેમ જળની મધ્યમાં યઃ-જે પડતો નથી તે સૂર્ય પૃથિવ્યામ્-પૃથિવી પર, તેમ જે વસુભિઃ-પ્રથમ કક્ષાના વિદ્વાનોની સહ-સાથે પ્રિયઃ-પ્રીતિયુક્ત હોતા-ગ્રહણ કરનાર ઋત્વિયઃ-ઋતુઓની યોગ્યતા રાખીને નિ, અસીદત્-નિરંતર સ્થિર રહે છે, તે સહસઃ-શરીર અને આત્માના બળયુક્ત અધ્યાપકના સાનિધ્યથી અગ્નયે-અગ્નિની સમાન તીક્ષ્ણ બુદ્ધિ સૂનવે-પુત્ર વા શિષ્યને માટે વાચઃ-વાણીની તવ્યસીમ્-અત્યંત બળવતી નવ્યસીમ્-અત્યંત નવીન ધીતિમ્-જેથી વિજયને ધારણ કરે અને તે ધારણ તથા મતિમ્-ઉત્તમ બુદ્ધિને પ્ર, ભરે-શ્રેષ્ઠ રીતે ધારણ કરું છું. (૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોને યોગ્ય છે, કે જેમ સૂર્ય જળને ધારણ કરનાર છે; તેમ તેઓ પવિત્ર બુદ્ધિમાન, પ્રિય આચરણયુક્ત અને શીઘ્ર વિદ્યાઓને ધારણ કરનારા વિદ્યાર્થીઓને ગ્રહણ કરીને વિદ્યાનું વિજ્ઞાનને શીઘ્ર ઉત્પન્ન કરાવે. (૧)

સ જાર્યમાનઃ પરમે વ્યોમન્યાવિરગ્નિરંભવન્માતરિશ્વને ।

अस्य क्रत्वा समिधानस्य मज्मना प्र द्यावा शोचिः पृथिवी अरोचयत् ॥ २ ॥

पदार्थ : જે માતરિશ્વને-અન્તરિક્ષસ્થ વાયુને માટે અગ્નિ:-અગ્નિની સમાન પરમે-શ્રેષ્ઠ વ્યોમનિ-આકાશની સમાન સર્વમાં વ્યાપ્ત અને સર્વની રક્ષા કરવા આદિ ગુણોથી યુક્ત બ્રહ્મમાં જાયમાન:-ઉત્પન્ન થયેલ અમારા માટે આવિ:-પ્રકટ અભવત્-થાય, તે અસ્ય-પ્રત્યક્ષ સમિધાનસ્ય-શ્રેષ્ઠતાથી પ્રકાશમાનજનના શોચિ:-પવિત્રભાવ કૃત્વા-પ્રજ્ઞા અને કર્મ વા મજ્મના-બળની સાથે દ્યાવા, પૃથિવી-અન્તરિક્ષ અને પૃથિવીને પ્રારોચયત્-પ્રકાશિત કરાવે, સ:-તે ભણેલ જન સર્વનો કલ્યાણકારી બને છે. (૨)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન લોકો વિદ્યાર્થીઓને પ્રયત્નપૂર્વક ઉત્તમ વિદ્યા, ઉત્તમ શિક્ષા અને ધર્મથી યુક્ત કરે તો તેઓ સદા કલ્યાણના ભાગી બને. (૨)

अस्य त्वेषा अजरा अस्य भानवः सुसंदृशः सुप्रतीकस्य सुद्युतः ।

भात्वक्षसो अत्यक्तुर्न सिन्धवोऽग्ने रेजन्ते अससन्तो अजराः ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! સુસંદૃશ:-સત્ય અને અસત્યને જ્ઞાનદ્રષ્ટિથી જોનાર, સુપ્રતીકસ્ય-સુંદર પ્રીતિયુક્ત, સુદ્યુત:-સર્વત્રથી પ્રકાશમાન, અગ્ને:-સૂર્યના ભાનવ:-કિરણોની સમાન અસ્ય-આ અધ્યાપકના અજરા:-વિનાશરહિત, ત્વૈષા-વિદ્યા અને શીલનો પ્રકાશ થાય છે; અને તેઓ અસ્ય-આ મહાશયના અજર, અમર અસસન્ત:-જાગૃત, ભાત્વક્ષસ:-વિદ્યા પ્રકાશરૂપી બળયુક્ત, સિન્ધવ:-પ્રવાહરૂપ ઉક્ત તેજ અક્તુ:-રાત્રિની ન-સમાન અવિદ્યા અંધકારનું અતિ, રેજન્તે-અતિક્રમણ કરે છે. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યની સમાન વિદ્યાના પ્રકાશક, અવિદ્યા રૂપી અંધકારના નાશક અને સર્વને આનંદદાયક છે, તેઓ જ 'મનુષ્યશિરોમણિ' બને છે. (૩)

यमैरिरे भृगवो विश्ववेदसं नाभा पृथिव्या भुवनस्य मज्मना ।

अग्निं तं गीर्भिर्हिनुहि स्व आ दमे य एको वस्वो वरुणो न राजति ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ પુરુષ ! યમ્-જે વિશ્વવેદસમ્-સમગ્ર સંસારના વેત્તા પરમાત્માને ભૃગવ:-વિદ્યા દ્વારા અવિદ્યાને ભૂંજનાર-બાળનાર ઈરિ-સર્વત્રથી જાણનાર વા ય:-જે એક-એક અતિ શ્રેષ્ઠ આપ્ત ઈશ્વર મજ્મના-અત્યંત બળથી વસ્મ:-અતિ શ્રેષ્ઠની ન-સમાન પૃથિવ્યા-અન્તરિક્ષ વા ભુવનસ્ય-લોકમાં ઉત્પન્ન થયેલ વસ્વ:-ધન રૂપ પદાર્થની નાભા-મધ્યમાં પોતાની વ્યાપ્તિથી રાજતિ-પ્રકાશમાન છે. તમ્-તે અગ્નિમ્-સૂર્યની સમાન ઈશ્વર જો કે સ્વે-પોતાના અર્થાત્ તમારા દમે-ગૃહરૂપ હૃદયાકાશમાં વિદ્યમાન છે, તેને ગીર્ભિ:-પ્રશંસિત વાણીઓથી આ, હિનુહિ-જાણો. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વિદ્વાનો દ્વારા જાણવા યોગ્ય, સર્વવ્યાપક, પ્રશંસા યોગ્ય, સચ્ચિદાનંદ આદિ લક્ષણોવાળા સર્વશક્તિમાન, અનુપમ, અતિ સૂક્ષ્મ સ્વયં પ્રકાશ સ્વરૂપ અને અન્તર્યામી પરમેશ્વર

છે, તેને યોગના અંગોના અનુષ્ઠાનની સિદ્ધિ દ્વારા તમે લોકો પોતાની અંદર જાણો. (૪)

ન યો વરાય મરુતામિવ સ્વનઃ સેનેવ સૃષ્ટા દિવ્યા યથાશનિઃ ।

અગ્નિર્જમ્ભૈસ્તિગિતૈરન્તિ ભર્વતિ યોધો ન શત્રૂન્ત્સ વના ન્યૃઙ્જતે ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : ય:-જે અગ્નિ:-અગ્નિ મસ્તામિવ-વાયુ વા વિદ્વાનોના સ્વન:-શબ્દની સમાન સૃષ્ટા, સેનેવ-શત્રુસેનામાં ચક્રવ્યૂહાદિ રચનાથી રચેલી સેનાની સમાન વા યથા-જેમ દિવ્યા-કારણ વા વાયુ આદિ કાર્યદ્રવ્યમાં ઉત્પન્ન થયેલી અશનિ:-વિદ્યુતને, તેમ વરાય-સ્વીકાર કરવા માટે ન-બની શકતા નથી અર્થાત્ તેજ ગતિના કારણે રોકી શકતા નથી. સ:-તે તિગિતૈ:-તીક્ષ્ણ જમ્ભૈ:-સ્ફૂર્તિઓથી અન્તિ-ભક્ષણ કરે છે અર્થાત્ લાકડાને ખાય છે. યોધઃ-યોદ્ધાની ન:-સમાન શત્રૂન્-શત્રુઓનો ભર્વતિ-નાશ કરે છે અર્થાત્ ધનુર્વિદ્યા પ્રવિષ્ટ કરેલ શત્રુદળને ભૂંજી નાખે છે અને વના-વનોને નિ, ઋઙ્જતે-નિરંતર સિદ્ધ કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : પ્રચંડ વાયુથી પ્રેરિત થયેલ અગ્નિ શત્રુઓની હિંસા સમાન પદાર્થોને (એવા) બાળે છે (કે) તે એકાએક ઠારી શકવાને યોગ્ય હોતો નથી. (૫)

કુવિન્નો અગ્નિરુચથસ્ય વીરસદ્વસુષ્કુવિદ્વસુભિઃ કામમાવરત્ ।

ચોદઃ કુવિત્તુજ્યાત્સાતયે ધિયઃ શુચિપ્રતીકં તમયા ધિયા ગૃણે ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જે કુવિત્-મહાન અગ્નિ:-વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિ ન:-અમારા માટે ઉચથસ્ય-ઉચિત પદાર્થોનો વી:-વ્યાપક અસત્-થાય; વા વસુભિઃ-વસાવનારની સાથે કુવિત્-મહાન વસુ:-વસાવનાર કામમ્-કામને આવરત્-સમ્યક્ સ્વીકાર કરે; વા સાતયે-વિભાગને માટે કુવિત્-મહાન પ્રશંસિત જન ચોદ:-પ્રેરણા આપે; વા ધિયઃ-બુદ્ધિઓને તુજ્યાત્-બળવતી બનાવે તમ્-તે શુચિપ્રતીકમ્-પવિત્ર પ્રતીતિ આપનાર જનની અયા-એ ધિયા-બુદ્ધિથી વા કર્મથી ગૃણે-હું સ્તુતિ કરું છું. (૬)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યુતની સમાન ઉચિત્ કામનાઓને પ્રાપ્ત કરાવનારા અને બુદ્ધિ તથા બળના દાતા મહાન વિદ્વાન પોતાની બુદ્ધિથી સર્વ મનુષ્યોને વિદ્વાન બનાવે છે, તેઓની સર્વે પ્રશંસા કરે. (૬)

ઘૃતપ્રતીકં વ ઋતસ્ય ધૂર્ષદમગ્નિં મિત્રં ન સમિધાન ઋઙ્જતે ।

ઇન્ધાનો અક્રો વિદથેષુ દીઘ્ચ્છુક્રવર્ણામુદુ નો યંસતે ધિયમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સમિધાન:-સમ્યક્ પ્રકાશમાન વિદ્વાન વ:-તમારા માટે ધૂર્ષદમ્-હિંસકોમાં સ્થિર થઈને ઘૃતપ્રતીકમ્-જે ઘૃતને પ્રાપ્ત થઈને તે અગ્નિમ્-અગ્નિને ઋતસ્ય-સત્ય વ્યવહાર વર્તનારા મિત્રમ્-મિત્રની ન-સમાન ઋઙ્જતે-પ્રસિદ્ધ કરે છે; ડ-અને જે ઇન્ધાન:-પ્રકાશવાન થઈને વા અક્ર:-અન્યથી આકાન્ત ન થયેલ તે વિદથેષુ-સંગ્રામોમાં દીઘ્-નિરંતર પ્રકાશિત થઈને ન:-અમારી શુક્રવર્ણામ્-

શુદ્ધ સ્વરૂપ ધિયમ્-પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિને ઉદ્ધામ્-શ્રેષ્ઠ રાખે છે, તેનું તમે અને અમે = આપણે પિતાની સમાન સેવન કરીએ. (૭)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યુત્ સમાન સર્વ શ્રેષ્ઠ ગુણોનો ભંડાર, મિત્રની સમાન સુખ પ્રદાતા, યુદ્ધોમાં વીરની સમાન શત્રુઓને જીતનાર અને દુઃખનો વિનાશ કરનાર છે; તે વિદ્વાનનો આશ્રય કરીને સર્વ મનુષ્યો વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરે. (૭)

અપ્રયુચ્છન્નપ્રયુચ્છદ્વિગ્ને શિવેભિર્નઃ પાયુભિઃ પાહિ શ્ગમૈઃ ।

અદબ્ધેભિરદૃપિતેભિરિષ્ટેઽનિમિષદ્ધિઃ પરિ પાહિ નો જાઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે ઇષ્ટે-સત્કાર કરવા યોગ્ય તથા અગ્ને-વિદ્યા વિજ્ઞાનના પ્રકાશયુક્ત અગ્નિ સમાન વિદ્વાન ! આપ અપ્રયુચ્છન્-પ્રમાદ ન કરતા અપ્રયુચ્છદ્ધિઃ-પ્રમાદરહિત વિદ્વાનોની સાથે વા શિવેભિઃ-કલ્યાણકારી પાયુભિઃ-રક્ષક શ્ગમૈઃ-સુખ આપનાર વિદ્વાનોની સાથે નઃ-અમારી પાહિ-રક્ષા કરો તથા જાઃ-સુખોના જનક આપ અનિમિષદ્ધિઃ-નિરંતર આલસ્યરહિત અદબ્ધેભિઃ-હિંસા અને અદૃપિતેભિઃ-મોહ આદિ દોષ રહિત વિદ્વાનોની સાથે નઃ-અમારી પરિ, પાહિ-સર્વત્રથી રક્ષા કરો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ નિરંતર એવી કામના કરવી જોઈએ અને પ્રયત્ન કરવો જોઈએ, કે ધાર્મિક વિદ્વાનોની સાથે (મળીને) ધાર્મિક વિદ્વાનો અમારી નિરંતર રક્ષા કરે. (૮)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાન અને ઈશ્વરના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૪૩)

સૂક્ત-૧૪૪

एति प्र होता व्रतमस्य माययोर्ध्वा दधानः शुचिपेशसं धियम् ।

अभि स्तुचः क्रमते दक्षिणावृतो या अस्य धाम प्रथमं ह निसते ॥ १ ॥

પદાર્થ : જે હોતા-સદ્ગુણોને ગ્રહણ કરનાર પુરુષ માયયા-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિથી અસ્ય-આ શિક્ષકના વ્રતમ્-સત્યાચરણ શીલને ઋર્ધ્વામ્-અને ઉત્તમ શુચિપેશસમ્-પવિત્ર ધિયમ્-બુદ્ધિ વા કર્મને દધાનઃ-ધારણ કરીને પ્ર, ક્રમતે, વ્યવહારોમાં ચાલે છે; વા યાઃ-જે અસ્ય-એની સ્તુચઃ-વિજ્ઞાનયુક્ત દક્ષિણાવૃતઃ-દક્ષિણને ઢાંકનારી બુદ્ધિ છે, તેને તથા પ્રથમમ્-પ્રથમ ધામ-ધામને નિસતે-જે પ્રીતિથી પહોંચાડે છે, હ-તે જ અત્યંત બુદ્ધિમાન બને છે. (૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આપ વિદ્વાન વિદ્વાનના ઉપદેશ અને અધ્યાપનથી વિદ્યાયુક્ત બુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ સુશીલ બને છે. (૧)

अभीमृतस्य दोहना अनूषत योनौ देवस्य सदने परीवृताः ।

अपामुपस्थे विभृतो यदावसदध स्वधा अद्यद्याभिरीयते ॥ २ ॥

पદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઋત્ત્વસ્ય-સત્યવિજ્ઞાનને દોહના:-પૂરા કરનારી પરિવૃતા:-વસ્ત્રાદિથી ઢંકાયેલી અર્થાત્ લજ્જાવતી વિદુષી = પંડિતા સ્ત્રી દેવસ્ય-વિદ્વાનના સદને-સ્થાન વા યોનૌ-ગૃહમાં અભ્યનૂષત-સન્મુખમાં પ્રશંસા કરે છે; વા યત્-જે વાયુ અપામ્-જળને ઉપસ્થે-સમીપમાં વિભૃત:-વિશેષતાથી ધારણ કરેલ આવસત્-સારી રીતે વસેલ અધ-તદનન્તર જેમ વિદ્વાન સ્વધા:-જળોનું અધયત્-પાન કરે; વા યાભિ:-જે ક્રિયાઓથી ઈમ્-સર્વત્રથી તેને ઈયતે-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તે સર્વની સમાન તમે પણ વર્તો. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ આકાશમાં જળ સ્થિર થઈને તથા ફરી વરસીને સમસ્ત સંસારને પુષ્ટ કરે છે, તેમ વિદ્વાન ચિત્તમાં વિદ્યાને સ્થિર કરીને સર્વ મનુષ્યોને પુષ્ટ કરે. (૨)

યુયૂષતઃ સવયસા તદિદ્વપુઃ સમાનમર્થૈ વિતરિત્રતા મિથઃ ।

આદીં ભગો ન હવ્યઃ સમાસ્મદા વોદુર્ન રશ્મીન્ત્સમયંસ્ત સારથિઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જ્યારે સવયસા-સમાન વયના બે શિષ્યો સમાનમ્-સમાન વપુઃ-સ્વરૂપને યુયૂષતઃ-મિશ્ર અર્થાત્ પરસ્પર ઉન્નતિ કરવા ઈચ્છે છે, તદિત્-ત્યારે વિતરિત્રતા-અત્યંત અનેક પ્રકારથી તેઓ મિથઃ-પરસ્પર અર્થમ્-ધનાદિ પદાર્થને પ્રાપ્ત કરવાની ઈચ્છા કરે છે આત્-તદનન્તર ઈમ્-સર્વત્રથી ભગ:-ઐશ્વર્યવાન પુરુષ જેમ હૃદ્યઃ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય હોય, ન-તેમ ઉક્ત વિદ્યાર્થીઓમાંથી પ્રત્યેક સારથિઃ-સારથી જેમ વોદુઃ-પદાર્થ પહોંચાડનારા ઘોડાઓ આદિની રશ્મિન્-લગામને દોરીને ન-તેમ અસ્મત્-અમે અધ્યાપકો આદિ જેનાથી અધ્યયનનો સમાયંસ્ત-સમ્યક્ સ્વીકાર કરીને ઉપદેશોનો સમ્-સમ્યક્ સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૩)

ભાવાર્થ : જે અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો નિષ્કપટતાથી બીજાઓને પોતાની સમાન બનાવવાની ઈચ્છાથી વિદ્વાન બનાવે તેઓ ઉત્તમ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને જિતેન્દ્રિય બને. (૩)

યમીં દ્વા સવયસા સપર્યતઃ સમાને યોના મિથુના સમૌકસા ।

દિવા ન નક્તં પલિતો યુવાજનિ પુરૂ ચરન્નજરો માનુષા યુગા ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : સવયસા-સમાન વયના, દ્વા-બે સમાન-સમાન યોના-ઉત્પત્તિ સ્થાનમાં, મિથુના-મૈથુન કર્મ કરનાર દંપતિ, સમૌકસા-સમાન ગૃહની સાથે વિદ્યમાન, દિવા-દિવસ, નક્તમ્-રાત્રિની ન-સમાન યમ્-જે ઈમ્-પ્રત્યક્ષ બાળકનું સપર્યતઃ-સેવન કરે, તેનું પાલન કરે, તે અજરઃ-જરાવસ્થા રૂપી રોગથી રહિત માનુષા-મનુષ્ય સંબંધી યુગા-વર્ષોને પુરૂ-બહુ જ ચરન્-ચાલતા, ભોગવતા પલિતઃ-સફેદ વાળવાળો હોવા છતાં યુવા-યુવના તરુણ વયવાળા અજનિ-પ્રકટ થાય છે-દેખાય છે. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રેમ પૂર્વક વર્તન કરનારા સ્ત્રી-પુરુષો ધર્મથી સંતાન ઉત્પન્ન કરીને, તેને શ્રેષ્ઠ શિક્ષા આપીને તથા સદાચારથી સંસ્કૃત કરીને કલ્યાણ કાર્ય કરે છે, તેમ સમાન યોગ્યતાવાળા અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો શિષ્યોને સુશીલ બનાવે છે.

જેમ દિવસ રાત્રિની સાથે વર્તમાન હોવા છતાં પણ પોતાનાં સ્થાનમાં રાત્રિનું નિવારણ કરે છે, તેમ અજ્ઞાનીઓની સાથે રહેવાં છતાં અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો મોહમાં સંલગ્ન થતા નથી = મોહ પામતા નથી.

જેમ પૂર્ણ બ્રહ્મચર્ય પાલન કરેલ સ્ત્રી-પુરુષ રૂપ, સૌંદર્ય, બળ આદિ ગુણોથી સંપન્ન સંતાનોને ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ એ અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો સત્ય અધ્યાપન અને ઉપદેશ દ્વારા સર્વમાં પૂર્ણ આત્મબળ ઉત્પન્ન કરે છે. (૪)

તર્મી^૧ હિન્વન્તિ ધીતયો દશ ત્રિશો^૨ દેવં મર્તા^૩ કૃતયે^૪ હવામહે ।

ધનોરધિ^૫ પ્રવત આ સ ઋણવત્યભિવ્રજદ્વિર્વયુના^૬ નવાધિત ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! મર્તાસઃ-મરણધર્મા મનુષ્ય અમે કૃતયે-રક્ષા આદિને માટે જે દેવમ્-વિદ્વાનનો હવામહે-સ્વીકાર કરીએ છીએ; વા દશ-દશ ધીતયઃ-હાથ-પગની આંગળીઓની સમાન ત્રિશઃ-પ્રજા જેને હિન્વન્તિ-પ્રસન્ન કરે છે, તમ્, ઈમ્-તેઓને તમે ગ્રહણ કરો.

જે ધનુર્વિદ્વાનો જ્ઞાતા ધનોઃ-ધનુષ્યની અધિ-ઉપર ચઢાવીને પ્રવતઃ-છોડવામાં આવતા બાણોને અધિત-ધારણ કરે છે અર્થાત્ તેનું સંધાન કરે છે, સઃ-તે અભિવ્રજધ્નિઃ-સર્વત્રથી જતા વિદ્વાનોની સાથે નવા-નવીન વયુના-શ્રેષ્ઠત્તમ જ્ઞાનોને આ, ઋણવતિ-સમ્યક્ પ્રાપ્ત કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ હાથની આંગળીઓ દ્વારા ભોજન આદિની ક્રિયાથી શરીરની વૃદ્ધિ થાય છે, તેમ વિદ્વાનોની અધ્યયન અને ઉપદેશરૂપી ક્રિયાઓથી પ્રજાઓ વૃદ્ધિ પામે છે.

જેમ ધનુર્વેદનો જ્ઞાતા શત્રુઓને જીતીને રત્નોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ વિદ્વાનોના સંગના ફળનો જ્ઞાતા મનુષ્ય વિજ્ઞાનોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫)

ત્વં હ્યાગ્ને દિવ્યસ્ય રાજસિ^૧ ત્વં પાર્થિવસ્ય પશુપાઙ્ગવ^૨ ત્મના^૩ ।

એની^૪ ત એતે^૫ બૃહતી અભિશ્રિયા^૬ હિરણ્યયી^૭ વક્વરી^૮ બૃહિરાંશાતે ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-સૂર્યની સમાન પ્રકાશમાન વિદ્વાન્ ! ત્વં, હિ-આપ જ પશુપાઙ્ગવ-પશુપાલકની સમાન ત્મના-પોતાનાથી દિવ્યસ્ય-અન્તરિક્ષમાં થયેલી વૃષ્ટિ આદિના વિજ્ઞાનને રાજસિ-પ્રકાશિત કરો છો; વા ત્વમ્-આપ પાર્થિવસ્ય-પૃથિવીમાં જાણેલાં પદાર્થોના વિજ્ઞાનનો પ્રકાશ કરો છો. એતે-એ પ્રત્યક્ષ એની-પોત-પોતાની કક્ષામાં ભ્રમણ કરનાર બૃહતી-અત્યંત વિસ્તૃત અભિશ્રિયા-સર્વત્રથી સુશોભિત હિરણ્યયી-પ્રભૂત હિરણ્યમયી વક્વરી-પ્રશંસિત સૂર્યમંડળ અને ભૂમંડળ વા તે-આપના જ્ઞાનને અનુકૂળ બર્હિઃ-વૃદ્ધ થઈને આજ્ઞાતે-વ્યાપ્ત થાય છે. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ ઋદ્ધિઓ અને સિદ્ધિઓ પૂર્ણ લક્ષ્મી ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ આત્મવાન પુરુષ પરમેશ્વરમાં

અને પૃથિવી રાજ્યમાં સુપ્રકાશિત થાય છે. જેમ પશુપાલક પોતાના પશુઓની પ્રેમથી રક્ષા કરે છે, તેમ સભાપતિ = રાજા પોતાની પ્રજાની રક્ષા કરે. (૬)

अग्नें जुषस्व प्रति हर्यं तद्रचो मन्द्र स्वधाव ऋतजात् सुक्रतो ।

यो विश्वतः प्रत्यङ्ङसिं दर्शतो रण्वः संदृष्टौ पितुमाँइव क्षयः ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે મન્દ્ર-પ્રશંસનીય સ્વધાવ:-પ્રશંસિત અન્નવાળા ઋત્તજાત-સત્ય વ્યવહારથી ઉત્પન્ન થયેલ સુક્રતો-સુંદર કર્મોથી યુક્ત અગ્ને-વિદ્યુત્ સમાન વર્તમાન વિદ્વાન્ ય:-જે વિશ્વત:-સર્વના પ્રત્યઙ્-પ્રત્યેકથી વા સર્વથી સત્કાર લેનાર સંદૃષ્ટો-સમ્યક્ દર્શનમાં દર્શત:-દર્શનીય રણ્વ:-શબ્દશાસ્ત્રના જ્ઞાતા વિદ્વાન આપ જેવા ક્ષય:-નિવાસને માટે ગૃહ પિતુમાં ઇવ-અન્નયુક્ત છો, તેવા અસિ-છો. તે આપ જે મારી અભિલાષાનું વચ:-વચન છે, તત્-તેનું જુષસ્વ-સેવન કરો અને પ્રતિ, હર્ય-મારા પ્રત્યે કામના કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે પ્રશંસિત બુદ્ધિવાળા, યુક્ત આહાર વિહારવાળા, સત્ય વ્યવહારમાં પ્રસિદ્ધ અને ધર્મયુક્ત કર્મોમાં બુદ્ધિ રાખનારા મનુષ્યો આપ વિદ્વાનોથી વિદ્યાઓની તથા ઉપદેશોની કામના કરે છે તથા તેઓની સેવા કરે છે, તેઓ 'સર્વોત્કૃષ્ટ' બની જાય છે. (૭)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અધ્યાપકો અને ઉપદેશકોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૪૪)

સૂક્ત-૧૪૫

तं पृच्छता स जगामा वेद स चिकित्वाँ ईयते सा न्वीयते ।

तस्मिन्त्सन्ति प्रशिषस्तस्मिन्निष्टयः स वाजस्य शवसः शुष्मिणस्पतिः ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! સ:-તે વિદ્વાન સત્યમાર્ગમાં જગામ-ચાલે છે, સ:-તે વેદ-બ્રહ્મને જાણે છે, સ:-તે ચિકિત્વાન્-વિજ્ઞાનયુક્ત સુખોને ઈયતે-પ્રાપ્ત કરે છે, સ:-તે નુ-શીઘ્ર પોતાના કર્તવ્યને ઈયતે-પ્રાપ્ત કરે છે.

તસ્મિન્-તેમાં પ્રશિષ:-શ્રેષ્ઠતમ શિક્ષા સન્તિ-વિદ્યમાન છે, તસ્મિન્-તેમાં ઇષ્ટય:-સત્સંગ વિદ્યમાન છે, સ:-તે વાજસ્ય-વિજ્ઞાનમય શવસ:-બળ વા શુષ્મિણ:-બળયુક્ત સેનામય શવસ:-બળ વા શુષ્મિણ:-બળયુક્ત સેના-સમૂહ વા રાજ્યનો પતિ:-પાલક સ્વામી છે, તમ્-તેને તમે પૃચ્છત-પૂછો. (૧)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષાથી યુક્ત ધાર્મિક, પ્રયત્નશીલ, સર્વનો ઉપકારકર્તા, સત્યનો પાલક અને આપ વિદ્વાન હોય, તેના આશ્રયથી અધ્યાપન અને ઉપદેશ દ્વારા સર્વ મનુષ્ય અભીષ્ટ વિનયને પ્રાપ્ત કરે. (૧)

तमित्पृच्छन्ति न सिमो वि पृच्छति स्वेनेव धीरो मनसा यदग्रभीत् ।

न मृष्यते प्रथमं नापरं वचोऽस्य क्रत्वा सचते अप्रदृपितः ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : અપ્રહ્વપિત:-જે અત્યંત મોહ રહિત તે ધીર:-ધ્યાનવાન વિચારશીલ વિદ્વાન સ્વેનેવ-પોતાની સમાન મનસા-વિજ્ઞાનથી યત્-જે વચ:-વચનને અગ્રભીત્-ગ્રહણ કરે છે; વા જે અસ્ય-આ શાસ્ત્રજ્ઞ ધર્માત્મા વિદ્વાનની ક્રત્વા-બુદ્ધિ વા કર્મની સાથે સચતે-સંબંધ કરે છે, તે પ્રથમમ્-પ્રથમ ન, મૃષ્યતે-સંશયને પ્રાપ્ત થતો નથી; અને તે અપરમ્-પછી પણ ન-સંશયને પ્રાપ્ત થતો નથી, જેને સિમ:-મનુષ્ય માત્ર ન, વિ, પૃષ્ઠતિ-વિશેષતાથી પૂછતો નથી, તમિત્-તેને વિદ્વાનજનો પૃષ્ઠન્તિ-પૂછે છે. (૨)

ભાવાર્થ : મોહ આદિ દોષોથી રહિત આપ્ત વિદ્વાનજનો, યોગાભ્યાસી પવિત્ર કરેલ આત્માથી જે-જે સત્ય અને અસત્યનો નિશ્ચય કરે છે, તે-તે સુનિશ્ચિત છે, તેમ અન્ય પુરુષોએ માનવું જોઈએ. જેઓ તેઓની સંગતિ ન કરીને, સત્ય તથા અસત્યનો નિર્ણય જાણવા ઈચ્છે છે, તેઓ કદી પણ સત્ય અને અસત્યનો નિર્ણય કરી શકતા નથી. તેથી આપ્તોના ઉપદેશથી સત્ય અને અસત્યનો નિર્ણય કરવો જોઈએ. (૨)

તમિદ્ર્ઞન્તિ જુહ્વૃસ્તમર્વૃત્તિર્વિશ્વાન્યેકઃ શૃણવદ્વચાંસિ મે ।

પુરુષૈષ્ઠસ્તતુરિર્યજ્ઞસાધનોઽચ્છિદ્રોતિઃ શિશુરાદત્ત સં રભઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! આપ એકલા મે-મારા વિશ્વાનિ-સમસ્ત વચાંસિ-વચનોને શૃણવત્-સાંભળો. જે રભઃ-મહાન મહાત્મા પુસ્તૈષઃ-જેને બહુજ સજ્જનોને પ્રેરણા આપી હોય, તતુરિઃ-જે દુઃખથી સર્વને તારનાર, યજ્ઞસાધન:-વિદ્વાનોના સત્કાર જેના સાધન અર્થાત્ કરાવનાર, અચ્છિદ્રોતિઃ-જેનાથી રક્ષણાદિ ક્રિયા ખંડિત ન થઈ હોય શિશુ:-અને જે અવિદ્યાદિ દોષોને છિન્ન-ભિન્ન કરે, સર્વના ઉપકારનો સમ્યક્ યત્ન કરે, સમાદત્ત-સમ્યક્ ગ્રહણ કરે, તમ્-તેને અર્વત્તિઃ-બુદ્ધિમતી કન્યા ગચ્છન્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તમિત્-અને તેને જુહ્વઃ-વિદ્યાવિજ્ઞાનને ગ્રહણ કરનારી કન્યા પ્રાપ્ત થાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે-જે ક્રિયાઓ કરી હોય અને જે-જે અધ્યયન કરેલ હોય, તે-તેની, તેઓ જેમ આપ્ત વિદ્વાનની પરીક્ષા આપે, તેમ કન્યાઓએ પણ પોતાની અધ્યાપિકાને પરીક્ષા આપવી. તેના વિના સત્ય અને અસત્યનો સમ્યક્ નિર્ણય કરી શકાતો નથી. (૩)

ઉપસ્થાયં ચરતિ યત્સમારત સદ્યો જાતસ્તત્સાર યુજ્યેભિઃ ।

અભિ શ્વાન્તં મૃશતે નાન્દ્યૈ મુદે યદીં ગચ્છન્ત્યુશ્તીરશિષ્ઠિતમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુજનો ! યત્-જે યુજ્યેભિઃ-યુક્ત કરવા યોગ્ય પદાર્થોની સાથે સદ્યઃ-શીઘ્ર જાત:-પ્રસિદ્ધ થયેલ ઉપસ્થાયમ્-પ્રતિ ક્ષણ ઉપસ્થાન કરવા ચરતિ-જાય છે, વા તત્સાર-કુટિલતાથી જાય છે, વા શ્વાન્તમ્-પરિપક્વ પૂર્ણ જ્ઞાનથી જાય છે અભિમૃશતે-સર્વત્રથી વિચરે છે; વા બુદ્ધિમાન જન યત્-જે નાન્દ્યૈ-અત્યંત આનંદજ અને મુદે-સામાન્ય હર્ષ થવા માટે અપિસ્થિતમ્-સ્થિર થયેલને તથા ઉશ્તીઃ-કામના કરતી પંડિતાઓને ઈમ્-સર્વત્રથી ગચ્છન્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તેને તમે સમારત સમ્યક્ પ્રાપ્ત થાઓ. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પુરુષો અને જે સ્ત્રીઓ શીઘ્ર પૂર્ણ વિદ્યા યુક્ત બની જાય છે અને

કુટિલતા આદિ દોષોનો ત્યાગ કરીને તથા શાન્તિ આદિ ગુણોને પ્રાપ્ત કરીને સર્વના વિદ્યાજન્ય સુખને માટે વારંવાર બહુ જ પ્રયત્ન કરે છે, તેઓ 'સંસારને આનંદદાયક' બને છે. (૪)

સ ઈં મૃગો અપ્યો વનર્ગુરુપ ત્વચ્યુપમસ્યાં નિ ધાયિ ।

વ્યંબ્રવીદ્વયુના મર્ત્યેભ્યોઽગ્નિર્વિદ્વાં ઋત્તચિદ્ધિ સત્યઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : વિદ્વાનોથી જે અપ્યઃ-જળને યોગ્ય વનર્ગુઃ-વનગામી મૃગઃ-હરણની સમાન ઉપમસ્યામ્-ઉપમા રૂપ ત્વચિ-ત્વક્ ઈન્દ્રિયમાં ઉપ, નિ, ધાયિ-સમીપ નિરંતર ધરવામાં આવે છે વા જે ઋત્તચિત્-સત્ય વ્યવહારને એકત્ર કરનાર અગ્નિઃ-અગ્નિની સમાન વિદ્યાદિ ગુણોથી પ્રકાશમાન વિદ્વાન્-સર્વ વિજ્ઞાનનો જ્ઞાતા પંડિત મર્ત્યેભ્યઃ-મનુષ્યોને માટે વયુના-શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનોનો ઈમ્-જ વિ, અબ્રવીત્-વિશેષ કરીને ઉપદેશ આપે છે, સઃ-હિ-તે જ સત્યઃ-સજ્જનોમાં સાધુ છે. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ તૃષાતુર હરણ જળ પીવા માટે વનમાં ભ્રમણ કરીને જળ પામીને પ્રસન્ન થાય છે, તેમ વિદ્વાનો શુભ આચરણવાળા વિદ્યાર્થીઓને પામીને આનંદિત થાય છે. જે વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને તેઓ = બીજાઓને આપતા નથી, તેઓ સંકીર્ણ હૃદયના લોકો 'મહાપાપી' છે. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઉપદેશ કરનાર અને ઉપદેશ સાંભળનારાઓના કર્તવ્ય કર્મોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૪૫)

સૂક્ત-૧૪૬

ત્રિમૂર્દ્ધાનં સપ્તરશ્મિં ગૃણીષેઽનૂનમ્ગિં પિત્રોરુપસ્થે ।

નિષત્તમસ્ય ચરતો ધ્રુવસ્ય વિશ્વા દિવો રોચનાપપ્રિવાંસમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ધારણાવતી શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિવાનજન ! જેથી તું પિત્રોઃ-પાલન કરનાર વાયુ અને આકાશના ઉપસ્થે-સમીપમાં નિષત્તમ્-નિરંતર પ્રાપ્ત ત્રિમૂર્દ્ધાનમ્-નિકૃષ્ટ, મધ્ય અને ઉત્તમ એ ત્રણેય પદાર્થોમાં શિર રાખનારાસપ્તરશ્મિમ્-સાત ગાયત્રી આદિ છંદો અથવા ભૂ આદિ સાત લોકોમાં જેના પ્રકાશરૂપ કિરણો છે, એવા અનુનમ્-હિનરહિત અને અસ્ય-એ ચરતઃ-પોતાની ગતિથી વ્યાપ્ત ધ્રુવસ્ય-નિશ્ચળ દિવઃ-સૂર્યમંડળના વિશ્વા-સમસ્ત રોચના-પ્રકાશોને આપપ્રિવાંસમ્-જેને સર્વત્રથી કરેલ છે, તે અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ની સમાન વર્તમાન વિદ્વાનની ગૃણીષે-સ્તુતિ કરે છે, તેથી તું વિદ્યા પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય બને છે. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુત્, સૂર્ય અને પ્રસિદ્ધ (= પાર્થિવ) અગ્નિ એ ત્રણેય રૂપમાં અગ્નિ ચરાચર જગતનાં કાર્યોને સિદ્ધ કરનારા છે, તેમ જ વિદ્વાનો સમસ્ત સંસારનો ઉપકાર કરનારા બને છે. (૧)

ઉક્ષા મહાં અભિ વંવક્ષ એને અજરસ્તસ્થાવિતઠ્ઠિત્રિઠ્ઠ્વઃ ।

ઉર્વ્યાઃ પદો નિ દંધાતિ સાનોૌ રિહન્ત્યૂર્થો અરુષાસોૌ અસ્ય ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ **ઉર્વાઃ**-પૃથિવીથી **મહાન્**-મહાન, **ઉક્ષા**-વર્ષાના જલનું સિંચન કરનાર, **અજરઃ**-હાનિરહિત, **ત્રઘ્વઃ**-ગતિમાન સૂર્ય **એને**-એ અંતરિક્ષ અને ભૂમંડળને **અભિ**, **વવક્ષે**-સંયુક્ત કરે છે; **ઇત ઋતિઃ**-વા જેનાથી રક્ષા આદિ ક્રિયા પ્રાપ્ત થાય છે, તેવો બનીને **પદઃ**-પોતાના અંશોને **નિ**, **દધાતિ**-નિરંતર સ્થાપિત કરે છે, **અસ્ય**-એ સૂર્યનાં **અસ્માસઃ**-અહિં સમાન કિરણો **સાનો**-પૃથક જગતમાં **ઋધઃ**-જળસ્થાનને **રિહન્તિ**-પ્રાપ્ત થાય છે, વા જે બ્રહ્માંડના મધ્યમાં **તસ્થૌ**-સ્થિર છે, તેના સમાન તમે બનો. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ; જે સૂત્રાત્મા વાયુ ભૂમિ અને સૂર્યને ધારણ કરીને સંસારની રક્ષા કરે છે અથવા જેમ સૂર્ય પૃથિવીથી મહાન છે, તેમ વર્તાવ કરવો જોઈએ. (૨)

સુમાનં વત્સમભિ સંચરન્તી વિષ્વઘ્નેનૂ વિ ચરતઃ સુમેકૈં ।

અનપવૃજ્યાં અધ્વનો મિમાને વિશ્વાન્કેતાં અધિ મહો દધાને ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ સૂર્યલોક અને ભૂમંડળ બન્ને **સમાનમ્**-સમાન **વત્સમ્**-વાઇરડાની સમાન વર્તમાન દિવસ-રાત્રિને **અભિ**-સં, **ચરન્તી**-સર્વત્રથી સમ્યક્ પ્રાપ્ત થઈને **સુમેકૈ**-સુંદર જેનો ત્યાગ કરવાના **અધ્વનઃ**-માર્ગથી **અનપવૃજ્યાન્**-દૂર ન કરવા યોગ્ય પદાર્થોને **મિમાને**-નિર્માણ કરનારા **મહઃ**-મહાન **વિશ્વાન્**-સમગ્ર **કેતાન્**-બોધને **અધિ**, **દધાને** અધિકારપૂર્વક ધારણ કરીને **ધેનૂ**-ગાયોની સમાન **વિષ્વક**, **વિ**, **ચરતઃ**-સર્વત્રથી વિચરી રહેલ છો, તેમ તેઓને જાણી, પક્ષપાત છોડી સર્વ કાર્યોને પૂરા કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યની સમાન ન્યાય અને ગુણોનું ગ્રહણ કરનારા અને તેઓ પ્રકાશિત કરનારા બનીને અનેક પ્રકારના માર્ગોનું નિર્માણ કરીને તથા ગાયોની સમાન સર્વને પુષ્ટ કરીને તથા ગાયોની સમાન સર્વને પુષ્ટ કરતા સમસ્ત વિદ્યાઓને ધારણ કરે છે, તેઓ દુઃખ રહિત બની શકે છે. (૩)

ધીરાસઃ પ્દં કવયો નયન્તિ નાનાં હૃદા રક્ષમાણા અજુર્યમ્ ।

સિષાસન્તઃ પર્યપ્શ્યન્ત સિન્ધુમાવિરેભ્યો અભવત્સૂર્યો નૂન્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે **ધીરાસ**-ધ્યાનવાન **કવયઃ**-વિકાન્ત પ્રજ્ઞાવાન શાસ્ત્રવિદ્ વિદ્વાન **હૃદા**-હૃદયથી **નાના**-અનેક **નૂન્**-નાયકો = મુખીઓની **રક્ષમાણાઃ**-રક્ષા કરે છે અને **સિષાસન્તઃ**-અનેક પ્રકારના વિભાગ કરવાની ઈચ્છા કરીને **સૂર્યઃ**-સૂર્યની સમાન અર્થાત્ જેમ સૂર્યમંડલ **સિન્ધુમ્**-નદીના જળનો સ્વીકાર કરે છે, તેમ **અજુર્યમ્**-હાનિરહિત **પદમ્**-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદને **નયન્તિ**-પ્રાપ્ત થાય છે, તેઓ પરમાત્માનું **પરિ**, **અપ્શ્યન્ત**-સર્વત્રથી દર્શન કરે છે અર્થાત્ સર્વ પદાર્થોમાં (તેનું) ચિંતન કરે છે, જે **એભ્યઃ**-તેઓથી વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષાને પ્રાપ્ત કરીને **આવિઃ**-પ્રકટ **અભવત્**-થાય છે, તે પણ તે પદને પ્રાપ્ત કરે

છે. (૪)

ભાવાર્થ : જે લોકો સુખ દુઃખની વ્યવસ્થા સર્વને **સ્વાત્મવત્** = પોતાની સમાન જાણીને ન્યાયનો આશ્રય કરે છે, તેઓ અવ્યય પદ (= મોક્ષ)ને પ્રાપ્ત કરે છે. જેમ સૂર્ય જળ વરસાવીને નદીઓને પૂર્ણ કરે છે, તેમ વિદ્વાનો સત્ય વચન વરસાવીને મનુષ્યોના આત્માઓને પરિપૂર્ણ કરે છે. (૪)

દિદૃક્ષેણ્યઃ પરિ કાષ્ટાસુ જેન્યઃ ઈલેન્યો મહો અર્ભાય જીવસે ।

પુરુડત્રા યદભવત્સૂરહૈભ્યો ગર્ભેભ્યો મઘવા વિશ્વદર્શતઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! **યત્**-જે **અહ-જ** **અભ્યઃ**-એ **ગર્ભેભ્યઃ**-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય વિદ્વાનો દ્વારા **મહઃ**-બહુજ અને **અર્ભાય**-અલ્પ **જીવસે**-જીવનને માટે **પુસ્ત્રા**-અનેકોમાં **મઘવા**-પરમ પ્રતિષ્ઠિત ધનયુક્ત **વિશ્વદર્શતઃ**-સમસ્ત વિદ્વાનોથી દર્શન યોગ્ય **દિદૃક્ષેણ્યઃ**-વા દર્શનની ઈચ્છાથી ચાહવા યોગ્ય **કાષ્ટાસુ**-દિશાઓમાં **જેન્યઃ**-જીતનાર અર્થાત્ દિગ્વિજયી **ઈલેન્યઃ**-અને સ્તુતિ-પ્રશંસા કરવા યોગ્ય **સૂઃ**-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન **પરિ**, **અભવત્**-થાય, તે સર્વના સત્કારને યોગ્ય છે. (૫)

ભાવાર્થ : જેઓ દિશાઓમાં વ્યાપ્ત યશવાળા શત્રુઓના વિજેતા, શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનોથી વિદ્યા અને સુશિક્ષા પ્રાપ્ત કરેલા તથા શુભ ગુણોને કારણે દર્શનીય જનો છે. તેઓ સંસારનાં મંગળને માટે સમર્થ બને છે. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અગ્નિ અને વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૪૬)

સૂક્ત-૧૪૭

કથા તે અગ્ને શુચયન્ત આયોર્દદાશુર્વાજૈભિરાશુષાણાઃ ।

ઉભે યત્તોકે તનયે દધાના ઋતસ્ય સામનૃણયન્ત દેવાઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! **દદાશુઃ**-દાતા **આયોઃ**-વિદ્વાન્ ! જે આપ તે-તે તમારા **યત્**-જે **વાજૈભિઃ**-વિજ્ઞાનાદિ ગુણોની સાથે **આશુષાણાઃ**-શીઘ્ર વિભાગ કરનારા **તનયે**-પુત્ર અને **તોકે**-પૌત્ર આદિને માટે **ઉભે**-બે પ્રકારના ચરિત્રોને **દધાનાઃ**-ધારણ કરેલ **શુચયન્તઃ**-પવિત્ર વ્યવહાર સ્વયં ઈચ્છતા **દેવાઃ**-વિદ્વાનો છે, તેઓ **સામમ્**-સામવેદમાં **ઋતસ્ય**-સત્ય વ્યવહારનો **કથા**-કેમ **ણયન્ત**-વાદ વિવાદ કરે. (૧)

ભાવાર્થ : સર્વ વિદ્વાન અધ્યાપકો, યતુર્વેદ જ્ઞાતા, આપ વિદ્વાનોથી પૂછે કે અમે કેવી રીતે ભણાવીએ ? તે તેઓને સમ્યક્ રીતે શિક્ષિત કરે, જે રીતે એ વિદ્યાર્થીઓ વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને, જિતેન્દ્રિય અને ધાર્મિક બને, તેમ આપ લોકો ભણાવો; એ જ ઉત્તર છે. (૧)

બોધા મે અસ્ય વર્ચસો યવિષ્ઠ મંહિષ્ઠસ્ય પ્રભૃતસ્ય સ્વધાવઃ ।

पीयति त्वो अनु त्वो गृणाति वन्दारुस्ते तन्वं वन्दे अग्ने ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે સ્વધાવ:-પ્રશસ્ત અન્નવાળા યવિષ્ઠ-અત્યંત તરુણ ! તું મે-મારા અસ્ય-આ મંહિષ્ઠસ્ય-અત્યંત બુદ્ધિયુક્ત પ્રભૂતસ્ય-શ્રેષ્ઠતાથી ધારણ કરેલ વચસ:-વચનને બોધ-જાણ.

હે અગ્ને-વિદ્વત્તમ = વિદ્વાનોમાં શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન્ ! જેમ વન્દારુ-વંદના કરનાર હું તે-તારા તન્વમ્-શરીરને વન્દે-અભિવાદન કરું છું. જેમ ત્વ:-અન્ય કોઈ જન પીયતિ-જળ આદિનું પાન કરે છે; વા જેમ ત્વ:-અન્ય કોઈ જન અનુગૃણાતિ-અનુકૂળતાથી સ્તુતિ-પ્રશંસા કરે છે, તેમ હું પણ બનું. (૨)

ભાવાર્થ : જ્યારે આચાર્યની પાસે શિષ્ય ભણે, ત્યારે પ્રથમ ભણેલની પરીક્ષા આપે. ભણતા પહેલાં આચાર્યને પ્રણામ કરે જેમ બીજા બુદ્ધિમાન વિદ્યાર્થીઓ યુક્તિપૂર્વક ભણે, તેમ તે સ્વયં ભણે. (૨)

ये पायवो मामतेयं ते अग्ने पश्यन्तो अन्धं दुरितादरक्षन् ।

ररक्ष तान्तसुकृतो विश्ववेदा दिप्सन्त इद्रिपवो नाहं देभुः ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! તે-આપના યે-જે પશ્યન્ત:-સમ્યક્ જોનારા પાયવ:-રક્ષા કરનારા મામતેયમ્-પ્રજાના સંતાનો જો અન્ધમ્-અવિદ્યાયુક્ત હોય, તેઓને દુરિતાત્-દુષ્ટ આચરણથી અરક્ષન્-બચાવે છે, તાન્-તેઓ સુકૃત:-સુકૃત-ઉત્તમ કર્મ કરનારાજનોની વિશ્વવેદ:-સમસ્ત વિજ્ઞાનના જ્ઞાતા આપ રરક્ષ-રક્ષા-પાલન કરો, જેથી દિપ્સન્ત:-અમને મારવાની ઈચ્છા કરતા ઇત્-પણ રિપવ:-શત્રુજન ન, અહ-દેભુ:-મારી શકે નહિ. (૩)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્યારૂપી નેત્રવાળા લોકો, જેમ આંધળાને કૂવાથી (બચાવે છે,) તેમ જ મનુષ્યોને અધાર્મિક આચરણથી રક્ષા કરે, તેઓનું સર્વ લોકો પિતાની સમાન સત્કાર કરે અને જે લોકો વ્યસનમાં પાડે, તેઓનો દૂરથી ત્યાગ કરે. (૩)

यो नो अग्ने अररिवाँ अघायुररातीवा मर्चयति द्वयेन ।

मन्त्रो गुरुः पुनरस्तु सो अस्मा अनु मृक्षीष्ट तन्वं दुरुक्तैः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! ય:-જ જે અરરિવાન્-દુઃખોને પ્રાપ્ત કરીને, અઘાયુ:-સ્વ અપરાધની ઈચ્છા કરનાર, અરાતીવા-ન આપનારની સમાન આચરણ કરનાર, દ્વયેન-બે પ્રકારના કર્મ વા દુસ્ક્તૈ:-દુષ્ટ ઉક્તિઓથી ન:-અમને મર્ચયતિ-કહે છે તેથી જે અમારા તન્વમ્-શરીરને અનુ, મૃક્ષીષ્ટ-પશ્ચાત્ પવિત્ર કરે સ:-તે અમારા અને અસ્મૈ-ઉક્ત વ્યવહારને માટે પુન:-વારંવાર મન્ત્ર-વિચારશીલ ગુરુ-ઉપદેશ કરનાર અસ્તુ-બને. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોમાંથી જે, દુષ્ટ શિક્ષા આપે છે, તેઓ ત્યાગ કરવા યોગ્ય અને સત્ય શિક્ષા આપે છે, તેઓ માન કરવા યોગ્ય બને છે. (૪)

उत वा यः सहस्य प्रविद्वान् मर्त्तो मर्त्तं मर्चयति द्वयेन ।

अतः पाहि स्तवमान स्तुवन्तमग्ने माकिर्नो दुरिताय धायीः ॥ ५ ॥

पદાર્થ : સહસ્ય-બળ આદિમાં પ્રસિદ્ધ અને સ્તવમાન-સજ્જનોના પ્રશંસક અગ્ને-વિદ્વાન્ ! તું ય:- જે પ્રવિદ્વાન્-શ્રેષ્ઠતાથી જ્ઞાતા મર્ત્ત:-મનુષ્ય દ્વયેન-અધ્યાપન અને ઉપદેશરૂપથી મર્ત્તમ્-મનુષ્યને મર્ચયતિ-કહે છે અર્થાત્ પ્રશંસિત કરે છે, અતઃ-એથી સ્તુવન્તમ્-સ્તુતિ-પ્રશંસા કરનાર જનનું પાહિ-પાલન કરો ઉત, વા-અથવા ન:-અમારું દુરિતાય-દુષ્ટ આચરણ માટે માકિ:-ધાયી:-કદી પાલન કરો નહિ. (૫)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનજન સુશિક્ષા અને અધ્યાપન દ્વારા મનુષ્યોના આત્મિક અને શારીરિક બલની વૃદ્ધિ કરીને તેઓને અવિદ્યા અને પાપાચરણથી પૃથક્ કરે છે તેઓ 'વિશ્વશોધક' બને છે. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં મિત્ર અને અમિત્રોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની સંગતિ પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે જાણવી જોઈએ. (૧૪૭)

સૂક્ત-૧૪૮

મથીદ્યદીં વિષ્ટો માતરિશ્વા હોતારં વિશ્વાપ્સું વિશ્વદેવ્યમ્ ।

નિ યં દધુર્મનુષ્યાસુ વિક્ષુ સ્વર્ણ ચિત્રં વપુષે વિભાવમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્-જે વિષ્ટ:-પ્રવિષ્ટ માતરિશ્વા-અન્તરિક્ષમાં શયન કરનાર વાયુ વિશ્વદેવ્યમ્-સમસ્ત પૃથિવી આદિ પદાર્થોમાં થયેલ વિશ્વાપ્સુમ્-સમગ્રરૂપ જ જેનો ગુણ છે, તે હોતામ્-સર્વ પદાર્થોને ગ્રહણ કરનાર અગ્નિને મથીત્-મથે છે-મંથન કરે છે; વા વિદ્વાનજન મનુષ્યાસુ-મનુષ્ય સંબંધીની વિક્ષુ-પ્રજાઓમાં સ્વ:-સૂર્યની ન-સમાન ચિત્રમ્-અદ્ભુત અને વપુષે-રૂપને માટે વિભાવમ્-વિશેષતાથી ભાવના કરનાર યમ્-જે અગ્નિને ઈમ્-સર્વત્રથી નિ, દધુ:-નિરંતર ધારણ કરે છે, તે અગ્નિને તમે ધારણ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વાયુની સમાન વ્યાપક વિદ્યુતને મથીને કાર્ય સિદ્ધ કરે છે, તેઓ અદ્ભુત કાર્યો કરી શકે છે. (૧)

દ્વાનમિન્ન દદભન્ત મન્માગ્નિર્વસ્થં મમ તસ્ય ચાકન્ ।

જુષન્ત વિશ્વાન્યસ્ય કર્મોપસ્તુતિં ભરમાણસ્ય કારોઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જે અગ્નિ:-વિદ્વાન મમ-મારા અને તસ્ય-તેના વસ્થમ્-મન્મ-વિજ્ઞાનને દ્વાનમ્-દેનારની ચાકન્-કામના કરે છે, તેને નેત્-દદભન્ત-મારો નહિ, અસ્ય-એ ભરમાણસ્ય-ભરણપોષણ કરીને કારો:-શિલ્પવિદ્યાને સિદ્ધ કરવા યોગ્ય કામોને કરનારા તેઓના વિશ્વાનિ-સમસ્ત કર્મ-કર્મોની ઉપસ્તુતિમ્-સમીપ પ્રાપ્ત થયેલી પ્રશંસાની આપ જુષન્ત-સેવા કરો. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે લોકો જેઓને વિદ્યા આપે, તેઓની તેઓ નિરંતર સેવા કરે અને

सर्व अवश्य वेदाभ्यास करे. (२)

नित्ये चिन्नु यं सद्ने जगृभ्रे प्रशस्तिभिर्दधिरे यज्ञियासः ।

प्र सु नयन्त गृभयन्त इष्टावश्वासो न रथ्यो रारहाणाः ॥ ३ ॥

पदार्थ : यज्ञियासः-शिल्पयज्ञने योग्य सज्जन प्रशस्तिभिः-प्रशंसित क्रियाओथी नित्ये-नित्य = नाश रहित सद्ने-भेसे જે આકાશમાં અને ઇષ્ટૌ-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય ક્રિયામાં ચમ્-જે અગ્નિનું જગૃભ્રે-ગ્રહણ કરે. ચિત્-અને નુ-શીઘ્ર દધિરે-ધારણ કરે તેના આશ્રયથી રારહાણાઃ-જઈ રહેલ જે રથ્યઃ-રથોમાં શ્રેષ્ઠ પ્રશંસિત અશ્વાસઃ-સમ્યક્ શિક્ષિત ઘોડાઓ છે, તેઓની ન-સમાન અને ગૃભયન્તઃ-પદાર્થોને ગ્રહણ કરનારાઓની સમાન આચરણ કરતા રથોની સુ, પ્ર, નયન્ત-શ્રેષ્ઠ રીતે પ્રાપ્ત થાય. (૩)

ભાવાર્થ : જે નિત્ય આકાશમાં સ્થિત વાયુ અને અગ્નિ આદિ પદાર્થોને ઉત્તમ ક્રિયાઓ દ્વારા કાર્યોમાં પ્રયુક્ત કરે છે, તેઓ વિમાન આદિ યાનો બનાવી શકે છે. (૩)

પુરૂણિ દ્વસ્મો નિ રિનાતિ જમ્ભૈરાદ્રોચતે વન આ વિભાવા ।

આદસ્ય વાતો અનુ વાતિ શોચિરસ્તુર્ન શર્યામસનામનુ દ્યૂન્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે વિભાવા-વિશેષ દીપ્તિ કરનાર તથા દ્વસ્મઃ-દુઃખનાશક અગ્નિ જમ્મઃ-ચલાવવા આદિ પોતાના ગુણોથી પુરૂણ-બહુ જ વસ્તુઓને અનુ, દ્યૂન્-પ્રતિદિન નિ, રિનાતિ-નિરંતર પહોંચાડે છે, આત્ તદન્તર વને-વનમાં આ, રોચતે-સમ્યક્ પ્રકાશમાન થાય છે આત્-અને અસ્ય-એનો સંબંધી વાતઃ-વાયુ અનુ, વાતિ-તેની પાછળ વહે છે જેની શોચિઃ-દીપ્તિ-પ્રકાશમાન અસ્તુઃ-પ્રેરક શિલ્પીની અસનામ્-પ્રેરણાની ન-સમાન શર્યામ્-વાયુના તાડનને પ્રાપ્ત થાય છે, તેનાથી શ્રેષ્ઠતમ કાર્યો મનુષ્યોએ સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૪)

ભાવાર્થ : જે લોકો વિદ્યા, ઉત્પાદન તથા તાડન આદિ ક્રિયાઓથી વિદ્યુત્ વિદ્યા સિદ્ધ કરે છે, તેઓ પ્રતિદિન ઉન્નતિને પ્રાપ્ત થાય છે. (૪)

ન ચં રિપવો ન રિષ્ણયવો ગર્ભે સન્તં રેષ્ણા રેષયન્તિ ।

અન્ધા અપશ્યા ન દંભન્નભિખ્યા નિત્યાસ ઈ પ્રેતારો અરક્ષન્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : ચમ્-જેનો રિપવઃ-શત્રુઓ ન રેષયન્તિ-નાશ કરાવી શકતા નથી; વા ગર્ભે, સન્તમ્-મધ્યમાં વર્તમાન જેનો રેષ્ણાઃ-હિંસક રિષ્ણયવઃ-સ્વ નષ્ટ થવાના ઈચ્છુક ન-નષ્ટ કરાવી શકતા નથી; વા નિત્યાસઃ-અવિનાશી અભિખ્યા-સર્વત્રથી ખ્યાતિ કરનાર અને અપશ્યાઃ-ન દેખનારની ન-સમાન અન્ધા, દમન્-જ્ઞાન દષ્ટિ રહિત નષ્ટ કરી શકે નહિ જે પ્રેતારઃ-પ્રીતિકારક ઈમ્-સર્વત્રથી અરક્ષન્-રક્ષા કરે, તે અગ્નિને અને તેને સર્વ સત્કારયુક્ત કરે. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેને શત્રુઓ મારી શકતા નથી અને જે ગર્ભમાં પણ ક્ષીણ થતો નથી. તે આત્મા જાણવા યોગ્ય છે. (૫)

સંગતિ : સૂક્તમાં વિદ્વાન અને અગ્નિ આદિ પદાર્થોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૪૮)

સૂક્ત-૧૪૯

મહઃ સ રાય ઇષતે પતિર્દન્નિન ઇનસ્ય વસુનઃ પદ આ ।

ઉપ ધ્રજન્તમદ્રયો વિધન્નિત્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે ઇનસ્ય-મહાન ઐશ્વર્યના સ્વામીના ઇનઃ-ઈશ્વર વસુનઃ-સામાન્ય ધનના અને મહઃ-મહાન રાયઃ-ધનના દન્-દાતા પતિઃ-સ્વામી આ, ઇષતે-સારા પ્રકારના હોય છે; વા જે વિદ્વાનજન આની પદે-પ્રાપ્તિ માટે ધ્રજન્તમ્-પહોંચનારને અદ્રયઃ-મેઘોની ઇત્-સમાન ઉપાવિધન્-સમીપ જઈને સઃ-સમ્યક્ વિધાન કરવા યોગ્ય છે. (૧)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જેમ સુપાત્રને દાન આપવાથી યશ મળે છે, તેમ અન્ય ઉપાયથી નહિ. તે સંપૂર્ણ ધન પ્રાપ્ત કરે છે. (૧)

સ યો વૃષાં નરાં ન રોદસ્યોઃ શ્રવોંભિરસ્તિ જીવપીતસર્ગઃ ।

પ્ર યઃ સસ્ત્રાણઃ શિશ્રીત યોનોૈ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે શ્રવોભિઃ-અન્ન આદિ પદાર્થોની સાથે જેમ નરામ્-મનુષ્યોમાં ન-તેમ રોદસ્યોઃ-આકાશ અને પૃથિવીની મધ્ય જીવપીતસર્ગઃ-જેને જીવોની સાથે સૃષ્ટિક્રમ પાન કરેલ છે અર્થાત્ વિદ્યાના બળથી પ્રત્યેક જીવના ગુણ-દોષોને ઉત્પત્તિની સાથે જાણેલ છે; વા યઃ-જે સસ્ત્રાણઃ-સર્વ પદાર્થોના ગુણ-દોષોને પ્રાપ્ત કરીને યોનોૈ-કારણમાં અર્થાત્ સૃષ્ટિના નિમિત્તમાં પ્ર,શિશ્રીત-આશ્રય કરે તેમાં આરુઢ થાય, સઃ-તે વૃષા-શ્રેષ્ઠ બળવાન અસ્તિ-છે.

ભાવાર્થ : જે નાયકોમાં નાયક અને પૃથિવી આદિમાં કાર્ય તથા કારણનો જ્ઞાતા મનુષ્ય વિદ્યાનો આશ્રય કરે છે, તે જ સુખી થાય છે. (૨)

આ યઃ પુરં નાર્મિણીમદીંદેત્યઃ ક્વિર્ન'ભુન્યોરૂં નાર્વી ।

સૂરો ન રૂરુક્વાઞ્છતાત્મા ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે અત્યઃ-વ્યાપ્ત થનાર નભન્યઃ-આકાશમાં પ્રસિદ્ધ વાયુ તેની ન-સમાન કવિઃ-

અનુક્રમે પદાર્થોમાં વ્યાપ્ત થનારી બુદ્ધિવાળા (= કાન્તપ્રજ્ઞ) અર્વા-ઘોડા અને સૂરઃ-સૂર્યની ન-સમાન સ્વવાન્-રુચિમાન શતાત્મા-અસંખ્ય પદાર્થોમાં વિશેષ જ્ઞાન રાખનાર જન નાર્મિણીમ્-કીડા વિલાસી આનંદ ભોગવનારા જનોની પુસ્મ્-પુરીને આદીદેત્-સમ્યક્ પ્રકાશિત કરે છે, તે ન્યાય કરવા યોગ્ય બને છે. (૩)

ભાવાર્થ : જે અગણિત પદાર્થોની વિદ્યાઓનો જ્ઞાતા મનુષ્ય સુશોભિત નગરને વસાવી શકે, તે ઐશ્વર્યો દ્વારા સૂર્ય સમાન પ્રકાશયુક્ત બની શકે છે. (૩)

અભિ દ્વિજન્મા ત્રી રોચનાનિ વિશ્વા રજાંસિ શુશુચાનો અસ્થાત્ ।

હોતા યજિષ્ઠો અપાં સધસ્થૈ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ દ્વિજન્મા-બે અર્થાત્ આકાશ વાયુથી જેનો જન્મ એવા હોતા-આકર્ષણ શક્તિથી પદાર્થોને ગ્રહણ કરનાર અને યજિષ્ઠઃ-અત્યંત સંગ કરનાર અગ્નિ અપામ્-જળના સધસ્થૈ-સાથેના સ્થાનમાં ત્રી-ત્રણ રોચનાનિ-અર્થાત્, સૂર્ય, વિદ્યુત્ અને ભૂમિના પ્રકાશોને તથા વિશ્વા-સમસ્ત રજાંસિ-લોકોને શુશુચાનઃ-પ્રકાશિત કરીને અભ્યસ્થાત્-સર્વત્રથી સ્થિત થઈ રહેલ છે, તેમ તમે પણ થાઓ. (૪)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્યા અને ધર્મયુક્ત કર્મોના વિદ્વાનોના સંગથી પ્રકાશિત સ્થાનમાં અનુષ્ઠાન કરે છે, તેઓ સમસ્ત ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોને ગ્રહણ કરી શકે છે. (૪)

અયં સ હોતા યો દ્વિજન્મા વિશ્વા દ્ધે વાર્યાણિ શ્રવસ્યા ।

મર્ત્તો યો અસ્મૈ સુતુકો દ્દાશ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે સુતુકઃ-જે સુંદર વિદ્યાવૃદ્ધ અર્થાત્ ઉન્નતિને પ્રાપ્ત થયેલ મર્ત્તઃ-મનુષ્ય અસ્મૈ-આ વિદ્યાર્થીને માટે વિદ્યાને દ્દાશ-પ્રદાન કરે છે; વા યઃ-જે દ્વિજન્મા-ગર્ભ અને વિદ્યા તથા સુશિક્ષાથી ઉત્પન્ન થયેલ હોતા-શ્રેષ્ઠ ગુણગ્રાહી વિશ્વા-સમસ્ત શ્રવસ્યા-શ્રવણમાં પ્રસિદ્ધ થયેલ વાર્યાણિ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય વિષયોને દ્ધે-ધારણ કરે છે, સઃ અયમ્-એ પુણ્યવાન બને છે. (૫)

ભાવાર્થ : જેના વિદ્યા અને સુશિક્ષાયુક્ત માતાપિતાથી પ્રથમ જન્મ અને આચાર્ય અને વિદ્યાથી બીજો જન્મ થાય, તે દ્વિજ બનીને વિદ્વાન બની શકે છે. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાન અને અગ્નિ આદિ પદાર્થોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની સંગતિ પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે જાણવી જોઈએ. (૧૪૯)

સૂક્ત-૧૫૦

પુરુ ત્વા દાશ્વાન્વોચેઽરિરંગ્ને તવ સ્વિદા । તોદસ્યેવ શરણ આ મહસ્ય ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! દાશ્વાન્ દાતા અને અરિઃ-વ્યવહારોની પ્રાપ્તિ કરાવનાર હું મહસ્ય-મહાન તોદસ્યેવ-જેમ વ્યથા આપનાર તેમ તવ-આપના સ્વિત્-જ આ, શરણે-સારી રીતે ધરમાં ત્વા-આપને પુરુ, આ, વોચે-બહુ જ સમ્યક્ કહું. (૧)

ભાવાર્થ : જે જેનો સેવક હોય, તે તેની આજ્ઞાનું પાલન કરીને કૃતાર્થ = કર્તવ્યપૂરક બને. (૧)

વ્યનિનસ્ય ધનિનઃ પ્રહોષે ચિદરંરુષઃ । ક્વદા ચન પ્રજિગતો અદેવયોઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હું અદેવયોઃ-અદેવ = અવિદ્વાનને પ્રજિગતઃ-શ્રેષ્ઠતાથી નિરંતર પ્રાપ્ત થઈને અસ્ત્રઃ-અહિંસક વ્યનિનસ્ય-વિશેષતાથી પ્રશંસિત પ્રાણના નિમિત્ત ધનિનઃ-બહુ ધનયુક્ત જન છે, પ્રહોષે-તેના સમ્યક્ ગ્રહણ કરનારાઓને માટે ક્વદા, ચન-ક્યારેક પ્રિય વચન ન કહું, એવા ચિત્-તું પણ બોલ નહિ. (૨)

ભાવાર્થ : જે અવિદ્વાન અધ્યાપકો અને ઉપદેશકોના સંગનો ત્યાગ કરીને વિદ્વાનોનો સંગ કરે છે, તે સુખથી પરિપૂર્ણ બને છે. (૨)

વ ચન્દ્રો વિપ્ર મર્ત્યો મહો વ્રાધન્તમો દિવિ । પ્રપ્રેત્તે અગ્ને વનુષઃ સ્યામ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! જેમ અમે વનુષઃ-સમ્યક્ વિભાગ કરનારા તે-આપનો ઉપકાર કરનારા પ્રપ્ર, ઇત્, સ્યામ-શ્રેષ્ઠ પ્રકારથી બનીએ.

હે વિપ્ર-મેધાવીજન જેમ સઃ-તે મર્ત્યઃ-મનુષ્ય વ્રાધન્તમઃ-અત્યંત ઉન્નતિ પ્રાપ્ત, જેમ મહઃ-મહાન ચન્દ્રઃ-ચંદ્રમા દિવિ-આકાશમાં વિદ્યમાન છે, તેમ તું પણ તારો વર્તાવ રાખ. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ પૃથિવી આદિ પદાર્થોના જ્ઞાતા વિદ્વાન વિદ્યાના પ્રકાશનમાં પ્રવૃત્ત થાય છે, તેમ અન્યોએ પણ પ્રવૃત્ત થવું જોઈએ. (૩)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની સંગતિ પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે જાણવી જોઈએ. (૧૫૦)

સૂક્ત-૧૫૧

મિત્રં ન ચં શિમ્યા ગોષુ ગવ્યવઃ સ્વાધ્યો વિદથે અપ્સુ જીજનન્ ।

અરેજેતાં રોદસી પાજસા ગિરા પ્રતિ પ્રિયં ચજતં જનુષામવઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : પ્રિયમ્-જે પ્રસન્ન કરનાર વા ચજતમ્-સંગ કરવા યોગ્ય ચમ્-જે અગ્નિને જનુષામ્-મનુષ્યોની અવઃ-રક્ષા આદિને પ્રતિ-પ્રત્યે, વા સ્વાધ્યઃ-જેની ઉત્તમ ધીર બુદ્ધિ છે, તેઓ ગોષુ-ગાયોમાં ગવ્યવઃ-

ગાયોની ઈચ્છા કરનારા મિત્રં, ન-મિત્રની સમાન વિદથે-યજ્ઞમાં શિમ્યા-કર્મથી અપ્સુ-પ્રાણીઓના પ્રાણોમાં જીવન-ઉત્પન્ન કરાવે અર્થાત્ તે યજ્ઞ કર્મ દ્વારા વર્ષા અને વર્ષાથી અન્ન થાય અને તે અન્નથી પ્રાણીઓની જઠરાગ્નિ પ્રદીપ્ત થાય છે, તે અગ્નિના પાજસા-બળ ગિરા-રૂપ ઉત્તમ શિક્ષિત વાણીથી રોદસી-સૂર્યમંડળ અને પૃથિવીમંડળ અરેજેતામ્-કંપાયમાન થાય છે. (૧)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન પ્રજાપાલન કરવા ઈચ્છે છે, તે મિત્રતા કરીને સમસ્ત જગતની 'સ્વાત્મવત્' = પોતાના આત્માની સમાન રક્ષા કરો. (૧)

यद्ध त्यद्वां पुरुमीढस्य सोमिनः प्र मित्रासो न दधिरे स्वाभुवः ।

अध क्रतुं विदतं गातुमर्चत उत श्रुतं वृषणा पस्त्यावतः ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણા-સુખ આદિની વર્ષા કરીને, દુષ્ટોની શક્તિને બાંધીને = રોકીને અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! તમે બન્ને પુસ્મીઢસ્ય-બહુ જ ગુણોથી સીચેલ પસ્ત્યાવતઃ-પ્રશંસિત ગૃહવાળા સોમિનઃ-પુષ્કળ ઐશ્વર્યયુક્ત સજ્જનની ક્રતુમ્-બુદ્ધિને યત્, હ-જે નિશ્ચયપૂર્વક સ્વાભુવઃ-શ્રેષ્ઠતાથી પરોપકારમાં પ્રસિદ્ધ થનારા જનો મિત્રાસઃ-મિત્રોની ન-સમાન પ્ર, દધિરે-સમ્યક્ ધારણ કરે, ત્યત્-તેઓ ગાતુમ્-પૃથિવીને વિદતમ્-પ્રાપ્ત થાઓ, અધોત-તદનન્તર પણ વામ્-તમારા બન્નેનો અર્ચતે-સત્કાર કરતા જનોને શ્રુતમ્-સાંભળો. (૨)

ભાવાર્થ : જેઓ મિત્રનો સત્કાર સમાન સર્વ મનુષ્યોમાં બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરીને વિદ્યા સ્થાપિત કરે છે, તે 'સૌભાગ્યવાન' બને છે. (૨)

आ वां भूषन्क्षितयो जन्म रोदस्योः प्रवाच्यं वृषणा दक्षसे महे ।

यदीमृताय भरथो यदर्वते प्र होत्रया शिम्या वीथो अध्वरम् ॥ ३ ॥

પદાર્થ : વૃષણા-વિદ્યાની વર્ષા કરાવનારા યત્-જે રોદસ્યોઃ-અન્તરિક્ષ અને પૃથિવીની મધ્ય વિદ્યમાન ક્ષિતયઃ-મનુષ્ય મહે-અત્યંત દક્ષસે-આત્મબળને માટે વામ્-તમારા બન્નેના પ્રવાચ્યમ્-સારી રીતે કહેવા યોગ્ય જન્મ-જન્મને ભૂષન્-સુશોભિત કરે છે, તેઓના સંગથી યત્-જે કારણે અર્વતે-પ્રશંસિત વિજ્ઞાનયુક્ત ઋણાય-સત્યવિજ્ઞાનયુક્ત સજ્જનને માટે હોત્રયા-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય શિમ્યા-સમ્યક્ કાર્યોથી યુક્ત ક્રિયાથી અધ્વરમ્-અહિંસા ધર્મયુક્ત વ્યવહારને તમે આ, ભરથઃ-સારી રીતે ધારણ કરો છો; અને ઈમ્-સર્વત્રથી તેને પ્રઃ, વીથઃ-વ્યાપ્ત થાઓ છો, એથી આપ પ્રશંસા કરવા યોગ્ય છો. (૩)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો બાલ્યાવસ્થાથી લઈને પુત્રો અને કન્યાઓના વિદ્યારૂપી જન્મની વૃદ્ધિ = ઉન્નતિ કરે છે, તેઓ સત્ય વિદ્યાઓના પ્રચાર દ્વારા સર્વને સુભૂષિત કરે છે. (૩)

प्र सा क्षितिरसुर या महि प्रिय ऋतावानावृतमा घोषथो बृहत् ।

युवं दिवो बृहतो दक्षमाभुवं गां न धुर्युप युञ्जाथे अपः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે ઋણાવાનો-સત્ય આચરણ કરનારા, અસુર-પ્રાણની સમાન બળવાન મિત્ર-વરુણ =

રાજા-પ્રજાજન ! યુવમ્-તમે બન્ને જે કારણે **બૃહતઃ**-અત્યંત ઉન્નતિને પ્રાપ્ત **દિવઃ**-પ્રકાશ, **દક્ષમ્**-બળ અને **અપઃ**-કર્મને **ધુરિ**-ગાડી ચલાવવાની ધરાને નિમિત્ત, **આભુવમ્**-સારી રીતે થનારા **ગામ્**-પ્રબળ બળદની ન-સમાન **ઉપ**, **યુજ્ઞાથે**-ઉપયોગમાં લાવો છો; અને **બૃહત્**-અત્યંત **ઋત્તમ્**-સત્ય વ્યવહારને **આઘોષથઃ**-વિશેષતાથી શબ્દાયમાન કરીને પ્રખ્યાત કરો છો, તેથી તમે બન્ને **યા**-જે **મહિ**-અત્યંત **પ્રિયા**-સુખકારિણી **ક્ષિતિઃ**-ભૂમિ છે, **સા**-તે **પ્ર**-પ્રાપ્ત થાય. (૪)

ભાવાર્થ : જેઓ સત્યનું આચરણ અને સત્યનો ઉપદેશ કરે છે. તેઓ અગણિત બળ પ્રાપ્ત કરીને મહા = પૃથિવીનું રાજ્ય ભોગવે છે. (૪)

મહી અત્ર મહિના વારમૃણવથોડરેણવસ્તુજ આ સદ્વન્ધેનવઃ ।

સ્વરન્તિ તા ઉપરતાતિ સૂર્યમા નિમ્નુચ ઉષસસ્તવવિરિવ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે અધ્યાપક અને ઉપદેશક સજ્જનો ! તમે બન્ને **તવ્વવીરિવ**-સૈનિકોની વ્યાપ્તિ સમાન **અત્ર**-આ **મહી**-પૃથિવીમાં **મહિના**-મહાનતાથી **ઉપરતાતિ**-મેઘોના અવકાશયુક્ત અર્થાત્ જેમાં મેઘ આવે-જાય છે, તે અન્તરિક્ષમાં **સૂર્યમ્**-સૂર્યમંડળને **આ**, **નિમ્નુચઃ**-મર્યાદા માની નિરંતર ગમન કરતી **ઉષસઃ**-ઊષા સમાન **અરેણવઃ**-દુષ્ટોને અપ્રાપ્ત **તુજઃ**-સજ્જનોએ ગ્રહણ કરેલી **ધેનવઃ**-જે દુઝણી ગાયો **સદ્વન્**-પોતાના ગૃહમાં = વાડામાં **વારમ્**-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય **આ**, **સ્વરન્તિ**-સર્વત્ર થઈ શબ્દ કરે છે = ભાંભરે છે. **તાઃ**-તેને **ઋણવથઃ**-પ્રાપ્ત થાઓ. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ દુઝણી ગાયો સર્વને તૃપ્ત કરે છે, તેમ અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો વિદ્યા અને સુશિક્ષા આપીને સર્વને સુખી કરે. (૫)

આ વામૃતાય કેશિનીરનૂષત મિત્ર યત્ર વરુણ ગાતુમર્ચથઃ ।

અવ ત્મના સૃજતં પિન્વતં ધિયો યુવં વિપ્રસ્ય મન્મનામિરજ્યથઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે **મિત્ર**-મિત્ર અને **વસ્ત્રા**-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનો ! **યત્ર**-જ્યાં **ઋણાય**-સત્યાચરણને માટે **કેશિનીઃ**-ચમક-દમકવતી સુંદરી સ્ત્રી **વામ્**-તમારી બન્નેની **અનૂષત**-સ્તુતિ કરે, ત્યાં **યુવમ્**-તમે બન્ને **ગાતુમ્**-સત્ય સ્તુતિને **આ**, **અર્ચથઃ**-સમ્યક્ પ્રશંસિત કરો છો **ત્મના**-પોતાનાથી **વિપ્રસ્ય**-મેઘાવીની **ધિયઃ**-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિને **અવ**, **સૃજતમ્**-નિરંતર ઉત્પન્ન કરો અને **પિન્વતમ્**-ઉપદેશ દ્વારા સીંચો **મન્મનામ્**-અને માન કરનારીને **ઇરજ્યથઃ**-ઐશ્વર્યયુક્ત કરો. (૬)

ભાવાર્થ : આ જગતમાં જે પ્રશંસિત સ્ત્રીઓ અને પુરુષો હોય, તેઓ પોતાના સમાન ગુણવાળાઓની સાથે સંબંધ કરે અને બ્રહ્મચર્ય તથા વિજ્ઞાનથી વિજ્ઞાનની ઉન્નતિ કરીને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે. (૬)

યો વાં યજ્ઞૈઃ શશમાનો હ દાશતિ કવિર્હોતા યજતિ મન્મસાર્ધનઃ ।

ઉપાહ તં ગચ્છથો વીથો અધ્વરમચ્છા ગિરઃ સુમતિં ગન્તમસ્મયૂ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! **યઃ**-જે **શશમાનઃ**-સર્વ વિષયોને પાર કરીને **કવિઃ**-અત્યંત

બુદ્ધિયુક્ત **હોતા**-સર્વ વિધ્યોને ગ્રહણ કરનાર **મન્મસાધન**:-જેનું વિજ્ઞાન સાધન છે, તે સજ્જન **યજ્ઞ**:-મળીને કરેલા કામોથી **વામ્**-તમને બન્નેને સુખ **દાશતિ**-આપે છે અને **યજતિ**-તમારો સત્કાર કરે છે, **તં, હ**-તેનાથી જ **અસ્મયુ**-અમારી ઈચ્છા કરીને તમે **ઉપ, ગચ્છથ**:-સંગ પહોંચેલા છો, તેઓ આપ **અહ**-રોક-ટોક વિના **અધ્વરમ્**-હિંસા રહિત વ્યવહારને **ગન્તુમ્**-પ્રાપ્ત થાઓ; અને **ગિર**:-સુશિક્ષિતવાણી તથા **સુમતિમ્**-શ્રેષ્ઠ વિશેષ બુદ્ધિને **અચ્છ**-ઉત્તમ રીતે **વીથ**:-ઈચ્છો. (૭)

ભાવાર્થ : જેઓ સત્ય વિદ્યાના ઈચ્છુક, આ સંસારમાં સર્વને વિદ્યાદાન દ્વારા સુશીલ બનાવીને સુખ પ્રદાન કરે છે, તેઓ સર્વના દ્વારા સત્કાર કરવા યોગ્ય છે. (૭)

યુવાં યજ્ઞૈઃ પ્રથમા ગોભિરઞ્જતઃ ઋતાવાના મનસો ન પ્રયુક્તિષુ।

ભરન્તિ વાં મન્મના સંયતા ગિરોડૃષ્યતા મનસા રેવદાશાથે ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે અધ્યાપક-ઉપદેશક સજ્જનો ! જે **યજ્ઞૈઃ**-યજ્ઞોથી **ગોભિઃ**-સુશિક્ષિત વાણીઓથી **અઞ્જતે**-કામના કરે છે અને **ઋતાવાના**-સત્યાચરણથી સંબંધ રાખનારા **પ્રથમા**-આદિમાં થનાર તમે બન્ને જેમ **મનસઃ**-અન્તઃકરણના **પ્રયુક્તિષુ**-પ્રયોગોને ઉલ્લાસોમાં **ન**-તેમ વ્યવહારોમાં **ભરન્તિ**-પુષ્ટ કરે છે; તથા **વામ્**-તમારી શિક્ષાઓને પામીને **સંયતા**-સંયમયુક્ત **અદૃષ્યતા**-હર્ષ અને મોહ રહિત **મન્મના**-વિજ્ઞાનરૂપ **મનસા**-મનથી **ગિર**:-વાણી અને **રેવત્**-પુષ્કળ ધનથી પરિપૂર્ણ ઐશ્વર્યને પુષ્ટ કરે છે અને તમને **આશાથે**-પ્રાપ્ત થાય છે, તેઓને તમે નિત્ય ભણાવો અને સુશિક્ષા આપો. (૮)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેઓ વિદ્યા પ્રાપ્તિને માટે શ્રદ્ધાપૂર્વક તમારી પાસે આવે અને જે જિતેન્દ્રિય તથા ધાર્મિક હોય, તેઓને તમે વિદ્યાવાન તથા ધાર્મિક બનાવો. (૮)

રેવદ્વયો દધાથે રેવદાશાથે નરા માયાભિરિતઙ્ગતિ માહિનમ્।

ન વાં દ્યાવોઽહ્ભિર્નોત સિન્ધવો ન દૈવત્વં પ્ણયો નાનશુર્મઘમ્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે **નરા**-અગ્રગામી જનો ! જે તમે **માયાભિઃ**-માનવા યોગ્ય બુદ્ધિઓથી **માહિનમ્**-અત્યંત પૂજ્ય અને મહાન પણ **ઇતઙ્ગતિ**-અહીંથી રક્ષા જેથી તે **વયઃ**-અતિ રમ્ય-મનોહર **રેવત્**-પ્રશંસિત ધનયુક્ત ઐશ્વર્યને **દધાથે**-ધારણ કરો છો, તે **રેવત્**-બહુ જ ઐશ્વર્યયુક્ત વ્યવહારને **આશાથે**-પ્રાપ્ત થાઓ છો, તે **વામ્**-આપની **દેવત્વમ્**-વિદ્વતાને **દ્યાવઃ**-પ્રકાશ **ન**-નહિ **અહ્ભિઃ**-દિવસોએ અર્થાત્ એક રસમય **ન**-નહિ **ઉત**-અને **સિન્ધવઃ**-મહા નદી **ન**-નહિ **આનશુઃ**-વ્યાપ્ત થાય અર્થાત્ પોત પોતાના ગુણોથી તિરસ્કાર કરી શકતા નથી, જીતી શકતા નથી, અધિક બની શકતા નથી તથા **પ્ણયઃ**-વ્યવહાર કરતા જન **મઘમ્**-તમારા મહાન ઐશ્વર્યને **ન**-વ્યાપ્ત થતા નથી જીતી શકતા નથી. (૯)

ભાવાર્થ : જેને-જેને વિદ્વાનો પ્રાપ્ત કરે છે, તેને-તેને અન્ય પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. વિદ્વાનોની ઉપમા વિદ્વાન જ હોય છે, અન્ય નહિ. (૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં મિત્ર-વરુણના લક્ષણ અર્થાત્ મિત્ર-વરુણ શબ્દથી લક્ષિત અધ્યાપક અને

ઉપદેશક આદિનું વર્ણન કરેલ છે, તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૫૧)

સૂક્ત-૧૫૨

યુવં વસ્ત્રાણિ પીવસા વસાથે યુવોરચ્છિદ્રા મન્તવો હુ સર્ગાઃ ।

અવાતિરતમનૃતાનિ વિશ્વ ઋતેન મિત્રાવરુણા સચેથે ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મિત્રાવસ્ત્રા-પ્રાણ-ઉદાનની સમાન વર્તમાન અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! જે યુવમ્-તમે પીવસા-સ્થૂલ વસ્ત્રાણિ-વસ્ત્રોને વસાથે-ઓઢો છો; વા જે યુવોઃ-તમારા અચ્છિદ્રાઃ-છિદ્ર-ભેદનરહિત મન્તવઃ-જાણવા યોગ્ય હ-જ પદાર્થ સર્ગાઃ-રચવા યોગ્ય છે. જો તમે વિશ્વા-સમસ્ત અનૃતાનિ-મિથ્યાભાષણ આદિ કામોનું અવાતિરતમ્-ઉલ્લંઘન કરીને પાર કરીને ઋતેન-સત્યથી સચેથે-સંગ કરો છો, તેઓ તમે અમારાથી કેમ સત્કાર કરવા યોગ્ય ન બનો ? (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સદા સ્થૂળ = જાડા અને છિદ્રરહિત વસ્ત્રો ધારણ કરીને, જાણવા યોગ્ય તથા દોષરહિત વસ્ત્ર આદિ પદાર્થો બનાવવા જોઈએ. સદા ધારણ કરેલ સત્ય આચરણ દ્વારા અસત્ય આચરણનો ત્યાગ કરીને ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષ સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૧)

एतच्च त्वो वि चिकेतदेषां सत्यो मन्त्रः कविशस्त ऋधावान् ।

त्रिरश्रिं हन्ति चतुरश्रिर्गो देवनिदो ह प्रथमा अजूर्यन् ॥ २ ॥

પદાર્થ : ત્વ-કોઈ જ ણ્ણામ્-એ વિદ્વાનોમાં જે એવા છે, કે ઋધાવાન્-બહુ જ સ્તુતિ અને સત્ય-અસત્યની વિવેચના કરનારી બુદ્ધિથી યુક્ત કવિશસ્તઃ-મેધાવી કવિઓએ પ્રશંસિત કરેલ સત્યઃ-અવ્યભિચારી મન્ત્રઃ-વિચાર છે; એત્-એને વિચિકેતત્-વિશેષતાથી જાણે છે.

જે ચતુરશ્રિઃ-ચારેય વેદોને પ્રાપ્ત થતા તે ઊગ્રઃ-તીવ્ર સ્વભાવવાળા દેવનિદઃ-જે વિદ્વાનોની નિંદા કરે છે, તેઓને હન્તિ-મારે છે અને ત્રિરશ્રિમ્-જે ત્રણે અર્થાત્ વાણી, મન અને શરીરથી પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે એવા ઉત્તમ પદાર્થોને જાણે છે તેઓ ઉક્ત સર્વ પ્રથમાઃ-પ્રથમા અર્થાત્ અગ્રગામી હ-જ છે અને તેઓ પ્રથમ ચન-જ અજૂર્યન્-વૃદ્ધ થાય છે. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્વાનોની નિંદાનો ત્યાગ કરીને, નિંદકોને દૂર કરીને, સત્યજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને સત્ય-વિદ્યાઓને ભણાવીને, સત્યનો ઉપદેશ કરતા વિસ્તૃત સુખને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ ધન્ય છે. (૨)

अपादेति प्रथमा पद्वतीनां कस्तद्वं मित्रावरुणा चिकेत ।

गर्भो भारं भरत्या चिदस्य ऋतं पिपत्यनृतं नि तारीत् ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે મિત્રાવસ્થા-શ્રેષ્ઠ મિત્ર અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! જે પદ્મતીનામ્-પ્રશંસિત વિભાગો વાળી ક્રિયાઓમાં પ્રથમા-પ્રથમ અપાત્-વિભાગ વિનાની વિદ્યા એતિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તત્-તેને વામ્-તમારાથી કઃ-કોણ આ, ચિકેત-જાણે.

જે ગર્ભઃ-ગ્રહણ કરનાર જન ભાસ્મ-પુષ્ટિને આ, ભરતિ-સુશોભિત કરે છે વા સમ્યક્ રીતે ધારણ કરે છે ચિત્-અને પણ અસ્ય-આ સંસારમાં ત્રહ્મ-સત્ય વ્યવહારને પિપત્તિ-પૂર્ણ કરે છે, તે અનૃતમ્-અસત્ય ભાષણ આદિ કામોનું નિ, તારીત્-નિરંતર ઉલ્લંઘન કરી જાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : જેઓ અસત્યનો ત્યાગ કરીને, સત્યને ધારણ કરીને સાધનોનો સંગ્રહ કરે છે, તેઓ સત્ય વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩)

પ્રયન્તમિત્પરિં જારં કનીનાં પશ્યામસિ નોપનિપદ્યમાનમ્ ।

અનવપૃગ્ણા વિતતા વસાનં પ્રિયં મિત્રસ્ય વરુણસ્ય ધામ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે કનીનામ્-કામના કરતી પ્રજાઓની જાસ્મ્-વયહાનિ કરનારા પ્રયત્નમ્-શ્રેષ્ઠ યત્ન કરે છે, ઉપનિપદ્યમાનમ્-સમીપ પ્રાપ્ત થાય છે, અનવપૃગ્ણા-સંબંધ રહિત અર્થાત્ પૃથક પદાર્થો જે વિતતા-વિસ્તૃત છે, તેનું વસાનમ્-આચ્છાદન કરીને અર્થાત્ પોતાના પ્રકાશથી પ્રકાશિત કરતા સૂર્યની સમાન મિત્રસ્ય-મિત્ર વા વસ્ત્રાસ્ય-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનના ઇત્-જ પ્રિયમ્-પ્રિય ધામ-સુખસાધક ધરને પરિ, પશ્યામસિ-જુએ છે આથી વિરુદ્ધ ન-બને, તેમ તમે પણ એને પ્રાપ્ત થાઓ. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જેમ રાત્રીઓના નાશક અને પોતાના પ્રકાશના વિસ્તારપૂર્વક સૂર્યને જોઈને કાર્ય સિદ્ધ કરે છે તેમ અવિદ્યારૂપી અંધકારના નાશક અને વિદ્યાપ્રકાશક, આપ્ત અધ્યાપકો અને ઉપદેશકોના સંગને પ્રાપ્ત કરીને ક્લેશોને નષ્ટ કરે. (૪)

અનશ્વો જાતો અનભીશુર્વા કનિક્રદત્પતયદૂર્ધ્વસાનુઃ ।

અચિત્તં બ્રહ્મં જુજુષુર્યવાનઃ પ્ર મિત્રે ધામ્ વરુણે ગૃણન્તઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : જે યુવાનઃ-યુવાવસ્થા પ્રાપ્ત જન અનભીશુઃ-નિયામક કિરણોરહિત અનશ્વઃ-જેના જલદી ન ચાલનારા ઘોડાઓ કનિક્રદત્-અને વારંવાર શબ્દ કરે છે; વા પતયત્-ગમન કરતા જાતઃ-પ્રસિદ્ધ થયા છે અને ઠુર્ધ્વસાનુઃ-જેના ઉપરની શિખા અર્વા-પ્રાપ્ત થનાર સૂર્યની સમાન મિત્રે-મિત્ર વા વસ્ત્રો-ઉત્તમ જનના નિમિત્ત ધામ-સ્થાનની ગૃણન્તઃ-પ્રશંસા કરીને અચિત્તમ્-ચિત્તરહિત બ્રહ્મ-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત ધન આદિ પદાર્થોથી યુક્ત અન્નનું પ્ર, જુજુષુઃ-સેવન કરે, તેઓ બળવાન બને છે. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ ઘોડા અને યાન આદિથી રહિત તથા આકાશમાં ઉપર રહેલ સૂર્ય ઈશ્વરના આધારથી શોભિત થાય છે, તેમ વિદ્વાનોની વિદ્યારૂપી આધારવાળા મનુષ્યો પુષ્કળ ધન તથા અન્ન પ્રાપ્ત કરીને

ધર્મયુક્ત વ્યવહારમાં વિરાજમાન રહે છે. (૫)

આ ધેનવોં મામતેયમવન્તીર્બ્રહ્મપ્રિયં પીપયન્ત્સસ્મિન્નૂધન્ ।

પિત્વો ભિક્ષેત વયુનાનિ વિદ્વાનાસાવિવાસન્નદિતિમુરુષ્યેત્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જેમ ધેનવઃ-ગાયો સસ્મિન-પોતાના ઋઘન્-આંચળમાં-આવમાં રહેલ દૂધથી વાછરડાઓને પુષ્ટ કરે છે, તેમ જે સ્ત્રી બ્રહ્મપ્રિયમ્-જેને વેદાધ્યયન પ્રિય તે મામતેયમ્- મમતાથી પોતાના પુત્રની અવન્તીઃ-રક્ષા કરીને આ, પીપયન્-તેની વૃદ્ધિ = ઉન્નતિ કરે છે.

જેમ વિદ્વાન્-વિદ્યાવાન જન આસા-મુખથી પિત્વઃ-અન્નની ભિક્ષેત-યાચના કરીને અદિતિમ્-નાશ રહિત વિદ્યાનું આવિવાસન્-સર્વત્રથી સેવન કરીને, વયુનાનિ-ઉત્તમજ્ઞાનોનું ઉચ્ચેત્-સેવન કરે, તેમ અધ્યાપકો અન્યોને વિદ્યા અને સુશિક્ષા ગ્રહણ કરાવે. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ માતાઓ પોતાના સંતાનોની દૂધ આદિના દાનથી વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ વિદુષી સ્ત્રીઓ અને વિદ્વાનો બાળાઓ અને બાળકોની વિદ્યા અને સુશિક્ષા દ્વારા વૃદ્ધિ કરે. (૬)

આ વાં મિત્રાવરુણા હૃવ્યજુષ્ટિં નમસા દેવાવર્વસા વવૃત્યામ્ ।

અસ્માકં બ્રહ્મ પૃતનાસુ સહ્યા અસ્માકં વૃષ્ટિર્દિવ્યા સુપારા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે દેવો-દિવ્ય સ્વભાવવાળા મિત્રાવરુણા-મિત્ર અને શ્રેષ્ઠજન ! જેમ હું વામ્-તમારી નમસા-અન્નથી હૃવ્યજુષ્ટિમ્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય સેવાને આ, વવૃત્યામ્-સારી રીતે વર્તું, તેમ તમે બન્ને અવસા-રક્ષા આદિ કામથી અસ્માકમ્-અમારા પૃતનાસુ-મનુષ્યોમાં બ્રહ્મ-ધનની વૃદ્ધિ કરાવો.

હે વિદ્વન્ ! જે અસ્માકમ્-અમારી દિવ્યા-શુદ્ધ સુપારા-જેથી સુખપૂર્વક સર્વ કાર્યો પરિપૂર્ણ થાય એવી વૃષ્ટિઃ-દુષ્ટોની શક્તિને બાંધનારી શક્તિ છે, તેને સહ્યાઃ-સહન કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો અતિ પ્રેમપૂર્વક અમને વિદ્યાઓ પ્રદાન કરે, તેમ અમે તેઓની અતિ શ્રદ્ધાપૂર્વક સેવા કરીએ. જેથી અમારી વિશુદ્ધ પ્રશંસાની સર્વત્ર જાણ થાય. (૭)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો તથા શિષ્યોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની સંગતિ પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે જાણવી જોઈએ. (૧૫૨)

સૂક્ત-૧૫૩

યજામહે વાં મહઃ સજોષાં હૃવ્યેર્મિત્રાવરુણા નમોંભિઃ ।

ઘૃતૈર્ઘૃતસ્નૂ અધ્ યદ્વામસ્મે અધ્વર્યવો ન ધીતિભિર્ભરન્તિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઘૃતસ્નૂ-ઘૃતનો સ્નાવ કરનારાઓ મિત્રાવરુણા-મિત્ર અને શ્રેષ્ઠજનો ! વામ્-તમારા બન્નેની

સજોષા:-સમાન પ્રીતિ કરેલ અમે ધીતિભિ:-આંગળીઓથી અધ્વર્યવ:-અહિંસા ધર્મની કામનાવાળાઓની ન-સમાન હવ્યેભિ:-આપવા યોગ્ય નમોભિ:-અન્નાદિ પદાર્થોથી અને ઘૃતૈ:-ઘી આદિ રસોથી મહ:-અત્યંત યજામહે-સત્કાર કરીએ છીએ.

અથ-અનન્તર યત્-જે વ્યવહારને વામ્-તમારા બન્ને માટે અને અસ્મે-અમારા માટે વિદ્વાનો ભરન્તિ-ધારણ કરે છે, તે વ્યવહારને ધારણ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : (જેમ) યજમાનો અગ્નિહોત્ર આદિના અનુષ્ઠાનથી સર્વના સુખની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ સર્વ વિદ્વાનો આચરણ કરે. (૧)

પ્રસ્તુતિર્વા ધામ ન પ્રયુક્તિરયામિ મિત્રાવરુણા સુવૃક્તિઃ ।

અનક્તિ યદ્વાં વિદથેષુ હોતા સુમ્નં વાં સૂરિર્વૃષણાવિર્યક્ષન્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણૌ-સુખની વર્ધા કરનારાઓ મિત્રાવરુણા-મિત્ર અને શ્રેષ્ઠજનો ! ઇચક્ષન્-પ્રાપ્ત થવાની ઈચ્છા કરતા સૂરિઃ-વિદ્વાન સુવૃક્તિઃ-સુંદર રોકવું અને પ્રસ્તુતિઃ-શ્રેષ્ઠ સ્તુતિ હોતા-ગ્રહણ કરનાર પ્રયુક્તિઃ-ઉત્તમ યુક્તિથી ધામ-સ્થાનની ન-સમાન વામ્-તમે બન્ને અયામિ-પ્રાપ્ત થાઉં છું.

યત્-જે વિદ્વાન વામ્-તમારા બન્નેથી વિદથેષુ-વિજ્ઞાનોમાં અનક્તિ-કામના કરે છે; વા વામ્-તમારા બન્ને માટે સુમ્નમ્-સુખ આપે છે. તેને હું પ્રાપ્ત થાઉં છું. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પાપોનું હરણ કરનારા પ્રશંસિત ગુણોને ગ્રહણ કરનારા, વિદ્વાનોના સંગના પ્રેમી અને સર્વને સુખ આપનારા હોય છે, તેઓ 'કલ્યાણના ભાગી' બને છે. (૨)

પીપાય ધેનુરદિતિર્ઋતાય જનાય મિત્રાવરુણા હવિર્દે ।

હિનોતિ યદ્વાં વિદથે સપર્યન્ત્સ રાતહવ્યો માનુષો ન હોતા ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મિત્રાવરુણા-સત્યનો ઉપદેશ કરનારા મિત્ર-વરુણ યત્-જે અદિતિઃ-અખંડિત-અવિનાશી ધેનુઃ-દૂધાળી ગાયની સમાન હવિર્દે-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થોના દાતા તે ઋતાય-સત્ય વ્યવહારને પ્રાપ્ત થયેલ જનાય-પ્રસિદ્ધ વિદ્વાનના નિમિત્ત સુમ્નમ્-સુખની પીપાય-વૃદ્ધિ કરીને તથા વિદથે-વિજ્ઞાનને નિમિત્ત વામ્-તમારા બન્નેની સપર્યન્-સેવા કરતા રાતહવ્યઃ-જેને ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થો આપ્યા તેઓ હોતા-લેનારાઓ માનુષઃ-મનુષ્યની ન-સમાન હિનોતિ-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરાવે છે અને સઃ-તે જન શ્રેષ્ઠ બને છે. (૩)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્યા દાતા અને ગ્રહણ કરવામાં કુશળ અધ્યાપક અને ઉપદેશક સર્વની વૃદ્ધિ = ઉન્નતિ કરે છે, તેઓ શુભ ગુણોની સાથે સર્વત્રથી વૃદ્ધિ = ઉન્નતિ પામે છે. (૩)

ઉત વાં વિક્ષુ મદ્યાસ્વન્ધો ગાવ આપ્શ્ચ પીપયન્ત દેવીઃ ।

ઉતો નોં અસ્ય પૂર્વ્યઃ પતિર્દન્વીતં પાતં પર્યસ ડ્વિસ્ત્રિયાયાઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મિત્ર અને વરુણ = શ્રેષ્ઠજનો ! જેમ **દેવી:-**દિવ્ય **ગાવ:-**વાણી **આપ:-**, **ચ-**અને જળ **મદ્યાસુ-**આનંદિત કરવા યોગ્ય **વિક્ષુ-**પ્રજાજનોમાં **વામ્-**તમારી-બન્નેની **પીપયન્ત-**ઉન્નતિ કરે છે **ઉત-** અને **અન્ધ:-**અન્ન સારી રીતે આપે છે **ઉતો-**અને **પૂર્વ્ય:-**પૂર્વજોએ નિયત કરેલ **પતિ:-**પાલક **ન:-**અમારા **અસ્ય-**અધ્યયન સંબંધી **ઝસ્ત્રિયાયા:-**દૂધાળી ગાયોનાં **પયસ:-**દૂધને **દન્-**આપતા વર્તમાન છે, તેમ તમે બન્ને વિદ્યાને **વીતમ્-**વ્યાપ્ત કરો અને **પાતમ્-**દૂધનું પાન કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જેઓ આ સંસારમાં ગાયોની સમાન સુખદાયી અને પ્રાણોની સમાન પ્રિયજનો પ્રજાઓમાં છે, તેઓ અનુપમ આનંદ પ્રાપ્ત કરે છે. (૪)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં મિત્ર અને વરુણના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૫૩)

સૂક્ત-૧૫૪

વિષ્ણોર્નુ કં વીર્યાણિ પ્ર વોચ્નં યઃ પાર્થિવાનિ વિમમે રજાંસિ ।

યો અસ્કભાયદુત્તરં સધસ્થં વિચક્રમાણસ્ત્રેધોરુગાયઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! **યઃ-**જે **પાર્થિવાનિ-**પૃથિવીમાં વિદિત **રજાંસિ-**લોકોને અર્થાત્ પૃથિવીમાં વિખ્યાત સર્વ સ્થાનોથી **નુ-**શીઘ્ર **વિમમે-**અનેક પ્રકારથી પ્રાર્થિત, **વા યઃ-**જે **ઝ્ઘાયઃ-**બહુ જ વેદમંત્રોથી સ્તુત્ય, ઉત્તરમ્-પ્રલય પશ્ચાત્ **સધસ્થમ્-**સહ સ્થાનને **ત્રેધા-**ત્રણ પ્રકારથી **વિચક્રમાણઃ-**વિશેષ કરીને ચલાયમાનને **અસ્કભાયત્-**રોક છે-સ્તંભન કરે છે. એ **વિષ્ણોઃ-**સર્વવ્યાપક થનાર પરમેશ્વરના **વીર્યાણિ-**પરાક્રમને **પ્ર વોચમ્-**સારી રીતે કહું = વર્ણન કરું અને તેના દ્વારા **કમ્-**સુખ પ્રાપ્ત કરું, તેમ તમે પણ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય પોતાનાં આકર્ષણથી સર્વ ભૂગોળને ધારણ કરે છે, તેમ સૂર્ય આદિ લોકોને, (તેની) કારણભૂત પ્રકૃતિને તથા જીવોને જગદીશ્વર ધારણ કરે છે. જેણે આ અસંખ્ય લોકોનું શીઘ્ર નિર્માણ કર્યું અને જેમાં સર્વ પ્રલયને પ્રાપ્ત થાય છે, તે જ સર્વના દ્વારા ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૧)

પ્ર તદ્વિષ્ણુઃ સ્તવતે વીર્યેણ મૃગો ન ભીમઃ કુચરો ગિરિષ્ઠાઃ ।

યસ્યોરુષ્ઠુ ત્રિષુ વિક્રમણેષ્વધિક્ષિયન્તિ ભુવનાનિ વિશ્વા ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! **યસ્ય-**જે જગદીશ્વરે નિર્માણ કરેલ **ત્રિષુ-**જન્મ, નામ અને સ્થાન એ ત્રણ **વિક્રમણેષુ-**વિવિધ પ્રકારના સૃષ્ટિક્રમોમાં **વિશ્વા-**સમસ્ત **ભુવનાનિ-**લોક-લોકાન્તર **અધિક્ષિયન્તિ-**આધાર રૂપથી નિવાસ કરે છે, **તત્-તે વિષ્ણુઃ-**સર્વવ્યાપી ઈશ્વર પોતાના **વીર્યેણ-**પરાક્રમથી **કુચરઃ-**કુટિલગામી અર્થાત્-ઊંચા-નીચા અનેક વિધ વિષમ સ્થાનોમાં ચાલનાર અને **ગિરિષ્ઠાઃ-**પર્વતો તથા કંદરાઓમાં સ્થિર થનારા **મૃગઃ-**ગુણની **ન-**સમાન **ભીમઃ-**ભયંકર સમસ્ત લોક-લોકાન્તરને **પ્રસ્તવતે-**પ્રશંસિત કરે છે. (૨)

ભાવાર્થ : કોઈ પદાર્થ ઈશ્વરની સૃષ્ટિના નિયમો અને ક્રમનું ઉલ્લંઘન કરી શકતો નથી. જે ધાર્મિકોને મિત્ર સમાન આનંદ દાતા, દુષ્ટોને સિંહ સમાન ભય દાતા અને ન્યાય આદિ ગુણોને ધારણ કરનાર પરમાત્મા છે, તે જ સર્વના અધિષ્ઠાતા અને ન્યાયાધીશ છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૨)

પ્ર વિષ્ણાવે શૂષમેતુ મન્મ ગિરિક્ષિતં ઉરુગાયાય વૃષ્ણૌ ।

ય ઙ્ઙદં દીર્ઘં પ્રયતં સ્ધસ્થમેકૌ વિમમે ત્રિભિરિત્પદેભિઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ય:-જે એક:-એક ઙ્ઙ-જ પરમાત્મા ત્રિભિઃ-ત્રણ અર્થાત્ સ્થૂળ, સૂક્ષ્મ અને અતિસૂક્ષ્મ પદેભિઃ-જાણવા યોગ્ય અંશોથી ઙ્ઙદમ્-આ દીર્ઘમ્-બૃહદ્ પ્રયતમ્-શ્રેષ્ઠ યત્ન સાધ્ય સધસ્થમ્-સિદ્ધાન્તાવયવોથી સહસ્થાનને પ્રવિમમે-વિશેષતાથી રચે છે, તે વૃષ્ણે-અનન્ત પરાક્રમી ગિરિક્ષિતે-મેઘ વા પર્વતોને પોત-પોતાનામાં સ્થિર રાખનાર ઉરુગાયાય-બહુ જ પ્રાણીઓથી વા અનેક પ્રકારથી પ્રશંસિત વિષ્ણાવે-વ્યાપક પરમાત્માનું મન્મ વિજ્ઞાન અને શૂષમ્-બળ એતુ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૩)

ભાવાર્થ : અનન્ત બળવાન પરમેશ્વર વિના કોઈ પણ આ વિચિત્ર જગતનું સર્જન, ધારણ અને પ્રલય કરી શકતા નથી, તેથી એવા પરમેશ્વરને છોડીને અન્ય કોઈની ઉપાસના કોઈએ પણ ન કરવી જોઈએ. (૩)

યસ્ય ત્રી પૂર્ણા મધુના પ્દાન્યક્ષીયમાણા સ્વધયા મદન્તિ ।

ય ઙ્ઙ ત્રિધાતુ પૃથિવીમુત દ્યામેકૌ દ્ધાધાર ભુવનાન્નિ વિશ્વા ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યસ્ય-જે ઈશ્વરમાં મધુના-મધુરાદિ ગુણથી પૂર્ણા-પૂર્ણ અક્ષીયમાણા-વિનાશ રહિત ત્રી-ત્રણ પદાન્નિ-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદ અર્થાત્ લોક સ્વધયા-પોત-પોતાના રૂપને ધારણ કરવા રૂપ ક્રિયાથી મદન્તિ-આનંદને પ્રાપ્ત થાય છે.

ય:-જે એક:-ઙ્ઙ-એક જ પરમાત્મા પૃથિવીમ્-પૃથિવીમંડળ ઉત્-અને દ્યામ્-સૂર્યમંડળ તથા ત્રિધાતુ-જેમાં સત્વ, રજસ્ અને તમસ્ એ ત્રણે ધાતુ વિદ્યમાન છે, તે વિશ્વા-સમસ્ત ભુવનાન્નિ-લોક-લોકાન્તરોને દ્ધાધાર-ધારણ કરે છે, તે જ પરમાત્મા સર્વને માનવા યોગ્ય છે.

ભાવાર્થ : જે અનાદિ કારણ (= પ્રકૃતિ)થી સૂર્ય આદિ પ્રકાશની સમાન પૃથિવીઓને ઉત્પન્ન કરીને સમસ્ત ભોગ્ય પેદાર્થોની સાથે (તેને) સંયુક્ત કરીને (સર્વને) આનંદિત કરે છે, તેના ગુણ-કર્મોની ઉપાસનાથી સર્વેએ આનંદની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૪)

તદસ્ય પ્રિયમ્ભિ પાથૌ અશ્યાં નરો યત્ર દેવયવો મદન્તિ ।

ઁરુક્રમસ્ય સ હિ બન્ધુરિત્થા વિષ્ણૌઃ પ્દે પરમે મધ્વ ઉત્સઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્ર-જેમાં દેવયવ:-દિવ્ય લોકોની કામના કરનારા નર:-અગ્રણી શ્રેષ્ઠજન મદન્તિ-આનંદિત થાય છે, તત્-તે અસ્ય-એ ઉસ્ક્રમસ્ય-અનન્ત પરાક્રમયુક્ત વિષ્ણો:-વ્યાપક પરમાત્માના પ્રિયમ્-પ્રિય પાથ:-માર્ગને અભ્યશ્યામ્-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરું.

જે પરમાત્માના પરમે-અત્યુત્તમ પદે-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય મોક્ષ પદમાં મધ્વ:-મધુરાદિ ગુણયુક્ત પદાર્થ (મધુર આનંદ રસ) ઉત્સ:-કૂપ = કુવા સમાન (સ્રોત સમાન) તૃપ્તિ કરાવનારા ગુણ રહેલા છે, સઃ, હિ-તે જ ઙ્ઠથા-એ રીતે અમારા બન્ધુ:-ભાઈની સમાન દુઃખ વિનાશક હોવાથી સુખ પ્રદાન કરનાર છે. (૫)

ભાવાર્થ : જે લોકો ઈશ્વર દ્વારા વેદના માધ્યમથી આપવામાં આવેલ આજ્ઞાનું અનુસરણ કરે છે, તેઓ મોક્ષ સુખ પ્રાપ્ત કરે છે.

જે લોકો બંધુ-ભાઈને પ્રાપ્ત કરીને તૃપ્ત થાય છે, તેમ (ઉસ્ક્રમ્) ઈશ્વરને પ્રાપ્ત કરીને પૂર્ણ આનંદયુક્ત બની જાય છે. (૫)

તા વાં વાસ્તૂન્યુશ્મસિ ગમધ્યૈ યત્ર ગાવો ભૂરિશૃઙ્ગા અયાસઃ ।

અત્રાહ તદુરુગાયસ્ય વૃષ્ણઃ પરમં પદમવ ભાતિ ભૂરિ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે શાસ્ત્રવેત્તા વિદ્વાનો ! યત્ર-જ્યાં અયાસ:-પ્રાપ્ત થયેલ ભૂરિશૃઙ્ગા:-બહુ જ શિંગડાઓની સમાન શ્રેષ્ઠ તેજવાળા ગાવ:-કિરણો છે, તા-તે વાસ્તૂનિ-સ્થાનોને વામ્-તમે અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો પરમ યોગીજનોને ગમધ્યૈ-પ્રાપ્ત કરવા અમે ઉશ્મસિ-ઈચ્છીએ છીએ.

જે ઉશ્માયસ્ય-અનેક રીતે પ્રશંસિત વૃષ્ણ:-સુખપૂર્વક પરમાત્માના પરમમ્-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદમ્-મોક્ષ પદ ભૂરિ:-અત્યંત અવ, ભાતિ-ઉત્કૃષ્ટ પ્રકાશમાન છે, તત્-તેને અત્રાહ-અહીં જ અમે ઈચ્છીએ છીએ. (૬)

ભાવાર્થ : જ્યાં વિદ્વાનો મુક્તિ પ્રાપ્ત કરે છે, ત્યાં જરા પણ અંધકાર નથી, મોક્ષ પ્રાપ્ત કરેલા આત્માઓ તેજસ્વી હોય છે, તે જ આપ્તોનું મુક્તિપદ છે, તે સર્વત્ર વિસ્તૃત બ્રહ્મ સર્વના પ્રકાશક છે. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં પરમેશ્વર અને મુક્તિનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૫૪)

સૂક્ત-૧૫૫

પ્ર વઃ પાન્તમન્ધસો ધિયાયતે મહે શૂરાય વિષ્ણવે ચાર્ચત ।

યા સાનુનિ પર્વતાનામદાભ્યા મહસ્તસ્થતુર્વતેવ સાધુના ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ધિયાયતે-પ્રજ્ઞા ધારણના ઈચ્છુક મહે-મહાન અને શૂરાય-વીરતા આદિ ગુણોથી યુક્ત વિષ્ણવે, ચ-અને શુભ ગુણોમાં વ્યાપ્ત મહાત્મા માટે વ:-તમારા અન્ધસ:-દ્રવ અન્ન આદિ પદાર્થોના પાન્તમ્-પાનને તમે પ્ર, અર્ચત-શ્રેષ્ઠતાથી સત્કારપૂર્વક આપો તથા યા-જે અદાભ્યા-હિંસાને અયોગ્ય મિત્ર અને વરુણ અર્થાત્ અધ્યાપક અને ઉપદેશક પર્વતાનામ્-જેમ પર્વતોના સાનુનિ-શિખર પર અર્વતેવ-જનાર ઘોડાઓની સમાન તેમ સાધુના-શ્રેષ્ઠ શિક્ષિત શિષ્યથી મહ:-મહાન તસ્થતુ:-સ્થિત થાઓ. અર્થાત્ જેમ ઘોડાથી ઉચ્ચ સ્થાન પર પહોંચી જાય, તેમ વિદ્યાધ્યયનથી કીર્તિના શિખર પર પહોંચી જાય છે. તેઓના પણ ઉત્તમ સત્કાર કરે. (૧)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્યાદાનથી અને સુશિક્ષાથી મનુષ્યોની વિજ્ઞાનની સાથે વૃદ્ધિ = ઉન્નતિ કરે છે, તેઓ 'મહાન' બને છે. (૧)

ત્વેષમિત્થા સમરણં શિમીવતોરિન્દ્રાવિષ્ણૂ સુતપા વામુરુષ્યતિ ।

યા મર્ત્યાય પ્રતિધીયમાનમિત્કૃશાનોરસ્તુરસનામુરુષ્યથઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જે શિમીવતો:-પ્રશસ્ત કર્મયુક્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશકની ઉત્તેજનાથી સમરણમ્-સમ્યક્ પ્રાપ્તિ કરાવનારા ત્વેષમ્-પ્રકાશને પ્રાપ્ત કરીને મર્ત્યાય-મનુષ્યને માટે પ્રતિધીયમાનમ્-સમ્યક્ ધારણ કરેલ વ્યવહારની ઉચ્ચતિ-વૃદ્ધિ કરે છે, તે સુતપા:-સુંદર તપસ્વી સજ્જન પુરુષ યા-જે ઇન્દ્રાવિષ્ણૂ-વિદ્યુત્ અને સૂર્ય સમાન અધ્યયન કરાવનારા અને ઉપદેશ કરનારા તમે બન્ને અસ્તુ:-એક દેશથી બીજા દેશમાં પદાર્થ પહોંચાડનારા કૃશાનો:-વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિની અસનામ્-પહોંચાડવાની ક્રિયાની જેમ ઇત્-જ ઉચ્ચથ:-સેવન કરે છે, ઇત્યા-એજ રીતે વામ્-તમારા બન્નેનું સેવન કરીએ. (૨)

ભાવાર્થ : જેઓ તપસ્વી અને જિતેન્દ્રિય રહીને વિદ્યાનો અભ્યાસ કરે છે, તેઓ સૂર્ય અને વિદ્યુત્ની સમાન પ્રકાશવાન આત્માયુક્ત બને છે. (૨)

તા ઈ વર્દ્ધન્તિ મહ્યાસ્ય પૌંસ્યં નિ માતરાં નયતિ રેતસે ભુજે ।

દધાતિ પુત્રોઽવરં પરં પિતુર્નામં તૃતીયમધિં રોચને દિવઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે વિદુષીઓ અસ્ય-એ પુત્રોના રેતસે-વૃદ્ધિ કરવા માટે અને ભુજે-ભોગાદિ પદાર્થો પ્રાપ્ત કરવા માટે મહિ-અત્યંત પૌંસ્યમ્-પુરુષાર્થને ઈમ્-સર્વત્રથી વર્દ્ધન્તિ-વધારે છે, તે તા:-તેને નયતિ-પ્રાપ્ત કરે છે. એમા એ કારણે છે કે જેથી પુત્ર:-પુત્ર પિતુ:-પિતા અને માતાની ઉત્તેજનાથી શિક્ષાને પ્રાપ્ત કરીને દિવઃ-પ્રકાશમાન સૂર્ય-મંડળના અભિ, રોચને-ઉપરના પ્રકાશમાં અવસ્મ્-અર્વાચીન પરમ્-વા પ્રકૃષ્ટ અને તૃતીયમ્-ત્રીજા નામ-નામને તથા નિ, માતરા-નિરંતર માન કરનારા માતા-પિતાને દધાતિ-ધારણ કરે છે. (૩)

ભાવાર્થ : તે જ માતા-પિતા હિતૈથી હોય છે, કે જે પોતાના સંતાનોને દીર્ઘ સમય બ્રહ્મચર્યપૂર્વક

પૂર્ણ વિદ્યાઓ, ઉત્તમ શિક્ષાઓ અને યુવાવસ્થા પ્રાપ્ત કરાવીને વિવાહિત કરે છે. તેઓ જ પ્રથમ, દ્વિતીય અને તૃતીય પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરીને સૂર્ય સમાન શ્રેષ્ઠ પ્રકાશમાન બને છે. (૩)

તત્તદિદસ્ય પૌસ્યં ગૃણીમસીનસ્ય ત્રાતુરવૃકસ્ય મીદુષઃ ।

યઃ પાર્થિવાનિ ત્રિભિરિદ્વિગામભિરુરુ ક્રમિષ્ટોરુગાયાય જીવસે ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે વિગામભિઃ-વિવિધ પ્રશંસાયુક્ત ત્રિભિઃ-ત્રણ-સત્વ, ૨૪ અને તમોગુણોની સાથે ઉચ્ચાયાય-બહુ જ પ્રશંસિત જીવસે-જીવન માટે પાર્થિવાનિ-પૃથ્વીના વિકારથી ઉત્પન્ન થયેલ ઇત્-જ પદાર્થોને ઉરુ, ક્રમિષ્ટ-ક્રમથી અત્યંત પ્રાપ્ત થાય છે, તત્તત્-તે-તે ત્રાતુઃ-રક્ષા કરનારા ઇનસ્ય-સમર્થ ઈશ્વરની સમાન અસ્ય-બ્રહ્મચર્ય-જિતેન્દ્રિય એ અવૃકસ્ય-ચોરી આદિ દોષ રહિત મીદુષઃ-વીર્ય સેચન સમર્થ પુરુષના પૌસ્યમ્-પુરુષાર્થની ઇત્-જ અમે ગૃણીમસિ-પ્રશંસા કરીએ છીએ. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, દીર્ઘકાળ સુખપૂર્વક જીવવા માટે ચિરકાળ સુધી બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરીને નીરોગતા દ્વારા અને ધાતુઓની સમતાની વૃદ્ધિ દ્વારા શારીરિક બળ તથા વિદ્યા અને યોગાભ્યાસની ઉન્નતિ દ્વારા આત્મિક બળની વૃદ્ધિ કરીને સદા સુખી રહેવું જોઈએ.

જેઓ ઈશ્વરની આ આજ્ઞાનું પાલન કરે છે, તેઓ બાલ્યાવસ્થામાં સ્વયંવર વિવાહ કદીપણ કરતા નથી. આમ કર્યા વિના પુરુષાર્થથી પૂર્ણ સિદ્ધિ સંભવ નથી. (૪)

દ્વે ઇદસ્ય ક્રમણે સ્વદૃશોઽભિચ્ચાય મત્યો ભુરણ્યતિ ।

તૃતીયમસ્ય નકિરા દધર્ષતિ વયશ્ચન પતયન્તઃ પતત્રિણઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : જે મત્યઃ-મનુષ્ય સ્વદૃશઃ-સુખદાતા અસ્ય-આ બ્રહ્મચારીના દ્વે, ક્રમણે-બે અનુક્રમથી ચાલનારા અર્થાત્ વર્તનારા શરીરબળ અને આત્મબળને અભિચ્ચાય-સર્વત્રથી પ્રખ્યાત કરવા ભુરણ્યતિ-ધારણ કરે છે, તે પતયન્તઃ-ઉપર-નીચે જતા પતત્રિણઃ-પાંખોવાળા વયઃ-પક્ષીઓ ચન-પણ ઇત્-જેમ કોઈ પદાર્થનો વિસ્તાર કરે, તેમ પણ અસ્ય-આ બ્રહ્મચારીના તૃતીયમ્-ત્રીજા વિદ્યાજન્મનો નકિ; આ, દધર્ષતિ-તિરસ્કાર કરતા નથી. (૫)

ભાવાર્થ : જે માતા-પિતા પોતાના સંતાનોને વિદ્યા રૂપી જન્મની બ્રહ્મચર્યને અનુરૂપ વૃદ્ધિ = ઉન્નતિ કરે છે, તેઓ પોતાના સંતાનોને દીર્ઘાયુ, બળવાન અને સુશીલ બનાવીને નિત્ય પ્રસન્ન રહે છે. (૫)

ચતુર્ભિઃ સાકં નવતિં ચ નામ્ભિશ્ચક્રં ન વૃત્તં વ્યતીરવીવિપત્ ।

બૃહચ્છરીરો વિમિમાનઃ ઋક્વર્ષિર્યુવાકુમારઃ પ્રત્યૈત્યાહવમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જે વિમિમાનઃ-વિશેષતાથી ધાતુઓની વૃદ્ધિ કરીને બૃહચ્છરીરઃ-બળવાન સ્થૂળ શરીરયુક્ત અકુમારઃ-પચ્ચીસ વર્ષથી અધિક યુવા-પરંતુ યુવાવસ્થાને પ્રાપ્ત બ્રહ્મચારી વૃત્તમ્-ગોળ ચક્રમ્-ચક્રની

ન-સમાન ચતુર્ભિઃ-ચાર નામભિઃ-નામોની સાકમ્-સાથે નવતિં, ચ-નેવું અર્થાત્ ચોરાણું નામોથી વ્યતીન્-વિશેષતાથી જેને બળ પ્રાપ્ત થયેલ તે બળવાન યોદ્ધાઓને એકલો પણ અવીવિપત્-અત્યંત ભમાવે-ફેરવે છે, તે ઋક્ષવભિઃ-પ્રશંસિત ગુણ-કર્મ-સ્વભાવથી આહવમ્-પ્રતિષ્ઠાપૂર્વક બોલવવાને પ્રતિ, ણ્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે. (૬)

ભાવાર્થ : જે અડતાલીસ વર્ષો સુધી અખંડ બ્રહ્મચર્યનું સેવન કરે છે, તે એકલો નિઃસહાય પણ ગોળ ચક્રની સમાન ચોરાણુ યોદ્ધાઓને ચક્કર લગાવવામાં સમર્થ બને છે.

મનુષ્યોમાં-દશ વર્ષ સુધી બાલ્યાવસ્થા, પચ્ચીસ વર્ષ સુધી કુમારાવસ્થા (અને) ત્યારપછી છવીસમા વર્ષથી યુવાવસ્થાનો આરંભ પુરુષનો (થાય છે.) અને સત્તર વર્ષથી કન્યાની યુવાવસ્થાનો આરંભ થાય છે. ત્યાર પછી જેઓ સ્વયંવર વિવાહ કરે છે અને કરાવે છે, તેઓ 'મહાન ભાગ્યશાળી' બને છે. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અધ્યાપક, ઉપદેશક અને બ્રહ્મચર્યનાં ફળના વર્ણનથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૫૫)

સૂક્ત-૧૫૬

ભવાં મિત્રો ન શેવ્યોઃ ઘૃતાસુતિર્વિભૂતદ્યુમ્ન એવયા ઉ સપ્રથાઃ ।

અર્ધા તે વિષ્ણો વિદુષા ચિદર્ધ્યઃ સ્તોમો યજ્ઞશ્ચ રાધ્યો હવિષ્મતા ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિષ્ણો-સમગ્ર વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત ! તે-તમારો જો અર્ધ્યઃ-ઉન્નતિ અને સ્તોમઃ-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય વ્યવહાર, યજ્ઞઃ, ચ-અને સંગ કરવા યોગ્ય બ્રહ્મચર્ય નામ રૂપ યજ્ઞ, હવિષ્મતા-પ્રશસ્ત વિદ્યાદાન અને ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વ્યવહાર, રાધ્યઃ-સમ્યક્ સિદ્ધ કરવા યોગ્ય છે; તેનું અનુષ્ઠાન આરંભ કરીને અધ-અનન્તર શેવ્યઃ-સુખી કરવા યોગ્ય મિત્રઃ-મિત્રની ન-સમાન એવયાઃ-રક્ષા કરવાવાળાને પ્રાપ્ત થનાર ઉ-તર્ક-વિતર્કની સાથે સપ્રથાઃ-શ્રેષ્ઠ પ્રસિદ્ધિયુક્ત વિદુષા-અને આપ્ત શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનની સાથે ચિત્-પણ ઘૃતાસુતિઃ-જેની ઘૃત ઉત્પન્ન થાય છે અને વિભૂતદ્યુમ્નઃ-જેથી વિશેષ ધન વા યજ્ઞ થાય છે, તેમ તું ભવ-બન. (૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો જેમ બ્રહ્મચર્ય-પાલન નામક યજ્ઞની વૃદ્ધિ, પ્રશંસા અને સિદ્ધિ કરવા ઈચ્છે છે, તેનું સમ્યક્ સેવન કરીને મનુષ્ય, વિદ્વાન બનીને સર્વનો મિત્ર બને. (૧)

યઃ પૂર્વાય વેધસે નવીયસે સુમજ્ઞાનયે વિષ્ણવે દદાશતિ ।

યો જાતમસ્ય મહતો મહિ બ્રવત્સેદુ શ્રવોંભિર્યુજ્યં ચિદુર્ધ્યસત્ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે નવીયસે-અત્યંત વિદ્યા ભણેલ નવીન સુમજ્ઞાનયે-સુંદરતાથી પ્રાપ્ત વિદ્યાથી પ્રસિદ્ધ પૂર્વાય-પૂર્વજ વિદ્વાનોની સુશિક્ષા સંપન્ન વેધસે-મેધાવી અર્થાત્ ધીર વિષ્ણવે-વિદ્યામાં વ્યાપ્ત થવાનો સ્વભાવ રાખનારને માટે વિજ્ઞાન દદાશતિ-પ્રદાન કરે છે.

યઃ-જે અસ્ય-આ મહતઃ-સત્કાર કરવા યોગ્ય જનના મહિ-મહાન પ્રશંસિત જાતમ્-ઉત્પન્ન થયેલ વિજ્ઞાનને બ્રવત્-પ્રકટ કહે; ડ-અને શ્રવોભિઃ-શ્રવણ, મનન અને નિદિધ્યાસન અર્થાત્ અત્યંત ધારણ કરવા, વિચારવા અને અત્યંત ઉત્પન્ન થયેલ યુજ્યમ્-સમાધાન યોગ્ય વિજ્ઞાનનો અભ્યસત્-અભ્યાસ કરે સઃ, ચિત્-તે જ વિદ્વાન બને છે અને ઙ્-તે જ અધ્યાપનને યોગ્ય બને છે. (૨)

ભાવાર્થ : જેઓ નિષ્કપટ ભાવથી બુદ્ધિમાન વિદ્યાર્થીઓને ભણાવે છે અને ઉપદેશ કરે છે તથા જેઓ ધર્મપૂર્વક ભણે છે અને અભ્યાસ કરે છે, તેઓ મહાન વિદ્વાન અને ધાર્મિક બનીને 'મહાસુખ'ને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨)

તમ્ સ્તોતારઃ પૂર્વ્ય યથા વિદ્ ઋતસ્ય ગર્ભ જનુષા પિપર્તન ।

આસ્ય જાનન્તો નામ ચિદ્વિવક્તન મહસ્તૈ વિષ્ણો સુમતિં ભજામહે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે સ્તોતારઃ-સમસ્ત વિદ્યાઓની સ્તુતિ કરનારા સજ્જનો ! યથા-જેમ તમે જનુષા-વિદ્યાજન્મથી પૂર્વ્યમ્-પૂર્વ વિદ્વાનોએ કરેલ તમ્-તે આપ્ત અધ્યાપક વિદ્વાનને વિદ્-જાણો; ઋતસ્ય-સત્ય વ્યવહારના ગર્ભમ્-વિદ્યા સંબંધી બોધને ડ-તર્ક-વિતર્કથી પિપર્તન-પાળો વા વિદ્યાઓથી અને સેવાથી પૂર્ણ કરો; તથા અસ્ય-એના ચિત્-પણ નામ-નામ આ, જાનન્તઃ-સમ્યક્ જાણીને વિવક્તન-કહો-ઉપદેશ કરો, તેમ અમે પણ પાળીએ અને પૂર્ણ કરીએ.

હે વિષ્ણો-સમગ્ર વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત વિદ્વાન ! અમે જે તે-આપથી મહઃ-મહાન સુમતિમ્-સુંદર બુદ્ધિનું ભજામહે-સેવન કરીએ છીએ, તે આપ અમને સુશિક્ષા પ્રદાન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો વિદ્યાની વૃદ્ધિ માટે ચતુર્વેદજ્ઞાતા અધ્યાપકને પ્રાપ્ત કરીને અને તેની સારી રીતે સેવા કરીને સત્ય વિદ્યાઓને પ્રયત્નથી ગ્રહણ કરીને પૂર્ણ વિદ્વાન બને. (૩)

તમસ્ય રાજા વરુણસ્તમશ્વિના ક્રતું સચન્ત મારુતસ્ય વેધસઃ ।

દાધાર દક્ષમુત્તમમર્હવિદં વ્રજં ચ વિષ્ણુઃ સખિવાં અપોર્ણુતે ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે સખિવાન્-બહુ જ વાયુરૂપ મિત્રોવાળા વિષ્ણુઃ-પોતાની દીપ્તિથી વ્યાપક સૂર્યમંડળ ઉત્તમમ્-પ્રશંસિત દક્ષમ્-બળને દાધાર-ધારણ કરે છે અને અર્હવિદમ્-જે દિવસોને પ્રાપ્ત થાય છે અર્થાત્ જ્યાં દિવસ હોય છે તે વ્રજં, ચ-પ્રાપ્ત થયેલ દેશને અપોર્ણુતે-પ્રકાશિત કરે છે, તે અસ્ય-એ મસ્તસ્ય-વાયુરૂપ મિત્રોવાળા વેધસઃ-વિદાતા સૂર્યમંડળના તમ્-તે ક્રતુમ્-કર્મને વસ્મઃ-શ્રેષ્ઠ રાજા-પ્રકાશમાન સજ્જન અને તમ્-તે કર્મને અશ્વિના-અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો સચન્ત-પ્રાપ્ત થાઓ. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ અન્ય સજ્જન, આપ્ત વિદ્વાનની વિદ્યાઓ ગ્રહણ કરીને તથા બુદ્ધિની ઉન્નતિ-વૃદ્ધિ કરીને પૂર્ણ બળ પ્રાપ્ત કરે છે (અને) જેમ જ્યાં-જ્યાં સૂર્ય અંધકારનું નિવારણ કરે છે, તેમ ત્યાં-ત્યાં તેના મહત્વને જોઈને, સર્વ મનુષ્ય પૂર્ણ વિદ્યાઓના વિદ્વાન દ્વારા વિદ્યા અને શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને અવિદ્યારૂપી અંધકારને દૂર કરે. (૪)

आ यो विवाय सचथाय दैव्य इन्द्राय विष्णुः सुकृते सुकृत्तरः ।

वेधा अजिन्वत्त्रिषधस्थ आर्यमृतस्य भागे यजमानमाभजत् ॥ ५ ॥

પદાર્થ : ય:-જે દૈવ્ય:-વિદ્વાનોના સંબંધી ત્રિસધસ્થ:-કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાન એ ત્રણેયમાં સ્થિત સુકૃત્તર:-અત્યંત ઉત્તમ કર્મયુક્ત વિષ્ણુ:-વિદ્યા પ્રાપ્ત વેધા:-મેધાવી-ધીર બુદ્ધિ સજ્જન સચથાય-ધર્મ સંબંધને પ્રાપ્ત સુકૃતે-ધર્માત્મા ઇન્દ્રાય-પરમૈશ્વર્યવાન જનને માટે ત્રહ્મસ્ય-સત્યના ભાગે-સેવન નિમિત્ત આર્યમ્-સમસ્ત ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોમાં વિદ્યમાન યજમાનમ્-વિદ્યાદાતાનું આ, અભજત્-સારી રીતે સેવન કરે તથા જે સર્વને વિદ્યા અને શિક્ષા આપીને અજિન્વત્-પ્રાણ-પોષણ કરે, તે પૂર્ણ સુખને આ, વિવાય-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે. (૫)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનોના પ્રિય, કૃતજ્ઞ, શુભ કર્મ-કર્તા તથા સમસ્ત વિદ્યાઓના જ્ઞાતા (બનીને) સત્યધર્મ અને વિદ્યાની પ્રાપ્તિ કરાવવાથી સર્વજનોને સુખ આપે છે, તેઓ સમસ્ત સુખોને પાત્ર હોય છે. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાન અધ્યાપક અને વિદ્યાર્થીઓના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૫૬)

સૂક્ત-૧૫૭

અબોધ્યગ્નિર્જ્મ ઉદેતિ સૂર્યો વ્યુષાશ્ચન્દ્રા મહાવો અર્ચિષા ।

આયુક્ષાતામશ્વિના યાતવે રથં પ્રાસાવીદેવઃ સવિતા જગત્પૃથક્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જેમ અગ્નિ:-વિદ્યુતાદિ અગ્નિ અબોધિ-જાણવામાં આવે છે, જ્મ:-પૃથિવીથી પૃથક્ સૂર્ય:-સૂર્યનો ઉદેતિ-ઉદય થાય છે, મહી-મહાન ચન્દ્રા-આનંદપ્રદ ઉષા:-ઊષાકાળ વ્યાવ:-પ્રસરીને પ્રકાશ પ્રદાન કરે છે.

જેમ સવિતા-ઐશ્વર્યકારક દેવ:-દિવ્યગુણી સૂર્યમંડળ અર્ચિષા-પોતાનાં કિરણ સમૂહથી જગત્-મનુષ્યાદિ પ્રાણીમાત્ર જગતને પૃથક્-પૃથક્ પ્રાસાવીત્ સમ્યક્ પ્રેરણા આપે છે, તેમ અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્વાન યાતવે-જવા માટે રથમ્-વિમાનાદિ વાહનને અયુક્ષાતામ-યુક્ત કરે છે. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુત્, સૂર્ય અને ઊષા રાત્રિને દૂર કરીને પ્રકાશને ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ જ અધ્યાપક અને ઉપદેશક વ્યાપ્ત પદાર્થોને જોઈને, સરળતાથી મનુષ્યોના શરીર અને આત્મામાં બળને ઉત્પન્ન કરે. (૧)

યદ્યુજ્જાથે વૃષ્ણમશ્વિના રથં ઘૃતેન નો મધુના ક્ષત્રમુક્ષતમ્ ।

અસ્માકં બ્રહ્મ પૃતનાસુ જિન્વતં વયં ધના શૂરસાતા ભજેમહિ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સભા અને સેનાધીશો ! તમે યત્-જેનાથી વૃષણમ્-શત્રુઓની શક્તિને રોકનારા રથમ્-વિમાન આદિ વાહનોને યુદ્ધાથે-યુક્ત કરો છો, એથી ઘૃતેન-જળ અને મધુના-મધુર આદિ ગુણયુક્ત રસથી ન:-અમારા ક્ષત્રમ્-ક્ષત્રિયકુળને ઉક્ષતમ્-સીંચો, અસ્માકમ્-અમારી પૃતનાસુ-સેનાઓમાં બ્રહ્મ-બ્રાહ્મણકુળને જિન્વતમ્-પ્રસન્ન કરો અને વયમ્-અમે પ્રજા-સેનાજન શૂરસાતા-વીરોને સેવવા યોગ્ય સંગ્રામમાં ધના-ધનોનું ભજેમહિ-સેવન કરીએ. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, રાજનીતિના અંગોથી રાજ્યની રક્ષા કરીને, ધન આદિની વૃદ્ધિ કરીને તથા સંગ્રામોને જીતીને સર્વના સુખની વૃદ્ધિ = ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૨)

અર્વાઙ્ ત્રિચક્રો મધુવાહનો રથો જીરાશ્વો અશ્વિનોર્યાતુ સુષ્ટુતઃ ।

ત્રિવન્ધુરો મઘવા વિશ્વસૌભગઃ શં ન આ વક્ષદ્ દ્વિપદે ચતુષ્પદે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે અશ્વિનો:-વિદ્વાનોની ક્રિયામાં કુશળ સજ્જનોની ઉત્તેજનાથી સુષ્ટુતઃ-સુંદર પ્રશંસિત મધુવાહન:-જળથી વહાવવા યોગ્ય ત્રિચક્ર:-જેમાં ત્રણ ચક્ર, જીરાશ્વ:-વેગરૂપ ઘોડાઓ અને ત્રિવન્ધુર:-ત્રણ બંધન વિદ્યમાન હોય; વા વિશ્વસૌભગ:-જેનાથી સમસ્ત સુંદર ઐશ્વર્ય ભોગ થાય, તે અર્વાઙ્-અધ: દેશ અર્થાત્ જળમાં ચાલનાર મઘવા-પ્રશંસિત ધનયુક્ત રથ:-રથ ન:-અમારા દ્વિપદે-દ્વિપાદ મનુષ્યાદિ વા ચતુષ્પદે-ચોપગા-ગાય આદિ પ્રાણીઓને માટે શમ્-સુખનું આ, વક્ષત્-આહ્વાન કરાવે અને અમને યાતુ-પ્રાપ્ત થાય. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, એવો પ્રયત્ન કરવો જોઈએ, જેથી તેઓ પદાર્થવિદ્યા દ્વારા પ્રશંસનીય યાન-વાહન બનાવી શકે. એમ કર્યા વિના સમસ્ત સુખ મળી શકતું નથી. (૩)

આ ન ઋર્જૈ વહતમશ્વિના યુવં મધુમત્યા નઃ કશ્યા મિમિક્ષતમ્ ।

પ્રાયુતારિષ્ટં ની રપાંસિ મૃક્ષતં સેઘતં દ્વેષો ભવતં સચાભુવા ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-અધ્યાપક અને ઉપદેશક ! યુવમ્-તમે બન્ને મધુમત્યા-બહુ જ જળની વરાળના વેગોથી યુક્ત કશ્યા-ગતિ વા શિક્ષાથી ન:-અમારા માટે ઋર્જમ્-પરાક્રમની આ, વહતમ્-પ્રાપ્તિ કરો, મિમિક્ષતમ્-પરાક્રમની પ્રાપ્તિ કરાવવાની ઈચ્છા ન:-અમારી આયુ:-વયને પ્ર, તારિષ્ટમ્-સમ્યક્ રીતે પાર પહોંચાડો, દ્વેષ:-વેરભાવયુક્ત ર્યાંસિ-પાપોથી નિ:-સેઘતમ્-દૂર કરો, અમને મૃક્ષતમ્-શુદ્ધ-પવિત્ર કરો અને અમારા સચાભુવા-સહકારી ભવતમ્-બનો. (૪)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક અને ઉપદેશક એવી શિક્ષા આપે, જેથી અમે સર્વના મિત્ર બનીને, પક્ષપાતથી ઉત્પન્ન પાપોનો ત્યાગ કરીને, અભીષ્ટને સિદ્ધ કરનારા બનીએ. (૪)

યુવં હ ગર્ભં જગતીષુ ધત્યો યુવં વિશ્વેષુ ભુવનેષ્વન્તઃ ।

યુવમગ્નિં ચ વૃષણાવપશ્ચ વનસ્પતીરશ્વિનાવૈરયેથામ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણા-જળની વર્ષા કરાવનારા અશ્વિનૌ-સૂર્ય અને ચંદ્રમાની સમાન અધ્યાપક અને ઉપદેશક યુવમ્-તમે બન્ને જગતીષુ-વિભિન્ન પૃથિવી આદિ સૃષ્ટિઓમાં ગર્ભમ્-ગર્ભની સમાન વિદ્યાના બોધને ધત્થઃ-ધરો છો, યુવં, હ-તમે જ વિશ્વેષુ-સમસ્ત ભુવનેષુ-લોક-લોકાન્તરોના અન્તઃ-મધ્યે અગ્નિમ્-અગ્નિને ચ-પણ એરયેથામ્-ચલાવો છો તથા યુવમ્-તમે અપઃ-જળ અને વનસ્પતીન્-વનસ્પતિ આદિ વૃક્ષોને ચ-ડોલાવો છો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ આ જગતમાં સૂર્ય અને ચંદ્રમા વિરાજમાન થઈને પૃથિવીમાં વર્ષા દ્વારા ગર્ભ ધારણ કરાવીને સર્વ પદાર્થોને ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ મનુષ્ય વિદ્યારૂપી કાર્યને ધારણ કરાવીને સર્વ સુખોને ઉત્પન્ન કરે. (૫)

યુવં હ સ્થો ભિષજા ભેષજેભિરથો હ સ્થો રથ્યાઙ્ રાથ્યેભિઃ ।

અથો હ ક્ષત્રમધિ ધત્થ ડગ્રા યો વાં હવિષ્માન્મનસા દ્દાશ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાદિ સદ્ગુણોમાં વ્યાપ્ત સજ્જનો ! યુવં, હ-તમે જ ભેષજેભિઃ-રોગ નિવારક વેદોની સાથે ભિષજા-રોગ દૂર કરનારા સ્થઃ-છો અથો-અનન્તર હ-નિશ્ચયપૂર્વક રાથ્યેભિઃ-રથ પહોંચાડનારા અશ્વ આદિની સાથે રથ્યા-રથમાં પ્રવીણ રથવાળા સ્થઃ-છો અથો-અનન્તર ડગ્રા-તીવ્ર સ્વભાવવાળા સજ્જનો ! યઃ-જે હવિષ્માન્-બહુ દાનયુક્ત જન વામ્-તમારા બન્ને માટે મનસા-વિજ્ઞાન દ્વારા દ્દાશ-પ્રદાન કરે છે અર્થાત્ પદાર્થોને અર્પણ કરે છે હ-તેને માટે ક્ષત્રમ્-રાજ્યને અધિ-ધત્થઃ-અધિકતાથી ધારણ કરો છો. (૬)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્યો વિદ્યાન વેદોનો સંગ કરે છે, ત્યારે તે વેદક વિદ્યા પ્રાપ્ત કરી શકે છે.

જ્યારે વીર લોકો દાની બને છે, ત્યારે તેઓ રાજ્ય ધારણ કરીને, પ્રશંસિત થઈને નિરંતર સુખી રહે છે. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અશ્વિઓના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૫૭)

સૂક્ત-૧૫૮

વસૂ રુદ્રા પુરુમન્તૂ વૃધન્તા દશ્સ્યતં નોવૃષણાવભિષ્ટૌ ।

દસ્ત્રા હ યદ્રેક્ષ્ણ ઔચથ્યો વાં પ્ર યત્સસ્ત્રાથે અકવાભિરૂતી ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સભા અને શાલાધીશો ! યત્-જે વામ્-તમારા બન્નેનું ઔચથ્યઃ-ઉચિત અર્થાત્ પ્રશંસિતોમાં થયેલ રેક્ષ્ણઃ-ધન છે, તે ધનને યત્-જે તમે બન્ને અક વાભિઃ-પ્રશંસિત કૃતી-રક્ષાઓથી અમારા માટે સસ્ત્રાથે-પ્રાપ્ત કરાવો છો, તે હ-જ વૃધન્તા-વૃદ્ધિ પામીને, પુસ્મન્તૂ-અનેકોને માનવા યોગ્ય દસ્ત્રા-દુઃખનાશક વૃષણૌ-બળવાન, વસુ-નિવાસ આપનારા, સ્દા-ચાલીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યા અધ્યયન

કરેલ સજ્જનો અભિષ્ઠૌ-ઈચ્છિત સિદ્ધિ માટે ન:-અમારા માટે સુખ પ્ર, દશસ્યતમ્-શ્રેષ્ઠતાથી પ્રદાન કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેઓ સૂર્ય અને વાયુ સમાન સર્વનો ઉપકાર કરે છે, તેઓ ધનવાન બને છે. (૧)

કો વાં દાશત્સુમતયે ચિદ્સ્યૈ વસૂ યદ્દેથે નમસા પદે ગોઃ ।

જિગૃતમ્સ્મે રેવતીઃ પુરન્ધીઃ કામપ્રેણૈવ મનસા ચરન્તા ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : યત્-જે વસૂ-સુખોમાં નિવાસ કરાવનારા સભા-શાલાધીશો તમે અસ્યૈ-પ્રત્યક્ષ સુમતયે-સદ્બુદ્ધિને માટે નમસા-અગ્નિ આદિથી ગોઃ-પૃથિવીના પદે-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય સ્થાનમાં પુસ્ઠીઃ-પુર-ગામને ધારણ કરતા રેવતીઃ-પ્રશંસિત ધનયુક્ત નગરોને ઘેથે-ધારણ કરો છો.

કામપ્રેણેવ-કામના પૂર્ણ કરનારા મનસા-વિજ્ઞાનવાન અન્તઃકરણથી ચરન્તા-પ્રાપ્ત થતા તમે બન્ને અસ્મે-અમારા માટે જિગૃતમ્-જાગૃત થાઓ, તે વામ્-આપના માટે એ મતિને ચિત્-પણ કઃ-કોણ દાશત્-આપે ? (૨)

ભાવાર્થ : જેઓ પૂર્ણ વિદ્યાવાન અને પૂર્ણ કામનાવાળા લોકો, મનુષ્યોને ઉત્તમ બુદ્ધિશાળી બનાવવાનો પ્રયત્ન કરે છે, તેઓ પૃથિવી પર પૂજિત થાય છે. (૨)

યુક્તો હુ યદ્વાં તૌગ્ર્યાય પેરુર્વિ મધ્યે અર્ણસો ધાયિ પ્ત્રઃ ।

ઉપ વામવઃ શરણં ગમેયં શૂરો નાજ્મ પ્તર્યદ્ધિરેવૈઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે સભા-શાલાધીશો ! વામ્-તમારા બન્નેમાં યત્-જે તૌગ્ર્યાય-બળોમાં ઉત્તમ બળ છે તેના માટે યુક્તઃ-યુક્ત પેરુ-સર્વનું પાલન કરનાર પ્ત્રઃ-બલવાનમાં અર્ણસઃ-જળની મધ્યે-મધ્યમાં વિ, ધાયિ-વિધાન કરવામાં આવે છે અર્થાત્ જળ સંબંધી કામને માટે યુક્ત કરવામાં આવે છે તથા અજ્મ-બળને શૂરઃ-વીર જેમ ન-તેમ પતયદ્ધિઃ-આમ-તેમ દોડતા એવૈઃ-પદાર્થોની પ્રાપ્તિ કરાવનારાઓની સાથે વામ્-તમારા અવઃ-રક્ષા આદિ કામને તથા શરણમ્-આશ્રયને ઉપ, ગમેયમ્-સમીપ પ્રાપ્ત થાઉં, તે મને હ-જ તમે વૃદ્ધિ આપો = ઉન્નતિ કરાવો. (૩)

ભાવાર્થ : જે જિજ્ઞાસુઓ સાધનો અને ઉપસાધનોની સાથે ભણાવનારા આપ્ત વિદ્વાનોના શરણમાં જાય છે, તેઓ વિદ્વાન બની જાય છે.

જેઓ પ્રેમપૂર્વક વિદ્યાઓ અને સુશિક્ષાઓની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ આ સંસારમાં પૂજનીય બને છે. (૩)

ઉપસ્તુતિરૌચ્થ્યમ્-રુષ્યેન્મા મામિમે પંત્રિણી વિ દુગ્ધામ્ ।

મા મામેધો દર્શતયશ્ચિત્તો ધાક્ પ્ર યદ્વાં બદ્ધસ્ત્મનિ ખાદતિ ક્ષામ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે સભા-શાલાધીશો ! વામ્-તમારા બન્નેના યત્-જે દશતય:-દશગુણો ણ્ઘ:-ઈંધન = બળતણ બદ્ધ:-નિરંતર યુક્ત કરેલ અને ચિત:-સંચિત કરેલ અગ્નિ ક્ષામ્-ભૂમિને પ્ર, ધાક્-બાળે છે, તેમ ત્મનિ-પોતાનામાં મામ્-મને મા, ખાદતિ-ખાવો નહિ, ઇમે-એ પતત્રિણી-નષ્ટ કરાવવા માટે કુશિક્ષા ઔચથ્યમ્-ઉચિત કામોમાં ઉત્તમ મામ્-મને મા, વિ, દુઘામ્-અપૂર્ણ કરે નહિ, મારી પરિપૂર્ણતાને નષ્ટ કરે નહિ અને ઉપસ્તુતિ:-સમીપ પ્રાપ્ત થયેલી સ્તુતિ પણ ઉચ્ચેત્-સેવે. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ બળતણ દ્વારા વાયુરહિત સ્થાનમાં સુપ્રજ્વલિત અગ્નિ પૃથિવીને અથવા કાષ્ટ આદિને ભસ્મ કરી નાખે છે, તેમ મને શોક રૂપી અગ્નિ ભસ્મ કરે નહિ. અજ્ઞાન અને દુષ્ટ આચરણ પ્રાપ્ત થાય નહિ, પરંતુ શાન્તિ અને વિદ્યાની નિરંતર વૃદ્ધિ થાય. (૪)

ન માં ગરન્નદ્યૌં માતૃતમા દાસા યદીં સુસમુબ્ધમવાધુઃ ।

શિરો યદસ્ય ત્રૈતનો વિતક્ષત્સ્વયં દાસ ડુરો અંસાવપિં ગ્ધ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! દાસા:-સુખદાતા દાસજન સુસમુબ્ધમ્-અત્યંત સરળ સ્વભાવયુક્ત યત્-જે મને ઈમ્-સર્વત્રથી અવાધુ:-પીડિત કરે, તે મા-મને માતૃતમા:-માતાઓની સમાન માન કરનારી-કરાવનારી નદ્ય:-નદીઓ ન, ગરન્-ડૂબાડે નહિ-ગળી જાય નહિ.

યત્-જે ત્રૈતન:-ત્રણ-શારીરિક, માનસિક અને આત્મિક સુખોનો વિસ્તાર કરનાર દાસ:-સેવક અસ્ય-એ મારા શિર:-શિરને વિતક્ષત્-વિવિધ પ્રકારની પીડા આપે તે સ્વયમ્-આપ પોતાના ડુર:-વક્ષસ્થળ = છાતી અને અંસૌ-સ્કંધો-ખંભાઓને અપિ, ગ્ધ-કાપે.

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એવો પ્રયત્ન કરવો જોઈએ, જેથી નદી અને સમુદ્ર નિમગ્ન-ડૂબાડે નહિ. શૂદ્ર આદિ સેવક સેવા કાર્ય માટે રાખેલ હોય તે પણ, અતિ સરળ સ્વભાવવાળા સ્વામીને પોતાના આળસુ સ્વભાવથી દુઃખી કરે છે, તેથી તેને સારી રીતે શિક્ષા આપે તથા અનુચિત કાર્ય કરતા તાડના પણ કરે. મનુષ્યોએ સદા પોતાના શરીરના અંગોને પુષ્ટ કરવા-રાખવા જોઈએ.

દીર્ઘતમા મામતેયો જુજુર્વાન્ દશમે યુગે ।

અપામર્થ યતીનાં બ્રહ્મા ભવતિ સારથિઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : દીર્ઘતમા-જેથી ઘોર અંધકાર પ્રકટ થાય, તે મામતેય:-મમતામાં કુશળજન દશમે-દશમા યુગે-વર્ષમાં જુજુર્વાન્-રોગી બની જાય છે.

જે સારથિ:-સારથીની સમાન અપામ્-વિદ્યા, વિજ્ઞાન અને યોગશાસ્ત્રમાં પારંગત યતીનામ્-સંન્યાસીઓના અર્થમ્-પ્રયોજનને પ્રાપ્ત થાય છે, તે બ્રહ્મા-સકળ વેદવિદ્યાનો જ્ઞાતા ભવતિ-બને છે. (૬)

ભાવાર્થ : જેઓ આ સંસારમાં અત્યંત અજ્ઞાની અને લોભી છે, તેઓ શીઘ્ર રોગી બની જાય છે.

જેઓ પક્ષપાતરહિત સંન્યાસીઓની (સમાન) હર્ષ-શોક તથા નિંદા-સ્તુતિથી રહિત વિજ્ઞાનમય આનંદને પ્રાપ્ત કરી લે છે, તેઓ સ્વયં દુઃખથી પારગામી બનીને અન્યોને પણ દુઃખ સાગરથી પાર કરે છે. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં શિષ્ય અને શિક્ષા આપનારાઓના કામનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૫૮)

સૂક્ત-૧૫૯

પ્ર દ્યાવાં યજ્ઞૈઃ પૃથિવી ઋતાવૃથા મહી સ્તુષે વિદથેષુ પ્રચેતસા ।

દેવેભિર્યે દેવપુત્રે સુદંસસ્થા ધિયા વાર્યાણિ પ્રભૂષતઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જે-જે ઋતાવૃથા-કારણથી વૃદ્ધિ પામેલ પ્રચેતસા-ઉત્તમતાથી પ્રબળજ્ઞાન કરાવનારા દેવપુત્રે-દિવ્ય પ્રકૃતિના અંશોથી પુત્રો સમાન ઉત્પન્ન થયેલ સુદંસસા-પ્રશંસિત કર્મવાળા મહી-મહાન દ્યાવાપૃથિવી-સૂર્યમંડળ અને ભૂમિમંડળ યજ્ઞૈઃ-સંગતિ વ્યવહારોથી વિદથેષુ-જાણવા યોગ્ય પદાર્થોમાં દેવેભિઃ-દિવ્ય જળ આદિ પદાર્થો અને ધિયા-કર્મની સાથે વાર્યાણિ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય પદાર્થોને પ્રભૂષતઃ-સુભૂષિત કરે છે અને આપ તેની પ્ર, સ્તુષે-પ્રશંસા કરો છો, ઇત્યા-એ રીતે અમે પણ તેની પ્રશંસા કરીએ. (૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ! પ્રયત્નથી ભૂમિ અને સૂર્યના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોને યથાવત્ જાણે છે, તેઓ અતુલ સુખથી સુભૂષિત બને છે. (૧)

ઉત મન્યે પિતુરદ્રુહો મનો માતુર્મહિ સ્વતવસ્તદ્ધવીમભિઃ ।

સુરેતસા પિતરા ભૂમ્ ચક્રતુરુ પ્રજાયા અમૃતં વરીમભિઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હું એકલો હવીમભિઃ-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય ગુણોની સાથે જે અદ્રુહઃ-દ્રોહરહિત માતઃ-માતા ઉત-અને પિતુઃ-પિતાના સ્વતવઃ-પોતાના બળવાળા મહિ-મહાન મનઃ-મનને ઝરુબહુ જ મન્યે-જાણું; તત્-તેને સુરેતસા-શ્રેષ્ઠ પરાક્રમવાળા પિતરા-માતા-પિતાની સમાન વર્તમાન ભૂમિ અને સૂર્ય વરીમભિઃ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય ગુણોથી પ્રજાયાઃ-મનુષ્ય આદિ સૃષ્ટિને માટે અમૃતમ્-અમૃત સમાન વર્તમાન ભૂમ્-અતિ ઉત્સાહિત ચક્રતુઃ-કરીએ છીએ અર્થાત્ શિલ્પકારોથી પ્રોત્સાહિત કરીએ છીએ, મલિન રહેવા દેતા નથી. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ માતા-પિતા સંતાનોની રક્ષા કરીને તેઓની વૃદ્ધિ = ઉન્નતિ કરે છે, તેમ ભૂમિ અને સૂર્ય પ્રજાઓને માટે સુખની વૃદ્ધિ કરે છે. (૨)

તે સૂનવઃ સ્વર્પસઃ સુદંસસો મહી જંઙુર્માતરા પૂર્વચિત્તયે ।

स्थातुश्च सत्यं जगतश्च धर्मणि पुत्रस्य पाथः पदमद्वयाविनः ॥ ३ ॥

પદાર્થ : જે સ્વપસ:-સુંદર કર્મ અને સુદંસસ:-શોભન કર્મયુક્ત વ્યવહારવાળા જન પૂર્વચિત્તયે-પૂર્વ જે ચિત્ત અર્થાત્ કોઈ પદાર્થોને એકત્ર કરવા માટે જન્નુ:-પ્રસિદ્ધ થાય છે-તે-તેઓ મહી-મહાન માતરા-માન કરનારી માતાઓને જાણે.

હે માતા-પિતાઓ ! જે તમે સ્થાતુ:-સ્થાવર ધર્મવાળા ચ-અને જગત:-જંગમ જગતના ચ-પણ ધર્મણિ-સાધર્મ્યમાં અદ્વયાવિન:-કેવળ એકલા પુત્રસ્ય-પુત્રને સત્યમ્-સત્ય પદમ્-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય પદાર્થોની પાથ:-રક્ષા કરો છો, તેઓની સૂનવ:-પુત્રો નિરંતર સેવા કરે. (૩)

ભાવાર્થ : શું ભૂમિ અને સૂર્ય સર્વના પાલનના કારણ નથી ? જે પિતર લોકો ચેતન અને જડ જગતનું વિજ્ઞાન પુત્રોને ગ્રહણ કરાવે છે, તેઓ કૃતકૃત્ય કેમ ન બને ? (૩)

તે માયિનો મમિરે સુપ્રચેતસોજામી સયોની મિથુના સમોક્સા ।

નવ્યંનવ્યં તન્તુમા તન્વતે દિવિ સમુદ્રે અન્તઃ કવયઃ સુદીતયઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જે સુપ્રચેતસ:-સુંદર પ્રસન્નચિત્ત માયિન:-પ્રશંસિત્ બુદ્ધિ વા સુદીતય:-સુંદર વિદ્યાના પ્રકાશવાળા કવય:-વિદ્વાનો સમોક્સા-સમીચીન જેનો નિવાસ મિથુના-એવા બે સયોની-સમાન વિદ્યા વા કારણ જામી-સુખ ભોગવનારાને પ્રાપ્ત થાય વા જાણીને દિવિ-વિદ્યુત્ અને સૂર્યના તથા સમુદ્રે-અન્તરિક્ષ વા સમુદ્રના અન્ત:-મધ્ય નવ્યંનવ્યમ્-નવીન-નવીન તન્તુમ્-વિસ્તૃત વસ્તુ વિજ્ઞાનને મમિરે-ઉત્પન્ન કરે છે, તે-તેઓ સર્વ વિદ્યા અને સુખોનો આ, તન્વતે-સમ્યક્ વિસ્તાર કરે છે. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આપ્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશકની સમીપ જઈને, વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરીને, ભૂમિ અને વિદ્યુતને જાણીને, સર્વ વિદ્યા પ્રક્રિયાને, 'હસ્તામલકવત્' સાક્ષાત્ કરીને અન્યોને ઉપદેશ કરે છે, તેઓ સંસારને સુભૂષિત કરનારા હોય છે. (૪)

તદ્રાધો અદ્ય સવિતુર્વરેણ્યં વયં દેવસ્ય પ્રસવે મનામહે ।

અસ્મભ્યં દ્યાવાપૃથિવી સુચેતુના રયિં ધત્તં વસુમન્તં શતગ્વિનમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! વયમ્-અમે અદ્ય-આજ સવિતુ:-જગત્ ઉત્પાદક દેવસ્ય-અને પ્રકાશક ઈશ્વરના પ્રસવે-ઉત્પન્ન કરેલા આ જગતમાં જે વરેણ્યમ્-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય રાધ:-દ્રવ્યને મનામહે-જાણીએ છીએ, તત્-તે શતગ્વિનમ્-સેંકડો ગાયોવાળા વસુમન્તમ્-અનેક પ્રકારના ધનોથી યુક્ત રયિમ્-ધનને સુચેતુના-સુંદર જ્ઞાનથી અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે દ્યાવાપૃથિવી-ભૂમિ અને સૂર્યની સમાન તમે ધત્તમ્-ધારણ કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ દુલોક અને પૃથિવીલોક સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, તેમ વિદ્વાન જન સર્વને

વિદ્યા અને ધનની ઉન્નતિથી સુખી કરે. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્યુત્ અને ભૂમિની સમાન વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૫૮)

સૂક્ત-૧૬૦

તે હિ દ્યાવાપૃથિવી વિશ્વશંભુવ ઋતાવરી રજસો ધારયત્કવી ।

સુજન્મની ધિષણે અન્તરીયતે દેવો દેવી ધર્મ્મણા સૂર્યઃ શુચિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે વિશ્વશંભુવા-સંસારમાં સુખની ભાવના કરનારા-કરીને ઋતાવરી-સત્ય કારણથી યુક્ત ધારયત્કવી-અનેક પદાર્થોને ધારણ કરાવતા અને પ્રબળ જેનું જોવું સુજન્મની-સુંદર જન્મવાળા ધિષણે-ઉત્કૃષ્ટ સહનશીલ દેવી-નિરંતર દેદીપ્યમાન દ્યાવાપૃથિવી-વિદ્યુત્ અને અન્તરિક્ષલોક ધર્મ્મણા-પોતાના ધર્મથી અર્થાત્ પોતાના ભાવથી રજસઃ-લોકોને અન્તઃ-પોતાના મધ્યમાં ધારણ કરે છે.

જે ઉક્ત દ્યાવા પૃથિવીઓમાં શુચિઃ-પવિત્ર દેવઃ-દિવ્યગુણવાળા સૂર્યઃ-સૂર્યલોક રજસઃ-પ્રાપ્ત થાય છે, તે-તે બન્નેને હિ-જ તમે સમ્યક્ જાણો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ, વિદ્યુત્ અને આકાશ સર્વ લોકોના આધાર છે, તેમ ઈશ્વર વાયુ આદિનો આધાર છે.

આ સૃષ્ટિમાં એક-એક બ્રહ્માંડની મધ્યમાં એક-એક સૂર્યલોક છે, તેમ સર્વ જાણે. (૧)

उरुव्यचसा महिनी असश्चता पिता माता च भुवनानि रक्षतः ।

सुधृष्टमे वपुष्येऽ न रोदसी पिता यत्सीमभि रूपैरवासयत् ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! પિતા-પાલન કરનારા વિદ્યુત્-અગ્નિ યત્-જે રોદસી-સૂર્ય અને ભૂમિમંડળને સ્ત્રીઃ-શુકલ, કૃષ્ણ, હરિત પીતાદિ રૂપોથી સીમ્-સર્વત્રથી અભ્યવાસયત્-ઢાંકે છે, તે અસશ્ચતા-વિલક્ષણ રૂપવાળા મહિની-મહાન, ઉરુવ્યચસા-બહુ જ વ્યાપ્ત થનાર, સુધૃષ્ટમે-સુંદર અત્યંત ઉત્કર્ષતાથી સહન કરનારા વપુષ્યે-રૂપમાં પ્રસિદ્ધ થયેલ સૂર્યમંડળ અને ભૂમિ મંડળોની ન-સમાન માતઃ-માન્ય કરનારી સ્ત્રી પિતઃ, ચ-અને પાલન કરનાર જન ભુવનાનિ-જેમાં પ્રાણીઓ હોય છે, તે લોકોની રક્ષતઃ-રક્ષા કરે છે. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ પ્રાણીઓની ભૂમિ અને સૂર્ય રક્ષા કરે છે અને તેને ધારણ કરે છે, તેમ માતા-પિતા સંતાનોનું પાલન અને તેની રક્ષા કરે છે.

જે જળમાં, પૃથિવીમાં અને તેનાથી બનેલા પદાર્થોમાં રૂપ જોવામાં આવે છે, તે વ્યાપ્ત અગ્નિનું જ છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૨)

समिन्वतम्-सम्यक् वृद्धि करे. (५)

ભાવાર્થ : જે લોકો ભૂમિના ગુણોના જ્ઞાતા (વિદ્વાન) વિદ્યાને જાણીને તેનો ઉપયોગ કરવાને જાણે છે; તેઓ મહાન બળને પ્રાપ્ત કરીને સાર્વભૌમ રાજ્ય કરી શકે છે. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઘાવા પૃથિવીનાં દષ્ટાન્તથી મનુષ્યોએ ઉપકાર ગ્રહણ કરવાનું કહેલ છે, તેથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૬૦)

સૂક્ત-૧૬૧

किमु श्रेष्ठः किं यविष्ठो न आजगन्किमीयते दूत्यं कद्यदूचिम ।

न निन्दिम चमसं यो महाकुलोऽग्ने भ्रातर्दुण इद्भूतिमूदिम ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે ભ્રાતઃ-બંધુ અગ્ને-વિદ્વાન્ ! ય:-જે મહાકુલ:-મહાન કુલવાળા દુણ:-શીઘ્રગામી પુરુષ ચમસમ્-મેઘને પ્રાપ્ત થાય છે, તેની અમે ન, નિન્દિમ-નિંદા કરતા નથી ન:-અમને કિમ્-શું શ્રેષ્ઠ:-શ્રેષ્ઠ કિમ્-શું ઉ-તો યવિષ્ઠ:-અત્યંત જુવાન પુરુષ આજગન્-વારંવાર પ્રાપ્ત થાય છે.

યત્-જેને અમે ઋચિમ-કહીએ તે કિમ્-શું દૂત્યમ્-દૂતપણું વા દૂતના કર્મને ઈચ્છે-પ્રાપ્ત થાય છે, તેને પ્રાપ્ત થઈને ઇત્-જ કત્-ક્યારે ભૂતિમ્-ઐશ્વર્યને ઋદિમ-કહે. (૧)

ભાવાર્થ : જેઓ પરસ્પર પ્રેમથી વિદ્યાના વિષયોને સાંભળે છે અને સંભળાવે છે, તેઓ વિદ્વાન બને. (૧)

एकं चमसं चतुरः कृणोतन तद्वौ देवा अब्रुवन्तद् आगमम् ।

सौधन्वना यद्येवा करिष्यथ साकं देवैर्यज्ञियासो भविष्यथ ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે સૌધન્વના:-ઉત્તમ ધનુષ્યોમાં કુશળ ! જે એકમ્-એકલા ચમસમ્-મેઘને દેવા:-વિદ્વાનો વ:-તમારા પ્રત્યે અબ્રુવન્-કહે અર્થાત્ તેના ગુણોનો ઉપદેશ કરે, તત્-તેને તમે કૃણોતન-કરો; અને જેને વ:-તમારા સમીપથી હું આગમમ્-પ્રાપ્ત થાઉં, તત્-તેને કરો. યદિ-જો દેવૈઃ-વિદ્વાનોની સાકમ્-સાથે ચતુર:-વાયુ, અગ્નિ, જળ અને ભૂમિ આ ચારને પૂછો તો પોતાના કામને સિદ્ધ એવ જ કરિષ્યથ-કરો અને યજ્ઞિયાસ:-યજ્ઞના અનુષ્ઠાનને યોગ્ય ભવિષ્યથ-થાઓ = બનો. (૨)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનોની સમીપથી પ્રશ્નોત્તરો દ્વારા વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરીને તેઓએ બતાવેલ કર્મો કરે છે, તેઓ વિદ્વાન બને છે.

પૂર્વ મંત્રોક્ત પ્રશ્નોત્તર ઉત્તર એ છે-જે અમારાથી અધિક વિદ્યાવાન છે, શ્રેષ્ઠ છે. જે જિતેન્દ્રિય છે, તે બળવાન છે. જે અગ્નિ છે, તે દૂત છે અને જે પુરુષાર્થની સિદ્ધિ છે, તે વિભૂતિ છે. (૨)

अग्निं दूतं प्रति यदब्रवीतनाश्वः कर्त्वो रथ उतेह कर्त्वः ।

धेनुः कर्त्वी युवशा कर्त्वा द्वा तानि भ्रातरनु वः कृत्व्येर्मसि ॥ ३ ॥

पदार्थ : હે ભ્રાતઃ-બંધુ વિદ્વાન્ ! યત્-જે અશ્વઃ-શીઘ્રગામી કર્ત્વઃ-કરવા યોગ્ય અર્થાત્ કલા યંત્રાદિ સિદ્ધ થનારા અનેક વિધ શિલ્પક્રિયાજન્ય પદાર્થ ઉત-વા ઇહ-અહિંચા સ્થઃ-રમણ કરવાનું સાધન કર્ત્વઃ-કરવા યોગ્ય વિમાન આદિ યાન-વાહન છે, તેને અગ્નિમ્-વિદ્યુત્ આદિ દૂતમ્-દૂત કાર્ય કરનારા અગ્નિના પ્રતિ-પ્રત્યે જે અબ્રતીતન-કહે છે તેના ઉપદેશથી જે કર્ત્વા-કરવા યોગ્ય ધેનુઃ-વાણી છે; વા જે કર્ત્વા-કરવા યોગ્ય યુવશા-મિશ્રિત અમિશ્રિત વ્યવહારો દ્વારા વિસ્તૃત કામ છે; વા જે અગ્નિ અને વાણી દ્વા-બે છે, તાનિ-તે સર્વને વઃ-તમારી સમીપતાથી સિદ્ધ કૃત્વી-કરીને અમે અનુ, આ, ઇમસિ-અનુક્રમથી ઉક્ત પદાથોને પ્રાપ્ત કરીએ છીએ. (૩)

ભાવાર્થ : જે જેને સત્ય વિદ્યા ભણાવે અને અગ્નિ આદિની પ્રક્રિયાનો ઉપદેશ કરે, તેને તે બંધુ સમાન જાણે. તે કરવા યોગ્ય કાર્યોને સિદ્ધ કરી શકે છે. (૩)

ચકૃવાંસં ઋભવસ્તદપૃચ્છત્ ક્વેદંભૂદ્યઃ સ્ય દૂતો ન આજગન્ ।

યદાવાર્ચ્યચ્ચમસાઞ્ચતુરઃ કૃતાનાદિત્વષ્ટા ગ્નાસ્વન્તર્ન્યાનજે ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે ચકૃવાંસઃ-કર્મ કરનારા ઋભવઃ-મેધાવી સજ્જનો ! યઃ-જે દૂતઃ-દૂત નઃ-અમારા પ્રત્યે આ, અજગન્-વારંવાર પ્રાપ્ત થાય છે, સ્યઃ-તે ક્વ-ક્યાં અભૂત્-ઉત્પન્ન થયેલ છે, તત્, ઇત્-તેને જ વિદ્વાનોને આપ અપૃચ્છત-પૂછો.

જે ત્વષ્ટા-સૂક્ષ્મકર્તા યદા-જ્યારે ચમસાન્-મેધોને અવાર્ચ્યત્-વિખ્યાત કરે છે, ત્યારે તે ચતુરઃ-ચાર પદાર્થોને અર્થાત્ વાયુ, અગ્નિ, જળ અને ભૂમિને કૃતાન્-કરેલ અર્થાત્ પદાર્થ વિદ્યા દ્વારા ઉપયોગમાં લેવામાં આવેલ જાણે છે, યત્ર આત્-અને ઇત્-તે જ ગ્નાસુ-ગમન કરવા યોગ્ય ભૂમિઓની અન્તઃ-મધ્ય યાનોને નિ, આનજે-ચલાવે છે. (૪)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનોની સમીપ સુશિક્ષા અને વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને તથા સમસ્ત સિદ્ધાન્તોના ઉત્તર જાણીને કાર્ય કરે છે, તેઓ બુદ્ધિમાન = મેધાવી બને છે. (૪)

હનામૈનાં ઇતિ ત્વષ્ટા યદબ્રવીચ્ચમસં યે દૈવપાનમનિન્દિષુઃ ।

અન્યા નામાનિ કૃણવતે સુતે સર્વાં અન્યૈરૈનાન્ કન્યાઃ નામભિઃ સ્પરત્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ત્વષ્ટા-છિન્ન-ભિન્ન કરનાર સૂર્યની સમાન વિદ્વાન્ ! યત્-જે દેવપાનમ્-કિરણો વા ઈન્દ્રિયોથી પાન કરવા યોગ્ય ચમસમ્-મેધ જળને અબ્રવીત્-કહે છે, યે-જે એની અનિન્દિષુઃ-નિંદા કરે છે તે એનાન્-એને અમે હનામ-મારીએ-નષ્ટ કરીએ.

જે સચાન્-સંયુક્ત અન્યૈઃ-અન્ય નામભિઃ-નામોથી અન્યા-અન્ય નામાનિ-નામોને સુતે-ઉત્પન્ન કરેલ વ્યવહારમાં કૃણવતે-પ્રસિદ્ધ કરે છે, એનાન્-એ જનોને કન્યા-કુમારી કન્યા સ્પરત્-પ્રસન્ન કરે, ઇતિ-

એ રીતે તેઓના પ્રત્યે તમે પણ વર્તો. (૫)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનોની નિંદા કરે અને વિદ્વાનોમાં અવિદ્વાનોની અને અવિદ્વાનોમાં વિદ્વાનોની બુદ્ધિ રાખે, તેઓ જ 'ખલ' = દુષ્ટ મનુષ્ય સર્વના દ્વારા તિરસ્કાર કરવા જોઈએ. (૫)

इन्द्रो हरीं युयुजे अश्विना रथं बृहस्पतिर्विश्वरूपामुपाजत ।

ऋभुर्विभ्वा वाजो देवाँ अगच्छत् स्वपसो यज्ञियं भागमैतन ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! **इन्द्रः**-વિદ્યુત્ની સમાન પરમૈશ્વર્યકારક સૂર્ય **हरी**-ધારણ-આકર્ષણ કાર્યોની વિદ્યાને **युयुजे**-યુક્ત કરે છે, **अश्विना**-શિલ્પવિદ્યા વા તેની ક્રિયા-હસ્ત કૌશલ્ય શિખવનાર વિદ્વાનજન **रथम्**-રમણ કરવા યોગ્ય વિમાન આદિ વાહનને જોડે છે, **बृहस्पतिः**-મહાન પદાર્થોનું પાલન કરનાર સૂર્ય સમાન તમે **विश्वरूपाम्**-જેમાં સમસ્ત અર્થાત્ નાના-મોટાં, જાડાં-પાતળાં, વાંકા-ચૂંકાં, કાળાં-પીળાં, રંગીન, ચમકદાર રૂપ વિદ્યમાન છે, તે પૃથિવીને **उप**, **आजत**-શ્રેષ્ઠતાપૂર્વક જાણો.

ऋभुः-ધનંજય સૂત્રાત્મા વાયુની સમાન **विभ्वा**-જેમ પોતાનાં વ્યાપ્તિ બળથી **वाजः**-અન્નને, તેમ **देवान्**-વિદ્વાનોને **अगच्छत्**-પ્રાપ્ત થાઓ બનીને **स्वपसः**-જેના સુંદર ધર્મ સંબંધી કામ છે એવા બનીને તમે **यज्ञियम्**-જે યજ્ઞને યોગ્ય **भागम्**-સેવન કરવા યોગ્ય ભોગ છે, તેને **ऐतन**-જાણો. (૬)

ભાવાર્થ : (જેઓ) વિદ્યુત્ની સમાન કાર્યોના સંયોજન, શિલ્પવિદ્યાઓની સમાન સર્વ કાર્યોના સંપાદક, સૂર્યની સમાન રાજ્યના ભરણકર્તા, બુદ્ધિમાનની સમાન વિદ્વાનોનો સંગ કરનારા અને ધાર્મિકજનોની સમાન કર્મ કરનારા મનુષ્યો છે, તેઓ 'સૌભાગ્યવાન' બને છે. (૬)

निश्चर्मणो गामरिणीत धीतिभिर्या जरन्ता युवशा ताकृणोतन ।

सौधन्वना अश्वादश्वमतक्षत युक्त्वा रथमुप देवाँ ऽअयातन ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે **धीतिभिः**-આંગળીઓની સમાન ધારણથી **चर्मणः**-શરીરની ત્વચાની સમાન શરીરના ઉપરના ભાગનો સંબંધ રાખનારી **गाम्**-પૃથિવીને **अरिणीत**-પ્રાપ્ત થાઓ.

या-જે **जरन्ता**-સ્તુતિ-પ્રશંસા કરતા **युवशा**-યુવાન વિદ્યાર્થીઓની સમીપ રાખનાર શિલ્પી બને છે, **ता**-તેઓ શિલ્પી કામોમાં સારી રીતે પ્રવૃત્ત થયેલ **निरकृणोतन**-નિરંતર તે શિલ્પ કાર્યોને કરે છે.

सौधन्वनाः-ઉત્તમ ધનુષ્યમાં કુશળ બનેલા સજ્જન **अश्वात्**-વેગવાન પદાર્થોની **अश्वम्**-વેગવાળા પદાર્થોને **अतक्षत**-જુદા કરો અને વેગવાન કરવા ઠીક કરો; અને **रथम्**-રથને **युक्त्वा**-જોડીને **देवान्**-દિવ્યભોગ વા દિવ્યગુણોને **उपायातन्**-ઉપગત થાઓ-પ્રાપ્ત થાઓ. (૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આંગળીઓની સમાન કર્મ કરનારા તથા શિલ્પવિદ્યાના પ્રેમી (બનીને) પદાર્થોને તથા પદાર્થોના ગુણોને જાણીને યાન આદિ કાર્યોમાં તેનો ઉપયોગ કરે છે, તેઓ દિવ્યભોગોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭)

इदमुदकं पिबतेत्यब्रवीतनेदं वा घा पिबता मुञ्जनेजनम् ।

सौधन्वना यदि तन्नेव हर्यथ तृतीये घा सर्वने मादयाध्वै ॥ ८ ॥

पदार्थ : હે સૌધન્વના:-ઉત્તમ ધનુષ્યવાળામાં કુશળ શ્રેષ્ઠ વૈદ્યો ! તમે પથ્ય ભોજન ઈચ્છનારાઓથી **इदम्-આ उदकम्-જળનું પિબત-પાન કરો, इदम्-આ मुञ्जनेजनम्-મુંજ નામના ઘાસથી શુદ્ધ કરેલ જળનું પાન કરો; वा-અથવા નેવ, પિબત-પાન કરો નહિ. इति-આ રીતે घ-ज अब्रवीतन-કરો, અન્યોને ઉપદેશ કરો. यदि-જો तत्-તેને हर्यथ-ચાહો તો तृतीये-ત્રીજા સર્વને-ઐશ્વર્યમાં घ-ज निरंतर मादयाध्वै-આનંદિત થાઓ. (૮)**

ભાવાર્થ : વૈદ્યો દ્વારા અથવા માતા-પિતાઓ દ્વારા સર્વ રોગીઓને તથા સંતાનોને “તમારે શરીર અને આત્માનાં સુખને માટે અમુક વસ્તુનું સેવન કરવું જોઈએ અને અમુકનું સેવન ન કરવું જોઈએ, આમ આચરણ કરવું જોઈએ અને આમ આચરણ ન કરવું જોઈએ” એવો ઉપદેશ પ્રથમથી જ કરી દેવો જોઈએ. જેથી તેઓ નિરંતર શરીર અને આત્માથી પૂર્ણ સુખયુક્ત બને. (૮)

आपो भूयिष्ठा इत्येको अब्रवीदग्निभूयिष्ठ इत्यन्यो अब्रवीत् ।

वधर्यन्तीं बहुभ्यः प्रैको अब्रवीदृता वदन्तश्चमसाँ अपिंशत ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ **एकः-એક પુરુષ સંયુક્ત પૃથિવી આદિમાં आपः-જળ भूयिष्ठा-અધિક છે इति-એમ अब्रवीत्-કહે છે, अन्यः-અને બીજો अग्निः-अग्नि भूयिष्ठः-અધિક છે इति-એમ प्राब्रवीत्-ઉત્તમતાથી કહે છે तथा एकः-કોઈ बहुभ्यः-બહુ જ પદાર્થોમાં वधर्यन्तीम्-વધતી ભૂમિને અધિક अब्रवीत्-કહે છે-બતાવે છે. આ રીતે ब्रह्मा-સત્યવાતોને वदन्तः-કહેતા સજ્જન चमसान्-મેઘોની સમાન પદાર્થોને अपिंशत-વિભક્ત કરો. (૯)**

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં સ્થૂલ પદાર્થોમાં ; ‘કોઈ જળ અધિક છે’, ‘કોઈ અગ્નિ અધિક છે’ અને ‘કોઈ ભૂમિ અધિક છે’ (એમ) બતાવે છે. પરંતુ સ્થૂલ પદાર્થોમાં ભૂમિ જ અધિક છે.

સત્ય વિજ્ઞાની મેઘોના અવયવોના વિવેકની સમાન સર્વ પદાર્થોને વિભક્ત કરીને તત્ત્વોની સર્વ લોકો સમ્યક્ પરીક્ષા કરે એના વિના પદાર્થ વિદ્યાને યથાર્થ જાણી શકતા નથી. (૯)

श्रोणमेकं उदकं गामवाजति मांसमेकः पिंशति सूनयाभृतम् ।

आ निमुचः शकृदेको अपाभरत्किं स्वित्पुत्रेभ्यः पितरा उपावतुः ॥ १० ॥

પદાર્થ : જેમ **एकः-વિદ્વાન શ્રોણામ્-શ્રવણ યોગ્ય ગામ્-ભૂમિ અને उदकम्-જળને અવાજતિ-જાણીને કલાયંત્રોથી તેને પ્રેરિત કરે છે; वा જેમ एकः-એકલા सूनया-હિંસાથી आभृतम्-સમ્યક્ ધારણ કરેલ मांसम्-મૃત શરીરના અવયવોને पिंशति-પૃથક્ કરે છે; वा જેम एकः-એક निमुचः-નિત્ય પ્રાપ્ત પ્રાણીના शकृत्-મળની સમાન अप, आ, अभरत्-પદાર્થને ઉપાડે છે, તેમ पितरौ-માતા-પિતા पुत्रेभ्यः-**

પુત્રોને માટે **કિં સ્વિત્-શું ઉપાવતુ:-**સમીપમાં ચાહે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે માતા-પિતા જેમ નવપ્રસૂતા ગાય વાછરડાનું (સુખ ઈચ્છી દુઃખથી બચાવે), વ્યાધ માંસને (લઈને અનિષ્ટને છોડે), વૈદ્ય રોગીના મળનું નિવારણ-દૂર કરે, તેમ સંતાનોના દુર્ગુણોને દૂર કરીને શિક્ષા અને વિદ્યાથી સંપન્ન કરે છે, તેઓ 'સંતાન સુખ' પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૦)

ઉદ્વત્સ્વસ્મા અકૃણોતના તૃણં નિત્સ્વપઃ સ્વપ્સ્યયા નરઃ ।

અગોહ્યસ્ય યદસસ્તના ગૃહે તદ્દ્યેદમૃભવો નાનું ગચ્છથ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે નર:-નેતા-અગ્રણી જનો ! તમે સ્વપ્સ્યયા-પોતાના ઉત્તમ કામની ઈચ્છાથી, અસ્મૈ-આ ગાય આદિ પશુઓને માટે, નિવત્સુ, નીચા અને ઉદ્વત્સુ-ઊંચા પ્રદેશોમાં, તૃણમ્-કાપવા યોગ્ય ઘાસને તથા અપઃ-જળને અકૃણોતન-ઉત્પન્ન કરો.

હે ત્રમ્ભવઃ-મેધાવી જનો ! તમે યત્-જે અગોહ્યસ્ય-ગુપ્ત ન રાખવા યોગ્યના ગૃહે-ઘરમાં વસ્તુ છે, તત્-તેને ન, અસસ્તન-નષ્ટ કરો નહિ, અદ્ય-આ ઉત્તમ સમયમાં ઇમમ્-એની અનુ, ગચ્છથ-પાછળ ચાલો. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, ઊંચા-નીચા સ્થાનોમાં પશુઓની રક્ષા માટે જળ અને ઘાસ આદિને સુરક્ષિત રાખવા જોઈએ. અરક્ષિત પારકાં પદાર્થોની પણ અન્યાયથી લેવાની ઈચ્છા કદી કરવી નહિ અને ધર્મયુક્ત વિદ્યા અને બુદ્ધિમાનોનો સંગ સદા કરવો જોઈએ. (૧૧)

સંમીલ્ય યદ્ભુવના પર્યસર્પત ક્વ સ્વિત્તાત્યા પિતરાં વ આસતુઃ ।

અશપત યઃ કુરસ્ત્વં વ આદ્દે યઃ પ્રાબ્રવીત્પ્રો તસ્મા અબ્રવીતન ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થીઓ ! તમે સંમીલ્ય-નેત્રથી સમ્યક્ નિમેષણ કરીને યત્-જે ભુવના-ભૂમિ આદિ લોક છે, તેને પર્યસર્પત-સર્વત્રથી જાણો, ત્યારે વઃ-તમારા તાત્યા-તે સમયે થનારા પિતરા-માતા-પિતા અર્થાત્ વિદ્યાધયન વખતના માતા-પિતા ક્વ-સ્વિત્-ક્યાંક આસતુઃ-નિરંતર વસે છે; યઃ-અને જે વઃ-તમારી કરસ્તમ્-ભુજાને આદ્દે-પકડે છે; વા જેનો અશપત-અપરાધ થતા તેના પર ઠપકો આપે છે, યઃ-જે આચાર્ય તમને પ્ર, અબ્રવીત્-ઉપદેશ આપે તસ્મૈ-તેના માટે પ્રો, અબ્રવીત્-પ્રિય વચન બોલો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જ્યારે અધ્યાપકોની પાસે વિદ્યાર્થીઓ આવે, ત્યારે તેઓને એમ પૂછવું જોઈએ-તમે લોકો ક્યાંના છો ? તમારું નિવાસ સ્થાન ક્યાં છે, તમારા માતા-પિતાના નામ શું છે ? શું ભણવા ઈચ્છો છો ? અખંડ બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરશો કે નહિ ? વગેરે. આ રીતે પૂછીને તેઓને વિદ્યા શ્રદ્ધ કરવા માટે બ્રહ્મચર્યની દીક્ષા આપવી. શિષ્યોએ અધ્યાપકોની નિંદા અને તેઓને અપ્રિય આચરણ કદી પણ કરવું નહિ. (૧૨)

सुषुप्वांसं ऋभवस्तदपृच्छतागोह्य क इदं नो अबूबुधत् ।

श्वानं वस्तो बोधयितारमब्रवीत्संवत्सर इदमद्या व्यख्यत ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે સુસુપ્વાંસ:-શયન કરનારા ઋભવ:-બુદ્ધિમાન જનો ! તમે જે કામનું અપૃચ્છત-પૂછો અને જેને વિ, અખ્યત-પ્રસિદ્ધ કહો તત્, ઇદમ્-તે એ કામને ન:-અમને ક:-કોણ અબૂબુધત્ જણાવે ? અગોહ્ય-ન ગુપ્ત રાખવા યોગ્ય વસ્ત:-ઢાંકવા છૂપાવવાવાળા શ્વાનમ્-કાર્યોમાં પ્રેરણા આપનાર અને બોધયિતારમ્-શુભાશુભ વિષય જણાવનારાને જેમ જે વિષય અબ્રવીત્-કહે, તેમ તે ઇદમ્-પ્રત્યક્ષ વિષયને સંવત્સરે-એક વર્ષમાં વા અદ્ય-આજ તું બોલ-કહે. (૧૩)

ભાવાર્થ : બુદ્ધિમાન લોકો જે-જે (વિષય)ને વિદ્વાનોને પૂછીને નિશ્ચય કરી શકે છે, તે તેનો મૂર્ખ લોકો નિશ્ચિત કરી શકતા નથી. જડબુદ્ધિ (વિદ્યાર્થી) જેટલું એક વર્ષમાં ભણે છે, તેટલું બુદ્ધિમાન એક દિવસમાં ગ્રહણ કરી શકે છે. (૧૩)

दिवा यान्ति मरुतो भूम्याग्निरयं वातो अन्तरिक्षेण याति ।

अद्धिर्याति वरुणः समुद्रैर्युष्माँ इच्छन्तः शवसो नपातः ॥ १४ ॥

પદાર્થ : હે શવસ:-બળવાનના સંતાન નપાત:-પતન રહિત એવી વિદ્વાનો તમે જેમ મસ્ત:-વાયુ દિવા-સૂર્યમંડળની સાથે યાન્તિ-જાય છે. અયમ્-આ અગ્નિ:-વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિ ભૂમ્યા-પૃથિવીની સાથે (જાય છે) અને વાત:-લોકોની મધ્યનો વાયુ અન્તરિક્ષેણ-અન્તરિક્ષની સાથે યાતિ-જાય છે, તેમ વસ્મઃ:-ઉદાન વાયુ અદ્ભિ:-જળ અને સમુદ્રૈ:-સાગરોની સાથે યાતિ-જાય છે, તેમ યુષ્માન્-તમને ઇચ્છન્ત:-ઈચ્છનારા લોકો જાય. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અને વાયુનો, ભૂમિ અને અગ્નિનો, વાયુ અને અન્તરિક્ષમાં તથા વરુણ અને જળનો એક સાથે નિવાસ છે, તેમ મનુષ્યો વિદ્યા અને વિદ્વાનોની સાથે નિવાસ કરીને નિત્ય સુખી અને બળવાન બને. (૧૪)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં મેઘાવીના કર્મોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૬૧)

सूक्त-१५२

मा नो मित्रो वरुणो अर्यमायुरिन्द्रं ऋभुक्षा मरुतः परि ख्यन् ।

यद्वाजिनो देवजातस्य सप्तैः प्रवक्ष्यामो विदथे वीर्याणि ॥ १ ॥

પદાર્થ : પ્રત્યેક ઋતુમાં યજ્ઞ કરનારા અને વિદ્યે-સંગ્રામમાં યત્-જે વાજિન:-વેગવાન દેવજાતસ્ય-વિદ્વાનો વા દિવ્યગુણોથી પ્રકટ થયેલ સપ્તે:-ઘોડાઓના વીર્યાણિ-પરાક્રમોથી પ્રવક્ષ્યામ:-કહીશું, તે ન:-અમારા ઘોડાઓના પરાક્રમોને મિત્ર:-મિત્ર વસ્ત્ર:-શ્રેષ્ઠ અર્યમા-ન્યાયાધીશ આયુ:-જ્ઞાતા, ઇન્દ્ર:-ઐશ્વર્યવાન, ઋષ્ણુક્ષા-બુદ્ધિમાન અને મસ્ત:-ઋત્વિજો મા, પરિ, ય્યન્-છોડીને કહે નહિ, તેને અનુકૂળ તેની પ્રશંસા કરે. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રશંસિત બળવાન અને સુશિક્ષિત ઘોડાઓ રાખવા જોઈએ, જે સર્વત્ર વિજય અને પૂર્ણ ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૧)

યન્નિર્ણિજા રેક્ષાંસા પ્રાવૃતસ્ય રાતિં ગૃભીતાં મુખ્વતો નયન્તિ ।

સુપ્રાહ્જો મેમ્યદ્વિશ્વરૂપ ઇન્દ્રા પૂષ્ણોઃ પ્રિયમપ્યેતિ પાથઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : યત્-જે નિર્ણિજા-નિત્યશુદ્ધિ રેક્ષાંસા-ધનથી પ્રાવૃતસ્ય-આચ્છાદિત ગૃભીતામ્-ગ્રહણ કરેલ રાતિમ્-આપવા મુખ્વત:-મુખથી નયન્તિ-પ્રાપ્ત કરે છે અર્થાત્ મુખથી કહે છે; જે મેમ્યદ્-અજ્ઞાનીઓને નિરંતર મારતા વિશ્વસ્ત્ર:-જેના સર્વરૂપ વિદ્યમાન સુપ્રાહ્-સુંદરતાથી પૂછતા અને અજ:-ઉત્પન્ન ન થતા અર્થાત્ એકવાર પૂર્ણ ભાવથી વિદ્યા ભણીને વારંવાર વિદ્યતાથી ઉત્પન્ન ન થતા તે વિદ્વાન જન ઇન્દ્રાપૂષ્ણો:-ઐશ્વર્યવાન અને પુષ્ટિમાન પ્રાણીઓના પ્રિયમ્-મનોહર પાથ:-જળને અપ્યેતિ-નિશ્ચયથી પ્રાપ્ત થાય છે, તેઓ સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત થાય છે-કરે છે. (૨)

ભાવાર્થ : જેઓ ન્યાયપૂર્વક ઉપાર્જિત ધનથી મુખ્ય ધર્મ સંબંધી કાર્યો કરે છે, તેઓ 'પરોપકારી' બને છે. (૨)

एष छागः पुरो अश्वेन वाजिनां पूषणो भागो नीयते विश्वदेव्यः ।

अभिप्रियं यत्पुरोळाशमर्वीता त्वष्टेदेनं सौश्रवसाय जिन्वति ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે પુરુષે વાજિના-વેગવાન અશ્વેન-ઘોડાની સાથે ઇષ:-આ પ્રત્યક્ષ વિશ્વદેવ્ય:-સમસ્ત દિવ્ય ગુણોમાં ઉત્તમ પૂષ્ણ:-પુષ્ટિનો ભાગ:-ભાગ છાગ:-બકરી પુર:-પૂર્વ નીયતે-પહોંચાડેલ છે; વા યત્-જે ત્વષ્ટા-શ્રેષ્ઠ રૂપ સિદ્ધ કરનારા જન સૌશ્રવસાય-સુંદર અન્નોમાં પ્રસિદ્ધ અન્નને માટે અર્વતા-વિષેષ જ્ઞાનની સાથે એનમ્-એ અભિપ્રિયમ્-સર્વત્રથી પ્રિય પુરોહાશમ્-સુંદર બનાવેલ અન્નને ઇત્-જે જિન્વતિ-પ્રાપ્ત કરે છે, તે સુખી થાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઘોડાઓની પુષ્ટિ માટે બકરીનું દૂધ પાય છે અને જે (સ્વયં) સુસંકૃત ભોજન પાય છે, તેઓ સુખી બને છે. (૩)

यद्धविष्यमृतुशो देवयानं त्रिर्मानुषाः पर्यश्वं नयन्ति ।

अत्रा पूषणः प्रथमो भाग एति यज्ञं देवेभ्यः प्रतिवेदयन्नजः ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : યત્-જે માનુષા:-મનુષ્યો ઋત્નુશ:-અનેક ઋતુઓમાં હવિષ્યમ્-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થોમાં

ઉત્તમ દેવયાનમ્-વિદ્વાનોની યાત્રા સિદ્ધ કરાવનારા અશ્વમ્-શીઘ્રગામી રથને ત્રિઃ-ત્રણ વાર પરિણયન્તિ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત અર્થાત્ સ્વીકાર કરે છે; વા જે અત્ર-આ જગતમાં દેવેભ્યઃ-દિવ્યગુણો માટે પૂષ્ણઃ-પુષ્ટિ કરનારાનો પ્રથમઃ-પ્રથમ ભાગઃ-સેવન યોગ્ય ભાગ પ્રતિવેદયન્-પોતાના ગુણોને પ્રત્યક્ષ રીતે જણાવતા અજઃ-પ્રાપ્તવ્ય બકરી યજ્ઞમ્-સંગ કરવા યોગ્ય વ્યવહારને ઇતિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તેને તથા એ બકરીને સર્વ સજ્જન યથાયોગ્ય સત્કારયુક્ત કરે. (૪)

ભાવાર્થ : જેઓ સર્વ ઋતુઓમાં સુખદાયી વાહનો બનાવીને તથા ઘોડા અને બકરી આદિ પશુઓની વૃદ્ધિ કરીને સંસારનું કલ્યાણ કરે છે, તેઓ શરીર, આત્મા અને મનને અનુકૂળ ત્રણ પ્રકારના સુખનો ઉપભોગ કરે છે. (૪)

હોતાધ્વર્યુરાવયા અગ્નિમિન્ધો ગ્રાવગ્રાભ ઉત શંસ્તા સુવિપ્રઃ ।

તેન યજ્ઞેન સ્વરંકૃતેન સ્વિષ્ટેન વક્ષણા આ પૃણધ્વમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે હોતા-યજ્ઞ સાધક, અધ્વર્યુઃ-સ્વનાશની ઈચ્છા ન કરનાર, આવયાઃ-શ્રેષ્ઠ સંગ કરનાર, અગ્નિમિન્ધઃ-અગ્નિ પ્રદીપક, ગ્રાવગ્રાભઃ-પ્રશંસા ગ્રહણ કરવનાર ઉત-અને શંસ્તા-પ્રશંસા કરનાર સુવિપ્રઃ-શ્રેષ્ઠ મેધાવી વિદ્વાન છે; તેન-તેના દ્વારા સ્વિષ્ટેન-શ્રેષ્ઠ ઈચ્છનીય અને સ્વરંકૃતેન-સમ્યક્ પૂર્ણ કરેલ યજ્ઞેન-યજ્ઞકર્મથી વક્ષણાઃ-નદીઓને તમે આ, પૃણધ્વમ્-સારી રીતે પૂર્ણ કરો.-ભરો.

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ દુર્ગંધના નિવારણ અને સુખની ઉન્નતિ માટે યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને, સર્વ દેશોમાં સુગંધિત જળની વર્ષા કરીને, નદીઓને પરિપૂર્ણ કરવી જોઈએ અર્થાત્ જળથી ભરવી જોઈએ. (૫)

યૂપવ્રસ્કા ઉત યે યૂપવાહાશ્ચઘાલં યે અશ્વયૂપાય તક્ષતિ ।

યે ચાર્વતે પર્ચનં સંભરન્ત્યુતો તેષામભિર્ગૂર્તિર્ન ઇન્વતુ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : યે-જેઓ યૂપવ્રસ્કાઃ-સ્તંભ માટે કાષ્ઠ કાપનારા ઉત-અને પણ યે-જેઓ યૂપવાહાઃ-સ્તંભને પ્રાપ્ત કરાવનારાઓ અશ્વયૂપાય-ઘોડાઓને બાંધવા માટે ઘાલમ્-કોઈ વિશેષ વૃક્ષને તક્ષતિ-કાપે છે; યે, ચ-અને જેઓ અર્વતે-ઘોડાઓને માટે પર્ચનમ્-પરિપક્વ અન્ન-ઘાસ સંભરન્તિ-ધારણ કરે છે (સંગ્રહ કરે છે) અને પુષ્ટિ કરે છે, જેઓ તેષામ્-તેઓની મધ્ય ઉતો-નિશ્ચયથી અભિર્ગૂર્તિઃ-સર્વત્રથી પુરુષાર્થી છે, તેઓ નઃ-અમને ઇન્વતુ-પ્રાપ્ત થાઓ. (૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઘોડા આદિ પશુઓને બાંધવા માટે કાષ્ઠના સ્તંભ અથવા ખૂંટો બનાવે છે અથવા ઘોડાઓના પાલન માટે ઘાસ, અનાજ આદિ પદાર્થોને ગ્રહણ કરે છે, તેઓ પુરુષાર્થી બનીને સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. (૬)

उप प्रागात्सुमन्मैऽधायि मन्म देवानामाशा उप वीतपृष्ठः ।

अन्वेनं विप्रा ऋषयो मदन्ति देवानां पुष्टे चकृमा सुबन्धुम् ॥ ७ ॥

पદાર્થ : હે જેણે દેવાનામ્-વિદ્વાનોના અને મે-મારા મન્મ-વિજ્ઞાન અને આશા:-પ્રાપ્તિની ઇચ્છાઓને ઉપ, અધાયિ-સાનિધ્યથી ધારણ કરેલ છે; વા જે સુમત્-સુંદર માનતા-જાણતા વીતપૃષ્ઠ:-સિદ્ધાન્તમાં વ્યાપ્ત વિદ્વાનો જ્ઞાન અને ઉક્ત આશાઓને ઉપ, પ્ર, અગાત્-સમીપ જઈને સમ્યક્ પ્રાપ્ત થાય છે; વા જે ઋષય:-વેદાર્થ જ્ઞાનવાન વિપ્રા:-મેઘાવી સુબન્ધુમ્-જેના સુંદર ભાઈ છે, તેને અનુ, મદન્તિ-અનુમોદિત કરે છે. એનમ્-એ સુબંધુ સજ્જનને ઉક્ત દેવાનામ્-વ્યાપ્ત સાક્ષાત્ કૃતશાસ્ત્ર સિદ્ધાન્ત વિદ્વાનોને પુષ્ટે-પુષ્ટિયુક્ત વ્યવહારમાં અમે ચક્રમ્-કરીએ-નિયત કરીએ. (૭)

ભાવાર્થ : જે લોકો વિદ્વાનોએ સિદ્ધાન્ત કરેલ વિજ્ઞાનનું ધારણ કરીને, તેને અનુકૂળ બનીને વિદ્વાનો બને છે, તેઓ શરીર અને આત્માથી પુષ્ટિયુક્ત બને છે. (૭)

यद्वाजिनो दामं सन्दानमवर्ततो या शीर्षण्यां रशना रज्जुरस्य ।

यद्वा घास्य पृभृतमास्येऽ तृणं सर्वा ता ते अपि देवेष्वस्तु ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! અસ્ય-આ અર્વત:-શીઘ્ર અન્ય સ્થાનમાં પહોંચાડનારા વાજિન:-બળવાન ઘોડાની યત્-જે સંદાનમ્-લગાવવામાં આવતી દામ્-અને ઘોડાનું દમન-કરતી અર્થાત્ તેના બળનું નિયંત્રણ કરતી લગામ છે; યા-જે શીર્ષण्या-શિરમાં ઉત્તમ રશના-વ્યાપ્ત થનારી રજ્જુ:-દોરી છે, યત્, વા-અથવા જે અસ્ય, ઘ-એના આસ્યે-મુખમાં તૃણમ્-ઘાસ પ્રભૃતમ્-સારી રીતે ભરેલ અસ્તુ-છે, તા-તે સર્વા-સમસ્ત તે-તમારા પદાર્થો દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં અપિ-પણ થાય. (૮)

ભાવાર્થ : જેઓ ઘોડાઓને સુશિક્ષિત, ઉત્તમ નિયંત્રણયુક્ત, ઉત્તમ આભૂષણોથી સુસજ્જ અને પુષ્ટ કરીને તેનાથી કાર્ય સિદ્ધ કરે છે, તેઓ વિજય આદિ સર્વ (લક્ષ્યો)ને સિદ્ધ કરી શકે છે. (૮)

यदश्वस्य क्रविषो मक्षिकाश यद्वा स्वरौ स्वधितौ रिप्तमस्ति ।

यद्धस्तयोः शमितुर्यन्नखेषु सर्वा ता ते अपि देवेष्वस्तु ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! ક્રવિષ:-કમણશીલ અર્થાત્ રેવાલ ચાલવાળા અશ્વસ્ય-ઘોડાની યત્-જે રિપ્તમ્-લીધેલા મળને મક્ષિકા-શબ્દ કરતી એટલે કે ગણગણતી માખી આશ-ખાય છે; વા-અથવા યત્-જે સ્વધિતૌ-આપે ધારણ કરેલ સ્વરૌ-શબ્દનો ઉપતાપ છે. શમિતુ:-યજનું અનુષ્ઠાન કરનારાઓના હસ્તયો:-હાથોમાં યત્-જે છે અને યત્-જે નખેષુ-જેમાં આકાશ વિદ્યમાન નથી તે નખોમાં અસ્તિ-છે; તા-તેઓ સર્વા-સમસ્ત પદાર્થો તે-તમારા થાઓ અને એ સર્વ દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં અપિ-પણ અસ્તુ-થાઓ.

ભાવાર્થ : કર્મચારીઓએ ઘોડાઓને દુર્ગંધિત લેપરહિત, સ્વચ્છ અને માખી વગેરેના ડંખથી સુરક્ષિત

રાખવા જોઈએ. પોતાના હાથે દોરી-લગામ આદિથી સુનિયંત્રિત કરીને યથોચિત માત્રામાં તેઓને ચલાવતા રહેવા જોઈએ. એમ કરવાથી ઘોડાઓ દિવ્ય કાર્ય કરે છે. (૯)

યદૂવધ્યમુદરંસ્યાપવાતિ ય આમસ્ય ક્રવિષો ગન્ધો અસ્તિ ।

સુકૃતા તચ્છમિતારઃ કૃણવન્તૂત મેધં શૃતપાકં પચન્તુ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! શમિતારઃ-પ્રાપ્ત અન્નને સિદ્ધ કરનાર-બનાવનાર આપ યઃ-જે ઉદસ્ય-ઉદરમાં રહેલ આમસ્ય-કાચા-અપકવ ક્રવિષઃ-ક્રમથી નીકળવા યોગ્ય અન્નની ગન્ધઃ-ગંધ અપવાતિ-અપાન વાયુ દ્વારા પ્રેરિત થઈને નીકળે છે; વા યત્-જે ઊવધ્યમ્-તાડન કરવા યોગ્ય અસ્તિ-છે, તત્-તેને કૃણવન્તુ-કાપો ઉત-અને મેધમ્-પ્રાપ્ત શૃતપાકમ્-પરિપકવ પદાર્થને પચન્તુ-પકાવો એમ તેને સિદ્ધ કરીને સુકૃતા-સુંદર રીતે બનાવેલ પદાર્થને આરોગો-ખાઓ. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઉપરોગના નિવારણ માટે સુસંસ્કૃત અન્ન અને ઔષધિઓનું સેવન કરે છે, તેઓ સુખી થાય છે. (૧૦)

યત્તે ગાત્રાદગ્નિના પચ્યમાનાદ્ભિ શૂલં નિહતસ્યાવધાવતિ ।

મા તદ્ભૂમ્યામા શ્રિષ્ઠન્મા તૃણેષુ દેવેભ્યસ્તદુશદ્ભ્યો રાતમસ્તુ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! નિહતસ્ય-નિરંતર ચલાયમાન તે-તમારા અગ્નિના-ક્રોધાગ્નિથી પચ્યમાનાત્-તપાવેલ ગાત્રાત્-હાથથી યત્-જે શસ્ત્ર અભિ, શૂલમ્-લક્ષ્યથી શૂલ સમાન પીડાકારક શત્રુની સન્મુખ અવ, ધાવતિ-ચલાવવામાં આવે છે, તત્-તે ભૂમ્યામ્-ભૂમિમાં મા, આ, શ્રિષ્ઠત્-ન પડે વા ન લાગે અને તે તૃણેષુ-ઘાસ આદિમાં મા-આશ્રિત ન થાય-ન પડે, પરંતુ ડશદ્ભ્યઃ-આપના પદાર્થોની ઈચ્છા કરનારા દેવેભ્યઃ-દિવ્ય ગુણી શત્રુને માટે રાતમ્-આપેલ અસ્તુ-થાય (અર્થાત્ શત્રુને મારનાર બને.) (૧૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન બળવાનજનોએ યુદ્ધમાં શસ્ત્ર ચલાવવાના અવસર પર વિચારપૂર્વક જ શસ્ત્ર ચલાવવું જોઈએ. જેથી ક્રોધપૂર્વક નીકળેલું-ચલાવેલું શસ્ત્ર ભૂમિ આદિ પર ન પડે, પરંતુ શત્રુઓ પર જ પ્રયુક્ત થાય. (૧૧)

યે વાજિનં પરિપશ્યન્તિ પક્વં ય ઈમાહુઃ સુરભિર્નિહૃતિ ।

યે ચાર્વૈતો માંસભિક્ષામુપાસંત ઉતો તેષામભિર્ગૂર્તિર્ન ઇન્વતુ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : યે-જે લોકો વાજિનમ્-બહુ જ અન્નાદિ પદાર્થયુક્ત ભોજનને પક્વમ્-પકાવવાથી સુસંસ્કૃત બનેલ પરિપશ્યન્તિ-સર્વત્રથી જોવામાં આવે છે; વા યે-જે ઈમ્-જળને પકવ આહુઃ-કહે છે યે, ચ-અને જે અર્વતઃ-પ્રાપ્ત થયેલ પ્રાણીના માંસભિક્ષામ્-માંસને ન પ્રાપ્ત થવાને ઉતો-તર્ક-વિતર્કથી ઉપાસતે-સેવન કરે છે, તેષામ્-તેનો અભિર્ગૂર્તિઃ-પુરુષાર્થ અને સુરિભઃ-સુગંધ નઃ-અમને ઇન્વતુ-વ્યાપ્ત

વા પ્રાપ્ત થાય.

શ્રેણી

હે વિદ્વાન્ ! તું **इति**-આ રીતે અર્થાત્ માંસાદિ અભક્ષ્યના ત્યાગથી રોગોનું **निर्हर-**નિરંતર નિર્હરણ-
દૂર કર. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે લોકો અન્ન અને જળને શુદ્ધ કરવા, પકાવવા અને તેનું ભોજન કરવાનું જાણે છે,
તથા માંસનો ત્યાગ કરીને (અન્ય) વસ્તુનું ભોજન કરે છે, તેઓ પુરુષાર્થી બને છે. (૧૨)

यन्नीक्षणं मांस्यचन्या उखाया या पात्राणि यूष्ण आसेचनानि ।

ऊष्ण्यापिधानां चरूणामङ्गाः सूनाः परि भूषन्त्यश्वम् ॥ १३ ॥

પદાર્થ : **यत्**-જે **मांस्यचन्याः**-માંસાહાર જેમાં માંસ પકાવે છે તે **उखायाः**-પકાવનારી તપેલીને
नीक्षणम्-નિરંતર નિરીક્ષણ કરીને તેમાં વૈમનસ્ય કરીને **या**-જે **यूष्णः**-રસનાં **आसेचनानि**-સમ્યક્ સિંચનનો
આધાર વા **पात्राणि**-પાત્ર વા **ऊष्ण्या**-ઉષ્ણ ઉત્તમ પદાર્થ **अपिधाना**-તપેલીનું મુખ ઢાંકવાનાં ઢાંકણા,
चरूणाम्-અન્ન આદિ પકવવાના આધાર તપેલી, કડાઈ વગેરે વાસણોનાં **अङ्गाः**-લક્ષણ છે તેને જાણે
છે અને **अश्वम्**-ઘોડાને **परिभूषन्ति**-સુશોભિત કરે છે, તેઓ **सूनाः**-પ્રત્યેક કામમાં પ્રેરિત થાય છે. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો માંસ આદિના પકાવવાના દોષથી રહિત પાકપાત્ર-તપેલી આદિને રાખવાનું,
તેમાં જળ આદિ દ્રવ પદાર્થોને નાખવાનું, અગ્નિને પ્રગટાવવાનું અને (ખાદ્ય વસ્તુને) પાત્રથી ઢાંકવાનું
(આદિ ક્રિયાઓને) જાણે છે, તેઓ પાક વિદ્યામાં કુશળ બને છે.

જેઓ ઘોડાઓને સુશિક્ષિત કરીને અને તેને સજાવીને ચલાવે છે, તેઓ સુખપૂર્વક માર્ગને પાર
કરે છે. (૧૩)

निक्रमणं निषदनं विवर्त्तनं यच्च पड्वीशमर्वतः ।

यच्च पपौ यच्च घासिं जघास सर्वा ता ते अपि देवेष्वस्तु ॥ १४ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વ શિક્ષક ! **अर्वतः**-શીઘ્રગામી ઘોડાનું **यत्**-જે **निक्रमणम्**-નિશ્ચિત ચાલવું,
निषदनम्-નિશ્ચિત બેસવું, **विवर्त्तनम्**-વિવિધ વર્તન-ચાલવું-ફરવું **पड्वीशम्**; **च**-અને પાદ બંધન,
આચ્છાદન-સજાઈ છે અને આ ઘોડાઓ **यत् च**-અને જે **पपौ**-પીવે છે **यत् घासिम्**-**च**-અને જે ઘાસ
जघास-ખાય છે, **ता**-તે **सर्वा**-સમસ્ત ઉક્ત કામો **ते**-તમારા છે અને એ સમસ્ત **देवेषु**-વિદ્વાનોમાં
अपि-પણ **अस्तु**-થાય. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ સુશિક્ષિત ઘોડાઓ સુશીલ અને ઉત્તમ ચાલવાળા = રેવાલ ચાલવાળા હોય છે,
તેમ વિદ્વાનો દ્વારા શિક્ષિત મનુષ્ય સભ્ય બને છે.

જેમ ઘોડાઓ માત્રામાં પાન અને આહાર કરી પચાવી દે છે, તેમ અતિ બુદ્ધિમાન મનુષ્ય પણ
બને. (૧૪)

मा त्वाऽग्निध्वीनयीद् धूमगन्धिर्मोखा भ्राजन्त्यभि विक्त जघ्निः ।

इष्टं वीतमभिर्गूर्तं वषट्कृतं तं देवासुः प्रति गृभ्णन्त्यश्वम् ॥ १५ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે **ઇષ્ટમ્-ઇષ્ટ** અર્થાત્ જેમાં યજ્ઞ વા સંગ કરવામાં આવે છે, **વષટ્કૃતમ્-** જે ક્રિયાથી સિદ્ધ કરેલ **વીતમ્-વ્યાપ્ત** થનાર **અભિ-ગૂર્તમ્-સર્વત્રથી** પુરુષાર્થી **અશ્વમ્-ઘોડાની** સમાન શીઘ્ર પહોંચાડનાર વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિને **દેવાસુઃ-વિદ્વાનો ત્વા-તમને પ્રતિઃ, ગૃભ્ણન્તિ-પ્રતીતિથી** ગ્રહણ કરાવે છે, **તમ્-તેને તમે ગ્રહણ કરો.** તે **ધૂમગન્ધિ-ધૂમમાં ગંધ રાખનાર અગ્નિઃ-અગ્નિ મા; ધ્વનયીત્-ધ્વનિ ન કર બહુ શબ્દ ન કર અને ભ્રાજન્તી-પ્રકાશમાન ઉચ્ચા-અન્ન પકાવવાની તપેલી જઘ્નિઃ-અન્નની ગંધ લઈને અર્થાત્ જેથી અંદર વરાળ ઊઠીને પાછી ફરીને તેમાં જાય છે, તે મા, અભિ, વિક્ત-પોતાનામાંથી અન્નને સર્વત્રથી અલગ ન કરે, ઉફાળે ન ચઢાવે. (૧૫)**

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિ અથવા અશ્વના દ્વારા વાહન ચલાવે છે, તેઓ લક્ષ્મીથી દેદીપ્યમાન બને છે.

જેઓ અગ્નિમાં સુગંધિત દ્રવ્યો હોમે છે, તેઓ રોગો અને દુઃખપૂર્ણ શબ્દોથી પીડિત થતા નથી. (૧૫)

યદશ્વાયુ વાસં ઉપસ્તૃણન્ત્યધીવાસં યા હિરણ્યાન્યસ્મૈ ।

સન્દાનમર્વન્તં પડ્વીશં પ્રિયા દેવેષ્વા યામયન્તિ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાનો **અસ્મૈ-આ અશ્વાય-ઘોડાઓને માટે યત્-જે વાસઃ-ઓઢવાના વસ્ત્રોને ઉપસ્તૃણન્તિ-** ઊઠાવે છે; વા **અધીવાસમ્-એવા (ઘોડાનું) જીન-પલાણ આદિને જેના ઉપર ઢાંકવાનું વસ્ત્ર રહે છે;** વા **સન્દાનમ્-સમીચીન જેનાથી દાન બને છે, તે યજ્ઞ આદિને અર્વન્તમ્-પ્રાપ્ત કરીને, પડ્વીશમ્-પ્રાપ્ત પદાર્થનું વિભાજન કરનાર છિન્ન-ભિન્ન કરનારા અગ્નિને ઊઠાવીને, ઢાંકીને કલાઘરોમાં લગાવે છે અને તેથી યા-જે પ્રિયા-પ્રિય-મનોહર હિરણ્યાનિ-પ્રકાશમય પદાર્થોને દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં આ, યામયન્તિ-વિસ્તૃત કરે છે, તેઓ તે પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરીને શ્રીમાન બને છે. (૧૬)**

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિસ્વરૂપવાળા અગ્નિનો ઉપયોગ કરવાનું તથા તેની વૃદ્ધિ કરવાનું જાણે, તો તેઓ બહુ જ સુખ પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૧૬)

યત્તે સાદે મહસા શૂકૃતસ્ય પાષ્ણ્યા વા કશયા વા તુતોદ ।

સ્તુચેવ તા હવિષો અધ્વરેષુ સર્વા તા તે બ્રહ્મણા સૂદયામિ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! **યત્-જે તે-તારા સાદે-સ્થિત થવામાં મહસા-અત્યંત બળથી શૂકૃતસ્ય-શીઘ્ર ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થને પાષ્ણ્યા-સ્પર્શકારક પદાર્થથી, વા-વા કશયા-જેનાથી પ્રેરણા દેવામાં આવે તે ચાબૂકથી ઘોડાને તુતોદ-પ્રેરિત કરે; વા-વા અધ્વરેષુ-નષ્ટ ન કરવા યોગ્ય યજ્ઞોમાં હવિષઃ-હોમવાની વસ્તુને સ્તુચેવ-જેમ સ્તુવાથી કામ થાય, તેમ તા-તે કામોને પ્રેરિત કરે. તા-તે સર્વા-સર્વ તે-તારા કામોને**

ब्रह्मणा-धनथी हुं सूदयामि-अलग-अलग करुं हुं. (१७)

भावार्थ : જેમ વિદ્વાનો ચાબુક અથવા સોટીથી ઘોડાને, નાથ નાખીને બળદને અને અંકુશથી હાથીને સમ્યક્ તાડિત કરીને શીઘ્ર ચલાવે છે, તેમ જ કલાયંત્રોને અગ્નિથી સંચાલિત કરીને વિમાન આદિ યાનોને શીઘ્ર ચલાવવા જોઈએ. (૧૭)

चतुस्त्रिंशद्वाजिनो देवबन्धोर्वङ्क्रीरश्वस्य स्वधितिः समेति।

अच्छिद्रा गात्रा वयुना कृणोत परुष्यरनुधुष्या वि शस्त ॥ १८ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમે દેવબન્ધો:-પ્રકાશમાન પૃથિવી આદિના સંબંધી વાજિન:-વેગવાન અશ્વસ્ય-શીઘ્રગામી અગ્નિ આદિની જે સ્વધિતિ:-વિદ્યુત્ સમેતિ-સમ્યક્ રીતે જાય છે, તેને તથા ચતુસ્ત્રિંશત્-ચોત્રીસ પ્રકારની વઙ્ક્રી:-વાંકી-ચૂકી ગતિઓને વિ, શસ્ત-તાડના કરો અર્થાત્ કલોને તાડના (ઝટકો) આપી તે ગતિઓને કાઢો-પ્રેરિત કરો. તથા પરુષ્યરુ-પ્રત્યેક મર્મસ્થલ (મધ્યકેન્દ્ર) પર અનુધુષ્ય-અનુકૂળતાથી કલાયંત્રોને ધ્વનિત કરીને અચ્છિદ્રા-દ્વિધાભાવ રહિત = છિન્ન-ભિન્ન થવાથી રહિત ગાત્રા-અંગો અને વયુના-ઉત્તમ જ્ઞાન, કર્મોને કૃણોત-કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે કારણથી વિદ્યુત્ ઉત્પન્ન થાય છે, તે (કારણ) સર્વ પૃથિવી આદિમાં વ્યાપ્ત છે. તેથી વિદ્યુત્ની તાડના-ઝટકાથી કોઈના અંગ-ભંગ ન થાય, એ રીતે તમે તેનો પ્રયોગ કરો.

જો અગ્નિના ગુણોને જાણીને લોકો ક્રિયાપૂર્વક તેનો પ્રયોગ કરે, તો કયુ કાર્ય અસાધ્ય રહે ? (સર્વ કામ બની શકે છે.) (૧૮)

एकस्त्वष्टुरश्वस्या विशस्ता द्वा यन्तारा भवतस्तथ ऋतुः।

या ते गोत्राणामृतुथा कृणोमि ताता पिण्डानां प्र जुहोम्यग्नौ ॥ १९ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! તે-તારી વિદ્યા અને ક્રિયાથી સિદ્ધ કરેલ ત્વષ્ટુ:-વિદ્યુત્રૂપ અશ્વસ્ય-વ્યાપ્ત અગ્નિ એક:-એક ઋતુ:-વસંત આદિ ઋતુ વિશસ્તા-છિન્ન-ભિન્ન કરનાર અર્થાત્ વિભિન્ન પદાર્થોમાં લગાવનાર અને દ્વા-બે યન્તારા-તેને નિયમમાં રાખનાર ભવત:-થાય છે. તથા-એજ રીતે યા-જે ગાત્રાણામ્-શરીરોના ઋતુથા-પ્રત્યેક ઋતુમાં કામ છે. તેને તથા પિણ્ડાનામ્-અનેક પદાર્થોના સંઘાતોના જે-જે અંગો છે, તાતા-તે તે કામમા પ્રયોગ હું કૃણોમિ-કરું છું અને અગ્નૌ-અગ્નિમાં પ્ર, જુહોમિ-હોમું છું. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે લોકો સર્વ પદાર્થોના છેદક અને ઋતુ-ઋતુમાં પ્રાપ્ત પદાર્થોમાં વ્યાપ્ત અગ્નિનું નિયંત્રણ કરનારા કાળ અને સૃષ્ટિ ક્રમને તથા પ્રશંસિત ગુણોને જાણીને અભીષ્ટ કાર્યોને સિદ્ધ કરીને સ્થૂલ કાષ્ઠ આદિ અગ્નિમાં નાખીને અનેક કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ શિલ્પવિદ્યાના જ્ઞાતા કેમ ન બને ? (૧૯)

मा त्वा तपत्रिय आत्मापियन्तं मा स्वधितिस्तन्वा आ तिष्ठिपत्ते।

मा ते गृध्नुरविशस्तातिहाय छिद्रा गात्राण्यसिना मिथू कः ॥ २० ॥

पदार्थ : હે વિદ્વાન ! તે-તારો પ્રિય:-પ્રિય આત્મા-આત્મા અપિયન્તમ્-મિયમાણમ્ = મૃત્યુ સમયે અર્થાત્ શરીરને છોડીને જવા સમયે ત્વા-તેને મા, તપત્-સંતપ્ત ન કરે-કષ્ટ ન આપે, સ્વધિતિ:-વજની સમાન વિદ્યુત્ તારા તન્વ:-શરીરને મા, આ, તિષ્ઠિપત્-સ્થાપિત કરનારા ન બનાવે, (અર્થાત્ આત્મા શરીર પર આસ્થા કે મમતા ન રાખે) ગૃધ્નુ:-ઈચ્છા કરનાર પ્રાણી અસિના-તલવારથી તે-તેને અવિશસ્તા-ન મારે, ધાયલ ન કરે તથા છિદ્રા-છિદ્ર-ઈન્દ્રિયો સહિત ગાત્રાણિ-અંગોને અતિહાય-અત્યંત છોડીને મિથૂ-પરસ્પર એકતા મા ક:-ન કરે. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો યોગાભ્યાસ કરે છે, તેઓને મૃત્યુ પીડિત કરતું નથી અને જીવનમાં રોગ અને દુઃખ થતાં નથી. (અર્થાત્-રોગો દુઃખકારક બનતા નથી.) (૨૦)

न वा उ एतन्प्रियसे न रिष्यसि देवाँ इदेषि पथिभिः सुगेभिः ।

हरीं ते युञ्जा पृषती अभूतामुपास्थाद्वाजी धुरि रासंभस्य ॥ २१ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જ્યારે જે તે-તમારા મન વા આત્મા યથાયોગ્ય કરવામાં યુજ્જા-યુક્ત હરી-ધારણ અને આકર્ષણ ગુણયુક્ત પૃષતી-વા સિંચન કરનાર જળનો ગુણ રાખનાર અભૂતામ્-બને છે, તેનું જે ઉપાસ્થાત્-ઉપસ્થાન કરે છે; વા રાસંભસ્ય-શબ્દ કરતા રથ આદિના ધુરિ-ધરામાં વાજી-વેગ સમાન હોય, તો એતત્-એ ઉક્ત રૂપને પામીને ન, વૈ, મિયસે-મરતા નથી, ન, ડ-અથવા તો ન રિષ્યસિ-કોઈને મારે છે; તથા સુગેભિઃ-જેનાથી સુખપૂર્વક જાય છે તે પથિભિઃ-માર્ગોથી ઇત્-જ દેવાન્-વિદ્વાનોને વા દિવ્ય પદાર્થોને ણિ-પ્રાપ્ત થાય છે. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે યોગાભ્યાસ દ્વારા સમાધિયુક્ત આત્માવાળા બનીને અને દિવ્ય યોગીઓનો સંગ કરીને ધર્મયુક્ત માર્ગ પર ચાલીને પોતાના આત્માને પરમાત્મામાં યુક્ત કરે છે, તેઓ મોક્ષને પ્રાપ્ત કરી લે છે. (૨૧)

सुगव्यं नो वाजी स्वश्व्यं पुंसः पुत्राँ उत विश्वापुषं रयिम् ।

अनागास्त्वं नो अदितिः कृणोतु क्षत्रं नो अश्वो वनतां हविष्मान् ॥ २२ ॥

પદાર્થ : જેમ આ વાજી-વેગવાન અગ્નિ ન:-અમારા સુગવ્યમ્-સુંદર ગાયોમાં રહેલ પદાર્થ જેમાં છે, તેને સ્વશ્વ્યમ્-સુંદર ઘોડાઓમાં ઉત્પન્ન થયેલને પુંસ-પુરુષત્વવાળા પુત્રાન્-પુત્રો ઉત્-અને વિશ્વાપુષમ્-સર્વને પુષ્ટિ આપનાર રયિમ્-ધનને કૃણોતુ-કરે છે, તે અદિતિઃ-અખંડિત-નાશને પ્રાપ્ત ન થયેલ ન:-અમારા અનાગાસ્ત્વમ્-નિષ્પાપ ભાવ = પાપ ભાવથી રહિત ક્ષત્રમ્-રાજ્યને પ્રાપ્ત કરે છે, તે હવિષ્માન્-જેમાં હોમ યોગ્ય પદાર્થ સંબદ્ધ-મળેલ છે. તે અશ્વઃ-વ્યાપ્તશીલ અગ્નિ ન:-અમને વનતામ્-સેવે, તેમ અમે તેને સિદ્ધ કરીએ. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે લોકો પૃથિવી આદિની વિદ્યાથી ગાયોની, ઘોડાઓની, મનુષ્યોની અને સંતાનોની

પૂર્ણ દંષ્ટિ અને સંપન્ના કરીને 'અશ્વ' નામક અગ્નિ વિદ્યાથી રાજ્યની વૃદ્ધિ કરીને તથા નિષ્પાપ બનીને સુખી બને છે, તેઓ અન્યોને પણ એવા જ (સુખી) બનાવે. (૨૨)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અશ્વરૂપ અગ્નિની વિદ્યાનું પ્રતિપાદન કરવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૬૨)

સૂક્ત-૧૬૩

યદક્રન્દઃ પ્રથમં જાયમાન ઉદ્યન્ત્સમુદ્રાદુત વા પુરીષાત્ ।

શ્યેનસ્ય પક્ષા હરિણસ્ય બાહૂ ઉપસ્તુત્યં મહિ જાતં તે અર્વન્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે અર્વન્-વિજ્ઞાનવાન વિદ્વન્ ! યત્-જે કારણે તું સમુદ્રાત્-અન્તરિક્ષથી ઉત્-પણ વા-વા પુરીષાત્-પૂર્ણ કારણથી ઉદ્યન્-ઉદય પામતા સૂર્યની સમાન જાયમાનઃ-ઉત્પન્ન થતા પ્રથમમ્-પૂર્વે અક્રન્દઃ-શબ્દ કરે છે. જે તે-તારા શ્યેનસ્ય-બાજ પક્ષીની પક્ષા-પાંખોની સમાન, હરિણસ્ય-હરણની બાહૂ-બાધક ભુજાઓની સમાન, ઉપસ્તુત્યમ્-સમીપથી પ્રશંસા કરવા યોગ્ય મહિ, જાતમ્-મહાન, ઉત્પન્ન થયેલ કામ સાધક અગ્નિ છે, તે સર્વને સત્કાર કરવા યોગ્ય છે. (૧)

ભાવાર્થ : જેઓ ધર્મયુક્ત બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યા ભણે છે, તેઓ સૂર્ય સમાન પ્રકાશમાન, બાજ સમાન વેગવાન અને હરણ સમાન ઉત્પ્લવમાન = કૂદવા અર્થાત્ સ્ફૂર્તિમાન બનીને પ્રશંસિત બને છે. (૧)

યમેનં દુત્તં ત્રિત એનમાયુનગિન્દ્રં એણં પ્રથમો અધ્યતિષ્ઠત્ ।

ગન્ધર્વો અસ્ય રણામગૃભ્ણાત્સૂરાદશ્વં વસવો નિરતષ્ઠ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે વસવઃ-ચોવીસ વર્ષ પર્યન્ત બ્રહ્મચર્ય સેવનપૂર્વક વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરેલ સજ્જનો ! તેમ જેમ યમેન-નિયામક વાયુથી દુત્તમ્-આપેલ એનમ્-આ પૂર્વોક્ત પ્રશંસિત અગ્નિને ત્રિતઃ-અનેક પદાર્થો વા અનેક વ્યવહારોને તરનાર (પાર કરનાર) ઇન્દ્રઃ-વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિ આયુનક્-શિલ્પ કાર્યોમાં નિયુક્ત કરે = લગાવે; પ્રથમઃ-વા પ્રખ્યાતિમાન (શ્રેષ્ઠ) પુરુષ એનમ્-એ ઉક્ત પ્રશંસિત અગ્નિના અધ્યતિષ્ઠત-અધિષ્ઠાતા બને; વા ગન્ધર્વઃ-પૃથિવીને ધારણ કરનાર વાયુ અસ્ય-એની રણામ્-સ્નેહ ક્રિયાને તથા સૂરાત્-સૂર્ય દ્વારા અશ્વમ્-શીઘ્ર ગમનશીલ અગ્નિને અગૃભ્ણત્-ગ્રહણ કરે, તેને નિરતષ્ઠ-નિરંતર કામમાં લાવો. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યોએ; વિદ્વાનોના ઉપદેશથી પ્રાપ્ત કરેલી તે વિદ્યાને ગ્રહણ કરીને, વિદ્યુત્થી ઉત્પન્ન કારણથી વિસ્તૃત થઈને, વાયુ દ્વારા ધારણ કરેલ, સૂર્ય દ્વારા પ્રકટ કરેલ અને શીઘ્ર ગતિમાન અગ્નિને પ્રયોગમાં લાવે છે, તેઓ દરિદ્રતાના નાશક બને છે. (૨)

અસિ યમો અસ્યાદિત્યો અર્વન્નસિં ત્રિતો ગુહ્યૈન વ્રતેન ।

असि सोमेन समया विपृक्त आहुस्ते त्रीणीं दिवि बन्धनानि ॥ ३ ॥

पदार्थ : हे मनुष्यो ! જે ચમ:-નિયંતા અસિ-છે, આદિત્ય-અંતરિક્ષ પ્રકટ થનાર સૂર્યરૂપ અસિ-છે, અર્વન્-સર્વત્ર પ્રાપ્ત છે, ગુહ્યેન-ગુપ્ત કરવા યોગ્ય વૃત્તેન-શીલથી ત્રિત:-સમ્યક્ વ્યવહાર કરનાર અસિ-છે, સોમેન-ચંદ્રમા અથવા ઔષધિગણ દ્વારા સમયા-સમીપમાં વિપૃક્ત:-સ્વ-પોતાનાં રૂપથી સંપર્ક રહિત-પૃથક અસિ-છે, તે-તે અગ્નિના દિવિ-દિવ્ય પદાર્થમાં ત્રીણિ-ત્રણ બન્ધનानि-પ્રયોજન પૂર્વ જનોએ આહુ:-કહેલ છે, તેને તમે જાણો. (૩)

ભાવાર્થ : જે ગૂઢ-દુષ્પાયેલ અગ્નિ પૃથિવી આદિ તથા વાયુ અને ઔષધિઓમાં વિદ્યમાન છે અને જેના પૃથિવી, અન્તરિક્ષ તથા સૂર્યમાં બંધન છે, તેને સર્વ મનુષ્યો વિશેષરૂપી જાણે. (૩)

ત્રીણિં ત આહુર્દિવિ બન્ધનानि ત્રીણ્યપ્સુ ત્રીણ્યન્તઃ સંમુદ્રે ।

उतेव मे वरुणश्छन्त्स्यर्वन् यत्रा त आहुः परमं जनित्रम् ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે અર્વન્ વિજ્ઞાન = વિશેષ જ્ઞાનવાન સજ્જન યત્ર-જ્યાં તે-તારો પરમ્-ઉત્તમ્ જનિત્રમ્-જન્મ આહુ:-કહે છે, ત્યાં મારો પણ ઉત્તમ જન્મ છે. વરુણ:-જેમ તું શ્રેષ્ઠ છન્ત્સ-બળવાન છે, તેમ હું પણ બળવાન છું. જેમ તે-તારા ત્રીણિ-ત્રણ અન્ત:-અંદર સમુદ્રે-અંતરિક્ષમાં ત્રીણિ-ત્રણ અપ્સુ-જળમાં ત્રીણિ-ત્રણ દિવિ-પ્રકાશમાન અગ્નિમાં પણ બન્ધનानि-બંધનો આહુ:-પૂર્વ જનોએ કહેલ છે, ઉત્તેવ-તેની સમાન મે-મારામાં પણ છે. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિના; કારણ, સૂક્ષ્મ અને સ્થૂલ એ (ત્રણ) સ્વરૂપ છે તથા (તેમજ) વાયુ, અગ્નિ, જળ અને પૃથિવીના છે એજ રીતે સર્વ ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થોના ત્રણ સ્વરૂપ છે.

હે વિદ્વાન્ ! જેમ તારો વિદ્યારૂપી જન્મ શ્રેષ્ઠ છે. એમ મારા પણ બનો. (૪)

इमा ते वाजिन्नवमार्जनानीमा शफानां सनितुर्निधानां ।

अत्रा ते भद्रा रशना अपश्यमृतस्य या अभिरक्षन्ति गोपाः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે વાજિન્-વિજ્ઞાનવાન સજ્જન ! જે ઇમા-આ તે-આપના શફાનામ્-કલ્યાણદાયક વ્યવહારોનું અવમાર્જનાનિ-શોધન વા ઇમા-આ સનિતુ:-સમ્યક્ વિભાજન કરતા આપના નિધાના-પદાર્થોનું સ્થાપન કરે છે અને યા:-જે તે-આપના વ્રહ્મસ્ય-સત્ય ધારણના ભદ્રા:-સેવન કરનારા અને રશના:-સ્વાદ લેવા યોગ્ય પદાર્થોની ગોપા:-રક્ષા કરનારા અભિરક્ષન્તિ-સર્વત્રથી પાલન (પોષણ) કરે છે, તે સર્વ પદાર્થોને અત્ર-અહીં હું અપશ્યમ્-દેખું-નિહાળું. (૫)

ભાવાર્થ : જે લોકો અનુક્રમથી સર્વ પદાર્થોના કારણ અને સંયોગને જાણે છે, તેઓ પદાર્થોના જ્ઞાતા બને છે. (૫)

आत्मानं ते मनसारादजानामवो दिवा पतर्यन्तं पतङ्गम् ।

शिरौ अपश्यं पृथिभिः सुगेभिररेणुभिर्जेहमानं पतत्रि ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ હું તે-તારા આત્માનમ્-સર્વના અધિષ્ઠાતા આત્માને મનસા-વિજ્ઞાનથી આરાત્-દૂરથી વા નિકટથી અપશ્યમ્-દેખું, તેમ તું મારા આત્માને જો-દેખ.

જેમ હું તારા અવઃ-પાલનને વા પતત્રિ-પતનના સ્વભાવને જાણું-દેખું, જેમ શિરઃ-જે સેવન કરવામાં આવતા શિરને દેખું, તેમ તું મારા ઉક્ત પદાર્થોને દેખ-જો.

જેમ અરેણુભિઃ-ધૂળથી રહિત સુગેભિઃ-સુખપૂર્વક જેમાં જાય છે, તે પથિભિઃ-માર્ગોથી જેહમાનમ્-શ્રેષ્ઠ યત્નથી દિવા-અન્તરિક્ષમાં પતયન્તમ્-જતા પતઙ્ગમ્-પ્રત્યેક સ્થાનમાં પહોંચાડનારા અગ્નિરૂપ ઘોડાને અજાનામ્-દેખું, તેમ તું પણ દેખ-નિહાળ. (૬)

ભાવાર્થ : જે પોતાના પારકાના આત્માના જ્ઞાતા લોકો, વિજ્ઞાનના માધ્યમથી ઉત્પન્ન થયેલ કાર્યોની પરીક્ષા દ્વારા કારણસ્થ ગુણોને જાણે છે, તેઓ સુખપૂર્વક વિદ્વાન બને છે.

જે લોકો આવરણરહિત તથા ધૂળના સંપર્કથી મુક્ત આકાશમાં અગ્નિ આદિના સંપ્રયોગથી વિમાનોને ચલાવે છે, તેઓ દૂરસ્થ દેશમાં પણ શીઘ્ર જઈ શકે છે. (૬)

અત્રા તે રૂપમુત્તમમપશ્યં જિગીષમાણમિષ આ પદે ગોઃ ।

યદા તે મર્ત્તો અનુ ભોગમાનલ્લાદિદ્ ગ્રસિષ્ઠ ઓષધીરજીગઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! યદા-જ્યારે ગ્રસિષ્ઠઃ-અત્યંત ખાનાર મર્ત્તઃ-મનુષ્ય અનુ, ભોગમ્-અનુકૂળ ભોગને આનન્દ-પ્રાપ્ત થાય છે, ત્યારે આત્-ઇત્-એજ સમયે ઓષધીઃ-યવાદિ ઓષધિઓને અજીગઃ-નિરંતર પ્રાપ્ત થાય છે-કરે છે.

જેમ અત્ર-આ વિદ્યા અને યોગાભ્યાસ વ્યવહારમાં હું તે-તમારા જિગીષમાણમ્-જીતવાની ઈચ્છા કરનારા ઉત્તમમ્-શ્રેષ્ઠ સ્વપ્ન-રૂપને આઅપશ્યમ્-સમ્યક્ રીતે દેખું અને ગોઃ-પૃથિવીના પદે-પ્રાપ્તવ્ય સ્થાનમાં તે-આપના ઇષઃ-અન્નાદિને પ્રાપ્ત થાઉં, તેમ આપ પણ એમ વિધાન કરીને એ ઉક્ત વ્યવહાર આદિને પ્રાપ્ત થાઓ. (૭)

ભાવાર્થ : પુરુષાર્થીને જ ભોગ પ્રાપ્ત થાય છે, આળસુને થતો નથી. જેઓ પ્રયત્નથી પદાર્થ-વિદ્યા ગ્રહણ કરે છે, તેઓ અતિશ્રેષ્ઠ પ્રતિષ્ઠાને પામે છે. (૭)

અનુ ત્વા રથો અનુ મર્યો અર્વન્નનુ ગાવોઽનુ કનીનામ્ ।

અનુ વ્રાતાસસ્તવ સ્વખ્યમીયુરનુ દેવા મમિરે વીર્ય તે ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે અર્વન્-ઘોડાની સમાન વિદ્યમાન ! જે ત્વા-તારા અનુ-પાછળ રથઃ-વિમાનાદિ પથ ફરી અનુ-પાછળ મર્યઃ-મરણધર્મા મનુષ્ય, ફરી પાછળ અનુ-પાછળ ગાવઃ-ગાયો અને કનીનામ્-કામના કરતા સજ્જનોને અનુ-પાછળ ભગઃ-ઐશ્વર્ય તથા વ્રાતાસ-સત્યાચરણમાં પ્રસિદ્ધ દેવાઃ-વિદ્વાનો તે-તારા વીર્યમ્-પરાક્રમને અનુ, મમિરે-અનુકૂળતાથી સિદ્ધ કરે છે, તે ઉક્ત વિદ્વાન તવ-તારી સ્વખ્યમ્-મિત્રતા વા મિત્રના કામને અનુ, ઈયુઃ-અનુકૂળતાથી પ્રાપ્ત થાઓ. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જેમ અગ્નિને અનુકૂળ યાનોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તેઓ અધ્યાપક અને ઉપદેશકને

અનુરૂપ જ વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરે છે.

જેઓ વિદ્વાનોને મિત્ર બનાવે છે, તેઓ સત્ય આચરણયુક્ત અને પરાક્રમી બને છે. (૮)

હિરણ્યશૃઙ્ગોઽયો અસ્ય પાદા મનોજવા અવર ઇન્દ્ર આસીત્ ।

દેવા ઇદસ્ય હવિરદ્યમાયન્યો અર્વિન્તં પ્રથમો અધ્યતિષ્ઠત્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે એમ છે કે હિરણ્યશૃઙ્ગ:-જેનો તેજ પ્રકાશ શૃંગોની સમાન છે તથા જે અસ્ય-એ વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિના મનોજવા:-મન સમાન વેગવાળા અય:-પ્રાપ્તિ સાધક ધાતુ પાદા:- જેમાં ચાલે તે પગોની સમાન છે, તે અવર:-એક નિરાલો ઇન્દ્ર:-સૂર્ય આસીત્-છે.

ય:-જે પ્રથમ:-વિખ્યાત અર્વિન્તમ્-વેગવાન અશ્વરૂપ અગ્નિના અધ્યતિષ્ઠત્-અધિષ્ઠાતા બને છે. જે અસ્ય-આના સંબંધમાં હવિરદ્યમ્-ખાવા યોગ્ય હોમવાના પદાર્થો ઇત્-જ ને દેવા:-વિદ્વાનો વા ભૂમિ આદિ તેત્રીસ દેવો આયન્-પ્રાપ્ત છે તે અનેકોમાં વ્યાપ્ત થનાર વિદ્યુત્ની સમાન અગ્નિ છે, એમ જાણો.

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં અગ્નિ ત્રણ પ્રકારનો છે. એક અતિ સૂક્ષ્મ કારણ નામક, બીજો સૂક્ષ્મ મૂર્ત દ્રવ્યોમાં વ્યાપ્ત રહેનાર અને ત્રીજો સ્થૂલ સૂર્ય આદિ રૂપવાળો છે. જેઓ તેના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવને જાણીને એનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરે છે, તેઓ નિરંતર સુખી બને છે. (૯)

ઈર્માન્તાસઃ સિલિકમધ્યમાસઃ સં શૂરણાસો દિવ્યાસો અત્યાઃ ।

હંસાઈવ શ્રેણિશો યતન્તે યદાક્ષિષુર્દિવ્યમજ્મમશ્વાઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! યત્-જે શિલિકમધ્યમાસ:-સ્થાનમાં પ્રસિદ્ધ થયેલ ઈર્માન્તાસ:-કંપન જેનો અન્ત સૂરણાસ:-હિંસક અર્થાત્ કલાયંત્રને પ્રબળતાથી ઘર્ષણ (ઝાટકો-આંચકો) આપતા પ્રકાશમાન દિવ્યાસ:-દિવ્ય ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળા અત્યા:-નિરંતર જનારા અશ્વા:-શીઘ્ર જનારા અગ્નિ આદિ રૂપ ઘોડાઓ હંસા-ઈવ-હંસોની સમાન શ્રેણિશ:-પંડિત-હારની સમાન બનીને વિદ્યમાન સં, યતન્તે-સમ્યક્ પ્રયત્ન કરાવે છે અને દિવ્યમ્-અન્તરિક્ષમાં થયેલ અજ્મમ્-માર્ગને આક્ષિષુ:-વ્યાપ્ત થાય છે, તે વાયુ, અગ્નિ અને જળાદિને કાર્યોમાં સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે 'સિલક' આદિ (જેમાં કલાઓના કોષ્ટો હોય છે તે) યંત્રોના દ્વારા ઘર્ષણ કરેલ પદાર્થોથી વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થો ઉત્પન્ન કરીને તથા તેઓનો યાન આદિમાં પ્રયોગ કરીને કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ 'મહતી શ્રિયં'-મહાન સંપત્તિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૦)

તવ શરીરં પતયિષ્વર્વન્ તવ ચિત્તં વાતઙ્ગવ ધ્રજીમાન્ ।

તવ શૃઙ્ગાણિ વિષ્ઠિતા પુરુત્રારણ્યેષુ જર્મીરાણા ચરન્તિ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે અર્વન્-ગમનશીલ ઘોડા સમાન વર્તાવ રાખનારા ! જેમ પતવિષ્ણુ-ગમનશીલ વિમાન આદિ યાન વા તવ-તારું શરીર-શરીર વા ધ્વજીમાન્-ગતિવાળા વાતફવ-લાયુની સમાન તારું ચિત્તમ્-ચિત્ત વા પુસ્ત્રા-બહુ જ અરણ્યેષુ-વનોમાં વિષ્ટિતા-વિશેષતાથી સ્થિત-રહેલ જર્મુગણા-અત્યંત પુષ્ટ શૃંગાણિ-શિંગડા સમાન ઊંચા વા ઉત્કૃષ્ટ અત્યત્તમ કામ અગ્નિથી ચરન્તિ-ચાલે છે, તેમ તવ-તારી ઈન્દ્રિયો અને પ્રાણ વર્તમાન છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેના દ્વારા સંચાલિત વિદ્યુત્ મન સમાન ગતિ કરે છે, (જેના દ્વારા) પર્વતોના શિખર સમાન આકારવાળા યાનોનું નિર્માણ કરવામાં આવે છે અને જે અગ્નિશાલાઓમાં વનની અગ્નિ = દાવાનલ સમાન, અગ્નિને પ્રદીપ્ત કરીને યાનોને ચલાવે છે, તેઓ ભૂગોળમાં સર્વત્ર વિચરણ કરે છે. (૧૧)

उप प्रागाच्छस्रं वाज्यर्वा देवद्रीचा मनसा दीध्यानः ।

अजः पुरो नीयते नाभिरस्यानुं पश्चात्कवयौ यन्ति रेभाः ॥ १२ ॥

પદાર્થ : જે દીધ્યાન:-દેદીપ્યમાન અજ:-કારણરૂપથી અજન્મા વાજી-વેગવાન અર્વા-ઘોડાઓની સમાન અગ્નિ દેવદ્રીચા-વિદ્વાનોનો સત્કાર કરતા મનસા-મનથી અસ્ય-આ કલાધરના શસનમ્-તાડનને-ઘર્ષણને ઉપ, પ્રાગાત્-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે, જેથી એના નાભિ:-બંધન પુર:-પ્રથમથી અને પશ્ચાત્-પાછળથી નીયતે-પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે, જેને રેખા:-શબ્દ વિદ્યાના જ્ઞાતા કવય:-મેઘાવીજન અનુ,યન્તિ-અનુગ્રહપૂર્વક ઈચ્છે છે, તેનું સર્વે સેવન કરે. (૧૨)

ભાવાર્થ : કર્ષણ, તાડન અને શિલ્પવિદ્યા વિના અગ્નિ આદિ પદાર્થ, કાર્યોના સાધક બનતા નથી. (૧૨)

उप प्रागात्परमं यत्सधस्थमर्वाँ अच्छा पितरं मातरं च ।

अद्या देवाञ्जुष्टतमो हि गम्या अथा शास्ते दाशुषे वार्याणि ॥ १३ ॥

પદાર્થ : યત્-જે દેવાન્-વિદ્વાન વા દિવ્યભોગ તથા ગુણોનું જુષ્ટતમ:-અત્યંત સેવન કરતા અર્વાન્-અગ્નિ આદિ પદાર્થરૂપી ઘોડાઓને અદ્યા-આજના દિવસે પરમમ્-ઉત્તમ સધસ્થમ્-એક સાથેના સ્થાનને માતરમ્-ઉત્પન્ન કરનારી માતા પિતરં; ચ-અને જન્મ કરાવનાર પિતા વા અધ્યાપકને અચ્છ, ઉપ, પ્રાગાત્-સારી રીતે સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે, અથ-અથવા દાશુષે-દાતાને માટે વાર્યાણિ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય સુખ અને હિ-નિશ્ચયથી ગમ્યા:-ગમન કરવા યોગ્ય પ્યારી સ્ત્રીઓ વા પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય ક્રિયાઓની આ, શાસ્તે-આશા કરે છે, તે અત્યંત સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેઓ માતા, પિતા તથા આચાર્યથી શિક્ષા પ્રાપ્ત કરેલ, પ્રશસ્ત સ્થાન પર રહેનારા, વિદ્વાનોના સંગના પ્રેમી અને સર્વને સુખ આપનારા છે, તેઓ સર્વ સંસારમાં ઉત્તમ આનંદ પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૩)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાન અને વિદ્યુતના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૬૩)

સૂક્ત-૧૬૪

અસ્ય વામસ્ય પલિતસ્ય હોતુસ્તસ્ય ભ્રાતા મધ્યમો અસ્ત્યશ્નઃ ।

તૃતીયો ભ્રાતા ઘૃતપૃષ્ઠો અસ્યાત્રાપશ્યં વિશ્વપતિં સપ્તપુત્રમ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : વામસ્ય-શિલ્પના ગુણોથી પ્રશંસિત પલિતસ્ય-વૃદ્ધાવસ્થાને પ્રાપ્ત અસ્ય-એ સજ્જનના વિદ્યુત્ રૂપ પ્રથમ છે, હોતુઃ-દાતા વા હવન કરનાર તસ્ય-તેના ભ્રાતા-બંધુની સમાન અશ્નઃ-પદાર્થોનું ભક્ષણ કરનાર મધ્યમઃ-પૃથિવી આદિ લોકોમાં પ્રસિદ્ધ થયેલ બીજા છે અને ઘૃતપૃષ્ઠઃ-ઘૃત અથવા જળ જેની પીઠ પર અર્થાત્ ઉપર રહે છે, તે અસ્ય-એના ભ્રાતા-ભ્રાતાની સમાન તૃતીયઃ-ત્રીજા અસ્તિ છે. અત્ર-અહીં સપ્તપુત્રમ્-સાત પ્રકારના તત્ત્વોથી ઉત્પન્ન વિશ્વપતિમ્-પ્રજાજનોનું પાલન કરનાર સૂર્યને હું અપશ્યમ્-દેખું. (૧)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં અગ્નિ ત્રણ પ્રકારનો છે એક વિદ્યુત્ રૂપવાળો, બીજો કાષ્ઠ આદિથી પ્રજ્વલિત થનાર અને ત્રીજો (જે) સૂર્યમંડળમાં સ્થિત રહીને સમસ્ત સંસારનું પાલન કરે છે. (૧)

સપ્ત યુજ્જન્તિ રથમેકચક્રમેકો અશ્વો વહતિ સપ્તનામા ।

ત્રિનાભિં ચક્રમજરમનર્વં યત્રેમા વિશ્વા ભુવનાધિં તસ્થુઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : યત્ર-જ્યાં એકચક્રમ્-એક સર્વકલાઓને ફરવા માટે જેમાં ચક્ર છે, તે રથમ્-વિમાન આદિ યાનને સપ્તનામા-સાત નામો વાળા એકઃ અશ્વઃ-શીઘ્રગામી વાયુ વા અગ્નિ વહતિ-પહોંચાડે છે; વા જ્યાં સપ્ત-સાત કલનું ગૃહ યુજ્જન્તિ-યુક્ત થાય છે; વા જ્યાં ઇમા-આ વિશ્વા-સમસ્ત ભુવના-લોક-લોકાન્તર અધિ, તસ્થુઃ-અધિષ્ઠિત થાય છે, ત્યાં અનર્વમ્-પ્રાકૃતિ પ્રસિદ્ધ ઘોડાઓથી રહિત અને અજરમ્-જીર્ણતા-વૃદ્ધતાથી રહિત ત્રિનાભિ-જેમાં ત્રણ બંધન છે, તે ચક્રમ્-એક ચક્રને શિલ્પીજન સ્થાપિત કરે. (૨)

ભાવાર્થ : જે લોકો વિદ્યુત્, અગ્નિ તથા જળ આદિ રૂપ ઘોડાઓથી યુક્ત યાન રચીને, સમસ્ત લોકોના આધાર આકાશમાં સુખપૂર્વક ગમનાગમન કરે, તેઓ સંપૂર્ણ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૨)

इमं रथमधि ये सप्त तस्थुः सप्तचक्रं सप्त वहन्त्यश्वाः ।

सप्त स्वसारो अभि सं नप्तन्ते यत्र गवां निहिता सप्त नाम ॥ ३ ॥

पદાર્થ : યત્ર-જેમાં ગવામ્-કિરણોના સપ્ત-સાત નામ-નામ નિહિતા-નિરંતર કરીને સ્થાપિત કરેલ છે અને ત્યાં સ્વસાર:-બહેનોની સમાન વર્તમાન સપ્ત-સાત કળા અભિ, સં, નવન્તે-સામે જાય છે-મળે છે, સપ્ત-સાત અશ્વા:-શીઘ્રગામી અગ્નિ પદાર્થ વહન્તિ-પહોંચાડે છે, તે ઇમમ્-આ સપ્તચક્રમ્-સાત ચક્રવાળા રથમ્-રથને જે-જેઓ સપ્ત-સાત જન અધિ, તસ્થુ:-અધિષ્ઠિત થાય છે, તેઓ આ સંસારમાં સુખી થાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : જેઓ સ્વામી, અધ્યાપક, વિદ્યાર્થી, નિર્માતા, નિયંત્રણકર્તા તથા ચાલક લોકો અનેક ચક્રો તથા તત્ત્વ આદિથી યુક્ત યાનોની રચના જાણે છે, તેઓ પ્રશંસિત બને છે. જ્યાં છેદન અને આકર્ષણ આદિ ગુણવાળા કિરણો છે, ત્યાં પ્રાણ પણ છે. (૩)

को ददर्श प्रथमं जायमानमस्थन्वन्तं यदनस्था बिभर्त्ति ।

भूम्या असुरसृगात्मा क्व स्वित्को विद्वांसमुप गात्रष्टुमेतत् ॥ ४ ॥

પદાર્થ : યત્-જે પ્રથમમ્-પ્રખ્યાત્ પ્રથમ અર્થાત્ સૃષ્ટિની પૂર્વે જાયમાનમ્-ઉત્પન્ન થઈને અસ્થન્વન્તમ્-અસ્થિયુક્ત દેહને ભૂમ્યા:-ભૂમિની મધ્ય અનસ્થા-અસ્થિરહિત અસુ:-પ્રાણ અસૃક્-રક્ત અને આત્મા-જીવ વિભર્ત્તિ-ધારણ કરે છે, તેને ક્વ સ્વિત્-ક્યાંય પણ ક:-કોણ દર્શ-દેખી શકે છે, ક:-અને કોણ એતત્-એ ઉક્ત વિષયને પ્રષ્ટુમ્-પૂછવા વિદ્વાંસમ્-વિદ્વાનની ઉપ, ગાત્-સમીપ જાય છે. (૪)

ભાવાર્થ : જ્યારે સૃષ્ટિના પ્રારંભમાં ઈશ્વરે સર્વના શરીરની રચના કરી, ત્યારે કોઈ પણ જીવ તેને જોનાર હતો નહિ. જ્યારે એ શરીરોમાં જીવાત્માને પ્રવિષ્ટ કર્યો, ત્યારે પ્રાણ આદિ વાયુ રક્ત આદિ ધાતુ અને જીવ મળીને શરીરને ધારણ કરતા હતા વગેરે (જ્ઞાન)ની પ્રાપ્તિ માટે વિદ્વાન પાસે કોઈ (વિરલ) જ પૂછવા જાય છે, પરંતુ સર્વ નહિ. (૪)

पाकः पृच्छामि मनसाऽविजानन् देवानामेना निहिता पदानि ।

वत्से बृष्कयेऽधि सप्त तन्तून्वि तलिरे क्वय ओतवा उ ॥ ५ ॥

પદાર્થ : જે કવય:-મેધાવીજન ઓતવૈ-વિસ્તાર માટે બૃષ્કયે-જોવા યોગ્ય વત્સે-સંતાનના માટે સપ્ત-સાત તન્તૂન્-વિસ્તૃત ધાતુઓને વ્યધિ, તલિરે-અનેક રીતે અધિકાધિક વિસ્તૃત કરે છે. ઉ-તેઓ દેવાનામ્-દિવ્ય વિદ્વાનોના એના-એ નિહિતા-સ્થાપિત કરેલ પદાનિ-પ્રાપ્ત થવા વા જાણવા યોગ્ય પદોના અધિકારોને અવિજાનન્-ન જાણતો પાક:-બ્રહ્મચર્યાદિ તપસ્યાથી પરિપક્વ થવા યોગ્ય હું મનસા-અન્ત:કરણથી પૃચ્છામિ-પૂછું છું. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ બાલ્યાવસ્થાથી લઈને, અજ્ઞાત શાસ્ત્રોને વિદ્વાનોથી ભણીને અધ્યાપનના દ્વારા સર્વ વિદ્યાને પ્રસારિત કરવી જોઈએ. (૫)

અચિકિત્વાઞ્ચિકિતુષ્ણિચ્ચદત્ર ક્વીન્પૃચ્છામિ વિદ્યાને ન વિદ્યાન્ ।

વિ યસ્તસ્તમ્ભ ષલ્લિમા રજાંસ્યજસ્ય રૂપે કિમપિ સ્વિદેકમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : અચિકિત્વાન્-અવિદ્યાન હું ચિત્-પણ અત્ર-આ વિદ્યા વ્યવહારમાં ચિકિતુષ્ણિ-અજ્ઞાનરૂપી રોગને દૂર કરનારા કવીન્-પૂર્ણ વિદ્યાવાન આપ્ત વિદ્વાનોને વિદ્યાન્-વિદ્યાવાન વિદ્મને-વિશેષ જાણવા માટે ન-જેમ પૂછે, તેમ પૃચ્છામિ-પુછું છું.

ય:-જે ષટ્-છ ઇમા-આ રજાંસિ-પૃથિવી આદિ સ્થૂળ તત્ત્વોને નિ, તસ્તમ્ભ-એકત્ર કરે છે. અજસ્ય-પ્રકૃતિ અર્થાત્ જગતનું કારણ વા જીવના સ્ત્રે-રૂપમાં કિમ્-શા માટે સ્વિત્ અપિ-જ એકમ્-એક થયેલ છે, એને તમે કહો. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યાન લોકો વિદ્વાનોથી પૂછીને વિદ્યાન બને છે, તેમ વિદ્યાન લોકો પણ પરમ વિદ્વાનોને પૂછીને વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરે. (૬)

ઇહ બ્રવીતુ ય ઈમ્ઙ્ઙ વેદાસ્ય વામસ્ય નિહિતં પદં વેઃ ।

શીર્ષ્ણઃ ક્ષીરં દુહતે ગાવો અસ્ય વૃત્તિં વસાના ઉદકં પદાપુઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે અઙ્ઙ-પ્યારા ય:-જે અસ્ય-આ વામસ્ય-પ્રશંસિત વેઃ-પક્ષીના નિહિતમ્-સ્થાપિત પદમ્-પદને વેદ-જાણે છે, તે ઇહ-આ પ્રશ્નનો ઈમ્-સમસ્ત ઉત્તર બ્રવીતુ-કહે.

જેમ વસાના:-ઝૂલ ઓઢેલ ગાવઃ-ગાયો ક્ષીરમ્-દૂધને દુહતે-પુરું કરે છે અર્થાત્ દોહાવે છે; વા વૃક્ષ પદા-પગથી ઉદકમ્-જળનું અપુઃ-પાન કરે છે, તેમ શીર્ષ્ણઃ, અસ્ય-એના શિરનો વૃત્તિમ્-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય સર્વ વ્યવહારને જાણીએ. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ પક્ષી અન્તરિક્ષમાં ભ્રમણ કરે છે, તેમ જ સમસ્ત લોક અન્તરિક્ષમાં ભ્રમણ કરે છે.

જેમ ગાયો વાહરડાને દૂધ આપીને વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ કારણ-તત્ત્વ કાર્ય પદાર્થોની વૃદ્ધિ કરે છે અથવા જેમ વૃક્ષ મૂળ દ્વારા જલ પીને વૃદ્ધિ પામે છે, તેમ કાર્ય પદાર્થ કારણ તત્ત્વથી વૃદ્ધિ પામે છે. (૭)

માતા પિતરમૃત આ બંભાજ ધીત્યગ્ને મનસા સં હિ જગ્મે ।

સા બીંભૃત્સુર્ગર્ભરસા નિવિદ્ધા નમસ્વન્ત્ ઇદુપવાકમીયુઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : બિભૃત્સુઃ-જે ભયપ્રદ ગર્ભરસા-જેના ગર્ભમાં રસરૂપ વિદ્યમાન નિવિદ્ધા-નિરંતર બંધાયેલ સા-તે માતા-પૃથિવી ધીતી-ધારણથી અગ્ને-સૃષ્ટિ પૂર્વે પિતરમ્-સૂર્યના ત્રહે-વિના સર્વનું આ, બંભાજ-સમ્યક્ સેવન કરે છે, જેને હિ-નિશ્ચયથી મનસા-વિજ્ઞાનથી સં, જગ્મે-સંગ થતાં-પ્રાપ્ત થતાં તેને પ્રાપ્ત

થઈને નમસ્વન્તઃ-પ્રશંસિત અન્નયુક્ત બનીને ઇત્-જ ઉપવાકમ્-જેમાં વચન મળે છે, તે ભાગને ઈંયુઃ-પ્રાપ્ત થાય છે. (૮)

ભાવાર્થ : જે સૂર્ય વિના પૃથિવી સંભવ હોય, તો તે પોતાની શક્તિથી સર્વને કેમ ધારણ કરી શકતી નથી ?

જો પૃથિવી ન હોય, તો (સૂર્ય (માત્ર) પોતાના પ્રકાશથી (સ્વયં) યુક્ત કેમ ન બને ? તેથી આ સૃષ્ટિમાં પોત-પોતાના સ્વભાવથી સર્વ પદાર્થો સ્વતંત્ર છે અને સાપેક્ષ વ્યવહારમાં પરતંત્ર છે. (૮)

યુક્તા માતાસીદ્ ધુરી દક્ષિણાયા અતિષ્ઠદ્ ગર્ભો વૃજનીષ્વન્તઃ ।

અમીમેદ્ વત્સો અનુ ગાર્મપશ્યદ્ વિશ્વસ્તુષ્યં ત્રિષુ યોજનેષુ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : જે ગર્ભઃ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થ વૃજનીષુ-વર્જનીય કક્ષાઓમાં અન્તઃ-અંદર અતિષ્ઠત્-સ્થિર થાય છે, જેના દક્ષિણાયાઃ-જમણી ધુરિ-ધારણ કરનારી ધુરીમાં માતા-પૃથિવી યુક્તા-યુક્ત આસીત્ છે.

જેમ વત્સઃ-વાહરડો ગામ્-ગાયને, તેમ અમીમેત્-પ્રક્ષેપ કરે છે તથા ત્રિષુ-ત્રણ યોજનેષુ-બંધનોમાં વિશ્વસ્ત્યમ્-સમસ્ત પદાર્થોમાં રહેલા ભાવોને અન્વપશ્યત્-અનુકૂળતાથી જુએ છે, તે પદાર્થ વિદ્યાથી જાણવાને યોગ્ય છે. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ ગર્ભ રૂપ (સૂક્ષ્મ) મેઘ, સ્થૂળ, મેઘોના ચાલ્યા ગયા પછી (પણ) વર્તમાન રહે છે, તેમ સર્વને માન્ય પ્રદાન કરનારી ભૂમિ આકર્ષણોમાં યુક્ત છે.

જેમ વાહરડો ગાયનું અનુગમન કરે છે, તેમ આ પૃથિવી સૂર્યને અનુકૂળ રહીને ભ્રમણ કરે છે. જેમાં સમસ્ત ધેત આદિ રૂપ છે, તે જ સર્વનું પાલન કરનારી છે. (૯)

તિસ્રો માતૃસ્ત્રીન્પિતૃન્વિભ્રદેકં ઋર્ધ્વસ્તસ્થૌ નેમવં ગ્લાપયન્તિ ।

મન્ત્રયન્તે દિવો અમુષ્યં પૃષ્ઠે વિશ્વવિદં વાચમવિશ્વમિન્વામ્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : જે તિસ્રઃ-ત્રણ માતૃઃ-ઉત્તમ, મધ્યમ, અધમ ભૂમિ તથા ત્રીન્-વિદ્યુત્ અને સૂર્ય રૂપ ત્રણ પિતૃન્-પાલક અગ્નિઓને ઈમ્-સર્વત્રથી વિભ્રત્-ધારણ કરીને ઋર્ધ્વઃ-ઉપર-ઉચ્ચે; એકઃ-એક સૂત્રાત્મા વાયુ તસ્થૌ-સ્થિર થાય છે, જે વિદ્વાનો તેને અવ, ગ્લાપયન્તિ-કહેતા, સાંભળતા અર્થાત્ તેના વિષયમાં વાર્તાલાપ કરે છે; તથા અવિશ્વમિન્વામ્-જે સર્વની સેવન ન કરેલી વિશ્વ મિદમ્-સર્વ લોકો તેને પ્રાપ્ત થાય છે, તે વાચમ્-વાણીને મન્ત્રયન્તે-સર્વત્રથી વિચારપૂર્વક ગુપ્ત કહે છે, તેઓ અમુષ્ય-તે દૂરસ્થ દિવઃ-પ્રકાશમાન સૂર્યના પૃષ્ઠે-પર ભાગમાં વિરાજમાન થાય છે, તેઓ ન-દુઃખને પ્રાપ્ત થતા નથી. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે સૂત્રાત્મા વાયુ; અગ્નિ, જળ અને પૃથિવીને ધારણ કરે છે, તેને અભ્યાસથી જાણીને સત્યવાણીનો અન્યોને ઉપદેશ કરે. (૧૦)

द्वादशारं न्हि तज्जराय वर्वीत्ति चक्रं परि द्यामृतस्य ।

આ પુત્રા અંગ્ને મિથુનાસો અત્ર સપ્ત શતાનિ વિંશતિશ્ચ તસ્થુઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! અત્ર-આ સંસારમા જે દ્વાદશારમ્-જેના બાર અંગો છે, તે ચક્રમ્-ચક્રની સમાન વિદ્યમાન સંવત્સર દ્યામ્-પ્રકાશમાન સૂર્યની પરિ, વર્વીત્તિ-સર્વત્રથી નિરંતર વિદ્યમાન છે, તત્-તેની જરાય-ક્ષતિ = હાનિ નહિ-થતી નથી.

જે આ સંસારમાં ઋણસ્ય-સત્યકારણથી સપ્ત-સાત શતાનિ-સો વિંશતિ:-વીસ ચ-પણ મિથુનાસ:-સંયોગથી ઉત્પન્ન થયેલ પુત્રા:-પુત્રોની સમાન વિદ્યમાન તત્ત્વો વિષય આ, તસ્થુ:-પોત-પોતાના વિષયોમાં રહેલ છે, તેને જાણ. (૧૧)

ભાવાર્થ : કાળ અનંત, પરિણામરહિત અને વ્યાપક છે. તેની કદીપણ ઉત્પત્તિ અને ક્ષતિ થતી નથી.

આ સંસાર(ની ઉત્પત્તિ)ના કારણમાં જે સાતસોવીસ તત્ત્વો, તેઓ મળીને ઈશ્વરની વ્યવસ્થાથી સ્થૂળ થયેલ છે. તેનું કારણ અજન્મા અને નિત્ય છે. જ્યાં સુધી તેને પૃથક્-પૃથક્ પ્રત્યક્ષ રૂપમાં જાણી લેવામાં ન આવે, ત્યાં સુધી વિદ્યા વૃદ્ધિ માટે મનુષ્ય પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૧૧)

પञ्चपादं पितरं द्वादशाकृतिं दिव आहुः परे अर्द्धे पुरीषिणम् ।

અથેમે અન્ય ઉપરે વિચક્ષણં સપ્તચક્રે ષઠ્ઠરં આહુરર્પિતમ્ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે પञ्चपादम्-ક્ષણ, મુહુર્ત, પ્રહર, દિવસ, પક્ષ આ પાંચ પગ જેના પિતરમ્-પિતા સમાન પાલન કરાવનારા, દ્વાદશાકૃતિમ્-બાર મહિના જેનો આકાર અને પુરીષિણમ્-મળેલા પદાર્થોની પ્રાપ્તિ વા હિંસા કરાવનારા અર્થાત્ તેના મિશ્રણને પૃથક્-પૃથક્ કરાવનારા સંવત્સરને દિવ:-પ્રકાશમાન સૂર્યની પરે-(= ઉત્કૃષ્ટ સ્થાન) અર્દ્ધે-અર્ધા ભાગમાં વિદ્વાન આહુ:-કહે છે-બતાવે છે.

અથ-અનન્તર ઇમે અન્યે-અન્ય વિદ્વાનો ષઠ્ઠે-જેમાં આરારૂપ છ ઋતુ અને સપ્તચક્રે-સાત ચક્ર ધૂમવાની પરિધિ વિદ્યમાન તે ઉપરે-મેઘમંડળમાં વિચક્ષણમ્-વાણીના વિષયને અર્પિતમ્-સ્થાપિત આહુ:-કહે છે, તેને જાણો. (૧૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આ મંત્રમાં કાળના અવયવોનું કથન ઈષ્ટ છે. જે વ્યાપક, નિત્ય અને અનન્ત કાળમાં સમસ્ત જગત ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ અને પ્રલય (પર્યન્ત પરિમાણ)ને પ્રાપ્ત થાય છે, તે કાળ સૂક્ષ્મ હોવાથી તેનું જ્ઞાન (પ્રાપ્ત કરવું) કઠિન છે. તેથી તમે તેને પ્રયત્નથી જાણો. (૧૨)

पञ्चारे चक्रे परिवर्त्तमाने तस्मिन्ना तस्थुर्भुवनानि विश्वा ।

तस्य नाक्षस्तप्यते भूरिभारः सनादेव न शीर्यते सनाभिः ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! પચ્ચારે-જેમાં પાંચ તત્વ આરા રૂપ છે પરિવર્તમાને-અને સર્વત્રથી વર્તમાન તસ્મિન્-તે ચક્રે-પૈડાંની સમાન ફરતા પંચતત્વના પંચીકરણમાં વિશ્વા-સમસ્ત ભુવનાનિ-લોકો આ, તસ્થુ:-સમ્યક્ સ્થિર રહે છે, તસ્ય-તેના અક્ષ:-પૂર્વ ભાગ અર્થાત્ જે તેનાથી પૂર્વ-પ્રથમ ઈશ્વર છે, તે ન, તપ્યતે-સંતપ્ત થતો નથી અર્થાત્ સુખ-દુઃખનો અનુભવ કરતો નથી. સનાભિ:-અને જેની નાભિ બંધન સમાન છે. અર્થાત્ ક્રિયા સાથે સંલગ્ન છે અને ભૂરિભાર:-જેમાં બહુ જ ભાર છે, બહુ જ કાર્ય-કારણ આરોપિત છે, તે કાળ સનાત્-સનાતનથી નૈવ, શીર્યતે-નાશ પામતો નથી. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ આ કારણ (પ્રકૃતિ), કાળ, આકાશ અને દિશાઓવાળા સંસારરૂપી ચક્ર પરમશ્વરમાં વ્યાપ્ત છે, તેમ જ કાળ, આકાશ અને દિશાઓમાં (સ્થિત) કાર્ય-કારણરૂપ સંસાર વ્યાપ્ત છે. (૧૩)

સનેમિ ચક્રમ્જરં વિ વાવૃત ઉત્તાનાયાં દર્શ યુક્તા વહન્તિ ।

સૂર્યસ્ય ચક્ષુ રજસૈત્યાવૃતં તસ્મિન્નાર્પિતા ભુવનાનિ વિશ્વા ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સનેમિ-સમાન નેમિ-નાભિવાળા અજરમ્-વૃદ્ધત્વ દોષરહિત ચક્રમ્-ચક્રની સમાન વર્તમાન કાળચક્ર ઉત્તાનાયામ્-ઉત્કૃષ્ટતાથી વિસ્તૃત થયેલ જગતમાં વિ, વવૃતે-વિશેષ કરીને પુન:-પુન: આવે છે અને તે કાળચક્રને દર્શ-દર્શ પ્રાણ યુક્તા:-યુક્ત વહન્તિ-વહાવે છે.

જે સૂર્યસ્ય-સૂર્યનો ચક્ષુ:-વ્યક્તિકારક-પ્રકટતા કરનાર ભાગ રજસા-લોકોની સાથે આવૃતમ્-સર્વત્રથી આવરણને એતિ-પ્રાપ્ત થાય છે અર્થાત્ ઢંકાઈ જાય છે, તસ્મિન્-તેમાં વિશ્વા-સમસ્ત ભુવનાનિ-ભૂગોળ આર્પિતા-સ્થાપિત છે, એમ તમે જાણો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે વ્યાપક, નિત્ય અને સમસ્ત લોકોનો આધાર કાળ છે, તેની ગતિથી સૂર્ય આદિ લોકો પ્રકાશિત થાય છે, તેમ સર્વેએ જાણવું જોઈએ. (૧૪)

સાકંજાનાં સપ્તથમાહુરેકજં ષઙ્ઙિદ્યમા ઋષયો દેવજા ઇતિ ।

તેષામિષ્ટાનિ વિહિતાનિ ધામ્શઃ સ્થાત્રે રૈજન્તે વિકૃતાનિ રૂપશઃ ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમે સાકંજાનામ્-એક સાથે ઉત્પન્ન થયેલા પદાર્થોના મધ્યમાં જે એકજમ્-એક કારણથી ઉત્પન્ન મહત્વને સપ્તથમ્-સાતમું આહ:-કહે છે. જ્યાં ષટ્-છ દેવજા:-દેદીપ્યમાન વિદ્યુત્થી ઉત્પન્ન થયેલ યમા:-નિયંતા અર્થાત્ સર્વને યથાયોગ્ય વ્યવહારોમાં વર્તાવનારા ઋણ્ય:-આપ સર્વમાં મળનાર ઋતુ વર્તમાન છે, તેષામ્-તેની મધ્યમાં જે ધામ્શઃ-પ્રત્યેક સ્થાનમાં ઇષ્ટાનિ-મળેલા-મિશ્ર પદાર્થોને ઈશ્વરે વિહિતાનિ-રચેલ છે અને જે સ્પ્શઃ-રૂપોની સાથે વિકૃતાનિ-અવસ્થાન્તરને પ્રાપ્ત થયેલ સ્થાત્રે-સ્થિત કારણની મધ્યમાં રૈજન્તે-કંપન થાય છે-ચલાયમાન થાય છે, તે સર્વને ઇત્-જ ઇતિ-એ પ્રકારથી જ જાણો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે આ સંસારમાં પદાર્થો છે, તે સર્વ ઈશ્વરની વ્યવસ્થાથી યુગપત્ = ક્રમની અપેક્ષા નથી. શા માટે ? અર્થાત્ કેમ નથી ? કારણ કે ઈશ્વરની સર્વ-વ્યાપકતા અને અનન્ત સામર્થ્યતા કારણ

છે. તેથી તે સ્વયં અચળ રહેવા છતાં સર્વ લોકોને ચલાવે છે. તે ઈશ્વર વિકારરહિત (રૂપાન્તર રહિત) રહીને સર્વને વિકારયુક્ત (રૂપાન્તર યુક્ત) કરે છે.

જેમ ઋતુઓ ક્રમથી વર્તમાન રહે છે અને પોત-પોતાના લક્ષણોને પ્રકટ કરે છે, તેમ જ પદાર્થો ઉત્પન્ન થઈને પોત-પોતાના ગુણોને પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૫)

સ્ત્રિયઃ સતીસ્તાં ડં મે પુંસ આહુઃ પશ્યદક્ષણવાન્ન વિ ચૈતદન્ધઃ ।

કવિર્યઃ પુત્રઃ સ ડ્વિમા ચિકેત્ યસ્તા વિજાનાત્સ પિતુષ્પિતાસત્ ॥ ૧૬ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેને અક્ષણવાન્-વિજ્ઞાની પશ્યત્-દેખે, અન્ધઃ-અને અંધ = અજ્ઞાની ન-દેખે નહિ, વિ, ચેતત્-વિવિધ પ્રકારથી જાણે. જેને સતીઃ-વિદ્યા, સુશિક્ષા અને શુભ ગુણોથી યુક્ત સ્ત્રિયઃ-સ્ત્રીઓ આહુઃ-કહે છે, તાનુ-તેને મે-મારા પુંસઃ-પુરુષોને જાણો.

યઃ-જે કવિઃ-વિકાન્ત પ્રજ્ઞ = પ્રત્યેક પદાર્થમાં ક્રમ-ક્રમથી પહોંચાડનારી બુદ્ધિ રાખનાર પુત્રઃ-પવિત્ર વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત પુરુષ તા-તે ઈષ્ટ પદાર્થોને ડ્વિમા-સર્વત્રથી આ, વિજાનાત્-સમ્યક્ જાણે છે, સઃ-તે વિદ્વાન છે; અને યઃ-જે વિદ્વાન છે, સઃ-તે પિતુઃ-પિતાના પણ પિતા-પિતા અસત્-છે-થવાને યોગ્ય છે, એમ તમે ચિકેત-જાણો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેને વિદ્વાનો જાણે છે, તેને અવિદ્વાન જાણી શકતા નથી.

જેમ વિદ્વાન પુરુષ પુત્રોને ભણાવીને વિદ્વાન બનાવે, તેમ વિદુષી સ્ત્રીઓ કન્યાઓને વિદુષી બનાવે.

જેઓ પૃથિવીથી લઈને પરમેશ્વર-પર્યન્ત પદાર્થોના ગુણ, કર્મ, સ્વભાવોને જાણીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને સિદ્ધ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ યુવક હોવા છતાં વૃદ્ધોના પિતરો-પિતા (સમાન) બને છે. (૧૬)

અવઃ પરેણ પર ઇનાવરેણ પદા વત્સં વિભ્રતી ગૌરુદસ્થાત્ ।

સા કદ્રીચી કં સ્વિદર્દ્ધ્વં પરાંગાત્ ક્વ સ્વિત્સૂતે નહિ યૂથે અન્તઃ ॥ ૧૭ ॥

પદાર્થ : જે વત્સમ્-ઉત્પન્ન થયેલ મનુષ્યાદિ સંસારને વિભ્રતી-ધારણ કરતી ગૌઃ-ગમન કરનારી, પરેણ-ઉપર વા અવરેણ-નીચે પદા-પ્રાપ્ત કરનારા ગમનરૂપ ચરણોથી અવઃ-નીચેથી ડ્વિસ્થાત્-ઊઠે છે, ઇના-એથી પરઃ-પાછળથી ઊઠે છે. જે યૂથે-સમૂહના અન્તઃ-મધ્યમાં કમ્, સ્વિત્-કોઈને અર્દ્ધમ્-અર્ધા સૂતે-ઉત્પન્ન કરે છે, સા-તે કદ્રીચી-અપ્રત્યક્ષ ગમન કરનારી ક્વ, સ્વિત્-કોઈમાં નહિ, પરા, અગાત્-પાછળ ફરી જતી નથી. (૧૭)

ભાવાર્થ : આ પૃથિવી સૂર્યની નીચે, ઉપર, દક્ષિણ તથા ઉત્તર તરફ ગતિ કરે છે એની ગતિ વિદ્વાન સિવાય અન્ય જાણી શકતા નથી. તેના પાછળના અર્ધ ભાગમાં સદા અંધકાર અને આગળના અર્ધ ભાગમાં પ્રકાશ રહે છે. મધ્યમાં સર્વ પદાર્થો રહે છે. તે આ પૃથિવી માતાની સમાન સર્વનું

પાલન કરે છે. (૧૭)

અવઃ પરૈણ પિતરં યો અસ્યાનુવેદ પર એનાવૈરણ ।

કવીયમાનઃ ક ઇહ પ્ર વૌચદ્ દેવં મનઃ કુતો અધિ પ્રજાતમ્ ॥ ૧૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! અસ્ય-એના અવઃ-અધો-નીચેના ભાગથી તથા પરૈણ-પર ભાગથી વિદ્યમાન પિતરમ્-પાલન કરનાર સૂર્યને અનુવેદ-વિદ્યા ભણ્યા પછી જાણે છે; યઃ-જે પરઃ-પર અને એના-એ ઉક્ત અવૈરણ-નીચેના માર્ગથી જાણે છે, તે કવીયમાનઃ-અત્યંત વિદ્વાન છે. કુતઃ-ક્યાંથી આ દેવમ્-દિવ્યગુણ સંપન્ન મનઃ-અન્તઃકરણ પ્રજાતમ્-ઉત્પન્ન થયેલ છે, એમ ઇહ-આ વિદ્યા વા જગતમાં કઃ-કોણ અધિ, પ્ર, વોચત-અધિકતર કહે છે. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યુત્થી લઈને સૂર્ય પર્યન્ત અગ્નિને પિતા સમાન પાલક જાણે, (તેઓ) જેના ઉત્તમ અને સામાન્ય કારણ તથા કાર્ય નામક સ્વરૂપ છે. તેનો ઉપદેશ, દિવ્ય અન્તઃકરણયુક્ત બનીને આ સંસારમાં કહે. (૧૮)

યે અર્વાઞ્ચસ્તાં ઉ પરાંચ આહુર્યે પરાંઞ્ચસ્તાં ડં અર્વાંચ આહુઃ ।

ઇન્દ્રશ્ચ યા ચક્રથુઃ સોમ તાનિ ધુરા ન યુક્તા રજસો વહન્તિ ॥ ૧૯ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-ઐશ્વર્યયુક્ત વિદ્વાન્ ! યે-જે અર્વાઞ્ચઃ-નીચે જનાર પદાર્થ છે, તાન્, ડ-તેને પરાંચઃ-ઉપર પહોંચેલ આહુઃ-કહે છે યે-જે પરાંઞ્ચઃ-ઉપર ભાગમાં પહોંચનાર છે, તાન્-ડ-તેને તર્ક-વિતર્કથી અર્વાંચઃ-નીચે જનાર આહુઃ-કહે છે, તેને જાણો.

ઇન્દ્રઃ-સૂર્ય ચ-અને વાયુ યા-જે ભુવનોને ધારણ કરે છે, તાનિ-તેને યુક્તાઃ-યુક્ત અર્થાત્ તેમાં સંબંધ કરેલ પદાર્થ ધુરા-ધારણ કરનારી ધરીમાં જોડેલ ઘોડાઓની ન-સમાન રજસઃ-લોકોને વહન્તિ-વહાવે-ચલાવે છે, તેને હે અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! તમે વિદિત ચક્રથુઃ-કરો-જાણો. (૧૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આ સંસારમાં જે નીચે-ઉપર, દૂર-સમીપ, સ્થૂળ-સૂક્ષ્મ, લઘુ-ગુરુ (આદિ) વ્યવહાર છે, તે સાપેક્ષ છે. જે 'આ આનાથી ઉપર છે' (એમ) કહેવામાં આવે છે, તે બન્ને નામો (સંજ્ઞાઓ) ને પ્રાપ્ત થાય છે. જે આનાથી પરે = દૂર (છે), સ્થૂળ (છે), તે બીજાથી સૂક્ષ્મ (છે), જે આનાથી લઘુ છે, તે બીજાથી ગુરુ છે, એમ તમે જાણો. આ સંસારમાં કોઈ પણ વસ્તુ નિરપેક્ષ = અપેક્ષા રહિત નથી અને નિરાધાર પણ નથી. (૧૯)

દ્વા સુપર્ણા સયુજા સખાયા સમાનં વૃક્ષં પરિ ષસ્વજાતે ।

તયોરન્યઃ પિપ્પલં સ્વાદ્વત્ત્યનશનન્નન્યો અભિ ચાંકીશીતિ ॥ ૨૦ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સુપર્ણા-સુંદર પાંખોવાળા સયુજા-સમાન સંબંધ રાખનારા સખાયા-

મિત્રોની સમાન વિદ્યમાન દ્વા-બે પંખીઓ સમાનમ્-એક વૃક્ષમ્-કાપવામાં આવતા તે વૃક્ષનો પરિ, સસ્વજાતે-આશ્રય કરે છે-રહેલ છે; તયો:-તેમાંથી અન્ય:-એક પંખી પિપ્પલમ્-એ વૃક્ષના પાકેલા ફલને સ્વાદુ-મધુરતાથી અત્તિ-ખાય છે-સેવન કરે છે અને અન્ય:-બીજું પંખી અનશ્વત્-ખાતું નથી પરંતુ અભિ, ચાકશીતિ-સર્વત્રથી જુએ છે.

સુંદર ચાલતા-ફરતા વા ક્રિયાજન્ય કામને જાણનારા વ્યાપ્ય-વ્યાપકભાવથી સાથે સંબંધ રાખનારા મિત્રોની સમાન વર્તમાન જીવ અને ઈશ્વર છે.

ઈશ્વર સમાન કાર્ય-કારણરૂપ બ્રહ્માંડ દેહનો આશ્રય કરે છે, તે બન્ને જીવ અને બ્રહ્મ અનાદિ છે, તેમાં જીવ પાપ-પુણ્યથી ઉત્પન્ન સુખ-દુઃખાત્મક ભોગને સ્વાદુપણા-મધુરતાથી ભોગવે છે અને બીજો જે બ્રહ્માત્મા કર્મફળનો ભોક્તા નથી. પરંતુ તે ભોક્તા જીવને સર્વત્રથી જુએ છે અર્થાત્ સાક્ષી છે. એમ તમે જાણો.

ભાવાર્થ : જીવ, ઈશ્વર અને જગતનું કારણ (= પ્રકૃતિ) એ ત્રણ પદાર્થો અનાદિ અને નિત્ય છે. તેમાં જીવ અને ઈશ્વર ક્રમશઃ અલ્પ પરિણામવાળા અને અનંત પરિણામવાળા છે, ચેતન અને વિજ્ઞાન સંપન્ન છે તથા વિલક્ષણ (કર્મોવાળા) છે. તેઓ ક્રમશઃ વ્યાપ્ય અને વ્યાપક ભાવથી સંયુક્ત રહીને મિત્ર સમાન વર્તમાન છે.

એજ રીતે અવ્યક્ત પરમાણુરૂપ કારણ (= પ્રકૃતિ) થી કાર્યરૂપ જગત ઉત્પન્ન થાય છે, તે પણ અનાદિ અને નિત્ય છે.

સમસ્ત જીવ પાપ અને પુણ્યરૂપી કર્મ કરીને તેનાં ફળોને ભોગવે છે, તથા ઈશ્વર એકલો અભિવ્યાપક થઈને, ન્યાયપૂર્વક પાપ-પુણ્યનું ફળ આપવાના કારણે, ન્યાયાધીશની સમાન નિરીક્ષણ કરે છે. (૨૦)

યત્રા સુપર્ણા અમૃતસ્ય ભાગમનિમેષં વિદથાભિસ્વરન્તિ ।

ઙ્ગનો વિશ્વસ્ય ભુવનસ્ય ગોપાઃ સ મા ધીરઃ પાકમત્રા વિવેશ ॥ ૨૧ ॥

પદાર્થ : યત્ર-જે વિદથા-વિજ્ઞાનમય પરમેશ્વરમાં સુપર્ણા:-શોભન કર્મવાળા જીવ અમૃતસ્ય-મોક્ષના ભાગમ્-સેવન કરવા યોગ્ય અંશને અનિમેષમ્-નિરંતર અભિસ્વરન્તિ-સન્મુખ કહે છે અર્થાત્ પ્રત્યક્ષ કહે છે; વા જે પરમેશ્વરમાં વિશ્વસ્ય-સમસ્ત ભુવનસ્ય-લોક-લોકાન્તરનો ગોપા:-પાલક ઙ્ગ:-સ્વામી સૂર્યમંડળ આ, વિવેશ-પ્રવેશ કરે છે-અર્થાત્ સૂર્યાદિ લોક-લોકાન્તર સર્વ લયને પ્રાપ્ત થાય છે-જે એને જાણે છે, સ:-તે ધીરઃ-ધ્યાનવાન પુરુષ અત્ર-એ પરમેશ્વરમાં પાકમ્-પરિપકવ વ્યવહારવાળા મા-મને ઉપદેશ કરે. (૨૧)

ભાવાર્થ : જ્યાં સૂર્ય આદિ લોક-લોકાન્તર અને દ્વીપ-દ્વીપાન્તર, એ સર્વ લયને પ્રાપ્ત થાય છે, તેના ઉપદેશથી જ સાધકજન મોક્ષ પ્રાપ્ત કરે છે, અન્યથા નહિ. (૨૧)

યસ્મિન્ વૃક્ષે મધ્વદઃ સુપર્ણા નિવિશન્તે સુવતે ચાધિ વિશ્વે ।

तस्येदाहुः पिप्पलं स्वाद्वग्ने तन्नोन्नशद्यः पितरं न वेद ॥ २२ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! યસ્મિન્-જે વિશ્વે-સમસ્ત વૃક્ષે-વૃક્ષ પર મધ્વદ:-મધને ખાનાર સુપર્ણા:- સુંદર પાંખોયુક્ત ભમરા આદિ પક્ષી નિ, વિશન્તે-સ્થિર થાય છે અધિ, સુવતે, ચ-અને આધારભૂત બનીને પોતના બાળકોને ઉત્પન્ન કરે છે, તસ્ય; ઇત્-તેના જ પીપ્પલમ્-જળની સમાન નિર્મળ ફળને અગ્ને-આગળ સ્વાદુ-સ્વાદિષ્ટ આહુ:-કહે છે અને તત્-તે ન, ઉત્, નશત્, નષ્ટ પામતા નથી અર્થાત્ વૃક્ષ રૂપ આ જગતમાં મધુર કર્મ ફળોને ખાનારાઓ ઉત્તમ કર્મયુક્ત જીવ સ્થિર રહે છે અને તેમાં સંતાનોને ઉત્પન્ન કરે છે, તેને જળની સમાન નિર્મળ કર્મફળ સંસારમાં થતા તેને આગળ ઉત્તમ કહે છે અને નષ્ટ થતા નથી અર્થાત્ પછી અશુભ કર્મો કરવાથી સંસારરૂપ વૃક્ષનું જે ફળ જોઈએ તે મળતું નથી.

ય:-જે પુરુષ પિતરમ્-પાલક પરમાત્માને ન, વેદ-જાણતો નથી, તે આ સંસારના ઉત્તમ ફળને પામતો નથી. (૨૨)

ભાવાર્થ : અનાદિ-અનંત કાળથી આ સંસાર ઉત્પન્ન અને નષ્ટ થતો રહ્યો છે તથા જીવ (શારીરિક દૃષ્ટિએ) જન્મ લે છે અને મૃત્યુ પામે છે.

આ સંસારમાં જીવો દ્વારા જેવા કર્મો કરેલ છે, તેમ જ ઈશ્વરકૃત ન્યાય અનુસાર તેઓને ફળ ભોગવવા પડે છે. કર્મ અને જીવનો પણ નિત્ય સંબંધ છે.

જેઓ પરમાત્માને જાણતા નથી અને તેના ગુણ, કર્મ, સ્વભાવને અનુકૂળ આચરણ કરતા નથી અને પોતાની ઈચ્છાનુસાર કરે છે, તેઓ નિરંતર દુઃખી થાય છે અને જે તેથી વિપરીત (ગુણ, કર્મ, સ્વભાવ અનુસાર આચરણ કરનારા) છે, તેઓ સદા આનંદિત રહે છે. (૨૨)

यद् गायत्रे अधि गायत्रमाहितं त्रैष्टुभाद् वा त्रैष्टुभं निरतक्षत ।

यद् वा जगज्जगत्याहितं पदं य इत्तद् विदुस्ते अमृतत्वमानशुः ॥ २३ ॥

પદાર્થ : યે-જે લોકો યત્-જે ગાયત્રે-ગાયત્રી ઇંદો વાચ્ય વૃત્તિમાં ગાયત્રમ્-ગાનારની રક્ષા કરનાર અધિ, આહિતમ્-સ્થિત છે; ત્રૈષ્ટુભાત્, વા-અથવા ત્રિષ્ટુપ ઇંદોવાચ્ય વૃત્તિથી ત્રૈષ્ટુભમ્-ત્રિષ્ટુપમાં પ્રસિદ્ધ થયેલ અર્થને નિરતક્ષત-નિરંતર વિસ્તૃત કરે છે; વા-વા યત્-જે જગતિ-સંસારમાં જગત્-પ્રાણી આદિ જગત પદમ્-જાણવા યોગ્ય આહિતમ્-સ્થિત છે તત્-તેને વિદુઃ-જાણે છે, તે-તેઓ ઇત્-જ અમૃતત્વમ્-મોક્ષભાવને આનશુઃ-પ્રાપ્ત થાય છે-કરે છે. (૨૩)

ભાવાર્થ : જેઓ સૃષ્ટિના પદાર્થોને અને તેમાં સર્વના સ્વામી પરમેશ્વરને જાણીને તથા પરમાત્માનું ધ્યાન કરીને વિદ્યા અને ધર્મની ઉન્નતિ કરે છે, તેઓ મોક્ષ પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૩)

गायत्रेण प्रति मिमीते अर्कमर्केण साम त्रैष्टुभेन वाकम् ।

वाकेन वाकं द्विपदा चतुष्पदाक्षरेण मिमते सप्त वाणीः ॥ २४ ॥

પદાર્થ : વિદ્વાનો ! જે જગદીશ્વર ગાયત્રેણ-ગાયત્રી છંદથી અર્કમ્-ઋક્ અર્કેણ-ઋચાઓના સમૂહથી સામ-સામ ત્રૈષ્ટુભેન-ત્રિષ્ટુપ છંદ વા ત્રણ વેદોની વિદ્યાઓની સ્તુતિઓથી વાકમ્-યજુર્વેદ દ્વિપદા-બે પદો જેમાં વિદ્યમાન છે વા ચતુષ્પદા-ચાર પદોવાળા અક્ષરેણ-નાશરહિત વાકેન-યજુર્વેદથી વાકમ્-અથર્વવેદ અને સપ્ત-ગાયત્રી આદિ સાત છંદયુક્ત વાણીઃ-વેદવાણીને પ્રતિ, મિમીતે-પ્રતિમાન કરે છે અને જે તેના જ્ઞાનનું મિમતે-માન કરે છે, તેઓ કૃતકૃત્ય બને છે. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે જગદીશ્વરે વેદના અક્ષર, પદ, વાક્ય, છંદ અને અધ્યાય આદિ રચેલ છે, તેને સર્વ મનુષ્યો ધન્યવાદ આપે. (૨૪)

જગતા સિન્ધું દિવ્યસ્તભાયદ્રથન્તરે સૂર્ય પર્યપ્શ્યત્ ।

ગાયત્રસ્ય સમિધસ્તિસ્ત્ર આહુસ્તતૌ મહ્વા પ્ર રિરિચે મહિત્વા ॥ ૨૫ ॥

પદાર્થ : જે જગદીશ્વર જગતા-સંસારની સાથે સિન્ધુમ્-નદી આદિને દિવિ-પ્રકાશ રથન્તરે-અને અન્તરિક્ષમાં સૂર્યમ્-સૂર્યલોકને અસ્તભાયત્-રોકે છે; વા સર્વને પર્યપ્શ્યત્-સર્વત્રથી દેખે છે; વા જે ગાયત્રસ્ય-ગાયત્રી છંદથી સમ્યક્ સિદ્ધ ઋગ્વેદના સાનિધ્યથી તિસ્ત્રઃ, સમિધઃ-સમ્યક્ પ્રદીપ્ત ત્રણ પદાર્થોને અર્થાત્ ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન ત્રણેય કાળના સુખોને આહુઃ-કહે છે, તતઃ-તેનાથી મહ્વા-મહાન મહિત્વા-પ્રશંસનીય ભાવથી પ્ર, રિરિચે-પૃથક્ થાય છે અર્થાત્ પૃથક્ ગણવામાં આવે છે, તે સર્વને પૂજવા-સત્કાર કરવા યોગ્ય છે. (૨૫)

ભાવાર્થ : જ્યારે ઈશ્વરે સંસારની રચના કરી, ત્યારે નદી, સમુદ્ર આદિ બનાવ્યા.

જેમ સૂર્ય આકર્ષણથી ભૂગોળોને ધારણ કરે છે, તેમ સૂર્ય આદિને ઈશ્વર ધારણ કરે છે.

જે સર્વ જીવોને સમસ્ત પાપ-પુણ્યરૂપ કર્મોને જાણીને ફળ પ્રદાન કરે છે, તે (ઈશ્વર) સર્વ પદાર્થોથી મહાન છે. (૨૫)

ઉપ્ હ્રયે સુદુઘાં ધેનુમેતાં સુહસ્તૌ ગોધુગુત દૌહદેનામ્ ।

શ્રેષ્ઠં સ્વં સવિતા સાવિષન્નોઽમ્બીદ્ધો ઘર્મસ્તદુ ષુ પ્ર વૌચમ્ ॥ ૨૬ ॥

પદાર્થ : જેમ સુહસ્ત-જેના સુંદર હાથ અને ગોધુક્-ગાયને દોહતા હું એનામ્-એ સુદુધામ્-સારી રીતે દોવાતી અર્થાત્ કામોને પૂરા કરતી ધેનુમ્-દૂધ દેનારી ગાયરૂપી વિદ્વાનો ઉપ, હ્રયે-સ્વીકાર કરું છું ઉત-અને એનામ્-એ વિદ્યાને આપ પણ દોહત્-દોહો; વા જે શ્રેષ્ઠમ્-ઉત્તમ સવમ્-ઐશ્વર્યને સવિતા-ઐશ્વર્ય દાતા નઃ-અમારા માટે સાવિષત્-ઉત્પન્ન કરે; વા જેમ અમ્બીદ્ધઃ-સર્વત્રથી પ્રદીપ્ત અર્થાત્ અત્યંત તપતો ઘર્મઃ-તાપ વર્ષા કરે છે તદુ-તે સર્વને જેમ હું સુ, પ્ર, વૌચમ્-સારી રીતે કહું, તેમ તમે પણ એને સારી રીતે કહો. (૨૬).

ભાવાર્થ : અધ્યાપક વિદ્વાનો પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત વાણી સારી રીતે આપે. જેથી શિષ્ય ઉત્તમ ઐશ્વર્યને

પ્રાપ્ત કરી શકે.

જેમ સૂર્ય સમસ્ત સંસારને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ ઉપદેશકો સર્વ વિદ્યાઓને પ્રકાશિત કરે. (૨૬)

હિન્દુઃકૃણ્વતી વસુપત્ની વસૂનાં વત્સમિચ્છન્તી મનસાભ્યાગાત્ ।

દુહામશ્વિભ્યાં પયો અઘ્ન્યેયં સા વર્દ્ધતાં મહતે સૌભગાય ॥ ૨૭ ॥

પદાર્થ : જેમ હિન્દુકૃણ્વતી-ભાંબરતી અને મનસા-મનથી વત્સમ્-વાઇરડાને ઇચ્છન્તી-ઈચ્છતી ઇયમ્-એ અઘ્ન્યા-મારવાને અયોગ્ય ગાય અભિ, આ, આગાત્-સર્વત્રથી આવે છે.

જે અશ્વિભ્યામ્-સૂર્ય અને વાયુથી પયઃ-જળ વા દૂધને દુહામ્-દોહતા પદાર્થોમાં વર્તમાન પૃથિવી છે, સો-તે વસૂનામ્-અગ્નિ આદિ વસુ સંજ્ઞકોમાં વસુપત્ની-વસ્તુઓની પાલિકા મહતે-અત્યંત સૌભગાય-સુંદર ઐશ્વર્યને માટે વર્દ્ધતામ્-વૃદ્ધિ પામે, ઉન્નતિને પ્રાપ્ત થાય. (૨૭)

ભાવાર્થ : જેમ પૃથિવી મહાન ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ ગાયો મહાન સુખ આપે છે. તેથી તેને કોઈએ કદીપણ ન મારવી જોઈએ. (૨૭)

ગૌરમીમેદનુ વત્સં મિષન્તં મૂર્દ્ધાનં હિન્દુકૃણોન્માત્વા ડં ।

સૂક્વાણં ઘર્મમભિ વાવશાના મિમાતિ માયું પયતે પયોભિઃ ॥ ૨૮ ॥

હે મનુષ્યો ! જેમ વાવશાના-નિરંતર કામના કરતી ગૌઃ-ગાય મિષન્તમ્-શબ્દ કરતી વત્સમ્-વાઇરડાને તથા મૂર્દ્ધાનમ્-મસ્તકને અનુ, હિન્દુ, અકૃણોત્-સુંઘતી, મસ્તકને ચાટતી, શબ્દ કરે છે-ભાંભરે છે અને માતવૈ-માન-પ્રેમ કરવા માટે ડ-જ તે વાઇરડાના દુઃખનો અમીમેત્-નાશ કરે છે, તેમ પયોભિઃ-જળોની સાથે વર્તમાન પૃથિવી ઘર્મમ્-તાપને સૂક્વાણમ્-રચીને દિવસને તથા માયુમ્-વાણીને પ્રસિદ્ધ કરીને પયતે-પોતાના ભૂયકમાં જાય છે અને સુખનો અભિ, મિમાતિ-સર્વત્રથી માન અર્થાત્ તોલ-વજન કરે છે. (૨૮)

ભાવાર્થ : જેમ ગાયોની પાછળ વાઇરડાઓ અને વાઇરડાઓની પાછળ ગાયો જાય છે, તેમ પૃથિવીઓની અનુસાર પદાર્થ અને પદાર્થોને અનુસાર પૃથિવીઓ ચાલે છે. (૨૮)

અયં સ શિન્દુક્તે યેન ગૌર ભીવૃતા મિમાતિ માયું ધ્વસનાવધિ શ્રિતા ।

સા ચિત્તિભિર્નિ હિ ચ્કાર મર્ત્યં વિદ્યુદ્ભવન્તી પ્રતિ વ્બ્રિમૌહત ॥ ૨૯ ॥

પદાર્થ : સઃ-તે અયમ્-આ વાઇરડાઓની સમાન મેઘ ભૂમિમાં શિન્દુક્તે-ગર્જનાનો અવ્યક્ત શબ્દ કરે છે. કોણ ? કે યેન-જેથી ધ્વસનૌ-ઉપર, નીચે અને મધ્યમાં જવાને પરિધિ તેમાં અધિ, શ્રિતા-આશ્રિત થઈને અભીવૃતા-સર્વત્ર વાયુથી આવૃત્ત ગૌઃ-પૃથિવી માયુમ્-પરિમિત માર્ગ પ્રતિ, મિમાતિ-પ્રત્યે જાય છે, સા-તે ચિત્તિભિઃ-પરમાણુઓના સમૂહોથી મર્ત્યમ્-મરણધર્મા મનુષ્યને ચકાર-કરે છે, તે પૃથિવી હિ-જ માં ભવન્તી-વર્તમાન વિદ્યુત્-વિદ્યુત્ વ્બ્રિમ્-પોતાના રૂપને નિ, ઔહત-નિરંતર તર્ક-

વિતર્કથી પ્રાપ્ત થાય છે. (૨૯)

ભાવાર્થ : જેમ પૃથિવીથી ઉત્પન્ન થઈને તથા અન્તરિક્ષમાં પ્રચુરતાને પ્રાપ્ત થઈને મેઘ પૃથિવી પર વૃક્ષ આદિને સમ્યક્ સિંચીને વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ પૃથિવી સર્વની વૃદ્ધિ કરે છે અને ત્યાં વર્તમાન વિદ્યત્ રૂપને પ્રકાશિત કરે છે.

જેમ શિલ્પીજનો ક્રમથી (પદાર્થનું) ચયન કરીને વિજ્ઞાનપૂર્વક ગૃહ આદિનું નિર્માણ કરે છે, તેમ પરમેશ્વરે આ સૃષ્ટિ નિર્માણ કરી છે. (૨૯)

અનચ્છયે તુરગાતુ જીવમેજદ્ ધ્રુવં મધ્ય આ પસ્ત્યાનામ્ ।

જીવો મૃતસ્ય ચરતિ સ્વધાભિરમર્ત્યો મર્ત્યેના સયોનિઃ ॥ ૩૦ ॥

પદાર્થ : જે બ્રહ્મા તુરગાતુ-શીઘ્ર ગમનને અનત્-પુષ્ટ કરીને જીવમ્-જીવને એજત્-કંપાવે છે અને પસ્ત્યાનામ્-ગૃહોની અર્થાત્ જીવોના શરીરની મધ્યે-મધ્યમાં ધ્રુવમ્-નિશ્ચલ થઈને શયે-શયન કરે છે.

જ્યાં અમર્ત્યઃ-અનાદિત્વથી મૃત્યુધર્મરહિત જીવઃ-સ્વધાભિઃ-અન્નાદિ અને મર્ત્યેન-મરણધર્મા શરીરની સાથે સયોનિઃ-સમાન સ્થાનસ્થ થઈને મૃતસ્ય-મરણ સ્વભાવવાળા જગતની મધ્યમાં આ, ચરતિ-જાય છે-આચરણ કરે છે, તે બ્રહ્મમાં સમસ્ત જગત વસેલ છે. એમ જાણવું જોઈએ. (૩૦)

ભાવાર્થ : જે ચલાયમાન પદાર્થો સ્થિર, અનિત્યોમાં નિત્ય અને વ્યાપ્યોમાં વ્યાપક ઈશ્વર છે. તેની વ્યાપકતાથી રહિત અતિ સૂક્ષ્મ વસ્તુ પણ નથી, તેથી સર્વ જીવાત્માઓએ એ અન્તર્યામી રૂપથી સ્થિત (ઈશ્વર)ની નિત્ય ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૩૦)

અપ્શ્યં ગોપામનિપદ્યમાનમા ચ પરાં ચ પૃથિભિશ્ચરન્તમ્ ।

સ સ્ધ્રીચીઃ સ વિષૂચીર્વસાન્ આ વરીવર્ત્તિ ભુવનેષ્વન્તઃ ॥ ૩૧ ॥

પદાર્થ : હું ગોપામ્-સર્વ રક્ષક, અનિપદ્યમાનમ્-મન આદિ ઈન્દ્રિયોને પ્રાપ્ત ન થનાર અને પૃથિભિઃ-માર્ગો દ્વારા આ, ચ-આગળ અને પરા, ચ-પાછળ ચરન્તમ્-પ્રાપ્ત થનાર પરમાત્મા વા વિચરણ કરતા જીવને અપ્શ્યમ્-દેખું છું. સઃ-તે જીવાત્મા સ્ધ્રીચીઃ-સાથે જતી ગતિઓને સઃ-તે જીવ અને વિષૂચીઃ-અનેક પ્રકારની કર્માનુસાર ગતિઓનું વસાનઃ-આચ્છાદન કરીને ભુવનેષુ-લોક-લોકાન્તરોની અન્તઃ-મધ્યમાં આ, વરીવર્ત્તિ-નિરંતર સમ્યક્ રીતે વર્તમાન છે.

ભાવાર્થ : સર્વના દ્રષ્ટા પરમેશ્વરને જીવ (નેત્રોથી) જોઈ શકતો નથી, પરંતુ પરમાત્મા સર્વને યથાર્થ રીતે દેખે છે.

જેમ વસ્ત્ર આદિથી આવૃત્ત-ઢંકાયેલ પદાર્થ દેખાતો નથી, તેમ જીવ પણ સૂક્ષ્મ હોવાના કારણે દેખાતો નથી.

એ જીવ કર્મ ગતિ અનુસાર સર્વ લોકોમાં ભ્રમણ કરે છે. તેની અંદર અને બહાર સ્થિત રહીને પરમાત્મા પાપ અને પુણ્યના ફળ આપવા રૂપ ન્યાય દ્વારા સર્વને સર્વ સ્થાનોમાં જન્મ આપે છે. (૩૧)

य ई चकार न सो अस्य वेद य ई ददर्श हिरुगिन्नु तस्मात् ।
स मातुर्योना परिवीतो अन्तर्बहुप्रजा निर्ऋतिमा विवेश ॥ ३२ ॥

पदार्थ : य:-जे જીવ ઈમ્-ક્રિયા માત્ર ચકાર-કરે છે, સ:-તે અસ્ય-એ પોતાના રૂપને ન, વેદ-જાણતો નથી.

ય:-જે ઈમ્-સમસ્ત ક્રિયાઓને દદર્શ-જોતા અને પોતાના રૂપને જાણે છે, સ:-તે તસ્માત્-તેનાથી હિસ્ક-પૃથક્ થઈને માતુ:-માતાના યોના-ગર્ભાશયની અન્ત:-મધ્યમાં પરિવીત:-સર્વત્રથી ઢંકાયેલ બહુપ્રજા:-અનેક વાર જન્મ લેનાર નિર્ઋતિમ્-ભૂમિમાં ઇત્-જ નુ-શીઘ્ર આ, વિવેશ આવે છે-પ્રવેશ કરે છે. (૩૨)

ભાવાર્થ : જે જીવો માત્ર કર્મ કરે છે અને ઉપાસના તથા જ્ઞાનને પ્રાપ્ત થતા નથી, તેઓ પોતાનાં સ્વરૂપને પણ જાણતા નથી.

જે (જીવો) કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનમાં નિપુણ છે, તેઓ પોતાના અને પરમાત્માના સ્વરૂપને જાણી શકે છે.

જીવોના પૂર્વજન્મોનો આરંભ અને પુનર્જન્મોનો અન્ત નથી.

જ્યારે (જીવ) શરીરનો ત્યાગ કરે છે, ત્યારે આકાશમાં સ્થિત થઈને, પૃથિવી પર ચેષ્ટાયુક્ત બને છે. (૩૨)

द्यौर्मे पिता जनिता नाभिरत्र बन्धुर्मे माता पृथिवी महीयम् ।
उत्तानयोश्चम्बोर्इर्योर्निरन्तरत्रा पिता दुहितुर्गर्भमाधात् ॥ ३३ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન! જ્યાં પિતા-પિતૃસ્થાની સૂર્ય દુહિતુ:-કન્યારૂપ ઊષામાં ગર્ભમ્-કિરણરૂપી વીર્યને આ, અધાત્-સ્થાપિત કરે છે, ત્યાં ચમ્બો:-બે સેનાઓની સમાન સ્થિત ઉત્તાનયો:-ઉપરિસ્થ-ઊંચે સ્થાપિત કરેલ પૃથિવી અને સૂર્યના અન્ત:-મધ્યમાં મારું યોનિ:-ઘર છે.

અત્ર-આ જન્મમાં મે-મને જનિતા-ઉત્પન્ન કરનાર પિતા-પિતા, દ્યૌ:-પ્રકાશમાન સૂર્ય, વિદ્યુત્ની સમાન છે, અત્ર-અહીં મે-મારા નાભિ: બંધનરૂપ બન્ધુ:-ભાઈની સમાન પ્રાણ છે અને ઇયમ્-આ મહી-મહાન પૃથિવી-ભૂમિની સમાન માતા-માન્યપ્રદા જનની-માતા વિદ્યમાન છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૩૩)

ભાવાર્થ : ભૂમિ અને સૂર્ય સર્વના માતા-પિતા અને બંધુ સમાન છે. આ જ અમારું નિવાસ સ્થાન છે.

જેમ સૂર્ય પોતાની ઉત્પન્ન થયેલી ઊષામાં કિરણરૂપી વીર્ય સ્થાપિત કરીને દિવસરૂપી પુત્ર ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ જ માતા-પિતા પ્રકાશમાન પુત્ર ઉત્પન્ન કરે. (૩૩)

पृच्छामि त्वा परमन्तं पृथिव्याः पृच्छामि यत्र भुवनस्य नाभिः ।

पृच्छामि त्वा वृष्णो अश्वस्य रेतः पृच्छामि वाचः परमं व्योम ॥ ३४ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! ત્વા-આપને પૃથિવ્યા:-પૃથિવીથી પરમ-પર અન્તમ્-અન્તને પૃચ્છામિ-પૂછું છું. યત્ર-જ્યાં ભુવનસ્ય-લોહ સમૂહનું નાભિ:-બંધન છે તેને પૃચ્છામિ-પૂછું છું. વૃષ્ણ:-વીર્યવર્ષક અશ્વસ્ય-ઘોડાની સમાન વીર્યવાનના રેત:-વીર્યનું ત્વા-આપને પૃચ્છામિ-પૂછું છું અને વાચ:-વાણીના પરમમ્-પરમ વ્યોમ-વ્યાપક અવકાશ અર્થાત્ આકાશનું આપને પૃચ્છામિ-પૂછું છું.

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં ચાર પ્રશ્નો છે. [(૧) પૃથિવીથી પર અન્ત ક્યાં છે ? (૨) લોક સમૂહ = બ્રહ્માંડની નાભિ શું છે ? (૩) વીર્યવાનનું વીર્ય શું છે ? અને (૪) વાણીનો પરમ અવકાશ શું છે.] આના ઉત્તરો હવે પછીના મંત્રમાં છે. આ રીતે જિજ્ઞાસુઓએ વિદ્વાનોથી નિત્ય પૂછવું જોઈએ. (૩૪)

इयं वेदिः परो अन्तः पृथिव्या अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः ।

अयं सोमो वृष्णो अश्वस्य रेतो ब्रह्मायं वाचः परमं व्योम ॥ ૩૫ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે (૧) પૃથિવ્યા-ભૂમિના પર:-પર અન્ત:-ભાગ ઇયમ્-આ વેદિ:-જેમાં શબ્દોને જાણીએ તે આકાશ અને વાયુ રૂપ વેદિ છે (૨) અગ્રમ્-આ યજ્ઞ:-(સૂર્ય) યજ્ઞ ભુવનસ્ય-ભૂગોળ સમૂહનું નાભિ:-આકર્ષણથી બંધન છે, (૩) અયમ્-આ સોમ:-સોમલતાદિ રસ વા ચંદ્રમા વૃષ્ણ:-વર્ષા કરનાર અને અશ્વસ્ય:-શીઘ્રગામી સૂર્યના રેત:-વીર્યની સમાન છે તથા (૪) અયમ્-આ બ્રહ્મા-ચારેય વેદોના પ્રકાશક વિદ્વાન વા પરમાત્મા વાચ:-વાણીનો પરમમ્-ઉત્તમ વ્યામ-અવકાશ છે, તેને યથાવત્ જાણો. (૩૫)

ભાવાર્થ : પૂર્વ મંત્રમાં સ્થિત પ્રશ્નોના આ મંત્રમાં ક્રમથી ઉત્તર જાણવા જોઈએ. (૧) પૃથિવીની ચોતરફ આકાશયુક્ત વાયુ છે. (૨) એક એક બ્રહ્માંડની મધ્યમાં સૂર્ય છે. (૩) વીર્યને ઉત્પન્ન કરનારી ઔષધિઓ છે અને (૪) પૃથિવીમાં વિદ્યાની અવધિ = સીમા સમસ્ત વેદોનું અધ્યપન અને પરમાત્માનું વિશેષ જ્ઞાન છે, એમ નિશ્ચય કરવો જોઈએ. (૩૫)

सप्ताब्द्धर्गा भुवनस्य रेतो विष्णोस्तिष्ठन्ति प्रदिशा विधर्मणि ।

ते धीतिभिर्मनसा ते विपश्चितः परिभुवः परि भवन्ति विश्वतः ॥ ૩૬ ॥

પદાર્થ : જે સપ્ત-સાત અર્ધર્ધગર્ભા:-અર્ધ ગર્ભરૂપ અર્થાત્ પંચીકરણને પ્રાપ્ત મહત્ત્વ, અહંકાર પૃથિવી, જળ, તેજ, વાયુ અને આકાશના સૂક્ષ્મ અવયવ રૂપ શરીરધારી ભુવનસ્ય-સંસારના રેત:-બીજને ઉત્પન્ન કરીને વિષ્ણો:-વ્યાપક પરમાત્માની પ્રદિશા-આજ્ઞાથી અર્થાત્ તેની આજ્ઞારૂપ વેદોક્ત વ્યવસ્થાથી વિધર્મણિ-ચેતનથી વિરુદ્ધ ધર્મવાળા આકાશમાં તિષ્ઠન્તિ-સ્થિત રહે છે. તે-તે ધીતિભિ:-કર્મ અને તે-તેઓ મનસા-વિચારની સાથે પરિભુવ:-સર્વત્રથી વિદ્યામાં કુશળ વિપશ્ચિત:-વિદ્વાનો વિશ્વત:-સર્વત્રથી પરિ, ભવન્તિ-તિરસ્કૃત કરે છે અર્થાત્ તેના યથાર્થ ભાવને જાણવા વિદ્વાનો પણ કષ્ટ પામે છે. (૩૬)

ભાવાર્થ : જે મહત્ત્વ, અહંકાર અને પાંચ સૂક્ષ્મભૂત એ સાત પદાર્થો છે, તે પંચીકૃત થઈને,

સમસ્ત સ્થૂળ જગતના કારણ છે. ચેતનથી વિરુદ્ધ ધર્મયુક્ત જડ અન્તરિક્ષમાં એ સર્વ રહે છે.

જેઓ યથાવત્ સૃષ્ટિક્રમને જાણે છે, તે વિદ્વાનો સર્વત્ર પૂજાય છે = સત્કાર પામે છે અને નથી જાણતા તેઓ સર્વત્રથી તિરસ્કૃત થાય છે. (૩૬)

ન વિ જાનામિ યદિવેદમસ્મિં નિણ્યઃ સંનદ્ધો મનસા ચરામિ ।

યદા માર્ગન્ પ્રથમજા ઋતસ્યાદિદ્ વાચો અશ્નુવે ભાગમસ્યાઃ ॥ ૩૭ ॥

પદાર્થ : યદા-જ્યારે પ્રથમજા:-ઉપાદાનકારણ પ્રકૃતિથી ઉત્પન્ન થયેલ પૂર્વોક્ત મહત્ત્વાદિ મા-મને-જીવને આ, અગન્-પ્રાપ્ત થયા અર્થાત્ સ્થૂળ શરીરાવસ્થા બનીને આત્, ઇત્-ત્યાર પછી જ ઋતસ્ય-સત્ય અને અસ્યા:-આ વાચ:-વાણીના ભાગમ્-ભાગને વિદ્યા વિષયને હું અશ્નુવે-પ્રાપ્ત થાઉં છું.

જ્યાં સુધી ઇદમ્-અસ્મિ-આ શરીરને પ્રાપ્ત થતો નથી ત્યાં સુધી વિષયને યદિવ-જેવો છે તેવો ન, વિ, જાનામિ-વિશેષતાથી જાણતો નથી પરંતુ મનસા-વિચારથી સંનદ્ધ:-સમ્યક્ બંધાયેલ નિણ્ય:-અન્તર્હિત અર્થાત્ અંદર તે વિચારને સ્થિત કરીને ચરામિ-વિચરણ કરું છું. (૩૭)

ભાવાર્થ : જીવ અલ્પજ્ઞાન અને અલ્પશક્તિમાન હોવાથી સાધનો (ઇન્દ્રિયો) વિના સાધ્ય (સિદ્ધ કરવા યોગ્ય પદાર્થ)ને ગ્રહણ કરી શકતો નથી. જ્યારે (તે) શ્રોતાદિ (ઇન્દ્રિયો)ને પ્રાપ્ત થાય છે, ત્યારે જાણવામાં સમર્થ બને છે.

જ્યાં સુધી (જીવ) વિદ્યા દ્વારા સત્યને જાણી લેતાં નથી, ત્યાં સુધી અભિમાન કરીને પશુની સમાન વિચરણ કરે છે. (૩૭)

અપાઙ્ પ્રાઙ્-તિ સ્વધયા ગૃભીતોઽમર્ત્યો મર્ત્યેના સયોનિઃ ।

તા શશ્વન્તા વિષૂચીના વિચન્તા ન્યન્યં ચિક્વ્યુર્ન નિ ચિક્વ્યુરન્યમ્ ॥ ૩૮ ॥

પદાર્થ : જે સ્વધયા-જળ આદિ પદાર્થોની સાથે વર્તમાન અપાઙ્-વિપરીત પ્રાઙ્-સીધા ઇતિ-પ્રાપ્ત થાય છે અને જે ગૃભીત:-ગ્રહણ કરેલ અમર્ત્ય:-મરણ ધર્મ રહિત જીવ મર્ત્યેન-મરણધર્મ યુક્ત શરીરાદિની સાથે સયોનિ:-સમાન સ્થાનવાળો થઈ રહ્યો છે. તા-તે બંને શશ્વન્તા-સનાતન વિષૂચીના-સર્વત્ર જનાર અને વિચન્તા-અનેક પ્રકારથી પ્રાપ્ત થનાર વર્તમાન છે, તેમાંથી તે અન્યમ્-એક જીવ અને શરીર આદિને વિદ્વાનો નિ, ચિક્વ્યુ:-નિરંતર જાણે છે અને અવિદ્વાન અન્યમ્-તે એકને ન, નિ, ચિક્વ્યુ:-તેમ જાણતા નથી. (૩૮)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જડ અને ચેતન એ બે પદાર્થો છે. તેમાંથી જડ પોતાના તથા અન્યના સ્વરૂપને જાણતો નથી. ચેતન પોતાના તથા અન્યના સ્વરૂપને જાણે છે. બન્ને ઉત્પન્ન ન થનારા, અનાદિ અને અવિનાશી છે.

જડ (શરીરાદિ પરમાણુના) સંયોગથી સ્થૂળ અવસ્થાને પ્રાપ્ત (થાય છે) ચેતન જીવ સંયોગ અને વિયોગથી પોતાના સ્વરૂપનો ત્યાગ કરતો નથી, પરંતુ સ્થૂળ અને સૂક્ષ્મના યોગથી સ્થૂળ અને સૂક્ષ્મ

જેવો ભાસે છે-પ્રતીત થાય છે. (વાસ્તવમાં તે) કુટસ્થ રહીને જેવો છે, તેવો જ રહે છે. (૩૮)

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन्यस्मिन् देवा अधि विश्वे निषेदुः।

यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समासते ॥ ૩૯ ॥

પદાર્થ : યસ્મિન્-જે ઋચ્ઃ-ઋગ્વેદાદિ વેદ માત્રથી પ્રતિપાદિત અક્ષરે-નાશ રહિત પરમે-ઉત્તમ વ્યોમન્-આકાશમાં વ્યાપક પરમેશ્વરમાં વિશ્વે-સમસ્ત દેવાઃ-પૃથિવી, સૂર્યલોક આદિ દેવ અધિ, નિષેદુઃ-આધેયરૂપથી સ્થિત થાય છે.

યઃ-જે તત્-તે પરબ્રહ્મ પરમેશ્વરને ન, વેદ-જાણતો નથી, તે ઋચ્ઃ-ચાર વેદથી કિમ્-શું કરિષ્યતિ-કરી શકે છે અને યે-જે તત્-તે પરબ્રહ્મને વિદુઃ-જાણે છે, તે, ઇમે, ઇત્-તે જ બ્રહ્મમાં સમાસતે-સમ્યક્ સ્થિર થાય છે. (૩૯)

ભાવાર્થ : જે સમસ્ત વેદના પરમ પ્રમેય અને પ્રતિપાદિત બ્રહ્મ (છે), બીજો જીવ (છે) અને કાર્યરૂપ તથા કારણરૂપ જગત છે. તેમાંથી સર્વના વ્યાપક પરમાત્મા આકાશની સમાન વ્યાપક છે અને જીવ તથા કાર્ય-કારણરૂપ જગત વ્યાપ્ય છે. તેથી જીવ આદિ સર્વ પદાર્થો પરમેશ્વરમાં નિવાસ કરે છે.

જેઓ વેદોને ભણીને એ પ્રમેય (= જ્ઞાતવ્ય)ને જાણતા નથી, તેઓ વેદોથી કાંઈ પણ ફળ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી અને જે વેદોને ભણીને જીવોને, કાર્ય-કારણ રૂપ (જગત)ને તથા ઈશ્વરના ગુણ, કર્મ, સ્વભાવને જાણે છે, તેઓ સર્વ ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ સિદ્ધ થવાથી આનંદિત બને છે. (૩૯)

सूयवसाद्भगवती हि भूया अथो वयं भगवन्तः स्याम।

अद्धि तृणमघ्न्ये विश्वदानीं पिब शुद्धमुदकमाचरन्ती ॥ ૪૦ ॥

પદાર્થ : હે અઘ્ન્યે-હનનને અયોગ્ય ગાયની સમાન વર્તમાન વિદુષી ! તું સુયવસાત્-સુંદર સુખોને ભોગવનારી ભગવતી-બહુ જ ઐશ્વર્યવતી ભૂયાઃ-બન. હિ જે કારણે વયમ્-અમે ભગવન્તઃ-બહુ જ ઐશ્વર્યવાન સ્યામ-બનીએ.

જેમ ગાય તૃણમ્-ઘાસ ખાઈને શુદ્ધમ્-શુદ્ધ ઉદકમ્-જળ પીને તથા દૂધ આપી વાછરડા આદિને સુખી કરે છે, તેમ વિશ્વદાનીમ્-જેમાં સમસ્ત દાન ક્રિયાનું આચરન્તી-સત્ય આચરણ કરીને અથો-અનન્તર સુખને અદ્ધિ-ભોગવ અને વિદ્યારસનું પિબ-પાન કર. (૪૦)

ભાવાર્થ : જ્યાં સુધી માતાઓ વેદને જાણનારી ન બને, ત્યાં સુધી તેના સંતાનો પણ વિદ્યાવાન બનતા નથી.

જે સ્ત્રીઓ વિદુષી બનીને, સ્વયંવરથી વિવાહ કરીને, સંતાનોને જન્મ આપીને તથા તેને સુશિક્ષિત કરીને વિદ્યાન બનાવે છે, તે ગાયોની સમાન સમસ્ત સંસારને પ્રસન્ન-આનંદિત કરે છે. (૪૦)

गौरीर्मिमाय सलिलानि तक्षत्येकपदी द्विपदी सा चतुष्पदी ।

अष्टापदी नवपदी बभूवुषी सहस्राक्षरा परमे व्योमन् ॥ ४१ ॥

पदार्थ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! જે **એકપદી**-એક વેદનો અભ્યાસ કરનારી, વા **દ્વિપદી**-બે વેદનો અભ્યાસ કરેલી, વા **ચતુષ્પદી**-ચારેય વેદોની અધ્યાપિકા, **અષ્ટાપદી**-ચાર વેદ અને ચાર ઉપવેદની વિદ્યાથી યુક્ત, વા **નવપદી**-ચાર વેદ, ચાર ઉપવેદ અને વ્યાકરણાદિ શિક્ષાયુક્ત, **બભૂવુષી**-અતિશય વિદ્યાઓમાં પ્રસિદ્ધ અને **સહસ્રાક્ષરા**-અસંખ્ય અક્ષરોવાળી બનીને, **પરમે**-સર્વોત્કૃષ્ટ **વ્યોમન્**-આકાશની સમાન વ્યાપ્ત નિશ્ચળ પરમાત્માને માટે પ્રયત્ન કરે છે; અને **ગૌરી**:-ગૌરવર્ણયુક્ત વિદુષી સ્ત્રીઓને **મિમાય**-શબ્દ કરાવતી અર્થાત્ **સલિલાનિ**-જળની સમાન નિર્મળ વચનોને **તક્ષતી**-અવિદ્યાદિ દોષોને પૃથક્ કરતી **સા**-તે વિશ્વકલ્યાણકારિકા = સંસારને માટે અત્યંત સુખકારી બને છે. (૪૧)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રીઓ સાંગોપાંગ = અંગો અને ઉપાંગો સહિત સમસ્ત વેદોને ભણીને ભણાવે છે, તે સર્વ મનુષ્યોને ઉન્નતિ-યુક્ત કરે છે. (૪૧)

तस्याः समुद्रा अधि वि क्षरन्ति तेन जीवन्ति प्रदिशश्चतस्रः ।

ततः क्षरत्यक्षरं तद्विश्वमुप जीवति ॥ ४२ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! **તસ્યા**:-તે વાણીના **સમુદ્રાઃ**, **અધિ**, **વિ**, **ક્ષરન્તિ**-શબ્દરૂપી અર્ણવ = સમુદ્ર અક્ષરોની વર્ષા કરે છે **તેન**-તે કામથી **ચતસ્રઃ**:-ચારેય પ્રદિશ:-દિશા અને ચારેય ઉપદિશાઓ **જીવન્તિ**-જીવે છે અને **તતઃ**:-તેનાથી જે **અક્ષરમ્**-નાશ ન પામનાર અક્ષરમાત્ર **ક્ષરતિ**-વર્ષે છે, **તત્**-તેનાથી **વિશ્વમ્**-સમસ્ત જગત **ઉપ**, **જીવતિ**-ઉપજીવિકાને પ્રાપ્ત થાય છે. (૪૨)

ભાવાર્થ : સમુદ્રની સમાન આકાશ છે, તેમાં રત્નો સમાન શબ્દો છે અને જ્યાં શબ્દોના પ્રયોગ કરનારા ગ્રહણ કરનારા લોકો (વિદ્યમાન) છે. તેઓના ઉપદેશના શ્રવણથી સર્વનું જીવન સંભવ બને છે. (૪૨)

शकमयं धूममारादपश्यं विषूवतां प्र एनावरेण ।

उक्षाणं पृश्निमपचन्त वीरास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ॥ ४३ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! હું **આરાત્**-સમીપથી **શકમયમ્**-શક્તિમય સમર્થ **ધૂમમ્**-બ્રહ્મચર્ય કર્માનુષ્ઠાનના અગ્નિના ધૂમને **અપશ્યમ્**-દેખું છું; **એના**, **અવરેણ**-તેની નીચે જ્યાં-ત્યાં જતાં **વિષૂવતા**-વ્યાપ્તિમાન્-ધૂમથી **પરઃ**-પાછળ **વીરાઃ**-વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત પૂર્ણ વિદ્વાન **પૃશ્નિમ્**-આકાશ અને **ઉક્ષાણમ્**-સિંચનવાળા મેઘને **અપચન્ત**-પચાવે છે અર્થાત્ બ્રહ્મચર્ય વિષયક અગ્નિહોત્રાદિ તપે છે, **તાનિ**-તે ધર્માણિ-ધર્મ પ્રથમાનિ-પ્રથમ બ્રહ્મચર્યસંજ્ઞક **આસન્**-થયેલ છે. (૪૩)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનજનો અગ્નિ હોત્રાદિ યજ્ઞો દ્વારા મેઘ સમૂહમાં રહેલ જલની શુદ્ધિ કરીને સર્વ વસ્તુઓની શુદ્ધિ કરે છે. તેથી બ્રહ્મચર્યના પાલનથી સર્વના શરીરોને તથા આત્મા અને મનને શુદ્ધ કરે.

સર્વ (સામાન્ય) મનુષ્ય સમીપ સ્થિત ધૂમ, અગ્નિ અને અન્ય પદાર્થ પ્રત્યક્ષ રૂપમાં દેખે છે. સ્થૂળ અને સૂક્ષ્મ તથા દૂરસ્થ અને સમીપસ્થ પદાર્થોના જ્ઞાતા વિદ્વાન તો ભૂમિથી લઈને પરમેશ્વર પર્યન્ત પદાર્થોનો સાક્ષાત્ કરી શકે છે. (૪૩)

ત્રયઃ કેશિનઃ ઋતુથા વિ ચક્ષતે સંવત્સરે વપત્ એક ણ્ણામ્ ।

વિશ્વમેકૌ અભિ ચષ્ટે શ્ચીભિર્ધાજિરેકસ્ય દદૃશે ન રૂપમ્ ॥ ૪૪ ॥

પદાર્થ : હે ભણવા-ભણાવનાર લોકોના પરીક્ષકો ! તમે જેમ કેશિનઃ-પ્રકાશવાન વા પોતાના ગુણોના યથા સમયે જ્ઞાપકો ત્રયઃ-ત્રણ અર્થાત્ સૂર્ય, વિદ્યુત્ અને વાયુ સંવત્સરે-સંવત્સર અર્થાત્ વર્ષમાં ઋતુથા-વસંદાતિ ઋતુના પ્રકારથી શ્ચીભિઃ-જે કર્મ તેનાથી વિ, ચક્ષતે-બતાવે છે અર્થાત્ યથા સમય વ્યવહારને પ્રકાશિત કરાવે છે. ણ્ણામ્-આ ત્રણેયમાં એકઃ-એક વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિ વપતે-જીવોને ઉત્પન્ન કરાવતા, એકઃ-સૂર્ય વિશ્વમ્-સમગ્ર જગતને અભિ ચષ્ટે-પ્રકાશિત કરતા અને એકસ્ય-વાયુની ધ્વાજિઃ-ગતિ અને સ્વમ્-રૂપ ન, દદૃશે-દેખાતું નથી, તેમ તમે અહીં પ્રવૃત્તમાન થાઓ. (૪૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે વાયુ, સૂર્ય અને વિદ્યુત્ની સમાન અધ્યયન તથા અધ્યાપન આદિ દ્વારા વિદ્યાઓની વૃદ્ધિ કરો. જેમ પોતાના (આત્માનું) રૂપ નેત્રથી જોવામાં આવતું નથી, તેમ વિદ્વાનોની ગતિ (પણ) દેખાતી નથી.

જેમ ઋતુઓ વર્ષનો આરંભ કરનાર સમયને વિભક્ત કરે છે, તેમ આપ લોકો કર્મના આરંભને, વિદ્યા તથા અવિદ્યાને અને ધર્મ તથા અધર્મને વિભક્ત કરો. (૪૪)

ચત્વારિ વાક્પરિમિતા પદાનિ તાનિ વિદુર્બ્રાહ્મણા યે મનીષિણઃ ।

ગુહા ત્રીણિ નિહિતા નેઙ્ગ્યન્તિ તુરીયં વાચો મનુષ્યા વદન્તિ ॥ ૪૫ ॥

પદાર્થ : યે-જેઓ મનીષિણઃ-મનને રોકનાર બ્રાહ્મણાઃ-વ્યાકરણ, વેદ અને ઈશ્વરના જ્ઞાતા વિદ્વાનો વાક્-વાણીના પરિમિતા-પરિણામયુક્ત જે ચત્વારિ-નામ, આખ્યાત, ઉપસર્ગ અને નિપાત ચાર પદાનિ-જાણવા યોગ્ય પદો છે, તાનિ-તેને વિદુઃ-જાણે છે તેમાંથી ત્રીણિ-ત્રણ ગુહા-બુદ્ધિમાં નિહિતા-ધારણ કરેલ છે, ન, ઙ્ગ્યન્તિ-ચેષ્ટા કરતા નથી.

જે મનુષ્યાઃ-સાધારણ મનુષ્યો છે તેઓ વાચઃ-વાણીના તુરીયમ્-ચતુર્થ ભાગ અર્થાત્ નિપાતમાત્રને વદન્તિ-કહે છે. (૪૫)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો અને અવિદ્વાનોમાં એટલો જ ભેદ છે, કે જે વિદ્વાનો છે, તેઓ નામ, આખ્યાત, ઉપસર્ગ અને નિપાત એ ચારેયને જાણે છે. તેમાંથી ત્રણ જ્ઞાનમાં સ્થિત રહે છે. અને ચોથા સિદ્ધ શબ્દસમૂહને તેઓ વ્યવહારમાં બોલે છે.

જેઓ અવિદ્વાન છે. તેઓ નામ, આખ્યાત, ઉપસર્ગ અને નિપાત (એ ચારેય)ને જાણતા નથી, પરંતુ નિપાતરૂપી સિદ્ધ શબ્દોનો, સાધન પદ્ધતિથી અનભિજ્ઞ રહીને જ પ્રયોગ કરે છે. (૪૫)

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान् ।

एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः ॥ ४६ ॥

पદાર્થ : વિપ્રા:-મેઘાવીજનો ઇન્દ્રમ્-પરમેશ્વર્યુક્ત મિત્રમ્-મિત્ર સમાન વર્તમાન વસ્ત્રમ્-શ્રેષ્ઠ અગ્નિમ્-સર્વ વ્યાપ્ત વિદ્યુત્તાદિ લક્ષણયુક્ત અગ્નિને બહુધા-અનેક રીતે અનેક નામોથી આહુ:-કહે છે.

અથો-અનન્તર સ:-તે દિવ્ય:-પ્રકાશમાં દિવ્ય પ્રકાશમય સુપર્ણ:-જેના સુંદર પાલન આદિ કર્મ ગસ્ત્માન્-મહાન આત્માવાન છે વગેરે અનેક રીતે અનેક નામોથી વદન્તિ-કહે છે.

તેઓ અન્ય વિદ્વાનો એકમ્-એક સત્-વિદ્યમાન પરબ્રહ્મ પરમેશ્વરને અગ્નિમ્-સર્વવ્યાપ્ત પરમાત્મારૂપ યમમ્-સર્વ નિયંતા અને માતરિશ્વાનમ્-વાયુના લક્ષણથી લક્ષિત પણ આહુ:-કહે છે. (૪૬)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ આદિના ઈન્દ્ર આદિ નામો છે, તેમ એક પરમાત્માના અગ્નિ આદિ સહસ્રો નામો છે. જેટલા પરમાત્માના ગુણ, કર્મ, સ્વભાવ છે તેટલા જ તેના નામો છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૪૬)

कृष्णं नित्यानुं हरयः सुपर्णा अपो वसाना दिवमुत्पतन्ति ।

त आववृत्रन्त्सदनादृतस्यादिद् घृतेन पृथिवी व्युद्यते ॥ ४७ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અપ:-પ્રાણ વા જળને વસાના:-ઢાંકતા હરય:-હરણશીલ સુપર્ણા:-સૂર્યના કિરણો કૃષ્ણમ્-કર્ષણ-ખેંચવા યોગ્ય નિયાનમ્-નિત્ય પ્રાપ્ત ભૂગોળ વા વિમાનાદિ યાનને વા દિવમ્-પ્રકાશમય સૂર્યના ઉત્, પતન્તિ-ઉપર પડે છે અને તે-તે આવવૃત્રન્-સૂર્યની સર્વ તરફથી વર્તમાન છે. વ્રહ્મસ્ય-સત્ય કારણના સદનાત્-સ્થાનથી પ્રાપ્ત ઘૃતેન-જળથી જળ દ્વારા પૃથિવી-ભૂમિ વિ, ઉદ્યતે-વિશેષતર આર્દ્ર = ભીની કરવામાં આવે છે, તેને આત્, ઇત્-એ પછી જ યથાવત્ જાણો. (૪૭)

ભાવાર્થ : જેમ સુશિક્ષિત ઘોડાઓ યાનોને શીઘ્ર લઈ જાય છે, તેમ અગ્નિ આદિ પદાર્થો વિમાન યાનને, ઉપર આકાશમાં લઈ જાય છે.

જેમ સૂર્યના કિરણો ભૂમિના તળિયેથી જળને ખેંચીને તથા તેને વરસાવીને સર્વ વૃક્ષ આદિને આર્દ્ર = ભીના કરે છે, તેમ વિદ્વાનો સર્વ મનુષ્યોને આનંદિત કરે છે. (૪૭)

द्वादश प्रथयश्चक्रमेकं त्रीणि नभ्यानि क उ तच्चिकेत ।

तस्मिन्त्साकं त्रिंशता न शङ्कवोऽर्पिताः षष्टिर्न चलाचलासः ॥ ४८ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે રથમાં ત્રિંશતા-ત્રણસો શંકવ:-બાંધવાના ખીલાઓની ન-સમાન સાકમ્-સાથે અર્પિતા:-લગાવેલ ષષ્ટિ:-સાંઠ ખીલાઓ ન-જેવા ખીલાઓ જે ચલાચલાસ:-ચલ-અચલ અર્થાત્ ચાલતા અને ન ચાલતા તથા તસ્મિન્-તેમાં એકમ્-એક ચક્રમ્-ચક્ર = પેંડું જેમ ગોળ ચક્કર, દ્વાદશ-બાર પ્રથય:-પરિધિઓ અને ત્રીણિ-ત્રણ નભ્યાનિ-પૈડાની વચ્ચે-નાભિમાં ઉત્તમતાથી સ્થિત ધરી સ્થાપિત

કરેલ હોય, તત્-તેને ક:-કોણ ઉ-તર્ક-વિતર્કથી ચિકેત-જાણે છે. (૪૮)

ભાવાર્થ : કોઈ જ વિદ્વાનો (એવા છે કે) જેમ (તેઓ) શરીર રચનાને જાણે છે, તેમ વિમાન આદિ યાનોની રચનાને (પણ) જાણે છે.

જ્યારે જળ, સ્થળ અને આકાશમાં શીઘ્ર ગમન માટે યાન બનાવવાની ઈચ્છા થાય, ત્યારે તેમાં અનેક જળ તથા અગ્નિના ચક્ર, અનેક બંધન, અનેક આધાર અને અનેક કીલક = ખીલા (અર્થાત્ વર્તમાન કાળાનુસાર કિલક = પણ કહી શકાય છે) બનાવવા જોઈએ. એમ કરવાથી ઈચ્છિત સિદ્ધિ થઈ શકે છે. (૪૮)

યસ્તે સ્તનઃ શશ્વો યો મયોભૂર્એન વિશ્વા પુષ્યસિ વાર્યાણિ ।

યો રત્નધા વસુવિદ્યઃ સુદત્રઃ સરસ્વતિ તમિહ ધાતવે કઃ ॥ ૪૯ ॥

પદાર્થ : હે સરસ્વતિ-વિદુષી સ્ત્રી ! તે-તારા ય:-જે શશ્વઃ-સૂતેલ, શાન્ત અને ય:-જે મયોભૂ:-સુખની ભાવના કરનાર સ્તન:-સ્તન સમાન વર્તમાન શુદ્ધ વ્યવહાર યેન-જેમાં તું વિશ્વા-સમસ્ત વાર્યાણિ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય વિદ્યા વા ધનને પુષ્યસિ-પુષ્ટ કરે છે.

ય:-જે રત્નધા:-રમણીય વસ્તુઓને ધારણ કરનાર અને વસુવિત્-ધનને પ્રાપ્ત થનાર તથા ય:-જે સુદત્રઃ-સુદત્ર અર્થાત્ શ્રેષ્ઠ દાન છે, તમ્-તે તારા સ્તનને ઇહ-અહીં ગૃહાશ્રમમાં ધાતવે-સંતાનોને (ધાવણ) પીવા માટે ક:-કર. (૪૯)

ભાવાર્થ : જેમ માતા સ્તનોના દૂધ = ધાવણથી સંતાનનું પાલન કરે છે, તેમ વિદુષી સ્ત્રી સંપૂર્ણ કુટુંબની રક્ષા કરે છે.

જેમ શ્રેષ્ઠ ભોજનથી શરીર પુષ્ટ થાય છે, તેમ માતાની શ્રેષ્ઠ શિક્ષાને પ્રાપ્ત કરીને આત્મા પુષ્ટ થાય છે. (૪૯)

યજ્ઞેન યજ્ઞમયજન્ત દેવાસ્તાનિ ધર્માણિ પ્રથમાન્યાસન્ ।

તે હ નાકેં મહિમાનઃ સચન્ત યત્ર પૂર્વે સાધ્યાઃ સન્તિ દેવાઃ ॥ ૫૦ ॥

પદાર્થ : જે દેવા:-વિદ્વાનો યજ્ઞેન-અગ્નિ આદિ દિવ્ય પદાર્થોના સમૂહથી યજ્ઞમ્-ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષના વ્યવહારને અયજન્ત-સંગ-મળીને પ્રાપ્ત થાય છે અને જે બ્રહ્મચર્ય આદિ ધર્માણિ-ધર્મ પ્રથમાનિ-પ્રથમ આસન્-છે તાનિ-તેનું સેવન કરે છે અને કરાવે છે, તે-હ-તેઓ જ યત્ર-અહીં પૂર્વે-પૂર્વ અર્થાત્ જેઓએ વિદ્યા ભણી લીધી સાધ્યાઃ-તથા અન્યોને વિદ્યા સિદ્ધિને માટે સેવન કરવા યોગ્ય દેવા:-વિદ્વાનો સન્તિ-છે ત્યાં મહિમાનઃ-સત્કારને પ્રાપ્ત થયેલ છે-દુઃખરહિત સુખને સચન્ત-પ્રાપ્ત થાય છે. (૫૦)

ભાવાર્થ : જેઓ પ્રથમાવસ્થામાં બ્રહ્મચર્ય અને સુશિક્ષા આદિ સેવન કરવા યોગ્ય કર્મોને પ્રથમ કરે છે, તેઓ આપ્ત વિદ્વાનોની સમાન વિદ્વાન બનીને, વિદ્યાના આનંદને પ્રાપ્ત કરીને સર્વત્ર સત્કૃત બને છે. (૫૦)

સમાનમેતદુદકમુચ્ચૈત્યવ્ ચાહ્ભિઃ ।

ભૂમિં પર્જન્યા જિન્વન્તિ દિવં જિન્વન્ત્યગ્નયઃ ॥ ૫૧ ॥

પદાર્થ : જે **ઉદકમ્-જળ અહ્ભિઃ**-બહુ જ દિવસોથી **ઉત્-એતિ**-ઉપર જઈને અર્થાત્ સૂર્યના તાપથી અણુ રૂપ બનીને તથા વાયુના બળથી ઊઠીને અન્તરિક્ષમાં સ્થિત થાય છે **ચ**-અને **અવ**-નીચે **ચ**-પણ આવે છે અર્થાત્ વર્ષાકાળ પ્રાપ્ત થતાં ભૂમિ પર આવે છે અર્થાત્ વર્ષાકાળ પ્રાપ્ત થતા ભૂમિ પર વર્ષે છે, તેના **એતત્**-એ પૂર્વોક્ત વિદ્વાનોના બ્રહ્મચર્ય, અગ્નિહોત્ર આદિ ધાર્મિક વ્યવહારની **સમાનમ્-સમાન** છે.

આથી **પર્જન્યઃ**-મેઘ **ભૂમિમ્**-ભૂમિને **જિન્વન્તિ**-તૃપ્ત કરે છે, **અગ્નયઃ**-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિ **દિવમ્**-અન્તરિક્ષને **જિન્વન્તિ**-તૃપ્ત કરે છે અર્થાત્ વર્ષાથી ભૂમિ પર ઉત્પન્ન પ્રાણીઓ જીવે છે અગ્નિથી અન્તરિક્ષ, વાયુ અને મેઘ આદિ શુદ્ધ થાય છે. (૫૧)

ભાવાર્થ : બ્રહ્મચર્ય આદિ આશ્રમોમાં કરવામાં આવતા હવન આદિથી વાયુ અને વર્ષા-જળની શુદ્ધિ થાય છે, ત્યારે શુદ્ધ જળની વર્ષાથી ભૂમિમાં ઉત્પન્ન થનારી ઓષધિ-વનસ્પતિઓ તૃપ્ત થાય છે. તેથી વિદ્વાનોના એ પૂર્વોક્ત કર્મો જલની સમાન છે. (૫૧)

દિવ્યં સુપર્ણં વાયસં બૃહન્તમ્પાં ગર્ભં દર્શતમોષધીનામ્ ।

અભીપતો વૃષ્ટિભિસ્તર્પયન્તું સરસ્વન્તમર્વસે જોહવીમિ ॥ ૫૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું **અવસે**-રક્ષા આદિને માટે **દિવ્યમ્**-દિવ્ય ગુણ-સ્વભાવયુક્ત **સુપર્ણમ્**-જેમાં સુંદર ગમનશીલ કિરણો વિદ્યમાન છે, **વાયસમ્**-જે અત્યંત જનાર, **બૃહન્તમ્**-સર્વથી મહાન **અપામ્**-અન્તરિક્ષમાં **ગર્ભમ્**-ગર્ભની સમાન સ્થિત, **ઓષધીનામ્**-સોમ આદિ ઔષધિઓ **દર્શતમ્**-દર્શાવનાર, **વૃષ્ટિભિઃ**-વર્ષાથી **અભીપતઃ**-બંને તરફ આગળ-પાછળ જળથી યુક્ત જે મેઘ આદિને **તર્પયન્તમ્**-તૃપ્તિ કરનાર, **સરસ્વન્તમ્**-જેમાં બહુ જ જળ વિદ્યમાન છે, તે સૂર્યની સમાન વર્તમાન વિદ્વાનનું **જોહવીમિ**-નિરંતર ગ્રહણ કરું છું, તેમ તમે પણ ગ્રહણ કરો. (૫૨)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યલોક ભૂગોળોની મધ્યમાં રહીને સર્વને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ વિદ્વાન સર્વ લોકોની મધ્યમાં રહીને સર્વના આત્માઓને પ્રકાશિત કરે છે.

જેમ સૂર્ય વર્ષાથી સર્વને સુખી કરે છે, તેમ જ વિદ્વાન વિદ્યા, સુશિક્ષા અને ઉપદેશ રૂપી વર્ષાથી સર્વ મનુષ્યોને આનંદિત કરે છે. (૫૨)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અગ્નિ, કાળ, સૂર્ય, વિમાન આદિ પદાર્થો, ઈશ્વર, વિદ્વાન અને સ્ત્રી આદિના

ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૬૪)

સૂક્ત-૧૬૫

કયા શુભા સર્વયસઃ સનીઠાઃ સમાન્યા મરુતઃ સં મિમિક્ષુઃ ।

કયા મતી કુત્ એતાસ એતેઽર્ચન્તિ શુષ્મં વૃષણો વસૂયા ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! સર્વયસઃ-સમાન વયવાળા સનીઠાઃ-સમીપસ્થ મસ્તઃ-વાયુ સમાન વર્તમાન વિદ્વાનો ! કયા-કઈ સમાન્યા-સમાન ક્રિયાની સાથે શુભા-શુભ-ગુણ-કર્મથી સંમિમિક્ષુઃ-સમ્યક્ સેવન આદિ કર્મ કરે છે. તથા એતાસઃ-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થયેલ વૃષણઃ-વર્ષનાર એતે-એ વસૂયા-પોતાને ધનની ઈચ્છા સાથે કયા-કઈ મતી-મતિથી કુતઃ-ક્યાંથી શુષ્મ-બળને અર્ચન્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે ? (૧)

ભાવાર્થ : પ્રશ્ન : જેમ વાયુ વર્ષા કરીને સર્વને તૃપ્ત કરે છે, તેમ વિદ્વાનો રાગ-દ્વેષથી રહિત કઈ ક્રિયાથી મનુષ્યોની ઉન્નતિ કરે અને કયા વિજ્ઞાનથી તથા કઈ ઉત્તમ ક્રિયાથી સર્વનો સત્કાર કરે ?

ઉત્તર : વેદોક્ત આપ્તરીતિથી કરે. (અર્થાન્તર આપ્તની રીતિ અને વેદોક્ત ક્રિયાથી કરે.) (૧)

કસ્ય બ્રહ્માણિ જુજુષુર્યુવાનઃ કો અધ્વરે મરુત્ આ વર્વર્ત્ત ।

શ્યેનાઈવ ધ્વજતો અન્તરિક્ષે કેન મહા મનસા રીરમામ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જે મસ્તઃ-વાયુની સમાન વેગયુક્ત યુવાનઃ-બ્રહ્મચર્ય અને યુવાવસ્થા પ્રાપ્ત વિદ્વાન કસ્ય-શેનાથી બ્રહ્માણિ-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થાય છે ? જે અન્ન અને ધનનું જુજુષુઃ-સેવન કરે છે. કઃ-કોણ આ અધ્વરે-નાશ ન કરવા યોગ્ય ધર્મયુક્ત વ્યવહારમાં આ, વર્વર્ત્ત-સમ્યક્ વર્તે છે ? અમે લોકો. કોણ મહા-મહાન મનસા-મનથી ધ્વજતઃ-જનારા શ્યેનાનિવ-ઘોડાઓની સમાન કોને લઈને અન્તરિક્ષે-અન્તરિક્ષમાં રીરમામ-સર્વને રમણ કરાવે છે ?

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ જગતના પદાર્થોનું સેવન કરે છે, તેમ બ્રહ્મચર્ય અને વિદ્યા પ્રાપ્તિના દ્વારા (આપ લોકો) ઉત્તમ લક્ષ્મીનું સેવન કરો.

જેમ અન્તરિક્ષમાં ઉડતા બાજ આદિ પક્ષીઓને (લોકો) દેખે છે, તેમ જ ભૂગોળ સહિત અમે આકાશમાં રમણ કરીએ અને સર્વને રમણ કરાવીએ. આને જાણવામાં વિદ્વાનો જ સમર્થ બને છે. (૨)

કુતસ્ત્વમિન્દ્ર માહિનઃ સન્નેકૌ યાસિ સત્પતે કિં તં ઙ્ઠ્યા ।

સં પૃચ્છસે સમરાણઃ શુભાનૈર્વૌચેસ્તન્નો હરિવો યત્તે અસ્મે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર્યયુક્ત સત્પતે-સજ્જનોના પાલક ! માહિનઃ-મહિમાયુક્ત એકલો

સન્-હોવા છતાં ત્વમ્-આપ સૂર્યની સમાન કુતઃ-ક્યાંથી યાસિ-જાઓ છો. તે-આપનું ઇત્યા-આ પ્રકારથી કિમ્-શું છે.

હે હરિવઃ-પ્રશંસિત ગુણવાળા ! સમરાણઃ-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થયેલ આપ યત્-જે તે-આપના મનમાં અસ્મે-અમારા માટે વર્તે છે, તત્-તેને શુભાનૈઃ-શ્રેષ્ઠ વચનોથી નઃ-અમારા પ્રત્યે વોચેઃ-કહો. જેથી આપ સંપૃચ્છસે-સમ્યક્ પૂછો પણ છો અર્થાત્ અમારી વ્યવસ્થા આપ પૂછો છો. (૩)

ભાવાર્થ : (પ્રશ્ન :) જેમ સૂર્ય એકલો જો સર્વને આકૃષ્ટ કરીને પ્રકાશિત કરે છે, જેમ આપ વિદ્વાન ભ્રમણ કરીને સર્વને સત્યપાલક બનાવે છે. તેમ 'તું ક્યાં જઈ રહ્યો છે ? શું કરે છે ? એમ પૂછું છું.' તેનો ઉત્તર આપ.

(ઉત્તર :) ધર્મયુક્ત માર્ગે જાઉં છું, ગુરુકુલથી આવું છું, અધ્યાપન અને ઉપદેશ કરું છું. આ સમાધાન છે. (૩)

ब्रह्माणि मे मत्तयः शं सुतासः शुष्म इयत्ति प्रभृतो मे अद्रिः ।

आ शासते प्रति हर्यन्त्युक्थेमा हरी वहतस्ता नो अच्छ ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પ્રભૃતઃ શાસ્ત્ર-વિજ્ઞાનથી પૂર્ણ, શુષ્મઃ-બળવાન અદ્રિઃ-મેઘની સમાન મે-મારો ઉપદેશ સર્વને ઇયત્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે; વા જેમ સુતાસઃ-પ્રાપ્ત થયેલ મત્તયઃ-મનનશીલ મનુષ્ય મે-મારા બ્રહ્માણિ-ધનો અને અન્નોને તથા શમ્-સુખને આશાસતે-ઈચ્છે છે; વા ઇમા-એ ઉક્થા-કહેવા યોગ્ય પદાર્થોની પ્રતિ, હર્યન્તિ-પ્રીતિપૂર્વક કામના કરે છે; વા જેમ તા-તે હરી-ધારણ અને આકર્ષણ ગુણ નઃ-અમને અચ્છ-સમ્યક્ વહતઃ-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તમે સર્વ બનો. (૪)

ભાવાર્થ : જે 'ઉદાર' મનુષ્ય છે, તે મેઘની સમાન સર્વને માટે સુખની વર્ષા કરે છે અને સર્વને માટે વિદ્યાદાનની કામના કરે છે.

જેમ લોકો પોતાનું સુખ ઈચ્છે છે, તેમ અન્યોના સુખને સિદ્ધ કરવા અને દુઃખ નષ્ટ કરવા સર્વ ઈચ્છે. (૪)

अतौ व्रयमन्तमेभिर्युजानाः स्वक्षत्रेभिस्तन्वः शुम्भमानाः ।

महोभिरेताँ उप युज्महे न्विन्द्र स्वधामनु हि नो बभूथ ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર્યવાન પુરુષ ! જે કારણે આપ હિ-જ નઃ-અમારા સ્વધામ્-અન્ન અને જળનો અનુ, બભૂથ-અનુભવ કરો છો. અતઃ-એથી વયમ્-અમે ઇતાન્-એ પદાર્થોને યુજાનાઃ-યુક્ત અને સ્વક્ષત્રેભિઃ-પોતાના રાજ્યોથી તન્વઃ-શરીરોને શુમ્ભમાનાઃ-શુભ ગુણ યુક્ત કરીને અન્તમેભિઃ-સમીપસ્થ મહોભિઃ-અતિ મહાન કાર્યોથી નુ-શીઘ્ર ઉપ, યુજ્મહે-ઉપયોગમાં લઈએ છીએ. (૫)

ભાવાર્થ : જેઓ શરીરથી બળ અને સ્વાસ્થ્ય-સંપન્ન તથા ધાર્મિક અતિ બળવાન વિદ્વાનોની સાથે

સમસ્ત કર્મોને કરનારા લોકો, સર્વના સુખને માટે વિશાળ રાજ્ય સંબંધી ન્યાયને માટે ઉપયુક્ત બને છે; તેઓ શીઘ્ર ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષની સિદ્ધિ પ્રાપ્ત કરી લે છે. (૫)

क्वꣳ स्या वोꣳ मरुतः स्वधासीद्यन्मामेकं समधत्ताहिहत्येꣳ ।

अहं ह्युꣳग्रस्तविषस्तुविष्मान्विश्वस्यꣳ शत्रोरनमं वधस्नैः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-પ્રાણની સમાન વર્તમાન વિદ્વાનો ! યત્-જેથી મામ્-મને એકને અહિહત્યે-મેઘની વર્ષા થવામાં સમધત્ત-સમ્યક્ ધારણ કરો, સ્યા-તે વ:-આપના સ્વધા-અન્ન અને જળ ક્વ-ક્યાં આસીત્-છે, તેમ તુવિષ્માન્-બળવાન, ઊગ્ર:-તીવ્ર સ્વભાવવાળો અહમ્-હું જે તવિષ:-બળવાન વિશ્વસ્ય-સમગ્ર શત્રો:-શત્રુના વધસ્નૈ:-વધથી નવડાવનારા શસ્ત્ર તેની સાથે અનમમ્-નમું છું. હિ-તે મને તમે સુખમાં ધારણ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યાઓને ધારણ કરીને સૂર્ય જેમ મેઘનું, તેમ શત્રુબળનું નિવારણ કરે, તેઓ સર્વ વિદ્વાનોથી પૂછે, કે જે સર્વને ધારણ કરનારી શક્તિ છે, ત્યાં ક્યાં છે ? ઉત્તર : 'સર્વત્ર સ્થિત છે.' (૬)

भूरिꣳ चकर्थꣳ युज्येꣳभिरस्मे समानेभिर्वृषभꣳ पौंस्येꣳभिः ।

भूरीणि हि कृणवामा शविष्ठेन्द्रꣳ क्रत्वाꣳ मरुतोꣳ यद्वशामꣳ ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે વૃષભ-ઉપદેશવર્ષક ! જેમ આપ સમાનેભિ:-સમાન યુજ્યેભિ:-યોગ્ય કર્મો વા પૌસ્યેભિ:-પુરુષાર્થોથી અસ્મે-અમારા માટે ભૂરિ-બહુ જ સુખ ચકર્થ-કરો છો, તે આપને માટે અમે ભૂરીણિ-બહુ જ સુખ કૃણવામ-કરીએ.

હે શવિષ્ઠ-બળવાન ઇન્દ્ર-સર્વને સુખપ્રદ ! જેમ આપ ક્રત્વા-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિથી અમને વિદ્વાન કરો છો, તેમ અમે પણ આપની સેવા કરીએ.

હે મસ્ત:-વિદ્વાન મનુષ્યો ! તમે યત્-જેની કામના કરો છો, તેની અમે પણ વશામ્, હિ-કામના જ કરીએ. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ આ જગતમાં વિદ્વાનો પુરુષાર્થથી સર્વને વિદ્યા અને આ જગતમાં વિદ્વાનો પુરુષાર્થથી સર્વને વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત કરે છે, તેમ તેઓનો સર્વ લોકો સત્કાર કરે.

જેઓ સમસ્ત વિદ્યાઓના અધ્યાપકો સર્વના સુખના ઇચ્છુક હોય, તેઓ અધ્યાપન અને ઉપદેશ કરવામાં પ્રધાન બને. (૭)

वधीं वृत्रं मरुत इन्द्रियेणꣳ स्वेनꣳ भामेनꣳ तविषोꣳ बभूवामꣳ ।

अहमेता मनवे विश्वश्चन्द्राः सुगाꣳ अपश्चकरꣳ वज्रबाहुः ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-પ્રાણ સમાન પ્રિય વિદ્વાનો વજ્રબાહુ:-જેના હાથમાં વજ્ર છે બભૂવાન્-એવો બનવા અહમ્-હું જેમ સૂર્ય વૃત્રમ્-મેઘને મારીને અપ:-જળને સુગા:-સુંદર ગમન કરાવે છે, તેમ સ્વેન-પોતાના ભામેન-ક્રોધથી અને ઇન્દ્રિયેણ-મનથી તવિષ:-બળથી શત્રુઓને વધીમ્-મારું છું અને મનવે-વિચારશીલ મનુષ્યને માટે વિશ્વચન્દ્રા:-સમસ્ત સૂર્ય આદિ ધન જેના દ્વારા થાય છે, ઇતા:-તે લક્ષ્મીઓને ચકર-કરું છું. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય દ્વારા પ્રેરિત વર્ષાથી સમસ્ત સંસાર જીવિત રહે છે, તેમ શત્રુરૂપી વિધ્નોના નિવારણથી સમસ્ત પ્રાણીઓ જીવિત રહે છે. (૮)

અનુત્તમા તે મઘવન્નકિર્નુ ન ત્વાવાં અસ્તિ દેવતા વિદાનઃ ।

ન જાયમાનો નશતે ન જાતો યાનિ કરિષ્યા કૃણુહિ પ્રવૃદ્ધ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે મઘવન્-પરમ ધનવાન વિદ્વાન્ ! તે-આપના અનુત્તમ્-અપ્રેરિત નકિ:-કોઈ વિદ્યમાન નથી અને ત્વાવાન્-આપની સમાન અન્ય દેવતા-દિવ્ય ગુણવાળા વિદાન:-ન, અસ્તિ-વિદ્વાન છે નહિ, જાયમાન:-ઉત્પન્ન થનાર નુ-શીઘ્ર ન, નશતે-નષ્ટ પામતો નથી. જાત:-ઉત્પન્ન થયેલ પણ ન-નષ્ટ થતો નથી.

હે પ્રવૃદ્ધ-અત્યંત વિદ્યા દ્વારા પ્રતિષ્ઠાને પ્રાપ્ત આપ યાનિ-જે કરિષ્યા-કરવા યોગ્ય કામ છે તેને શીઘ્ર આ, કૃણુહિ-સમ્યક્ રીતે કરો. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ અન્તર્યામી ઈશ્વરથી કોઈપણ અવ્યાપ્ત નથી, તેની સમાન કોઈ ઉત્પન્ન થતો નથી, ઉત્પન્ન થયો નથી અને ઉત્પન્ન થશે નહિ; જે નાશ પામતો નથી અને જે કરવા યોગ્ય કાર્યોને કરે છે, તેમ જ વિદ્વાનોએ (પણ) બનવું જોઈએ અને જાણવું જોઈએ. (૯)

एकस्य चिन्मे विभ्वस्त्वोजो यो नु दधृष्वान्कृणवै मनीषा ।

अहं ह्युग्रो मरुतो विदानो यानि च्यवमिन्द्र इदीश एषाम् ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-વાયુ સમાન વર્તમાન સજ્જનો ! જેમ એકસ્ય-એક ચિત્-જ મે-મારામાં વિષુ-વ્યાપક ઓજ:-બળ અસ્તુ-થાય અને યા-જેને દધૃષ્વાન્-સારી રીતે સહન કરનાર હું બનુ, તેમ તે બળ હિ-નિશ્ચયથી તમારું થાય અને તેને તમે સહન કરો.

જેમ અહમ્-હું મનીષા-બુદ્ધિથી નુ-શીઘ્ર કૃણવૈ-વિદ્યા (પ્રાપ્ત) કરી શકું અને ઊગ્ર:-તીવ્ર વિદાન:-વિદ્વાન ઇન્દ્ર-દુઃખ છેદક બનીને યાનિ-જે પદાર્થોને ચ્યવમ્-પ્રાપ્ત કરું અને એષામ્; ઇત્-એનો જ ઈશે-સ્વામી બનું, તેમ તમે વર્તો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વર અનંત પરાક્રમવાન અને વ્યાપક છે, તેમ વિદ્વાનો સર્વ શાસ્ત્રોમાં તથા ધર્મ કર્મોમાં વ્યાપ્ત થાય અને ન્યાયાધીશ બનીને, એ મનુષ્ય આદિના સુખોને સંપાદન કરે. (૧૦)

अमन्दन्मा मरुतः स्तोमो अत्र यन्मे नरः श्रुत्यं ब्रह्मं चक्र ।

ભાવાર્થ : મનુષ્ય સર્વના પ્રત્યે મિત્ર બનીને વિદ્યા પ્રાપ્ત કરાવીને, સર્વને ધર્મયુક્ત પુરુષાર્થમાં સંયુક્ત કરે, જેથી એ સર્વ સત્કારયુક્ત થાય. સત્ય અને અસત્યને જાણીને, બીજાઓને ઉપદેશ કરે. (૧૩)

આ યદુવસ્યાદુવસે ન કારુરસ્માઞ્ચક્રે માન્યસ્ય મેધા ।

ઓ ષુ વર્ત્ત મરુતો વિપ્રમચ્છેમા બ્રહ્માણિ જરિતા વૌ અર્ચત્ ॥ ૧૪ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-વિદ્વાનો ! યત્-જે કારણે દુવસ્યાત્-સેવન કરનારાઓથી દુવસે-સેવન કરનારા અર્થાત્ એકથી અધિક બીજાઓને માટે જેમ ન-તેમ અમારા માટે પ્રાપ્ત થયેલી માન્યસ્ય-માન = સત્કારને યોગ્ય યોગ્યતાને પ્રાપ્ત સજ્જનની કારુ-શિલ્પકાર્યોને સિદ્ધ કરનારી મેધા-બુદ્ધિ અસ્માન્-અમને આ, ચક્રે-કરે છે અર્થાત્ શિલ્પ કાર્યોમાં નિપુણ બનાવે છે. આથી તમે વિપ્રમ્-મેધાવી બુદ્ધિવાળા પુરુષની ઓ, ષુ, વર્ત્ત-સન્મુખ વિદ્યમાન થાઓ. શા માટે ? જરિતા-સ્તુતિ કરનાર ઇમા-એ બ્રહ્માણિ-વેદોનો સંગ્રહ કરીને અચ્છ-સમ્યક્ વ:-તમારો અર્ચત્-સત્કાર કરે. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ શિલ્પી લોકો શિલ્પવિદ્યાથી સિદ્ધ કરેલ વસ્તુઓનો પ્રયોગ કરે છે, તેમ વેદોના અર્થો અને તેના વિશેષ જ્ઞાનનું સર્વેએ સેવન કરવું જોઈએ. વેદ વિદ્યા વિના અતિ પૂજનીય વિદ્વાન (કોઈ) બની શકતા નથી. (૧૪)

एष वः स्तोमो मरुत इयं गीर्मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः ।

एषा यासीष्ट तन्वे वयां विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ ૧૫ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનો ! ઇષ:-આ વ:-તમારા માટે સ્તોમ:-સ્તુતિઓનો સમૂહ અને માન્દાર્યસ્ય-સ્તુતિને યોગ્ય વા ઉત્તમ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળા માન્યસ્ય-માન = સત્કારને યોગ્ય કારો:-કાર (= કાર્ય) કરનારા પુરુષાર્થીજનોની ઇયમ્-આ ગી:-વાણી છે. એથી તમારામાંથી પ્રત્યેકની તન્વે-વિસ્તારને માટે ઇષા-ઈચ્છાની સાથે આ, યાસીષ્ટ-આવો, પ્રાપ્ત થાઓ. વયામ્-અને અમે ઇષમ્-અન્ન, વૃજનમ્-બળ જીરદાનુમ્-અને જીવનને વિદ્યામ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે આપ્ત અને પ્રયત્નશીલ વિદ્વાનો દ્વારા વિદ્યા અને શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને ધર્મયુક્ત વ્યવહારનું આચરણ કરે છે, તેઓના 'જન્મસાપ્ત્યમ્-' જન્મની સફળતા છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૧૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૬૫)

સૂક્ત-૧૬૬

तन्नु वौचाम रभसाय जन्मने पूर्वं महित्वं वृषभस्य केतवै ।

ऐधेव यामन्मरुतस्तुविष्वणो युधेव शक्रास्तविषाणि कर्त्तन ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે તુવિષ્ણવ:-બહુ પ્રકાશના શબ્દોવાળા શક્રા:-શક્તિમાન મસ્ત:-મનુષ્યો ! તમારા પ્રત્યે

ब्रह्मभस्य-श्रेष्ठ सज्जननुं रभसाय-वेगयुक्त अर्थात् प्रबल केतवे-विज्ञान जन्मने-जे उत्पन्न थयेल
 छे, तेना माटे जे पूर्वम्-पूर्व महित्वम्-महात्म्य तत्-तेने अमे वोचाम-कडीअे, उपदेश करीअे. तमे
 ऐधेव-काष्ठोनी समान वा यामन्-मार्गमां युधेव-युद्धनी समान पोताना कर्भोथी तविषाणि-बणोने
 नु-शीघ्र कर्त्तन-करो. (१)

भावार्थ : विद्वानो जिज्ञासुओना वर्तमान जन्मोनां तथा पूर्वजन्मोनां संश्रित निमित्त ज्ञानने अने
 कार्यने जेधने उपदेश करे, के जे प्रकारथी ब्रह्मयर्थ अने जितेन्द्रियता आदिना द्वारा मनुष्योनां शारीरिक
 अने आत्मिक बल परिपूर्णा थाय, तेम तमे पश करो. (१)

नित्यं न सूनं मधु बिभ्रत उप क्रीळन्ति क्रीळा विदथेषु घृष्वयः ।

नक्षन्ति रुद्रा अवसा नमस्विनं न मर्द्धन्ति स्वतवसो हविष्कृतम् ॥ २ ॥

पदार्थ : हे मनुष्यो ! तमे जे नित्यम्-नाशरहित जवनी न-समान मधु-मधुरादि गुणयुक्त समान
 विभ्रतः-धारण करीने सूनम्-पुत्रनी समान उप, क्रीडन्ति-समीप रमो छो; वा विदथेषु-संग्रामोमां
 घृष्वयः-शत्रुना बणने सडनार अने क्रीडाः-रमनारा नक्षन्ति-प्राप्त थाओ छो; वा रुद्राः-प्राणोनी
 समान अवसा-रक्षा आदि कर्भथी नमस्विनम्-बहु ज अन्नयुक्त जनने न, मर्द्धन्ति-लडावता नथी
 अने स्वतवसः-पोतानुं बण पूर्ण राभीने हविष्कृतम्-दानथी सिद्ध करेल पदार्थने राभो छो, तेनुं नित्य
 सेवन करो. (२)

भावार्थ : जेओ सर्वना उपकारमां प्राणोनी समान, तर्पणमां जण अने अन्ननी समान अने
 आनंदमां उत्तम लक्षणोयुक्त संताननी समान छे, तेओ श्रेष्ठोनी वृद्धि अने दुष्टोनां क्षय करवामां
 समर्थ बने छे. (२)

यस्मा ऊमासो अमृता अरासत रायस्पोषं च हविषा ददाशुषे ।

उक्षन्त्यस्मै मरुतो हिताइव पुरू रजांसि पर्यसा मयोभुवः ॥ ३ ॥

पदार्थ : हे विद्वानो ! अमृताः-नाश रहित ऊमासः-रक्षादि कर्भवाणा आप जेम मयोभुवः-सुभनी
 भावना करनारा हिता इव-दित सिद्ध करनाराओनी समान मस्तः-वायु अस्मै-अे प्राणीने माटे पर्यसा
 जलथी पुरू-बहु ज रजांसि-लोको वा स्थानोने उक्षन्ति-सिंयो छो, तेम यस्मै-जे ददाशुषे-दाताने माटे
 हविषा-विद्यादि दानथी रायः-धर्मयुक्त धननी पोषम्-पुष्टिने च-अने विद्याने अरासत-आपो छो, ते
 पश अेमज वर्ते. (३)

भावार्थ : मनुष्योअे वायुनी समान सर्वना सुभोने सिद्ध करीने विद्या अने सत्योपदेशथी जणथी
 जेम वृक्षोनुं (सिंयन थाय छे), तेम मनुष्योने सिंयित करीने तेओनी उन्नति करवी जेधअे. (३)

आ ये रजांसि तविषीभिरव्यंत प्र व एवासः स्वयतासो अध्वजन् ।

भयन्ते विश्वा भुवनानि हर्म्या चित्रो वो यामः प्रयतास्वृष्टिषु ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! **યે-જે વઃ**-તમારા **વાસઃ**-ગમનશીલ **સ્વયતાસઃ**-પોતાના બળથી નિયમને પ્રાપ્ત અર્થાત્ અશ્વાદિ વિના સ્વયં ગમન કરવામાં સન્નદ્ર રથ **તવિષીભિઃ**-બળોની સાથે **રજાસિ**-લોકોને આ, અવ્યત-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થાય છે, તેઓ **પ્ર**, **અધ્વજન્**-અત્યંત દોડે છે, તેના દોડવાથી **વિશ્વા**-સમસ્ત ભુવનાનિ-લોકો **હર્મ્યા**-ઉત્તમોત્તમ ઘર **ભયન્તે**-કંપે છે. એ કારણે **પ્રયતાસુ**-નિયત **ઋષિષુ**-પ્રાપ્તિઓમાં **ચિત્રઃ**-અદ્ભુત **વઃ**-તમારું **યામઃ**-પહોંચવું છે. (૪)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો પોતાના અદ્ભુત શાસ્ત્રીય બળથી રથ આદિ બનાવીને, નિયમ માર્ગોમાં આવાગમન કરીને તથા સત્ય વિદ્યાથી અધ્યાપન અને ઉપદેશો દ્વારા સર્વ મનુષ્યોનું પાલન કરીને, અસત્યવિદ્યા અને અસત્ય ઉપદેશોથી નિવૃત્ત કરે-દૂર કરે. (૪)

યત્ત્વેષયામા ન્દયન્ત્ પર્વતાન્દિવો વા પૃષ્ઠં નર્યા અચુચ્ચવુઃ ।

વિશ્વો વો અઝ્મન્ભયતે વનસ્પતી રથીયન્તીવ પ્ર જિહીત ઓષધિઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! **યત્**-જ્યારે **ત્વેષયામાઃ**-અગ્નિનો પ્રકાશ થતા ગમન કરનારા **નર્યાઃ**-મનુષ્યોને માટે અત્યંત સાધક તમારા રથ **દિવઃ**-અન્તરિક્ષમાં **પર્વતાન્**-મેઘોને **ન્દયન્ત**-શબ્દ-નાગ કરે છે અર્થાત્ તમારા રથના વેગથી પોતાના સ્થાનથી વિખરાયેલ મેઘ ગર્જના આદિ શબ્દ કરે છે-ગડગડાટ કરે છે.

વા-અથવા પૃથિવીના **પૃષ્ઠમ્**-પૃષ્ઠ ભાગને **અચુચ્ચવુઃ**-પ્રાપ્ત થાય છે, ત્યારે **વિશ્વઃ**-**વનસ્પતિઃ**-સમસ્ત વૃક્ષો, **રથીયન્તીવ**-પોતાના રથીને ઈચ્છતી સેનાની સમાન **વઃ**-તમારા **અઝ્મન્**-માર્ગમાં **ભયતે**-કંપે છે અર્થાત્ જે વૃક્ષો માર્ગમાં આવે છે તે કંપે = ડોલી ઊઠે છે અને **ઓષધિઃ**-સોમ આદિ ઓષધિ **પ્ર**, **જિહીતે**-સમ્યક્ સ્થાન છોડીને અર્થાત્ પોતાના સ્થાનથી વિખરાઈ જાય છે. (૫)

ભાવાર્થ : અન્તરિક્ષ-સ્થાનમાં વિદ્વાનો દ્વારા પ્રયુક્ત વિમાનના અતિ તીવ્ર વેગના કારણે મેઘોનું વિખરાઈ જવું સંભવ છે, તેમજ પૃથિવીના કાંપવાથી વૃક્ષ આદિનું કંપન પણ સંભવ છે. (૫)

યૂયં ન ઉગ્રા મરુતઃ સુચેતુનારિષ્ટગ્રામાઃ સુમતિં પિપર્ત્તન ।

યત્રા વો દિદ્યુદ્રદતિ ક્રિવિર્દતી રિનાતિ પ્શ્વઃ સુધિતેવ બર્હણા ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે **ઉગ્રાઃ**-તીવ્ર ગુણ-કર્મ-સ્વભાવયુક્ત **મરુતઃ**-વાયુની સમાન શીઘ્રતા કરનારા વિદ્વાનો ! **યૂયમ્**-તમો **અરિષ્ટગ્રામાઃ**-જેનાથી અનેક ગામો અહિંસક બને છે અર્થાત્ પશુ આદિ પ્રાણીઓને તાડન કરવાનું છોટી દે છે. એવા બનીને **નઃ**-અમારી **સુમતિમ્**-પ્રશસ્ત ઉત્તમ બુદ્ધિને **સુચેતુના**-સુંદર વિજ્ઞાનથી **પિપર્ત્તન**-પૂર્ણ કરો.

યત્ર-જ્યાં **ક્રિવિર્દતી**-હિંસક રૂપ દાંત છે જેનાથી તે **વઃ**-તમારા સંબંધથી **દિદ્યુત્**-અત્યંત પ્રકાશવાન વિદ્યુત્ **રદતિ**-પદાર્થોનું છેદન-લેખન કરે છે, ત્યાં **સુધિતેવ**-સમ્યક્ ધારણ કરેલ વસ્તુની સમાન **બર્હણા**-વૃદ્ધિ પામીને **પ્શ્વઃ**-પશુઓને અર્થાત્ પશુભાવો **રિનાતિ**-પ્રાપ્ત થાય છે. જેમ પશુઓ-ઘોડાઓ, બળદો આદિ રથાદિમાં જોડતા તેને ચલાવે છે, તેમ તે રથોને અતિ વેગથી ચલાવે છે. (૬)

ભાવાર્થ : શિલ્પ વ્યવહારથી સિદ્ધ કરેલ વિદ્યુત્ ઘોડા આદિ પશુઓની સમાન કાર્યોને સિદ્ધ કરનારા બને છે. તે (વિદ્યુત્)ની ક્રિયાના જ્ઞાતા વિદ્વાનો અન્યોને પણ એ વિદ્યામાં નિપુણ બનાવે. (૬)

પ્ર સ્કમ્ભદેષ્ણા અનવભ્રાધસોઽલાતૃણાસો વિદથૈષુ સુષ્ટુતાઃ ।

અર્ચન્ત્યર્ક મંદિરસ્ય પીતયૈ વિદુર્વીરસ્ય પ્રથમાનિ પૌંસ્યા ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : જે સ્કમ્ભદેષ્ણા-સ્તંભન = રોકનારા, અનવભ્રાધસઃ-જેનું ધન વિનાશ ન પામેલ હોય, અલાતૃણાસઃ-પૂર્ણ શત્રુનાશક, સુષ્ટુતાઃ-શ્રેષ્ઠ પ્રશંસાને પ્રાપ્તજનો, વિદથૈષુ-સંગ્રામોમાં વીરસ્ય-શૂરતા આદિ ગુણયુક્ત યોદ્ધાઓના, પ્રથમાનિ-પ્રથમ પૌંસ્યા-પુરુષાર્થ બળોને વિદુઃ-જાણે છે; તેઓ મંદિરસ્ય-આનંદપ્રદ રસનું પીતયૈ-પાન કરવા અર્કમ્-સત્કાર કરવા યોગ્ય વિદ્વાનનો પ્ર, અર્ચન્તિ-સમ્યક્ સત્કાર કરે છે. (૭)

ભાવાર્થ : જે યુક્ત આહાર-વિહારયુક્ત તથા વીરજનોને પ્રિય બનીને પોતાની સેનાના બળની વૃદ્ધિ કરે છે, શત્રુઓથી રહિત, પુષ્કળ ધનવાન, પ્રચુર વસ્તુઓના દાતા અને પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરનારા બને છે. (૭)

શ્તભુજિભિસ્તમ્ભિહૃતેરઘાત્પૂર્ભી રક્ષતા મરુતો યમાર્વત ।

જનં યમુગ્રાસ્તવસો વિરષ્ણિનઃ પાથના શંસાત્તનયસ્ય પુષ્ટિષુ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે તનયસ્ય-સંતાનની પુષ્ટિષુ-પુષ્ટિ કરનારા કામોમાં પ્રયત્ન કરીને, ઝગ્રાઃ-તેજસ્વી, તીવ્ર પ્રતાપયુક્ત, તવસઃ-અત્યંત વધેલ બળથી યુક્ત, વિરષ્ણિનઃ-પૂર્ણ વિદ્યા, શિક્ષા અને પરાક્રમવાળા મસ્તઃ-વાયુની સમાન વર્તમાન વિદ્વાનો ! તમે શ્તભુજિભિઃ-અસંખ્ય સુખ ભોગવવા જેનું શીલ પૂર્ભિઃ-પૂર્ણ પાલન અને સુખયુક્ત નગરોની સાથે યમ્-જેની અભિહૃતેઃ-સર્વત્રથી કુટિલ અઘાત્-પાપથી રક્ષત-રક્ષા કરો-બચાવો.

યમ્-જે જનમ્-જનનું આવત-પાલન કરો વા જેનું શંસાત્-આત્મ પ્રશંસારૂપ દોષથી પાથન-પાલન-રક્ષા કરો, તમ્-તેની અમે પણ સર્વત્રથી રક્ષા કરીએ. (૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો યુક્ત આહાર, વિહાર, સુશિક્ષા, બ્રહ્મચર્ય અને વિદ્યા દ્વારા પોતાના સંતાનોને પુષ્ટિયુક્ત, સત્યના પ્રશંસક અને પાપથી રહિત બનાવે છે તથા પ્રાણોની સમાન પ્રજાઓને આનંદિત કરે છે, તેઓ 'અનન્ત સુખવાળા' બને છે. (૮)

વિશ્વાનિ ભદ્રા મરુતો રથૈષુ વો મિથ્સ્પૃથ્યૈવ તવિષાણ્યાહિતા ।

અંસેષ્વા વઃ પ્રપથેષુ ખ્વાદયોઽક્ષો વશ્ચક્રા સમયા વિ વાવૃતે ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે મસ્તઃ-વાયુ સમાન બળવાન સજજનો ! વઃ-તમારા રથૈષુ-રમણીય યાનોમાં વિશ્વાનિ-

સમસ્ત ભદ્રા-કલ્યાણ કરનારા મિથસ્મૃદ્યેવ-સંગ્રામોમાં જેમ પરસ્પર સેના છે, તેમ તવિષાણિ-બળ આહિતા:-સર્વત્રથી ધારણ કરેલ છે વ:-તમારા અંસેષુ-સ્કંધોમાં ઉક્ત બળ છે તથા પ્રપથેષુ-શ્રેષ્ઠ સરળ માર્ગોમાં ખાદય:-ભોજન યોગ્ય વિશેષ ભક્ષ્ય-ભોજ્ય પદાર્થો છે, વ:-તમારા અક્ષ:-રથની અક્ષ-ધુરી ચક્રા-પૈડાની સમયા-સમીપ આ, વિ, વવૃતે-વિવિધ રીતે પ્રત્યય વર્તમાન છે. (૯)

ભાવાર્થ : જે સ્વયં બળવાન, કલ્યાણયુક્ત આચરણવાળા, સન્માર્ગ પર ચાલનારા અને પરિપૂર્ણ ધન તથા સેના આદિથી યુક્ત છે, તેઓ સરળતાથી શીઘ્ર શત્રુઓને જીતી શકે છે. (૯)

ભૂરીણિ ભદ્રા નર્યેષુ બાહુષુ વક્ષઃ સુ રુક્મા રંભસાસો અઙ્ગયઃ ।

અંસેષ્વેતાઃ પવિષુ ક્ષુરા અધિ વયો ન પક્ષાન્ વ્યનુ શ્રિયો ધિરે ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : જેઓના નર્યેષુ-મનુષ્યોને માટે હિતકારક પદાર્થોમાં ભૂરીણિ-બહુ જ ભદ્રા-સેવન કરવા યોગ્ય ધર્મયુક્ત કર્મ, વા બાહુષુ-પ્રચંડ ભુજદંડો અને વક્ષસ્સુ-વક્ષ સ્થલો = છાતીમાં સ્કમા:-સુવર્ણ અને રત્નાદિ યુક્ત અલંકારો, અંસેષુ-સ્કંધોમાં એતા:-વિદ્યાની શિક્ષા પ્રાપ્ત રંભસાસ:-વેગ જેમાં વિદ્યમાન છે, એવા અઙ્ગય:-પ્રસિદ્ધ પ્રશંસાયુક્ત પદાર્થો, પવિષુ, અધિ-સુશિક્ષિત વાણીઓમાં ક્ષુરા:-ધર્માનુકૂળ શબ્દો વિદ્યમાન છે, તેઓ જેમ વય:-પક્ષીઓ પક્ષાન્-પાંખોને ન-તેમ શ્રિય:-લક્ષ્મીઓને વિ, અનુ, ધિરે-વિશેષતાથી અનુકૂળ ધારણ કરે છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે લોકો બ્રહ્મચર્યથી વિદ્યા પ્રાપ્ત કરેલ; ગૃહસ્થાશ્રમમાં આભૂષણધારી, પુરુષાર્થી અને પરોપકારી; વાનપ્રસ્થમાં વૈરાગ્યવાન બનીને અધ્યાપન કાર્યમાં તલ્લીન તથા સંન્યાસાશ્રમમાં સર્વ તત્ત્વોને યથાર્થરૂપમાં પ્રાપ્ત કરીને, સર્વને સત્ય ગ્રહણ-પરાયણ બનીને સર્વત્ર વિચરણ કરીને, સર્વને સત્ય ગ્રહણ કરાવીને તેઓને અસત્યનો ત્યાગ કરાવીને સર્વ મનુષ્યોની વૃદ્ધિ-ઉન્નતિ કરે છે, તેઓ મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૦)

મહાન્તો મહ્વા વિશ્વોઙ્ગ વિભૂતયો દૂરેદૃશો યે દિવ્યાઙ્ગ્વ સ્તૃભિઃ ।

મન્દ્રાઃ સુજિહ્વાઃ સ્વરિતાર આસભિઃ સંમિશ્લા ઙ્ગન્દ્રે મરુતઃ પરિષ્ટુભઃ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાનો મહ્વા-પોતાના મહિમાથી મહાન્ત:-મહાન, વિશ્વ:-સમર્થ વિભૂતય:-અનેક ઐશ્વર્યોના દાતા, દૂરેદૃશ:-દૂરદર્શી, ઙ્ગન્દ્રે-વિદ્યુત્ વિષયમાં સંમિશ્લા:-સમ્યક્ મિશ્રિત, સ્તૃભિઃ-આચ્છાદન કરનાર સંસાર પર છાયા કરનારા તારાગણોની સાથે વર્તમાન પરિષ્ટુભઃ-સર્વત્રથી ધારણ કરનારા, મસ્ત:-વાયુઓની સમાન તથા દિવ્યાઙ્ગ્વ-સૂર્યના કિરણોની સમાન મન્દ્રા:-સુંદર-મનોહર, સુજિહ્વા-સત્ય વાણી બોલનારા, સ્વરિતાર:-અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો બનીને આસભિઃ-મુખોથી અધ્યાપન અને ઉપદેશ કરે છે, તેઓ નિર્મળ વિદ્યાવાન બને છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન પુરુષાર્થ દ્વારા મહાન ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરીને, તે અન્યોને પ્રદાન કરે છે, તે જ સર્વનો ઈશ્વર (= રાજા) બને છે. (૧૧)

तद्वः सुजाता मरुतो महित्वनं दीर्घं वो दात्रमदितेरिव व्रतम् ।

इन्द्रश्चन त्यजसा वि हृणाति तज्जनाय यस्मै सुकृते अराध्वम् ॥ १२ ॥

પદાર્થ : હે સુજાતા-સુંદર પ્રસિદ્ધ મસ્ત:-વાયુની સમાન વર્તમાન ! જે વ:-તમારું આદિતેરિવ-અન્તરિક્ષ જેમ (વિસ્તૃત છે) મહિત્વનમ્-મહિમા દીર્ઘમ્-વિસ્તૃત છે, દાત્રમ્-દાન (વિસ્તૃત) છે અને વ:-તમારું વ્રતમ્-શીલ શાંત છે તત્-તેને તથા જે ઇન્દ્ર-વિદ્યુત્ ચન-પણ ત્યજસા-ત્યાગથી અર્થાત્ એક પદાર્થ છોડીને બીજા પર પડવાથી વિ, હ્રુણાતિ-તિર્યક્ જાય છે, તત્-તે વૃત્તને પણ યસ્મૈ-જે સુકૃતે-સુંદર ધર્મ કરનારા જનાય-સજ્જનને માટે અરાધ્વમ્-આપો, તે સંસારનો ઉપકાર કરી શકે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેનો પ્રાણ સમાન મહત્તા છે, જેનું વિસ્તૃત વિદ્યાદાન છે, આકાશની સમાન શાન્ત શીલ = સ્વભાવ છે અને વિદ્યુત્ની સમાન દુષ્ટ આચરણનો ત્યાગ છે, તેઓ સર્વને સુખ આપી શકે છે. (૧૨)

तद्वो जामित्वं मरुतः परै युगे पुरू यच्छंसममृतासु आवत ।

अया धिया मनवे श्रुष्टिमाव्या साकं नरो दंसनैरा चिकित्रिरे ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે અમૃતાસ:-મૃત્યુધર્મરહિત મસ્ત:-પ્રાણોની સમાન અત્યંત પ્રિય વિદ્વાનો ! પરે, યુગે-પર વર્ષમાં વા પરજન્મમાં યત્-જે વ:-તમારો પુરુ-બહુજ જામિત્વમ્-સુખ-દુઃખનો ભોગ વર્તમાન છે, તત્-તેને શંસમ્-પ્રશંસારૂપ આવત-રાખો; અને અયા-એ ધિયા-બુદ્ધિથી મનવે-મનુષ્યને માટે શ્રુષ્ટિમ્-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય વસ્તુની આવ્ય-રક્ષા કરીને નર:-ધર્મયુક્ત વ્યવહારોમાં મનુષ્યોને પહોંચાડનારા મનુષ્યો સાકમ્-તમારી સાથે દંસનૈ:-શુભ-અશુભ, સુખ-દુઃખ ઇળોની પ્રાપ્તિ કરાવનારા કર્મોથી આ, ચિકિત્રિરે-સર્વને સમ્યક્ જાણે. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુઓ આ સૃષ્ટિમાં વર્તમાન સમયમાં તથા પ્રલય સમયમાં પણ રહે છે. તેમ નિત્ય જીવ પણ રહે છે. જેમ વાયુઓ જડ વસ્તુને નીચે-ઉપર લઈ જાય છે, તેમ જીવ પણ કર્મોની સાથે પૂર્વના, મધ્યના અને આવનારા સમયમાં કાળ અનુસાર તથા કર્મો અનુસાર ભ્રમણ કરે છે. (૧૩)

येन दीर्घं मरुतः शूशवाम युष्माकेन परीणसा तुरासः ।

आ यत्ततनन्वृजने जनास एभिर्यज्ञेभिस्तद्भीष्टिमश्याम् ॥ १४ ॥

પદાર્થ : તુરાસ:-શીઘ્રતા કરનારા મસ્ત:-વાયુની સમાન વિદ્યાબળયુક્ત વિદ્વાનો ! અમે યેન-જેના દ્વારા યુષ્માકેન-આપના સંબંધથી પરીણસા-બહુ જ ઉપદેશથી દીર્ઘમ્-અત્યંત દીર્ઘ બ્રહ્મચર્યને પ્રાપ્ત કરીને શૂશવમ્-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીએ. જેથી જનાસ:-વિદ્યાથી પ્રસિદ્ધ મનુષ્ય વૃજને-બળના નિમિત્ત યત્-જે ક્રિયાનો આ, તતનન્-વિસ્તાર કરે છે, તત્-તે અભીષ્ટિમ્-સર્વ પ્રકારથી ઈચ્છિત ક્રિયાને એભિ:-એ યજ્ઞેભિ: વિદ્વાનોના સંગરૂપ યજ્ઞોથી હું અશ્યામ્-પ્રાપ્ત કરું. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેઓની સહાયતાથી મનુષ્યો બહુ જ વિદ્યા, ધન અને બળવાળા થાય, તેની નિત્ય વૃદ્ધિ કરે. વિદ્વાનો જેમ ધર્મનું આચરણ કરે, તેમ બીજાઓ પણ આચરણ કરે. (૧૪)

एष वः स्तोमो मरुत इयं गीर्मीन्दार्यस्य मान्यस्य कारोः ।

एषा यासिष्ट तन्वे वयां विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ १५ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-વિદ્વાનો ! વ:-તમારા જે **एष:-આ સ્તોમ:-સ્તુતિ** અને **मान्यस्य-આનંદ** કરનારા ધર્માત્મા **मान्यस्य-સત્કાર** કરવા યોગ્ય **कारो:-અત્યંત** યત્ન કરનારા જનની **इयम्-આ ગી:-વાણી** અને જે ક્રિયાને **तन्वे-શરીરને** માટે **इषा-ઈચ્છાની** સાથે કોઈ **आ, यासिष्ट-સમ્યક્** પ્રાપ્ત થાય છે, તે ક્રિયા **इषम्-અન્ન વૃજનમ્-બળ** અને **जीरदानुम्-જીવનને** **वयाम्-અમે વિદ્યામ-પ્રાપ્ત** કરીએ. (૧૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોની સ્તુતિ કરીને, આપ્તજનની વાણી સાંભળીને તથા શરીર અને આત્માના બળની વૃદ્ધિ કરીને દીર્ઘ જીવન પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૧૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં મરુત શબ્દાર્થથી વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૬૬)

सूक्त-१५७

सहस्रं त इन्द्रोतयो नः सहस्रमिषो हरिवो गूर्ततमाः ।

सहस्रं रायो मादयध्यै सहस्त्रिण उप नो यन्तु वाजाः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે **हरिवः-ધારણ-આકર્ષણાદિ** યુક્ત **इन्द्र-પરમૈશ્વર્યવાન** વિદ્વાન્ ! જે તે-આપની **सहस्रम्-હજારો (= અસંખ્ય) ऊतयः-રક્ષાઓ,** **सहस्रम्-હજારો इषः-અન્નાદિ** પદાર્થો, **सहस्रम्-હજારો गूर्ततमाः-અત્યંત ઉદમ** વા **रायः-ધન** છે, તે **नः-અમારા** થાય અને **सहस्त्रिणः-જેમાં હજારો** પદાર્થ વિદ્યમાન છે, તે **वाजाः-બોધ માદયध्यै-આનંદિત** કરવા માટે **नः-અમારી उप, यन्तु-સમીપ** પ્રાપ્ત થાઓ. (આ મંત્રમાં 'સહસ્રમ્' પદ અસંખ્યનો વાચક છે-અનુ.) (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને, જે ભાગ્યશાળીઓને સર્વોત્તમ સામગ્રી અને યથોચિત ક્રિયાથી અસંખ્ય સુખ થાય છે, તે અમને પણ થાય એવો વિચાર કરીને (તેના માટે) નિરંતર પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૧)

आ नोऽवोभिर्मरुतो यान्त्वच्छा ज्येष्ठेभिर्वा बृहद्विवैः सुमायाः ।

अथ यदेषां नियुतः परमाः समुद्रस्य चिद्धनयन्त पारे ॥ २ ॥

પદાર્થ : **यत्-જે सुमायाः-સુંદર બુદ્ધિવાળા 'बृहद्विवैः'-જેની અસંખ્ય વિદ્યા પ્રસિદ્ધ** છે, તે **ज्येष्ठेभिः-વિદ્યા** અને વયોવૃદ્ધોના **वा-અથવા अवोभिः-રક્ષા** આદિ કર્મોની સાથે **मस्तः-વાયુઓની સમાન સજજન** **नः-અમને अच्छ-સમ્યક્ આ, यान्तु-પ્રાપ્ત** થાય.

અધ-અનન્તર ણ્ણામ્, ચિત્-એના પણ સમુદ્રસ્ય-સાગરની પારે-પાર પરમા:-અત્યંત ઉત્તમ નિયુત:-
વાયુની સમાન વિદ્યુત્ આદિ અશ્વ ધનચન્ત-સ્વયં ધનની ઈચ્છા કરે છે, તેનો અમે સત્કાર કરીએ.
(૨)

ભાવાર્થ : જેઓ અતિ વિશાળ નૌકાઓ દ્વારા, વાયુની સમાન વેગથી વ્યવહારને માટે સમુદ્રની
આરપાર ગમન-આગમન કરીને સંપત્તિની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ અનુપમ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨)

મિમ્વક્ષુ યેષુ સુધિતા ઘૃતાચી હિરણ્યનિર્ણિગુપ્તરા ઋષ્ટિઃ ।

ગુહા ચરન્તી મનુષો ન યોષા સ્ભાવતી વિદ્થ્યેવ સં વાક્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ યેષુ-જેમાં ઘૃતાચી-જલની શીતલતા છાંટનારી રાત્રિની સમાન, વા
સુધિતા-સમ્યક્ ધારણ કરેલી ઉપરા-ઉપરની દિશાની ન-સમાન, વા ઋષ્ટિ:-પ્રત્યેક પદાર્થને પ્રાપ્ત કરાવનારી
હિરણ્યનિર્ણિગ્-જે સુવર્ણથી પુષ્ટિ થાય છે; અને ગુહા, ચરન્તી-ગુપ્ત સ્થાનોમાં વિચરણ કરતી મનુષ:-
મનુષ્યની યોષા-સ્ત્રી ન-તેની સમાન, વા વિદ્થ્યેવ-સંગ્રામ વા વિજ્ઞાનોમાં થયેલી ક્રિયા આદિની સમાન
સ્ભાવતી-સભા સંબંધીની વાક્-વાણી છે, તેને સમ્, મિમ્વક્ષુ-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થાઓ. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સત્ય અને અસ્તયના નિર્ણય માટે સમસ્ત શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ વાળી
અને વિદ્યા-સુશિક્ષાયુક્ત આપ્તવાણીને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ બહુ જ ઐશ્વર્યવાન બનીને સર્વ દિશાઓમાં
ઉત્તમ યશસ્વી બને છે. (૩)

પરા શુભ્રા અયાસો યવ્યા સાધારણ્યેવ મરુતો મિમિક્ષુઃ ।

ન રોદસી અપ નુદન્ત ઘોરા જુષન્ત વૃધં સખ્યાય દેવાઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જેમ શુભ્રા:-સ્વચ્છ અયાસ:-શીઘ્રગામી મસ્ત:-વાયુ યવ્યા-મિશ્રિત-અમિશ્રિત ગતિથી રોદસી-
આકાશ અને પૃથિવીને મિમિક્ષુ:-સિંચે છે તથા ઘોરા:-વિદ્યુતના યોગથી ભયંકર બનીને ન, પરા, અપ,
નુદન્ત-તેને પરાવૃત્ત = ઉલટા કરતો નથી, તેમ દેવા:-વિદ્વાનો વૃધમ્-વૃદ્ધિને સખ્યાય-મિત્રતાને માટે
જેમ સાધારણ્યેવ-સાધારણ ક્રિયાથી સેવન કરે તેમ જુષન્ત-સેવન કરે. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ અને વિદ્યુતના યોગથી ઉત્પન્ન થયેલ વર્ષા અનેક ઔષધિઓને ઉત્પન્ન કરીને,
સર્વ પ્રાણીઓને જીવિત રાખીને દુઃખોને દૂર કરે છે.

જેમ ઉત્તમ પતિવ્રતા સ્ત્રી પતિને પ્રસન્ન રાખે છે, તેમ જ વિદ્વાનો વિદ્યા અને સુશિક્ષાની વર્ષાથી
અને ધર્મના સેવનથી સર્વ મનુષ્યોને પ્રસન્ન રાખે. (૪)

જોષદ્યદીમસુર્યા સ્ચધ્યૈ વિષિતસ્તુકા રોદસી નૃમણાઃ ।

આ સુયર્વ વિધૃતો રથં ગાત્વેષપ્રતીકા નર્મસો નેત્યા ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : યત્-જે અસુર્યા-મેઘોમાં પ્રસિદ્ધ, વિષિતસ્તુકા-વિવિધ પ્રકારની જેની સ્તુતિ સંબંધી અને નૃમણાઃ-જે અગ્રગામી જનોના મનમાં રમતી, ઈમ્-જળના સચઘ્ચૈ-સંયોગના માટે, સૂર્યેવ-સૂર્યની દીપ્તિની સમાન, રોદસી-આકાશ અને પૃથિવીને જોષત્-સેવે અર્થાત્ તેના ગુણોમાં રમે; વા ત્વેષપ્રતીકા-પ્રકાશની પ્રતિતીકારિકા અને ઇત્યા-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય બનેલી નભસઃ-જળ સંબંધી રથમ્-રમણ કરવા યોગ્ય રથની ન-સમાન વ્યવહાર કરીને વિદ્યતઃ-તાડના કરનારાઓને આ, ગતૂ-પ્રાપ્ત થાય છે, તે સ્ત્રી પ્રવર છે. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ વિદ્યુત્ રૂપમાં સર્વ વસ્તુઓને વ્યાપ્ત કરીને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ સ્ત્રી સમસ્ત વિદ્યાઓ અને સુશિક્ષાઓને પ્રાપ્ત કરીને સંપૂર્ણ કુળને પ્રશંસિત કરે છે. (૫)

આસ્થાપયન્ત યુવતિં યુવાનઃ શુભે નિમિશ્લાં વિદથેષુ પજામ્ ।
અર્કો યદ્વો મરુતો હવિષ્માન્ગાર્યદ્વાથં સુતસોમો દુવ્સ્યન્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મસ્તઃ-વિદ્યાયુક્ત પ્રાણ સમાન પ્રિય સજ્જનો ! યુવાનઃ-યુવાવસ્થાને પ્રાપ્ત આપ શુભે-શુભગુણ-કર્મ-સ્વભાવ ગ્રહણ કરવા માટે નિમિશ્લામ્-નિરંતર પૂર્ણ વિદ્યા અને સુશિક્ષાયુક્ત તથા વિદથેષુ-ધર્મયુક્ત વ્યવહારોમાં પજામ્-જનારી યુવતિમ્-યુવતી સ્ત્રીને આ, અસ્થાપયન્ત-સારી રીતે સ્થાપિત કરે છે.

યત્-જે વઃ-તમારું અર્કઃ-સત્કાર કરવા યોગ્ય અન્ન છે, તેને સ્થાપિત કરો છો; તથા જે હવિષ્માન્-બહુ જ વિદ્યાવાન સુતસોમઃ-જેણે ઐશ્વર્ય ઉત્પન્ન કરેલ છે અને ગાયત્-સ્તુતિ કરે છે, તે ગાથમ્-પ્રશંસનીય ઉપદેશનું દુવ્સ્યન્-આચરણ કરીને નિરંતર આનંદ કરે. (૬)

ભાવાર્થ : સર્વે રાજપુરુષ આદિએ અત્યંત ઉચિત છે, કે તેઓ પોતાની પુત્રીઓ તથા પુત્રોને દીર્ઘકાળ સુધી બ્રહ્મચર્યમાં રાખીને તેઓને વિદ્યા અને સુશિક્ષા ગ્રહણ કરાવીને, પૂર્ણ વિદ્યા પ્રાપ્ત કર્યા પછી અને પરસ્પર પ્રસન્ન થયેલ તે લોકોના સ્વયંવરથી વિવાહ કરાવે, જેથી તેઓ જ્યાં સુધી જીવે ત્યાં સુધી આનંદિત રહે. (૬)

પ્ર તં વિવક્ષિ વક્મ્યો ય ણ્ષાં મરુતાં મહિમા સત્યો અસ્તિ ।

સચા યદીં વૃષમણા અહંયુઃ સ્થિરા ચિજ્જનીર્વહતે સુભાગાઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : યઃ-જે ણ્ષામ્-આ મસ્તામ્-વાયુની સમાન વિદ્વાનોનું વક્મ્યઃ-કહેવા યોગ્ય સત્ય-સત્ય મહિમા-મહાન અસ્તિ-છે. તમ્-તેને અને યત્-જે અહંયુઃ-અહંકારયુક્ત-અભિમાની વૃષમણાઃ-જેનું મન વીર્ય સિંચનમાં છે, તે ઈમ્-સર્વત્રથી સચા-સંબંધની સાથે સ્થિરા, ચિત્-સ્થિર જ સુભાગાઃ-સુંદર સેવન કરનારી જનીઃ-સંતાનોને ઉત્પન્ન કરનારી સ્ત્રીઓને વહતે-પ્રાપ્ત કરે છે, તેને પણ હું પ્ર, વિવક્ષિ-સારી રીતે વિશેષતાથી કહું છું. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોનું એજ મહત્ત્વ છે, કે જે દીર્ઘકાળ સુધીના બ્રહ્મચર્યથી બાલક અને બાલિકાઓ

પૂર્ણ આયુ તથા શરીર અને આત્માના બળને માટે વિદ્યા અને સુશિક્ષા ગ્રહણ કરીને દીર્ઘાયુ, દૃઢ શરીર તથા મનયુક્ત અને ભાગ્યશાળી સંતાનોને ઉત્પન્ન કરીને તેઓને પ્રશંસિત કરે. (૭)

પાન્તિ મિત્રાવરુણાવવૃદ્યાચ્ચયત ઈમર્યમો અપ્રશસ્તાન્ ।

ઉત ચ્ચવન્તે અચ્યુતા ધ્રુવાણિ વાવૃથ ઈ મરુતો દાતિવારઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-વિદ્વાનો આપ અને મિત્રવરુણૌ-મિત્ર અને શ્રેષ્ઠ સજ્જન વા અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો અવદ્યાત્-નિંદા પાપાયરણથી પાન્તિ-મનુષ્યોની રક્ષા કરો છો; તથા અર્યમો-ન્યાયકારી રાજા અપ્રશસ્તાન્-દુરાચારીઓને ઈમ્-પ્રત્યેક ચયતે-એકત્ર કરે છે; ઉત-અને તેઓ અચ્યુતા-વિનાશરહિત ધ્રુવાણિ-દૃઢ કર્મોને ચ્ચવન્તે-પ્રાપ્ત થાય છે અને દાતિવાર:-દાન લેનાર ઈમ્-સર્વત્રથી વવૃથે-વૃદ્ધિ પામે છે. (૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય વિદ્યા, ધર્મ અને સુશિક્ષાના દાનથી અજ્ઞાનીઓને અધર્મથી નિવૃત્ત કરીને ધ્રુવ = સ્થાયી શુભ કર્મ પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેઓ સુખથી પૃથક્ થતાં નથી. (૮)

નહી નુ વૌ મરુતો અન્ત્યસ્મે આરાત્ત્ત્ચિચ્છવસો અન્તમાપુઃ ।

તે ધૃષ્ણુના શવસા શૂશુવાંસોઽર્ણો ન દ્વેષૌ ધૃષ્ણતા પરિ ષ્ઠુઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-મહાબળવાન વિદ્વાનો ! જે વ:-તમારા અને અસ્મે-અમારા અન્તિ-સમીપ શવસ:-બળની અન્તમ્-સીમાને નુ-શીઘ્ર નહિ, આપુ:-પ્રાપ્ત થતા નથી.

જે આરાત્તાત્-દૂરથી ચિત્-પણ ધૃષ્ણુના-દૃઢ શવસા-બળથી શૂશુવાંસ:-વૃદ્ધિ પામીને અર્ણ:-જળની ન-સમાન ધૃષ્ણતા-પ્રગલ્ભતાથી દ્વેષ:-વેદ આદિ દોષ વા ધર્મવિરોધી મનુષ્યોને પરિ, સ્થુ:-સર્વત્રથી ત્યાગ કરવામાં સ્થિત હોય, તે-તેઓ આપ્ત બને છે. (૯)

ભાવાર્થ : જે આપણે શરીર અને આત્માના પૂર્ણ બળને પ્રાપ્ત કરીએ, તો શત્રુ અમારો અને તમારો પરાજય કરી શકે નહિ.

જેઓ દુષ્ટોનો તથા લોભ આદિ દોષોનો ત્યાગ કરે, તેઓ બળવાન બનીને દુઃખથી પાર જઈ શકે છે. (૯)

વયમ્દ્યેન્દ્રસ્ય પ્રેષ્ટા વયં શ્વા વૌચેમહિ સમર્યે ।

વયં પુરા મહિ ચ નો અનુ દ્યૂન્તન્ન ઋઘ્ભુક્ષા નરામનુ ષ્યાત્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! વયમ્-અમે અદ્ય-આજ ઇન્દ્રસ્ય-પરમ વિદ્યા અને ઐશ્વર્યયુક્ત ધાર્મિક વિદ્વાનના પ્રેષ્ટા:-અત્યંત પ્રિય છીએ.

વયમ્-અમે શ્વ:-આગામી-આવતીકાળના દિવસે સમર્યે-સંગ્રામમાં વૌચેમહિ-કહીએ. ચ-અને પુરા-

પ્રથમ જે ન:-અમારી મહિ-મહાનતા છે, તત્-તેને વયમ્-અમે અનુ, દૂન્-પ્રતિદિન કહીએ અને નરામ્-મનુષ્યોમાં ન:-અમારા માટે ત્રમ્હુક્ષા:-મેધાવી બુદ્ધિમાન વીર પુરુષ અનુ, ઘ્યાત્-અનુકૂળ બને. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનોથી પ્રેમ, યુદ્ધોમાં ઉત્સાહ અને લોકોનું પ્રિય આચરણ પ્રથમ કરે છે, તેઓ 'સર્વેષાં પ્રિયા' સર્વના પ્રિય બને છે. (૧૦)

एष वः स्तोमो मरुत इयं गीर्मीन्दार्यस्य मान्यस्य कारोः ।

एषा यासीष्ट तन्वे वयां विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ ११ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-વિદ્વાનો એષ:-આ વ:-તમારી સ્તોમ:-સ્તુતિ અને માન્દાર્યસ્ય-આનંદપ્રદ ઉત્તમ માન્યસ્ય-માન-સત્કાર કરવા યોગ્ય કારો:-સર્વના સુખકારક સજ્જનની ડમ્-આ ગી:-વેદ વિદ્યાની ઉત્તમ શિક્ષાયુક્ત વાણી છે, તેની જે ડ્ષા-ઈચ્છાની સાથે આ, યાસીષ્ટ-પ્રાપ્તિ થાય. વયામ્-અમે તન્વે-શરીરને માટે ડ્ષમ્-ઈચ્છા જીરદાનુમ્-જીવનને માટે અને વૃજનમ્-બળને વિદ્યામ-જાણીએ. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેઓ સર્વત્રથી પ્રશંસનીય ગુણોને પ્રાપ્ત કરીને તથા આપ્તોનો સત્કાર કરીને શારીરિક અને આત્મિક બળને માટે વિદ્યા અને પરાક્રમનો સંચય કરે છે, તેઓ સુખથી જીવે છે. (૧૧)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વાયુના દૃષ્ટાન્તથી સજ્જન વિદ્વાન જનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વે સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૬૭)

સૂક્ત-૧૬૮

यज्ञायज्ञा वः समना तुतुर्वणिर्धियं धियं वो देव्या उं दधिध्वे ।

आ वोऽर्वाचः सुविताय रोदस्योर्महे ववृत्यामवसे सुवृक्तिभिः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો જેમ દેવ્યા:-જેઓ દિવ્યગુણોને પ્રાપ્ત થાય છે, તેઓ પ્રાણવાયુ વ:-તમારા ધિયં ધિયમ્-કામ-કામને ધારણ કરે છે, તેમ ડ-જ તમે તેમને દધિધ્વે-ધારણ કરો.

જેમ તે વાયુઓની યજ્ઞાયજ્ઞા-યજ્ઞ-યજ્ઞમાં અને સમના-સમાન વ્યવહારોમાં તુતુર્વણિ-શીઘ્ર ગતિ છે, તેમ વ:-તમારી ગતિ થાઓ.

જેમ અમે રોદસ્યો:-આકાશ અને પૃથિવી સંબંધી સુવિતાય-ઐશ્વર્યને માટે તથા મહે-અત્યંત અવસે-રક્ષાને માટે વ:-તમારા સુવૃક્તિભિઃ-સુંદર ત્યાગોની સાથે અર્વાચ:-નીચે આવવા-જવાવાળા વાયુના આ; વવૃત્યામ્-સમ્યક્ વહેવા માટે ઈચ્છીએ છીએ, તેમ તમે ઈચ્છો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુઓ નિયમથી અનેક પ્રકારની ગતિઓ યુક્ત બનીને જગતને ધારણ કરે છે, તેમ વિદ્વાનો વિદ્યા અને શિક્ષાથી યુક્ત બનીને વિદ્યાર્થીઓને ધારણ કરે. જેથી અસંખ્ય ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત થાય. (૧)

વબ્રાસો ન યે સ્વજાઃ સ્વતવસ ઇષં સ્વરભિજાયન્ત ધૂતયઃ ।

સહસ્ત્રિયાસો અપાં નોર્મય આસા ગાવો વન્દ્યાસો નોક્ષણઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! યે-જે સ્વજાઃ-પોતાનાં જ કારણથી ઉત્પન્ન, સ્વતવસઃ-પોતાના બળથી બળવાન, ધૂતયઃ-જનારા વા બીજાઓને કંપાવનારા મનુષ્યો વબ્રાસઃ-શીઘ્ર ગામીઓની ન-સમાન; વા અપામ્-જળની સહસ્ત્રિયાસઃ-હજારો ઋર્મયઃ-તરંગોની ન-સમાન, આસા-સુખથી વન્દ્યાસઃ-વંદના અને કામનાને યોગ્ય ગાવઃ-ગાયો જેમ ઉક્ષણઃ-બળદોને ન-તેમ ઇષમ્-જ્ઞાન અને સ્વઃ-સુખને અભિજાયન્ત-પ્રકટ કરે છે, તેને તમે જાણો. (૨)

ભાવાર્થ : જેઓ વાયુની સમાન બળવાન, તરંગોની સમાન ઉત્સાહી, ગાયોની સમાન ઉપકારી, કારણની સમાન સુખોત્પાદક અને દુષ્ટોને કંપિત કરનારા મનુષ્યો છે, તેઓ આ સંસારમાં 'ધન્યાઃ'-ધન્ય બને છે. (૨)

સોમાસો ન યે સુતાસ્તૃપ્તાંશવો હૃત્સુ પીતાસો દુવસો નાસંતે ।

એષામંસૈષુ રમ્ભિણીવ રારભે હસ્તૈષુ ખાદિશ્ચ કૃતિશ્ચ સં દધે ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હું યે-જે વાયુ સમાન વિદ્વાન તૃપ્તાંશવઃ-જેનાથી સૂર્ય કિરણ આદિ પદાર્થ તૃપ્ત થાય છે. અને તેઓ સુતાઃ-કુટી-પીસીને કાઢેલ સોમાસઃ-સોમાદિ ઓષધિ રસ હૃત્સુ-હૃદયોમાં પીતાસઃ-પાન કરેલ હોય તેઓની ન-સમાન; વા દુવસઃ-સેવન કરનારાઓની ન-સમાન આસંતે-બેસીને સ્થિર થાય છે, એષામ્-તેઓના અંસૈષુ-ભુજ સ્કંધોમાં રમ્ભિણીવ-જેમ પ્રત્યેક કામનો આરંભ કરનારી સ્ત્રી સંલગ્ન હોય છે, તેમ આ, રારભે-સંલગ્ન બનું છું. જેઓએ હસ્તૈષુઃ-હાથોમાં ખાદિઃ-ભોજન ચ-અને કૃતિઃ-ક્રિયા ચ-પણ ધારણ કરેલ છે, તેઓની સાથે ક્રિયાઓને સમ્, દધે-સમ્યક્ ધારણ કરું છું. (૩)

ભાવાર્થ : જે સજ્જનો ઓષધિની સમાન કુશિક્ષા અને દુષ્ટાચાર વિનાશક, સેવકની સમાન સુખદાયી, પતિવ્રતા સ્ત્રીની સમાન પ્રિય આચરણયુક્ત અને ક્રિયાકુશળ છે, તેઓ આ સૃષ્ટિમાં સમસ્ત વિદ્યાઓને સમ્યક્ ધારણ કરી શકે છે. (૩)

અવ સ્વયુક્તા દિવ આ વૃથા યયુર્મર્ત્યાઃ કશયા ચોદત ત્મના ।

અરેણવસ્તુવિજાતા અચુચ્ચવુર્દ્ધાનિ ચિન્મરુતો ભ્રાજદૃષ્ટયઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ત્મના-આત્માથી કશયા-શિક્ષા અથવા ગતિથી જેમ સ્વયુક્તાઃ-સ્વ ગમન કરનારા અમર્ત્યાઃ-મરણ ધર્મરહિત અરેણવઃ-જેમાં રેણુ = રેતી વિદ્યમાન નથી તુવિજાતાઃ-બળની સાથે પ્રસિદ્ધ અને ભ્રાજદૃષ્ટયઃ-જેની પ્રકાશમાન ગતિ છે, તેઓ મસ્તઃ-વાયુ દિવઃ-આકાશથી આ, યયુ-આવીને પ્રાપ્ત થાય છે અને દ્ધાનિ-પુષ્ટ ચિત્-પદાર્થોને વૃથા-નિષ્કામ અવ, અચુચ્ચવુઃ-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ એને ચોદત-પ્રેરણા આપો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુઓ સ્વયં જાય અને આવે છે અને અગ્નિ આદિને ધારણ કરીને દેહતાપૂર્વક પ્રકાશિત કરે છે, તેમ વિદ્વાનો સ્વયં અધ્યાપન અને ઉપદેશ આપવામાં નિયુક્ત થઈને, વ્યર્થ કાર્યને છોડીને અને છોડાવીને વિદ્યા અને સુશિક્ષાઓથી સર્વ મનુષ્યોને પ્રકાશિત કરે છે. (૪)

કો વોઽન્તર્મૈરુત ઋષ્ટિવિદ્યુતો રેજતિ ત્મના હન્વૈવ જિહ્વાયાં ।

ધન્વચ્યુત ડ્રુષાં ન યામનિ પુરુપ્રૈષા અહન્યોઙ્ઞૈ નૈતશઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : પુસ્ત્રૈષા:-અનેકોથી પ્રેરિત ઋષ્ટિવિદ્યુત-ઋષ્ટિ બે ધારી તલવારને વિદ્યુત્ની સમાન તીવ્ર રાખનારા મસ્ત:-વિદ્વાનો ! વ:-તમારા અન્ત:-મધ્યમાં ક:-કોણ રેજતિ-કંપે છે ?

જિહ્વા-વાણીથી હન્વૈવ-જડબું જેમ હલાવવામાં આવે, તેમ ત્મના-પોતાથી કોણ તમારી વચ્ચે કંપે છે.

ડ્રુષામ્-ઈચ્છાઓના સંબંધમાં ધન્વચ્યુત:-અન્તરિક્ષમાં પ્રાપ્ત મેઘોની ન-સમાન વા અહન્ય:-દિવસમાં પ્રસિદ્ધ થનાર ઇતષ:-ઘોડાની ન-સમાન યામિન-માર્ગમાં તમને કોણ સંયુક્ત કરે છે ? (૫)

ભાવાર્થ : જ્યારે જિજ્ઞાસુ લોકો વિદ્વાનોને પૂછે, ત્યારે વિદ્વાનો તેઓને યથાર્થ ઉત્તર આપે. (૫)

ક્વ સ્વિદસ્ય રજસો મહસ્પરં ક્વાવરં મરુતો યસ્મિન્નાયુય ।

યચ્ચ્યાવયથ વિથુરેવ સંહિતં વ્યદ્રિણા પતથ ત્વેષમર્ણવમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-વિદ્વાનો ! અસ્ય-આ રજસ:-ભૂગોળનું મહ:-મહાન પરમ્-કારણ ક્વ સ્વિત્-નિશ્ચયથી ક્યાં અને ક્વ-ક્યાં અવર્મ્-કાર્ય વર્તમાન છે અને અમે પૂછીએ છીએ.

યસ્મિન્-જેમાં તમે આયય-આવો, યત્-જેને ચ્યાવયથ-ચલાવો, જેમાં વિથુરેવ-દબાવેલ પદાર્થોની સમાન સંહિતમ્-સંહત = મળેલ આ જગત છે, જેથી અદ્રિણા-મેઘસમૂહ સાથે પવન, ત્વેષમ્-સૂર્યનો પ્રકાશ અને અર્ણવમ્-સમુદ્રને વિ, પતથ-નીચે પ્રાપ્ત થાય છે, તે જ પરબ્રહ્મ સર્વ જગતનું મહત્ કારણ છે, એ જ પ્રશ્નોના ઉત્તર છે. (૬)

ભાવાર્થ : જેમાં આ ભૂગોળ આદિ (પદાર્થ) આવે-જાય છે અને કંપિત થાય છે, તે (ઈશ્વર) જ આકાશની સમાન કારણ જાણો.

જેમાં આ લોકો ઉત્પન્ન થાય છે, વર્તમાન રહે છે અને પ્રલયને પ્રાપ્ત થાય છે, તે પરમ 'નિમિત્ત કારણ' બ્રહ્મ છે. (૬)

સાતિર્ન વોઽમવતી સ્વર્વતી ત્વેષા વિપાકા મરુતઃ પિપિષ્વતી ।

મ્હ્રા વો રાતિઃ પૃણતો ન દક્ષિણા પૃથુઙ્ગ્રયીં અસુર્યૈવ જઙ્ગતી ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-વિદ્વાનો ! વ:-તમારી જે પિપિષ્વતી-બહુ જ અંગોવાળી, અમવતી-જ્ઞાનવતી, સ્વર્વતી-જેમાં સુખ વિદ્યમાન છે, વિપાકા-વિવિધ ગુણોથી પરિપક્વ, ત્વેષા-ઉત્તમ દીપ્તિ, સાતિ:-લોકોની વિભક્તિ અર્થાત્ વિશેષ ભાગની ન-સમાન છે.

વ:-તમારી જે પૂણત:-પાલનની વા વિદ્યાદિ ગુણોથી પરિપૂર્ણ કરનારાની દક્ષિણા-આપવા યોગ્ય દક્ષિણાની ન-સમાન પૃથુજ્ઞયી-બહુ જ વેગવાની અસુર્યેવ-પ્રાણોમાં થનારી વિદ્યુત્ સમાન વા જજ્ઞતી-યુદ્ધમાં પ્રવૃત્ત ચોકાવતી સેનાની સમાન ભદ્રા-કલ્યાણ કરનારી રતિ:-દેવા યોગ્ય છે. તેનાથી સર્વની વૃદ્ધિ કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે આ જીવોના પાપ અને પુણ્યથી ઉત્પન્ન થનારી સુખ-દુઃખ રૂપી ફળવાળી ગતિ છે, તેની સાથે સર્વ જીવ વિચરે છે.

જે પુરુષાર્થી લોકો, સૈનિકો જેમ શત્રુઓને તેમ પાપોને જીતીને તથા તેને દૂર કરીને ધર્મનું આચરણ કરે છે, તેઓ સદા સુખી બને છે. (૭)

પ્રતિ પ્ષોભન્તિ સિન્ધવઃ પવિભ્યો યદ્ભિયાં વાચમુદીરયન્તિ ।

અવ સ્મયન્ત વિદ્યુતઃ પૃથિવ્યાં યદી ઘૃતં મરુતઃ પ્રુષ્ણુવન્તિ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! યત્-જ્યારે મસ્ત:-વાયુ અભિયામ્-મેઘોમાં થયેલી ગર્જનારૂપ વાચમ્-વાણીને ઉદીરયન્તિ-પ્રેરિત કરીને અર્થાત્ વાદળાંઓને ગર્જાવે છે, ત્યારે સિન્ધવઃ-નદીઓ પવિભ્યઃ-વજ્ર સમાન કિરણોથી અર્થાત્ વિદ્યુત્ની તીવ્રતાથી પ્રતિ, પ્ષોભન્તિ-ક્ષોભિત થાય છે અને યદિ-જ્યારે વાયુ ઘૃતમ્-વાદળાંઓનું જળ પ્રુષ્ણુવન્તિ-વરસાવે છે, ત્યારે વિદ્યુતઃ-વિજળીઓ પૃથિવ્યામ્-ભૂમિ પર અવ, સ્મયન્ત-સ્મિત કરતી જણાય છે, તેમ તમે થાઓ. (૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો નદીની સમાન આર્દ્ર અને વિદ્યુત્ની સમાન તીવ્ર બનીને વિદ્યા ભણીને (બીજાઓને) ભણાવે છે, તેઓ સૂર્યની સમાન સત્ય અને અસત્યના પ્રકાશક બને છે. (૮)

અસૂત પૃશ્નિર્મહતે રણાય ત્વેષમયાસાં મરુતામનીકમ્ ।

તે સપ્સરાસોઽજનયન્તાભ્વમાદિત્સ્વધામિષિરાં પર્યપશ્યન્ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : ણામ્-એ અયાસામ્-ગમનશીલ મસ્તામ્-મનુષ્યોના પૃશ્નિઃ-આદિત્ય = સૂર્યની સમાન પ્રચંડ પ્રતાપવાન ત્વેષમ્-પ્રદીપ્ત અનીકમ્-સૈન્ય મહતે-મહાન રણાય-સંગ્રામને માટે અસૂત-ઉત્પન્ન થાય છે. આત્-તદનન્તર ઇત્-જ તે-તેઓ ઇષિરામ્-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય પદાર્થોમાં સ્વધામ્-અન્નને અજનયન્ત-ઉત્પન્ન કરે છે અને સપ્સરાસઃ-ગમન કરીને અભ્વમ્-અવિદ્યમાન અર્થાત્ પ્રત્યક્ષ વિદ્યાવાન નથી તેને પર્યપશ્યન્-સર્વત્રથી જુએ છે. (૯)

ભાવાર્થ : જે અતિ બુદ્ધિમાન રાજપુરુષો વિજયને માટે પ્રશંસનીય સેનાનો સ્વીકાર કરીને, અન્ન આદિ ઐશ્વર્યની ઉન્નતી કરે છે, તેઓ તૃપ્તિને પ્રાપ્ત થાય છે. (૯)

પૃષ વઃ સ્તોમો મરુત ઙ્ચં ગીર્માન્દાર્યસ્ય માન્યસ્ય કારોઃ ।

પૃષ યાસીષ્ટ તન્વે વ્યાં વિદ્યામેષં વૃજનં જીરદાનુમ્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનો ! જે ઇષ:-આ વ:-તમારા સ્તોમ:-પ્રશ્નોત્તરરૂપ આલાપ-કથન માન્દાર્યસ્ય-સર્વને માટે આનંદપ્રદ ઉત્તમ માન્યસ્ય-જાણવા યોગ્ય છે, કારો:-ક્રિયાકુશળ સજ્જનની જે ઇયમ્-આ ગી:-સત્યપ્રિય વાણી છે અને જે ઇષા-ઈચ્છાની સાથે તન્વે-શરીર સુખને માટે આ, યાસીષ્ટ-પ્રાપ્ત થાય છે, તેથી વયામ્-અમે ઇષમ્-અન્ન, વૃજનમ્-શત્રુઓને દુઃખ આપનાર બળ અને જીરાદાનુમ્-જીવોની દયાને વિધામ-પ્રાપ્ત થઈએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેઓ સમસ્ત વિદ્યાઓના પ્રશંસક, આપ્તવાણીયુક્ત અને વિશેષરૂપથી જીવો પર દયા કરનારાઓ છે, તેઓ સર્વેષાં સુખજનકા ભવન્તિ-સર્વને માટે સુખ ઉત્પન્ન કરનારા બને છે. (૧૦)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વાયુનાં દૃષ્ટાન્તથી વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૬૮)

સૂક્ત-૧૬૯

મહશ્ચિત્ત્વમિન્દ્ર યત્ એતાન્મહશ્ચિદસિ ત્યજસો વસ્તા ।

સ નો વેધો મરુતાં ચિકિત્વાન્ત્સુમ્ના વનુષ્વ તવ્ હિ પ્રેષ્ટા ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-દુઃખ વિદારક ! અત્યંત વિદ્યાબળ સંપન્ન ! યત:-જે કારણે ત્વમ્-આપ એતાન્ એ વિદ્વાનોને મહ:-અત્યંત ચિત્-પણ ત્યજસ:-ત્યાગથી વસ્તા-સ્વીકાર કરનારા અસિ-છો, એ કારણે મહશ્ચિત્-મહાન પણ છો.

હે મસ્તામ્-વિદ્વાન સજ્જનોમાં વેધ:-અત્યંત બુદ્ધિમાન ! સ:-તે ચિકિત્વાન્-જ્ઞાનવાન આપ જે સુમ્ના-સુખ તવ-આપને પ્રેષ્ટા-અત્યંત પ્રિય છે, તેને ન:-અમારા માટે વનુષ્વ, હિ-નિશ્ચયથી પ્રદાન કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જે લોકો વિરક્ત સંન્યાસીઓના સંગથી મેધાવી = બુદ્ધિમાન બને છે, તેઓનું કદી અનિષ્ટ થતું નથી. (૧)

અયુઙ્ગન્ત ઇન્દ્ર વિશ્વકૃષ્ટીર્વિદ્વાનાસો નિષ્વિધો મર્ત્યત્રા ।

મરુતાં પૃત્સુતિર્હાસમાના સ્વર્મીઢસ્ય પ્ર્ધનસ્ય સાતૌ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સુખપ્રદ વિદ્વાન ! જે નિષ્વિધ:-અધર્મનો નિષેધ કરનારા મર્ત્યત્રા-મનુષ્યોમાં વિદ્વાનાસ:-વિદ્વાન બનીને, સ્વર્મીઢસ્ય-સુખોનું સેચન કરનારા, પ્ર્ધનસ્ય-ઉત્તમ ધનના સાતૌ-સમ્યક્ ભાગમાં, વિશ્વકૃષ્ટી:-સર્વ મનુષ્યોને અયુઙ્ગન્-યુક્ત કરે છે, તે-તેઓ જે મસ્તામ્-મનુષ્યોની હાસમાના-આનંદમયી પૃત્સુતિ:-વીર સેના છે, તેને પ્રાપ્ત થાઓ. (૨)

ભાવાર્થ : જેઓ પ્રથમ બ્રહ્મચર્યપૂર્વકવિદ્યા અધ્યયન કરીને, આપ્તોના સંગથી સંપૂર્ણ શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને ધાર્મિક બને છે; તેઓ વિશ્વસ્ય સુખપ્રદા' સંસારને સુખ આપનારા બને છે. (૨)

अम्यक्सा त इन्द्र ऋष्टिस्मे सनेम्यभ्वं मरुतो जुनन्ति ।

अग्निश्चिद्धिष्मात्से शुशुक्वानापो न द्वीपं दधति प्रयांसि ॥ ३ ॥

पદાર્થ : હે **इन्द्र**-દુષ્ટ વિદારક ! જેથી **मस्तः**-મનુષ્યો **सनेमि**-પ્રાચીન અને **अभवम्**-નેત્ર દ્વારા પ્રત્યક્ષ જોવામાં અપ્રસિદ્ધ ઉત્તમ વિષયને **जुनन्ति**-પ્રાપ્ત થાય છે, **सा**-તેઓ **ते**-આપની **ऋष्टिः**-પ્રાપ્તિ **अस्मे**-અમારા માટે **अम्यक्**-સરળ ગતિથી પ્રાપ્ત થાય છે અર્થાત્ આપ સરળતાથી અમને પ્રાપ્ત થાઓ છો.

शुशुक्वान्-શુદ્ધ કરનાર **अग्निः**-અગ્નિની સમાન **चित्**-જ આપ **हि**-નિશ્ચયપૂર્વક **स्म**-જેમ આશ્ચર્યવત્ **आपः**-જળ દ્વીપમ્-બે પ્રકારથી જેમાં જળ આવે-જાય તે મહા નદીને પ્રાપ્ત થાય, **न**-તેમ સર્વના અનાદિ કારણને **अतसे**-નિરંતર પ્રાપ્ત થાય છે, એથી સર્વ મનુષ્યો **प्रयांसि**-સુંદર-મનોહર ઈચ્છિત વસ્તુઓને **दधति**-ધારણ કરે છે. (૩)

ભાવાર્થ : જે અનાદિ કારણને વિદ્વાનો જાણ છે, તેને અન્ય મનુષ્યો જાણી શકતા નથી. (૩)

त्वं तू न इन्द्र तं रयिं दा ओजिष्ठया दक्षिणयेव रातिम् ।

स्तुतश्च यास्ते चकनन्त वायोः स्तनं न मध्वः पीपयन्त वाजैः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-બહુ જ પદાર્થોના દાતા ! **त्वम्**-આપ **तु**-તો **नः**-અમારા માટે **ओजिष्ठया**-અત્યંત બળવતી **दक्षिणयेव**-દક્ષિણાની સાથે જેમ દાન આપવામાં આવે, તેમ **रातिम्**-દાનને તથા **तम्**-તે **रयिम्**-દૂધ આદિ ધનને **दाः**-આપો, જેથી **ते**-આપની અને **वायोः**-વાયુની **च**-પણ **याः**-જે **स्तुतः**-સ્તુતિ કરનારી છે, તે **मध्वः**-મધુર ઉત્તમ **स्तनम्**-દૂધ પૂર્ણ સ્તનની **न**-સમાન **चकनन्त**-ઈચ્છતી અને **वाजैः**-અન્ન આદિની સાથે **पीपयन्त**-વાછરડાઓને પાન કરાવે છે. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ બહુ જ આપનાર યજમાન ઋત્વિક (યજ્ઞાદિ કરાવનાર પુરોહિત)ને પુષ્કળ ધન આપીને તૃપ્ત કરે છે, અથવા જેમ પુત્ર માતાનું દૂધ પીને પુષ્ટ થાય છે, તેમ સભાધ્યક્ષના પારિતોષિકથી નોકર-સેવકજનો પર્યાપ્ત ધનવાન અને ભોજન આદિના દાનથી બળવાન બની જાય છે. (૪)

त्वे रायं इन्द्र तोशतमाः प्रणेतारः कस्य चिद्वतायोः ।

ते षु णो मरुतो मृलयन्तु ये स्मा पुरा गातुयन्तीव देवाः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-દાતા ! **ये**-જે **कस्य**, **चित्**-કોઈ **ऋतायोः**-જાતે-પોતે સત્યના ઈચ્છુક **प्रणेतारः**-શ્રેષ્ઠ સાધક **तोशतमाः**-અતિ પ્રસન્ન ચિત્ત બનીને, **मस्तः**-વાયુ વિદ્યાના જ્ઞાતા **देवाः**-વિદ્વાનો **त्वे**-તમારા સહાયક અર્થાત્ રક્ષક બનીને, **रायः**-ધનની પ્રાપ્તિ કરાવીને, **नः**-અમને **सु**, **मृणयन्तु**-સમ્યક સુખી કરે; **वा** **पुरा**-પૂર્વ **गातुयन्तीव**-પોતાને પૃથિવી ઈચ્છતા પ્રયત્ન કરે છે, **ते**, **स्म**-તેઓજ રક્ષા કરનારા બને. (૫)

ભાવાર્થ : જેઓ વાયુ વિદ્યા આદિના જ્ઞાતા અને પરોપકાર તથા વિદ્યાદાન પ્રેમી (બનીને) પૃથિવી સમાન સર્વને પુરુષાર્થમાં સ્થાપિત કરે છે, તેઓ સદા સુખી બને છે. (૫)

પ્રતિ પ્ર યાહીન્દ્ર મીઢુષો નૃન્મહઃ પાર્થિવે સદને યતસ્વ ।

અથ યદેષાં પૃથુબુઢ્નાસૃ એતાસ્તીર્થે નાર્યઃ પૌંસ્યાનિ તસ્થુઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પ્રયત્નવાન ! આપ યત્-જે પૃથુબુઢ્નાસઃ-વિસ્તીર્ણ અન્તરિક્ષવાળા જન એતાઃ-એ સ્ત્રીજન અને એષામ્-એના પૌંસ્યાનિ-બળ તીર્થે-જેનાથી સમુદ્રરૂપ જલ સમૂહને તરાય-પાર કરાય તે નૌકામાં અર્યઃ-વૈશ્યની ન-સમાન તસ્થુઃ-સ્થિર થાય છે, તે મીઢુષઃ-સુખોથી સિંચનારા નૃન્-અગ્રણી મનુષ્યોને પ્રતિ, પ્ર,યાહિ-પ્રાપ્ત થાઓ. અથ-તદન્તર મહઃ-મહાન પાર્થિવે-પૃથિવીમાં વિદિત સદને-ઘરમાં યતસ્વ-યત્ન કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જે પુરુષો અને સ્ત્રીઓ બ્રહ્મચર્યથી બળ વધારીને આપ સજજનોની સેવા કરે છે, તે (પુરુષો અને સ્ત્રીઓ) વિદ્વાન અને વિદુષી બને છે. (૬)

પ્રતિ ઘોરાણામેતાનામયાસાં મરુતાં શૃણ્વ આયતામુપ્બિઃ ।

યે મર્ત્યૌ પૃતનાયન્તમૂમૈર્ઠ્ઠૈણાવાનં ન પતયન્ત સર્ગેઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું ઘોરાનામ્-મારનારી એતાનામ્-એ પૂર્વોક્ત અયાસામ્-પ્રાપ્ત થયેલ વા આયતામ્, મસ્તામ્-વાયુ સમાન શીઘ્રકારી મનુષ્ય સ્ત્રીઓની જે ઉપ્બિઃ-વાણી છે, તેને પ્રતિ, શૃણ્વે-વારંવાર સાંભળું છું.

યે-જે પૃતનાયન્તમ્-પોતે સેનાની ઈચ્છા કરીને મર્ત્યમ્-મનુષ્યને ઋણાવાનમ્-ઋણયુક્તને જેમ ન-તેમ ડમૈઃ-રક્ષણાદિ સર્ગેઃ-સંસર્ગથી યુક્ત વિષયોની સાથે પતયન્ત-સ્વામીની સમાન માને તેનું સેવન કરું છું, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જેઓ દુષ્ટ પુરુષો અને સ્ત્રીઓના કઠોર શબ્દો સાંભળીને શોક કરતા નથી, તેઓ શૂરવીરા-શૂરવીર બને છે. (૭)

ત્વં માનેભ્ય ઇન્દ્ર વિશ્વજન્યા રદા મરુદ્ધિઃ શુરુધો ગોઅગ્રાઃ ।

સ્તવાનેભિઃ સ્તવસે દેવ દેવૈર્વિદ્યામેષં વૃજનં જીરદાનુમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-વિદ્વાન ઇન્દ્ર-સભાપતિ ! જેમ અમે માનેભ્યઃ-સત્કારો દ્વારા સ્તવસે-સ્તુતિને માટે સ્તવાનેભિઃ-સમસ્ત વિદ્યાઓની સ્તુતિ-પ્રશંસા કરનારા મરુદ્ધિઃ-વાયુની વિદ્યાના જ્ઞાતા દેવૈઃ-વિદ્વાનોથી વિશ્વજન્યા-વિશ્વને ઉત્પન્ન કરનારા અને શુસ્થઃ-નિજ હિંસક કિરણોને ધારણ કરનારા ગો; અગ્રાઃ-જેના સૂર્ય કિરણો આગળ વિદ્યમાન છે, તે જળ અને ઇષમ્-અન્ન વૃજનમ્-બળ અને જીરદાનુમ્-જીવન

સ્વરૂપને વિદ્યામ-જાણીએ, તેમ એ જળ અને અન્નાદિને ત્વમ્-આપ રદ-પ્રત્યક્ષ જાણો અર્થાત્ તેના નામ-ધામ રૂપ સર્વ પ્રકાર જાણો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, વિદ્વાનોના સત્કાર દ્વારા વિદ્યાઓ ભણીને પદાર્થવિદ્યાનું વિજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૮)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાન આદિના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૬૯)

સૂક્ત-૧૭૦

ન નૂનમસ્તિ નો શ્વઃ કસ્તદ્વેદ્ યદદ્ભુતમ્ ।

અન્યસ્ય ચિત્તમ્ભિ સંચરેણ્યમુતાધીતું વિ નશ્યતિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્-જે અન્યસ્ય-બીજાઓના સચ્ચરેણ્યમ્-સમ્યક્ જાણવા યોગ્ય ચિત્તમ્-અન્તઃકરણની સ્મરણાત્મિકાવૃત્તિ ઉત્-અને આધીતમ્-સર્વત્રથી ધારણ કરેલ વિષય ન, અભિ, વિ, નશ્યતિ-વિનાશને પ્રાપ્ત થતો નથી; નૂનમ્-અસ્તિ, આજ નિશ્ચિત્ રહેતો નથી અને નો, શ્વઃ-આગળના દિવસે નિશ્ચિત્ રહેતો નથી તત્-તે અદ્ભુતમ્-આશ્ચર્ય સ્વરૂપની સમાન વર્તમાનને કઃ-કોણ વેદ-જાણે છે ? (૧)

ભાવાર્થ : જે જીવ થઈને ઉત્પન્ન થતો નથી, નાશ પામતો નથી અને જે નિત્ય, આશ્ચર્યયુક્ત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત, અનાદિ અને ચેતન છે, તેને જાણનાર પણ કોઈ આશ્ચર્ય-યોગ્ય (વિરલ) જ હોય છે. (૧)

કિં નં ઇન્દ્ર જિઘાંસસિ ભ્રાતરો મરુતસ્તવં ।

તેભિઃ કલ્પસ્વ સાધુયા મા નંઃ સુમરણે વધીઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સભાપતિ વિદ્વાન્ ! જે અમે મસ્તઃ-મનુષ્યો તવ-આપના ભ્રાતરઃ-ભાઈઓ છીએ તે નઃ-અમને કિમ્-શું જિઘાંસસિ-મારવાની ઈચ્છા કરો છો ? તેભિઃ-તેઓ અમારી સાથે સાધુયા-ઉત્તમ કામથી કલ્પસ્વ-સમર્થ બનો અને સુમરણે-સંગ્રામમાં નઃ-અમને મા, વધીઃ-મારો નહિ. (૨)

ભાવાર્થ : જેઓ પોતાના ભાઈઓને પીડિત કરવા ઈચ્છે છે, તેઓ સદા સ્વયં પીડિત રહે છે અને જે બંધુઓની રક્ષા કરવા ઈચ્છે છે, તેઓ સમર્થ બને છે, જેઓ સર્વના ઉપકારક હોય છે, તેઓનું કાઈ પણ અપ્રિય = બૂઝું થતું નથી. (૨)

કિં નૌં ભ્રાતરગસ્ત્ય સખા સન્નતિ મન્યસે ।

विद्या हि ते यथा मनोस्मभ्यमिन्न दित्ससि ॥ ३ ॥

पदार्थ : હે અગસ્ત્ય-વિજ્ઞાનમાં શ્રેષ્ઠ ભ્રાતઃ-ભાઈ વિદ્વાન સખા-મિત્ર સન્-બનીને આપ ન:- અમને કિમ્-શું અતિ, મન્યસે-અત્યંત માન કરો છો ? અર્થાત્ અમારા માનનો ત્યાગ કરીને વર્તો છો ? યથા-જેમ તે-તમારા પોતાનું મન:-અન્તઃકરણ અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે હિ-જ ન, દિત્સસિ-આપવા ઈચ્છતા નથી અર્થાત્ અમારા માટે પોતાના અન્તઃકરણને ઉત્સાહિત કરવા ઈચ્છતા નથી ? તેમ ઇત્-જ તમને અમે વિદ્મ્-જાણીએ. (૩)

ભાવાર્થ : જેઓ જેઓના મિત્ર હોય, તેઓ મન, વચન, કર્મથી તેનું પ્રિય આચરણ કરે, જેટલું પોતાનું જ્ઞાન હોય, તેટલું મિત્રને સમર્પિત કરે. (૩)

अरं कृण्वन्तु वेदिं समग्निर्मिन्धतां पुरः ।

तत्रामृतस्य चेतनं यज्ञं तै तनवावहै ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે મિત્ર ! જેમ વિદ્વાનો જ્યાં પુર:-પ્રથમ વેદિમ્-જેથી પ્રાણી વિષયને જાણે છે, તે પ્રજ્ઞા અને અગ્નિમ્-અગ્નિની સમાન દેદીપ્યમાન વિજ્ઞાનને સમિન્ધતામ્-પ્રદીપ્ત કરે છે વા અરમ્-કૃણવન્તુ-સુશોભિત કરે છે, તત્ર-ત્યાં અમૃતસ્ય-વિનાશરહિત જીવમાત્ર તે-આપના ચેતનમ્-ચેતન અર્થાત્ જેથી જીવ સારી રીતે જાણી શકે છે અને યજ્ઞમ્-વિષયોને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તેનો અમે અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો તનવાવહૈ-વિસ્તાર કરીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ ઋત્વિક અને યજમાન યજ્ઞમાં સુગંધિત આદિ દ્રવ્યોને હોમીને વાયુ તથા જળની શુદ્ધિ કરીને સંસારને સુખથી સંસૃત્પ કરે છે, તેમ અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો બીજાઓના અન્તઃકરણોમાં વિદ્યા અને સુશિક્ષા સંસ્થાપિત કરીને, સર્વના સુખનો વિસ્તાર કરે-વિસ્તૃત કરે. (૪)

त्वमीशिषे वसुपते वसुनां त्वं मित्राणां मित्रपते धेष्ठः ।

इन्द्र त्वं मरुद्धिः सं वदस्वाध प्राशान ऋतुथा हवींषि ॥ ५ ॥

પદાર્થ : વસૂનામ્-જેણે ચોવીસ વર્ષ બ્રહ્મચર્ય ધારણ કરેલ છે અને પૃથિવ્યાદિની સમાન સહનશીલ છે તે વસુપતે-હે ધનોના સ્વામી ! ત્વમ્-તમે ઈંશિષે-ઐશ્વર્યવાન છો વા ઐશ્વર્ય વધારો છો.

હે મિત્રાણામ્-મિત્રોમાં મિત્રપતે-મિત્રોના પાલક શ્રેષ્ઠ મિત્ર ! ત્વમ્-તમે ધેષ્ઠ:-અત્યંત ધારણ કરનાર છો.

હે ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર્યપ્રદ ! ત્વમ્-તમે મરુદ્ધિઃ-વાયુની સમાન વર્તમાન વિદ્વાનોની સાથે સંવદસ્વ-સંવાદ કરો. અધ-તદનન્તર ઋતુથા-પ્રત્યેક ઋતુને અનુકૂળ હવીંષિ-ભોજન યોગ્ય અન્નનું પ્ર, અજ્ઞાન-સેવન કરો-ખાઓ. (૫)

ભાવાર્થ : જે ધનવાન લોકો સર્વના મિત્ર બનીને બહુ જ લોકોની સાથે સુસંસ્કૃત ભોજન કરે

છે અને વિદ્યા વૃદ્ધ વિદ્વાનોની સાથે સંવાદ કરે છે, તેઓ સમર્થ અને ઐશ્વર્યવાન બને છે. (૫)
સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૭૧)

સૂક્ત-૧૭૧

પ્રતિ વ એના નમસાહમેમિ સૂક્તેન ભિક્ષે સુમતિં તુરાણામ્ ।
રુરાણતાં મરુતો વેદ્યાભિર્નિ હેઠ્ઠો ધત્ત વિ મુચધ્વમશ્વાન્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-વિદ્વાનો ! અહમ્-હું એના આ નમસા-નમસ્કાર, સત્કાર વા અન્નથી વ:-તમારા પ્રતિ, એમ-પ્રતિ આવું છું અને સૂક્તેન-સુંદર કહેલ વિષયથી તુરાણામ્-શીઘ્રકારી જનોની સુમતિમ્-ઉત્તમ મતિને ભિક્ષે-માગું છું.

હે વિદ્વાનો ! તમે રાણતા-રમણ કરતા મનથી વેદ્યાભિ:-બીજાઓને બતાવવા યોગ્ય ક્રિયાઓથી હેડ:-અનાદરને નિ, ધત્ત-ધારણ કરો અર્થાત્ સત્કાર-અસત્કારના વિચારથી હર્ષ-શોક ન કરો અને અશ્વાન્-અત્યંત ઉત્તમ વેગવાન પોતાના ઘોડાને વિ, મુચધ્વમ્-છોડો. (૧)

ભાવાર્થ : જે (મનુષ્યો) શુદ્ધ અન્ત:કરણથી વિજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ ક્યાંય પણ અનાદર પ્રાપ્ત કરતા નથી. (૧)

એષ વ: સ્તોમો મરુતો નમસ્વાન્હૃદા તૃષ્ટો મનસા ધાયિ દેવા: ।

એપેમા યાત્ મનસા જુષાણા યૂયં હિ ષ્ઠા નમસ્ ઇદ્ વૃધાસ: ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે દેવા:-કામના કરનાર મસ્ત:-વિદ્વાનો ! જેથી એષ:-આ વ:-તમારા નમસ્વાન્-સત્કારાત્મક હૃદા-હૃદયસ્થ વિચારથી તૃષ્ટ:-વિધાન કરેલ સ્તોમ:-સત્કારાત્મક સ્તુતિ વિષય મનસા-મનથી ધાયિ-ધારણ કરવામાં આવે હિ-તેનું મનસા-મનથી જુષાણા:-સેવન કરીને યૂયમ્-તમે લોકો ઉપ, આ યાત-સમીપ આવો અને નમસ:-અન્નાદિ ઐશ્વર્યની ઇત્-જ ઈમ્-સર્વત્રથી વૃધાસ:-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત વા તેની વૃદ્ધિ કરનારા સ્થ-થાઓ. (૨)

ભાવાર્થ : જેઓ ધાર્મિક વિદ્વાનોનાં શીલનો સ્વીકાર કરે છે, તેઓ 'પ્રશંસિત' બને છે. (૨)

સ્તુતાસો મરુતો મૃલ્યન્તૂત સ્તુતો મઘવા શંભવિષ્ઠ: ।

ઋર્ધ્વા ન: સન્તુ કોમ્યા વનાન્યહાનિ વિશ્વા મરુતો જિગીષા ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-બળવાન વિદ્વાનો ! અમારાથી સ્તુતાસ:-સ્તુતિ કરેલ આપ ન:-અમને મૃલ્યન્તુ-સુખી કરો; ઋ-અને સ્તુત:-પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરીને મઘવા-સત્કાર કરવા યોગ્ય પુરુષ શંભવિષ્ઠ:-અત્યંત સુખની ભાવના કરનાર થાય.

હે મસ્ત:-શૂરવીરો ! જેમ ન:-અમારા વિશ્વા-સમસ્ત કોમ્યા-પ્રશંસનીય જિગીષા-જીતવા અને વનાનિ-સેવન કરવા યોગ્ય અહાનિ-દિવસો ઝઘ્વા-ઉત્કૃષ્ટ છે, તેમ તમારા સન્તુ-થાઓ. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જેઓમાં જેવા ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ હોય, તેની તેવી જ પ્રશંસા કરવી જોઈએ. તેઓ જ 'પ્રશંસિત' બની શકે છે, જે અન્યોના સુખની વૃદ્ધિને માટે પ્રયત્ન કરે.

જેઓ આ સંસારમાં પાપાયરણનો ત્યાગ કરીને ધાર્મિક બને છે, તેઓ પ્રતિદિન વિદ્યા અને સુશિક્ષાની વૃદ્ધિવાળા અને પુરુષાર્થી બને છે. (૩)

અસ્માદ્દહં તવિષાદીષમાણુ ઇન્દ્રાદ્વિયા મરુતો રેજમાનઃ ।

યુષ્મભ્યં હૃવ્યા નિશિતાન્યાસન્તાન્યારે ચક્રમા મૃલતા નઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મસ્ત:-પ્રાણ સમાન પ્રિય સભાસદો ! અસ્માત્-આ તવિષાત્-અત્યંત બળવાનથી ઈષમાણ:-ઐશ્વર્ય કરીને તથા ઇન્દ્રાત્-પરમૈશ્વર સભાપતિ અને સેનાપતિથી ધિયા-સર્વની સાથે રેજમાન:-કમ્પીને અહમ્-હું આ નિવેદન કરું છું, કે જે યુષ્મભ્યમ્-તમારા માટે હૃવ્યા-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય નિશિતાનિ-શસ્ત્ર-અસ્ત્ર તીવ્ર આસન્-છે, તાનિ-તેને અમે આરે-સમીપ ચક્રમ્-કરીએ અને તેનાથી ન:-અમને તમારા જેવા મૃલત-સુખી કરો, તેમ અમે પણ તમને સુખી કરીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જ્યારે કોઈ રાજપુરુષ દ્વારા અન્યાયપૂર્વક પીડિત થયેલ પ્રજાજન સભામાં પોતાનું દુઃખ નિવેદિત કરે, ત્યારે તેના હૃદયના (દુઃખ રૂપ) શૂલને (ન્યાયાધીશ) કાઢી નાખે. જેથી રાજપુરુષ ન્યાય પર ચાલે અને પ્રજાજન પ્રસન્ન રહે. જેટલા સ્ત્રી પુરુષો હોય, તેઓ શસ્ત્રાસ્ત્રનો અભ્યાસ કરે. (૪)

યેનુ માનાસશ્ચિતયન્ત ઉસ્ત્રા વ્યુષ્ટિષુ શર્વસા શશ્વતીનામ્ ।

સ નો મરુદ્ધિર્વૃષભ શ્રવો ધા ઉગ્ર ઉગ્રેભિઃ સ્થવિરઃ સહોદાઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : યેન-જેના શર્વસા-બળથી વર્તમાન શશ્વતીનામ્-સનાતન વ્યુષ્ટિષુ-અનેક પ્રકારની વસ્તિઓમાં ઉસ્ત્રા:-મૂળ રાજ્યમાં પરંપરાથી નિવાસ કરીને માનાસ:-વિચારવાન વિદ્વાનજન પ્રજાજનોને ચિતયન્તે-ચેતન કરે છે.

હે વૃષભ-સુખોની વર્ષા કરનાર સેનાપતિ ! ઉગ્રેભિઃ-તેજસ્વી મસૃદ્ધિઃ-વિદ્વાનોની સાથે ઉગ્ર:-તીવ્ર સ્વભાવ સ્થવિરઃ-કૃતજવૃદ્ધ સહોદાઃ-બળ પ્રદાતા આપ શ્રવઃ-અન્ન આદિ પદાર્થોને ધા:-ધારણ કરો અને સઃ-તે આપ નઃ-અમારા રાજા થાઓ. (૫)

ભાવાર્થ : જે સભામાં રાજ્ય સ્થાપનમાં સહયોગી અથવા તેના કુળમાં ઉત્પન્ન, શાસ્ત્રવેતા, ધાર્મિક સભાસદ સત્ય ન્યાય કરે અને જ્યાં વિદ્યાવૃદ્ધ તથા વયોવૃદ્ધ સભાપતિ હોય, ત્યાં અન્યાયનો પ્રવેશ થતો નથી. (૫)

त्वं पाहीन्द्र सहीयसो नृन्भवा मरुद्भिरवयातेहेळाः ।

सुप्रकेतेभिः सासहिर्दधानो विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે **इन्द्र**-સભાપતિ ! **त्वम्**-આપ **सुप्रकेतेभिः**-સુંદર ઉત્તમ જ્ઞાનવાન **मरुद्भिः**-પ્રાણની સમાન રક્ષક વિદ્વાનોની સાથે **सहीयसः**-અત્યંત બળયુક્ત સહનારા **नृन्**-મનુષ્યોની **पाहि**-રક્ષા કરો અને **अवयातहेळाः**-જેનાથી દૂર થયેલ અનાદર અપકીર્તિભાવ એવા **भव**-થાઓ.

જેમ **इषम्**-વિદ્યાયોગથી ઉત્પન્ન થયેલ બોધ, **वृजनम्**-બળ અને **जीरदानुम्**-જીવાત્માને **दधानः**-ધારણ કરીને **सासहिः**-સહનશીલ બનો છો, તેવા બનીને અમે એને **विद्याम**-જાણીએ. (૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો કોઈ આદિ દોષોથી રહિત; વિદ્યા, વિજ્ઞાન તથા ધર્મથી યુક્ત અને ક્ષમાશીલ બનીને સજ્જનોની સાથે અદંડનીયોની (નિરપરાધીઓની) રક્ષા કરે છે અને દંડનીયોને દંડ આપે છે, તેઓ જ રાજ્ય કર્મચારી બની શકે છે. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાનોના કૃત્યોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૭૧)

सूक्त-१७२

चित्रो वौऽस्तु यामश्चित्र ऊती सुदानवः । मरुतो अहिभानवः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે **ऊति**-રક્ષા આદિની સાથે વર્તમાન **अहिभानवः**-મેઘના પ્રકાશક **सुदानवः**-સમ્યક્ દાનશીલ અને **मस्तः**-પ્રાણ સમાન વર્તમાનજનો ! જેમ વાયુનું **चित्रः**-અદ્ભુત **यामः**-(કાર્ય) કરવું વા **चित्रः**-ચિત્ર-વિચિત્ર સ્વભાવ છે, તેમ **वः**-તમારો **अस्तु**-થાય. (૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વાયુના જીવન પ્રદાન, વર્ષા કરાવવી આદિ અદ્ભુત કાર્યો છે, તેમ તમારા પણ થાઓ. (૧)

आरे सा वः सुदानवो मरुत ऋञ्जती शरुः । आरे अश्मा यमस्यथ ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે **सुदानवः**-પ્રશસ્ત દાનકર્તા **मस्तः**-વાયુની સમાન બળવાન વિદ્વાનો ! **वः**-તમારી જે **ऋञ्जती**-પચાવતી, સળગાવતી **शरुः**-દુષ્ટોનો વિનાશ કરતી બે ધારી તલવાર છે, **सा**-તે અમારાથી **आरे**-દૂર રહે અને **यम्**-જે વિશેષ શસ્ત્રને **अश्मा**-તમે મેઘની સમાન **अस्यथ**-છોડો છો, તે અમારી **आरे**, સમીપ રહે. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો મેઘની સમાન સુખદાયી અને દુષ્ટોનો ત્યાગ કરનાર (બનીને) શ્રેષ્ઠોની સમીપ તથા દુષ્ટોથી દૂર વસે છે, તેઓ સંગ કરવા યોગ્ય હોય છે. (૨)

तृणस्कन्दस्य नु विशः परि वृङ्क्त सुदानवः । ऊर्ध्वान्न कर्त्त जीवसे ॥ ३ ॥

अग्नेत्वाप्य

७२५

પદાર્થ : હે સુદાનવ:-ઉત્તમદાતા ! તમે તૃણસ્કન્દસ્ય-જે તૃણ = ઘાસને પ્રાપ્ત અર્થાત્ તણખલા જેવો લોભ કરનાર વા બીજાઓને તે લોભમાં પહોંચાડનારા તેની વિશ:-પ્રજાને નુ-શીઘ્ર પરિ, વૃક્ત-સર્વત્રથી ત્યાગો અને જીવસે-જીવનને માટે ન:-અમને ઝઘ્વાન્-ઉત્કૃષ્ટ કર્ત્-કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ સર્વ પ્રજાઓની રક્ષા કરે છે, તેમ સભાપતિ (= રાજા) વર્તાવ કરે. જે રીતે પ્રજાની પીડા (દુઃખ) નાશ પામે અને મનુષ્યો શ્રેષ્ઠ અને દીર્ઘજીવી બને, તેવા કાર્યો સર્વેએ કરવા જોઈએ. (૩)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વાયુની સમાન વિદ્વાનોના ગુણોની પ્રશંસા હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૭૨)

સૂક્ત-૧૭૩

ગાયત્સામં નભન્યં^૧ યથા વેરર્ચીમ્ તદ્વાવૃધાનં સ્વર્વત્ ।

ગાવો^૧ ધેનવો^૧ બર્હિષ્યદબ્ધ્યા આ યત્સદ્વાનં દિવ્યં વિવાસાન્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે યત્-જે સ્વર્વત્-સુખ સંબંધી વા સુખોત્પાદક વૃધાનમ્-અત્યંત વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત નભન્યમ્-આકાશમાં સાધુ અર્થાત્ ગગનમંડળમાં વ્યાપ્ત સામ-સામ ગાનને વિદ્વાન આપ યથા-જેમ વે:-સ્વીકાર કરો, તેમ ગાયત-ગાન કરો.

બર્હિષિ-અન્તરિક્ષમાં જે ગાવ:-કિરણો છે તેની સમાન જે અદબ્ધ્યા:-અહિંસનીય ધેનવ:-દૂધારી ગાયો દિવ્યમ્-મનોહર સદ્ માનમ્-જેમાં સ્થિત થાય છે-તે ધરનું આ, વિવાસાન્-સારી રીતે સેવન કરે, તત્-તે સામગાન અને તે ગાયોને અમે અર્ચામ-સત્કાર કરીએ. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ કિરણો અન્તરિક્ષમાં ફેલાઈને સર્વને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ અમારે વિદ્યાથી સર્વના અન્ત:કરણને પ્રકાશિત કરવા જોઈએ.

જેમ પક્ષીઓ આધાર વિના આકાશમાં જાય-આવે છે, તેમ વિદ્વાનોની અને ભૂગોળોની ગતિ છે. (૧)

અર્ચદ્વૃષા વૃષભિઃ સ્વેદુહવ્યૈર્મૃગો નાશ્નો અતિ યજ્ઞુર્ગુર્યાત્ ।

પ્ર મન્દ્યુર્મનાં ગૂર્ત્ત્ હોતા ભરતે મર્યો મિથુના યજ્ઞત્રઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વૃષા-સત્યોપદેશ રૂપી શબ્દોની વર્ષા કરનાર, અશ્વન:-શુભ ગુણોમાં વ્યાપ્ત, મન્દ્યુઃ-પોતાની પ્રશંસા ઇચ્છનાર, હોતા, દાનશીલ, યજ્ઞત્રઃ-સંગ કરનાર, મર્યઃ-મરણ ધર્મી મનુષ્ય, સ્વેદુહવ્યૈઃ-સ્વયં પ્રકાશિત કરેલ દાન-આદાનના વ્યવહારો અને વૃષભિઃ-ઉપદેશકોની સાથે યત્-જે મૃગ:-હરણની ન-સમાન અતિ,-જુગુર્યાત્-અત્યંત ઉદમ = પુરુષાર્થ કરે અને ભરતે-ધારણ કરીને, મનામ્-મનનશીલોનો સંગ અર્ચત્-પ્રશંસિત કરે; વા જેમ મિથુના-સ્ત્રી પુરુષ બન્ને મળીને સંગ ધર્મને

કરે, તેમ તમે પ્ર, ગૂર્ત-ઉત્તમ પુરુષાર્થ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ સ્વયંવર-વિધિથી વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર ઉદ્યોગ કરીને હરણની સમાન વેગથી ગૃહકાર્યોને સિદ્ધ કરીને, વિદ્વાનોના સંગથી સત્યનો સ્વીકાર કરીને તથા અસત્યનો ત્યાગ કરીને પરમેશ્વરની (ઉપાસના) અને વિદ્વાનોનો સત્કાર કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યો એ રીતે સંગ કરનારા થાય. (૨)

નક્ષ્વોતા પરિ સદ્મ મિતા ચન્ભરદ્ભમા શરદઃ પૃથિવ્યાઃ ।

ક્રન્દદશ્વો નયમાનો રુવદ્દૌરન્તર્દૂતો ન રોદસી ચરદ્વાક્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હોતા-ગ્રહણ કરનાર મિતા-પ્રમાણયુક્ત પદ્મ-ધરોને નક્ષત્ર-પ્રાપ્ત થાય છે; વા શરદઃ-શરદ્ ઋતુ સંબંધી પૃથિવ્યાઃ-પૃથિવીનાં ગર્ભમ્-ગર્ભને આ, ભરત્-પૂર્ણ કરે છે, વા નયમાનઃ-પદાર્થોને પહોંચાડીને અશ્વઃ-ઘોડાની સમાન ક્રન્દત્-શબ્દ હણહણે છે; વા ગૌઃ-વૃષભની સમાન સ્વત્-શબ્દ કરે છે; વા દૂતઃ-સમાચાર પહોંચાડનાર દૂતની ન-સમાન વા વાગ્-વાણીની સમાન રોદસી-આકાશ અને પૃથિવીના અન્તઃ-મધ્યમાં ચરત્-વિચરણ કરે છે, તેમ આપ પરિચન્-પર્યટન કરો.

ભાવાર્થ : જેમ ઘોડા અને ગાયો પરિમિત માર્ગ પર જાય છે, તેમ અગ્નિ નિયત દેશ સુધી જાય છે. જેમ ધાર્મિકજનો પોતાની વસ્તુ ગ્રહણ કરે છે, તેમ ઋતુઓ પોતાના લક્ષણોને પ્રાપ્ત થાય છે. જેમ ઘુલોક અને પૃથિવીલોક સાથે વર્તમાન છે, તેમ વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષો વર્તાવ કરે. (૩)

તા ક્ર્માર્ષતરાસ્મૈ પ્ર ચ્ચૌલાનિ દેવ્યન્તો ભરન્તે ।

જુજોષ્વિન્દ્રો દ્સ્મર્વર્ચા નાસત્યેવ સુગ્મ્યો રથેષ્ઠાઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ દેવ્યન્તઃ-પોતાને વિદ્વાનોની ઈચ્છા કરનારા સજ્જનો અસ્મૈ-જે અષ્ટતા-અત્યંત પદાર્થો અને ચ્ચૌલાનિ-એ આગળ કહેવા યોગ્ય ઐશ્વર્ય ઈચ્છુક સભાપતિ આદિને માટે સ્તુતિઓને પ્ર, ભરન્તે-સમ્યક્ ધારણ કરે છે, તા-તેના દ્સ્મર્વર્ચાઃ-શત્રુઓમાં જેનું પરાક્રમ વર્તે છે, તે સુગ્મ્યઃ-સુખ-સાધન પદાર્થોમાં ઉત્તમ રથેષ્ઠાઃ-રથમાં બેસનાર ઇન્દ્રઃ-ઐશ્વર્ય ઈચ્છુક નાસત્યેવ-સૂર્ય અને ચંદ્રમાની સમાન જુજોષ્ત્-સેવે, તેમ અમે કર્મ-કરીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જે સૂર્ય અને ચંદ્રમાની સમાન શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોથી પ્રકાશિત થઈને આપ્તોની સમાન આચરણ કરે છે, તેઓ શું સુખ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી ? (૪)

તમ્ પ્ષ્ટુહીન્દ્રં યો હ સત્વા યઃ શૂરો મ્ઘવા યો રથેષ્ઠાઃ ।

પ્રતીચ્ચિદ્યોધીયાન્વૃષ્ણવાન્વવ્બુષ્ણિચ્ચત્તમસો વિહન્તા ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ યઃ-જે સત્વા-બળવાન યઃ, ચિત્-અને જે શૂરઃ-શૂર મઘવા-પરમ પૂજિત ધનયુક્ત યઃ ચિત્-અને જે રથેષ્ઠાઃ-રથમાં સ્થિર થનાર યોધીયાન્-અત્યંત યુદ્ધશીલ, વૃષ્ણવાન્-બળવાન, પ્રતીચ્-પ્રતિ પદાર્થ પ્રાપ્ત કરનાર, વવ્બુષ્ણઃ-રૂપયુક્ત, તમસઃ-અંધકારનો વિહન્તા-વિનાશ

કરનાર સૂર્યની સમાન છે, તમ્, ડ, હ-તેવા જ ઇન્દ્રમ્-એશ્વર્યવાન સેનાપતિની સ્તુતિ-પ્રશંસા કરો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે પ્રશંસિત કર્મ કરે તેની સ્તુતિ કરવી જોઈએ અને જે નિંદનીય કર્મ કરે તેની નિંદા કરવી જોઈએ.

સત્ય ભાષણ કરવું એ સ્તુતિ છે અને કોઈ વિષયમાં મિથ્યા પ્રલપન-બકવું તે નિંદા છે. (૫)

પ્ર યદિત્થા મહિના નૃભ્યો અસ્ત્યરં રોદસી કક્ષ્યેરૂ નાસ્મૈ ।

સં વિવ્ય ઇન્દ્રો વૃજનં ન ભૂમા ભર્તિ સ્વધાવાં ઓપ્શમિવ દ્યામ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : યત્-જે ઇન્દ્ર:-સૂર્યના વૃજનમ્-બળની ન-સમાન ભૂમ-બહુ જ પદાર્થોને સમ્, વિવ્યે-સમ્યક્ સ્વીકાર કરનાર અને સ્વધાવાન્-અન્ન આદિ પદાર્થોવાળું આ સૂર્યમંડળ ઓપ્શમિવ-અત્યંત એકમાં મળેલ-પદાર્થની સમાન દ્યામ્-પ્રકાશને પ્ર, ભર્તિ-ધારણ કરીને અસ્મૈ-એને માટે કક્ષ્યે-પોત-પોતાની કક્ષામાં પ્રસિદ્ધ થયેલ રોદસી-દુલોક અને પૃથિવીલોક ન, અસ્મ્-પરિપૂર્ણ થતા નથી. ઇત્યા-એ રીતે મહિના-પોતાના મહિમાથી નૃભ્ય:-અગ્રણી મનુષ્યોને માટે પરિપૂર્ણ અસ્મસ્તિ-સમર્થ છે. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રકાશરહિત પૃથિવી આદિ પદાર્થો સર્વને ઢાંકી દે છે, તેમ સૂર્ય પોતાના પ્રકાશથી સર્વને આસ્થાદિત કરી દે છે. જેમ પાર્થિવ પદાર્થોને પૃથિવી ધારણ કરે છે, તેમ સૂર્ય ભૂગોળોને ધારણ કરે છે. (૬)

સમત્સુ ત્વા શૂર સતામુરાણં પ્રપથિન્તમં પરિતંસયધ્યૈ ।

સજોષસ ઇન્દ્રં મદે ક્ષોણીઃ સૂરિં ચિદ્દે અનુમદન્તિ વાજૈઃ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે શૂર-દુષ્ટોને મારનાર સેનાધીશ ! યે-જેઓ સજોષસ:-સમાન પ્રીતિ સેવનારા સમત્સુ-સંગ્રામોમાં પરિતંસયધ્યૈ-સર્વત્રથી આભૂષિત કરવા માટે સતામ્-સત્પુરુષોમાં ઝાણમ્-અધિક બળ કરીને પ્રપથિન્તમમ્-આવશ્યકતાથી ઉત્તમ પથગામી ઇન્દ્રમ્-સેનાપતિ ત્વા-તને મદે-હર્ષ-આનંદને માટે ક્ષોણીઃ-ભૂમિઓને સૂરિમ્-વિદ્વાનની ચિત્-સમાન વાજૈઃ-વેગાદિ ગુણયુક્ત વીર વા અશ્વાદિની સાથે અનુ, મદન્તિ-અનુમોદ-આનંદ આપે છે, તેને તું પણ આનંદિત કર. (૭)

ભાવાર્થ : તેઓ જ વેર-રહિત મનુષ્યો છે, જે પોતાની સમાન અન્ય પ્રાણીઓને જાણે છે. તેઓના જ રાજ્યની વૃદ્ધિ-ઉન્નતિ થાય છે, જે સત્યપુરુષોની જ સંગતિ પ્રતિદિન કરે છે. (૭)

एवा हि ते शं सर्वना समुद्र आपो यत्त आसु मदन्ति देवीः ।

विश्वा ते अनु जोष्या भूद् गौः सूरिंश्चिद्यदि धिषा वेषि जनान् ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ ! સમુદ્રે-અન્તરિક્ષમાં આપ:-જળની સમાન તે-આપનાં હિ-જ સવના-એશ્વર્ય શમ્-સુખ એવ-જ કરે છે; વા તે-આપની દેવીઃ-દિવ્યગુણ સંપન્ન વિદુષી યત્-જ્યારે આસુ-

એ જળમાં મદન્તિ-હર્ષિત થાય છે.

આપ **યદિ-ધિષા-ઉત્તમ બુદ્ધિથી સૂરીન્-વિદ્વાન્ ચિત્-માત્ર જનાન્-જનોને વેષિ-ચાહો છો, ત્યારે તે-આપની વિશ્વા-સમસ્ત ગૌ:-વિદ્યા, સુશિક્ષાયુક્ત વાણી અનુ, જોષ્યા-અનુકૂળતાથી સેવન યોગ્ય ભૂત-બને છે. (૮)**

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય આકાશમાં મેઘને પહોંચાડીને સર્વને સુખી કરે છે, તેમ સત્પુરુષનું ઐશ્વર્ય વૃદ્ધિ પામીને સર્વને આનંદિત કરે છે. જેમ પુરુષો વિદ્વાન બને છે, તેમ સ્ત્રીઓ પણ બને. (૮)

અસામ્ યથા સુષ્ઠ્વાય એન સ્વભિષ્ટયો નરાં ન શંસૈઃ ।

અસદ્વથા ન ઇન્દ્રો વન્દનેષ્ટાસ્તુરો ન કર્મ નયમાન ઉક્થા ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે **એન-પુરુષાર્થથી સુખોને પ્રાપ્ત વિદ્વાન્ ! યથા-જેમ સ્વભિષ્ટય:-સુંદર અભિપ્રાય અને સુસખાય:-જેના ઉત્તમ મિત્ર છે, તે અમે નરામ્-અગ્રણી પ્રશંસિત પુરુષોની શંસૈ:-પ્રશંસાઓની ન-સમાન ઉત્તમ ગુણોથી આપને પ્રાપ્ત અસામ-થઈએ.**

યથા-જેમ વન્દનેષ્ટા:-સ્તુતિમાં સ્થિર થઈને તુર:-શીઘ્રકારી ઇન્દ્ર:-પરમૈશ્વર્યયુક્ત મિત્ર કર્મ-ધર્મયુક્ત કર્મની ન-સમાન ન:-અમારા ઉક્થા-પ્રશંસિત વિદ્વાનોને નયમાન:-પ્રાપ્ત કરતા વા કરાવતા અસત્-હોય તેવું આચરણ અમે કરીએ. (૯)

ભાવાર્થ : જે લોકો સર્વ પ્રાણીઓ પ્રત્યે મિત્ર ભાવથી વર્તાવ રાખે છે, તેઓ સર્વના દ્વારા ‘અભિનંદનીય’ બને છે.

જે સર્વને ઉત્તમ બોધ પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેઓ ‘અત્યુત્તમ વિદ્વાવાન્’ બને છે. (૯)

વિષ્પર્ધસો નરાં ન શંસૈરસ્માકાસદિન્દ્રો વજ્રહસ્તઃ ।

મિત્રાયુવો ન પૂર્પતિં સુશિષ્ટૌ મધ્યાયુવ ઉપ શિક્ષન્તિ યજ્ઞૈઃ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : **વજ્રહસ્ત:-જેના હાથમાં શસ્ત્ર અને અસ્ત્રોની શિક્ષા છે તે ઇન્દ્ર:-સભાપતિ અસ્માક-અમારા અસત્-હોય અર્થાત્ અમારા રક્ષક હોય એવી નરામ્-ધર્મની પ્રાપ્તિ કરાવનારા પુરુષોની શંસૈ:-પ્રશંસાયુક્ત વિવાદોની ન-સમાન વાદાનુવાદથી વિષ્પર્ધસ;-પરસ્પર વિશેષતાથી સ્પર્ધા-ઈર્ષ્યા કરે છે.**

મિત્રાયુવ:-પોતાના મિત્ર ઈચ્છતા જનોની ન-સમાન મધ્યાયુવ:-મધ્યસ્થ ઈચ્છતા વિદ્વાનજનો સુશિષ્ટૌ-સુશિક્ષાને નિમિત્ત યજ્ઞૈઃ-અધ્યયન, અધ્યાપન અને ઉપદેશ કરવો અને સંગ-મેળમિલાપ કરવો વગેરે કર્મોથી પૂર્પતિમ્-પુરી-નગરીઓના પાલક સભાપતિ-રાજાને ઉપ, શિક્ષન્તિ-ઉપ શિક્ષા આપે છે. અર્થાત્ તેની સમીપ જઈને તેને ભલા-બૂરાનાં ભેદ શિખવે છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ સત્ય આચરણમાં સ્પર્ધા કરનારા, સર્વના મિત્ર, પક્ષપાતરહિત અને સત્ય કાર્ય કરનારા લોકો સત્યનો ઉપદેશ કરે છે, તેમ સભાપતિ-રાજા પ્રજાઓની પ્રત્યે વર્તાવ કરે. (૧૦)

यज्ञो हि ष्वेन्द्रं कश्चिद्वृन्धञ्जुहुराणश्चिन्मनसा परियन् ।

तीर्थे नाच्छा तातृषाणमोको दीर्घो न सिध्मा कृणोत्यध्वा ॥ ११ ॥

પદાર્થ : કશ્ચિત્-કોઈ યજ્ઞ:-રાજધર્મ હિ, ષ્વ-નિષ્પયથી જ ઇન્દ્રમ્-સભાપતિની વ્ર્ધન્-ઉન્નતિ કરીને; વા મનસા-વિચારની સાથે જુહુરાણ:-દુષ્ટજનોમાં કુટિલ ક્રિયા અર્થાત્ કુટિલતાથી વર્તીને ચિત્-તે પરિચન્-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થઈને તીર્થે-જળાશયના ન-સમાન સ્થાનમાં અચ્છ-સમ્યક્ તાતૃષાણમ્-જેમ નિરંતર તૃષાતુરને દીર્ઘ:-બૃહત્ ઓક:-સ્થાન મળે, ન-તેમ અધ્વા-સન્માનમાર્ગરૂપ થઈને સિધ્મ-શીઘ્રતાને આ, કૃણોતિ-સારી રીતે કરે છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : પૂર્વ મંત્રમાં અતિ શીઘ્રતાથી રક્ષા ઈચ્છતા વિદ્વાન-બુદ્ધિમાનજન શિક્ષા કરવા રૂપ આદિ યજ્ઞોથી પોતાની પુરી-નગરીના પાલક રાજાની સમીપ જઈને શીક્ષા આપે છે, એ જે વિષય કહેલ ત્યાં યજ્ઞથી શીઘ્રતાનો ઉપદેશ કરતા યજ્ઞો હિ-એ મંત્રથી ઉપદેશ કરે છે.

સુખની વૃદ્ધિ ઈચ્છે, તે સર્વે ધર્મનું આચરણ કરે, જો પરોપકાર કરવા ઈચ્છે, તો સત્યનો ઉપદેશ કરે. (૧૧)

મો ષૂ ણં ઇન્દ્રાત્ર પૃત્સુ દેવૈરસ્તિ હિ ષ્મા તે શુષ્મિન્નવ્યાઃ ।

મહશ્ચિદ્વસ્ય મીદુષો યવ્યા હવિષ્મતો મરુતો વન્દતે ગીઃ ॥ ૧૨ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ કરાવનાર વિદ્વાન્ ! આપ અત્ર-અહીં દેવૈઃ-વિદ્વાન વીરોની સાથે ન:-અમારા પૃત્સુ-સંગ્રામોમાં હી-જે કારણે સુ, અસ્તિ-સમ્યક્ સહાયકારી છો. સ્મ-જ.

હે શુષ્મિન્-અત્યંત બળવાન અવ્યા:-જે વિરુદ્ધ પ્રાપ્ત થતા નથી એવા આપ યસ્ય-જે મીદુષ:-સિંચનારા હવિષ્મત:-બહુ જ વિદ્યાદાન સંબંધી મહ:-મહાન તે-આપ મસ્ત:-વિદ્વાનની યવ્યા-નદીની સમાન ગીઃ-સત્યગુણોથી યુક્ત વાણી વન્દતે-સ્તુતિ કરતી અર્થાત્ સર્વ પદાર્થોની પ્રશંસા કરતી ચિત્-જેવી વર્તમાન છે. આપ મો-મારો નહિ. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે બળને પ્રાપ્ત કરે, તે સજ્જનોના પ્રત્યે શત્રુની સમાન વ્યવહાર ન કરવો. સદા આપનો ઉપદેશ સ્વીકાર કરવો, અન્યનો નહિ. (૧૨)

एषः स्तोमं इन्द्र तुभ्यमस्मे एतेन गातुं हरिवो विदो नः ।

आ नो ववृत्याः सुविताय देव विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ १३ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-સુખદાતા ઇન્દ્ર-પ્રશંસિત ઐશ્વર્યવાન્ ! જે ઇષ:-આ અસ્મે-અમારી સ્તોમ:-સ્તુતિપૂર્વક ચાહના છે, તે તુભ્યમ્-તમારા માટે છે.

હે હરિવ:-પ્રશંસિત ઘોડાવાળા ! આપ એતેન-એ ન્યાયથી ગાતુમ્-ભૂમિ અને ન:-અમને વિદ:-પ્રાપ્ત થાઓ. ન:-અમારા સુવિતાય-ઐશ્વર્યને માટે આ, વવૃત્યા:-આ વર્તમાન થાઓ, જેથી અમે ઇષમ્-

ઈચ્છાસિદ્ધિ, વૃજનમ્-સન્માર્ગ અને જીરદાનુમ્-દીર્ઘ જીવનને વિદ્યામ્-પ્રાપ્ત કરીએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : કોઈ ભદ્ર-ભલા મનુષ્યોએ, પોતાના મોઢે પોતાની પ્રશંસા ન કરવી જોઈએ. અન્ય દ્વારા કરેલી પોતાની પ્રશંસા સાંભળીને પ્રમાદ ન કરવો જોઈએ.

જેમ પોતાની ઉન્નતિની કામના કરવામાં આવે, તેમ અન્યોની ઉન્નતિની સદા કામના કરવી જોઈએ. (૧૩)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાનોના વિષયનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૭૩)

સૂક્ત-૧૭૪

ત્વં રાજેન્દ્ર યે ચ દેવા રક્ષા નૃન્પાહ્યસુર ત્વમસ્માન્ ।

ત્વં સત્પતિર્મઘવાં નસ્તરુત્રસ્ત્વં સત્યો વસવાનઃ સહોદાઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-પરમૈશ્વર્યયુક્ત ! ત્વમ્-આપ સત્પતિઃ-વેદ વા સજ્જનોના પાલક મઘવા-પરમ પ્રશંસિત ધનવાન નઃ-અમને તસ્ત્રઃ-દુઃખ રૂપી સમુદ્રથી પાર ઉતારનારા છો; ત્વમ્-આપ સત્યઃ-સજ્જનોમાં ઉત્તમ વસવાનઃ-ધન પ્રાપ્તિ કરાવનાર છો, સહોદાઃ-બળપ્રદ છો તથા ત્વમ્-આપ રાજા-ન્યાય અને વિનયથી પ્રકાશમાન રાજા છો, એથી એ અસુર-મેઘની સમાન ત્વમ્-આપ અસ્માન્-અમારું નૃન્-મનુષ્યોનું પાહિ-પાલન કરો. યે, ચ-અને જે દેવાઃ-સદ્ગુણોવાળા ધર્માત્મા વિદ્વાનો છે, તેઓની રક્ષ-રક્ષા કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જે રાજા બનવા ઇચ્છે, તે ધાર્મિક વિદ્વાન સત્પુરુષોને અમાત્ય = મંત્રી રાખીને તેના દ્વારા પ્રજાઓનું પાલન કરાવે. જે સત્યાચારી, બળવાન અને સત્સંગી હોય છે, તે રાજ્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧)

દનો વિશં ઇન્દ્ર મૃધ્વાચઃ સપ્ત યત્પુરઃ શર્મ શારદીર્દર્ત્ ।

ઋણોરપો અનવઘ્વાર્ણા યૂને વૃત્રં પુસ્કુત્સાય રન્ધીઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-વિદ્યુત્ અગ્નિની સમાન વર્તમાન ! યત્-જે આપ સપ્ત-સાત શારદીઃ-શરદ્ ઋતુ સંબંધી પુરઃ-શત્રુઓનાં નગર અને શર્મ-શત્રુનાં ઘરને દર્ત્-વિદારણ કરનાર છો. મૃધ્વાચઃ-જેની પ્રવૃદ્ધ વાણી છે, તે વિશઃ-પ્રજાઓને દનઃ-શિક્ષા આપીને રાજ્યને અનુકૂળ શાસન આપો છો.

હે અનવઘ્-પ્રશંસાને પ્રાપ્ત રાજન્ ! જેમ સૂર્યમંડળ પુસ્કુત્સાય-બહુ જ વજરૂપી પોતાના કિરણો જેમાં વિદ્યમાન છે, તે યૂને-તરુણ પ્રબળતર વા સુખ-દુઃખથી મળતા ન મળતા સંસારને માટે વૃત્રમ્-મેઘને પ્રાપ્ત કરાવીને અર્ણાઃ-નદી સંબંધી અપઃ-જળને વર્ષાવે છે, તેમ આપ ઋણોઃ-પ્રાપ્ત થાઓ. રન્ધીઃ-સારી રીતે કાર્ય સિદ્ધિ કરાવનારા થાઓ. (૨)

ભાવાર્થ : રાજાએ શત્રુઓના નગરો અને વીરોના સ્થાનાદિને નષ્ટ કરીને તેનું (શત્રુઓનું) નિવારણ
અગ્નિવેદભાષ્ય

કરવું જોઈએ.

જેમ સૂર્ય જળથી સંસારની રક્ષા કરે છે, તેમ રાજાએ પ્રજાની રક્ષા કરવી જોઈએ. (૨)

અજા વૃત્તં ઇન્દ્ર શૂરપત્નીર્દ્યાં ચ ચેભિઃ પુરુહૂત નૂનમ્ ।

રક્ષો અગ્નિમશુષ્ણં તૂર્વયાણં સિંહો ન દમે અપાંસિ વસ્તોઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે પુરુહૂત-બહુજનોથી સત્કૃત, ઇન્દ્ર-શત્રુદળના નાશક, વૃત્તઃ-રાજ્યાધિકારમાં સ્વીકૃત રાજા ! આપ ચેભિઃ-જેની સાથે શૂરપત્નીઃ-શૂરોની પત્ની તથા દ્યાઞ્ચ-પ્રકાશને નૂનમ્-નિશ્ચિત્ અજ-જાણો. તેની સાથે સિંહઃ-સિંહની ન-સમાન દમે-ઘરમાં અપાંસિ-કામોને વસ્તોઃ-રોકવા માટે તૂર્વયાણમ્-શીઘ્ર ગમનશીલ યાન જેનાથી સિદ્ધ થાય છે, તે અશુષ્ણમ્-શોષ રહિત જેમાં અર્થાત્ લોહું, ત્રાંબુ, પીતળ આદિ ધાતુઓ ઓગાળીને દ્રવ થાય તે અગ્નિમ્-અગ્નિને રક્ષો-અવશ્ય રાખો. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ સિંહ પોતાના ઘર (= સ્થાન) માં બળપૂર્વક સર્વને રોકી લે છે, (તેમ) રાજા પોતાનાં બળથી પોતાનાં ઘર (= રાજ્ય)માં પ્રવલ્ન કરે.

સમ્યક્ પ્રકારથી પ્રયોગ કરેલ જે અગ્નિથી યાન શીઘ્ર ચાલે છે, તેથી સંયુક્ત યાનમાં બેસીને (રાજા આદિ) પત્ની સહિત ઈતસ્તતઃ આવાગમન કરે. (૩)

શેષન્નુ ત ઇન્દ્ર સસ્મિન્યોનો પ્રશસ્તયે પવીરવસ્ય મહ્વા ।

સૃજદર્ણાસ્યવ્ યદ્યુધા ગાસ્તિષ્ઠ્વદ્ધરી ધૃષ્ણતા મૃષ્ટ વાજાન્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સેનાપતિ ! પ્રશસ્તયે-તારી ઉત્કર્ષતાને માટે સસ્મિન્-તે યોનો-સ્થાનમાં વા સંગ્રામમાં તે-તારા પવીરવસ્ય-વજની ધ્વનિના મહ્વા-મહિમાથી નુ-શીઘ્ર શેષન્-શત્રુજન સૂઈ જાય.

યત્-જે સંગ્રામમાં સૂર્ય જેમ અર્ણાસિ-જલને અવ, સૃજત્-ઉત્પન્ન કરે અર્થાત્ મેઘને વરસાવે, તેમ યુધા-યુદ્ધથી ગાઃ-ભૂમિ અને જે યાનોને લઈ જનારા ઘોડાઓને તિષ્ઠત્-અધિષ્ઠિત થાય છે અને હે મૃષ્ટ-શત્રુબળને સહનાર ! ધૃષ્ણતા-દૃઢબળથી વાજાન્-શત્રુઓના વેગોને અધિષ્ઠિત થાય છે. (૪)

ભાવાર્થ : જેઓ સ્વાભિમાની સ્વભાવના શૂરવીરો છે, તેઓ પોત-પોતાના અધિકારોમાં ન્યાયપૂર્વક વ્યવહાર કરીને અને શત્રુઓને સમાપ્ત કરીને પોતાનાં ધર્મયુક્ત મહત્વને પ્રકટ કરે. (૪)

વહ કુત્સમિન્દ્ર યસ્મિંજ્ઞચાકન્તસ્યૂમન્યૂ ઋજ્રા વાતસ્યાશ્વા ।

પ્ર સૂરશ્ચક્રં વૃહતાદુભીકેઽભિ સ્પૃથો યાસિષ્ઠ્વજ્રબાહુઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સભાપતિ ! આપ યસ્મિન્-જે સંગ્રામમાં વાતસ્ય-પવન જેવી શીઘ્ર અને સરળ ગતિ સ્યૂમન્યૂ-ઈચ્છનાર અને ઋજ્રા-સરળ ચાલ ચાલનાર અશ્વા-ઘોડાઓને ચાકન્-ઈચ્છો છો તેમાં કુત્સમ-વજને વહ-પહોંચાડો વજ ચલાવો અર્થાત્ વજથી શત્રુઓનો સંહાર કરો.

સૂર:-સૂર્યની સમાન પ્રતાપવાન **વજ્રબાહુ:**-શસ્ત્ર-અસ્ત્રોને ભુજાઓમાં ધારણ કરેલ આપ **ચક્રમ્-**પોતાના રાજ્યની **પ્ર, વૃહતામ્-વૃદ્ધિ** ઉન્નતિ કરો અને **અભીકે-**ના સંગ્રામમાં **સ્પૃધ:**-ઈર્ષા કરતા શત્રુઓની **અભિ, યાસિષત્-**સન્મુખ જવાની ઈચ્છા કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય (પ્રતાપવાન છે,) તેમ પ્રતાપી રાજા શસ્ત્રાસ્ત્રોના પ્રહારોથી સંગ્રામમાં શત્રુઓને જીતીને પોતાના રાજ્યની વૃદ્ધિ કરે. (૫)

જઘન્વાં ઇન્દ્ર મિત્રેસ્ત્વોદપ્રવૃદ્ધો હરિવો અદાશૂન્ ।

પ્ર યે પશ્યન્નર્યમણં સચાયોસ્ત્વયા શૂર્તા વહમાના અપત્યમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે **હરિવ:**-બહુ ઐશ્વર્યયુક્ત **ઇન્દ્ર-સૂર્ય**ની સમાન સભાપતિ ! **ચોદપ્રવૃદ્ધ:**-સદુપદેશની પ્રેરણાથી સમ્યક્ પ્રવૃદ્ધ આપ **અદાશૂન્-દાન** ન દેનાર અને **મિત્રેસ્ત્-મિત્રો**ની હિંસા કરનારા શત્રુઓને **જઘન્વાન્-મારનાર** છો, એથી **યે-જે આયો:**-બીજાઓને સુખ પહોંચાડનારા સજ્જનોના **અપત્યમ્-સંતાન**ને **વહમાના-પહોંચાડવા** અર્થાત્ અન્યત્ર લઈ જનાર ધૂર્તજન **ત્વયા-આપે શૂર્તા:**-છિન્ન-ભિન્ન કરેલ તેઓ **સચા-તે** સંબંધથી તમે **અર્યમણમ્-ન્યાયાધીશને પ્ર, પશ્યન્-જુઓ** છો. (૬)

ભાવાર્થ : જે મિત્રની જેમ વાર્તાલાપ કરનારા ભેદી ચતુર શત્રુજન સજ્જનોને ઉદ્દેગ કરે છે, તેઓનો રાજા મૂલ રહિત નાશ કરી નાખે. ન્યાયાસન પર બેસીને રાજા મૂલ રહિત નાશ કરી નાખે. ન્યાયાસન પર બેસીને સારી રીતે સમીક્ષા કરીને અન્યાયનું નિવારણ કરે. (૬)

રપત્કવિરિન્દ્રાર્કસાતૌ ક્ષાં દાસાયોપ્બર્હણીં કઃ ।

કરત્તિસ્ત્રો મઘવા દાનુચિત્રા નિ દુર્યોણે કુર્યવાચં મૃધિ શ્રેત્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર-સૂર્ય** સમાન સભાપતિ ! જે **કવિ:**-સર્વ શાસ્ત્રવિત્ **અર્કશાતૌ-અન્નો**ના સમ્યક્ વિભાગમાં **દાસાય-શૂદ્ર** વર્ગને માટે **ઉપબર્હણીમ્-સારી** વૃદ્ધિ આપનારી **ક્ષામ્-ભૂમિને કઃ-**નિયત કરતા તે સત્ય સ્પષ્ટ **રપત્-કહે.** જે **મઘવા-ઉત્તમ** ધનનો સંબંધ રાખનાર **તિસ્ત્ર:-ઉત્તમ,** મધ્યમ અને નિકૃષ્ટનું **દાનુચિત્રા:-અદ્ભુત દાન** જેમાં હોય તે ક્રિયાઓને **કરત્-નિયત** કરે, તે **દુર્યોણે-સમરભૂમિ** વિષયક **મૃધિ-યુદ્ધમાં કુર્યવાચમ્-કુત્સિત** યવોની પ્રશંસા કરનારા સામાન્ય જનનો **નિ, શ્રેત્-આશ્રય** કરે. (૭)

ભાવાર્થ : શાસ્ત્રોના જ્ઞાતા સભાપતિ શૂદ્ર-વર્ગને માટે શાસ્ત્રોની શિક્ષા દ્વારા ઉત્તમ અન્ન આદિની વૃદ્ધિ કરનારી ભૂમિની વ્યવસ્થા કરે. સત્ય, સદાચાર, દાન તથા વિચિત્રતાની પ્રવૃત્તિને માટે ઉત્તમ, મધ્યમ અને નિમ્ન દાન-વ્યવહારોની વ્યવસ્થા કરે તથા સદા યુદ્ધ આદિની ભૂમિમાં શત્રુઓનો સંહાર કરીને રાજ્યની વૃદ્ધિ કરે. (૭)

સના તા તં ઇન્દ્ર નવ્યા આગુઃ સહો નભોઽવિરણાય પૂર્વીઃ ।

ભિનત્પુરો ન ભિદો અદૈવીર્નમો વધરદૈવસ્ય પીયોઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર-સૂર્ય** સમાન પ્રતાપવાન રાજન્ ! આપ **અવિરણાય-યુદ્ધની** નિવૃત્તિને માટે **નભઃ-** હિંસક શત્રુઓને **સહઃ-**સહો છો.

આપ જેમ **પૂર્વીઃ-પ્રાચીન પુરઃ-શત્રુઓનાં** નગરોને **ભિન્નત્-છિન્ન-ભિન્ન** કરે છે, **ન-તેમ ભિદઃ-** ભિન્ન પૃથક્-પૃથક્ **અદેવીઃ-શત્રુ વર્ગોના** દુષ્ટ નગરોને **નનમઃ-નમાવો,** પાડો છો. તેથી **અદેવસ્ય, પીયોઃ-** રાક્ષસપણાનો સંચારી કરતા શત્રુગણનો **વધઃ-નાશ** થાય છે. આ જે **તે-આપની સના-પ્રસિદ્ધ શૂરવીરતાનું** કામ છે **તા-તેને નવ્યાઃ-નવીન પ્રજાજનો આયુઃ-પ્રાપ્ત** થાય. (૮)

ભાવાર્થ : રાજાઓ યુદ્ધ આદિમાં એવી જાતની વીરતા-પ્રદર્શક કાર્ય કરે, કે જેને જોઈને, એવા કર્મ જેઓએ પ્રથમ જોયા નથી, તેવા નવા દુષ્ટ પ્રજાજનો ભયભીત થાય. (૮)

ત્વં ધુનિરિન્દ્ર ધુનિમતીર્ઋણોરપઃ સીરા ન સ્વવન્તીઃ ।

પ્ર યત્સમુદ્રમતિ શૂર પર્ષિ પારયા તુર્વશં યદું સ્વસ્તિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર-સૂર્યની** સમાન વર્તમાન **ધુનિઃ-શત્રુઓને** કંપાવનાર ! **ત્વમ્-આપ વિદ્યુત્ રૂપ,** સૂર્ય-મંડળસ્થ અગ્નિ જેમ **ધુનિમતૌઃ-કંપીને અપઃ-જળોને** વા વિદ્યુતરૂપ જઠરાગ્નિ જેમ **સ્વવન્તીઃ-ચાલતી સીરાઃ-નાડીઓને** **ન-તેમ પ્રજાજનોને પ્રાણોઃ-પ્રાપ્ત** થાઓ.

હે **શૂરઃ-શત્રુનાશક !** **યત્-જે આપ સમુદ્રમ્-સમુદ્રનું અતિ, પર્ષિ-અતિક્રમણ** કરીને પાર પહોંચો છો, તે **યદુમ્-યત્નશીલ** અને **તુર્વશમ્-જે** શીઘ્ર કાર્યકર્તા પોતાના વશને પ્રાપ્ત થઈને તે જનનું **સ્વસ્તિ-કલ્યાણ** જેમ થાય, તેમ **પારય-સમુદ્રાદિ તટથી બીજા તટને** શીઘ્ર પહોંચાડો. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુત્ શરીરની નાડીઓમાં રક્તને પ્રવાહિત કરે છે અને સૂર્ય જળને જગતમાં પહોંચાડે છે, તેમ (રાજા) પ્રજાઓમાં સુખ પહોંચાડે અને દુષ્ટોને કંપિત કરે. (૯)

ત્વમ્સ્માકમિન્દ્ર વિશ્વધં સ્યા અવૃકતમો નરાં નૃપાતા ।

સ નો વિશ્વાસાં સ્પૃધાં સહોદા વિદ્યામેષં વૃજનં જીરદાનુમ્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે **ઇન્દ્ર-સુખપ્રદાતા ત્વમ્-આપ અસ્માકમ્-અમારામાં વિશ્વધ-સર્વ પ્રકારથી નરામ્-મનુષ્યોમાં** **નૃપાતા-મનુષ્યોની** રક્ષા કરનારા અર્થાત્ પ્રજાજનોના પાલક તથા **અવૃકતમઃ-જેના સંબંધમાં ચોરજન** નથી એવા **સ્યઃ-થાઓ તથા સઃ-તે આપ નઃ-અમારી વિશ્વાસા-સમસ્ત સ્પૃધામ્-યુદ્ધ ક્રિયાઓમાં સહોદાઃ-** બળપ્રદ થાઓ, જેથી અમે **જીરદાનુમ્-જીવ રૂપમાં વૃજનમ્-ધર્મયુક્ત માર્ગને** તથા **ઇષમ્-શાસ્ત્રવિજ્ઞાનને** **વિદ્યામ-સમ્યક્ જાણીએ-પ્રાપ્ત** કરીએ.

ભાવાર્થ : જે યમ (સંજક ગુણોથી) યુક્ત, જિતેન્દ્રિય, પ્રજારક્ષક અને ચોરી આદિ કર્મોનો ત્યાગ કરેલ (રાજપુરુષ) (રાજ્યમાં) નિવાસ કરે, તેઓ મહાન ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૦)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં રાજાઓના કર્મોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની

સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૭૪)

સૂક્ત-૧૭૫

મત્સ્યપાયિ તે મહુઃ પાત્રસ્યેવ હરિવો મત્સુરો મદઃ ।

વૃષા તે વૃષ્ણા ઇન્દુર્વાજી સહસ્રસાતમઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે હરિવઃ-પ્રશસ્ત ઘોડાવાળા ! મહઃ-મહાન પાત્રસ્યેવ-જેમ પાત્રમાં રાખેલ હોય, તેમ તે-આપના મત્સરઃ-હર્ષ કરનાર મદઃ-નીરોગતાની સાથે જેનાથી જન આનંદિત થાય છે, તે ઓષધિઓના સારનું આપે અપાયિ-પાન કરેલ છે, તેથી આપ મત્સિ-આનંદિત થાઓ છો અને તે વાજી-વેગવાન સહસ્રસાતમઃ-અત્યંત હજારો લોકોનો વિભાગ કરનાર વૃષ્ણો-સિંચનાર બળનાર જે તે-આપ તેને માટે વૃષા-બળ અને ઇન્દુઃ-ઐશ્વર્ય કરનાર થાય છે. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ ઘોડાઓ દૂધ આદિ પીને તથા ઘાસ આદિ ખાઈને બળવાન અને વેગવાન બને છે. તેમ પથ્ય તથા ઓષધિઓનું સેવન કરનારા (લોકો) આનંદિત બને છે. (૧)

આ નસ્તે ગન્તુ મત્સુરો વૃષા મદો વરેણ્યઃ ।

સહાવાઈ ઇન્દ્ર સાનસિઃ પૃતનાષાઠમર્ત્યઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સભાપતિ ! તે-તે આપના જે મત્સરઃ-સુખ કરનાર, વરેણ્યઃ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય, વૃષા-વીર્યકારી, સહાવાન્-જેમાં બહુ જ સહનશીલતા વિદ્યમાન છે, સાનસિઃ-જે સારી રીતે રોગોનો વિભાગ કરનાર, પૃતનાષાઠ્-જેનાથી મનુષ્યોની સેનાને સહન કરે છે અને અમર્ત્યઃ-જે મનુષ્ય સ્વભાવથી વિલક્ષણ મદઃ-ઓષધિઓનો રસ છે, તે નઃ-અમને આ, ગન્તુ-પ્રાપ્ત થાય.

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, 'આપ ધર્માત્માઓનો ઓષધિરસ અમને પ્રાપ્ત થાય' એવી સદા કામના કરવી જોઈએ. (૨)

ત્વં હિ શૂરઃ સનિતા ચોદયો મનુષો રથમ્ ।

સહાવાન્દસ્યુમવ્રતમોષઃ પાત્રં ન શોચિષા ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે સેનાપતિ ! હિ-જે કારણે શૂર-શૂરવીર, નીડર સનિતા-સેનાનો સંવિભાગ કરનાર અર્થાત્ પઘાદિ-વ્યૂહ રચનાથી વિભાગ કરનાર ત્વમ્-આપ મનુષઃ-મનુષ્યો અને રથમ્-યુદ્ધ માટે પ્રયુક્ત કરેલ રથને ચોદયઃ-પ્રેરિત કરે-અર્થાત્ યુદ્ધ સમયે આગળ ધપાવે અને સહાવાન્-બળવાન આપ શોચિષા-દીપ્ત અગ્નિની જ્વાળાથી જેમ પાત્રમ્-કાષ આદિ પાત્રને ન-તેમ અવ્રતમ્-દુઃશીલ-દુરાચારી દસ્યુમ્-હઠપૂર્વક પારકા ધનને હરનાર દુષ્ટજનને ઓષઃ-બાળો, તેથી મૌનના ભાગી બનો. (૩)

ભાવાર્થ : જે સેનાપતિ આદિ યુદ્ધ સમયે રથ આદિ યાનો તથા યોદ્ધાઓનો યુદ્ધના માટે સંચાલિત

કરવાનું તથા પ્રેરિત કરવાનું જાણે છે, તેઓ જેમ કાષ્ટને અગ્નિ (બળે છે) તેમ ડાકુઓને ભસ્મ કરી શકે છે. (૩)

મુષાય સૂર્ય કવે ચક્રમીશાનુ ઓજસા ।

વહુ શુષ્ણાય વધં કુત્સં વાતસ્યાશ્વૈઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે કવે-ક્રમ-ક્રમથી દૃષ્ટી આપનાર સમસ્ત વિદ્યાઓને જાણનાર સભાપતિ ! ઈશાન:-
ઐશ્વર્યવાન સમર્થ ! આપ સૂર્યમ્-સૂર્યમંડળની સમાન ઓજસા-બળથી યુક્ત ચક્રમ-ભૂગોળના રાજ્યને
મુષાય-હરીને શુષ્ણાય-અન્યોના હૃદયને શુષ્ક કરનારા દુષ્ટને માટે વાતસ્ય-વાયુના અશ્વૈઃ-વેગાદિ ગુણોની
સમાન પોતાના બળોથી કુત્સમ્-વજને ધૂમાવીને વધમ્-વધને વહુ-પહોંચાડો અર્થાત્ તે દુષ્ટને મારો. (૪)

ભાવાર્થ : જેઓ ચક્રવર્તી રાજ્ય કરવા ઇચ્છે, તેઓ ડાકુઓ અને દુષ્ટાચારી મનુષ્યોનું નિવારણ
કરીને ન્યાયને પ્રવૃત્ત કરે-કરાવે. (૪)

શુભ્નિન્તમો હિ તે મદો દ્યુમ્નિન્તમ ઉત ક્રતુઃ ।

વૃત્રઘ્ના વરિવોવિદા મંસીષ્ઠા અશ્વસાતમઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે સર્વના ઇશ્વર સભાપતિ ! હિ-જે કારણે તે-આપના શુભ્નિન્તમ:-અત્યંત બળવાન મદ:-
આનંદ ઉત-અને દ્યુમ્નિન્તમ:-અત્યંત યશયુક્ત ક્રતુઃ-પરાક્રમરૂપ કર્મ છે, તેથી વૃત્રઘ્ના-મેઘનું હનન
કરનાર સૂર્યની સમાન પ્રકાશમાન વરિવોવિદા-જેથી સેનાને પ્રાપ્ત થાય તે પરાક્રમથી અશ્વસાતમ:-
અત્યંત અશ્વ આદિનો સમ્યક્ વિભાગ કરનાર આપ બીજાના વિષયને મંસીષ્ઠા:-જાણો. (૫)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યસમાન તેજસ્વી, વિદ્યુત્ સમાન પરાક્રમી, યશસ્વી અને બળવાન (બનીને) વિદ્યા,
વિનય અને ધર્મનું સેવન કરે છે, તેઓ સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. (૫)

યથા પૂર્વેભ્યો જરિતૃભ્યં ઇન્દ્ર મયદ્વાપો ન તૃષ્યતે બભૂથ ।

તામનુ ત્વા નિવિદં જોહવીમિ વિદ્યામેષં વૃજનં જીરદાનુમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-વિદ્યા-ઐશ્વર્યયુક્ત ! યથા-જે રીતે નિત્ય વિદ્યાથી પૂર્વેભ્યઃ-પ્રથમ વિદ્યા અધ્યયન
કરેલ જરિતૃભ્યઃ-સમસ્ત વિદ્યા ગુણોની સ્તુતિ કરનારા જનોને માટે મયદ્વા-સુખની સમાન વા તૃષ્યતે-
તૃષાથી પીડિત મનુષ્યને માટે આપ:-જળની ન-સમાન આપ બભૂથ-થાઓ.

તામ્-તે નિવિદમ્-નિત્ય વિદ્યાથી અનુ-અનુકૂળ ત્વા-આપની હું જોહવીમિ-નિરંતર સ્તુતિ કરું છું
અને તેથી અમે ઇષમ્-ઈચ્છાસિદ્ધિ, વૃજનમ્-બળ અને જીરદાનુમ્-આત્મ સ્વરૂપને વિદ્યામ-પ્રાપ્ત
કરીએ. (૬)

ભાવાર્થ : જેઓ બ્રહ્મચર્યપૂર્વક આપ્તજનોની વિદ્યા અને શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને અન્યોને આપે છે,
તેઓ સુખથી તૃપ્ત થઈને પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરે છે.

જેઓ વિરોધ ત્યાગ કરીને પરસ્પર ઉપદેશ આપે છે, તેઓ વિજ્ઞાનના બળને અને જીવાત્મા તથા પરમાત્માના સ્વરૂપને જાણે છે. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં રાજવ્યવહારનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૭૫)

સૂક્ત-૧૭૬

મત્સિં નો વસ્યઙ્ઘ્ટય ઇન્દ્રમિન્દો વૃષા વિશ ।

ઋઘાયમાણ ઇન્વસિ શત્રુમન્તિ ન વિન્દસિ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્રો-ચંદ્રમાની સમાન શીતલ શાન્ત-સ્વરૂપવાળા ન્યાયાધીશ ! જે વૃષા-બળવાન વૃઘાયમાણ:-વર્ધમાન આપ ન:-અમારા વસ્યઙ્ઘ્ટયે-અત્યંત ધનની સંગતિને માટે ઇન્દ્રમ્-પરમેશ્વર્યને પ્રાપ્ત થઈને મત્સિ-આનંદને પ્રાપ્ત થાઓ છો અને શત્રુમ્-શત્રુને ઇન્વસિ-વ્યાપ્ત થાઓ છો અર્થાત્ તેઓના કરેલા દુરાચારને પ્રથમથી જાણો છો, પરંતુ અન્તિ-પોતાના સમીપ ન, વિન્દસિ, શત્રુને પામતા નથી, તે આપ સેનાને આ, વિશ-સમન્તાત પ્રાપ્ત થાઓ. (૧)

ભાવાર્થ : જે પ્રજાઓના ઈષ્ટ સુખને માટે દુષ્ટોનું નિવારણ કરે છે અને સત્ય આચરણનું પૂર્ણ પાલન કરે છે, તેઓ મહાન ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧)

તસ્મિન્ના વૈશયા ગિરો ય એકશ્ચર્ષણીનામ્ ।

અનુ સ્વધા યમુપ્યતે યવં ન ચર્કૃષ્ઠ્ વૃષા ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! તસ્મિન્-તેમાં ગિર:-ઉપદેશરૂપ વાણીઓને આ, વૈશય-સમગ્ર રીતે પ્રવિષ્ટ કરાવો. ય:-જે ચર્ષણીનામ્-મનુષ્યોમાં એક:-એકલો અસહાય દીનજન છે અને યમ્-જેનું અનુ-પછી લક્ષ્ય કરીને ચર્કૃષ્ઠ્-નિરંતર ભૂમિને ખેડીને વૃષા-ખેતી કામમાં કુશળ ખેડૂત જેમ યવમ્-યવ અન્નને ન-વાવે, તેમ સ્વધા-અન્ન ઉપ્યતે-વાવેલું અર્થાત્ ભોજનરૂપ આપવામાં આવે છે. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ ખેડૂતો ખેતરોમાં બીજ વાવીને ધન પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ વિદ્વાનો જિજ્ઞાસુઓના આત્મામાં વિદ્યા અને સુશિક્ષા પ્રવિષ્ટ કરાવીને સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. (૨)

યસ્ય વિશ્વાન્નિ હસ્તયોઃ પઞ્ચ ક્ષિતીનાં વસુ ।

સ્પાશયસ્વ યો અસ્મધ્નુગ્દિવ્યેવાશનિર્જહિ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! યસ્ય-જેના આપ હસ્તયોઃ-હાથોમાં પઞ્ચ-બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય, વૈશ્ય, શૂદ્ર અને નિષાદ એ જાતિઓના ક્ષિતીનામ્-મનુષ્યોના વિશ્વાન્નિ-સમસ્ત વસુ-વિદ્યાધન છે, તે આપ ય:-જે અસ્મધ્નુ-
અગ્વદભાષ્ય

અમારો દ્રોહ કરનારને સ્પાશયસ્વ-પીડા આપો અને જેમ અશનિ:-વિદ્યુત્ દિવ્યેવ-આકાશમાં ઉત્પન્ન થઈને ભૂમિમાં પડીને સંહાર કરે છે તેની સમાન જહિ-નષ્ટ કરો.

ભાવાર્થ : જેના અધિકારમાં સમસ્ત વિદ્યાઓ છે અને જે ઉત્પન્ન થયેલ શત્રુઓને મારે છે, તે દિવ્ય ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરનાર બને છે. (૩)

અસુન્વન્તં સમં જહિ દૂણાશં યો ન તે મયઃ ।

અસ્મભ્યમસ્ય વેદનં દ્વિ સૂરિશ્ચિદોહતે ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! આપ તે અસુન્વન્તમ્-પદાર્થોનો સાર ખેંચવા આદિ પુરુષાર્થથી રહિત દુણાશમ્-અને દુઃખથી વિનાશને યોગ્ય સમમ્-સમસ્ત આળસુજનોને જહિ-મારો, દંડ આપો.

ય:-જે સૂરિ:-વિદ્વાનની ચિત્-સમાન ઓહતે-વ્યવહારોની પ્રાપ્તિ કરે છે અને તે-તમારા મય:-સુખને ન-પહોંચાડતો નથી તથા આપ અસ્ય-એના વેદનમ્-ધનને અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે દ્વિ-ધારણ કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જે આળસુ હોય તેને રાજા તાડના કરે. જેમ વિદ્વાન સર્વને સુખ આપે છે, તેમ જેટલું બની શકે તેટલું સર્વને સુખ આપ. (૪)

આવો યસ્ય દ્વિર્બર્હસોઽર્કેષુ સાનુષગસત્ ।

આજવિન્દ્રસ્યેન્દો પ્રાવો વાજેષુ વાજિનમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દો-પોતાની પ્રજાઓમાં ચંદ્રમાની સમાન વર્તમાન ! યસ્ય-દ્વિર્બર્હસ:-વિદ્યા-પુરુષાર્થથી ઉન્નત થયેલને અર્કેષુ-સમ્યક્ સત્કારથી અન્નાદિ પદાર્થોમાં સાનુષક્-સાનુકૂળતા જ અસત્-થાય જેની આપ અગ્વ:-રક્ષા કરો, તે ઇન્દ્રસ્ય-પરમેશ્વર્ય સંબંધી આજૌ-સંગ્રામમાં વાજેષુ-વેગોમાં વર્તમાન વાજિનમ્-બળવાન આપની પ્ર, આવ:-સારી રીતે રક્ષા કરે અર્થાત્ આપની નિરંતર રક્ષા કરે. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ સેનાપતિ સર્વ સૈનિકોની રક્ષા કરે તેમ સૈનિકો પણ તેની નિરંતર રક્ષા કરે. (૫)

યથા પૂર્વેભ્યો જરિતૃભ્યં ઇન્દ્ર મયઙ્વાપો ન તૃષ્યતે બૃભૂથ ।

તામનુ ત્વા નિવિદં જોહવીમિ વિદ્યામેષં વૃજનં જીરદાનુમ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-ઐશ્વર્યના જિજ્ઞાસુજન ! યથા-જેમ યોગ જાણવાના ઈચ્છુક પૂર્વેભ્ય:-જેણે યોગાભ્યાસ કરેલ છે તે પ્રાચીન જરિતૃભ્ય:-યોગ ગુણ સિદ્ધિઓને જાણનારા વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત કરીને તથા સિદ્ધ કરીને સંપન્ન થાય છે તેવા બનીને મયઙ્વા-સુખની સમાન અને તૃષ્યતે-તૃષિતને માટે આપ:-જળની ન-સમાન બૃભુથ-થાઓ. અને તામ્-તે વિદ્યાને અનુ-અનુવર્તમાન નિવિદમ્-અને નિશ્ચિત પ્રતિજ્ઞા જેણે કરી છે, તે ત્વા-આપને જોહવીમિ-નિરંતર કહું છું એમ કર અમે ઇષમ્-ઈચ્છા સિદ્ધિ વૃજનમ્-દુઃખ ત્યાગ અને જીરદાનુમ્-જીવદયાને વિદ્યામ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૬)

ભાવાર્થ : જે લોકો યોગારૂઢ = નિષ્ણાતજનો દ્વારા યોગશિક્ષાને પ્રાપ્ત કરીને તથા પુરુષાર્થ કરીને, યોગમધ્યસ્ય સિદ્ધા જાયન્તે-યોગનો અભ્યાસ કરીને સિદ્ધ બની જાય છે, તેઓ પૂર્ણ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે તથા જે તેઓની સેવા કરે છે, તેઓ પણ સુખ પામે છે. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્યા, પુરુષાર્થ અને યોગનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૭૬)

સૂક્ત-૧૭૭

આ ચર્ષણિપ્રા વૃષભો જનાનાં રાજા કૃષ્ટીનાં પુરુહૂત ઇન્દ્રઃ ।

સ્તુતઃ શ્રવસ્યન્નવસોપ મદ્રિગ્યુક્ત્વા હરી વૃષણા યાહ્યર્વાઈ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ વૃષભઃ-અત્યંત બળવાન જનાનામ્-શુદ્ધ ગુણોમાં પ્રસિદ્ધ થયેલ જનોમાં ચર્ષણિપ્રાઃ-મનુષ્યોને વિદ્યાઓથી પૂર્ણ કરનાર રાજા-પ્રકાશમાન અને કૃષ્ટીનામ્-મનુષ્યોમાં પુસ્તૂતઃ-બહુ જ સત્કાર પામેલ સ્તુતઃ-પ્રશંસિત શ્રવસ્યન્-પોતે અન્નની ઈચ્છા કરીને મદ્રિક્-જે કામને પ્રાપ્ત થાય છે, તે ઇન્દ્રઃ-ઐશ્વર્યપ્રદ વૃષભા-અતિ બળી હરી-હરણશીલ ઘોડાઓને યુક્ત્વા-જોડીને અર્વાઈ-અધો દેશ-નીચેની ભૂમિમાં જાય છે, તેમ અવસા-રક્ષા આદિની સાથે આપ અમારી ઉપ, આ, યાહિ સમીપ આવો. (૧)

ભાવાર્થ : જેવી રીતે શુભ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા સભાધ્યક્ષ પ્રજાઓ પ્રત્યે વ્યવહાર કરે, તેમ પ્રજાજનોએ પણ વ્યવહાર કરવો જોઈએ.

જેમ કોઈ વિમાન પર ચઢીને ઉપર જઈને નીચે આવે છે, તેમ વિદ્વાનજન પરાવર (= દૂરસ્થ અને સમીપસ્થ તથા સૂક્ષ્મ અને સ્થૂળના જ્ઞાતા બને. (૧)

યે તે વૃષણો વૃષભાસ ઇન્દ્ર બ્રહ્મયુજો વૃષરથાસો અત્યાઃ ।

તાં આ તિષ્ઠ તેભિરા યાહ્યર્વાઈ હવામહે ત્વા સુત ઇન્દ્ર સોમે ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-વિદ્યુત્ સમાન સેનાપતિ ! તે-આપના યે-જે વૃષણઃ-પ્રબળ યુવાન, વૃષભાસઃ-પરિશક્તિ બંધક = વૃષભ, બ્રહ્મયુજઃ-ઉત્તમ અન્નનો યોગ કરનારા, વૃષરથાસઃ-શક્તિબંધક અને રમણ સાધનરથ અત્યાઃ-અને નિરંતર ગમનશીલ ઘોડાઓ છે; તાન્-તેને આ, તિષ્ઠ-યત્નવાન કરો અર્થાત્ તેના પર ચઢો અને કાર્યરત્ કરો.

હે ઇન્દ્ર-સૂર્ય સમાન વર્તમાન રાજન્ ! અમે સુતે-ઉત્પન્ન થયેલ સોમે-ઔષધિ આદિના ગુણની સમાન ઐશ્વર્યને માટે ત્વા-આપનો હવામહે-સ્વીકાર કરીએ છીએ. આપ તેભિઃ-તેઓની સાથે અર્વાઈ-સન્મુખ આ, યાહિ-આવો. (૨)

ભાવાર્થ : જે રાજાજનો સમસ્ત સાધનોથી સિદ્ધ કરવા યોગ્ય રથો, અતિ બળવાન ઘોડાઓ અને

બળદોને કાર્યોમાં પ્રયુક્ત કરે છે, તેઓ પ્રશસ્ત યાન આદિથી યુક્ત બનીને ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરે છે.
(૨)

આ તિષ્ઠ રથં વૃષણં વૃષા તે સુતઃ સોમઃ પરિષિક્તા મધૂનિ ।

યુક્ત્વા વૃષભ્યાં વૃષભ ક્ષિતીનાં હરિભ્યાં યાહિ પ્રવતોર્પ મદ્રિક્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે વૃષભ-બીજાઓના સામર્થ્યને રોકનાર બલિષ્ઠ રાજન્ ! મદ્રિક્-અમને પ્રાપ્ત થઈને અને વૃષા-રસ આદિથી પરિપૂર્ણ થઈને આપ જે તે-પોતાના માટે સોમઃ-સોમલતા આદિનો રસ સુતઃ-ઉત્પન્ન કરવામાં આવેલ છે. તેમાં મધૂનિ-મધુરાદિ પદાર્થો પરિષિક્તા-સર્વત્રથી સિંચેલ છે, તે રસનું પાન કરીને ક્ષિતીનામ્-મનુષ્યોના વૃષભ્યામ્-પ્રબળ હરિભ્યામ્-હરણશીલ ઘોડાઓને વૃષણમ્-દેહ રથમ્-રથમાં યુક્ત્વા-જોડીને યુદ્ધનો આ, તિષ્ઠ-યત્ન કરો, વા યુદ્ધની પ્રતિજ્ઞા પૂર્ણ કરો અને પ્રવતા-નીચેના માર્ગથી ઉપ, યાહિ-સમીપ આવો. (૩)

ભાવાર્થ : જેઓ યુક્ત આહાર-વિહારવાળા, સોમ આદિ ઔષધિઓના રસનું સેવન કરનારા, દીર્ઘકાળ સુખી બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરનાર અને શરીર તથા આત્માના બળયુક્ત રાજાઓ વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોના વેગથી યુક્ત યાનોનું નિર્માણ કરાવીને તથા દંડ દ્વારા દુષ્ટોનું નિવારણ કરીને ન્યાયપૂર્વક રાજ્યની રક્ષા કરે છે, તેઓજ સુખી થાય છે. (૩)

અયં યજ્ઞો દેવ્યા અયં મિયેધ્ ઇમા બ્રહ્માણ્યમિન્દ્ર સોમઃ ।

સ્તીર્ણં બર્હિરા તુ શક્ર પ્ર યાહિ પિબા નિષદ્ય વિ મુચ્ચા હરી ઇહ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે શક્ર-શક્તિમાન્ ઇન્દ્ર-સભાપતિ ! અયમ્-આ દેવ્યાઃ-જેથી દિવ્યગુણ વા ઉત્તમ વિદ્વાનોનું પ્રાપ્ત થવું બને છે, તે યજ્ઞઃ-રાજધર્મ અને શિલ્પની સંગતિથી ઉન્નતિને પ્રાપ્ત થયેલ યજ્ઞ; વા અયમ્-આ મિયેધઃ-જેની પદાર્થોના નાખવાથી વૃદ્ધિ થાય છે, તે અયમ્-આ સોમઃ-મહાન ઔષધિનો રસ વા ઐશ્વર્ય તુ-અને જે સ્તીર્ણમ્-ઢંકાયેલ બર્હિઃ-ઉત્તમ આસન છે નિષદ્ય-એ આસન પર બેસીને ઇમા-એ બ્રહ્માણિ-ધનને પ્રાયાહિ-ઉત્તમતાથી પ્રાપ્ત કરો.

એ ઉક્ત ઔષધિનું પિબ-પાન કરીને ઇહ-અહીં હરી-વિદ્યુત્ના ધારણ અને આકર્ષણરૂપી ઘોડાઓનો સ્વીકાર કર અને દુઃખને વિમુચ્-છોડ. (૪)

ભાવાર્થ : સર્વ જનોએ વ્યવહારમાં પ્રયત્ન કરીને, જ્યારે રાજા, સ્નાતક, વિદ્યાવૃદ્ધ અને વયોવૃદ્ધ મનુષ્ય આવે, ત્યારે આસન આદિથી સત્કાર કરીને તેઓથી પ્રશ્નો કરવા જોઈએ. તે તેઓને યથોચિત્ ધર્મયુક્ત અને વિદ્યા પ્રાપ્તિ = વૃદ્ધિ કરાવનાર વચન કહે. જેથી દુઃખની હાનિ, સુખની વૃદ્ધિ અને વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોની સિદ્ધિ થાય. (૪)

ઓ સુષ્ટુત ઇન્દ્ર યાહ્યર્વાહુન્ બ્રહ્માણિ માન્યસ્ય કારોઃ ।

विद्याम् वस्तोरवसा गृणन्तो विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ ५ ॥

पदार्थ : ओ, इन्द्र-धनप्रद सत्पापति ! જેમ અમે માન્યસ્ય-સત્કાર કરવા યોગ્ય કારો:-કરનારાઓના બ્રહ્માણિ-ધનોને વસ્તો:-પ્રતિદિન ઉપ, વિદ્યામ-સમીપમાં જાણીએ; વા જેમ અવસા-રક્ષા આદિની સાથે ગૃણન્ત:-સ્તુતિ કરીને અમે ઇષમ્-પ્રાપ્તિ વૃજનમ્-ઉત્તમ ગતિ અને જીરયાનુમ્-જીવાત્માને વિદ્યામ-જાણીએ, તેમ આપ સુષ્ટુત:-પ્રશંસિત સ્તુતિને પ્રાપ્ત થઈને અર્વાઙ્-યાહિ-સન્મુખ આવો. (૫)

ભાવાર્થ : જેઓ ધન પ્રાપ્ત કરે, તેઓ અન્યોનો સત્કાર કરે. જેઓ ક્રિયાઓમાં કુશળ શિલ્પીજનો ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરે, તેઓ સર્વને માટે સન્માનીય બને. જેમ-જેમ વિદ્યાદિ ગુણો અધિક થાય, તેમ-તેમ તેમ લોકો અભિમાન રહિત બને. (૫)

સંગતિ : અહીં (સૂક્તમાં) રાજા આદિ વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૭૭)

સૂક્ત-૧૭૮

યદ્વ સ્યા તેં ઇન્દ્ર શ્રુષ્ટિરસ્તિ યયાં બભૂથ જરિતૃભ્યઃ કૃતી ।

મા નઃ કામં મહયન્તમા ધ્વિગ્વિશ્વાં તે અણ્યાં પર્યાપ આયોઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇન્દ્ર-સેનાપતિ ! યત્-જે સ્યા-આ તે-આપની શ્રુષ્ટિ:-શ્રવણ યોગ્ય વિદ્યા અસ્તિ-છે, યયા-જેથી આપ જરિતૃભ્યઃ-સમસ્ત વિદ્યાની સ્તુતિ કરનારાઓને માટે ઉપદેશ કરનારા વભૂથ-થાઓ છો, તે કૃતી-રક્ષાદિ કર્મથી યુક્ત વિદ્યાથી નઃ-અમારા મહયન્તમ્-સત્કાર-પ્રશંસા કરવા યોગ્ય કામમ્-કામને મા, આ, ધક્-સળગાવો નહિ, તે-આપના હ-જ આયોઃ-જીવનનું જે આપ:-પ્રાણબળ છે, તે વિશ્વા-સર્વને હું પર્યણ્યામ્-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરું. (૧)

ભાવાર્થ : જેઓ સેનાપતિ આદિ રાજપુરુષો (છે, તેઓ) પોતાના પ્રયોજન માટે કોઈ પણ કાર્યને વિનિષ્ઠ કરે નહિ અને સદા અધ્યાપકો અને વિદ્યાર્થીઓની રક્ષા કરે, જેથી સર્વ લોકો બળવાન અને દીર્ઘાયુ થાય. (૧)

ન ઘા રાજેન્દ્ર આ દંભન્નો યા નુઃ સ્વસારા કૃણવન્ત યોનૌ ।

આપ્શિચદસ્મૈ સુતુકાં અવેષન્ગમન્ન ઇન્દ્રઃ સૃખ્યા વયશ્ચ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઇન્દ્ર:-પરમૈશ્વર્યયુક્ત રાજા-વિદ્યા અને વિનયથી પ્રકાશમાન રાજા નઃ-અમને ન-ન આ, દંભત્-મારે, ન દંડ આપે, તેમ અમે નુ-પણ તેને ધ-દુઃખ ન જ આપીએ; જેમ યા-જે સ્વસારા-બે બહેનોની સમાન બે સ્ત્રીઓ યોનૌ-ઘરમાં બંધુને ન મારે, તેમ તેની સમાન અમે કોઈને પણ મારીએ નહિ; જેમ વિદ્વાનો હિંસા ન કરે, તેમ સર્વજનો ન કૃણવન્ત-કરે; જેમ

इन्द्रः-परमेश्वर्यवान् **अस्मै**-એ સજ્જનને માટે **सख्या**-મિત્રતાનું કામ, **वयः**-જીવન **च**-અને **सुतुकाः**-સુંદર ગ્રહણ કરનારી સ્ત્રી **आपः**-જળને **अवेष्न्**-વ્યાપ્ત થાય છે **चित्**-તેની સમાન **नः**-અમને **गमत्**-પ્રાપ્ત થાય, તેમ તેને અમે પણ પ્રાપ્ત થઈએ. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ દયાળુ આપ્તજન કોઈની હિંસા કરતા નથી, તેમ સર્વ આચરણ કરે. (૨)

जेता नृभिरिन्द्रः पृत्सु शूरः श्रोता हवं नाधमानस्य कारोः ।

प्रभर्त्ता रथं दाशुष उपाक उद्यन्ता गिरो यदि च त्मना भूत् ॥ ३ ॥

पदार्थ : **यदि**-જે **नृभिः**-નાયક વીરોની સાથે **शूरः**-શત્રુઓની હિંસા કરનાર **जेता**-વિજયશીલ **नाधमानस्य**-યાચમાનના **कारोः**-કાર્યકારી પુરુષના **हवम्**-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વિદ્યાબોધને **श्रोता**-સાંભળનાર **प्रभर्त्ता**-પ્રકૃષ્ટ વિદ્યાઓનો **धर्ता** **दाशुषः**-દાનશીલની **उपाके**-સમીપ **गिरः**-વાણીઓનો **उद्यन्ता**-ઉદ્યમ કરનાર **इन्द्रः**-સેનાપતિ તું **त्मना**-જાતે **पुत्सु**-સંગ્રામોમાં **रथम्**-રથને **च**-પણ ગ્રહણ કરીને પ્રવૃત્ત **भूत्**-થાય તેનો દેહ વિજય થાય.

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્યાની યાચના કરે, તેઓને નિરંતર આપવી. જેઓ જિતેન્દ્રિય અને સત્યવાદી હોય છે, તેને જ વિદ્યા પ્રાપ્ત થાય છે. જેઓ વિદ્યા અને શરીરબળથી યુક્ત થઈને શત્રુઓની સાથે યુદ્ધ કરે છે, તેનો પરાજય કેમ થઈ શકે ? (૩)

एवा नृभिरिन्द्रः सुश्रवस्या प्रखादः पृक्षो अ॒भि मि॒त्रिणो॑ भूत् ।

स॒म॒र्य इ॒षः स्त॑वते॒ विवा॑चि सत्राક॒રો यज॑માનस्य॒ शंसः॑ ॥ ४ ॥

पदार्थ : **नृभिः**-વીર પુરુષોની સાથે **इन्द्रः**-સેનાપતિ **सुश्रवस्या**-ઉત્તમ અન્નની ઈચ્છાથી **पृक्षा**-દૂરથી બતાવવાને ઈચ્છીને અન્ન તેને **प्रखाद**-અતિ ખાનારા અને **मित्रिणः**-જેના વર્તમાન મિત્ર હોય તેના **अभि**, **भूत्**-સન્મુખ થાય તથા **विवाचि**-અનેક પ્રકારની વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષાયુક્ત વીરજનના નિમિત્ત **सत्राकरः**-સત્ય વ્યવહાર કરનાર અને **यजमानस्य**-આપનાર **शंसः**-પ્રશંસક **समर्ये**-ઉત્તમ વણિકને નિમિત્ત **इषः**-અન્નોની **स्तवते**-સ્તુતિ-પ્રશંસા કરે **एव**-જ છે. (૪)

ભાવાર્થ : જે પુરુષાર્થી અને સત્યવાદી લોકો સત્યનો ઉપદેશ કરે છે, તેઓ નાયક-નેતા બને છે. (૪)

त्वया वयं मघवन्निन्द्र शत्रून्भि ष्याम महतो मन्यमानान् ।

त्वं त्राता त्वमुं नो वृधे भूर्विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ ५ ॥

पदार्थ : હે મઘવન્-પરમ પ્રશંસિત ધનયુક્ત **इन्द्र**-શત્રુઓને વિદીર્ષા કરનાર ! **त्वया**-આપની સાથે વર્તમાન **वयम्**-અમે **महतः**-પ્રબળ **मन्यमानान्**-અભિમાની **शत्रून्**-શત્રુઓને જીતનારા **अभि**, **श्याम**-

સર્વત્રથી બનીએ. ત્વમ્-આપ ન:-અમારા ત્રાતા-રક્ષક, સહાયક અને ત્વમ્, ડ-આપ જ વૃધે:-વૃદ્ધિને માટે ભૂ:-થાઓ, જેથી અમે ઇષમ્-પ્રત્યેક કામની પ્રેરણા, વૃજનમ્-બળ અને જીરદાનુમ્-જીવ સ્વભાવને વિદ્યામ-પામીએ. (૫)

ભાવાર્થ : જેઓ યુદ્ધના અધિકારીગણ, (સૈનિકો) કર્મચારીઓનો સર્વથા સત્કાર અને ઉત્સાહિત કરીને યુદ્ધ કરાવે છે, તેઓ યુદ્ધ કરનારાઓની નિરંતર રક્ષા અને મૃત પામેલાના સંતાનો તથા સ્ત્રીઓનું પાલન કરી શકે છે, તેઓ સર્વત્ર વિજયી બની શકે છે. (૫)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સેનાપતિના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૭૮)

સૂક્ત-૧૭૯

પૂર્વીરહં શ્શદઃ શશ્રમાણા દોષા વસ્તોરુષસો જરયન્તીઃ ।

મિનાતિ શ્રિયં જરિમા તનૂનામપ્યૂ નુ પત્નીર્વૃષ્ણો જગમ્યુઃ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : જેમ અહમ્-હું પૂર્વી:-પૂર્વે થયેલા શ્શદઃ:-વર્ષો, દોષા:-રાત્રિ, વસ્તો:-દિવસો જરયન્તી:-સર્વની અવસ્થાને જીર્ણ કરતી ઉષસઃ:-સંધ્યાભર શશ્રમાણા-શ્રમ કરું છું. અપિ, ડ-અને પણ જેમ તનૂનામ્-શરીરોની જરિમા-અત્યંત અવસ્થાને નષ્ટ કરનાર કાળ શ્રિયમ્-લક્ષ્મીનો મિનાતિ-વિનાશ કરે છે, તેમ વૃષ્ણઃ:-વીર્ય સિંચનાર પત્ની:-પોત-પોતાની સ્ત્રીઓને નુ-શીઘ્ર જગમ્યુઃ:-પ્રાપ્ત થાઓ.

ભાવાર્થ : જેમ બાલ્યાવસ્થાની સમાપ્તિથી લઈને વિદુષી સ્ત્રીઓ દ્વારા પ્રતિદિન પ્રાતઃકાળથી ગૃહકાર્ય તથા પતિસેવા આદિ કાર્યો કરવામાં આવેલ છે, તેમ બ્રહ્મચર્ય પાલન કરેલ સ્ત્રી-પુરુષોને સર્વ કાર્યો કરવા જોઈએ. (૧)

યે ચિદ્ધિ પૂર્વ ઋહ્તસાપ્ આસન્ત્સાકં દેવેભિરવદન્નૃતાનિ ।

તે ચિદવાસુર્નહ્યન્તમાપુઃ સમૂ નુ પત્નીર્વૃષ્ણભિર્જગમ્યુઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : યે-જે ઋહ્તસાપ્:-સત્ય વ્યવહારમાં વ્યાપક વા બીજાઓને વ્યાપ્ત કરાવનારા પૂર્વે-પૂર્વ વિદ્વાન દેવેભિઃ:-વિદ્વાનોની સાકમ્-સાથે ઋહ્તાનિ-સત્ય વ્યવહારોને અવર્દન્-કહીને તે, ચિત્, હિ-તેઓ પણ સુખી આસન્-થયા છે.

જે નુ-શીઘ્ર પત્ની:-સ્ત્રીઓ વૃષ્ણભિઃ:-વીર્યવાન પતિઓની સાથે સમ્-જગમ્યુઃ:-નિરંતર જાય ચિત્-તેની સમાન અવાસુઃ:-દોષોને દૂર કરે, તેઓ ડ, અન્તમ્-અન્તને નહિ આપુઃ:-પ્રાપ્ત થતા નથી. (૨)

ભાવાર્થ : બ્રહ્મચારી વિદ્યાર્થીઓએ તેઓ દ્વારા વિદ્યા અને શિક્ષા ગ્રહણ કરવી જોઈએ, જે પહેલાંથી વિદ્યા ભણેલ, સત્યાચરણવાળા અને જિતેન્દ્રિય હોય. તેઓ ફરી તે બ્રહ્મચારિણીઓની સાથે વિવાહ

કરે, જે પોતાની સમાન ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળી અને વિદુષી હોય. (૨)

ન મૃષા શ્રાન્તં યદવન્તિ દેવા વિશ્વા ઇત્સ્મૃધો અભ્યર્ષનવાવ ।

જયાવેદત્ર શ્તનીથમાજિં યત્સમ્યજ્ઞા મિથુનાવભ્યર્ષાવ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : દેવા:-વિદ્વાનજન યત્-જે કારણે અત્ર-આ સંસારમાં મૃષા-મિથ્યા શ્રાન્તમ્-ખેદ કરનારાઓની ન; અવન્તિ-રક્ષા કરતા નથી, એથી અમે વિશ્વા, ઇત્-સર્વ સ્મૃધ:-યુદ્ધોને અભિ, અર્ષનવાવ-સન્મુખ થઈને યત્-જે કારણે ગૃહાશ્રમને સમ્યજ્ઞા-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થઈને મિથુનો-સ્ત્રી-પુરુષ અમે બન્ને અભ્યર્ષાવ-સર્વત્રથી તેઓના વ્યવહારોને પ્રાપ્ત થઈએ એવી શ્તનીથમ્-જે સેંકડોથી પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય આજિમ્-સંગ્રામને યજાવેત્-જીતે જ છે. (૩)

ભાવાર્થ : કારણ કે આપ્ત વિદ્વાનો મિથ્યા આચરણ કરનારા મૂર્ખ વિદ્યાર્થીઓને ભણાવતા નથી, પરંતુ ત્યાગી દે છે. તેથી સ્ત્રી-પુરુષ વ્યભિચાર આદિ આચરણનો ત્યાગ કરી દે છે. જેથી ગૃહાશ્રમની ઉન્નતિ થાય તેવા પ્રયત્નો, સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર ધાર્મિક બનીને કરે. (૩)

નદસ્ય મા રુદ્ધતઃ કામ આગન્નિત આજાતો અમુતઃ કુતશ્ચિત્ ।

લોપામુદ્રા વૃષ્ણં ની રિણાતિ ધીરમધીરા ધયતિ શ્વસન્તમ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : ઇત્-આ બાજુથી વા અમુતઃ-પેલી બાજુથી વા કુતશ્ચિત્-ક્યાંયથી આજાતઃ-સર્વત્રથી પ્રસિદ્ધ સ્થતઃ-વીર્ય રોકનાર વા નદસ્ય-અવ્યક્ત શબ્દ કરનારા વૃષભ આદિનું કામઃ-કામ મા-મને આગન્-પ્રાપ્ત થાય છે અર્થાત્ તેની સમાન કામદેવ ઉત્પન્ન થાય છે. એવું અધીરા-ધીરજરહિત વા લોપામુદ્રા-જેનું લોપ થઈ જવો જ પ્રતીતનું ચિહ્ન છે. તે એ સ્ત્રી વૃષ્ણમ્-વીર્યવાન ધીરમ્-ધૈર્યયુક્ત શ્વસન્તમ્-શ્વાસ લેતા અર્થાત્ શયન આદિ અવસ્થામાં નિમગ્ન પુરુષને નીરિણાતિ-નિરંતર પ્રાપ્ત થાય છે અને ધયતિ-તેનાથી ગમન પણ કરે છે. (૪)

ભાવાર્થ : જે લોકો વિદ્યા અને ધૈર્ય આદિ ગુણોથી રહિત સ્ત્રીઓની સાથે વિવાહ કરે છે, તેઓ સુખ પામતા નથી. જે વર કામનારહિત કન્યાને અને જે કન્યા કામના રહિત વરની સાથે વિવાહ કરે, તો ત્યાં જરા પણ સુખ (પ્રાપ્ત) થતું નથી. તેથી જ્યાં પરસ્પર પ્રેમયુક્ત અને સમાન ગુણોવાળા વિવાહ કરે, ત્યાં જ મંગલ થાય છે. (૪)

ઙ્મં નુ સોમમન્તિતો હૃત્સુ પીતમુપં બ્રુવે ।

યત્સીમાગ્શ્ચકૃમા તત્સુ મૃલ્લતુ પુલુકામો હિ મર્ત્યઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : યત્-જે ઙ્મમ્-આ હૃત્સુ-હૃદયોમાં પીતમ્-પાન કરેલ સોમમ્-ઓષધિઓના રસને ઉપ, બ્રુવે-ઉપદેશપૂર્વક કહું છું, તેને પુલુકામઃ-બહુ જ કામનાવાળા મર્ત્યઃ-પુરુષ હિ-જ સુમૃલ્લતુ-સુખ સંયુક્ત કરે અર્થાત્ પોતાના સુખમાં તેનો સંયોગ કરે.

જે આગ:-અપરાધને અમે ચક્રમ-કરીએ તત્-તેને નુ-શીઘ્ર સીમ્-સર્વત્રથી અન્તિત:-સમીપથી સર્વ લોકો છોડે અર્થાત્ ક્ષમા કરે. (૫)

ભાવાર્થ : જેઓ મહોષધિઓના રસનું પાન કરે છે, તેઓ નીરોગ અને બલિષ્ઠ બને છે. જેઓ કુપથ્ય કરે છે, તેઓ રોગો દ્વારા પીડિત થાય છે. (૫)

અગસ્ત્યઃ **ખનમાનઃ** **ખનિત્રૈઃ** **પ્રજામર્પત્યં** **બલમિચ્છમાનઃ** ।

ઉભૌ **વર્ણાવૃષ્ઠિરુગ્રઃ** **પુપોષ સત્યા** **દેવેષ્વાશિષો** **જગામ** ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જેમ **ખનિત્રૈઃ**-કોદાળી, પાવડા, હળ આદિ ખોદવાના સાધનોથી ભૂમિ-ખેતરને **ખનમાનઃ**-ખોદીને ખેડૂત ધાન્ય આદિ અનાજ પાકતા સુખી થાય છે, તેમ બ્રહ્મચર્ય અને વિદ્યાર્થી **પ્રજામ્**-રાજ્ય, **અપત્યમ્**-સંતાન અને **બલમ્**-બળના **ઇચ્છમાનઃ**-ઈચ્છુક, **અગસ્ત્યઃ**-નિરપરાધિઓમાં ઉત્તમ, **ઋષિઃ**-વેદાર્થવેત્તા, **ુગ્રઃ**-તેજસ્વી વિદ્વાન **પુપોષ**-પુષ્ટ થાય છે. **દેવેષુ**-અને વિદ્વાનોમાં વા કામોમાં **સત્યાઃ**-શ્રેષ્ઠ કર્મોમાં ઉત્તમ સત્ય અને **આશિષઃ**-સિદ્ધ ઈચ્છાઓને **જગામ**-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ **ઉભૌ**-બન્ને **વર્ણો**-પરસ્પર એક-બીજાનો સ્વીકાર કરીને સ્ત્રી-પુરુષ થાઓ.

ભાવાર્થ : જે ખેડૂત ઉત્તમ ખેતરોમાં ઉત્તમ બીજોને વાવીને તેના ફળોને પ્રાપ્ત કરે છે અને જેમ ધાર્મિક વિદ્વાન સત્ય કામનાઓને પૂર્ણ કરી લે છે, તેમ જો લોકો બ્રહ્મચર્યથી યુવાવસ્થાને પ્રાપ્ત થઈને સ્વેચ્છાથી વિવાહ કરે, તો તેઓ ઉત્તમ ક્ષેત્ર અને ઉત્તમ બીજથી જેમ ઉત્તમ ફલ (પ્રાપ્ત થાય છે,) તેમ ઉત્તમ સંતાન રૂપી ફળથી યુક્ત થાય છે. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદુષી સ્ત્રી અને વિદ્વાન પુરુષોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૭૮)

સૂક્ત-૧૮૦

યુવો રજાંસિ સુયમાસો **અશ્વા રથો** **યદ્વાં પર્યર્ણાંસિ** **દીયત્** ।

હિરણ્યયા **વાં પવયઃ** **પ્રુષાયન્મધ્વઃ** **પિબન્તા** **ઉષસઃ** **સચેથે** ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! **યત્**-જ્યારે **યુવોઃ**-તમે બન્ને **સુયમાસઃ**-સંયમયુક્ત **અશ્વાઃ**-વેગવાન અગ્નિ આદિ પદાર્થ **રજાંસિ**-લોક-લોકાન્તરોમાં તથા **વામ્**-તમારો **રથઃ**-રથ **અર્ણાંસિ**-જળ અને સ્થળોમાં **પરિઃ** **દીયત્**-સર્વત્રથી જાય, **વામ્**-તમારા બન્નેના રથના **હિરણ્યયાઃ**-બહુ જ સુવર્ણયુક્ત **પવયઃ**-ચકો = પૈડાં **પ્રુષાયન્**-ભૂમિને છેદે-ભેદે છે તથા **મધ્વઃ**-મધુર રસનું **પિબન્તૌ**-પાન કરીને આપ **ઉષસઃ**-ઉષાકાળનું **સચેથે**-સેવન કરો છો. (૧)

ભાવાર્થ : જે પુરુષ-સ્ત્રીઓ લોકના વિશેષ જ્ઞાનથી યુક્ત, પદાર્થોથી સુરચિત વાહન દ્વારા યાત્રા

કરનારા, અલંકારોથી સુશોભિત, દૂધ આદિ દ્રવ પદાર્થોનું પાન કરનારા અને સમયાનુસાર કાર્ય કરનારા છે, તેઓ જ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૧)

યુવમત્યસ્યાવં નક્ષથો યદ્વિપત્મનો નર્યસ્ય પ્રયજ્યોઃ ।

સ્વસા યદ્વાં વિશ્વગૂર્ત્તી ભરાતિ વાજાયેટ્ટૈ મધુપાવિષે ચ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! યત્-જે યુવમ્-તમે બન્ને પ્રયજ્યોઃ-પ્રયોગ કરવા યોગ્ય અર્થાત્ કાર્ય સંચારમાં વર્તવા યોગ્ય નર્યસ્ય-મનુષ્યોમાં ઉત્તમ વિપત્મનઃ-વિશેષ ગમનશીલ અત્યસ્ય-ઘોડાઓને અવ, નક્ષથઃ-પ્રાપ્ત થાઓ છો. યત્-જે વિશ્વગૂર્ત્તી-સમગ્ર પુરુષાર્થ કરનારા વામ્-તમને બન્નેને સ્વસા-બહેન તમારું ભરાતિ-પાલન-પોષણ કરે વાજાય, ચ-અને વિજ્ઞાન થવા માટે ઈટ્ટૈ-તમારી બન્નેની સ્તુતિ કરતી અર્થાત્ પ્રશંસા કરતી તેનું મધુપૌ-મધુર પાન કરતાં તમે બન્ને ઇષે-અન્નાદિ પદાર્થો માટે ઉત્તમ યત્ન કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી અને પુરુષ અગ્નિ આદિની 'અશ્વવિદ્યા' (શીઘ્રગામી કરવાની વિદ્યા)ને જાણી લે, તો તેઓ ઈચ્છાનુસાર (યથેષ્ઠ સ્થાન) જઈ શકે છે. જેની બહેન વિદુષી હોય, તેની પ્રશંસા કેમ થાય ? (૨)

યુવં પયં ઉસ્ત્રિયાયામધત્તં પક્વમામાયામવ પૂર્વ્યં ગોઃ ।

અન્તર્યદ્વનિનો વામૃતપ્સૂ હ્વારો ન શુચિર્યજતે હ્વિષ્માન્ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે ઋત્વપ્સૂ-જળપાન-આહાર કરનારા સ્ત્રી-પુરુષો ! યુવમ્-તમે બન્ને શુચિઃ-પવિત્ર હ્વિષ્માન્-શુદ્ધ સામગ્રીયુક્ત હ્વારઃ-કોધનું નિવારણ કરનાર સજ્જનની ન-સમાન વામ્-તમે બન્ને ઉસ્ત્રિયાયામ્-ગાયમાં યત્-જે પયઃ-દૂધ વા આમાયામ્-અપ્રૌઢે = જે યુવાવસ્થાને અપ્રાપ્ત તે ગાયમાં પક્વમ્-અવસ્થાથી પરિપક્વ ભાગ ગોઃ-ગાયને પૂર્વ્યમ્-પૂર્વજ લોકોએ પ્રસિદ્ધ કરેલ છે; વા વનિનઃ-કિરણોયુક્ત સૂર્યમંડળની અન્તઃ-અંદર અર્થાત્ પ્રકાશરૂપ યજતે-પ્રાપ્ત થાય છે, તેને અવાધત્તમ્-સારી રીતે ધારણ કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યમંડળ રસને ખેંચે છે અને ચંદ્રમા વરસાવે છે તથા પૃથિવીને પુષ્ટ કરે છે, તેમ અધ્યાપક અને ઉપદેશક વર્તાવ કરે.

જેમ ક્રોધ આદિ દોષોથી રહિત મનુષ્યો શાન્તિ દ્વારા સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ (હે અધ્યાપક અને ઉપદેશક) તમે બન્ને પણ થાઓ. (૩)

યુવં હં ઘર્મ મધુમન્તમત્રયેડ્પો ન ક્ષોદોઽવૃણીતમેષે ।

તદ્વાં નરાવશ્વિના પશ્વઙ્ષ્ટી રથ્યેવ ચક્રા પ્રતિ યન્તિ મધ્વઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે નરૌ-નાયક-અગ્રણીઓ અશ્વિના-વિદ્યુતાદિ વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત સ્ત્રી-પુરુષો ! યુવમ્-

તમે બન્ને **एषे**-સર્વત્રથી ઈચ્છા કરતા **अत्रये**-અને ભૂત, ભવિષ્ય, વર્તમાન ત્રણેય કાળોમાં જેને દુઃખ નહિ એવા સર્વદા સુખયુક્ત રહેનારા પુરુષોને માટે **मधुमन्तम्**-મધુરાદિ ગુણયુક્ત **घर्मम्**-દિવસ અને **क्षोदः**-જળને **अपः**-પ્રાણોની **न**-સમાન **अवृणीतम्**-સ્વીકાર કરો, જે કારણે **वाम्**-તમારા બન્નેની **पश्चङ्घ्रिः**-પશુકુળની સંગતિ **रथेव**-રથોમાં ઉત્તમ **चक्रा**-પૈડાઓની સમાન **मध्वः**-મધુર ફળોને **प्रति, यन्ति**-પ્રતિ-પ્રાપ્ત થાય છે, **तत्-ह**-એ કારણ પ્રાપ્ત થાઓ. (૪)

ભાવાર્થ : જો સ્ત્રી અને પુરુષ ગૃહાશ્રમમાં મધુર આદિ રસોથી યુક્ત દ્રવ્ય, ઉત્તમ પશુ અને રથ આદિ વાહન પ્રાપ્ત કરી લેશે, તો તે બન્નેના સર્વ દિવસો સુખથી વિતશે. (૪)

आ वां दानाय ववृतीय दस्त्रा गोरोहेण तौग्यो न जित्रिः।

अपः क्षोणी संचते माहिना वां जूर्णो वामक्षुरंहसो यजत्रा ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે **दस्त्रा**-દુઃખ દૂર કરનારા અને **यजत्रा**-સર્વ વ્યવહારની સંગતિ કરનારા સ્ત્રી-પુરુષો ! **जित्रिः**-જીર્ણ-વૃદ્ધ **तौग्यः**-બળવાનોમાં બળી જનની **न**-સમાન હું **गोरोहेण**-પૃથિવીના બીજ સ્થાપનથી **वाम्**-તમને બન્નેને **दानाय**-આપવાને માટે **आववृतीय**-સારી રીતે વર્તું. જે **माहिना**-મહાન હોવાથી **क्षोणी**-ભૂમિ **अपः**-જળનો **संचते**-સંબંધ કરે છે, તેમ **जूर्णः**-હું રોગી **वाम्**-તમારો સંબંધ કરુ અને **अक्षुः**-વ્યાપ્ત થવાના શીલ-સ્વભાવવાળો હું **अंहसः**-દુષ્ટાચારથી **वाम्**-તમને-બન્નેને પૃથક રાખું. (૫)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો સ્ત્રી-પુરુષોને એવો ઉપદેશ કરે કે જેમ અમે તમને વિદ્યા આપીએ અને દુષ્ટ આચરણથી પૃથક રાખીએ, તેમ તમારે પણ આચરણ કરવું જોઈએ અને પૃથિવીની સમાન ક્ષમા અને ઉપકાર આદિ કર્મો કરવા જોઈએ. (૫)

नि यद्युवेथै नियुतः सुदानू उप स्वधाभिः सृजथः पुरन्धिम्।

प्रेषद्वेषद्वातो न सूरिरा महे ददे सुव्रतो न वाजम् ॥ ६ ॥

પદાર્થ : **यत्**-જ્યારે હે **सुदानू**-સુંદર દાનશીલ સ્ત્રી-પુરુષો ! **नियुतः**-વાયુના વેગ આદિ ગુણોની સમાન નિશ્ચિત પદાર્થોને **नियुवेथे**-એક-બીજાથી મેળવો છો, ત્યારે **स्वधाभिः**-અન્નાદિ પદાર્થોથી જેનાથી **पुरन्धिम्**-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય વિજ્ઞાનને **उप, सृजथः**-ઉત્પન્ન કરો છો; તે **सूरिः**-વિદ્વાન **प्रेषत्**-પ્રસન્ન થાય, **वातः**-વાયુની **न**-સમાન **वेषत्**-સર્વત્રથી ગમન કરે અને **सुव्रतः**-સુંદર વ્રત અર્થાત્ ધર્માનુકૂળ નિયમો યુક્ત સજ્જન પુરુષની **न**-સમાન **महे**-મહાનતાને માટે **वाजम्**-વિશેષ જ્ઞાનને **आददे**-ગ્રહણ કરું છું. (૬)

ભાવાર્થ : પિતા આદિ જન, શિલ્પના ક્રિયાકૌશલને પુત્રોમાં સ્થાપિત કરે. શિક્ષા પ્રાપ્ત કરેલ પુત્ર આદિ સર્વ પદાર્થોનું વિશેષજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરે. કલાયંત્રોથી ચાલનારા અને વાયુની સમાન વેગવાન યાન દ્વારા જ્યાં-ક્યાંય અભીષ્ટ પ્રદેશમાં જાય. (૬)

वयं चिद्धि वां जरितारः सत्या विपन्यामहे वि पणिर्हितावान्।

अथा चिद्धि ष्माश्विनावनिन्द्या पाथो हि ष्मा वृषणावन्तिदेवम् ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે અનિન્દ્યા-નિંદાને અયોગ્ય વૃષણૌ-બળવાન અશ્વિનૌ-સમસ્ત પદાર્થગુણ વ્યાપી સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે જેમ હિતાવાન્-જેનું હિત વિદ્યમાન તે વિપણિ:-વિશેષતર વ્યવહાર કરનાર જન વામ્-તમારી બન્નેની પ્રશંસા કરે છે, તેમ અમે પ્રશંસા કરીએ.

જેમ ચિત્-હિ-જ જરિતાર:-સ્તુતિ કરનાર અને સત્યા:-સત્ય વ્યવહાર વર્તનારા વયમ્-અમે તમારી બન્નેની સ્તુતિ વિપન્યામહે-ઉત્તમ સ્તુતિ કરીએ છીએ, તેમ સ્મ, હિ-જ અન્તિદેવમ્-વિદ્વાનોમાં વિદ્વાનજનની સેવા કરીએ; વા જેમ હિ, સ્મ-જ આશ્ચર્યરૂપ પાથ:-જળ ચિત્-નિશ્ચયથી તૃપ્તિ કરે છે, તેમ અધ-એથી અનન્તર વિદ્વાનોનો સત્કાર કરીએ. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો પ્રશંસનીયોની પ્રશંસા કરે છે અને નિંદનીયોની નિંદા કરે છે, તેમ અન્ય મનુષ્યોએ પણ કરવું જોઈએ. (૭)

યુવાં ચિદ્ધિ ષ્માશ્વિનાનુ દ્યૂન્વિરુદ્રસ્ય પ્રસ્રવણસ્ય સાતૌ ।

અગસ્ત્યો નરાં નૃષુ પ્રશસ્તઃ કારાધુનીવ ચિતયત્સહસ્રૈઃ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિનૌ-સૂર્ય અને ચંદ્રમા સમાન ગુણયુક્ત સ્ત્રી-પુરુષો ! જેમ યુવાં, ચિત્-તમે જ હિ, સ્મ-જે કારણે વિસ્દ્રસ્ય-વિવિધ પ્રકારથી પ્રાણ વિદ્યમાન તે પ્રસ્રવણસ્ય-ઉત્તમતાથી જનારા શરીરની સાતૌ-સંવિભક્તમાં અનુ, દ્યુન્-પ્રતિદિન પોતાના સંતાનોને ઉપદેશ આપો, તેમ એ કારણે નરામ્-મનુષ્યોમાં નૃષુ-શ્રેષ્ઠ મનુષ્યોમાં પ્રશસ્તઃ-ઉત્તમ અગસ્ત્યઃ-અપરાધને દૂર કરનાર જન સહસ્રૈઃ-હજારો પ્રકારથી કારાધુનિવ-શબ્દોને કંપાવતા વાજિંત્ર આદિની સમાન સર્વને ચિતયત્-ઉત્તમ સંજ્ઞાયુક્ત કરે-જાગૃત કરે. (૮)

ભાવાર્થ : જે દિવસ-રાત સૂર્ય અને ચંદ્રની સમાન સંતાનોને વિદ્યા અને ઉપદેશ દ્વારા પ્રકાશિત કરે છે, તેઓ પ્રશંસિત થાય છે. (૮)

પ્ર યદ્વહેથે મહિના રથસ્ય પ્ર સ્પન્દ્રા યાથો મનુષો ન હોતા ।

ધત્તં સૂરિભ્યં ઉત વા સ્વશ્વ્યં નાસત્યા રયિષાચઃ સ્યામ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે સ્પન્દ્રા-ઉત્તમ પ્રચલિત અને નાસત્યા-સત્ય સ્વભાવયુક્ત સ્ત્રી-પુરુષો ! યત્-જે તમે હોતા-દાતા મનુષઃ-મનુષ્યની ન-સમાન મહિના-મહાનતાથી સાથે રથસ્ય-રમણ કરવા યોગ્ય વિમાનાદિ રથને પ્રવહેથે-પ્રાપ્ત કરીને તથા પ્રયાથઃ-દેશાન્તરમાં પહોંચાડો છો, તે આપ સૂરિભ્યઃ-વિદ્વાનોને માટે ધત્તમ્-ધનને ધારણ કરો. ઉત, વા-અથવા સ્વશ્વ્યમ્-જેમાં વિરાજમાન સુંદર ઘોડાઓ અને ઉત્તમ ધનાદિ વૈભવને પ્રાપ્ત થાઓ. જેથી અમે રયિસાચઃ-ધનની સાથે સંબંધ કરનારા સ્યામ-બનીએ. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જેમ પોતાના સુખ માટે જે સાધનોને ઈચ્છે, તે અન્યોના આનંદને માટે પણ ઈચ્છે. જે સુપાત્ર અધ્યાપકોને દાન આપે છે, તે લક્ષ્મીવાન્ બને છે. (૯)

तं वां रथं वयमद्या हुवेम स्तोमैरश्विना सुविताय नव्यम् ।

अरिष्टनेमिं परि द्यामियानं विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ १० ॥

पદાર્થ : હે અશ્વિના-સર્વ ગુણવ્યાપી પુરુષો ! વયમ્-અમે અદ્ય-આજ સુવિતાય-ઐશ્વર્યને માટે સ્તોમૈઃ-પ્રશંસાઓથી અરિષ્ટનેમિમ્-દુઃખ નિવારક નવ્યમ્-નવીન દ્યામ્-આકાશને પરિ ઇયાનમ્-સર્વત્રથી જતાં તમ્-પૂર્વ મંત્રોક્ત વામ્-તમારા બન્નેના રથમ્-રથનો હુવેમ-સ્વીકાર કરીએ તથા ઇષમ્-પ્રાપ્તવ્ય સુખ વૃજનમ્-ગમન અને જીરદાનુમ્-જીવને વિદ્યામ-પ્રાપ્ત થઈએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સદા નવા-નવા વિદ્યા કાર્યો સિદ્ધ કરવા જોઈએ, જેથી આ લોકમાં પ્રશંસા થાય અને આકાશ આદિમાં જવાની ઈચ્છા પૂર્ણ થાય. (૧૦)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં સ્ત્રી-પુરુષોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૮૦)

સૂક્ત-૧૮૧

કદું પ્રેષ્ટાવિષાં રયીણામધ્વર્યન્તા યદુન્નિનીથો અપામ્ ।

અયં વાં યજ્ઞો અકૃત પ્રશસ્તિં વસુધિતી અવિતારા જનાનામ્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે ઇષામ્-અન્ન અને રયીણામ્-ધનાદિ પદાર્થોના વિષય પ્રેષ્ટૌ-અત્યંત પ્રીતિવાળા જનાનામ્-મનુષ્યોની અવિતારા-રક્ષા અને વસુધિતી-ધનાદિ પદાર્થોને ધારણ કરનાર અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! તમે કત્, ડ-ક્યારેક અધ્વર્યન્તા-પોતાને યજ્ઞની ઈચ્છા કરીને યત્-જે અપામ્-જળ વા પ્રાણોની ઉત્-નિનીથઃ-ઉન્નતિને પહોંચાડતા અર્થાત્ અત્યંત વ્યવહારમાં લાવો છો, તે અયમ્-આ વામ્-તમારો યજ્ઞઃ-દ્રવ્યમય વા વાણીમય યજ્ઞ પ્રશસ્તિમ્-પ્રશંસાને અકૃત-કરે છે. (૧)

ભાવાર્થ : જ્યારે વિદ્વાનો, મનુષ્યોને વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરાવે છે, ત્યારે તેઓ સર્વના પ્રિય બનીને ઐશ્વર્યવાન બની જાય છે.

જ્યારે તેઓ ભણવા-ભણાવવા તથા સુગંધિત પદાર્થોના હોમ દ્વારા જીવાત્માઓને તથા જલને શુદ્ધ કરે છે, ત્યારે પ્રશંસાને પ્રાપ્ત બને છે. (૧)

આ વામશ્વાસઃ શુચયઃ પયસ્મા વાતરંહસો દિવ્યાસો અત્યાઃ ।

મનોજુવો વૃષણો વીતપૃષ્ઠા એહ સ્વરાજો અશ્વિના વહન્તુ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે અશ્વાસઃ-શીઘ્રગામી ઘોડાઓ શુચયઃ-પવિત્ર પયસ્માઃ-જળ પીનારા, દિવ્યાસઃ-દિવ્ય વાતરંહસઃ-વાયુ સમાન વેગ વા મનોજુવઃ-મનવત્ વેગવાળા, વૃષણઃ-પારકાની શક્તિના બંધક, વીતપૃષ્ઠાઃ-જેઓથી પૃથિવીતલ વ્યાપ્ત, સ્વરાજઃ-જે સ્વયં પ્રકાશમાન, અત્યાઃ, આ-નિરંતર સારી

રીતે જનારા છે, તેઓ **इह-आ** સ્થાનમાં **वाम्-तमने** **अश्विना-अध्यापको** અને ઉપદેશકોને **आ, वहन्तु-** પહોંચાડે. (૨)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો જે વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોને ગુણ-કર્મ-સ્વભાવથી જાણે, તેનો અન્યોને પણ ઉપદેશ કરે. જ્યાં સુધી મનુષ્યો સૃષ્ટિના પદાર્થોની વિદ્યાને જાણતા નથી, ત્યાં સુધી તેઓ સંપૂર્ણ સુખ પ્રાપ્ત કરતા નથી. (૨)

आ वां रथोऽवनिर्न प्रवत्वान्तसृप्रवन्धुरः सुविताय गम्याः ।

वृष्णः स्थातारा मनसो जवीयानहंपूर्वो यजतो धिष्ण्या यः ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે **स्थातारा-स्थित** થનારા **धिष्ण्या-धृष्ट** પ્રગલ્ભ અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! **यः-जे** **वाम्-तमारा** **अवनिः-पृथिवीनी** **न-समान** **प्रवत्वान्-जे**માં પ્રશસ્ત વેગાદિ ગુણ વિદ્યમાન્ છે, **सृप्रवन्धुरः-जे** મળેલા બંધનોથી યુક્ત, **मनसः-मन**થી પણ **जवीयान्-अत्यंत** વેગવાન **अहं पूर्वः-એ** હું છું, એવા આત્મજ્ઞાનથી પૂર્ણ **यजतः-संगत** મળેલ **रथः-रथ** સુવિતાય-ઐશ્વર્યને માટે થાય છે. જેમાં **वृष्णः-બળવાન** **आ, गम्याः-ચલાવવાને** યોગ્ય અગ્ન્યાદિ પદાર્થો સમ્યક્ સંયુક્ત કરવામાં આવે છે, તેને હું સિદ્ધ કરું. (૩)

ભાવાર્થ : (જે) મનુષ્યો દ્વારા ઐશ્વર્યની ઉન્નતિ માટે પૃથિવી સમાન (દૃઢ) અને મનના વેગની સમાન વેગવાન યાન બનાવવામાં આવે છે, તેઓ આ સંસારમાં દૃઢ અને સ્થિર સુખવાળા થાય છે. (૩)

इहेह जाता समवावशीतामरेपसा तन्वाऽ नामभिः स्वैः ।

जिष्णुर्वीमन्यः सुमखस्य सूरिर्दिवो अन्यः सुभगः पुत्र ऊहे ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે **अरेपसा-निष्पाप** સર્વગુણવ્યાપી અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! **इहेह-आ** જગતમાં **जाता-** પ્રસિદ્ધ થયેલ આપ લોકો પોતાના **तन्वा-शरीर**થી અને **स्वैः-पोताना** **नामभिः-नामोनी** સાથે **सम्, अवावशीताम्-निरंतर** કામના કરનારા થાઓ.

वाम्-तमाराમાંથી **जिष्णुः-श्रुतवाना** સ્વભાવવાળા, **अन्यः-अन्य** **सुमखस्य-सुખना** **दिवः-प्रकाश**થી **सूरिः-विद्वान,** **अन्यः-अन्य** **सुभगः-सुंदर** ઐશ્વર્યવાન **पुत्रः-पवित्र** કરે છે, તેને **ऊहे-तर्क**થી કહું છું. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આ સંસારમાં ભૂગર્ભ આદિની વિદ્યાને જાણીને જે વિજયશીલ અધ્યાપક બહુ જ ઐશ્વર્યવાન તથા સર્વના રક્ષક બનીને પદાર્થ-વિદ્યાને તર્કથી જાણી શકે છે, તે પ્રસિદ્ધ બની જાય છે. (૪)

प्र वां निचेरुः ककुहो वशाँ अनु पिशङ्गरूपः सदनानि गम्याः ।

हरी अन्यस्य पीपयन्त वाजैर्मथ्ना रजांस्यश्विना वि घोषैः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-વાયુ અને સૂર્ય સમાન અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! જે વામ્-તમારા જેમ પિશાન્-પીળું સુવર્ણ આદિથી મળેલ રૂપ છે, જેનું તે કકુહઃ-સર્વ દિશાઓમાં નિચેસુ-વિચરનારા વશાન્-વશવર્તિજનોને દિશાઓમાં અનુ-અનુકૂળ વર્તે છે, તેમાંથી પ્રત્યેક તમે સદનાનિ-લોકોને પ્ર, ગમ્યાઃ-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થાઓ.

જેમ અન્યસ્ય-અન્ય અર્થાત્ પોતાની ભિન્ન પદાર્થ હરી-ધારણ અને આકર્ષણની સમાન બળ, પરાકમ વાજૈઃ-વેગાદિ ગુણો તથા ઘોષૈઃ-શબ્દોથી મથ્ના-સમ્યક્ મંથન કરેલ રજાસિ-લોકોની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ મનુષ્ય તેને વિ, પીપયન્ત-વિશેષ કરીને પરિપૂર્ણ કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વાયુ સર્વને વશ કરે છે તથા વાયુ અને સૂર્ય લોકોને ધારણ કરે છે, તેમ તમે વિદ્યા અને ધર્મને ધારણ કરીને સુખી થાઓ. (૫)

પ્ર વાં શરદ્વાન્વૃષભો ન નિષ્વાટ્ પૂર્વીરિષ્શ્ચરતિ મધ્વ ડુષ્ણન્ ।
 એવૈરન્યસ્ય પીપયન્ત વાજૈર્વેષન્તીરુધ્વા નઘ્વો ન આગુઃ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે અધ્યાપકો-ઉપદેશકો ! જેમ વામ્-તમારા શરદ્વાન્-શરદ્ જે ઋતુઓ તે જેમાં વિદ્યમાન વૃષભઃ-વર્ષા કરાવનાર જે સૂર્યમંડળ તેની ન-સમાન નિષ્વાટ્-નિરંતર સહનશીલ જન પૂર્વીઃ-પૂર્વ સમયમાં પ્રાપ્ત થયેલ પ્રજા ડુષઃ-અને જાણવા યોગ્ય પ્રજાજનોને ચરતિ-પ્રાપ્ત થાય છે; વા મધ્વઃ-મધુર પદાર્થોને ડુષ્ણન્-ઈચ્છીને એવૈઃ-પ્રાપ્તિ કરાવનારા પદાર્થોથી અન્યસ્ય-બીજાઓની પાછળની તથા જાણવા યોગ્ય આગળની પ્રજાઓને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ વાજૈઃ-વેગોની સાથે વર્તમાન ઋધ્વાઃ-ઉપર જનારી જવાળાઓ વા વેષન્તીઃ-આજુ-બાજુમાં વ્યાપ્ત થનારી નઘ્વઃ-નદીઓ નઃ-અમને પ્ર, પીપયન્ત-વૃદ્ધિ આપે છે-કરે છે અને આગુઃ-પ્રાપ્ત થાય છે. (૬)

ભાવાર્થ : જેઓ આપ્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશકથી વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરીને બીજાઓને આપે છે, તેઓ અગ્નિ સમાન તેજસ્વી અને શુદ્ધ બનીને સર્વત્ર વર્તમાન રહે છે. (૬)

અસર્જિ વાં સ્થવિરા વેધસા ગીર્વાઢિ અશ્વિના ત્રેધા ક્ષરન્તી ।
 ઉપસ્તુતાવવત્ નાધમાન્ યામન્નયામઞ્છુણુત્ હવં મે ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે વેધસા-પ્રાણ-ઉત્તમબુદ્ધિમાન અશ્વિના-સત્યોપદેશવ્યાપી અધ્યાપકો-ઉપદેશકો ! વામ્-તમારી જે સ્થવિરા-સ્થૂળ અને વિસ્તારને પ્રાપ્ત ત્રેધા-ત્રણ પ્રકારથી ક્ષરન્તી-પ્રાપ્ત થતી ગીઃ-વાણી વાઢે-પ્રાપ્તિ કરાવનારા વ્યવહારમાં અસર્જિ-રચેલી તેને ઉપસ્તુતૌ-પોતાની સમીપ બીજાઓથી પ્રશંસાને પ્રાપ્ત થઈને તમે બન્ને અવતમ્-પ્રાપ્ત થાઓ તમે બન્નેને નાધમાન્-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યયુક્ત સંપાદિત કરીને અર્થાત્ તમારા ઐશ્વર્યનું વર્ણન કરીને મે-મારા હવમ્-શ્રવણ યોગ્ય શબ્દને યામન્-સત્યમાર્ગ અયામન્-અને અગંતવ્ય માર્ગમાં શ્રુણુતમ્-સાંભળો. (૭)

ભાવાર્થ : જે લોકો આપ્તજનોની વાણીને સાંભળે છે, તેઓ કુમાર્ગનો ત્યાગ કરીને સુમાર્ગ પ્રાપ્ત થાય છે. (૭)

કરે છે, જેઓ મન અને કર્મથી અસત્ય બોલવા ઈચ્છતા નથી તેઓ 'માનનીય' બને છે. (૭)

उत स्या वां रुशंतो वप्ससो गीस्त्रिबर्हिषि सदसि पिन्वते नृन्।

वृषां वां मेघो वृषणा पीपाय गोर्न सेके मनुषो दशस्यन् ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણા-દુષ્ટ સામર્થ્યબંધક અધ્યાપકો-ઉપદેશકો ! વામ્-તમે બન્ને સ્થાતઃ-પ્રકાશિત વપ્સસઃ-રૂપની જે ગીઃ-વાણી છે, સ્યા-તે ત્રિબર્હિષિ-ત્રણ વેદવેતા વૃદ્ધ જેમાં તે સદસિ-સભામાં નૃન્-અગ્રણી મનુષ્યોને પિન્વતે-સેવે છે અને વામ્-તમે બન્નેના જે વૃષા-સેચનમાં સમર્થ મેઘઃ-મેઘ સમાન વાણી વિષય દશસ્યન્-ઈચ્છિત ફળ આપતા ગોઃ-પૃથિવીના સેકે-સેચનમાં ન-જેમ, તેમ પોતાના વ્યવહારમાં મનુષઃ-મનુષ્યોની પીપાય-ઉન્નતિ કરાવે છે, તેને ઉત-પણ અમે સેવીએ. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જ્યારે સત્ય બોલે છે, ત્યારે મુખનો આકાર મલિન બનતો નથી અને જ્યારે અસત્ય બોલે છે, ત્યારે મુખ મલિન બને છે.

જેમ પૃથિવી પર વર્તમાન ઔષધો (ઓષધિ સમૂહ)ની વૃદ્ધિ કરનાર મેઘ છે, તેમ સભાસદો અને શ્રોતાઓની સત્ય ભાષણથી વૃદ્ધિ થાય છે, તેઓ સર્વના હિતેથી હોય છે. (૮)

युवां पूषेवाश्विना पुरन्धिरग्निमुषां न जरते हविष्मान्।

हुवे यद्वा वरिवस्या गृणानो विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-સત્યોપદેશ અને રક્ષક વિદ્વાનો ! અગ્નિમ્-અગ્નિ અને ઊષામ્-ઊષાને યત્-જે પુરન્ધિઃ-જગત્ને ધારણ કરનાર અને પૂષેવ-પુષ્ટિ કરનાર સૂર્યની સમાન હવિષ્માન્-પ્રશસ્તદાન જેમાં વિદ્યમાન છે, તે જન યુવામ્-તમારા બન્નેની ન-જેમ જરતે-સ્તુતિ કરે છે, તેમ વામ્-તમારી બન્નેની વરિવસ્યા-સેવામાં કરેલ કર્મોની ગૃણાનઃ-પ્રશંસા કરતા હું તમને હુવે-સ્વીકાર કરું છું. એમ કરતા અમે ઇષમ્-વિજ્ઞાન, વૃજનમ્-બળ અને જીરદાનુમ્-દીર્ઘ જીવનને વિદ્યામ-જાણીએ. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય સર્વની પુષ્ટિ કરનાર છે અને તે અગ્નિ તથા પ્રભાતકાળ = ઊષાને પ્રકટ કરે છે, તેમ પ્રશસ્ત દાનશીલ પુરુષો વિદ્વાનોના ગુણોને પ્રસિદ્ધ કરે છે. (૯)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અશ્વિના દ્રષ્ટાન્તથી અધ્યાપકો અને ઉપદેશકોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૮૧)

સૂક્ત-૧૮૨

अभूदिदं वयुनमो षु भूषता रथो वृषण्वान्मदता मनीषिणः।

धियंजिन्वा धिष्यतां विष्पलावसू दिवो नपाता सुकृते शुचिव्रता ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : ઓ-એ મનીષિણ:-બુદ્ધિમાનો ! જેનાથી ઇદમ્-આ વયુનમ્-ઉત્તમજ્ઞાન અમૂત્-થાય છે અને વૃષ્ણવાન્-યાનોની વેગ શક્તિને બાંધનાર રથ:-થયો છે તે સુકૃતે-સુકર્મ રૂપ શોભન માર્ગમાં ધિયં-જિન્વા-બુદ્ધિને તૃપ્ત રાખીને દિવ:-વિદ્યાદિ પ્રકાશને નપાતા-પ્રપાત રહિત ધિષ્ણયા-દૃઢ-પ્રગલ્ભ શુચિવ્રતા-પવિત્ર કર્મ કરવાના સ્વભાવથી યુક્ત વિષ્ણુલાવસૂ-પ્રજાજનોનું પાલન કરનારા અને વસાવનારા અધ્યાપકો અને ઉપદેશકોને તમે સુ, ભૂષત-સુશોભિત કરો અને તેઓના સંગથી મદત-આનંદિત થાઓ. (૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તે અધ્યાપક અને ઉપદેશકો શ્રેષ્ઠ નથી, કે જેના સંગથી પ્રજાપાલન, સુશીલતા, ઈશ્વરભક્તિ, ધર્મ, શિલ્પ અને વ્યવહાર-વિદ્યાની વૃદ્ધિ ન થાય. (૧)

इन्द्रतमा हि धिष्यया मरुत्तमा दस्त्रा दंसिष्ठा रथ्या रथीतमा ।

पूर्णं रथं वहथे मध्व आचितं तेन दाश्र्वांसमुप याथो अश्विना ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે અશ્વિના-અધ્યાપકો-ઉપદેશકો ! હિ-તમે જ ઇન્દ્રતમા-અત્યંત ઐશ્વર્યયુક્ત ધિષ્ણયા-પ્રગલ્ભ મસ્તમા-અતિ વિદ્વાનોને સાથે લઈને દસ્ત્રા-દુઃખ દૂર કરનારા દંસિષ્ઠા-અત્યંત પરાક્રમી રથ્યા-રથ ચલાવવામાં શ્રેષ્ઠ અને રથીતમા-પ્રશંસિત પરાક્રમયુક્ત છો. મધ્વ:-મધથી આચિતમ્-ભરેલ, પૂર્ણમ્-શસ્ત્ર અને અસ્ત્રોથી પરિપૂર્ણ જે રથમ્-રથને વહેથે-પ્રાપ્ત થાઓ છો તેન-અને તેથી દાશ્ર્વાંસમ્-વિદ્યા દાતા જનની ઉપ, યાથ:-સમીપ જાઓ છો, તે અમારા દ્વારા નિત્ય સત્કાર કરવા યોગ્ય છે. (૨)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્યુત્, જળ તથા વાયુ દ્વારા સંચાલિત રથ પર બેસીને દેશ-દેશાન્તરોમાં જાય છે, તેઓ પર્યાપ્ત અને વિજયવાન બને છે. (૨)

किमत्र दस्त्रा कृणुथः किमांसाथे जनो यः कश्चिदहविर्महीयते ।

अति क्रमिष्टं जुरतं पणेरसुं ज्योतिर्विप्राय कृणुतं वचस्यवे ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે દસ્ત્રા-દુઃખનાશક અધ્યાપકો-ઉપદેશકો ! તમે ય:-જે ક:, ચિત્-કોઈ એવા છે કે અહવિ:-જેનાથી લેવા અને ભોજન કરવા વિદ્યમાન નથી, તે જન:-મનુષ્ય મહીયતે-પોતાના ત્યાગ બુદ્ધિથી મહાન માને છે; તે વચસ્યવે-પોતાના વચનની ઈચ્છા કરીને વિપ્રાય-મેધાવી-ઉત્તમ ધીરબુદ્ધિ પુરુષને માટે જ્યોતિ:-પ્રકાશ કૃણુતમ્-કરો અર્થાત્ વિદ્યાદિ સદ્ગુણોનો આવિર્ભાવ કરો અને પણે:-સત્ અને અસત્ પદાર્થોનો વ્યવહાર કરનારાઓની અસુમ્-બુદ્ધિને અતિ, ક્રમિષ્ટમ્-અતિક્રમણ કરો અને જુરતમ્-નાશ કરો અર્થાત્ તેની શ્રેષ્ઠ = સત્ કામમાં લાગેલ બુદ્ધિની વિવેચના કરો અને અસત્ કામમાં લાગેલ બુદ્ધિનો વિનાશ કરો તથા કિમ્-શું અત્ર-આ વ્યવહારમાં આસાથે-સ્થિર થાઓ છો ? અને કિમ્-શું કૃણુથ:-કરો છો ? (૩)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક અને વિદ્યાર્થી, જેમ આપત વિદ્વાન સર્વના સુખ માટે પ્રયત્ન કરે છે, તેમ

વર્તાવ કરે. (૩)

જમ્ભયતમ્ભિતો રાયતઃ શુનો હતં મૃદ્ધો વિદથુસ્તાન્યશ્વિના ।

વાચંવાચં જરિતૂ રત્તિનીં કૃતમુભા શંસં નાસત્યાવતં મમ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે નાસત્યા-સત્ય વ્યવહારયુક્ત અને અશ્વિના-વિદ્યાબળમાં વ્યાપ્ત થનારા સજ્જનો ! જે તમે રાયતઃ-ભસતાં મનુષ્યભક્ષી દુષ્ટ શુનઃ-કૂતરાઓનો અભિતઃ, જમ્ભયતમ્-સર્વત્રથી વિનાશ કરો છો તથા મૃદ્ધઃ-સંગ્રામોનો હતમ્-વિનાશ કરો છો અને તાનિ-તે સર્વ કામોને વિદથુઃ-જાણો છો તથા જરિતુઃ-સ્તુતિ-પ્રશંસા કરનારા અધ્યાપકો અને ઉપદેશકોથી રત્તિનીમ્-રમણીય વાચંવાચમ્-વાણી-વાણીને જાણો છો અને શંસમ્-સ્તુતિ કૃતમ્-કરો, તે ઉભા-બન્ને તમે મમ-મારી વાણીને અવતમ્-તૃપ્ત કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જે લોકોનું દુષ્ટોને બાંધવાનું, શત્રુઓને જીતવાનું અને વિદ્વાનોના ઉપદેશનો સ્વીકાર કરવાનું સામર્થ્ય છે તેઓ જ અમારા 'રક્ષક' બને. (૪)

યુવમેતં ચક્રથુઃ સિન્ધુષુ પ્લવમાત્મન્વન્તં પક્ષિણં તૌગ્રાય કમ્ ।

યેન દેવત્રા મનસા નિરૂહથુઃ સુપ્તની પૈતથુઃ ક્ષોદસો મહઃ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે ઉક્ત ગુણયુક્ત અધ્યાપકો-ઉપદેશકો ! યુવમ્-તમે સિન્ધુષુ-નદી વા સમુદ્રોમાં તૌગ્રાય-બળવાનોમાં પ્રસિદ્ધ જનને માટે એતમ્-એ આત્મન્વન્તમ્-સ્વજનોથી યુક્ત પક્ષિણમ્-અને પક્ષ જેમાં વિદ્યમાન છે એવા કમ્-સુખકારી પ્લવમ્-તે નૌકા આદિ યાનથી પાર-અવાર અર્થાત્ આ પાર પેલી પાર જઈએ છીએ ચક્રથુઃ-સિદ્ધ કરો કે યેન-જેથી દેવત્રા-દેવામાં મનસા-વિજ્ઞાનની સાથે સુપ્તની-જેનું સુંદર ગમન છે તે આપ નિરૂહથુઃ-નિરંતર તે નૌકા આદિ યાનોને વહાવો અને મહઃ-બહુ જ ક્ષોદસઃ-જળની પૈતથુઃ-પાર જઈએ-કરીએ.

ભાવાર્થ : જેઓ વિશાળ અને દૃઢ નૌકાઓ રચીને સમુદ્રની મધ્યમાં ગમનાગમન કરે છે, તેઓ સ્વયં સુખી થઈને બીજાને સુખી કરે છે. (૫)

અવવિદ્ધં તૌગ્રમપ્સ્વન્તરનારમ્ભુણે તમસિ પ્રવિદ્ધમ્ ।

ચતસ્રો નાવો જઠલસ્ય જુષ્ટા ઉદ્શ્વિભ્યામિષ્ઠિતાઃ પારયન્તિ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : જે અશ્વિભ્યામ્-વાયુ અને અગ્નિથી ઇષિતાઃ-પ્રેરિત અર્થાત્ વાયુ અને અગ્નિના બળથી ચાલેલી એક-એક ચોતરફી ચતસ્રઃ-ચાર-ચાર નાવઃ-નૌકાઓ જઠલસ્ય-ઉદરની સમાન સમુદ્રમાં જુષ્ટાઃ-સેવન કરેલી અનારમ્ભુણે-જેનું અવિદ્યમાન આરંભણ તે તમસિ-અંધકારમાં પ્રવિદ્ધમ્-સમ્યક્ વ્યથિત અપ્સુ-જળોની અન્તઃ-અંદર અવવિદ્ધમ્-વિશેષ પીડા પામેલ તૌગ્રમ્-બળને શ્રદ્ધણ કરનારાઓમાં પ્રસિદ્ધ

જનને **ઉત્પાર્યન્તિ**-ઉત્તમતાથી પાર પહોંચાડે છે. તેવી વિદ્વાનોએ (નૌકાઓ) બનાવવી જોઈએ. (૬)
ભાવાર્થ : મનુષ્યો જ્યારે નૌકામાં બેસીને સમુદ્ર-માર્ગથી જવા ઈચ્છે, ત્યારે મોટી નૌકાની સાથે નાની નૌકા બાંધીને સમુદ્રમાં ગમનાગમન કરે. (૬)

**કઃ સ્વિદ્ વૃક્ષો નિષ્ઠિતો મધ્યે અર્ણસો યં તૌગ્યો નાધિતઃ પર્યષસ્વજત્ ।
પૂર્ણા મૃગસ્ય પ્તરૌરિવારભ્ ઉદશ્વિના ઠહથુઃ શ્રોમતાય કમ્ ॥ ૭ ॥**

પદાર્થ : હે અશ્વિના-જળ અને અગ્નિ સમાન વિમાનાદિ યાનોના રચનારા અને પહોંચાડનારા વિદ્વાનો ! **અર્ણસઃ**-જળની **મધ્યે**-મધ્યમાં **કઃ**-સ્વિત્-કોણ **વૃક્ષઃ**-વૃક્ષ **નિષ્ઠિતઃ**-નિરંતર સ્થિર થઈ રહેલ છે ? **યમ્**-જેને **નાધિતઃ**-કષ્ટને પ્રાપ્ત **તૌગ્યઃ**-બળવાનોમાં પ્રસિદ્ધ થયેલ પુરુષ **પર્યષસ્વજત્**-લાગે અર્થાત્ જેમાં અટકે છે અને **મૃગસ્ય**-શુદ્ધ કરવા યોગ્ય **પ્તરૌરિવ**-ગમનશીલ પ્રાણીના **પૂર્ણા**-પાંખોની સમાન **શ્રોમતાય**-પ્રશસ્ત કીર્તિયુક્ત વ્યવહારને માટે **આરભે**-આરંભ કરવા માટે **કમ્**-કોણ યાનને **ઉત્**; **ઠહથુઃ**-ઉપરના માર્ગે પહોંચાડે છે ? (૭)

ભાવાર્થ : હે નૌકાથી જનારાઓ ! (શું) સમુદ્રની વચ્ચે કોઈ વૃક્ષ છે, જેથી બાંધેલી નૌકા ઉભી રહે ? ત્યાં કોઈ વૃક્ષ નથી કોઈ આધાર નથી, પરંતુ નૌકા જ આધાર છે અને ચરિત્ર = હલેસા જ થાંભલા છે. એ જ રીતે જેમ પક્ષી ઉપર જઈને નીચે આવે છે, તેમજ વિમાન છે. (૭)

તદ્વાં નરા નાસત્યાવનું ષ્યાદ્યદ્વાં માનાસ ઉચથમવોચન્ ।

અસ્માદ્દ્ય સદસઃ સોમ્યાદા વિદ્યામેષં વૃજનં જીરદાનુમ્ ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે નરા-નાયક-અગ્રણી **નાસત્યૌ**-અસત્ય આચરણથી રહિત અધ્યાપકો-ઉપદેશકો ! **યત્**-જે **વામ્**-તમને બન્નેને **અનુ**, **ષ્યાત્**-ઈચ્છતા અનુકૂળ થાય, **તત્**-તે આપ લોકોને થાય અર્થાત્ પરિપૂર્ણ થાય અને **માનાસઃ**-વિચારશીલ સજ્જન પુરુષ **યત્**-જે **ઉચથમ્**-કહેવા યોગ્ય વિષયને **અવોચન્**-કહે, તેને તમે બન્ને ગ્રહણ કરો.

જેમ **અદ્ય**-આજ **તસ્માત્**-તે **સોમ્યાત્**-સોમ ગુણ સંપન્ન **સદસઃ**-સભાસ્થાનથી **ઙ્ઘમ્**-ઈચ્છા સિદ્ધિ **વૃજનમ્**-બળ **જીરદાનુમ્**-જીવનના ઉપાયને અમે આ, **વિદ્યામ**-પ્રાપ્ત થઈએ-કરીએ. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને એ સમુચિત છે, કે તે જે પોતાના માટે ઈચ્છે, તે બીજાઓને માટે પણ ઈચ્છે. વિદ્વાનો જે-જે ઉપદેશ કરે, તે-તે પ્રેમપૂર્વક ગ્રહણ કરે. (૮)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાનોના કાર્યોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૮૨)

સૂક્ત-૧૮૩

ઋગ્વેદભાષ્ય

(૭૫૫)

तं युञ्जाथां मनसो यो जवीयान् त्रिवन्धुरो वृषणा यस्त्रिचक्रः ।
येनोपयाथः सुकृतौ दुरोणं त्रिधातुना पतथो विर्न पर्णैः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે વૃષણા-બળવાન સર્વ વિદ્યા સંપન્ન શિલ્પવિદ્યાના અધ્યાપકો-ઉપદેશકો ! તમે ય:- જે પર્ણે:-પાંખોથી વિ:, ન-પંખીની સમાન મનસ:-મનથી જવીયાન્-અત્યંત વેગવાન ત્રિવન્ધુર:-અને ત્રણ બંધન જેમાં વિદ્યમાન છે ય:-તથા જે ત્રિચક્ર:-ત્રણ ચક્રવાળો રથ છે. યેન-જે ત્રિધાતુના-ત્રણ ધાતુવાળા રથથી સુકૃત:-ધર્માત્મા પુરુષના દુરોણમ્-ઘરની ઉપયાથ:-નિકટ જાઓ છો, તમ્-તેને યુજ્જાથામ્-જોડો-યોજો.

ભાવાર્થ : જે લોકો શીઘ્ર પહોંચાડનાર, પક્ષીની સમાન આકાશમાં જવાના સાધનરૂપ અને અંગો તથા ઉપાંગો સહિત સારી રીતે નિર્મિત યાનને સિદ્ધ કરી શકતા નથી, તેઓ ઐશ્વર્ય કેમ પ્રાપ્ત કરી શકે ? (૧)

सुवृद्रथो वर्तते यन्नभि क्षां यत्तिष्ठथः क्रतुमन्तानु पृक्षे ।
वपुर्वपुश्या संचतामियं गीर्दिवो दुहित्रोषसा सचेथे ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે ક્રતુમન્તા-બહુ જ ઉત્તમ બુદ્ધિયુક્ત રથોને ચલાવવા અને સિદ્ધ કરનારા વિદ્વાનો ! તમે સુવૃત્-સુંદરતાથી સ્વીકાર કરવા રથ:-અને રમણ કરવા યોગ્ય રથ ક્ષામ્-પૃથિવીમાં યન્-જતા અભિ-સર્વત્રથી વર્તતે-વર્તમાન છે.

યત્-જેમાં પૃક્ષે-બીજાઓના સંબંધમાં તમે તિષ્ઠથ:-સ્થિર થાઓ છો અને જે વપુ:-રૂપ છે અર્થાત્ જે ચિત્ર જેવું બની રહેલ છે તે સર્વત્રથી વપુષ્યા-સુંદર રૂપમાં પ્રસિદ્ધ થયેલ વ્યવહારોનો અનુ, સચતામ્-અનુકૂળતાથી સંબંધ કરો.

જેમ ઇયમ્-આ ગી:-સુશિક્ષિત વાણી અને કહેનાર મનુષ્ય દિવ:-સૂર્યની દુહિત્રા-કન્યાની સમાન વર્તમાન ઉષ્સા-પ્રભાતવેળાથી તમે બન્ને સચેથે-સંયુક્ત થાઓ છો, તેથી તમે કેમ ભાગ્યશાળી ન બનો ? (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જે યાનથી જવા ઈચ્છે તે સુંદર પૃથિવી આદિ પર શીઘ્ર ચાલવા યોગ્ય અને ઊંચાની સમાન પ્રકાશમાન જે રીતે બની શકે, તેમ તેને વિચારપૂર્વક બનાવે. (૨)

आ तिष्ठतं सुवृतं यो रथो वामनु व्रतानि वर्तते हविष्मान् ।
येन नरा नासत्येष्वध्यै वर्तिर्याथस्तनयाय त्मने च ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે નરા-અગ્રણીનાયક નાસત્યા-સત્યવિદ્યા ક્રિયાયુક્ત પુરુષો ! ય:-જે હવિષ્માન્-બહુ ખાવા યોગ્ય પદાર્થોવાળો રથ:-રથ વામ્-તમારા બન્નેને અનુવર્તતે-અનુકૂળ વર્તમાન છે. યેન-જેથી ઇષ્યધ્યૈ-

લઈ જવાને વ્રતાનિ-શીલ-ઉત્તમ ભાવોની વૃદ્ધિ કરીને તનયાય-સંતાનને માટે ચ-અને ત્મને-પોતાને માટે પણ વર્તિ:-માર્ગને યાથ:-જાઓ છો, સુવૃત્તમ્-તે સર્વાંગ સુંદર રથમાં તમે બન્ને આ, તિષ્ઠતમ્-સારી રીતે સ્થિર થાઓ. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો પોતાના સંતાન આદિની સુખમય ઉન્નતિ માટે સુદૃઢ, વિશાળ સાંગોપાંગ, સમસ્ત સાધનોથી પરિપૂર્ણ, શીઘ્રગામી અને ભક્ષ્ય, ભોજ્ય, પેદ્ય અને યોધ્ય આદિ (ખાદ્ય પદાર્થો)થી યુક્ત યાનથીભૂમિ, સમુદ્ર અને આકાશ માર્ગોમાં અત્યંત એકાગ્રતાથી જાય અને આવે. (૩)

મા વાં વૃકો મા વૃકીરા દંધર્ષીન્મા પરિ વર્ક્તમુત માર્તિ ધક્તમ્ ।

અયં વાં ભાગો નિહિત્ત્વ ઙ્ગયં ગીર્દસ્ત્રાવિમે વાં નિધયો મધૂનામ્ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે દસ્ત્રૌ-દુઃખનાશક શિલ્પવિદ્યા અધ્યાપકો-ઉપદેશકો ! વામ્-તમારા બન્નેના ઙ્ગમે-એ મધૂનામ્-મધુરાદિ ગુણયુક્ત પદાર્થોનો નિધય:-રાશી સમૂહ વામ્-તમારા બન્નેનો અયમ્-એ ભાગ:-સેવન કરવા યોગ્ય અધિકાર નિહિત્ત્વ-સ્થાપિત અને ઙ્ગયમ્-આ ગી:-વાણી છે. તમે બન્ને અમને મા, પરિ, વર્ક્તમ્-ત્યાગો નહિ. ઙ્ગ-અને મા, અતિ, ધક્તમ્-વિનાશ કરો નહિ અને જેથી વામ્-તમારા બન્નેનો વૃક:-ચોર, ઠગ, ખીસાકાતરુ-ગઠીયા આદિ દુષ્ટજન મા-વિનાશ કરે નહિ વૃકી:-ચોરી કરનાર, ઠગારી, ખીસા કાતરનારી આદિ દુષ્ટ સ્ત્રીઓ મા, આ દઘર્ષીત્-વિનાશ કરે નહિ, નષ્ટ કરે નહિ. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જ્યારે ઘરમાં નિવાસ કરે અથવા યાનોમાં (બેસીને) વનમાં પ્રસ્થાન કરે, ત્યારે ભોગ અને ઉપભોગ યોગ્ય પદાર્થોની, શસ્ત્રાસ્ત્રોની તથા વીરસેનાની વ્યવસ્થા કરીને ત્યારે નિવાસ કરે અથવા જાય, તેથી કોઈ વિઘ્ન ન આવે-ઉત્પન્ન ન થાય. (૪)

યુવાં ગોતમઃ પુરુમીઢો અત્રિર્દસ્ત્રા હવતેઙ્ગવસે હવિષ્માન્ ।

દિશં ન દિષ્ટામૃજૂયેવ્ યન્તા મે હવં નાસત્યોર્પ યાતમ્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે દસ્ત્રા-દુઃખ દારિદ્ર્ય વિનાશક નાસત્યા-સત્યપ્રિય શિલ્પ વિદ્યાના અધ્યાપક ઉપદેશક વિદ્વાનો ! યુવામ્-તમે બન્ને ય:-જે હવિષ્માન્-પ્રશંસિત ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પુસ્મીઢા-બહુ જ પદાર્થોથી સિંચેલ અત્રિ:-નિરંતર ગમનશીલ ગોતમઃ-મેધાવજન અવસે-રક્ષા આદિને માટે હવતે-ઉત્તમ પદાર્થોને ગ્રહણ કરે છે, તેમ અને જેમ યન્તા-નિયમકર્તાજન ત્રહ્મૂયેવ-જેમ સરળ માર્ગથી, તેમ દિષ્ટામ્-નિર્દેશ કરેલ દિશમ્-દિશાની ન-સમાન મે-મારા હવમ્-દાનને ઙ્ગ, આ, યાતમ્-સારી રીતે સમીપ પ્રાપ્ત થાઓ. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ નૌકા આદિ યાનોની યાત્રા કરનારા સરળ માર્ગથી અભીષ્ટ દિશામાં જાય છે, તેમ જિજ્ઞાસુ લોકો આપ્ત વિદ્વાનોની સમીપ જાય. (૫)

अतारिष्म तमसस्पारमस्य प्रति वां स्तोमो अश्विनावधायि ।
एह यातं पृथिभिर्देवयानैर्विद्यामेघं वृजनं जीरदानुम् ॥ ६ ॥

पદાર્થ : હે અશ્વિનૌ-શિલ્પવિદ્યાવ્યાપી સજ્જનો ! જેમ ઇહ-અહીં વામ્-તમારા બન્નેનો સ્તોમ:-
સ્તુતિ યોગ્ય વ્યવહાર અધાયિ-ધારણ કરેલ છે; તેમ તમારા પ્રતિ-પ્રત્યે અમે અસ્ય-આ તમસ:-અંધકારને
પારમ્-પાર કરીને અતારિષ્મ-તરીએ પહોંચીએ. જેમ અમે ઇષમ્-ઈચ્છા સિદ્ધિ, વૃજનમ્-બળ અને જીરદાનુમ્-
જીવનને વિદ્યામ-પ્રાપ્ત કરીએ, તેમ તમે બન્ને દેવયાનૈ:-વિદ્વાનો જે માર્ગોથી જાય, પથિભિ:-તે માર્ગોથી
અમને આ, યાતમ્-પ્રાપ્ત થાઓ. (૬)

ભાવાર્થ : જેઓ શિલ્પવિદ્યાના શ્રેષ્ઠ જ્ઞાતા હોય, તેઓ જ નૌકા આદિ યાનો દ્વારા પૃથિવી, સમુદ્ર
અને આકાશ માર્ગોથી (મનુષ્ય આદિને) પેલી પાર અને આ પાર મોકલી શકે છે. તેઓ જ વિદ્વાનો
(ના દ્વારા નિર્ધારિત) માર્ગોમાં અગ્નિયાન આદિથી જવામાં યોગ્ય = સમર્થ બને છે. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાનોની શિલ્પવિદ્યાના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ
સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૮૩)

સૂક્ત-૧૮૪

તા વામદ્ય તાવપરં હુવેમોચ્છન્ત્યામુષસિ વહ્નિરુક્થૈઃ ।
નાસત્યા કુહં ચિત્સન્તાવર્યો દિવો નપાતા સુદાસ્તરાય ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે નપાતા-જેનો પાત = નાશ વિદ્યમાન નથી તેઓ નાસત્યા-મિથ્યા વ્યવહારથી પૃથક્
થયેલ સત્ય પ્રિય વિદ્વાનો ! અમે અદ્ય-આજ ઉચ્છન્ત્યામ્-અનેક પ્રકારના વાસ આપનારી ઉષસિ-
પ્રભાતવેળામાં તા-તે વામ્-તમે બન્ને મહાશયોનો હવેમ-સ્વીકાર કરીએ, તૌ-અને તે આપનો અપરમ્-
પશ્ચાત્ પણ સ્વીકાર કરીએ, તમે કુહ, ચિત્-કોઈ સ્થાનમાં સન્તૌ-થયા છો અને જેમ વહ્નિ:-પદાર્થોને
એક સ્થાનમાં પહોંચાડનાર અગ્નિની સમાન અર્ય્ય:-વણિકજન સુદાસ્તરાય-અત્યંત સુંદરતાથી
ઉત્તમ આપનારને માટે ઉક્થૈ:-પ્રશંસનીય વચનોથી દિવ:-વ્યવહારમાં વર્તમાન છે, તેમ અમે પણ
વર્તીએ. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો દુલોક અને પૃથિવીલોકથી ઉપકાર ગ્રહણ કરે છે, તેમ અમે વિદ્વાનોથી
ઉપકૃત બનીએ (ઉપકાર ગ્રહણ કરીએ.) (૧)

અસ્મે ઋ ષુ વૃષણા માદયેથામુત્પર્ણીંહૈતમૂર્યા મદન્તા ।

શ્રુતં મે અચ્છૌક્તિભિર્મતીનામેષ્ટા નરા નિચેતારા ચ્ કર્ણેઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : વૃષણા-બળવાન નિચેતારા-નિત્ય જ્ઞાનવાન અને જ્ઞાનદાતા નરા-અગ્રણી વિદ્વાનો ! તમે પળીન્-પ્રશંસિત વ્યવહારવાળા અસ્મે-અમને સુ, માદયેથામ્-સુંદરતાથી આનંદિત કરો. ઝમ્વા-અને રાત્રિની સાથે મદન્તા-આનંદિત થઈને તમે દુષ્ટોનો ઉત્, હતમ્-ઉદ્ધાર કરો અર્થાત્ તેઓને તે દુષ્ટતાથી બચાવો અને મતીનામ્-મનુષ્યોની અવજ્ઞેક્તિભિઃ-શ્રેષ્ઠ ઉક્તિઓ અર્થાત્ સુંદર વચનોથી જે હું ઇષ્ટા-વિવેક કરનાર છું, તે ચ, મે-મારી પણ સુંદર ઉક્તિને કર્ણૈઃ-કાનોથી ડ, શ્રુતમ્-તર્ક-વિતર્કપૂર્વક સાંભળો. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ અધ્યાપક અને ઉપદેશક, ભણનારા અને ઉપદેશ લેનારાઓને વેદ-વચનોથી સમજાવીને વિદ્વાન બનાવે છે, તેમ તેઓનાં વચનને સાંભળીને સર્વેએ તેઓને સદા આનંદિત કરવા યોગ્ય છે. (૨)

શ્રિયે પૂષન્નિષુકૃતેવ દેવા નાસત્યા વહતું સૂર્યાયાઃ ।

વચ્યન્તે વાં કકુહા અપ્સુ જાતા યુગા જૂર્ણેવ વરુણસ્ય ભૂરૈઃ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે પૂષન્-પોષક ! તું દેવા-દાતા નાસત્યા-મિથ્યા વ્યવહારના વિરોધી અધ્યાપકો-ઉપદેશકો સૂર્યાયાઃ-સૂર્યની કાન્તિની વહતુમ્-પ્રાપ્તિ કરનાર વ્યવહારને ઇષુકૃતેવ-જેમ વાણીથી સિદ્ધ કરેલ બે પદાર્થ હોય, તેમ શ્રિયે-લક્ષ્મી માટે પ્રયત્ન કર.

હે અધ્યાપકો-ઉપદેશકો ! અપ્સુ-અન્તરિક્ષ પ્રદેશોમાં જાતાઃ-પ્રસિદ્ધ થયેલી કકુહાઃ-દિશા વસ્ત્રાસ્ય-શ્રેષ્ઠ સજ્જન વા જળના ભૂરૈઃ-બહુ જ ઉત્કર્ષથી યુગા-વર્ષો જે જૂર્ણેવ-પુરાતન વ્યતીત થયેલ તેની વામ્-તમારા બન્નેની વચ્યન્તે-પ્રશંસા કરે છે અર્થાત્ દિક્-દિગાન્તરોમાં તમારી પ્રશંસા થાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ બાણોથી સજ્જ સેના શત્રુઓને જીતે છે, તેમ ધન (પ્રાપ્તિ)નો ઉત્તમ ઉપાય મનુષ્ય શીઘ્ર જ કરે.

દિવસ રૂપી કાળ-વિશેષોમાં કરવા યોગ્ય કર્મ રાત્રિ-ભાગોમાં કરાતા નથી. ઉત્તમ ગુણોની તો સર્વત્ર પ્રશંસા થાય છે. (૩)

અસ્મે સા વાં માધ્વી રાતિરંસ્તુ સ્તોમં હિનોતં માન્યસ્ય કારોઃ ।

અનુ યદ્વાં શ્રવસ્યાં સુદાનૂ સુવીર્યાય ચર્ષણયો મદન્તિ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે સુદાનૂ-શ્રેષ્ઠદાતા ! જે વામ્-તમારા બન્નેનું માધ્વી-મધુર આદિ ગુણયુક્ત રાતિઃ-દાન દેવાનું વર્તમાન છે, સા-તે અસ્મે-અમારા માટે અસ્તુ-થાય. અને તમે માન્યસ્ય-પ્રશંસાને યોગ્ય કારોઃ-કરનારાઓની સ્તોમમ્-પ્રશંસાને હિનોતમ્-પ્રાપ્ત થાઓ અને શ્રવસ્યા-પોતાની સાંભળવાની ઈચ્છાથી યત્-જે વામ્-તમને સુવીર્યાય-ઉત્તમ પરાક્રમને માટે ચર્ષણયઃ-સાધારણ મનુષ્ય અનુ, મદન્તિ-અનુમોદન કરે છે, તમારી કામના કરે છે, તેને અમે પણ અનુમોદન કરીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જે આપ્તજનોની નીતિ અને વિદ્વાનજનોની સ્તુતિ મનોહર હોય, તે ઉત્તમ પરાક્રમને માટે સમર્થ હોય છે. (૪)

**एष वां स्तोमौ अश्विनावकारि मानेभिर्मघवाना सुवृक्ति ।
यातं वर्त्तिस्तनयाय त्मने चागस्त्ये नासत्या मदन्ता ॥ ५ ॥**

પદાર્થ : હે મઘવાના-પરમપૂજિત અધ્યાપકો-ઉપદેશકો ! **एषः**-આ વામ્-તમારી બન્નેની **स्तोमः**-પ્રશંસાને **मानेभिः**-જેઓ માને છે, તેઓના **सुवृक्ति**-જેમ સુંદર ત્યાગ હોય, તેમ **अकारि**-કરેલ છે અર્થાત્ માત્ર મોઢેથી મિથ્યા પ્રશંસા કરી નથી.

હે **नासत्या**-સત્યમાં નિરંતર સ્થિર રહેનારા **अश्विनौ**-અધ્યાપકો-ઉપદેશકો ! **अगस्त्ये**-અપરાધરહિત માર્ગમાં **मदन्ता**-શુભ કામના કરતા તમે **तनयाय**-ઉત્તમ સંતાન અને **त्मने**, **च**-પોતાના માટે **वर्त्तिः**-સન્માર્ગને **यातम्**-પ્રાપ્ત થાઓ. (૫)

ભાવાર્થ : તે જ સ્તુતિ હોય છે, જેને વિદ્વાનો માને છે. તેવું જ (કાર્ય) પરોપકાર હોઈ શકે છે, જેમ કે પોતાના સંતાનને માટે અથવા પોતાના માટે ઈચ્છવામાં આવે છે. તે જ ધર્મમાર્ગ હોઈ શકે છે, જેમાં આપ્ત લોકો જાય છે. (૫)

**अतारिष्म तमसस्पारमस्य प्रति वां स्तोमौ अश्विनावधायि ।
एह यातं पृथिभिर्देवयानैर्विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ ६ ॥**

પદાર્થ : હે **अश्विनौ**-વિશેષ ઉપદેશ આપનારા ! **इह**-આ જાણવા યોગ્ય વ્યવહારમાં જે **स्तोमः**-પ્રશંસા **वाम्**-તમારા બન્નેના **प्रति**-પ્રત્યે **अधायि**-ધારણ કરેલી તેથી **अस्य**-આ **तमसः**-અવિદ્યા-અંધકારની **पारम्**-પાર તટે **अतारिष्म**-પહોંચે. જેમ તમે **देवयानैः**-આપ્ત વિદ્વાન જે માર્ગમાં જાય છે, તે **पृथिभिः**-માર્ગોથી **इषम्**-ઈષ્ટ સુખ **वृजनम्**-શારીરિક અને આત્મિક બળ તથા **जीरदानुम्**-જીવાત્માને **आ**, **यातम्**-પ્રાપ્ત થાઓ, તેમ એને અમે પણ **विद्याम**-પ્રાપ્ત થઈએ. (૬)

ભાવાર્થ : તે જ મનુષ્યોને વિદ્યાની પેલે પાર પહોંચાડી શકે છે, જેઓ ધર્મ માર્ગ પર જ ચાલે છે અને યથાર્થના ઉપદેશકર્તા હોય છે. (૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અધ્યાપકો અને ઉપદેશકોના લક્ષણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૮૪)

सूक्त-१८५

कतरा पूर्वी कतरापरायोः कथा जाते कवयः को वि वैद ।

विश्वं त्मना बिभृतो यद्द नाम वि वर्त्तेते अहनी चक्रियैव ॥ १ ॥

पदार्थ : હે કવચ:-વિદ્વાનો ! અયો:-ઘાવા-પૃથિવીમાં વા કાર્ય-કારણોમાં કતરા-કોણ પૂર્વા-પૂર્વ કતરા-કોણ અપરા-પશ્ચાત્ છે. એ ઘાવા-પૃથિવી વા સંસારના કારણ અને કાર્યરૂપ પદાર્થો કથા-કેવી રીતે જાતે-ઉત્પન્ન થયા છે, એ વિષયને ક:-કોણ વિ, વેદ-વિવિધ રીતે જાણે છે.

ત્મના-આપ પ્રત્યેક યત્-જે હ-નિશ્ચિત વિશ્વમ્-સમસ્ત જગત્ નામ-પ્રસિદ્ધ છે, તેને વિભૂત:-ધારણ કરો છો વા પુષ્ટ કરો છો અને તે અહનિ-દિવસ-રાત્રિ ચક્રિયેવ-ચાકડાની સમાન ધૂમે છે, તેમ વિ, વર્તેતે-વિવિધ પ્રકારથી વર્તમાન છે. (૧)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે આ સંસારમાં દુલોક અને પૃથિવીલોક છે તથા પૂર્વના કારણ નામક અને પશ્ચાતના કાર્ય નામક પદાર્થો છે, જે આધાર-આધેય રૂપી સંબંધી દિવસ-રાતની સમાન વર્તમાન છે, તેને તમે જાણો. (૧)

भूरिं द्वे अचरन्ती चरन्तं पृद्वन्तं गर्भमपदी दधाते ।

नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थे द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે દ્યાવાપૃથિવી-ઘાવાપૃથિવીની સમાન વર્તમાન માતા-પિતરો ! જેમ અચરન્તી-આમ-તેમ પોતાની કક્ષા છોડીને ન જનાર અપદી-પગોથી રહિત દ્વે-બન્ને ઘાવા પૃથિવી ભૂરિમ્-બહુ જ પદ્ધન્તમ્-પગવાળા ચરન્તમ્-ચાલીને ગર્ભમ્-કાર્યરૂપ જગતને પિત્રો:-માતા-પિતાની ઉપસ્થે-ગોદમાં નિત્ય સૂનુમ્-પુત્રની ન-સમાન દધાતે-ધારણ કરે છે, તેમ અભ્વાત્-મિથ્યાચરણથી ઉત્પન્ન થયેલ દુઃખથી ન:-અમારી રક્ષતમ્-રક્ષા કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ ભૂમિ અને સૂર્ય દેહ રહીને જડ અને ચેતન જગતનું અનેક રીતે પાલન કરી તેની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ માતા-પિતા અને અતિથિ તથા આચાર્ય સંતાનોને તથા શિષ્યોને સંરક્ષિત કરીને વિદ્યા અને સુશિક્ષા દ્વારા વૃદ્ધિ-ઉન્નતિ કરે. (૨)

अनेहो दात्रमदितेरनर्व हुवे स्वर्वदवधं नमस्वत् ।

तद्रोदसी जनयतं जरित्रे द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હું અદિતે:-પૃથિવી વા સૂર્યના અનેહ:-ન વિનાશ યોગ્ય અનર્વમ્-જેમાં અશ્વનો સંબંધ નથી એવા સ્વર્વત્-સુખયુક્ત તથા અવધમ્-જેનો નાશ નથી નમસ્વત્-જેમાં પ્રશંસિત અન્ન વિદ્યમાન છે, તે દાત્રમ્-દાનપાત્ર માત્રનો હુવે-સ્વીકાર કરું છું.

હે રોદસી-દિવસ-રાત્રિની સમાન વર્તમાન માતા-પિતાઓ ! તત્-તે દાન કર્મની જરિત્રે-સ્તુતિ કરીને મારા માટે જનયતમ્-ઉત્પન્ન કરો.

હે દ્યાવાપૃથિવી-ઘાવા પૃથિવીની સમાન વર્તમાન માતા-પિતાઓ ! ન:-અમને અભ્વાત્-અધર્મથી

रक्षतम्-भयावो. (३)

भावार्थ : જે એ ભૂમિ, સૂર્ય અને અન્ય પ્રત્યક્ષ પદાર્થ દેખાય છે, તે અવિનાશી અનાદિકારણ (= પ્રકૃતિ) થી ઉત્પન્ન થયેલ છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૩)

अतप्यमाने अवसावन्ती अनु घ्याम् रोदसी देवपुत्रे ।

उभे देवानामुभयैभिरह्नां द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અતપ્યમાને-સંતાપરહિત અવસા-રક્ષા આદિ અવન્તી-રક્ષા કરતી દેવપુત્રે-દેવ જે પરમાત્મા તેની પુત્રની સમાન વર્તમાન ઉભે-બન્ને રોદસી-પ્રકાશભૂમિ અહ્નામ્-દિવસોમાં ઉભયેભિઃ-સ્થાવર અને જંગમોની સાથે દેવાનામ્-દિવ્ય જલાદિ પદાર્થોથી જીવન રક્ષા કરે છે, તેમ-હે દ્યાવાપૃથિવી-આકાશ અને પૃથિવીની સમાન વર્તમાન માતા-પિતાઓ ! તમે બન્ને અભ્વાત્-અપરાધથી નઃ-અમારી રક્ષતમ-રક્ષા કરો, જેથી અમે અનુ, સ્યામ-પાછળથી સુખી થઈએ. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ પૃથિવી આદિ પદાર્થો સર્વ સ્થાવર = જડ જંગમ = ચેતનનું પાલન કરે છે, તેમ માતા, પિતા, આચાર્ય અને રાજા આદિ પ્રજાઓની રક્ષા કરે. (૪)

संगच्छमाने युवती समन्ते स्वसारा जामी पित्रोरुपस्थे ।

अभिजिघ्रन्ती भुवनस्य नाभिं द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् ॥ ५ ॥

પદાર્થ : પિત્રોઃ-માતા-પિતાની ઉપસ્થે-ગોદમાં સંગચ્છમાને-સહગામિની જામી-બે કન્યાઓની સમાન વા યુવતી-તરુણ બે સ્ત્રીઓની સમાન વા સમન્તે-પૂર્ણ સિદ્ધાન્ત જેના છે તે બે સ્વસારા-બહેનોની સમાન ભુવનસ્ય-સંસારના નાભિમ્-મધ્યસ્થ આકર્ષણને અભિ, જિઘ્રન્તી-ગંધની સમાન સ્વીકાર કરીને દ્યાવા, પૃથિવી-આકાશ અને પૃથિવીની સમાન માતા-પિતાઓ ! તમે નઃ-અમારી અભ્વાત્-અપરાધથી રક્ષતમ્-રક્ષા કરો. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યા ભણેલ યુવાવસ્થાયુક્ત અને પ્રેમયુક્ત કન્યા અને વર સુખી થાય છે, તેમ દુલોક અને પૃથિવીલોક પણ સંસારના કલ્યાણના માટે વર્તમાન છે. (૫)

उर्वी सद्मनी बृहती ऋतेन हुवे देवानामवसा जनित्री ।

दधाते ये अमृतं सुप्रतीके द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે માતા-પિતાઓ ! જે-જે ઉર્વી-બહુ વિસ્તીર્ણ સદમની-સર્વની નિવાસસ્થાન બૃહતી-મહાન ઋત્નેન-જળથી અને અવસા-રક્ષા આદિની સાથે દેવાનામ્-વિદ્વાનોની જનિત્રી-ઉત્પન્ન કરનારી સુપ્રતીકે-સુંદર પ્રતીતિનો વિષય દ્યાવા પૃથિવી-આકાશ અને પૃથિવી અમૃતમ્-જળને દધાતે-ધારણ કરે છે અને

પદાર્થ : **उभा-બન્ને શંસા-પ્રશંસાને પ્રાપ્ત નર્ચ્યા-મનુષ્યોમાં ઉત્તમ દાવાપૃથિવી સમાન માતા-પિતા મામ્-મારી અવિષ્ટામ્-રક્ષા કરે અને મામ્-મને ઉભે-બન્ને ऊती-રક્ષાઓ अवसा-અન્યોની રક્ષા આદિની સાથે सचेताम्-પ્રાપ્ત થાય.**

હે **देवा:-**વિદ્વાનો ! **अर्य:-**વણિકજન = વેશ્ય **सुदास्तराय-જેમ** પુષ્કળ દાતાને માટે **भूरि, चित्-બહુ** જ આપે, તેમ **मदन्त:-**સુખી થઈને અમે **इषा-ઈચ્છાથી इषयेम-પ્રાપ્ત** થઈએ. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અને ચંદ્રમા સર્વથી સંયુક્ત થઈને પ્રાણીઓને સુખી કરે છે અને જેમ વાસ્તવિક ધનવાન વેશ્ય બહુ જ અન્ન આદિ આપીને ભિક્ષુકોને તૃપ્ત કરે છે, તેમ વિદ્વાનો સર્વને તૃપ્ત કરવામાં પ્રવૃત્ત થાય. (૯)

ऋतं दिवे तदवोचं पृथिव्या अभिश्रावाय प्रथमं सुमेधाः ।

पातामवद्यादुरितादभीके पिता माता च रक्षतामवोभिः ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ **सुमेधा:-**ઉત્તમ પ્રજ્ઞાવાન હું **अभिश्रावाय-જે** સર્વત્રથી સાંભળે અને સાંભળાવે તેને માટે **पृथिव्यै-પૃથિવી** સમાન વર્તમાન ક્ષમાશીલ સ્ત્રીને માટે જે **प्रथमम्-પ્રથમ ऋहम्-સત્ય अवोचम्-ઉપદેશ કરું** અને કહું. **तत्-તેને दिवे-ઉત્તમ દિવ્યવાણાના** માટે પણ ઉપદેશ કરું અને કહું.

જેમ **अभीके-કામના** માટે કરેલ વ્યવહારમાં વર્તમાન **अवद्यात्-નિંદાને** યોગ્ય **दुरितात्-દુષ્ટ** આચરણથી યુક્ત ઉક્ત બન્ને **पाताम्-રક્ષા** કરે, તેમ **पिता-પિતા च-અને माता-માતા अवोभिः-રક્ષા** આદિ વ્યવહારોથી મારી **रक्षताम्-રક્ષા** કરે. (૧૦)

ભાવાર્થ : ઉપદેશકોએ શ્રોતાઓ પ્રતિ આ રીતે કહેવું જોઈએ-જેવા પ્રિય અને લોક કલ્યાણકારી સત્યવચન મારા દ્વારા બોલવામાં આવે, તેમ તમારે પણ બોલવા જોઈએ.

જેમ માતા-પિતા પોતાના સંતાનોની સેવા કરે છે, તેમ સંતાનોએ પણ તેઓની સેવા કરવી જોઈએ. (૧૦)

इदं द्यावापृथिवी सत्यमस्तु पितृमार्तर्यदिहोपब्रुवे वाम् ।

भूतं देवानामवमे अवोभिर्विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ ११ ॥

પદાર્થ : હે **द्यावापृथिवी-આકાશ** અને **पृथिवीની** સમાન વર્તમાન **मातः, पितः-માતા-પિતાઓ !** **देवानाम्-વિદ્વાનોના अवमे-રક્ષા** આદિ વ્યવહારોમાં **भूतम्-ઉત્પન્ન થયેલ यत्-જે** વ્યવહારથી **इह-અહીં वाम्-તમારી उपब्रुवे-સમીપ કહું છું. तत्-તે इदम्-આ सत्यम्-સત્ય अस्तु-થાય જેથી** અમે તમારી **अवोभिः-પાલનાઓથી इषम्-ઈચ્છા सिद्धि, वृजनम्-બળ** અને **जीरदानुम्-જીવનને विद्याम-પ્રાપ્ત** કરીએ. (૧૧)

ભાવાર્થ : પિતા આદિ સંતાનો પ્રતિ આ રીતે ઉપદેશ આપે-‘જે અમારા ધાર્મિક કાર્યો છે, તેઓનું જ તમારે સેવન કરવું જોઈએ. બીજાઓનું નહિ.’

સંતાનો પિતા આદિને પ્રતિ કહે- 'જે અમારા સત્ય આચરણ છે, તેઓનું જ આપ લોકોએ આચરણ કરવું જોઈએ, તેનાથી વિપરીત નહિ.' (૧૧)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં ઘાવાપૃથિવીના દ્રષ્ટાન્તથી ઉત્પન્ન થવા યોગ્ય અને ઉત્પાદક કર્મોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૮૫)

સૂક્ત-૧૮૬

આ ન્ ઙ્ઙાભિર્વિદથે શુશ્સ્તિ વિશ્વાનરઃ સવિતા દેવ ંતુ ।

અપિ યથા યુવાનો મત્સથા નો વિશ્વં જગદભિપિત્વે મનીષા ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ જેમ વિશ્વાનરઃ-સર્વ પ્રાણીઓને પહોંચાડનાર અર્થાત્ તેઓના શુભાશુભ કર્મોનું પરિણામ કરનાર દેવઃ-દેદીપ્યમાન અર્થાત્ સવિતા-સૂર્ય સમાન આપ પ્રકાશમાન ઈશ્વર શુશ્સ્તિ-સુંદર પ્રશંસાઓથી અભિપિત્વે-સર્વત્રથી પ્રાપ્તવ્ય વિદથે-વિજ્ઞાનમય વ્યવહારમાં વિશ્વમ્-સમગ્ર જગત્-જગતને પ્રાપ્ત છે, તેમ ઙ્ઙાભિઃ-અન્નાદિ પદાર્થ વાણીની સાથે નઃ-અમને આ, ંતુ-પ્રાપ્ત થઈ આવે.

હે યુવાનઃ-યુવાવસ્થા પ્રાપ્ત તરુણજનો ! યથા-જેમ તમે મનીષા-ઉત્તમ બુદ્ધિથી આ વ્યવહારમાં મત્સથ-આનંદિત થાઓ, તેમ નઃ-અમને અપિ-પણ આનંદિત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ પરમાત્મા પક્ષપાતરહિત સર્વનો ન્યાય કરે છે અને સર્વમાં સમાન પ્રેમ રાખે છે, તેમ વિદ્વાનોએ પણ થવું જોઈએ.

જેમ યુવક પોતાની સમાન અને હૃદયને પ્રિય યુવતીઓ સાથે વિવાહ કરીને સુખી થાય છે, તેમ વિદ્વાનો વિદ્યાર્થીઓને વિદ્વાન બનાવીને પ્રસન્ન થાય છે. (૧)

આ નો વિશ્વ આસ્ક્રાં ગમન્તુ દેવા મિત્રો અર્ચમા વરુણઃ સ્જોષાઃ ।

ભુવન્યથા નો વિશ્વે વૃધાસઃ કરન્ત્સુષાહા વિથુરં ન શવઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તેમ મિત્રઃ-પ્રાણની સમાન વર્તમાન-અર્ચમા-ન્યાયકારી, વરુણઃ-અતિ શ્રેષ્ઠ, સ્જોષાઃ-સમાન પ્રીતાદિ સેવન રાખનાર અને આસ્ક્રાઃ-શત્રુદળને પાદાકાન્ત કરીને પગ નીચે દબાવનાર વિશ્વે-સમસ્ત દેવાઃ-વિદ્વાનો નઃ-અમને આ, ગમન્તુ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય.

યથા-જેમ વિશ્વે-સમસ્ત તે વિદ્વાનો નઃ-અમારા વૃધાસઃ-સુખવર્ધક ભુવન્-થાય અને સુષાહા-સુંદર જેના સહન, ક્ષમા, શાન્તિકારક તે જન વિથુસ્-વ્યર્થ પીડાદાયક પદાર્થની ન-સમાન તીવ્ર શવઃ-બળ કરન્-કરે. (૨)

ભાવાર્થ : જે માર્ગથી વિદ્વાન જાય, તેના પર સર્વ જાય. જેમ આપ્તજન પોતાના આત્માની સમાન અન્યોના સુખ-દુઃખોને જાણે છે, તેમ જ સર્વે એ બનવું જોઈએ. (૨)

પ્રેષ્ઠં વો અત્તિથિં ગૃણીષેઽગ્નિં શ્સ્તિભિસ્તુર્વણિઃ સ્જોષાઃ ।

ઋગ્વેદભાષ્ય

૭૬૫

असद्यथा नो वरुणः सुकीर्त्तिरिषश्च पर्षदरिगूर्तः सूरिः ॥ ३ ॥

पदार्थ : હે વિદ્વાન ! જેમ તુર્વણિ:-શીઘ્રગામી અને સજોષા:-સમાન પ્રીતિકારક આપ શસ્તિભિ:-પ્રશંસાઓથી અગ્નિમ્-અગ્નિની સમાન વર્તમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત પ્રેષ્ટમ્-અતિ પ્રિય અતિથિમ્-અતિથિસમાન વર્તમાન વિદ્વાનની ગૃણીષે-પ્રશંસા કરો છો; વા યથા-જેમ અરિગૂર્ત:-શત્રુઓમાં ઉદમ કરનાર અને સુકીર્ત્તિ:-પુણ્ય પ્રશંસનીય વરુણ:-ઉત્તમ વિદ્વાન ન:-અમને ઇષ:-અન્નાદિ પદાર્થ ચ-અને ઇચ્છાઓને પર્યત્-સીચે; વા સૂરિ:-અત્યંત પ્રવીણ વિદ્વાન અસત્-થાય, તેમ વ:-તમારા પ્રતિ વર્તે. (૩)

ભાવાર્થ : જે ગૃહસ્થો આપ્ત વિદ્વાનો તથા અતિથિઓની સેવા કરે છે અને ધાર્મિક વ્યવહારોમાં પરિશ્રમ કરે છે, તેઓ યથાર્થ વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને શ્રીમાન બને છે. (૩)

उप व एषे नमसा जिगीषोषासानक्ता सुदुधैव धेनुः ।

समाने अहंन्विमिमानो अर्कं विषुरूपे पर्यसि सस्मिन्नूधन् ॥ ४ ॥

પદાર્થ : સમાને-એક જેવા અહન્-દિવસમાં અર્કમ્-સત્કાર કરવા યોગ્ય અન્ન વિમિમાન:-વિશેષતાથી નિર્માણ કરનાર હું ઉષાસાનક્તા-દિવસ-રાત્રિની સમાન વા ધેનુ:-વાણી જે સુદુધેવ-સુંદર કામના પૂર્ણ કરનારી તેની સમાન નમસા-અન્નાદિ પદાર્થથી જિગીષા-જીતવાની ઇચ્છા જેમ હોય, તેમ વિષુક્ષ્મે-અનેક પ્રકારના રૂપવાળા પર્યસિ-જળ અને સસ્મિન્-સમાન ઋધન્-દૂધને માટે વ:-તમારી ઉપ, આ, ઈષે-સમીપ સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાઉં છું. (૪)

ભાવાર્થ : જે રાત અને દિવસની સમાન વર્તમાન વિદ્યા અને અવિદ્યાને જાણીને, સર્વ કાળમાં ઉદ્યોગ કરીને તથા ગાયની સમાન પ્રાણીઓ પર ઉપકાર કરીને દુષ્ટોને જીતે છે, તેઓ દૂધમાં જ ધીની સમાન સંસારમાં 'સાર ભૂતા ભવન્તિ; સારભૂત હોય છે. (૪)

उत नोऽहिर्बुध्न्योऽर्षु मयस्कः शिशुं न पिप्युषीव वेति सिन्धुः ।

येन नपातमपां जुनाम मनोजुवो वृषणो यं वहन्ति ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અમે યેન-જેથી અપામ્-જળથી નપાતમ્-પતનને ન પ્રાપ્ત પદાર્થને જુનામ-બાંધીએ. વા મનોજુવ:-મન સમાન વેગવાન વિદ્યુત્ આદિ વૃષણ:-વૃષ્ટિકારક યમ્-જેને વહન્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તે બુધ્ન્ય:-અન્તરિક્ષસ્ય અહિ:-વ્યાપ્તિશીલ મેઘ પિપ્યુષીવ-વર્ધયતિ જેમ ઉન્નતિ કરતી સ્ત્રી શિશુમ્-બાળકને ન-તેમ ન:-અમને વેતિ-વ્યાપ્ત થઈને ઉત-અને સિન્ધુ:-નદી મય-સુખને ક:-કરે છે.

ભાવાર્થ : જો મેઘ ન હોય તો માતાની સમાન પ્રાણીઓનું કોણ પાલન કરે ? જો સૂર્ય, વિદ્યુત્ અને વાયુ ન હોય, તો એ (મેઘ)ને કોણ ધારણ કરે ? (૫)

उत न ई त्वष्टा गन्त्वच्छा स्मत्सूरिभिरभिपित्वे सजोषाः ।

आ वृत्रहेन्द्रश्चर्षणिप्रास्तुविष्टमो नरां न इह गम्याः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જેમ **ઇહ**-અહીં **વૃત્રહા**-મેઘનું હનન કરનાર, **ચર્ષણિપ્રા**:-મનુષ્યોના સુખોને પૂર્ણ કરનાર, **તુવિષ્ટમ**:-અત્યંત બળવાન **ત્વષ્ટા**-પ્રકાશમાન, **ઇન્દ્ર**:-સૂર્ય **ઈમ્**-જળ-વરસાવે છે, તેમ તમે **નરામ્**-સર્વ મનુષ્યોમાં **ન**:-અમને **આ**, **ગમ્યા**:-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થાઓ; **ઉત**-અને **સ્મત્**-પ્રશંસાયુક્ત **અભિપિત્વે**-સર્વત્રથી પ્રાપ્તવ્ય વ્યવહારમાં **સજોષા**:-સમાન પ્રીતિ રાખનારા **આપ સૂરભિ**:-વિદ્વાનોની સાથે **ન**:-અમારા પ્રતિ **અચ્છ**, **આ**, **ગન્તુ**-સારી રીતે આવો. (૬)

ભાવાર્થ : જે લોકો સૂર્યની સમાન વિદ્યાને પ્રકાશિત કરે છે અને પોતાના આત્મા સમાન સર્વને માનીને તેઓને સુખી કરે છે, તેઓ જ 'બલવન્તો જાયન્તે'-બળવાન બને છે. (૬)

उत न ईं मतयोऽश्वयोगाः शिशुं न गावस्तरुणं रिहन्ति ।

तमीं गिरो जनयो न पत्नीः सुरभिष्टमं नरां नसन्त ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેઓ **અશ્વયોગા**:-અશ્વયોગ અર્થાત્ અશ્વોનો યોગ કરાવે છે, તેઓ **મતય**:-મનુષ્ય **તસ્મગ્**-તરુણ **શિશુમ્**-વાહરડાને **ન**-જેમ **ગાવ**:-ગાયો તેમ **ન**:-અમને **ઈમ્**-સર્વત્રથી **રિહન્તિ**-પ્રાપ્ત થાય છે.

જે **નરામ્**-મનુષ્યોમાં **સુરભિષ્ટમમ્**-અત્યંત સુગંધિત, સુંદર, કીર્તિમાનની **જનય**:-ઉત્પત્તિ કરાવનારાઓ **પત્ની**:-પોતાની પત્નીઓને જેમ **ન**-તેમ **નસન્ત**-પ્રાપ્ત થાય, તે **ઈમ્**-સર્વત્રથી **ગિર**:-વાણીને પ્રાપ્ત થાય છે, **તમ્**-તેને **ઉત**-જ અમે સેવીએ. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ ઘોડેસવાર શીઘ્ર બીજા સ્થાનને અથવા જેમ ગાયો વાહરડાઓને અથવા જેમ પત્નીવ્રતજનો પોતાની પત્નીઓને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ વિદ્વાનો વિદ્યા અને આપ્તજનોની વાણીને પ્રાપ્ત થાય છે. (૭)

उत न ईं मरुतो वृद्धसेनाः स्मद्रोदसी समनसः सदन्तु ।

पृषदश्वासोऽवनयो न रथा रिशादसो मित्रयुजो न देवाः ॥ ८ ॥

પદાર્થ : જેમ **મસ્ત**:-વાયુ **ઈમ્**-જળને તેમ **વૃદ્ધસેના**:-વધેલી, પ્રૌઢ, તરુણ, પ્રચંડબળ વેગવાળી જેની સેના તેઓ **ન**:-અમને **સદન્તુ**-પ્રાપ્ત થાય. **ઉત**-અને **સમનસ**:-જેનું મન સમાન છે, તે પરોપકારી વિદ્વાન **સ્મત્**-જ **રોદસી**-આકાશ અને પૃથિવીને પ્રાપ્ત થાય. **પૃષદશ્વાસ**:-જેઓના ઘોડાઓ પુષ્ટ છે, તે વિદ્વાનો વા **અવનય**:-ભૂમિ **રથા**:-રમણીય યાનોની **ન**-સમાન **રિશાદસ**:-શત્રુઓનો નાશ કરે છે અને **મિત્રયુજ**:-મિત્રોની સાથે સંયોગ રાખે છે, તેઓ **દેવા**:-વિદ્વાનોની **ન**-સમાન બને છે. (૮)

ભાવાર્થ : જે વીર સેનાવાળા, સમાન બુદ્ધિવાળા, વિશાળ યાનોવાળા, પૃથિવીની સમાન ક્ષમાશીલ

અને મિત્રોના પ્રિય વિદ્વાન જન સર્વને પ્રિય કાર્ય કરે છે, તેઓ 'પ્રસન્ના ભવન્તિ' પ્રસન્ન રહે છે.
(૮)

પ્ર નુ યદેષાં મહિના ચિકિત્રે પ્ર યુજ્જન્તે પ્રયુજ્સ્તે સુવૃક્તિ ।

અથ યદેષાં સુદિને ન શરુર્વિશ્વનેરિણં પ્રષાયન્ત સેનાઃ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : યત્-જે ણ્ણામ્-એ વિદ્વાનોના મહિન્ના-મહિમાથી પ્ર, ચિકિત્રે-ઉત્તમતાથી વિશેષ જ્ઞાનવાન વિદ્વાનને માટે પ્રયુજ્ઃ-ઉત્તમતાથી યોગ કરે છે તેને નુ-શીઘ્ર પ્રયુજ્જન્તે-સમ્યક્ યુક્ત કરે છે. અથ-તદનન્તર યત્-જે જન ણ્ણામ્-એ સમ્યક્ યોગ કરનારાઓને સુદિને-ઉત્તમ સમયમાં વિશ્વમ્-સમસ્ત ઇરિણમ્-કંપાયમાન જગતને શરુ-મારનાર વીર જન સેનાઃ-સેનાઓને જેમ ન-તેમ આ, પ્રષાયન્ત-સેવન કરે તે-તેઓ સુવૃક્તિ-સુંદર ગમન જેમાં હોય તે ઉત્તમ સુખવાળા માર્ગને પ્રાપ્ત થાય છે. (૯)

ભાવાર્થ : જે રાજા લોકો, પૂર્ણ વિદ્યાવાન અધ્યાપકોને વિદ્યાના પ્રચારમાં પ્રવૃત્ત કરે છે, તેઓ મહિમાને પ્રાપ્ત કરે છે.

જેઓ કૃતજ્ઞ અને કુલીન શૂરવીરોની સેનાઓને પુષ્ટ કરે છે, તેઓ સદા વિજય પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

પ્રો અશ્વિનાવસે કૃણુધ્વં પ્ર પૂષણં સ્વતવસો હિ સન્તિ ।

અદ્વેષો વિષ્ણુર્વાત ઋભુક્ષા અચ્છા સુમ્નાય વવૃતીય દેવાન્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે રાજા-પ્રજાજનો ! તમે જે હિ-જ સ્વતવસઃ-સ્વભળ રાખનારા અદ્વેષઃ-નિર્વેર વિદ્વાન જન સન્તિ-છે, તેને જે અશ્વિનૌ-વિદ્યા વ્યાપ્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક મુખ્ય પરીક્ષક છે, તેઓ વિદ્યાની અવસે-રક્ષા, ભણાવવી, વિચારવી, ઉપદેશ કરવો વગેરેને માટે પ્ર, કૃણુધ્વમ્-સારી રીતે નિયત કરે અને જેમ વાતઃ-વાયુની સમાન વિષ્ણુઃ-ગુણ વ્યાપ્તિશીલ ઋભુક્ષાઃ-મેધાવી હું સુમ્નામ્-સુખને માટે દેવાન્-વિદ્વાનોને અચ્છ, વવૃતીય-સમ્યક્ વર્તન કરાવું; તેમ તમે પૂષણમ્-પુષ્ટિ કરનારાઓને પ્રો-ઉત્તમતાથી નિયત કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેઓ રાગ અને દ્વેષથી રહિત, વિદ્યા અને પ્રચારમાં પ્રેમ રાખનાર, શરીર અને આત્માનાં પૂર્ણ બળથીયુક્ત અને ધાર્મિક વિદ્વાન છે, તેઓને સર્વ લોકો વિદ્યાના પ્રચાર માટે રાખે, જેથી સુખની વૃદ્ધિ થાય. (૧૦)

દ્વયં સા વૌ અસ્મે દીધિતિર્યજત્રા અપિપ્રાણીં ચ સદની ચ ભૂયાઃ ।

નિ યા દેવેષુ યતંતે વસૂયુર્વિદ્યામેષં વૃજનં જીરદાનુમ્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે યજત્રાઃ-વિદ્વાનોને પૂજનારા ! યા-જે વસૂયુઃ-ધનને ઇચ્છનારી અર્થાત્ જેનાથી ધન આદિ ઉત્તમ પદાર્થ સિદ્ધ થાય છે, તે વિદ્યાની ઉત્તમ દીપ્તિ-કાન્તિ દેવેષુ-વિદ્વાનોમાં નિ, યતંતે-નિરંતર

યત્ન કરે છે, કાર્યકારિણી હોય છે. સા, ઇયમ્-તે એ વ:-તમારી દીધિતિ:-ઉક્તિ કાન્તિ અસ્મે-અમારા માટે અપિપ્રાણી-નિશ્ચિત પ્રાણ-બળને આપનાર ચ-અને સદની-દુઃખ વિનાશથી સુખ આપનારી ચ-પણ ભૂયા:-બને, જેથી અમે ઇષમ્-ઈચ્છાસિદ્ધિ વા અન્નાદિ પદાર્થ, વૃજનમ્-બળ અને જીરદાનુમ્-જીવનને વિદ્યામ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૧૧)

ભાવાર્થ : વિદ્યા જ મનુષ્યને સુખપ્રદા છે. જેણે વિદ્યારૂપી ધન પ્રાપ્ત કરેલ નથી, તે અંદરથી સદા દરિદ્ર જેમ જ રહે છે. (૧૧)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાનોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૮૬)

સૂક્ત-૧૮૭

પિતું નુ સ્તોષં મહો ધર્માણં તવિષીમ્ ।

યસ્ય ત્રિતો વ્યોજસા વૃત્રં વિપર્વમર્દયત્ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : યસ્ય-જેના ત્રિત:-મન, વચન, કર્મથી વિ, ઓજસા-વિવિધ પ્રકારના પરાક્રમથી વિપર્વમ્-વિવિધ પ્રકારના અંગ અને ઉપાંગોથી પૂર્ણ વૃત્રમ્-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય ધનને અર્દયત્-પ્રાપ્ત કરે, તેને માટે નુ-શીઘ્ર પિતુમ્-અન્ન મહઃ-બહુ જ ધર્માણમ્-ધર્મ કરનારા અને તવિષીમ્-બળની હું સ્તોષમ્-પ્રશંસા કરું. (૧)

ભાવાર્થ : જેઓ પુષ્કળ અન્ન લઈને, સુસંસ્કૃત કરીને, તેના ગુણોને જાણીને અને યથાયોગ્ય બીજા દ્રવ્ય સાથે સંયુક્ત કરીને ખાય છે, તેઓ ધર્માચરણશીલ બનીને શારીરિક અને આત્મિક બળ પ્રાપ્ત કરીને પુરુષાર્થ દ્વારા લક્ષ્મીની વૃદ્ધિ કરી શકે છે. (૧)

સ્વાદો પિતો મધો પિતો વ્યં ત્વા વવૃમહે । અસ્માકમવિતા ભવ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : હે પરમાત્મન્ ! આપના રચેલ સ્વાદો-સ્વાદિષ્ટ પિતો-પીવા યોગ્ય જળ તથા મધો-મધુર પિતો-પાલન કરનાર ત્વા-તે અન્નને વયમ્-અમે વવૃમહે-સ્વીકાર કરીએ છીએ. એથી આપ તે અન્નપાનના દાનથી અસ્માકમ્-અમારી અવિતા-રક્ષા કરનારા ભવ-થાઓ. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, મધુર આદિ રસોનાં યોગથી સ્વાદિષ્ટ અન્ન અને વ્યંજનને આયુર્વેદની રીતે બનાવીને સદા ખાવા જોઈએ, જે રોગનાશક હોવાથી આયુર્વર્ધક હોવાના કારણે રક્ષક બને. (૨)

उषं नः पित्वा चर शिवः शिवाभिरूतिभिः ।

मयोभुरद्विषेण्यः सखा सुशेवो अद्वयाः ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે પિતો-અન્ન વ્યાપી પરમાત્મન્ ! મયોભુઃ-સુખની ભાવના કરનારા અદ્વિષેણ્યઃ-નિર્વેર સુશેવઃ-સુંદર સુખયુક્ત અદ્વયાઃ-જેમાં દ્વન્દ્વભાવ નથી સખા-જે મિત્ર આપ શિવાભિઃ-સુખકારિણી

કૃતિભિઃ—રક્ષા આદિ ક્રિયાઓની સાથે **નઃ**—અમારા માટે **શિવઃ**—સુખાકારી **ઉપ, આ, ચર**—સમીપ સારી રીતે પ્રાપ્ત થાઓ. (૩)

ભાવાર્થ : અન્નાદિ અને પદાર્થોમાં વ્યાપક પરમેશ્વર આરોગ્યદાયિની રક્ષણરૂપી ક્રિયાઓથી સર્વના મિત્ર ભાવનું પાલન કરીને સર્વના સખા = મિત્ર છે જ. (૩)

તવ ત્યે પિતો રસા રજાંસ્યનુ વિષ્ટિતાઃ । દિવિ વાતાઙ્ગવ શ્રિતાઃ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે **પિતો**—અન્ન વ્યાપિન્ પરમાત્મન્ ! **તવ**—તે અન્નમાં જે **રસાઃ**—મધુર, અમ્લ, લવણ, કટુ, તિક્ત, કષાય આદિ છ પ્રકારનો રસ **દિવિઃ**—અન્તરિક્ષમાં **વાતાઙ્ગવ**—વાયુની સમાન **શ્રિતાઃ**—આશ્રયને પ્રાપ્ત થઈ રહેલ છે, **ત્યે**—તે **રજાંસિ**—લોક-લોકાન્તરોમાં **અનુ, વિષ્ટિતાઃ**—પાછળથી પ્રવિષ્ટ થાય છે. (૪)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં પરમાત્માની વ્યવસ્થાથી લોક-લોકાન્તરોમાં ભૂમિ, જળ અને વાયુને અનુરૂપ રસ આદિ થાય છે. પરંતુ સર્વ પદાર્થો સર્વત્ર થતા નથી, એ અભિપ્રાય છે. (૪)

તવ ત્યે પિતો દદતસ્તવ સ્વાદિષ્ટ તે પિતો ।

પ્ર સ્વાદ્વાનો રસાનાં તુવિગ્રીવાઙ્ગવેરતે ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે **પિતો**—અન્ન વ્યાપી પાલક પરમાત્મન્ ! **દદતઃ**—આપીને **તવ**—આપનો જે અન્ન **વા ત્યે**—તે પૂર્વોક્ત રસ છે.

હે **સ્વાદિષ્ટ**—અત્યંત મધુરતાયુક્ત **પિતો**—પાલક અન્ન વ્યાપક પરમાત્મન્ ! **તવ**—આપના તે અન્ન સહિત **તે**—તે રસ **રસાનામ્**—મધુરાદિ રસોમાં **સ્વાદ્માનઃ**—અત્યંત સ્વાદિષ્ટ **તુવિગ્રીવાઙ્ગવ**—જેની પ્રબળ ગ્રીવા તે જીવોની સમાન **પ્રેરતે**—પ્રેરિત કરતા અર્થાત્ જીવોને પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરાવે છે. (૫)

ભાવાર્થ : સમસ્ત પદાર્થોમાં વ્યાપક પરમાત્મા જ સર્વને અન્ન આદિ પદાર્થો આપે છે, તેઓના રચેલા જે પદાર્થો પોતાના ગુણો અનુસાર કોઈ સ્વાદિષ્ટ કોઈ સ્વાદુત્તર છે, તેમ સર્વેએ જાણવું જોઈએ. (૫)

ત્વે પિતો મહાનાં દેવાનાં મનોં હિતમ્ ।

અકારિ ચારુ કેતુના તવાહિમર્વસાવધીત્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે **પિતો**—અન્નવ્યાપી પાલક ઈશ્વર ! **તવ**—જે આપની **અવસા**—રક્ષા આદિથી સૂર્ય **અહિમ્**—મેઘનો **અવધીત્**—નાશક છે, તે આપના **કેતુના**—વિજ્ઞાનથી જે **ચારુ**—શ્રેષ્ઠતર **અકારિ**—કરવામાં આવે છે, તે **મહાનામ્**—મહાત્મા પૂજ્ય **દેવાનામ્**—વિદ્વાનોનું **મનઃ**—મન **ત્વે**—આપમાં **હિતમ્**—ધૃત છે. વા પ્રસન્ન છે. (૬)

ભાવાર્થ : જો અન્ન-ભોજન ન ખાવામાં આવે, તો મન અન્નમય હોવાના કારણે, કોઈનું પણ મન પ્રસન્ન થાય નહિ. તેથી જેની ઉત્પત્તિને માટે મેઘ નિમિત્ત છે, તે અન્નને સારી રીતે સંસ્કૃત (કરીને) ખાવું જોઈએ. (૬)

यद्दो पितो अजगन्विस्व पर्वतानाम् ।

अत्रा चिन्नो मधो पितोऽरं भूक्षाय गम्याः ॥ ७ ॥

पદાર્થ : હે પિતો-અન્ન વ્યાપિન્ પરમેશ્વર ! યત્-જે અદઃ-પ્રત્યક્ષ અન્નને વિદ્વાનજન અજગન્-પ્રાપ્ત થાય છે તેમાં વિવસ્વ-વ્યાપ્તિમાન થાઓ.

હે મધો-મધુર પિતો-પાલક અન્નદાતા ઈશ્વર ! અત્ર, ચિત્-એ પર્વતોનામ્-મેઘોને પણ જે અન્નના નિમિત્ત કહેલ છે. નઃ-અમને ભૂક્ષાય-ભક્ષણ કરવા માટે અન્નને અસ્-પરિપૂર્ણ ગમ્યાઃ-પ્રાપ્ત કરાવો. (૭)

ભાવાર્થ : સર્વ પદાર્થોમાં વ્યાપ્ત પરમેશ્વરને ભોજન આદિના સમયે (મનુષ્યો) સારી રીતે સ્મરણ કરે. જે પરમાત્માની કૃપાથી અનેક પ્રકારનું અન્ન સર્વત્ર દિશા, દેશ અને કાળને અનુકૂળ છે, તે પરમાત્માનું જ સ્મરણ કરીને સર્વ પદાર્થો ગ્રહણ કરવા જોઈએ. (૭)

यदुपामोषधीनां परिंशमारिशामहे । वातापे पीव ईद्धव ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે વાતાપે-વાયુની સમાન સર્વ પદાર્થ વ્યાપક પરમેશ્વર ! અમે અપામ્-જળ અને ઓષધીનામ્-સોમ આદિ ઓષધિઓના યત્-જે પરિંશમ્-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થનાર અંશ આરિશામહે-સારી રીતે (પ્રાપ્ત) થાય છે, તેથી આપ પીવઃ-ઉત્તમ વૃદ્ધિકારક ઇત્-જ ભવ-થાઓ. (૮)

ભાવાર્થ : જળ, અન્ન અને ઘૃતથી સંસ્કારના દ્વારા ઉત્તમ અન્ન અને વ્યંજન બનાવીને તેને ખાનારા લોકો ઉચિત આહાર-વિહારથી પુષ્ટ બની શકે છે. (૮)

यत्तै सोम गवाशिरो यवाशिरो भजामहे । वातापे पीव इद्धव ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે સોમ-જળ આદિ ઓષધિ રસવ્યાપી ઈશ્વર ! ગવાશિરઃ-ગોરસથી બનાવેલ વા યવાશિરઃ-જવ આદિ ઓષધિઓના સંયોગથી સંસ્કૃત = બનાવેલ તે-તે અન્નના યત્-જે સેવનીય અંશનું અમે ભજામહે-સેવન કરીએ છીએ તેથી હે વાતાપે-વાયુની સમાન સર્વ પદાર્થોમાં વ્યાપક પરમેશ્વર ! પીવઃ-ઉત્તમ વૃદ્ધિદાયક ઇત્-જ ભવ-થાઓ. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ લોકો અન્ન આદિ પદાર્થોમાં તે-તેની પાક ક્રિયાને અનુકૂળ સર્વ સંસ્કારો કરે છે, તેમ જ રસોને પણ રસયોગ્ય સંસ્કારોથી તૈયાર કરે. (૯)

करम्भ औषधे भव पीवो वृक्क उदारथिः । वातापे पीव इद्धव ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે ઓષધે-ઓષધિ વ્યાપી પરમેશ્વર ! આપ કરમ્ભઃ-કર્તા = કરનારા ઉદારથિઃ-જઠરાગ્નિના પ્રદીપક વૃક્કઃ-રોગીઓનો વર્જન કરાવનાર અને પીવઃ-ઉત્તમ વૃદ્ધિ કરાવનાર ભવ-થાઓ.

હે વાતાપે-વાયુની સમાન સર્વ વ્યાપક પરમાત્મન્ ! આપ પીવઃ-ઉત્તમ વૃદ્ધિદાયક ઇત્-જ ભવ-થાઓ. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ સંયમી મનુષ્ય શુભ આચરણથી શરીર અને આત્માને બળવાન બનાવે છે, તેમ સંયમથી સર્વ પદાર્થોને સર્વ લોકો વર્તે. (૧૦)

તં ત્વા વ્યં પિતો વચોભિર્ગાવો ન હૃવ્યા સુષૂદિમ ।

દેવેભ્યસ્ત્વા સધમાદમસ્મભ્યં ત્વા સધમાદમ્ ॥ ૧૧ ॥

પદાર્થ : હે પિતો-અન્ન વ્યાપી પરમેશ્વર ! તમ્-તે પૂર્વોક્ત ત્વા-આપનો આશ્રય કરીને વચોભિઃ-સ્તુતિ વાક્યો-પ્રશંસાઓથી ગાવઃ-દૂગણી ગાયો ન-જેમ દૂધ, દહીં ઘી આદિ પદાર્થો આપે છે, તેમ તે અન્નથી વ્યમ્-અમે જેમ હૃવ્યા-ભોજન કરવા યોગ્ય પદાર્થોનો સુષૂદિમ-સાર ભાગ કાઢીએ તથા અમે દેવેભ્યઃ-વિદ્વાનોની સધમાદમ્-સાથે આનંદદાયક ત્વા-આપનો વિદ્વાનજન આશ્રય કરે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ ગાય આદિ ઘાસ ખાઈને રત્ન સમાન દૂધ આપે છે, તેમ અન્ન આદિ પદાર્થોથી શ્રેષ્ઠતર ભાગ (= સાર) કાઢવો જોઈએ.

જે પોતાના સાથીઓનો અન્ન આદિથી સત્કાર કરે છે અને પરસ્પર આનંદની અભિલાષાથી પરમાત્માનો આશ્રય કરે છે, તેઓ પ્રશંસિત બને છે. (૧૧)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં અન્નના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૮૭)

સૂક્ત-૧૮૮

સમિદ્ધો અઘ્ રાજસિ દેવો દેવૈઃ સહસ્ત્રજિત્ । દૂતો હૃવ્યા ક્વિર્વીહ ॥ ૧ ॥

પદાર્થ : હે સહસ્ત્રજિત્-હજારો શત્રુઓને જીતનાર રાજન્ ! સમિદ્ધઃ-સળગતી પ્રકાશયુક્ત અગ્નિ સમાન પ્રકાશમાન દેવૈઃ-વિજય ઈચ્છતા વીરોની સાથે દેવઃ-વિજય ઈચ્છનાર અને દૂતઃ-શત્રુઓના ચિત્તોને સંતાપ આપનાર કવિઃ-પ્રબળ જ્ઞાનવાન આપ અઘ્-આજ રાજસિ-અધિકતર શોભાયમાન થઈ રહ્યા છો, તે આપ હૃવ્યા-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થોને વહ-પ્રાપ્ત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જે અગ્નિની સમાન દુષ્ટોને સંતપ્ત કરે છે, સજ્જનોના સંગથી શત્રુઓને જીતે છે અને વિદ્વાનોની સંગતિથી બુદ્ધિમાન બનીને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય વસ્તુઓને પ્રાપ્ત કરે છે, તે (રાજા) રાજ્ય કરવા યોગ્ય બને છે. (૧)

તનૂનપાદૃતં યતે મધ્વા યજ્ઞઃ સમજ્યતે । દધત્સહસ્ત્રિણીરિષઃ ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : જે સહસ્ત્રિણીઃ-હજારો રિષઃ-અન્નાદિ પદાર્થોને દધત્-ધારણ કરીને તનૂનપાત્-શરીરોનું પતન ન કરનાર-નાશ ન કરનાર અર્થાત્ પાલનહાર યજ્ઞઃ-પદાર્થોમાં સંયુક્ત કરવા યોગ્ય અગ્નિ ઋત્નમ્-યજ્ઞ સત્ય વ્યવહારમાં અને જળ આદિ પદાર્થને મધ્વા-મધુરતા આદિની સાથે યતે-પ્રાપ્ત થતા જનને

માટે સમજ્યતે-સમ્યક્ પ્રકટ થાય છે, તેને સર્વ સિદ્ધ કરે. (૨)

ભાવાર્થ : જે કર્મથી અતુલ ધન-ધાન્ય પ્રાપ્ત થાય છે, તેનું અનુષ્ઠાન મનુષ્યો નિરંતર કરે. (૨)

આજુહ્વાનો ન ઈંદ્ર્યો દેવાં આ વક્ષિ યજ્ઞિયાન્ । અગ્નેં સહસ્રસા અસિ ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિ સમાન વર્તમાન વિદ્વાન્ ! જે કારણે અમારાથી જે રીતે આજુહ્વાન:- હોમને પ્રાપ્ત ઈંદ્ર્યો:-શોધવા યોગ્ય સહસ્રસા:-હજારો પદાર્થોનો વિભાગ કરનાર અગ્નિ છે, તેમ આમંત્રણથી બોલાવેલને પ્રાપ્ત સ્તુતિ-પ્રશંસાને યોગ્ય હજારો પદાર્થોને આપનાર અસિ-છો; એથી ન:-અમારા યજ્ઞિયાન્-યજ્ઞ સિદ્ધ કરાવનાર દેવાન્-વિદ્વાન વા દિવ્યગુણોને આ, વક્ષિ-સમ્યક્ પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવ અનુસાર સમ્યક્ સેવન કરેલ અગ્નિ અનેક કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ સેવા કરેલ આપ વિદ્વાન સર્વ શુભ ગુણોને તથા કાર્યોની સિદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩)

પ્રાચીનેં બર્હિરોજસા સ્સસસ્ત્રવીરમસ્તૃણન્ । યત્રાદિત્યા વિરાજથ ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! યત્ર-જે સનાતન કારણમાં આદિત્યા:-સૂર્યાદિ લોક ઓજસા-પરાક્રમ વા પ્રતાપથી સહસ્રવીરમ્-હજારો જેમાં વીર તે પ્રાચીનમ્-પુરાતન બર્હિ:-સારી રીતે વર્ધિત તેજ સમાન વિજ્ઞાનનું અસ્તૃણન્-આચ્છાદન કરે છે-ઢાંકે છે, ત્યાં તમે વિરાજથ-વિશેષતાથી પ્રકાશિત થાઓ. (૪)

ભાવાર્થ : જે સનાતન કારણમાં સૂર્ય આદિ લોક પ્રકાશિત થાય છે, ત્યાં તમે અને અમે પ્રકાશિત થઈએ છીએ. (૪)

વિરાટ્ સમ્રાઢ્વિભ્વીઃ પ્રૃભ્વીર્બહ્વીશ્ચ ભૂયસીશ્ચ યાઃ । દુરોઃ ઘૃતાન્યક્ષરન્ ॥ ૫ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! વિરાટ્-જે વિવિધ પ્રકારના ગુણો અને કર્મોમાં પ્રકાશમાન વા સમ્રાટ્-જે ચક્રવર્તીની સમાન વિદ્યાઓમાં સુંદરતાથી પ્રકાશમાન તે આપ યાઃ-જે વિભ્વી:-વ્યાપ્ત થનારી પ્રૃભ્વી:-સમર્થ હ્વી:-બહુ જ અનેક ભૂયસીઃ ચ-અને અધિકથી અધિક સૂક્ષ્મ માત્રા દુરઃ-દ્વારે અર્થાત્ સર્વ કાર્યો સુખોને તથા ઘૃતાનિ, ચ-જળોને અક્ષરન્-પ્રાપ્ત થાય છે, તેને જાણો. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સંપૂર્ણ જગતની અનેક તત્ત્વોથી ભરપૂર ત્રણ ગુણવાળી માત્રાઓ (કારણભૂત સૂક્ષ્મ પંચ તન્માત્રાઓ) નિત્ય રૂપથી સદા વર્તમાન રહે છે, તેનાથી લઈને પૃથિવી સુધીના પદાર્થોને વિશેષ રૂપથી જાણીને સમસ્ત કાર્યો સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૫)

સુરુક્મે હિ સુપેશ્સાધિં શ્રિયા વિરાજતઃ । ડષાસાવેહ સીદતામ્ ॥ ૬ ॥

પદાર્થ : હે અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો ! જેમ ઇહ-આ કાર્ય-કારણ વિદ્યામાં સુરુક્મે-સુંદર રમણીય સુપેશ્સા-પ્રશંસિત સ્વરૂપ કાર્યકારણ શ્રિયા-શોભાથી અધિ, વિરાજતઃ-દેદીપ્યમાન થાય છે, હિ-તેને

જાણીને **ઊષાસૌ**-રાત-દિવસની સમાન આપ લોકો પરોપકારમાં **આ, સીદતામ્**-સારી રીતે સ્થિર થાઓ. (૬)
ભાવાર્થ : જેઓ આ સંસારમાં વિદ્યા અને સુશિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને કાર્યજ્ઞાનપૂર્વક કારણજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ સૂર્ય અને ચંદ્રમાની સમાન પરોપકારમાં રત રહે છે. (૬)

પ્રથમા હિ સુવાચસા હોતારા દૈવ્યા કૃવી । યજ્ઞં નૌ યક્ષતામિમમ્ ॥ ૭ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! **હિ**-જે કારણે **હોતારા**-ગ્રહણકર્તા, **દૈવ્યા**-દિવ્ય બોધમાં કુશળ, **પ્રથમા**-પ્રથમ વિદ્યાબળના વર્ધક, **સુવાચસા**-જેના સુંદર વચન **કવી**-જે સમગ્ર વિદ્યાનો જ્ઞાતા અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો છે, તેઓ **નઃ**-અમારા **ઇમમ્**-આ પ્રત્યક્ષતાથી વર્તમાન **યજ્ઞમ્**-ધનાદિ પદાર્થોનો સંગમ = મેળ કરાવનાર વા વ્યવહારનો **યક્ષતામ્**-સંગ કરાવે. (૭)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જેઓ જેનો ઉપકાર કરે છે, તેઓ તેના સત્કારને યોગ્ય બને છે. (૭)

ભારતીઠે સરસ્વતિ યા વઃ સર્વાં ઉપબુવે । તા નશ્ચોદયત શ્રિયે ॥ ૮ ॥

પદાર્થ : હે **ભારતિ**-સમસ્ત વિદ્યા ધારણ કરનારી વા **ઠે**-હે પ્રશંસાવતી વા **સરસ્વતિ**-હે વિજ્ઞાન અને ઉત્તમ ગતિવાળી ! **યાઃ**-જે **વઃ**-તમે **સર્વાઃ**-સર્વની સમીપમાં **ઉપબુવે**-ઉપયોગ કરનારા વચનનો ઉપદેશ કરું, **તાઃ**-તે તમે **નઃ**-અમને **શ્રિયે**-લક્ષ્મી પ્રાપ્ત કરવાને-થવાને માટે **ચોદયત**-પ્રેરણા આપો-પ્રેરિત કરો. (૮)

ભાવાર્થ : જે પ્રશંસિત સૌંદર્યવાળી, શુભ લક્ષણોવાળી અને પ્રશંસનીય શાસ્ત્રોના વિજ્ઞાનમાં નિમગ્ન રહેનારી કન્યાઓ હોય, તે પાણિગ્રહણ કરવાની યોગ્યતાવાળા પતિઓને પ્રાપ્ત કરીને ધર્મપૂર્વક ધન આદિ પદાર્થોની ઉન્નતિ કરે. (૮)

ત્વષ્ટાં રૂપાણિ હિ પ્રભુઃ પશૂન્વિશ્વાન્ત્સમાનુજે ।

તેષાં નઃ સ્ફાતિમા યજ ॥ ૯ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ **ત્વષ્ટા**-સર્વ જગતનું નિર્માણ કરનાર **પ્રભુઃ**-સમર્થ ઈશ્વર **હિ-જ** વિશ્વાન્-સમસ્ત **પશૂન્**-ગાય આદિ પશુઓ અને **સ્વાણિ**-સમસ્ત વિવિધ પ્રકારથી સ્થૂલ વસ્તુઓને **સમાનુજે**-સમ્યક્ પ્રકટ કરે છે અને **તેષામ્**-તેઓની **સ્ફાતિમ્**-વૃદ્ધિને પ્રકટ કરે છે, તેમ આપ **નઃ**-અમારી વૃદ્ધિને **આ, યજ**-સમ્યક્ પ્રાપ્ત કરો. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વરે ઈન્દ્રિયોથી અગ્રાહ્ય તથા અતિ સૂક્ષ્મ કારણ (= પ્રકૃતિ) થી વિચિત્ર સૂર્ય, ચંદ્ર, પૃથિવી, ઔષધિ અને મનુષ્ય શરીરોના અવયવ આદિની રચના કરેલ છે, તેમ મનુષ્યોએ આ સૃષ્ટિના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવોના ક્રમથી અનેક વ્યવહારોને સિદ્ધ કરનારા પદાર્થો બનાવવા જોઈએ. (૯)

ઉપ્ ત્મન્યાં વનસ્પતે પાથૌ દેવેભ્યઃ સૃજ । અગ્નિર્હૃવ્યાનિ સિષ્વદત્ ॥ ૧૦ ॥

પદાર્થ : હે **વનસ્પતે** ! વનોના પાલક ! **ત્મન્યા**-પોતાનામાં ઉત્તમ ક્રિયાથી જેમ **અગ્નિઃ**-અગ્નિ

देवेश्यः-विद्वान वा दिव्यगुणोने माटे हव्यानि-भोजन करवा योग्य पदार्थोने सिष्वदत्-स्वादृष्ट करे
छे, तेम आप विद्वान वा दिव्य गुणोने माटे पाथः-अन्नने उप, सृज-तेओने माटे आपो. (१०)

भावार्थ : जेओ वन आदिनी रक्षाना द्वारा घास अने औषधिनी वृद्धि करे छे, तेओ सर्वनो
उपकार करवा योग्य बने छे. (१०)

पुरोगा अग्निर्देवानां गायत्रेण समज्यते । स्वाहाकृतीषु रोचते ॥ ११ ॥

पदार्थ : जेओ परोपकारी जन छे, तेओ जेम देवानाम्-दिव्यगुण वा पृथिवी आदिमां पुरोगाः-
अग्रगामी अग्निः-अग्नि गायत्रेण-गायत्री छंदथी कहेल बोधथी स्वाहाकृतीषु-स्वाहा शब्दथी जे
व्यवहारोमां क्रियाओ थाय छे तेमां समज्यते-प्रकट करवामां आवे छे अने ते रोचते-प्रदीप्त थाय
छे, तेम अग्रगामी बनीने सर्वत्र सत्कारने प्राप्त थाय छे. (११)

भावार्थ : जे मनुष्यो अग्निप्रधान दिव्य पदार्थोने, व्यवहारनी सिद्धिने माटे सम्यक् प्रयोग करे,
तो तेओ ऐश्वर्य संपन्न बनीने माननीय बनी जाय छे, अम ज्ञानवुं जेईअ. (११)

संगति : आ सूक्तमां अग्निना द्रष्टान्तथी राजा, अध्यापक, उपदेशक, स्त्री पुरुष ईश्वर अने
दाताना गुणोनुं वर्णन होवाथी आ सूक्तना अर्थनी पूर्व सूक्तार्थनी साथे संगति जाणवी जेईअ. (१८८)

सूक्त-१८९

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वा नि देव वयुनानि विद्वान् ।

युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमउक्ति विधेम ॥ १ ॥

पदार्थ : हे देव-मनोहर आनंदप्रद अग्ने-स्वप्रकाश स्वरूपेश्वर विद्वान्-समग्र शास्त्रवेत्ता ! आप
अस्मान्-अमने अर्थात् भोक्ष ईश्वरजनोने राये-धनादिनी प्राप्तिने माटे सुपथा-धर्मयुक्त सरण मार्ग
द्वारा विश्वानि-समस्त वयुनानि-प्रज्ञाओने नय-प्राप्त करावो. जुहुराणम्-कुटिल गतिजन्य एनः-पापने
अस्मत्-अमाराथी युयोधि-पृथक् करो. जेथी अमे ते-आपनी भूयिष्ठाम्-अधिकतर नमउक्तिम्-सत्कारनी
साथे स्तुतिनुं विधेम-विधान करीअ. (१)

भावार्थ : मनुष्योअ, धर्म अने विज्ञाननी मार्गनी प्राप्ति माटे अने अधर्मनी निवृत्ति माटे परमेश्वरनी
सारी रीते प्रार्थना करवी जेईअ.

सदा उत्तम मार्गथी जवुं जेईअ अर्थात् अधर्म-युक्त मार्गथी पृथक् रहवुं जेईअ.

जेम विद्वानजनो ईश्वरमां परम अनुराग राभे छे, तेम अन्योअे पण राभवो जेईअ. (१)

अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्स्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वा ।

पूश्च पृथ्वी बहुला न उर्वी भवा तोकाय तनयाय शं योः ॥ २ ॥

पदार्थ : હે અગ્ને-પરમેશ્વર ત્વમ્-આપ સ્વસ્તિભિઃ-સુખોથી અસ્માન્-અમને વિશ્વા-સમસ્ત અતિ, દુર્ગાણિ-અત્યંત દુર્ગ-દુઃખ વ્યવહારોથી પારય-પાર કરો.

જેમ નવ્યઃ-નવીન વિદ્વાન અને પૂઃ-પુરૂપ બહુલા-બહુ જ પદાર્થોને લેનારી ઉર્વી-વિસ્તૃત પૃથિવી, ચ-ભૂમિ પણ છે, તેમ નઃ-અમારા તોકાય-અત્યંત નાના અને તનયાય-થોડા મોટા બાળકોને માટે શં, યોઃ-સુખને પ્રાપ્ત કરાવનાર ભવ-થાઓ. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર પુણ્યાત્મા લોકોને દુષ્ટાયરણથી પૃથક્ રાખે છે અને પૃથિવીની સમાન તેઓનું પાલન કરે છે, તેમ વિદ્વાન સર્વ શુભ કર્મો કરનારાઓને દુષ્ટાયરણથી પૃથક્ કરીને ઉત્તમ વ્યવહાર દ્વારા તેઓની રક્ષા કરે છે. (૨)

अग्ने त्वमस्मद्युयोध्यमीवा अनग्नित्रा अभ्यमन्त कृष्टीः ।

पुनरस्मभ्यं सुविताय देव क्षां विश्वेभिरमृतेभिर्यजत्र ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે યજત્ર-સંગ કરતા દેવ-કામના કરનારા અગ્ને-ઈશ્વરની સમાન વિદ્વાન વૈદ્યજન ! ત્વમ્-આપ જે અનગ્નિત્રાઃ-એવા છો કે જો તેની સાથે જવર ન વિદ્યમાન હોય, તો અવિદ્યમાન જવરથી શરીરની રક્ષા કરનાર છો. (અર્થાત્ રોગરહિત-સ્વસ્થના સ્વાસ્થ્યની રક્ષા કરનાર છો.)

તે અમીબાઃ-રોગ કૃષ્ટીઃ-મનુષ્યોને અભ્યમન્ત-સર્વત્રથી રોગી બનાવીને કષ્ટ આપે છે, તેને અસ્મત્-અમારાથી યુયોધિ-પૃથક કરો. પુનઃ-પશ્ચાત્ વિશ્વેભિઃ-સમસ્ત અમૃતેભિઃ-અમૃતરૂપ ઔષધિઓથી અસ્મભ્યમ્-અમારા માટે સુવિતાય-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત થવા માટે ક્ષામ્-પૃથિવીનું રાજ્ય પ્રાપ્ત કરાવો. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વર વેદ દ્વારા અવિદ્યારૂપી રોગોથી મનુષ્યોને પૃથક્ કરે છે, તેમ સદ્ વૈદ્ય મનુષ્યોને રોગોથી નિવૃત્ત કરીને અમૃતરૂપી ઔષધોથી તેઓની વૃદ્ધિ કરીને ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૩)

पाहि नो अग्ने पायुभिरजस्त्रैरुत प्रिये सदन आ शुशुक्वान् ।

मा ते भयं जरितारं यविष्ठ नूनं विदन्मापरं सहस्वः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે અગ્ને-અગ્નિની સમાન વિદ્વાન્ ! શુશુક્વાન્-વિદ્યા અને વિનયથી પ્રકાશને પ્રાપ્ત અજસ્ત્રૈઃ-નિરંતર પાયુભિઃ-રક્ષાના ઉપાયોથી પ્રિયે-મનોહર સદને-સ્થાન ઉત્ત-વા શરીરમાં વા બહાર નઃ-અમારું આ, પાહિ-સમ્યક્ પાલન કરો. જેથી હે યવિષ્ટ-અત્યંત યુવાવસ્થાવાળા સહસ્વઃ-સહનશીલ વિદ્વાન્ ! તે-આપની જરિતાસ્-સ્તુતિ કરનારાઓને ભયમ્-ભય મા, વિદત્-પ્રાપ્ત થાય નહિ. નૂનમ્-નિશ્ચયથી અપરમ્-અન્યોને ભય મા-પ્રાપ્ત થાય નહિ. (૪)

ભાવાર્થ : ત એવ 'પ્રશંસનીયાં' તેઓ જ 'પ્રશંસનીય' મનુષ્યો છે, જે નિરંતર પ્રાણીઓની રક્ષા કરે છે અને કોઈને માટે પણ ભય અથવા નિર્બળતા ઉત્પન્ન કરતા નથી. (૪)

मा नो अग्नेऽव सृजो अघायविष्यवे रिपवे दुच्छुनायै ।

मा दत्वते दशते मादते नो मा रीषते सहसावन्परा दाः ॥ ५ ॥

पદાર્થ : હે અગ્ને-વિદ્વાન્ ! આપ ન:-અમને અઘાય-પાપીજનથી અવિષ્યવે-વા જે ધર્મમાં વ્યાપ્ત નથી, તે રિપવે-શત્રુઓ અથવા દુચ્છુનાયે-જેની દુષ્ટ ગતિ ચાલ-ચલગત છે તેનાથી માવસૂજ:-સંયોજો નહિ (ભેટો કરાવો નહિ).

હે સહસાવન્-બહુ જ બળ વા બહુ જ સહનશીલતાયુક્ત વિદ્વાન દત્વતે-દાંતોવાળા અને દશતે-દાઢોથી વિદીર્ણ કરનારાને મા-નહિ તથા અદતે-દાંતોરહિત દુષ્ટને માટે મા-નહિ અને રિષતે-હિંસા કરનારાઓને માટે ન:-અમને મા, પરા, દા:-ન દૂર કરો અર્થાત્ ન અલગ કરી તેઓને આપો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ; વિદ્વાન, રાજા, અધ્યાપક અને ઉપદેશકોના પ્રતિ આ રીતે પ્રાર્થના કરવી જોઈએ, કે આપ લોકો દુર્વ્યસન અને દુષ્ટસંગને માટે અમને પ્રેરિત કરો નહિ, પરંતુ સદા શ્રેષ્ઠ આચરણ, ધર્મમાર્ગ અને સત્સંગમાં અમને સંયુક્ત કરો-જોડો. (૫)

वि घ त्वावाँ ऋतजात यंसद् गृणानो अग्ने तन्वेऽ वरूथम् ।

विश्वार्द्रिरिक्षोरुत वा निनित्सोरभिहुतामसि हि देव विष्यट् ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે ઋત્તજાત્-સત્ય આચાર પ્રસિદ્ધિ પામેલ દેવ-વિજયના ઈચ્છુક ! અગ્ને-વિદ્યુત્ સમાન ચંચળ તાપયુક્ત ત્વાવાન્-તમારી સમાન ગૃણાન:-સ્તુતિ કરીને વિદ્વાન તન્વે-શરીરને માટે વસ્થમ્-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય ઘ-જ પદાર્થને વિ, યંસત્-આપે.

વિષ્યટ્-વ્યાપ્તિમાનોને પ્રાપ્ત થયેલ આપ વિશ્વાત્-સમસ્ત રિચ્ક્ષો:-હિંસા કરવા ઈચ્છતા ઝત, વા-અથવા નિનિત્સો:-નિંદા કરવા ઈચ્છનારાથી અલગ આપે હિ-એથી આપ અભિહુતામ-સર્વત્રથી કુટિલ આચરણ કરનારાઓને શિક્ષા આપનાર અસિ-છો. (૬)

ભાવાર્થ : જેઓ ગુણ દોષોને જાણનારા અને સત્ય આચરણવાળા જન સર્વ હિંસક, નિંદક અને કુટિલ મનુષ્યોથી પૃથક્ રહે છે, તેઓ સમસ્ત 'ભદ્રમાણુયન્તિ' ભદ્ર (= કલ્યાણ)ને પ્રાપ્ત કરી લે છે. (૬)

त्वं ताँ अग्न उभयान्वि विद्वान्वेषि प्रपित्वे मनुषो यजत्र ।

अभिपित्वे मनवे शास्यो भूर्मर्मजेन्य उशिग्भिर्नाक्रः ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે યજત્ર-સત્કાર કરવાને યોગ્ય અગ્ને-દુષ્ટોને શિક્ષા આપનાર વિદ્વાન્ ! વિદ્વાનજન ! જે ત્વમ્-આપ તાન્-તે ઉભયાન્-બન્ને પ્રકારના કુટિલ, નિંદક વા હિંસક મનુષ્ય:-મનુષ્યોને પ્રપિત્વે-ઉત્તમતાથી પ્રાપ્ત સમયમાં વિ, વેષિ-પ્રાપ્ત થનાર તે આપ અભિપિત્વે-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત વ્યવહારમાં મનવે-વિચારશીલ મનુષ્યને માટે શાસ્ય:-શિક્ષા કરવા યોગ્ય ભૂ:-થાઓ. અને ઉશિગ્ભિ:-કામના કરતા જનોથી મર્મજેન્ય:-અત્યંત અલંકૃત = શોભા કરવા યોગ્ય આપ નાક્ર:-દુષ્ટોને ઉલ્લંઘતા નથી, છોડતા નથી અર્થાત્ તેઓની દુષ્ટતાનું નિવારણ કરીને તેઓને શિક્ષા કરો છો. (૭)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન મનુષ્યો યથા સંભવ હિંસક, કૂર અને જુગુપ્સુ = ઘૃણા કરનારાઓને પોતાની શક્તિથી મસળીને તથા દૂર કરીને, સત્યની કામના કરનારાઓને પ્રસન્ન કરે છે, તેઓ શાસક બનીને શુદ્ધ થઈ જાય છે. (૭)

अवौचाम निवर्चनान्यस्मिन्मानस्य सूनुः सहसाने अग्नौ ।

वयं सहस्रमृषिभिः सनेम विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે માનસ્ય-વિજ્ઞાનવાન જનના સૂનુઃ-સંતાન છે તેના પ્રતિ અસ્મિન્-આ સહસાને-સહન કરીને અગ્નૌ-અગ્નિની સમાન વિદ્વાનને માટે નિવચનાનિ-પરીક્ષાથી નિશ્ચિત કરેલ વચનોને જેમ વયમ્-અમે અવોચામ-ઉપદેશ કરીએ વા ઋષિભિઃ-વેદાર્થના જ્ઞાતાથી સહસ્રમ્-અસંખ્ય સુખનું સનેમ-સેવન કરીએ વા ઇષમ્-ઈચ્છાસિદ્ધિ, વૃજનમ્-બળ અને જીરદાનુમ્-જીવનને વિદ્યામ-પ્રાપ્ત કરીએ, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ આપ્ત અને શાન્ત ઉપદેશક શ્રોતાઓને સત્ય તત્ત્વોને ઉપદેશ કરીને, સુખી કરે છે (અને) તેઓની સાથે અન્ય પણ વિદ્વાન બની જાય છે, તેમ ઉપદેશ કરીને તથા શ્રવણ કરીને સર્વ લોકો વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરે. (૮)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં પરમેશ્વર, વિદ્વાન અને શિક્ષા આપનારના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૮૯)

सूक्त-१६०

अनर्वाणं वृषभं मन्द्रजिह्वं बृहस्पतिं वर्धया नव्यमर्कैः ।

गाथान्यः सुरुचो यस्य देवा आशृण्वन्ति नवमानस्य मर्ताः ॥ १ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ગૃહસ્થ ! દેવાઃ-દાતા મર્તાઃ-મનુષ્ય યસ્ય-જે નવમાનસ્ય-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય સુસ્ત્વઃ-સુંદર ધર્મયુક્ત કામમાં પ્રીતિ રાખનાર ગાથાન્યઃ-ધર્મોપદેશોની પ્રાપ્તિ કરનાર અર્થાત્ અન્યોના પ્રતિ કહેવાવાળા સજ્જનોની પ્રશંસા આ, શ્રુણ્વન્તિ-સર્વત્રથી કરે છે, તે અનર્વાણમ્-અનર્વા અર્થાત્ અશ્વની સવારી ન કરતા પરંતુ પગવાળા પ્રત્યેક દેશ ફરવાવાળા વૃષભમ્-શ્રેષ્ઠ મન્દ્રજિહ્વમ્-હર્ષકારિણી જિહ્વા જેની તે બૃહસ્પતિમ્-અત્યંત શાસ્ત્રબોધની પાલના કરનારા નવ્યમ્-નવીન વિદ્વાનોની પ્રતિષ્ઠાને પ્રાપ્ત અતિથિઓની અર્કૈઃ-અન્ન, રોટી, દાળ, ભાત આદિ શ્રેષ્ઠતમ પદાર્થોની તેની વર્ધય-વૃદ્ધિ કરો. ઉન્નતિ કરો, તેની સેવા કરો. (૧)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થ લોકો જે પ્રશંસિત, ધાર્મિક અને વિદ્વાન અતિથિઓની પ્રશંસા સાંભળે, તેઓને દૂરથી બોલાવીને અતિ પ્રેમથી તેઓને અન્ન, પાન, વસ્ત્ર, ધન આદિથી સન્માનિત કરીને તથા તેનો સંગ કરીને વિદ્યાની વૃદ્ધિ દ્વારા શરીર અને આત્માના બળની વૃદ્ધિ કરીને, ન્યાયપૂર્વક સર્વને સુખમાં સંયુક્ત કરે. (૧)

तमृत्विया उप वाचः सचन्ते सर्गो न यो देवयतामसर्जि ।

बृहस्पतिः स ह्यञ्जो वरांसि विभ्वाभवत्समृते मातरिश्वा ॥ २ ॥

पદાર્થ : ય:-જે માતરિશ્વા-વાયુની સમાન ઋજ્ઞે-સત્ય વ્યવહારમાં અજ્ઞ:-સર્વને કામના કરવા યોગ્ય બૃહસ્પતિ:-અનન્ત વેદવાણીના પાલક વિભ્વા-વ્યાપક પરમાત્માએ બનાવેલ સમભવત્-સારી રીતે થાય, અને જે વરાંસિ-ઉત્તમ કર્મો કરનાર થાય, સ, હિ-તે જ દેવયતામ્-પોતાને વિદ્વાન કરનારાઓમાં અસર્જિ-સિદ્ધ કરવામાં આવે છે. તમ્-તેની ઋત્વિયા:-જે ઋતુ સમયને યોગ્ય હોય, તે વાચ:-વિદ્યા, સુશિક્ષાયુક્ત વાણી સર્ગ:-સંસારની ન-સમાન જ ઉપ, સચન્તે-સંબંધ કરે છે. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ જળ નીચાણવાળા માર્ગથી જઈને નીચેના સ્થાન પર સ્થિર થઈ જાય છે, તેમ જેને વિદ્યા અને શિક્ષા પ્રાપ્ત થાય છે, તે અભિમાન છોડીને તથા વિનમ્ર બનીને વિદ્યાનો ભંડાર બને અને ઉચિત વક્તા તથા પ્રસિદ્ધ બને.

જેમ સર્વવ્યાપક ઈશ્વરે યથોચિત રૂપથી અનેક પ્રકારનો સંસાર રચેલ છે, તેમ વિદ્વાનોનું સેવન કરનાર 'વિશ્વકર્મા' અર્થાત્ (પોતાના) સમસ્ત કર્મ કરનાર બની શકે છે. (૨)

उपस्तुतिं नमस उद्यतिं च श्लोकं यंसत्सवितेव प्र बाहू ।

अस्य क्रत्वाहन्योऽरे यो अस्ति मृगो न भीमो अरक्षस्तुविष्मान् ॥ ३ ॥

પદાર્થ : ય:-જે નમસ:-નમ્ર જનની ઉપસ્તુતિમ્-પ્રાપ્ત થયેલી પ્રશંસા ઉદ્યતિમ્-પુરુષાર્થ તથા શ્લોકમ્-સત્યવાણીને તથા સવિતેવ-સૂર્યથી જેમ જલ ભૂગોળોને, તેમ બાહૂ, ચ-પોતાની ભુજાઓને પણ પ્રયંસત્-પ્રેરિત કરે, અસ્ય-આ અરક્ષસ:-શ્રેષ્ઠ પુરુષની ક્રત્વા-ઉત્તમ બુદ્ધિની સાથે જે અહન્ય:-દિવસમાં પ્રસિદ્ધ અસ્તિ-છે, તે મૃગ:-સિંહની ન-સમાન વીર ભીમ:-ભયંકર તુવિષ્માન્-બહુ જ જેથી બળવાન વીર પુરુષ વિદ્યમાન હોય, એવો હોય છે.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે મનુષ્યમાં સૂર્યના પ્રકાશ સમાન વિદ્યા, કીર્તિ, પુરુષાર્થ, બુદ્ધિ અને બળ હોય, તે સત્યવાદીનું સર્વેએ સેવન કરવું જોઈએ. (૩)

अस्य श्लोकौ दिवीयते पृथिव्यामत्यो न यंसद्यक्षभृद्विचेताः ।

मृगाणां न हेतयो यन्ति चेमा बृहस्पतेरहिमायाँ अभि द्यून् ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અસ્ય-એ આપ્ત વિદ્વાનની શ્લોક:-વાણી અને પૃથિવ્યામ્-પૃથિવી પર અત્ય:-ઘોડાઓ ન-જેમ દિવિ-દિવ્ય વ્યવહારમાં ઈયતે-જાય છે તથા જે યક્ષભૃત્-પૂજ્ય વિદ્વાનોને ધારણ કરનાર વિચેતા:-જેની વિવિધ પ્રકારની બુદ્ધિ છે, તે વિદ્વાન મૃગાણામ્-મૃગોની હેતય:-ગતિઓની ન-સમાન યંસત્-ઉત્તમ જ્ઞાન આપે ચ-અને જે ઇમા:-એ બૃહસ્પતે:-પરમ વિદ્વાનની વાણી અભિ, દ્યૂન્-સર્વત્રથી વર્તમાન દિવસોમાં અહિમાયાન્-મેઘની સમાન જેની બુદ્ધિ તે સજ્જનોને યન્તિ-પ્રાપ્ત થાય છે, તે સર્વનું મનુષ્યો સેવન કરે. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય દિવ્ય વિદ્યા અને પ્રજ્ઞાથી સંપન્ન વિદ્વાનોની સેવા કરે છે, તે ઘટાટોપ વાદળાઓથી યુક્ત દિવસની સમાન વર્તમાન અજ્ઞાની મનુષ્યોને, સૂર્ય જેમ પ્રકાશને (આપે છે), તેમ વિદ્યા આપીને પવિત્ર કરી શકે છે. (૪)

ये त्वा देवोस्त्रिकं मन्यमानाः पापा भद्रमुपजीवन्ति पत्राः ।

न हृद्येऽनु ददासि वामं बृहस्पते चयस इत्पियारुम् ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે દેવ-વિદ્વાન્ ! એ-જે મન્યમાના:-વિજ્ઞાનવાન પાપા:-અધર્માચારી પત્રા:-પ્રાપ્ત થયેલ જન ઝનિકમ્-ગાયોની સાથે વિચરે છે, તે ભદ્રમ્-કલ્યાણરૂપી ત્વા-આપની ઉપ, જીવન્તિ-સમીપ જીવિત છે, તેઓ આપની શિક્ષા પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય છે.

હે બૃહસ્પતે-મહાન વિદ્વાનોનું પાલન કરનારા આપ હૃદ્યે-દુષ્ટ-ખરાબ વિચાર કરનારાઓને ન, અનુ, દદાસિ-અનુક્રમથી સુખ આપતા નથી. વામમ્-પ્રશંસિત પિયાસ્મ્-પાનની ઈચ્છા કરનારાઓને ઇત્-જ ચયસે-પ્રાપ્ત થાઓ છો, તે આપ સર્વને ઉપદેશ આપો. (૫)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો પોતાના સમીપસ્થ અજ્ઞાનીઓ, અભિમાનીઓ અને પાપીઓને ઉપદેશ આપીને ધર્માત્મા બનાવે છે, તેઓ કલ્યાણને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫)

सुप्रैतुः सूयवसो न पन्था दुर्नियन्तुः परिप्रीतो न मित्रः ।

अनर्वाणो अभि ये चक्षते नोऽपीवृता रपोर्णुवन्तौ अस्थुः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : એ-જેઓ અનર્વાણ:-ધર્મથી અન્યત્ર અધર્મમાં પોતાની ગતિ રાખતા નથી અપીવૃતા:- અને સમસ્ત પદાર્થોના નિશ્ચયથી વર્તમાન ન:-અમને અપોર્ણુવન્ત:-અવિદ્યા આદિ દોષોને ન ઢાંકનારા જન સુયવસ:-જેનું સુંદર અન્ન વિદ્યમાન છે, તે સુપ્રૈતુ:-જેમ ઉત્તમ વિદ્યાયુક્ત વિદ્વાનોના પન્થા:-માર્ગ છે, ન-તેમ તથા દુર્નિયન્તુ:-જે દુઃખથી નિયમ કરનાર તેના પરિપ્રીત:-સર્વત્રથી પ્રસન્ન મિત્ર:-મિત્રની ન-સમાન અભિ, ચક્ષસે-સત્યનો ઉપદેશ કરે છે, તેઓને અમારા ઉપદેશકો અસ્થુ:-બનાવવામાં આવે. (૬)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો પર્યાપ્ત સાધનો અને ઉપકરણોથી યુક્ત બનીને ઉત્તમ માર્ગથી અજ્ઞાનીઓને વિદ્યા જિતેન્દ્રીયતા પ્રદાન કરાવે છે તથા શિષ્યો પર મિત્રોની સમાન અનુશાસન રાખે છે, તેઓ જ અહીં = સંસારમાં અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો બને છે. (૬)

सं यं स्तुभोऽवनयो न यन्ति समुद्रं न स्रवतो रोधचक्राः ।

स विद्वाँ उभयं चष्टे अन्तर्बृहस्पतिस्तर आपश्च गृध्रः ॥ ७ ॥

પદાર્થ : બુદ્ધિમાન વિદ્યાર્થીજન સ્તુભ:-જળાદિને રોકનારી અવનય:-કિનારાની ભૂમિઓની ન-

સમાન સમુદ્રમ્-સમુદ્રમાં સ્વતઃ-જતી રોધ્નચક્રાઃ-જેમાં ભમરીઓ ઉઠે છે, તે નદીઓની ન-સમાન યમ્-જે અધ્યાપકને સમ્, યન્તિ-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થાય છે. સઃ-તે તપઃ-સર્વ વિષયોને પાર કરવા ગૃધ્રઃ- અને સર્વના સુખને ઈચ્છનાર વિદ્વાન્-વિદ્વાન બૃહસ્પતિઃ-અત્યંત મહાન વાણી અર્થાત્ વેદ વાણીના પાલકજન તેને ઉભયમ્-બન્ને અર્થાત્ વ્યાવહારિક અને પારમાર્થિક વિજ્ઞાનનો ચષ્ટેઃ-ઉપદેશ આપે છે તથા અન્તઃ-અંદર ચ-અને બહારના આપઃ-જળોની સમાન અન્તઃકરણની અને બહારની ચેષ્ટાઓને શુદ્ધ કરે છે, સુખનો અનુભવ કરનાર બને છે. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વની આધારભૂત પૃથિવીઓ સૂર્યની ચોતરફ ભ્રમણ કરે છે અને જેમ નદીઓ સાગરમાં પ્રવેશ કરે છે, તેમ સજ્જન આપ વિદ્વાનોની પાસે જઈને, વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને તથા ધર્મમાં પ્રવિષ્ટ થઈને બહારના તથા અંદરના વ્યવહારોને શુદ્ધ કરે. (૭)

एवा महस्तुविजातस्तुविष्मान्बृहस्पतिर्वृषभो धायि देवः ।

स नः स्तुतो वीरवद्धातु गोमद्विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ ८ ॥

પદાર્થ : વિદ્વાનોથી જે મહઃ-મહાન, તુવિજાતઃ-વિદ્યા વૃદ્ધજનથી પ્રસિદ્ધ વિદ્યાવાળા, તુવિષ્માન્-શરીર અને આત્માના બળથી યુક્ત વૃષભઃ-વિદ્વાનોમાં શિરોમણિ, દેવઃ-અતિ મનોહર સ્તુતઃ-પ્રશંસાયુક્ત, બૃહસ્પતિઃ-વેદોનું અધ્યાપન અને ઉપદેશ કરવાથી પાલન કરનાર વિદ્વાનજનને ધાયિ-ધારણ કરવામાં આવે છે. સઃ, એવ-તે જ નઃ-અમારા માટે વીરવત્-જેમાં બહુ જ વીરો વિદ્યમાન વા ગોમત્-પ્રશંસિત વાણી વિદ્યમાન તે વિજ્ઞાનને ધાતુ-ધારણ કરે જેથી અમે ઇષમ્-વિજ્ઞાન વૃજનમ્-બળ અને જીરદાનુમ્-જીવનને વિદ્યામ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૮)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ સમસ્ત શાસ્ત્રોના વિચારોના સાર દ્વારા વિદ્યાર્થીઓને શાસ્ત્રોથી યુક્ત કરવા જોઈએ, જેથી તેઓ શારીરિક અને આત્મિક બળને તથા વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરી શકે. (૮)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિદ્વાનોના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૯૦)

सूक्त-१९१

अङ्गतो न कङ्गतोऽथो सतीनकङ्गतः ।

द्वाविति प्लुषी इति न्यदृष्टा अलिप्सत ॥ १ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય કઙ્કતઃ-વિષયવાળા પ્રાણીની ન-સમાન કઙ્કતઃ-ચંચળ છે અથો-અને જે સતીન-કઙ્કતઃ-જળની સમાન ચંચળ છે, તે દ્વાવિતિ-બન્ને એ રીતે કે જેમ પ્લુષી, ઇતિ-દાહક દુઃખપ્રદ બીજાઓને સંગ લાગે, તેમ અદ્વષ્ટાઃ-જે દેખાય નહિ તે વિષધારી જીવ નિ, અલિપ્સત-નિરંતર ચિપકે છે. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ કોઈ ચંચળ મનુષ્યો અધ્યાપક અને ઉપદેશકોને પ્રાપ્ત કરીને ચંચળતા અને અશિષ્ટતા કરે છે, તેમ અદૃશ્ય વિષધારી સૂક્ષ્મ અને નાના જીવ = પ્રાણીઓ વારંવાર દૂર કરવા છતાં ઉપર પડે છે. (૧)

અદૃષ્ટાન્હન્ટ્યાયત્યથો હન્તિ પરાયતી ।

અથો અબઘ્નતી હન્ટ્યથો પિનષ્ટિ પિંષતી ॥ ૨ ॥

પદાર્થ : આયતી-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરેલી ઓષધિ અદૃષ્ટાન્-અદૃષ્ટ વિષધારી જીવોને હન્તિ-નષ્ટ કરે છે. અથો-અનન્તર પરાયતી-પ્રાપ્ત કરેલી ઓષધિ હન્તિ-વિષધારીઓને દૂર કરે છે. અથો-અનન્તર અબઘ્નતી-અત્યંત દુઃખ દેનારી ઓષધિ હન્તિ-વિષધારીઓને નષ્ટ કરે છે. અથો-અનન્તર-પિંષતી-પાન કરાતી ઓષધિ પિનષ્ટિ-વિષધારીઓને પીસી નાખે છે. (૨)

ભાવાર્થ : જેઓ આવેલ, ન આવેલ અને આવનાર વિષધારીઓને પ્રાચીન તથા નવીન ઓષધિઓના પ્રયોગ દ્વારા દૂર કરે છે, તેઓ વિષધારીઓના વિષથી યુક્ત બનતા નથી. (૨)

શ્વાસઃ કુશ્વાસો દ્ભાસઃ સૈર્યા ઉત ।

મૌજ્જા અદૃષ્ટા વૈરિણાઃ સર્વે સાકં ન્યલિપ્સત ॥ ૩ ॥

પદાર્થ : જે શ્વાસઃ-જે વાંસ સમાન અંદર છિદ્રયુક્ત ઘાસમાં રહેનાર વા જે કુશ્વાસઃ-નિંદિત ઉક્ત ઘાસમાં રહેનાર વા દ્ભાસઃ-દાભડા (ઘાસ)માં રહેનાર વા સૈર્યાઃ-તળાવોના કિનારે પ્રાપ્ય ઘાસોમાં રહેનાર વા મૌજ્જાઃ-મૂંજ (પાન બાજરીયું)માં રહેનાર ઉત-અને વૈરિણાઃ-વિરણ (ઘાસ)માં થનાર સૂક્ષ્મ અદૃષ્ટાઃ-અદૃષ્ટ જીવ-છે, તે સર્વે-સમસ્ત સાકમ્-એક સાથે ન્યલિપ્સત-નિરંતર મળે છે. (૩)

ભાવાર્થ : જેઓ અનેક પ્રકારના ઘાસોમાં કોઈ સ્થાન આદિમાં લોભથી તો કોઈ તે (ઘાસ)ની ગંધ સૂંઘવા માટે પૃથક્-પૃથક્ ક્ષુદ્રના-નાના વિષધારી સૂક્ષ્મ જીવ રહે છે, તેઓ અવસર પામીને મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓને બાધા = પીડા આપે છે. (૩)

નિ ગાવો ગોષ્ટે અસદન્નિ મૃગાસો અવિક્ષત ।

નિ કેતવો જનાનાં ન્યદૃષ્ટા અલિપ્સત ॥ ૪ ॥

પદાર્થ : જેમ ગોષ્ટે-ગૌશાળા અથવા ગમાણોમાં ગાવઃ-ગાયો ન્યસદન્-સ્થિત રહે છે વા વનમાં મૃગાસઃ-વરુ, હરણ આદિ પ્રાણીઓ ન્યવિક્ષત-નિરંતર પ્રવેશ કરે છે વા જનાનામ્-મનુષ્યોના કેતવઃ-જ્ઞાન, બુદ્ધિ, સ્મૃતિ આદિ નિ-નિવાસ કરી જાય છે અર્થાત્ કાર્યોમાં પ્રવેશ કરી જાય છે, તેમ અદૃષ્ટાઃ-અદૃષ્ટ-ધૂપા વિષધારી જીવ વા વિષધારી જંતુઓ વિષ નિ, અલિપ્સત-પ્રાણીઓને મળી

જાય છે. (૪)

ભાવાર્થ : જે અનેક પ્રકારના જીવ પોત-પોતાના સુખ ભોગવવાના સ્થાનમાં પ્રવિષ્ટ થાય છે, તેમ વિષધારી સુખ ભોગવવાની સ્થાનમાં પ્રવિષ્ટ થાય છે, તેમ વિષધારી અને બીજા જીવો જ્યાં-ત્યાં સ્થાન પામીને ઘૂસી જાય છે. (૪)

एत उ त्वे प्रत्यहश्नप्रदोषं तस्कराइव ।

अहृष्टा विश्वहृष्टाः प्रतिबुद्धा अभूतन ॥ ५ ॥

પદાર્થ : ત્વે-તે એ, ઉ-પૂર્વોક્ત વિષધર વા વિષ પ્રદોષમ્-રાત્રિના આરંભમાં તસ્કરાઇવ-જેમ ચોર તેમ પ્રત્યહશ્ન-પ્રતીતિથી જોવામાં આવે છે. હે અહૃષ્ટા:-ન જોવામાં આવનાર વા વિશ્વહૃષ્ટા:-સર્વના જોવામાં આવતા વિષધારીઓ ! તમે પ્રતિબુદ્ધા:-પ્રતીત જ્ઞાનથી અર્થાત્ ઠીક સમયથી યુક્ત અમૂતન-થાઓ. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ ચોરોમાં ડાકુ જોવામાં આવે છે અને અન્ય જોવામાં આવતા નથી, તેમ મનુષ્યો અનેક પ્રકારના પ્રસિદ્ધ અને અપ્રસિદ્ધ વિષધારીઓને તથા વિષોને જાણે. (૫)

द्यौर्वः पिता पृथिवी माता सोमो भ्रातादितिः स्वसा ।

अहृष्टा विश्वहृष्टास्तिष्ठतेलयता सु कम् ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે અહૃષ્ટા:-દૃષ્ટિગોચર ન થનારા અને વિશ્વહૃષ્ટા:-સર્વના જોવામાં આવતા વિષધારીઓ ! જેના દ્યૌ:-સૂર્યની સમાન સંતાપ કરનાર વ:-તમારા પિતા-પિતા, પૃથિવી-પૃથિવીની સમાન માતા-માતા, સોમ:-ચંદ્રમાની સમાન ભ્રાતા-ભ્રાતા અને અદિતિ:-વિદ્વાનોની અદીન સમાન સ્વસા-બહેન છે, તે તમે સુ, કમ્-ઉત્તમ સુખ જેમ તિષ્ઠત-સ્થિત રહો અને પોતાના સ્થાનમાં ઇલયત-જાઓ. (૬)

ભાવાર્થ : જે વિષધારી જીવો છે તેઓને સંશમન આદિ ઉપાયોથી દૂર કરવા જોઈએ અને ઔષધિ આદિથી વિષોનું નિવારણ કરવું જોઈએ. (૬)

ये अस्या ये अङ्ग्याः सूचीका ये प्रकङ्कताः ।

अहृष्टाः किं चनेह वः सर्वे साकं नि जस्यत ॥ ७ ॥

પદાર્થ : હે અહૃષ્ટા:-અદૃષ્ટ વિષધારી જીવો ! ઇહ-આ સંસારમાં યે-જે વ:-તમારામાં અંસ્યા:-સ્કંધોમાં પ્રસિદ્ધ થનાર યે-જે અંગ્ગ્યા:-અંગોમાં પ્રસિદ્ધ થનાર અને સૂચીકા:-સોય (ભોંકાવા) સમાન વ્યથા કરનાર વીંછી આદિ વિષધારી જીવ તથા યે-જે પ્રકઙ્કતા:-અતિ પીડા આપનાર ચંચળ છે અને જે કિચ્ચન્-કોઈ વિષ આદિ છે, એ સર્વે-સર્વે તમે સાકમ્-એક સાથે અર્થાત્ વિષ સહિત નિ, જસ્યત-અમને છોડી દો વા છોડાવી દો. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, પ્રયત્નપૂર્વક શરીર અને આત્માને દુઃખ આપનાર વિષોને દૂર કરવા જોઈએ. જેથી આ સંસારમાં નિરંતર પુરુષાર્થની વૃદ્ધિ થાય. (૭)

उत्पुरस्तात्सूर्य एति विश्वदृष्टो अदृष्टहा ।

अदृष्टान्तसर्वाञ्जम्भयन्तसर्वाश्च यातुधान्यः ॥ ८ ॥

પદાર્થ : હે વૈદ્યજનો ! તમને જેમ સર્વાન્-સર્વ પદાર્થો અદૃષ્ટાન્-અદૃષ્ટને જમ્ભયન્-અંગ-અંગની સાથે દેખાતા અદૃષ્ટહા-જે ન દેખાતા અંધકારનો વિનાશ કરનાર વિશ્વદૃષ્ટ:-સંસારમાં દેખેલ સૂર્ય:-સૂર્ય મંડળ, પુસ્તાત્-પૂર્વ દિશામાં ઉદેતિ-ઉદયને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ સર્વા:-ચ-યાતુધાન્ય:-સર્વ દુરાચારીઓને ધારણ કરનારી દુર્વ્યથાનું નિવારણ કરવું જોઈએ. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અંધકારનું નિવારણ કરીને પ્રકાશને ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ વૈદ્યો દ્વારા વિષ-નિવારક ઔષધિઓ દ્વારા સમસ્ત વિષોને નિર્મૂળ કરવા જોઈએ. (૮)

उदपप्तदसौ सूर्यः पुरु विश्वानि जूर्वन् ।

आदित्यः पर्वतेभ्यो विश्वदृष्टो अदृष्टहा ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ અસૌ-આ સૂર્ય:-સૂર્યમંડળ વિશ્વાનિ-સમસ્ત અંધકારજન્ય દુઃખોનો પુરુબહુ જ જૂર્વન્-વિનાશ કરતા ઉત્, અપ્પન્-ઉદય થાય છે; અને જેમ આદિત્ય:-સૂર્ય પર્વતેભ્ય:-પર્વત વા મેઘોથી ઉદયને પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ અદૃષ્ટહા-ગુપ્ત વિષોનો વિનાશ કરનાર વિશ્વદૃષ્ટ:-સૌએ જોયેલું વિષ હરનાર વૈદ્ય વિષનું નિવારણ કરવાનો પ્રયત્ન કરે. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય પોતાના પ્રકાશથી સર્વ પદાર્થોને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ વિષ દૂર કરવામાં નિપુણ વૈદ્યજન વિષાક્ત વાયુ આદિ પદાર્થોને દૂર કરે છે અને સર્વ પ્રાણીઓને સુખ પહોંચાડે છે. (૯)

सूर्ये विषमा सजामि दृतिं सुरावतो गृहे । सो चिन्न न मराति

नो वयं मरामारे अस्य योजनं हरिष्ठा मधु त्वा मधुला चकार ॥ १० ॥

પદાર્થ : હું સુરાવત:-સૂરા ખેંચનાર (અર્થાત્ સૂરા = આસવ બનાવનાર કે વેચનાર કલાલ)ના ગૃહે-ઘરમાં દૃતિમ્-જેમ ચામડાનું સુરાપાત્ર (હોય) તેમ સૂર્યે-સૂર્યમંડળમાં વિષમ્-વિષનું આ, સજામિ-આરોપણ કરું છું, સઃ, ચિત્-નુ-તે પણ ન, મરાતિ-ન-નષ્ટ થાય અને નો, વયમ્, મરામ-ન અમારો પણ પ્રાણ ત્યાગ થાય અસ્ય-આ વિષનો યોજનમ્-યોગ, આરે-(વિષને) દૂર કરે છે.

હે વિષધારી હરિષ્ઠા:-જે હરણમાં અર્થાત્ વિષ હરણમાં સ્થિર છે, વિષહરણવિદ્યા જાણે છે, તે ત્વા-તને મધુ-મધુરતાને પ્રાપ્ત ચકાર-કરે છે, એ મધુલા-એની મધુરતાને ગ્રહણ કરનારી વિષહરણ મધુવિદ્યા છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યના રોગ નિવારક પ્રકાશના સંયોગથી મહૌષધિઓ દ્વારા, વિષહરણ કરનારા લોકો (વૈદ્યો) વિષનું નિવારણ કરે છે અને મધુરતા સંપન્ન કરે છે, તે આ (કાર્ય) સૂર્ય (પ્રકાશ) નાશક હોતું નથી અને તે (વિષ હરણ કરનાર-વૈદ્ય) પણ દીર્ઘાયુ બને છે. (૧૦)

त्रिः सप्त मयूर्यैः सप्त स्वसारो अग्रुवः ।

तास्तै विषं वि जभ्रिर उदकं कुम्भिनीरिव ॥ १४ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સપ્ત-સાત સ્વસાર:-સ્વયં શરણશીલ અર્થાત્ વહેવાની સમાન અગ્રુવ:- આવવા-જવાવાળી (વહેતી) નદીઓની સમાન ત્રિ: સપ્ત-એકવીસ મયૂર્ય:-મયૂરી = મોર જાતિની પક્ષીણીઓ છે તા: તે ઉદકમ્-જળને કુમ્ભિ-નીરિવ-જલનો જેનો અધિકાર છે તે કહારિન = ઘડા લઈ જનારીની સમાન તે-તારા વિષમ-વિષને વિ, જભ્રિરે-વિશેષતાથી હરે. (૧૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે એકવીસ પ્રકારની મયૂરીઓ (મોર જાતિની પક્ષીણીઓ) છે, તેને ન મારવી જોઈએ, પરંતુ સદા વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ.

જે નદીઓ સ્થિર જળવાળી હોય, તેનો રોગ કરનાર હોવાના કારણે ઉપયોગ ન કરવો જોઈએ. જે વહેતું જળ હોય અને સૂર્યકિરણોનો તથા વાયુનો સ્પર્શ કરે છે, તે ઉત્તમ અને રોગહર હોય છે. (૧૪)

इयत्तकः कुषुम्भकस्तकं भिनद्म्यश्मना ।

ततो विषं प्र वावृते पराचीरनु संवतः ॥ १५ ॥

પદાર્થ : જે ઇયત્તક:-મેલા, કુત્સિત, નિંદ્ર કુષુમ્ભક:-નાના-અલ્પ પ્રમાણ નોળિયા વિષયુક્ત છે. તકમ્-તે દુષ્ટને અશ્મના-વિષહર પથ્થરથી હું ભિનદ્મિ-પૃથક્ કરું છું. તત:-એ કારણે વિષમ્-તે વિષને છોડીને સંવત:-વિભાગવાળી પરાચી-દૂર-દૂર જનારી-પ્રાપ્ત થતી એ દિશાઓને અનુ-લક્ષ્ય કરીને પ્ર, વાવૃતે-વિષ પ્રવૃત્ત થાય છે. તેથી પણ નીકળી જાય છે. (અર્થાત્ તે વિષનું દિશાઓમાં વહન થતા મારી તરફ આવતું નથી.) (૧૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિષહારક રત્નોથી વિષ દૂર કરે છે, તેઓ વિષથી ઉત્પન્ન રોગોનો નાશ કરીને બળવાન બનીને શત્રુ-ભૂત રોગો પર વિજય પ્રાપ્ત કરી લે છે. (૧૫)

कुषुम्भकस्तदब्रवीद् गिरेः प्रवर्त्तमानकः ।

वृश्चिकस्यारसं विषमरसं वृश्चिक ते विषम् ॥ १६ ॥

પદાર્થ : ગિરે:-પર્વતથી પ્રવર્ત્તમાનક:-પ્રવૃત્ત થયેલ-શીઘ્રતાથી આવતો કુષુમ્ભક:-નાનો નોળિયો વૃશ્ચિકસ્ય-વીંછીનું વિષમ્-વિષને અરસમ્-નીરસ જે અબ્રવીત્-વાત કહે છે અર્થાત્ ચેષ્ટાથી બીજાઓને ચેતવે છે અર્થાત્ નીરસ છે. તત્-એ કારણે હે વૃશ્ચિક-વીંછી અર્થાત્ અંગોનું છેદન કરનાર પ્રાણી તે-તારું અરસમ્-વિષરહિત છે. (અર્થાત્ નોળિયાના વિષની સામે વીંછીનું વિષ અત્યંત તુચ્છ છે.) (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો, વીંછી આદિના વિષને દૂર કરનાર પર્વતીય નોળિયાનું સંરક્ષણ કરે. જેથી તેઓ વિષ સંબંધી રોગોનું નિવારણ કરવામાં સમર્થ બની શકે. (૧૬)

સંગતિ : આ સૂક્તમાં વિષ હર ઓષધિ, વિષહર જીવ અને વિષહર વેદોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ સૂક્તના અર્થની પૂર્વ સૂક્તાર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. (૧૮૧)

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्याणां परमविदुषां विरजानन्द सरस्वती स्वामिनां शिष्येण
श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामिना समन्विते सुप्रमाणयुक्ते सुभाषा विभूषिते
ऋग्वेद भाष्ये प्रथम मण्डलं समाप्तम् ॥

अडीं अेकसो अेकाशुं सूक्त अने सोणभो वर्ग.
थोवीसभो अनुवाढक अने प्रथम मंडल समाप्त थयो.





પોપટભાઈ ચૌહાણ
પ્રમુખ



રણજીતસિંહ પરમાર
મંત્રી

આર્ય સમાજ

મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, હાથીખાના, રાજકોટ. ફોન : ૦૨૮૧-૨૨૩૧૧૪૬

સંસ્થાની પ્રવૃત્તિઓ

- (૧) દૈનિક યજ્ઞ તથા સાપ્તાહિક યજ્ઞ, સત્સંગ તેમજ પારિવારિક સત્સંગ;
- (૨) મહિલા સત્સંગ, મહિલા સંચાલિત દર માસના ચોથા રવિવારે તેમજ તે માસમાં આવતા આર્ય પરિવારોના જન્મ દિવસ તથા લગ્ન દિવસની શુભેચ્છા પાઠવવામાં આવે છે;
- (૩) વેદ પ્રચારાર્થે શેરીયજ્ઞ ૧૧, ૨૧ તથા ૫૧ કુંડી યજ્ઞ તેમજ અંધશ્રદ્ધા વિરુદ્ધ પત્રિકા દ્વારા પ્રચાર;
- (૪) વેદિક વિધિથી સોળ સંસ્કાર તથા શિલાન્યાસ (ભૂમિપૂજન) તેમજ ગૃહપ્રવેશ (વાસ્તુયજ્ઞ);
- (૫) અંત્યેષ્ટિ સંસ્કાર તથા શાંતિયજ્ઞ;
- (૬) વેદિક સાહિત્યનું વેચાણ તેમજ રાજકોટ જન્માષ્ટમી લોકમેળામાં તથા ટંકારા ઋષિબોધ ઉત્સવમાં સ્ટોલ દ્વારા વેચાણ;
- (૭) શ્રાવણીપર્વ નિમિત્તે દર વર્ષે વેદ સપ્તાહનું આયોજન;
- (૮) ક્રિયાત્મક યજ્ઞ પ્રશિલ્પ શિબિર તથા ધ્યાન યોગ શિબિર;
- (૯) મહર્ષિ દયાનંદ સરસ્વતી વિદ્યાલય;
- (૧૦) જાહેર વાંચનાલય;
- (૧૧) કુદરતી આફત જેવી કે સુનામી, અતિવૃષ્ટિ, અનાવૃષ્ટિ, ભૂકંપ, વાવાઝોડું વગેરે સમયે રાહત પ્રવૃત્તિ તથા વાર્ષિક નિ:શુલ્ક મેડિકલ કેમ્પ;
- (૧૨) આર્ય વીર દળ દ્વારા બાળકોમાં સંસ્કાર સિંચન;
- (૧૩) વિદ્વાન કાર્યકર્તાને માસિક સહાય.



શ્રી અર્જુનભાઈ વેલાણી



શ્રીમતી મોંઘીબેન

શ્રી અર્જુનભાઈ કરસનભાઈ વેલાણી : એક આદર્શ વ્યક્તિત્વ

જન્મ ૧૯૩૩માં કચ્છ જિલ્લાના લુડવા ગામે. પિતાજી શ્રીમાન કરસનભાઈ વેલાણી. માતાજી શ્રીમતી જીવાબેન. પિતાજીનું અવસાન થતાં ૧૧ વર્ષની વયે જ પરિવારની જવાબદારી આવી પડી. અભ્યાસ છોડી ગામમાં છૂટક મજૂરી કરતા. ૧૩ વર્ષની વયે કરાંચી કામ પંધા અર્થે ગયા તો ખરા પણ ૨-૩ મહિનામાં જ ભારત-પાક. ભાગલા થતાં પાછા આવી વતનમાં ફરી મજૂરી કરી.

૧૯૫૨માં ૧૯ વર્ષની વયે ૩૦ રૂ. ઉછીના લઈ મુંબઈ પહોંચ્યા અને ભવન નિર્માણમાં મજૂરી કરવા લાગી ગયા. મુંબઈમાં શ્રી ધનજીભાઈ પ્રેમજીભાઈ વેલાણી સાથે પરિચય થયો. તેઓએ કહ્યું કે 'સત્યાર્થ પ્રકાશ' વાંચવાથી બુદ્ધિ ઘણી તેજ અને બમણી થઈ જાય છે. આર્યસમાજમાંથી તરત જ સત્યાર્થ પ્રકાશ લઈ આવ્યા. તેને વાંચવાથી જીવનમાં નવી ચેતના, ઉત્સાહ, આનંદ, ઉમંગ અને અમૂલ્ય જ્ઞાનનો ખજાનો પ્રાપ્ત થયો. આચારવિચારમાં પરિવર્તન આવી ગયું. ત્યાર પછી તો ભવન નિર્માણ કાર્યમાં સારી પ્રગતિ થઈ. પેટા ઠેકેદાર પછી ઠેકેદાર બની ખંતપૂર્વક કામકરવાથી ઈશ્વર કૃપાથી ખૂબ ધનધાન્ય અને સુખસમૃદ્ધિ પ્રાપ્ત થયાં.

મુંબઈમાં રહીને પણ સપરિવાર આર્યસમાજનાં કાર્યોમાં ઉત્સાહભેર ભાગ લેતા. ઘાટકોપર, ગાંધીધામ, ભુજ, ઋષિ ઉદ્યાન-અજમેર જેવાં અનેક સ્થળોએ યથાયોગ્ય તન-મન-ધનથી યોગદાન આપતા રહ્યા. ૧૯૭૫માં મુંબઈ છોડી વડોદરામાં સ્થિર થયા. વડોદરામાં પણ આર્યસમાજ માટે હોલની વ્યવસ્થા કરી આપી. સાબરકાંઠા જિલ્લાના રોજડ ગામપાસે આર્યવન વાળી ભૂમિખરીદી. દર્શન-યોગ મહાવિદ્યાલય, વાનપ્રસ્થ સાધક આશ્રમ આદિ પ્રવૃત્તિઓમાં ઉત્સાહભેર યોગદાન કર્યું. ત્રણ વર્ષ આર્યવન સંસ્થાના પ્રમુખ તરીકેની જવાબદારીઓ નિભાવી. ગુજરાતીમાં સત્યાર્થ પ્રકાશની ૫,૦૦૦ નકલો છપાવવાનો પૂર્ણ ખર્ચ ભોગવ્યો. ઓછું ભણતર છતાં સાહિત્ય, જ્ઞાનવૃદ્ધિ, સત્ય વ્યવહાર વિદ્યાનોના સત્સંગ આદિમાં વિશેષ રુચિ. ક્રિયાત્મક યોગ પ્રશિક્ષણ શિબિર તથા યજુર્વેદ પારાયણ યજ્ઞનાં આયોજન કરાવેલ. તેઓશ્રી ઈશ્વરનો ઉપકાર માને છે કે તેની દયાથી અનેક લોકોને મુરકેલીના સમયે મદદરૂપ થવાયું છે. ૭૭ વર્ષની ઉંમરે પણ સારું સ્વાસ્થ્ય ધરાવે છે.

સ્વામી સત્યપતિજી અને અન્ય અનેક વિદ્વાનો પાસેથી વૈદિક સિદ્ધાંતોનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી તેનો જન-જનમાં પ્રચાર થાય તેવી ઉત્કટ ઈચ્છા ધરાવતા શ્રી અર્જુનભાઈ સાચા સાહિત્ય પ્રેમી છે.





જન્મ : ઈ.સ. ૧૯૧૨
દેહાવસાન : તા. ૭-૧-૧૯૬૦

સ્વ. શ્રી નાચાલાલ રૂડાભાઈ સોલંકીનો જન્મ સૌરાષ્ટ્રના જોડિયા તાલુકાના માણામોરા નામના ગામમાં થયો હતો. દોઢેક વર્ષની બાલ્યાવસ્થામાં તેમણે પિતાશ્રીની છત્રછાયા ગુમાવી. માતા ગલાલ માએ પોતાના એકના એક પુત્રને અનેક કષ્ટો વેઠી ભણાવ્યો-વિદ્યાન બનાવ્યો અને યુવાવયે લગ્ન કરાવ્યા. તે સમય દરમ્યાન તે પુત્રને આર્ય વિચારધારા પણ ઈશ્વર કૃપાએ પ્રાપ્ત થઈ હતી. ઘરે ખેતી કાર્ય સંભાળવાની જવાબદારી આવી. જીવનમાં કંઈક સાહસ કરી આગળ વધવાની તમન્ના હતી. લગભગ ૨૫ વર્ષની ઉંમરે તેઓ પૂર્વ આફ્રિકા ગયા. ત્યાં ત્રણેક વર્ષની આજીવિકા મેળવી પાછા આવ્યા. જોડિયા ગામમાં વેપાર શરૂ કર્યો, પરંતુ ઉધરાણી પૂરી ન મળતાં ખોટ આવી. વેપાર-ધંધો બંધ કરી પાછા ૧૯૪૪માં આફ્રિકા-દારેસલામ આવ્યા. અહીં બિલ્ડિંગ કન્સ્ટ્રક્શનમાં બે-ત્રણ વર્ષ ફોરમેન તરીકે અનુભવ પ્રાપ્ત કરી પોતાનો સ્વતંત્ર વ્યવસાય

આરંભી એક સફળ બિલ્ડિંગ કોન્સ્ટ્રક્ટર તરીકે પ્રખ્યાત થયા. ઈ.સ. ૧૯૪૭માં પોતાના કુટુંબને દારેસલામ તેડાવી લીધું હતું.

શ્રી નાચાલાલભાઈ સ્વભાવે ધીર-ગંભીર-સહનશીલ અને મિલનસાર હતા. દારેસલામમાં એક આદર્શ સમાજસેવી તરીકે તેઓની જબરી પ્રતિષ્ઠા હતી. ત્યાંના સમાજના પ્રમુખ સ્થાને રહી હિંદુ સમાજના ઉત્થાનમાં તન-મન-ધનથી પ્રયત્નશીલ હતા. ભારતથી પધારતા સંત-વિદ્વાનોને પોતાના ઘરે આમંત્રિત કરી, સત્સંગો તેમજ જ્ઞાનગોષ્ઠિઓ ગોઠવતા. તેઓએ જહેમત ઉઠાવી બાળકોમાં આ વિચાર-ધારાના બીજ રોપ્યા હતાં. પોતાના માતૃશ્રીની ખંતથી સેવા કરી માતૃ ઋણ અદા કર્યું હતું.

લગભગ ૪૯ વર્ષની ઉંમરે બંધાતા એક બિલ્ડિંગ ઉપરથી નોધારાં પડવાના અકસ્માતથી તેઓનું દેહાવસાન થયું. ત્યાંના હિંદુ સમાજે પાર્થિવ દેહની ભવ્ય સ્મશાન ધાત્રા કાઢી હતી. આ યાત્રામાં દારેસલામના મેયર પણ તેઓને ભાવભરી અંજલિ આપવા હાજર રહ્યા હતા. આમ એક આર્ય વીરને છાજે તેવું સન્માન પામ્યા. તેઓની સ્મૃતિ રૂપે ત્યાંના સમાજે ગુજરાત વિભાગ કેળવણી પ્રચાર મંડળ દ્વારા ગરીબ વિદ્યાર્થીઓને અભ્યાસમાં સહયોગ મળી રહે તે માટે શિષ્યવૃત્તિ લોન ચાલુ કરેલ હતી. હજારો વિદ્યાર્થીઓએ તેનો લાભ લીધો છે અને લઈ રહ્યા છે.

પરમપિતા પરમેશ્વરને નમ્ર અરજ કરું છું કે તેઓ મને મારા સ્વ. પિતાશ્રી નાચાલાલભાઈ તેમજ સ્વ. માતૃશ્રી રંભાબેનના માતૃ-પિતૃ ઋણમાંથી મુક્ત કરે એવી અભિલાષા સાથે ખુદ ઈશ્વરે જ આપેલ તે ઈશ્વરના ચરણોમાં આ નાની-સી ફૂલની ધાંબડી સ્મરણાંજલિ રૂપે અર્પણ કરું છું.

પુત્રી - આર્યા જયાબેન ચકુલાલ પોરીયા

67, Oakland Avenue, Leicester - LE4 7SG, ENGLAND. U.K.

પુત્રો : ભગવાનજીભાઈ, હીરજીભાઈ, નરોત્તમભાઈ, વિનોદભાઈ, ગુણવંતભાઈ

પુત્રવધૂઓ : લલિતાબેન, મુક્તાબેન, ઉર્મિલાબેન, સ્મિતાબેન, ઉષાબેન

પુત્રીઓ : નર્મદાબેન શિવલાલ ટાંક, માણેકબેન ગોવિંદ સાપરીયા,

જયાબેન ચકુલાલ પોરીયા, મુક્તાબેન હસમુખલાલ ગોહીલ

પૌત્રો : આનંદ, સાગર.

પૌત્રીઓ : ભારતી, રેશ્મા, મિનળ, નીતા, સીમા, કૃપાલી,

દિશીતા, દિશા, મનીષા, શ્રુતિ, અદિતિ, અવનિ, મૈત્રેયી.

₹. १,००,००० प्रदान करने पर महानुभाव

श्रीमती हीराबेन धनशुभाई वेलाही तथा श्री धनशुभाई वालशुभाई वेलाही
(स्थापक प्रमुख)

आर्यवन विकास फार्म ट्रस्ट, रोजड, पो. सागपुर-३८३३०७, जि. साबरकांठा.

पौत्र-पौत्रवधू परिवार



श्रीमती मनीषा



श्री राजेश वेलाही



श्रीमती नेहा



श्री यज्ञेश वेलाही



श्रीमती पूजा



श्री तेजस वेलाही



श्रीमती तन्वी



श्री सत्येश वेलाही



श्रीमती निहारिका



श्री सुशील वेलाही

घाटकोपर (प.) मुंबई-४०००८६. (महाराष्ट्र).

અગવેદભાષ્ય

રૂા. ૫૧,૦૦૦ પ્રદાન કરનાર મહાનુભાવ



શ્રી ગંગારામભાઈ કરસનદાસ ભાવાણી
શ્રીમતી જશુમતી ગંગારામ ભાવાણી

પુત્ર : શ્રી દિનેશ ગંગારામ ભાવાણી
પુત્રવધૂ : શ્રીમતી નિર્મલા દિનેશ ભાવાણી

સૌજન્ય :

પુત્ર : શ્રી રજનીકાન્ત ગંગારામ ભાવાણી
પુત્રવધૂ : શ્રીમતી કલાવંતી રજનીકાંત ભાવાણી

પૌત્ર : દીપક રજનીકાંત, કીર્તિકુમાર રજનીકાંત, આશીષ દિનેશ

મહારાષ્ટ્ર સો મિલ્ક

પાટીદાર એમ્બર્સ, નવા ઉરણ રોડ, પનવેલ - ૪૧૦ ૨૦૬, મહારાષ્ટ્ર.
ફોન : ૦૨૨ - ૨૭૪૫ ૩૩૩૪, મો. ૦૯૮૬૯૫ ૭૨૦૦૩ ફેક્સ : ૨૭૪૮ ૧૫૩૨
E_mail : umapanvel_2009@yahoo.co.in

રૂા. ૫૦,૦૦૦ પ્રદાન કરનાર મહાનુભાવ



સ્વ. મોહનભાઈ ગાંગુલભાઈ ચાવડા



સ્વ. પ્રેમધનુબેન મોહનભાઈ ચાવડા

સૌજન્ય : શ્રી સુરેશભાઈ મોહનલાલ ગાંગુ ચાવડા,

'પ્રેમમોહન', નૂતન નગર મેન રોડ, કાલાવડ રોડ, રાજકોટ (ગુજરાત).



અગવેદભાષ્ય

રૂા. ૫૦,૦૦૦ પ્રદાન કરનાર મહાનુભાવ



સ્વ. ભૂપતરાય મોહનલાલ ચાવડા દ્વારા પ્રવીણભાઈ ચાવડા
'પ્રેમમોહન', નૂતન નગર મેન રોડ, કાલાવડ રોડ, રાજકોટ (ગુજરાત).

રૂા. ૫૦,૦૦૦ પ્રદાન કરનાર મહાનુભાવ



સ્વ. રમાબેન જેઠાલાલ ચાવડા

'રમા સ્મૃતિ', પ્લોટ નં.—૩૪ સી, શારદાનગર મેનરોડ, કાલાવડ રોડ, રાજકોટ (ગુજરાત).



રૂા. ૫૦,૦૦૦ પ્રદાન કરનાર મહાનુભાવ



શ્રી અંગારામભાઈ ડરસનભાઈ પોઠાર (પટેલ)
જન્મ: વિ.સં. ૧૯૮૬



શ્રીમતી કુંદુલેન અંગારામભાઈ પોઠાર (પટેલ)
જન્મ: વિ.સં. ૧૯૮૬

શ્રી અંગારામભાઈ પોઠારનું જીવન એટલે શૂન્યમાંથી સર્જન. તેમણે જીવનમાં ખેત મજૂરી કરેલી છે. લોકોની જમીન ભાગે વાવી છે; પરંતુ પોતાનાં છવે સંતાનોનો સુંદર ઉછેર કરીને જીવનયાત્રાને સરળ બનાવી આપેલ છે.

૧૯૫૧ માં ઈડર તાલુકામાં જમીન વિહોળાં ખેડૂતોની સહકારી મંડળી રચી. પ્રયાસ, પુરુષાર્થ કરી ૧૨ ભાગીદારો માટે ૩૭૨ એકર જમીન મેળવી. આ મંડળીના ચેરમેન તથા સન્માન સમાજમાં મંત્રી તરીકે સેવા પ્રદાન કરી.

વેકરા કંપમાં રહેતા ત્યારે શિવગણભાઈ કાનજીભાઈ વેલાણીના સંપર્કથી વેદિક વિચારપારા મળી. દહેગામ પાસે વિજય કાર્મમાં અન્યા બાદ મગોડી લાટના શ્રી ધનજીભાઈ વાલજીભાઈ વેલાણીના સંગમાં રહી આર્યવન, દર્શન યોગ મહાવિદ્યાલય, વાનપ્રસ્થ સાધક આશ્રમ, આયુર્વેદિક ઔષધાલય, ગૌશાળા જેવી પ્રવૃત્તિઓનું મહત્વ સમજીને ઉદાર સહયોગ આપ્યો.

દહેગામ ખાતે આચાર્ય શાનેશ્વરજીની અધ્યક્ષતામાં ક્રિયાત્મક યશ પ્રશિક્ષણ શિબિરનું આયોજન કર્યું. માનુશી કંકુબેન પણ સાચા અર્થમાં સહપર્મિણી છે.

વિજય કાર્મ, દહેગામ, જિ. ગાંધીનગર-૩૮૨ ૩૦૫.

રૂા. ૫૦,૦૦૦ પ્રદાન કરનાર મહાનુભાવ



શ્રી પરેશભાઈ એલ. પટેલ
એલે મનીષાબેન પરેશભાઈ પટેલ

સંદેશ : સારા પુસ્તક સાહિત્યના વાંચનથી માણસ પોતે જાગે
— સારા સંસ્કાર ધારણ કરે... ખરાબ કાર્યોથી બચે.
પુસ્તકો વગરનું ઘર સ્મશાન સમાન છે. — ગુણવંત શાહ

વ્યસન મુક્તિ શિબિરોના માધ્યમથી પાન, બીડી, ગુટકા, દારૂ છોડનારને
પ્રતિવર્ષે રૂા. ૧૦૦૦/- પ્રોત્સાહન પુરસ્કાર આપવાની પ્રવૃત્તિ આપ ચલાવી રહ્યા છો.

રવાપર રોડ, જયરાજ પાર્ક, મોરબી.



રૂ. ૫૦,૦૦૦ પ્રદાન કરનાર મહાનુભાવ



શ્રીમતી સોનાદેવી દારકપ્રસાદ

નયા ગાંવ, ગુંજરબાગ, પટણા, બિહાર.

આપશ્રીએ પોતાના પુત્ર ડૉ. કાંતિકૃષ્ણને ગુરુકુળ કાંગડીમાં અધ્યયન કરાવેલ.
જે ત્યાંના આયુર્વેદ મહાવિદ્યાલયના આચાર્ય બન્યા હતા.
આપનું નિવાસસ્થાન દેશની સ્વતંત્રતાના લડવૈયાઓનું આશ્રય સ્થાન રૂપ હતું.

સૌજન્ય : માતા સરોજની દેવી કાંતિકૃષ્ણ
આર્ય કન્યા ગુરુકુળ, શિવગંજ, જિ. સિરોહી, રાજસ્થાન.

રૂ. ૫૦,૦૦૦ પ્રદાન કરનાર મહાનુભાવ



શ્રી નારાયણભાઈ પ્રેમજીભાઈ પટેલ

શ્રીમતી વાલીબેન નારાયણભાઈ પટેલ

શ્રી નારાયણભાઈનો જન્મ ઈ.સ. ૧૯૨૩માં દેશગપર (કચ્છ)માં થયેલ. તેમની બાલ્યાવસ્થા દરમ્યાન માતા-પિતા બંનેની દૈણિ જતી રહી. માત્ર ૧૩-૧૪ વર્ષની ઉંમરે જ પરિવારની સઘળી જવાબદારી માથે આવી. અભ્યાસ પોરણ-૪ સુધી કરવા પામેલ. કૃષિકાર્યમાં પ્રગતિશીલ અભિગમથી સફળતા મેળવી.

ભુજના શ્રી શિવગણભાઈ વેણાણીના સંપર્કથી આર્યસમાજના વિચારો પ્રાપ્ત થયા. પનસુરા (જિ. સાબરકાંઠા) પંચાયતના સભ્ય તરીકે સેવા પ્રદાન કરી. આર્યવન રોજડ ખાતે આરંભથી જ કોષાધ્યક્ષ તરીકેની જવાબદારી સંભાળી. સંસ્થાના ખેતી તથા ગૌશાળાના કામપોતાની દેખરેખમાં કરાવતા.

પોતાના તમામ સંતાનોને ઉચ્ચ શિક્ષણ અપાવ્યું. રૂઢિચુસ્ત સમાજનો વિરોધ સહન કરી પુત્રી જવાબેનને સૌ પ્રથમ હાઈસ્કૂલ શિક્ષણ અપાવ્યું. પુત્ર છબીલભાઈએ ગુજરાત વિધાનસભામાં માંડવી મતવિસ્તારનું પ્રતિનિધિત્વ કરેલ છે.

'નારાયણનિધિ', પનસુરા, જિ. સાબરકાંઠા.

श्री. ५०,००० प्रदान करनेर महानुभाव



माता बुद्धिमति जी आर्या

आपका जन्म का नाम बालमति जी था। वह बहुत ही धर्मपरायणा, विद्वानों के प्रति आदरभाव रखने वाली थी। आर्ष ग्रन्थों के पठन में आपकी बहुत रुचि थी।

मन में एक ही भाव था कि यदि मेरा अगला जन्म मनुष्य योनि में मिले तो एक धार्मिक तथा आर्ष संस्कारों से भरपूर परिवार में जन्म हो और गुरुकुल में जाकर ब्रह्मचारी बनकर विद्याध्ययन करूं।

घर पर आये अतिथि को कभी भी खाली हाथ जाने नहीं देती थी। गुरुकुल के छात्रों को नियमित छात्रवृत्ति प्रदान करती थी।

दिनांक ०२-०८-२००६ को ८१ वर्ष की अवस्था में आप का देहावसान हुआ।

सौजन्य : आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, ४५५, खारी-बावली, दिल्ली, ११० ००६.

श्री. ५१,००० प्रदान करनेर संस्था



श्री. के. मोतीवरस,



प्रधान धर्मभार्य आर्य, मंत्री

आर्यसमाज, पोरबंदर द्वारा चालती प्रवृत्तियों

(१) दैनिक यज्ञ, (२) साप्ताहिक सत्संग, (३) स्त्री सभा सत्संग (गुरुवार), (४) पारिवारिक सत्संग, (५) वैदिक साहित्य प्रचार, (६) वांगनालय अने (७) वैदिक संस्कार केन्द्र के जेभां भाणकोने संध्या, यज्ञ, प्रार्थना, भजन तथा धर्मशिक्षा आदिनुं ज्ञान सांजना ५-०० थी ६-३० सुधी आपवाभां आवे छे.

आर्य समाज,

महर्षि दयानंद मार्ग, पोरबंदर.

शाखा (१) : आर्यनगर, जुंदाणा, जिन प्रेसनी पाछण, पोरबंदर. शाखा (२) : उद्योगनगर, पोरबंदर.



રૂા. ૪૧,૦૦૦ પ્રદાન કરનાર મહાનુભાવ

શ્રી પ્રભુલાલ ભવાનજી

ગંજ બજાર, ભાભર, બનાસકાંઠા-૩૮૫૩૨૦, ગુજરાત.

રૂા. ૨૫,૦૦૦ પ્રદાન કરનાર મહાનુભાવ

શ્રીમતી વિમલા જી દેવશંકર જોશી

વાનપ્રસ્થ સાધક આશ્રમ, આર્યવન, રોજડ, પો. સાગપુર, જિ. સાબરકાંઠા, ગુજરાત.

શ્રી હરેશભાઈ પતાણી

૨૧-૨ શાંતિનગર, એસ. જી. રોડ, જેકબ સર્કલ, મુંબઈ, મહારાષ્ટ્ર.

રૂા. ૧૬,૦૦૦ પ્રદાન કરનાર મહાનુભાવ

શ્રીમતી સુમિત્રાબેન શર્મા

૫૭, હરદ્વાર સોસાયટી, નરોડા, અમદાવાદ, ગુજરાત. ફોન : ૦૭૯-૨૨૮૨૧૪૨.

રૂા. ૧૫,૦૦૦ પ્રદાન કરનાર મહાનુભાવ

શ્રી શાંતિલાલ ખીમજીભાઈ પોકાર

૨-આર/૨૬, જાયોનિકા-બી, આદિત્ય ગાર્ડન સિટી, વારજે, પૂણે, મહારાષ્ટ્ર.

રૂા. ૧૧,૦૦૦ પ્રદાન કરનાર મહાનુભાવ

શ્રી ગોપાલભાઈ રામજીભાઈ કેશરાણી

કિસાન કુટુંબ એન્ડ વેજિટેબલ્સ, સુપર માર્કેટ, નખત્રાણા, કચ્છ પિન-૩૭૦ ૬૧૫.

માતા કંકુબેન રામજી હરદાસ વાડિયા

પંચવટી ફાર્મ, પો. શિરવા, માંડવી, કચ્છ-૩૭૦૪૬૫, ગુજરાત.

શ્રી કૌશિકભાઈ કેલાશભાઈ જોશી

એસ.ટી. બસ સ્ટેશન પાસે, બરોઈ નાકા બહાર, મુંદ્રા, કચ્છ-૩૭૦૪૨૧, ગુજરાત.

માતા લીલાવતીબેન ખીમજીભાઈ યાવડા

વાનપ્રસ્થ સાધક આશ્રમ, આર્યવન, રોજડ, પો. સાગપુર, જિ. સાબરકાંઠા, ગુજરાત.

ચન્દ્રદિગ્વિજય વેદજ્ઞાન ટ્રસ્ટ, ખરેડી

દ્વારા માધવદાસ પાર્ક, શ્રીરામ મોબાઈલ શોપ, ૨/૩, મનહર પ્લોટ, મંગલા રોડ, રાજકોટ-૩૬૦૦૦૨.

રાજમાતા કુસુમકુંવરબા કરણસિંહ વેદજ્ઞાન ટ્રસ્ટ

ઓમ્ ગંગાવિહાર, ઢોલરિયાનગર, રાજકોટ.

શ્રી અશ્વિનભાઈ મહેન્દ્રનાથ સુખડિયા

વાનપ્રસ્થ સાધક આશ્રમ, આર્યવન, રોજડ, પો. સાગપુર, જિ. સાબરકાંઠા, ગુજરાત.

શ્રી જગજીવનભાઈ કેશવભાઈ પરમાર

શિયાળીની પોળની બહાર, લીમડી રોડ, ફૂલવાડી ચોક, વઢવાણ, સુરેન્દ્રનગર-૩૬૩૦૩૦.

અગવેદભાષ્ય

શ્રી લક્ષ્મણભાઈ દેવજીભાઈ પટેલ (પારસિયા)

૭૩૪/૨-બી, વાસ્તુનિર્માણ સોસાયટી, પંચદેવ મંદિર પાસે, ગાંધીનગર.

શ્રી ભગવત્દત્તજી ઠક્કર

૬, નાલંદા નગર, કોલેજ રોડ, નડિયાદ-૩૮૭૦૦૧, ગુજરાત.

શ્રી હીરાલાલજી પાટીલ

૨૧૨-સી, મસ્જિદનાથ નગર, આદિનાથનગર વિભાગ-૨, ઓઢવ રોડ, અમદાવાદ-૩૮૨૪૧૫, ગુજરાત.

માતા લીલાવતીબેન પરીખ

વાનપ્રસ્થ સાધક આશ્રમ, આર્યવન, રોજડ, પો. સાગપુર, જિ. સાબરકાંઠા-૩૮૩૩૦૭, ગુજરાત.

શ્રી પ્રહલાદભાઈ ઠાકર

સરકારી ક્વાર્ટર, ડી-૫, બ્લોક નં.-૪/૧૬, ડ્રોલ હાઉસ કેમ્પસ, પરમ સિનેમા પાસે, રાજકોટ, ગુજરાત.

શ્રી હિંમતલાલ પંડિત

'શાંતિ કુંજ' ૧૩, સવસર પ્લોટ, પો. મોરબી, રાજકોટ, ગુજરાત.

રૂા. ૧૦,૦૦૦ પ્રદાન કરનાર મહાનુભાવ

શ્રી પોપટભાઈ પ્રાગજીભાઈ ચૌહાણ

'આનંદ', કુંભાર વાડા, શેરી નં. ૪, રાજકોટ-૩૬૦૦૦૧, ગુજરાત.

શ્રીમતી પ્રભાબેન વિજયભાઈ નારણભાઈ બોરીયા

'સત્યમ્' ૨, પ્રકાશ સોસાયટી, નિર્મલા કોન્વેન્ટ સ્કૂલની પાછળ, રાજકોટ-૫. ફોન : ૯૮૨૪૨ ૧૩૮૮૨.

શ્રી નટવરસિંહ પરમાર

'ઓમ્', ૨, વિશ્વનગર, પટેલ બોર્ડિંગ રોડ, મવડી પ્લોટ, રાજકોટ-૩૬૦૦૦૪.

ફોન : ૦૨૮૧-૨૩૮૬૭૨૩.

સુકેતુ અનિલભાઈ પટેલ

સ્વામીનારાયણ મંદિરની બાજુમાં, ૧૦૦, અંબાલાલ પાર્ક, કારેલીબાગ, વડોદરા-૩૮૦૦૧૮, ગુજરાત.

શ્રી ઉદયભાઈ ચૌહાણ

૧૮-બી, રચના સોસાયટી, નેશનલ હાઈવે નં. ૮, મોરબી-૩૬૩૬૪૨, ગુજરાત.

રૂા. ૫,૦૦૦ પ્રદાન કરનાર મહાનુભાવ

શ્રી ગોવિંદભાઈ સાવજીભાઈ સાવલીયા

૪૭-બી, 'ધર્મ-ભક્તિ' પંચશીલ સોસાયટી, ગોંડલ રોડ, રાજકોટ-૩૬૦૦૦૪. ફોન : ૯૮૨૪૩૬૦૨૪૩.

પં. ગંગારામ જંગીક

નેહા એન્ટર પ્રાઈઝ, સ્ટેશન રોડ, જયપુર, રાજસ્થાન.

શ્રી હરેશભાઈ અઢિયા

'આશ્રય' ૧, સોમનાથ સોસાયટી, સ્ટ્રીટ નં. ૪, રોડ, રાજકોટ. ફોન : ૦૨૮૧-૨૫૮૧૩૭૫.

શ્રી વિનોદભાઈ અઢિયા

'સુયોગ' ૧, સરસ્વતી સોસાયટી, નિર્મલા કોન્વેન્ટ સ્કૂલ રોડ, રાજકોટ.



શ્રીમતી જયશ્રીબેન ગોવિંદભાઈ પટેલ

‘આનંદ’, ઈન્દ્રપ્રસ્થ નગર, પંચવટી સોસાયટી પાસે, રાજકોટ. ફોન : ૦૨૮૧-૨૪૩૧૧૪૮.

સ્વ. રંભાજી કાથક પરમાર

દ્વારા શ્રીમતી ઈલાબેન મનોહરસિંહ પરમાર, નાના મવા રોડ, રાજકોટ. ફોન : ૩૪૨૬૮૪૪૭૭૯.

શ્રી દેવકુમાર દયાલાલ ભીંડી

‘ઓમ્ શ્રદ્ધા’, ૪૧ શાસ્ત્રીનગર, નાના મવા રોડ, રાજકોટ-૦૨૮૧-૨૩૩૧૬૧૦.

સહ. પારેખ પ્રવીણચન્દ્ર હરિલાલ હ. શ્રી રાજેશ પારેખ
આંબાવાડી, ઘોષા સર્કલ રોડ, પી.જી.વી.સી.એલ., ભાવનગર-૩૬૪૦૦૧, ગુજરાત.

શ્રી મયૂરભાઈ શાહ

૨૩૪, સેક્ટર-૭ એ, ગાંધીનગર.

રૂા. ૧,૨૫,૦૦૦ પ્રદાન કરી અગ્નિમ ગ્રાહક બનનાર સંસ્થા

આર્ય સમાજ

મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, રાયપુર દરવાજા બહાર, કાંકરિયા રોડ, અમદાવાદ-૩૮૦૦૨૨.

રૂા. ૧,૦૦,૦૦૦ પ્રદાન કરી અગ્નિમ ગ્રાહક બનનાર સંસ્થા

ચરોતર પ્રદેશ આર્યસમાજ

સ્ટેશન રોડ, આણંદ. ફોન : (૦૨૬૯૨) ૨૪૪૧૯૧

રૂા. ૫૦,૦૦૦ પ્રદાન કરી અગ્નિમ ગ્રાહક બનનાર સંસ્થા

વેદિક સંસ્થાન

૫, પહેલો માળ, આદર્શ કોમ્પ્લેક્સ, મુરલીધર સોસાયટી સામે, ઓઢવ,
અમદાવાદ-૧૫, ગુજરાત. ફોન : (૦૭૯) ૨૨૯૭ ૨૩૪૦.

રૂા. ૩૭,૫૦૦ પ્રદાન કરી અગ્નિમ ગ્રાહક બનનાર સંસ્થા

આર્ય સમાજ

નવાડેરા, ભરૂચ-૩૯૨૦૦૯.

રૂા. ૩૧,૨૫૦ પ્રદાન કરી અગ્નિમ ગ્રાહક બનનાર સંસ્થા

આર્ય સમાજ

દારનગર, પ્લોટ નં. ૪૪/૪૫, સિંધી હાઈસ્કૂલની
પાછળ, ભરતનગર રોડ, ભાવનગર.

આર્ય સમાજ

મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, પોરબંદર.

આર્ય સમાજ

ત્રણ હાટડી બજાર, પો. ટંકારા, રાજકોટ.

આર્ય સમાજ

આર્ય સમાજ રોડ,
ખંભાળિયા નાકા, જામનગર.

આર્ય સમાજ

દાતાર રોડ, જૂનાગઢ.

આર્ય સમાજ

લખપીરવાસ, મોરબી, રાજકોટ.



શ્રીમતી જયશ્રીબેન ગોવિંદભાઈ પટેલ
'આનંદ', ઈન્દ્રપ્રસ્થ નગર, પંચવટી સોસાયટી પાસે, રાજકોટ. ફોન : ૦૨૮૧-૨૪૩૧૧૪૮.

સ્વ. રંભાજી કાચક પરમાર
દ્વારા શ્રીમતી ઈલાબેન મનોહરસિંહ પરમાર, નાના મવા રોડ, રાજકોટ. ફોન : ૩૪૨૬૮૪૪૭૭૯.

શ્રી દેવકુમાર દયાલાલ ભીંડી
'ઓમ્ શ્રદ્ધા', ૪૧ શાસ્ત્રીનગર, નાના મવા રોડ, રાજકોટ-૦૨૮૧-૨૩૩૧૬૧૦.

સદ્. પારેખ પ્રવીણચન્દ્ર હરિલાલ હ. શ્રી રાજેશ પારેખ
આંબાવાડી, ઘોષા સર્કલ રોડ, પી.જી.વી.સી.એલ., ભાવનગર-૩૬૪૦૦૧, ગુજરાત.

શ્રી મયૂરભાઈ શાહ
૨૩૪, સેક્ટર-૭ એ, ગાંધીનગર.

રૂા. ૧,૨૫,૦૦૦ પ્રદાન કરી અગ્નિમ શ્રાહક બનનાર સંસ્થા

આર્ય સમાજ

મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, રાયપુર દરવાજા બહાર, કાંકરિયા રોડ, અમદાવાદ-૩૮૦૦૨૨.

રૂા. ૧,૦૦,૦૦૦ પ્રદાન કરી અગ્નિમ શ્રાહક બનનાર સંસ્થા

ચરોતર પ્રદેશ આર્યસમાજ

સ્ટેશન રોડ, આણંદ. ફોન : (૦૨૬૯૨) ૨૪૪૧૯૧

રૂા. ૫૦,૦૦૦ પ્રદાન કરી અગ્નિમ શ્રાહક બનનાર સંસ્થા

વેદિક સંસ્થાન

૫, પહેલો માળ, આદર્શ કોમ્પ્લેક્સ, મુરલીધર સોસાયટી સામે, ઓઠવ,
અમદાવાદ-૧૫, ગુજરાત. ફોન : (૦૭૯) ૨૨૯૭ ૨૩૪૦.

રૂા. ૩૭,૫૦૦ પ્રદાન કરી અગ્નિમ શ્રાહક બનનાર સંસ્થા

આર્ય સમાજ

નવાડેરા, ભરૂચ-૩૯૨૦૦૯.

રૂા. ૩૧,૨૫૦ પ્રદાન કરી અગ્નિમ શ્રાહક બનનાર સંસ્થા

આર્ય સમાજ

દારનગર, પ્લોટ નં. ૪૪/૪૫, સિંધી હાઈસ્કૂલની
પાછળ, ભરતનગર રોડ, ભાવનગર.

આર્ય સમાજ

મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, પોરબંદર.

આર્ય સમાજ

ત્રણ હાટડી બજાર, પો. ટંકારા, રાજકોટ.

આર્ય સમાજ

આર્ય સમાજ રોડ,
ખંભાળિયા નાકા, જામનગર.

આર્ય સમાજ

હાતાર રોડ, જૂનાગઢ.

આર્ય સમાજ

લખવીરવાસ, મોરબી, રાજકોટ.



રૂા. ૨૫,૦૦૦ પ્રદાન કરી અગ્નિમ શાહક બનનાર સંસ્થા

સ્વ. શાસ્ત્રી જયંતિલાલ ઝીરીરાંકર રાવલ
મેમોરિયલ ટ્રસ્ટ દ્વારા - શ્રી દિનેશભાઈ રાવલ,
તુરિયાવાડ, ગઢવાડીની સામે,
અંજાર, કચ્છ, (ગુજરાત).

રૂા. ૧૫,૦૦૦ પ્રદાન કરી અગ્નિમ શાહક બનનાર મહાનુભાવ

શ્રી મોહનભાઈ વેલાણી
ઈ-૨૦૫, વિક્રમ એપાર્ટમેન્ટ્સ, ન્યૂ માણેકલાલ
એસ્ટેટ, ઘાટકોપર (પ.), મુંબઈ-૮૬. (મહારાષ્ટ્ર).

રૂા. ૧૨,૫૦૦ પ્રદાન કરી અગ્નિમ શાહક બનનાર સંસ્થા

આર્ય સમાજ
દ્વારા - શ્રી કમલેશભાઈ પટેલ, મુ. ચિખોદરા,
જિ. આણંદ.

શ્રી લખમશીભાઈ માધવજીભાઈ વેલાણી
પ્લોટ નં. ૧, ગિરીશ કો.ઓ., હાઉસિંગ સોસાયટી,
વારજે જકાતનાકા, પૂણે, મહારાષ્ટ્ર.

વેદાંત રતનશીભાઈ વેલાણી
'સુનંદા', બ્લોક નં. ૫, ફ્લેટ નં. ૫૦૦૧,
નન્દી-દીપા રેસિડેન્સી, કામનહાલ્લી,
બાનેરઘાટા, ભેંગલોર, કર્ણાટક.

આર્ય સમાજ મંદિર, શ્રી હસમુખભાઈ સોની આર્ય
૬/૨૯, હવેલી મહોલ્લા મોટા બજાર, નવસારી,
જિ. નવસારી, (ગુજરાત).

આર્ય સમાજ મંદિર
મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, પ્રાંગણા, જિ. સુરેન્દ્રનગર, ગુજ.

આર્ય સમાજ
વિજયનગર, હોસ્પિટલ રોડ, અંજાર, કચ્છ, ગુજરાત.

આર્ય સમાજ
ઓમુ શ્રેયસ એપાર્ટમેન્ટ્સ, ન્યૂ માણેકલાલ એસ્ટેટ,
એલ.બી.એસ. માર્ગ, ઘાટકોપર (પ.), મુંબઈ-૮૬.

રૂા. ૭,૫૦૦ પ્રદાન કરી અગ્નિમ શાહક બનનાર સંસ્થા

આર્ય સમાજ
બી-૩, શ્રીકૃષ્ણ ફ્લેટ્સ, છત્રપતિ શિવાજી માર્ગ,
અણજણ, સુરત, ગુજરાત.

રૂા. ૫,૦૦૦ પ્રદાન કરી અગ્નિમ શાહક બનનાર મહાનુભાવ

શ્રી ચંદુભાઈ વેલાણી
વેલાણી સેક્સ એન્ડ સર્વિસ, નીલકંઠ મંદિર પાસે,
સવાસર ગેટ, અંજાર, કચ્છ, ગુજરાત.

શ્રી નવીનચન્દ્રજી વેલાણી
સેંધાણવાડી, પો. દુર્ગાપુર, તા. માંડવી, કચ્છ, ગુજરાત.

શ્રી મણિલાલજી કરસનભાઈ રંગાણી
શ્રી આર્ય એન્જિનિયરિંગ, પ્રગતિ કોમ્પ્લેક્સ,
માંડવી, કચ્છ, ગુજરાત.

શ્રી લખમશી હરદાસ વાડિયા
આર્ય કામ, નલિયા રોડ, પો. શીરવા, તા. માંડવી,
કચ્છ, ગુજરાત.

શ્રી નરશી ગોવિંદ પટેલ ગંગોત્રી,
પહેલો માળ, ન્યૂ માણેકભાગ એસ્ટેટ, ઘાટકોપર (પ.)
મુંબઈ ૪૦૦ ૦૮૬

શ્રી મણિલાલ કરસનભાઈ દિવાણી
એ-૫૦૧, રામદર્શન, ખેરાણી રોડ, અસલ્કા
ઘાટકોપર (પ.) મુંબઈ. ૪૦૦ ૦૮૬

અધિઓનો સંદેશ

૧. વિષયોને ભોગવીને ઈન્દ્રિયોની તૃપ્તિને શાંત કરવાનો તમારો વિચાર આગને ખુલાવવા માટે તેમાં ધી નાખવા જેવો જ છે.
૨. તમારું એમ માનવું કે 'હું ક્યારેય મરીશ નહિ, આ શરીર ખૂબ જ પવિત્ર છે, વિષય-ભોગોમાં પૂર્ણ અને સ્થાયી સુખ છે, આ શરીર જ આત્મા છે', એ સૌથી મોટું અજ્ઞાન છે.
૩. તમારા મનમાં સારા કે ખરાબ વિચારો પોતાની મેળે નથી આવતા. એ વિચારો તમે તમારી ઈચ્છાથી જ ઉત્પન્ન કરો છો; કારણ કે મન તો યંત્રની જેમ જડ વસ્તુ છે, તેનો ચાલક ચેતન આત્મા છે.
૪. કોઈનાં સારાં કે ખરાબ કર્મોનું ફળ તત્કાળ મળતું ન જોઈ તમે એમ ન વિચારશો કે એ કર્મોનું ફળ તેને આગળ જતાં નહિ મળે. કર્મફળથી કોઈ પણ બંધી શકતું નથી; કારણ કે ઈશ્વર સર્વવ્યાપક, સર્વશ અને ન્યાયકારી છે.
૫. સંસાર (પ્રકૃતિ), સંસારનો ભોગ કરનાર (જીવ) અને સંસારના રચયિતા (ઈશ્વર) — આ ત્રણેયના વાસ્તવિક સ્વરૂપને જાણીને જ તમારાં સમસ્ત દુઃખ, ભય અને ચિંતાઓ દૂર થઈ શકે છે. આ સિવાય બીજાં કોઈ જ માર્ગ કે ઉપાય નથી.
૬. 'મનુષ્ય-જીવન ઈશ્વર-પ્રાપ્તિ માટે મળ્યું છે' — આ મુખ્ય લક્ષ્યને છોડીને બીજા કોઈ પણ કાર્યને પ્રાથમિકતા ન આપશો. નહિ તો તમારું જીવન ચંદનના વનને કોલસા બનાવીને નષ્ટ કરવા સમાન જ છે.
૭. તમારા જીવનની સફળતા તો કામ, ક્રોધ, લોભ, મોહ, અહંકાર આદિ અવિદ્યાના કુસંસ્કારોને નષ્ટ કરવામાં જ છે. સમસ્ત દુઃખોથી છૂટવાનો આ જ શ્રેષ્ઠ ઉપાય છે.
૮. જ્યાં સુધી તમે સંસારનાં સુખોની પાછળ છુપાયેલાં દુઃખોને સમજી નહિ લો ત્યાં સુધી વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન નહિ થાય. વૈરાગ્ય વિના ચંચળ મન એકાગ્ર નહિ થાય, એકાગ્રતા વિના સમાધિ નહિ લાગે, સમાધિ વિના ઈશ્વરનો સાક્ષાત્કાર નહિ થાય, ઈશ્વરના સાક્ષાત્કાર વિના અજ્ઞાનનો નાશ નહિ થાય, અને અજ્ઞાનનો નાશ થયા વિના સમસ્ત દુઃખોનો અંત તથા પૂર્ણ અને સ્થાયી સુખ (મુક્તિ)ની પ્રાપ્તિ નહિ થાય.
૯. તમે આ સત્યને સમજી લો કે અજ્ઞાની મનુષ્ય જ જડ વસ્તુઓ (જમીન-જાલદાદ, મકાન, સોનું-ચાંદી વગેરે)ને તથા ચેતન વસ્તુઓ (પતિ, પત્ની, પુત્ર, મિત્ર વગેરે)ને પોતાના આત્માનો એક ભાગ કે અંશ માનીને એ વસ્તુઓની વૃદ્ધિમાં પ્રસન્ન અને હાનિમાં દુઃખી થાય છે.
૧૦. તમારા લોભંડરૂપી મનને વિષય-ભોગરૂપી ચુંબક હંમેશાં પોતાની તરફ ખેંચતું રહે છે. જ્ઞાની મનુષ્ય વિષય-ભોગોથી થતી હાનિઓનો અનુમાનથી વિચાર કરીને તેમાં આસક્ત નથી થતો, પરંતુ અજ્ઞાની મનુષ્ય તેમાં ફસાઈને નષ્ટ થઈ જાય છે.
૧૧. મહાન જ્ઞાન, બળ, આનંદ આદિ ગુણોનો ભંડાર ઈશ્વર એક ચેતન વસ્તુ છે, જે અનાદિ કાળથી તમારી સાથે છે. તે ક્યારેય તમારાથી અલગ થયો નથી અને ક્યારેય અલગ થવાનો નથી. તે જ સર્વ જગતના રચયિતા, પાલનકર્તા, સર્વરક્ષક, નિરાકાર ઈશ્વરની સ્તુતિ, પ્રાર્થના અને ઉપાસના તમારે સૌ મનુષ્યોએ હંમેશાં કરવી જોઈએ.

સં. - જ્ઞાનેશ્વરાર્ચ